साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

२२ अंक १ | रविवार २५ अक्तूबर १९८७ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८७ | कार्तिक २०४४ | दयानन्दाब्द १६३
एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर ३० पौंड

आर्यसमाज सती प्रथा के खिलाफ आंदोलन छेड़ेगा

अलवर, १७ अक्तूबर (भाषा)। आर्यसमाज सती प्रथा के खिलाफ व्यापी आंदोलन चलाएगा। इस शुरुआत आज अलवर में महिलाओं की विशाल रैली से हुई जिस का नेतृत्व सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने किया।

स्वामी आनन्द बोध ने रैली के पश्चात् विशाल जनसभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि सती प्रथा अवैधानिक और वेदविरुद्ध है। वेद की एक भी ऋचा सती प्रथा का समर्थन नहीं करती। उन्होंने सती प्रथा समर्थक धर्माचार्यों को इस विषय में आर्यसमाज के विद्वानों से शास्त्रार्थ करने की चुनौती दी।

भारी करतलध्वनि के बीच उन्होंने कहा, "राजा राममोहन राय और स्वामी दयानन्द सरस्वती की आत्मा मरी नहीं है। 'अब देश के किसी कोने में हम अपनी बहू बेटी को जिन्दा नहीं जलायेंगे।"

दिवराला सती काण्ड पर रोष जाहिर करते हुए स्वामी आनन्द बोध ने कहा कि १८ वर्षीया रूपकंवर बेबस थी। उस चिता का धुआं सारे भारत के आकाश में फैल गया है। उसकी मूक आहें देशवासियों को अन्धविश्वास के खिलाफ आवाज उठाने के लिए ललकार रही हैं।

उन्होंने राजनीतिक नेताओं को चेतावनी दी कि वे न तो इस प्रश्न को चुनाव की राजनीति में घसीटें और न धर्म नवे पर स्वार्थ की रोटी सेकने का कोशिश करें।

आर्य समाज निर्माण विहार दिल्ली का वार्षिकोत्सव सम्पन्न

हम सुधरेंगे तो जग सुधरेगा

–सूर्यदेव

आर्यसमाज निर्माण विहार, के वार्षिकोत्सव के अवसर पर १८ अक्तूबर ८७ को "चरित्र-निर्माण सम्मेलन" का आयोजन किया। इस अवसर पर स्वामी आनन्द बोध जी, श्री क्षितीश वेदालंकार, श्री सच्चिदानन्द शास्त्री, [illegible]देव, डा० धर्मपाल, डा० [illegible]ति उपाध्याय, श्री यशपाल [illegible], श्री प्रकाशचन्द शास्त्री वक्ताओं ने अपने विचार किये।

स्वामी आनन्द बोध ने कहा— [illegible] से व्यक्ति से लेकर [illegible] के चरित्र के निर्माण की [illegible] रही है। स्वामी दयानन्द ने आचार धर्म की शिक्षा दी है उसी पर चलकर सुखी हो [illegible] है। आदिकाल से भारत [illegible] का [illegible] [illegible] कहा—[illegible] है गुरुकुल शिक्षा के राष्ट्र-निर्माण की [illegible] [illegible] के माध्यम से के निर्माण को [illegible] जिसकी आज ही नहीं समस्त विश्व के मानव को सदा आवश्यकता रहेगी। प्रकाशचन्द शास्त्री ने कहा—घर के प्रमुख को प्रथम आचरण को सुधारना चाहिए जिससे छोटे लोग उसको अपना [illegible]क। इसीलिए नेता को पहले अपने आपको ठीक करना चाहिए जिससे वह दूसरों को शिक्षा देने के योग्य हो सके। आर्यसन्देश के सम्पादक श्री सुधांशु ने कहा—धन, स्वास्थ्य आदि से भी बढ़ कर चरित्र को महत्त्व दिया हमारे पूर्वजों ने। धन चला गया तो हानि नहीं सबसे बड़ी हानि है चरित्र के गिरने की। लोकनायक श्री राम का चरित्र आज भी हमारे समक्ष प्रकाशस्तम्भ की तरह पथ दिखा रहा है। आज आचार भ्रष्ट होने से, नेता से लेकर सामान्य अधिकारी तक जनता का विश्वास खोता जा रहा है। आचार भ्रष्ट कहो या भ्रष्टाचार कहो बात एक ही है। आज चारों तरफ भ्रष्टाचार की मार से तमाम आदमी दुखी हैं। राष्ट्र के निर्माण में सर्वप्रथम व्यक्ति से लेकर समुदाय तक चरित्र की भारी आवश्यकता है। आज हमारा राष्ट्रीय चरित्र अधिक पतित हुआ है। सभा प्रधान श्री सूर्यदेव ने आर्यों को अपने व्यक्तिगत जीवन को सुधारने पर बल देते हुए कहा – हम सुधरेंगे तो जग सुधरेगा। हमें ऋषि दयानन्द के तेजस्वी चरित्र से आचार की घुट्टी मिली है यह भूलना नहीं चाहिए। श्री सूर्यदेव ने समाज के भवन निर्माण के लिए धन की अपील की उन्होंने कहा अधिक से अधिक धन देकर इस पवित्र कार्य को पूरा करें। अन्य वक्ताओं ने भी अपने ओजस्वी विचार व्यक्त किये। डा० धर्मपाल के उद्बोधन की भी जनता ने सराहना की।

ऋषि निर्वाणोत्सव

आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली के तत्त्वावधान में प्रत्येक वर्ष की भांति ऋषि निर्वाण दिवस पर २२ अक्तूबर को रामलीला मैदान में एक विशेष समारोह आयोजित किया गया है जिसमें प्रात ८ बजे से यज्ञ तथा ९.३० बजे ध्वजारोहण एवं श्रद्धाञ्जलि सभा होगी। इस अवसर पर स्वामी सत्यप्रकाश जी अध्यक्ष तथा मुख्यातिथि श्री कुलानन्द भारतीय होंगे। मुख्यवक्ता स्वामी आनन्द बोध जी, स्वामी विद्यानन्द जी, डा० डी० पी० यादव, डा० वेदप्रताप वैदिक, श्री सन्तकुमार सिंह (अफ्रीका), डा० सरोज दीक्षा होंगे। कार्यक्रम १२ बजे तक चलेगा।

निवेदक
डा० शिवकुमार शास्त्री

सम्पादक—प० यशपाल 'सुधांशु' [illegible] प्रधान सम्पादक—डा० धर्मपाल

देवासुर - संग्राम में हमारी विजय

लेखक—देवनारायण भारद्वाज

पुराणों में जो कथानक आते हैं वे वास्तव में वेद मन्त्रों के अपभ्रंश अर्थ होते हैं। मन्त्र मे जो बात गम्भीर व व्यापक होती है, पुराण में उसी बात को कथा के रूप में सीमित कर दिया गया है। देवासुर संग्राम की गाथा भी कुछ ऐसी ही है, जिसमे देवताओ पर वृत्रासुर के आक्रमण का उल्लेख है। देवताओं ने ऐसी स्थिति में इन्द्र को अपना नेता बनाया और देवराज के नेतृत्व में ऋषि दधीचि ने अपनी अस्थियां प्रदान कीं जिन से वज्र का निर्माण हुआ, तथा सभी देवों ने वृत्र से त्राण पाया। ठीक ऐसा ही संग्राम कभी हुआ या नहीं, यह विवाद की बात है। पर अधोलिखित वेदमन्त्र जिस देव-दानव युद्ध की ओर संकेत करता है, वह सदा सर्वदा से होता आया है और जिसमे सदा देवो की विजय हुई है।

इन्द्र वृत्राय हन्तवे देवासो दधिरे पुर.। इन्द्र वाणीरनूषत समोजसे ॥
ऋग्वेद ८।१२।२२

देवों ने वृत्र हनन के लिए इन्द्र को अपना पुरोहित या प्रधान बनाया उसी प्रकार आत्मिक ओज की सम्यक् प्रकार से उत्पत्ति हेतु ये वाणियां इन्द्र की ही स्तुति कर रही हैं। इस मन्त्र में यह वर्णन है कि देवताओं ने इन्द्र के नेतृत्व में वृत्र का वध किया, वैसे ही हम अपनी रक्षा के लिए स्तुति द्वारा इन्द्र का आह्वान करते हैं। उपरोक्त कथानक का यदि यहाँ पर सामजस्य किया जाये तो सुन्दर तथ्य स्पष्ट होगे। कथानक में देवतागण, देवराज इन्द्र, ऋषि दधीचि, दधीचि की अस्थियाँ, वृत्र—ये पाँच पात्र दिखाई देते हैं। ठीक इसी प्रकार की स्थिति की ओर यह मन्त्र भी इंगित करता है। आधिदैविक, आधिभौतिक एव आध्यात्मिक—तीनों क्षेत्रों में इस मन्त्र की पहुंच है।

आधिदैविक अर्थ को लीजिए, वसु, रुद्र आदित्य आदि तेंतीस देव हैं। पृथ्वी, अग्नि, वायु, जल व आकाश आदि सभी देवगण वृत्र (जिसका अर्थ मेघ है) के आक्रमण से पीडित होकर सूर्य के पास जाते हैं। सूर्य इन्द्र के अर्थ में भी आता है। सूर्य ईश्वरीय प्रकाश से अस्थि सदृश किरणें प्राप्त करता है, जिन से वृत्र मेघ का हनन हो जाता है। अब तक मेघाच्छादित अन्धकार में जो सभी देवों के क्रियाकलाप अवरुद्ध थे वे पुन. निर्विघ्न रूप से होने लगते हैं। यहाँ दधीचि का स्थान ईश्वरीय प्रकाश ने लिया है। आधिभौतिक जगत् में भी ऐसा ही संघर्ष बहुधा होता है। सन्यासी, सन्त, शिल्पी, कवि, कलाकार आदि सभी समाज के देव हैं। इन देवों पर अन्यायी, आततायी, दुष्ट व्यक्ति जो वृत्र के साक्षात् चित्र होते हैं, आक्रमण करते हैं। यह सभी देव किसी विद्वान् को अपना नेता बनाते हैं, जैसा कि आजकल न्यायवक्ता वकीलों को प्राय बनाया जाता है। यह विद्वान् राजा, शासक या न्यायाधीश के पास जाता है जैसे देवराज इन्द्र ऋषि दधीचि के पास गए थे। न्यायाधीश दण्ड के द्वारा उन आततायियों को नियन्त्रित करता है, जैसे कि ऋषि अस्थि के वज्र ने वृत्र का विनाश किया था।

मन्त्र की आध्यात्मिक विवेचना और भी अधिक सटीक व शोभन है। मनुष्य के शरीर में बुद्धि आदि देवगण स्थापित हैं, जब इन पर अज्ञान, काम, क्रोध, मोह, ईर्ष्या व अहंकार आदि दुष्ट वृत्र आक्रमण करते हैं, तो सभी इन्द्रिय आदि उपरोक्त देव पथभ्रष्ट होकर उल्टे उल्टे कार्य करने लगते हैं। तब यह सभी देव जीवात्मा को अपना नेता बनाते हैं। इन्द्रियों का स्वामी होने के कारण आत्मा को भी इन्द्र कहते हैं। यह आत्मा ज्ञानरूपी दधीचि के पास जाता है और कर्म रूपी अस्थियो के द्वारा उपरोक्त वृत्रो का वध कर देता है। तात्पर्य है कि जीवात्मा ज्ञान प्राप्त कर उसको कर्म में परिणत करता है, जिससे इन्द्रियो के माध्यम से उसका उद्धार हो जाता है। अब प्रश्न यह उठता है कि इन्द्रियों के पुंज इस शरीर में स्थित जीवात्मा को पहचाना जाए। पर बहुधा व्यक्ति अवसर पर इसे भूल जाते हैं और शोकाकुल हो उठते हैं। एक वैभवशाली सम्राट् मृत्यु शैया पर अपनी अन्तिम श्वासें गिन रहा था। सारे औषधि उपचार असफल सिद्ध हो गए थे। राजमहल में शोक छा गया था। सम्राट् के पुत्रों ने एक तपस्वी सन्त से साग्रह प्रार्थना की कि आप अपने योगबल से हमारे पिता की जीवन-रक्षा कीजिए। महात्मा ने पुत्रों के अपार मोह को देखकर बहुत समझाने का प्रयास किया, पर वे किसी दशा में मानने को तत्पर न थे, और पिता को जीवित व स्वस्थ रखने की रट लगा रहे थे। तब सन्त ने एक युक्ति से काम लिया। पुत्रों को बताया कि इस नश्वर शरीर के प्राण त्याग की घडी निश्चित है। उस क्षण तुम्हारे पिता की आत्मा शरीर को छोडेगी। मैं ऐसा कर सकता हूं कि उस घडी को योग द्वारा टाल दूं। तुम एक चिड़िया ले आओ। उसको मार दिया जाये। जब तुम्हारे पिता का जीवात्मा निकलेगा, तो उसे मैं मरी हुई चिड़िया के शरीर में प्रविष्ट कर दूंगा और जब वह घडी टल जाएगी तो चिड़िया के शरीर से जीवात्मा तुम्हारे पिता के शरीर में पुन प्रतिरोपित कर दूंगा और वे जीवित हो जायेंगे। ऐसा ही किया गया। चिड़िया पकड़कर महात्मा के सुपुर्द की गई। महात्मा ने उसको कपड़े में छिपा लिया। जब सम्राट् का प्राणान्त हुआ, तो सन्त ने चिड़िया को बाहर निकालकर पुत्रों को दिया। वह जीवित थी। सभी पुत्रों ने चिड़िया को अपनी-अपनी ओर खींचना चाहा कि वह सन्त के हाथ से छूट गई और उड़कर पेड़ की डाल पर बैठ गई। महात्मा ने कहा चिड़िया को पकड़कर लाओ। इसमे तुम्हारे पिता की आत्मा है, जिसे मैं पुन उनके मृत शरीर मे भेजना चाहता हूं। जब पुत्रगण चिड़िया को पकड़ने चले तो वह डाल-डाल व पात-पात उड़ती हुई निज पक्षि-पात मे जाकर मिल गई। पुत्रों ने लौटकर स्थिति बतलाई तथा चिड़िया को पहचानने व पकड़ने में असमर्थता प्रकट की। तब महात्मा को उपदेश का अच्छा अवसर मिला उन्होंने बताया कि जीव की यह गति है, वह जिस योनि में रहता है उसी से प्यार करने लगता है। पुत्रो जब तुम्हारे पिता की आत्मा तुम से प्यार नहीं करती है, तो तुम उसके पीछे क्यों पड़े हो। आत्मा और परमात्मा को पहचानो तथा मोह ममता का त्याग कर धर्म का पालन करो। इस दृष्टान्त पर कोई विश्वास करे या अविश्वास, कोई अन्तर नहीं पड़ता। इसके केन्द्रीय विषय पर विचार करना चाहिए। जिसके लिए उपरोक्त सन्त ने निर्देश किया है कि हम जीवात्मा को पहचानें और उस के ऊपर से अज्ञान के आवरण को हटाकर उसका उद्धार करें। यह तभी सम्भव होगा जबकि हम अपना उचित नेता चुनें जैसा कि ऋग्वेद का ही एक अन्य मन्त्र हमें आदेश देता है—

तुञ्जे तुञ्जे य उत्तरे।
स्तोमा इन्द्रस्य वज्रिण ॥
न विन्धे अस्य सुष्टुतिम् ॥
ऋ० १।७।७

पापों का वर्जन करने वाले महान् शक्तिशाली परमात्म देव के प्रत्येक दान व कृपा के सम्बन्ध में जो एक से एक बढकर स्तुति या महिमाएं हैं। इस दयालु देव की सुन्दर महिमा को मैं नहीं जानता। पहला मन्त्र ईश्वर-इन्द्र की स्तुति की उत्प्रेरणा देता है, तो यह दूसरा मन्त्र इस बात को और भी पुष्ट करता है। जब हम अपने जीवात्मा को जान लेंगे और जीवात्मा परमात्मा को जान लेगा, तभी हमें अपना मनोवांछित मोक्ष महानन्द का फल प्राप्त हो सकेगा। स्तुति द्वारा हम ईश्वर के गुणों का वर्णन करते हैं, तो हमें उन गुणों के धारण करने की प्रेरणा मिलती है। ईश्वर के गुणों का कोई अंश भी हमने अपने अन्दर विकसित कर लिया, तो हम आनन्द से ओतप्रोत हो जायेंगे। सच्ची साधना के द्वारा जब हम ईश्वर की वास्तविक स्तुति कर लेंगे, या यहो सन्ध्या द्वारा जब जीवात्मा परमात्मा से सन्धि या समझौता कर लेगी, तो हम निम्न मन्त्रोच्चारण के अधिकारी होंगे।

यतोयत समीहसे ततो
नो अभय कुरु।
शं न कुरु प्रजाभ्य,
अभय न पशुभ्य ॥

हे प्रभो जहां-जहां से तुम सम्यक् चेष्टा करते हो, वहां-वहां से हमें अभय कर दो। हमारी प्रजाओं के लिए कल्याण कर दो और हमारे पशुओं के लिए अभय कर दो। यजुर्वेद के इस मन्त्र में ईश्वर से मानव ने अपने लिए, अपने पुत्र व परिवार और अपने पशु तक के कल्याण की प्रार्थना की है। यदि हम एक ईश्वर से भय खायें तो संसार से अभय हो जायें तथा संसार में चल रहे भांति-भांति के देवासुर संग्रामों में विजयी हों।

आध्यात्मिक पथ

—आचार्य सत्यप्रिय

ओ३म् वेदाहमेत पुरुष महान्तमादित्यवर्णं तमस. परस्तात्। तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्य. पन्था विद्यतेऽयनाय ॥ यजु० ३१।१८

अर्थ - अहम्=मैं भक्त, एतद्=इस, महान्तम्=सबसे महान्, आदित्यवर्णम्=अखण्डित स्वरूप वाले, तमस=अज्ञानान्धकार से, परस्तात्=दूर (अलग), पुरुषम्=सारे ससार मे व्यापक परमात्मा को, वेद=जानूं या जानता हूँ, (क्योकि) तमेव=उस परमात्मा को ही, विदित्वा=भली भाति जानकर, अति मृत्युम्=जन्म मरणादि के दुख से रहित परमानन्द अवस्था को, एति=जीव प्राप्त होता है, अयनाय=उक्त अवस्था तक पहुचने के लिए, अन्य=इससे पृथक्, पन्था=कोई भी मार्ग, न विद्यते=नही है।

भावार्थ—मैं उस महान् अखण्डित स्वरूप वाले, अज्ञानान्धकार से रहित व्यापक ब्रह्म को जानूं या जानता हूं, क्योकि उसको जानकर ही मनुष्य जन्म मरणादि के दु:खों से रहित आनन्दमय स्थिति को प्राप्त होता है। इस स्थिति तक पहुचने के लिए इसके अलावा और कोई मार्ग नहीं है। जब हम जीवन शब्द का उच्चारण करते हैं तो उसमे चार चीजो का समन्वय पाते है—(१) शरीर (२) मन (३) बुद्धि (४) आत्मा। इन सब की पुष्टि, शुद्धता एव सदुपयोगिता ही जीवन का उद्देश्य है। इसलिए मनुष्य जीवन का परम उद्देश्य (१) धर्म (२) अर्थ (३) काम (४) मोक्ष, इन चारों पदार्थों की प्राप्ति माना गया है। इसमे (१) अर्थ—शरीर के लिए होता है। (२) काम=मन के लिए है। (३) धर्म=बुद्धि के लिए। (४) मोक्ष=आत्मा के लिए है। इन चार पदार्थों मे से यदि धर्म और मोक्ष को निकाल दें तो शेष (१) अर्थ (२) काम रह जाते हैं, जो कि पशु जगत् का ध्येय है। इसी प्रकार मनुष्य भी यदि धर्म के अकुश के बिना अर्थ एव काम की पूर्ति करता है तो वह पशु से भी गया बिता है। इसलिए (१) धर्मपूर्वक=अर्थ (२) धर्मपूर्वक=काम की प्राप्ति एव पूर्ति करने वाला ही सच्चा मनुष्य है। इससे मनुष्य का अन्त.करण स्वच्छ रहकर ससार में आने के अपने जीवनोद्देश्य को समझ सकने में समर्थ हो सकेगा। कार्लमार्क्स ने नारा दिया कि जीवन अर्थप्रधान है, धर्म के अकुश से रहित अर्थ प्रधानता के नारे ने साम्यवादी देशों को भेड़िया बनाकर रख दिया। एक व्यक्ति फ्रायड ने नारा दिया कि जीवन कामप्रधान है; परिणाम स्वरूप धर्म के अकुश से रहित काम-प्रधानता के नारे ने यूरोप को विलासिता के गहरे गड्ढे मे निमग्न कर दिया। मानव की इसी स्वाभाविक दुर्बलता को दृष्टिगत करते हुए हमारे ऋषियो ने इन पर धर्म की लगाम लगाई थी। इस तथ्य को हृदयगम करने के लिए तत्त्व ज्ञान की आवश्यकता है। इसके लिए अन्त करण की शुद्धि की अपेक्षा है। स्तुति, प्रार्थनोपासना या भक्ति मनुष्य की इसी कमी की पूर्ति करती है। महर्षि पतजलि ने योग दर्शन मे लिखा 'भोगापवर्गार्थं दृश्यम् (२-१८) अर्थात् यह जगत् भोग और अपवर्ग के लिए है। सामान्यजन ससार मे भोग के लिए और विशिष्ट आत्माएँ ससार मे अपवर्ग के लिए आते हैं। भक्ति या योग का मुख्योद्देश्य जीव को भोगमयी अवस्था से विमुख करके अपवर्ग प्राप्ति की ओर प्रेरित करना है। इसे समझने से पहले निम्न दो तथ्यों को समझना जरूरी है। जीव में दो गुण इस दृष्टि से मुख्य हैं —(१) राग (२) द्वेष। इनका स्वरूप बताते हुए पतजलि योगदशन में लिखते हैं—(१) सुखानुशयी राग। (२-७) जिस पदार्थ से सुख मिला उसके प्रति आकर्षण या मोह का विचार राग है। (२) दु.खानुशयी द्वेष (२-८) जिससे दुख मिला उसके प्रति ग्लानि का विचार द्वेष है, क्योंकि महर्षि वात्स्यायन के वचनो में 'अनुकूलेषु राग, प्रतिकूलेषु द्वेष' अनुकूल वस्तुओ में प्रेम और प्रतिकूल पदार्थों में वैराग्य होता है। ससार में प्राणीमात्र सुख प्राप्ति और दु.ख की निवृत्ति के लिए ही प्रयत्नशील है। मनुष्य जो कुछ सोचता या करता है। उसका सूक्ष्म प्रभाव उसके अन्त.करण पर रह जाता है इनको सस्कार कहा जाता है। ये अनुकूल समय पर प्रकट हो जाते है। ये संस्कार स्मृति रूप में आकर कर्म की ओर प्रेरित करते हैं। इस प्रकार सस्कार, स्मृति, कर्म इनका चक्र चलता है परतु यदि मनुष्य उन सस्कारो को पुन सुदृढ न होने देने की दिशा मे प्रयत्न करे तो अन्य अनुकूल उत्तम सस्कारो से वे विस्मृत हो जाते हैं। जैसे हम किसी सफेद कागज पर स्याही से लिखकर सूर्य की धूप मे डाल दें तो कुछ काल बाद वे अक्षर मिट जायगे, परन्तु यदि उन अक्षरो पर चौथे पाचवे दिन कलम से स्याही फेरते रहें तो वे सुदृढ होते जायेंगे इस प्रकार हमारी इन्द्रिया अपना काम करने से किसी अवस्था में पूर्णतया रुकेगी तो नही, हा उनके कार्य की दिशा बदलकर उनके द्वारा हम अभीष्ट मार्ग पर चल सकते हैं। वैसे यदि प्रभु को इन इन्द्रियो के द्वारा जीव का काम करना अभीष्ट न होना तो वह इन्द्रिया देता ही क्यो? कान शब्द सुनेगा आप कब तक बन्द रख सकते हैं। हा, यह कर सकते है कि कान से भद्र (कल्याण कारक) शब्द ही सुने। आखो से भद्र दृश्य ही देखें। इसी को महर्षि दयानन्द सरस्वती ने "जितेन्द्रिय' होना माना है। इस पृष्टभूमि के आधार पर भक्ति या योग कैसे मनुष्य के चिन्तन को अभीष्ट दिशा मे चलाते है, यह यह योग के लक्षणो के आधार पर वर्णन किया जाता है। 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोध।' (१ २) चित्त की वृत्तियो को रोकना योग है। भगवान कृष्ण जी ने कहा—'योग कर्मसु कौशलम्।" (गी० २ ५०) कर्मों मे निपुणता प्राप्त करना योग है। पाठक! भ्रम मे न रहें कि योग के लक्षणों में इतना विरोध या भेद क्यों है? इनमे परस्पर विरोध न होकर पूरकता है। देखिये, कर्मो मे कुशलता हम तब प्राप्त कर पाते हैं, जब हमारी चित्तवृत्तिया अन्य दिशाओ मे न जायें। शस्त्रास्त्र विद्या की समाप्ति पर आचार्य द्रोण ने अपने शिष्यो कौरव तथा पाडवो को शस्त्र शिक्षा के सार्वजनिक प्रदर्शन का आयोजन किया, अनेक आश्चयजनक कर्तव्य दिखाने के बाद द्रोण ने एक खम्बे पर मिट्टी की चिडिया रखी और राजकुमारो से उसकी आख में तीर मारने को कहा। तीर मारने से पहले प्रत्येक राजकुमार से द्रोण के पूछने पर कि "तुम्हें क्या दीखता है?" "हमे सारी प्रजा, सब भाई, बाप, अपने सम्बन्धी एव चिडियादि दीखते हैं।" उत्तर मिलने पर द्रोण ने कहा कि तुम लक्ष्य नही वेध सकते। पर राजकुमारों के जिद पूर्वक लक्ष्यवेध का प्रयास करने पर द्रोण का वचन सत्य निकला। अर्जुन से जब इसी प्रकार पूछा तो उसने कहा कि मुझे केवल चिडिया कि आख दिखाई देती है बाकी कुछ नही, द्रोण ने कहा कि तुम निशाना लगा सकते हो और उसने लक्ष्यवेध किया क्योकि उसकी चित्त वृत्तिया अपने लक्ष्यस्थल पर एकाग्र थी और सब ओर से रुकी हुई थी। इसलिए कपिल महर्षि कहते हैं 'इषुकारवन्नन्यचित्तस्य समाधिहानि।" (सा० ४-१८) अर्थात् जिसका चित्त एकाग्र होता है उसकी समाधि में खलल नहीं पड़ता, जैसे तीर बनाने वाले का चित्त एकाग्र है तो निशाने पर ही लगता है। इस प्रकार योग के दोनों लक्षणों का निष्कर्ष यह है कि मनुष्य अपनी चित्तवृत्तियो को अपने लक्ष्य मे बाधक पदार्थ की ओर जाने से रोके। यह तब होगा जबकि अपने लक्ष्य मे अपने चित्त को एकाग्र या विलीन कर देगा। मनुष्य का उद्देश्य परमात्म तत्त्व को प्राप्त करना है। अत आत्मा परमात्मा के स्वरूप मे अपने चित्त को इतना तल्लीन कर दे कि उसका चित्त किसी अन्य पदार्थ की ओर न जावे। दूसरे शब्दो मे यों कह सकते हैं कि यदि चित्त ससार-विषय भौतिकता की ओर जावे तो उधर से पूर्णतया रोके। रोकने का मतलब यह है कि उससे उत्तम एव कल्याणकारक तत्त्व के चिंतन में मग्न कर दे। इससे अन्य पदार्थो की ओर चित्त जाने से रुक जावेगा। इसमे सहायक है अभ्यास और वैराग्य। पतजलि लिखते हैं—'अभ्यासवैराग्याभ्या तन्निरोध।" (यो० १-१२) गीता मे कृष्ण जी का भी वचन है 'अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।" (६ ३५) इसे पाठक भी समझ सकते हैं, किसी खेत मे पानी पहुचाना हो तो दो काम करने होंगे। (१) जहा पानी ले जाना है वहा तक पानी के जाने के लिए मार्ग बनाना, (२) जिधर पानी को नही जाने देना हो उधर जाने से रोकने के हेतु बाध बनाना। योग मार्ग मे इन दोनो प्रक्रियाओ को क्रमश अभ्यास, वैराग्य कह सकते हैं। मन को लक्ष्य की ओर जाने के लिए बार-बार प्रेरित करना अभ्यास और अनभीष्ट दिशा में जाने से रोकने को वैराग्य कहते हैं। इसके लिए आत्मा परमात्मा के ज्ञान से होने वाले लाभो का सदा चिन्तन सहायक होता है। हमारा चित्त उस ओर अनायास जाता है जिसकी प्राप्ति से हमें सुख या लाभ मिले। जिस पदार्थ की प्राप्ति से दु:ख या हानि हो उस ओर से मन हटता है। इसीलिए भौतिक जगत् या विषयो से होने वाली भयकर हानि का चिन्तन जब चित्त करेगा तो उससे

(शेष पृष्ठ ७ पर)

क्या वेद के आधिदैविक अर्थ उपेक्षणीय हैं ?

—पण्डिता प्रज्ञा देवी, वाराणसी

गतांक से आगे

आचार्य जी 'सोमास आयव पवन्ते मद्यम् मदम्' जैसे मन्त्रों में आयु[1] शब्द को निघण्टु में मनुष्य नामों में पढ़ा हुआ देखकर यह मानते हैं कि मन्त्रगत सोम शब्द आयु शब्द के साथ आने के कारण मनुष्य अर्थ वाला ही हो सकता है किन्तु 'एति निरन्तर गच्छतीति आयु । दिव्य" (यजु० १५ ६३) ऐसा अर्थ महीधर ने भी आयु शब्द का किया है तथा "आयो प्राप्नु योग्य (मेघ ग) (ऋ० १। ०४।४) में ऋषि दयानन्द ने भी प्राप्त होने योग्य अर्थ किया है फिर इन मन्त्रों के आधिदैविक अर्थ होने में क्या सन्देह है ? एक बहुत बड़ी बात "सोमो वधूयुर-भवत्" (ऋ० १०।८५।९। मन्त्र को उद्धृत करते हुए आचार्य जी पृ०१५२ में फिर कहते हैं—"सम्पूर्ण वेद में सोम के सिवाय किसी देवता को 'वधूयु नहीं कहा है इन युक्तियों से स्पष्ट है कि सोम ऐसा विद्वान् है जो अभी-अभी शिक्षा संस्थाओं गुरु-कुलों से पढ़कर आया है।"

वाह रे आचार्य जी ! इस दशम मण्डल के ८५वें सूक्त की जिसकी ऋषिका सूर्या सावित्री है यह संपूर्ण सूक्त कुछ मंत्र भेद से अथर्ववेद के काण्ड १४ सूक्त १-२ में भी आया है। इसमें तो आधिदैविक वर्णन इतना प्रिय और आलंकारिक है कि इसको केवल मनुष्य परक बना देने से सब सौन्दर्य ही नष्ट हो जाता है। 'सोमो वधयुरभवत्' का अर्थ हुआ सोम=चन्द्रमा मानो वधू की इच्छा वाला हुआ तो सूर्य ने अपनी बेटी सूर्या=अपनी किरणों का विवाह मानो चन्द्रमा से किया, जब सूर्य की पुत्री किरण अपने पति चन्द्रमा के पास जाने लगी तो सविता =सूर्य ने अपनी पुत्री को कुछ यौतुक=दायज दिया वह दायज क्या था ? इसको अगले मंत्र में बताया—

मनो अस्या अन आसीद् द्यौ आ-सीदुत छदि । शुक्रावनड्वाहावास्तां यदयात्सूर्या गृहम् ॥

ऋ० १०।८५।१०

अर्थात् सूर्या पुत्री का मन रूपी रथ था जिसमें दो बैल ऋक् और साम के रूप में बंधे थे। इसी प्रकार आगे भी कहा कि सूर्य ने जो उसको (अपनी पुत्री को) बिछावन दिया मानो चित्ति=ज्ञान[2] ही उसका बिछावन था। चक्षु ही अभ्यञ्जन =उबटन था तथा द्यौलोक और पृथ्वीलोक उसका सुहाग पिटारा था। वेद का यह सारा आलंकारिक सोम=चन्द्रमा का विवाह और दहेज यह बताता है कि पृथ्वीलोक में भी हम अपनी पुत्रियों के विवाह में ज्ञानरूपी बिछावन तथा उत्तम गाथाओं से परिष्कृत कल्याणमय वचनरूपी वस्त्र, पति की गुण ग्राहक बुद्धि आदि दहेज में दें। अर्थ के भौतिक आडम्बर नहीं तब कल्याण हो सकता है यह वेद की कितनी बड़ी खूबी है कि आधिदैविक के साथ-साथ मनुष्यों के लिए बहुत बड़ी शिक्षा दे दी।

इन सम्पूर्ण मन्त्रों को स्नातक परक सिद्ध करने के लिए आचार्य जी ने ओषधि शब्द का व्युत्पत्ति के बल से संस्थायें अर्थ करने में पर्याप्त हेतु दिखाया है यदि ओषधि शब्द का व्युत्पत्ति बल से शिक्षा संस्थायें अर्थ किया जा सकता है तो सोम शब्द का इन मंत्रों में स्नातक अर्थ के सिवाय और अर्थ नहीं हो सकता ऐसा अवरोध क्यों ?

ग्रंथ में उद्धृत मंत्रों की राष्ट्र परक व्याख्या समुचित है इसमें सन्देह नहीं किन्तु 'और अर्थ इनके नहीं हो सकते" यह कथन अनुचित है। श्री आचार्य जी "राष्ट्र में नहरें खुदवाई जायें"[3] प्रकरण में तीन ऐसे प्रसिद्ध मंत्र उपस्थित करते हैं जिनमें 'अहि' शब्द आया है। मन्त्र हैं—

१ इन्द्रस्य नु वीर्याणि प्रवोचम् ऋ० १।३२।१॥

२ अहन्नहिं पर्वते शिश्रियाणम् ऋ० १।३२।२॥

दासपत्नीरहिगोपा अतिष्ठन् ऋ० १।३२।११॥

यहां आचार्य जी लिखते हैं कि प्रस्तुत मंत्रों में 'अहि शब्द का मेघ अर्थ नहीं लिया जा सकता ? यदि पर्वत का अर्थ मेघ लें तो दूसरे मंत्र में भला मेघ में रहने वाला मेघ कौन होगा" बादल में बिल या छिद्र कौन से होंगे ? वे रुकेंगे किस चीज से इत्यादि अतः । इन तीन मन्त्रों में अहि का अर्थ शिला-भूमि, जल निरोधक पदार्थ ही है।"

यहां देखें प्रथम एवं द्वितीय मंत्र दोनों ही महर्षि द्वारा ऋग्वेदादि-भाष्य भूमिका में व्याख्यात हैं। दोनों मंत्रों में अहन् (अहि) मेघ को त्वष्टा (सूर्य) ने मारा यह चर्चा है। प्रथम मन्त्र में जब त्वष्टा ने अहि को मारा तो वह अहि=मेघ आकाश में से नीचे अवश्य गिरा किन्तु उसका (मेघ का) का शरीर अभी पृथ्वी में जल के रूप में नहीं गिरा क्योंकि उसने (पर्वत शिश्रिया-णम) मेघ मण्डल का आश्रयण ले लिया, वहां जल टिक गया तब पुनः त्वष्टा ने उस पर अपने प्रकाशमय किरण रूपी विद्युत् को फेंका, उससे प्रहार किया, तब जा करके वह मरा और उसका शरीर पृथ्वी पर आया जिसके लिए इसी मन्त्र में कहा कि वह वृत्र के शरीर रूपी जल समुद्र की ओर ऐसे वह चला जैसे बछड़े वाली गौ बछड़े की ओर भाग चलती है। सभी जानते हैं कि मेघ मण्डल में जब विद्युत् का संघर्षण होता है तब वर्षा होती है। प्रथम बार वृत्र मेघ को मारा गया तो वह आकाश से कुछ नीचे आकर मेघ मण्डल में स्थित हुआ उसके पश्चात् मारने पर वर्षा हुई। यही दो दोनों मंत्रों का भाव है और इसीलिए द्वितीय मंत्र के भाष्य में ऋषि दयानन्द ने गर्जन-शील मेघ अर्थ किया है तथा प्रथम मंत्र में ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में "फिर वही मेघ आकाश में से नीचे गिर करके पर्वत अर्थात् मेघ-मंडल का पुनः आश्रय लेता है" ऐसा अर्थ किया है। यह है मेघ में रहने वाला मेघ जिसके अर्थ में श्री आचार्य जी को बड़ी भारी आपत्ति है। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि ग्रन्थ प्रणयन के समय इन मंत्रों के ऋषिवर के स्वयं किये भाष्यों को कैसे नहीं देखा गया ? आचार्य जी का तृतीय आपत्तिजनक मन्त्र जिसमें वे अहि शब्द का मेघ अर्थ नहीं मानते उसकी भी निरुक्त गत व्याख्या तथा महर्षि दयानन्द का भाष्य यहां देखने योग्य है ताकि भ्रम दूर हो सके।

निरुक्त २।१७ में तृतीय मन्त्र व्याख्यात है जहां अहि का अर्थ स्पष्ट ही "अहि अयनात् एति अन्तरिक्षे" करके व्याख्या की गई है। दास-पत्नी का अर्थ दुर्ग ने "उपक्षयति कृष्यादीनि कर्माणि" तथा बिलम्' का यास्क ने 'बिल भर भवति' अर्थ किया है। प्रथम मंत्र भी निरुक्त ७।१ में आया है जिसका सभी भाष्य-कारों ने सूर्य मेघ का हनन करता है ऐसा निरुक्त के आशयानुसार आधि-दैविक अर्थ किया है। महर्षि दयानन्द ऋ० १।३२ सूक्त के प्रारम्भ में ही —"तत्रादौ इन्द्रशब्देन सूर्यलोक-दृष्टान्तेन राजगुणा उपदिश्यन्ते" ऐसा लिखते हैं। ऋषि दयानन्द इन मन्त्रों में क्रमशः अहि एवं इन्द्र का मेघ तथा सूर्य ही अर्थ करते हैं और उपमालंकार द्वारा यह बताते हैं कि जैसे मेघ को मार कर सूर्य जल को पृथिवी पर गिराता है वैसे शत्रुओं को राजा लोग छिन्न-भिन्न करें। इतने सुन्दर स्पष्ट और प्रसिद्ध अर्थों के होते हुए इन तीनों मंत्रों में "मेघ अर्थ नहीं है" यह कहना भूल है।

प्रस्तुत ग्रंथ के "राज्य शिल्पों और उद्योग धन्धों को प्रोत्साहित करे[4]" इस प्रकरण में ग्रंथ लेखक कहते हैं कि - ऋभु पृथ्वी लोक में रहने वाले सामान्य मनुष्य ही हैं। यह लिखते हुए वे जो मन्त्र उदा-हरण रूप में प्रस्तुत करते हैं वे सब ऐसे हैं जिनमें नरः, नृभि मर्त्यासः शब्द आया है और बस यही हेतु ऋभुओं को मनुष्य बताने में आचार्य जी का है। क्या कहूं आचार्य जी द्वारा दिये गये प्रथम उदाहरण—

"आ मनीषामन्तरिक्षस्य नृभ्य." (ऋ० १।११०।६) में ही जहां नृभ्य शब्द है वहां अन्तरिक्षस्य शब्द भी तो ध्यान देने योग्य है। इसके अति-रिक्त अन्य मन्त्रों में सौधन्वना एवं सौधन्वनेभि शब्द आये हैं, धन्वन् शब्द अन्तरिक्ष नामों में निघण्टु में है। तदनुसार सुधन्वन् अन्तरिक्ष के पुत्र=अन्तरिक्ष में होने वाले ये सौधन्वन् ऋभु पृथिवीलोक के नर नहीं कहे जा सकते। अन्य मन्त्र ऋ० १।११०।८ (मातरम्=अन्त-रिक्षम्[5]) आदि में भी आधिदैविक अर्थ स्पष्ट है फिर नर शब्द देखकर इन मन्त्रों का अर्थ पृथिवीस्थ नर लगाना ठीक नहीं। "नरः शब्द समग्र संस्कृत साहित्य में मनुष्यों

२. चित्तिरा उपबर्हणम् चक्षुरा अभ्यञ्जनम् । द्यौर्भूमि कोश आसीद्यदयात्सूर्या पतिम् ॥ (ऋ० १०।८५।७)

१. देखें पृ० १४७ भाग १। ३. देखें पृष्ठ ३०, भाग-२। ४. देखें पृ० १६९, भाग-२।

५. इ०—[illegible] निर्मीकर्मोऽस्मिन् भूतानि । (निरुक्त २।८)

का वाचक है[६]" आचार्य जी की यह स्थापना निर्मूल है। स्कन्द स्वामी ने ऋ० १।८६।८ एव ऋ० १।८५।८ के अपने वेदभाष्य में नर का 'मनुष्याकारा मरुत' अर्थ किया है तथा मुद्गल ने 'वृष्ट्यादेर्नेतारो मरुत' किया है अत अन्तरिक्षस्थ नभ्य का अन्तरिक्ष के नरो (ऋभुओ) के लिए अर्थ करना उचित है। वस्तुत आचार्य जी को समग्र संस्कृत साहित्य की अपेक्षा "समग्र वैदिक वाङ्मय" ऐसी स्थापना करनी चाहिए थी।" इस प्रकरण मे आचार्य जी ने 'मर्त्तास सन्त' शब्द की खूब खिचाई की है और उसमे मरणधर्मा मनुष्य ऐसा अर्थ निकालने की चेष्टा की है वे इस विषय में सायणाचार्य के 'मनुष्या सन्त' इस कथन को अत्यन्त ही प्रमाण कोटि में रख रहे हैं। यहा विचार करने की बात है कि इस मन्त्र मे भी सूरचक्षस ऋभव का विशेषण ऐसा है जो पुकार-पुकार कर कह रहा है कि ऋभु सूर्य की चमक वाले हैं सवत्सर से सम्बद्ध होते हैं वे (मर्त्तास सन्त) क्षण में नष्ट होने वाले होते हुए भी (अमृतत्वम्) अविनाशित्व=देवपन को प्राप्त हुए। इस सूक्त के तृतीय मन्त्र मे भी—"तत्सविता वो अमृतत्वमासुवत" अर्थात् उस सविता ने हे ऋभुओ! तुम मे अमृतत्व उत्पन्न किया, ऐसा कहा है।

निरुक्त ११।१६ मे मर्त्तास सत की व्याख्या स्कन्द स्वामी ने—मरणधर्माण क्षणविनाशिन सौधन्वना धन्वान्तरिक्ष शोभन च धन्व सुधन्व तस्मिन् धन्वनि भवास्ते ऋभुवो वैद्युता ज्योतिर्विशेषा कथ ज्ञायते अमृतत्वमानशुरिति" स्वाभिरुद्रकर्षणै कर्मभि। पुनरपि वृष्टि कुर्वन्त्येवेत्यर्थ" ऐसा अर्थ किया है, क्योंकि पृथिवी मे स्थित जल जो मर्त्तास सन्त थे को सूर्य किरणों ने ऊपर खींच लिया अत वे पृथ्वीस्थ जल मरणधर्मा थे और सुधन्वा मे स्थित कर दिया गया तो वे अविनाशित्व को प्राप्त हो गए यही यहा मन्त्र का भाव है। निरुक्त की व्युत्पत्ति "उरु आस्नोतीति वा ऋतेन भान्तीति वा ऋतेन भवन्तीति वा[७]" भी यह नही कहती कि मन्त्रगत ऋभु शब्द का केवल शिल्पी ही अर्थ किया जाये। उपर्युक्त विशेषणों को देखकर आदित्य किरणें आदि अर्थ न किया जावे। यहाँ विस्तारभय से ऋभु के तीनों भाई वाज ऋभुक्षा विभ्वा वाज के नाम से निरुक्त में भी कही हुई की व्याख्या नहीं दी जा रही है।

इस ग्रंथ के "राज्य और न्याय विभाग[८]" में श्री आचार्य जी लिखते हैं कि—"सायणादि ग्रावा का अर्थ पत्थर करते हैं यह इन भाष्यकारो की भूल है क्योंकि ग्रावा शब्द गृ शब्दे धातु से बनता है अत इसका अर्थ उपदेश करने वाला हो होगा।" वस्तुत किसी भी आग्रह में आकर ग्रावा शब्द का अर्थ पत्थर न मानना समस्त श्रौतकर्म एव संस्कृत वाङ्मय की भी अवहेलना करना है। आचार्य जी ने ग्रावा शब्द के साथ भी वेद मन्त्र ऋ० १०।७६।६।८ में नर शब्द देखकर पूर्ववत ही ग्रावा का अर्थ उपदेश कर्त्ता मनुष्य किया है। समग्र संस्कृत साहित्य मे ग्रावा शब्द पत्थर का वाचक नही है ऐसा दावा श्री आचार्य जी यहा नही कर सकते क्योंकि ग्रावा शब्द संस्कृत कोशो मे बार-बार पत्थर अर्थ में आया है। निघण्टु मे ग्रावा शब्द मेघ अर्थ में आया है। याज्ञिक क्रियाओ मे अधिषवण फलक के ऊपर जिस पत्थर को रखकर सोम औषधि को कूटा जाता है वह पत्थर ग्रावा ही कहलाता है क्योंकि सोमयाग की याज्ञिक क्रियाओ द्वारा मेघ अन्तरिक्षस्थ सोम (जलकण) मेघो के विद्युत सघर्षण आदि क्रियाओ (वृष्टि विज्ञान) को समझाया जा रहा होता है। अत अन्तरिक्षस्थ मेघ का प्रतिनिधि रूप ग्रावा पत्थर यहा सोम कूटने के लिए रखा जाता है। सोम कूटने का खट्खट् शब्द मानो अन्तरिक्षस्थ बादलों का गरजना है। ये सब आधिदैविक प्रक्रिया पृथ्वी लोक मे याग द्वारा समझाई जा रही होती है अत ग्रावा शब्द का अर्थ विशेषण बल मे अधिराष्ट्रपरक कुछ भी किया जाये किन्तु इसका पत्थर अर्थ न मानना बहुत बडे सत्य से मुख मोडना होगा।

मुझे दु ख है कि श्री आचार्य जी जो ग्रंथ के अनेको स्थलो पर ऋषि दयानन्द को श्रद्धानत स्मरण ही नहीं करते अपितु उनके यौगिकवाद को भी स्वीकारते हैं वही इन स्थलो मे दयानन्द या यास्क के मन्त्रार्थों को क्यो लाघ जाते हैं? आचार्य जी स्वय ग्रंथ के 'विषय प्रवेश' मे पृष्ठ ७ पर लिखते हैं कि—"वेद मे रूढिवाद का स्थान नहीं होना चाहिए।" पुन रूढिवाद स्वीकार लेना आश्चर्यजनक है। वे पृ० १६७ भाग २ पर लिखते हैं—"दयानन्द के अनुयायी वेद में यौगिक अर्थ वहाँ करते हैं जहां वैसा किये बिना वेद निरर्थक और विज्ञान विरुद्ध बात कहता हुआ प्रतीत हो। जहां रूढ अर्थ मानकर भी वेद शिक्षाप्रद वैज्ञानिक अर्थ देता हो वहा हम यौगिकवाद का सहारा नहीं लेते हैं।[९]" भला बताइये! आचार्य जी के कथनानुसार क्या माना जाये वेद का यौगिकवाद या रूढिवाद। वैसे वेद में रूढ शब्द मानना आर्ष प्रणाली को ही जड मूल से हिला देना है।

ये कुछ तथ्य स्थालीपुलाक न्याय से मैंने अपने इस लेख मे सतर्क भाव से खुले विचार हेतु उद्धृत किये हैं। जिस प्रकार केवल याज्ञिक प्रक्रिया मे किये गए सायणादि के अर्थ हम इसीलिए अपूर्ण मानते हैं कि उनमे अन्य प्रक्रियाओं के अर्थ नही हैं उसी प्रकार अन्यत्र भी समझना होगा। केवल आध्यात्मिक, आधिभौतिक या आधिदैविक किसी एक प्रक्रिया मे किये गये वेदार्थ के लिये यह नही कहा जा सकता कि 'अमुक मन्त्र का मात्र इतना ही अर्थ है।" हमें सोचना होगा और विशेष रूप से आधिदैविक प्रक्रिया के सबध मे सोचना होगा कि किस प्रकार हम वेद मन्त्रो द्वारा इस प्रक्रिया को उजागर कर सकें, यह बहुत बडा कार्य है और इसके लिए आधार हमारा प्राचीन वाङ्मय तथा स्वय वेद भी है।

□

६ देखें पृष्ठ १४२, भाग २।

७ द्र० नि० ११।१३ तथा आदित्यरश्मयोऽप्यृभव उच्यन्ते।

८ देखें पृष्ठ ५५६, भाग १।

९ ग्रन्थ के ३ भाग पृ० १६ में भी यही बात पुन दोहराई गई है।

ज्ञान का दीपक जलाएं

आज मानव के हृदय में,
फैलता है अज्ञान का तम।
दानवी वृत्तियाँ न होती,
भूमि पर किंचित् भी कम।

द्वेष-ईर्ष्या फैलती है,
फैलता दनुजत्व निर्मम।
स्वार्थ का है बोल-बाला,
है मचाती ग्लानि ऊधम।

है बढा आतक दूषित,
कर रहा निर्दोष का वध।
बन्द न हम कर सके हैं,
कृष्ण की धरती पे गोवध।

हो रहा ताडव धरा पर,
अन्य-अत्याचार का।
बढ रहा निर्भीक होकर,
असुर भ्रष्टाचार का।

इस विषम स्थिति मे आओ!
हम करें मिलकर विचार।
दूर जिससे हो धरा का-
अनय मिश्रित सब विकार।

श्रोत सुख का, शान्ति का हम,
इस धरित्री पर बहायें।
आज मानव के हृदय में,
ज्ञान का दीपक जलायें।

स्वार्थ से ऊपर उठें हम,
हो समर्पित भाव पावन।
प्रेम से पूरित सदा हो,
भूमि पर मनुजो का मन।

हो सुविकसित इस धरा पर,
शुभ्र-शोभित भ्रातृ-भावना।
पूर्ण हो सारे जनो की,
पुण्य-मय कमनीय कामना।

हर्ष से हम मग्न होकर,
पर्व दीपावलि' मनायें।
आज जन-जन के हृदय में,
प्रेम का दीपक जलायें।

—राधेश्याम 'आर्य' विद्यावाचस्पति
मुसाफिरखाना सुलतानपुर
(उ० प्र०)

टंकारा में सूखा राहत केन्द्र

टंकारा से पत्र प्राप्त हुआ है कि सौराष्ट्र मे गत तीन वर्षों से निरतर वर्षा न होने से वहा स्थिति अत्यन्त गम्भीर है। अत सभा ने निश्चय किया है कि वहाँ पर सहायता सामग्री शीघ्रातिशीघ्र भेजी जाये। इसलिए महर्षि दयानन्द स्मारक ट्रस्ट, टंकारा के सहयोग से टंकारा में एक सहायता केन्द्र खोल दिया गया है। जैसे-जैसे लोगों से सहायता राशि, कपडे, दालें, चावल, अनाज आता जाएगा, वहाँ भिजवा दिया जाएगा।

मेरी समस्त आर्य महानुभावो एव आर्य संस्थाओ से प्रार्थना है कि वह राहत सामग्री व सहायता राशि "आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली-११०००१" के पते पर अथवा "महर्षि दयानन्द स्मारक ट्रस्ट, टंकारा (राजकोट), गुजरात-३६३६५०" के पते पर भेजें ताकि सहायता केन्द्र का कार्य सुचारु रूप से चल सके।

—रामनाथ सहगल

मातृ मन्दिर कन्या गुरुकुल वाराणसी का वार्षिक समारोह

मातृ मन्दिर कन्या गुरुकुल वाराणसी का वार्षिक समारोह ३० अक्तूबर से १ नवम्बर १९८७ तक बड़े उत्साहपूर्वक मनाया जा रहा है। जिसमें शोभायात्रा, संस्कृत सम्मेलन, बुद्धिजीवी सम्मेलन, महिला सम्मेलन, गोरक्षा सम्मेलन, आयोजित किए जायेंगे।

आमन्त्रित विद्वान् हैं—स्वामी आनन्दबोध सरस्वती, स्वा० जगदीश्वरानन्द स० प्रेम प्रकाश, डा० प्रशान्त वेदालंकार, श्री वेंकटरमन उपकुलपति, श्रीमती कृष्णा साही (राज्य शिक्षा मन्त्री), काशी नरेश श्री विभूति नारायण सिंह, प० सत्य देव शास्त्री, श्री प्रताप सिंह शूर जी वल्लभदास, प्रो० आनन्दप्रकाश जी आदि महानुभाव हैं।

कार्यक्रम बड़े शिक्षाप्रद एवं रोचक होंगे। इस गुरुकुल में निर्धन मेधाविनी बालिकाओं के लिए छात्रवृत्ति की भी सुविधा है। इस गुरुकुल की शिक्षा दीक्षा आज के युग में उच्च आदर्श है। गुरुकुल में अनुसन्धानशाला के लिए अनेक कार्य चल रहे हैं जिसमें यज्ञ के वैज्ञानिक पक्ष पर शोध हेतु प्रयोगशाला निर्माण योजना है। अनेक वेदप्रचार सम्बन्धी योजनायें प्रतीक्षा में हैं रही हैं। दानी महानुभावों से दान हेतु प्रार्थना है अधिक से अधिक इस कार्य में सहयोग देकर कृतार्थ करें।

—डा० पुष्पावती
अध्यक्षा
मातृ मन्दिर कन्या गुरुकुल
वाराणसी

शंकराचार्य जी एवं सती धर्म

दैनिक हिन्दुस्तान दिनांक ७ अक्टूबर १९८७ के पृष्ठ २ स्तम्भ ८ में प्रकाशित सती धर्म के पक्ष में समाचार पढ़कर आश्चर्य हुआ। जहां तक सती धर्म का प्रश्न है कौन असहमत होगा, किन्तु सती के रूप में की जाने वाली हत्याओं का कोई समर्थन नहीं करेगा। वर्तमान में सम्पूर्ण देश के धार्मिक, सामाजिक एवं महिला संगठन एक स्वर से इस जघन्य कृत्य का विरोध कर रहे हैं। इस प्रकार पुरी के शंकराचार्य जी का यह वक्तव्य शास्त्र, काल एवं परिस्थिति सभी के विपरीत है। ऋग्वेदादि किसी भी धर्मशास्त्र का उद्धरण भले ही अपनी मनगढन्त व्याख्या से ही वे प्रस्तुत करें। विज्ञजन उसका सटीक युक्तियुक्त उत्तर देंगे क्योंकि धर्मशास्त्र में ऐसा कोई विधान नहीं है ऐसा बताया जाता है।

शंकराचार्य जी का यह कहना कि राजा राममोहन राय के सुधारात्मक आंदोलन के या १५० वर्ष पूर्व देश में विधवा समस्या जैसा कुछ नहीं था। राजा दशरथ की मृत्यु पर एक साथ तीन रानियां विधवा हुई थी, उनमें से कौन दशरथ की चिता पर सती हुई थी। अभी तक तो पता नहीं चला।

विधवा होने के भय से नारियों की हत्याओं की अनुमति देना उसी प्रकार है जैसे कि रोगी अथवा असाध्य रोग के भय से रुग्ण व्यक्ति की हत्या कर देना, क्योंकि फिर तो कोई रोगी ही नहीं होगा। इसी तिथि के दैनिक हिन्दुस्तान के पृष्ठ ७ स्तंभ ८ में विश्व चिकित्सा संघ के मैड्रिड अधिवेशन में डाक्टर के परामर्श या रोगी के निकट सम्बन्धियों के कहने पर रोगी की जान लेना जानबूझ कर हत्या करने के ही समान अनैतिक बताया है। अस्तु महामान्य शंकराचार्य जी या तो ऐसे वक्तव्य द ही नहीं या फिर उनके शास्त्रीय प्रमाण विज्ञापित कर, ताकि उनका सामयिक उत्तर दिया जा सके।

—श्रीमती दर्शन देवी भारद्वाज
F-४२, मानसरोवर कालोनी अलीगढ़

४० हजार रुपये के दान की घोषणा

आर्यसमाज निर्माण विहार कालोनी में आर्यसमाज बर्षों से लगती है। वार्षिकोत्सव के उपलक्ष में समारोह सेन्ट्रल पार्क में हुआ। पार्क में शामियाना लगाकर बड़े उत्साहपूर्वक यज्ञशाला बनाकर कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। जिसमें प० यशपाल सुधांशु यज्ञ के ब्रह्मा थे तथा रात्रि में वेदप्रवचन भी उन्हीं के द्वारा हुए। रात्रिकालीन प्रवचनों में भारी संख्या में नर-नारी आते रहे। अधिक संख्या हो जाने से बड़ा टैण्ट लगाना पड़ा। इसी मध्य आर्यसमाज के भवन के लिए ५०० गज जमीन मिल गई जिसके लिए तुरन्त ८० हजार रुपये देने की आवश्यकता पड़ी। कथा के अन्तिम दिन प० सुधांशु ने भावपूर्ण शब्दों में मार्मिक अपील की जिसके कारण वहीं पर तुरन्त ४० हजार रुपये दान में मिल गये। जनता के उत्साह से कार्यक्रम अत्यन्त सफल रहा। कथा से पूर्व तेजस्वी गायक प० सत्यदेव स्नातक के भजन हुए।

निवेदक रोशनलाल गुप्त

(पृष्ठ ३ का शेष)

आध्यात्मिक पथ

दूर होगा इसी को वैराग्य कहते हैं। इस प्रकार चित्त को परम सुखदायी तत्त्व परमात्मा की ओर प्रेरित करते हुये भौतिक संसार से हटाया जाये, यही योग का स्वरूप और लाभ है। इससे मनुष्य लक्ष्य की प्राप्ति की ओर निरन्तर अग्रसर होता जाता है।

पुस्तकालय भवन का उद्घाटन

रणवीर रणजय स्नातकोत्तर महाविद्यालय अमेठा के नवनिर्मित पुस्तकालय भवन का विजयादशमी (२।१०।८७) के पावन पर्व पर अवध विश्वविद्यालय के कुलपति श्री डा० ए० सी० बनर्जी के करकमलों द्वारा उदघाटन सम्पन्न हुआ। ज्ञातव्य है कि इसका शिलान्यास भारत के प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी ने किया था। केन्द्र तथा प्रांत से तीन लाख रुपये सहायतार्थ मिले तथा महाविद्यालय के संस्थापकाध्यक्ष राजर्षि श्री रणंजय सिंह ने अपने पुस्तकालय से एक लाख रुपये से अधिक की किताब दानस्वरूप प्रदान की हैं।

आर्यसमाज अमेठा का निर्वाचन निम्न प्रकार सम्पन्न हुआ

प्रधान डा० भीमसेन गुप्त
उपप्रधान आचार्य वेदप्रकाश आर्य
मन्त्री प्रो० ज्वलन्तकुमार शास्त्री
उपमन्त्री डा० म प्रकाश आर्य
पुस्तकालयाध्यक्ष श्री अम्बरीषकुमार
आय व्यय निरीक्षक श्री अरविन्द कुमार द्विवेदी

आर्यसमाज काकड़वाड़ी का चुनाव

आर्यसमाज बम्बई की ११२वीं वार्षिक सर्वसाधारण सभा दिनांक २७।९।१९८७ को सम्पन्न हुई जिसमें आगामी वर्ष के लिए निम्नलिखित पदाधिकारी सर्वसम्मति से निर्वाचित हुए—

प्रधान श्री जगनप्रसाद गौतम
मन्त्री करसनदास राणा
कोषाध्यक्ष राजेन्द्रनाथ पाण्डेय

करसनदास राणा
मन्त्री
आर्यसमाज बम्बई

चतुर्वेद ब्रह्मपारायण महायज्ञ

श्रीमद्दयानन्द वेद विद्यालय, ११९, गौतम नगर, नई दिल्ली-४९ में प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी चतुर्वेद ब्रह्मपारायण महायज्ञ रविवार दिनांक १ नवम्बर ८७ से २२ नवम्बर ८७ रविवार तक होगा, जिसके ब्रह्मा श्रद्धेय श्री स्वामी दीक्षानन्द जी सरस्वती होंगे। आप सभी यज्ञप्रेमी सज्जनों से प्रार्थना है कि अधिक से अधिक यजमान बन कर तन, मन, धन से सहयोग कर और अपने विद्यालय को उन्नत कर।

यज्ञ के निमित्त घी सामग्री और समिधाओं के लिए दान देकर यज्ञ को सफल बनायें तथा ऋषि-लंगर के लिए आटा दाल चावल और सब्जी का दान देकर कृतार्थ कर।

यज्ञ एवं उपदेश का समय
प्रातः ६ बजे से ९ ३० बजे तक
सायं ३ बजे से ६ ३० बजे तक

प्रति शनिवार को सायं ४ बजे से ७ बजे तक विशिष्ट सम्मेलनों का आयोजन किया जाएगा। अतः आप अधिक से अधिक संख्या में पधारकर यज्ञ एवं सम्मेलनों की शोभा बढ़ायें।

निवेदक
हरिदेव आचार्य

भूल सुधार

आर्यसन्देश के ११ अक्तूबर ८७ अंक के पृष्ठ ४ पर आर्य केन्द्रीय सभा के वर्ष १९८७-८८ के चुनाव समाचार में सभा मन्त्री श्री सुरेन्द्र कुमार हिन्दी का नाम भूल से प्रकाशित होने से रह गया है। श्री सुरेन्द्र कुमार हिन्दी भी वर्ष १९८७-८८ के लिए केन्द्रीय सभा के मन्त्री हैं।

(२) ११ अक्तूबर ८७ के अंक में पृष्ठ ३ पर गलती से 'बुद्धिजीवी' लेख के लेखक डा० लक्ष्मी नारायण दुबे छप गया है। वस्तुतः उसके लेखक श्री चमनलाल जी हैं।

—सम्पादक

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री … द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा …
वैदिक प्रेस गली न० १०, … दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (डी०) ७३९

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ . अंक २ | रविवार १ नवम्बर १९८७ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८७ | कार्तिक २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

महर्षि दयानन्द निर्वाण दिवस सम्पन्न

ऋषि की जलायी ज्योति को हम विश्वभर में फैलायें —स्वामी आनन्द बोध

"आज देश में 'रूपकंवर' सतीकांड हो रहे हैं और पुरी के शंकराचार्य उनका समर्थन कर रहे हैं। हम अपनी माताओं व बेटियों को जलने नहीं देंगे, चाहे इसके लिए हमें कितनी भी कुर्बानियां क्यो न देनी पड़ें।" ये उद्‌गार सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान पूज्य स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती ने आर्य केन्द्रीय सभा, दिल्ली द्वारा दीपावली २२ अक्टूबर को आयोजित महर्षि दयानन्द सरस्वती के १०४वें निर्वाणोत्सव का विधिवत् उद्‌घाटन करते हुए व्यक्त किये।

उन्होंने आगे कहा कि आज राष्ट्र की एकता व अखण्डता को सुदृढ़ करने में आर्यसमाज को सदैव की भांति अहम् भूमिका निभायी है।

स्वामी दयानन्द युग पुरुष थे उनकी जलाई ज्योति है। आर्यसमाज हमें अपने संगठन को सुदृढ़ करने के लिये हर सम्भव कार्य करना चाहिए। इस ज्योति को हम और अधिक जलायें।

"सुप्रसिद्ध हिन्दी सेवी पत्रकार लेखक एवं "भाषा" पत्रिका के के यशस्वी सम्पादक डा० वेद प्रताप वैदिक ने कहा कि आर्यसमाज एक क्रांतिकारी आन्दोलन है और आज का दिन हमें संकल्प दिवस के रूप में मनाना चाहिए तथा महर्षि के कार्यों को पूरा करने का व्रत लेना चाहिए। डा० वैदिक ने आगे कहा कि आज हमें मनुष्यों, समाजों व राष्ट्रों में व्याप्त असमानता दूर करनी चाहिए। उन्होंने हिन्दी के समर्थन में एक देशव्यापी आन्दोलन चलाने की आवश्यकता पर भी बल दिया।

डा० वैदिक ने आर्यसमाज सर्वोच्च संगठन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती के कुशल व यशस्वी नेतृत्व की सराहना करते हुए सभी आर्य भाई बहिनों से देशहित आर्यसमाज को और सुदृढ़ करने का आह्वान भी किया।

सांसद एवं भूतपूर्व राज्यमंत्री श्री डी० पी० यादव ने महर्षि दयानन्द को एक युगपुरुष बताया और कहा कि आज देश स्वामी जी के मार्ग पर चलकर वर्तमान संकट से उभर सकता है। उन्होंने कहा कि दयानन्द राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के सूत्रधार थे।

प० चिन्तामणि ने गर्व से कहा कि राजनीति ने मुझे राजनेता तो बनाया है परन्तु आर्यसमाज ने मुझे पण्डित बना दिया है। उन्होंने महर्षि के सुधारवादी कार्यों की चर्चा की।

डा० श्रीमती सरोज दीक्षा विद्यालंकार ने महर्षि दयानन्द द्वारा नारी जाति के उद्धार के लिये दिये गए अद्‌भुत कार्यों का उल्लेख करते कहा कि आर्य देवियो की सती प्रथा, दहेज आदि कुरीतियो को दूर करने के लिए कार्य करना चाहिए।

दक्षिण अफ्रीका से पधारे आर्यसमाजी नेता श्री सन्तकुमार सिंह

(शेष पृष्ठ ७ पर)

निर्वाण दिवस पर संगठित व अनुशासित होने का संकल्प लें

— सूर्य देव —

आर्यसमाज झिलमिल कालोनी दिल्ली में पूर्वी दिल्ली की समस्त आर्यसमाजों की ओर से महर्षि निर्वाण दिवस मनाया गया। समस्त आर्यसमाजों की ओर से अच्छी संख्या में आर्य नर नारी एकत्र हुए। इस अवसर पर आचार्य हरिदेव, श्रीमती उषा शास्त्री, श्री यशपाल सुधांशु तथा दिल्ली आर्यसमाज के प्रधान श्री सूर्यदेव ने जनसमूह को सम्बोधित किया तथा महर्षि के प्रति श्रद्धासुमन अर्पित किये। सभा में ८५ वर्षीय आशानन्द भजनोपदेशक ने अपनी ओजस्वी वाणी से महर्षि के अन्तिम प्रयाण का गीत गाया। ऐ! आर्यो मेरी नमस्ते हो! अब मैं दुनिया से जाता हूं। भावावेश में लोगों की आंखें छलछला गयीं।

पं० सुधांशु ने कहा—हमें ऋषि के वे वाक्य याद रखने चाहिए जिनमें उन्होंने कहा था—हमने विश्व हितकारी आर्यसमाज बनाया है इससे प्रेरणा लेते रहना। उन्होंने कहा था हमने लोगों के हृदयों को कोमल बनाना है, दूर भागतों को पास लाना है। हमें ऊँच नीच के भेदभाव पूर्णतया मिटाने हैं। ऋषि की निर्भीकता, उनका साहस, उनका त्याग उनका दया भाव, उनका पाखण्ड खण्डन, उनकी ईश्वर और देशभक्ति हमें अपनानी है।

सभा प्रधान ने कहा—वैदिक धर्म के प्रहरियो! हमारा संकल्प होना चाहिए कि स्थान-स्थान पर आर्यसमाज और वैदिक सिद्धान्तों की चर्चा हो। जगह-जगह आर्य समाज स्थापित हों। उन्होंने आर्यसमाज झिलमिल कालोनी के निर्माणाधीन भवन के लिए धन की भी अपील की।

श्री सूर्यदेव ने जोरदार शब्दों में कहा—आज हमें अपने संगठन को सुदृढ़ करने के लिए अनुशासित और संगठित होने की नितान्त आवश्यकता है। सभा की अध्यक्षता श्रीमती ईश्वरी देवी धवन ने की। सभा का सुसचालन मा० मनोहर लाल प्रधान कृष्णा नगर ने किया।

आर्यसमाज जगपुरा विस्तार दिल्ली ने सूखा पीड़ित राहत कोष के लिए ८०००/- आठ हजार रुपये दान दिये। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा चलाये जा रहे राहत कोष द्वारा देश के विभिन्न सूखे से पीड़ित क्षेत्रों में राहत कार्य किया जा रहा है। इस सम्बन्ध में दिल्ली की प्रगतिशील आर्यसमाज, जगपुरा विस्तार ने सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती को आठ हजार रुपये भेंट किये। इस अवसर पर दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री सूर्यदेव तथा महामन्त्री श्री डा० धर्मपाल जी भी उपस्थित थे। स्वामी आनन्द बोध ने कहा—मानवता की सेवा ही धर्म है। हम धार्मिकों को अपने इस कर्त्तव्य से कभी अलग नहीं हटना चाहिए। उन्होंने आर्यसमाज के अधिकारियों एवं कार्यकर्ताओं को साधुवाद दिया।

सम्पादक—यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—डा० धर्मपाल



गौरव स्तंभ

प्रेरक प्रसंग

प्रस्तोता—सत्यानन्द आर्य

इज्जत की रक्षा—

श्री लालबहादुर शास्त्री ने जब प्रधानमंत्री पद सभाला तो देश विषम स्थिति से गुजर रहा था। प० नेहरू के निधन के उपरान्त सरकार व कांग्रेस पार्टी की व्यवस्था ही नहीं सम्भालनी थी वरन् चीन की ओर से भयकर चुनौतियां दी जा रही थी और पाकिस्तान ने अपने आक्रामक इरादो को पूरा करने के लिए तैयारियां शुरू कर दी थी।

प्रधानमंत्री पद पर उनकी नियुक्ति होने के समय उनकी माता श्रीमती रामदुलारी ने कहा था— 'मैं लालबहादुर से चाहती हू कि चाहे जान चली जाय, मगर देश बना रहे।" शास्त्री जी ने पाकिस्तान को नाको चने चबवाकर मा के आशीर्वाद की लाज रखी।

पाकिस्तान पर विजय के दौरान शास्त्री जी ने महात्मा गाधी को उद्धृत करते हुए कहा था— भारत अपनी इज्जत की रक्षा के लिए, बुजदिली के साथ अपनी बेइज्जती का बेबस साक्षी बने रहने के बजाय हथियार उठाकर मरने मारने के लिए तैयार रहेगा।"

स्वाभिमान व बाजुओ की ताकत—

लालबहादुर शास्त्री के प्रारंभिक जीवन की विपन्नावस्था की यह घटना तो आम है कि वे गगा नदी तैर कर पार करके अपने स्कूल मे शिक्षा ग्रहण करने जाते थे।

एक बार मेला देखने के लिए वे अपने मित्रो के साथ गगा पार गये। दिन भर मेले मे घूमने के बाद जब सब लोग लौटने लगे तो लालबहादुर पीछे को ठिठक गये। एक-एक करके सभी साथी नौकाओ मे बैठ गए। नन्हे शास्त्री ने अपने साथियो से यह कहा कि वह अभी और मेला देखेगे पर वास्तविकता यह थी कि उनके पास नाव का किराया देने को पैसे न थे, अत घर जाने के लिए गगा मे कूद पडे और तैर कर घर प्रस्थान किया। स्वाभिमानी लालबहादुर अपने मित्रो को अपनी स्थिति का भान कराकर दया नही चाहते थे साथ ही अपनी बाजुओ की ताकत पर उन्हे नाज था, तभी तो वे वेगवती गगा के जल को चुनौती दे डाले।

नींव का पत्थर—

बात सन् १९२८-२९ की है। शास्त्री जी लोक-मण्डल की जिम्मेदारियां लेकर इलाहाबाद पहुचे थे। दुबले-पतले सिर पर टोपी, पैरो में देशी जूते, हसमुख सकोची स्वभाव के और दलगत राजनीति से सर्वथा अलग। उनका यह कहना था कि अखबारी विवरणो में उनका नाम न छपे।

कुछ मित्रों ने एक दिन पूछ ही लिया "आपको अखबारो में नाम छपने से परहेज क्यो है? कुछ पशोपेश के बाद उन्होंने बताया—" लोक सेवा मण्डल के कार्य के लिए दीक्षा के समय लाला लाजपतराय जी ने कहा था—लालबहादुर! ताजमहल में दो तरह के पत्थर लगे हैं। एक बढिया किस्म का सगमरमर है, उसी से मेहराब और गुम्बद बने हैं। उसी से जालियां काटी गई हैं, उसी से मीनाकारी और पच्चीकारी की गई है। उन्ही मे रग-बिरगे बेलबूटे भरे गए हैं।

दूसरी तरह के पत्थर हैं—टेढे-मेढे और बेढगे। वे सब नींव मे दबे पडे हैं। उनकी कोई प्रशसा नही करता, लेकिन इन्हीं नींव के पत्थरो पर ताजमहल की इमारत खडी है।

मैं चाहता हूँ लोक-सेवक मडल के आजीवन सदस्य नींव के पत्थर बने। वे ठोस कामो पर ध्यान द, और सस्ते प्रचार से खुद को बचाए रखे। दोस्तो, मुझे क्षमा करे, मै नींव का पत्थर ही रहना चाहता हू।

रोचक प्रसग

लालबहादुर बहुत छोटे कद के व्यक्ति थे। वह जब प्रधान मत्री बने तो जिस सरकारी मोटर से घर आते थे वह इतनी बडी थी कि उसमें बैठने पर केवल उनका सिर ही दिखाई पडता था।

एक दिन जब वह पार्लियामेंट से घर जाने के लिए मोटर मे बैठ तो श्री भूपेश गुप्ता ने हसकर कहा, 'शास्त्री जी आप इस बडी मोटर को जगह किसी छोटी कार पर चला करें। इसमे बैठने पर तो आप एकदम गुप्त हो जाते हैं।"

शास्त्री जी ने कहा, 'भूपेश जी मैं तो कार में बैठने पर गुप्त होता हूँ, पर आप तो हमेशा ही गुप्त रहते हैं।'

डॉ० पालीवाल सम्मानित

कार्यकारी पार्षद (शिक्षा) श्री कुलानन्द भारतीय ने नई दिल्ली नगर पालिका द्वारा २८ सितम्बर को आयोजित "हिन्दी दिवस समारोह" में सुप्रसिद्ध हिन्दी सेवी डा० नारायण दत्त पालीवाल को एक शाल एव स्मृतिचिह्न भेंट कर सम्मानित किया।

डा० पालीवाल दिल्ली प्रशासन भाषा विभाग में उपनिदेशक तथा हिन्दी अकादमी के सचिव पद को सुशोभित कर रहे हैं।

उल्लेखनीय है कि इससे पूर्व भी डा० नारायण दत्त पालीवाल को हिन्दी के प्रति की गई सराहनीय सेवाओं के लिए भारोही, साहित्य-श्री आराधक-श्री, साहित्य-रत्न, सफल भारती आदि पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है।

इस अवसर पर पालिका में हिन्दी में सर्वाधिक काम करने वाले १० कर्मचारियों अधिकारियों को पांच-पांच सौ रुपये का नगद पुरस्कार व प्रमाणपत्र तथा हिन्दी का प्रारंभिक ज्ञान प्राप्त करने वाले १३ कर्मचारियों को भी पुरस्कृत किया गया।

समारोह के [illegible]

भारतीय जी ने अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि प्रत्येक देशवासी को न केवल अपने सविधान, ध्वज, व भाषा पर गर्व होना चाहिए अपितु हमें हिन्दी को अधिक से अधिक अपनाना चाहिए। उन्होने आगे कहा कि दिल्ली प्रशासन को डा० पालीवाल जैसे अधिकारी पर गर्व है।

अपने सम्मान के प्रति आभार व्यक्त करते हुए डा० पालीवाल ने कहा कि स्वाधीनता पूर्व जिन लोगों ने हिन्दी के प्रचार एव प्रसार में काम किया था, वह सब अहिन्दी भाषी थे परन्तु अब यह काम हिन्दी भाषियों को करना होगा। उन्होंने आगे कहा कि यह मेरा नहीं अपितु हिन्दी सेवियों एव दिल्ली प्रशासन का सम्मान है।

पालिका प्रशासक श्री शर्मा ने कहा कि इस वर्ष हिन्दी में २५ प्रतिशत काम करने का प्रयास रहेगा।

महानगर पार्षद श्री रामनाथ [illegible] ने व्यवहार में हिन्दी के प्रयोग पर बल दिया। हिन्दी अधिकारी श्री श्यामसुन्दर शर्मा ने पालिका में हिन्दी की प्रगति का विवरण देते हुए कहा कि वर्ष जितनी [illegible] में [illegible] के साथ पट हिन्दी

(शेष पृष्ठ [illegible] पर)

ऋषि की ज्योति

(पृष्ठ १ का शेष)

देव दयानन्द को हिन्दी में श्रद्धाजलि अर्पित की उनका हिन्दी प्रेम अनुकरणीय है। इस अवसर पर स्वामी विद्यानद सरस्वती, आचार्य विशुद्धानद मिश्र व स्वामी अग्निवेश ने भी स्वामी जी को श्रद्धाजलि अर्पित की।

स्वामी डा० सत्यप्रकाश सरस्वती जी ने अध्यक्षीय भाषण मे वैदिक साहित्य के प्रकाशन प्रचार व प्रसार पर बल दिया। उन्होंने इस अवसर पर आर्यसमाज के महान् तार्किक, अद्वितीय विद्वान आचार्य विशुद्धानन्द जी मिश्र को उनकी वैदिक साहित्य के प्रति की गई सेवाओं के लिए 'केदार नाथ दीक्षित' पुरस्कार ११००/-रु० की नकद राशि व प्रशस्ति पत्र प्रदान कर सम्मानित किया।

सभा महामंत्री डा० शिवकुमार शास्त्री ने इस अवसर पर महर्षि दयानन्द को श्रद्धा सुमन अर्पित किये। उन्होने कहा—'शिवरात्रि' को स्त्री आर्यसमाजी ऋषि बोधोत्सव के रूप मे मनाते हैं, अत दिल्ली प्रशासन को इस दिन सार्वजनिक अवकाश घोषित करना चाहिए।

इससे पूर्व आचार्य प्रकाश चद शास्त्री के ब्रह्मत्व मे यज्ञ का आयोजन किया गया। तत्पश्चात् स्वामी विद्यानन्द जी सरस्वती ने ध्वजारोहण किया और कहा कि आज हमारे देश में फैल रहे पाखण्डो, अन्धविश्वासों, मतमतान्तरों आदि को दूर करने के लिए जोरदार प्रचार करना चाहिए।

एकता के प्रतिपादक महर्षि दयानन्द

लेखक—श्री प० सत्यप्रिय जी शास्त्री एम०ए०
आचार्य, दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार

महर्षि दयानन्द को लोगों ने विभिन्न दृष्टिकोणों से देखा है, परंतु ऋषि के सत्य को प्रकट करने एवं मिथ्यामत को खण्डित करने के मानवोचित कार्य से कुछ लोगो को वैमनस्य तथा विघटनवादी प्रवृत्ति की गन्ध आती है। यह बात केवल सामान्य लोगों की ही नहीं, बल्कि महात्मा गांधी जैसे व्यक्ति ने भी इसी काल्पनिक भावावेश मे आकर एक समय महर्षि तथा सत्यार्थ-प्रकाश के विरुद्ध अनर्गल बातें लिखकर सर्वप्रिय होने का असफल प्रयास किया था, तो क्या वास्तव मे महर्षि के विचार एव कार्य मानव समाज में विघटन उत्पन्न करते हैं। आइये मस्तिष्क के कपाट खोल कर शांति के साथ इस पर विचार करें। महर्षि से पूर्व ईश्वर की मान्यताओ का क्षेत्र एक विश्वव्यापी अखाडा बना हुआ था। राम का उपासक कृष्ण को गाली देता था, कृष्ण के भक्त राम तथा विष्णु के भक्तों को कोसते थे, इसी प्रकार शिव, इन्द्र, ब्रह्मा, सरस्वती इत्यादि के भक्तो के वर्ग बने हुए थे जो एक दूसरे को देखकर गाली देते थे, सारा हिंदू समाज ईश्वर के नाम पर असख्य गुटों में बटकर युद्ध का अखाडा बना हुआ था, ऋषि ने उस समय ईश्वरैक्य का पाठ पढ़ाया और उपरोक्त सारे नाम ईश्वर के गौण तथा मार्मिक बताते हुए, सब को एकेश्वरोपासना के सूत्र मे बाध कर मानव समाज को संगठित किया, सत्यार्थप्रकाश का प्रथम समुल्लास ईश्वर के नाम पर झगडते हुए विघटित मानव समाज को सुसगठित करने के सत्प्रयास का मुह बोलता चित्र है, क्या इतने पर भी ऋषि को फूट डालने वाला कह कर अपनी अज्ञानता प्रकट करने का कोई साहस करेगा ?

ऋषि से पूर्व धर्म ग्रथ के नाम पर कितना रक्तपात हुआ था ? इसका तो इतिहास ही साक्षी है, परन्तु ऋषि ने कहा कि सब सम्प्रदायो का मूल वेद है, अत वेद को अपना धर्म ग्रन्थ मानो क्योंकि वह सार्वभौम है, अन्य सारे ग्रन्थ किसी व्यक्ति विशेष, वर्ग विशेष एव विचार विशेष से ही बधे हुए हैं, औरों की क्या कहें, भारत में ही धर्म ग्रन्थो के सम्बन्ध में न जाने कितने वर्ग बने हुए थे। ऋषि ने प्रबल घोषणा की कि इन सभी धर्म ग्रथों में जितना सत्य है, वह वेद से गया है, अतः आओ वेद पर एकमत होकर आचरण करें। पाठक सोचें कि ग्रथ विशेषों में विभक्त निष्ठ लोगों को एक सूत्र में पिरोने का कार्य सगठित करने का प्रशसनीय प्रयास नहीं कहलाये क्या ?

महर्षि के समय विश्व मजहबों की टुकडियों में बट कर पारस्परिक जघन्य सघर्ष का घृणित क्षेत्र बना हुआ था, मजहब के नाम पर क्या-क्या अमानवीय कृत्य किए गए उन्हें लिखते हुए लेखनी भी थर्राती है, ऋषि ने सब को सगठित होने का उपाय मानवीय धर्म वर्णन किया। अर्थात् धर्म उत्तमाचरणो को धारण करने का नाम है। ऋषि ने कहा कि वर्तमान मजहबो में जो अच्छी बातें हैं, वे सभी मानव धर्म वेद से गई हैं, दूसरी बात यह कि सभी मत मनुष्य विशेषो के आश्रय पर खडे किए गए हैं, इसीलिए मजहब आपस की फूट का कारण बने हैं। ऋषि ने कहा जो भी उत्तमाचरण करो वह धार्मिक और उत्तमाचरण मे सभी एकमत हैं, भेद है तो अपनी कपोल कल्पनाओं में है अत तुम सब मानव समाज को झगडों की भट्टी मे झोंकने वाले इन मजहबो के प्रपञ्चों से ऊपर उठकर "आत्मवत् सर्वभूतेषु, आत्मन प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्" तथा "धारणाद्धर्म इत्याहुः" से यथार्थ धर्म को अपनाओ क्योंकि धर्म आपस मे लडाता नहीं है, बल्कि परस्पर सौहार्द सिखाता है।

और को छोडिए एक ही ईश्वर के मानने वाले ईश्वर के सगुण तथा निर्गुण स्वरूपों पर ही विभक्त होकर लडते थे। ऋषि ने समझाया प्रत्येक वस्तु सगुण तथा निर्गुण होती है, जो गुण वस्तु में हों उनके कारण तो सगुण और जो न हो उनके कारण निर्गुण होती है। यह नियम सर्वत्र लागू होगा, अत. ईश्वर सगुण भी है तथा निर्गुण भी है। इस कारण एक ही ईश्वर के भक्तो तुम्हें एक ईश्वर के नाम पर काल्पनिक मिथ्या बातें बना कर झगडना नहीं चाहिए, मानवों को सगठित करने का कितना सुन्दर उपाय बताया।

इसके अतिरिक्त लोग कहते थे कि दर्शनकारो में परस्पर मतभेद है, इस विचार का प्रभाव आर्यो मे फूट को बढाने में सहायक होता था स्वामी जी ने कहा कि दर्शनकारो में कोई मतभेद नहीं था, सृष्टि के छ अवयवों को एक-एक दर्शनकार एक एक की व्याख्या करता है, वेद एव वैदिक मान्यताओ पर किसी का भी मतभेद नहीं है। ऋषि ने इसी विचार के माध्यम से आर्यों को सगठित करने का प्रयास किया।

ऋषि दयानन्द के काल मे जन्म गत जाति-पाति के द्वारा जो फूट पिशाचनी आर्यों को निगले ही जा रही थी दयानन्द ने उसका विरोध कर गुण कर्म एव स्वभाव के आधार पर ऊंच-नीच का निर्णय दिया जिसके कारण मानव समाज को सगठित होने मे अत्यधिक सहायता मिली। उस समय प्रान्तवाद एव भाषावाद तो सीमा पार करने को हो रहा था, ऋषि ने इनकी सीमाएँ तोड कर स्वय उत्तर भारत में प्रचार किया और अपना साहित्य आर्य भाषा मे लिखकर सारे राष्ट्र को सगठन के सूत्र मे पिरोने का दूरदर्शितापूर्ण कार्य किया। फूट के प्रतीक छुआछूत ने जो विनाश किये वे शताब्दियों तक मिटने असम्भव हैं। इसी डायन ने देश के टुकडे करा दिए और आज भी और टुकडे होने के आसार हो रहे है, काश हम महर्षि के बताए ऐक्य के उपायो को अपना पाते तो आज देश का नक्शा ही और कुछ होता। इस प्रकार ऋषि के लगभग प्रत्येक कार्य से देश के सगठन को बल ही मिला, परन्तु आज के भीरु एव सर्वप्रियतावादी लोग ऋषि पर विघटनवाद का आक्षेप लगाते हैं। चूंकि ऋषि ने सत्य कह दिया है, यह उनका दोष समझ लीजिये आज तो जो हीरा एव गोबर को एक जैसा बतावे वह ठीक परन्तु यदि बुद्धि से काम लेकर दोनो मे भेद बताएँ तो फूट डालने वाला साम्प्रदायिक कहलाएगा। ऋषि दयानन्द के साथ भी यही सब कुछ हो रहा है। यदि ऋषि जी चोर को चोर और साहू को साहू न कह कर दोनो को समान कह देते तो इन लोगो की दृष्टि मे ठीक था, अत ऋषि दयानन्द सत्यता के आधार पर ही एकता स्थापित करना चाहते थे जो सर्वथा उचित था, आर्यो! अपने काल मे मानव समाज को एकता के सूत्र मे पिरोने वाले आचार्य दयानन्द के शिष्य हो कर क्यो अनेक विघटन एव कलह के शिकार बन रहे हो, सोचो तुम अपने आचार्य के आदर्शो से कितनी दूर जा रहे हो। क्या ऋषि का ज्वलन्त जीवन तुम्हें कुछ सिखाएगा नहीं ? लौटो, सम्भलो और होश मे आओ तथा ऋषि के सच्चे शिष्य होने के गौरव एव अधिकार को प्राप्त करके अपने मनुष्यत्व का प्रमाण दो ●

देश पर कलंक—सती प्रथा

दक्षिण दिल्ली आर्य महिला सभा की एक बैठक आर्यसमाज ग्रेटर कैलाश पार्ट-१ मे हुई। बैठक में "दिवराला रूपकुवर सतीकाण्ड" की एक प्रस्ताव द्वारा तीव्र भर्त्सना की गई। सभा की अध्यक्षा श्रीमती शकुन्तला आर्या ने कहा कि देश को इक्कीसवीं सदी की ओर ले जाने वाले और महिलाओं की प्रगति के बडे-बडे दावे करने वाले प्रधानमंत्री के देश में १८ वर्षीय कोमल कली को ससुराली हुकुमनामे के अन्तर्गत आग में झोंक देना बीसवी सदी का सब से बडा कलक है। राजस्थान सरकार ने अपने कर्त्तव्य को भुलाकर कट्टरपंथियो से लडने का नैतिक बल खोकर अन्धविश्वास के आगे घुटने टेक दिये हैं। राजस्थान सरकार को "चूनडी" रस्म के आयोजन की पूरी जानकारी होने के बावजूद भी इतनी भयानक क्रूर, निर्मम और बर्बर परम्परा रोकने के लिए कोई कदम नहीं उठाया। पुलिस और सरकारी अफसर तमाशायी बने रहे। सती प्रथा के प्रतिबध के १५८ वर्ष बीतने के बाद और भारत की चालीसवी वर्षगांठ मनाने के उपरान्त भी समाज की बेटी को मृतपति के साथ जला देने का ये जघन्य काण्ड सारे नारी समाज के लिये एक चौंकाने वाला तथ्य है, जिसे आर्यसमाज कभी भी बर्दाश्त नहीं करेगा।

श्रीमती आर्या ने चेतावनी दी कि जो स्वार्थी धार्मिक कट्टरपंथी इस काण्ड का समर्थन कर सती मन्दिर के निर्माण का सोच रहे हैं, वे सती प्रथा की पुनरावृत्ति के लिए जिम्मेदार हैं। वे सभी तत्व देश और समाज की प्रगति के लिए बाधक हैं और उन्हें देश की भावी पीढ़ी कभी नहीं क्षमा करेगी।

मत्री, कृष्णा ठुकराल

"कृण्वन्तो विश्वमार्यम्"
वेदाज्ञा एवं महर्षि का स्वप्न

आर्यसमाज के कार्य को कैसे गति दी जावे ? अगले २-३ वर्षों के अल्पकाल में इसे व्यापक रूप दिया जावे।

भोलानाथ दिलावरी—प्रधान, केन्द्रीय आर्य सभा, अमृतसर

आर्यसमाज की नींव आज से ११२ वर्ष पूर्व महर्षि दयानन्द ने रखी थी, इस दृष्टि से कि लोप हुए वैदिक धर्म-आर्य धर्म को पुन स्थापित कर "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" रूपी वेदाज्ञा को मूर्त रूप दिया जावे। महर्षि ने अनुभव किया कि "आर्य-सन्तान" अपनी चेतना खो बैठी है। अपने को आर्य न जान हिंदू कहलाना प्रारम्भ कर दिया है। और नाना प्रकार के मत-मतान्तरों के झाड-जंगल में बुरी तरह उलझ गई है। सर्वप्रथम इन्हें चेतना दी जावे आर्य सनातन धर्म का ज्ञान कराया जावे। इसी महान् कार्य में वह अपनी मुक्ति का ध्यान छोड, अपना सर्वस्व त्याग प्राणपन से जुट गए। स्वय विष पी, हमें वेद ज्ञान, आर्यत्व का अमृत पिलाते पिलाते जीवनोत्सर्ग—"प्रभु तेरी इच्छा पूर्ण हो" कहते कहते कर दिया।

महर्षि, हिन्दू आर्य सन्तानों को मुसलमान ईसाई बनाते देख अत्यत दुखी रहते थे। इस बात का संकेत उनकी निम्न एक घटना से स्पष्ट हो जाता है।

महर्षि श्री मोहनलाल पड्या के यहां ठहरे हुए थे। आधी रात का समय था। श्री पड्या जी ने देखा कि स्वामी जी बेचैनी से कमरे में इधर से उधर आ जा रहे हैं। यह देख उनसे न रहा गया। पूछ ही लिया। "स्वामी जी आपको क्या कष्ट है? कोई वेदना है?" उन्होंने उत्तर में कहा—"भाई मुझे कोई शारीरिक कष्ट नहीं अपितु मानसिक पीडा जो मुझे बेचैन कर रही है वह यह है कि आर्य सन्तान हिन्दुओं को मुसलमान ईसाई लूट-खसूट रहे हैं विधर्मी बना रहे हैं। हिन्दू अपने मूल वेद सनातन धर्म को भूल गए हैं। इन्हें कैसे बचा पाऊं। यह घटना आर्यसमाज की स्थापना के बहुत पूर्व की है।

आर्य बन्धुओ! जानते हो, इसी वेदना के शमनार्थ ही महर्षि ने आर्यसमाज को जन्म दिया था।

सब ने देखा कि गत ११२ वर्ष के कार्य काल में "आर्यसमाज" ने हिन्दुओं में आर्य चेतना लाने में कितना अद्भुत कार्य किया। शिक्षा के क्षेत्र में तो अन्य किसी संस्था ने भी इतना कार्य न किया होगा।

इसके अतिरिक्त सामाजिक कुरीतियों, स्त्री-शिक्षा, अछूतोद्धार विधर्मी हुए हिन्दुओं को वापिस आर्य धारा में लाने में तो मानो *कमाल ही कर दिखाया। इस प्रकार* हिन्दुओं में नया जीवन लाने में कोई कसर न उठा रखो।

"आर्यसमाज" अब कोई साधारण संस्था नहीं है। बडी विशाल समृद्ध हो चुकी है। राष्ट्र भर में, तो स्थान-स्थान पर इसकी शाखाएँ विद्यमान हैं। बाहर विदेशों में भी हैं। डी० ए० वी० एवं अन्य आर्य स्कूल कालेज हजारों की संख्या में देश-देशान्तरों में शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत हैं। एक सौ के करीब "गुरुकुल" भी कार्य कर रहे हैं। करीब-करीब सब प्रान्तों में आर्य प्रादेशिक सभाएं भी हैं।

अब केवल इसकी गति में तेजी एवं कार्य पद्धति में सुधार लाने की जरूरत है। बदले हालात में कार्य क्षेत्र का आकलन करना होगा। सुधरे नये-नये तरीकों से आर्य-धर्म संस्कृति का सारे हिन्दु समाज में प्रचार प्रसार करना होगा। नया जीवन-आत्मचेतना लानी होगी।

आर्यो उठो! मत भूलो कि तुम महर्षि की मानस सन्तान हो। वह अकेला था, अब तुम करीब दो करोड हो। तुम्हारी शक्तिशाली भुजाएं आर्य संस्थाओं के रूप में विद्यमान हैं। तुम्हें ऋषि-ऋण उतारना है। आलस्य प्रमाद को दूर भगा दो। महर्षि के लक्ष्य "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" को प्राप्त करने हेतु कटिबद्ध हो जाओ। प्रथम भारत को सच्चे अर्थों में "आर्यावर्त" बनाना है। तुम में बढ़ने की क्षमता है। महर्षि का वरदान तुम्हारे साथ है। तुम में विद्वानों धर्मानुरागियों, वीरों की कमी नहीं। अतः आओ, प्रण ले ऋषि मिशन की पूर्ति में जुट जावें।

इस पवित्र कार्य में हमारी शिक्षण संस्थाएं जिन में हर वर्ष लाखों बच्चे शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। बड़ा महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं। बच्चों में आर्यत्व कूट-कूट कर भर सकती हैं। इसी सम्बन्ध में अपने विचार आर्य बुद्धि जीवियों की गोष्ठी में भेजे थे, जो देहली में २० से २३ अप्रैल ८७ को हुई थी। उसमें क्या निर्णय लिये गए, मुझे कोई जानकारी नहीं।

अब इस लेख में मैं विशेष रूप से इस बात की ओर अपने विचार केन्द्रित कर रहा हूं कि आर्यत्व के महत्त्वपूर्ण कार्य के प्रचार-प्रसार में आर्यसमाजों के संगठन कैसे अद्भुत कार्य कर सकते हैं।

उपदेशकों का अभाव बाधक नहीं—

आर्यसमाज के गत ११२ वर्ष के इतिहास पर दृष्टिपात करें तो इसमें हम देखेंगे कि इसमें उपदेशकों की भूमिका ही प्रमुख रही है। वर्तमान में इनकी अत्यन्त कमी हो गई है। और आगे पूर्ति होने की कोई आशा भी नहीं। ऐसी अवस्था में प्रचार-प्रसार कार्य कैसे हो? बात भी सत्य है। अत हमें इसका बदल ढूंढना ही होगा।

यह एक तथ्य है कि कैसी भी जटिल दुष्कर समस्या मार्ग में बाधक बन जावे तो यदि हम उसके समाधान के लिए दृढ़ संकल्प होंगे तो कोई न कोई समाधान मिल ही जायेगा। और हो भी सकता है कि वह पहले से भी उत्तम सिद्ध हो। महर्षि की ओर तनिक देखो, अकेले ही वह जो कुछ कर गए आज हम करोड़ों की संख्या में होने पर भी नहीं कर पा रहे। कारण स्पष्ट है। हमें आलस्य, प्रमाद ने घेर लिया है। अपने दोष पर पर्दा डालने के लिए कोई न कोई बहाना बना रहे हैं। जब कभी इक सड़क हो तो एक मार्ग बन्द होने पर अन्य विकल्प मिल ही जाया करता है। सो मेरे समक्ष अब यह कोई समस्या या रुकावट नहीं रही। वरन् मुझे उपदेशक एक बोझल प्रभावहीन प्रतीत होने लग गए हैं। मिलते भी नहीं। जो हैं वह बोझल। और कार्य भी नहीं कर सकते। अतः इन्हें भूल जाना चाहिए।

इस आधुनिक युग में नये-नये आविष्कार हो गए हैं जिनसे प्रचार-प्रसार का कार्य बड़ी सफलता से लिया जा सकता है। इन्हें कार्य में लाकर हम व्यापक रूप से दूर समीप सब जगह छा सकते हैं। यात्रा आदि के खर्चे से बच सकते हैं। जनता में आकर्षक भी सिद्ध हो सकते हैं। अब कि उपदेशक अपना जादू खो बैठा है। आधुनिक साधन द्वारा हम चाहें तो २-३ वर्षों के अल्पकाल में ही योजनाबद्ध कार्य पद्धति से बहु कार्य कर सकते हैं जो पूर्व में १०० में भी सम्भव न था।

यह साधन है क्या? वर्तमान युग का आविष्कार है, इसे वीडियो टी०वी० प्रणाली कहा जाता है। इसके द्वारा कैसटों पर प्रसिद्ध-प्रसिद्ध विद्वानों के व्याख्यान फिल्माए जा सकते हैं। आर्य-महापुरुषों की जीवन-झांकियां, नाटक एव बौद्धिक धर्म सम्बन्धी अन्य रोचक प्रभावी कार्यक्रम तैयार करवाए जा सकते हैं। और इन्हें बहुत कम खर्च पर, व्यापक रूप से, हर स्थान पर आसानी से भेजा जा सकता है। इस प्रकार प्रत्येक आर्यसमाज में, जलसों में, स्कूलों, कालेजों में बड़ी आसानी से दिखाया जा सकता है। मजे की बात यह है कि इन्हें देखने के लिए बाल-वृद्ध स्त्री-पुरुष स्वयमेव खिंचे चले आते हैं। जितनी प्रभावी सूचना होगी, उतनी अधिक देखने वालों की उपस्थिति होगी।

योजना का कार्य रूप—

उपरोक्त उद्देश्य प्राप्ति अर्थ योजना का प्रारूप क्या है? संक्षेप से मोटे रूप से मेरे निम्न सुझाव हैं.

१. यह एक महान् एवं दुरूह कार्य है। इसका कार्य क्षेत्र बड़ा विस्तृत है। इसे स्थायी रूप भी देना है। अत इस कार्य को सब प्रादेशिक आर्य सभाएं एवं सार्वदेशिक सभा मिल कर करें तो इसे पूरा बल मिलेगा।

२ इस विशेष कार्य के लिए अलग संस्था का निर्माण करना

(शेष पृष्ठ ५ पर)

दीपों में अमरदीप और देवों में महादेव

ले०—डा० आनन्द प्रकाश

दीपावली की अमावस्या रात्रि के घोर घने अन्धकार को दूर करने के लिए करोड़ों दीपक जलाये जाते हैं, जो संसार से अज्ञान-अविद्या समाप्त करने की हमारी शाश्वत वैदिक परम्परा के द्योतक हैं। इस प्रकाश पर्व के अवसर पर हम इन असंख्य दीपों के मध्य देदीप्यमान एक अमर दीप को अपनी श्रद्धांजलि दिया करते हैं, जिसने महाभारत काल के उपरांत विश्वव्यापी अज्ञानान्धकार में भटकती मानवता को पुनः सत्यमार्ग का दिग्दर्शन कराया, उस महामानव का नाम युगनिर्माता महर्षि दयानन्द सरस्वती था। सहस्रों ज्ञानदीप जलाने वाला और अनगिनत मानवों को आलोकित करने वाला वह अमर दीप अब कभी बुझने वाला नहीं है। जैसे पृथ्वी के समस्त दीप, प्रजल प्रकाशपुञ्ज सूर्य से प्रकाश और ऊर्जा प्राप्त करते हैं, उसी प्रकार इस "अमर ज्ञान दीप" की अक्षय डोर महानतम प्रकाशपुञ्ज एवं शक्ति के अनंत स्रोत, उत्तम ज्योति (ज्योतिरुत्तम) परमात्मा (आदित्यवर्णम् तमसः परस्तात्) से जुड़ी हुई है। देव शब्द का अर्थ है जिसमें कुछ दे सकने की सामर्थ्य हो अथवा जो प्रकाशित हो और प्रकाश करने वाला हो (देवो दानाद्वा दीपनाद्वा द्योतनाद्वा द्युस्थानो भवतीति वा) देव दयानन्द, देवों में महादेव इसलिए हैं क्योंकि सम्पूर्ण मानव जाति के सर्वांगीण उत्थान के निमित्त जो कुछ भी उन्होंने दिया, वह मानव जाति के पिछले पांच हजार वर्षों के इतिहास में अद्वितीय था। ज्ञान, विज्ञान, भक्ति और अध्यात्म के अद्भुत भण्डार को, अपनी मुक्ति के मोह को त्याग कर वैदिक धर्म और संस्कृति की पुनःस्थापना हेतु समर्पित कर, बदले में २१ बार गरल पान स्वीकार किया। ऋषिवर के निर्वाण (बलिदान) की द्वितीय शती के तृतीय स्मृति दिवस पर हम उदयपुर के महाराणा सज्जनसिंह द्वारा उस अवसर पर (३० अक्टूबर, १८८३ तदनुसार कार्तिक अमावस्या, संवत् १९४० विक्रमी) पर दी गयी श्रद्धांजलि दोहराते हैं—

नभ-चव-ग्रह-ससि दीप-दिन,
दयानन्द सह सत्व,
वय उनसठ वत्सर विषै,
भयो तन पचत्व॥
जाके जोह-जोर तें,
प्रपच फिलासिफन को,
अस्त सो समस्त,
आर्य-मण्डल तें मान्यो मैं॥
वेद के विरुद्ध मत,
के कुबुद्धि मद।
भद्र-भद्र आदिन पै सिंह
अनुमान्यो मैं॥
ज्ञाता षट्शास्त्रन को,
वेद को प्रणेता जेता।
आर्य विद्या अर्क हू को,
अस्ताचल जान्यो मैं॥
स्वामी दयानन्दजू के,
विष्णुपद प्राप्त हू ते,
पारिजात को सो आज,
पतन प्रमान्यो मैं॥

महर्षि दयानन्द निश्चय ही एक महान् सन्त और नीर-क्षीर विवेकी परमहंस थे। सन्त कवि तुलसीदास ने साधु के चरित्र की तुलना कपास से की है। जैसे कपास को पैदा होते ही चरखों में ओटा जाता है, फिर धुनकी से धुनकर तकुले पर काता जाता है, तत्पश्चात् करघे में बुना जाता है, फिर धोबी उसको घाट पर पीट-पीटकर पछाड़ता है और धोता है। सूखने पर उसकी कुन्दी की जाती है, फिर दरजी उसके अंग-अंग काट कर, सुई से छेद कर वस्त्र तैयार करता है, जो परहित साधता है। इसी प्रकार परमहंस दयानन्द ने भी गृह त्याग करने के उपरान्त अकथनीय कष्ट सहे और परहित में ही सर्वस्व समर्पित कर दिया। यहां तक की दया और क्षमा की प्रतिमूर्ति ने कालकूट विष देने वाले को भी, किसी को जानकारी हो सके, इससे पूर्व ही राज्य की सीमा के बाहर भिजवा दिया। कवि ने ठीक ही कहा है—

देखा न कोई देवता प्यारे,
ऋषि की शान का।
सर पर सहीं मुसीबतें,
सोचा भला जहान का॥

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(पृष्ठ ४ का शेष)

होगा। इसमें उच्च कोटि के मूर्धन्य आर्य विद्वान् शिक्षा शास्त्री, लेखक, कवि, कलाकार, चित्रपट अनुभवी विशेषज्ञ लेने होंगे।

३ धन—अनुमानत इस कार्य के लिए २०-२५ लाख की राशि तो होनी ही चाहिए। इसके लिए सब समाएं एक-एक लाख रुपया दें। ताकि कार्य शीघ्रताशीघ्र प्रारम्भ किया जा सके। साथ ही इस नयी संस्था की ओर से २०/-५०/-और १००/-की रसीदें छपवा कर सब समाजों एवं आर्य सज्जनों को दी जावें। ताकि धन में भी कमी न आने पाये। इस कार्य में हमारी केन्द्रीय आर्य सभा, अमृतसर से पूरी शक्ति के साथ हाथ बटाएगी। एक लाख तो कर ही देगी।

आर्यसमाज का विशेष प्रभाव, सर्व साधारण हिन्दू जनता पर डालने के लिए वीडियों के कैसेटों द्वारा भरे जाने वाले प्रोग्रामों में कुछ-कुछ समय के अन्तर पर निम्न नारे (उद्घोष) भी भरे जावें। इनका भी भारी प्रभाव पड़ेगा।

नारों (उद्घोषों) की सूची—

१. वेद ईश्वरीय ज्ञान है। आदि काल में हम आर्यों पर प्रगट हुआ था। यही कारण है कि आर्यों ने ही संसार भर के मनुष्यों को सभ्य बनाया, हर प्रकार का ज्ञान दिया।

२ आर्यसमाज हिन्दुओं का अभिन्न अंग है, कोई अन्य मत मतांतर नहीं।

३ वेद-प्रचार सब हिन्दुओं का परम धर्म है।

४. वैदिक धर्म ही सच्चा सनातन धर्म है।

५ मनु महाराज, भगवान् रामचन्द्र जी और श्रीकृष्ण जी आर्य थे। हिन्दू नहीं थे। हम सब हिंदू उनकी सन्तान होने के नाते आर्य हैं।

६. आर्य संस्कृति धर्म की रक्षा करना ही आर्यसमाज का परम लक्ष्य है अतः इसके सदस्य बनिए।

७ आर्यसमाज हिंदुओं की रक्षक संस्था है। इसके सदस्य बनिए।

८ हम आर्यों ने ही आदि मनुष्य को सभ्य बनाया था। आग जलानी सिखाई। भोजना खाना सिखलाया। भाषा सिखाई। गणित विद्या एक से नौ गिनना और शून्य का महत्व सिखाया। अलजबरा, ज्योमेट्री सिखायी। चिकित्सा का ज्ञान दिया।

९ हम आर्यों का आदि काल से अविच्छिन्न चक्रवर्ती राज्य महाभारत काल तक सारे संसार पर रहा। हमें इसे फिर से प्राप्त करना है।

१० हमारी आर्य संस्कृति की आयु करीब २ अरब वर्ष है। जबकि मुसलमानों की करीब १४००, ईसाईयों के करीब २००० वर्ष और यहूदियों की ४-५ हजार वर्ष है।

११ संस्कृत भाषा संसार भर की भाषाओं की जननी है। इसका आदि नाम देव भाषा है कारण कि यह ईश्वर प्रदत्त है। यही कारण है कि हर दृष्टि से यह सम्पूर्ण एवं सर्वथा भूल रहित है।

१२ आर्यसमाज सच्ची आर्य संस्कृति का पोषक है। इसका सच्चा ज्ञान प्रत्येक हिंदू को कराना चाहता है। आओ इसके सहायक बनें।

१३ हिंदू मात्र की सेवा एवं रक्षा आर्यसमाज का परम धर्म है। इस लक्ष्य को बल देने के लिए इसके सदस्य बनिये।

भारत यात्रा पर ट्रेन रवाना

कर्मठ आर्यवृद्ध तथा समाज सेवी श्री ला० रामलील के नेतृत्व में आर्यन स्पेशल ट्रेन भारत यात्रा के लिए २५ अक्टूबर को रात्रि में रवाना हो गयी।

ट्रेन यात्रियों का स्वागत समारोह आर्य समाज में आयोजित किया गया। जिसमें स्वामी आनन्द बोध, श्री रामचन्द विकल, श्री सूर्यदेव, श्री रामनाथ सहगल, श्री डा० धर्म पाल तथा दिल्ली भर के आर्यजन उपस्थित हुए। सभा से कहा गया, कि हम जहां भी जाये आर्यचरित्र प्रस्तुत करें। हमारा व्यवहार व आचरण आदर्श होना चाहिए जिससे हम वैदिक धर्म के सच्चे अनुयायी कहलाये जा सकें।

विश्वास करें
या न करें

दिल्ली के उपभोक्ताओं के लिए शुरू किया गया "चलते-फिरते बाजार" का अद्वितीय प्रयोग अत्यन्त सफल रहा है। दिल्ली के उपभोक्ताओं को उनके घर के पास रोजमर्रा के काम आने वाला वस्तुएं उचित दरों पर उपलब्ध कराने में इस वैकल्पिक बाजार का भरपूर योगदान रहा है।

१९८३ में एक छोटी शुरुआत के बाद से लेकर अब तक इस बाजार से १० करोड़ रुपये मूल्य की वस्तुओं की बिक्री की जा चुकी है।

इस बाजार के ७७ वाहनों (दिल्ली राज्य आपूर्ति निगम के ६७ तथा दिल्ली थोक उपभोक्ता सहकारी भंडार के १०) से दिल्ली के ३०० विभिन्न स्थानों पर गेहूं का आटा, चावल, चीनी, सब्जियां, पामोलिन तेल, साबुन, दालें, मसाले, कण्ट्रोल का कपड़ा आदि वस्तुएं बेची जाती हैं।

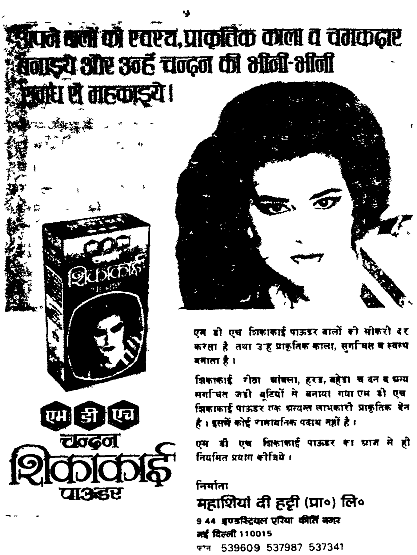
अब इस बेड़े में जल्दी ही दिल्ली राज्य आपूर्ति निगम के १०० तथा दिल्ली थोक उपभोक्ता भण्डार के २० वाहन और बढ़ाए जा रहे हैं जिसके परिणामस्वरूप प्रतिदिन ४०० स्थानों में आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध कराई जा सकेंगी।

उपभोक्ताओं की मांग पर अब इस बाजार से डबलरोटी की बिक्री आरम्भ कर दी गई है। २७ वाहन ताजी सब्जियाँ, प्याज तथा आलू बेच रहे हैं।

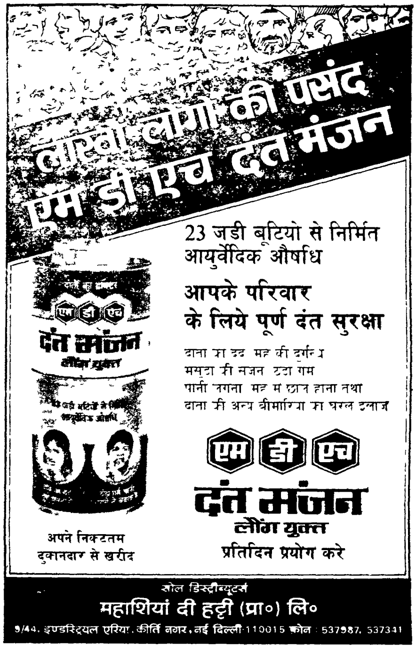
"चलते-फिरते बाजार" को उपभोक्ताओं के लिए और अधिक उपयोगी बनाने के लिए, आपके पास यदि कोई सुझाव हैं, तो कृपया लिखें :—

जग प्रवेश चन्द्र,
मुख्य कार्यकारी पार्षद,
दिल्ली प्रशासन,
पुराना सचिवालय,
दिल्ली-११००५४

सूचना एवं प्रचार निदेशालय, दिल्ली प्रशासन, दिल्ली द्वारा प्रचारित



अपने बालों को स्वस्थ, प्राकृतिक काला व चमकदार बनाइये और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी सुगंध से महकाइये।
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर
एम डी एच शिकाकाई पाउडर बालों की सीकरी दूर करता है तथा उन्हें प्राकृतिक काला, सुगन्धित व स्वस्थ बनाता है।
शिकाकाई, रीठा, आंवला, हरड़, बहेड़ा व वन व अन्य सुगन्धित जड़ी बूटियों से बनाया गया एम डी एच शिकाकाई पाउडर एक अत्यन्त लाभकारी प्राकृतिक देन है। इसमें कोई रासायनिक पदार्थ नहीं है।
एम डी एच शिकाकाई पाउडर का आज से ही नियमित प्रयोग कीजिये।
निर्माता
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9 44 इण्डस्ट्रियल एरिया कीर्ति नगर
नई दिल्ली 110015
फोन 539609 537987 537341



लाखों लोगों की पसंद
एम डी एच दंत मंजन
23 जड़ी बूटियों से निर्मित
आयुर्वेदिक औषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दंत सुरक्षा
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
प्रतिदिन प्रयोग करे
अपने निकटतम
दुकानदार से खरीद
सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9/44. इण्डस्ट्रियल एरिया. कीर्ति नगर, नई दिल्ली-110015 फोन : 537987, 537341



आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
अजमल खान रोड
करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
फोन 582036 5715878
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
align point

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N No. 32387/77 Post in N.D P.S.O. on 29, 30 10-87 Licenced to post without prepayment, Licence No U 139
रजि० न० डी० (सी०) ७३९ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस न० यू १३९

आर्यसमाज महरौली का वार्षिकोत्सव सम्पन्न

दिल्ली में अनेक नवीन आर्यसमाजों की स्थापना

—डा० धर्मपाल

आर्य समाज महरौली के वार्षिकोत्सव पर बोलते हुए डा० धर्मपाल ने कहा—इस उत्सव के माध्यम से हम और अधिक उत्साह से आर्यसमाज का कार्य करने मे सलग्न हो। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा इस सम्बन्ध मे बडी तत्परता से काय किया जा रहा है। श्री धर्मपाल ने जानकारी देते हुए बताया—दिल्ली में पुष्पाञ्जलि एन्क्लेव, आनन्द विहार, सगम विहार, सुन्दर विहार मे नवीन आर्यसमाजो की स्थापना की गयी। हमारा वेद प्रचार का कार्य ग्रामीण क्षत्रो में जोर शोर से चल रहा है। ग्राम बुधवार ईशापुर ग्राम तथा सगम विहार आदि स्थानो पर हमारे उपदेशको द्वार प्रचार कार्य अनवरत चल रहा है। हमने कालोनी की माग को देखते हुए पार्कों में भी प्रवचन एव भजनों का कार्य कराया है। हम चाहते हैं ऋषि के मिशन को अधिक से अधिक फैलाने के लिए गली-गली में आर्यसमाज की शाखाएँ सचालित की जायें। युवकों में नवीन क्रान्ति के लिए तथा जीवन उद्धार के लिए आर्य वीर दल अधिक सुदृढ हो। उन्होंने कुछ समस्याओ पर विजय पाने की भी सहर्ष घोषणा की। किग्जवे कैम्प की आर्यसमाज का भवन प्रशासन द्वारा गिराये जाने के आदेश पर दिल्ली सभा द्वारा उठाये कदम कारगर सिद्ध हुए। अन्य मकानों के गिराये जाने के बाद भी आयसमाज का भवन सुरक्षित रखने का प्रशासन से वचन लिया गया। उन्होने इस सम्बन्ध में आर्यसमाज पजाबी बाग एक्सटेंशन का जिक्र किया। वहा भी प्रशासन द्वारा भवन निर्माण मे बाधाएँ खडी की गयी थीं जिस पर सफलता प्राप्त कर ली गयी है। उन्होने कहा—हमें घबराना नहीं चाहिए और अधिक बढ चढकर कार्य करने का व्रत लेना चाहिए। डा० साहब ने सोहन सभरवाल प्रधान की कर्मठता की प्रशसा की।

आर्यसमाज महरौली में एक सप्ताह यज्ञ तथा प्रवचन का कार्य चल रहा था जो आज यहा सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर महात्मा राम किशोर के प्रवचन तथा श्री सत्यदेव स्नातक के भजन हुए।

डा० पालीवाल

(पृष्ठ २ का शेष)

में लिखवाये जाने की व्यवस्था की जानी चाहिए। पालिका सचिव श्री आर० चन्द्रमोहन ने सभी उपस्थित महानुभावो के प्रति आभार व्यक्त किया। समारोह का कुशल सचालन श्री श्याम बिहार कौशिक ने किया।

ज्ञातव्य है कि आर्यसमाज के सस्थापक युग पुरुष महर्षि दयानन्द सरस्वती अहिन्दी भाषी होते हुए भी हिन्दी के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने कहा था कि मेरी आखें वे दिन देखना चाहती हैं जब कश्मीर से कन्याकुमारी तथा अटक से कटक तक हिन्दी सारे राष्ट्र की भाषा बनेगी। आर्यसमाज सदैव से ही हिन्दी को राष्ट्रीय एकता व अखण्डता तथा आपसी भाईचारे का प्रतीक मानता रहा है, अत हमें अधिक से अधिक हिन्दी को व्यवहार मे लाना चाहिए।

(विमल कान्त शर्मा)

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री डा० धर्मपाल द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७३९

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ३ | रविवार ८ नवम्बर १९८७ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८७ | कार्तिक २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर ३० पौंड

भूमण्डल पर वैदिक प्रकाश फैलानें के लिए

वेद प्रचार और वैदिक प्रकाशन आवश्यक है —सूर्यदेव

१ नवम्बर, दिल्ली। आर्यसमाज रोहतास नगर शाहदरा का वार्षिकोत्सव बडे धूमधाम से सम्पन्न हुआ। इस उत्सव पर श्री प्रकाशचन्द्र शास्त्री की एक सप्ताह तक कथा हुई। इस अवसर पर मुख्यवक्ता के रूप में बोलते हुए श्री सूर्यदेव ने कहा—पं० लेखराम ने अपने अन्तिम श्वास छोडते हुए कहा था आर्यसमाज से तहरीर और तकरीर का कार्य बन्द नहीं होना चाहिए। यही उनकी वसीयत थी। अपने महापुरुषों के सपनों को पूरा करने का दायित्व हमारे कन्धे पर ही है। इसलिए हमारा प्रयत्न होना चाहिए, घर-घर वेद प्रवचन हो यज्ञ की सुगन्धि फैले। हमारा प्रयत्न हो कि आर्य साहित्य, आर्यसमाज की लघु पुस्तिकाएँ प्रत्येक व्यक्ति के स्वाध्याय में काम आयें। हमारा साहित्य आकर्षक और सस्ता तथा ज्ञान गरिमायुक्त होना चाहिए। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा ने इस सम्बन्ध में अपने सामर्थ्य के अनुसार काफी बढ-चढ कर काम किया है। इस समय तीन वर्षों में हमने लगभग ३० पुस्तकें बडी छोटी प्रकाशित की हैं। जिनकी भारत भर में अच्छी मांग है। हमें इनमें आर्थिक लाभ भी हुआ है तथा हमारा मिशन भी पूरा होने में सहायता मिली है। मैं इस आर्यसमाज से निवेदन करूंगा कि अपने द्वारा साहित्य वितरण प्रचार के काम पर भी जोर दें।

श्री लेखराम की वसीयत का दूसरा अंग था प्रचार। इस सम्बन्ध में हम आर्यसमाज अपना धन बल लगाकर काम कर ही रहा है। दिल्ली सभा ने भी अनेक ग्राम झुग्गी-झोंपडी, पार्क तथा समृद्ध सम्पन्न कालोनियों में अपने भजनोपदेश तथा उपदेशकों द्वारा प्रचार कार्य किया है तथा अविरल गति से लगे हुए हैं

दिल्ली की आर्यसमाजों के लिए तो हम उपदेशकों की मांग पूरी करते ही हैं। हमें सन्तोष [illegible] का भी है कि हमारे उपदेशकों की मांग अब मध्यप्रदेश, बिहार, उ० प्र०, हरियाणा और राजस्थान से निरन्तर आ रही है। हमने कोशिश की है अच्छे सुयोग्य [illegible] [illegible] उपदेशकों [illegible] की। इस सम्बन्ध में हम उत्साहवर्धक [illegible] करने में सफल हैं।

श्री सूर्यदेव ने आगे बोलते हुए कहा—मुझे दुःख होता है [illegible] बात से कि कुछ लोग अपने तुच्छ स्वार्थवश अपने [illegible] के अनुशासन [illegible] तोड़ते है। अनेक व्यक्ति इसी [illegible] मुखदोष जी और [illegible] पाते हैं। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] के [illegible] आदर्श के [illegible] विप-रीत [illegible] और प्र[illegible] [illegible] अपने [illegible] सूत्र [illegible] [illegible] तो [illegible] के [illegible] करें। श्री सूर्यदेव ने आर्यसमाज रोहतास [illegible] के अधिकारियों [illegible] बधाई दी [illegible] मैं नतमस्तक हूँ ऐसे [illegible] के [illegible]। इन प्रा[illegible] ऋषि मिशन के लिए [illegible] रहे हैं।

आर्यसमाज न्यू मुलतान के भवन का शिलान्यास

१ नवम्बर, आर्यसमाज न्यू मुलतान नगर दिल्ली के सत्संग भवन का आज शिलान्यास समारोह सम्पन्न हुआ। आर्यसमाज, न्यू मुलतान नगर कालोनी में उत्साह से कार्य कर रहा है। अब इस मंदिर का सत्संग भवन बनना प्रारम्भ हो रहा है। रविवार एक नवम्बर को दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री सूर्यदेव ने इस सत्संग भवन का शिलान्यास किया। इस अवसर पर बोलते हुए उन्होंने कहा—महर्षि दयानन्द ने कहा था कि मेरा हृदय से कामना है कि देश के एक छोर से लेकर दूसरे छोर तक आर्यसमाजों की स्थापना हो। महर्षि के मिशन को पूर्ण करना और उसे निरन्तर आगे बढाना हम सब का कर्तव्य है। पिछले दो [illegible] में दिल्ली की अनेक नयी कालोनियों [illegible] आर्यसमाज की स्थापना [illegible] है [illegible] प्रयास किया है कि [illegible] [illegible] पर आर्यसमाज स्थापित हो और उनके भवन भी बनें। मुझे खुशी है न्यू मुलतान नगर के अधिकारियों ने संगठित हो परिश्रमपूर्वक इस आर्यसमाज के भवन निर्माण का [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] है [illegible] शीघ्र बनेगा और [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।

इस [illegible] कार्यकर्ता श्री राजेन्द्र दुर्गा भी [illegible] [illegible] समाज के प्रधान श्री मलिक ने मुख्य अतिथि का स्वागत किया।

डी० ए० वी० शताब्दी समारोह

समस्त आर्य समाजों के अधिकारियों से प्रार्थना है कि १५ नवम्बर १९८७ को तालकटोरा इण्डोर स्टेडियम, नई दिल्ली में मनाये जाने वाले डी० ए० वी० शताब्दी समापन समारोह में प्रातः १० बजे से १ बजे तक यथासम्भव अपनी-अपनी समाजों से बसें लेकर पहुंचें।

निवेदक .

महाशय धर्मपाल (प्रधान)
डॉ० शिवकुमार शास्त्री (महामन्त्री)
(आर्य केन्द्रीय सभा, दिल्ली)

सूर्यदेव (प्रधान)
डॉ० धर्मपाल (महामन्त्री)
(आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली)

आर्यसमाज दरियागंज में आर्य सम्मेलन

आर्यसमाज दरियागंज नई दिल्ली का वार्षिकोत्सव बडे समारोहपूर्वक सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर कार्यक्रमों और सम्मेलनों का शुभारम्भ ध्वजारोहण से हुआ। सार्वदेशिक सभा के माननीय प्रधान स्वामी आनन्द बोध ने ध्वजारोहण किया तथा कहा—उगते सूरज की लालिमा को लिये यह ओ३म् पताका लहरा रही है। हमें इस प्रतीक से स्मरण रखना है

(शेष पृष्ठ १० पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए० प्रधान सम्पादक—डा० धर्मपाल

रद्दी के कागज का चमत्कार

एक व्यक्ति का कायाकल्प

—उत्तम चन्द्र शरर

आर्यसमाज अमोली के उत्सव पर उ०प्र० सभा के अधिष्ठाता प० केशवदेव जी शास्त्री ने बताया कि वे आर्यसमाजी कैसे बने ? उन्होने कहा कि वे एक ब्राह्मण परिवार में जन्म लेकर पिता जी से आर्यसमाज का विरोध पैतृक धरोहर के रूप मे प्राप्त कर पाये। उनके आर्यसमाज में जाने का प्रश्न ही नही था। एक बार वे समाज के उत्सव के समय द्वार से गुजरे तो उनके पिता जी ने उन्हें वस्त्रों सहित स्नान करा कर शुद्ध किया। इतनी घोर पौराणिकता में पला युवक जो संस्कृत अध्ययन कर रहा था, एक दिन घर में एक रद्दी के कागज को देख पाया, वह कागज दुकानदार ने उसे जीरा खरीदते समय दिया था। जीरे का घर में प्रयोग हुआ और कागज इधर-उधर वायु के द्वारा उडने लगा। चारपाई पर लेटे केशव ने उसे उठा लिया। सयोग से उस पर गायत्री मन्त्र का अर्थ छपा था। मन्त्रार्थ में "सविता' शब्द का अर्थ ईश्वर उत्पादक के रूप में केशवदेव ने पढा। पढकर वह प्रसन्न हुआ, आज तक उसने अपने गुरु जी से सविता का अर्थ सूर्य ही पढा था। कागज को लेकर केशव गुरु जी के पास गया और मन्त्रार्थ दिखाया। गुरु जी पढकर अत्यन्त प्रसन्न हुए बोले—यह किसी योगी का लिखा अर्थ है उस पुस्तक को खोजो जिसका यह पत्र है। केशव दुकानदार के पास गया, कुछ और पन्ने भी उस पुस्तक के मिले, परन्तु पुस्तक के नाम का कुछ पता न चला। कुछ समय पश्चात् उनके ग्राम की समाज का उत्सव हुआ। उत्सव मे कई पुस्तक विक्रेता आये। जिज्ञासा वश केशव जी उनके पास गए, पुस्तक के वह पन्ने दिखाये और पूछा कि जिस पुस्तक के ये पन्ने हैं क्या वह पुस्तक आपके पास है ? पुस्तक विक्रेता ने पन्ने देखे, पढा और तत्काल सकेत किया कि यह पन्ने उस कोने मे रखी पुस्तक के हैं वह पुस्तक उठा लाओ। केशव जी को प्रसन्नता की सीमा न रही। पुस्तक उठाई, पुस्तक का नाम था—ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका।

केशव जी ने साढे छ आने देकर पुस्तक खरीद ली और भागे-भागे गुरु जी को यह शुभ समाचार देने चल पडे। गुरु जी ने पुस्तक देखी, प्रसन्न हो उठे परन्तु कुछ क्षणों में उनकी प्रसन्नता उदासी तथा विह्वलता मे बदल गई, क्योंकि पुस्तक के लेखक का नाम था 'दयानन्द सरस्वती' और वे दयानन्द के नाम से चिढ जाते थे। गुरु जी ने पुस्तक केशव जी से छीन ली और कहा यह एक नास्तिक की लिखी पुस्तक है, इसे बालकों को नहीं पढना चाहिए। केशव जी ने कहा अभी तो आप पुस्तक की प्रशसा कर रहे थे, झिडक कर के गुरु जी बोले, यह लिखी हुई एक नास्तिक की है, तुम इसे मत पढो।

गुरु जी के निषेध ने शिष्य के हृदय में पुस्तक को पढ़ने की जिज्ञासा को और तीव्र कर दिया। वे गुरु जी से तो निराश होकर लौटे, परन्तु घर आकर साढे छ आने लगा विक्रेता से दूसरी पुस्तक ले आये। ऋषि के शब्दों का केशव जी के मन पर जादू का प्रभाव पडता गया। पुस्तक के अन्त मे कुछ अन्य पुस्तकों की सूची भी लिखी थी जिनमे सत्यार्थप्रकाश का नाम मुख्य रूप से था। केशव जी ने सत्यार्थप्रकाश भी खरीदा और इस प्रकार उनके मानस का अन्धकार प्रकाश मे बदलता गया। अब वे मन से आर्यसमाजी बन चुके थे। उनके प्रश्नों का उत्तर स्वय गुरु जी के पास नहीं था। पिता जी को उनके विचारो के परिवर्तन का पता चला तो वे क्रोध से काप उठे, उन्हें घर के चूल्हे चौके से बाहर निकाल दिया और केशव जी को आर्यसमाजी बनने का यह दण्ड मिला कि अपने लिए भोजन माता जी के स्थान पर उन्हें स्वय घर से अलग बनाना पड़ा। परन्तु अब तो हृदय में सत्य का प्रकाश चमचमा उठा था, और इसका मूल्य वे कुछ भी दे सकते थे। तीन मास के इस घोर तप के पश्चात् ममतामयी माता का हृदय पसीज गया, वे अपने पति से बोली, तुमने केशव को घर से क्यों निकाला ? वह शराब नहीं पीता, माँस नहीं खाता, कोई पाप नहीं करता, अन्य ब्राह्मणों ने तो अपनी माँस तक खाने वाली सन्तान को नहीं निकाला, आप एक धर्मात्मा पुत्र को निकाल बैठे हो, पिता के मन में पुत्र के के लिए प्यार जाग उठा, और तीन मास पश्चात् केशव जी को अपने घर में अपनी माता जी का स्नेह पुनः प्राप्त हुआ।

आर्यसमाज का रग उन पर इतना चढ़ा कि जवानी में उन्होंने सर्विस छोड आर्यसमाज की सेवा तथा वेद प्रचार का व्रत ले लिया और आप ८० वर्ष की आयु में उत्तर प्रदेश सभा में वेद अधिष्ठाता के रूप में सेवा कर रहे हैं और यह सब चमत्कार है रद्दी के उस कागज का जिसमें जीरा लपेट कर किसी दुकानदार ने उन्हें दिया था।

दिवराला का सती काण्ड

है महा दुखद व शर्मनाक, जो कांड हुआ दिवराला में।
धर्मान्ध जनों ने भस्म करी, इक नारी अग्नि की ज्वाला में॥

सीकर के गांव दिवराला में, अठारह वर्षीय रूपकवर।
क्या स्वय जली या जलाई गई, वह अबला नारी अग्नि पर॥

क्यों जलती है, क्या धर्म है यह, कोई तो हमें बता दीजे।
किस वेद, शास्त्र में लेख है यह, कोई तो हमें दिखा दीजे॥

यदि नारी धर्म यही है तो, सब विधवाएं जल जावें क्या।
जो जलकर सती नहीं होतीं, वे धर्महीन कहलावें क्या॥

यदि पतिव्रत धर्म यही होता, तो राम की तीनों माताए।
अनुसूया-सावित्री जैसी, जल जातीं सब ही विधवाए॥

जो मुगलकाल में सती हुईं, वह तो इक बात निराली थी।
इस भांति उन्होंने जौहर कर, दुष्टों से लाज बचा ली थी॥

कुछ बातें हैं जो सास-ससुर, विधवाओं को समझाते हैं।
जीवेगी तो दुख भोगेगी, मर जावे तो स्वर्ग बताते हैं॥

इस भय व लालच में आकर, यह सतीकाड हो जाते हैं।
फिर मन्दिर बना व मेले लगा, पाखडी मौज उडाते हैं॥

क्या यही धर्म है नारी का, क्या उसकी यही कहानी है।
क्या 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' यह मिथ्या वाणी है॥

क्या यही वीरता युवकों की, तलवार जो ले शमशान खडे।
काटो कुरीति पाखडों को, यदि हो तुम सच्चे वीर बडे॥

जब बूढे-विधुर विवाह करते, तब तुम को आती शर्म नहीं।
क्या ऐसी बाल विधवाओं से, विवाह करना धर्म नहीं॥

पर वेद शास्त्र विधवाओ की, शादी करना बतलाते हैं।
वे कहते हैं जलने वाले, तो घोर नर्क में जाते हैं॥

तुम नहीं जानते धर्म है क्या, सत्य है क्या, इन्सान है क्या।
यह अन्ध प्रथाए मानते हो, सोचो तुम बुद्धिमान हो क्या॥

यो कब तक धर्म-दहेज की खातिर, नारी जलाई जावेगी।
कूडे-कर्कट की भाति नारी की, होली मनाई जावेगी॥

पाखड, अन्धविश्वासो की, अब भी यह लीला होती है।
तो आर्यसमाज व दयानन्द को, यह तो खुली चुनौती है॥

ऐ समाज सुधारक वीर जनो, इन हत्यारों को ललकारो।
अन्याय, अधर्म की शर्मनाक, इस पाप प्रथा को सहारो॥

यदि यह हत्याए नहीं रुकीं तो मानवता मर जावेगी।
"भास्कर" इस भीषण ज्वाला में, यह आर्य जाति जल जावेगी॥

भगवती प्रसाद सिद्धान्त भास्कर
प्रधान
नगर आर्यसमाज, जयपुर
१४३०, प० शिवदीन मार्ग
कृष्णपोल, जयपुर।

उन्नीसवीं शताब्दी का महान् चमत्कार

—स्वामी वेदमुनि परिव्राजक
अध्यक्ष, वैदिक संस्थान नजीबाबाद (उ० प्र०)

★

उन्नीसवीं शताब्दी का महान् चमत्कार है महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती का प्रादुर्भाव। चमत्कार तो उस शताब्दी में अन्य भी अनेक होंगे। न हमें सब की जानकारी है और न हम अन्य चमत्कारों को झुठलाने का विचार रखते हैं किन्तु यह ध्रुव सत्य है कि महर्षि दयानन्द न केवल उन्नीसवी शताब्दी के ही अपितु गत पाँच सहस्र वर्षों के महान् चमत्कार हैं।

प्राय चमत्कार मानवी ही होते हैं। मनुष्यो के द्वारा किये जाने वाले आविष्कारो तथा खोजों को ही चमत्कार कहा जाता है किन्तु महर्षि दयानन्द तो अलौकिक चमत्कार हैं। परमपिता परमात्मा की कारीगरी, उस परम पावन देव का वर्तमान युगीन आविष्कार कहो अथवा परम अलौकिक चमत्कार—जो भी कहिये—है चमत्कार हो, महान् और अद्भुत चमत्कार। उस युग पुरुष महामानव के विषय मे किसी कवि ने ठीक ही लिखा है—

ऐ दयानन्द ! तुझ,
नूरे खुदावन्द कहू।
या कपिल, कणाद पतञ्जलि का,
जिगरबन्द कहू॥

उस युग पुरुष की दार्शनिकता को जब उसकी कृतियों, वह भी विशेषकर उसके घोषणापत्र तथा वर्तमान युग के स्मृति-ग्रन्थ सत्यार्थ-प्रकाश में पढा जाता है तो पुराने—ऋषि परम्परा से सम्बद्ध—सम्पूर्ण दर्शन-शास्त्र का साक्षात् एक ही ग्रन्थ मे हो जाता है। केवल साक्षात् ही नही होता अपितु भारतीय दर्शनो से सम्बद्ध दो प्रमुख भ्रान्तिया—एक तो यह कि छहो दर्शन परस्पर विरोधी हैं। सभी भारतीय व अभारतीय वतमान कालिक दार्शनिको की यह मान्यता और स्थापना धूलि धूसरित हो जाती है। दूसरी यह कि सांख्यकार कपिल नास्तिक था—एकदम समाप्त हो जाती है। केवल एक बार देव दयानन्द के इस सुप्रसिद्ध और अमर ग्रन्थ का ध्यानपूर्वक पढने की आवश्यकता है।

मार्क्सवाद और दयानन्द—

मार्क्स के भौतिकवादी, अनीश्वरवादी, नास्तिक तथा भोगवादी दर्शन की तुलना में महान् आध्यात्मिक दर्शन—जिसमें आत्मिक तथा भौतिक दार्शनिक विचारधाराओं का महान् विस्मयकारी समन्वय है, उस महामानव ने वर्तमान युग में संसार को प्रदान कर पश्चिम की घोर भोगवादी संस्कृति के सामने एक प्रकाश-स्तम्भ ला खडा किया।

इस्लाम और ईसाइयत और दयानन्द—

ईसाइयत के परमात्मा द्वारा सृष्टि निर्माण करते हुए चौथे दिन सूर्य की उत्पत्ति और इस्लाम के खुदा द्वारा छ दिन सृष्टि बनाकर थक जाने पर सातवें दिन अर्थात् तख्त पर विश्राम करने और इन दोनो को क्रमश परमात्मा को चौथे और सातवें आसमान (आकाश) पर अवस्थित अविद्यापूर्ण मान्यताओं के सम्मुख परमेश्वर की अपनी व्याप्ति के कारण सृष्टि-उत्पत्ति के नितान्त वैज्ञानिक, तर्क-सम्मत, युक्तियुक्त तथा बुद्धि व विद्या से परिपूर्ण ज्ञानमय सामर्थ्य के द्वारा प्रलयकाल के महान् अन्धकार मे से प्रकृति रूपी विक्षुब्ध समुद्र को निकालकर इस सृष्टि को प्रकट कर दिया तथा विधिवत् सूर्य, चद्र, मास, दिन आदि का निर्माण किया और अपनी प्रजा मानव आदि प्राणियो के लिए समस्त सुख के साधन अग्नि, जल, वायु आदि आ पूर्व सृष्टि के अनुसार रच दिये तथैव अपनी व्यापक शक्तियो के द्वारा इस सम्पूर्ण सृष्टि का व्यवस्थापन व सचालन भी कर रहा है—यह सब महर्षि दयानन्द ने अपनी घोर तपस्या द्वारा सिद्ध कर दिखलाया—

परमपावन प्रभु की व्याप्ति के माध्यम से ही पैगम्बरवाद व अवतारवाद के गढो को ढाया और जड पूजा के स्थान पर एक निराकार, व्यापक, अजन्मा, अनादि, अनन्त परमेश्वर पूजा की स्थापना की।

मैक्समूलर और दयानन्द—

ब्रिटिश सरकार के वेतन भोगी जर्मन अध्यापक मैक्समूलर की वेदभाष्य के नाम पर वैदिक मान्यताओं के विरुद्ध वेद के भ्रान्ति-युक्त अर्थ करके भारत के ईसाईकरण के लिए वातावरण बनाने के प्रयत्न को ध्वस्त कर दिया, जिसके परिणामस्वरूप मैक्समूलर को "भारत हमे क्या सिखा सकता है।" पुस्तक में अपनी वेदो के विषय में अनेकेश्वरवाद अथवा बहुदेवतावाद की मान्यता के विरुद्ध ऋग्वेद के शब्द मे यह स्वीकार करना पडा कि "एक सद्विप्रा बहुधा वदन्ति" अर्थात् उस एक ही सत्यस्वरूप परमात्मा को विद्वान् लोग बहुत नामो से पुकारते हैं और अपनी "भारतीय दर्शन के छ सिद्धान्त" नामक पुस्तक मे ऋग्वेद के नासदीय सूक्त को पढकर लिखा कि मेरी अब तक की मान्यता—'वेद ऋषियो की खोज हैं' भ्रान्त सिद्ध हुई क्योंकि ऋग्वेद के नासदीय सूक्त मे प्रलयकाल का आखो देखा जैसा वैज्ञानिक वर्णन है, जबकि प्रलयकाल मे ऋषि ही क्या, किसी प्राणी की उपस्थिति सम्भव नही—उसे ऋषि आदि किसी व्यक्ति की खोज मानना उचित नहीं। इसे पढ कर तो वेद का यह ज्ञान परमेश्वर की ओर से ऋषियो की ओर आता हुआ प्रतीत होता है। वर्तमान युग मे महर्षि दयानन्द ने ही सब से पहले यह घोषणा की कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है जो सृष्टि को उत्पत्ति के समय चार ऋषियो के हृदयो मे उस परमपावन प्रभु ने मानवो के कल्याणार्थ प्रदान किया।

नारी जाति और महर्षि दयानन्द—

बाइबिल मे पापागारवत् जड, कुरान मे पुरुषो की खेती तथा आचार्य शकर के शब्दो मे विश्वास के सर्वथा अयोग्य और नर्क का द्वार, तुलसीदास की दृष्टि मे अवगुणो की खान कहलाने वाली नारी जाति को महर्षि मनु के शब्दो मे "यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता" अर्थात् जहा नारी का सम्मान होता है, वहा देवता निवास करते है, कहकर सम्मान के आसन पर बिठाया। नारी शिक्षा की दुन्दुभि बजायी तथा पुरुषो के समान ही अन्य संस्कारो की भी अधिकारिणी बताया।

बाल विवाह को पाप बताया तथा पूर्ण यौवनावस्था में—जब वर और कन्या सन्तानोत्पत्ति मे शरीर से पूर्णतया पुष्ट होकर समर्थ हो जायें 'ब्रह्मचर्येण कन्या युवान विन्दते पतिम्।" का घोष करके शास्त्रानुमोदित सिद्ध किया। उन्होंने कहा कि विवाह का मुख्य उद्देश्य सन्तानोत्पत्ति है। अतएव इसी बात को लक्ष्य मे रख कर लडके-लडकी जब स्वस्थ सन्तानोत्पत्ति मे समर्थ हृष्ट-पुष्ट हो तभी विवाह करना चाहिए।

छुआछूत और ऋषिवर दयानन्द—

जन्म जात्यभिमान के कारण उत्पन्न छुआछूत की उन्होने अतीव बडी भर्त्सना की उसे निन्दित कर्म बताया। हा खानपान व रहन-सहन की पवित्रता को स्वास्थ्य की दृष्टि से उत्तम बतलाया और कर्मो से ही मानव को अच्छा व बुरा समझे जाने का समर्थन किया।

लार्ड मैकाले और देव दयानन्द—

लार्ड मैकाले की वर्तमान शिक्षा पद्धति का घोर विरोध किया तथा ऋषि परम्परानुमोदित गुरुकुलीय शिक्षा-पद्धति का पुनरुद्धार किया।

सह-शिक्षा के विपरीत बालक-बालिकाओ के विद्यालयो को एक-दूसरे से चार कोश दूरी पर अवस्थित होने को उचित बताया और बालको के विद्यालय में सब कर्मचारी पुरुष होने तथा बालिकाओ के विद्यालयो में सभी कर्मचारी स्त्रिया ही रखे जाने का विधान किया तथा निर्देश किया कि बालको के विद्यालयो मे पाच वर्ष की बालिका और बालिकाओ के विद्यालयो मे पाच वर्ष का लडका भी न जाने पाये।

राष्ट्रीय स्वाधीनता व महर्षि दयानन्द—

यद्यपि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सम्पूर्ण मानव जाति के हित की कामना की और वेद के शब्दो मे "मनुर्भव" मनुष्य बनो के सार्वभौमिक तथा विश्वजनीन घोष को गुंजाया किन्तु जिस प्रकार नारी-उत्थान, समाज सुधार आदि के अन्य क्षेत्रो को वह आँखो से ओझल न कर सके, ठीक इसी प्रकार मानो स्वाधीनता के क्षेत्र को भी उन्होने उपेक्षा नही की। यही कारण है कि शताब्दियो से पददलित पराधीन आर्य जाति को जगाने के लिए भी अपनी लेखनी की नोक को आर्य जाति के अविद्या और आलस्य-ग्रस्त पराधीन शरीर मे चुभा कर उसे झकझोरने का प्रबल प्रयास किया। विदेशियो के उत्तम से उत्तम

(शेष पृष्ठ ४ पर)

विधवा दहन कैसे रुके : एक सुझाव

वैदिक वाङ्मय में नारी की बड़ी महिमा है। मनु महाराज ने कहा है —

> यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते,
> रमन्ते तत्र देवता ।

जहां नारी का सम्मान होता है वहां देव संस्कृति का वास होता है। वेद भगवान ने भी नारी को प्रतिष्ठा में अपनी ऋचाओं द्वारा मानव का मार्गदर्शन किया है। यही कारण है कि करोड़ों वर्षों से चली आई वैदिक परम्परा में ऋषियों के साथ ऋषिकाओं का भी इतिहास आज तक सुरक्षित चला आ रहा है।

परन्तु भारत का गत १ हजार वर्ष का इतिहास देश के उत्थान-पतन की कहानी है। वैदिक संस्कृति का ह्रास तो महाभारत काल से ही प्रारम्भ हो गया था। पिछले एक हजार वर्ष का रक्त रंजित इतिहास तो जीवन मृत्यु के विकट संघर्ष का इतिहास है। पतिदेव युद्धस्थल में वीरगति प्राप्त कर रहे हैं। पत्नी के पास अपनी सुरक्षा का कोई प्रबन्ध न होने से हजारों वीर माताओं ने जौहर करके अपने सतीत्व की रक्षा की। देश में शासन-व्यवस्था डावांडोल हो चुकी थी।

गत डेढ़ सौ वर्षों से परिस्थितियों में एक महान् परिवर्तन आया। महर्षि दयानन्द के आगमन के पश्चात् तो जैसे एक नवयुग का ही निर्माण हुआ। जिस महान् नारी को वेद ज्ञान से केवल वंचित कर दिया गया था। श्री शंकराचार्य के नाम पर यदि नारी वेद सुन ले तो उसके कान में पिघलता हुआ शीशा डाल देने का प्रावधान किया गया था। सन्त तुलसीदास जैसे विचारक ने भी नारी को पशुकोटि का घोषित कर दिया था।

महर्षि दयानन्द ने महान् नारी के उत्थान के लिए अद्भुत कार्य किया उसे देखकर कौन कल्पना कर सकता है कि यह वही नारी है जिसे शंकराचार्य व तुलसीदास ने पशु-कोटि में रख दिया था।

देश शिक्षा के प्रकाश में उठा। उसने महर्षि के बनाए मार्ग पर चल-कर न केवल ज्ञान चक्षु खोले, एक लोकतन्त्री समाजवादी युग का निर्माण हुआ। महान् नारी जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में पुरुष के कंधे से कंधा मिलाकर सम्मानपूर्वक जीवन व्यतीत कर रही है।

इस प्रकाश के युग में धर्म का नाम लेकर कुछ निहित स्वार्थी सती शब्द का दुरुपयोग कर रहे हैं। १८ वर्षीय विधवा रूपकुंवर की हत्या कर के उसके नाम पर लाखों रुपये एकत्रित करके समाज को पथ भ्रष्ट करने वाली क्रूर प्रणाली की देश भर में भर्त्सना हुई है।

यह घटना राजस्थान में घटी। क्योंकि रजवाड़ी क्षेत्र होने से राजस्थान शिक्षा व सुधार की दृष्टि से अत्यन्त पिछड़ा हुआ क्षेत्र है। महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन का अन्तिम भाग राजस्थान में ही बिताया। अपना अमर ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश भी उन्होंने उदयपुर में बैठ कर ही लिखा। अपना परोपकारिणी सभा का मुख्यालय भी उन्होंने अजमेर राजस्थान में ही रखा। उन्होंने परोपकारिणी सभा के विधान में यह प्रावधान किया है कि सभा द्वारा विद्वान् उपदेशक, प्रचारक रखकर प्रजा में सत्य धर्म का प्रचार किया जाए। अथवा अनाथ विधवा की रक्षा की जाए। क्या यह नारी जाति के प्रति ऋषिवर की महान् देन नहीं है। इसी अभियान में उन्हें निर्वाण प्राप्त हुआ।

यद्यपि आर्यसमाज के विचारों के प्रभाव से अनेक सुधारवादी संस्थाओं का जन्म हुआ। सती प्रथा के विरोध में उसके स्वर भी मुखरित हुए। राजस्थान सरकार ने आर्डीनेंस भी निकाला परन्तु जो सब से आवश्यक समस्या है उसकी ओर कम लोगों का ध्यान गया।

आज जन-जन में फैली हुई अंध श्रद्धा व मिथ्या मतमतान्तरों द्वारा फैलाई हुई रूढ़िवादिता के विरुद्ध जब तक व्यापक प्रचार प्रसार नहीं होगा। तब तक केवल कानूनों के सहारे इस घातक अन्धकार को दूर नहीं किया जा सकता। आर्यसमाज का कर्त्तव्य है कि वह अपने प्रचार-तंत्र को कार्यशील बनावे। आर्य-समाज के सैकड़ों प्रचारक जब गांव-गांव बस्ती-बस्ती में सद् धर्म की दुंदुभि बजाएंगे तो फिर किसी रूप-कुंवर को जीवित जलाने का अवसर ही उपस्थित नहीं होगा।

आज भी धर्म के नाम पर अधर्म ढोंग पाखण्ड व रूढ़िवादिता का प्रचार हो रहा है। धर्म को व्यापार व्यवसाय बना दिया गया है। समाज-हित, देशहित, की चिन्ता किसी को नहीं। स्वल्प स्वार्थों के सहारे जन-समाज व शासन तन्त्र चल रहा है। देश को आज फिर सामाजिक महा-क्रान्ति की आवश्यकता है। आर्य चेतें व ऋषि ऋण चुकाने का बीड़ा उठावें। □

अनमोल सीख

विश्वास करो।

ईश्वर, धर्म, समाज पर, करो आप विश्वास।
पाओगे यश जगत् में, व्यसन न आये पास ॥

सहायता करो।

विधवा, दीन, अनाथ, अरु भटका हुआ राहगीर।
करो सहाय अपंग की, तुरत बंधाओ धीर ॥

दूर रहो।

झूठे, पापी, चोर से, रहो हमेशा दूर।
बचकर रहो नशेबाज से; जो होय नशे में चूर ॥

प्रेम करो।

माता, पिता, आचार्य से, करो प्रेम से बात।
उनके आशीर्वाद से, सुखी रहेगा गात ॥

निन्दा न करो।

पागल, वृद्ध, गरीब की, निन्दा करो न आप।
करो सहायता प्रेम से, हरो सभी सन्ताप ॥

आगे बढ़ो

हिम्मत से और प्रेम से, लिये सचाई साथ।
आगे बढ़ते जाइये, कर-कर लम्बे हाथ ॥

लड़ते रहो ॥

देश धर्म और मान पर, लग न जाये दाग।
लड़ो मित्र हित के लिए; निज स्वार्थ को त्याग ॥

रचयिता—स्वामी [illegible]

उन्नीसवीं शताब्दी''

(पृष्ठ ३ का शेष

शासन की अपेक्षा भी अपने स्वतन्त्र और स्वाधीन राज्य को सर्वोपरि उत्तम बताया।

प्रथम बार पराधीन भारत में स्वराज्य शब्द का पवित्र उद्घोष किया। भारतीयों में स्वाभिमान जागृत करने के लिए स्वराष्ट्र, स्व-भाषा, स्व संस्कृति की घोषणा की और इसके लिए आर्य, आर्य भाषा और आर्यावर्त्त शब्दों के प्रयोग को प्रोत्साहित किया। आर्य जाति की पराधीनता युक्त घोर पतनावस्था पर उस युग पुरुष को अर्द्धरात्री को जाग कर रोते हुए देखा गया। सम्भव है कवि ने उसी स्वाधीनता के अग्रदूत परम राष्ट्र-भक्त के विषय में लिखा हो—

> एक टीस सी दिल में उठती है,
> एक दर्द जिगर में होता है।
> हम रातों बैठ के रोते हैं,
> जब पूरा आलम सोता है ॥

पास में सोता हुआ सेवक अकस्मात् जाग गया तो उसके रोने का कारण पूछने और किसी चिकित्सक को बुलाने अथवा औषधि लाने को कहने पर उस महापुरुष ने कहा था कि "मेरे दर्द की दवा इन चिकित्सकों के पास नहीं अपितु बत्तीस कोटि आर्य जाति के हाथों में है। यदि आर्य जाति जाग जाये और अपने कन्धों से पराधीनता का जुआ उतार कर फेंक दे तो मेरा दर्द दूर हो सकता है।"

वास्तविकता तो यह है कि मेरे जैसे अकिंचन के द्वारा यह सम्भव ही नहीं कि मैं उस महामानव युग पुरुष तथा युग प्रवर्त्तक के गुणों का वर्णन करने में समर्थ हो सकूं। यह संक्षिप्तरूपेण कुछ शब्द लिख दिये हैं। यदि पाठकों को इनसे कुछ लाभ हो सके, उनका हित-साधन हो सके और वह इनसे कुछ शिक्षा ग्रहण कर सकें तो मेरा उपर्युक्त चर्चा को शब्दों में ग्रथित कर लेखबद्ध करना सार्थक होगा। महर्षि के ग्रन्थों, उनके जीवन चरित तथा उनके विषय में विश्व के सैकड़ों विचारकों के दृष्टि-कोण को पढ़ लेने के पश्चात् मेरी तो यह दृढ़ धारणा और परिपक्व निश्चय है—

> यह कहना पीरो पैगम्बर से,
> कुछ [illegible] हारे हो।
> [illegible] का चांद है,
> और तुम सब सितारे हो ॥

यह विचित्र कर्मकाण्ड हमें कहां ले जायेगा ?

ले०—ओंकारनाथ

मैं महर्षि दयानन्द जी की जीवनी और पत्र व्यवहार को जब पढता हू तो पता चलता है कि महर्षि जी वेद भाष्य छापकर प्रति सप्ताह ग्राहकों को भेजते और लोगों का चंदा समय पर न आने पर उनको काफी कठिनाई होती। अब जब मैं देखता हू कि यज्ञ के नाम पर ४०० कुण्ड और कही १०० कुण्ड बढाकर और एक-एक यजमान से २५००/- रु० लेकर किस प्रकार एक लाख रुपये इकट्ठा कर लेते हैं। क्या महर्षि ऐसा नही कर सकते थे जो इतनी आर्थिक कठिनाई में रहते थे। सच यह है कि आज यज्ञ अग्निहोत्र को ही समझा जाता है और इसके माध्यम से खूब पैसा बनाया जा रहा है। जो किसी प्रकार महर्षि के विचारो से संगति नही खाता है। यह यज्ञ करने कराने वाले पंडित और सन्यासी आज तक ऐसी सामग्री नही बना सके जो वृष्टि कर सके या अधिक वृष्टि को रोक सके। इस सम्बन्ध में किसी ने भी अनुसंधान नहीं किया। महर्षि अपने यजुर्वेद भाष्य के १८वे अ० के २६वे मन्त्र का अर्थ करते हुए लिखते हैं कि भेड, बकरी और गाय को किस प्रकार पालना चाहिए यह एक यज्ञ है। आज जितनी पंचवर्षीय योजनाए चल रही हैं वह सब यज्ञ हैं। जिस प्रकार गैस और तेल की पाइप लाइन से आसाम और बम्बई से मथुरा और करनाल को यह वस्तुएँ भेजी जाती हैं वैसे ही ब्रह्मपुत्र और गंगा नदियों से पाइप लाइन बनाकर जल को महाराष्ट्र, गुजरात और राजस्थान को भेजा जा सकता है। अग्निहोत्र का नहीं पाइप लाइन का यज्ञ करना पडेगा।

मेरी इस बात से कोई भ्रम में न पड जाये। मैं यह स्पष्ट कर दूं कि मेरे घर में सन्ध्या, अग्निहोत्र मन्त्र सहित वेद स्वाध्याय किए बिना किसी को घर में खाना नहीं मिलता (महर्षि के पंच महायज्ञ विधि के अनुसार)।

मुझे दुख से कहना पड़ता है कि आज आर्यसमाज में भी फिरके बन रहे हैं जो अपने-अपने गुरु का इकली नजरा कर यज्ञ के नाम पर पैसा इकट्ठा करते हैं और अपनी यज्ञ की विधि बनाकर [illegible] का यज्ञ करते है। एक स्थान में यज्ञ में ३ समिधा डालने का जो विधान है उस पर मंडप में बैठे ५० के ५० व्यक्ति ३-३ समिधा हाथ में लेकर खड़े हो गए और कुण्ड मण्डप पर बैठे लोगों के सिर के ऊपर से समिधाएँ फेंकी गई जिससे आग बुझ गई। और सब लोगों के पास अपनी अपनी दो थालियां थीं एक खाली और एक में सामग्री यह लोग जब मन्त्र के अन्त में स्वाहा आता है तो सामग्री आहुति वाली प्लेट में डाल और अन्त में यह सामग्री सब की सब हवन कुण्ड में पड जाती। इस प्रकार की इन लोगों की नई रिसर्च हमारी समझ से बाहर है। यही नहीं महर्षि की पद्धति के सामने यह अपने नये ग्रंथ छाप रहे हैं। कई स्थानों पर ऐसा देखा गया कि महर्षि की फोटो भी उनके घरों में नहीं है परन्तु अपने-अपने गुरु की तसवीर अपने घरों में लटकाये है, मैं किसी का नाम नहीं लेना चाहता परन्तु इनके मुख्यालय अजमेर, दिल्ली और रोहतक में हैं, क्या यह श्रद्धा है? हम पुराणिकों की भांति इन में अन्धविश्वास का प्रचार नहीं कर रहे।

मित्रो मेरी बात पर क्रोध से नहीं ज्ञानपूर्वक विचार करो।

दार्शनिक विद्वान् का सम्मान

मुरादाबाद (उ०प्र०) ८ अक्तूबर १९८७ अखिल भारतीय दर्शन परिषद् का ३२वां वार्षिक अधिवेशन रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय के अंगीभूत के० जी० के० महाविद्यालय मुरादाबाद में सम्पन्न हुआ। इसके उद्घाटन के समारोह पर डा० जयदेव वेदालंकार रीडर अध्यक्ष दर्शन विभाग गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय हरिद्वार को, "स्वामी प्रणवानन्द दर्शन पुरस्कार" से पुरस्कृत किया गया है। यह पुरस्कार उनके शोधग्रन्थ "भारतीय दर्शन की समस्याएँ" पर प्रदान किया गया।

उनके 'भारतीय दर्शन की समस्याएँ" ग्रन्थ को विद्वानों की चयन-समिति ने १९८७ की सर्वोत्कृष्ट कृति के रूप में स्वीकार किया है।

इस प्रस्तुत शोध ग्रन्थ में विद्वान् लेखक ने भारतीय दर्शन की १२ समस्याओं को विस्तारपूर्वक निरूपित किया है। ग्रन्थ १२ अध्यायों में निबद्ध, ४१६ पृष्ठ, १८×२२ के आकार में है। प्राच्य विद्यापीठ प्रकाशन हरिद्वार से १९८६ में प्रकाशित हुआ है। उक्त ग्रन्थ में ज्ञानमीमांसा, तत्वमीमांसा, ब्रह्म, सृष्टि-रचना, जीवात्मा, आचारशास्त्र, कर्म का दर्शन, अन्त करण, विज्ञानवाद, शून्यवाद, ख्यातिवाद, मायावाद, और मोक्षमीमांसा आदि भारतीय दर्शन की समस्याओं का विस्तार पूर्वक विवेचन है।

इस शोधग्रन्थ की मौलिक विशेषता यह है कि प्रत्येक विषय पर वैदिक दर्शन से लेकर मध्यकालीन प्रतिनिधि आचार्यों के दर्शन को समालोचनात्मक ढंग से मौलिक प्रमाणों सहित प्रतिष्ठित किया है। यह ग्रन्थ दर्शन के जिज्ञासुओं से लेकर शोधार्थियों सहित पठनीय है। प्रत्येक विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय के पुस्तकालयों के लिए संग्रहणीय है।

रामप्रसाद वेदालंकार
आचार्य
गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय
हरिद्वार

उठो ! आर्य वीरो !

धरा है प्रकम्पित, गगन रो रहा है।
भरत-भूमि का क्यों तरुण सो रहा है॥
मिटी जा रही है सुसंस्कृति हमारी।
सहम सी गई है स्वयं भूमि प्यारी॥

मनुजता डरी सी यहाँ छटपटाती।
दनुजता विहंसती, उसे है डराती।
बिलखती है सीता, बिलखता है मनुजत्व।
निडर बन बढा जा रहा आज दनुजत्व॥

पौरुष हमारा पराजित हुआ है।
संघर्ष जनहित कदाचित अब हुआ है॥
अन्याय बढता, अनय है निरन्तर।
हुआ भ्रष्ट जन जन का है आचरण॥

लज्जा है लुटती यहाँ नारियों की।
नहीं शील-संकोच-शुचिता है बाकी॥
कहा सो रहे हैं यहां राम वंशज।
बढे जा रहे हैं असुरों के अग्रज॥

उठो! आर्य वीरो! तुम्हें अब शपथ है।
चुनौती है आयी, खुला आज पथ है॥
तुम्हें राम बनना है हनुमान बनना।
दनुजता से, बढकर तुम्हें आज लडना॥

उठो! मातृ भू को चलो सांत्वना दो।
नरक तुल्य धरती को स्वर्गिक बना दो॥
दनुजता के कदमों को, छोटा करो तुम।
दलित-दीन के कष्ट बढ़कर हरो तुम॥

दयानन्द के स्वप्न साकार करना।
तुम्हें आर्य बनकर, प्रशस्त पथ है करना॥

—राधेश्याम आर्य विद्यावाचस्पति
मुसाफिरखाना, सुलतानपुर (उ० प्र०)

देश में दंगे और प्रदेशों की मांग क्यों ?

— विशनस्वरूप पटवारी

१–कश्मीर को विशेष दर्जा देने वाली संविधान की धारा ३७० ही इन सब बातों का मूल कारण है। अलगाववाद, प्रदेशों की मांग जैसे खालिस्तान तथा गोरखालैण्ड आदि की प्रेरणास्रोत यही है। इसी के कारण कोई भी गैर कश्मीरी चाहे प्रधानमन्त्री ही क्यों न हो एक इन्च भूमि खरीद कर वहां नहीं रह सकता। इसी कारण आज कश्मीर घाटी एक छोटा पाकिस्तान बन चुका है। इस अस्थायी धारा ३७० का तुरन्त समाप्त किया जाए।

२-धर्म निरपेक्ष राज्य के कारण सभी सम्प्रदायों के लिए निजी कानून समाप्त कर दिये जाय। क्या कारण है कि एक मुसलमान चार औरतें रख सकता है और एक हिन्दू का दूसरा विवाह करना अपराध है। एक मुस्लिम जज जिसके घर में चार बीवी हैं वह अदालत में बैठकर एक हिन्दू को दूसरा विवाह करने पर कारावास की सजा सुनाता है। एक पंजाबी बाप के दो बेटे जिनमें एक केशधारी है वह तीन फुट की तलवार रख सकता है और दूसरा जो केश नहीं रखता उसके लिए ६ इन्च का चाकू रखना भी अपराध है इसलिए सबके लिए समान सिविल कोड बनाया जाए।

३-आरक्षण सरकारी आर्थिक तथा अन्य सुविधायें देने का आधार वर्ग विशेष न होकर सभी वर्गों के पिछड़े लोगों के विकास के लिए आर्थिक होना चाहिए। गांधी जी ने हिन्दू समाज के अभिन्न अंगों को हरिजन तथा अछूत के नाम पर इन्हें ये सुविधायें दिला कर हिन्दू समाज से काट दिया ये लोग इन के लिए हिन्दू से अपना अलग पहचान बनाये हुए हैं।

४-धर्म निरपेक्ष देश में न कोई अल्पसंख्यक होता न बहुसंख्यक, वहां सभी को समान अधिकार होते हैं। इसीलिए संविधान से इन दोनों शब्दों को निकाल कर अल्पसंख्यक आयोग समाप्त कर मानव अधिकार आयोग का गठन किया जाए।

५-देश की सभी प्रादेशिक भाषाओं की लिपि देवनागरी की जाए। जैसे यूरोप के देशों की विभिन्न भाषाओं की एक ही लिपि 'रोमन' है। अंग्रेजी के स्थान पर राज-काज की भाषा में हिन्दी का प्रयोग किया जाए और जो हिन्दी नहीं जानते उन्हें हिन्दी सीखने के लिए समय तय कर दिया जाए। देश की सम्पर्क भाषा के रूप में भी अंग्रेजी की जगह हिन्दी को दी जाए और इसे राष्ट्र-भाषा का स्थान दिया जाए।

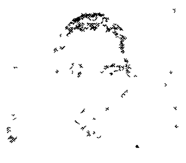
६ देश से रिश्वतखोरी, काला-धन तथा करों की चोरी को रोकने के लिए लायसेंस, कोटा, परमिट, राशन तथा कन्ट्रोल को पूरी तरह समाप्त कर दिया जाए ताकि जनता को सभी अपनी आवश्यकता की वस्तुएँ लेने के लिए सरकारी कर्मचारियों पर निर्भर न रह कर उन्हें रिश्वत देने के लिए विवश न होना पड़े। इस समय आयकर देने की जो आय सीमा है वह बहुत कम है यह सीमा बढ़ा दी जाये ताकि लोग करों की चोरी न कर सकें।

इन सब को समाप्त करने के लिए देश भर में जनमत तैयार कर सरकार पर दबाव डालना होगा कि वह इन्हें कार्यरूप दे अन्यथा चाहे कोई प्रधानमन्त्री बन जाये और चाहे किसी दल की सरकार बन जाए ये समस्यायें समाप्त नहीं होंगी।

हिन्दुस्थान हिन्दू मंच दिल्ली प्रदेश
पटवारी जी संस्थान,
करोल बाग, नई दिल्ली–११०००५

योग दिवस के सुअवसर पर श्री नेतराम शर्मा सम्मानित तथा पुरस्कृत

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि अखिल भारतीय योग संस्थान (रजि०) द्वारा ८ नवम्बर, रविवार को योग दिवस समारोह के अवसर पर दस पन्द्रह हजार जन-समूह के सामने पुनः सम्मानित तथा पुरस्कृत किया जाएगा। इस अवसर पर छतरपुर मन्दिर के बाबा नागपाल, जो भारतीय योग संस्थान की निःस्वार्थ सेवा से प्रसन्न होकर २५ लाख रु० की जमीन योग आश्रम तथा योग यूनीवर्सिटी के लिए भी दान दे रहे हैं। इसमें देहली के L G श्री कपूर जी भी आ रहे हैं। भारतीय योग संस्थान के साधक तथा साधिकाओं का योग प्रदर्शन



बड़ा ही आकर्षित तथा स्वास्थ्य-उपयोगी होगा। मैंने सबसे अधिक त्रैमासिक अंक 'योग मंजरी' के इस साल सदस्य बनाये हैं।





पं० उदयवीर शास्त्री अस्वस्थ

वयोवृद्ध आर्य विद्वान् आचार्य उदयवीर जी शास्त्री को पक्षाघात का आक्रमण हो गया। उनकी चिकित्सा पहले अजमेर के जवाहरलाल नेहरू चिकित्सालय में हुई। पश्चात् यहा के चिकित्सकों के परामर्श पर आचार्य जी को जयपुर के सवाई मानसिह अस्पताल मे प्रविष्ट कराया गया। यहां नाडी सस्थान के विशेषज्ञो ने परीक्षण किया और पाया इस रोग का निदान शल्य चिकित्सा द्वारा सम्भव है, परन्तु आचार्य जी की आयु इस समय ९३ वर्ष है। इस परिस्थिति मे कोई चिकित्सक शल्य चिकित्सा के लिए परामर्श नहीं दे सकता। अतः कुछ नियमित व्यायाम का निर्देश देकर आचार्य जी को घर भेज दिया है। अब घर पर ही चिकित्सकों के परामर्श के अनुसार चिकित्सा चल रही है। आचार्य जी का आत्मविश्वास प्रबल है, वे मानसिक रूप से पूर्ण स्वस्थ एवं बौद्धिक प्रखरता बनाए हुए हैं। यह सन्तोष की बात है।

चिन्ता की बात है आचार्य जी की धर्मपत्नी भी गत ६ वर्षों से दोनो पैरो में पक्षाघात होने से चलने-फिरने मे असमर्थ होकर शय्या पर ही हैं। ऐसी परिस्थिति मे शारीरिक कष्ट के अतिरिक्त चिकित्सा व्यय एवम् अन्य आर्थिक भार बढ जाते हैं। सभव सहायता करने का प्रयास सभा कर रही है परन्तु यह समस्त आर्यजनों का दायित्व है कि वे एक गौरवमयी परम्परा के विद्वान् को अन्तिम समय मे चिन्तित व दुखी न होने दें। अत मेरी समाजो एवम् उदार दानी महानुभावों से प्रार्थना है कि वे यथासम्भव सहायता परोपकारिणी सभा को प्रेषित करने की कृपा करें। और जो सस्था नियमित सहायता दे सके वे सीधी अपनी सभा के माध्यम से सहायता अवश्य दें। यह एक पवित्र कार्य है।

दौलतराम चौरसिया
कृते गजानन्द आर्य
मन्त्री
परोपकारिणी सभा

वेद वेदांग पुरस्कार एवं वेदोपदेशक पुरस्कार १९८८

आर्य समाज सान्ताक्रुज द्वारा आगामी जनवरी मास १९८८ मे निम्न दो पुरस्कारो से आर्य विद्वानो को सम्मानित किया जाएगा।

(१) वेद वेदाग पुरस्कार

जिस विद्वान् ने जीवन पर्यन्त वेद वेदागो का अनुसधान एव ग्रन्थ लिखे - उन्हें वेद वेदाग पुरस्कार मे सम्मानित किया जाएगा। जिसकी पुरस्कार राशि २१०००/- होगी।

(२) वेदोपदेशक पुरस्कार

वेद वेदागों के अनुसधान कर्ताओं के अतिरिक्त जिस विद्वान् ने आर्यसमाज के उपदेशक भजनोपदेशक अथवा कार्यकर्ता के रूप में ही जीवन पर्यन्त सेवा की है—इस पुरस्कार की राशि ११०००/- होगी।

उपरोक्त पुरस्कार राशि के अतिरिक्त पुरस्कृत किये जाने वाले विद्वान् को अभिनन्दन पत्र, शाल एव रजत ट्राफी से भी सम्मानित किया जाएगा।

पुरस्कार हेतु आर्यसमाज सान्ताक्रुज बम्बई-५४ योग्य विद्वानों के प्रस्ताव को आमन्त्रित करती है। जो आर्य पुरुष किसी विद्वान् के नाम उपरोक्त पुरस्कार हेतु प्रस्तावित करना चाहते हैं-वे विद्वानो के जीवन परिचय, कार्य एव लिखे गये ग्रन्थो की सूची आदि सहित विस्तृत पत्र दिनाक ३०।९।८७ तक भेजने की कृपा करें।

जो विद्वान् अपने नाम का स्वय प्रस्ताव करेंगे वे अयोग्य माने जाएगे।

(कैप्टिन देवरत्न आर्य)

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१

R. N. No. 32387/77 Post in N.D.P.S.O. on 5, 6-11-87 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139

रजि० सं० डी० (डी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

आर्यसमाज अमरकालोनी में भव्य समारोह

वार्षिकोत्सव के सन्दर्भ में आर्य-समाज अमर कालोनी में एक भव्य समारोह आयोजित किया गया जिसमें वैदिक विद्वानों ने प्रेरणाप्रद प्रवचन किये और मधुर गायकों ने जनसमूह को मुग्ध कर दिया।

इस आर्यसमाज के उत्सव का कार्यक्रम एक सप्ताह पूर्व ही प्रारंभ हो गया था। श्री महात्मा रामकिशोर के वेद प्रवचन तथा श्री वेद व्यास के मधुर भजनो से श्रोता सात दिन तक आनन्द विभोर होते रहे। एक नवम्बर का विशाल समारोह का आयोजन किया गया। जिसमे श्री यशपाल सुधांशु सम्पादक आर्यसन्देश, श्री यशपाल शास्त्री कालका जी, श्री विश्वामित्र मेधार्थी आदि महानुभावो ने जनता को सम्बोधित किया।

श्री सुधांशु ने कहा—इस समय देश की एकता और अखण्डता पर खतरे मंडरा रहे हैं। देश के अति विशिष्ट पाच सौ ५० व्यक्तियो के लिए सुरक्षा प्रबन्ध किये गए हैं। हर दिन २ करोड़ रुपये सुरक्षा व्यवस्था मे लग रहे हैं। दिल्ली मे ६० हजार पुलिसकर्मी चौकसी पर लगे हैं। फिर भी आतंकवादी आकर अपनी घिनौनी हरकतें करके बच कर निकल जाते हैं। हमारी सरकार जनता मे बड़ी शक्ति से पर यो आग मे अपने हाथ जला रही है परन्तु ... मे पड़ोसी हाथ ... ले रहे है। इस आग को बुझाने के लिए किसी प्रकार का ... करके पूर्ण कठोरता ... होगा। बन्दूक का बदला राइफल से सरकार को देना चाहिए। प्रशासन हर सम्भव कठोर कारवाई करे तभी ठीक होगा। श्रीसुधांशु ने देश की एकता के लिए एक हिन्दी भाषा, एक ईश्वर की मान्यता, एक दर्शन चिन्तन की पुस्तक वेद को अपनाने की प्रेरणा दी।

इस अवसर पर श्री पुस्किन ने मधुर भजनो से जनसभा को मुग्ध कर दिया। स्कूल के बच्चो ने भी प्रभु भक्ति के मधुर भजनो द्वारा वातावरण को भक्तिमय कर दिया। बाद मे श्री यशपाल सुधांशु द्वारा बच्चों को पुरस्कार वितरण किया गया।

(पृष्ठ १ का शेष)

आर्यसमाज दरियागज

अन्धेरे को चीरने मे सूरज की एक किरण काफी है और जब प्रकाश पुञ्ज सूर्य निकलता है तो धरती भर का अन्धकार दूर हो जाता है। ऋषि दयानन्द का जलाया ज्ञान दीपक हम सदा प्रज्वलित रखें स्वाध्याय और सत्सग करते रहें तथा फैले हुए अज्ञान का नाश करते रहें। वार्षिकोत्सव के अवसर पर एक आर्य सम्मेलन का भी आयोजन किया गया। जिसकी अध्यक्षता दिल्ली सभा के महामन्त्री डाक्टर धर्मपाल ने की। इस अवसर पर मुख्य वक्ता थे—श्री राजगुरु शर्मा तथा महेश विद्यालंकार, श्री जगवीर सिंह एडवोकेट आदि।

डा० धर्मपाल ने कहा—आर्य-समाज देश का जागरूक प्रहरी रहा है। आज सती प्रथा जैसी घिनौनी कुप्रथाएँ फिर यदा-कदा होने लगी हैं। लगता है हमारे जन-जागरण में कुछ कमी रह गई है। प्रशासन तो हमेशा देर से जागता हैं। हमें और उत्साह से कार्य करना होगा। इसके लिए जरूरी है योजनाबद्ध सगठित और अनुशासित होकर काम करने की। मैं आह्वान करूगा महर्षि दयानन्द के ऋण से उऋण होने के लिए हम सभी को अपने छोटे-मोटे मतभेद भूलकर कार्यक्षेत्र मे उतर जाना चाहिए।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान [illegible] के लिए श्री डा० धर्मपाल द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (डी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ · अंक ४ | रविवार १५ नवम्बर १९८७ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८७ | मार्गशीर्ष २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य : एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

ऋषि दयानन्द सच्चे राष्ट्रवादी तथा महान् सुधारक थे

—जगदीश टाइटलर

आर्यसमाज गुप्ता कालोनी विजय नगर, दिल्ली द्वारा २ नवम्बर से ८ नवम्बर तक वेद प्रचार सप्ताह धूमधाम से मनाया गया। जिसमें पं० जैमिनी शास्त्री के ब्रह्मत्व में चतुर्वेदीय शतक यज्ञ सम्पन्न हुआ।

इस अवसर पर केन्द्रीय नागर विमानन राज्य मन्त्री श्री जगदीश टाइटलर ने ८ नवम्बर को समापन समारोह में अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि—ऋषि दयानन्द ने देश और समाज को अन्धपरम्पराओं और कुरीतियों से बचने का महान् सन्देश दिया। हमें भारत की एकता और अखण्डता के लिए राष्ट्रवादी दयानन्द से प्रेरणा लेनी चाहिए। धार्मिक पुनर्जागरण में आर्यसमाज का योगदान महत्त्वपूर्ण रहा है। उन्होंने आर्यसमाज के सस्थागत कार्य के लिए सहयोग करने का वचन दिया।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री डा० धर्मपाल आर्य ने मनु महाराज का—

धृति, क्षमा, दमोऽस्तेयं
शौचमिन्द्रियनिग्रह ।
धीविद्या सत्यमक्रोधो,
दशकं धर्मलक्षणम् ॥

श्लोक उद्धृत करते हुए कहा कि सच्चा धर्म वही है जो आपसी भाईचारा, राष्ट्रप्रेम व विश्वबन्धुत्व की प्रेरणा देता है। हमें दूसरों से वैसा ही व्यवहार करना चाहिए जैसा हम उनसे चाहते हैं। उन्होंने आगे कहा कि धर्म के वास्तविक स्वरूप में सच्चाई, ईमानदारी, सद्-व्यवहार आदि गुण ही महत्त्वपूर्ण हैं न कि पूजा-पद्धति का विधान, अत हमें सत्याचरण द्वारा समाज, राष्ट्र की उन्नति व विश्व शान्ति की स्थापना हेतु योगदान देना चाहिए।

इस अवसर पर आर्य केन्द्रीय सभा के प्रधान महाशय धर्मपाल जी ने मन व आत्मा के उत्थान पर विशेष बल दिया और ईश्वर-भक्ति को लोक व परलोक सुधारने का उत्तम साधन बताया।

'आर्यसन्देश' के सम्पादक व प्रसिद्ध विद्वान् श्री यशपाल सुधांशु ने कहा कि सद् व्यवहार और सेवा से आर्यसमाज के कार्यक्रम को हम गति दें। प्रत्येक वैदिक धर्मी को आज और अधिक श्रद्धावान तथा सत्यनिष्ठ होने की आवश्यकता है?

इस अवसर पर श्री पुरुषोत्तम एम० ए० तथा स्वामी विद्यानन्द ने भी प्रेरक विचार रखे। सभा का सयोजन श्री अशोक विद्यालंकार ने किया।

राय के शासनकाल में २०० आतंकवादी मारे गए

चंडीगढ, ८ नवम्बर। पंजाब में जहां तक आतंकवाद के खिलाफ लड़ाई का सवाल है राष्ट्रपति शासन का एक साल निश्चय ही उपलब्धि वाला रहा है। यह बात नहीं कि इस बीच निर्दोष व्यक्तियों की हत्याओं में कमी आई है। आतंकवादियों ने ४४० नागरिकों और ४६ पुलिस कर्मियों के प्राण लिये किन्तु वे भी पुलिस के हाथों क्षतविक्षत होने से नहीं बच पाए हैं। पुलिस मुकाबलों में २०० के करीब आतंकवादी मारे जा चुके हैं जबकि १६३५ आतंकवादियों को गिरफ्तार किया जा चुका है।

राष्ट्रपति शासन में जो प्रथम श्रेणी के आतंकवादी मारे जा चुके हैं उनमें पंथिक समिति के सदस्य गुरदेव सिंह उसमानपुर, खालिस्तान लिबरेशन फोर्स के संस्थापक तथाकथित जनरल अरूड़ सिंह और कुलदीप सिंह मुच्छल शामिल हैं। दुर्दांत आतंकवादियों रोशन बैरागी, मजीत सिंह भिण्डी और मनवीर सिंह चहेडू के पुलिस के कब्जे से बच निकलने की खबरें निकलती रही हैं किन्तु उनके बारे में कुछ और सुनने में नही आया। स्वय आतंकवादी तत्वों द्वारा यह आरोप लगाए गए हैं कि पुलिस उनकी हत्या कर चुकी है।

राष्ट्रपति शासन के एक वर्ष के कार्यकाल की उपलब्धियों का उल्लेख करते हुए राज्यपाल श्री सिद्धार्थ शंकर रे ने यह दावा उचित ही किया है कि पहले आतंकवादी कार्रवाई करते थे जबकि पुलिस जवाबी कार्रवाई करती थी। अब पुलिस कार्रवाई करने में पहल करती है और आतंकवादियों को अपनी जान बचाने के लिए भागना पड़ता है। महत्त्वपूर्ण उग्रवादियों की गिरफ्तारी के फलस्वरूप पुलिस को जो जानकारी मिलती रही है, उसने आतंकवादियों के ठिकानों को असुरक्षित बना दिया। निस्सन्देह पुलिस के गुप्तचरी सूत्र अधिक सक्रिय हुए हैं इसका ताजा उदाहरण जिला गुरदासपुर में मिला जहां वडिया कलां के नरसंहार के दोषी ४ अभियुक्त ४८ घंटों के भीतर पुलिस मुकाबले में मारे गये। ग्रामीण जनता, विशेषकर सिखों को लोक शक्ति समागमों के माध्यम से सरकार आतंकवाद के विरुद्ध जागृत करने में काफी हद तक सफल रही है। पुलिस महानिदेशक जे० एफ० रिबेरो ने पंचों, सरपंचों और अन्य महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों के अभी तक जितने सम्मेलनों को सम्बोधित किया, उनका परिणाम लोगों पर अच्छा पड़ने के समाचार आ रहे हैं। वह पुलिस के विरुद्ध शिकायतें भी सुनते रहे हैं जिनमें कुछ सच्चाई होती है, उनके बारे में तुरन्त कार्रवाई करने हैं और जो शिकायतें [illegible] होती हैं और आतंकवादी तत्वों से सहानुभूति [illegible] जाती हैं उनके बारे में [illegible] होते देर नहीं [illegible]। [illegible] ऐसे ३६ सम्मेलन किए जा चुके हैं जिनमें ग्रामीण [illegible] ने भाग लेने वाले ८० हजार प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

खालिस्तान की घोषणा करने वाली पंथिक समिति को उग्रवादी क्षेत्रों में कोई सर्वोच्चता प्राप्त नहीं है, यह [illegible] खालसा और खालिस्तान लिबरेशन फोर्स के प्रतिनिधियों की तरफ से हाल ही में दिए गए बयानों में स्पष्ट हो गई है। उक्त दोनों उग्रवादी संगठनों ने पंथिक समिति की आलोचना की है और कहा है कि जिस तरह से दीपावली पर उसने 'सरबत खालसा'

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—डा० धर्मपाल

क्या ईश्वर जीव के आगामी कर्मों को जानता है?

—स्वामी सत्यपाल जी परिव्राजक

ईश्वर की सर्वज्ञता के विषय मे विद्वानो में मतभेद है। कुछ लोग कहते हैं कि जो कुछ अनन्त काल में कर्म करेंगे उन सब को ईश्वर प्रथम ही जानता है कि अमुक जीव अमुक समय में यही कर्म करेंगे। दूसरी मान्यता यह है कि जो कर्म जीव कर सकता है अच्छे या बुरे उनको ईश्वर जानता है। परन्तु उन सब कर्मों मे से कौन से कर्म को जीव कब करेगा यह नहीं जानता।

हमारे विचार से दूसरी मान्यता ठीक है। क्योंकि जो कर्म जीव के विचार मे नही है और इससे अगली सृष्टि के मध्य काल मे विचार में आएगा पुन जीव उस कर्म को करेगा उसको ईश्वर नहीं जानता कि अमुक जीव इस कर्म को सृष्टि के मध्यकाल मे करेगा। क्योंकि जिन इन्द्रियो और शरीरादि साधनो से जीव विचार और कर्म करता है उनका अभाव है। इसलिए अभाव से भाव नहीं जाना जा सकता। जब जीव कर्म करने का विचार मन मे करता है और जब वाणी शरीर से कर्म करता है तब उसको परमात्मा जानता है। किन्तु जब जीव के ज्ञान में ही कर्म करने का अभाव है तब उसको ईश्वर नही जानता।

प्रश्न—यदि परमात्मा यह नही जानता कि इस से अगली सृष्टि के मध्य काल मे अमुक जीव कौन-सा कर्म करेगा तो परमात्मा सर्वज्ञ नहीं रहा?

उत्तर—सर्वज्ञ शब्द का अर्थ यह नहीं है कि अभाव को भाव जानना अपितु सर्वज्ञ शब्द का अर्थ यह है कि किसी भी ज्ञान को उसके लिए नया न होना अर्थात ऐसा कोई भी ज्ञान नहीं जिसको वह कभी न जानता हो। परन्तु उस परमात्मा के जाने हुए कर्मों में से अमुक काल मे जीव किस कर्म को करेगा इसको परमात्मा जीव के विचार मे आने से पूर्व नहीं जानता। क्योंकि इस कर्म का कर्ता जीव कर्म करने मे स्वतन्त्र है। जैसे सर्वशक्तिमान शब्द का अर्थ लोगो ने ठीक नही समझा वैसे ही सर्वज्ञ को भी अन्यथा समझा है। अत सर्वज्ञ का अभिप्राय यही है कि जीव कौन कौन से शुभाशुभ कर्म कर सकता है यह ईश्वर जानता है, यही उसकी सर्वज्ञता है।

प्रश्न—ऐसा मानने से तो परमात्मा की सर्वज्ञता में दोष आएगा कि जब जो जीव जिस कर्म को करेगा उस कर्म को परमात्मा जानेगा और इससे परमात्मा का ज्ञान बढ़ेगा।

उत्तर—इससे ज्ञान मे वृद्धि नही होती। क्योंकि परमात्मा के लिए यह कोई नया कर्म नही है। जैसे एक न्यायाधीश सौ प्रकार के विधानो को जानता है उनमे से जो-जो मनुष्य जिस-जिस कर्म को करता जाता है न्यायाधीश उस-उस कर्म का फल कर्मानुसार देता रहता है। वह लाखों मनुष्यो को फल देता है। परन्तु उसके न्यायालय मे जो सौ प्रकार के विधान हैं उन्हीं में से किन्हीं एक विधान के अनुसार मनुष्य कर्म करते हैं और वह उनको फल देता है। बार बार उसी प्रकार से करते रहने पर भी न्यायाधीश का ज्ञान नही बढ़ता। इसी प्रकार से परमात्मा शुभाशुभ कर्मों का फल देता रहता है अत ज्ञानवृद्धि का दोष नहीं आता।

जिन लोगो का यह मत है कि यदि जीव कर्म करेगा और पुन उसके करने पर परमात्मा जानेगा तो परमात्मा का ज्ञान बढ जायेगा। उनके मत में भी जीव के कर्म करने पर ही परमात्मा जानता है कि इस जीव ने यह कर्म किया है और इस कर्म का यह फल है। इसमे भी वही दोष आता है कि इस जीव ने यह कर्म किया इसको अमुक फल मिलना चाहिए। यदि इस बात को पूर्वपक्षी नहीं मानता तो फिर इस बात का उत्तर देवे कि इस ज्ञान के बिना जीवों के कर्मों का फल किस प्रकार से दे सकता है। क्योंकि कर्म करने से पूर्व तो परमात्मा यह निश्चित कर ही नही सकता कि इस कर्म का फल इस जीव को मिलना चाहिए। यदि कर्म करने से पूर्व निश्चय कर लेवे तो मिथ्या ज्ञान होगा। क्योंकि कर्म किया नहीं और बिना कर्म किए को किया हुआ मान मान लिया है। जिस प्रकार से एक घडी बनाने वाला जब घडी को बना देता है तब यह जाना जाता है कि इस मनुष्य ने घडी का निर्माण किया है और जब तक घडी का निर्माण नहीं होता तब तक यही जाना जाता है कि घडी नहीं बनाई। इसी प्रकार प्रकार से परमात्मा भी किए हुए कर्मों को किए हुए और न किए हुए कर्मों को न किए हुए जानता है और कर्म करने के पश्चात् उनका फल देता है। जैसे सृष्टि उत्पत्ति, स्थिति व प्रलय इन तीन अवस्थाओं को जिस समय जो होती है वैसा ही जानता है इससे उसकी सर्वज्ञता में दोष नही आता। इसी तरह जीवो के भूत भविष्यत व वर्तमान काल के होने वाले कर्मों को यथासमय जानने मे दोष नही आता। सर्वज्ञता में अमुक जीव अमुक समय मे यही कर्म करेगा जो परमात्मा के ज्ञान से पूर्व से निश्चित है यह पौराणिक विचार-धारा है। जैसे—'होगा वही जो राम रच राखा" इत्यादि पौराणिक सस्कारों के कारण कुछ हमारे आर्य बन्धु भी इस भ्रम पूर्ण विचारधारा को मानते हैं। और इस विचार के विपरीत ऋषि दयानन्द के निम्न स्पष्ट लेख को समझने में भी भूल करते हैं—

प्रश्न—परमेश्वर त्रिकालदर्शी है, इससे भविष्य की बातें जानता है। वह जैसा निश्चय करेगा जीव वैसा ही करेगा। इससे जीव स्वतन्त्र नहीं। और जीव को ईश्वर दण्ड भी नहीं दे सकता। क्योंकि जैसा ईश्वर ने अपने ज्ञान से निश्चित किया है वैसा ही जीव करता है।

उत्तर—ईश्वर को त्रिकालदर्शी कहना मूर्खता का काम है। क्योंकि जो होकर न रहे वह (भूतकाल) और न होके होवे वह (भविष्यत काल) कहाता है। क्या ईश्वर को कोई ज्ञान होके नहीं रहता तथा न होके नहीं होता तथा न होके होता है? इसलिए परमेश्वर का ज्ञान सदा एक रस अखण्डित वर्तमान रहता है। भूत भविष्यत तो जीवो के लिए है। हां जीवो के कर्मों की अपेक्षा से त्रिकालज्ञता ईश्वर में है स्वत नहीं। जैसे स्वतन्त्रता से जीव कर्म करता है वैसा ही सर्वज्ञता से ईश्वर जानता है, और जैसा ईश्वर जानता है वैसा जीव करता है। अर्थात् भूत भविष्यत् वर्तमान के ज्ञान और फल देने में ईश्वर स्वतन्त्र और जीव किञ्चित् वर्तमान का ज्ञान और कर्म करने में स्वतन्त्र है।

(सत्यार्थप्रकाश सप्तम समुल्लास)

सत्यार्थप्रकाश में यह प्रकरण जीव की स्वतन्त्रता का है तदनुसार ही इस पाठ का अर्थ है। हां! "जीवों के कर्मों की अपेक्षा से त्रिकालज्ञता ईश्वर में है। स्वत नहीं।" [illegible] कर्मों की अपेक्षा से ईश्वर में त्रिकालज्ञता का अभिप्राय है—कि जब जीव कर्म करता है तब ईश्वर जानता है कि यह वर्तमान काल है जिसमे यह जीव कर्म कर रहा है। जब जीव कर्म की समाप्ति कर देता है तब ईश्वर जानता है कि इस जीव ने यह कर्म पूर्ण कर लिया है यह भूतकाल का कर्म है। जब जीव कर्म कर रहा है तब परमात्मा इस कर्म को वर्तमान काल में जानता है और जब कर्म समाप्त हो गया तब इस कर्म को भूतकाल में जानता है। जीव के जिस कर्म का फल परमात्मा वर्तमान समय में दे रहा है उसको परमात्मा वर्तमान काल जानता है और उसी जीव के जिन कर्मों का फल आगे आने वाले समय में देगा उस समय को परमात्मा भविष्यकाल जानता है। अर्थात् इस जीव के इस कर्म का फल अब दे रहा हू और शेष कर्मों का फल आगे दूगा ऐसा ईश्वर जानता है। इस प्रकार से जीवों के कर्मों की अपेक्षा से ईश्वर में त्रिकालज्ञता है। यदि ईश्वर में जीवों के कर्मों की अपेक्षा से त्रिकालज्ञता न हो तो उसकी कर्म व्यवस्था नष्ट हो जाए। क्योंकि जब किसी जीव ने कर्म तो किया नहीं है परन्तु (तुम्हारे पक्ष मे) परमात्मा किया हुआ जानता है, तो उसका ज्ञान मिथ्या माना जाएगा।

जैसे स्वतन्त्रता से जीव करता है वैसा ही सर्वज्ञता से ईश्वर जानता है और जैसा ईश्वर जानता है वैसा जीव करता है। इसमें विशेष ध्यान देने की बात यह है कि जैसा स्वतन्त्रता से कर्म जीव करता है वैसा ही सर्वज्ञता से ईश्वर जानता है। यहां पर जैसा करता है वैसा ही ईश्वर जानता है इससे यह सिद्ध होता है कि जैसा जीव ने किया वैसा ईश्वर ने से जाना। यदि ईश्वर पहले से जानता होता तो यह कहना ठीक हो जाता कि जैसा करना है वैसा ही जानता है। अत इसका अभिप्राय यही है कि जीव कर्म करता है और परमात्मा उसको जानता है कि अमुक जीव ने यह कर्म किया है। दूसरा अर्थ यह है कि (जैसा ईश्वर जानता है वैसा जीव करता है) इसका अभिप्राय यह है कि जीव अच्छे या बुरे जो भी कर्म कर सकता है उनका विधान ईश्वर ने करने और न करने का वेद में कर दिया है। ऐसा कोई भी कर्म नहीं जिसको परमात्मा न जानता हो उन कर्मों में से ही जीव किसी कर्म को करेगा

(शेष पृष्ठ ६ पर)

जगन्नाथ की वास्तविक आराधना :

—भैरवदत्त शुक्ल

नील गगन का चमकीला नक्षत्र-मण्डल, हरित शस्यश्यामला वसुन्धरा के वक्षस्थल पर किलोल करते कृमि-कीट वर्ग से लेकर मानव तक समस्त प्राणि-समूह, प्रकृति-नटी का प्रतिपल परिवर्तित कण-कण और अनन्त समय का सतत गतिशील प्रत्येक क्षण विशिष्ट नियमों की परिधि में सिमटा हुआ है। यही नहीं, जड पाषाण-खण्डों से लेकर चेतना के सारे रूप-स्वरूप तक सहज सुरक्षा की भावना का परिपालन हो रहा है। इन सब का स्वामी ही तो जगन्नाथ है, परब्रह्म परमेश्वर है। इसकी नियामिका शक्ति, सचालिका सामर्थ्य और न्याय-परिचालिका विवेक-सवलित क्षमता के प्रति प्रज्ञाशील सभ्य-सुसस्कृत मानव का कृतज्ञता ज्ञापन करना, परम पिता ज्ञान स्वरूप आनन्द-सिन्धु करुणाकर के प्रति श्रद्धा-विगलित स्वर मे सन्त-गृहस्थ का आराधना-रत होना और शांति के सस्थापक एकमेव स्रष्टा के प्रति आर्य सन्तानों का विनत-विनम्र बने रहना आवश्यक अनिवार्य कर्त्तव्य है। इसे छोड या तोड देने से और चाहे कुछ न हो, परन्तु सस्कार अस्त-व्यस्त हो जाते हैं, पारस्परिक समभाव के स्थान पर कलह-कुचालों का बुरा क्रम हावी हो जाता है और परोपकार के स्थान पर स्वार्थों की आंधियां उठने उमडने लगती हैं।

इसीलिए हमे प्रात और साय सन्ध्या करने की आवश्यकता पडती है। प्राणायाम-आसन का सहारा लेकर यम-नियमों का पालन करना पडता है और योग-मार्ग के माध्यम से मोक्ष के परम लक्ष्य की ओर अग्रसर होने की साधना पालनी होती है। हमारी उपासना मन्त्रो के सहारे चलती है, मननशील होती है। उसमे अनर्गल अपलाप के लिए कोई स्थान नहीं होता, व्याकुल-विह्वल कर देने वाले करुण विलाप के निराशावाद की रचमात्र भी अपेक्षा नहीं होती और स्वस्थ आशावाद का अमृत प्रवाहित होता रहता है।

वेदों में परमेश्वर की उपासना के प्रकार बतलाये गए हैं। उसी की बानगी के लिए प्रस्तुत है एक ऋचा—

ओ३म् य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिष यस्य देवा। यस्य छायामृत यस्य मृत्यु कस्मै देवाय हविषा विधेम।

ऋग्वेद १०।१२१।२

इसे हम सरल शब्दों में यों प्रकट कर सकते हैं कि (य. आत्मदा) जो प्राणि हित के लिए स्वय को प्रदान किये हुए हैं, (बलदा) जो शक्ति-दाता है, (विश्वे) ससार की परिधि में सम्मिलित समस्त जीव (यस्य उपासते) जिसकी उपासना करते हैं, लेकिन (देवा) विबुध-विद्वज्जन (यस्य प्रशिष) जिसकी आज्ञा का पालन करते हैं। (यस्य च्छाया) जिसके द्वारा सम्पादित छेदन-भेदन अथवा दण्ड और (यस्य मृत्यु) जिससे उपलब्ध मृत्यु भी (अमृतम्) जीव की अमरता के लिए है, (कस्मै देवाय) उस सुख स्वरूप आनन्द-निधान सर्व सुविधा प्रदायक प्रभु की हम (हविषा विधेम) आत्म-दान द्वारा पूजा करें, उपासना करें।

(१) आत्मदा—मत्र के प्रारभ में ही सूचित कर दिया गया है कि वह प्रभु 'आत्मदा' है। वह परब्रह्म जगदीश्वर पूरी तौर से निःस्वार्थ भाव से प्राणि-समूह के हितार्थ सृष्टि की सर्जना करता है, परिपालना में तत्पर रहता है, उसे सम्भाले रहता है और अन्ततः विश्राम के लिए प्रलय की सुमधुर रजनी को अवतारणा भी करता है। कर्म और योग्यता के आधार पर विश्व के समस्त प्राणियो में समुचित साधनो की वर्षा करता है, सुविधाओं के अबार लगाता है, विकास और उत्थान के असख्य अवसर प्रदान करता है। यही नहीं, जो प्रारम्भ में अशक्त-अक्षम प्रतीत होते हैं, उन्हीं को उन्नति की ओर गतिशील होने के लिए प्रबल प्रेरणा देता है।

उस प्रभु का कोई भी कार्य अपने लिए नहीं है, उसकी तो एक-एक क्रिया एक-एक व्यापार सर्वोपकार के समष्टि परक अनुष्ठान पर न्योछावर है। ऐसा प्रतीत होता है कि उसने प्राणि-परिपालन और एकमेव सर्व हित के लिए अपने को सर्वतोभावेन समर्पित कर रखा है।

इसीलिए जो भी उस परमेश्वर के सच्चे भक्त होते हैं, जिन्हें उनकी आराधना करनी होती है, वे अपने प्रभु के ही समान अपने को जन-हित पर अर्पित कर देते हैं। अपने आप बिना किसी विवशता या बाध्यता, बिना किसी दबाव या नियन्त्रण के तरह तरह के कष्ट-कण्टको का वरण करते हुए और आपत्ति आधियो के निर्मम प्रहार झेलते हुए अपने हृदय का एक-एक स्पन्दन प्राजापत्य याग मे सहर्ष आहुत करते रहते हैं। ऐसे ही महामानव-'नर'—स्वार्थ मे न रमने वाले और जनसमूह को सतत प्रगतिगामी बनाने वाले (नृ + नि=ले चलना) होते हैं। उनमें शोषण-उत्पीडन की गन्ध तक नहीं मिल सकती।

(२) बलदा—वह ईश्वर अपने अनुचर जीवात्मा को साहाय्य के रूप में पराश्रित नहीं बनने देता। वह उसे बल उपलब्ध करा देता है। उसमे आन्तरिक शक्ति-तत्त्व प्रविष्ट कराकर, वह उसे बाह्य शक्ति-सपन्न भी करता है। वह उसका हाथ नही पकडता, उसे गोद में भी नहीं लेता वरन् उसे प्रगति-पथ पर चलने का आत्मनिर्भर अभ्यासी बना देता है, अकर्मण्यता की सकीर्णता से निकाल कर उत्थान के सोपानों के माध्यम से अभ्युदय और निःश्रेयस् का पथिक बना डालता है और तरह-तरह के अवरोधो से भिडने-निपटने और उन्हें विनष्ट करने की सामर्थ्य प्रदान करता है। प्रभु की करुणा और दया यदि जीवात्मा को अपने पैरो पर खडा होना न सिखा पाये, तो उसे निष्ठुरता ही माना जाएगा। यदि वह उसे पतन, अधोगति या अभाव मे सर्वथा दूर ही रखे तो अनुभव-विभव के सदैव रिक्त बने रहने की आशका हो सकती है।

इसीलिए परमेश्वर के साहाय्य की यही विधि है कि वह जीवात्मा को बल प्रदान करता है। हर समस्या निपटाने की क्षमता देता है और प्रत्येक प्रश्न का उत्तर खोजने के मनन, चिन्तन, धारणा, मेधा प्रभृति उपकरण उपलब्ध कराता है। हो सकता है कि उन्नतिकामी जीव पदे-पदे बाधाओं के व्यूह में खो जाये, दायित्व-भारों की दुर्वहता से व्यग्र-बेचैन हो जाये, वीथि-पथ कटकाकीर्ण और जटिल विषम बनकर उसे पलायनोन्मुखता की ओर मोडने के प्रयास करें, तरह-तरह के आघात-प्रहार आहत कर डालें परन्तु वह अपना उत्साह नहीं खोता, विवेक नहीं गंवाता और मनन-चिन्तन की सुरापगा की पेंगें भरते हुए, उसमें तैरते हुए व्यवहार के ठोस धरातल पर पैर टिका कर अपने परम साध्य की ओर देखना विस्मृत नही कर पाता।

इस दृष्टि से जो आस्तिक हैं, उन्हें औरों की सहायता करने मे यही प्रयत्न रखना चाहिए कि जिस व्यक्ति या व्यक्ति-समूह की सहायता की जा रही है, वह औरो पर निर्भर न होने पाये और अपने पैरो पर खडा हो जाये। 'दान'-वृत्ति कितनी सुन्दर और कल्याणकारिणी होती है, परन्तु सहायता के खोटे प्रकार के कारण उसका सही प्रयोग नही किया जाता। इसी कारण से भारत, जो सारे ससार के पालन-पोषण की अकूत क्षमता और प्रचुर प्राकृतिक सम्पदा से पूर्ण है, भिक्षा वृत्ति का भयावह अड्डा बना हुआ है और अपने से छोटे देशो के आगे हाथ फैलाता दिखायी देता है। दान की कुत्सित परम्परा से ही बनवाये गए कुए कूडो से भरे जाते हैं छोडे गये साड भूखे-प्यासे रह कर सडको पर डडे खाते फिरते हैं धर्मशालाएँ या तो अनाचार के केन्द्रो मे बदल जाती हैं या स्वार्थी लोगो की जीविका या कर वचना की सहायिका बनती हैं और सम्मानास्पद सचेतन मनुष्य कन्या-रत्नो का वस्तु या पशु के समान दान किया जाता है जिसका और भी गर्हित रूप कन्या-विक्रय की घृण्य प्रथा बनता है

हम यदि ईश्वर-भक्त बनने का दम भरते हैं तो हमे चाहिए कि राष्ट्र मे भिक्षा-वृत्ति की विघातिनी परम्परा का उन्मूलन करें, सुदृढ पैरो, सबल भुजाओ और उन्नत-उर्वर मस्तिष्को की योग्यता के अनुसार काम दें, लोक-चेतना मे श्रम के प्रति आदर की भावना का समावेश करे, पगु विपन्न व्यक्तियो को भी उन्नति के माध्यम दे, विद्या को निरर्थक न बनने दे और सम्पत्ति को शोषण उत्पीडन का साधन न होने दें।

प्रभु की आराधना का तात्पर्य ही है प्रभु-भक्तो मे भाई-चारे की अनुभूति होना, समष्टिपरक विकास का अनुगामी बनना और लोक-कल्याण की कलित पीठिका पर स्वार्थ का कलुष न फैलने देना। जब तक मानव अपने को हिन्दू, मुसलमान या ईसाई मानता है, स्पृश्य-अस्पृश्य के विभेद में उल-

आता है, सवर्ण-अन्त्यज की जन्मना धारणा में फँसाये हुए है, तब तक उसे प्रभु-भक्त नहीं ही माना जा सकता। किसी व्यक्ति के पास करोड़ों-अरबों की सम्पत्ति है। उसने कई मन्दिर बनवाये हैं, प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित करायी हैं और कई पुजारी और मन्त्र-पाठी पण्डित निश्चित वेतन पर लगा रखे हैं लेकिन यदि उसके पडोसी भूख से व्याकुल हैं, नगे बदन हैं, और बेकारी या बेरोजगारी के जबरदस्त शिकजे में फसे हुए हैं तो वह सच्चा ईश्वर-भक्त नहीं हो सकता और उसकी भक्ति या आराधना न होकर कोरी रूढि है। प्रभु-भक्ति से सम्पृक्त प्रत्येक व्यक्ति का यह अनिवार्य कर्त्तव्य है कि वह निर्बलों को बलवान् बनाये और पतितों के उत्थान में सहायक बने।

(३) यस्य विश्वे उपासते इसलिए चाहे जो कुछ हो विश्व की परिधि में जो भी व्यक्ति पहुंचते हैं, उन सभी को चाहे-अनचाहे रूप में उसी परमेश्वर की शरण का पल्ला पकडना पडता है। जिस समय ससार के सारे सबध अस्त-व्यस्त हो उठते हैं नेकी का बदला बुराई मे मिलने लगता है, अभाव का शिकजा खूब कस जाता है। और चारो ओर लेश मात्र भी सहायता की आशा शेष नहीं रह जाती तो उस समय प्रभु का स्मरण आ ही जाता है। कट्टर से कट्टर नास्तिकों को भी बुभुक्षितावस्था, गोगजन्य पीडा या बेचैनी या मृत्यु के आक्रमण में परमेश्वर का ध्यान करते देखा गया है। ऐसे भी व्यक्तियो की कमी नहीं है जो अवराधो और अवनति-व्यूहों की विकरालता के हाहाकार में पीरो की मजारो पर शिर पटकते हैं, कनफुंका गुरु-सेव का व्रत ग्रहण लेते हैं, महंतो या महन्तो के पीछे लगते फिरते हैं। उनसे भी बढ कर वे विद्वान् और विवेचक भी थोडे नहीं है जो इन उपयुक्त माध्यमों को भी ईश्वर की आराधना का ही एक रूप मान लेते हैं। उन्ही को यह घोषणा प्राय यह सुनी जाती है कि उस प्रभु की पूजा के ससार मे जो भी प्रचलित मार्ग हैं, वे भिन्न-भिन्न होते हुए भी सब उस प्रभु की ओर ही जा रहे हैं। ऐसे लोग पुष्टि में गीता के नवें अध्याय का तेईसवा श्लोक प्रस्तुत कर देते हैं।

परन्तु हमें सतर्क रहना है और ससार के सभी मनुष्यों को भी सावधान कर देना है कि सभी मार्ग भले ही ईश्वर की आराधना के ही मार्ग माने जाते हों, फिर भी वे प्रभु की आराधना के रूप में स्वीकार नहीं किये जा सकते। अपनी कामना-पूर्ति के लिए किसी देवता-विशेष पर निरीह भोले बकरे, मेढ़े, भैंसे, बछडे या बालक की बलि चढाना, मजारों और दरगाहो पर चादर, रेवडी चढाते फिरना, पाषाण-प्रतिमाओं का नाना विधि-विधानो से पूजन करना आदि जितने भी कर्म प्रचलित हैं, उन्हें ईश्वर की आराधना का मार्ग समझना बुद्धि का दिवालियापन है। ये और ऐसे ही अन्य कर्म—जैसे पति के शव पर पत्नी का जीवित जल जाना स्वर्ग के पितरों के लिए ब्राह्मण जिमाकर यह मान लेना कि भोजन उन तक पहुच जायेगा आदि-आदि असभ्यता, जडता, रूढिवादिता और स्वार्थ भावना के परिचायक हैं। हमे प्रभु-भक्त के नाते इनका जमकर विरोध करना है, इनकी पुष्टि मे गीता आदि में श्लोक रखने वालो की धज्जियां उडानी हैं और स्पष्ट बतला देना है कि जिस मार्ग से मानवता खण्डित विभाजित न होती हो, व्यक्ति और समाज के सौमनस्य मे विघ्न न पडते हों, प्रत्येक तृण, पशु एव प्राणी के प्रति ममता अक्षुण्ण बनी रहती हो, वही मार्ग ईश्वर की सच्ची आराधना का माग है। ये जो भिन्न-भिन्न माग गीता या ऐसे ही अन्य महत् ग्रथों मे ईश्वर तक पहुचाने वाले बतलाये गये हैं, व ज्ञान, योग, भक्ति श्रम, व्यापार रक्षा, प्रेम, कर्त्तव्य पालन, परोपकार आदि हैं। अर्थात् यदि व्यक्ति अपने सारे कर्मों का फल अपने लिए न रख कर समाज-सापेक्ष बना दे तो भले ही वह अनुशासित विधि-विधान की दृष्टि से ईश्वर की आराधना का क ख ग तक न जानता हो, परन्तु उसका कर्म ही ईश्वर की आराधना जैसा हो जायेगा। दूसरी ओर विधि-विधान से युक्त ईश्वर की आराधना का कोई भी मार्ग सर्वतो भावेन बाह्यत शुद्ध होने पर भी यदि मानव-मानव मे विभेद पनपाता है, घृणा की कालिमा बढा देता है, ईर्ष्या की भट्टी धधकाता है, युद्ध के बादल मडराने मे सहायक बनता है, बेकारी, बेरोजगारी बढाता है, घोरतम विषमता के हलाहल में सारे समाज को डुबा देता है तो उसे कोई भी विवेकशील व्यक्ति ईश्वर की आराधना का माग नहीं अंगीकार कर सकेगा। प्रभु-भक्ति की ही आड में गैलीलियो को प्रताडना दी गयी, सुकरात को जहर पिलाया गया और 'जॉन ऑफ आर्क' को जीवित ही आग की लपटों में डाल दिया गया। ईश्वर के भक्त ही थे जिन्होंने मध्यकालीन यूरोप के पशु परिसर में घोषणा की थी कि वेद-मन्त्र का पढ़ना तो दूर है, शूद्र और नारी के कानो में प्रविष्ट हो जाना तक महापातक है जिसका प्रायश्चित्त कानों में पिघला गर्म रागा डालने के अलावा दूसरा हो ही नहीं सकता। ऐसी जड भक्ति के नाम पर ही रोमन कैथोलिक-प्रोटेस्टेण्ट, शैव-वैष्णव, शाक्त-वैष्णव, शिया-सुन्नी द्वेष की ऐसी आंधियां उमडी हैं जिनमें मानव-विवेक के सभी पक्ष उड-से गये।

इस तरह की जड भक्ति के बीभत्स रूप से ही ऊब कर आधुनिक विचारक मार्क्स ने धर्म को मानव-समाज के लिए अफीम से भी अधिक विघातक माना है। विश्व के सैद्धांतिक कम्युनिज्म के ठोस अनुयायी इसी कोरी भक्ति से चिढ़कर ईश्वर के अस्तित्व पर भी प्रश्न-चिह्न लगा रहे हैं और सम्पूर्ण विश्व में लगभग साठ करोड नास्तिक व्यक्ति पाये जाते हैं।

इसी बात को ध्यान मे रख कर हमे जड पूजा का खण्डन करना है नास्तिकता की बखिया उधेडनी है और भक्ति की खाल ओढ कर पनपने वाली साम्प्रदायिकता से सघर्ष करना है। यह खण्डन विरोध या सघर्ष हथियारो के बल पर नहीं किया जा सकता। इसके लिए ज्ञान का आश्रय लेना होगा, कर्म की अट्टालिका विनिर्मित करनी होगी और रूढि एव बाह्याडम्बर मे खोये लोक मानस के सस्कार परिवर्तित करने पडेंगे। इसमे सफलता पाने के लिए सत्य, निष्ठा, लगन और कर्त्तव्य-परायणता का सबल अपेक्षित है।

(४) अशिष यस्य देवाः—उपासना के नाम पर ससार में जो लोग जड प्रतिमाओं का शृङ्गार करके उन्हें साक्षात् ईश्वर के रूप मे पूजते हैं, जो भूत-प्रेतो-जिन्दों की साधना-सेवा मे लीन रहते हैं, जो वृक्षो और पाषाणों पर पानी और फूल अर्पित करते हैं, जो 'हरे रामा, हरे रामा' जैसे कीर्तनों का गगन तक विस्तार करते हुए रात्रि-जागरण करते हैं, वे सब के सब ऊपर से तो ऐसा प्रतीत होता है कि परमेश्वर की आराधना कर रहे हैं। परन्तु सच्चाई यह है कि उपर्युक्त बातों का आराधना से तनिक भी सबध नहीं है और न इनसे भव-सिंधु तैरकर पार उतरने या मोक्ष पाने में सहायता ही मिल पाती है।

जगदीश्वर की उपासना की उत्तम विधि तो केवल यह है कि परमेश्वर द्वारा किये गए [illegible] का [illegible] किया जाये और उसके द्वारा सुनिश्चित कार्य-व्यापारों के करने में काया और [illegible] का उपयोग किया जाये। यही बुद्धिमानी है। जो विद्वान् हैं, समझदार हैं, वे अपने सहज नियत कर्मों में तत्पर सलग्न रह कर ही समझ लेते हैं कि उन्होंने ईश्वर की उपासना-आराधना की सही विधि जान ली ऐसे ही लोग भव सागर से पार हो जाते हैं और भव सागर मे डूबते हुए लोगों को भी सहारा देते हैं। कितनी बड़ी विडम्बना है कि ज्ञान के अक्षय कोष से परिपूर्ण, बल, सामर्थ्य और क्षमता से समृद्ध और बुद्धि की असीम सम्पत्ति से युक्त होकर भी हम भारतीय कोरे आदर्शवादी बने हुए हैं, अत्यधिक सिद्धान्तवादी बनने का दम भरते हैं लेकिन यथार्थ के धरातल पर विफल सिद्ध होते हैं। प्रतिवर्ष श्राद्ध के पुण्य का प्रदर्शन करने वाले पुत्र अपने जीवित बाप को भूखों मरने और प्यासे तडपने के लिए छोड देते हैं, व्यग्योक्तियों से उनके मानस के तार तार को धुना डालते हैं और अपमान-प्रताडना की बौछार करते देखे जाते हैं। गो दान आदि की परम्परा पर अधिक से अधिक धन-राशि लुटाने वाली हिंदू जाति गायों-बछडों को अद्ध-बुभुक्षित, निर्बल और पगु बनाता है, कुछ नोटों की सरसराहट पाने के लिए कसाई के हाथो बेच देती है और विधि विधानों मे भी निश्चित आयु-सीमा के बाद बूचड़खानों मे कट जाने के लिए अधिकृत कर देती है। हम तो उस भावी युग की भी परिकल्पना करने मे झिझकना पसन्द नहीं करते जब कि इन्द्रियों से थके, मन व मस्तिष्क से चुके, पगु-अपाहिज वृद्ध पुरुषों और स्त्रियों को, माताओं और पिताओं को, भाइयों और बहनो को एक पक्ति मे खडा करके गोली से मार दिया जाया करेगा। कितना बर्बर होगा वह युग। कैसी निष्ठुरता होगी उस समय के मनुष्य मे। इस कल्पना मात्र से रोम-रोम काप उठता है।

मगर हमारे सस्कार बदल रहे हैं। वैज्ञानिकता की झिलमिलाहट में खो कर और भौतिक जड-परिसर के भ्रष्टाचार मे आकण्ठ निमग्न रह कर धर्म, मोक्ष से कटी और बुद्धि भ्रम में उलझी मानवता देर-सबेर दानवता मे बदल सकती है। ऐसा युग न आने पाये, सस्कारों के अभाव में कर्मनाशा का कलुष न बहने पाये और मानव की मननशीलता पर आंच न आने पाये, इसके लिए अपेक्षित है कि हम प्रत्येक क्षण यह ध्यान में रखें, व्यवहार में परिणत करें और प्रत्येक व्यक्ति, समाज एवं देश में प्रचारित-प्रसा-

निश्चित कर दें कि प्रभु के नाम-स्मरण की सर्वोत्तम विधि यह है कि जिस प्रकार ईश्वर न्यायकारी है, उसी प्रकार स्वयं न्यायकारी बना जाये, जिस प्रकार ईश्वर को बुराई पसंद नहीं है, उसी प्रकार बुराइयां ना पसन्द की जायें और जिससे समाज बिखरता है, मानवता खण्डित होती है, आस्तिकता कलुषित हो जाती है, उस लक्ष्य या क्रिया से पृथक् रहा जाये क्योंकि ईश्वर समता-प्रिय है, निष्पक्ष है, और है आनन्द का भंडार। केवल ईश्वर के गुण-बोधक शब्दों नाम बार-बार जोरे-जोर से रटने भर से आराधना पूरी नहीं होती।

संसार में जो साधारण लोग हैं, वे परेशान होने पर, विपत्तियों से घिर जाने पर या अभावों की कटुता में डूब जाने पर ही ईश्वर का स्मरण करते हैं, लेकिन ज्ञानी बुद्धिमान और विवेकशील व्यक्ति प्रकृति के प्रत्येक कण, समय के प्रत्येक क्षण और विश्व के प्रत्येक कर्म या अनुष्ठान में उसका स्मरण करते हैं, उसी के समान बनने का प्रयत्न करते हैं और उसकी आज्ञा का सर्वतोभावेन पालन करते हैं। इस क्रम से ही जीवात्मा महात्मा बनता है और साधनाशील होकर उस प्रभु को आत्मावत् या उसका अत्यन्त प्रिय बन बैठता है। विश्व वस्तुतः प्रभु का आर्त्त भवन है जब कि देव अर्थात्=विद्वान् ज्ञानी भक्त हैं। विश्व की भक्ति कोरी प्रदर्शनात्मक है जब कि देवों की भक्ति आंतरिक या यथार्थ है।

(५) यस्य च्छाया, यस्य मृत्यु., अमृतम् –सांसारिकता की सीमा में बद्ध विवश मानव समुदाय थोड़ी-सी हलचल से उद्विग्न हो उठता है, विपत्तियों की छाया पड़ते ही धैर्य के साज-सामान का आसरा छोड़ देता है और अभावों के प्रारम्भिक प्रहारों से ही कर्त्तव्य-पराङ्मुख बन जाता है। दूसरी ओर जो देव है, जिसने परोपकार का व्रत ले रखा है, जो लोक-कल्याण, व्यष्टि-समष्टि समन्वय, प्राणि-परिपालन प्रभृति लक्ष्यों की परिपूर्ति पर सर्वस्वार्पण करने के लिए उतावला है, वह विवेकशील, मेधा बुद्धि से युक्त सज्जनों का समूह आपत्तियों की आंधी से तनिक भी विचलित नहीं होता, विघ्न-व्यवधान से दायित्व-परिसर और कर्त्तव्य-सीमा का लेश-मात्र भी परित्याग नहीं करता और थोड़ी-सी हलचल तो दूर की बात है, झंझावात या प्रलय के ज्वारों में भी मुस्कुराना छोड़ नहीं पाता।

कारण यह है कि कदम-कदम पर मिलने वाले अभाव उसे परमेश्वर की ओर से ली जा रही परीक्षा के ही मोड़ या रुझान प्रतीत होते हैं। चूंकि उसने परीक्षा में आये हुए प्रत्येक प्रश्न का उत्तर खोज लेने की साधना कर ली है, समुपस्थित समस्याओं के समाधान खोजने का सतत अभ्यास किया है और सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक सम्पत्ति का संचय करने में प्रमाद नहीं प्रदर्शित किया है, इसीलिए उसे भय की तनिक भी अनुभूति नहीं होती।

वैभव-विनाश को वह प्रारम्भिक परीक्षा के रूप में ग्रहण करता है। नव युवक सुन्दर-सुशिक्षित सन्तान का अकाल काल-कवलित हो जाना उसके लिए माध्यमिक परीक्षा प्रतीत होती है। शरीर पर रोगों के आक्रमण को वह योगात्मक परीक्षा समझ लेता है। परमेश्वर अपनी निष्पक्षता की अकलुष कसौटी पर कस कर इस बात का पता लगाता है कि जो सचमुच मानव हैं, वे वित्तैषणा, पुत्रैषणा और लोकैषणा के व्यूहों में घूम-फिर कर उनसे ऊपर उठने में सफल हो पाये हैं, अथवा विफल। वैसे परमेश्वर तो सर्वज्ञ ठहरा। उसे प्रत्येक स्थिति की ही भांति मानवों के स्वभाव वैविध्य की भी राई-रत्ती पता होता है। फिर भी वह लोक-कल्याण के लिए सामान्य जन-समूह को प्रभावित करने की दृष्टि से धैर्य, सहिष्णुता, सत्य-निष्ठा, अहिंसा, अक्रोध आदि गुणों के आधार पर परीक्षा के आयोजन करता रहता है। मर्यादा पुरुषोत्तम राम, योगिराज श्रीकृष्ण, अहिंसा परायण बुद्ध जहर पीते सुकरात जैसे महापुरुष स्वयं तो परीक्षा में सफल हुए ही और उन्होंने समृति का भी कायाकल्प कर दिया।

महर्षि दयानन्द ने जीवन के अन्तिम समय में कष्ट सहने में जिस आनन्दमयी वृत्ति का परिचय दिया, उसी से पं० गुरुदत्त जैसे व्यक्ति भावाभिभूत हो उठे और आज भी आर्यसमाज वज्र-सा अविचल है, महात्मा गांधी ने जिस शांति के साथ सीने पर साम्प्रदायिकता की तीन गोलियां झेलीं, वही आज सम्पूर्ण संसार का परम लक्ष्य बनी हुई है और जिस अहिंसा का आजीवन पालन किया, उसी का सम्बल लेकर एशिया और अफ्रीका के राष्ट्र सुषुप्ति के बन्धन तोड़ कर अंगड़ाने लगे हैं।

जो देव है, परोपकार, समता और एकता का नैष्ठिक पुजारी है, जिसने सर्वस्व आहुत करने का व्रत ले रखा है, वह विवेक का अवलम्बन लेकर अनायास समझ लेता है कि चाहे छेदन-भेदन हो, दुःख-कष्ट रोग-अभाव हों, बाधा अवरोध हों, विपत्ति के जटिलतम व्यूह हों, आपत्ति के बीहड़ भयावह [illegible] यहां तक कि मृत्यु का [illegible]— [illegible] सब प्रगति के सोपान हैं विकास के निम्न-उच्च अधिष्ठान हैं और मानव के अमृत पान में सहायता पहुंचाने वाले हैं। [illegible] से ही जीव अमर हो सकता है।

ये कष्ट और [illegible] धर्म-फल के परिचायक हैं, [illegible] ईश्वर यह चाहता है कि [illegible] व्यक्ति की चित्त वृत्ति और संस्कृति का संस्कार-[illegible] प्रवाह में [illegible] कुन्दन-सी दमकने लगे। [illegible] अभिलाषा रहती है कि [illegible] संस्कृति सुरभि [illegible] बन जाये।

स्थूल रूप में अनुभव होता है कि इन कष्टों या [illegible] में परमेश्वर मनमानी या स्वेच्छाचारिता [illegible] दे रहा है। [illegible] डकैत या बेईमान हैं, उनके पास सुख [illegible] भरी हुई हैं और [illegible] अभावों [illegible] नहीं है लेकिन जो [illegible] अहिंसक, धार्मिक और लोकोपकारक हैं उन्हें पदे-पदे अपमान का हलाहल पीना पड़ता है अभावों की क्रूर कारा में बद्ध [illegible] होकर जीना पड़ता है और सामाजिक प्रताड़ना झेलनी होती है।

परन्तु सूक्ष्म रूप से ध्यान देने पर जान पड़ता है कि इन कष्टों में भी उपादेयता है, इन से मानव की क्षमता एवं सामर्थ्य में अभिवृद्धि होती है। वह इनमें ही पल-पनप कर अभ्युदय और निःश्रेयस् दोनों की उपलब्धि में सफल होता है। जिसने पिपासाकुल बेचैनी का अहसास नहीं किया, वह शीतल जल की मधुरता से परिचित नहीं हो सकता, जिसे बुभुक्षा की चरम सीमा में जाने का अवसर नहीं मिला, वह नमक-रोटी के स्वाद से वंचित रहता है और जिसे अपमान या प्रताड़ना के कुलिश प्रहार नहीं झेलने पड़े, वह कभी प्रतिष्ठा के सिंहासन पर कदम नहीं रख सकता।

(६) कस्मै देवाय हविषा विधेम— ईश्वर निष्पाप है शुद्ध-बुद्ध, निष्कलुष, अविकारी है और इसीलिए अक्षय आनन्द का निधान भी है। वह तो अहर्निश जीवात्मा को भी आनन्दमय बनाने के लिए प्रयत्नशील रहता है। तभी तो वह देव या महादेव कहलाता है।

हमें भी उसी की आराधना करने में सदैव तत्पर रहना चाहिए। उसकी वास्तविक आराधना यही है कि वह आनन्दप्रद है, हम भी लोकहित पर अपना तन-मन-धन सब कुछ न्योछावर कर दें। वह अभयदाता है, हम भी विश्व में किसी भी व्यक्ति को दीन, हीन या अशक्त-निर्बल न बना रहने दें। वह [illegible] स्वरूप आनन्दमय) है हम भी जग-जग में [illegible] आनन्द को [illegible] प्रवाहित करने के प्रयास करें।

जो टेढ़े मेढ़े [illegible] कर के पुत्र-प्राप्ति [illegible] होना चाहते हैं, [illegible] की [illegible] करते हैं और अपनी क्षुद्र [illegible] की पूर्ति के लिए [illegible] में [illegible] हैं, उन्हें [illegible] आनन्द नहीं मिल [illegible] यह अनुभूति तब [illegible] सम्पूर्ण विश्व के [illegible] व्यवहार [illegible] नहीं [illegible], तब [illegible] है, [illegible] और [illegible] का [illegible] में विफल रहेंगे।

अमर स्वामी वेद मन्दिर

आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी [illegible] ने अपने जीवन काल में [illegible] वेद मन्दिर के [illegible] के लिए स्वामी आनन्दबोध जी सरस्वती के संरक्षण में एक समिति का निर्माण कर दिया था, जिसके सदस्यों की बैठक में निम्नलिखित पदाधिकारी सदस्य रूप में चुने गये —

सर्वश्री सुन्दरलाल चावला—प्रधान, रामेश्वर दयाल गुप्त—मंत्री, चौधरी अमरसिंह—कोषाध्यक्ष शिव कुमार शास्त्री, स्वामी विद्यानन्द जी, देशराज बहल, प्रो० रत्नसिंह, बाल दिवाकर हंस, डा० जगदीशचन्द्र, पी० चन्द्रा जी, आचार्य सोमव्रत शास्त्री, आचार्य प्रेमसिंह नागर, लालपत राय आर्य, स्वामी प्रेमानन्द एवं धनंजय सिंह—सभा सदस्य।

बैठक में लिये गए निर्णय के अनुसार अब वेद मन्दिर का नाम बदलकर 'अमर स्वामी वेद मन्दिर' कर दिया गया है। सहायतार्थ एवम् अन्य उद्देश्य से भेजी जाने वाली राशि केवल मन्त्री, अमर स्वामी वेद मन्दिर समिति, विवेकानन्द नगर, गाजियाबाद, उ०प्र० के पते पर ही भेजी जाये।

(मन्त्री)

आर्यसमाज हनुमान् रोड, नई दिल्ली का वार्षिकोत्सव सम्पन्न

आर्यसमाज हनुमान् रोड, नई दिल्ली का ६५वा वार्षिकोत्सव रविवार १ नवम्बर से ८ नवम्बर तक उत्साहपूर्वक मनाया गया। रविवार १ नवम्बर से ऋग्वेद पारायण महायज्ञ का आयोजन प्रात एव रात्रि को वेद कथा गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय के आचार्य एव उपकुलपति डा० रामप्रसाद जी वेदालङ्कार द्वारा होती रही। दोनों समय की उपस्थिति सन्तोषजनक एव दोनो समय के कार्यक्रमो का जनता पर अच्छा प्रभाव पडा। शुक्रवार दोपहर आर्य स्त्री समाज का वार्षिकोत्सव हुआ। शनिवार प्रात १० से १ बजे तक "राकेश कैला स्मारक" भाषण प्रतियोगिता का आयोजन था, जिस मे दिल्ली के सीनियर सैकण्डरी स्कूलो के १६ छात्र/छात्राओ ने भाग लिया। विषय था 'महर्षि दयानन्द एव शिक्षा पद्धति' कलाची हसराज स्कूल, अशोक विहार की छात्रा रेणु गोयल ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। रविवार ८ नवम्बर को महायज्ञ की पूर्णाहुति हुई, जिसमे यजमानो के अतिरिक्त जनता ने भी बडा श्रद्धा एव भक्ति से भाग लिया। तत्पश्चात् स्वामी विद्यानन्द जी सरस्वती एव आचार्य रामप्रसाद जी के भाषण हुए। तदुपरान्त ११ से २ बजे तक 'राष्ट्रीय एकता सम्मेलन' गुरुकुल कांगडी के भूतपूर्व परिद्रष्टा डा० सत्यव्रत सिद्धान्तालङ्कार की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ, जिसमें सर्वश्री सोमनाथ एडवोकेट, प्रताप एव वीर अर्जुन के सम्पादक श्री के० नरेन्द्र, आचार्य भगवान देव, सनातन धर्म प्रतिनिधि सभा के प्रधान गोस्वामी गिरधारी लाल, हिन्दू महासभा के उपाध्यक्ष प० इन्द्रसेन शर्मा, प० शिवाकान्त उपाध्याय, डा० शिव कुमार शास्त्री इत्यादि महानुभावों ने अपने-अपने विचार रखे। सभी वक्ताओं का मत था कि राष्ट्रीय एकता के लिए एक भाषा, एक कोड एव एक कानून का होना आवश्यक है। जब तक सरकार तुष्टीकरण की नीति से भेदभाव युक्त व्यवहार करती रहेगी राष्ट्रीय एकता कठिन ही नही असम्भव है। सविधान मे सब के लिए समान अधिकार होना चाहिए। आगे बढने के लिए सब को समान अवसर मिलने चाहिए। इस प्रकार जो एकता आयेगी वह चिरस्थायी होगी।

ऋषि लङ्गर में प्रीतिभोज के साथ उत्सव सम्पन्न हुआ।

भवदीय
मन्त्री
आर्यसमाज हनुमान् रोड

ईश्वर जीव के कर्मो...

(पृष्ठ २ का शेष)

है। अतः यह कहा है कि जैसा ईश्वर जानता है वैसा जीव करता है।

जहां-जहां पर वेद मन्त्रों मे अथवा सत्यार्थप्रकाशादि ग्रन्थों में ईश्वर को सर्वज्ञ कहा है वहां यही जानना चाहिए कि भूत, भविष्यत् और वर्तमान मे जो कुछ हो सकता है उसको ईश्वर जानता है। कर्म करने से पूर्व जानने में यह भी दोष आता है कि जो कुछ परमात्मा ने जाना उसी को जीव करेगा बदल नहीं सकता। यदि बदल सकता है तो परमात्मा का ज्ञान मिथ्या हो जाएगा। क्योंकि परमात्मा के ज्ञान में यह था कि देवदत्त १२ बजे वेद का पाठ पढ़ेगा परन्तु देवदत्त ने १२ बजे व्याकरण का पाठ पढ़ा। अतः जो परमात्मा ने जाना था वह मिथ्या हुआ। और यदि देवदत्त उस परमात्मा के जाने हुए को बदल नही सकता तो जीव कर्म करने मे पराधीन है स्वतन्त्र नही रहा। जब जीव कर्म करने में स्वतन्त्र नहीं है तो पुन उसको कर्म का फल भी नहीं मिलना चाहिए। यदि पुनरपि कर्म का फल जीव को मिलता है तो यह न्याय नही कहा जा सकता।

जो लोग यह मानते हैं कि परमात्मा जीव के कर्म करने से पूर्व ही जानता है कि अमुक जीव अमुक समय मे अमुक कर्म करेगा और वे जीव को कर्म करने मे स्वतन्त्र भी मानते हैं ये दोनों बातें परस्पर विरुद्ध हैं। इस मान्यता में यह भी दोष आता है कि जब परमात्मा पहले से हो यह जानता है कि अमुक जीव ने ये बुरे या अच्छे कर्म करे, तो सृष्टि की आदि में वेदज्ञान देना और यह कहना कि अमुक कर्म करो, अमुक नही, यह व्यर्थ हो जाएगा। क्योंकि परमात्मा के ज्ञान में पहले से हो सब जीवों के कर्म निश्चित हैं कि ये जीव ये ही कर्म करेंगे इस बात को ऋषियों ने स्वीकार किया है कि ईश्वर अच्छे कर्म करने का और बुरे कर्मों को छोडने का उपदेश करता है। यदि ईश्वर के ज्ञान से निश्चित ही है तो ईश्वर किसी को भी कर्म करने और छोडने का उपदेश नहीं दे सकता। यदि देता है तो निश्चित नहीं हो सकता। उपदेश करने वाले के ज्ञान मे जब यह बात होती है कि हो सकता है कि मेरी बात को सुन कर कोई अच्छे कर्म करेगा और बुरे कर्म छोडेगा तभी तो वह उपदेश दे सकता है। निश्चित अवस्था में नहीं।

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने सत्यार्थप्रकाश में यह लिखा कि जब जीव बुरे कर्म करने की इच्छा करता है तब उसके मन में परमात्मा भय शंका उत्पन्न करता है। परमात्मा का यह कर्म इसीलिए है कि जीव बुरे कर्म करने से रुक जाए। जब परमात्मा के ज्ञान में निश्चित है तो फिर भयादि क्यों उत्पन्न करता है। अत परमात्मा अच्छे बुरे समस्त कर्मों को तो जानता है परन्तु कौन जीव आने वाली सृष्टि के मध्यकाल में कौन-सा कर्म करेगा उसको परमात्मा नहीं जानता। क्योंकि उसका वर्तमानत्व नही है। जो वस्तु वर्तमान रूप में नही है उसको वर्तमान अवस्था में कैसे जाना जा सकता है? जीव कर्म करने में स्वतन्त्र भी है। वह किसी भी कर्म को किसी समय बदल कर उसके स्थान में दूसरा कर्म कर सकता है और इसी के कारण जीवों को कर्म का फल मिलता है। अतः सब सज्जनो को यही मानना चाहिए कि जीव के सब कर्मों का ईश्वर के ज्ञान में पहले से ही निश्चय नहीं है कि अमुक जीव इस समय यही कर्म करेगा। ●

अखिल भारतीय योग सस्थान का योगदिवस समारोह सम्पन्न

योग संस्थान की सेवाओं के उपलक्ष्य में दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री नेतराम शर्मा सम्मानित तथा उपराज्यपाल द्वारा पुरस्कृत

भारतीय योग सस्थान द्वारा योग दिवस समारोह, जवाहरलाल स्टेडियम, नई देहली में ८।११।८७ को प्रात ६ ३० बजे से ९ बजे तक श्री एच० एल० कपूर उपराज्यपाल की अध्यक्षता मे बडे ही उल्लास तथा प्रभावशाली ढग से मनाया गया, जिसमे उपस्थिति लगभग १५ हजार से भी अधिक थी। कई हजार साधक-साधिकाओ द्वारा योगासनों का प्रदर्शन, हँसी प्राणायाम, ध्यान और कुञ्जल क्रिया, सूत्रनेति तथा जलनेति का विधिपूर्वक प्रदर्शन तथा लाभ भी बताये गये। छतरपुर मदिर वाले बाबा नागपाल, जिनके दर्शन तथा आशीर्वाद के लिए प्रधान-मन्त्री, मन्त्री, एम० पी०, उद्योगपति आदि आते हैं, उन्होंने सस्थान को आशीर्वाद ही नही दिया बल्कि योग शोध आश्रम तथा योग विश्वविद्यालय बनाने मे पूरी तरह तन, मन और धन से सहायता देने का वचन दिया। उपराज्यपाल ने भी सस्थान को पूरा सहयोग देने का अपने अध्यक्षीय भाषण मे आश्वासन दिया। अन्त मे वेद मन्त्रो द्वारा प्रभु प्रार्थना, शान्ति पाठ और प्रसाद के पश्चात् समरोह की समाप्ति हुई।

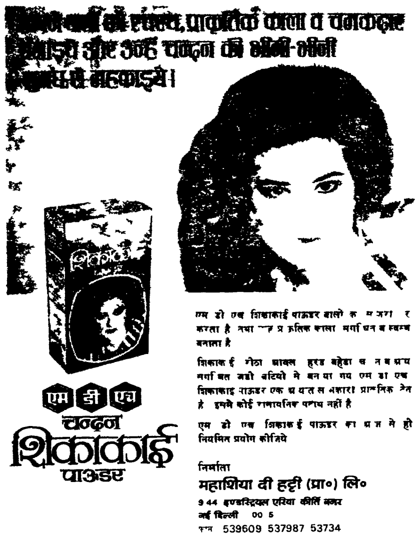
भवदीय
नेतराम शर्मा

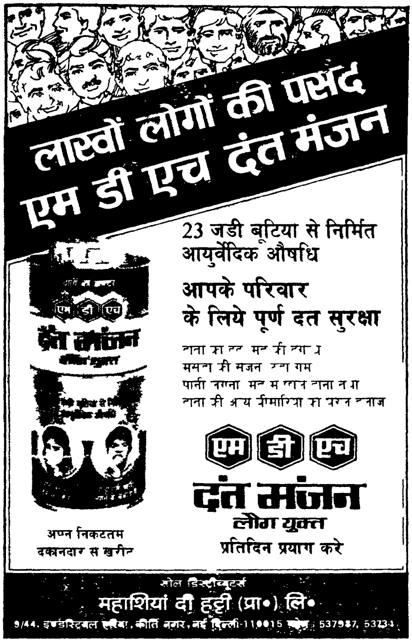
गोरक्षा ही भारतीय संस्कृति की रक्षा है

विगत दिनों गोशाला बुरहानपुर द्वारा आयोजित गोपाष्टमी उत्सव की अध्यक्षता करते हुए पत्रकार श्री कैलाशचन्द पालीवाल ने कहा कि सिर्फ मुखारविन्द से कह देने से, भाषण दे देने से गोरक्षा की रक्षा नहीं होगी, वरन् अपनी आय में से कुछ राशि बचाकर स्वय ही गो का पालन करना चाहिए। जब तक इस देश में गौ का पालन होता था तब तक इस देश में सुख एवं समृद्धि थी। इसका प्रमाण भगवान् श्रीकृष्ण का वृन्दावन में गोपालन और वहां की सम्पन्नता थी। हमें हमारी आने वाली पीढ़ी के लिए कटिबद्ध हो जाना चाहिए। इस अवसर पर मुख्य अतिथि डा० जगदीशचन्द चोरे, सेवासदन महाविद्यालय के व्याख्याता श्री बालकिशन दास शाह, बुरहानपुर के पुरानी पीढ़ी के वैद्य श्री दयानन्द शास्त्री ने भी गाय की महत्ता पर रोशनी डाली। सस्था के सचिव श्री बालकिशन दास ऑफ ने संस्था की प्रगति की जानकारी दो।

कार्यक्रम का सचालन एवम् आभार प्रदर्शन आयुर्वेद महाविद्यालय के श्री हरीन्द्र शास्त्री ने किया।

—कैलाशचन्द पालीवाल


बालों को स्वस्थ, प्राकृतिक काला व चमकदार
और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी
महकाइये।
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर
बनाता है
हैं इसमें कोई रासायनिक पदार्थ नहीं है
नियमित प्रयोग कीजिये
निर्माता
महाशिया दी हट्टी (प्रा०) लि०
9 44 इण्डस्ट्रियल एरिया कीर्ति नगर
नई दिल्ली
539609 537987 53734


लाखों लोगों की पसंद
एम डी एच दंत मंजन
23 जडी बूटिया से निर्मित
आयुर्वेदिक औषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दत सुरक्षा
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
प्रतिदिन प्रयाग करे
सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स
महाशियां दी हट्टी (प्रा•) लि•
9/44. इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-110015 फोन: 537987, 53734


आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
करोल बाग
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
align point

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१

R. N No. 32387/77 Post in N.D P.S.O. on 12, 13 11-87 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139

रजि० नं० डी० (सी०) ७५१ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

चरित्र निर्माण द्वारा ही राष्ट्र निर्माण संभव है

—डा० धर्मपाल

"चरित्र कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो बाहर से थोपी जा सके, परन्तु इसका सम्बन्ध भीतर से है। सत्य अहिंसा, क्षमा, जैसे मननशील गुणों को आचरण में अपनाने से ही वास्तव में चरित्र का विकास होता है। चरित्र निर्माण द्वारा ही न केवल समाज, राष्ट्र की उन्नति ही सम्भव है बल्कि इससे विश्व शान्ति सम्भव है।" ये उद्गार दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री डा० धर्मपाल आर्य ने आर्यसमाज महावीर नगर के चरित्र निर्माण सम्मेलन का विधिवत् उद्घाटन करते हुए ८ नवम्बर को व्यक्त किये। उन्होंने आगे कहा कि वैदिक धर्म सत्याचरण व चरित्र निर्माण का आदेश देता है। वास्तव में सभी धर्म ग्रन्थों में लिखी अच्छी बातों को ही हमें अपनाना चाहिए। डा० धर्मपाल ने चरित्र निर्माण में शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डालते हुए आगे कहा कि आज के वातावरण में बच्चों के शिक्षण में माता पिता को स्वयं रुचि लेकर अध्यापन करते रहना चाहिए, तथा आचरण की शुद्धता द्वारा आदर्श प्रस्तुत करना चाहिए।

दिल्ली आर्य केन्द्रीय सभा के महामन्त्री डा० शिवकुमार शास्त्री ने कहा कि जब तक हम कर्तव्य का पालन नहीं करते हैं तब तक न तो चरित्रवान बन सकते हैं और न ही देव दयानन्द का सपना पूरा कर सकते हैं।

समाज के मन्त्री श्री चन्द्रप्रकाश ने आर्यसमाज की श्रेष्ठ उपलब्धियों पर प्रकाश डाला। इस अवसर पर प० योगेश आदि वक्ताओं ने भी विचार व्यक्त किये। इससे पूर्व कीर्ति नगर नांगल राय, विकास पुरी तिलक नगर आदि समाजों के पदाधिकारियों ने डा० धर्मपाल का माल्यार्पण द्वारा स्वागत किया।

(विमल कान्त शर्मा)

(पृष्ठ १ का शेष)

राय के शासनकाल में

करके कतिपय घोषणाएँ की हैं, उस से सिखी परम्पराओं और मर्यादाओं का उपहास हुआ है। पंथिक समिति से उक्त संगठनों ने कहा है कि वह अपना उल्लू सीधा करने के लिए सिखी विधान और स्वायत्तता को भंग न करें।

राजनीतिक क्षेत्रों में इस बात पर हैरानी प्रकट की जा रही है कि पंथिक समिति के सदस्य गुरबचन सिंह मनोचहल और अखिल भारतीय सिख छात्र फेडरेशन के अध्यक्ष गुरजीत सिंह को पुलिस अभी तक गिरफ्तार क्यों नहीं कर सकी है। उक्त दोनों उग्रवादी नेता अपने कामकाज से गुप्त रूप से इधर-उधर आते जाते रहते हैं। श्री गुरजीत सिंह हाल ही में चंडीगढ़ आए और उन्होंने एक स्थानीय गुरुद्वारा में एक समाचार पत्र समूह के दो संवाददाताओं को इन्टरव्यू दिया। बाद में उन्होंने जिला जालंधर में एक कस्बे में एक पंजाबी समाचार पत्र के संवाददाता को अपना बयान दिया।

—हिन्दुस्तान

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री डा० धर्मपाल द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा [illegible] प्रेस, गली नं० १७, [illegible] दिल्ली-३१ में मुद्रित । [illegible]

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अक ५ रविवार २२ नवम्बर १९८७ सृष्टि सवत् १९७२९४९०८७ मार्गशीष २०४४ दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे वार्षिक २५ रुपये आजीवन २५० रुपये विदेश मे ५० डालर ३० पौंड

झारखंड राज्य की मांग

बिहार उडीसा, पश्चिम बगाल तथा मध्यप्रदेश के आदिवासियों को एक राजनीतिक मच पर लाने को पिछले अनेक वर्षों से कोशिश की जा रही है। अनुसूचित जातियों के साथ ही अनुसूचित जनजातियों (आदिवासियो) के आर्थिक तथा सामाजिक उत्थान के लिए आजादी के पिछले चालीस सालो में शासन ने बहुत कुछ किया है। भारतीय सविधान मे इनके लिए सरकारी सेवाओ मे स्थान आरक्षित है। ससद तथा विधान सभा मे भी इनके लिए निर्वाचन क्षत्र आरक्षित किए गए हैं। यह उचित ही है। जिन्होंने आजादी से पूव का भारत देखा है उन्हें तब और अब की परिस्थितियो के बीच का अन्तर मालूम होगा। आर्थिक स्थिति में सुधार और शिक्षा के विस्तार के साथ ही राजनीतिक आकाक्षाओ की भी बाढ आ गई है। वही समय समय पर आन्दोलन की शक्ल धारण करती है। रांची मे रविवार को झारखण्ड मुक्ति मोर्चा तथा झारखण्ड सहयोग समिति के तत्त्वावधान में जो विशाल रैली आयोजित की गई उस पर विचार करते समय इस पृष्ठभूमि को ध्यान मे रखना चाहिए।

यह एक राजनीतिक रली थी क्योकि इसमे बिहार पश्चिम बगाल उडीसा तथा म० प्र० के २१ जिलो को मिलाकर एक अलग झारखण्ड राज्य की स्थापना की माग की गई। राष्ट्रपति रामस्वामी वेंकट रामन को दिसम्बर के प्रथम सप्ताह में झारखण्ड सहयोग समिति की ओर से एक माग पत्र दिया जाएगा। यदि ३१ दिसम्बर तक सरकार ने बातचीत शुरू नहीं की तो समिति १ जनवरी से नये कार्यक्रम चलाएगी। अलग झारखण्ड राज्य के निर्माण की माग कोई नई नही है। श्री जयपाल सिंह के नेतृत्व मे झारखण्ड पार्टी लोकसभा और विधान सभा के चुनाव भी लडती थी। उनके निधन के बाद झारखण्ड आन्दोलन लगभग समाप्त हो गया था। किन्तु राजनीतिक कारणा से वह फिर उभर गया है। यह तो स्पष्ट है कि अभी भी झारखण्ड आन्दोलन का केन्द्र दक्षिणी बिहार के कुछ जिले ही है। अलग झारखण्ड राज्य के निर्माण से इस क्षत्र की आदिवासी जनता को विशेष लाभ पहुचने वाला नही है। फिर यह आन्दोलन क्यो ? जाहिर है कि अनुसूचित जनजातियो का शिक्षित वर्ग राजनीति की मुख्य धारा से कटा सा गया है। उसे राजनीति की मुख्य धारा मे लाने के लिए तत्परता से कदम उठाने होगे। यह सब कुछ राज्य स्तर पर ही करना होगा लेकिन इस राजनीतिक आन्दोलन का राजनीतिक स्तर पर मुकाबला करने की दिशा मे अभी तक कोई कारगर कदम नही उठाया गया है। दार्जिलिंग के गोरखालैण्ड आन्दोलन की तरह ही झारखण्ड आन्दोलन भी केन्द्र के लिए सिरदद बनने वाला है।

— विनोद मिश्र

नैतिक मूल्य आज सर्वाधिक जरूरी : शंकर दयाल शर्मा

उपराष्ट्रपति शकर दयाल शर्मा ने आर्थिक विकास के साथ तेजी से हो रहे नैतिक मूल्यो के ह्रास पर गहरी चिन्ता व्यक्त करते हुए इन मूल्यों को फिर से स्थापित करने पर जोर दिया है।

डाक्टर शर्मा ने आज यहां डी० ए० वी० शताब्दी समापन समारोह मे कहा कि आज देश में सब से बडी आवश्यकता नैतिक मूल्यो को फिर से स्थापित करने की है जिन्हें हम ने आर्थिक विकास की दौड मे पीछे छोड दिया है।

उपराष्ट्रपति ने डी० ए० वी० सोसायटी द्वारा शिक्षा के क्षेत्र मे किए गए कार्यों की सराहना करते हुए कहा कि नैतिक मूल्यो को फिर से स्थापित करने का काम भी शिक्षण सस्थाओ को ही करना होगा। उन्होने कहा कि देश के बडे-बड राजनीतिक नेता भले ही दिन भर भाषण देते रहे लेकिन वह काम उनसे नही होगा क्योकि आज को राजनीति मे लोगो को लगेगा कि राजनीतिक नेता का इसमे भी कुछ मतलब है।

डाक्टर शर्मा ने सुझाव दिया कि बच्चो को देश की सस्कृति तथा परम्परा से अवगत कराने और उन्हे वेदो का ज्ञान देने के लिए नये नये तरीके की रग-बिरगी पुस्तक प्रकाशित की जाय।

उपराष्ट्रपति ने डी० ए० वी० सोसायटी को यह भी सुझाव दिया कि वह आज के इलैक्ट्रानिक और कम्प्यूटर युग मे अपनी शिक्षण सस्थाओ मे इनके विभाग भी खोले लेकिन साथ ही देश की सस्कृति को बनाये रखने की दिशा में प्रयास जारी रखे।

डा० शर्मा ने इस अवसर पर डी० ए० वी० कालेज ट्रस्ट एव प्रबध सोसायटी के अध्यक्ष प्रोफेसर वेद व्यास के अभिनन्दन ग्रन्थ का विमोचन किया और एक स्मारिका भी जारी की।

सत्यार्थप्रकाश के स्वाध्याय का संकल्प लें

दक्षिण दिल्ली वेद प्रचार मडल द्वारा ६ से ८ नवम्बर तक ३३वा वार्षिकोत्सव' आर्यसमाज लाजपत नगर, नई दिल्ली में समारोहपूर्वक मनाया गया।

८ नवम्बर को निर्वाण दिवस समापन समारोह के अवसर पर स्वामी दीक्षानन्द जी ने कहा कि दयानन्द मानवता व दया की मूर्ति थे। एक विधवा स्त्री को अपने बच्चे का कफन उतारते देखकर उनका हृदय द्रवित हो उठा था। उन्होने आगे कहा कि स्वामी जी को सच्ची श्रद्धाजलि यही होगी कि हम सत्यार्थ प्रकाश ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका सस्कारविधि आदि ग्रन्थों के नियमित स्वाध्याय का आज सकल्प लेकर जाय।

इससे पूर्व दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री डा० धर्मपाल आर्य, आर्य जगत के सम्पादक श्री क्षितीश वेदालकार श्रीमती शकुन्तला आर्य आदि महानुभावो का पुष्पहारो के द्वारा विशेष स्वागत किया गया। सभी वक्ताओ ने सती प्रथा के विरुद्ध आर्यसमाज को जोरदार सघर्ष के चलाने का आह्वान किया। मडलप्रधान श्री हरवसलाल कोहली ने वेदप्रचार मडल की गति

(शेष पृष्ठ ३ पर)

आनन्द की ओर

ले०—आचार्य श्री प० ऋषिराम जी

मनुष्य के मनमें सदा से प्रश्न उठता आया है कि यह ससार किस से पैदा हुआ, किससे चलता है और किस मे इसका अन्त होगा ? तैत्तिरीयोपनिषद् मे बालक भृगु अपने पिता वरुण के पास जाकर उससे यही तीनों प्रश्न करता है। उस जमाने में प्रश्नकर्त्ता को फौरन उत्तर नहीं दे दिया जाता था, बल्कि गुरु ऐसा मार्ग ढूंढता था जिससे जिज्ञासु की बुद्धि बढे, उसकी विवेक शक्ति प्रखर हो और उसकी तितिक्षा जागृत हो जाये। वरुण ने पुत्र से कहा—कि यह ससार जिससे चल रहा है, उसी से उत्पन्न हुआ है, और उसी में इसका अन्त होगा। अब तुम जाकर कुछ दिन तपस्या करो। स्वय इन प्रश्नो को सोचो, फिर मेरे पास आना। भृगु चला गया, कुछ दिन तपस्या करने तथा विचार करने के बाद उसे पता लगा कि ससार तो अन्न खाकर जीवित है, अन्न के बिना प्राणी जिन्दा नही रह सकता ? इसलिए यही सार वस्तु होगी। वह पिता के पास गया और उसने कहा कि मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि अन्न ही जगत् का आधार है। पिता ने कहा कि ठीक है, अभी और तपस्या करो, विचार करो। वह फिर चला गया और तपस्या तथा विचार करने लगा। उसने देखा कि बिना अन्न खाये भी कभी-कभी मनुष्य अनेक दिन रह जाता है, परन्तु प्राण वायु के बिना जीवित नही रह सकता। वह फिर अपने पिता के पास गया और उसने अपना विचार वरुण के सामने रखा। वरुण ने कहा कि ठीक है, परन्तु अभी तुम्हें और तपस्या करना होगी तथा विचार करना होगा। भृगु फिर चला आया, कुछ दिन बाद उसने देखा कि ऐसे भी मनुष्य हैं, जो अन्न नहीं खाते हैं, उनके प्राण भी चलते हैं परन्तु फिर भी वह मनुष्य का साधारण जीवन नहीं प्राप्त कर सके। तब वह समझा, कि सचमुच यदि मन ठीक न हो, स्वस्थ न हो, नियत रूप से काम न करता हो तो जीवित प्राणी भी मृत के समान है। उसने समझा यही सार वस्तु है और उसने जाकर पिता को अपना अनुभव सुनाया। पिता ने कहा तुम्हारा मार्ग तो ठीक है, परन्तु अभी कसर है और तपस्या करो। भृगु फिर चला आया और सोचने लगा। विचार करने पर उसे लगा कि प्राण तथा मन ठीक होवे पर भी सृष्टि इन से नहीं चल सकती। सृष्टि में तो सूर्य, चन्द्र, तारे सभी कुछ हैं और मन से तो इनकी सृष्टि नहीं की जा सकती। विचार करते-करते उसे ज्ञात हुआ कि विज्ञान अर्थात् Universal Laws of World forces के द्वारा ही सृष्टि चलती है, उसका कोई भी उल्लघन नहीं कर सकता, वह प्रकृति तथा प्राणिमात्र पर एक समान लागू है। वह फिर पिता के पास गया और अपना विचार उसने वरुण को कह सुनाया। वरुण ने उसकी बहुत प्रशसा की और उसे अनेक प्रकार से प्रोत्साहन दिया। वरुण ने भृगु से पूछा—तुमने कितनी तपस्या की, कितना समय लगाया, तब तुम्हें यह ज्ञान प्राप्त हुआ, परन्तु कितने मनुष्य इस प्रकार तपस्या करके ज्ञान प्राप्त करते हैं। साधारण मनुष्य को इसका बिल्कुल ज्ञान नहीं कि यह सृष्टि विज्ञान द्वारा सचालित है। साधारण मनुष्य तो सुख से जीता है। जीवन में उसे सुख चाहिए, आनन्द चाहिए, उसी के लिए वह यत्न करता है उसी के लिए वह बडे से बडा कष्ट उठाता है, ससार में इसी सुख-आनन्द को प्राप्त करने के लिए वह सब कुछ करता है।

परमात्मा ने भी इसी आनन्द को व्यक्त करने के लिए सृष्टि को रचा— God created the word in His own image ' आनन्द से ही इसकी सृष्टि हुई, आनन्द से ही यह चल रही है और आनन्द में ही इसका अन्त होगा।

प्रश्न यह है कि यह आनन्द क्या है ? आनन्द कोई ऐसी वस्तु नहीं जो कि बाहर हमें नजर आये। वह तो अपने अन्दर के अनुभव की वस्तु है, जिसको सभी प्राणी अनुभव करते हैं। मनुष्य से लेकर पशु, पक्षी तक, सभी इस आनन्द से जीते हैं। इसी आनन्द को सब जगह देखा जाता है। सुख और आनन्द में भेद है। सुख बाहर का है जो कि बाहरी वस्तुओं पर निर्भर करता है और इसीलिए वह स्थायी नहीं होता, क्योंकि बाह्य जगत् तो परिवर्तनशील है और इसीलिए सुख के साथ दुःख आता रहता है। आनन्द सुख से ऊपर है, उसमें तृष्णा नहीं है, उसमें शांति है, Peace, calm and quiet है।

आनन्द की अभिव्यक्ति का रूप क्या है ? कार्य रूप में उसकी क्या आकृति है, कह सकते हैं कि उसका प्रदर्शन 'प्रेम' है और उसकी कुछ न कुछ आकृतियाँ होनी आवश्यक हैं, यह कह सकते हैं कि उसकी आकृति 'सुन्दरता' है। इन ही तीनों के इकट्ठा करने पर आनन्द का रूप इस प्रकार बनेगा, Happiness Love & Beauty अर्थात् आनन्द, प्रेम और सुन्दरता। अकेला मनुष्य आनन्द की अभिव्यक्ति नहीं कर सकता, उसकी अभिव्यक्ति के लिए उसे दूसरों से सम्बन्ध की आवश्यकता है। मनुष्य इसी लिए परिवार की सृष्टि करता है, वह अपना एक छोटा-सा ससार अलग बसाता है, जिसमें उसे आनन्द मिलता है।

सहयोग हेतु अपील

वैदिक मिशनरी स्कूल वेदमन्दिर, मथुरा

वैदिक मिशनरी गुरुकुल का शुभारम्भ ११ जुलाई ८७ (गुरु पूर्णिमा) को हुआ। यह गुरुकुल युगप्रवर्तक महर्षि दयानन्द की दीक्षास्थली और राष्ट्रपुरुष योगेश्वर श्रीकृष्ण की जन्मस्थली ऐतिहासिक नगरी, मथुरा की एक सीमा पर मथुरा वृन्दावन मुख्य मार्ग पर एक प्रशान्त भूखण्ड में स्थित है। इस गुरुकुल का मुख्य उद्देश्य मिशनरी भावना वाले जीवनदानी एव समयदानी ऐसे व्यक्तियो का निर्माण करना है, जो अपने जीवन समर्पण की भावना को देश, समाज एव आर्य (हिन्दू) जाति के उत्थान के लिए लगायेंगे। इस कार्य में ऐसे प्रौढ व्यक्तियों को दीक्षित करने की योजना है, जिनके अन्दर मिशनरी भावना हो।

इस गुरुकुल के निर्माण की योजना काफी समय से चली आ रही थी। स्व० लालमन जी आर्य की योजना थी कि इस तरह का गुरुकुल मथुरा में चालू किया जाय, उनकी इस महान् योजना व प्रेरणा के फलस्वरूप गुरुकुल भवन का निर्माण तो स्व० लालमन जी आर्य के परिवार ने करा दिया है, लेकिन अब इस गुरुकुल को सुचारु रूप से चलाने व इसके सचालन के खर्चे की व्यवस्था आर्य जगत् को ही करनी है।

वर्तमान में प्रौढ़ वैदिक मिशनरियों के अलावा ८ नवयुवक एवं बालविद्यार्थी इस गुरुकुल में अध्ययनरत हैं। एक सन्यासी व एक आचार्य इनको प्रशिक्षण दे रहे हैं, इस कार्य के लिए और भी विद्वानों की नियुक्ति करने की योजना है।

इस अभिनव गुरुकुल की सम्यक् व्यवस्था के लिए सवा ५ हजार रुपये मासिक चाहिए। कुछ आर्य परिवार आंशिक रूप से मासिक सहायता दे रहे हैं, शेष पूर्ति उदारमना, राष्ट्रप्रेमी सज्जनों ने करनी है। एक छात्र का व्यय लगभग ३००/-रु० मासिक है। यदि कुछ उदारचेता एक-एक ब्रह्मचारी का व्यय प्रारम्भ में केवल तीन वर्ष के लिए, देना स्वीकार कर लें तो सरलता से यह महान् कार्य चलता रहेगा। मासिक सहायता अथवा स्थायी निधि में भी एक मुश्त सहायता देकर इस महायज्ञ के पुण्य भागी बन सकते हैं।

देश की ऐसी भयावह स्थिति में हिन्दू समाज और महान भारत राष्ट्र की रक्षार्थ आर्यजनों के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि सैकडों और हजारों साधनाशील समर्पित जीवन आगे आयें, प्रशिक्षण प्राप्त करें और योजनाबद्ध रूप में अपना समस्त जीवन राष्ट्र रक्षार्थ लगा दें। इन प्रशिक्षणोपरांत समर्पित जीवनों को पूर्ण आर्थिक निश्चिन्तता सम्मान तथा रुचि अनुकूल कार्य क्षेत्र दिया जाये।

९० ईसाई हिन्दू बने

तमिलनाडु के तिरुनेलवेली कोट्टबोम्मन जिले के कूठमंगुलम तटीय गांव के २२ मछुआरे परिवारों के ९० रोमन कैथोलिकों ने हिन्दू धर्म स्वीकार कर लिया है।

भारत मां के लाल
लाला लाजपतराय

—ब्रह्मदत्त स्नातक, पत्रकार

★

हर बच्चा मां का लाल होता है। यह विशेषता तो मां की ही है, कि वह अपनी कोख से जनमे हर शिशु को लाल समझकर उस से प्यार करती है। लाला-लाला कह कर या आ मेरे लाल कहकर बुलाती है, दुलारती है और चाहे वह कितना ही बडा हो जाए, औरों के लिए कैसा ही हो, मां का वह लाल ही बना रहता है। हम और आप सब ही।

पर भारत मा का भी एक लाल, सच्चा सपूत हुआ है। वह नाम से भी लाल ही था, सारे देशवासी उसे लाल कहकर पुकारते थे। यशोदा माता जैसे अपने नन्द लाल पर निछावर हो जाती थीं और लाला-लाला कहकर पुकारतो अघाती नहीं थीं, जनता भी अपने इस लाल को उसी प्यार से रखती थो। लाला लाजपतराय नाम के इस मां के सपूत का नाम जनता ने ही "लाल" यानी हीरा रख छोडा था। अपने युग के लोकमान्य बाल गगाधर तिलक, बगाल के मुकुट विपिनचन्द्र पाल के साथ ही मिलकर बने "लाल-बाल-पाल" नाम से प्रसिद्ध इस तिगड्डे का मणिसूत्र लाला लाजपतराय ही थे।

एक सौ बाइस (१२२) साल पहले आज के दिन (२८ जनवरी) पजाब के फिरोजपुर जिले में ढुढके नामक गांव में उनका जन्म एक बहुत ही साधारण से परिवार में हुआ था। उनके पिता राधाकृष्ण जी मिडिल स्कूल के अध्यापक तो थे ही, एक स्वतन्त्र विचारक और लेखक भी थे। १७ वर्ष की आयु में हाई स्कूल पास करके वे लाहौर के गवर्नमेण्ट कालेज में दाखिल हो गए, जहा कि अपने समय के सभी प्रसिद्ध सामाजिक कार्यकर्ता उनके सहपाठी थे।

१८ वर्ष की आयु में अम्बाला आर्यसमाज में हिन्दी का पक्ष लेकर जो उन्होंने अपना जोशीला और युक्तियुक्त भाषण दिया, वही उनके सार्वजनिक जीवन की शुरुआत थी। भारतीय क्षितिज पर जन आर्य भाषाओं को जितना महत्त्व अपने भाषणों और लेखों से उन्होंने दिया, उतना उनसे पहले या उनके समकालीन किसी अन्य नेता ने नहीं दिया।

वीरता के धनी लाला जी

वीरों का जीवन और वीरों की स्तुति करना उनका परम प्रिय लक्ष्य था। उनकी बनाई श्रीकृष्ण चरित, शिवाजी देशभक्त, गैरी बाल्डी और स्वामी दयानन्द आदि पुस्तकें आज भी बच्चों और युवकों में नवजीवन और उत्साह भर देती हैं। उनका कथन था कि अपमानजनक जीवन की तुलना में वीरोचित मौत पाना कहीं अच्छा है। अपनी इसी भावना के अनुरूप ब्रिटिश सार्जेण्ट साण्डर्स के हाथों मारी गयी चोटों से १७ नवम्बर १९२८ को उनको वीरगति प्राप्त हुई। उनके अन्तिम शब्द थे—"मेरे शरीर पर किया गया प्रत्येक प्रहार ब्रिटिश साम्राज्य के कफन की कील साबित होगा।" उन की भविष्यवाणी सच होकर रही। महात्मा गांधी जी ने उनके बलिदान पर ठीक ही कहा था—भारतीय आकाश पर जब तक सूर्य चमकता रहेगा, लाला जी का नाम अमर रहेगा।

देश की बहुमुखी सेवाएं

अनेक बार अग्रेज सरकार ने उनको कैद करके रखा। विदेशों मे भारत के पक्ष को जोरदार तरीके से प्रस्तुत करने वाले वे प्रथम भारतीय थे। इस सिलसिले में तीन बार उन्होंने यूरोप, अमरीका आदि की यात्रा की। अपनी भारतीय वेशभूषा का चिह्न पगडी उन्होने विदेशों में जाकर भी नही छोडी। निर्भीक वक्ता और जोरदार लेखक होने के साथ वे उच्चकोटि के पत्रकार भी थे। अकाल में सेवा कार्य, अछूतोद्धार और अनाथो की रक्षा, सगठन जैसी सामाजिक सेवाओं में वे सदैव रहे। राजनीति में वे गरम दल के अगुआ माने जाते थे, परन्तु साथ ही सब दलो के वे विश्वास भाजन थे। उनको कांग्रेस के विशेष अधिवेशन में सभापति बनाया गया था। लाहौर के प्रसिद्ध दयानन्द एग्लो वैदिक कालेज की स्थापना में उनका बडा हाथ था और वे कुछ दिन तक वहां आजीवन सदस्य के रूप में कार्य करते रहे।

उनकी शानदार विरासत

देश की सेवा के लिए उन्होंने अपने जीवन की सारी सम्पत्ति भेंट करके लोक सेवक समाज (सर्वेण्ट्स आफ पीपल सोसाइटी) की स्थापना की थी। उनका उद्देश्य रचनात्मक कार्य करने वाले युवकों को जीवन सदस्य बनाकर राष्ट्र के लिए अर्पित कर देना था। दिवगत प्रधानमन्त्री श्री लालबहादुर शास्त्री लाला जी की ही देन थे। इसी प्रकार के दर्जनो अन्य कर्मठ कार्यकर्ता भारत के ८ राज्यो में इसी लोक सेवक समाज के माध्यम से देश की सेवा कर रहे हैं।

इस प्रकार श्री जवाहरलाल नेहरू के निधन के बाद दूसरा देदीप्यमान लाल श्री लालबहादुर शास्त्री के रूप में देश को देने का श्रेय लाल-बाल पाल तिगड्डे के अगुआ लाला जी को ही मिलता रहेगा। वे भारत मा के सच्चे लाल थे। वे स्वय गुदडियो में से लाल बनकर निकले, और लाल बहादुर बनाकर राष्ट्र को एक दूसरा स्व० नेहरू का उत्तराधिकारी भेंट दे दिया। ●

मातृ मन्दिर वाराणसी द्वारा वायु पर्यावरण शुद्धि तथा विश्व शान्ति हेतु प्रायोगिक यज्ञशाला तथा यज्ञानुष्ठानों की धूम

मातृ मन्दिर वाराणसी, उ०प्र० वायु पर्यावरण शुद्धि तथा जल प्रदूषण राक्षस से जनता को मुक्ति दिलाने हेतु क्षेत्र मे आ गया है।

अपने पास से घी शाकल्य देकर आजकल घर-घर में यज्ञानुष्ठान आरम्भ हो गया है। अभिषेक विद्यालय के श्री प्रकाश नारायण शास्त्री का पूरा योगदान मिल रहा है। पीरो निवासी श्री राम जी आर्य अपना सम्पूर्ण समय इसमें दे रहे हैं।

२५१ परिवारो में यज्ञानुष्ठान का इस वर्ष लक्ष्य है। यह संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती जायेगी। ईसाई, यवनों आदि के यहां भी यज्ञानुष्ठान का लक्ष्य है। वरीयता-निर्धन पिछडे वर्ग व हरिजन परिवारो को।

प्रायोगिकी यज्ञशाला में यज्ञों पर गवेषणा होगी। जिससे समस्त विश्व में सुख समृद्धि की वृद्धि होगी। १।११।८७ को इस विश्व कल्याणकारी यज्ञशाला का शिलान्यास होगा। स्थानीय मलहिया गाव के खलिहान के समीप स्थित मातृ मदिर की वाटिका में सबको सम्मिलित होने के लिए आह्वान करते हैं।

पुष्पावती
अध्यक्षा मातृ मन्दिर

(पृष्ठ १ से आगे)

विधियों पर प्रकाश डाला।

७ नवम्बर को एक भव्य व विशाल शोभायात्रा निकाली गयी जिसका नेतृत्व दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान सूर्यदेव ने किया। जलूस का सनातन धर्म मन्दिर पर शानदार स्वागत किया गया। इससे पूर्व ३ से ६ नवम्बर तक प्रभातफेरी का आयोजन किया गया। समस्त कार्यक्रम को सफल बनाने में आर्य महिलाओं एवं मण्डल मन्त्री श्री पुरुषोत्तम गुप्ता ने विशेष सहयोग दिया।

—विमलकान्त शर्मा

आर्यसमाज गांधीनगर का वार्षिकोत्सव
२३ नवम्बर से २९ नवम्बर
श्री वेगराज जी द्वारा रामायण कथा

आर्यसमाज गांधीनगर का वार्षिकोत्सव २३ नवम्बर से २९ नवम्बर तक बडे धूमधाम से मनाया जा रहा है। इस अवसर प्रात आर्य परिवारो मे पारायण यज्ञ, रात्रि को श्री वेगराज जी द्वारा रामायण कथा का आयोजन किया गया है। समापन समारोह रविवार २९ नवम्बर को पूज्य स्वामी आनन्दबोध जी प्रधान, सार्वदेशिक सभा द्वारा उद्बोधन, श्री सूर्यदेव जी प्रधान, प्रतिनिधि सभा द्वारा ध्वजारोहण, आर्य पुत्री पाठशाला के बच्चों द्वारा रगारग कार्यक्रम व श्री विद्याप्रकाश जी सेठी के करकमलों द्वारा पुरस्कार वितरण किया जाएगा। श्री प्रकाशचन्द्र जी शास्त्री ब्रह्मा रहेंगे।

श्याम सुन्दर विरमानी
मन्त्री

वेद के आधिदैविक अर्थ उपेक्षणीय नहीं हैं

लेखक—आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति
(पूर्व कुलपति, गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय, हरिद्वार)

पण्डिता प्रज्ञादेवी जी ने आर्य-संदेश के ११ अक्टूबर, १९८७ के अंक में "क्या वेद के आधिदैविक अर्थ उपेक्षणीय हैं ?" शीर्षक से मेरे ग्रन्थ "वेदो के राजनीतिक सिद्धान्त" की आलोचना की है। उन्होने मेरे ग्रंथ की इस आलोचना मे यह जो परिणाम निकाला है, जो कि उनके लेख के शीर्षक से भी झलकता है, कि मैं 'वेदमन्त्रो के आधिदैविक अर्थ भी होते हैं इस बात को नहीं मानता हू उनका यह परिणाम निकालना सही नहीं है। मैं पूर्ण रूप से मानता हू कि मन्त्रो के क्षत्र भेद से अनेक अर्थ हो सकते हैं जिनमें आधिदैविक अर्थ भी आ जाते हैं। ऋषि दयानन्द का प्रत्येक अनुयायी मन्त्रार्थों की विविधता के सिद्धात को तो आवश्यक रूप से मानेगा ही। मैं ऋषि दयानन्द का अनुयायी हू और इस सिद्धात का पूर्ण स्वीकार करता हूँ। ऋषि दयानन्द मानते थे कि वेद विविध प्रकार के विद्या-विज्ञानो के ग्रन्थ हैं। वेद मे विविध विद्या-विज्ञानो का वर्णन तभी सभव हो सकता है जब कि मन्त्रों के विविध अर्थ किये जायें, मैं भी ऋषि दयानन्द के इस मत को मानता हू कि वेद मे भाति-भाति के ज्ञान-विज्ञानो का वर्णन है और उन विज्ञानो को वेद में प्रदर्शित करने के लिए मन्त्रो के विविध अर्थ करने होगे। मैं इस बात को तथा मन्त्रों के आधिदैविक अर्थ होने को बात को नही मानता, यह परिणाम मेरे इस ग्रन्थ की आलोचना मे प्रज्ञा जी ने कैसे निकाल लिया मुझे समझ मे नही आया। मन्त्रो के आधिदैविक अर्थ दिखाना मेरे इस ग्रथ का विषय नही है मेरे ग्रन्थ का विषय तो मन्त्रो मे वर्णित राजनीति विज्ञानो को दिखाना है। इसलिए मैंने राजनीति-विज्ञान विषयक अर्थ मन्त्रों के किये हैं, आधिदैविक नहीं।

प्रज्ञा जी ने अपनी आलोचना में यह भी लिख दिया है कि ऋषि दयानन्द ने मन्त्रो के जो आधिदैविक अर्थ किये हैं मैं उन्हें नहीं मानता। भला मैं ऐसा पाप कैसे कर सकता हूं ? ऋषि ने जो आधिदैविक अर्थ किये हैं व मेरे लिए सर्वथा माननीय हैं। प्रज्ञा जी को यह भ्रम भी पता नही कैसे हो गया ? क्योकि मेरे ग्रथ का विषय आधिदैविक अर्थ दिखाना नही है इस कारण मैंने अपने ग्रथ मे ऋषि के आधिदैविक अर्थों की चर्चा नही की।

प्रज्ञा जी ने अपनी आलोचना में यह भी दिखाने का प्रयत्न किया है कि मैं वेदार्थ की यौगिक पद्धति को भी शायद नही मानता। यह भी उनका भ्रम है। कौन मूर्ख होगा जो वेद में विविध ज्ञान-विज्ञानों का वर्णन है इस बात को तो मानता है पर मन्त्रार्थ को यौगिक पद्धति को नही मानता ? वेद के अध्ययन में महर्षि यास्क और महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित वेदार्थ की यौगिक शैली को तो अपनाना ही होगा। तभी वेद में नाना प्रकार के विद्या-विज्ञानों का वर्णन उपलब्ध हो सकेगा। वेदार्थ की यौगिक शैली को तो सायणाचार्य आदि पौराणिक भाष्यकारों तक ने अपने भाष्यों में खूब अपनाया है भले ही उनके अर्थ और निष्कर्ष हमे मान्य न हों। मैंने भी अपने इस ग्रन्थ में वेदार्थ की इस यौगिक पद्धति का यथावश्यक भरपूर उपयोग किया है।

मैंने अपने ग्रन्थ में अनेक प्रकरणो में कितने ही शब्दों के अर्थ करते हुए यह लिख दिया है कि इस शब्द का जो अर्थ मैंने किया है वही हो सकता है अन्य नही। मेरे इस प्रकार के लेख को पढ़ कर प्रज्ञा जी क्षुब्ध हो उठी हैं और आवेश मे भर कर अपनी आलोचना मे उपर्युक्त प्रकार की बाते लिख गई हैं। उन प्रकरणों में मेरे उक्त प्रकार के लिखने का तात्पर्य वह नहीं है जो प्रज्ञा जी ने समझ लिया है। मैं अपने वे प्रकरण राजनीति के दृष्टिकोण से लिख रहा हूँ। लिखते समय मेरा ध्यान उन शब्दों के सायणाचार्य आदि के अर्थों की ओर था। इन लोगो के अर्थ मुझे सगत नहीं लगे। इसलिए अपनी बात पर जोर देने के लिए मैंने वैसा लिख दिया है। यो मेरा यह मत नहीं है कि उन शब्दो के मेरे अर्थों से भिन्न अर्थ बिल्कुल हो ही नहीं सकते। नहीं, उनके विषय-भेद से दूसरे अर्थ भी हो सकते हैं। मैंने अपने ग्रन्थ की भूमिका में तथा ग्रन्थ मे अनेक स्थलों पर इस बात को बहुत स्पष्ट शब्दों में जोर देकर लिखा है कि वैदिक शब्दों के क्षेत्र-भेद या विषय-भेद के कारण अनेक अर्थ हो सकते हैं। मेरी इस मूल और प्रधान मान्यता के साहचर्य और प्रकाश मे ही इन प्रकरणों मे उक्त प्रकार के मेरे लेख का तात्पर्य देखना चाहिए।

मैंने अपने ग्रन्थ की भूमिका में "वेद में विविध ज्ञान-विज्ञान" शीर्षक के नीचे पूरे डेढ पृष्ठ में इस बात को स्पष्ट करके लिखा है कि वेद के शब्दों के क्षेत्र-भेद से विविध प्रकार के अर्थ हो जाते हैं जिससे वेद विविध प्रकार के ज्ञान-विज्ञानों का ग्रन्थ बन जाता है। वहाँ उदाहरण के रूप में मैंने "इन्द्र" शब्द के सम्बन्ध में लिखा है कि वेद में इस शब्द के परमात्मा, जीवात्मा, राजा, विद्युत् तथा अन्य अनेक अर्थ हो जाते हैं। इन्द्र के वर्णनों और विशेषणो के सूक्ष्मता से अध्ययन करने पर इन्द्र का वर्णन करने वाले मन्त्रों से परमात्मा, जीवात्मा, राजा और विद्युत् आदि से सम्बन्ध रखने वाले अनेक विद्या-विज्ञानो का वर्णन उपलब्ध होने लगता है। इन्द्र के विद्युत अर्थ की चर्चा करते हुए वहा मैंने लिखा है कि "इसी भांति वेद के कितने ही स्थलों पर इन्द्र के विशेषणों और वर्णनों से स्पष्ट प्रतीत होता है कि वहाँ इन्द्र का अर्थ विद्युत है, उन वर्णनो से विद्युत्-विज्ञान विषयक निर्देश प्राप्त होते हैं।" इस प्रकार इन्द्र का एक अर्थ विद्युत भी होता है यह कह कर मैंने स्पष्ट रूप मे स्वीकार किया है कि वेद मे इन्द्र के आधिदैविक अर्थ भी होते हैं। इन्द्र की भांति ही वेद के अग्नि मित्र, वरुण, सोम आदि शब्दो के भी आधिदैविक अर्थ वेद मे होते हैं। ग्रन्थ की भूमिका के इस प्रकरण मे मैंने वैदिक मन्त्रों के अनेक अर्थ होते हैं, अपनी इस मान्यता को असदिग्ध शब्दों में प्रकट किया है।

मैंने अपने ग्रन्थ के प्रथम भाग के "देवमाला—मन्त्रिमण्डल" शीर्षक अठारहवें अध्याय में वेद में वर्णित इन्द्र अग्नि, अश्विनो, विष्णु, वरुण, पूषा, सोम आदि का अर्थ राष्ट्र या राजनीति-विज्ञान परक अर्थ निर्धारण करने का प्रयत्न किया है। वहाँ भी मैंने अपनी इस मान्यता को बहुत स्पष्ट कर दिया है कि वेद के इन शब्दों के अनेक अर्थ होते हैं। अग्नि का आधिराष्ट्र अर्थ क्या हो सकता है इस सम्बन्ध में विचार करते हुए प्रारम्भ में "अग्नि आदि देवताओं के वेद में अनेक अर्थ" इस शीर्षक के नीचे मैंने जो पंक्तियां लिखी हैं वे इस प्रकार हैं—"हमने पीछे किये गए वर्णनों में अग्नि का सामान्य अर्थ सम्राट् किया है। अपने मत की स्थापना में हमने वहा वेद के यथेष्ट प्रमाण उद्धृत किये हैं। अग्नि का सम्राट् अर्थ वेद में अधिक स्थलो में संगत हो सकता है और तब वहां राजनीति विषयक अनेक शिक्षाएँ दृष्टिगोचर होने लगती हैं। अग्नि का अर्थ वेद में केवल सम्राट् या राजा ही नहीं होता परमात्मा से लेकर हमारे चूल्हों में जलने वाली आग तक क्षेत्र-भेद से अग्नि के वेद में अनेक अर्थ होते हैं। अग्नि के सम्बन्ध में ही यह बात नहीं है। वेद के इन्द्र, वरुण, सोम, और रुद्र आदि अन्य देवताओं के सम्बन्ध में भी यही स्थिति है। इन सभी देवताओं के क्षेत्र-भेद से परमात्मा और अन्य अनेक अर्थ हो जाते हैं। वेद में विभिन्न स्थानो पर इन देवताओं के विभिन्न विशेषण और वर्णन आये हैं। देवताओं के इन विभिन्न विशेषणों और वर्णनों से इन देवताओं के विभिन्न स्वरूपों पर प्रकाश पडता है। देवताओं के इन विभिन्न विशेषणों और वर्णनों के आधार पर उनके विविध रूपों का निर्धारण होना है। और देवताओ के इन विभिन्न वर्णनो से निकलने वाले निष्कर्षों से वेद मे वर्णित विविध विद्या-विज्ञानों पर प्रकाश पडता है। इस प्रकार वेद अनेक विद्या-विज्ञानों का उपदेश देने वाले ग्रथ बन जाते हैं। इसीलिए भारतीय आर्य विचारक, आचार्य और ऋषि-मुनि वेदों को सदा से विविध विद्या-विज्ञानों के ग्रन्थ मानते आये हैं।" मैंने अपने ग्रन्थ के इस अध्याय में देवताओं का जो विशिष्ट राजनीति विषयक स्वरूप निर्धारण किया है वहा भी मैंने प्राय सब जगह इस आशय के शब्द लिख दिये हैं कि अमुक देवता का मेरे द्वारा निर्धारित रूप भी एक रूप हो सकता है जिसका भाव है कि उसके अन्य रूप भी हो सकते हैं। अर्थात् मन्त्रों के दूसरे अर्थ भी हो सकते हैं।

वैदिक शब्दों और मन्त्रो की अनेकार्थकता के सम्बन्ध में अपने ग्रन्थ में इतना स्पष्ट लिख देने पर भी प्रज्ञा जी ने अपनी आलोचना में मेरे सम्बन्ध में उक्त प्रकार की

(शेष पृष्ठ ७ पर)

कुछ प्रश्नचिन्ह !

प्रिंसिपल ओमप्रकाश, नई दिल्ली

कुछ वर्षों से आर्यसमाज में नियम-पालन की उपेक्षा, अनुशासन-हीनता के करिश्मे एव विघटन की लहरें अधिक मात्रा में उद्वेलित हो रही हैं। श्रेष्ठ पुरुषों के इस पवित्र सगठन की छवि बिगाडने के लिए कई षड्यन्त्र रचे जा रहे हैं तथा अवांछित तत्व इसमें घुसपैठ कर रहे हैं। कुछ धन्नासेठ पैसे के जोर से चुनाव जीतने और कुत्सित टाइप की गुटबन्दी बढाने की ही फिकर मे रहते हैं, ताकि उनके चहेते चाटुकार 'मन्त्री' आदि बन जाएँ और जलसों जलूसों मे उनकी वाहवाही होती रहे! परिणाम यह है कि आर्य-समाज के कार्यक्रमों एव अधिकारियों के कारनामो के सम्बन्ध मे कई प्रश्नचिह्न मानस-नेत्रों के सामने घूमते रहते हैं। उन में से एक का प्रदर्शन भारत की राजधानी के खुले मैदान में २२ अक्तूबर को दिवाली के दिन हुआ!

पूर्ववत्, रामलीला मैदान मे दिल्ली की लगभग २०० आर्यसमाजों के सगठन आर्य केन्द्रीय सभा, दिल्ली राज्य, के तत्वावधान में सर्वतोमुखी क्रान्ति के मूल प्रणेता महर्षि दयानन्द का १०४वा निर्वाण-दिवस मनाया जा रहा था। सार्वजनिक स्थान पर इसको मनाने का मुख्य उद्देश्य यह है कि महर्षि की गौरव-गाथा एव उनका कल्याणकारी सन्देश सुन-कर सर्वसाधारण नवजीवन की प्रेरणा ले सके तथा राजधानी के आर्यों की अनुशासित सगठन-शक्ति का परिचय दिला सके। पर जो घटना-चक्र वहा चला, उससे ऋषि-मिशन के सच्चे सेवकों को बडी उद्विग्नता हुई।

ऋषि-निर्वाणोत्सव का कार्यक्रम छपा हुआ था। दिल्ली की सडकों पर उसके पोस्टर लगे हुए थे। अख-बारों मे वह विज्ञापित हो चुका था। समय ८ से १२ बजे तक का निश्चित था। कार्यवाही ठीक ही चल रही थी। अध्यक्ष पद को स्वामी सत्य-प्रकाश जी सुशोभित कर रहे थे। मच पर सार्वदेशिक सभा के प्रधान, मन्त्री एव कोषाध्यक्ष विराजमान थे। कुछ अन्य गण्य मान्य व्यक्ति भी बैठे थे।

अचानक हमने 'बन्धुआ मुक्ति मोर्चा' के नेता श्री (स्वामी) अग्नि-वेश को सभा में आकर पीछे दरी पर बैठे देखा। कुछ व्यक्ति उठे और उन्होंने उन से कुर्सी पर बैठने का आग्रह किया। पर वे जमीन से न उठे। सम्भवत मच की ओर से एक व्यक्ति आए, पर वे जमीन पर ही बैठे रहे। सहसा आर्य केन्द्रीय सभा के नवनिर्वाचित महामन्त्री श्री (डा०) शिवकुमार शास्त्री ने माइक पर तुमुल ध्वनि में उन्हें मच पर आने का निमन्त्रण दिया। वे वहा पहुच गए। तुरन्त सभा से इधर-उधर से ५-८ व्यक्ति उठे और उन्होंने माग की कि उन्हें बोलने का समय दिया जाए। सम्भवत यह सब कुछ पूर्व नियोजित था।

१२ बज कर १३ मिनट पर मन्त्री महोदय ने माइक से कहा, "समय ज्यादा हो गया, ६-७ मिनट मे कार्यवाही समाप्त हो जाएगी। फिर बोले, मैं दोनों ओर से दबाव में हूँ।" और, झट घोषणा कर दी कि अग्निवेश जी एक मिनट के लिए उपस्थित जनता को दर्शन देंगे।

राजनीतिक दाव-पेच मे पटु एव सामाजिक जोड-तोड में माहिर व्यक्ति को तो मौका चाहिए था। व्यग्यपूर्ण भाषण आरम्भ हो गया। नतीजा यह हुआ कि अध्यक्ष जी को केवल 'आशीर्वाद' देने की घोषणा मन्त्री महोदय ने की। इस प्रकार जो सभा १२ बजे समाप्त होनी थी, १२.४२ पर हुई। 'दीपावली' का दिवस होने के कारण सभी बन्धुओं को घर लौटने की जल्दी थी। सभी को परेशानी हुई। माता-बहनों को विशेषकर काफी कुछ कहते सुना गया।

सभा के पश्चात्, मैंने एक वरि-ष्ठ नेता से इस बात की पुष्टि कर ली कि श्री (स्वामी) अग्निवेश को ससार के आर्यों की शिरोमणि 'सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा' ने उनकी आर्यसमाज विरोधी गति-विधियों एव गुरुकुल कागडी सम्बन्धी काय-कलापों के कारण आर्यसमाज से कई सालों से निष्कासित किया हुआ है।

अत कुछ प्रश्नचिह्न पैदा हो गए हैं। ऐसे व्यक्ति को दिल्ली की २०० आर्यसमाजों के सगठन के मच पर क्यों लाया गया? क्या यह किसी गत या भावी षड्यन्त्र की कडी नहीं, जो आर्यसमाज के पवित्र सगठन के लिए घातक हो सकता है? सभा के नये महामन्त्री ने अच्छी सगठनात्मक सूझबूझ का परिचय क्यों नहीं दिया? क्या सभा के प्रधान भी पर्दे के पीछे इस चक्र में शामिल हैं?

आर्यसमाज बुद्धिजीवी सम्मेलन

१४ अक्तूबर। आर्यसमाज की भावी रूपरेखा के निर्धारण के लिए प्रस्तावित आर्यसमाज बुद्धिजीवी सम्मेलन के सयोजक डा० प्रशान्त वेदालकार ने आज यहां बताया कि आर्यसमाज के शैथिल्य को दूर करने और उसे युगानुरूप नई दिशा प्रदान करने के लिए बुद्धिजीवी सम्मेलन की अत्यन्त आवश्यकता है। आर्य-समाज ने राष्ट्रीय उत्थान, समाज के उत्कर्ष व शिक्षा के प्रचार और प्रसार में जो क्रांति की थी आज उसी प्रकार की एक दूसरी आव-श्यकता बनी हुई है।

देवराला में श्रीमती रूपकुवर (१८) के सती होने की घटना ने आर्यजगत् को झकझोर दिया है। आज भी देश में कुछ धर्माचार्य और कुछ जातियां जो इसका समर्थन करती हैं। वस्तुत इन सब अन्ध-विश्वासों के विरुद्ध आर्यसमाज को फिर से आन्दोलन चलाना होगा।

डा० प्रशान्त वेदालकार ने इस अवसर पर नई शिक्षा नीति की भाषा नीति की कटु आलोचना की। जिसके अनुसार माध्यमिक कक्षाओं में संस्कृत की शिक्षा समाप्त की जा रही है। उन्होंने कहा कि आर्य-समाज व अन्य संस्कृत की समर्थक सभी सस्थाओं को सरकार की इस व्यवस्था के विरुद्ध अपनी शिक्षा सस्थाओं में संस्कृत विषय अनिवार्य रखकर भारत सरकार पर दबाव डालना होगा कि वह त्रिभाषा सूत्र मे संस्कृत को भी स्थान दे।

डा० प्रशान्त ने बताया कि प्रस्तावित बुद्धिजीवी सम्मेलन की सम्भावित तिथिया सन् १९८८ में महर्षि दयानन्द निर्वाण दिवस के आसपास निश्चित की जायेगी। इससे पूर्व देश के विभिन्न भागों में बुद्धिजीवी सम्मेलन आयोजित कर जनजागरण का कार्य सम्पन्न होगा। इस सम्मेलन में उन सब आर्यसमाजी बुद्धिजीवियों का सहयोग प्राप्त किया जाएगा जो आर्यसमाजी होते हुए भी आर्यसमाज सगठन से कुछ हट गए हैं।

डा० प्रशान्त वेदालकार ने बताया कि ५१ रुपये देकर व्यक्ति इसका प्रतिनिधि बन सकता है। उन्होंने इस सम्मेलन पर ५१ हजार रुपयों की राशि के व्यय होने का अनुमान बताया और सभी से अपील की कि वे इस राशि को एकत्र करने में सहयोग दें। इस विचार-यज्ञ मे डाली गयी आहुति आर्यसमाज के कार्यक्रमों में एक क्रांति ला सकती है।

अभी तक दिल्ली, कलकत्ता व गाजियाबाद मे बुद्धिजीवी सम्मेलन की बैठकें हो चुकी हैं। ३१ अक्तूबर, ८७ को मातृ मन्दिर कन्या गुरुकुल वाराणसी की ओर से एक बहुत बडे पैमाने पर बुद्धिजीवी सम्मेलन की आयोजित की गई है जिसमे डा० प्रशान्त के अतिरिक्त डा० आनन्द प्रकाश, श्री धर्मवीर जी, श्री दत्तात्रेय वावले, डा० राजेन्द्र गुप्त (दानापुर कैंट, पटना) आदि सम्मिलित होंगे। दिसम्बर मास में आर्य प्रतिनिधि सभा मध्यप्रदेश ने होशगाबाद में बडे पैमाने पर बुद्धिजीवी सम्मेलन आयोजित किया है।

—डा० प्रशान्त वेदालकार
संयो०, आर्यसमाज बुद्धिजीवी सम्मे०

छात्रवृत्तियां

श्री वजीरचन्द धर्मार्थ ट्रस्ट की ओर से चालू सत्र के लिए गुरुकुलों, स्कूलों, महाविद्यालयों, व्यावसायिक प्रशिक्षणालयों के सुयोग्य और सुपात्र विद्यार्थियों को और स्नात-कोत्तर व स्पर्धात्मक परीक्षाओं के परीक्षार्थियों/परीक्षार्थिनियों को छात्रवृत्तियां देने का काम शुरू हो गया है। इन छात्रवृत्तियों से लाभ उठाने के इच्छुकों को चाहिए कि ट्रस्ट से नियत आवेदन फार्म को मगवा कर शीघ्र ही भर कर निम्न-लिखित को भेज दें।

सत्यदेव
आदरी सचिव
श्री वजीरचन्द धर्मार्थ ट्रस्ट
सी-३२, अमर कालोनी,
नई दिल्ली-११००२४

हिन्दी अकादमी, दिल्ली

महत्वपूर्ण कार्य और उपलब्धियाँ

सम्मान, पुरस्कार, छात्रवृत्ति आदि

१. **साहित्यकार सम्मान**——हिन्दी भाषा और साहित्य की विशिष्ट सेवा के लिए ११ साहित्यकार सम्मानित। सम्मानस्वरूप ११,०००/- रुपये को राशि, शाल, प्रशस्ति-पत्र तथा प्रतीक चिह्न भेंट। अखिल भारतीय स्तर पर हिन्दी भाषा और साहित्य की सेवा के लिए अकादमी द्वारा 'शलाका पुरस्कार' (३१,०००/- रुपये की राशि, शाल, प्रमाण-पत्र व प्रतीक चिह्न) दिये जाने का निर्णय भी किया गया है।

२. **साहित्यिक कृति पुरस्कार**——२५ लेखक पुरस्कृत। पुरस्कारस्वरूप ५१००/- रुपये की राशि और प्रतीक चिह्न भेंट।

३. **नवोदित लेखक पुरस्कार**——२७ युवा लेखक पुरस्कृत। पुरस्कारस्वरूप ११००/- रुपये, ८०० रुपये/-, ५००/- रुपये (प्रथम द्वितीय, तृतीय) को राशि, प्रशस्ति-पत्र तथा प्रतीक चिह्न भेंट।

४. **विश्वविद्यालय कविता पुरस्कार**——२५ छात्र पुरस्कृत। पुरस्कारस्वरूप ११००/- रुपये, ५००/- रुपये, ३००/- रुपये (प्रथम, द्वितीय व तृतीय) की राशि, प्रशस्ति-पत्र तथा कप भेंट।

५. **छात्र पुरस्कार**——दसवी, बारहवी, बी० ए० ऑनर्स (हिन्दी) तथा एम० ए० (हिन्दी) की वार्षिक परीक्षाओ मे हिन्दी विषय मे सर्वाधिक अंक प्राप्त करने वाले १४ छात्र पुरस्कृत। पुरस्कारस्वरूप ५००/- रुपये की राशि, प्रशस्ति-पत्र तथा पदक भेंट। अकादमी द्वारा विश्वविद्यालय की वार्षिक परीक्षाओ में हिन्दी विषय मे प्रथम स्थान पाने वाले छात्रो को स्वर्ण पदक प्रदान करने का निर्णय भी लिया गया है।

६. **शोध छात्रवृत्ति**——दिल्ली के साहित्य अथवा लोक साहित्य पर शोध कार्य के लिए ११,०००/- रुपये प्रतिवर्ष की २ छात्रवृत्तिया।

—डा० नारायणदत्त पालीवाल
सचिव, हिन्दी अकादमी,
ए-२६/२७, सनलाइट इंश्योरेंस
बिल्डिंग, आसफ अली रोड,
नई दिल्ली-११०००२





प्रो० राजेन्द्रप्रसाद जिज्ञासु का अभिनन्दन

महर्षि दयानन्द सरस्वती के १०४वें निर्वाण दिवस पर श्रीमती परोपकारिणी सभा अजमेर के तत्त्वावधान में आयोजित ऋषिमेला १९८७ के अवसर पर दिनांक ३१ अक्टूबर ८७ को आर्यसमाज फुलेरा की ओर से प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु को ११०१ रुपये का महर्षि दयानन्द सरस्वती पुरस्कार, उत्तरीय एवं प्रशस्ति-पत्र अभिनन्दन स्वरूप परोपकारिणी सभा के प्रधान स्वामी ओमानन्द सरस्वती के कर कमलों द्वारा प्रदान किया गया। अभिनन्दन पत्र फुलेरा आर्यसमाज के मंत्री श्री भँवरलाल शर्मा ने समर्पित किया। इस अवसर पर श्री केप्टन देवरत्न आर्य तथा श्री वेदरत्न आर्य की ओर से ५०१ रुपया, श्री गजानन्द आर्य मन्त्री परोपकारिणी सभा की ओर से ५०१ रुपया एवं श्रीमती परोपकारिणी सभा की ओर से १०१ रुपया श्री प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु को सम्मानार्थ भेंट स्वरूप प्रदान किया गया।

भवरलाल शर्मा
मन्त्री
आर्यसमाज फुलेरा

सूखा पीड़ित राहत कोष के लिए आठ हजार रुपये का दान

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के आदेशानुसार २५ अक्तूबर, १९८७ को स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती को ८५०० रुपये की राशि भेंट की गई है, जिसका ब्योरा निम्नलिखित है—

१. आर्यसमाज जंगपुरा विस्तार	६०००/-
२. आर्यसमाज अमर कालोनी	१०००/-
३ आर्यसमाज लाजपत नगर (किसी दानी महानुभाव द्वारा)	१०००/-
४. आर्यसमाज बोट क्लब	५००/-
कुल	८५००/-

—रामसरनदास आर्य
मन्त्री, आर्य प्रतिनिधि सभा
मन्त्री, आर्य केन्द्रीय सभा

वेद के आधिदैविक अर्थ

(पृष्ठ ४ का शेष)

अनेक बातें, जो बिलकुल सही नहीं हैं, कैसे लिख दी यह समझ में नहीं आता। यदि प्रज्ञा जी ने मेरे ग्रंथ के इन स्थलों को ध्यान में रखा होता और मेरे सारे ग्रंथ की अन्तर्निहित भावना को अनुभव किया होता तो उनको अपनी यह आलोचना, जिसमें कई जगह मेरी हंसी उडाई गई है तथा मेरे प्रति कटु और अवज्ञापूर्ण व्यंग्यात्मक वाक्यों का प्रयोग भी किया गया है, लिखने की आवश्यकता न पड़ती।

जैसा मैंने ऊपर स्पष्ट किया है, मैं वैदिक मन्त्रों की विविधार्थता को भी मानता हूं, वेदार्थ मे यास्काचार्य और महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित यौगिक पद्धति की परम उपयोगिता को भी स्वीकार करता हूं, मन्त्रो के आधिदैविक अर्थ भी हो सकते हैं इसे भी मैं मानता हू, ऋषि दयानन्द ने मन्त्रों के जो आधिदैविक अर्थ किये हैं उन्हें भी मैं ठीक मानता हूं।

मेरे ग्रन्थ की प्रज्ञा जी की इस आलोचना से आर्य विद्वानों और आर्य जनता में वेद विषयक मेरी मान्यताओं तथा महर्षि दयानन्द के प्रति मेरी सम्मान की भावना के सम्बन्ध में बहुत भारी भ्रम उत्पन्न होगा और आर्य जगत् में मेरी प्रतिष्ठा को गहरा आघात पहुंचेगा। इस भ्रम के निवारणार्थ उनकी आलोचना के प्रसंग में स्पष्टीकरण के रूप में ये पंक्तियां लिख रहा हूं।

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१

R N Nc. 32387/77   Post in N.D P S.O on 19, 20 11 87   Licenced to post without prepayment, Licence No U 139

रजि० न० डी० (सी०) ७२१   पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस न० यू १३९

ब्रह्मचारी आर्य नरेश जी द्वारा हि० प्र० मे प्रचार कार्य

उदगीथ साधनास्थली के संस्थापक ब्र० आर्यनरेश जी द्वारा हि०प्र० मे बहुत ही प्रभावशाली ढग से वैदिक धर्म का प्रचार किया गया। आचार्य जी बेरवा राजगढ तथा शिमला के उत्सवो को निभाकर हि० प्र० के अन्य स्थानो मे प्रचारार्थ निकल पडे। स्कूलो कालेजो नगरो गावो मन्दिरो तथा आर्यसमाजो मे इन्होने वैदिक धर्म की धूम ही मचा दी। कुछ स्थान पर श्री चैतन्य जी एवम् आर्य प्रतिनिधि सभा के भजनोपदेशक प० हरिशचन्द्र तथा ढोलकवादक श्री रामस्वरूप जी भी इनके साथ थे। ठियोग खाडा पत्थर अर्की बम्होल, बिलासपुर, आ० स० हमीरपुर, डी०ए०वी० कालेज कागडा, डी०ए०वी हाईस्कूल प्रा स्कल कागडा १०+२ स्कूल धर्मशाला डी०ए०वी० पालमपुर, आ० स० बमरोटा, पपरोला आयुर्वेदिक कालेज हाई स्कूल कन्या हाई स्कूल, जजहाउस पपरोला मणिकरण का राम मन्दिर, पण्डोह डी०ए०वी० स्कूल मण्डी बी एस० एल० स्कूल सुन्दर नगर माडल स्कूल (बी० एस०एल०), मैरामसीन हाई स्कूल कन्या हाई स्कूल एम० चौक, सनातन धर्म मन्दिर आर्यसमाज सुन्दर नगर भद्रशान्ती, अम्ब तथा देहरा आदि स्थानो पर इनके प्रभावशाली प्रवचन हुए। इस बीच बहुत से पारिवारिक सत्सग भी होते रहे। लोगो ने सिगरेट, मास शराब, अण्ड तथा चाय आदि न पीने का तथा दैनिक यज्ञ करने की प्रतिज्ञाएं की। आर्य प्रतिनिधि सभा हि० प्र० के अन्तर्गत उनका यह प्रचार बहुत ही सार्थक रहा है।

भगवान देव 'चैतन्य'
महामन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा
हिमाचल प्रदेश

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए डा० धर्मपाल द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७२१

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष ११ अंक ५ | रविवार २९ नवम्बर १९८७ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८७ | मार्गशीर्ष २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर ३० पौंड

युवा संचेतना के लिए उठाये गये कुछ कदम

—सूर्यदेव

बाल अवस्था, किशोर-अवस्था, युवा-अवस्था और वृद्धा-अवस्था में से यदि कार्य क्षेत्र में कुछ कर सकने की अवस्था है तो वह है युवा-अवस्था। सृजन और निर्माण में युवाओं का ही हाथ हुआ करता है। किसी देश की संस्कृति और सभ्यता का तथा राष्ट्र रक्षा का दायित्व भी युवाओं पर हुआ करता है। संसार के महानतम कार्यों के द्वार भी युवकों के लिए खुले हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो सक्षमता का दूसरा नाम ही युवा-अवस्था है। देश की, धर्म की, राष्ट्र की, सभ्यता और संस्कृति की, वर्तमान और भविष्य काल की रीढ़ भी युवा ही है। इन सब में कुछ भी क्रान्ति करनी है तो युवा मस्तिष्क को ही बदलना पड़ेगा। आज के युग की मांग तो बस यही है। हमारे राष्ट्र का गौरव बढ़े तो इसके लिए हमारे युवक गौरवशाली होने चाहिए। युवकों का पथभ्रष्ट होने का मतलब है पूरे राष्ट्र का दिग्भ्रमित होना। युवकों को दिशा देना आज अत्यावश्यक है।

आर्यसमाज अपने प्रारम्भिक काल से ही युवा चेतना से जुड़ा रहा है। आर्यसमाज के वीर बलिदानियों का इतिहास भी कम गौरवशाली नहीं रहा। आर्य वीरों ने इतिहास के पन्नों को अपने रक्त से अमर किया है। वीर भगतसिंह, प० राम प्रसाद बिस्मिल जैसे अनेकानेक वीर आर्यसमाज ने दिये। क्रान्तिकारियों के सिरमौर श्याम जी कृष्ण वर्मा भाई परमानन्द, ला० लाजपत राय आदि युवा चेतना के प्रतीक आर्य-समाज की ही देन थे।

वर्तमान काल के भोगवादी युग में आज फिर आवश्यकता है युवा [illegible] की। आज के युवकों में [illegible], [illegible], [illegible] तथा ध्या-

कुलता दिखाई पड़ती है। आज युवक एक दोराहे पर खड़ा है जहाँ से उसे राह नजर नहीं आ रही है। अश्लीलता की आग में उसका मन और मस्तिष्क झुलस रहा है। तरह तरह के दुर्व्यसनों से उसका नैतिक पतन हुआ है। आज आवश्यकता है उसे नैतिकता संयम अनुशासन और कर्तव्यबोध की अमृत घुट्टी देने की। यह अमृत घुट्टी अगर कहीं से मिल सकती है तो आर्यसमाज और ऋषि दयानन्द के जाज्वल्यमान सन्देशों-आदेशों से ही मिल सकती है।

इसी पवित्र भाव से हम ने युवा शक्ति को आकर्षित करने का तथा दिशा देने का कार्य प्रारम्भ किया है। इस सम्बन्ध में हमारा ध्यान गया। विद्यालयों में पढ़ते किशोरों तथा किशोरियों पर। हम ने उन्हें आर्यसमाज तथा ऋषि दयानन्द से परिचित कराने का संकल्प लिया। हम उन्हें अपने धर्म तथा संस्कृति से अवगत कराय, इसके लिए हम ने युवा समारोह आयोजित किए। अनेकों स्कूलों तथा शिक्षण संस्थाओं में हम ने प्रतियोगिताएँ आयोजित कीं जिनमें चरित्र निर्माण कैसे सम्भव ? धार्मिक चेतना से जुड़े अनेकों प्रश्नों पर निबन्ध प्रतियोगि-ताएँ तथा कविता भाषण एवं चित्रकला प्रतियोगिताएं आयोजित कीं। जिनमें अनेकों छात्र-छात्राओं ने भाग लिया। कुछ का कार्य तो प्रशंसनीय एवम उल्लेखनीय रहा। छात्र-छात्राओं के लिए आकर्षक पुरस्कार तथा विद्यालयों के लिए शील्ड रखी जिससे अनेक विद्यालय इस कार्यक्रम में बढ़ चढ़कर भाग ले सके।

साथ ही हम ने आर्यसमाज का उपयोगी सस्ता साहित्य भी उन्हें भेंट किया। बौद्धिक मानसिक विकास के साथ शारीरिक विकास भी हो इसके लिए हम ने कुछ योग प्रशिक्षण शिविर तथा प्रदर्शन भी रखे जिनके अच्छे प्रदर्शन देखने को मिले। खेलकूद प्रतियोगिता भी किशोरों तथा किशोरियों की बड़ी रोचक तथा कौतुक भरी थी जिसका जनसाधारण पर अच्छा असर पड़ा। लोगों ने आर्यसमाज का इस दिशा में भी सोचना जनमानस के लिए आह्लादकारी रहा।

युवा संचेतना के लिए—युवा शक्ति को संगठित करने और उनके दल को बल प्रदान करने के लिए आर्य वीर दल को हम ने और अधिक प्रभावी बनाया है। ग्रामीण क्षेत्रों में इसके फलने फूलने का स्थान हमें कुछ अधिक सहयोगी लगा। इसीलिए हम ने कुछ ग्रामों में जिन में शाहबाद, मुहम्मदपुर, ग्राम सागरपुर, ग्राम ईसापुर आदि अनेक ग्रामों में आर्य वीर दल के शिविर लगाए और वहां पर शाखाएँ अच्छे रूप में चल रही हैं। समय-समय पर विशाल प्रशिक्षण शिविर भी आयोजित किए हैं जिनमें वर्ष में दो शिविर अवश्य लगते हैं। गुरुकुल एटा का हमारा आर्य वीरों का

(शेष पृष्ठ १२ पर)

आर्य युवा महासम्मेलन

७ नवम्बर से ६ दिसम्बर तक

समापन एवं पुरस्कार वितरण समारोह

रविवार, ६ दिसम्बर १९८७ मध्याह्न २ बजे से

स्थान—तालकटोरा इन्डोर स्टेडियम, नई दिल्ली

अध्यक्ष : स्वामी आनन्दबोध सरस्वती

उद्घाटन भाषण : श्री सीताराम केसरी

(भू० पू० संसदीय कार्य मन्त्री)

पुरस्कार वितरण : श्री अजीत कुमार पाजा

(सूचना एवं प्रसारण मन्त्री)

मुख्य वक्ता—स्वामी दीक्षानन्द जी सरस्वती
प्रो० शेर सिंह
श्री रामनाथ सहगल
श्रीमती सरला मेहता
श्री बालदिवाकर हंस

निवेदक

सूर्यदेव	डा० धर्मपाल
महाशय धर्मपाल	शिवकुमार शास्त्री
प्रियव्रतदास रसवन्त	श्यामसुन्दर विरमानी

सम्पादक—प्रो० वेदपाल 'सुधांशु' एम० ए०   प्रधान सम्पादक—डा० धर्मपाल

वेद में यज्ञ का स्वरूप

ले०—डा० सुनीति

★

यज्ञ और योग, वैदिक संस्कृति के दो ऐसे स्वर्णिम पथ हैं जिसे सम्यक्तया जान कर मनुष्य समाज, अभ्युदय अर्थात् सांसारिक और नि श्रेयस् अर्थात् पारलौकिक दोनों प्रकार के सुखों को प्राप्त कर सकता है। किन्तु दुर्भाग्य वश बहुत-सी भ्रान्तिया, यज्ञ और योग के क्षेत्र में फैली हुई हैं, जिनके कारण, इनके सत्य स्वरूप को समझना असभव नही तो कठिन अवश्य हो गया है।

सक्षेप मे यह कहा जा सकता है कि आन्तरिक पवित्रता के माध्यम से परमात्मा का सान्निध्य प्राप्त कर लेना योग है और बाह्य पवित्रता का निर्माण कर, ईश्वर प्रदत्त वस्तुओं का सम्यक् विनियोग, 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' करना यज्ञ है। स्वय परमात्मा यज्ञ स्वरूप है इसीलिए वेद में कहा गया है—'तस्मात् यज्ञात् सर्वहुत' उस यज्ञ रूप प्रभु ने यह सम्पूर्ण सृष्टि अपने लिए नही, जीवो के लिए रची है। उस प्रभु की बनाई सृष्टि के रहस्यों को जान कर 'इद न मम' की भावना को आत्मसात् करना यज्ञ की मूल आत्मा है। 'स्वाहा' अर्थात् सब की भलाई के लिए अपना और अपने स्वार्थ का उत्सर्ग करना यज्ञ का प्राण है और सुगन्धिकारक, पुष्टिप्रद, आरोग्य वर्धक घी, सामग्री, मिष्टादि पदार्थ जो साधन रूप हैं वे इस यज्ञ के बाह्य स्वरूप अर्थात् शरीर मात्र हैं।

हमारा ऐसा कार्य जो अधिक से अधिक जड और चेतन दोनों को समान रूप से लाभ पहुंचा सके, वह विशेष क्रिया है, जिसे ऋषि मुनियों द्वारा किया गया, बहुत बडा, वैदिक आविष्कार माना जाना चाहिए। यह अदभुत आविष्कार, आज भी विज्ञान के बडे-बडे लाभप्रद आविष्कारों के सम्मुख एक चुनौती के रूप में अपने विशाल महत्त्व को लिये प्रस्तुत है। असाधारण रूप से सपूर्ण चराचर जगत् को युगपत् प्रभावित करने वाले इस आविष्कार की तुलना में तथाकथित महान् आविष्कार बौने से दिखाई पडते हैं। यज्ञ के इस अद्‌भुत प्रभावकारी स्वरूप का विवेचन वेद के आधार पर करना इस निबन्ध का प्रतिपाद्य है। यज्ञ शब्द का अर्थ क्या है? उसकी कृति अर्थात् क्रिया कलाप किस प्रकार सम्पन्न होते हैं? यज्ञ के साधन कौन-कौन से हैं? और इस यज्ञ का फल किस-किस रूप में प्राप्त होता है? इन सभी प्रश्नों पर हम क्रमशः विचार करेंगे।

यज्ञ शब्द का अर्थ

यज्ञ शब्द यज् धातु से बना है, जिसके तीन अर्थ होते हैं—देवपूजा, सगतिकरण और दान। ऋषि दयानन्द के शब्दों में देव पद का मूल अर्थ द्योतक अर्थात् प्रकाश स्वरूप है। वेद मन्त्रों की भी देव सज्ञा है, क्योंकि उनके कारण विद्याओं का द्योतन अर्थात् प्रकाश होता है। देव शब्द का अर्थ परमात्मा भी है, क्योंकि उसने वेद का अर्थात् ज्ञान का और सूर्यादि जड पदार्थों का प्रकाश किया है। देव का अर्थ विद्वान् भी होता है। शतपथ ब्राह्मण में 'विद्वासो हि देवा।' ऐसा कहा गया है। पूजा शब्द का अर्थ सत्कार होता है। इसी तरह यज्ञशाला को भी देवायतन या देवालय कहा है।

तस्मात् सर्वगतं ब्रह्म नित्य यज्ञे प्रतिष्ठितम्। —गीता

सगतिकरण अर्थात् अत्यन्त प्रीतिपूर्वक, प्रेम पूर्वक, देवता का का ध्यान, देवता का विचार और सत्पुरुषों का सग, शिल्प विद्या का प्रत्यक्षीकरण इसे भी यज्ञ कहते हैं।

तीसरा दान-विद्यादान को छोडकर दूसरे दान, दान नहीं हैं। अन्न वस्त्रादिकों के दान विद्यादान की सहायता करते हैं इसलिए उन्हें दान कहना उचित है। "सर्वेषामेव दानानाम् ब्रह्मदान विशिष्यते" सब दानों में ज्ञानदान ही विशिष्ट है। इस प्रकार यह यज्ञ कर्मकाण्ड का विषय है। यज्ञ में अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यन्त का समावेश होता है।

यज्ञ के इस अर्थ को सरलता से समझने के लिए इसे इन शब्दों में भी स्पष्ट किया जा सकता है—"अपने से जो बड़े हैं वे देव समान हैं, उनकी पूजा करना यज्ञ है। बराबर वालों के साथ संगत करना और छोटों को कुछ देना भी यज्ञ है। यह छोटाई-बडाई केवल मनुष्यों में ही नहीं, प्रत्युत ससार का चाहे जो पदार्थ हो, चाहे जो शक्ति हो और चाहे जो गुण हो, यदि वह बडा है तो पूजनीय है। यदि बराबर वाला है तो मिलने योग्य है, यदि छोटा तो कुछ पाने का अधिकारी है।"

—वैदिक सम्पत्ति

इस प्रकार से समस्त जड चेतन जगत् को परस्पर एक दूसरे से लाभ पहुचाना ही यज्ञ है। 'यज्ञो वै विष्णु' कह कर, यज्ञ का विराट् एव व्यापक रूप वैदिक वाङ्मय में भी विभिन्न रूपों में प्रस्तुत किया गया है। यज्ञ का इतने व्यापक रूप से अर्थ करने पर साधारण जन कभी-कभी सन्देह में पड जाते हैं। परन्तु हमें इस बात को सम्यकतया समझ लेना चाहिए कि यज्ञ एक ऐसी क्रिया विशेष का नाम है, जिसमें ऋषि-मुनियों ने एक ही साथ देव पूजा, सगतिकरण और दान तीनों प्रकार के क्रिया विधान को संयुक्त कर दिया है। इस अनोखे सगम के कारण ही यज्ञ का रूढ़ि अर्थ काष्ठ में घृतादि सुगन्धित पदार्थों का जलाना प्रसिद्ध हो गया है।

जिस प्रकार लोक में उदाहरण दिया जाता है कि यह ससार एक पाठशाला है। जिसमें मनुष्य अपने अनुभव से बहुत कुछ सीख लेता है, तो इसका कदापित् यह अभिप्राय नहीं कि अब बालकों को पाठशालाएं भेजना आवश्यक नहीं। हम समझ लें कि बालक इस संसार रूपी पाठशाला से ही सब कुछ सीख लेगा। यह एक उपमान ही है।

इसी प्रकार जीवन में परोपकार करना भी यज्ञ है, इसका तात्पर्य यह नहीं कि हम असली यज्ञ क्रिया को न जानें, न करें। उस यज्ञ के निज स्वरूप की अपनी ही महत्ता है। यज्ञ के इस महान् स्वरूप का दिग्दर्शन यजुर्वेद के माध्यम से सहज ही हो जाता है। यजुर्वेद में मुख्य रूप से यज्ञ के स्वरूप को स्पष्ट किया गया है। यजुर्वेद शब्द में भी यज धातु ही प्रयुक्त हुई है। "ऋग्भिः स्तुवन्ति यजुर्भिर्यजन्ति।" इसका अभिप्राय यह है कि ऋग्वेद में सृष्टि के पदार्थों का सैद्धान्तिक ज्ञान दिया है और यजुर्वेद में उसकी प्रायोगिक विधि समझाई गई है। सृष्टि के जड चेतन पदार्थों का सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर उनसे यथोचित उपकार लेना ही मानव के कर्मों की सार्थकता है। यजुर्वेद के प्रथम मन्त्र में ही 'श्रेष्ठतमाय कर्मणे' कह कर मानव समाज को यज्ञ रूप कर्म करने का सकेत दिया है। शतपथ ब्राह्मण जो वेद मन्त्रों के व्याख्यान हैं—उसमें इस मन्त्र की व्याख्या करते हुए स्पष्ट कहा गया है—'यज्ञो वै श्रेष्ठतम कर्म।' इस श्रेष्ठतम कर्म को जानो, समझो और करो। ज्ञान की सफलता कर्म में ही परिलक्षित होती है। सृष्टि के पदार्थ विशेष का उपभोग करना तो पशु-पक्षी भी जानते हैं सब के लाभ के लिए इन पदार्थों का विनिमय करना ही मानव की विशिष्टता है। ●

ग्राम प्रचार

श्री गोपाल आर्य सी-१४१ संगम विहार (देवलीगांव) ने अपने पुत्र के जन्मोत्सव के शुभावसर पर ग्राम-प्रचार कराया। जिसमें स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती—सभा प्रचार वाहन द्वारा सगम विहार पधारे, संगमविहार में सैकडों स्त्री-पुरुषों के जनसमूह में स्वामी जी का सगीत के माध्यम से करीब दो घण्टे तक भजनोपदेश रहा। जिस में हास्य कविताएं चुटकुलों से मनोरंजन रहा। सभी श्रोतागणों ने शान्तिपूर्वक वैदिक धर्म प्रचार से लाभ उठाया और कार्यक्रम की सराहना भी करी, कार्यक्रम की समाप्ति पर श्री गोपाल आर्य जी ने सभा के इस कार्यक्रम के लिए आभार प्रकट करते हुए धन्यवाद दिया और कहा कि दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा का यह कार्यक्रम अति सुन्दर है इससे ग्रामवासियों को आर्यसमाज के उद्देश्य की जानकारी मिलती है। यह अति आवश्यक है कि ग्राम प्रचार में दिन प्रतिदिन उन्नति होती रहे। इसी प्रकार सहयोग मिलता रहे तो यहां आर्यसमाज की स्थापना शीघ्र हो सकती है और इस प्रचार से जनता पर बहुत प्रभाव पड़ा है। प्रचार वाहन में ओ३म् ध्वज शोभायमान लगते हैं। साथ ही लाउडस्पीकर से टेपरिकार्ड द्वारा जो संगीत सुनने को मिलता है वह वैदिक धर्म-प्रचार का अति उत्तम साधन है। ●

मेरी महाशय धर्मपाल से प्रथम भेंट और उसका परिणाम

ले०—ओमप्रकाश आर्य



कभी-कभी बुराई से भी इतनी अच्छाई निकलती है कि वह ऐतिहासिक तत्व बन जाती है। यही उक्ति मेरी महाशय धर्मपाल जी के साथ प्रथम भेंट से सिद्ध होती है। सन् १९७२ जनवरी मास में मैं दिल्ली परचूनदार एसोसियेशन का मन्त्री था। उन दिनों छोटे-छोटे दुकानदारों के दिल्ली नगर निगम नमूने उठा कर उनको काफी परेशान करता था, जिस से परचून दुकानदारों मे काफी असन्तोष था। लगभग प्रति सप्ताह इस सम्बन्ध मे परचून दुकानदारों का प्रदर्शन किसी न किसी स्थान पर होता रहता था। इस दिन भी टाउन हाल पर दुकानदारों का प्रदर्शन था। मैं प्रदर्शन कर के वापिस खारी बावली से पैदल आ रहा था। उन दिनों मैं आर्यसमाज सुभाष नगर का प्रधान भी था।

हम ने आर्यसमाज के सेवक श्री स्व० बाबा हरनाम दास की सुपुत्री की शादी करनी थी। शादी मे केवल एक सप्ताह बाकी था। मन मे विचार आया कि क्यों न खारी बावली मे महाशय धर्मपाल जी से मिला जाये। महाशय जी ने सन् १९७१ मे सुभाष नगर मे माता चन्नन देवी सनातन धर्म शिशु मंदिर के नाम से एक स्कूल बनवाया था। जिससे उनकी दानवीरों मे आम-चर्चा थी, क्योंकि परचून दुकानदार एसोसियेशन प्रतिदिन यह मांग करती थी कि नमूने केवल उत्पादन कर्ता के ही भरे जाने चाहिये। ... मन मे झिझक थी कि किस मुंह से महाशय जी के सामने जाया जाए।

बड़ी हिम्मत कर के समतराम, खारी बावली में मैं उनके कार्यालय पहुंचा। मेरे हाथ में एक लाठी थी, जिस पर लगे काले झण्डे को उतार-कर मैंने जेब में रख लिया था। पहले-पहले इनके लेखाधिकारी श्री रामजी दास से मेरी भेंट हुई। मैंने उन से पूछा कि महाशय धर्मपाल जी कहां हैं? मिजाज से गर्म होने के कारण वह बड़े गुस्से मे बोले कि आप जैसे कई लोग प्रतिदिन महाशय जी को मिलने चले आते हैं। नहीं पता महाशय जी कहां हैं। जब मैंने उन्हें अपना परिचय दिया तो उन्होंने अपने टेलीफोन के एक्सटेंशन पर महाशिया दी हट्टी के प्रथम तल पर महाशय जी से सम्पर्क किया। महाशय जी ने तुरत सम्मान ऊपर भेजने को कहा। मुझे एक व्यक्ति उनके पास ऊपर छोड़ आया।

लगभग १०×१२ के कमरे मे महाशय धर्मपाल जी एक बहुत बड़े मेज के सामने बैठे थे, उनके सामने उनकी पुत्री और भतीजी बैठी थी और व्यापार के सम्बन्ध मे कुछ कागजात तथा पत्राचार आदि देख रहे थे। मैं भी जाकर महाशय जी के सामने बैठ गया। उन्होंने चाय तथा कुछ खाने को मंगवाया। चाय पीने के पश्चात् मुझे पूछा बताइये आप जी मेरे लायक क्या सेवा है। बड़ी झिझक के साथ मैंने उन से निवेदन किया कि हमें आर्यसमाज सुभाष-नगर के सेवक बाबा हरनाम दास की लड़की की शादी करनी है और लगभग २५०/-रुपये की उस मे कमी है। यह २५० रुपये आप दे द तो अच्छा रहेगा। उन्होंने टैलीफोन का बटन दबाया और उसी गुस्से वाल सज्जन श्री रामजी दास को आदेश दिया कि एक २५०/-रुपये लिफाफ मे डाल कर ले आओ। उसने लिफाफा लाकर महाशय जी को दिया और महाशय जी ने वह लिफाफा मेरे हाथ मे सम्मानपूर्वक पकड़ा दिया। न तो महाशय जी ने मुझ से रसीद मांगी और न कुछ कहा जेब मे डाल कर मैं सारे रास्ते सोचता आया कि सारे उत्पादनकर्ता ही बेईमान हैं, क्या वह दुकानदार बेईमान नहीं है, जिनको पता होते हुए भी साबित मिर्च का भाव ६/-किलो है और वह दो रुपये किलो की मिर्च श्रद्धानन्द बाजार से क्रय कर के लाते हैं और जान बूझ कर गन्दा माल बेचते हैं। उस समय से मेरे अपने विचारों में बड़ा भारी परिवर्तन आया, और मैंने सोचा कि क्यों न इस दानी सज्जन के साथ मिल कर इस आर्य परिवार को आर्यसमाज के निकट लाया जाये। क्योंकि गोरक्षा आन्दोलन मे महाशय जी के पूज्य पिता श्री महाशय चुन्नीलाल जी के योगदान की सूचना मुझे मिल चुकी थी। और मैंने दृढ निश्चय कर लिया कि इस आर्य परिवार के आर्यसमाज के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध जोड़े जायें।

घर जाकर दूसरे दिन आर्य-समाज सुभाष नगर के मन्त्री सुयोग्य वैदिक विद्वान् महात्मा प्रभु आश्रित जी के सुपुत्र श्री लखपति शास्त्री जी से मैंने विचार-विमर्श किया। शादी से निवृत्त होने के एक सप्ताह पश्चात् हमने आर्यसमाज की एक अन्तरंग सभा की बैठक बुलाई, जिसमे निश्चय किया कि समाज के मुख्य द्वार के ऊपर तथा समाज के ऊपर तीन कमरों के एक श्रद्धानन्द हाल का निर्माण किया जाये जिसकी लम्बाई लगभग ४० फुट और चौडाई लगभग २० फुट हो। इसी हाल की आधारशिला के लिए हमने महाशय धर्मपाल जी को आमन्त्रित करने का निश्चय किया। अत मैं दूसरे दिन मैं और श्री लखपति जी शास्त्री एव समाज के कोषाध्यक्ष श्री सुख-देव आर्य, महाशय जी से मिलने के लिए उनके निवास स्थान करौल-बाग पर पहुंचे। महाशय जी उस समय हवन यज्ञ कर रहे थे। उनकी धर्मपत्नी श्रीमती लीलावन्ती उनके साथ यज्ञ पर विराजमान थी। यज्ञ के पश्चात् श्री लखपति शास्त्री जी ने चार मिनट का प्रवचन किया। यज्ञ एव शान्तिपाठ के पश्चात जल-पान पर महाशय जी से बातचीत हुई। हमने वैशाखी के दिन १३ अप्रैल सन् १९७२ को स्वामी श्रद्धा-नन्द हाल की आधारशिला रखने के लिए महाशय जी से प्रार्थना की। महाशय जी ने तुरन्त कहा कि मेरे पूज्य पिता महाशय चुन्नीलाल जी आधारशिला रखेंगे और हम परि-वार सहित उस में सम्मिलित होंगे। अध्यक्षता के लिए महाशय धर्मचन्द-लाल (राजौरी गार्डन), श्री जगदीश आर्य और श्री सुभाष आर्य जी के पूज्य पिता जी से प्रार्थना की गई। जो उन्होंने स्वीकार कर ली। प्रो० बलराज मधोक इसमे मुख्य अतिथि के रूप मे आमन्त्रित किये गए।

१३ अप्रैल सन् १९७२ को हम ने राजौरी गार्डन के पुल से लेकर आर्यसमाज मन्दिर तक के मार्ग को भी खूब सजवाया और राजौरी गार्डन के नाले के पुल से महाशय जी के पूरे परिवार को जलूस की शक्ल मे समाज मन्दिर तक बैण्ड बाजों के साथ लाया गया। हवन यज्ञ के पश्चात् प्रो० बलराज मधोक जी का बड़ा मार्मिक प्रवचन हुआ। उन्होंने जो चित्र हिंदू समाज का खींचा, वह बड़ा दर्दनाक था और जो भविष्यवाणी उन्होंने की आज तक कई सत्य सिद्ध हो चुकी हैं।

इसके पश्चात् महाशय चुन्नी-लाल जी ने स्वामी श्रद्धानन्द हाल की आधारशिला वेदमन्त्रों के उच्चारण के साथ रखी। इस अवसर पर ४,२००/ रुपये के लगभग महाशय परिवार की ओर से महाशय चुन्नी लाल, माता चन्नन देवी महाशय धर्मपाल आदि ने सम्मिलित रूप से दिये। लगभग ढाई हजार की और राशि भी आर्यसमाज को दानी महानुभावों से प्राप्त हुई। इस सारे समारोह के आयोजन पर आर्यसमाज का लगभग २५०/ रुपये व्यय हुआ। व्यय निकाल कर लगभग ५००/- रुपये प्राप्त हुए। ४,००० - आर्य-समाज के कोष मे पहुंच होने के कारण हम इस हाल पर लेन्टर डालने की स्थिति मे हो गए और एक माह के अन्दर-अन्दर हमने इस पर लेन्टर डाल दिया लेन्टर खुलने के पश्चात् हम फिर महाशय धर्म-पाल जी की सेवा मे गये, उन्होंने फिर बड़ी उदारता से २१००/-रुपये की राशि हमें और दी, उससे हमने इस हाल का पलस्तर कराया। हाल को तैयार होते-होते लगभग सन् १९७५ मे दो कमरों सहित यह हाल तैयार हुआ जिसमे महाशय धर्मपाल जी और महाशय चुन्नीलाल चैरि-टेबल ट्रस्ट का सब से अधिक योग दान मिला।

१९७५ मे महाशय जी के सह-योग मे सनातन धर्म, सुभाष नगर शिशु मन्दिर की तरह इस समाज मे भी शिशु मन्दिर खोलने का निश्चय किया गया, परन्तु समर्थ शिक्षा समिति के कुछ लोग स्कूल के नाम पर आर्यसमाज को ही कब्जाना

(शेष पृष्ठ ६ पर)

आर्यसमाज मन्दिर और प्रेम-विवाह

लें०—डा० महेश विद्यालकार

आर्यसमाज के आदर्श, मान्यताएँ, चिन्तन एवं जीवन दर्शन आदर्शमूलक हैं। इसका जन्म ही व्यक्ति, समाज और राष्ट्र में व्याप्त अन्धविश्वास, रूढि, अज्ञान, पाखण्ड तथा असमानता को दूर करने के लिए हुआ है। इसीलिए इसके मन्तव्यों मे मौलिकता, नवीनता, व्यावहारिकता, तार्किकता एव उपयोगिता आदि गुण विद्यमान हैं। आर्यसमाज ने ऐसे आदर्श, प्रेरक और क्रान्तिकारी उदाहरण प्रत्येक क्षेत्र में प्रस्तुत किये हैं जिससे इसके आगे सभी नतमस्तक हो जाते हैं। शुद्धि का प्रचलन, विधवा विवाह जाति-पाँति को तोड कर गुण कर्म स्वभाव के आधार पर विवाह करना, और कराना भी इस विचारधारा का एक महत्त्वपूर्ण पहलू रहा है।

आज बडे नगरों के आर्यसमाज मन्दिरों मे प्रेम-विवाह करवाने और उन्हें सार्टीफिकेट देने की प्रवृत्ति बडी तेजी से बढ रही है। जिनकी कही और शादी नहीं होती है उनकी आर्यसमाज मन्दिर में शादी हो जाती है। यह धारणा आधुनिक समाज में बनती और फैलती जा रही है। क्या इस प्रकार की शादियां आर्यसमाज मन्दिर मे करवाना उचित है? क्या यह ऋषि-सिद्धात के अनुकूल है? क्या इससे समाज का कोई ठोस प्रभाव पड रहा है? कही पतित समाज मे आर्यसमाज की इमेज शादी कराने वाली संस्था ही तो नहीं बन कर रह जायेगी? क्या शादी करने वाले लडके और लडकी पर कोई प्रभाव स्थायी रहता है? अव्यावहारिक, असामाजिक एव अनैतिक बातों को हम कहीं बढावा तो नही दे रहे हैं? कहीं मन्दिर शादी की दुकान तो न बन जायेगा। कहीं मन्दिर की इससे अपनी पहचान तो धूमिल न हो जायेगी? कहीं इस से मन्दिर की गरिमा, पवित्रता एव धार्मिकता तो नही क्षीण होने लगेगी? जब प्रेम-विवाह को आर्यसमाज मन्दिर से जोडते हैं तो कई प्रश्न उभरते हैं। आर्य संन्यासियों, विद्वानों, उपदेशकों और कर्मकाण्डी पुरोहितों को इस गभीर और सामयिक समस्या पर विचार कर के दिशा-निर्देश करना चाहिए। नही तो यह विषाक्त प्रवृत्ति भविष्य में आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार के लिए घातक एव अपयशकारी सिद्ध हो सकती है।

विवाह हमारी सस्कृति का महत्वपूर्ण एव जीवन प्रेरक सस्कार है। यह सस्कार वैयक्तिक, पारिवारिक, और सामाजिक सबधों तथा बन्धनो से जुडा है। इसकी उच्चता, महत्ता, उपयोगिता और मापदण्ड गुण-कर्म और स्वभाव से करता है। इस आधार पर किया हुआ विवाह ही सर्वथा सफल, सुखी, आदर्श एव प्रेरक होता है। आर्य-चिन्तन जाति-पाँति, ऊँच, नीच, धनवान, निर्धन, दहेज, व झूठी शान-शौकत आदि के पक्ष में नहीं रहा है। आदर्श विवाह तो वही है जिसमें गुण, कर्म, स्वभाव मिलता हो, परिवार के बुजुर्गों की सहमति हो, जिस मे लेन देन का कोई लाभ लालच न हो, सब की उपस्थिति में प्रसन्नता और सुख से सम्पन्न हो। किन्तु आज के ससार में भोग-विलास, श्रृंगार, वासना और भौतिकता का बोलबाला है। चारों ओर इन्हीं चीजों का बाजार गर्म है। पग-पग पर वासनाओं को उद्दीप्त करने के सामान बिक रहे हैं। जिस राष्ट्र मे सहशिक्षा की जलती हुई भट्टी में दिन-रात किशोर और किशोरियां जल रहे हों। जहा अश्लील, श्रृंगारिक, नग्न और काम-वासना को उद्दीप्त करने के लिए बाजार, पत्र-पत्रिकाएँ, रेडियो, सिनेमा और टेलीविजन चल रहे हों, जिस देश के विश्वविद्यालयो में हडताल इस बात के लिए हो रही हो कि हमारे छात्रावास के कमरे का साथी लडकी होनी चाहिए। जहां शराब फैशन मान कर पानी की तरह पी जा रही हो। जहा अवैध भ्रूण हत्या के लिए लाइनें लगी हों। जहा शिक्षण सस्थाए प्रेम-भोग-विलास के केन्द्र बन रहे हो। वहां आदर्श-प्रेम-विवाह की कल्पना करना असम्भव-सा लगता है। अधिकांश प्रेम-विवाह, अपरिपक्वता, भावुकता, वासना की तीव्रता और फिल्मों की काल्पनिकता के आधार पर हो रहे हैं। जिनके मूल में नियम, सयम, मर्यादा और कोई आदर्श नहीं है। कभी-कभी ऐसा भी देखने में आया कि शारीरिक सम्बन्ध हो जाने पर, गर्भ स्थिर हो जाने पर मजबूरी में विवाह किए और कराये जा रहे हैं। कई बार भगाई, फुसलाई, फुसलाई, डराई लडकियों को लेकर लडके समाज-मन्दिर में झूठ बोलकर शादी करा लेते हैं। कोर्ट में पैसे के बल पर झूठे कागज बन रहे हैं। माता-पिता, रिश्तेदारों को मालूम भी नहीं, लडका-लडकी मन्दिर में विवाह रचाये बैठे हैं। घर से लडका-लडकी दफ्तर, कालेज गए हैं, बाद को मालूम होता है कि वे तो विवाह कर हनीमून पर चले गए हैं। फिल्मी विवाहों की तरह रोज ऐसे विवाह हो रहे हैं। ऐसे विवाह राक्षस विवाह कहलाते हैं। जिनमें कोई मर्यादा, सीमा और आदर्श नहीं होते हैं। इसे लोग सामाजिक क्रान्ति का, दहेज विरोधी आन्दोलन की सज्ञा देते हैं। वास्तविकता में ये ऊपरी ही जया खर्च हैं। ऊपर से दहेज विरोधी हैं, अन्दर से उन्हीं बातों से जुडे हैं। शारीरिक आकर्षण के पागलपन मे प्रेम-विवाह के नाटक हो रहे हैं। जो कि बाद को प्राय असफल, अशान्त एव दुखान्त बनते हैं।

ऐसी विचित्र एव विकट परिस्थिति में समाज-मन्दिर शादी करवाए या नही? यह चिन्तनीय एव विचारणीय है। शादी करवाने वाले मन्दिरों के अधिकारी तर्क देते हैं कि यदि समाज मन्दिर नहीं करायेगा तो चर्च, मस्जिद, गुरुद्वारा आदि में वे करवायेंगे। इससे तो अच्छा है हमीं करा दें। कुछ नहीं तो सार्टीफिकेट पर समाज-मन्दिर का नाम ही आ जायेगा। इस कथन में आत्मतुष्टि के अतिरिक्त कुछ ठोस प्रभाव नहीं है। शादी करवाने वाले को मात्र सार्टीफिकेट से मतलब है। इसके अलावा उसके मन-मस्तिष्क और हृदय पर कोई स्थायी प्रभाव नहीं रहता है। क्योंकि उसे यह भी अहसास करा दिया जाता है कि इतने रुपये पहले देने होंगे, तभी यह काम होगा। सीधा व्यापार का सम्बन्ध हुआ। जहां भी व्यापार की बात आती है, वहां नैतिक, धार्मिक चारित्रिक प्रभाव समाप्त हो जाता है और हो रहा है। अधिकारी यह सोचते हैं चलो मन्दिर को दान मिला। पं० जी सोचते हैं चलो एक घण्टे में कुछ आमदनी हुई। शादी के विधि-विधान, उपदेश पर न मंदिर की दृष्टि होती है, और न शादी कराने वाले लडके-लडकी की। मन्दिर को दान के नाम पर धन मिल गया। फिक्स डिपाजिट बढ़ने लगा। ठाठ-बाट ऊपरी धूमधाम सजने लगी, पर मूल उद्देश्य प्रचार-प्रसार घटने लगा। मन्दिर जन सम्पर्क से दूर हो रहे हैं इसीलिए कोई दुकानें बनवा रहा है, कोई स्कूल खोल रहा है, कोई मैरिज ब्यूरो बना कर स्थायी आमदनी का रास्ता ढूढ रहा है।

गुजरात, महाराष्ट्र व कई अन्य राज्यों में आर्यसमाज मन्दिर शादी बाडी मन्दिर के नाम से जाने और पुकारे जाते हैं। दूसरी पहचान यह बनने लगी है—वह स्थान जहां प्रेम-विवाह या भगाई उठाई, लडकी की शादी हो जाती है। वह मन्दिर जहां बिना माता-पिता के भी शादी हो जाती है। यह पहचान हमारे पवित्र, सार्थक, एव सर्वोपयोगी, आर्यसमाज मंदिर की बनें यह खेद और पीडादायक है। नई पीढ़ी में हमारे मंदिर की यह इमेज खतरनाक सिद्ध होगी। इससे भला नहीं होगा। आर्यसमाज के अधिकारी एव पुरोहित कोर्ट व पुलिस में गवाही दें। लडके व लडकी के माता-पिता उल्टे सीधे सवाल करें उन्हें अपना दुश्मन समझें। इस से मन्दिर की धार्मिक व सामाजिक प्रतिष्ठा गिरती है। आम आदमी भारतीय जीवन पद्धति के रीति-रिवाजों मे विश्वास और श्रद्धा रखता है। जब उनके परिवार मे ऐसा घटित हो जाता है, तो वे ऐसे स्थान, व्यक्ति, और व्यवस्था के विरोधी बन जाते हैं।

आर्यसमाज मंदिरों को वैदिक सिद्धान्तानुकूल, अपनी मर्यादाओं, आदर्शों के अनुसार मंदिर में विवाह कराने के लिए आचार सहिता बनानी चाहिए। जो भी आया जैसा आया, जब भी आया दान के लालच में शादी करवा दी, इस प्रकार की प्रवृत्ति पर कडाई से अंकुश लगाना होगा। भगाई, उठाई, बहकाई, धमकाई, ललचाई, ऐसी लडकियों की शादी मन्दिर में बिल्कुल नहीं होनी चाहिए। इस तरह के विवाह वैदिक सिद्धांत के विरुद्ध हैं, [illegible] ऋषि मुनि परम्परा के सर्वथा [illegible]कूल हैं। इसे जो सुनता और [illegible] है, बहुत गलत प्रभाव पडता है। इस तरह से मन्दिरों को प्राप्त दान भी कोई विशेष महत्व सिद्ध नहीं कर पाता है। इससे मन्दिर भावना और श्रद्धा शून्य होने लगते हैं और हो रहे हैं।

महर्षि के साथ दो शास्त्रार्थ

नवीन वेदान्ती साधु से हरिद्वार मे

५ अप्रेल सन् १८७९ रविवार तदनुसार पूर्णमासी चैत्र सम्वत् १९३६ को जब कि स्वामी जी अतिसार की अधिकता के कारण रुग्ण हो गए और जवा भी दर्द करती थी अर्थात् एक छाला भी निकला हुआ था। मेले में धूम पड गई क्यों कि एक दिन व्याख्यान नहीं हुआ था। साधुओं ने इसको स्वर्ण अवसर समझा और पंक्तिबद्ध होकर शास्त्रार्थ के लिए आने लगे। इस अभिप्राय से कि जब वह शास्त्रार्थ करना स्वीकार न करेंगे तो हम प्रसिद्ध कर देंगे कि हार गए। स्वामी जी इस दिन तम्बु में चारपाई पर विश्राम कर रहे थे। जब दूर से उनको आता देखा तो उठ बैठे और साधारण सत्कार के पश्चात् आने का कारण पूछा। उन में से एक परम प्रसिद्ध साधु थे जो सब से अधिक विद्वान् था कहा—कि हम आप से शास्त्रार्थ करने आये हैं। स्वामी जी ने कहा कि बहुत अच्छा आप किसी विषय पर बातचीत करें।

साधु जी . हम वेदान्त पर चर्चा करेंगे।

स्वामी जी . पहले आप मुझे समझा दें कि वेदान्त से आप का क्या अभिप्राय है।

साधु जी . वेदान्त से अभिप्राय है कि जगत् मिथ्या है और ब्रह्म सत्य है।

स्वामी जी . जगत् से क्या अभिप्राय और कौन-कौन पदार्थ जगत् के भीतर हैं और मिथ्या किसको कहते हैं ?

साधु जी : परमाणु से लेकर सूर्य पर्यन्त जो कुछ है उसे जगत् कहते हैं और वह सब मिथ्या अर्थात् झूठा है।

स्वामी जी : तुम्हारा शरीर, बोलना-चालना, उपदेश, गुरु और पुस्तक भी इसके भीतर हैं या नहीं ?

साधु जी : हां यह इसके भीतर हैं।

स्वामी जी : और आप का मत किस इसके भीतर है या बाहर ?

साधु जी . हां वह भी जगत् के भीतर हैं।

स्वामी जी : जब तुम स्वय ही कहते हो कि हम और हमारा गुरु, हमारा मत और हमारी पुस्तक, हमारा बोलना और उपदेश—यह सब मिथ्या ही मिथ्या है तो हम तुम्हें क्या कहें। स्वय वादी के कहने से ही उसका दावा खारिज है। साक्षी आदि की कुछ आवश्यकता नहीं। साधु जी आश्चर्य चकित तथा पराजित होकर वहां से चले गए और फिर कभी इस प्रकार जत्था बांध कर स्वामी जी के सम्मुख शास्त्रार्थ करने को न आए।

(लेखराम जीवन चरित्र पृष्ठ ६४७ से)

अनूप शहर निवासी पं० हीरा वल्लभ का कर्णवास मे शास्त्रार्थ

पौराणिकों को पं० अम्बादत्त के पराजय की कालिमा धोने की चिन्ता थी ही। वह अनूप शहर गये और प० हीरा वल्लभ को बुला कर लाए। पौष मास की किसी तिथि को प० हीरा वल्लभ कर्णवास गए और बडे ठाठ से आये। वह अपने आराध्य देवों की मूर्तियों को एक सुन्दर सिंहासन में सजा कर साथ लाये। शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ। उस में प० हीरालाल प्रवृत्त हुए तो अनोखे ढग से देव मूर्तियों का सिंहासन सामने रख कर और यह प्रतिज्ञा कर के कि मैं इन देव मूर्तियों को दयानन्द के हाथ से भोग लगवा कर उठूंगा। छ दिन तक शास्त्रार्थ होता रहा, नियम और न्यायपूर्वक होता रहा। छठे दिन प० हीरा वल्लभ ने अस्त्र-शस्त्र डाल दिए। अपनी हार स्वीकार की, वाणी से भी और कर्म से भी। पण्डित जी ने महाराज को हाथ जोड कर प्रणाम किया और साथ ही देव मूर्तियों को भी सदा के लिए हाथ जोड कर गगा-जल में प्रविष्ट कर दिया। उन मूर्तियों को जिन्हें वह दयानन्द के हाथ से भोग लगवाने की प्रतिज्ञा कर के शास्त्रार्थ में प्रवृत्त हुए थे, परन्तु स्वयं भोग लगाना छोड कर शास्त्रार्थ से निवृत्त हुए। सभा में २००० मनुष्य उपस्थित थे।

स्वामी जी पं० हीरालाल की न्यायप्रियता देखकर गदगद हो गए और उन्होंने पण्डित जी की मुक्त-कण्ठ से प्रशसा की। निष्पक्ष मनुष्यों ने भी उन्हें हृदय से साधुवाद कहा। सब के मुखमण्डल हर्ष से खिल उठे। मूर्ति पूजकों के हृदय शोक सन्तप्त और उनके मुख विषाद से तेजहीन हो गए और त्राहि-त्राहि करते और ठण्डे सांस भरते हुए सभा से उठ कर चले गए। इस शास्त्रार्थ का यह प्रभाव हुआ कि सैकडों मनुष्यों की आस्था मूर्ति पूजा के ऊपर से उठ गई और बीसियों लोगों ने प० हीरा वल्लभ का अनुकरण करते हुए अपनी देव मूर्तियां गंगा के प्रवाह में डाल दीं।

(देवेन्द्रनाथ जीवन चरित्र भाग-१ पृष्ठ १११)

□

हमारी चिन्ता

अशोक गौड

भारतवर्ष के इतिहास में एक ऐसा युग आया जब आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती का प्रादुर्भाव हुआ और उनके द्वारा प्रेरित स्वतन्त्रता के विचारों से ओत-प्रोत नवयुवक कांग्रेस के द्वारा चलाये गये स्वतन्त्रता आन्दोलन में कूद पडे और अपने प्राणों की बाजी लगाकर देश की आजादी की लडाई में जुट गये जिसके परिणामस्वरूप हमारा देश १५ अगस्त, सन् १९४७ को आजाद हो गया।

एक ओर जहां राजनैतिक क्षेत्र में स्वतन्त्रता प्राप्त हुई वहीं आर्य-समाज ने समाज सुधार की दिशा में भी अनेकानेक कार्य किये जिन मे मुख्य रूप से छुआछूत आन्दोलन, दहेज प्रथा का विरोध, सती प्रथा व बाल विवाह पर रोक, नशाबन्दो, पाखण्ड व गुरुडम अन्धविश्वास व अन्य तमाम सामाजिक कुरीतियों का उन्मूलन कर समाज को प्रगतिशील दिशा प्रदान की। एक समय था जब आर्यसमाज के दीवाने और दयानन्द के मस्ताने गांव-गांव और नगर-नगर में घूम-घूम कर नि.स्वार्थ भाव से ऋषि दयानन्द के सपनों को साकार करने में अपना गौरव समझते थे। जनता भी बडे उत्साह और लगन से आर्यसमाज के कार्यक्रमों में भाग लेती थी और ऋषि द्वारा बताये गए मार्ग पर चल कर अपने को धन्य समझती थी।

आर्यसमाज के सत्सगों, पर्वों आदि में आर्यों की न्यून उपस्थिति देखकर मुझे चिन्ता होती है कि आखिर हमारा भविष्य क्या होगा ? आज हम कहां जा रहे हैं, और हमें क्या करना चाहिए था। इस विषय पर चिन्तन करने का समय आ गया है। आज आर्य-समाज की आवश्यकता और भी बढ गई है। देश में फिर से नये-नये मत मतान्तरों और नित्य नये कृत्रिम भगवानों की बाढ आ रही है। सती प्रथा फिर से पनपने लगी है, राजस्थान का ग्राम दिवराला इसका ताजा उदाहरण है। ऋषि भी राजस्थान को सब से पिछडा राज्य मानते थे। उन्होंने इसकी उन्नति के भरपूर प्रयास किये, यहां तक कि अपना बलिदान भी इसी धरती पर दिया।

उदयपुर का नौलखा महल जहा पर बैठ कर ऋषि ने अपना विख्यात ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश लिखा था वहां आज भी आबकारी विभाग का कार्यालय खुला है। ऋषि के अनुयायियों के लिए इस से बढ़ कर खुली चुनौती और क्या हो सकती है ?

हिन्दी हमारे दिल में है

हिन्दी के आशिक हैं हम,
हिन्दी हमारे दिल में है।
देख ले दुनिया खुशी से,
क्या हमारे दिल मे है ?
जाते जाते भी फिरगी,
काम ऐसा कर गये,
दे गये हैं चोट गहरी,
जो हमारे दिल में है।
झूलकर फांसी के फन्दों से
शहीदो ने कहा—
छोडो फिरगी हिन्दी अब,
हिन्दी हमारे दिल में है।
जिन शहीदों की शहादत,
से मिली आजादियां,
उन शहीदों की शहादत,
भी हमारे दिल में है।
हिन्द में रहता है लेकिन
हिन्दी से रहता बेखबर,
बेखबर ऐसा भी कोई,
क्या अभी महफिल में है ?
जिन बुजुर्गों की सियासत
से मिली दुश्वारियां,
उन बुजुर्गों की सियासत,
भी हमारे दिल मे है।
आज भी 'अशफाक-बिस्मिल'
को शहादत कह रही—
हम-वतन हैं हम सभी,
हिन्दी हमारे दिल में है।

—ब्रजभूषण दुबे
३०, गोराचन्द रोड,
कलकत्ता-७०००१४

राजस्थान का सती काण्ड आर्यसमाज को गंभीर चुनौती

जयपुर २२ अक्टूबर। आर्यसमाज कृष्णपोल बाजार, जयपुर की सभा में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के पूर्व उपमन्त्री व आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के मन्त्री तथा नगर आर्यसमाज जयपुर के प्रधान श्री भगवती प्रसाद सिद्धान्त भास्कर ने सीकर के ग्राम दिवराला में श्री ती रूपकंवर के जिन्दा जला डाले जाने को एक निर्मम हत्या घोर अन्धविश्वास, पारिवारिक उत्तरदायित्व से बचने व जानि गौरव प्राप्त करने वाला एक षड्यन्त्र तथा जघन्य अपराध बताया।

आपने कहा कि पति के शव के साथ जीवित जलने का विधान किसी भी वेद मन्त्र व धर्मशास्त्र में नहीं है, अपितु विधवा विवाह का विधान है। इसी के आधार पर सन् १८२९ में राजा राममोहन राय के प्रयत्न पर भारत के वायसराय लार्ड बेंटिक ने सती प्रथा के विरोध में कानून बनाया और सन् १८५६ में ईश्वरचन्द्र विद्यासागर के प्रयत्न से विधवा पुनर्विवाह कानून भी बना। राजस्थान में भी ऐसे कानून बने तथा इसका उल्लंघन करने वालों को न्यायालय द्वारा कठोर कारावास का दण्ड दिया गया।

उन्होंने कहा कि पुरी के शंकराचार्य श्री निरंजन देव द्वारा उपरोक्त का महापाप कहना हिन्दु धर्म में हस्तक्षेप बताना, वेदमन्त्र में सती होना सिद्ध करना व शास्त्रार्थ की चुनौती देना उनका असंगत प्रलाप है, जब कि लार्ड बेंटिक द्वारा कानून बनाते समय भी अन्धविश्वासी, पौराणपन्थियों ने इसे हिन्दू धर्म में हस्तक्षेप बताया और सती प्रथा के समर्थन में ऋग्वेद मण्डल १०, सूक्त १८ मन्त्र-७ के अन्तिम शब्द 'योनिमग्रे' के स्थान पर मनगढ़त 'योनिमग्ने' बताया। तब वेद के विद्वान् वेदशास्त्रियों द्वारा 'अग्रे' शब्द ही प्रमाणित किया गया अर्थात् इस शास्त्रार्थ में सती प्रथा अवैदिक व अधार्मिक सिद्ध हुई। फिर भी यदि शंकराचार्य शास्त्रार्थ करने का पुन. दुस्साहस करना चाहते हैं तो एकांत स्थान पुरी की गुफा में बैठकर नहीं, राजस्थान की राजधानी, जयपुर में अथवा देहली में देश के बुद्धिजीवियों के समक्ष शास्त्रार्थ कर लें। आर्यसमाज के नेताओं द्वारा उन्हें यह चुनौती दी जा चुकी है। सभा में सती काण्ड के सम्बन्ध में आरम्भ से सरकार द्वारा बर्ती गयी उपेक्षा तथा कानून का उल्लंघन करने वालों के विरुद्ध कार्यवाही न करने की कड़ी आलोचना की गई तथा सती प्रथा के विरोधियों व लेखकों को सती प्रथा समर्थकों द्वारा मार डालने की धमकियों के कारण पंजाब की भांति राजस्थान में भी आतंक के संकट से बचने के लिए सरकार को समय रहते सचेत होने को कहा। आपने हिन्दू धर्म रक्षा समिति पर शीघ्र प्रतिबन्ध लगाने की मांग की, जो कि नारी हत्या के इस महापाप व कानूनी जघन्य अपराध को धर्म बताकर धर्मभीरु अन्धविश्वासी अशिक्षित भोली जनता की धार्मिक भावनाओं को भड़का कर सारे प्रदेश में अशान्ति व अराजकता उत्पन्न करके कानून व्यवस्था को भंग कर रही है क्योंकि राजस्थान के मुख्यमन्त्री अपने ही मन्त्रिमण्डल के कुछ मन्त्री समर्थकों के दबाव के कारण उक्त अवस्था सम्भालने में नितान्त असमर्थ सिद्ध हुए हैं, अतः राजस्थान में सती काण्ड के अपराधियों को दण्डित करने, सम्पूर्ण कानून व्यवस्था व शान्ति बनाये रखने के लिए तथा पंजाब जैसा सम्भावित आतंकवाद रोकने के लिए आपने भारत के प्रधान मन्त्री व गृह मन्त्री को पत्र भेजे हैं कि वह राजस्थान में शीघ्र ही राष्ट्रपति शासन नियुक्त करें।

आपने भारत की समस्त प्रदेशीय आर्य प्रतिनिधि सभाओं, आर्यसमाजों व विशेषतः राजस्थान की आर्यसमाजों से अपील की है कि वे सती काण्ड के विरोध में तथा इसके समर्थकों के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही करने के लिए राजस्थान प्रदेश के मुख्य मन्त्री तथा भारत के प्रधानमन्त्री व गृह मन्त्री को प्रस्ताव भेज तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली के प्रधान स्वामी आनन्द बोध जी के आदेशानुसार सती प्रथा, अन्धविश्वास व सामाजिक कुप्रथाओं के विरोध में प्रचार करें, क्योंकि आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द ने उक्त कार्यों की पूर्ति हेतु ही सम्पूर्ण भारत में वैदिक धर्म का प्रचार किया तथा अन्त में राजस्थान में अपने प्राणों की आहुति दी। अतः दयानन्द के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि राजस्थान के आर्यजन व आर्यसमाजें अपने नगर व ग्राम में असत्य, अधर्म, अन्धविश्वास व अविद्या अन्धकार मिटाने में अग्रसर हों।

—भगवती प्रसाद सिद्धान्त भास्कर
१९३१, पं० शिवदीन मार्ग,
कृष्णपोल बाजार, जयपुर

जीवन-यज्ञ

आयुर्यज्ञेन कल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पतां चक्षुर्यज्ञेन कल्पताँ श्रोत्रं यज्ञेन कल्पतां वाग्यज्ञेन कल्पतां मनो यज्ञेन कल्पतामात्मा यज्ञेन कल्पतां ब्रह्मा यज्ञेन कल्पतां ज्योतिर्यज्ञेन कल्पतां स्वर्यज्ञेन कल्पतां पृष्ठं यज्ञेन कल्पतां यज्ञो यज्ञेन कल्पताम्। स्तोमश्च यजुश्च ऋक् च साम च बृहच्च रथन्तरं च। स्वर्देवाऽअगन्मामृताऽअभूम प्रजापतेः प्रजाऽअभूम वेट् स्वाहा॥

—यजुर्वेद १८।२९

यज्ञ नाम है विष्णु ब्रह्म का, दे यज्ञ मोक्ष का आकर्षण।
सर्वस्व यज्ञ को अर्पित कर, यह मिला यज्ञ का सुख वर्षण॥
मम आयु यज्ञ को अर्पित है, प्रिय प्राण यज्ञ को अर्पित है,
मम चक्षु कर्ण मन वाणी, मम आत्म यज्ञ को अर्पित है।
निज ब्रह्म वेद की विद्याएँ, सम्पूर्ण यज्ञ की जो दर्पण।
सर्वस्व यज्ञ को अर्पित करूँ, यह मिला यज्ञ का सुख वर्षण॥

निज जगत् ज्योति सब स्वर्ग कुंज लोकाधारित भू पृष्ठ पुंज,
पुरुषार्थ यज्ञ मम श्रेष्ठ कर्म, सब उसे समर्पित गीत गुंज।
मम गीत स्तुति की आहुतियां हों यज्ञ देव हित कृति कर्षण।
सर्वस्व यज्ञ को अर्पित कर, यह मिला यज्ञ का सुख वर्षण॥

ऋक् यजु साम वन्दन अथर्व, इनके गाय जो गान सर्व,
बन प्रजा प्रजापति की अर्पित, हो पालन प्रभु आदेश पर्व।
हर कुशल क्षेम हो मोक्ष मगन, प्रभु ग्रहण हमारा हो तर्पण।
सर्वस्व यज्ञ को अर्पित कर, यह मिला यज्ञ का सुख वर्षण॥

रचयिता—देवनारायण भारद्वाज
एफ-४२ मानसरोवर कालोनी
रामघाट मार्ग, अलीगढ़

आर्यसमाज ग्रेटर कैलाश में राष्ट्र रक्षा सम्मेलन

२२ नवम्बर आर्यसमाज ग्रेटर नई दिल्ली का वार्षिकोत्सव धूमधाम से सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर अन्तिम दिन राष्ट्ररक्षा सम्मेलन आयोजित किया गया। जिसकी अध्यक्षता स्वामी सत्यप्रकाश जी ने की। इस अवसर पर बोलते हुए दैनिक वीर प्रताप के सम्पादक श्री के० नरेन्द्र ने कहा—हिन्दुओं में राजनैतिक जागृति की आज अधिक आवश्यकता है। दूसरे लोग अपने अपने अधिकारों को जैसे-तैसे प्राप्त कर ही लेते हैं। हिन्दुओं की समस्या है कि वे दूसरों से भी दबते हैं और सरकार भी उन्हें दबाती है। हिंदुओं के वोटों से जीते नेता भी उन्हें ही अंगूठा दिखा जाते हैं। आज हमें संगठित होकर देश की एकता और रक्षा का प्रयत्न करना चाहिए।

प० यशपाल सुधांशु ने कहा—देश की एकता और अखण्डता के प्रतीक भी बहुसंख्यक हिन्दू ही हैं जो और की अपेक्षा अधिक सहिष्णु हैं। सरकार को उनके सहिष्णु स्वभाव पर पक्षपात का बोझ नहीं डालना चाहिए। अन्यथा विस्फोट की सम्भावना से इनकार नहीं किया जा सकता। श्री पुरुषोत्तम एम०ए०, श्री श्यामसुन्दर स्नातक, श्री वेदकुमार ने अपने विचार व्यक्त किये।

अध्यक्ष स्वामी सत्यप्रकाश ने कहा—हिन्दुओं के अन्धविश्वास ही उन्हें एक होने से रोकते हैं। ऋषि दयानन्द के मन्तव्यों से एक हुआ जा सकता है। यदि यह एकता हो सके तभी सम्पूर्ण भारत देश को हम सुखद रूप से देख सकेंगे।

समारोह के बाद ऋषि लंगर का आयोजन किया। आर्यसमाज ग्रेटर कैलाश के अधिकारियों का प्रयास सराहनीय रहा। उपस्थिति बहुत अच्छी रही।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा श्रावणी पर्व अगस्त मास से नवम्बर मास तक किए गए वेदप्रचार की एक झलक

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा अपने जन्मकाल से ही वेदप्रचार कार्य में संलग्न है। सभा का मुख्य उद्देश्य दिल्ली की आर्यसमाजों तथा दिल्ली प्रान्त से बाहर की आने वाली मांग की पूर्ति करना है। हमारा प्रयत्न यही रहता है कि हम अधिक से अधिक कार्यक्रम सम्पन्न कराएं। सभा आर्यसमाजों की मांग के अनुसार संस्कारों, कथाओं व वेदिकोत्सवों, यज्ञों के कार्यक्रम सम्पन्न कराती है। इसके अतिरिक्त आर्य समाजों व परिवार के सत्संगों में भी उपदेशकों की व्यवस्था की जा रही है। सभा के वैतनिक तथा अवैतनिक उपदेशकों का सभा को पूरा-पूरा सहयोग प्राप्त हो रहा है। इस के लिए सभा उनके सहयोग के लिए आभार व्यक्त करती है। सभा ने आर्यसमाजों के सहयोग से जो वेदप्रचार कार्य श्रावणी पर्व से नवम्बर माह तक किया है। उसका ब्यौरा निम्न प्रकार है। हम यह मानते हैं कि यह कार्य बहुत कम है। वेद का सन्देश नगर-नगर ग्राम ग्राम गली-गली, घर घर पहुंचे, यही हमारा प्रयत्न है। हमें पूरी आशा है कि आर्यसमाजों का सहयोग हमें इसी प्रकार मिलता रहा, तो हम इससे भी अधिक कार्य करने में सफल होंगे।

महात्मा रामकिशोर जी महोपदेशक

२ से ९ अगस्त आर्यसमाज अमर कालोनी (कथा), १० से १६ अगस्त आर्यसमाज राजेन्द्र नगर (यज्ञ), १७ से २३ अगस्त आर्यसमाज प्रताप नगर (कथा), २४ से ३० अगस्त आर्यसमाज राज नगर गाजियाबाद (कथा)। ७ से १३ सितम्बर आर्यसमाज गोविन्द पुरी (कथा), १४ से २० सितबर आर्यसमाज देव नगर (कथा), २७ से ३० सितबर विवेक विहार (यज्ञ), ५ से ११ अक्तूबर आर्यसमाज राम नगर गुडगांव (प्रात यज्ञ और रात्रि को वेदकथा), १९ से २५ अक्तूबर आर्यसमाज महरौली (वेदकथा), २६ से १ नवम्बर आर्यसमाज फिरोजपुर झिरका (वेदकथा) २ से ८ नवम्बर आर्यसमाज महावीर नगर (वेदकथा), १६ से २२ नवम्बर आर्यसमाज ए-२ ब्लाक, जनकपुरी (वेदकथा)।

पं० हरिदेव जी सि० भूषण महोपदेशक

२ अगस्त आर्यसमाज अशोक विहार (प्रवचन), ३ से ७ आर्यसमाज बोट क्लब १५ से १६ आर्यसमाज घोण्डा (वेदप्रवचन), २३ अगस्त आर्यसमाज पंजाबी बाग (वेद प्रवचन) ६ सितम्बर आर्यसमाज रमेश नगर (प्रवचन), १२ सितम्बर आर्यसमाज मोती बाग (प्रवचन) १४ से १८ सितम्बर आर्यसमाज बोट क्लब १२ से १६ अक्तूबर आर्यसमाज बोट क्लब १९ से २१ अक्तूबर आर्यसमाज बोट क्लब, २५ अक्तूबर आर्यसमाज झिलमिल कालोनी (वेदप्रवचन) २ से ६ नवम्बर आर्यसमाज बोट क्लब।

पं० सत्यदेव जी स्नातक भजनोपदेशक

६ से ८ अगस्त आर्यसमाज त्रि नगर, ९ से १६ अगस्त आर्यसमाज कैलाश अमर कैलाश-१ १७ से २१ अगस्त आर्यसमाज बोट क्लब २३ अगस्त आर्यसमाज रघुवरपुरा २४ से २८ अगस्त आर्यसमाज बोट क्लब ३० अगस्त आर्यसमाज अशोक विहार फेज २ १ से ४ सितम्बर आर्यसमाज बोट क्लब ११ से १३ सितम्बर आर्यसमाज गन्नौर शहर, १९ सितम्बर आर्यसमाज विनय नगर २१ से २५ आर्यसमाज बोट क्लब ३ से ४ अक्तूबर ग्राम ईसापुर (ग्राम प्रचार) ५ से ९ आर्यसमाज बोट क्लब १२ से १८ आर्यसमाज निमार्ण विहार, २६ से १ अक्तूबर आर्यसमाज मेन बाजार बल्लभगढ २५ अक्तूबर आर्यसमाज झिलमिल कालोनी ६ नवम्बर आर्यसमाज लाजपत नगर ९ से १२ नवम्बर आर्यसमाज आनंद विहार, हरि नगर, १६ से २२ नवम्बर आर्यसमाज ए-२ ब्लाक जनकपुरी २३ से २८ आर्यसमाज बोट क्लब, २९ नवम्बर आर्यसमाज जी० ब्लाक विकास पुरी।

पं० चुन्नीलाल जी आर्य भजनोपदेशक

१० से १४ अगस्त आर्यसमाज बोट क्लब, २ से १६ अगस्त आर्यसमाज करोल बाग, १७ से २३ अगस्त आर्यसमाज प्रताप नगर, ८ से ११ आर्यसमाज बोट क्लब, १२ सितम्बर आर्यसमाज मोती बाग, १४ से २० सितम्बर आर्यसमाज बिरला लाईन्स, १९ सितम्बर आर्यसमाज विनय नगर, ३ से ६ अक्तूबर आर्यसमाज कोसी कलां, १० से १२ अक्तूबर आर्यसमाज सेक्टर २२ ए० चण्डीगढ, १७ से १८ अक्तूबर आर्यसमाज सेक्टर ७ फरीदाबाद १९ से २५ आर्यसमाज महरौली, २६ से १ नवम्बर आर्यसमाज फिरोजपुर झिरका २६ से २८ आर्यसमाज बोट क्लब, ४-५ आर्यसमाज ग्राम ईसापुर (ग्राम प्रचार) ६ नवम्बर आर्यसमाज लाजपत नगर, ९ से १३ आर्यसमाज बोट क्लब १४ नवम्बर मुस्लिम पुरी गुरुद्वारा कालोनी में प्रचार।

पं० वेदव्यास जी आर्य भजनोपदेशक

६ से ८ अगस्त आर्यसमाज अमर कालोनी ९ से १६ अगस्त आर्यसमाज हनुमान रोड, १७ से २३ आर्यसमाज कटरा नील २४ से ३० अगस्त आर्यसमाज राज नगर, गाजियाबाद ७ से ३ सितम्बर आर्य समाज गोविन्द पुरी १४ से २० सितम्बर आर्यसमाज देव नगर, १९ सितम्बर आर्यसमाज विनय नगर, २३ से ४ अक्तूबर आर्यसमाज फैजाबाद (अयोध्या) ८ से ११ अक्तूबर आर्यसमाज आशा पार्क, १२ से १८ अक्तूबर आर्यसमाज से०-१४, सोनीपत, १९ से २१ आर्यसमाज बोट क्लब २३ अक्तूबर से १ नवम्बर आर्यसमाज अमर कालोनी, २ से ८ नवम्बर आर्यसमाज हनुमान रोड ६ नवम्बर आर्यसमाज लाजपत नगर, ९ से ११ नवम्बर आर्यसमाज सुन्दर विहार, १२ से १५ नवम्बर आर्य समाज प्रशान्त विहार १६ से २० नवम्बर आर्यसमाज बोट क्लब।

पं० ज्योतिप्रसाद जी ढोलक वादक

६ से ८ अगस्त आर्यसमाज त्रि नगर ९ से १६ अगस्त आर्यसमाज अमर कालोनी १७ से २३ अगस्त आर्यसमाज प्रताप नगर २४ से ३० अगस्त आर्यसमाज राज नगर गाजियाबाद, ७ से १० आर्यसमाज गोविंद पुरी, ११ से १३ सितम्बर आर्य समाज गन्नौर शहर १४ से २० सितम्बर आर्यसमाज देव नगर, १९ सितम्बर आर्यसमाज विनय नगर २८ से १ अक्तूबर आर्यसमाज बोट क्लब ३ ४ अक्तूबर आर्यसमाज ईसापुर (ग्राम प्रचार), ८ ९ अक्तूबर आर्यसमाज बोट क्लब, ८ से ११ अक्तूबर आर्यसमाज आशा पार्क, १२ से १५ आर्यसमाज निर्माण विहार, १६ से १८ अक्तूबर आर्यसमाज से०-१४ सोनीपत, १९ से २२ अक्तूबर आर्यसमाज महरौली, २३ से २५ अक्तूबर आर्यसमाज अमर कालोनी २९ से १ नवम्बर आर्यसमाज बल्लभगढ २ से ८ नवम्बर आर्यसमाज हनुमान रोड ६ नवम्बर आर्यसमाज लाजपत नगर ९ से १५ नवम्बर आर्यसमाज आनन्द विहार हरिनगर १६ से २२ नवम्बर आर्यसमाज ए-२ ब्लाक जनकपुरी ३० से ४ दिसम्बर बोट क्लब।

इसके अतिरिक्त सभा के वेद प्रचार अधिष्ठाता स्वामी स्वरूपानन्द जी महाराज ने २३ अगस्त को आर्यसमाज अशोक विहार फेज २, ३० अगस्त को आर्यसमाज राणा प्रताप बाग, ६ सितम्बर आर्यसमाज सफदरजंग इनक्लेव १३ सितम्बर आर्यसमाज विनय नगर, २८ अक्तूबर आर्यसमाज गगन विहार।

१३ अक्तूबर १९८७ को श्री सुरेशचन्द्र जी आर्य की माता जी स्व० बोहनी देवी जी के शान्ति यज्ञ पर कोम्पोकला में अपनी देखरेख में सारा कार्य सम्पन्न कराया।

३ व ४ अक्तूबर को ईसापुर ग्राम में रात्रि प्रचार का श्री श्रीकृष्ण आर्य जी के अथक परिश्रम से सभा के तत्त्वावधान में आयोजन किया गया। सभा के प्रचार वाहन द्वारा वेदप्रचार अधिष्ठाता स्वामी स्वरूपानन्द जी, पं० सत्यदेव जी स्नातक, महाशय जनार्दन देव श्री ज्योति प्रसाद जी ढोलकवादक और वेद-प्रचार व्यवस्थापक श्री जगदीशलाल जी सायं ६ बजे के लगभग पहुंचे। रात्रि ८ बजे से प्रचार का आयोजन था। प्रचार में लगभग ४०० ५०० आर्य बहन भाई बच्चे बड़ी श्रद्धा और लगन से श्री पं० सत्यदेव जी स्नातक तथा पं० जनार्दन जी के भजन तथा इतिहास को सुनते रहे। ४ अक्तूबर को प्रात यज्ञ का आयोजन रखा गया, जिसमें ग्रामीण जनता ने बड़ी श्रद्धा से इसमें भाग लिया। उसी दिन रात्रि को ८ से १ बजे तक प्रचार हुआ। सभा की ओर से इस प्रचार में 'मर्यादा पुरुषोत्तम राम' तथा 'पूजा किसकी?' नामक दो ट्रैक्ट सभी उपस्थित बहन-भाइयों में बटवाये गये। प्रचार कार्यक्रम में सामूहिक यज्ञोपवीत का भी कार्यक्रम आयोजित था, जिसमें ५० नवयुवकों

(शेष पृष्ठ ९ पर)

प्रेमचंद : चित्रात्मक जीवनी
एक अभिनव प्रशंसनीय प्रयास

प्रेमचद हिंदी के ही नहीं समग्र भारतीय साहित्य के महान् कथाकार थे। उनके साहित्य मे निहित मानवता, करुणा और दुर्बल वर्ग के हित के लिए सघर्ष की चेतना उनकी जीवननिष्ठा से ही उपजी प्रवृत्तियां हैं। प्रेमचन्द उन विरल कथाकारों में से हैं, जिन्होंने कथनी और करनी को भरसक एक बनाये रखने का आजीवन प्रयास किया था। ऐसे कथाकार के जीवन को समझे बिना उसके साहित्य को समझ पाना कठिन है, अत प्रेमचद की प्रामाणिक जीवनी पुस्तक प्रस्तुत करने की हर छोटी-बडी प्रचेष्टा अभिनन्दनीय है।

फिर डा० कमलकिशोर गोयनका जैसे शोधक-तथ्य सग्रही और प्रेमचद के प्रति श्रद्धालु विद्वान् की लेखनी से प्रसूत प्रेमचन्द की जीवनी और भी अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि उसकी विश्वसनीयता में रचमात्र सन्देह नही किया जा सकता है। डा० गोयनका, 'प्रेमचन्द विश्वकोश' के प्रथम भाग के रूप में प्रेमचद की तारीख बार जीवनी प्रस्तुत करने का भगीरथ प्रयास सफलतापूर्वक सम्पन्न कर चुके हैं। हिंदी साहित्य मे इस प्रकार की जीवनी के लेखन का सूत्रपात करने का ऐतिहासिक श्रेय डा० कमलकिशोर गोयनका को ही प्राप्त है। डा० गोयनका ने अब प्रेमचद की सक्षिप्त जीवनी को चित्रात्मक बनाकर प्रस्तुत करने का उपयोगी और स्तुत्य कार्य किया है। बडे आकार के ६७ पृष्ठो को इस पुस्तक में दाहिनी तरफ प्रेमचन्द का जीवनवृत्त और बायीं तरफ उनका वश-वृक्ष, उनके तथा उनके रिश्तेदारो, सहयोगियों, मित्रो के चित्र तथा उनके जीवन से सम्बद्ध पत्र-पत्रिकाओं, पुस्तकों, रचनाओं तथा अन्य उपयोगी दस्तावेजों के छाया चित्र प्रकाशित किये गए हैं। १२ प्वाइट बोल्ड टाइप मे छपा यह जीवनवृत्त किशोरों और नवसाक्षर प्रौढों के लिए समान रूप से सुख पाठ्य सिद्ध होगा। वैसे यह प्रत्येक उस पाठक के लिए उपयोगी है जो प्रेमचन्द के जीवन के सम्बन्ध में प्रामाणिक जानकारी चाहता है। वस्तुगत सूचनात्मक शैली में लिखित यह जीवनवृत्त प्रेमचन्द के जीवन की प्रामाणिक जानकारी देगा और भावुकता का घटाटोप किये बिना उसके महत्व को सहज रूप से उजागर करेगा। कई दुर्लभ चित्रों एव दस्तावेजों को हिंदी के पाठक इसके माध्यम से सम्भवत: पहली बार देखने का सुयोग पायेंगे। इस जीवनी के अन्त में प्रेमचन्द के समस्त साहित्य का काल-क्रमिक विवरण प्रस्तुत कर और नामानुक्रमणिका जोड कर लेखक ने इसे और भी अधिक उपयोगी बना दिया है।

मेरा विश्वास है कि इस पुस्तक के प्रकाशन का व्यापक रूप से स्वागत होगा और विद्यालय के छात्रों को उपहार देने के लिए या नवसाक्षरों के पुस्तकालयों में सकलित करने के लिए यह पुस्तक निर्विवाद रूप से उपयोगी सिद्ध होगी।

प्रेमचन्द · चित्रात्मक जीवनी—लेखक डा० कमल किशोर गोयनका, **प्रकाशक**—पीताम्बर पब्लिशिंग कम्पनी, ८८८ ईस्ट पार्क रोड, करौलबाग, नयी दिल्ली-११०००५, मूल्य—२० रुपये, हार्ड कवर—५० रुपये।

—प्रो० विष्णुकान्त शास्त्री
प्रोफेसर, हिंदी विभाग
कलकत्ता विश्वविद्यालय, कलकत्ता

प्रान्तीय आर्य युवा महासम्मेलन सम्पन्न

दिल्ली। केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् के तत्वावधान में कमला नेहरू पार्क, पुरानी सब्जी मण्डी, दिल्ली-७ में "प्रान्तीय आर्य युवा महासम्मेलन" २२ नवम्बर १९८७ को आयोजित किया गया। जिसमें प्रात ९ बजे 'स्वस्ति यज्ञ' प० धर्मेन्द्र पाल शास्त्री के ब्रह्मत्व में हुआ। जिसमें याज्ञिकों ने केसरिया वस्त्र धारण कर भाग लिया। प० आशानन्द जी के भजन एव स्वामी जगदीश्वरानन्द के प्रवचन हुए। यज्ञ-प्रसाद के उपरान्त यज्ञ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

विशेष—इस बृहत् समारोह पर आर्यसमाज आर्यपुरा, सब्जी मण्डी, दिल्ली-७ की ओर से एक मुसलमान भाई की शुद्धि की गयी। उनका नाम दुर्गाप्रसाद रखा गया। सभी उपस्थित नर-नारियों ने भाई की दीर्घायु की कामना करते हुए प्रभु से प्रार्थना की कि ऐसी शक्ति-सामर्थ्य देवें जिससे वे इस व्रत को पालने में समर्थ होवें।

नव जीव दया मण्डल ने इस अवसर पर शाकाहार व नशाबन्दी प्रदर्शनी का भी आयोजन किया।

—चन्द्रमोहन आर्य
प्रेस सचिव

गुरुकुल का ब्रह्मचारी हलचल मचा के आया

विदेशों में हलचल मचाने वाला ब्रह्मचारी विश्वपाल जयन्त जिसने "आधुनिक भीम" का नाम सार्थक करते हुए योग, ब्रह्मचर्य और वैदिक सस्कृति के प्रति विदेशियों मे अनुराग पैदा किया। गुरुकुल महाविद्यालय कण्वाश्रम के सस्थापक, केन्द्रीय आर्य युवक परिषद के उपाध्यक्ष आधुनिक भीम ब्र० विश्वपाल जयन्त ने कनाडा के प्रमुख शहरों में योग कैम्पों बेंकुवर सासकटून, ट्यूम्बर, ओज, एडमिन्टन, टोरन्टो में जहां पर अपने योग के द्वारा अनेक असाध्य रोगियों को नीरोग किया। जिसमे दमा, ब्लड प्रेशर, गठिया, डायबिटीज, सिर दर्द, हृदय रोग, दौर्बल्यता, कमर दर्द, एलर्जी आदि। आप ७ से ८ तक नाडी परीक्षण, ८ से १० बजे तक तथा साय काल ७ से ९ बजे तक योगाभ्यास कराते थे।

आप का शारीरिक प्रदर्शन टोरन्टो, बेंकुवर में भारी सफलता के साथ हुआ, जिसके मुख्य अतिथि भारत के कौन्सलर श्री वी० पी० सिंह थे। आप ने कनाडा के कई प्रदेशों में विश्व योग हैल्थ सेन्टर की स्थापना की। बेंकुवर (कनाडा) के दैनिक समाचार पत्रों में ब्र० जयन्त के सन्दर्भ में वैदिक धर्म के अभ्युदय एव नि श्रेयसकारी सिद्धान्तों की खूब चर्चा रही।

आर्यसमाज का इतिहास

सपादक डा० सत्यकेतु विद्यालकार

सात-सात सौ से भी अधिक पृष्ठों के सात भागों में आर्यसमाज का विस्तृत इतिहास सम्पादित व प्रकाशित करने का जो कार्य हम ने प्रारम्भ किया था, वह अब पूर्ण होने को है। उसके छ भाग प्रकाशित हो चुके हैं और सातवां भाग मई १९८८ तक छपकर तैयार हो जाएगा। यह इतिहास आर्यसमाज के विश्वकोष के समान है, जिसे सब आर्यसमाजों तथा शिक्षण-सस्थाओं के पुस्तकालयों में अवश्य ही रहना चाहिए।

'इतिहास' के प्रत्येक भाग का मूल्य एक सौ रुपये (पुस्तकालय सस्करण का एक सौ पच्चीस रुपये) है, पर सातों भागों के पूरे सैट का मूल्य केवल पांच सौ रुपये रखा गया है। पहले भाग की बहुत थोडी-सी प्रतियां अब शेष बची हैं। अत जो महानुभाव 'इतिहास' का पूरा सैट लेना चाहें, वे शीघ्र पांच सौ रुपये भेजने की कृपा करें, जिनके प्राप्त होते ही छ भाग तुरन्त उनकी सेवा में भेज दिये जायेंगे और सातवां भाग मई १९८८ में उनके पते पर पहुचा दिया जाएगा। पहले भाग के समाप्त हो जाने पर पूरा सैट प्राप्त कर सकना सम्भव नहीं रहेगा।

आर्य बन्धुओं से यह भी प्रार्थना है कि आर्यों द्वारा जो विविध ट्रस्ट व स्थायी निधियां स्थापित हैं, उनके विवरण भी हमें शीघ्र भिजवाने की कृपा करें, ताकि सातवें भाग में उन्हें प्रकाशित किया जा सके।

आर्य स्वाध्याय केन्द्र
ए-१/३२ सफदरजंग एन्क्लेव,
नई दिल्ली-२९
फोन : ६०१५३९

अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेद पीठ

के तत्त्वावधान मे आयोजित

महत्त्वपूर्ण संगोष्ठी

रविवार, २९ नवम्बर १९८७, प्रात· ११ बजे

विषय—आधुनिक जीवन के सन्दर्भ में वेदों का महत्त्व

स्थान आर्यसमाज, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली

अध्यक्ष—स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती

आमन्त्रित वक्ता—डा० भवानीलाल भारतीय, डा० फतेहसिंह, डा० जी० वी० के० हूजा, श्री ब्रह्ममित्र अवस्थी, डा० जयपाल वेदालकार, डा० रूप किशोर, डा० प्रशस्यमित्र शास्त्री।

प्रो० शेरसिंह (प्रधान)

स्व० श्रीमती शकुन्तलापुरी का जीवन परिचय



श्रीमती शकुन्तला पुरी का जन्म जालन्धर नगर (पजाब) मे दिनांक २७।३।१९१५ में हुआ था। जिनकी शादी श्री हरवंशलाल पुरी के साथ दि० १२।१०।१९३२ में हुई। माता शकुन्तलापुरी के सुन्दर पवित्र वैदिक विचार प्रचार-प्रसार मे व्यतीत होते थे। वे एक साध्वी पतिव्रत धर्म व्रत पालक थी। आर्यसमाज के लिए सदैव समय निकाल कर अग्रसर होकर कार्यरत रहती थी। महात्मा प्रभु आश्रित जी से यज्ञ की प्रेरणा प्राप्त हुई। जिससे आप दैनिक यज्ञादि स्वाध्याय करती रही थीं। आर्यसमाज के भवन निर्माण के कार्य-भोगल, जगपुरा, कालका जी और रामाकृष्णपुरम के विशेष महान् कार्य में आपने अपना पूर्ण सहयोग प्रदान किया। माता जी शोभा यात्राओं मे गीत गा गाकर वैदिक धर्म का प्रचार करती रहती थीं। आप पति व पत्नी मिलकर आर्यसमाज के कार्य में संलग्न रहा करते थे। किन्तु यह शरीर नश्वर है। एक दिन सब को जाना होता है—

हर खिलौना फूटना है एक दिन।
हर कली को टूटना है एक दिन॥

माता जी को कैंसर रोग हो गया, रुग्ण हो गई वैद्यादि चिकित्सा द्वारा रोगोपचार कराया गया मगर यह क्रूर काल निर्दयी चुपके-चुपके ताक लगाता रहा और दि० २१।४।१९८७ को माता जी का देहावसान हो गया।

इस हृदय बिदारक घटना से,
शोकित सारा परिवार हुआ।
थे अश्रु भरे नयना सबके
पछी जब कहा फरार हुआ॥

माता जी का मृतक शरीर निहारकर परिवार जन फूट-फूट-कर रोने लगे। मगर इस काल के समक्ष योगी, यती, भूपाल, योधादि किसी को भी नहीं चलती है। माता जी के मृत देह को घृत, चन्दन, सामग्री, कपूर, समिधाओं द्वारा अग्नि को अर्पण कर दिया गया।

ईश्वर उनकी आत्मा को सद्-गति एवं परिवारजनों को शान्ति व दुःख सहन की शक्ति प्रदान करे। जिससे वे उनके चलाये हुए यज्ञादि कार्य का अनुष्ठान (कार्यक्रम) श्रद्धा-पूर्वक चलाते रहे, और सर्वदा आनन्द में रहें।

सदा सदा के लिए माता का,
सब पर आशीर्वाद रहेगा।
शेष यही चौबीस अप्रैल,
उन्नीस सौ सतासी याद रहेगा।

श्रद्धाञ्जलि
स्वरूपानन्द सरस्वती

दान देने का सुअवसर

आर्य जगत् की शान

माता चन्ननदेवी आर्य धर्मार्थ चिकित्सालय

सी-१, जनकपुरी, नई दिल्ली-११००५८
के
भवन निर्माण के लिए
निम्न भवन-सामग्री की आवश्यकता है।
दिल खोलकर दान दीजिये

लोहा	६०००/- प्रति टन
ईंट	१२००/- प्रति ट्रक
रोड़ी	७००/- प्रति ट्रक
स्टोन डस्ट	७५०/- प्रति ट्रक
सीमेंट	६५/- प्रति बोरी

जो सज्जन भवन निर्माण सामग्री देना चाहे तो उनका नाम दानदाता सूची पर लिखा जायेगा।

भवन-निर्माण के लिए भेजी गई राशि नकद/मनीआर्डर/चैक/बैंक ड्राफ्ट द्वारा—

माता चन्ननदेवी आर्य धर्मार्थ चिकित्सालय,
सी-१, मेन बस स्टाप जनकपुरी, नई दिल्ली-११००५८
के पते पर भेजी जाये।

दान दी गयी राशि आयकर अधिनियम जी-८० के अन्तर्गत करमुक्त होगी।

— निवेदक —

ओमकाश आर्य (मन्त्री)
ला० गुरमुखदास ग्रोवर (कार्यकारी अध्यक्ष)

महाशय धर्मपाल से भेंट

(पृष्ठ ३ का शेष)

चाहते थे, इस लिए उनसे बात नहीं बन सकी। फिर प्रधान मंत्री इंदिरा-गांधी ने जून १९७५ मे भारत में आपात स्थिति लागू करने की घोषणा कर दी, जिसमे सारे भारत मे सामाजिक गतिविधियां प्रायः रुक सी गयी।

समर्थ शिक्षा समिति से बात न बनने के कारण महाशय जी से इस पर पुनः विचार-विमर्श हुआ। श्री सम्पति राय शास्त्री की प्रेरणा से तथा डा० जगदीश लाल कालड़ा के सक्रिय सहयोग से, इस समाज मन्दिर में आंखों का एक निःशुल्क चिकित्सालय खोलने का निश्चय किया गया। १० नवम्बर १९७५ दैनिक वीर अर्जुन के सम्पादक श्री के० नरेन्द्र के कर कमलो द्वारा इस चिकित्सालय का विधिवत् १० बिस्तरों के साथ उद्घाटन किया गया। प० जवाहरलाल नेहरू की ८५वीं जयन्ती १४ नवम्बर १९७५ को कार्यकारी पार्षद चौ० हीरा सिंह की अध्यक्षता में आंखों के आपरेशन शुरू किये गए। उस समय ट्रस्ट द्वारा इस पर लगभग एक लाख १० हजार रुपये व्यय किए गए। महाशय धर्मपाल जी ने उस समय मुझे कहा कि एक लाख १० हजार रुपये जो ट्रस्ट ने लगाये हैं उसकी तो कोई बात नहीं वह लग चुके हैं, लेकिन यह जो दो हजार रुपये प्रति माह इन १० बिस्तरों वाले चिकित्सालय का खर्च होगा, वह बड़ा कठिन काम मेरे सामने है। मैंने कहा जिस प्रभु ने यहां तक हमें पहुंचाया है, वह आगे भी सब ठीक करेगा। सन् १९७७ तक यह चिकित्सालय ३० बिस्तरों का हो गया। और इसने प्रधान मन्त्री जी के २० सूत्री कार्य-क्रम में अन्धापन निवारण का जो सक्रिय सहयोग किया, सरकारी क्षेत्रों में भी प्रधानमन्त्री द्वारा इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की गयी। और इसे सरकार का भी पूरा सहयोग मिला। इस चिकित्सालय का नाम माता चन्नन देवी आर्य धर्मार्थ नेत्र चिकि-त्सालय रखा गया।

दानी महानुभावों के लिए शुभ अवसर

आर्यसमाज मन्दिर न्यू मोती नगर में ३३"×४३" का व्याकरण के सूर्य युग प्रवर्तक आदित्य ब्रह्म-चारी महर्षि दयानन्द जी के गुरु जी के नाम से "स्वामी विरजानन्द वैदिक सत्संग भवन" यज्ञशाला के द्वार निर्माण के लिए निम्न सामग्री की आवश्यकता है, दानी महानुभाव दिल खोल कर दान देने की कृपा करें।

यज्ञशाला के चारों द्वारों के लिए सागवान की लकड़ी, फर्श के लिए मारबल या हरा पत्थर, सीमेण्ट, लोहा (सरिया) दान देने वाले महा-नुभावों की इच्छानुसार उनका नाम शिलालेख पर लिखा जाएगा।

इस पवित्र निर्माण कार्य के लिए भेजी गई राशि नकद/चैक/बैंक ड्राफ्ट द्वारा 'आर्यसमाज मन्दिर, न्यू मोती नगर, नई दिल्ली-११००१५' के पते पर भेजें।

विनीत,

तीर्थराम आर्य (प्रधान)
राधेश्याम आर्य (कोषाध्यक्ष)

(पृष्ठ ७ का शेष)

ने सामूहिक यज्ञोपवीत धारण किये। कार्यक्रम पूर्ण रूप से सफल रहा। ग्रामीण जनता ने सभा के कार्य-कर्ताओं से प्रार्थना की कि समय-समय पर हमारे ग्राम में ऐसे प्रचार का आयोजन किया जाता रहे ताकि हम धर्म लाभ उठा सकें। इस अव-सर पर ग्रामीण जनता ने अपनी श्रद्धा तथा सामर्थ्य के अनुसार सभा के वेदप्रचार निमित्त दान भी दिया।
—जगदीश लाल, वेदप्रचार विभाग

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री योगेन्द्र पाल सेठ द्वारा सभा के अधिकारी तथा अन्तरंग सभा के सदस्यों की घोषणा

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के साधारण अधिवेशन तिथि ४ अक्तूबर १९८७ के चुनाव में श्री योगेन्द्र पाल जी सेठ को सर्वसम्मति से प्रधान चुना गया था। इनके मुकाबले में श्री वीरेन्द्र जी का नाम भी आया था परन्तु श्री वीरेन्द्र जी को आर्यों की शिरोमणि सभा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने अपने पत्र तिथि २४।९।१९८७ द्वारा सभा के प्रधान पद से हटा दिया था तथा साथ ही इन्हें आर्यसमाज से सम्बन्धित किसी भी संस्था के चुनाव पद के लिए अयोग्य घोषित कर दिया गया था। अत इस प्रस्ताव के आधार पर श्री वीरेन्द्र जी उस चुनाव में प्रधान पद के अयोग्य थे तथा श्री योगेन्द्र पाल सेठ के मुकाबले में अन्य कोई भी योग्य प्रत्याशी न होने के कारण श्री सेठ जी ही वैधानिक तौर पर आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के १९८७-८८ सत्र के लिए निर्वाचित घोषित हुए थे।

सार्वदेशिक सभा ने अपने पत्र दिनांक ८।१०।८७ द्वारा इस निर्वाचन की सूक्ष्म तथा विस्तृत जानकारी चौ० ऋषिपाल सिंह जी एडवोकेट, जालन्धर से मांगी थी जिसकी उपयुक्त व सही पूरी पूरी लिखित रूप में जानकारी दिनांक १६।१०।८७ को सार्वदेशिक सभा को भेजी गई थी। इस रिपोर्ट के आधार पर सार्वदेशिक सभा ने श्री योगेन्द्र पाल सेठ तथा चौधरी ऋषिपाल सिंह एडवोकेट को २६।१०।८७ के पत्र द्वारा उन्हें ४।११।८७ को दिल्ली आकर कार्यालय में मान्य प्रधान जी एवं मान्य मन्त्री जी को मिलने का आदेश दिया था। दोनों महानुभाव सभा आदेशानुसार ४।११।८७ को दिल्ली गए और वहां उन्हें सार्वदेशिक सभा ने सूचित किया कि श्री वीरेन्द्र जी का निर्वाचन तथा उनकी बनाई हुई सभा अनधिकृत एवं अवैधानिक है।

दिनांक ४ [illegible] ०।८७ को साधारण सभा ने एक प्रस्ताव के द्वारा प्रधान जी को यह अधिकार भी दिया था कि वह सभा के अन्य अधिकारी व अन्तरंग सभा के [illegible] आदि को मनोनीत कर लें।

अतः प्रधान श्री योगेन्द्र पाल सेठ ने इस अधिकार के आधार पर निम्नलिखित अधिकारी व अन्तरंग सदस्य मनोनीत किए हैं।

पंजाब की वर्तमान स्थिति को ध्यान में रखते हुए तथा श्री वीरेन्द्र जी की पद लोलुपता के कारण [illegible] सार्वदेशिक सभा से [illegible] कई वर्षों से अनुशासनहीनता करते चले आ रहे हैं वह अब उनके द्वारा बनाए हुए विधान को भी मान्यता नहीं देते। अतः इन बातों को ध्यान में रखते हुए पंजाब को आर्यसमाजों के प्रतिनिधियों को यह पग उठाना पड़ा।

सभा अधिकारी

१ प्रधान—श्री योगेन्द्र पाल जी सेठ जालन्धर
२ उपप्रधान—वैद्य [illegible] जी [illegible]
३ उपप्रधान श्री [illegible] लुधियाना
४ उपप्रधान—श्री [illegible] जालन्धर
५ उपप्रधान श्री [illegible] भटिण्डा
६ महामन्त्री—श्री चौ० ऋषिपाल [illegible] एडवोकेट जालन्धर
७ मन्त्री श्री [illegible]
८ मन्त्री—डा० [illegible] लुधियाना
९ मन्त्री—श्री [illegible] लुधियाना
१० मन्त्री—प्रि० बलभद्र जी मल्होत्रा, पटियाला
११ कोषाध्यक्ष—श्री अमृतलाल जी बजाज एडवोकेट जालन्धर
१२ प्रस्तोता आर्य विद्या परिषद श्री धर्मप्रकाश दत्त नवांशहर
१३ अधिष्ठाता नारी [illegible] विभाग—श्री [illegible] कमला जी आर्या पक्का बाग जालन्धर
१४ वेदप्रचार अधिष्ठाता श्री [illegible] जी कोछड़, जालन्धर
१५ अधिष्ठाता आर्य वीर दल—श्री यशपाल जी भाटिया बरनाला

सदस्य अन्तरंग सभा जिला प्रतिनिधि—

१६ श्री रोशनलाल जी कपूरथला
१७ „ [illegible] जी [illegible] बटाला
१८ राकेश कुमार मेहरा अमृतसर
१९ , लालचन्द जी मेहरा एडवोकेट, जालन्धर
२० , वेदप्रकाश सरीन, नवां शहर
२१ श्री प्रोफसर स्वतन्त्र कुमार जी, पठानकोट
२२ „ विजय कुमार मण्डी, अहमदगढ़
२३ डा० केवल कृष्ण विधायक (पूर्वमन्त्री पंजाब) मुकेरियां
२४ डा० राम स्वरूप जी लुधियाना
२५ श्री वेदप्रकाश मेहता पटियाला
२६ „ रामचन्द्र जी आर्य, फिरोजपुर छावनी
२७ , सत्यदेव जी रामा मण्डी (जिला भटिण्डा)
२८ माता परमेश्वरी देवी जी (मु० गोविन्दगढ़ जालन्धर)
२९ ज्ञानी गुरदयालसिंह जी लुधियाना

अन्तरंग सभा के प्रतिष्ठित सभासद—

३० श्री भीमसेन जी रायकोट
३१ , मलिक इन्द्रसेन जी जालन्धर छावनी
३२ „ रामकृष्ण महाजन दीना नगर
३३ , वीरेन्द्र सभ्रवाल एडवोकेट जालन्धर
३४ प्रि० अमृतलाल [illegible]
३५ श्री जसवन्त राज ,
३६ , लालचन्द जी जुलका भोगपुर
३७ , कृष्णचन्द सोंधी बस्ती शेख
३८ , सुदेश कुमार जी बस्ती गुजां
३९ , जगदीश कुमार अग्रवाल मोगा
४० डा० कलाश नाथ फगवाड़ा
४१ श्री मुलखराज आर्य जालन्धर

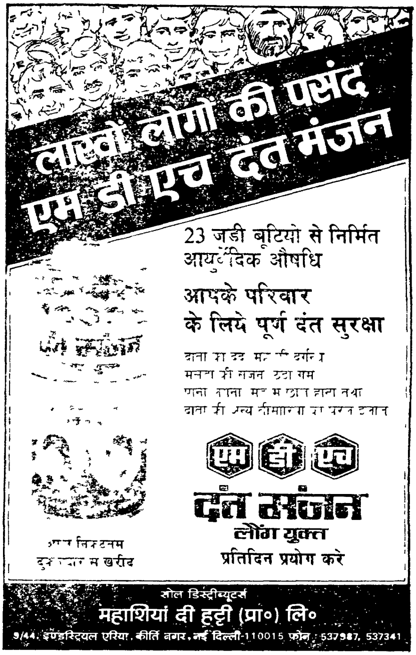
विशेष निमन्त्रित सदस्य—

१ चौ० रूपलाल एडवोकेट, चण्डीगढ़
२ श्री अजीतचन्द मंगला भटिण्डा
३ अमरनाथ भसीन लुधियाना
४ भक्त लाभचन्द जालन्धर
५ , प्रकाशचन्द कालड़ा जालन्धर
६ सुदर्शन लाल एडवोकेट जालन्धर
७ आचार्य तलवार किशनपुरा जालन्धर
८ मनोहरलाल चोपड़ा फगवाड़ा
९ जयप्रकाश मन्त्री समाज [illegible] पटियाला
१० शोभराज मन्त्री माजरा पटियाला
११ , वैद्य ईश्वरदास सन्तौर पटियाला
१२ श्रीमती सुशीला भक्त जालन्धर
१३ श्री करतार नाथ ठेकेदार जालन्धर
१४ डा० कैलाश नाथ भारद्वाज फगवाड़ा
१५ श्री जगदीश नारायण बस्ती गुजां, जालन्धर
१६ विजय कुमार प्रीत नगर, जालन्धर
१७ , ललित बजाज फिरोजपुर
१८ सुभाष मित्तल पठानकोट
१९ , इन्द्रराज शर्मा चण्डीगढ़
२० , राम रखा मल अमृतसर
२१ डा० रामनाथ शर्मा अमृतसर
२२ श्री सुभाष भाटिया अमृतसर
२३ नरेन्द्रसिंह भल्ला, आर्यसमाज दाल बाजार, लुधियाना
२४ रमेश कुमार, माडल हाउस, जालन्धर
२५ जसवन्त राज ठेकेदार जालन्धर
२६ „ प्रीतम देव जी मोगा
२७ प० रामप्रताप जी, जालन्धर
२८ श्री अशोक आर्य गुरदासपुर
२९ , नरेश कुमार जालन्धर
३० „ यशवन्त जी जोशी किशनपुरा, जालन्धर।

नोट—सभा कार्य संचालन के लिए उप-समितियों की घोषणा, प्रथम अन्तरंग सभा की बैठक के बाद की जाएगी।

—चौ० ऋषिपाल सिंह, एडवोकेट


एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर
निमाता
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9 44 इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर
नई दिल्ली 110015
539609 537987 537341


लाखों लोगों की पसंद
एम डी एच दंत मंजन
23 जड़ी बूटियों से निर्मित
आयुर्वेदिक औषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दंत सुरक्षा
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
प्रतिदिन प्रयोग करें
सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9/44, इंडस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-110015 फोन : 537987, 537341


आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
अजमल खान रोड
करोल बाग
नई दिल्ली-110005
फोन 582036 5715878
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
alignpoint

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N No. 32387/77 Post in N.D P.S.O. on 26, 27-11-87 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
रजि० नं० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् का युवा सम्मेलन सम्पन्न

केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् द्वारा आयोजित आर्य युवा सम्मेलन बडे उत्साह से सम्पन्न हुआ। अनेक प्रदेशों से आए हुए आर्य वीरों का उत्साह देखने योग्य था। दिल्ली के अनेक स्थानो से युवा जन एकत्रित हुए। इस अवसर पर श्री हीरालाल चावला ने अध्यक्षता की। वक्ताओं में थे स्वामी जगदीश्वरानन्द, श्री राजगुरु शर्मा, श्री क्षितीश वेदालंकार, श्री आनन्द चौहान, श्री अनिल आर्य, श्री रामनाथ सहगल। वक्ताओं ने युवा शक्ति का आह्वान किया और कहा कि निराश होने की आवश्यकता नहीं, हिम्मत से अपने कार्य मे लगे रहो। जनसमर्थन तुम्हें मिलता ही रहेगा।

कार्यक्रम में श्री विश्वपाल जयन्त को सम्मानित किया तथा उन्हें शील्ड भी प्रदान की गई।

इस अवसर पर अन्त में युवकों द्वारा दिखाए शस्त्र-प्रदर्शन से रोमाञ्चकारी दृश्य उपस्थित हो गया। मार्ग के भी हजारों लोग उमड पडे। कार्यक्रम मे श्री गुलाब सिंह राघव ने मधुर भजनों से तरंगित किया। ●

युवा संचेतना

(पृष्ठ १ का शेष)

शिविर बडा उत्साहवर्धक रहा है। इस समय दिल्ली में लगभग ८ स्थानो पर आर्य वीर दल की शाखाएँ चल रही हैं और अनेक नई शाखाएँ खोलने पर भी विचार चल रहा है। हमारे योग्य प्रशिक्षक इस कार्य के लिए निरन्तर जुटे हुए हैं। हमारी कामना है और अधिक क्षेत्रों में और अधिक शक्ति से हम आर्य युवाओ के लिए काम कर सकें। इस के लिए उपयुक्त सुझाव तथा तन मन धन का सहयोग भी चाहिए जो आप सब आर्यजनों की कृपा से हमें मिल सकेगा। ●

गुरुकुल गौतम नगर नई दिल्ली भव्य समारोह

गुरुकुल गौतम नगर नई दिल्ली के वार्षिकोत्सव के अवसर पर चतुर्वेद पारायण यज्ञ का आयोजन किया गया जिसके ब्रह्मा थे स्वामी दीक्षानन्द। यह कार्यक्रम १ नवबर से प्रारम्भ होकर २२ नवबर तक चला। इस अवसर पर श्री सत्यपाल पथिक एव श्री ओमप्रकाश वर्मा के मधुर भजन हुए।

उत्सव पर अनेक सम्मेलन भी हुए, जिन में प्रमुख थे—गुरुकुल सम्मेलन, आर्य महिला सम्मेलन, व्यायाम सम्मेलन, शिक्षा सम्मेलन, वेद सम्मेलन, सस्कृत रक्षा सम्मेलन। वक्ताओं में श्री स्वामी दीक्षानन्द, स्वामी जगदीश्वरानन्द, स्वामी विद्यानन्द, श्री शिवकुमार शास्त्री, श्री क्षितीश वेदालकार, श्री विश्वबन्धु शास्त्री, आचार्य हरिदेव, पं० यशपाल सुधांशु, श्री धर्मपाल शास्त्री आदि अनेक महानुभाव थे। व्यायाम सम्मेलन में गुरुकुल के ब्रह्मचारियों ने अद्‌भुत प्रदर्शन किया। जिसमें ब्रह्मचारी रामपाल श्री देवेन्द्र ने दो-दो जीपें रोकीं। श्री यशवन्त व ब्र० हृदयनाथ ने दो-दो कारें रोकीं। योगासन का प्रदर्शन भी बडा उत्तम था। इस अवसर पर सरिया मोडने का भी प्रदर्शन किया गया।

इस गुरुकुल के अनुशासित एव उत्साहवर्धन सचालन में श्री आचार्य हरिदेव का योगदान स्तुत्य है। ●

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री डा० धर्मपाल द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ८ | रविवार १३ दिसम्बर १९८७ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | पौष २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा की उपलब्धियाँ

विहंगम दृष्टि

वेद प्रचार

वैदिक धर्म का प्रचार और प्रसार करना आर्यसमाज का प्रथम कर्तव्य है। इस पुनीत कर्तव्य को निभाने के लिए दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा यथासम्भव प्रयत्नशील रही है। दिल्ली की आर्यसमाजों के साप्ताहिक सत्संगों में हमारे उपदेशकों ने धर्म प्रचार का कार्य सफलतापूर्वक निभाया है। वार्षिकोत्सव वेदकथाओं के माध्यम से वेदप्रचार अनवरत गति से होता ही रहता है। इन वर्षों में स्कूल कालेजों के साथ-साथ पार्कों और बडी कालोनियों में भी हम ने विशेष व्यवस्था करके आर्यसमाज और ऋषि दयानन्द के मन्तव्यों का प्रचार किया। झुग्गी-झोंपडी, कालोनियों और पुनर्वास कालोनियों में हमें प्रचार-कार्य में अच्छी सफलता मिली है।

नवीन आर्यसमाजों की स्थापना

नवीन आर्यसमाजों की कई स्थानों पर स्थापना की गई है जिस में संगम विहार, पुष्पाञ्जलि विहार, विकासपुरी, मयूर विहार, आर्यसमाज पंजाबी बाग एक्सटेंशन, सुन्दर विहार आदि प्रमुख हैं। कमजोर आर्यसमाजों में आर्थिक बल द्वारा शक्ति फूंकी गयी है। इस वर्ष आर्यसमाज झिलमिल कालोनी और आर्यसमाज निर्माण विहार के लिए दान भी दिया गया तथा अपील कर संग्रह भी कराया गया। आर्यसमाज निर्माण विहार के लिए अपील करने पर ४० हजार रुपये समारोह में एकत्र हो गये। यह अनुकरणीय कार्य हुआ।

आर्यसमाज की सम्पत्ति की सुरक्षा के लिए संघर्ष

आर्यसमाज अपने जन्मकाल से ही सामयिक चुनौतियों का उत्तर देता चला आ रहा है। इस वर्ष आर्यसमाज किंग्जवे कैम्प और आर्यसमाज पंजाबी बाग एक्सटेंशन में दिल्ली नगर निगम द्वारा भवन गिराऊ दस्ता भेजा गया जिस के द्वारा आर्यसमाज के भवनों को तोडने की साजिश हुई। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के नेतृत्व के साथ ऋषि दयानन्द के अनुयायियों ने डट कर लोहा लिया, जिसके परिणामस्वरूप हमें पूर्ण सफलता मिली। आर्यसमाज किंग्जवे कैम्प अपने स्थान पर गरिमा पूर्ण खडा है और आर्यसमाज पंजाबी बाग एक्सटेंशन अपने आकार को विस्तार दे रहा है।

आर्यसन्देश

सभा की प्रमुख वाणी आर्यसन्देश को और अधिक मुखरित किया गया। इस पत्र के प्रखर स्वरूप को जनसमुदाय ने बढचढकर सराहा है। हमारे इस पत्र की लोकप्रियता में इसके विशेषांकों का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आर्यसन्देश इस समय भारत के सभी प्रान्तों में जाता है और विदेशों में भी तीन देशों में जा रहा है। अब हमें डी० ए० वी० पी० के विज्ञापन भी मिलने लगे हैं।

साहित्य प्रकाशन

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रकाशन में १९८४ में केवल दो छोटी पुस्तिकाएँ थीं। इस समय अब तक तीस पुस्तकें सभा द्वारा प्रकाशित की जा चुकी हैं। सभा प्रकाशनों की मांग निरन्तर बढ रही है। इस समय सभा में दो लाख रुपये की पुस्तकों का स्टाक है। प्रायः प्रकाशन विभाग में घाटा होता है परन्तु हमें इसमें अच्छी सफलता मिली है। इस मद में ४२००० रुपये की स्थायी निधि साहित्यनिधि है।

साहित्य वितरण

आर्यसमाज क्या है? पूजा किस की?, मर्यादा पुरुषोत्तम श्री राम, योगेश्वर श्रीकृष्ण जैसी पुस्तिकाएँ ग्रामों और नगर में उपयुक्त स्थानों पर बांटी गयी। विजयादशमी पर श्री राम के ट्रैक्टों को भारी भीड में वितरित किया गया। इसी प्रकार जन्माष्टमी के अवसर पर विशाल मन्दिरों की भीड में श्रीकृष्ण के वास्तविक स्वरूप के ट्रैक्टों को वितरित किया गया। इसका जनसमुदाय पर काफी अच्छा प्रभाव पडा है, जिससे प्रभावित लोगों ने सभा के नाम पत्र लिखकर आभार व्यक्त किया।

युवाओं का सशक्त संगठन आर्य वीर दल

सभा ने आर्य वीर दल को स्थापित करने का प्रबल प्रयास किया है। प्रति वर्ष युवाओं को आर्यसमाज का सन्देश देने के लिए आर्य युवा महासम्मेलन किया जाता है। ग्रीष्मकालीन प्रशिक्षण शिविर भी आयोजित किए जाते हैं। पहले आर्य वीर दल का शिक्षक भी नियुक्त नहीं था, अब एक स्थायी शिक्षक नियुक्त किया गया है तथा अब दिल्ली और दिल्ली देहात में ८ शाखाएँ आर्य वीर दल की नित्य लग रही हैं जिस में लगभग १०० युवक प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं। आर्य वीर दल दिल्ली में अब अच्छे रूप में मुखर हुआ है।

चुनौतियों का उत्तर

पंजाब से आये विस्थापित भाई दिल्ली में लगभग २० हजार हैं। सर्दी से परेशान महिला और बच्चे खुले आकाश नीचे बैठे थे। ऐसी स्थिति में गर्म वस्त्रों और रजाइयों की तुरन्त बडी भारी आवश्यकता थी। उस समय सार्वदेशिक सभा के सान्निध्य में दिल्ली सभा ने उचित योगदान दिया।

पोप पाल का आगमन

पोप पाल के आगमन पर एक लाख हिन्दुओं को ईसाई बनाने की योजना थी जिसके विरुद्ध जन जागरण एवं सरकार को इस षड्यन्त्र के प्रति सचेष्ट करने का कार्य किया।

आर्य विद्या सभा

हरिद्वार में स्थित गुरुकुल कांगडी, गुरुकुल कांगडी फार्मेसी, स्वामी श्रद्धानन्द चिकित्सालय, डा० हरिराम आर्य इण्टर कालेज मायापुर, ज्वालापुर इण्टर कालेज ज्वालापुर, कन्या गुरुकुल देहरादून तथा पुण्य भूमि कांगडी ग्राम में स्थित संस्थाओं का संचालन आर्य विद्या सभा करती है। पहले दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा का इसमें समान प्रतिनिधित्व न था और प्रतिनिधियों को मताधिकार भी न था। हम ने सार्वदेशिक सभा के त्रिशासन सिद्धान्त के अनुसार आर्य विद्या सभा के गठन का अनुरोध किया और ३० नवम्बर १९८५ को गुरुकुल कांगडी के विद्या सभा भवन में सार्वदेशिक सभा के आदेशानुसार आर्य विद्या सभा का गठन किया। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने इसके विरुद्ध अभियोग स्थापित किया। दिसम्बर १९८६ में जालन्धर की कोर्ट ने निर्णय दिया कि तीनों सभाओं के नौ नौ प्रतिनिधि होंगे तथा सभी प्रतिनिधियों

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—डॉ० सच्चिदानन्द 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—डा० धर्मपाल

वरुण वरणीय है

विक्रमादित्य 'वसन्त'
बी ६४, राजाजीपुरम्, लखनऊ-२२६०१७

★

यत् किं चेद वरुण दैव्ये जनेऽभि-द्रोह मनुष्याश्चरामसि।
अ-चित्ती यत् तव धर्मा युयोपिम मा नस् तस्माद् एनसो देव रीरिषः॥

वसिष्ठः। वरुणः। जगती। ऋग्वेद ७।८९।५

अन्वय—वरुण! दैव्ये जने यत् किं च इद अभि-द्रोह मनुष्याः चरामसि, यत् तव धर्मा अ-चित्ती युयोपिम तस्मात् एनसः देव! नः मा रीरिषः।

अर्थ—रक्षक/आवरक! दैव्य जन के विषय में जो कुछ भी यह अभि-द्रोह मनुष्य हम करते हैं, जो तेरे धर्मों को चित्त-रहितता के कारण हम तोड़ते हैं उस पाप के हेतु से, देव! हमें न मारो।

— — —

इस मन्त्र में परमात्मा को 'वरुण' और 'देव' शब्दों से पुकारा गया है। परमात्मा को गुण-कर्मवाचक अनेक नाम भक्तों ने दिए हैं, एक सद् विप्रा बहु-धा वदन्ति। ऋग्वेद १।१६४।४६। परमात्मा को वेद में 'पुरु-हूत' कहा गया है। पुरु+हूत' वह होता है जो बहुत पुकारा जाता है, जिसे बारम्बार पुकारते हैं। उसे सुख मे पुकारने वाले विरले होते हैं पर दुख मे उसे सब पुकारते हैं पुन पुन पुकारते हैं, जैसा कि सन्त कबीर ने भी कहा था—

दुख मे ना सिमरन करे,
सुख मे करे न कोय।
जो सुख मे सिमरन करे,
तो दुख काहे को होय॥

साधारण जन उसे दुखों के निवारणार्थ अथवा स्वार्थपूर्ति के निमित्त पुकारते हैं पर साधक उठते बैठते, सोते-जागते, आत्मना उसे पुकारते ही रहते हैं क्योंकि आत्मा में उस परम की सच्ची लगन होती है और वे अपने प्रियतम के दर्शन और मिलन के बिना एक तड़प अनुभव करते हैं। साधकों के अन्त करण में देव और आसुरी वृत्तियों का जो सतत संघर्ष चलता रहता है उसमें अपने देवत्व की विजय के लिए, अपने जीवन सदन से अन्त शत्रुओं को निकालने के लिए आत्मशक्ति को सजोने के लिए भी वे उस सर्व-शक्तिमान् से शक्ति की सतत प्रार्थना करते हैं।

साधक परमात्मा को जब कर्म-वाचक नामों से सम्बोधित करते हैं तो उनका एकमात्र उद्देश्य होता है उस सर्वव्यापक के कर्मों के अनुकूल अपनी करनी को बनाना। विष्णो. कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे। इन्द्रस्य युज्य सखा। ऋग्वेद १।२२।१९ के अनुसार प्रभु उनका युक्त सखा है। विराट् विश्व मे उस के कर्मों को देखकर वे उसके अनुगामी बनते हैं। ऐसा करते हुए उनकी दृष्टि तद् विष्णो परम पद सदा पश्यन्ति सूरय। दिवीव चक्षुर् आ-ततम्। ऋग्वेद १।२२।२० के अनुसार उस परम ज्योतिर्मय के धाम पर लगी रहती है।

जहां वह परम देव 'सविता' है 'अंजन' (प्रकाशमय) है, आग्नेय गुणों से भरपूर 'अरुण' है वहां वह शान्तिप्रदाता 'वरुण' भी है। जल शान्तिदायक है। अतः जल के देव को भी वरुण कहते हैं। प्रस्तुत मन्त्र में परमात्मा का सम्बोधन, 'वरुण' उसके शान्तिमय गुणों का परि-चायक है। जब साधक परमात्मा को उसके गुणवाचक नामों से सम्बो-धित करते हैं तो उनका उद्देश्य होता है उन गुणों को धारण करना।

परमात्मा को विरले ही केवल उससे प्रणयार्थ स्मरण करते हैं। अन्यथा तो उसे सासारिक जन भले ही वे साधक भी हों, अपने लिए पुकारा करते हैं। गुणवाचक सम्बो-धन इस सत्य का दर्शन कराते हैं कि पुकारने वाले में उन गुणों का अभाव अथवा न्यूनता है।

हम मानव अपने में जो अशान्ति अनुभव करते हैं उसका मूल कारण है हमारे पाप। जिनके मनों में पाप भरे हैं वे सदैव अशान्त रहते हैं। परम देव शुद्ध, अ-पापविद्ध, यजुर्वेद ४०।८ है क्योंकि वह काया की सीमाओं से परे, अ काय अ-स्नाविर है। अत वह सर्वथा नितान्त शान्त है। वह सर्वव्यापक है सर्वान्तर्यामी है, सर्वज्ञ है, सर्वशक्तिमान् है, सर्वो-परि है और सर्वनियन्ता है। वह सब देखता है और सुनता है। उसकी न्याय-व्यवस्था से कोई नहीं बच पाता है। उसकी यह न्याय-व्यवस्था वास्तव में बड़ी हितकारिणी है। अपराधियों के लिए मानव के दण्ड-विधान हैं जबकि प्रभु के दण्डविधान पापियों के लिए है। विभिन्न योनियों में पापियों की आत्माओं के स्थानान्त-रण उनके सुधार के लिए हैं, ठीक वैसे जैसे मानवों को उनके अपराधों के आधार पर निश्चित काल के लिए बन्दीगृहों में डालना और यातनाएँ देना।

मानवों में पापों की जो उत्पत्ति होती है उसके अनेक कारण हैं जिन का वर्गीकरण इस भांति है—

१. बाल-वृत्तिज—बालवृत्ति (अबो-धता) के कारण, बिना किसी प्रयो-जन के, मनोरञ्जनार्थ जैसे पशु-पक्षी को आघात पहुंचाना, सड़क पर केले के छिलके फेंक देना आदि।

२ वीर वृत्तिज—अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने के लिए, अपने से जो अशक्त हैं उन्हें पीड़ा पहुंचाना।

३ संस्कार-ज—दूषित संस्कारों के कारण, कुसंगति से प्रभावित होकर दुष्कर्मों की इच्छा और संकल्प करना।

४ नीति-ज—पापवृत्ति न होने पर भी, अन्य पापिष्ठों के दबाव में आकर, उनकी कूटनीति से परास्त होकर अशिव सकल्प करना।

५. रुढि-ज—जाति-विशेष की परम्पराओं के अन्धानुकरण से उन को पुण्य समझने के अज्ञान से, यथा परमात्मा की प्रसन्नता के लिए पशु-बलि आदि।

६ चतुर्वर्ग-ज—काम, क्रोध, लोभ, मोह के वशीभूत होकर कुवि-चार करना।

भले ही अनेक पाप हम मनुष्य 'अ-चित्ति', अर्थात् अज्ञान के कारण करें, पर परमात्मा की न्यायव्यवस्था की विशेषता इसमें है कि कोई भी पाप क्षम्य नहीं है। समस्त पापों में एक ऐसा महापाप भी है जो मनुष्य सदैव से करता आया है और वह महापाप है 'दैव्य जन के प्रति अभि-द्रोह'। देवगुण से युक्त व्यक्तित्व 'दैव्य' कहलाता है जो यज्ञ द्वारा देव कृपा से सम्पन्न होता है। इस व्यक्तित्व से युक्त महान् पुरुष धर्मात्मा होते हैं जो सदैव मनुष्य का कल्याण करते हैं। पर हम अबोध जन अपने हितैषियों का विरोध करते हैं, उनके विरुद्ध षड्यन्त्र रचते हैं और उन्हें घोर वेदनाएँ तथा यात-नाएँ देते हैं। धर्मात्माओं का जीवन वेदानुकूल होता है। वे मनुष्यों को सन्मार्गी बनाने के उद्देश्य से उन्हें दोष, दुर्गुण और दुर्व्यसन त्यागने की प्रेरणाएँ देते हैं। धर्मात्माओं को जो यश मिलता है उससे ईर्ष्यालु होकर द्वेषी अपने भीतर दुर्भावनाओं को संजोते हैं, वैमनस्य रखते हैं और विरोध करते हैं। 'अभि-द्रोह' का अर्थ है सब प्रकार से (अभि), अनर्थ (द्रोह) करना। अभिद्रोही महापापी है। ऐसे अभिद्रोही को पापिष्ठ कहा जाता है। विश्व का कोई ऐसा पाप नहीं है जो ये अभिद्रोही न करते हों।

ईश्वरीय विधान के अन्तर्गत कोई पापी मन की शान्ति नहीं प्राप्त कर सकता। फिर, पापिष्ठ अभि-द्रोही किस सीमा तक अशान्त हो सकता है इसका अनुमान सहज है। महापाप का दण्ड कितना भीषण हो सकता है, उसका अनुमान लगाकर साधक जन अभिद्रोह की निवृत्ति के निमित्त परमात्मा से अपने रक्षण की प्रार्थना करते हैं।

प्रार्थना विनम्र भाव से, रक्षार्थ की जाती है। प्रार्थना से विनय का अटूट सम्बन्ध होता है। विनययुक्त पुकार ही सुनी जाती है, स्वीकार की जाती है और फलवती होती है। साधकों के लिए प्रार्थना एक परमो-त्कृष्ट साधना है। प्रार्थना से आत्मा का कलुष धुलता है और अहंभाव से छुटकारा मिलता है। भक्ति, ज्ञान और कर्म से आगे की साधना है प्रार्थना। अभीष्ट की प्राप्ति के लिए जब साधक वरुण देव से अपने उद्धार की प्रार्थना करता है तो वह वरणीय देव उसे निष्पाप बना कर शान्ति प्रदान करता है क्योंकि वह उसे प्राप्त करने का सुयोग्य पात्र बन चुका होता है।

●



आर्य युवा महासम्मेलन सम्पन्न

महर्षि दयानन्द के मार्ग से ही राष्ट्रीय एकता सम्भव : केसरी

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा आयोजित आर्य युवा महासम्मेलन धूमधाम के साथ सम्पन्न हुआ। यह समारोह पिछले एक मास से दिल्ली के शिक्षण सस्थानों और विद्यालयों में चल रहा था। इस समारोह में वादविवाद प्रतियोगिताएँ, भाषण, चित्रकला आदि प्रतियोगिताएँ हुई। योग तथा शारीरिक व्यायाम को भी प्रतियोगिता मे शामिल किया गया। इस कार्यक्रम में ३० स्कूलों ने भाग लिया जिस में १११ शील्ड विजेताओ को दी गयीं तथा १५६ पुरस्कार वितरित किये गये। इस कार्यक्रम से दिल्ली के शिक्षणालयों मे आर्यसमाज के प्रति रुचि बढ़ी तथा वैदिक धर्म की जानकारी बढ़ी है।

विशेष समारोह

कार्यक्रम का समापन समारोह भव्य आयोजन के साथ तालकटोरा इन्डोर स्टेडियम में सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर मुख्य अतिथि थे श्री सीताराम केसरी (पूर्व ससदीय कार्यमन्त्री)। अध्यक्षता स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने की। मुख्य वक्ता थे स्वामी दीक्षानन्द जी महाराज। इस अवसर पर श्री कुलानन्द भारतीय, कार्यकारी पार्षद शिक्षा दिल्ली ने भी उद्‌बोधन दिया।

श्री सीताराम केसरी ने कहा—आज के विज्ञान के युग मे भी सती प्रथा जैसी कुप्रथाएँ हैं जो देश के युवकों के सामने खुली चुनौती हैं। देश की कुप्रथाओ और समस्याओं के प्रति सर्वप्रथम आवाज ऋषि दयानन्द ने उठायी थी। विधवा विवाह, अनमेल विवाह, बालविवाह नारी उत्पीडन के विरुद्ध आवाज उठाने वाला महापुरुष भी स्वामी दयानन्द ही था। उन्ही के मार्ग पर चलकर आज हम राष्ट्रीय एकता व अखण्डता को सुदृढ कर सकते हैं।

विद्वान् सन्यासी स्वामी दीक्षानन्द ने इस अवसर पर उद्‌बोधन करते हुए कहा—बच्चों के जन्म लेते ही उसे सस्कारित करने के लिए उसके मुख में मां के दूध से भी पूर्व यवादि के रस को दिया जाता है जिसका मतलब है धरती मा के क्षीर को बच्चे के मुख से लगाना। धरती मा का, इस भारत भू का, हमारे ऊपर भारी ऋण है, इससे उऋण होने के लिए हमे कार्य करना चाहिए। आज देश के सामने भारी चुनौतियाँ हैं उनका उत्तर दे सकते हैं हमारे युवा जन। इस स्टेडियम में युवकों के कौतुक भरे रोमांचकारी प्रदर्शन को देखकर मुझे भारी हर्ष हुआ। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा ने इन युवको को सगठित करने तथा वैदिक धर्म और आर्यसमाज की ओर आकर्षित करने के लिए विभिन्न प्रकार के अधुनातन कार्यक्रम बनाये।

वेदारम्भ सस्कार मे आचार्य आकाश की ओर सकेत करके विद्यार्थी को 'सूर्यं पश्य'' कहता है। मैं भी आज के आयोजन को देख इन युवकों को कहना चाहता हू सूर्यं पश्य (सूर्यदेव की ओर इशारा करते हुए) प्रधान सूर्यदेव इस आयोजन के लिए बधाई के पात्र हैं। मैं इन्हें आशीर्वाद प्रदान करता हू। आज हमें अपनी शक्ति को और अधिक सगन्ति करने की आवश्यकता है।

इस अवसर पर स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने कहा—गुरु द्रोण का जब परिचय पूछा गया था तो उन्होंने कहा था, मुख मे चारो वेदो की पवित्र वाणी और पीठ पर बाणो का त कस एक ब्राह्म बल और दूसरा क्षात्र बल, मैं इन दोनो का स्वामी हू। जो बुद्धि से माने माने, नहीं तो मैं बल से मनाना जानता हूँ। वास्तव मे आज मेरे देश को इन दोनो बलो की आवश्यकता है। दिल्ली सभा ने इस स्वरूप को बनाने में आर्य युवा महासम्मेलन का आयोजन किया। मैं इसके लिए उन्हें साधुवाद देता हू। इस अवसर पर सभा प्रधान श्री सूर्यदेव ने सभा की प्रमुख गतिविधियो का परिचय दिया। सभा का सयोजन डा० धर्मपाल ने किया।

आर्यसन्देश साप्ताहिक के आर्य युवा विशेषांक का भी इस अवसर पर श्री सीताराम केसरी ने विमोचन किया। □

जीवन धर्म

—मा० किशोरीलाल
आर्यसमाज मन्दिर, आर्यपुरा सब्जी मण्डी, दिल्ली-७

अपना देश हो चाहे ससार, यदि चरित्र है तो सब कुछ है सुख है, शान्ति है अन्यथा विनाश अवश्यभावी है। पाप का प्रारम्भ मन से होता है, मन की शुद्धि ईश्वरविश्वास से होती है। कर्मफल में विश्वास होना नितांत आवश्यक है। आज की वैज्ञानिक उन्नति विश्व के दु:ख और अशान्ति को देखकर क्षणिक प्रतीत होती है।

मन की शुद्धि, ईश्वर प्रेम तथा उसका अनुसरण करने से होती है (महाजनो येन गत: स पन्था)। प्रथम ईश्वर सिद्धि हेतु हवन के साथ बोले जाने वाले मन्त्रों, यथा "येन द्यौ रुग्रा पृथिवी च दृढा"—में वर्णित 'तीन' तर्कों पर अर्थात् (१) बुद्धिपूर्ण रचना, अनेक प्रकाशित अप्रकाशित लोकों में होना, (२) लोकों का उचित स्थान पर होना (स्थित रहना) प्रत्येक लोक को भिन्न गति देकर दिन रात बनाना, (३) वार्षिक तथा ग्रहण का नियमित रूप से संचालन करने वाले ईश्वर पर विश्वास करना चाहिए। यदि बुद्धि को व्यसनों से दूर रखें तो सृष्टि के षड्विकार—(१) पौधे का उगना (२) उसका बढना (३) रुक जाना (४) रुके रहकर आयु को भोगना (५) ह्रास होना (६) नष्ट हो जाना। इन पर विचार कर ब्रह्म में भक्ति होती है। प्रेम से आनन्द, आनन्द से मन को शुद्ध रखकर शांत स्वभाव बन, ब्रह्मचर्य तथा शुद्ध आहार विहार से सदा कष्टों की मुक्ति हो जाती है।

"आचार. परमो धर्म" अच्छा रहन-सहन ही मनुष्य का पहला धर्म है। यह मनुस्मृति का वचन है तथा "कर्तव्यो धर्मसग्रह.।" मीमांसाकार कहते हैं कि कर्तव्य द्वारा ही धर्म का संग्रह किया जाता है। "आत्मन प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।" यही भाव एक उर्दू के शायर का है—

कभी भूल कर किसी से
न करो सलूक ऐसा।
कि जो कोई तुमसे करता
तुम्हें नागवार होता॥

जो सत्पुरुषार्थ से प्राप्त हो उसे धन्यवादपूर्वक ग्रहण करना चाहिए। यम नियम आदि योग के अग को अपनाकर अपने जीवन को पवित्र करना चाहिए। प्रकृति लय योगी ससार की खुली पुस्तक को पढकर मनन द्वारा सफल होता है तथा अगले जन्म में भी प्रभु से अच्छी सुविधाएँ प्राप्त करते हैं। लौकिक पारलौकिक हितों को प्राप्त करते हैं।

धर्म वही है जो देश के हित में हो। परन्तु सम्प्रदाय वाले धर्म के सिद्धान्तों को स्वीकार करते हुए भी स्वार्थवश उनके विरुद्ध प्रचार करते हैं। महाभारत में भीष्म पितामह के मुख से कहलाया गया है कि "यतो अभ्युदय नि श्रेयस सिद्धि स धर्म" जिससे लोक और परलोक दोनों के हित सिद्ध हों वह धर्म है। वेद की आज्ञा ही सर्वमान्य है जैसे—"एको वशी सर्वभूतान्तरात्मा।" अर्थात् वह एक ही अनेक प्रकार की रचना कर रहा है, वह ही सब को वश में किये है। इस्लाम की उन्नति के भी यहा दो कारण हैं—(१) वहदानियत—एक की पूजा और (२) मसावात—बराबरी (समाजवाद)। 'समानो मन्त्र समिति समानी०'' व ''सह नाववतु सह नौ भुनक्तु '' आदि मे समानता की कैसी अनूठी शिक्षा है। धर्म के निम्न दस लक्षणों का हमारे जीवन में अत्यधिक महत्व है। (धृति क्षमा ०) मनुष्य को हमेशा पवित्र, सयमी, शुद्ध विचार वाला तथा इन्द्रियजित होना चाहिए।

जो इन्द्रियों को जीत लेता है उसे कोई नहीं जीत सकता। वही सबसे बडा विजेता है जिस ने स्वय को जीत लिया। अन्त में हम एक अंग्रेज मनस्वी के अनुसार यही कह सकते हैं कि—He cannot rule himself, cannot be fit to rule others. □

सुन्दर स्वास्थ्य

लेo—डाo प्रेमवल्लभ

मानव-जीवन सुख और दुःख का सयोग है। कुछ व्यक्ति इस ससार में अपना जीवन बडे आनन्द और उल्लास से व्यतीत कर रहे हैं, जब कि अधिकांश व्यक्तियों के लिए यह जीवन दुःख और क्लेश का घर है। ऐसा क्यों है? बहुत-से लोगों का विचार है कि आर्थिक अभाव के कारण मनुष्य दुःखों का शिकार बना हुआ है, किन्तु दूसरी ओर दृष्टिपात करें तो मिलता है कि पैसे वाले गरीबों से भी अधिक दुःखी हैं। वे चैन से निद्रा भी नही ले सकते। वे नित्य डाक्टरो और वैद्यो के ही शिकार बने रहते हैं। अत सुख और दुःख का धन से कोई सम्बन्ध नहीं है। वास्तव में यह जीवन सुख और दुःख, आनन्द और विषाद, सरसता और निरसता, सदाचार और दुराचार, पुण्य और पाप, आशा और निराशा के द्वन्द्वों का सग्राम स्थल है। इस युद्ध में केवल वही वीर पुरुष सफलता प्राप्त कर सकता है जो युद्ध के नियमो से भली प्रकार परिचित हो, जिसके पास श्रेष्ठ कोटि के अस्त्र-शस्त्र हों तथा जिसकी भुजाओं में बल हो।

यह सब कुछ बिना सुन्दर स्वास्थ्य के सम्भव नहीं है। जीवन के किसी भी क्षेत्र में सुन्दर स्वास्थ्य बिना आप कुछ भी नहीं कर सकते। व्यावहारिक जीवन में सफलता आपके स्वास्थ्य पर ही निर्भर है। सुन्दर स्वास्थ्य वाला मनुष्य ही प्रसन्नचित्त, बुद्धिमान, चतुर, क्रियाशील और सुखी होता है। अस्वस्थ व्यक्ति अकर्मण्य, उदास, निस्तेज और दुखी दिखायी देता है। ऐसे व्यक्ति को निराशा चारों ओर से घेर लेती है और उसे यह ससार कण्टकाकीर्ण और दुःखमय दिखायी देता है। किवदन्ती प्रसिद्ध है—

'पहला सुख निरोगी काया,
दूजा सुख जो घर मे माया।
तीजा सुख पुत्र अधिकारी,
चौथा सुख पतिव्रत नारी॥'

अस्वस्थ व्यक्ति को आप चाहे सोने, चांदी, हीरे और जवाहरात से लाद दें उसके सामने अच्छे से अच्छे स्वादिष्ठ भोज्य पदार्थ रख दें, चाहे उसे कितना ही धन-सम्पत्ति दे दें परन्तु वह अपने को सुखी अनुभव नहीं करेगा, क्यों? क्योंकि स्वास्थ्य ही सम्पत्ति है, स्वास्थ्य ही जीवन है और स्वास्थ्य ही सुख है। जो मनुष्य स्वास्थ्य के नियमों को भली प्रकार जानते हैं और निष्ठापूर्वक उनका पालन करते हैं, वे ही हृष्ट-पुष्ट होकर जीवन के सुख का आनन्द उठा पाते हैं। उन्हें ससार असार और दुःखमय दिखाई न देकर ईश्वर की एक अदभुत कृति प्रसन्नताओ से भरा पूरा रगीनियों का मयखाना और सुखो का खजाना दिखायी देता है।

वर्तमान समय में शहरो की सख्या बढ़ती जा रही है। शहरी चकाचौंध और जीवनयापन की सुविधाओं के कारण देहातों का निवासी आज शहरों की ओर भागा आ रहा है। शहरो की जनसख्या प्रतिदिन अधिक होने के कारण यहा लोगो को रहने का पर्याप्त स्थान नहीं है। परिणामत उन्हें गदो और सकीर्ण गलियों, मकानों, दुकानों तथा कारखानो मे रहना पडता है, जहाँ का वायुमण्डल आरोग्यता के अनुकूल नहीं होता। वे स्वास्थ्य की रक्षा हेतु बाजारू दवाइया एव टानिक आदि अनाप-शनाप वस्तुएँ लेते रहते हैं और अपने शरीर में रोगों को आमन्त्रित करते रहते हैं, परन्तु स्वस्थ नहीं हो पाते। स्वास्थ्य के अभाव में वे कीमती कपडे पहनते हैं किन्तु सुन्दर दिखाई नहीं पडते।

हम स्वस्थ रहे इसके लिए हमें स्वास्थ्य के नियम जान लेने चाहिए। प्रकृति हमारे शारीरिक स्वास्थ्य की उत्तम मार्ग-प्रदर्शिका है। वह हमे ऐसे मूक सन्देश देती रहती है जिन्हें अपनाकर हम स्वस्थ और दीर्घजीवी रह सकते हैं। परन्तु विचारशील मानव प्रकृति की मौन प्रेरणाओं की उपेक्षा करता है जब कि विचारशून्य कहे जाने वाले पशु-पक्षी प्रकृति देवी की शत-प्रतिशत आज्ञाओं का पालन करते रहते हैं। परिणामत: स्वस्थ और दीर्घजीवी होते हैं।

आज समाज के बीच ऐसे दुर्व्यसन प्रचलित हो गये हैं जिनसे स्वास्थ्य का सर्वनाश हो रहा है, किन्तु पाश्चात्य शिक्षा और सभ्यता के शिकजे में हम इतने बध चुके हैं कि अब उनसे मुक्ति पाना असम्भव हो चुका है। ये दुर्व्यसन हमारे जीवन का अग बन चुके हैं। बीडी, सिगरेट, तम्बाकू, भांग, गांजा, चरस, अफीम आदि नशे जोंक की भांति हमारे शरीर का रक्त चूस रहे हैं और शरीर को मिट्टी में मिलाए दे रहे हैं। मदिरापान की गोष्ठियां (दावत) चल रही हैं और इसे हम उच्चस्तरीय सभ्यता का प्रतीक मान बैठे हैं। कैसा दुर्भाग्य है! यहूदियों की एक कहावत प्रसिद्ध है, "जहां शैतान स्वय नहीं जा सकता वहां शराब को भेजता है।" एक बार यह राक्षस जिस मनुष्य के शरीर में प्रवेश कर जाता है, वह फिर निकलने का नाम नहीं लेता और मनुष्य जीवन की शान्ति तथा आनन्द को सदा के लिए नष्ट कर देता है। अत: यदि आप स्वस्थ रहना चाहते हैं तो जीवन में सभी प्रकार के मादक पदार्थों से बचिये।

वायु प्रकृति की ओर से प्राणिमात्र को प्राणदायिनी शक्ति है। प्रत्येक जीव के जीवन के लिए वायु, जल और भोजन की अपरिहार्य आवश्यकता है। इनमें भी मनुष्य जल और भोजन के बगैर कुछ दिन जीवित रह सकता है किन्तु सांस लेने के लिए यदि वायु रोक ली जाय तो वह कुछ ही समय में तडप-तडप कर प्राण त्याग देगा। अत वायु का महत्व जीवन में सब से प्रथम और सब से अधिक है। अत. शुद्ध वायु प्राप्त करने के लिए आप प्रात काल शीघ्र उठने का अभ्यास डालिए और जहां तक हो सके सूर्योदय से पूर्व ही नित्य कर्म से निवृत्त हो जाइये, तत्पश्चात् कपडे पहन कर आप अपने घर से कम से कम एक मील निकल जाइये। यहां जगल में आकर आप स्वतन्त्र होकर शुद्ध वायु का सेवन कीजिये। इसके लिए आप पालथी मार कर रीढ़ की हड्डी को सीधा करके बैठिये और आँखें तथा मुह बन्द करके नाक से शुद्ध वायु जितनी खींच कर अपने शरीर में भर सकें भरिये, तत्पश्चात् जितने समय तक आसानी से रोक सकते हैं रोकिये, फिर नाक के ही द्वारा निकाल दीजिये। इतना ध्यान रखिये कि श्वास धीरे धीरे ही खींचनी है और शनैः-शनैः ही निकालनी है। इसी समय मन को एकाग्रचित्त हो अपने इष्टदेव में लगा दीजिये। यह प्रयोग नित्य प्रातःकाल आठ-दस बार कीजिए। प्राणायाम से अनेक रोग दूर भाग जाते हैं—ज्वर, शिरःशूल, हृदय रोग, उदर रोग आदि। फिर देखिये कुछ ही समय में आप अपने अन्दर एक अजीब स्फूर्ति, अद्भुत आकर्षण और तेज तथा उत्साह का अनुभव करेंगे।

यदि समयाभाव के कारण आप अपने समीप ही किसी बाग-बगीचे या लान में यह अभ्यास करें। यदि यह भी सम्भव न हो तो आप अपने मकान की छत पर बैठकर ही यह प्रयोग करें।

योगासन या कसरत

खुली हवा में ही प्रत्येक मनुष्य को कुछ कसरत या योगासन लगाने का अभ्यास डालना चाहिए। इससे शरीर के प्रत्येक अग का सचालन या व्यायाम होता है और शरीर स्वस्थ तथा पुष्ट बनता है। योगासन या व्यायाम शरीर के स्नायुतन्त्र, रक्ताभिसरणतन्त्र, श्वासोच्छ्वास-तन्त्र की क्रियाओं का व्यवस्थित सचालन करते हैं जिससे शरीर पूर्ण स्वस्थ बना रहता है। यदि किसी कारण से कोई रोग उत्पन्न भी हो तो उसका शीघ्र विनाश हो जाता है।

इतना ही नहीं, यदि आप के पास समय है तो आप खुले मैदान में दौडिये। फुटबाल, वालीबाल, हाकी, टैनिस खेलिये। नदी या तालाब मे तैरिये। स्वस्थ रहने के लिए शरीर को क्रियाशील रखना आवश्यक है। इसको अकर्मण्य मत बनाइये। अन्यथा यह मुरझाये हुए पुष्प की भांति लावण्यहीन हो जाएगा।

जल सेवन

प्रकृति में वायु के बाद जल का सब से महत्वपूर्ण स्थान है। सम्पूर्ण पृथ्वी के दो-तिहाई भाग में जल ही जल है, केवल एक चौथाई भाग ही थल है। इसी प्रकार हमारी शारीरिक रचना में भी जल की विपुलता है। मनुष्य-शरीर में सम्पूर्ण शरीर के भार का दो तिहाई भाग जल है, केवल एक तिहाई भाग ठोस है। अत: वायु की भांति ही जल के सेवन में भी हमें सकोच नहीं करना चाहिए। जल का प्रयोग करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए

कि जल स्वच्छ हो। यदि यह संदेह हो कि जल विकारयुक्त है तो उसे उबालने के बाद ठण्डा करके प्रयोग करना चाहिए।

मनुष्य को जल काफी मात्रा में पीना चाहिये। प्रायः नित्यप्रति मनुष्य को लगभग दो लीटर पानी अवश्य पीना चाहिए। जल पीते समय धीरे-धीरे स्वाद लेकर उसे गले से नीचे उतारना चाहिए। जल भोजन को पचाता है, शारीरिक विकारों को बाहर निकालता है और शरीर को अधिक गरम होने से बचाता है। यदि आप कब्ज के रोगी हैं तो प्रातः उठते ही मुंह धोकर और कुल्ला करके एक डेढ़ गिलास जल पीजिए और घर में कुछ टहलिए, तत्पश्चात् शौचक्रिया को जाइये। यदि फिर भी कब्ज रहे तो जल में एक नीबू निचोड़कर पीजिये। भोजन करते समय कम जल पीजिये और भोजन के घण्टे, दो घण्टे पश्चात् यथेच्छ जल पीजिए। व्यायाम करने या थके रहने की दशा मे भी तुरन्त जल नहीं पीना चाहिए। आप ज्वर से पीड़ित हों और जल पीने की इच्छा हो तो थोडा-थोडा आचमन के रूप मे अच्छी मात्रा में जल पीना चाहिए।

स्नान करते समय जल का खूब प्रयोग कीजिए। स्नान के लिए ताजे जल का प्रयोग कीजिए। ठण्डे जल के स्नान से नाडी संस्थान जाग उठता है। स्नान करते समय हाथ से सम्पूर्ण शरीर को इतना रगड़िये कि वह लाल हो जाए अथवा स्वच्छ तौलिया भिगो कर शरीर को रगड़िये। इससे आपके शरीर के सम्पूर्ण छिद्र खुल जाएँगे। स्नान करने मे नहाना, बदन को मालिश और व्यायाम सभी शामिल हैं। यदि हो सके तो सम्पूर्ण शरीर को नग्न कर के बन्द कमरे मे स्नान कीजिए। इस प्रकार स्नान करने पर खाज-खुजली, दमा आदि जैसे रोग दूर होते हैं। शरीर स्वस्थ तथा कान्तिमान हो जाता है। भोजन या व्यायाम के तुरन्त बाद स्नान नहीं करना चाहिए।

भोजन

आजकल अधिकतर मनुष्य पेट के रोग से दुखी हैं। किसी को कब्ज की शिकायत रहती है तो कोई अधिक गैस बनने से परेशान है। किसी को भोजन नहीं पचता है तो किसी को भूख नहीं लगती। इसका कारण भोजन सम्बन्धी नियमों की जानकारी न होना या जान-बूझकर भोजन के नियमों की अवहेलना करना है।

शरीर में भोजन ही हमारा पृथ्वी तत्व है। इसी से शरीर के अन्दर प्राण धारण करने की शक्ति पैदा होती है। यह कहना ठीक नहीं कि भोजन से ही मनुष्य जीवित रहता है अपितु भोजन या आहार लेने से शरीर स्वस्थ रहता है और स्वस्थ शरीर में प्राण भली प्रकार अपना कार्य सम्पन्न कर पाता है। भोजन के बिना शरीर इस योग्य न रह सकेगा कि प्राण उसके अन्दर निवास कर सकें। अतः शरीर को स्वस्थ बनाए रखने के लिए भोजन की नितान्त आवश्यकता है।

अतः खाद्य पदार्थ ऐसा होना चाहिए जिससे शरीर को बल मिल सके। बिना भूख के कभी कुछ नही खाना चाहिए। यदि भूख न लगे तो समझना चाहिए कि शरीर को भोजन की आवश्यकता नही है। भोजन करते समय भोज्य पदार्थ को खूब चबा-चबाकर खाना चाहिए जिससे आंतें अपना कार्य सरलतापूर्वक कर सकें। भोजन धीरे धीरे निश्चित भाव से करना चाहिए। उस समय हमारे मस्तिष्क में किसी प्रकार की चिन्ता नहीं होनी चाहिए। भोजन सदा अपने निर्धारित समय पर ही करना चाहिए। नियत समय पर भोजन के बाद मौके बेमौके भूख लगने पर कुछ नहीं खाना चाहिए। भोजन के तुरन्त पश्चात् किसी मानसिक श्रम को भी नहीं बैठ जाना चाहिए। भोजन सादा और सुपाच्य होना चाहिए। उसमें फल, दूध, दही और साग-सब्जी की मात्रा अधिक होनी चाहिए। रात्रि का भोजन बहुत हलका होना चाहिए और शयन करने से दो-तीन घण्टे पूर्व ही लेना चाहिए।

नवयुवकों को भोजन में मांस, मछली, अण्डा, काफी, शराब आदि का भूल कर भी प्रयोग नहीं करना चाहिए। ये पदार्थ शरीर में उत्तेजना पैदा करते हैं, चर्बी बढ़ाते हैं, पाचनक्रिया को हानि पहुचाते हैं और मन को दुर्व्यसनों की ओर ले जाते हैं। प्रायः लोग फैशन में आकर सोडा, लैमन जैसे पेय पदार्थ लेते हैं परन्तु ये सभी वस्तुएं आंतों पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं। अतः व्यक्ति को इनका प्रयोग नहीं करना चाहिए।

उत्तम स्वास्थ्य के निर्माण की सभी बातें व्यर्थ हो जाती हैं यदि मनुष्य का अपनी इन्द्रियों पर अधिकार नहीं है। इन्द्रियों को अपने वश में रख कर चलने वाला सदा प्रसन्नचित्त और सुखमय जीवन व्यतीत करता है जब कि इन्द्रियो के वशीभूत होकर चलने वाला सदैव दुःख और आपत्तियों से घिरा रहता है।

आपदां कथित पन्था
इन्द्रियाणामसंयम।
तज्जय सम्पदा मार्गो
येनेष्ट तेन गम्यताम्॥

अतः सुन्दर स्वास्थ्य का मूल है इन्द्रिय दमन अर्थात् ब्रह्मचर्य। ब्रह्मचर्य ही बल, बुद्धि, तेज और सुन्दर स्वास्थ्य का जन्मदाता है। ब्रह्मचर्य ही साहस, आत्मविश्वास और निर्भीकता प्रदाता है। आज मनुष्य विदेशी सभ्यता के प्रभाव में आकर ब्रह्मचर्य जैसे शाश्वत सत्य की अवहेलना करता जा रहा है जब कि ब्रह्मचर्य ही प्राण है, ब्रह्मचर्य ही शक्ति है और ब्रह्मचर्य ही तरुणाई है। संसार में ब्रह्मचारी को कुछ भी दुर्लभ नहीं है। □

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का पंच सूत्री कार्यक्रम

लिखक—आचार्य विश्वश्रवा. व्यास, वेद मन्दिर बरेली (उ०प्र०)

यह हम उस समय का वर्णन कर रहे हैं, जब कांग्रेस का जन्म भी नहीं हुआ था और महात्मा गांधी उस समय कहीं पढ रहे होंगे। स्वामी जी ने इस विशाल भारत की आजादी के लिए अकेले ही सघर्ष प्रारम्भ किया। स्वामी जी के समय में भारतवर्ष पजाब, सिन्ध, बिलोचिस्तान, बर्मा आदि तक एक महान् देश था। इतने महान् देश की आजादी के लिए स्वामी जी ने जो प्रोग्राम बनाया, वह इस प्रकार था—

१ स्वामी जी का कहना था कि जब तक इतने बड़े देश में एक धर्म, एक भाषा, एक सस्कृति नहीं होगी तब तक शान्ति नही हो सकती। इस समय देख लो धर्म के नाम पर हिन्दुस्तान, पाकिस्तान के टुकडे किये और भाषा ने बगला देश और पाकिस्तान के टुकडे किये तथा संस्कृति ने बर्मा को अलग किया और आतकवाद फैलाया। अत शान्ति के लिए एक धर्म, एक भाषा, एक सस्कृति का होना आवश्यक है।

न यावत् भाषैका
    न च मनुजधर्मोऽय विषय।
विरोधे सस्कृत्या,
    नहि भवति शान्ति कथमपि।
दयानन्दस्येद
    कथनमिह देशे न हि श्रुतम्।
गतोऽह्यार्यावर्तो
    मुनिऋषिगृह पञ्चशकलान्॥

अर्थ —जब तक भाषा एक न होगी, मनुष्य का समान धर्म नही होगा। समान सस्कृति नही होगी तब तक देश में शान्ति नही होगी। महर्षि दयानन्द का यह कहना किसी ने नही सुना, अत देश पांच टुकडों में विभक्त हो गया।

२ दूसरा प्रोग्राम स्वामी जी का यह था कि—

विभिन्ना या भाषा
    दिशि दिशि प्रचार परिगता।
कुरु ज्ञान तासां
    ऋषिमतप्रचाराय विबुध।
तथा देशे देशे
    भ्रमत परितो विश्वमधुना।
तदार्यं साम्राज्य
    जगति प्रथित स्यान् द्रुततरम्॥

अर्थ—नाना देश मे जो भाषाएँ हैं, उनका ज्ञान प्राप्त करो और उन भाषाओं में उन देशों मे जाकर ऋषि के सिद्धान्तों को फैलाओ। इससे ससार के अन्दर जो आर्यों का साम्राज्य है, वह जल्दी हो जाएगा। शायद यह कार्य स्वामी जी ने श्री श्याम जी कृष्ण वर्मा को सुपुर्द किया था।

३. तीसरा प्रोग्राम स्वामी जी का यह था कि—

समस्त साहित्य
    मुनिऋषिकृत भाष्यमिषतो,
विनाश सम्प्राप्त
    श्रुतिरपि च धूर्त्तैकलुषिता।
पुनर्भाष्यं कृत्वा
    कुरु सकलग्रन्थान् ऋषिमतान्।
दयानन्द स्वामी
    कथयति च सर्वान् बुधवरान्॥

अर्थ—समस्त वैदिक साहित्य भाष्य करके नाश को प्राप्त कर दिया गया है और धूर्तों ने उल्टे भाष्य कर के वेदों को भी कलुषित कर दिया है। अत समस्त ग्रन्थों का फिर से भाष्य करो जिससे वे ऋषियों के सिद्धान्तो के अनुसार ठीक प्रतीत हों—यह स्वामी दयानन्द सब विद्वानों से कह रहे हैं। इस बात में स्वामी जी ने अपना सहयोगी भीमसेन शर्मा इटावा वालों को बनाया।

४ चौथा प्रोग्राम स्वामी जी का यह था कि—

य इक्ष्वाकुवश्या
    रविशशिकुला राजतनया।
विराजन्ते लोके
    कुरुत प्रणय तैर्सविनयम्।
अमीषा पूर्वेषा
    स्मृतिपथमुपयातमधुना।
यश पुञ्ज पुण्य
    प्रथिततम ऐतिह्यजगति॥

अर्थ—ससार के प्रथम राजा इक्ष्वाकु की परम्परा में जो सूर्यवशी और चन्द्रवशी राजा हुए हैं, उनकी सन्तान जो इस समय विराजमान है, उनके साथ विनयपूर्वक प्रेम करके सम्बन्ध स्थापित करो। ऐतिहासिक जगत् में उनके पूर्वजों का जो यश है, वह उन्हें याद दिलाओ। इस काम को स्वामी जी स्वय कर रहे थे।

५ स्वामी जी का पाचवां प्रोग्राम था—

न भाषा विज्ञान
    न च भुवि कार्लमार्क्ससरणि।
हितार्थं लोकाना
    नहि नहि डार्विनमतमपि।
न चास्थ्नोर्विज्ञान
    जन जन विवादाय हि च तत्।
कुविज्ञान्येतान् हि
    अतिवितथवादान् परिहत॥

अर्थ—भाषा, विज्ञान, कार्ल मार्क्स की थ्योरी, डार्विन का मत, अस्थि विज्ञान—ये सब ससार के हित के लिए नही हैं। ये कुविज्ञान हैं, इन को समाप्त करो।

तदा सर्वं कर्तुं
    स्वयमपि प्रवृत्तो महऋषि।
तथा भीमादीन-
    न्यानपि कृतवान् कार्यनिरतान्।
जगन्नाथो धूर्तो
    यवनसहिता चापि गणिका।
महर्षे स्वर्याते
    कुटिलमतय पश्य सफला॥

अर्थ—इन सब पच सूत्री प्रोग्राम को स्वामी जी ने स्वय करना प्रारम्भ किया, भीमसेन शर्मा आदि को कार्य पर लगाया किन्तु धूर्त जगन्नाथ, अलीमर्दान खां और वेश्या नन्हीं जान के कारण कुटिलमतियों की चालें सफल हुई और स्वामी जी स्वर्ग सिधारे।

महर्षेः स्वर्याते
    दिशि दिशि प्रयातास्तदनुगा।
ईश्वर-अल्लामत
    हि अथ गता भीता अमनगा.।
तटस्था स जाता
    ऋषिवर-सुभक्ता नृपतय।
तथा भाईभीम-
    प्रभृतय इतो निर्गतिपरा॥

अर्थ— महर्षि के स्वर्ग सिधारने के बाद उनके अनुयायी भिन्न-भिन्न दिशाओं में चले गए। कुछ ईश्वर, अल्ला मत (कांग्रेस) में प्रविष्ट हो गये। कुछ डरे हुए लोग अमनसभा में चले गए। ऋषि की भक्ति करने वाले राजा लोग तटस्थ हो गए तथा भाई परमानन्द जी तथा भीमसेन शर्मा आदि आर्यसमाज से निष्कासित कर दिए गए।

समाप्त तत् सर्वं
    यदा। ऋषिणा भाषितचरम्।
समाजश्चार्याणाम्
    अनुकुरुत ईशोमतमयम्!
समाजे सर्वस्मि-
    न्नुपकृतिपर. कार्यनिवहः।
समाजो चर्चो वा
    न हि किमपि भिन्नं द्वयमपि॥

अर्थ—ऋषि ने जो भी कहा था, वह सब समाप्त हो गया। आर्यों के समाज ने ईसाईयत का अनुकरण किया। समाज में सब जगह उपकार परक कार्य किये जाने लगे। समाज में और चर्च मे कुछ भी अन्तर शेष नहीं रहा।

क्वचित् डिस्पेंसर्या
    क्वचिदपि रीडिंगगृहमपि।
समाचार सर्वं
    पठतु जनता दैनिकमपि।
क्वचित् सिलाई स्कूल
    क्वचिदपि मसालागृहमपि।
अनाथानां स्त्रीणां
    कथमपि च स्यादर्जनमपि॥

अर्थ—(समाजो में) कही कहीं डिस्पेंसरियां खुल गई, कहीं रीडिंग रूम खोले गए, कही जनता के पढने के लिए दैनिक समाचार पत्रों का प्रबन्ध किया गया। कहीं (आर्यसमाज मेस्टन रोड, कानपुर) सिलाई स्कूल खोले गए, कहीं आर्यसमाज करोल बाग, दिल्ली) मसाला गृह खोले गए, कहीं अनाथ विधवा स्त्रियों के लिए धनार्जन की व्यवस्था की गई।

विवाहार्थं केचित्
    गृहमपि च निर्मान्ति बहव।
समस्तान् सभारान्
    ददति वरयात्रार्थमपि च ते।
क्वचित् रोटी वस्त्र
    वितरितमनाथालय इव।
यदा भूकम्पादि जल-
    प्रवहणादि क्वचिदपि॥

अर्थ—कुछ लोग विवाह सम्पादन के लिए भवन बनवाते हैं, बरात के लिए उन्हें अन्य सभी सामान देते हैं। (कलकत्ता) कभी-कभी भूकम्प या बाढ़ आने पर अनाथालय की तरह रोटी और वस्त्रों का वितरण भी करते हैं।

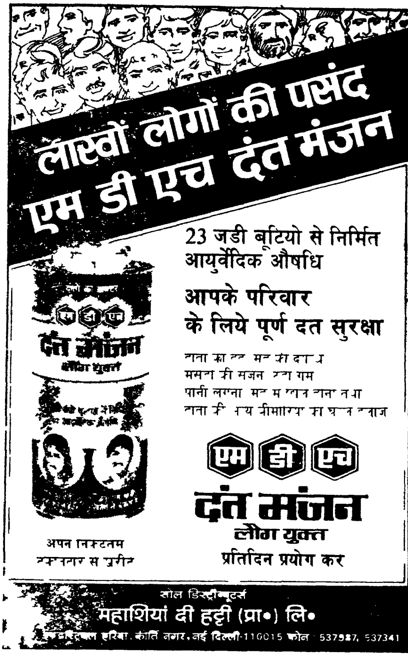
क्वचिच्चैम्बूलैंस-
    शकटमपि दृष्टं धनवताम्।
समाजानां द्वारे
    स्थितिमिनि बिजाननुसुचिय।
क्वचित् कन्याशाला
    क्वचिदपि च शाला शिशुकृते।
दयानन्दो मार्केट
    क्वचिदपि दयानन्दसरणिः॥

अर्थ— बुद्धिमान् जनो को यह भी ज्ञात हो कि कहीं धनवानों की एम्बुलेंस गाडी भी समाज (आर्यसमाज कोर्ट तथा सान्ताक्रुज बम्बई) के दरवाजे पर खडी दिखाई देती है। कहीं लडकियों की पाठशाला दिखाई देती है और कहीं बच्चों के स्कूल, कहीं दयानन्द मार्केट और कहीं दयानन्द मार्ग दृष्टिगोचर होता है।

क्वचित् एम पी लीला
    क्वचिदपि सत्याग्रहविधिः।
प्रशसाग्रन्था वा
    क्वचिदपि चित्र प्रियतरम्।

(शेष पृष्ठ ७ पर)





स्वराज्य हमारा

अमर शहीदों की आशाए
ऋषि-मुनियों की अभिलाषाए,
हों परिपूर्ण त्वरित गति से अति
लुंठित हो सम्पूर्ण निशाए
खिले नवल आशा की कलिका—
सुरभित हो उद्यान हमारा।
बने सुराज्य स्वराज्य हमारा॥
वेदों का पथ हम अपनाए
दानवता की वृत्ति भगाए,
मातृभूमि हो समृद्धिशाली—
शुभ्र कीर्ति से पूर्ण दिशाए,
मानवतापूरित हो जन जन—
बढ़े प्रगति-पथ पर राष्ट्र हमारा।
बने सुराज्य, स्वराज्य हमारा॥
राजनीति से स्वार्थ हटाए,
देशभक्ति का स्रोत बहाएं,
स्वतन्त्रता सन्देश विश्व को—
देकर, ओ३म् ध्वजा लहराए,
धरती का फिर गुरु कहाए—
प्यारा भारतवर्ष हमारा।
बने सुराज्य, स्वराज्य हमारा॥

—राधेश्याम 'आर्य' विद्यावाचस्पति
मुसाफिरखाना, सुलतानपुर
(उ० प्र०)

आदमी

— १ —

आदमीयत बेचकर भी
तन रहा है आदमी
'धौ' बहुत बात बनाकर
बन रहा है आदमी,
था जमाना मूछ से जब
आदमी की शान थी,
अब कटाकर मूछ हीरो
बन रहा है आदमी।

— २ —

गर उसूलों पर चला तो
बेवसम है आदमी,
गर उसूलों से गिरा तो
दनुज सम है आदमी,
अवनि, अम्बर और जल में—
आदमी की धूम है,
मौत के फन्दे मे फिर भी
दीन सम है आदमी।

—ब्रजभूषण दुबे
१०, गोपाचन्द लेन
कलकत्ता-७०००१४

पंच सूत्री कार्यक्रम

(पृष्ठ ६ का शेष)

क्वचित टकारायां
भ्रमणमतयो यात्रिनिवहा।
पवित्र स्व कर्तु
ऋषिजननभूमौ प्रचलनात्॥

अर्थ—कहीं एम० पी० बनने की प्रक्रिया कहीं किसी प्रकार का सत्याग्रह किया जाता है। कही अभिनन्दन ग्रन्थ प्रकाशित किये जाते हैं और कही सुन्दर फोटो खींचे जाते हैं। कही यात्रियो के समूह अपने आपको पवित्र करने के लिए ऋषि की जन्मभूमि टकारा जाने का विचार करते हैं।

ऋषिकार्यं परित्यज्य
कार्यान्तरेष्वभिरता।
देशघातकरा ह्य ते
दयानन्दानुयायिन॥

अर्थ—दयानन्द के ये अनुयायी ऋषि के कार्य को छोड कर अन्य कार्यों में संलग्न हो गए हैं, ये देश का नाश कर रहे हैं।

विशालो देशोऽय
सुनीतरहितैर्नीतिविरत।
कृत खण्ड खण्ड
तदपि न शान्ता विमतय।
अह शके नून
पुनरपि न भूमाच्छकलित।
क्व कलाशोऽस्माक
क्व प्रियतरसिन्धप्रभृतय॥

अर्थ—इस देश को नीति रहित बुद्धि विहीन इन लोगो ने टुकडे टुकड कर दिया है फिर भी ये दुर्बुद्धिजन शान्त नही हुए हैं। मुझे आशका है कि पुन देश के और अधिक टुकड न कर दिये जाए। न अब कलाश अपना है न प्यारा सिंध, न बिलोचिस्तान, न सीमाप्रान्त और न बर्मा अपना है।

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
Posted in N.D.P.S.O. on 10 11-12-87 Licenced to post without prepayment, Licence No U 133
पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३३
साप्ताहिक 'आर्यसन्देश' १३ दिसम्बर, १९८७

॥ ओ३म ॥ दूरभाष ३१०१५०, २३७४४०

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के माननीय प्रतिनिधियों की सेवा में

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा (पजीकृत)

कार्यालय १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१

क्रमांक ५८८/डी० दिनांक १६।११।८७

यू० पी० सी०

श्रीमन्नमस्ते

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली की साधारण सभा का अधिवेशन रविवार दिनांक २०।१२।१९८७ को प्रात १०-३० बजे से आर्य-समाज मन्दिर दीवान हाल चादनी चौक, दिल्ली—६ मे होगा कृपया समय पर पधार कर कृतार्थ करे। धन्यवाद।

भवदीय
(डा० धर्मपाल आर्य)
महामन्त्री

विचारणीय विषय —

१ शोक प्रस्ताव
२ साधारण सभा के पिछले अधिवेशन की कार्यवाही की सपुष्टि।
३ सभा की वार्षिक रिपोर्ट तथा वास्तविक आय व्यय और बजट की स्वीकृति।
४ सभा अधिकारियो अन्तरग सदस्यों, विभिन्न सभाओ के लिए प्रतिनिधियो तथा समितियो आदि के लिए सदस्यो का निर्वाचन।
५ आर्यसमाजो के कार्य को गति देने के सम्बन्ध में प्रतिनिधियो के सुझावो पर विचार।
६ अन्य विषय प्रधान जी की अनुमति से।

नोट—सभी प्रतिनिधियों से विनम्र अनुरोध है कि वे अपने सुझाव दिनांक १५।१२।८७ तक अवश्य सभा कार्यालय को भेजने की कृपा करें। साधारण सभा की कार्यवाही दोपहर १-३० बजे से २ ३० बजे तक प्रीतिभोज के लिए स्थगित की जायेगी। दोपहर २-३० बजे से कार्यवाही पुन आरम्भ होगी।

(पृष्ठ १ का शेष)

को समान मताधिकार होगा। यह दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा की सफलता है।

आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का विभाजन

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने १९७५ में आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब का विभाजन आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब, हरियाणा और दिल्ली के रूप मे किया था और यह निर्णय किया गया था कि जो सस्थाएं और सम्पत्तियाँ जिस प्रान्त मे हैं, उसी प्रान्त की आर्य प्रतिनिधि सभा के आधीन होगी तथा चल सम्पत्ति का विभाजन ३५ ३५ ३० के अनुपात में किया जाएगा।

इसके लिए दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा ने पहले कभी प्रयास न किया था। हम ने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की बैठकों में बार-बार इस प्रश्न को उठाया। श्री प० रामचन्द्रराव वन्देमातरम् जो उप-प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के ३०।११।८६ के निर्णयादेश के अनुसार, आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब को सिद्धान्तरूप में इस बात के लिए तैयार कर लिया गया है कि वे समझौते के अनुसार ३० प्रतिशत धन-राशि दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा को दे दें। विडम्बना यह है कि अभी तक यह राशि मिली नहीं है।



श्री सपादक जी
गुरुकुल पत्रिका
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार (उ० प्र०)

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी

हरिद्वार की औषधियां सेवन करें।

शाखा कार्यालय—६३, गली राजा केदारनाथ,
चावड़ी बाजार, दिल्ली-६ फोन : २६१८७१

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए डा० धर्मपाल द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७४९

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

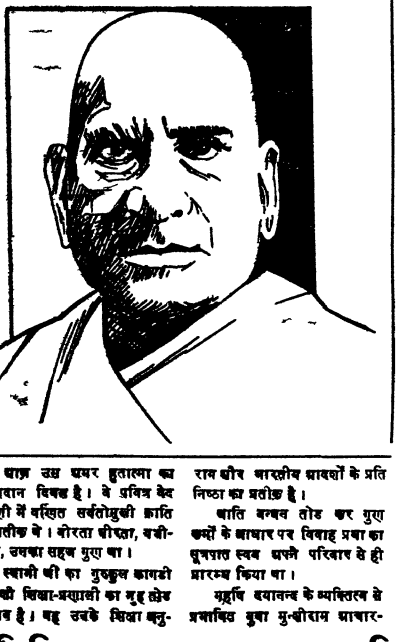
आर्य सन्देश

वर्ष १२ · अंक १० | रविवार २७ दिसम्बर १९८७ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | पौष २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द

दिव्य गुण आगार, क्रांति के दूत, युगद्रष्टा-युग पुरुष, आर्य जनता के प्राणों के प्राण, जिस जननी ने तुम्हें जन्म दिया वह जननी धन्य हो गई। जिस धरती पर तुम्हारे चरण पड़े वह धरती पवित्र हो गई। हे महर्षिवर्य की आशाओं, आकांक्षाओं की सगुण साकार प्रतिमन्त ज्वलन्त मूर्त्ति, आहुति देने के पूर्व तुमने कहा था—अब तो यही इच्छा है दूसरा शरीर धारण कर शुद्धि के अधूरे कार्य को पूरा करूँ, वैदिक धर्म की सेवा करूँ।'

और २३ दिसम्बर १९२६ की वह भयानक शाम अस्ताचल की ओर बढ़ती हुई उस क्रूर काली निशा ने तुम्हारे प्राणों को धारते हुए विश्व को अन्धकारमय बनाने का असफल प्रयास किया था। उसे नहीं मालूम था, शहीदों के खून से शहीद पैदा होते हैं। अगर कब्र से उठ कर देखना चाहता है तो देख ले, आज घर-घर में हमारा प्यारा श्रद्धानन्द विराजमान है। शुद्धि का डंका बज रहा है, छुआछूत का नामोनिशां मिट गया है, ओ३म् की पताका लिये उसके दीवाने घर-घर में श्रद्धासमन्वित यज्ञ की सुरभि सौरभ मादकता बिखेर रहे हैं। आनन्द की वर्षा हो रही है।



आज उस अमर हुतात्मा का बलिदान दिवस है। वे पवित्र वेद वाणी में वर्णित सर्वतोमुखी क्रांति के प्रतीक थे। वीरता धीरता, गम्भीरता, उनका सहज गुण था।

स्वामी जी का गुरुकुल कांगड़ी विदेशी शिक्षा-प्रणाली का मुंह तोड़ जवाब है। वह उनके शिक्षा अनुराग और भारतीय आदर्शों के प्रति निष्ठा का प्रतीक है।

जाति बन्धन तोड़ कर गुण कर्मों के आधार पर विवाह प्रथा का सूत्रपात स्वयं अपने परिवार से ही प्रारम्भ किया था।

महर्षि दयानन्द के व्यक्तित्व से प्रभावित हुआ मुन्शीराम आचार-हीन जीवन छोड़कर, आचार की ऊँचाइयों को लांघता हुआ महान् से महानतम बन गया—उस बलिदानी वीर की कहानियां अकथ हैं, आर्य जाति के इतिहास में अविस्मरणीय और स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य।

आज हमारा राष्ट्र संकट की घड़ी में है। पंजाब की वीर भूमि जिसे इस महान आत्मा को जन्म देने का श्रेय प्राप्त है, विघटन और आतंक की आग में झुलस रहा है। निर्दोष मां बहनों का सुहाग, बच्चों के सिर की छाया, बूढ़े माता पिताओं की लाठी एक मिनट में छीन ली जाती है। हत्या और अराजकता का यह ताण्डव हमें उस बर्बर युग की याद दिला देता है जब इन्सान, इन्सान को इन्सान नहीं समझता था। ऐसे समय में उस वीरवर की आत्मा को जगाना होगा—हमें और आपको आर्यसमाज को, जगाना होगा, हम वहीं सीना खोल कर उन क्रूर हाथों को शान्त करना चाहते हैं तो निर्दोषों के खून के प्यासे बने हुए उन्मत्त हो गए हैं।

आर्यसमाज एक क्रांतिकारी अभियान है अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध अपने को आहुत कर देना

(शेष पृष्ठ २ पर)

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा का साधारण अधिवेशन सम्पन्न

डा० धर्मपाल आर्य भारी बहुमत से प्रधान निर्वाचित

शानदार जीत श्रेष्ठ उपलब्धियों का परिणाम

—स्वामी आनन्द बोध सरस्वती



दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा की साधारण सभा का अधिवेशन २० दिसम्बर ८७ को आर्यसमाज दीवान हाल में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान पूज्य स्वामी आनन्द बोध सरस्वती जी के सान्निध्य में उल्लासपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान श्री रामचन्द्र वन्देमातरम् की अध्यक्षता में सम्पन्न निर्वाचन में डा० धर्मपाल तुमुल करतलध्वनि के बीच निर्वाचित घोषित किए गए। डा० धर्मपाल को २८७ और श्री सरदारी लाल वर्मा को ६२ मत प्राप्त हुए।

उल्लेखनीय है कि डा० धर्मपाल का नाम पूर्व प्रधान श्री सूर्यदेव ने

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल सुधांशु एम० ए०   प्रधान सम्पादक—डा० धर्मपाल

गतांक से आगे

रामायण में लिखा है—

वेदवेदाङ्गतत्त्वज्ञो धनुर्वेदे च निष्ठितः ।
बालकाण्ड १।१४

सर्वविद्याव्रतस्नात
यथावत् सांगवेदवित् ।
इष्वस्त्रे च पितु श्रेष्ठ
बभूव भरताग्रज ।।
अयोध्याकाण्ड १।२०।।

इन दोनों श्लोकों में महर्षि वाल्मीकि ने आज लगभग १२९६००० वर्ष पूर्व लिखा कि मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी महाराज जो भरत से बडे थे, वे वेदांग और उपांगों के तत्ववेत्ता थे और धनुर्वेद में निष्णात थे। आगे अयोध्याकाण्ड में पुन राम को सब विद्या के व्रतों में स्नातक घोषित किया तथा सांगोपांग वेद ज्ञाता बताया और अस्त्रशस्त्र विद्या में तो पिता दशरथ से भी श्रेष्ठ बताया गया है। यदि वेद आज से ५ या ६ हजार वर्ष पुराने हैं तो अनुसन्धानकर्ताओं के अनुसन्धान को १२ लाख वर्ष पूर्व कैसे लिख दिया श्री वाल्मीकि जी ने किष्किन्धा काण्ड के सर्ग ३ श्लोक, २८-२९ में पवन-सुत ब्रह्मचारी हनुमान् के पाण्डित्य का वर्णन श्री रामचन्द्र जी के मुख से कराया। श्री राम अपने भाई लक्ष्मण से कहते हैं—

नानृग्वेदविनीतस्य,
नायजुर्वेद - धारिणः ।
नासामवेद -विदुष
शक्यमेव विभाषितुम् ।।२८
नून व्याकरणं कृत्स्न
अनेन बहुधा श्रुतम् ।
बहु व्याहरतानेन
न किञ्चिदपशब्दितम् ।।३।२९

अर्थात् यह आदित्य ब्रह्मचारी हनुमान् चारों वेदों का प्रकाण्ड पण्डित है। इसने वेदांगों को भी विधिवत् पढा है। यह महावैयाकरण प्रतीत होता है यत. इतने लम्बे वार्तालाप में व्याकरण की एक भी अशुद्धि नही की है। वर्तमान कालीन शोधकर्ताओं को मैं सम्बोधन करके पूछता हू कि तब उस काल में वेद की चर्चा कहां से आ गई ?

मनु महाराज भी तो सृष्टि के आदिम राजा हैं, उन्होंने तो अपने मनुस्मृति नामक "मानव सविधान" में स्थान-स्थान पर वेदों का ही प्रसंग रखा है और कहा है कि—

योऽनधीत्य द्विजो वेद
मन्यत्र कुरुते श्रमम् ।
स जीवन्नेव शूद्रत्व-
माशु गच्छति सान्वय ।।

❀ वेद ❀

—डा० सत्यपाल शास्त्री; एम०ए० (हिन्दी संस्कृत)
१२८, सदनपुरी, कंकर खेडा, मेरठ कैण्ट (उ० प्र०)

वेदानधीत्य वेदौ वा
वेद वापि यथाक्रमम् ।
अविप्लुत - ब्रह्मचर्यो
गृहस्थाश्रममाविशेत् ।।३।२

समस्त प्राचीन साहित्य में वेदों की महिमा वर्णित है। बालकाण्ड में महर्षि ऋष्य शृङ्ग जी कहते हैं कि हे महाराज दशरथ ! मैं तुम्हारी इच्छानुसार पुत्रेष्टि यज्ञ अथर्ववेद से कराऊंगा। भला, सोचिये तो सही जबकि पांच हजार वर्ष से पूर्व वेद थे ही नहीं तो यह वेदों की चर्चा हमारे साहित्य में भी नहीं होनी चाहिए थी ?

इष्टिं तेऽहं करिष्यामि
पुत्रीयां पुत्रकारणात् ।
अथर्वशिरसि प्रोक्तै
मन्त्रैः सिद्धि विधानत. ।।३।१५

विचार करने से पता चलता है कि आज का अनुसन्धानक भी सत्य कहता है क्योंकि उसका कहना है कि ससार के साहित्य जगत् में और विश्व के पुस्तकालय में सबसे प्राचीन ग्रन्थ 'ऋग्वेद' है यह एकदम सत्य ही है। साथ ही आज का स्कालर कहता है कि वैज्ञानिक विकास और अनुसन्धान के आधार पर यह ग्रन्थ ५ हजार वर्ष से पुराना नहीं हो सकता, यह भी सत्य है। अतः उसने वैज्ञानिक साधनों से ऋग्वेद नामक पुस्तक का कागज और प्रकाशन का आयु विवरण ठीक ही दिया है, किन्तु यह तो नहीं कि इससे पूर्व इस ग्रन्थ का प्रकाशन हुआ ही नहीं। वस्तुत. वर्तमान स्कालर्स के पास यह सबसे पुराना प्रकाशन है जिसकी आयु इन्होंने ५ हजार वर्ष के लगभग निश्चित की है। इससे अधिक आयु वाला ऋग्वेद का पुस्तक इनके पास नहीं है। और न ही मिल पा रहा है। सत्य तो यह है कि यह प्रसिद्ध ऋग्वेद का पुस्तक अनित्य है। जब एक दिन यह भी नहीं रहेगा तो ग्रन्थ का पुन. प्रकाशन होगा और सहस्रों वर्ष पश्चात् यदि फिर खोज की जायेगी तो वह इससे भी कम आयु वाला ग्रन्थ सिद्ध होगा।

अब विचारणीय विषय यह है कि इस पुस्तक में जो ज्ञान अन्तर्हित है, वह तो अनित्य नहीं है अपितु नित्य ही है। वह तो अनश्वर है, कभी भी नष्ट नहीं होता है, वह ज्ञान वाला ही अनादि अनन्त है, अत: उसका ज्ञान भी अनादि अनन्त है। यहां वेद का पुस्तक तो तो कागज और स्याही का एक लिपि के रूप में सम्मिश्रण है। वह तो नाश होगा और पुन: बनेगा। अतः बडी ही सावधानी से हमारा यह सिद्धान्त स्वीकार करना चाहिए कि 'वेद वह परम सनातन प्रभु की शाश्वती सत्ता है जिसका ज्ञान पूर्वक विचार करने से ही लाभ होता है। अत· मनुस्मृति में कहा है—

अधीत्य विधिवत् वेदान् ।।६।३६।।
ऋग्वेदविद् यजुर्वेदविच्च, सामवेदविदेव च । 'निगमाश्चैव वैदिकान् ।
४।१९
त्र्यवरा परिषज्ज्ञेया
धर्मसंशयनिर्णये ।।१२।१२।।
एकोऽपि वेदविद्धर्मं
यं व्यवस्येद् द्विजोत्तम. ।
स विज्ञेयो परो धर्मो
नाज्ञानामुदितोऽयुतैः ।। १२।१३
वेदोदित स्वकं कर्म
नित्य कुर्यादतन्द्रित. ।
तद्धि कुर्वन् यथाशक्ति
प्राप्नोति परमां गतिम् ।।४।१४।।

यदि सचमुच वेद पांच हजार वर्ष प्राचीन ही होते तो सृष्टि के आदि महाराज मनु अपने इस 'मनुस्मृति' नामक सविधान में वेदों की चर्चा कैसे करते ? अत: इसकी समस्त व्यवस्था मनु जी ने तो वेदों के आधार पर ही दी है। अत: किसी भी कसौटी के आधार पर यह सिद्ध नहीं होता कि वेदोत्पत्ति पांच-सात या दश-बीस हजार वर्ष से ही हुई। हां यह तो बुद्धि संगत और विज्ञान संगत है कि आज अनुसन्धानकर्ता ने ऋग्वेद नामक पुस्तक के कागज और प्रकाशन का वैज्ञानिक अनुसन्धान करके कह दिया कि—"वेदों की आयु तो ५ या ७ हजार वर्ष की है।" अत: उस कागज और प्रकाशन की इतनी ही आयु प्रतीत होती है।

यजुर्वेद के अध्याय १८, मन्त्र ६७ में कहा है—

ओ३म् ऋचो नामाऽसि यजूंषि नामासि सामानि नामासि । ये अग्नयः पाञ्चजन्याः अस्यां पृथिव्यामधि । तेषामसि त्वमुत्तमः प्र नो जीवातवे सुव ।।

भावार्थ—जो ऋग्वेद को पढते है वे ऋग्वेदी, जो यजुर्वेद को पढते है वे यजुर्वेदी, जो सामवेद को पढते है वे सामवेदी, और जो अथर्ववेद को पढते हैं वे अथर्ववेदी होते हैं। दो वेदों को पढते हैं द्विवेदी जो तीन वेदों को पढते हैं त्रिवेदी और चारों वेदों को पढते हैं वे चतुर्वेदी होते हैं। जो किसी भी वेद को नहीं पढते वे किसी भी संज्ञा को प्राप्त नहीं होते हैं। जो वेदवित् होवें, अग्निहोत्रादि यज्ञों से सभी मानवों के हितों को सिद्ध करें जिससे उनकी उत्तम कीर्ति हो और सभी प्राणी दीर्घायु होवें। अतएव—

वेद एव हतो हन्ति,
वेदो रक्षति रक्षितः ।
तस्मात् वेदो न हन्तव्य,
मा नो वेदो हतोऽवधीत् ।।

परम दयालु परमेश्वर द्वारा प्रदत्त वेद ज्ञान ही सकल ऐश्वर्यों का प्रदाता एवं समस्त सुखों का दाता तथा "ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः" अर्थात् बिना वेद ज्ञान के मुक्ति भी नहीं है। अतः वैदिक धर्मावलम्बियों की उद्घोषणा है—

चार वेद और मनु के ऊपर
जिस जिस को विश्वास नही।
आज नहीं, तो कल, परसों,
उनके बचने की आस नही।

इसीलिए हमें यह भी स्वीकार करके मनवाना है—

वेद जीवन का हमारे
श्रेष्ठ सुन्दर कर्म है।
वेद का पढना पढाना,
सब आर्यों का धर्म है।

अतएव—"कृण्वन्तो विश्वमार्यम्"

(पृष्ठ १ का शेष)

अमर हुतात्मा···

हमने अपना सौभाग्य समझा है हमारी यही परम्परा है और यही हमारी शृङ्खला। हमारे इस रहनुमा का बलिदान सत्य और धर्म की बलिवेदी पर हुआ था—वह सत्य और धर्म जो शाश्वत है, नित्य है, कल्याणकारी है। वीर पुरुष कभी भी न्याय के मार्ग से विचलित नहीं होते। आर्यसमाज अपने प्रातःस्मरणीय हुतात्माओं की राह पर चलने के लिए कृत संकल्प तथा कटिबद्ध है। आज हमारी उस महान् आत्मा के प्रति यही श्रद्धांजलि है।

स्वामी श्रद्धानन्द के प्रेरणाप्रद जीवन संस्मरण

लेखक—राजवीर शास्त्री

जो अपने बलिदान से
दे गए जन जन को आनन्द।
वे थे महान त्यागी
तपस्वी स्वामी श्रद्धानन्द॥

अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द का नाम भारतवर्ष के इतिहास मे सदा ही स्वर्णाक्षरो मे अंकित रहेगा। उनके यश का धवल पताका यावच्चन्द्रदिवाकरौ' पर्यन्त आकाश में फहराती रहेगी। उनके पावन कर्मों की मधुर स्मृतियाँ किस राष्ट्र भक्त के हृदय को विद्रावित नहीं करती होंगी। जिस महान् आत्मा ने भारत को अखण्ड एवं रामराज्य बनाने के स्वप्न न केवल अपने हृदय में सजोये थे, प्रत्युत उन्हें साकार करने मे ही अपने समस्त जीवन को आहुति राष्ट्र भृत् यज्ञ मे दे दी थी, क्या हम उनके महान् बलिदान दिवस पर उनके अधूरे कार्यों को पूर्ण करने का सत्यव्रत धारण नही करेगे ? क्या हम इतने अभागे एवम मृतप्राय हो गए है कि उनके द्वारा चलाये जनोपयोगी कार्यों को छिन्न भिन्न होता देखकर भी अनदेखी करते रहेंगे ? आज हम भारतवासियों को क्या हो गया है वे किस महा निद्रा मे बेसुध हुए पड हैं। जो अपने गौरवपूर्ण अतीत को भूल कर कलंक पंक से कलंकित करने में ही अपना सौभाग्य समझ बैठे हैं। आर्यो आओ इस महान बलिदानी के बलिदान दिवस पर कुछ संकल्प लेव और अपनी निष्कर्मण्यता चिर-निद्रा व स्वार्थमयी वृत्तियों को छोडकर नव चेतना जगायें और अपना प्रसुप्त दिव्यशक्तियों को प्रबुद्ध कर अपने धर्म की अनन्य-निष्ठा एवम् श्रद्धा से रक्षा करने मे तत्पर हो जाय।

(१) स्वराज्य को सुराज्य बनाने के स्वप्नद्रष्टा—आज हमारा देश स्वतन्त्र अवश्य है, किन्तु जिस देश के युवको मे राष्ट्रीय-भावना ही समाप्त हो गई हो, और स्वदेश प्रेम का बीज ही न रहा हो, वह देश स्वतन्त्र व सम्पन्न होता हुआ भी परतंत्र ही होता है। स्वतन्त्रता मिलने के पश्चात् इस देश ने एक बहुत बडी सम्पत्ति नष्ट कर दी है, वह है—स्वदेश-भक्ति। इस देश के सरकारी तन्त्र, राजनैतिक क्षेत्र, शिक्षणालय और विश्वविद्यालय व औद्योगिक क्षेत्र आदि सभी क्षेत्रो मे जब हम दृष्टिपात करते हैं तो हमें देश-भक्ति का सर्वथा ही अभाव दिखाई दे रहा है; जिसके परिणाम-स्वरूप देश की उन्नति अवरुद्ध हो गई है और देश को बाहर भीतर से खतरा ही खतरा दिखाई दे रहा है महान राष्ट्रभक्त स्वामी श्रद्धानद ने बहुत ही दूरदर्शिता से इस दशा को भांपा था। कांग्रेस की तुष्टीकरण की नीति के कारण कांग्रेस से पृथक होकर देशवासियो को एक चेतावनी दी थी, स्वराज्य तभी सम्भव हो सकता है जब हिंदू इतने अधिक संगठित और शक्ति शाली हो जायें कि नौकरशाही मुस्लिम धर्मोन्माद का मुकाबला कर सके। (२९ अप्रैल १९२६ के लिबरेटर' पत्र से)

स्वामी जी के इस उदघोष को साधारण जनता नहीं समझ सकी, किन्तु देश भक्तों ने उनकी बात की सराहना की। हिमालय सम-विशाल हृदय और देशप्रेम की ज्योति को सजोये हुए वीर सावरकर ने भारत-वासियों को चेतावनी देते हुए कहा था—'यदि हिन्दू जाति को ज्ञान और सम्मान से जीवित रहना है, तो उसे यही पाठ याद करना होगा और अमल मे लाना होगा। हे हिंदुस्तान के हिन्दुओ! यदि तुमने उस महान हुतात्मा के बहुमूल्य आदेश की अवहेलना की तो तुम्हारा नाश निश्चित है।'

स्वामी जी महाराज ने दिल्ली के चादनी चौक मे गोरखो की संगीनो के आगे बडी निर्भयता से सीना केवल इसीलिए नही ताना था कि देश परतन्त्रता की बेडियो से उन्मुक्त हो जाये प्रत्युत वे स्वराज्य को सुराज्य भी बनाने को बहुत उत्सुक थे अन्यथा वे कांग्रेस से अलग कभी नही होते। कांग्रेस की जिस नीति के कारण वे पृथक् हुए थे, उस तुष्टीकरण की नीति का यह दुष्परिणाम है कि आज प्रशासन देशद्रोहियो को भी कठोर दण्ड इसलिए नहीं दे रहा है कि यह वर्ग हमारे से रुष्ट हो जायेगा। जो प्रशासन अपनी प्रजा को न्यायोचित व्यवस्था नहीं दे सकता है, वह क्या राज्य कर सकता है। वह जीता हुआ भी मृतप्राय होता है। दोषी को क्षमा करना किसी रूप में साधु के लिए भूषण हो सकता है, किन्तु राजा के लिए क्षमा करना महादूषण होता है।

(२) देश की अखण्डता के सजग प्रहरी स्वामी श्रद्धानन्द जो कहते थे उसे करके दिखाते थे। यह उनकी महती विशेषता थी। राष्ट्रभक्ति उनके जीवन में कूट कूट कर भरी हुई थी इसी लिए अंग्रेज प्रशासन उनके प्रत्येक कार्यकलाप पर क्रूर दृष्टि सदा रखता था। इसी परि-प्रेक्ष्य मे एक बार भारत के वायसराय ने गुरुकुल कांगडी को देखने की इच्छा प्रकट की स्वामी जी ने घूम घूम कर वायसराय को गुरुकुल का प्रत्येक भाग दिखाया। सब कुछ देखने के पश्चात वायसराय ने स्वामी जी से पूछा—मैंने सुना है कि गुरुकुल में बम बनाये जाते हैं। स्वामी जी ने हंस कर और बडी निर्भीकता से उत्तर दिया हां बम बनाये जाते हैं, किन्तु जैसा आपने सुना है वैसा नही। वायसराय ने उनको देखना चाहा। स्वामी जी ने गुरुकुल के ब्रह्मचारियो को एक पंक्ति मे लाकर खडा कर दिया और कहा कि ये हैं गुरुकुल के बम। बम तो कुछ सीमित स्थान पर ही विनाशलीला करते हैं। किन्तु ये वह कार्य करगे कि जिससे विदेशी शासन शीघ्र ही नष्ट हो जायेगा और हमारा देश पूर्णत स्वतन्त्र हो जायेगा। वायसराय यह सुन कर और स्वामी जी की बातो को समझकर चकित हो गया।

स्वामी जी बहुत दूरदर्शी थे जिस रहस्य को महात्मा गांधी भी नही समझ सके, जो स्वतन्त्र-भारत के लिए एक बडा खतरा हो सकता था और हुआ भी स्वामी जी ने उसे बहुत पहले ही परख लिया था। इसलिए वे कांग्रेस से अलग होकर भी निराश नहीं हुए और भविष्य मे होने वाले विघटन को देख कर दलितोद्धार तथा शुद्धि आदोलन मे लग गये। जिनके पूर्वज राम कृष्ण के भक्त थे, भारतीय संस्कृति के पुजारी रहे थे, आज उन्हें ईसा मूसा की भेडो में सम्मिलित देखकर उनकी आत्मा रो पडती थी। स्वामी जी को यह ज्ञान पहले ही हो गया था कि यदि हिंदू धर्म से भूले भटके इन लोगो को शुद्ध नहीं किया गया तो यह देश स्वतन्त्र होकर भी अखण्ड नही रह सकता। अत स्वामी जी पूरी शक्ति से शुद्धि आन्दोलन में लग गए। स्वामी जी की बातों में जादू जैसा प्रभाव होता था जिसके कारण पर्याप्त संख्या में मुसलमान स्वामी जी के भक्त बन गए थे। उसी का यह परिणाम हुआ कि जिस दिल्ली की जामा मस्जिद से कभी किसी हिंदू का भाषण नही हुआ था वहां इस निडर सन्यासी का बिना किसी सुरक्षा के भाषण हुआ। जिसमे स्वामी जी ने वेद मन्त्र का पाठ करके वेद के मानव धर्म का उपदेश दिया जिसका बडा प्रभाव हुआ। परन्तु एक असगरी बेगम को शुद्ध करके जब शान्ती देवी बनाया गया तो इस घटना से मजहब के उन्मादी मुसलमान स्वामीजी से रुष्ट हो गये जिसके कारण एक मदान्ध अब्दुल रशीद ने २३ दिसम्बर १९२६ को सायंकाल स्वामी जी के निवास स्थान (श्रद्धानन्द बाजार मे) आकर स्वामी जी के शरीर को गोली मार कर छलनी-छलनी कर दिया स्वामी जी हमारे बीच नही रहे, परन्तु उनके चलाये शुद्धि आंदोलन का कार्य स्वामी जी की मृत्यु के बाद मन्द पड़ता गया। यदि आर्य जाति यह भूल न करती तो हमें १९४७ में भारत को खण्ड खण्ड न देखना पडता। और अब भी सचेत होकर शुद्धि आदोलन को तीव्रता देकर चलाये तो हमारा हमारा देश भविष्य में होने वाले विघटन से तथा विघटित करने वाली शक्तियों से बच सकता है। अन्यथा उत्तरोत्तर विघटन का भूत बढता ही जा रहा है इससे रक्षा का अन्य कोई उपाय नही है।

(३) भारतीय संस्कृति के अनन्य भक्त स्वामी श्रद्धानन्द जी ने जब सन्यास नही लिया था, उस समय उनका नाम मुंशीराम था। एक दिन आपकी बच्ची स्कूल से पढ कर घर पर आई तो वह गा गाकर बोल रही थी—

ईशा-ईशा बोल,
तेरा क्या लगेगा मोल।
ईशा मेरा राम रमय्या,
ईशा मेरा कृष्ण कन्हैया॥

बालिका गाने को सुनकर मुंशीराम स्तब्ध रह गए और गंभीरता से विचारने लगे कि इसमें बालिका का क्या दोष है ? इसे तो जैसा स्कूल में सिखाया गया है, वैसा ही यह बोल रही है। इसमे हमारा ही दोष है जो अपने बच्चों को ईसाई स्कूल में भेज कर अपनी संस्कृति व सभ्यता का शत्रु बना रहे हैं। ऐसी शिक्षा दिलाने से भी

क्या लाभ, जिससे अपने पूर्वजों के प्रति घृणा पैदा हो जाये और अपनी सस्कृति से बहुत हम दूर हो जायें। मुन्शीराम जी ने तभी दृढता से एक निर्णय लिया कि लडकों के गुरुकुलों की भांति लडकियों के लिए भी गुरुकुल खोलूगा और कन्या गुरुकुल की स्थापना कर के उसमें अपनी बालिका को प्रवेश कराया। ऐसे सस्कृति भक्त महात्मा के बलिदान दिवस पर क्या हमारे मनो में भी कुछ चिन्तन शक्ति जागृत होगी, जो अपने बच्चो को अग्रेजी सभ्यता की छत्रछाया मे चलने वाले तथा अराष्ट्रीय भावना से ओत प्रोत शिक्षणालयों मे सहर्ष भेज रहे हैं। क्या वे इस बात को भूल जाते कि ऐसे विद्या केन्द्रों में पढकर हमारी भावी सन्तान का जीवन पथ क्या होगा ? जिस सस्कृति व सभ्यता को सात सौ वर्ष तलवार के बल से मुस्लिम शासक तथा १५० वर्षों तक कूटनीतिज्ञ अंग्रेज शासक तक नहीं मिटा सका, आज वही सस्कृति स्वत ही मिट रही है। क्या हम तथाकथित विदेशी ताकतो के षड्यन्त्रों से सावधान होने की बात भी सोचते हैं ? यदि नहीं, तो ऐसे महात्माओं के बलिदान दिवस मनाने से क्या लाभ है ?

सच्चे दानवीर–एक बार मुंशीराम जो गुरुकुल कांगडी को चलाने के लिए किसी सम्पन्न व्यापारी के घर पर चन्दा लेने के लिए गए। घर का स्वामी घर पर ही था, किन्तु दो-तीन बार आवाज देने पर भी घर से बाहर नहीं आया। मुंशीराम जी विचारने लगे, क्या कारण है कि जो यह सेठ हम से मिलना भी नहीं चाहता। बहुत सोचने पर ध्यान आया कि अभी मेरे अन्दर कुछ कमी है, अभी मैं सच्चा भिक्षुक नहीं बना हू। क्योंकि अभी मेरे पास घर का मकान है, जिसका मैं मालिक हू, फिर मैं भिखारी कैसा ? इसी विचार धुन मे चन्दा करने का काम बन्द करके गुरुकुल में पहुच गये। एक सरकारी दस्तावेज मगाकर घर के मकान को भी गुरुकुल को दान करने की इच्छा प्रकट की। किन्तु फिर ध्यान आया कि तेरे दो लडके हैं, ऐसा न हो कभी वे बाद में मुकदमा करें, पहले मैं उनसे भी पूछ लेता हू, क्योंकि पैतृक सम्पत्ति पर तो उनका भी अधिकार है। दोनों बच्चों को बुला कर बडे प्रेम से उनको बात समझाई कि देखो बच्चो ! अब तुम समझदार हो गए हो। मैंने यह दस्तावेज लिखा है, इसके एक एक अक्षर को पढ़कर इस पर हस्ताक्षर करना। बच्चों ने उस कागज को ध्यान से पढ़ा और अपने पिता की हार्दिक इच्छा में विघात न करते हुए उस कागज पर हस्ताक्षर कर दिये। तत्पश्चात् स्वामी जी ने गुरुकुल के उत्सव पर यह घोषणा की कि अब मैं सच्चा भिखारी बन गया हूं। मेरे पास अभी तक पैतृक भवन था, उसे मैं आज गुरुकुल को दान दे रहा हूं।

पाठक गण विचार करें कि इससे बडा दान कौन हो सकता है कि जिसने अपने निवास स्थान को भी परोपकारार्थ दान में दे दिया। आज हम परिवार की चिन्ता में ही लगे रहते हैं, समस्त जीवन में उन्हीं के सुख आराम का सामान जुटाने मे लगे रहते हैं और उसके बाद यदि कुछ धन बचता दिखाई देता है तो हम दान कर पाते हैं किन्तु इस सच्चे साधु के जीवन को देखिए कि जिसने अपने बच्चों के निवास के घोसले को भी छिन्न-भिन्न कर सार्वजनिक हित में दान कर दिया।

(५) राष्ट्र भक्त सच्चे पारखी नेताओ की श्रद्धांजलि–सस्कृत में एक लोकोक्तिक है—'अहो किमपि चित्राणि चरितानि महात्मनाम्' महापुरुषों के जीवन चरित्र बहुत अनोखे ही होते हैं। उनके जीवन का सही मूल्यांकन महान् पुरुष ही कर पाते हैं। पाठक उन्हीं के शब्दों में पढें और विचार करें—

(१) वीरता और बलिदान की मूर्ति—(लोह पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल)

स्वामी श्रद्धानन्द जी की याद आते ही १९१९ का दृश्य मेरी आंखों के सामने खडा हो जाता है। सरकारी सिपाही फ़ायर करने की तैयारी में हैं स्वामी जी छाती खोलकर सामने आते हैं और कहते हैं—'लो चलाओ गोलियां।' उनकी उस वीरता पर कौन मुग्ध नहीं हो जाता ? मैं चाहता हूं कि उस वीर सन्यासी का स्मरण हमारे अन्दर सदैव वीरता और बलिदान के भावों को भरता रहे।

(२) उनका सत्य ही जीवन था, (कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर)

श्रद्धानन्द जी की भारत को देन उनकी सत्य में अगाध श्रद्धा है। श्रद्धानन्द का यह नाम ही उनकी उस भावना का परिचायक है। उनके लिए सत्य और जीवन एक हो गए। उनकी मृत्यु उनके निर्भीक अनथक प्रयत्नों के अमर चित्रों को आलोकित करती हुई एक प्रकाश की किरण की तरह हमारे सामने आती है।

(३) सच्ची राष्ट्र भक्ति के प्रेरणा-स्रोत—

(श्री राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन)

अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द ने गुरुकुल की स्थापना कर हिन्दी को मुख्य स्थान देकर शिक्षा संबंधी दूरदर्शिता और सच्ची राष्ट्रीयता का रास्ता दिखा दिया था। उनकी सात्त्विक सरलता, सिद्धान्तों में दृढता, देश, मानव, समाज तथा प्राणिमात्र के लिए सच्चा प्रेम और स्वाभाविक निर्भयता आदि गुणों की छाप आज भी मेरे हृदय पर अंकित है और मेरे जीवन की सुरक्षित सम्पत्ति हैं।

(४) स्वामी जी प्रथम सास्कृतिक पथ प्रदर्शक थे—(श्री डा० राजेन्द्र-प्रसाद भारत के प्रथम राष्ट्रपति) (क) स्वामी जी के गुणों को भारतवर्ष १९१९ ई० के बाद ही पूरी तरह से जान सका। वे स्पष्टवादिता और निर्भीकता के मूर्तिमान ज्वलत स्वरूप थे। (ख) जो लोग काले कानून के विरोधी आन्दोलन के समय चांदनी चौक में भी मौजूद थे, उनके हृदय-पटल पर भी स्वामी जी की वह निर्भीकता मूर्ति रूप में चित्रित है। (ग) उनकी शुद्ध तथा उच्च भावना ने ही जामा मस्जिद के मिम्बर पर से उनसे उपदेश करवाया और हिन्दू मुस्लिम एकता का मनोरम दृश्य दिखलाया। (घ) भारत के आधुनिक इतिहास में स्वामी जी का स्वरूप प्रथम सांस्कृतिक पथप्रदर्शक का है।

(५) हिन्दू-मुस्लिम एकता तथा निर्भीकता के प्रतिमूर्ति—(भारत के प्रधान मन्त्री श्री पं० जवाहर लाल)

(क) आर्यसमाज के इस प्रमुख नेता ने देहली की शानदार जामा-मस्जिद की वेदी पर खड़े होकर हिन्दुओं तथा मुसलमानों के सम्मिलित विशाल जनसमुदाय को हिन्दू-मुस्लिम एकता तथा भारतवर्ष को स्वतन्त्रता का सन्देश दिया था।

(ख) स्वामी श्रद्धानन्द में इस प्रकार का निर्भीकतापूर्ण साहस आश्चर्यजनक मात्रा में विद्यमान था। वृद्धावस्था में भी उनकी उन्नत सीधी आकृति तथा सन्यासी वेश में उच्च भव्यमूर्ति, लम्बा कद, शाहाना शकल·· इस सजीव मूर्ति को मैं कैसे भूल सकता हूं।

(६) वे वीरों के समान मृत्यु प्राप्त हुए—(राष्ट्रपिता महात्मा-गान्धी)

(क) वे वीर के समान जिये और वीर के समान मरे।

(ख) गीता के शब्दों में 'सुखिनः क्षत्रिया पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम्।' धन्य और सौभाग्यशाली वे पुरुष हैं जिनको ऐसी मृत्यु प्राप्त होती है।

(ग) स्वामी श्रद्धानन्द एक सुधारक थे। कर्मवीर थे, वाक्शूर नहीं।

कैसे भूलें स्वामी श्रद्धानन्द को

धर्म पथ पर लिख गये हैं जो लहू से निज कहानी।
कैसे भूलें स्वामी श्रद्धानन्द की अनुपम दीवानी ॥

छूके वे ऋषि-सङ्ग पारस हो गए सोना सुहाना,
नास्तिकता खाक हो गई धर लिया सुधर्म बाना।
धा गये नव मार्ग पर उत्साहमय जागी जवानी,
कैसे भूलें स्वामी श्रद्धानन्द की अनुपम दीवानी ॥१॥

छोडकर कुसग सारा जब किया सत्यार्थ दर्शन,
हो गया सद्बोध उर में और जीवन भी सुपावन।
वेद पथ पर पांव रखकर जिंदगी हो गई सुहानी,
कैसे भूलें स्वामी श्रद्धानन्द की अनुपम दीवानी ॥२॥

कौन दाता परहितों पर अपना सब कुछ वार देते,
वे मसीहा ऐसे ही थे जो अनोखा प्यार देते।
इक गुरुकुल को बनाने भवन की बेची निशानी,
कैसे भूलें स्वामी श्रद्धानन्द की अनुपम दीवानी ॥३॥

कैसे की जाती है सेवा ये महाशिक्षक निराले,
ब्रह्मचारी उल्टी करता धर दिए हाथों के प्याले।
दिव्य भावों में भरा वह देवता था निरभिमानी,
कैसे भूलें स्वामी श्रद्धानन्द की अनुपम दीवानी ॥४॥

वेद का उपदेश करते सारे जग को ही जगाते,
दे दिया आर्यत्व 'बेगम' को थे वे ऐसे सयाने।
एक यवन ने मार गोली, छीना हमसे वह था ज्ञानी,
कैसे भूलें स्वामी श्रद्धानन्द की अनुपम दीवानी ॥५॥

दिखला के सन्मार्ग हमको दूर हमसे फिर चले,
है यही कर्त्तव्य अपना ज्ञान-ज्योति नित जले।
आज उनकी यादों में बरबस बहाये नैन पानी,
कैसे भूलें स्वामी श्रद्धानन्द की अनुपम दीवानी ॥६॥

युग और दृष्टि : प्रवचन

—भैरवदत्त शुक्ल

युग के दो जोड़े, द्वन्द्व या युगल का ही एक व्यापक अभिधान है। इसमें यति-गति, अन्धकार-प्रकाश, अवनति-उन्नति, ह्रास-विकास का सतत द्वन्द्व नर्तन करता प्रतीत होता है। सर्वद्रष्टा नियामक परम सत्ता जो विधि-विधान रच रखा है, उसी की परिधि में कर्म-चक्र पर सतत नर्तित प्राणि-समूह या तो कर्म भोग करता है या कर्म प्रवर्तन के लिए प्रयत्नशील है। आर्ष-प्राप्त अनुभव-सिद्ध और व्यवहार-तुला पर भली भांति से तुली परम्परा का पल्ला पकड़ कर, शिव संस्कारों का सुकोमल-सा सम्बल लेकर मानव-मनीषा सुधार और उद्धार के कोलाहल में देवत्व की ओर अग्रसर होने वाले सु-पथ का साज-शृङ्गार करने में लीन रहती है। कृमि-कीट, विषाणु-जीवाणु, पशु-पक्षी कर्म-भोग की कुलिश-कठोर कारा मे बद्ध-विवश जीवन-यापन करते पाये जाते हैं। युग का वक्ष.स्थल सभी के लिए खुला हुआ है। वह प्रतिपल जीवन का आह्वान करता है, बनने के लिए, संवारने के लिए, ऊर्ध्व संचरण के लिए।

मगर वाह रे मानव! समस्त प्राणियों का सिरमौर होते हुए भी बुद्धि-बल पर उन्मत्त बन कर वह कौन-सा प्रकाण्ड ताण्डव नहीं करता। वह आस्तिकता के पयोधरों का पवित्र दुग्ध-पान न कर नास्तिकता नटी के नाज-नखरों में खो कर 'स्वस्ति' को 'दुरस्ति' मे बदल देता है। कभी जिस मानव ने ब्रह्मास्त्र, नारायणास्त्र पाशुपतास्त्र जैसे विध्वंसकारी आयुध बना कर भी विवेक-शक्ति से समझौता रखने के कारण भूल कर भी उनका प्रयोग नहीं किया था, वही अब छोटी-छोटी बातों पर अणु-युद्ध की धमकी देता 'स्वस्ति' का सबल संवाहक कहलाने वाला मानव 'दुरस्ति' के वात्याचक्रों में उलझ गया है।

प्रकृति-भेद—यही कारण है कि मानव-दृष्टि में विभेद परिलक्षित होता है। (१) कुछ ऐसे मानव हैं जिनके लिए चाहे युग में असत्य की आंधी उठे, अन्याय के बवण्डर चलें, अनीति की कर्म-नाशा बहे, व्यभिचार का प्रचार-प्रसार हो, रूढ़ियों के गहन पर्त जमते जायें या जीर्ण-शीर्ण परम्परा की दुर्गन्ध फैलती रहे, कोई अन्तर नहीं पड़ता। वे बस सांसें ढोते चलते हैं। उनकी धमनियों के रक्त में तनिक भी उबाल नहीं। चाहे सड़क पर बलात्कार हो रहा हो, किसी सज्जन की हत्या की जा रही हो, किसी की अथक श्रम से अर्जित सम्पत्ति लूटी जा रही हो, वे देखते हुए भी अनदेखा कर देते हैं। उनकी चाल भेड़-चाल होती है। कहां परिवर्तन की आवश्यकता है? किस नियम या विधि का सहारा छोड़ना अनिवार्य है? कौन-सी क्रांति आर्थिक सामाजिक या प्रशासनिक क्षत्र में अपेक्षित है? आदि बातो से उनका कोई सम्बन्ध नहीं होता। चाहे 'ट्रेन' चार घण्टे देर से आये, 'क्यू' में खड़े-खड़े 'कण्ट्रोल' की दुकान से आवश्यक उपभोग्य सामग्री मिल न पाये, सरकारी या अर्द्धसरकारी विभाग में चक्कर काटते हुए महीनों का समय बीत जाये, लेकिन अपना महत्वपूर्ण काम अटका ही रहे, फिर भी वे खामोश रहते हैं। ऐसे लोग 'अस्ति' के पुजारी हैं।

(२) कुछ मानव सदैव अतीत में खोने वाले होते हैं। उन्हें वर्तमान में कोई अच्छाई नहीं दिखाई पड़ती। उनके लिए हर आदमी बेईमान है, हर विभाग भ्रष्टाचार में लिप्त है, हर गली रास्ता या चौराहा बुराई का अड्डा है और किसी का भी विश्वास करना सर्वथा अनुचित है। वे समस्त भली उपलब्धियां नकारते हैं, हर एक पर अगुली उठाते हैं। सम्बन्धी या पड़ोसी तो बहुत दूर हैं, अपनी पत्नी, बेटे, नौकर-चाकर यहां तक कि खुद पर शक करने की उनकी आदत बन गई है। उनके लिए ऊषा की लालिमा खोटी है, मध्याह्न उबाऊ है और सध्या का सिन्दूरी रग विनाश का परिचायक है। उन्हें न तो दिन में चैन मिलता है, न रात में करार। वे मखमली गद्दे पर करवटें बदलते अनिद्रा की अलकों में उलझ जाते हैं, दिन में काम करते समय ढीले ढाले और सुस्त बने रहते हैं। वे या तो बातें करने से कतराते हैं या बातों में पर-निन्दा का जहर घोल कर सारे वातावरण को विषाक्त बनाने पर तुल जाते हैं। वे करें भी तो क्या? उन पर तो 'दुरस्ति' के कुसस्कारों की कलुषित काई जम गई है।

(३) कुछ मानव ऐसे हैं, जिन्हें प्रत्येक वस्तु में अच्छाई दृष्टिगत होती है। उनके लिए बुरे से बुरा व्यक्ति भी कोई न कोई विशेषता रखने वाला मालूम पड़ता है। वे बोलते हैं तो सुगन्ध सने सुमनों से सुन्दर शब्दों के सहारे, इसीलिए हर दिल अजीज होते हैं और हर आदमी के करीब, बहुत ही करीब पहुच जाते हैं। वे युगीन उपलब्धियों की महत्ता स्वीकार करते हैं। अतीत के उपादेय तत्व लेते हुए वर्तमान को सज्जित कर के भावी युग की मगलमयी योजनाएँ बनाना, सिद्धात और व्यवहार का समन्वय करना और अच्छाई की शिव सुन्दरता पर रीझ कर पुलक जाना उनके स्वभाव का अनिवार्य अग बन जाता है। वे पापी से नही, पाप से घृणा करते हैं, अन्यायी से नहीं, अन्याय से लड़ते हैं, रूढ़िवादी की कपाल-क्रिया नही करते, रूढिवाद पर धन पटकते हैं और किसी बुराई का खण्डन विनम्रता से करते हैं जब कि भलाई का खण्डन सिंह-गर्जना की भाषा में निर्भीकता के साथ सिद्ध करने से तनिक भी नहीं हिचकते। ऐसे ही शार्दूलों में राम, कृष्ण, भीष्म, अष्टावक्र, बुद्ध, दयानन्द, विवेकानद, श्रद्धानन्द, लेखराम, गुरुदत्त, स्वातंत्र्य वीर सावरकर की गणना की जाती है। वे 'स्वस्ति' की सीमा में रहते हैं। उनके लिए जो कुछ भी है, वह 'स्वस्ति' के अलावा और कुछ नही।

'स्वस्ति' की महत्ता

इसीलिए वेद में 'स्वस्ति' का महत्व पदे-पदे प्रतिपादित किया गया है। सन्ध्या और हवन के सकलित मन्त्रों में 'स्वस्तिवाचन' के मन्त्रों का भी इसीलिए समावेश किया गया है कि नित्य यज्ञ करते समय प्रत्येक आर्य सनातन वैदिक धर्मी भारतीय सर्वप्रथम ईश-प्रार्थना के उपरान्त स्वस्तिवाचन करे—'स्वस्ति का जय-गान करता रहे।

उसी प्रकरण का एक मन्त्र प्रस्तुत है—

ओ३म् स्वस्ति नो मिमीतामश्विना
भग. स्वस्ति देव्यदितिमनर्वण ।
स्वस्ति पूषा असुरो दधातु न
स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना ॥

ऋग्वेद ५।५१।११ ॥

अर्थात् (अश्विना) अश्विनी देव—प्राण और अपान (भग.) वैराग्य, ज्ञान, ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, (अनर्वण'=देव्यदिति') अपराजेय-असाधारण अवरोध-रहित आत्मिक सामर्थ्य से युक्त लोकोपकारिणी स्वतन्त्रता (सुचेतुना द्यावापृथिवी) चेतना सम्पन्न द्युलोक और पृथ्वी अथवा हमारा मस्तिष्क, ओज-तेज-पूर्ण सर्जनारत नाभि-प्रदेश (असुर पूषा) जीवनदाता प्राणों का सरक्षक और सारे ससार का पोषण करने वाला परमेश्वर (स्वस्ति न. दधातु) हमें स्वस्ति-लोक-कल्याण के पथ का पथिक बनाये।

इस मन्त्र में स्वस्ति के सुलभ होने की स्थिति स्पष्ट की गयी है, जिसे सक्षिप्त सारगर्भित रूप में उपस्थित किया जा रहा है।

(१) स्वस्ति न दधातु—हमें स्वस्ति दो शिव, सुन्दर, सत्य-सब कुछ प्रदान करो। स्वस्ति की याचना तो ससार का प्रत्येक व्यक्ति करता है पर वह उसे ही उपलब्ध हो सकती है जो—(क) स्वस्थ आस्तिकता की आधारशिला पर अधिष्ठित होकर सर्वतोभावेन ईश्वर की स्तुति विनम्र शब्दो में करता हो। उसमें गर्व या अहकार का लेश मात्र भी न हो। (ख) स्वयमेव अग्नि का स्वरूप हो, अपने क्षेत्र में अग्रणी का दायित्व नि स्वार्थ भाव से वहन कर सकता हो और कलुष-कर्दम का समूलोच्छेदन कर के ज्ञान और प्रगति की परम्परा के अग्रसर करने में पूर्ण समर्थ हो। (ग) जिसकी दृष्टि में अपने यज्ञमय जीवन के लिए परमेश्वर को ही पुरोहित बनाने की क्षमता मिल गई हो अर्थात् जो अपना सम्पूर्ण जीवन लोक-हित पर उत्सर्ग कर सकता हो। (घ) दिव्यता से सम्पन्न हो अर्थात् मानव के सहज सस्कृत स्तर को अक्षुण्ण रखते हुए देवत्व-प्राप्ति के अनुष्ठान द्वारा नि श्रेयस् का सही पथिक बना हुआ हो। (ङ) अपने आप दान, देव-पूजा और सगतिकरण का व्यावहारिक अभ्यासी हो। (च) निर्बलों और अशक्तों मे बल और शक्ति का सचार कर सकता हो। (छ) अमूल्य रत्नो का आकलन कर के उन्हें धारण करने की विधि से परिचित हो। उसे इस बात का सम्यक् विवेक हो कि जड़ पाषाणों-मोती, पुखराज, हीरा, लाल आदि के धारण करने से 'दुर्' या बुराई का उन्मूलन नहीं हो सकता। उसके लिए तो उत्तम गुणों और लक्षणों रूपी रत्नों के पहिनने की अपेक्षा होती है। विनम्रता, लोक-सेवा, त्यागमय भोग, लोलुपता-राहित्य, मृग-तृष्णा-शून्यता जैसे रत्नों से ही मानव को विभूषित होना चाहिए। (ज) जो परमेश्वर को ही अपना पिता, माता और सरक्षक स्वीकार करता हो। (झ) जो स्वय प्रभु का सुयोग्य पुत्र

युग और दृष्टि : प्रवचन

बनने के लिए प्रयत्नशील हो। ज्ञान, शक्ति, नेतृत्व, चेतना और आनन्द से परिपूर्ण होकर मरण और वार्द्धक्य के सत्रास से सर्वथा मुक्त होकर अमृत संतान बनने के प्रयास में संलग्न हो। (ञ) जो मनसा, वाचा-कर्मणा परमेश्वर का अविश्वस्त बन गया हो। (च) जो उपलब्ध सांसारिक पदार्थों व्यक्तियों और सामाजिक सम्बन्धों से केवल स्वस्ति के लिए सम्पृक्त हो, अपने स्वार्थ के लिए नहीं। जिसकी विद्या विवाद के लिए न हो, सम्पत्ति अहंकार की अभिवृद्धि के लिए न हो और शक्ति पर-पीडन या अतिचार के लिए न न हो। जो अपनी विद्या को सम्वाद या मेल मिलाप में प्रयुक्त करे, सम्पत्ति को सार्वजनिक हित पर न्योछावर कर दे और शक्ति को मानवता की सुरक्षा पर खपा दे। जो सच्चे अर्थ में शिव हो, पूत हो और पालक-रक्षक हो।

(२) अश्विनौ मिमीताम्—'स्वस्ति' अश्विनी कुमारों से मिलती है। ये दो हैं युग्म के रूप में सदैव साथ-साथ गतिशील रहते हैं। इन्हीं को पौराणिक परम्परा देवताओं का चिकित्सक बतलाती है। निस्सन्देह ये सुयोग्य वैद्य हैं, सजग-सतर्क सारथी हैं। इनका स्यन्दन मन की गति से भी अधिक तीव्रगामी हैं मांस, मदिरा, रक्त, छेदन-भेदन-शल्य-क्रिया प्रभृति चिकित्सा के उपकरण तो असुरों के लिए हैं, तामसी तमोचर वर्ग के लिए हैं। देवों और देवत्व के अनुष्ठान में लीन मनुष्यों की चिकित्सा के उपकरण के रूप में जड़ियाँ बूटियाँ, वनस्पतियाँ ही होती हैं। उन्हीं का प्रयोग कर के ये अहर्निश प्रतिपल आरोग्य-साधना में लीन रहते हैं।

देव लोग असाध्य से असाध्य रोग इन्हीं चिकित्सकों के सहारे मिटा देने में सफल होते हैं। महर्षि दयानन्द ने भी इन्हीं देवों के चिकित्सकों का आश्रय लेकर न जाने कितनी बार विद्वेषियों द्वारा दिये गए विष के दुष्प्रभाव का शमन किया था और अन्तत भयावह-भीषण रोग और अशक्तता के आतिशय्य में भी मानसिक दृष्टि से वे पूर्ण स्वस्थ बने रहे थे।

इन्हीं देव चिकित्सकों को 'दस्र' का अभिधान प्रदान किया गया है क्योंकि ये आश्चर्यजनक-असाधारण कृत्य सम्पादित करते हैं। सुदीर्घ आयु प्रदान करना इन्हीं के आधिपत्य में है ये प्रत्येक क्षण हमारे साथ रहते हैं, जब कि हम कितने भोले और नासमझ है कि इन्हें पहचान नहीं पाते। जब कभी हम हवन-यज्ञ सम्पादित करते हैं तो इनकी स्तुति करने में कोई कसर नहीं रखते और अग्नि में इनके लिए विशिष्ट सामग्री एवं घृत की आहुति देकर समझ लेते हैं कि हमने उनका यथेष्ट सत्कार कर दिया।

हम हवन-मन्त्रों मे तनिक देर के लिए उन दो पंक्तियो का स्मरण तो करें, जिनका यह रूप है—"भूरग्नये प्राणाय स्वाहा, भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा।" इसमें जो 'प्राण' और 'अपान' का उल्लेख हुआ है, वही 'अश्विनौ' हैं और 'स्वस्ति' प्रदान करने मे किसी प्रकार का सकोच नहीं करते। हमारी सम्पूर्ण इन्द्रियों की ज्ञान और कर्म से सबद्ध शक्ति एवं सामर्थ्य इन्हीं के सहारे शाश्वत और चिरन्तन बन सकती है। यही नहीं, हमारा मन, चित्त और अन्त करण भी इन्हीं का सबल लेकर संयमित सन्तुलित और अनुशासित स्थिति में रह सकता है।

हम में यदि इनका समुचित सहारा लेने की लालसा और समीहा है तो हमें प्राणायाम के सुदीर्घ अभ्यास के अनन्तर धारणा, ध्यान के माध्यम से शनै शनै समाधि की ओर अग्रसर होना पड़ेगा। प्राणायाम की सिद्धि के लिए यम-नियम पालने होंगे। यम सार्वजनिक जीवन से सम्बद्ध हैं और सख्या में पांच हैं, अहिंसा, सत्य, अस्तेय (चोरी न करना), ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह (आवश्यकता से अधिक तनिक भी सचय न करना)। नियम व्यक्तिगत जीवन से जुड़े हुए हैं और ये भी पांच ही हैं—शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर-प्रणिधान (ईश्वर-भक्ति)।

यम-नियम के परिपालन से स्थैर्य एवं एकाग्रता मिलती है, जिसके परिसर में प्राणायाम पुलकने लगता है, फिर तो धारणा स्वाभाविक बन जाती है और ध्यानावस्था की उपलब्धि में सन्देह नहीं रह जाता। अन्तत समाधि हस्तामलकवत् मालूम पड़ती है।

जब इतने क्रम और सगति के फलक पर प्राण और अपान सदृश देव (नि स्वार्थ लोक-कल्याण-लीन) चिकित्सकों की चिकित्सा आधृत होती है तो फिर उससे लोक-चिकित्सा में बाधा उपस्थित होने का प्रश्न ही कहां उठता है? इसे हम ध्यान में तो रखें।

(३) भग—यह अदिति का पुत्र है। 'दिति' पराधीनता का व्यंजक है। ठीक उसके विपरीत 'अदिति' स्वाधीनता का बोधक है। 'भग' का विकास परतन्त्रता में नहीं हो हो सकता। उसके लिए तो स्वाधीन परिसर चाहिए। यह भग छ: रूपों में होता है—वैराग्य, ज्ञान, ऐश्वर्य, धर्म, यश और श्री। इन उपर्युक्त छ भगों के अभाव में 'स्वस्ति' की कल्पना तक नहीं की जा सकती। ऐश्वर्य की परिधि में—अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व, वशित्व-अष्ट सिद्धियां भी समाविष्ट हैं। इनके न होने से समष्टिपरक स्वस्ति आकाश-कुसुम ही बनी रहती है। इन छ: भगों के व्यूह से ही—स्नेह, ऐश्वर्य, यश और लक्ष्मी आदि की सकुचित स्थिति दूर होकर विस्तृत लोक-कल्याणपरक अवधारणा विकसित होती है।

(४) देवी अदिति—महर्षि कश्यप की दो पत्नियां पुराणों में बतलाई गई हैं—दिति और अदिति। कश्यप का तात्त्विक अर्थ है द्रष्टा—देखने वाला। दिति और अदिति का तात्पर्य ऊपर सकेतित हो किया जा चुका है।

द्रष्टा की दृष्टि की अच्छाई और बुराई पर ही दृश्य अच्छा या बुरा बन जाता है। दिति या पराधीनता के वातावरण मे अशिवता ही पनप सकती है। सामाजिक विघटन का विषम पथ बन सकता है और विश्व के विध्वंस के आयोजन समायोजित हो सकते हैं जब कि अदिति या स्वाधीनता के पावन-मर्यादित परिवेश में वैयक्तिक विकास और सार्वजनिक प्रगति का समन्वय हो सकता है। व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व का सगत तारतम्य बना रह सकता है और शांति एवं समृद्धि की रागिनी गूंज सकती है।

'स्वस्ति' में शोषण का अभाव तो होता है परन्तु व्यक्तिगत या दलगत अभिनायक नहीं हो सकता, व्यक्ति स्वतन्त्र होता है पर स्वच्छन्द-स्वैराचारी नहीं बन सकता, सुविधाएँ समान रूप से वितरित तो होती हैं पर सामाजिक मर्यादा का अतिक्रमण नहीं किया जा सकता और न केवल मानव वरन् समस्त प्राणियों का सरक्षण करना तनिक भी कठिन नहीं रह जाता।

(५) अनर्वण—अदिति या स्वाधीनता के वायुमण्डल में आत्मा 'अनर्वण' असीम या असाधारण सामर्थ्य, क्षमता और शक्ति से सम्पन्न हो जाती है। आत्मबल की परिपूर्णता होने पर सकल्प विकल्प में नहीं बदलते, सुपथगा विपथगा में परिणत नहीं हो पाती और शिवता अशिवता का रूप धारण नहीं करती, प्रगति और विकास के प्रशस्त पथ पर बाधाएँ नहीं आने पातीं और अवरोध नहीं अड़ते। उसी स्थिति में व्यक्ति पूर्ण काम बन जाता है और समाज की भी कामनाएँ और योजनाएँ अधूरी नहीं रहने पातीं। आत्मा के 'अनर्वण' बनते ही आसुरी शक्तियां समाप्त हो जाती हैं, दानवों के दल विलीन होने लगते हैं और व्यर्थ के विवाद, वितण्डा या विरोध समूलोच्छिन्न हो जाया करते हैं।

(६) असुर पूषा—'स्वस्ति' के समस्त साधन-उपकरण उपस्थित होने पर भी जब तक प्राणों की सुरक्षा और सभी प्रकार का सपोषण नहीं होता तब तक स्वस्ति की परिधि व्यापक और सदैव अक्षुण्ण बनी नहीं रह सकती।

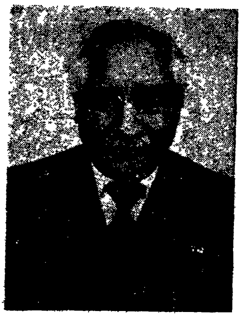
प्राणों की सुरक्षा और सभी तरह के सम्पोषण का विधि-विधान आस्तिकता की आधार-शिला पर ही बन संवर सकता है। इसलिए आस्तिक प्रजा या अमृत संतान के रूप में हम परमेश्वर को असुर पूषा के नाम से सम्बोधित करते हुए अपनी स्मृति के पावन पटल पर लाते हैं।

'असुर' पद से शंका उठ सकती है। असुर का प्रयोग हम लोग लौकिक संस्कृत में प्राय. राक्षसों या निशाचरों के लिए करते हैं। परन्तु, वैदिक देव-वाणी में 'असुर' पद के दो रूप स्वर-सरणि के आधार पर पाये जाते हैं। पहला रूप है 'असु+र'। 'असु' का अर्थ होता है प्राण और असु+र का तात्पर्य प्रकट होता है प्राणों का रक्षक। दूसरा रूप है अ+सुर—जिसका अर्थ ऊपर बतलाया जा चुका है।

(क्रमश.…)

इन्दिरा गांधी विश्व की महान् हस्ती थीं

–कपूर, उपराज्यपाल दिल्ली



नई दिल्ली, २२ दिसम्बर।

राष्ट्रमाता इन्दिरा गांधी की पुण्य स्मृति में माता चन्ननदेवी आर्य धर्मार्थ चिकित्सालय, जनकपुरी, नई दिल्ली द्वारा (स्कूली बच्चों के लिए) ९० दिवसीय "नेत्र ज्योति बचाओ" अभियान का उद्घाटन करते हुए दिल्ली के उपराज्यपाल माननीय श्री हरि कृष्ण लाल कपूर ने कहा, इन्दिरा गांधी विश्व की महान् विभूतियों में से थीं। उन का बलिदान देश की एकता और अखण्डता के लिए सदा अमर रहेगा। चिकित्सालय के कार्य की सराहना करते हुए श्री कपूर ने इस नेत्र ज्योति बचाओ अभियान को उनके प्रति एक सच्ची श्रद्धांजलि का महान रास्ता बताया श्री कपूर ने घोषणा की कि इस कार्य के लिए वह माता चन्ननदेवी आर्य धर्मार्थ नेत्र चिकित्सालय को एक बडी गाडी "चलते फिरते नेत्र चिकित्सालय" के लिए दिल्ली लाटरी फण्ड से दान रूप में देंगे। तथा बाकी जो खर्च होगा उसका व्यय ट्रस्ट के प्रबन्धक स्वयं करेंगे, इससे इन्दिरा गांधी की स्मृति में यह चलता फिरता नेत्र चिकित्सालय १२ मास लगातार कार्य करेगा।

ट्रस्ट के मन्त्री श्री ओमप्रकाश आर्य ने इस ९० दिवसीय अभियान में स्कूलों में जा-जाकर चिकित्सालय के डाक्टरों की तीन टीमें बच्चों के नेत्र परीक्षण करेंगी। बच्चों को एक नेत्र परीक्षण प्रमाणपत्र के साथ नेत्र बचाओ सम्बन्धी कुछ सामग्री भी दी जा रही है। इसके साथ ही जिन बच्चों की जांच की जाएगी, उनका चिकित्सालय के पास भी एक प्राफार्म पर रिकार्ड रखा जाएगा, जो बाद में दिल्ली के उपराज्यपाल और प्रधानमन्त्री को भेंट किया जाएगा। श्री आर्य ने बताया कि इस ९० दिवसीय अभियान पर लगभग एक लाख रुपये व्यय होने का अनुमान है। इस अभियान के अन्तर्गत गरीब एवं सरकारी स्कूलों के बच्चों को प्राथमिकता दी जाएगी। सभा की अध्यक्षता महानगर परिषद के सदस्य श्री भौरीलाल शास्त्री ने की। सभा में सांसद चौ० भरतसिंह, क्षेत्रीय पार्षद श्री मालाराम, पूर्व संसद सदस्य श्री हरदयाल देवगुण, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के पूर्व-प्रधान माननीय श्री सूर्यदेव तथा नये प्रधान श्री डा० धर्मपाल आर्य तथा कई गणमान्य नेता तथा बहन-भाई उपस्थित थे। इस अवसर पर महाशय चुन्नीलाल चैरिटेबल ट्रस्ट के अध्यक्ष महाशय धर्मपाल ने सूखा पीडित भाई-बहनों के लिए ११ हजार रुपये की राशि देने की घोषणा की तथा सभी उपस्थित भाई-बहनों का धन्यवाद किया।

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R N No 32387/77 Post in N D P.S O on 24 25-12-87 Licenced to post without prepayment, Licence No. E 133
रजि० न० डो० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस न० यू १३३

(पृष्ठ १ का शेष)

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा का साधारण अधिवेशन....

प्रस्तावित किया। श्री सांगे राम आर्य श्री लाजपतराय श्री रामशरण दास आर्य श्री मूलचन्द गुप्त, श्री रामकृष्ण सतीजा, श्री नेतराम शर्मा श्री राजेन्द्र गुप्ता तथा अन्य अनेक महानुभावों ने उनके नाम का अनुमोदन किया।

दूसरे प्रत्याशी श्री सरदारीलाल वर्मा का नाम श्री राममूर्ति कैला ने प्रस्तावित किया और श्री प्राणनाथ थई श्री सैरानीलाल भाटिया व श्री सोमनाथ एडवोकेट ने अनुमोदन किया।

तीसरे प्रत्याशी श्री भारत मित्र शास्त्री का नाम श्री तीर्थराम आर्य ने प्रस्तावित किया और श्री शिव कुमार ने अनुमोदन किया। प्रो० भारत मित्र शास्त्री ने इस अधिवेशन में डा० धर्मपाल के समर्थन में अपना नाम वापस ले लिया था।

इस अवसर पर श्री स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने नवनिर्वाचित प्रधान डॉ० धर्मपाल को शानदार जीत के लिए बधाई दी। उन्होंने दिल्ली की विभिन्न आर्यसमाजों से पधारे प्रतिनिधियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि आपने इस उल्लासपूर्ण वातावरण में युवा आर्य नेता डा० धर्मपाल को विजयी बनाया है। डा० धर्मपाल एक समर्पित निष्ठावान व लगनशील युवक हैं और यह जीत उनके सद्गुणों और सभा के श्रेष्ठ कार्यों की उपलब्धियों का परिणाम है। आगे उन्होंने सभी आर्य जनों को एकजुट होकर सद्भावना व प्रेमपूर्वक 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम' के आदर्श के अनुरूप कार्य करने का आह्वान किया।

श्री राजसिंह भल्ला ने यह प्रस्तावित किया कि अन्तरंग सभा के गठन, विभिन्न समितियों के गठन विभिन्न विद्यालयों संस्थाओं के लिए प्रतिनिधियों के चयन और सार्वदेशिक सभा आर्य विद्या सभा और शिक्षा परिषद के लिए प्रतिनिधियों के चयन का अधिकार श्री डा० धर्मपाल को दे दिया जावे। श्री सोमनाथ एडवोकेट ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया और सर्वसम्मति से प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। श्री सोमनाथ एडवोकेट ने भारी जीत पर डॉ० धर्मपाल को बधाई दी। श्री सरदारी लाल वर्मा और प्रो० भारतमित्र ने डॉ० धर्मपाल को बधाई दी। इस अवसर पर श्री सूर्यदेव, श्री राजसिंह भल्ला, श्री लखीराम कटारिया, श्री पुरुषोत्तम गुप्त, श्री यशपाल सुधांशु, श्री राजेन्द्र दुर्गा श्री शिवकुमार शास्त्री, श्री मूलचन्द गुप्त, श्री ओम प्रकाश आर्य श्री नन्दकिशोर भाटिया डॉ० जगन्नाथ श्री लाजपत राय, श्रीमती ईश्वरदेवी धवन, श्री विमल कान्त शर्मा, श्री मांगेराम आर्य, श्री नेतराम शर्मा श्री प्रीतमदास रसवन्त श्री अनिल आर्य आदि महानुभावों ने डॉ० धर्मपाल का स्वागत करते हुए उन्हें बधाई दी।

इस अवसर पर उपस्थित आर्यसमाजों के अधिकारियों प्रतिनिधियों आदि ने श्री डा० धर्मपाल की विजय पर उनका अभिनन्दन करते हुए उन्हें पूरे सहयोग का आश्वासन दिया।

स्वागत के प्रति आभार व्यक्त करते हुए डा० धर्मपाल ने कहा कि आपने मुझ में जो विश्वास व्यक्त किया है, उसके लिए मैं आभारी हूं और आप सभी आर्यजनों के प्रेम, सहयोग और सद्भावना के द्वारा मैं अपने साथियों के साथ आर्यसमाज की सेवा निष्ठा पूर्वक करूंगा।

इससे पूर्व गत अधिवेशन की कार्यवाही एवं वार्षिक विवरणों तथा आय व्यय विवरणों एवं बजट की सम्पुष्टि की गई।

उल्लेखनीय है कि डा० धर्मपाल एक विनम्र समर्पित एवं परिश्रमी आर्य नेता हैं। प्रेमपूर्वक सहयोग लेकर कार्य करने वाले हैं। वे सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक गतिविधियों में बढ़ चढ़ कर सहयोग देते हैं।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री डा० धर्मपाल द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष ११ : अंक ११ | रविवार ३ जनवरी १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | पौष २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस सोल्लास सम्पन्न

चुनौतियां ललकार रही हैं श्रद्धानन्द के दीवानों को

—स्वामी आनन्द बोध

आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली के तत्वावधान में आयोजित स्वामी श्रद्धानन्द के बलिदान दिवस पर शोभायात्रा का कार्यक्रम धूमधाम से सम्पन्न हुआ। दिल्ली की समस्त आर्यसमाज और आर्य संस्थाएं इसमें शामिल हुई। यह विराट् जलूस पुरानी दिल्ली के मुख्य बाजारों से होता हुआ लालकिला मैदान में विशाल सभा के रूप में परिवर्तित हो गया। लाखों लोगों का अपार समूह दयानन्द और स्वामी श्रद्धानन्द के जयकारे लगाता हुआ जब राजधानी के बाजारों से गुजर रहा था, लोग सड़कों के दोनों ओर खड़े होकर इस रोमांचकारी जलूस को देख रहे थे। बहुत सारे छतों के ऊपर से युवकों द्वारा किये जा रहे शस्त्र प्रदर्शन को कौतूहल से देख रहे थे। इस वर्ष का जलूस और भी अधिक प्रचण्ड था। जलूस के आगे आर्य नेता स्वामी आनन्द बोध, पं० रामगुरु शर्मा, महाशय धर्मपाल, श्री सूर्यदेव, डा० धर्मपाल, श्री शिवकुमार शास्त्री आदि महानुभाव नेतृत्व करते हुए चल रहे थे। इस वर्ष का आर्य वीर दल का शस्त्र-प्रदर्शन बड़ा रोमांचकारी था। तीखे हथियारों का युद्धाभ्यास प्रदर्शन लोग दांतों तले उंगली दबाकर देख रहे थे। केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् के एक युवक द्वारा आर्यसमाज दीवान हाल के मञ्च पर चढ़कर कटार का प्रदर्शन अनोखा था। पद्मासन में घुटनों में दो कटार रख कर, कटार की नोक आंख में चलाकर उसने सब को हैरत में डाल दिया। केन्द्रीय आर्य युवती परिषद् द्वारा युवतियों का तलवार का अभ्यास प्रदर्शन प्रशंसनीय था। आर्य वीर त्रिशूल प्रदर्शन के समय घायल भी हो गये परन्तु उनके साहस में कमी नहीं आई। हिंदू मंच के दल का प्रदर्शन भी बड़ा रोमांचकारी रहा। मुख्य मञ्च घण्टाघर पर आयोजित किया गया था। वहां पर पण्डित राजगुरु शर्मा, पं० क्षितीश और यशपाल सुधांशु ने जनसमूह को सम्बोधित किया।

जलूस श्रद्धानन्द बलिदान भवन से १०-३० बजे प्रारम्भ हो गया था और लालकिला मैदान ३ बजे जाकर सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर एक विराट् सभा हुई। जिसमें स्वामी आनन्द बोध, मीरा यति, पं० सच्चिदानन्द शास्त्री तथा स्वामी अग्निवेश ने जन समूह को सम्बोधित किया। इस अवसर पर दिल्ली सभा के नवनिर्वाचित प्रधान डा० धर्मपाल का भी गण्यमान्यजनों द्वारा पुष्पमालाओं से स्वागत किया गया। सभा को सम्बोधित करते हुए स्वामी आनन्द बोध ने कहा—आर्यसमाज की शक्ति का प्रवाह निस्तेज नहीं है। आवश्यकता है उसे मर्यादा और अनुशासन के किनारे में बांधने की। कुछ स्वार्थी लोग आज इस शक्ति को तोड़ने में लगे हैं परन्तु याद रखो ऋषि दयानन्द के पुनीत हाथों से जलायी हुई ये आर्यसमाज की ज्योति सदा जलती रहेगी। इसे कोई नहीं बुझा सकता। हमें और अधिक उत्साह से काम करने का संकल्प लेना चाहिए। उन्होंने स्वामी श्रद्धानन्द के किये कार्यों का दिग्दर्शन कराते हुए कहा, उनके कार्यों का मूल्यांकन करना बड़ा कठिन है। अपने तन मन धन सब कुछ का बलिदान उन्होंने ऋषि दयानन्द के मिशन के लिए किया। हम उनकी यादों की आग को सदा जागरूक रख कर उससे प्रेरणा लेते रहें और उनके अधूरे कार्यों को पूरा करने का व्रत लें।

आगे बोलते हुए उन्होंने कहा—इस देश में आज भी सती प्रथा और अबोध मासूम बालकों को बलि देने की प्रथा जिन्दा है। आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं ये हमारे लिए चुनौतियां हैं। अभी आर्यसमाज ने दिल्ली से लेकर दिवराला तक पदयात्रा कर जो जन जागरण का कार्य किया है उसकी आवाज देश-विदेश में गूंजी है। स्वामी अग्निवेश के पदयात्रा के कार्यक्रम की मैं सराहना करता हूं। पदयात्रा में भाग लेने वाले अपने सभी भाई-बहनों को मैं साधुवाद देता हूं। देश पर आयी हर विपत्ति, हर चुनौती का जवाब देने के लिए ऋषि दयानन्द के प्रहरी सदा सतर्क रहेंगे।

स्वामी अग्निवेश ने स्वामी आनन्द बोध का आभार व्यक्त करते हुए कहा—इस पदयात्रा के दौरान मुझे सार्वदेशिक सभा के प्रधान का जो सहयोग मिला। मैं उसके लिए स्वामी जी का आभारी हूं। देश में जागती कुप्रथाओं को देख कर आर्यसमाज का कोई भी सेवक चुप नहीं रह सकता। पं० राजगुरु शर्मा का उद्बोधन भी बड़ा प्रेरक रहा। सभा संचालन डा० शिव कुमार कर रहे थे।

●

आर्यसमाज कालका जी का वार्षिकोत्सव

दूरदर्शन के व्यवहार की घोर निन्दा

२७ दिसम्बर, आर्यसमाज कालका जी का वार्षिकोत्सव समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर पं० राजगुरु शर्मा द्वारा यज्ञ एवं वेदकथा का आयोजन किया गया। वेदकथा एवं यज्ञ के अवसर पर एकत्रित उपस्थिति उल्लेखनीय रही। वार्षिकोत्सव पर कुछ सम्मेलनों का भी आयोजन किया गया। महिला सम्मेलन की उपस्थिति प्रशंसनीय रही। सम्मेलन में सती प्रथा की घोर निन्दा की गयी। नारी उत्पीडन के विरुद्ध प्रस्ताव पास किया गया। शनिवार को आर्य युवा सम्मेलन रखा गया। जिसमें पं० धर्मपाल शास्त्री, पं० राजगुरु, डा० धर्मपाल, पं० यशपाल सुधांशु एवं श्री बलजीत शास्त्री ने उद्बोधन दिया। इस अवसर पर डा० धर्मपाल का स्वागत भी किया गया।

रविवार को राष्ट्ररक्षा सम्मेलन हुआ जिसमें पं० राजगुरु शर्मा, श्री रामनाथ सहगल, डा० धर्मपाल, श्री

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०
प्रधान सम्पादक—डा० धर्मपाल



सभा प्रधान डा० धर्मपाल

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा का साधारण अधिवेशन सम्पन्न

सभा प्रधान द्वारा अन्तरंग सभा की घोषणा

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा की साधारण सभा का अधिवेशन २० दिसम्बर १९८७ को आर्यसमाज दीवान हाल में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान पूज्य स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती के सानिध्य में, उल्लासपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उपप्रधान श्री रामचन्द्र राव वन्देमातरम् की अध्यक्षता में सम्पन्न निर्वाचन में डा० धर्मपाल आर्य को तुमुल करतलध्वनि के बीच निर्वाचित घोषित किया गया। डा० धर्मपाल को २८७ और श्री सरदारी लाल वर्मा को ६२ मत प्राप्त हुए। डा० धर्मपाल का नाम पूर्व प्रधान श्री सूर्यदेव ने प्रस्तावित किया। श्री मांगेराम आर्य, श्री लाजपत राय, श्री रामशरण दास आर्य, श्री मूलचन्द गुप्ता, श्री रामकृष्ण सतीजा, श्री नैतराम शर्मा, श्री राजेन्द्र दुर्गा तथा महाशय धर्मपाल तथा अनेक अन्य महानुभावों ने उनके नाम का अनुमोदन किया। दूसरे प्रत्याशी श्री सरदारी लाल वर्मा का नाम श्री राममूर्ति कैला ने प्रस्तावित किया और श्री प्राणनाथ भई, श्री खैरायती लाल भाटिया व श्री सोमनाथ एडवोकेट ने अनुमोदन किया।

अन्तरग सभा के गठन, विभिन्न समितियों के गठन, विभिन्न विद्यालयों/सस्थाओं के लिए प्रतिनिधियों के चयन और सार्वदेशिक सभा, आर्य विद्या सभा और शिष्ट परिषद् के लिए प्रतिनिधियों के चयन का अधिकार डा० धर्मपाल, सभा प्रधान को दिया गया। साथ ही बैंक खातों आदि में नामों के परिवर्तन का अधिकार भी उन्हें ही दे दिया गया।

साधारण सभा द्वारा प्रदत्त अधिकार के अनुसार सभा प्रधान डा० धर्मपाल ने अन्तरग सभा व विभिन्न समितियों के सयोजकों का गठन निम्न प्रकार किया।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा (पंजीकृत)

१५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१

अन्तरंग सभा

प्रधान :

डा० धर्मपाल आर्य

उपप्रधान

श्री महाशय धर्मपाल, श्री रतनचन्द सूद, प्रो० भारत मित्र शास्त्री, श्रीमती ईश्वर देवी धवन :

महामन्त्री :

श्री सूर्यदेव

मन्त्री :

श्री मूलचन्द गुप्ता, श्री देवव्रत शर्मा, श्री रामशरण दास आर्य, श्री ओमप्रकाश आर्य, श्री मांगेराम आर्य, ~~श्री श्यामकुमार सिरवानी~~।

कोषाध्यक्ष

श्री पुरुषोत्तम लाल गुप्ता।

प्रतिष्ठित सदस्य :

श्री स्वामी विद्यानन्द सरस्वती, श्री तीर्थराम आहूजा, श्री श्यामसुन्दर आर्य, श्री डा० महेश विद्यालंकार, श्री हरबससिंह सैर, श्री डा० शिवकुमार शास्त्री, श्री वेतराम शर्मा, श्री इन्द्रदेव।

प्रधान जी द्वारा मनोनीत :

श्री डा० जगन्नाथ, श्री रोशनलाल गुप्ता, श्री गोपालदास सपरा, श्री ऊधोदास आर्य, श्री राजेन्द्र दुर्गा।

समूह प्रतिनिधि :

श्री राजसिंह बल्हा, श्री ओमप्रकाश गुप्ता, श्री विमलकान्त शर्मा, श्री लाजपत राय निभावन, श्री वैद्य कर्मवीर, श्री शिवभगवान लाहौटी, श्री विजय गुप्ता, श्री रामकृष्ण सतीजा, श्री धर्मसिंह शर्मा, श्री लखीराम कटारिया, श्री आर्यमित्र बजाज, श्री पुरुषोत्तम शर्मा, श्री आर०सी० कथूरिया।

विशेष आमन्त्रित सदस्य :

श्री स्वामी आनन्द बोध सरस्वती, श्री किशोरी लाल, श्री इन्द्रनारायण, श्री जयप्रकाश आर्य, श्री तीर्थ राम टण्डन, श्री हरबंश लाल कोहली, श्री बटेश्वर दयाल, श्री प्रेमचन्द गोयल, श्री रघुनन्दन दास गुप्ता, श्री खैरायती लाल भाटिया, श्री गगाशरण, श्री श्रद्धानन्द, डा० ओमप्रकाश मान, डा० रघुवीर वेदालकार, डा० यशपाल मचदेव, श्री महेन्द्रपाल वर्मा, श्री बी०बी० सिंगल, श्री नन्दकिशोर भाटिया, श्री वीरभान "वीर" श्री लायक राम, श्री अजय कुमार बल्ला, श्री अशोक आनन्द, श्री बृजपाल आर्य, श्री मनोहरलाल, श्री विशम्भरनाथ भाटिया, श्री बी० एन० शर्मा, श्री सरदारी लाल सहगल, श्री जयप्रकाश शास्त्री, श्री कृष्णचन्द्र शर्मा, श्री मनवीर सिंह राणा, श्री रणवीर सिंह, श्री योगेश्वर चन्द्र, श्री डा० जे०पी० गुप्ता, श्रीराम निभावन, श्री जगदीश चन्द्र, श्री सुशील कुमार, श्री सत्यदेव गुप्ता, श्री ओमप्रकाश गुप्ता, श्री अमरीश चन्द्र आर्य, श्री राम प्रकाश धाम, श्री अटलकुमार गर्ग।

अधिष्ठाता आर्य वीर दल	श्री प्रियतम दास रसवन्त
संयोजिका महिला समिति	श्रीमती राम चमेली देवी
संयोजक प्रचार माध्यम	: श्री विमल कान्त शर्मा
सयोजक विद्वत् परिषद्	: श्री स्वामी विद्यानन्द सरस्वती
संयोजक संस्कृति संगम	: डा० रघुवीर वेदालंकार
संयोजक स्वास्थ्य समिति	: वैद्य महेन्द्रपाल आर्य
प्रस्तोता, आर्य विद्या परिषद्	: प्रि० चन्द्रदेव
संयोजक, राजार्य सभा	: श्री ओमप्रकाश आर्य
संयोजक, ग्राम प्रचार	: प्रि० [illegible] सिंह

सूर्यदेव
महामन्त्री

राजनैतिक इतिहास का आध्यात्मिक विवेचन

—इन्द्र विद्यावाचस्पति

संसार के राज्यों के उत्थान और पतन के इतिहास को विवेचना की दृष्टि से पढ़ें तो हम इस परिणाम पर पहुंचे बिना नहीं रह सकते कि इन दोनों घटनाओं के कारणों में राज्य के निर्माताओं के चरित्र का बहुत ऊँचा स्थान है। राज्यों के निर्माताओं को हम तीन कोटियों में बांट सकते हैं। पहले वह लोग जो महत्वाकांक्षी, असाधारण रूप से वीर और संगठन कला में निपुण होते हैं, परन्तु चरित्रवान् नहीं होते। चरित्र से हमारा अभिप्राय बहुत विस्तृत है। चरित्रवान् व्यक्ति कामवासना का, विलासिता का [illegible]र लोभ का शिकार नहीं होता। वह अपने स्वार्थ में अन्धा होकर प्रजा के हितों को पददलित नहीं करता। यह सम्भव है कि एक व्यक्ति इन अर्थों में चरित्रवान् न होता हुआ भी वीरता आदि अन्य गुणों में इतना बढ़ा हुआ हो कि शत्रु पर विजय प्राप्त कर के राज्य या साम्राज्य तक की स्थापना कर ले। सिकन्दर, चंगेज खां आदि व्यक्ति इस कोटि में आते हैं। संसार ने उनके लोहे को माना। वह जिधर झुक गए, विजयश्री ने उसी ओर से आकर उनके गले में माला पहना दी। परन्तु उनमें उस चरित्र की कमी थी, जो स्थिर राज्य बनाने के लिए आवश्यक है। उनका अपना अन्त जैसा हुआ, उनके बनाये हुए साम्राज्यों का अन्त भी वैसा ही हुआ। अक्षौहिणी सेनाओं को परास्त करने वाले वीर हत्यारों के छुरों के शिकार हुए, और उनके बनाये हुए राज्य उनके साथ ही नष्ट-भ्रष्ट हो गए।

दूसरी कोटि के राज्य-निर्माता वह होते हैं, जो स्वयम् असाधारण वीर न होते हुए भी परिस्थितिवश साम्राज्य बनाने में सफल हो जाते हैं। हमारे देश में गुप्त साम्राज्य की स्थापना ऐसे ही राजा द्वारा हुई। चन्द्रगुप्त स्वयं चन्द्रगुप्त मौर्य की तरह न कोई बड़ा विजेता था, और न अपने पोते चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य की भांति शास्त्र और शस्त्र की सब कलाओं में प्रवीण था फिर भी वह गुप्त साम्राज्य बनाने में सफल हो गया, क्योंकि परिस्थितियों ने उसकी सहायता की। लिच्छवी वंश से उसके विवाह संबन्ध से उसका छोटा-सा राज्य साम्राज्य के रूप में परिणत हो गया, जिसे चन्द्रगुप्त के विजयों द्वारा और विक्रमादित्य ने परिष्कार द्वारा चार चांद लगा दिये। ऐसे राज्य निर्माताओं में चाहे असाधारण वीरता न हो परन्तु यह आवश्यक है कि वे चरित्रहीन न हों। चन्द्रगुप्त प्रथम के सम्बन्ध में हमें इतिहास जो थोड़ी-बहुत जानकारी देता है, उसके आधार पर हम कह सकते हैं कि वह एक शिष्ट सज्जन राजा था जो यथाशक्ति अपनी प्रजा के पालन अपने राज्य के संरक्षण में लगा था। यदि वह चरित्रवान् न होता तो उसके सुलभता से प्राप्त छोटे से साम्राज्य की वही गति हो जाती जो अयोग्य व्यक्ति को अकस्मात् विरसे में प्राप्त जायदाद की हो जाती है। चन्द्रगुप्त के उत्तराधिकारी यदि गुप्त साम्राज्य का नाम उज्ज्वल कर सके, तो उसका मुख्य कारण यह था कि उनके वंश का संस्थापक चरित्रवान् व्यक्ति था।

तीसरी कोटि में हम राज्य के उन निर्माताओं का परिगणन करते हैं, जो अपनी शक्ति से साम्राज्य की स्थापना करते हैं, और अपनी योग्यता से ही उसे समृद्धिशाली बना कर उत्तराधिकारियों के हाथ में सौंप जाते हैं। उनके बनाये हुए राज्य पहले दोनों प्रकार के राज्यों से अधिक स्थायी होते हैं, परन्तु उनकी भावी प्रगति और उनकी आयु की लम्बाई बहुत कुछ उनके उत्तराधिकारियों की योग्यता पर अवलम्बित होती है। ऐसे राज्य तब तक चलते हैं जब तक उस पर शासन करने वाले व्यक्तियों में चरित्र सम्बन्धी वह योग्यताएँ बनी रहें, जिनके बिना राज्य का चलना असम्भव है। पुराने समय के कई साम्राज्य देर तक तो कई शीघ्र नष्ट हो गये। अनेक राजवंश आठ-दस पीढ़ियों तक शासन करते रहे, परन्तु कुछ राजवंश ऐसे भी हो गए हैं जो केवल दो-तीन पीढ़ियों में ही नष्ट हो गए। यदि इन ऐतिहासिक विषमताओं के कारण की विवेचना की जाय तो हमें प्रतीत होगा कि शासक वर्ग की चरित्र सम्बन्धी योग्यता का ही सब से बड़ा महत्व है।

भारत के प्राचीन साम्राज्यों में सब से प्रसिद्ध दृष्टान्त रघु के साम्राज्य का है। रघुवंश के पतन और उत्थान का इतिहास, इतिहास के विद्यार्थियों के लिए बहुत ही शिक्षादायक और मनोरंजक है। रघुवंश के संस्थापक दो थे राजा दिलीप और उनका पुत्र रघु। दिलीप ने सुरक्षित और समृद्ध दशा में रघु को राज्य सौंपा उसे रघु ने अपने बल और योग्यता से विशाल साम्राज्य के रूप में परिणत कर दिया। यदि रघु की विजययात्राओं के मानचित्र पर दृष्टि डालें तो हम इस परिणाम पर पहुंचेंगे कि रघु का साम्राज्य जितना विस्तृत था, उतना विस्तृत न मुगल साम्राज्य हो सका और न भारत का कोई और साम्राज्य। दिलीप और रघु बलवान् भी थे और चरित्रवान् भी।

रघु के सम्बन्ध में पुराणों तथा अन्य इतिहास ग्रन्थों में जो कुछ लिखा है, उससे प्रतीत होता है कि वह क्षत्रिय के योग्य गुणों में अपने पिता से भी द कदम आगे था। जिस चक्रवर्ती राज्य की इन दो पुरुषों ने स्थापना की, राजा अज और दशरथ ने उसकी भली प्रकार रक्षा की और महाराज रामचन्द्र ने उसके प्रभाव को समुद्र के पार लंका तक फैला दिया। इस प्रकार अपनी चरम सीमा तक पहुंचे हुए रघु के राज्य का क्षय तब आरम्भ हुआ, जब रघु और राम के उत्तराधिकारियों में प्रमाद विषयासक्ति और लम्पटता ने घर कर लिया।

राम के पश्चात् राघवों के राज्य में जो पहले परिवर्तन हुआ, वह यह था कि उसके एक के स्थान पर अनेक केन्द्र बन गए। कुश कुशावती में प्रतिष्ठित हुए और लव की राजधानी शरावती में बनी। भरत ने अपने पुत्र पुष्कल को पुष्कलावती में और तक्षशिला में अभिषिक्त कर दिया। लक्ष्मण ने अपने अंगद और चन्द्रकेतु नाम के दो पुत्रों को कारापथ प्रदेश का शासक बना दिया। इस प्रकार महाराज राम के देहत्याग के साथ ही रघु का विशाल साम्राज्य टुकड़े टुकड़े हो गया। वह अयोध्यापुरी जिसके वर्णन में वाल्मीकि ऋषि ने अपना सम्पूर्ण वाक्-चातुर्य समाप्त कर दिया था, राम के देहावसान के कुछ ही दिनों पश्चात् खण्डहर के रूप में परिणत हो गई।

यह तो हुई क्षय के प्रारम्भ की कथा। अब समाप्ति की घटनाओं पर दृष्टि डालिये। राम के पश्चात् तीसरी पीढ़ी से लेकर रघुवंश की समाप्ति तक २४ राजा हुए। मन को उद्विग्न करने वाली उनकी कहानी सुनाने के लिए न यहां स्थान है और न आवश्यकता है। कुछ थोड़े से दृष्टान्त पर्याप्त हैं। राजा परियात्र अत्यन्त भोगी होने के कारण असमय में ही मर गया। ध्रुवसन्धि को शिकार का बहुत शौक था वह शेर के हाथों मारा गया। अन्तिम राजा अग्निवर्ण सुन्दर भी था और वीर भी, परन्तु उसमें चरित्र बल नहीं था। वह कामुकता में ऐसा फंसा कि राज्य का सब बोझ मन्त्रियों पर डाल कर स्वयं पूर्ण रूप से विषय भोग में पड़ गया, जिसका यह परिणाम हुआ कि [illegible] क्षय रोग ने ग्रस लिया। वह मन्त्रणाहीन ही मर गया और उसके साथ ही रघु का राजवंश भी समाप्त हो गया।

दूसरा दृष्टान्त हम रोम साम्राज्य के इतिहास में पाते हैं। यह सर्वसम्मत बात है कि रोमन साम्राज्य का यूरोप के प्राचीन इतिहास में अनूठा स्थान है। एक शहर के प्रजातन्त्र राज्य से प्रारम्भ होकर वह कुछ शताब्दियों में भूमि के बहुत बड़े भाग पर छा गया और एक समय ऐसा आया जब यह प्रतीत होता था कि सीजर के शस्त्र के सामने संसार की कोई शक्ति खड़ी न रह सकेगी। साम्राज्य शक्ति की यह विशेषता है कि प्रारम्भ से ही उसमें क्षयरोग के कीटाणु बीज रूप में विद्यमान रहते हैं। शक्ति से ऐश्वर्य प्राप्त होता है, ऐश्वर्य प्राप्त होने से उपभोग की ओर प्रवृत्ति बढ़ती है जो प्राय सीमा का उल्लंघन कर जाती है। बढ़ी हुई उपभोग कामना का परिणाम यह होता है कि पहले शासक वर्ग में और फिर देखा-देखी प्रजाजनों में प्रमाद, परस्पर फूट और अनाचार के कीटाणु रोग के रूप में परिणत होकर सारे समाज शरीर में व्याप्त हो जाते हैं। यही प्रक्रिया रोम में भी हुई। जिन वीर पुरुषों ने रोम का निर्माण किया था, वे मानसिक और शारीरिक दृष्टि से बहुत उन्नत थे, और रोम की स्वाधीनता को अपना धर्म मानते थे। धीरे-धीरे रोम का शरीर बढ़ता गया, परन्तु अन्दर की शक्ति क्षीण होती गई। जब रोम के धरा-

(शेष पृष्ठ ६ पर)

आजादी का दीवाना

—क्षितिज वेदालंकार

★

शायद सन् १९१४ की बात है। कलकत्ता में रामकृष्ण मिशन का उत्सव चल रहा था और एक तेजस्वी तपोमूर्ति व्यक्ति युवकों का आह्वान करते हुए कह रहा था—'कौन है जो युगों युगों से भारतमाता की उठती पुकार सुनेगा ? कौन है जो भारत माता के आंसू पोंछेगा ? मेरी आशा युवकों पर केन्द्रित है। ओ भारत के वीर जवान ! पर्वतराज हिमालय की हिमाच्छादित चट्टानें तुझे साधना के लिए पुकार रही हैं।'

अगले ही दिन एक युवक हिमालय की हिमाच्छादित चट्टानों की ओर साधना के पथ पर चल दिया। वह युवक कई मास तक हिमालय की कन्दराओं में सत्य की खोज में भटकता रहा। उसने कठोर तपस्या की। अनेक साधुओं का सत्संग किया। अन्त में एक दिन उसको अन्तरात्मा से आवाज आई, भारत के लाल ! तेरा शरीर तेरा नहीं है, भारतमाता का है। जिस सत्य की खोज में तू इतनी दूर आया है, वह तेरे भीतर ही है। दिव्य चक्षुओं से उसे खोज, वह तो तेरे मानस में ही अन्तर्निहित है और नर में ही तुझे नारायण के दर्शन होंगे। सेवा ही उसके दर्शन का मार्ग है।'

युवकों का आह्वान करने वाली वह तेजोमूर्ति थी स्वामी विवेकानन्द की और जो युवक साधना के पथ पर निकल पड़ा वह था सुभाषचन्द्र बोस। उसके बाद जन-सेवा के माध्यम से नारायण को पाने के लिए सुभाष ने अपना सारा जीवन दांव पर लगा दिया।

जिस आई०सी०एस० के लिए उस समय भारत का अभिजातवर्ग जी-जान की बाजी लगाने को सन्नद्ध रहता था, क्योंकि उससे जीवन के स्वर्णिम प्रासाद के कपाट खुल जाते थे, उसी आई०सी०एस० को सुभाष ने गौरव के साथ पास कर के भी स्वेच्छा से तिलांजलि दे दी क्योंकि वह सेवा का नहीं, अफसरी और हकूमत का मार्ग था।

उन्हीं दिनों में देश में सन् १९२१ का असहयोग पूरे जोरों पर था। विजयवाड़ा कांग्रेस में एक करोड स्वयंसेवक और दो करोड रु० तिलक स्वराज्य फण्ड के नाम से एकत्रित करने का संकल्प किया गया था। बंगाल में स्वयंसेवकों के संगठन का दायित्व सुभाष ने सम्भाला। ब्रिटिश सरकार को यह सहन नहीं हुआ। सुभाष को ६ मास के लिए जेल भेज दिया गया।

जेल से छूट कर आये तो न सुभाष को चैन, न सरकार को चैन था। तीन वर्ष बाद फिर गिरफ्तार करके मांडले जेल भेज दिया। लोकमान्य तिलक और लाला लाजपतराय भी इसी जेल को कृतार्थ कर चुके थे। तीन वर्ष बाद जब वहां से सुभाष छूटे तो सरकार ने यह प्रतिबन्ध लगा दिया कि सुभाष किसी भी भारतीय बन्दरगाह पर नहीं उतर सकते—केवल यूरोप-प्रवास कर सकते हैं।

सुभाष अंग्रेजों की इस चाल को समझते थे। वे जानते थे कि कुछ अर्से तक यूरोप में रहने के बाद सरकार उन्हें विद्रोही और अवांछित व्यक्ति करार देकर सदा के लिए भारत-प्रवेश से वञ्चित कर देगी, इसलिए सुभाष ने अपने भाई को लिखा—"मैं अनिश्चित काल तक विदेश में रहने की अपेक्षा भारत की जेल में तिलतिल कर के मर जाना पसन्द करूंगा। सरकार का क्या भरोसा है कि वह कब तक मुझे निर्वासन में रखे।

पर ऐसा भी अवसर आया जब भारत की जेल में तिल-तिल कर के मरने के बजाय सुभाष ने भारत से निकल जाना अधिक श्रेयस्कर समझा।

द्वितीय विश्वयुद्ध चल रहा था। सुभाष जेल में पड़े-पड़े जहां संसार के घटनाचक्र का अध्ययन कर रहे थे, वहां भारतमाता के पांवों की बेड़ियां काटने के लिए भी आतुर हो रहे थे। उनकी अन्तरात्मा कह रही थी कि अब नहीं तो फिर कब ?

कुछ इसी तरह का प्रश्न शायद महात्मा गांधी की आत्मा को भी कचोट रहा था, इसीलिए उन्होंने देश को 'करो या मरो' का आह्वान दिया था पर अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का बारीकी से अध्ययन करने वाले और अंग्रेजों की जातीय मनोवृत्ति को पूरी तरह हृदयंगम करने वाले सुभाष इतने मात्र से सन्तुष्ट नहीं थे और अन्ततः वे कारावास से ऐसे अन्तर्धान हुए कि ब्रिटिश साम्राज्य चौकड़ी भूल गया और सारा संसार स्तब्ध रह गया।

अन्त में वे पेशावर-अफगानिस्तान होते हुए जर्मनी में प्रकट हुए। वहीं आजाद हिन्द सेना का निर्माण किया और जब बर्मा पूर्णतः जापान के अधिकार में आ गया तब पूर्वी एशिया को भारत की आजादी का मुख्य द्वार मान कर उन्होंने बर्लिन से तोक्यो तक एक पनडुब्बी में यात्रा की। युद्ध दिनों में यह अपने ऊपर कितना बड़ा खतरा मोल लेना था, इसकी कल्पना ही की जा सकती है।

कुछ दिन तोक्यो में रहने के पश्चात् वे सिंगापुर पहुंचे और ४ जुलाई १९४३ को, उसी सिंगापुर में, जो ब्रिटिश साम्राज्य की रक्षा का पूर्वी सिंहद्वार था, विशुद्ध भारतीय नेतृत्व में आजाद हिन्द फौज का विधिवत् संगठन स्थापित हो गया। दो मास बाद एक विराट सम्मेलन बुलाया गया और नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने उस सेना के अध्यक्ष और सुप्रीम कमाण्डर-इन-चीफ के रूप में शपथ ली।

दो अक्तूबर १९४३ को आजाद हिन्द फौज ने गांधी जयन्ती मनाई और उस दिन सुभाष चन्द्र बोस का जो भाषण प्रसारित हुआ वह स्मरणीय है। उस भाषण का एक अंश देखिए—

"गांधी जी मेरे गुरु हैं, मैं अपने गुरु की स्मृति को प्रणाम करता हूं। इस क्षितिज के पार इन बल खाती हुई नदियों, लहराते हुए खेतों और जंगलों के पार स्वर्ण-भूमि है, हमारे सपनों का देश। वह संसार का सब से सुन्दर देश है। उसके आकाश में चांद अब रोशनी फेंकता है, उसके पेड़ों की डालों पर विहग अजब मिठास घोलते हैं और उन पेड़ों की छांह में बैठकर वहां के ऋषियों ने सृष्टि के विभिन्न रहस्यों की खोज की है। जिस गांधी की जयन्ती आज हम मना रहे हैं, वह आधुनिक ऋषि हैं। उनकी अहिंसा ही मानवता की एकमात्र आशा है लेकिन गुलाम देश की अहिंसा, अहिंसा नहीं कमजोरी होती है।' इसलिए हम पहले अपने देश को आजाद करें। मौत की मञ्जिलें पार करते हुए हमें दिल्ली पहुंचना है। जिस दिन दिल्ली के लालकिले पर तिरंगा झण्डा लहराएगा उस दिन मणि-जड़ित सिंहासन पर हम महात्मा गांधी को बैठाएंगे, गंगाजल से उनके चरण पखारेंगे और उन से कहेंगे कि अब संसार का नेतृत्व अपने हाथ में लीजिए। अब आपकी अहिंसा की जरूरत है—मेरे गुरुदेव !'

आखिर १५ अगस्त, सन् १९४७ को लालकिले पर तिरंगा लहराया, तो भारत की जनता लालकिले की प्राचीरों को आंख फाड़-फाड़कर निहारती रही कि कदाचित् किसी कोने से सुभाष—भारत की आजादी का दीवाना सुभाष—प्रकट हो जाए। पर सुभाष प्रकट नहीं हुए।

हां प्रकट हुई हवा में तैरती हुई उनकी यह आवाज—

'आज हम अपनी मातृभूमि से दूर हैं। नीड़-विहीन पक्षी की भांति हम अनन्त आकाश में मंडरा रहे हैं, लेकिन हमें एक बार फिर अपनी मातृभूमि में वापिस जाना है। सुनो-सुनो—हवा की लहरों पर यह आवाज, यह पुकार तैरती हुई आ रही है। हमारी जननी हमें बुला रही है, हमारी राजधानी दिल्ली ने हमारे स्वागत के लिए अपने कोट-द्वार उन्मुक्त कर दिए हैं। सुनो, देश के कोने-कोने से, सिन्धु, गंगा और रेवा के पुनीत तटों से चालीस करोड आवाजें हमें एक साथ पुकार रही हैं। चालीस करोड़ हृदय हमारे स्वागत के लिए धड़क रहे हैं। अस्सी करोड भुजायें हमारे आलिंगन के लिए खुली हैं।

हां, भारत की आजादी के उस दीवाने के लिए भारत की कोटि-कोटि जनता के हृदय आज भी वैसे ही धड़क रहे हैं और जन-जन की ये भुजायें आज भी आलिंगन के लिए वैसे ही आतुर हैं। पर कहां है आजादी का दीवाना सुभाष ? □

भद्र की प्राप्ति

—डा० रविदत्त शर्मा आचार्य

परमेश्वर से सदैव हमारी यही प्रार्थना रहती है कि हमारा कल्याण ही होता रहे और हम जीवन में सुख-शान्ति का अनुभव करें। मानव ही नहीं अपितु समस्त जीवों की ऐसी ही इच्छा होती है, एक घोड़ा स्वेच्छापूर्वक स्वीकार नहीं करता कि उसे दिन-रात तांगे में जोता जाये और समय पर दाना-पानी भी न दिया जाये। जिन सुन्दर पक्षियों को मनुष्य ने अपने मनोरंजन के लिए पिंजड़े में बन्द कर रखा है, वे भी उस बन्धन में रह कर प्रसन्न नहीं हैं। प्रत्येक प्राणी यह समझता है कि संसार के सुख को भोगना उसका जन्मसिद्ध अधिकार है, इसीलिए तो जब कभी भी पालतू पशुओं का स्वामी उन्हें खाना-पानी देना भूल जाता है तो वे रस्सा तोड़ कर या खूँटा उखाड़ कर अपनी तृप्ति कर लेते हैं। जीवमात्र की यह सहजात प्रवृत्ति है। नवजात शिशु को भी यदि समय पर दूध न पिलाया जाय तो वह रो कर उस अभाव का प्रदर्शन करता है। यह ही कल्याण कामना भद्र की ओर अग्रसारित किये रहती है। ध्वनि की दृष्टि से कल्याण शब्द की अपेक्षा 'भद्र' कहीं अधिक सारगर्भित प्रतीत होता है। वैदिक प्रार्थना में भद्र का समावेश बहुत ही आकर्षण उत्पन्न करता है—

देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां
देवानां रातिरभि नो निवर्तताम्।
देवानां सख्यमुपसेदिमा वयं
देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे ॥

ऋ० १।८९।२

देवगणों की सुमति सरल हो, भद्र हो, उनकी दानशीलता से हम सदैव ओत-प्रोत रहें। हम देवगण मित्रता को प्राप्त करें और वे हमारे जीने के लिए आयु को बढ़ावें। देवों की कृपादृष्टि से हमें कुछ न कुछ मिलता ही रहता है और बड़े से बड़े पदार्थ को हम अनायास प्राप्त कर सकते हैं। यदि हम विद्वज्जनों से लाभ उठाना चाहते हैं तो पहले अपने आपको ऋजु (सरल हृदय) बनाना होगा। ऋजु स्वभाव वाले से वही मैत्री कर सकता है जो स्वयं ऋजु हो, छल-कपट आदि से सर्वथा दूर हो। दाता एवं याचक के स्वभाव में असमानता होवे पर याचना पूर्ण होने का निश्चय नहीं। उक्त मन्त्र में याचक की योग्यता के सम्बन्ध में कुछ आभास प्रतीत होता है कि मांगने से पहले याचक को सुपात्र बनना पड़ेगा।

अब एक विशेष बात यह है कि केवल मांगते रहने से ही क्या श्रेय की प्राप्ति सम्भव है? सभी भक्तजन अपने-अपने ढंग से जीवन भर प्रार्थना करते रहते हैं। कुछ लोग तो स्पष्ट रूप से भी मांगने में संकोच नहीं करते। वैदिक प्रार्थना से अनभिज्ञ जन पुत्र, धन, व्यवसाय की वृद्धि, अनुकूल पत्नी आदि पता नहीं क्या क्या मांग बैठते हैं जो एक नाटक के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। जुआरी भी मन्दिर में जाकर सफलता के लिए प्रार्थना करता है, परन्तु आश्चर्य यह है कि न तो भगवान को देते हुए देखा गया और न भक्त को लेते हुए। यदि कुछ मिलता नहीं तो फिर प्रार्थना का क्या उपयोग रहा? यह एक आश्चर्यपूर्ण रहस्य है। इसका समाधान निम्न मन्त्र में किया गया है—

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतो-
ऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः।
देवा नो यथा सदमिद् वृधे,
असन्न प्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे ॥

ऋ० १।८९।१

सभी ओर से हमें कल्याणकारक, उत्तम फल प्रदान करने वाले, किसी प्रकार भी नष्ट न होने वाले, विरोधियों से न रुकने वाले तथा शत्रुओं का भेदन करने वाले अनुष्ठान एवं विचार प्राप्त हों। देवतागण हमारा त्याग न करते हुए सदैव हमारे रक्षक रहें और हमारी वृद्धि के लिए प्रयत्नशील रहें। यहां दाता एवं याचक की स्थिति स्पष्ट की गई है। कोई भी पदार्थ अनायास नहीं मिल जाता उसके लिए कुछ करना पड़ता है। यदि विद्या प्राप्ति की इच्छा है तो विधिवत् गुरु की शरण में जाकर ब्रह्मचर्य तथा तपपूर्वक अध्ययन करने पर ही विद्या प्राप्त होगी। धर्म, अर्थ, काम मोक्ष की सिद्धि तदनुकूल अनुष्ठानों के द्वारा ही सम्भव है। याचक ईश्वर से उत्तमोत्तम पदार्थों की याचना करता है किन्तु उत्तम कोटि के कर्म भी किये जायें तभी कर्मफल का तालमेल बैठता है। मन्त्र के पूर्वार्द्ध में श्रेष्ठ कर्मों का अनुष्ठान स्पष्ट है, वे भी एक या दो नहीं अपितु पूरा लेखा उत्तम कर्मों से ही भरा हुआ हो। कभी कभी मनुष्य अपने आपको विवश मान बैठता है और निश्चित कर्म करने के लिए तत्पर हो जाता है या होना पड़ता है। परन्तु श्रुति का उपदेश है कि शुभ कर्मों की श्रृंखला टूटनी नहीं चाहिए। यदि हमने अपना दृढ़ निश्चय बना लिया है तो कोई भी शक्ति नेक कर्म करने से रोक नहीं सकती।

कर्म की भद्रता ही कर्ता को कर्मयोगी बना देती है। ऐसे साधक के लिए संसार में कुछ भी अगम्य नहीं रह जाता, वह सदैव ईश्वर की कृपा का पात्र बना रहता है, विद्वानों का आशीर्वाद उसे मिलता रहता है। आत्मोन्नति का यही उपाय है। वृद्धि का अर्थ यहां आत्मोन्नति है। मन्त्र का सार यह है कि उत्तम कर्म ही उत्तम फल प्रदान करते हैं। हम जैसा चाहते हैं वैसा ही कर्म भी करें तो मनचाहा पदार्थ पा सकते हैं।

यह अनुष्ठान बहुत ही कठिन है। सर्वप्रथम तो प्रत्येक इन्द्रिय का नियमन करना होगा। इन्द्रियों के वश होकर ही कर्म किया जाता है। इन्द्रियों का राजा ही वस्तुतः राजा है, संसार में उसे किसी का दास नहीं बनना पड़ेगा। इन्द्रिय जय के आधार पर हम परमात्मा के द्वारा प्रदत्त आयु को भोग सकते हैं। कानों से भद्र सुन, आंखों से भद्र देख पुष्ट अंगों से युक्त होकर ईश्वर की स्तुति करते रहें यह ही जीवन को सुखपूर्वक व्यतीत करने का उपाय है।

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा
भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभि-
र्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥

ऋ० १।८९।८

अभद्र आचरण से ही रोग शोक सन्तापादि आदि होते हैं। आयुर्वेद के अनुसार कर्मज व्याधियां अपेक्षाकृत कष्टसाध्य होती हैं। एक नीतिकार ने तो आपत्तियों को अपने अपराध का परिणाम बताया है—

रोगशोकपरिताप-
बन्धनव्यसनानि च।
आत्मापराधवृक्षाणां
फलान्येतानि देहिनाम् ॥

अतः भद्रकृति, भद्रदर्शन, भद्र चिन्तन ही मनुष्य को कल्याण की ओर ले जाते हैं और यज्ञमय जीवन बन जाता है। यह ही भद्र की प्राप्ति है।

आर्यसमाज की पद यात्रा

पदयात्रा आर्यसमाज की यह दिल्ली से चली है दिवराला।
करने को भस्म अन्याय अधर्म यह दयानन्द की है ज्वाला ॥

इस ज्वाला से अब आग उठी है सारा आर्यावर्त।
चल पड़े सैकड़ों सन्यासी, जन जन धारण कर अग्निवेश ॥

यह अग्नि रोके नहीं रुके, आगे ही बढ़ती जायेगी।
नारी उत्पीड़न, नारी दहन व अत्याचार मिटायेगी ॥

श्रीराम कृष्ण ऋषि मुनियों की जो जननी पूज्या नारी है।
उस मातृ शक्ति को भस्म करे यह पापी, अत्याचारी है ॥

यह अत्याचार, अन्याय अधर्म अज्ञान अंधकार मिटाने को।
पदयात्रा निकली आर्यों की जन जन को आज जगाने को ॥

धर्मान्ध जनों ने भस्म करी इक अबला नारी छल बल से।
यह अग्नि अब कर देगी भस्म इस दुष्ट प्रथा को भू तल से ॥

यह आर्य जाति के सन्यासी, आर्यवीर वीरांगनाएं।
सब मिलकर यह सब मेटेंगे अब देश धर्म की विपदाएँ ॥

ऋषि दयानन्द के ये सैनिक वैदिक सन्देश सुनाने को।
बलिदान दिवस श्रद्धानन्द का दिवराला चले मनाने को ॥

यह यात्रा तीर्थ यात्रा है, जीवन यात्रा कर देगी सफल।
जीवन का पुण्य मिले उसको दस, बीस कदम जो भी ले चल ॥

यह आर्यसमाज का अग्नि तेज अज्ञान अंधकार मिटायेगा।
'भास्कर' बनकर वैदिक प्रकाश भारत भू को चमकायेगा ॥

—भगवती प्रसाद सिद्धांत भास्कर

(पृष्ठ ३ का शेष)

राजनैतिक इतिहास का आध्यात्मिक विवेचन

व्यापी शरीर पर चगेज खां और एटिला जैसे महान् योद्धाओं के आक्रमण होने लगे, तब ससार को यह देख कर आश्चर्य हुआ कि चिरकाल की समृद्धि और सुलभ विषयभोग ने न केवल उन मे फूट पैदा कर दी है, उनकी युद्ध शक्ति को भी बहुत निर्बल कर दिया है। रोमन साम्राज्य के क्षय के प्रसिद्ध इतिहास लेखक गिबन ने अपने ग्रन्थ के अन्तिम परिच्छेद म रोम के पतन के कारणो का जो विवेचन किया है, उसमे दो कारणो पर विशेष रूप से बल दिया है। एक कारण तो यह था कि पदो के अधिकारो के लिए आपस मे लड-लड कर रोम के नेताओ ने साम्राज्य की जड हिला दी थी और दूसरा कारण यह था कि बढी हुई तृष्णा को तृप्त करने के लिए उन्होने अपने पुरातन राष्ट्रीय स्मारको और सुरक्षा के साधनो तक को उजाड डाला था। रोम के पतन के दिनो म देखने वालो को यह देख कर दुख व आश्चर्य होता था कि जिस कवच को पहन कर रोम का योद्धा युद्धक्षेत्र म विजयी होता था उसके तीसरी या चौथी पीढी के वशज के शरीर पर वह कवच इतनी ढीली आने लगी थी कि उसे पहन कर लडाई मे जाना भी असभव हो गया था। उस अन्तिम युग में रोम के राज्य मे अनाचार, भ्रष्टाचार और विषयलोलुपता सीमा से अधिक बढ गई थी। इतिहास लेखकों ने रोमन साम्राज्य के पतन को एक विशाल पर्वत के पतन से उपमा दी है। इतिहास बतलाता है कि पर्वत के उस पतन का मुख्य कारण यही था कि उसे बनाने वाली शिलाओ को अनाचार की दीमक ने चाट कर बिल्कुल खोखला कर दिया था।

भारत के इतिहास से एक और दृष्टान्त लेना हो तो मुगलों के इतिहास पर दृष्टि डालिये। मुगल साम्राज्य के बनाने वाले महापुरुष ने मध्य एशिया से भारत तक की विजय यात्रा कर के सल्तनत की स्थापना की। परन्तु उसके उत्तराधिकारी दिल्ली के लालकिले मे सब प्रकार से साधन सम्पन्न होकर भी अपनी रक्षा न कर सके। इसका एकमात्र कारण मुगल बादशाहो का चरित्र सम्बन्धी पतन था। बाबर का बेटा हुमायूं एक राजपूतनी की राखी पाकर अपना फर्ज समझता है कि मुसलमान आततायी से लडने के लिए सन्नद्ध हो जाय और उसका वशज जहांदर शाह शासन का नया ही उपाय निकालता है। वह शासन करना ही छोड देता है और सल्तनत का सारा बोझ वजीरों पर डाल देता है। राजकाज से निश्चिन्त होकर वह मदिरा और मोहिनी की सेवा में इतना सलग्न होता है कि उसे न अपनी सुध रहती है और न प्रजा की। वह लालकुंवर नाम की एक नर्तकी के चरणों में आत्मसमर्पण कर देता है, एक दिन जहांदर शाह और लालकुंवर महल की छत पर से यमुना की ओर देख रहे थे। सवारियों से भरी हुई एक नौका पार जा रही थी। लालकुंवर बोली कि मैंने सवारियो से भरी हुई किश्ती को कभी डूबते नहीं देखा। बस इतना इशारा काफी था। उसी समय बादशाह की आज्ञा से मल्लाहों ने सवारियो से भरी हुई किश्ती बीच धार मे ले जाकर डुबो दी। बीसियो व्यक्ति डूब कर मर गए। इस पर लालकुंवर मुस्करा दी जिससे जहांदर शाह का जीना सफल हो गया। कुछ समय पश्चात यदि ऐसे राज्य की किश्ती यमुना की मझधार में डूब गई तो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं।

भा[illegible] को राष्ट्रीय जागृति के ऐतिहासिक उतार पर समालोचनात्मक दृष्टि डालें तो हम देखेंगे कि केवल वही राष्ट्रीय उत्थान सफल हुए जो मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक उत्थान के साथ बधे हुए थे। शिवाजी के नेतृत्व में महाराष्ट्र में जो विशाल राज्य-क्रांति हुई वह जन्म काल से ही भक्तों और सन्तों द्वारा फैलाई सुधारणाओं से सम्बद्ध थी। पहले सुधार का वसत छाया, पीछे क्रांति के फूल खिले। मराठाशाही कायम रही जब तक महाराष्ट्र के नेता सत तुकाराम और समर्थ गुरु रामदास के बतलाये हुए मार्ग पर चलते रहे। ज्यो ही उन्होंने उस मार्ग को छोडकर पतन काल के मुगल शासको का अनुसरण किया त्यों ही उनका भी पतन आरम्भ हो गया? मानो विनाश की घण्टी बज गई।

राजनैतिक और आर्थिक सफलता मनुष्य को प्राय अन्धा बना देती है। वह सेना और धनी के बल पर इतना विश्वास करने लगता है कि इन दोनो से अधिक बलवना और इसकी प्रारम्भिक सफलताओ का कारण चरित्र शक्ति को भूल जाता है। व्यक्तियो और राष्ट्रो के उठकर गिरने का यही मुख्य कारण होता आया है।

मनुष्य और मृत्युंजय

लेखक प्रो० प्रताप सिह
प्रकाशक आयकुमार सभा (रजि०)
किंग्जवे कम्प दिल्ली-९। प० स० १९८७
मूल्य दो रुपये पचास पैसे। पृ० स० ४०

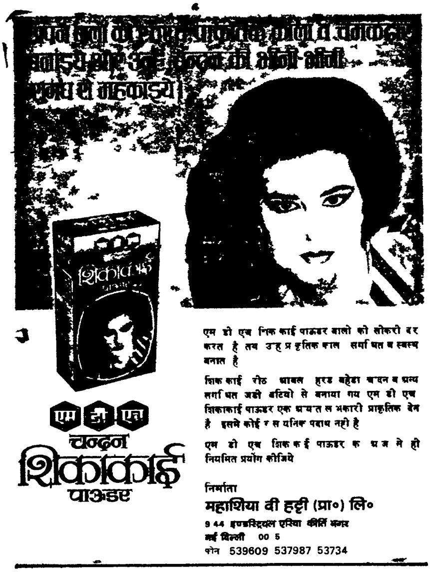
इस पुस्तक मे प्रो० प्रताप सिंह ने बताया है कि जब से इस ससार मे 'जीवन' का आरम्भ हुआ है, 'मृत्यु' उसके साथ अभिन्न रूप से जुडी हुई है। जीवनलिंग जात है, इसीलिए मरणधर्मा है। जात' की मृत्यु सुनिश्चित होती है, तब भी इस ससार मे जीवन, मृत्यु से भय पाता है और उस पर विजय पाने का उद्यम आदि काल से चलता आया है। मानव की मृत्यु पर विजय पाने की यह धारणा ही उसे 'मृत्युजय' बनाती है। इसकी पहली अनिवार्यता आदमी बनना है और यह नहीं भूलना है कि नर का देही होना तथा आदमी बनना दोनो म भेद है। विद्या, तप, ज्ञान, दान, गुण धर्म से हीन नर देहधारी प्राणी पशुवत् जीवन यापन करते हैं। इनका जीना मरना महत्त्वहीन होता है। आदमी बन कर मनुष्य मौत को जीत तो सकता है, परन्तु काम आसान नहीं है। प्रो० प्रतापसिंह ने अपनी इस छोटी सी पुस्तिका मे इसी कठिन काम को सरल बनाने वाले कुछ उपयोगी सूत्र दिये हैं। इनकी सख्या चार है।

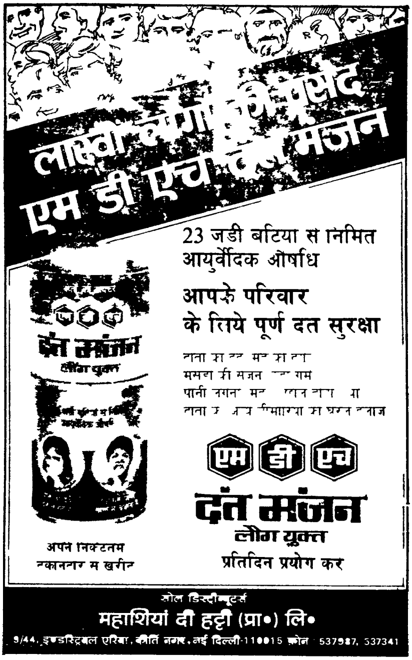
'मानव आध्यात्म गणित' में लेखक ने आध्यात्म की गणितीय तथा वैज्ञानिक व्याख्या परक आधार भूमि प्रदान करते हुए बताया है कि परमात्मा, आत्मा और प्रकृति तीनों सम आयु और स्वतन्त्र हैं। परमात्मा', आत्मा तथा प्रकृति का जन्मदाता नहीं, अपितु नियामक है। उसका गणित पक्ष यह है कि 'यथा ब्रह्माण्डे तथा पिण्डे' सूत्र के अनुसार मा व शरीर त्रिविमीय' (थ्री डाइमेंशनल) है। ये तीनो विमाएं एक बिन्दु पर मिलती हैं और वह बिन्दु शून्य है, जो सब को गतिशील बनाता है।

'अनुभव' में वैज्ञानिक चिन्तन के जरिये लेखक ने बताया है कि वेद के इस वाक्य को किस तरह व्यावहारिक रूप दिया जा सकता है अर्थात् 'आदमी' कैसे बना जा सकता है। इसका मूल मन्त्र आत्मज्ञान है। अपने को पहचानने वाला ही 'आदमी होता है। 'मृत्युजय' में अमरत्व के उपायों का सरल-रोचक और वैज्ञानिक विवरण दिया गया है तथा 'सर्वत्र पूर्णता' में कहा गया है कि पूर्ण विश्वास और कृतज्ञता के साथ परमात्मा को पूरी तरह समर्पित होकर ही मृत्यु को जीता जा सकता है। अन्त में इतना ही कहा जा सकता है कि यह पुस्तिका सब के लिए समान रूप से उपयोगी पठनीय और सग्रहणीय है। भाषा सरल सुबोध और विषयानुकूल है।

श्री शेखर कुमार का दुखद निधन

आर्य समाज दरियागंज के प्रधान श्री बी० बी० सिघल के सुपुत्र श्री शेखर कुमार का ५ दिसम्बर को दिल का दौरा पडने से निधन हो गया। ८ दिसम्बर को उनकी स्मृति में श्रद्धाञ्जलि सभा का आयोजन किया गया। इस अवसर पर श्री सूर्यदेव, डा० धर्मपाल जी श्रद्धाञ्जलि निमित्त पहुंचे। प० यशपाल सुधाशु ने इस अवसर पर कहा श्री शेखर कुमार का ३७ वर्ष की अल्पायु में आकस्मिक निधन हुआ जिस का सभी को हार्दिक दुख पहुंचा है। उन्होंने पारिवारिक जनों को हिम्मत और बहादुरी से अगाध दुख को सहने की सान्त्वना दी। इस अवसर पर शान्ति यज्ञ किया गया और सामूहिक शान्ति प्रार्थना की गई। यज्ञ प० शिववीर शास्त्री ने सम्पन्न कराया।


एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर
एम डी एच शिकाकाई पाउडर बालो को सोकरी दर करते है तथा उन्हे प्राकृतिक काल समावृत व स्वस्थ बनाते है
शिककाई रीठ आवला हरड बहेडा चन्दन व अन्य सर्गावृत जडी बूटियो से बनाया गया एम डी एच शिकाकाई पाउडर एक अत्यन्त लाभकारी प्राकृतिक देन है इसमे कोई रासायनिक पदार्थ नही है
एम डी एच शिकाकाई पाउडर का ही नियमित प्रयोग कीजिये
निर्माता
महाशिया दी हट्टी (प्रा०) लि०
9 44 इण्डस्ट्रियल एरिया कीर्ति नगर
नई दिल्ली 00 5
फोन 539609 537987 53734


एम डी एच
23 जडी बटिया स निमित
आयुर्वेदिक ओषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दत सुरक्षा
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
प्रतिदिन प्रयोग कर
सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9/44, इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-110015 फोन 537987, 537341


आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
अजमल खान रोड
करोल बाग
नई दिल्ली 10005
फोन 582036 57158 8
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
alignpoint

R. N. No. 32387/77 Post in N.D.P.S.O. on 31-12-87, 1-1-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 151
रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस न० यू १३१

आर्यसमाज करोलबाग में श्रद्धानन्द बलिदान दिवस

२३ दिसम्बर, अखिल भारतीय श्रद्धानन्द दलितोद्धार सभा के तत्वाधान में आर्यसमाज करोलबाग में सभा का आयोजन किया गया। इस अवसर पर श्री रामचन्द्र विकल, देशराज बहल, श्री सोमनाथ मरवाह, डा० धर्मपाल, श्री सूर्यदेव जो श्री क्षितीश, श्रीमती उषा शास्त्री वक्ता उपस्थित थे।

सभा में वक्ताओं ने स्वामी श्रद्धानन्द के बलिदान एवं उनके कार्यों पर विचार व्यक्त किये। श्री क्षितीश ने कहा—स्वामी श्रद्धानन्द का बलिदान २३ दिसम्बर को हुआ था। इसलिए २३ दिसम्बर को ही जलूस निकालना चाहिए, २३ को ही बलिदान दिवस मनाया जाना चाहिए। श्री सूर्यदेव ने स्वामी जी के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए कहा—बलिदान तो २३ दिसम्बर को ही हुआ था परन्तु उनकी शवयात्रा २५ दिसम्बर को पुरानी दिल्ली के बाजारों से निकली थी जिस पर तीन दिन तक सारी दिल्ली बन्द रही थी। जिस मार्ग से उनकी शव यात्रा निकली थी उसी मार्ग से प्रत्येक वर्ष उनके बलिदान की स्मृति में शोभा यात्रा निकाली जाती है। सरकार के चाहने पर भी इसमें परिवर्तन नहीं किया और न हो सकेगा। यह हम सब की भावनाओं से जुड़ा विषय है। हमें इस जलूस को हर वर्ष प्रभावशाली बनाना चाहिए।

इस सभा का संयोजन श्री रामलाल मलिक ने किया।

(पृष्ठ १ का शेष)

दूरदर्शन के व्यवहार की घोर निन्दा

सूर्यदेव, श्री यशपाल सुधांशु आदि वक्ताओं ने विचार व्यक्त किये। श्री सूर्यदेव ने कहा—राष्ट्र को खतरा है देश द्रोहियों से। हमें देशभक्तों का सम्मान करना चाहिए। जिन्होंने देश के लिए बड़े से बड़ा बलिदान दिया उनको भुलाया जा रहा है। आर्यसमाज ने देश के लिए भारी कुर्बानियां दी हैं। आर्यसमाज के अमर बलिदानी स्वामी श्रद्धानन्द ने अपना पूर्ण योगदान देश की स्वाधीनता के लिए दिया। परन्तु खेद है श्रद्धानन्द बलिदान दिवस पर उनका समाचार एक पंक्ति के रूप में दूरदर्शन पर पढ़ा गया। जबकि ईसा मसीह के जन्म दिवस पर ईसाइयों का प्रचार दूरदर्शन पर देर रात भर होता रहा है यह विडम्बना है।

डा० धर्मपाल ने भी श्री सूर्यदेव के प्रस्ताव का पुरजोर समर्थन किया। श्री धर्मपाल ने समाज के प्रधान एवं मन्त्री को सफल आयोजन के लिए बधाई दी।

आर्यसमाज बोट क्लब के निर्वाचित अधिकारी

प्रधान—श्री रामशरणदास आर्य
उपप्रधान—श्री रामकुमार दहिया
मन्त्री—श्री सुरेन्द्र कुमार
उपमन्त्री—श्री धर्मवीर जी
कोषाध्यक्ष—श्री गंगादास जी
लेखा निरीक्षक—श्री भाटिया जी (जनपुरा)

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री डा० धर्मपाल द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक १२ | रविवार १० जनवरी १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | पौष २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

डा० सत्यकेतु विद्यालंकार सम्मानित

दिल्ली के उपराज्यपाल श्री हरकिशनलाल कपूर ने २८ दिसम्बर को हिन्दी अकादमी, दिल्ली द्वारा आयोजित वर्ष ८५-८६ के सम्मान-अर्पण समारोह में आर्यसमाज के मूर्धन्य विद्वान् डा० सत्यकेतु विद्यालंकार को हिन्दी की विशिष्ट सेवा के लिए ११ हजार रुपये, शाल, स्मृति चिह्न एवं प्रशस्ति पत्र भेंट कर सम्मानित किया।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी डा० सत्यकेतु विद्यालंकार का जन्म सहारनपुर, उ० प्रदेश में १९ सितम्बर १९०३ में हुआ था। सन् १९२४ में आपने गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार से प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान प्राप्त कर स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण की और पेरिस विश्वविद्यालय से इतिहास विषय में डी० लिट की उपाधि प्राप्त की। आप सूबा कांग्रेस कमेटी, उत्तर प्रदेश के सदस्य, अखिल भारतीय दलितोद्धार सभा के संयुक्त मन्त्री, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग तथा गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय सीनेट के सदस्य पद को सुशोभित कर चुके हैं। सन् १९६२ से १९६८ तक रुहेल खण्ड स्नातक निर्वाचन क्षेत्र से उत्तर-प्रदेश विधान परिषद् के सदस्य रहे हैं।

डा० सत्यकेतु ने १९५४ में एक शिष्टमण्डल के सदस्य के रूप में चीन की यात्रा की तथा सन् १९८० ई० सार्वभौम आर्य महासम्मेलन में शामिल होने लन्दन गये। इसके अतिरिक्त फ्रांस, बेल्जियम, ब्रिटेन, स्विटज़रलैण्ड, इटली, पूर्वी अफ्रीका, इण्डोनेशिया, थाइलैण्ड, सिंगापुर आदि अनेक देशों की भी यात्रा की तथा भारत के साथ सांस्कृतिक सम्बन्धों की स्थापना व उसे सुदृढ़ करने में बहुमूल्य सहयोग दिया।

विद्यासागर डा० सत्यकेतु विद्यालंकार ने विभिन्न विषयों पर ४२ से अधिक पुस्तकें लिखी हैं। इसमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य सात-सात सौ पृष्ठों से भी अधिक "आर्यसमाज के इतिहास" के सात खण्डों के सम्पादन व प्रकाशन का है।

उल्लेखनीय है कि डा० सत्यकेतु विद्यालंकार को सन् १९२९ में हिंदी साहित्य सम्मेलन द्वारा मंगला-प्रसाद पारितोषिक, उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा प० गोविन्द वल्लभ पन्त एवम् मध्य प्रदेश द्वारा प० मोतीलाल नेहरू पुरस्कारों से पहले ही सम्मानित किया जा चुका है।

आजकल आप गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार में कुलाधिपति पद को सुशोभित कर रहे हैं। वस्तुतः यशस्वी साहित्यकार डा० सत्यकेतु विद्यालंकार का यह सम्मान हिंदी भाषा व 'आर्यसमाज" का सम्मान है। समस्त आर्य जगत को डा० सत्यकेतु को प्रदान किये गए सम्मान पर गर्व है।

इस अवसर पर साहित्य सेवा के लिए सर्वश्री डा० प्रभाकर माचवे, श्रीमती शकुन्त माथुर, डा० नरेन्द्र-कोहली, हिंदी सेवा हेतु डा० विमल-कुमार जैन, बी० आर० नारायण तथा पत्रकारिता सेवा के लिए मुकुट बिहारी वर्मा को भी इसी प्रकार से सम्मानित किया गया। सम्मानित किये जाने वाले अन्य व्यक्ति सांसद श्री चन्दूलाल चन्द्राकर उपस्थित न हो सके।

सुप्रसिद्ध समालोचक डा० विजेन्द्र-स्नातक ने पुरस्कृत विद्वानों का परिचय दिया तथा प्रख्यात साहित्यकार श्री विष्णु प्रभाकर ने कहा कि यह सर्जक को लौ का सम्मान है।

समारोह की अध्यक्षता कार्यकारी पार्षद (शिक्षा) श्री कुलानन्द भारतीय ने की। श्री गोपाल प्रसाद व्यास ने भी विचार व्यक्त किये। अकादमी के सचिव डा० नारायण-दत्त पालीवाल ने योजना पर प्रकाश डाला। सभी वक्ताओं के उद्गारों का मूल स्वर यह था कि अकादमी इन साहित्यकारों को सम्मानित कर स्वयं गौरवान्वित हुई है और अपने को धन्य मानती है। इस अवसर पर करतलध्वनि के मध्य उपराज्यपाल ने आगामी वर्ष से पुरस्कार की राशि बढ़ाकर १५ हजार कर देने की घोषणा की। प्रख्यात पत्रकार व साहित्यकार श्री कन्हैयालाल नन्दन ने धन्यवाद ज्ञापन किया। अन्त में 'मृदंग" की ओर से इन्द्र-धनुष सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया।

श्री गोकुल चन्द आहूजा को श्रद्धाञ्जलियां

वयोवृद्ध प्रसिद्ध आर्यसमाजी श्री गोकलचन्द आहूजा के निधन पर दिल्ली की आर्य संस्थाओं की ओर से भावभीनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित की गयी। श्री गोकलचन्द आहूजा वैदिक सिद्धांतों के मर्मज्ञ, स्वाध्यायशील, शांतचित्त दानवीर थे। उनके जीवन में सरलता, मधुरता के मधुर गुण विद्यमान थे। आर्यसमाज के क्षेत्र में उनका यश प्रशंसनीय है।

श्रद्धाञ्जलि सभा में स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने कहा—मुझे यह जानकर उनके प्रति श्रद्धा हुई। श्री गोकलचन्द आहूजा ने प० क्षेमकरणदास त्रिवेदी की तरह प्रौढ़ अवस्था में पढ़ना शुरू किया और इतना स्वाध्याय किया कि वे एक आदर्श उदाहरण बन गये। श्री डा० धर्मपाल ने उनकी कर्मठ और शान्त सौम्य स्वभाव की प्रशंसा

(शेष पृष्ठ ३ पर)

अमर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल की बहिन

श्रीमती शास्त्री देवी दिवंगत

अमर शहीद रामप्रसाद बिस्मिल की बहिन श्रीमती शास्त्री देवी का २२ दिसम्बर को देहावसान हो गया। वे राष्ट्र की स्वाधीनता में बड़ा कार्य करती रहीं। क्रांतिकारियों को शस्त्र पहुंचाने का कार्य वे ही करती थीं। अनेक बार जंगल में भूखे प्यासे निडर वह छुपी रहती थी, उनके भाई रामप्रसाद को क्रांतिकारियों का सिरमौर बनाने में शास्त्री देवी का भी उल्लेखनीय योगदान रहा। आज भी रामप्रसाद के गीत गूंजते हैं—

सरफरोशी की तमन्ना,
अब हमारे दिल में है।
देखना है जोर कितना,
बाजुए कातिल में है।।

श्रीमती शास्त्री देवी की अन्त्येष्टि में दिल्ली सभा के प्रधान डा० धर्मपाल, सार्वदेशिक सभा के महा-

(शेष पृष्ठ ७ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—डा० धर्मपाल

गतांक से आगे

इसीलिए वेद में सूर्य, इन्द्र और रुद्र के पूर्व 'असुर' पद का विशेषण के रूप में प्रयोग मिलता है। यही नहीं, वहां तो वैश्वानर, वायु, पर्जन्य, वरुण और सोम को भी 'असुर' कहा गया है। विरोध के लिए अर्थ-सहित हम कतिपय ऋचाएँ उद्धृत कर रहे हैं—

असुर सूर्य—

विसुपर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यद्
गभीरवेपा असुरः सुनीथ.।
क्वे३दानीं सूर्य कश्चिकेत
कतमां द्यां रश्मिरस्या ततान ।।

ऋग्वेद १।३५।७३

अर्थात् (गभीर वेपा) गभीर वेग युक्त (असुर) प्राणों का प्रदाता या जीवनदायक (सुनीथ) उत्तम मार्ग से चलने वाला (सुपर्ण) उत्तम रश्मि-पूर्ण (अन्तरिक्षाणि वि अख्यत्) अन्तरिक्ष में आलोक विकीर्ण करता है। (इदानीं सूर्य क्व) अब रात में सूर्य कहां है? (क चिकेत) कौन जानता है? (अस्य रश्मि) कतमा द्या ततान) इसका प्रकाश किस द्युलोक में फैला हुआ है?

असुर इन्द्र—

अर्चा दिवे बृहते शूष्य १वच
स्वक्षत्र यस्य धृषतो धृषन्मन ।
बृहच्छ्रवा असुरो बर्हणा कृत
पुरो हरिभ्या वृषभो रथोहिषः ।।

ऋग्वेद १।५४।३

अर्थात् हे उपासक! तुम उन तेजोमय इन्द्र के लिए उत्तम स्तोत्र गाओ जिनका मन बलिष्ठ तथा स्वकीय क्षात्र सामर्थ्य से परिपूर्ण है। वे यशस्वी, जीवन-शक्ति-प्रदायक और शत्रु का विनाश करने वाले हैं। उनका यह सुदृढ उत्तम अश्वों को जोत कर सुसज्जित किया गया है।

(इ) असुर रुद्र त्वमग्ने रुद्रो असुरो महो दिव ।

ऋग्वेद, २।१।६

हे अग्नि! तुम द्युलोक में महान् बलिष्ठ जीवनप्रद रुद्र हो।

(ई) असुर पर्जन्य—अर्वाङ्केतेन स्तनयित्नु वेह्यपो निषिञ्चन्नसुर पिता न.।

ऋग्वेद, ५।८३।६

अर्थात् हे पर्जन्य! तुम विद्युत् गर्जना करते हुए जल बरसाते हुए हमारे पास आओ? तुम तो हमारे लिए जीवनप्रदाता पिता ही हो।

युग और दृष्टि : प्रवचन

—भैरवदत्त शुक्ल

'असुर' पद केवल प्राणों के रक्षक या जीवन-दाता के लिए ही नहीं वरन् बलिष्ठ, विश्व-निर्माता और असीम बल के लिए भी वैदिक साहित्य में प्रयुक्त हुआ है।

इस प्रकार महीयसी प्राण-रक्षिणी जीवन-दायिनी शक्ति से परिपूर्ण और समस्त पदार्थों और वस्तुओं के पोषण करने की सामर्थ्य से युक्त उस ईश्वर को 'स्वस्ति' के क्षेत्र में सहायता ग्रहण करना हमारे लिए वांछित हो जाता है। ब्रिटेन, अमरीका, फ्रांस सरीखे सम्पन्न और प्रगतिशील देशों में अभावों का चिह्न तक शेष न रहने पर भी जो मानसिक तनाव, आन्तरिक सन्त्रास और एक विचित्र तरह की बेचैनी नयी पीढ़ी में परिलक्षित होती है, उसका मूल कारण यही है कि भौतिकता के आतिशय्य में आस्तिकता का व्यावहारिक रूप पूर्णरूपेण विलुप्त होता जा रहा है और प्रार्थना-उपासना औपचारिक बनकर रह गई है। अपने देश में भी इस यूरोपीय जड भौतिकता के विनाशक उपादानों का भयावह उमडाव अभिवृद्ध होता जा रहा है। एक ओर अभावों का नग्न ताण्डव और दूसरी ओर असीम समृद्धिशाली भौतिकतावादी विलासपूर्ण स्वच्छन्द अमर्यादित स्वेराचार पल-पनप कर आस्तिकता को जड़ें हिला कर सम्पूर्ण भारत को असन्तुलित योजनाओं की भूलभुलैया में ढकेलता जा रहा है। इससे छुटकारा पाने के लिए हमें वास्तविक आस्तिकता का सुदृढ आधार ग्रहण करना ही पड़ेगा।

(७) स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतुना—यही नहीं, केवल आस्तिकता का आधार लेकर जड प्रतीत होने वाले वस्तुओं और निश्चेष्ट लगने वाली पदार्थों की भी उपेक्षा 'स्वस्ति' के क्षेत्र में हानिप्रद सिद्ध हो सकती है। इसीलिए इस ऋचा में स्पष्ट कर दिया गया है कि द्युलोक और पृथ्वी भी हमें 'स्वस्ति'—कल्याण प्रदान करे।

द्युलोक में असीम आकाश, ग्रह-उपग्रह, तारक-नक्षत्र-अन्तरिक्ष आदि के साथ असीम वेगशाली पवन, वायु-मण्डल, ग्रहों-उपग्रहों के आकर्षण-विकर्षण की सामर्थ्य का अन्तर्भाव हो जाता है और पृथिवी में सरि-सागर, शैल-गिरि-पर्वत, वृक्ष-वनस्पति, तृण-तरु का समावेश हो जाया करता है।

मानव के जीवन में उपरि-वर्णित द्युलोक और पृथ्वी का जो महत्व है, वह किसी भी विवेकशील व्यक्ति की दृष्टि से ओझल नहीं हो सकता। इनमें से किसी की भी उपेक्षा करने से हमारे अस्तित्व पर प्रश्न-चिन्ह लग सकता है। इनके महत्व का सही आकलन न करने से हमारी प्रगति पगु हो सकती है। इनके पारस्परिक सम्बन्धों के सन्तुलन को ध्यान में न रखने से हम विनाश के गर्त की ओर लुढ़क सकते हैं।

हम जानते हैं कि औद्योगिक विकास के असन्तुलन के कारण, यूरोप, एशिया आदि के समस्त विकसित और विकासशील राष्ट्र कूड़े-कचरे, धुए के आतिशय्य से उद्भूत प्रदूषण से छुटकारा नहीं पा रहे हैं। हमें यह भी पता है कि अणु-परीक्षणों से सारे ससार का वायुमण्डल रेडियोधर्मिता के दोषों से भर गया है। भारत में ही गंगोत्री से उतरने वाली गंगा कानपुर में पहुच कर गन्दगी और दुर्गन्ध का पर्याय बन गयी है। ये सब परेशानियां केवल द्युलोक और पृथ्वी में समाविष्ट वस्तुओं और पदार्थों की जडता और चेतनता का भेद न जानने और उनकी शक्ति के सतुलन को बिगाड देने के कारण उत्पन्न हुई हैं। क्या इनसे 'स्वस्ति' का स्पन्दन तीव्रता के साथ गतिशील हो सकेगा?

फिर, हमारे अपने शरीर में ही 'द्यु' और 'पृथ्वी' की स्थिति है। ब्रह्मरध्र से लेकर मस्तिष्क तक का समस्त क्षेत्र 'द्युलोक' है जिसमें ज्ञान, प्रकाश और विकास की समस्त अकूत सामर्थ्य सचित है, जो मोक्ष की प्राप्ति का सशक्त माध्यम है। निधि, सिद्धि और समृद्धि की दिशा इसी से निर्धारित होती है। नाभि-प्रदेश पृथ्वी है, जो हमारे शरीर में अन्तर्निहित क्षमता और सामर्थ्य को धारण करने के साथ ही, उनमें सन्तुलन बनाये रखता है। शिरो भाग से कुछ नीचे और नाभि से कुछ ऊपर अन्तरिक्ष-क्षेत्र है। जिसमें विकृति होते ही समस्त प्राण विचलित होने लगते हैं, इन्द्रियों की शक्ति क्षीणने लगती है, स्नायु-संस्थान दूषित हो जाता है और जीर्णता में अभिवृद्धि होने लगती है। 'स्वस्ति' की उपलब्धि के लिए प्रत्येक व्यक्ति का शरीर यन्त्र और तन्त्र-दुरुस्त होना वांछित है, जिसके लिए मन्त्र का आश्रय पूर्णत अनिवार्य है। जिस समय मन्त्र रटा न जाये वरन् उसके आधार पर व्यावहारिक धरातल को सुपुष्ट किया जावे, उसी समय विश्व-एकता, सामाजिक समता, शुद्ध न्याय, शोषणहीन मानवता की उपलब्धि सम्भव होगी।

उसी स्वस्थ वातावरण में शिक्षा, रक्षा, सुविधा के समस्त वातावरण खुल जायेंगे और हमारी 'स्वस्ति' की साधना भी पूर्ण हो जायेगी। तब न कोई बेकार होगा, न कोई निर्धन, न कोई बेरोजगार होगा और न कोई ठग-तस्कर या काम-चोर।

श्रद्धानन्द बलिदान दिवस

आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई के तत्वावधान में २३ दिसम्बर ८७ को नप्पू सभागार में अमर शहीद स्वामी श्रद्धानन्द जी का बलिदान दिवस गुरुकुल कांगडी के वयोवृद्ध, लब्ध प्रतिष्ठ स्नातक श्री प० सत्यकाम जी की अध्यक्षता में मनाया गया। इस अवसर पर नवनिर्वाचित विधायक एव मुंबई महानगरपालिका के महापौर श्री रमेश प्रभु जी मुख्य अतिथि रहे। सभा के सचालन एव इसे गरिमा प्रदान करने का सम्पूर्ण श्रेय आ० प्र० सभा, बम्बई के प्रधान एव मन्त्री श्री ओंकारनाथ जी एव धर्मवीर गुलाटी जी को जाता है। इस अवसर पर श्री स्वामी सच्चिदानन्द जी अमृतसरी, श्री भगवती प्रसाद जी गुप्ता, श्री प्रेमनाथ जी सहगल, श्री प० दयाशंकर जी, श्रीमती शिवराजवती जी आर्या, श्रीमती लज्जारानी जी गोयल एव दयानन्द बालक एवं बालिका विद्यालय के आचार्य और आचार्या जी एव विद्यालय के बालक-बालिकाओं ने स्वामी जी के जीवन पर प्रकाश डालते हुए श्रद्धांजलि अर्पित की। श्रद्धांजलि समारोह के उपरान्त बम्बई प्रदेश की विभिन्न आर्य-समाजों, महिला समाजों एव आर्य संस्थाओं द्वारा नवनिर्वाचित विधायक एव मनपा मुंबई के महापौर श्री रमेश प्रभु का फूलमालाओं द्वारा स्वागत किया गया। सभा शान्ति-पाठ के पश्चात् विसर्जित हुई।

मन्त्री
आर्य प्रतिनिधि सभा बम्बई

रामायण तथा आर्यसमाज

—प्रकाशवती शास्त्री

रामायण तथा महाभारत हमारे देश के दो प्रसिद्ध ग्रन्थ हैं, और राम और कृष्ण हमारे दो आदर्श। रामायण की रचना श्री वाल्मीकि ऋषि ने श्रीरामचन्द्र जी के राज्यकाल में ही की थी। श्रीराम का मर्यादा पुरुषोत्तम रूप वाल्मीकि ऋषि की अनुपम देन है।

वास्तव में वैदिक धर्म का क्रियात्मक रूप दिखाने के लिए आदि कवि ने रामायण जैसे अनुपम ग्रंथ की रचना की है। रामायण के सभी पात्र पवित्र, आचरण वाले, कर्त्तव्यपरायण तथा वैदिक धर्मी हैं। आदि से अन्त तक रामायण एक यज्ञमय जीवन का प्रतिपादन करती है। श्रीराम का जन्म यज्ञ से तथा यज्ञ की रक्षा के लिए ही हुआ है। यज्ञमय जीवन का ऐसा अनुपम तथा सुन्दर रूप प्रस्तुत कर के ऋषि ने भारतीय संस्कृति को जीवन दिया है।

रामायण हमारे सम्मुख एक आदर्श पिता दशरथ, आदर्श माता कौशल्या, आदर्श पुत्र राम, आदर्श भ्राता लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न तथा आदर्श पत्नी तथा माता सीता का भी दर्शन कराती है। यही नहीं ऋषि ने इसमें एक आदर्श राज्य का चित्र खींचा है, जिसके फलस्वरूप रामराज्य एक आदर्श शासन के नाम से विख्यात हो गया है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी भी अपने देश के लिए इसी रामराज्य की कल्पना किया करते थे।

यही कारण है कि लाखों वर्षों की यात्रा करती हुई रामायण आज भी हमारे मन प्राणों में बसी हुई है। कविवर रवीन्द्र के शब्दों में रामायण के पात्र हमारे लिए घर के परिजनों से भी अधिक अपने हैं।

रामायण की इसी लोकप्रियता का लाभ उठाकर अनेकानेक कवियों ने इसका अनुसरण कर के अपनी लेखनी को धन्य किया, कीर्ति अर्जित की। संस्कृत भाषा के कविकुल गुरु कालिदास ने रघुवंश लिखा, भवभूति ने उत्तररामचरित, भास कवि ने भी रामचरित तथा अभिषेक नाटक लिखे। इसी श्रृंखला में आज से ४०० वर्ष पूर्व श्री गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी इसी ओर पग उठाया यद्यपि इन से पूर्व भी अनेकों रामायण लिखी जा चुकी थीं। पर गोस्वामी जी ने उस काल में बहती दो भक्ति धाराओं में से रामभक्ति धारा को चुना। उस काल में हमारे देश में दो भक्ति-धाराएं प्रसिद्ध थीं। एक रामभक्ति तथा एक कृष्णभक्ति। कृष्णभक्ति के मुख्य कवि हुए सूरदास जी तथा रामभक्ति के नायक बने गोस्वामी तुलसीदास जी। इसी भक्तिधारा में बहते गोस्वामी ने रामायण को सुना। राम का अनुपम चरित्र उन्हें दिव्य तथा असाधारण लगा, बस उन्होंने रामचरित मानस की रचना कर डाली। जिसको आम जनता रामायण के नाम से ही पुकारती है। गोस्वामी ने राम को ईश्वरत्व प्रदान कर के उन्हें ईश्वर का अवतार सिद्ध किया।

वह पुराणों का युग था सो राम के जीवन को गोस्वामी जी ने उसी रंग में रंग दिया। अनेकानेक असम्भव तथा अलौकिक कथाओं को उसके साथ जोड दिया। तत्कालीन अशिक्षित तथा अर्द्धशिक्षित जनता के मनोविज्ञान से लाभ उठाकर अपनी कथा को रोचक तथा आकर्षक बनाने के लिए जनता को अन्धविश्वास तथा चमत्कारों से रोमांचित कर दिया। प्रत्यक्ष को प्रमाण क्या। रामचरितमानस को पढ़ते समय पग-पग पर इतनी पौराणिक कथाएँ पढने को मिलती हैं कि वे कथा-प्रवाह को भी रोक देती हैं। निस्सन्देह एक काव्य के रूप में रामचरितमानस की रचना कर के गोस्वामी जी को आशातीत सफलता प्राप्त हुई है। एक हिंदी भाषा का ग्रन्थ होने के कारण भी। परन्तु इस तथ्य को हमें सदा-सदा स्मरण रखना होगा कि गोस्वामी रचित ग्रंथ रामायण न होकर रामचरितमानस है। अतः उसके नायक राम दशरथ के पुत्र न होकर, भगवान् विष्णु के अवतार हैं। उनके सारे चरित्र भी उसी सिद्धांत को लेकर चले हैं।

आर्यसमाज का तो उद्देश्य ही देश में फैले अन्धविश्वास और रूढियों को हटाना है। जिनके कारण हमारे देश की उन्नति वर्षों-वर्षों से रुकी रही और देश को पराधीनता के प्रहारों को भी सहना पडा। अतः आप ही बताइए कि गोस्वामी जी की तथा अन्य तदनुगामिनी रामायण के पात्र आर्यसमाज के सिद्धांतों के अनुकूल कैसे हो सकते हैं। इसीलिए स्वामी दयानंद ने सत्यार्थप्रकाश में इस रामायण को त्याज्य-ग्रन्थों में परिगणित किया है। हम रामचरितमानस के काव्य सौंदर्य तथा शिक्षाप्रद चौपाइयों की प्रशंसा तो कर सकते हैं परन्तु उसे आर्यसमाज के सत्संगों के कार्यक्रमों में तो स्वीकार नहीं कर सकते। यदि ऐसा करते हैं तो हम अपने आदर्शों से कितने दूर चले जाते हैं यह विचारणीय है।

अन्यों को मार्गदर्शन करने वाले यदि स्वयं ही भटक जाएँगे तो दूसरों को मार्ग कौन दिखाएगा। आजकल दूरदर्शन पर जिस रामायण का प्रसारण हो रहा है वह श्री तुलसीदास जी तथा उसी की अनुगामिनी रामायणों के आधार पर निर्भर है। यह प्रसारण आकर्षक तथा कुछ सीमा तक शिक्षाप्रद होते हुए भी आर्यसमाज के सिद्धांतों से ही नहीं वरन् बुद्धिवादी जनता से कोसों दूर है।

खेद तथा अत्यन्त खेद का विषय है कि आज आर्य जनता ने इस प्रसारण पर अपने सिद्धांतों का बलिदान करना प्रारम्भ कर दिया है। व्यक्तिगत रूप से ही नहीं सामूहिक रूप से भी। मुझे आश्चर्य तथा निराशा होती है।

आर्यसमाज का वह मंच जहां भजनीक सिद्धांत विरुद्ध भजन नहीं गा सकता, वह मंच जहां पर बडे से बडा विद्वान् का छोटी-सी सिद्धान्त-विरुद्ध बात कहने से बहिष्कार कर दिया जाता है। हमने उसी मन्च पर इस प्रसारण को ला बिठाया है। कितनी विशाल क्षति कर रहे हैं हम ऋषि दयानन्द तथा उनकी बनाई आर्यसमाज के साथ। अवसरवादिता के अन्धकार में भटकते हुए हमें दिशाभ्रम हो गया है।

यदि जनता की सुविधा तथा आकर्षण के लिए हम ऐसा कर रहे हैं तो भी भ्रमगत है। जो जनता आज तक आर्यसमाज के सत्संगों में इतनी श्रद्धा नहीं उत्पन्न कर सकी कि वह उसका विकल्प स्वीकार न कर सके। उनकी रुचियों का अनुसरण करते हुए हम उन्हें और भी पथभ्रष्ट कर रहे हैं। आर्यसमाज के सिद्धान्तों के प्रति जितनी आस्था उनसे बची है वह भी समाप्त हो जाएगी।

आर्यसमाज को अपने गौरव की रक्षा के लिए अपने सत्संगों के कार्यकर्त्ता को शक्ति सम्पन्न बनाना होगा। जनता को उच्च कोटि का संगीत दें। उच्चकोटि के मनोरंजक उपदेश, कविताएँ, यज्ञ हवन का आकर्षक सार्थक रूप, वेद मन्त्रों की प्यारी व्याख्या दें। यदि रामायण महाभारत का ज्ञान देना है तो वह भी श्रेष्ठ आर्य विद्वानों द्वारा कथाएँ करवाएँ। ताकि जनता के सम्मुख उनका सच्चा स्वरूप आए।

●

(पृष्ठ १ का शेष)

श्री गोकुल चन्द आहूजा····

की। श्री मोदप्रकाश शास्त्री ने कहा, वे लगनशील कर्त्तव्यपरायण सरल आर्यसमाजी थे। उन्होंने दान और सेवा में कभी आलस्य नहीं किया। श्री सूर्यदेव ने कहा—आहूजा जी के निधन से आर्यसमाज को भारी क्षति हुई है। उनके सुपुत्रों को उनका स्थान ग्रहण करना चाहिए। पं० हरिदत्त शास्त्री ने कहा—कि मेरा निवेदन आहूजा साहब के सुपुत्रों से है कि आप अपने पिता जी के धन सम्पत्ति के उत्तराधिकारी हैं परन्तु यह भी ध्यान रखें कि उनकी धार्मिक और सांस्कृतिक विरासत के भी आप उत्तराधिकारी हैं। आपको भी उसी प्रकार सेवा साधना और दानी स्वभाव बनाना चाहिए।

श्री पृथ्वीराज शास्त्री ने आध्यात्मिक सन्देश देकर सांत्वना के शब्द कहे। पं० यशपाल सुधांशु ने कहा, श्री आहूजा जी अजातशत्रु थे उन्होंने अपने पराये सब का भला किया। जीना उसी व्यक्ति का सफल है जिसके जीवन को दुश्मन भी सराहे। श्री सुधांशु ने अन्त में शेर पढ़ा—

हजारों महफिल होंगी,
हमारो कारवां होंगे।
जमाना हम को ढूंढेगा
न जाने हम कहां होंगे।

इस अवसर पर संयोजन का कार्य श्रीरामलाल मलिक ने किया। अनेक आर्य संस्थाओं की ओर से शोक सन्देश भेजे गये, आर्यसमाज दीवान हाल, आर्यसमाज हनुमान रोड, आर्यसमाज करोलबाग, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, आर्य प्रादेशिक सभा, सत्भ्राता स्कूल, डी०ए०वी० स्कूल आदि प्रमुख थे। इस अवसर पर श्री राजसिंह भल्ला, ला० इन्द्रनारायण, श्री सरदारी लाल वर्मा, श्री शान्तिलाल सूरी, स्वामी शक्तिवेश, श्री तीर्थराम आर्य, श्री तीर्थराम आहूजा ने भी अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की।

नास्तिक बालक मुन्शीराम से स्वामी श्रद्धानन्द का महान् व्यक्तित्व

—चमनलाल अशोक, अशोक विहार

संसार के किसी भी देश के महापुरुष अपने समय के आदर्श तथा जनता के पथप्रदर्शक होते हैं। इनमें से बहुतों की आवश्यकता युग-युगान्तरो तक बनी रहती है।

प्रातः स्मरणीय पुण्यात्माओं एवम् महात्माओं तथा देश और जाति की रक्षा के हेतु अपने प्राणो की बलि देने की शृङ्खला में १९वीं शताब्दी में जब समस्त देश निराशा के समुद्र में डूबा हुआ था, चहु ओर अन्धकार छाया था, दासता और आपसी फूट तथा रूढियों की जजीरों में जकडा था, अपनी प्राचीन सभ्यता और पवित्र प्रेरणादायक संस्कृति को भूल बैठा था और पाश्चात्य सभ्यता की चकाचौंध मे अपने पूर्वजों के अस्तित्व को भी जवाब दे बैठा था, और अविद्या की गाढ़ निद्रा में सोया पडा था। ऐसे घोर अन्धकार तथा विकट समय मे प्रभु की अपार कृपा से देव दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ जिन्होंने भारत की डूबती नैया को किनारे पर लगाया। इनके पश्चात् हिन्दू जाति के महान् सुधारक और देश के महान् नेता के रूप में हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जैसी महान् आत्मा का अवतरण हुआ। जिन्होने अपना सारा जीवन और सर्वस्व देश और समाज की सेवा में लगा कर अन्त मे एक धर्मान्ध मूर्ख जाहिल अब्दुल रशीद नामक मुसलमान व्यक्ति की गोली का शिकार बने और २३ दिसम्बर १९२६ को आज से ६१ वर्ष पूर्व परलोक सिधारे। कहना न होगा कि आर्यसमाज के एक शती से अधिक के स्वर्णिम इतिहास मे यदि किसी उद्दाम व्यक्तित्व के स्वामी को ऋषि दयानन्द के पश्चात् महापुरुष कहा जा सकता है तो वह केवल एकमात्र श्रद्धानन्द ही हैं। महर्षि के पुनीत विचारो के कार्यान्विति का महानतम कार्य उसी व्यक्ति ने किया। वे युग की आवाज थे और उभरती हुई चुनौतियों के जवाब भी थे। उन्होंने अपने लक्ष्य को प्राप्त ही नही किया वरन् संसार को ससार के लिए जीने मरने का सन्देश भी दे गये

पंजाब के जिला जालन्धर के तलवन नामक ग्राम मे एक सामान्य क्षत्री परिवार में ला० नानकचन्द के घर सन् १८५६ ईस्वी में पैदा हुए। और पिता के पौराणिक विचारधारा के होने के कारण, बालक का नाम पौराणिक पद्धति के अनुसार बृहस्पति रखा गया जो कभी व्यवहार में नहीं आया। माता-पिता का रखा नाम मुन्शीराम जो बाद में महात्मा मुन्शीराम और अन्त में स्वामी श्रद्धानन्द के नाम से विख्यात हुए। कौन जानता था कि यह बालक एक दिन देश का महान् नेता बनकर गुरु पदवी को प्राप्त कर के अपने जन्म नाम बृहस्पति को सार्थक करेगा। बहुत कम व्यक्ति ऐसे संस्कारों को लिये होते हैं जो देश और समाज की जीवनधारा को विकट परिस्थितियों मे भी विकास की ओर मोड देते हैं। ऐसे महान् आत्मा सच्चे तपस्वी होते हैं, और कठिन से कठिन सघर्ष, विपरीत परिस्थितियों में उनके जीवन की बलि भी ऐसे महान् आदर्श पुरुषों को अपने लक्ष्य से विचलित नहीं कर सकी। किसी ने ठीक ही तो कहा है—

यस्य कार्यंन्न विघ्नन्ति,
शीतमुष्णं भय रति।
समृद्धिरसमृद्धिर्वा,
स वै तापस उच्यते॥

दासता-पराधीनता की बेडियों में जकडे भारत देश के प्रति अन्धकारमय और नाना प्रकार की सामाजिक कुरीतियो में ग्रस्त जीवन मे नई स्फूर्ति का स्पन्दन देने वाले स्वामी श्रद्धानन्द (बालक बृहस्पति, मुन्शीराम) ही तो थे। देश और जाति-धर्म की वेदी पर अपना सर्वस्व न्योछावर करने वाले और अपने प्राणो तक का भी बलिदान देने वाले महापुरुषो के जीवन अनेक छोटी-बडी घटनाओ की एक अनोखी माला की न्याईं होते हैं, जो कुछ विशेष महत्त्व लिये हुए होते हैं। और कालान्तर मे न केवल वे अपने जीवनो के प्रवाह को रोक कर एक नया मोड देते हैं, अपितु जनता के लिये एक महान् प्रेरणा के स्रोत भी बन जाया करते हैं। सचमुच हमारे चरित्रनायक स्वामी श्रद्धानन्द जी का जीवन हमारे सामने चार भागों मे इस प्रकार आता है—पहला भाग सन् १८५६ से १८८४ तक मुन्शीराम, दूसरा भाग सन् १८८५ से १९०० तक का ला० मुन्शीराम, तीसरा भाग सन् १९०१ से १९१६ तक महात्मा मुन्शीराम, चौथा भाग १९१७ से १९२६ तक स्वामी श्रद्धानन्द जी।

मुन्शीराम चरित्र नायक के जीवन का पहला भाग अत्यन्त पतन की जीवन झांकी है। पञ्चतन्त्र का का यह श्लोक उनके जीवन को पूर्णरूपेण लागू होता है—

यौवन धनसम्पत्तिः
प्रभुत्वमविवेकता।
एकैकमप्यनर्थाय किमु
यत्र चतुष्टयम्॥

अर्थात् धन, दौलत, यौवन, प्रभुत्व और अविवेक, इन चारों में से एक-एक अनर्थ विनाश का कारण है, और यदि कहीं ये चारों मिल जायें, फिर तो विनाश की पराकाष्ठा ही हो जाती है। और सचमुच ये चारों ही इकट्ठे हमारे चरित्र नायक के जीवन के पहले भाग में भलीभांति विद्यमान हैं। इसी कारण उनका यह जीवन काल आचार-विचार में बेलगाम, निरकुश, स्वच्छन्दता से शुतरमुर्ग की तरह दौडने वालों का सा पतन का घृणित जीवन है। उन दिनों बालक मुन्शीराम के पिता लाला नानकचन्द नगर के कोतवाल थे इस कारण उनका सम्पर्क सेठ-साहूकारों से जो अपने धन के मद के कारण सब तरह के व्यसनों में आसक्त थे। मास भक्षण, मद्यपान, जुआ आदि खेलना उनका एक साधारण-सा शौक गिना जाता था। और यही उनके बडप्पन की निशानी मानी जाती थी। इस प्रकार बालक मुन्शीराम का अपने पिता के प्रभाव से उन व्यसनी लोगो से सम्पर्क हो गया। बडे बाप का बेटा होने के कारण उनमे जल्दी घुल-मिल गया। फिर क्या था, कुसगति का प्रभाव कुछ होता भी जल्दी हो है और वह महान् विनाश का कारण बन जाती है। अत. किसी नीतिकार ने बडा ही सुन्दर कहा है, "भूख से व्याकुल और क्रोध से भरा हुआ शेर जिस अनर्थ को नहीं कर सकता, राजा भी जिस विनाश को नहीं कर सकता, वह मनुष्यों का सर्वनाश निन्दनीय दुर्जनों की कुसगति से सहज में हो जाता है।

न व्याघ्रः क्षुधयातुरोऽपि
कुपितो नाशीविषः पन्नगो,
नारातिर्बलसत्वबुद्धिः
कलितो मत्तः करीन्द्रो न च।
त शक्नोति न कर्तुमत्र नृपति
कण्ठीरवो वोद्धुरो दोष,
दुर्जनसंगति वितनुते
य देहिनां निन्दिता॥

गोसांई तुलसीदास जी ने भी बडा सुन्दर कहा है—

को न कुसगति पाय नसाई।

अत बालक मुन्शीराम मित्र-मडली में बैठे, और मांस, शराब और भग के दौर चलने लगे। जुआ, शतरज, नाच, गाने और मुशायरो की महफिलें जमने लगीं और साथ ही हुक्का भी गुडगुडाने लगा। इसके परिणामस्वरूप मुन्शीराम एक महान् नास्तिक भी बन गया और पिता की नौकरी में बार-बार नये-नये स्थान पर बदली होने के कारण शिक्षा आदि का नियमित रूप से कुछ अच्छा प्रबन्ध भी न हो सका। अत गन्दे-गन्दे उपन्यासों को पढने में ही समय व्यतीत करने लगा।

मुन्शीराम–जीवन के दूसरे भाग में बालक मुन्शीराम, लाला मुन्शीराम बने, वह वकालत का काम करने लगे और इस व्यवसाय में नाम भी पाया। इसी दौरान दैवयोग से बरेली नगर में देव दयानद का आगमन हुआ और उनके व्याख्यानों से प्रभावित होकर मुन्शीराम के पिता ला० नानकचन्द, जो उन दिनों वहां कोतवाल थे, अपने पुत्र को स्वामी जी के उपदेश सुनने की प्रेरणा कर के उनको वहां जाने को कहा। मुन्शीराम पर स्वामी जी के उपदेशों का जादू का सा प्रभाव पडा और जीवन का प्रवाह ही बदल गया और पुनर्जन्म के सम्बन्ध में सत्यार्थप्रकाश पढ़ कर वह नास्तिक मुन्शीराम सन १८८४ में बच्छोवाली समाज का विधिवत सदस्य बन गया और जो भाषण कुछ मिनटों के लिए उसने समाज में किया वह उनके मन के उद्गार थे जो सारा जीवन उनके सम्मुख रहे, उन्होंने कहा था—'हम सबके कर्त्तव्य और मन्तव्य एक होने चाहिये।

नास्तिक बालक मुन्शीराम से स्वामी श्रद्धानन्द......

जो वैदिक धर्म के एक-एक सिद्धांत के अनुसार अपना जीवन नहीं ढाल लेगा, उसको उपदेशक बनने का साहस नहीं करना चाहिये। भाड़े के टट्टुओं से धर्म का प्रचार नहीं हो सकता। इस पवित्र कार्य के लिये स्वार्थ त्यागी पुरुषों की आवश्यकता है। और इसके साथ ही उन्होंने मांस-मदिरा का सेवन भी छोड दिया, समाज के प्रचार कार्य मे दिन-रात लग गये। यह सब परिवर्तन महर्षि स्वामी दयानन्द जी की भेंट के कारण ही होता चला गया? किसी नीतिकार ने ठीक ही तो कहा है—'सतां हि सङ्ग सकल प्रसूते" अर्थात् सज्जनों की सगति से क्या कुछ नहीं मिल जाता। भर्तृहरि महाराज ने भी अपने शतक मे बडा सुन्दर इस विषय में लिखा है—

जाड्य धियो हरति
सिञ्चति वाचि सत्यम्।
मानोन्नतिं दिशति
पापमकरोति।
चेत प्रसादयति
दिक्षु तनोति कीर्तिम्।
सत्सङ्गति कथय
किं न करोति पुसाम्॥

अत लाला मुन्शीराम जी आर्यसमाज के प्रचार की ओर अधिक ध्यान देने लगे। वे ऋषि दयानन्द के जीवन और उनके ग्रथो से मिलने वाली स्फूर्ति का सत्कार करते थे। उस स्फूर्ति से पैदा होने वाली अन्तर आत्मा की पुकार का वह तिरस्कार नहीं करते थे। इसी दूसरे भाग में वे आर्यसमाजों के उत्सवो पर जाने लगे और अपनी वकालत भी करते रहे। आर्यसमाज जालधर के प्रधान बनने के पश्चात् वह कई वर्ष पजाब प्रतिनिधि सभा के प्रधान बने रहे और इसी बीच उन्होंने स्वामी दयानन्द के विचारों के अनुरूप शिक्षा पद्धति को कार्यान्वित करने के लिए प्रतिनिधि सभा मे गुरुकुल की स्थापना का भी प्रस्ताव पास करा लिया। परन्तु इस कार्य के लिए धन जुटाने के लिए कोई आने को तयार नहीं था। देश में अकाल पडा था, अत धन संग्रह करना कठिन था। तो भी मुन्शोराम जी ने सन् १९७८ में अपने प्रचारक में यह घोषणा की कि जब तक गुरुकुल के लिए ३० हजार रुपया इकट्ठा न कर लूगा, घर में पेर नहीं रखूंगा। और स्थान-स्थान पर जा गुरुकुल के द्वारा शिक्षा के महत्व पर व्याख्यान देकर, बडी मुश्किल से अप्रेल १९०० यह भीष्म प्रतिज्ञा पूरी हुई और चालीस हजार के लगभग रुपया सग्रह करके चैन की सांस ली। यहाँ यह निवेदन करना भी अनुचित न होगा कि इसी तरह की पहली दृढ प्रतिज्ञा उन्होंने १८८४ में की थी, जब तक वह सत्यार्थप्रकाश की एक प्रति लेने के लिए प्रात.काल से तीन बार आर्यसमाज वच्छोवाली के मन्त्री के घर, फिर उनके आफिस, पुन उनके घर, फिर आर्यसमाज में जाकर सत्यार्थप्रकाश के दसवें समुल्लास को न पढे, तब तक चैन नहीं आई, और जैसा कि पहले लिख चुके हैं, कि इसी समुल्लास मे पुनर्जन्म के सिद्धान्त के सम्बन्ध में पढ कर ही वह आर्यसमाज में प्रवेश होने के लिए गए।

महात्मा मुन्शीराम—यहीं से मुशीराम के जीवन का तीसरा भाग १९०० से १९१७ तक है। इस अन्तराल में वह सब काम-काज छोडकर फलती-फूलती हुई वकालत को लात मार कर गुरुकुल की स्थापना का स्वप्न लेने के विचार से लाला मन्शीराम को महात्मा पद से विभूषित किया और सन्यास आश्रम में प्रवेश करने के समय तक मुन्शीराम को महात्मा मुन्शीराम जी के ही नाम से लोग जानते थे। सन् १९०२ में विधिपूर्वक कांगडी (हरिद्वार के समीप) गुरुकुल की स्थापना हुई। सर्वप्रथम ३४ बालक जिनमें उनके स्वय के दोनो पुत्र हरीश और इन्द्र भी शामिल थे, गुरुकुल मे प्रविष्ट हुए। इसके पश्चात् इस सस्था के विस्तार की कहानी बहुत रोचक, विस्तृत शिक्षाप्रद और बडी महत्वपूर्ण है। उस समय जब कोई भी गुरुकुल सस्था का नाम तक नही जानता था, दृढसकल्प मुन्शीराम ने उसे अपने सर्वमेध यज्ञ से साक्षात् कर दिखाया। उसके लिए उन्होंने अपनी कोठी तक को बेचकर उसकी राशि को भी गुरुकुल में अर्पण कर दिया। गुरुकुल के ब्रह्मचारी देश के कष्टो के प्रति भी जागरूक रहते थे। सन १९०८ में दक्षिण हैदराबाद और सन् १९११ में गुजरात में दुर्भिक्ष पडने पर ब्रह्मचारियों ने अपने दूध आदि का त्याग करके उससे जो राशि बची, वह अकाल पीडितों की सहायतार्थ भेजी, यही नहीं सन १९१३-१४ में जब गांधी जी ने अफ्रीका में भारतीयों के अधिकारों की हितों की रक्षा के हेतु सत्याग्रह का धर्मयुद्ध छेडा हुआ था, तब भी यहाँ के ब्रह्मचारियो ने सरदी में कठोर मजूरी करके लगभग १५०० रुपया इस धर्मयुद्ध की सहायतार्थ भेजा था। सभी तरह के नेता लोग गुरुकुल की प्रसिद्धि को सुनकर वहाँ जाने लगे। सरकारी-गैर सरकारी सभी वहा जाकर मुग्ध होकर आते थे और यह सस्था महात्मा मुन्शीराम जी के महान् व्यक्तित्व के कारण एक तीर्थ स्थान बन गयी थी। गाधी जी भी इस संस्था से बडे प्रभावित थे और महात्मा मुन्शीराम को अपना बडा भाई कहने में गौरव अनुभव करते थे। महात्मा मन्शीराम ने ही सर्वप्रथम सन् १९१५ में गुरुकुल मे उनका विशेष अभिनन्दन किया और मानपत्र में उनको महात्मा शब्द से सम्बोधित किया था। इस सस्था के बारे में सरकार भी सदिग्ध विचार रखती थी। इसी को देखने के लिए ब्रिटेन के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री रेम्जे मेकडानल्ड भी गए थे। महात्मा मुन्शीराम के व्यक्तित्व और वहाँ के कुशल प्रबन्ध को देखकर उनकी तुलना उन्होंने बाइबिल में वर्णित गेलिलो के तट पर भ्रमण करने वाले पैगम्बर से की थी। उन्होंने श्रद्धान्वित होकर कहा था—'वर्तमान काल का कोई कलाकार यदि भगवान् ईसा की मूर्ति बनाने के लिए कोई सजीव माडल चाहे तो मैं भव्य मूर्ति, महात्मा मुन्शीराम की ओर इशारा करूँगा यदि कोई मध्यकालीन चित्रकार सण्टपीटर के चित्र के लिए नमूना मागेगा तो मैं उसे इस जीवित भव्य मूर्ति के दर्शन करने की प्रेरणा करूगा। सच है कि बडा तो वही है जिसे विरोधी विचारो वाले भी बडा कहें, क्योकि अपने को तो सभी बडा कहते आए हैं। वेद में ठीक ही तो कहा गया है—

उत न सुभगाँ अरिर्वोचेयु।

ऐसे थे महात्मा मन्शीराम जिन्होंने गुरुकुल जैसी अद्भुत शिक्षा सस्था स्थापित कर के गुरु पदवी पाकर अपने जन्म नाम बृहस्पति को सार्थक किया है।

स्वामी श्रद्धानद—ऐसे सस्कारी व्यक्ति के जीवन का चौथा भाग सन् १९१७ से १९२६ तक का है। जिसमें उन्होंने अपने प्यारे गुरुकुल की १५ वर्ष सेवा कर के सन् १९१७ मे सन्यास लेकर वहा से हट कर दिल्ली मे आकर वहा तत्कालीन देश की राजनीतिक तथा सामाजिक परिस्थितियों को समझ कर उनमें सक्रिय भाग लेकर देश, जाति की और अधिक सेवा करने लगे। आप के राजनीति सम्बन्धी विचार न तो लोकमान्य के साथ मिलते थे और न गोपाल कृष्ण गोखले के साथ। न वह काग्रेस और न नेशनल सोशल कानफ्रेन्स के साथ मिलते थे। स्वामी जी स्वभाव से ही पूर्ण रूप से धार्मिक, सरल, सत्यप्रेमी और अहिंसावादी थे इसलिए कुटिल राजनीति से उनको बहुत घृणा थी। वैसे सार्वजनिक जीवन की ऐसी कौन सी दिशा थी जिसमें यह व्यक्ति प्रकाश-स्तम्भ का काम नहीं दे पाया। रौलट एक्ट के विरोध में ३० मार्च १९२९ को एक भारी जलूस का नेतृत्व करते हुए दिल्ली के घण्टाघर (जो अब नहीं है) के नीचे गोरखो की किरचों के सामने निर्भीकता से छाती ताने हुए खडे थे। ये स्वामी श्रद्धानन्द जी। इसका इतना बडा प्रभाव जनता पर पडा कि ४ अप्रेल को हजारों के जलूस में दिल्ली की शाही जामा मस्जिद की मिम्बर से वेदमन्त्र पढकर भाषण देने वाले यही निर्भीक सन्यासी थे, जो दो विरोधी विचारधारा वाले बडे गुटों (हिन्दू-मुसलमानों) के इतने बडे विश्वासभाजन बने। यह मिम्बर से भाषण देने का सौभाग्य पहली और सच ही अन्तिम बार स्वामी जी को ही मिला। यही नही, सर्वत्र निराशा, तथा आतङ्क छा जाने के कारण अमृतसर का कांग्रेस अधिवेशन असम्भव प्रतीत हो रहा था, काग्रेस मृत प्राय-सी हो चुकी थी। परन्तु इस निर्भीक साहसी सन्यासी ने इसको सम्भव कर दिखाया। कन्धे से कन्धा मिलाकर महात्मा गाधी के साथ असहयोग आन्दोलन में काम करते हुए भी जब लखनऊ के काग्रेस अधिवेशन मे हिंदुओं के हितो की उपेक्षा करते हुए देखा, तुरन्त बिना किसी विलम्ब काग्रेस से किनारा कसी की। याद यदि रहे, स्वामी जी काग्रेस मे अन्त तक रहते, तो महात्मा गाधी के स्थान पर स्वामी श्रद्धानन्द जी को ही राष्ट्रपिता कहलवाने का सौभाग्य प्राप्त होता। स्वामी जी जहा भी और जिस भी कार्यक्षेत्र मे कूदे, वहीं वह सदा अग्रणीय बन कर रहे। शुद्धि, दलितोद्धार, हिन्दु महासभा या इसी तरह का जो भी कार्यक्षेत्र हो, यदि वह वहा के वातावरण को अपने विचारो के विपरीत पाते थे, तो उससे जुदाई लेने मे जरा भी देर नही करते थे। जब आपने शुद्धि का चक्कर चलाया, तो प० मदन मोहन-मालवीय जैसे कट्टर सनातन धर्मी नेता भी उनका साथ दिये बिना न रहे। यही शुद्धि आन्दोलन उनकी

(शेष पृष्ठ ६ पर

मावलंकर हाल नई दिल्ली मे

श्रद्धानन्द ग्रन्थावली का भव्य विमोचन समारोह

दिल्ली—३१ दिसम्बर। आर्यसमाज के अग्रगण्य नेता तथा गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के प्रवर्तक स्वामी श्रद्धानन्द के समस्त ग्रन्थों को सुन्दर एवम् आकर्षक ११ जिल्दों वाली ग्रन्थावली के रूप मे प्रकाशित करने का श्रेय लब्ध प्रतिष्ठित आर्य प्रकाश श्री गोविन्दराम हासानन्द नई सडक दिल्ली को है। इस महत्वपूर्ण ग्रथमाला के अन्तर्गत स्वामी श्रद्धानन्द के हिन्दी तथा अग्रेजी के लगभग सभी ग्रन्थो का सम्पादन एव अनुवाद डा० भवानीलाल भारतीय द्वारा तथा उनके उर्दू साहित्य का सम्पादन प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु द्वारा किया गया है। स्वामी जी की विशद जीवनी डा० भारतीय की ओजस्वी लेखनी से लिखी गई है। नई दिल्ली के मावलकर हाल में ग्रन्थावली का विमोचन आर्य जगत् के प्रख्यात सन्यासी स्वामी सत्यप्रकाश जी के द्वारा सम्पन्न हुआ। उन्होने इस महत्वपूर्ण ऐतिहासिक कार्य के लिए सम्पादकों एव प्रकाशक को बधाई तथा आशीर्वाद दिया। स्वामी श्रद्धानन्द के व्यक्तित्व एव कार्यो पर प्रकाश डालते हुए सर्व श्री डा० सत्यव्रत सिद्धान्तालकार, डा० सत्यकेतु विद्यालकार, प० क्षितीश वेदालकार, डा० प्रशान्त वेदालकार श्री वेदव्रत वेदालकार, श्री सोमनाथ मरवाह, प्रो० राजेन्द्र जिज्ञासु आदि वक्ताओ ने इस कार्य के महत्व का विवेचन किया और आशा प्रकट की कि स्वामी जी के अवशिष्ट साहित्य को भी शीघ्र ही प्रकाश में लाया जायेगा।

स्वामी श्रद्धानन्द के साहित्य के विभिन्न पहलुओ को स्पष्ट करते हुए ग्रन्थावली के प्रमुख सम्पादक डा० भवानीलाल भारतीय ने बताया कि इस प्रकाशन योजना में स्वामी जी की आत्मकथा उनके द्वारा लिखे गये सस्मरण, आर्य धर्म ग्रथमाला के विभिन्न गुच्छक, इन साइड काग्रेस आर्यसमाज के निदक एक प्रतिवाद, वेदिक धर्मोपदेश तथा स्वामी दयानन्द विषयक अन्य अन्वेषणात्मक सामग्री का सकलन किया गया है। विभिन्न वक्ताओं ने इस बात पर खेद प्रकट किया कि आर्यसमाज में साहित्य के लेखन, प्रकाशन सरक्षण तथा प्राचीन सामग्री की खोज की ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। सभी वक्ताओ का प्रमुख स्वर यही था कि इस ग्रन्थावली का प्रकाशन तो बहुत पहले ही किसी शीर्षस्थ आर्यसमाजी सगठन या गुरुकुल कागडी जैसी शिक्षण सस्था के द्वारा होना चाहिए था। इस अवसर पर मावलकर सभागार नगर के प्रबुद्ध लोगो से खचाखच भरा हुआ था और उनकी राय थी कि यद्यपि स्वामी श्रद्धानद के बलिदान की यादगार में राजधानी में विभिन्न सस्थाओं द्वारा जलसे, जलूस भाषण आदि के कार्यक्रम होते हैं किन्तु स्वामी जी के साहित्यिक कृतित्व के मूल्याकन करने का यह पहला ही अवसर है।

विमोचन समारोह का सफल सञ्चालन ग्रन्थावली के सम्पादक डा० भवानीलाल भारतीय ने किया तथा श्री वेदकुमार वेदालकार ने धन्यवाद प्रस्ताव रखा। जलपान के पश्चात् श्रद्धानन्द ग्रन्थावली का यह गरिमामय समारोह सम्पन्न हुआ।

(पृष्ठ ५ का शेष)

नास्तिक बालक मुन्शीराम से....

जीवनलीला समाप्त करने का कारण हुआ। इस शुद्धि के आदोलन से मुसलमान चिढ गए और एक मूर्ख धर्मांध क्रूर अब्दुल रशीद नामक मुसलमान युवक ने २३ दिसबर १९२६ को उनको अपनी गोली का शिकार बनाकर उनकी जीवनलीला समाप्त कर दी।

स्वामी जी का जीवन भारी कर्म क्षेत्र रहा है, उनका कार्यक्षेत्र बहुमुखी था। वह महर्षि स्वामी दयानन्द जी के अनन्य भक्त थे। वह महान् सुधारक, कर्मवीर, दानवीर और निर्भीक सन्यासी थे। साहस, तप और स्पष्टवादिता की साक्षात मूर्ति थे। जो जात-पात छुआछूत के कट्टर विरोधी थे और हिंदु जाति के सदैव प्रहरी बन कर काम करते रहे। उनके जीवन के सम्बन्ध में जितना लिखा जावे, उतना ही थोडा है।

अत. सच्ची श्रद्धाञ्जलि उनके प्रति यही होगी कि जिस हेतु उन्होंने अपने जीवन की आहुति दी, शुद्धि-दलितोद्धार, उस अधूरे काम को तीव्र गति से पूरा करने का यथासम्भव यत्न करना चाहिए। हिन्दू जाति आज महान् सकटों में से गुजर रहा है, और सिवाय आर्यसमाज के इसका कोई हाल पुरसा नहीं है। अत उसकी आशाओं की पूर्ति के लिए सब भेदभाव भुलाकर उसका प्रहरी बनने के लिए ठोस कदम उठाने चाहिए। समय की यही माग है। यदि आर्य नेता अब चूक गए तो पछतावे के सिवा कुछ हाथ न आयेगा और आने वाली पीढ़ी इनको किसी प्रकार क्षमा नहीं करेगी।

युवा सम्मेलन

आदर्श युवा मंच दिल्ली प्रदेश के तत्वावधान में युवा जागरण हेतु राष्ट्र रक्षा युवा सम्मेलन का आयोजन आर्यसमाज मन्दिर सुभाष नगर में ११ जनवरी दोपहर २ बजे रखा गया है जिसमें अध्यक्ष स्वामी आनन्द बोध सरस्वती (प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा), मुख्य अतिथि स्वामी अग्निवेश, विशिष्ट अतिथि प्रो० बलराज मधोक, मुख्य वक्तागण डा० धर्मपाल आर्य (प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा), हरदयाल देवगुण, ओमप्रकाश आर्य, देवकीनन्दन शास्त्री, सुभाष आर्य, अमरीश भटनागर आदि होंगे।

निवेदक.
सजीव कुमार
सचिव

आर्यसमाज आनन्द विहार का उत्सव

आर्यसमाज आनन्द विहार का उत्सव २७ दिसम्बर को श्री धर्मप्रकाश आर्य की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर एक विशाल यज्ञ हुआ जिसके ब्रह्मा थे महात्मा रामकिशोर जी। श्री सत्यदेव स्नातक के मधुर भजन हुए। स्वामी स्वरूपानन्द ने हास्य कविताओं से कार्यक्रम को रोचक बनाया। इस अवसर पर पं० प्रणव शास्त्री का उपदेश हुआ। कार्यक्रम के पश्चात् ऋषि लंगर का सुन्दर आयोजन किया।

(पृष्ठ १ का शेष)

श्रीमती शास्त्री देवी

मन्त्री श्री सच्चिदानन्द शास्त्री भी शामिल थे। उनको श्रद्धाञ्जलि सभा दिल्ली के मेयर श्री साथी जी, तथा प्रसिद्ध कांग्रेसी श्री सज्जनकुमार तथा डा० धर्मपाल, आर्य वीर दल की ओर से प्रियतमदास रसवन्त आदि महानुभाव उपस्थित थे। खेद का विषय यह भी है कि इस स्वाधीनता की देवी को श्रद्धाजलि सभा केवल ५० व्यक्ति ही मौजूद थे। आर्य सन्देश परिवार की ओर से श्रीमती शास्त्री देवी को हार्दिक श्रद्धांजलि।

डीजल जीप भेंट समारोह एवं आर्य गोशाला तथा उपाध्यायकक्षों का उद्घाटन

श्रीमद्दयानन्द वेद विद्यालय, ११९, गौतम नगर, नई दिल्ली-४९ में पवित्र यज्ञ की ज्वालाओं के साथ रविवार १७।१।८८ को प्रात ९ बजे से १ बजे तक विशेष समारोह के साथ सम्पन्न होगा।

इस अवसर पर राजधानी की समस्त आर्यसमाज व सभी धार्मिक सगठनों के प्रतिनिधि भाग ले रहे हैं। यह संस्था आपकी अपनी संस्था है। इसकी उन्नति मे आपने हमेशा योगदान दिया है जिसके परिणामस्वरूप यह संस्था दिन प्रतिदिन उन्नति की ओर अग्रसर है।

अतः आपका आभार व्यक्त करते हुए हम सभी गुरुकुलवासी करबद्ध प्रार्थना करते हैं कि पूर्व कार्यक्रमों की भांति इस अवसर पर भी अपने इष्ट मित्रों सहित पधार कर विद्यालय की शोभा बढ़ायें तथा ब्रह्मचारियों को आशीर्वाद दें।

निवेदक:
चौ० दिलीप सिंह (प्रधान)

स्त्री आर्यसमाज अशोक विहार दिल्ली द्वारा सूखा पीड़ितों की सहायता

स्वामी धर्मानन्द सरस्वती, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा उडीसा को दिनाक ३१।१२।८७ को स्त्री आर्यसमाज अशोक विहार की प्रधाना श्रीमती प्रेमशील महेन्द्रू ने सूखा पीडितों की सहायतार्थ ग्यारह हजार रुपये का चैक भेंट किया। श्रीमती प्रेमशीला जी ने स्वामी जी के धर्म-रक्षा महाभियान के कार्य की भी प्रशंसा की।

स्त्री आर्यसमाज अशोक विहार की ओर से पं० उदयवीर शास्त्री को भी वैदिक धर्म की सेवाओं के लिए ग्यारह सौ रुपये की धनराशि भिजवायी।

मन्त्रिणी
स्त्री आर्यसमाज अशोक विहार, फेज-I
दिल्ली ११००५२

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N. No. 32387/77 Post in N.D.P.S.O. on 7, 8-1-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 135
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस न० यू १३५

मंत्र के आरम्भ में ओ३म् का उच्चारण : एक दृष्टिकोण

—डा० भवानीलाल भारतीय

मधुर लोक के जुलाई के अंक में आर्यसमाज कृष्णनगर दिल्ली के सदस्य श्री दीवानन्द का एक लेख प्रकाशित हुआ है जिसमें उन्होंने इस बात पर बल दिया है कि जब ओ३म् बोलने में पाप नहीं है तो सार्वदेशिक सभा द्वारा स्वीकृत यज्ञ विधि में प्रत्येक मन्त्र के आरंभ में ओम् के उच्चारण को उचित क्यों नहीं माना गया है। मैं लेखक महोदय से निवेदन करूँगा कि यहां प्रश्न ओम् के उच्चारण से होने वाले पाप या पुण्य का नहीं है, किन्तु कर्मकाण्ड में समानता तथा एकरूपता का है। आप जप के समय ओम् का उच्चारण चाहे कितना ही बार करें, आपको कौन रोकता है। किन्तु सन्ध्या एवं यज्ञ के प्रसंग में जो विभिन्न प्रकरण हैं उनमें से प्रत्येक के आरम्भ में एक बार ही ओम् का उच्चारण किया जायगा। उदाहरणार्थ, सन्ध्या में अघमर्षण मनसा परिक्रमा तथा उपस्थान—ये तीन भिन्न-भिन्न प्रकरण हैं। इनमें क्रमशः ३, ६ तथा ४ मन्त्र हैं। अतः ऋषि ने इनमें से प्रत्येक के आरम्भ में एक बार ही ओम् बोलने का विधान किया है। इसी प्रकार स्वस्तिवाचन तथा शान्तिकरण एवं स्तुति प्रार्थनोपासना एक ही प्रकरण के तीन अंश हैं। अतः विश्वानि देव मन्त्र के आरम्भ में ही एक बार ओ३म् का उच्चारण बताया गया है।

लेखक ने एक तर्क यह भी दिया है कि सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रकाशित पुस्तक में भी मतभेद है। इस सम्बन्ध में यह जानना आवश्यक है कि सन्ध्या एवं यज्ञ की प्रामाणिक विधियां, जो स्वयं सार्वदेशिक सभा ने ही प्रकाशित की हैं, हमें उन्हीं को मान्यता देनी है। इसके आधार पर अन्य प्रकाशकों ने जो विधियां प्रकाशित की हैं उनमें न्यूनाधिकता हो गई है। लेखक का यह तर्क तो हास्यास्पद ही है कि ओम् को प्रत्येक मन्त्र के आरम्भ में प्रयुक्त करने से ही एकरूपता आयेगी। वस्तुस्थिति यह है कि महर्षि दयानन्द के विधान को पूर्णतया स्वीकार करने में ही एकरूपता आयेगी। कर्मकाण्ड में न्यूनाधिकता होना तो दोषपूर्ण माना है। इसी का प्रायश्चित्त करने के लिए ही हम स्विष्टकृत् आहुति देते हैं। अतः यह विचार त्यागना होगा कि मन्त्र के आरम्भ में ओम् बोलना पुण्यदायी है। जो विधि है वही करणीय है।

लेखक के अन्य तर्क अप्रासंगिक हैं कि ओम् और जीव में पिता पुत्र सम्बन्ध है, ओ३म् और मन्त्र का माला के मनकों और धागे का सम्बन्ध है आदि। इसी प्रसंग में लेखक ने अष्टाध्यायी तथा मनु आदि के जो प्रमाण दिये हैं वे भी मूल प्रसंग से सम्बन्ध नहीं रखते। लेखक ने एक और विचित्र बात यह लिखी है कि सार्वदेशिक सभा के समक्ष बहुत बड़ी-बड़ी समस्याएं हैं। इसीलिए उसे कर्मकाण्ड के विधान की बातों को (जिन्हें लेखक छोटी-छोटी बातें कहता है) क्षेत्रीय समाजों पर ही छोड़ देना चाहिए। लेखक महानुभाव का यह सुझाव अत्यन्त अनुत्तरदायित्वपूर्ण है। वास्तव में कर्मकाण्ड में एकता को लागू करवाना सार्वदेशिक सभा का पुनीत कर्त्तव्य है। यदि इन मामलों को क्षेत्रीय समाजों पर छोड़ दिया जायगा, तब तो प्रत्येक समाज अपनी पृथक् विधि चलायेगा, जैसा कि आज भी हो रहा है। पृथक्-पृथक् समाजों में जाइये, आपको यज्ञ-विधि में सर्वत्र असमानता दिखाई पड़ेगी। लेखक सार्वदेशिक के एतद् विषयक आदेश को ऊपर का हस्तक्षेप कहता है जो सर्वथा अनुचित है। कर्मकाण्ड में अनुशासन का पालन कराना हमारी शिरोमणि सभा का कर्त्तव्य और अधिकार दोनों ही हैं।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री डा० धर्मपाल द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ . अंक १३ | रविवार १७ जनवरी १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | माघ २०४४ | दयानन्दाब्द—१६१

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

परमाणु युद्ध का खतरा

—विनोद मिश्रा

पाकिस्तान ने काहुटा में अपना परमाणु संयत्र चालू कर रखा है, यह तथ्य सारा संसार जानता है। यह बात किसी से नहीं छुपी है कि पाकिस्तान ने इस संयत्र से परमाणु-आयुध के स्तर का इतना परिष्कृत यूरेनियम एकत्र कर लिया है कि उसमें १० परमाणु बम तक बनाए जा सकते हैं। ऐसी भी विश्वसनीय रिपोर्टें हैं कि पाकिस्तान ने कुछ परमाणु बम तैयार कर लिए हैं और उन्हें जोडना भर शेष है। वह अपने परमाणु संयन्त्र के लिए यूरेनियम-शोधन टैक्नोलाजी तथा मशीनें एवं सभी उपकरण हालैण्ड, कुछ अन्य पश्चिमी देशों तथा अमरीका से चुराकर लाया है। अभी हाल में अमरीका में एक पाकिस्तानी प्रवासी को अमरीका से ऐसा विशेष इस्पात निर्यात करने के आरोप में सजा हुई है, जो परमाणु-आयुधों के निर्माण में प्रयुक्त होता है।

पाकिस्तान के काहुटा स्थित परमाणु कारखाने के बारे में अधिकाधिक पुष्ट जानकारी सामने आ रही है। तभी अमरीका में ऐसी ताजी खबरें पहुंची हैं कि पाकिस्तान यूरेनियम शोधन के लिए एक और कारखाना बैठा रहा है, जो राजधानी इस्लामाबाद से दस किलोमीटर दूर गोलरा नामक स्थान पर है। पाकिस्तान काहुटा संयत्र की भांति इस संयत्र के अस्तित्व से भी इंकार करता है, लेकिन उसकी बात पर भरोसा नहीं किया जा सकता। अमरीकी कांग्रेस की एक समिति के सम्मुख एक अमरीकी अधिकारी ने अपनी गवाही में कहा है कि कारखाने का निर्माण काफी आगे बढ़ गया है। लेकिन उसके चालू होने में अभी कई वर्ष लगेंगे। पाकिस्तान काहुटा संयत्र की भांति गोलरा में भी यूरेनियम २३५ के शोधन के लिए महंगी हाई-स्पीड सेंट्रीफ्यूज प्रणाली का इस्तेमाल करने जा रहा है। जासूसी उपग्रहों के चित्रों से पता चलता है कि उसके लिए कंक्रीट का विशाल मोटा फर्श तैयार कर लिया गया है। एक विशाल हाल भी बन गया है, जिसमें अब हजारों हाई-स्पीड सेंट्रीफ्यूज स्थापित किए जाने हैं। यूरोप में चाहे परमाणु प्रक्षेपास्त्रों पर रोक लग रही हो, पर भारतीय उपमहाद्वीप में परमाणु युद्ध का खतरा बढ़ रहा है।

पाकिस्तान के दो यूरेनियम परिष्करण संयत्र बनाने के पीछे उसके अन्य इरादे क्या हैं, यह कहना मुश्किल है। अभी तक परमाणु आयुध बनाने की उसकी योजना ही स्पष्ट है। हो सकता है कि वह यह यूरेनियम अन्य देशों को बेचने के लिए तैयार कर रहा हो, या किसी अन्य देश ने उसे इसके लिए ठेका दिया हो। भारत का जहां तक सवाल है, पाकिस्तान की परमाणु तैयारियां उसके लिए गंभीर चिन्ता का विषय हैं। पाकिस्तान के पास परमाणु आयुध फेंकने के लिए उपयुक्त विमान हैं, जो अमरीका ने उसे ५४ अरब डालर के पहले अमरीकी सहायता कार्यक्रम के अन्तर्गत सप्लाई किए हैं। लगभग ४ अरब डालर का दूसरा छः वर्षीय सहायता कार्यक्रम अब आरम्भ हो गया है।

यह अत्यन्त अशुभ है कि पाकिस्तान की सामरिक तैयारियों के कारण भारतीय उपमहाद्वीप में शस्त्रों की होड़ प्रारम्भ हो गई है। बड़ा पड़ोसी देश होने के कारण भारत को अपने सीमांत के खतरा के अनुरूप सैन्य तैयारी करनी पड़ रही है। पाकिस्तान को शस्त्र-सहायता दिये जाने का बार-बार विरोध करने पर भी अमरीका ने पाकिस्तान की मदद में तनिक संकोच नहीं दिखाया है। अब तो रेगन प्रशासन का अमरीका कांग्रेस को प्रतिवर्ष यह प्रमाणपत्र देना भी जरूरी नहीं रहा है कि पाकिस्तान चोरी-छिपे परमाणु आयुध नहीं बना रहा है। अमरीका की फौजी तथा वित्तीय सहायता और अफगान शरणार्थियों एवं मुजाहिदों की मदद के नाम पर आ रहे राहत धन से पाकिस्तान को अपने परमाणु कार्यक्रम को आगे बढ़ाने में बड़ी सहूलियत हुई है।

पूर्वी दिल्ली में स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस मनाया गया

आर्य उपप्रतिनिधि सभा पूर्वी दिल्ली के तत्वावधान में स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस समारोहपूर्वक सम्पन्न हुआ। पूर्वी दिल्ली की अनेक आर्यसमाजों की ओर से १० जनवरी को आयोजित इस समारोह की अध्यक्षता स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने की। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के नवनिर्वाचित प्रधान डा० धर्मपाल तथा महामन्त्री श्री सूर्यदेव का भावपूर्ण स्वागत किया गया। रतन देवी कन्या विद्यालय की छात्राओं ने बैण्ड की धुन से उनका स्वागत किया। मञ्च पर प्रधान मन्त्री का क्षेत्र के अनेक गण्यमान्यजनों ने पुष्पमालाओं द्वारा स्वागत किया। श्री सूर्यदेव ने अपने भाषण में कहा—स्वामी श्रद्धानन्द ने जो कार्य किये उससे आर्य जगत् सदा उनका ऋणी रहेगा। प्राचीन शिक्षा की पुनःस्थापना से लेकर शुद्धि अभियान तक उनके कार्यों की एक अनोखी कड़ी है। श्री सूर्यदेव ने उपस्थितजनों का धन्यवाद करते हुए कहा—आप लोगों की शुभकामना और आशीर्वाद के लिए हम आभारी हैं। हम आपकी पुनीत आशाओं के अनुरूप कार्य कर सकेंगे इसका मैं विश्वास दिलाता हूं।

सभा प्रधान श्री डा० धर्मपाल ने भी आभार व्यक्त किया। स्वामी श्रद्धानन्द के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उन्होंने कहा—भारत में धर्मान्तरण की समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है। आर्यसमाज अपने कार्य से पीछे नहीं हटा है। मीनाक्षीपुरम और रामानन्दपुरम की घटनाओं के बाद सारे देश को हिला सकने का काम आर्यसमाज ही कर सकता है। अभी भी हमारे बहादुर समाजसेवी उपयुक्त स्थानों पर शुद्धि सुदर्शन चला रहे हैं। हमें और अधिक उत्साह से कार्य करने का व्रत लेना होगा।

सभा का प्रारम्भ श्रीमती उषा शास्त्री के भजन संगीत से हुआ। आर्यसन्देश के सम्पादक श्री यशपाल सुधांशु ने स्वामी श्रद्धानन्द के चमत्कारी कार्यों को दर्शाते हुए कहा, भारत में गुरुकुल की गंगा प्रवाहित करने का प्रथम कार्य स्वामी श्रद्धानन्द ने किया। वे चुनौतियों का जवाब देने वाले वीर सन्यासी थे। प्राच्यशिक्षा, शुद्धि, समाचार पत्र, सेवा कार्य, साधना आदि अनेक विषय उनके रहे, जिनको उन्होंने कहा—स्वामी श्रद्धानन्द के मिशन को पूरा करने के लिए हम एक व्रत अवश्य लें, गुरुकुल के किसी भी एक विद्यार्थी की छात्रवृत्ति ५० या १०० रुपये मासिक देने का कार्य करें तो हम सही रूप से उन्हें श्रद्धांजलि दे सकेंगे।

(शेष पृष्ठ ६ पर

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—डा० धर्मपाल

आर्यसमाज के संन्यासी महात्मा आनन्द स्वामी सरस्वती

--डा० भवानीलाल भारतीय

महात्मा आनन्द स्वामी के रूप में आर्यसमाज ने एक सफल नेता, कार्यकर्त्ता, लेखक, पत्रकार तथा अध्यात्म मार्ग के साधक को देखा था। उनका जन्म ऋषि दयानन्द के परलोक गमन के ठीक ११ दिन बाद कार्तिक शुक्ला एकादशी १९४० वि० मंगलवार (१८८३ ई०) को पश्चिम पंजाब के गुजरात जिले के जलालपुर जट्टां ग्राम में हुआ। इनके पिता श्री गणेशदास सूरी एक श्रद्धालु आर्यसमाजी थे जिन्होंने अपने जीवन में एक बार स्वामी दयानन्द के दर्शन किये तथा उन्हीं से प्रेरणा लेकर अपने ग्राम में भी आर्यसमाज का कार्य प्रारम्भ किया। इनकी माता का नाम जीवन देवी था। खुशहालचन्द (आनन्द स्वामी का नाम) का अध्ययन मिडिल तक ही हो पाया इसके पश्चात् वे अपने पिता द्वारा सञ्चालित व्यापार में लग गये। स्वामी नित्यानन्द ने उन्हें गायत्री मन्त्र के पाठ एवं जप का उपदेश दिया जिसका वे नियमपूर्वक पालन करने लगे।

गायत्री मन्त्र के अनुष्ठान ने ही खुशहालचन्द की मेधा को जागृत किया और वे स्वाभ्न सुन्दाय कविता, कहानी आदि लिखने लगे। वैदिक धर्म के प्रचार में भी उनकी अभिरुचि बढ़ने लगी और वे एक 'यंग-मैन आर्यसमाज' की स्थापना कर युवकों में आर्यसिद्धान्तों का प्रचार करने लगे। पत्रकार के गुण उनमें सहज रूप में विद्यमान थे। महात्मा हंसराज के एक भाषण का विवरण उन्होंने जिस प्रकार तैयार किया उससे प्रभावित होकर महात्मा जी ने उन्हें लाहौर बुलाया और आर्य-प्रादेशिक सभा के मुखपत्र आर्य-गजट में उन्हें काम करने के लिए कहा। कुछ समय तक वे सभा में लेखाकार के रूप में कार्य करते रहे तत्पश्चात् पत्र के सम्पादक के रूप में नियमित रूप से लिखने लगे। कविता, कहानी लेख आदि के माध्यम से खुशहालचन्द जी ने आर्यगजट में जो कुछ लिखा उससे पत्र के ग्राहकों की संख्या तो बढ़ी ही, पंजाब, सिंध और बिलोचिस्तान में आर्यसमाज की धूम मच गई।

आर्यसमाज ने ही उन्हें स्वदेश भक्ति में भी दीक्षित किया। आर्यसमाज के माध्यम से ही वे जन-सेवा के कार्यों में लगे। दक्षिण के मालाबार प्रान्त में जब मोपला मुसलमानों ने वहां के हिन्दुओं पर अमानुषिक अत्याचार किये तो आर्य प्रादेशिक सभा ने उन्हें सहायता कार्य के लिए वहां भेजा। इसी प्रकार उन्होंने उड़ीसा के भूकंप (१९२५) बिहार के भूकम्प (१९३४) क्वेटा के भूकम्प (१९३५) तथा बंगाल के दुर्भिक्ष (१९४३) के समय भी तत्तत् स्थानों पर जाकर प्रशंसनीय सेवा कार्य किया। आर्यसमाज द्वारा सञ्चालित आन्दोलनों का नेतृत्व करने में भी वे आगे रहे। १९३८-३९ में जब निजाम हैदराबाद में धार्मिक स्वतन्त्रता को कुचला जा रहा था, तो खुशहालचन्द जी ने सत्याग्रह संग्राम का सर्वाधिकारी बन कर निजामशाही के स्वेच्छाचारी रवैये का विरोध किया। वे एक विशाल जत्था लेकर सत्याग्रह करने के लिए वहां गये तथा कारागार की यातनाओं को सहन किया। हैदराबाद राज्य के कारागृह में रहते हुए ही उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'प्रभुभक्ति' लिखी।

इसी प्रकार १९४६ ई० में सिंध प्रान्त की तत्कालीन मुस्लिम लीगी सरकार द्वारा सत्यार्थप्रकाश के चौदहवें समुल्लास पर प्रतिबन्ध लगाया गया तो आर्यसमाज के सर्वोच्च नेताओं के साथ खुशहालचन्द जी भी कराची गये तथा स्वामी दयानन्द के अमर ग्रन्थ पर पाबन्दी लगाने के विरोध में सत्याग्रह किया।

महात्मा हंसराज की मृत्यु (१९३८) के पश्चात् खुशहालचन्द जी को आर्य प्रादेशिक सभा पंजाब, सिंध और बिलोचिस्तान का सर्वसम्मत नेता स्वीकार किया गया परन्तु अपने विराट् व्यक्तित्व अपूर्व सेवा भाव तथा अद्भुत नेतृत्व क्षमता के कारण वे शीघ्र ही आर्यसमाज के सर्वमान्य नेता के रूप में स्वीकार कर लिये गये। सन् १९२३ के वैशाखी के दिन से खुशहालचन्द जी ने लाहौर से उर्दू दैनिक पत्र मिलाप का प्रकाशन आरम्भ किया। शीघ्र ही हिन्दी मिलाप (१९३०) से भी छपने लगा। इस प्रकार पंजाब के उर्दू प्रधान वातावरण में हिन्दी मिलाप के द्वारा राष्ट्र-भाषा हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार का श्रेय उन्हें ही दिया जा सकता है। १९४७ में देश विभाजन के पश्चात् मिलाप का मुख्य कार्यालय दिल्ली आ गया। वर्तमान में उसके दो अन्य संस्करण हैदराबाद तथा लन्दन से भी छपते हैं।

अब श्री महात्मा खुशहालचन्द 'खुर्सन्द' ने सक्रिय सार्वजनिक जीवन से विराम होकर आध्यात्मिक योग साधना की ओर कदम बढ़ाया। वे अपना अधिकांश समय साधन, मनन एवं ईश्वर भजन में व्यतीत करने लगे। अन्तत तीव्र वैराग्य उत्पन्न होने पर उन्होंने १९४९ ई० में स्वामी आत्मानन्द सरस्वती से संन्यास की दीक्षा ली। अब वे आनन्द स्वामी के नाम से प्रसिद्ध हुए। सन्यास ग्रहण के पश्चात् स्वामी जी ने सच्चे अर्थों में 'वसुधैव कुटुम्बकम' के आदर्श को चरितार्थ किया तथा वैदिक धर्म की सार्वभौम शिक्षाओं का प्रचार करने के लिए चतुर्दिक् भ्रमण करने लगे। देश के विभिन्न भागों में प्रचार यात्रायें करने के उपरान्त आपने अफ्रीका, मारिशस, यूरोप तथा अमेरिका के कई नगरों का भ्रमण किया और वैदिक संदेश को सर्वत्र फैलाया। महात्मा आनन्द स्वामी आर्यसमाज के सर्वसम्मत नेता थे। उन्होंने आर्य महासम्मेलन हैदराबाद (१९५४) तथा आर्य-समाज स्थापना शताब्दी समारोह (१९७५) की अध्यक्षता की। वे ऋषि दयानन्द द्वारा स्थापित परोपकारिणी सभा के लम्बे समय तक सभासद तथा जीवन के अन्तिम क्षण तक प्रधान पद पर आसीन थे। २४ अक्टूबर १९७७ को उनका दिल्ली में निधन हुआ।

पं० वीरसेन जी वेदश्रमी नहीं रहे

वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् वेदमूर्ति श्री पं० वीरसेन जी वेदश्रमी, वेद-विज्ञानाचार्य का देहावसान २२ दिसम्बर १९८७ को नगर इन्दौर में हो गया।

उन्होंने वेदों पर अनुसंधान कर ३० से भी अधिक पुस्तक लिखीं जिनमें प्रमुख हैं, 'वैदिक सम्पदा", यज्ञ महाविज्ञान, सन्ध्या योग रहस्य, याज्ञिक आचार संहिता, वेद कथा आदि। उन्हें अपनी पुस्तकों पर अनेक पुरस्कार एवं सम्मान प्राप्त हुए।

आपने याज्ञिक वृष्टि विज्ञान एवं याज्ञिक चिकित्सा विज्ञान के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित की, उन्होंने दिल्ली, अजमेर, जयपुर, पानीपत, खण्डवा, बिलासपुर, रायपुर आदि अनेक स्थानों पर सफल प्रयोग किये। पं० वीरसेन वेदश्रमी जी का जन्म ५ दिसम्बर १९०८ को देवास में हुआ था, उन्होंने १९३० में गुरुकुल, वृन्दावन, मथुरा से आयुर्वेद शिरोमणि की उपाधि प्रतिष्ठित स्नातक के रूप में प्राप्त की। वे म०प्र० केमिस्ट एसो० के सस्थापक सचिव के पद पर लगातार दस वर्ष तक सुशोभित रहे। वे विश्व परिषद् के भी अध्यक्ष रहे।

२३ दिसम्बर १९८७ को उनकी अन्त्येष्टि संस्कार में भारी संख्या में नागरिकों ने हिस्सा लिया। जिसमें नगर के प्रतिष्ठित नागरिक एवं विभिन्न आर्यसमाजों के पदाधिकारी शामिल थे।

२५ दिसम्बर को ४ बजे उनके सम्मान में श्रद्धानन्द भवन, कोठारी मार्केट में श्रद्धांजलि कार्यक्रम आयोजित किया गया। जिसमें नगर के गण्यमान्य नागरिक एवं आर्य प्रतिनिधियों ने हिस्सा लिया, तथा वेदमूर्ति जी के क्रांतिकारी एवं समाज-सेवा सम्बन्धी कार्य तथा वेद सम्बन्धी उनकी अमूल्य साहित्य सेवा का स्मरण एवं उल्लेख करते हुए विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित की और डा० मधुकर धोलप का यह प्रस्ताव सभी ने स्वीकार किया कि उनकी स्मृति में एक ट्रस्ट बनाया जाये। जो उनके द्वारा रचित प्रकाशित एवं अप्रकाशित ग्रन्थों के प्रकाशन की व्यवस्था करेगा तथा उनके विचारों के आधार पर वेद एवं यज्ञ सम्बन्धी अनुसंधान कार्य करेगा।

इस श्रद्धाञ्जलि कार्यक्रम में सर्वश्री स्वामी कर्तव्यानन्द जी महाराज, श्री मेधामुनि जी (जोधपुर) डा० मधुकर धोलप, किशोरीलाल जी गोयल, जगदीशचन्द्र जी वैदिक, गणपतिलालजी वर्मा, नाथूलाल जी, प्रो० भट्ट, प्रो० वाजपेयी, ठाकुरदास जी, सुभाष कणिक, (सभी इन्दौर) एवं श्री द्विजेन्द्र प्रताप जी (बरेली) आदि गण्यमान्य नागरिकों एवं वक्ताओं ने हिस्सा लिया।

दयानन्द सरस्वती द्वारा सच्चे शिव की खोज फिर अत्यन्त कष्टोपरान्त प्राप्त खोज से मानवों को अवगत कराना

और उनके इस अमिट उपकार के प्रति कृतज्ञता-द्योतन

डा० रमेशचन्द्रदयाल गुप्त एम० ए०, पी-एच० डी० अध्यक्ष त्रैतवादीय आर्यपीठ ज्वालापुर

महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन उत्तरोत्तर विकास का है। जो उनका अन्तिम वर्चस्वी रूप १८७५ में आर्यसमाज की स्थापना करते समय प्रकट हुआ और स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश अथवा आर्योद्देश्यरत्न माला मे वर्णित है वह क्रमश. बना है। इसी विकास की एक कडी है उनकी शिव भक्ति (शैवधर्मानुप्राणित) का शिव (कल्याणकारी) परमेश्वर के नमस्कार के रूप में विकसित होना।

२ शिवरात्रि पर्व पर उन्होंने रात्रि-जागरण करके श्रद्धासहित उपवास रखा था और अर्द्धरात्रि को जब शिवलिंग पर चढ़ाये भोग-पदार्थों को मूषको द्वारा खाया देखा था, तब उनके मन में एक शका का उदय हुआ था कि जगत पर नियम रखने वाला और प्रलयङ्कारी शिव यही है जिसके वर्चस्व की कथाएँ उन्होंने शिवपुराण एव रुद्र अष्टाध्यायी आदि में पढी थीं। कुछ लोगों ने इस छोटी घटना को तूल देने का आर्यसमाजियों पर दोषारोपण किया है। परन्तु हर किसी के जीवन में एक छोटी घटना ही उसके मनस्तल पर छाकर उसे उद्वेलित कर के उसके जीवन में क्रांति उत्पन्न कर देती है। गौतम-बुद्ध ने एक वृद्ध, एक रोगी और एक शव को क्रमश. तीन लगातार दिनों में देखा था। हम सब नित्य ऐसी घटनाएँ देखते हैं, पर गौतम घर छोड कर निकल पडे और विश्व को जीवन की निस्सारता का अपना दर्शन दे गये। तुलसीदास को भी पत्नी के एक उलाहने ने बदल दिया और उन्होंने लिखा—

हम तो चाखा प्रेम रस पत्नी के प्रसाद। तो एक शका तब बालक मूलशकर के मन में पैदा हुई थी कि मूर्ति पूजा निस्सार लगती है। क्यों न सच्चे शिव को तलाश किया जावे और वे २२ वर्ष की अल्प आयु में १८४७ ई० में घर से निकल पड़े। फिर घर वापिस नहीं लौटे।

३ नर्मदा उद्गम पर उन्होंने संन्यास ग्रहण किया और १८४९ से १८५५ तक आबू से हरिद्वार तक पैदल देशाटन किया। अपनी शैव मान्यता के संस्कारवश वे केदारनाथ तक गये जो शिव की क्रीडा-स्थली रही थी। परन्तु उनका सपर्क दिल्ली में लालकिले के सामने मुरसान के पदच्युत राजा दयाराम (राजा महेन्द्रप्रताप के पितामह) से हो गया जिन्होंने उनमे देश-प्रेम जागृत किया और उन्हें अंग्रेजी राज्य के खिलाफ विद्रोही नेतृत्व की ओर प्रेरित किया। सन् १८५७ में कानपुर स्थित मैस्कर घाट पर उन्होंने मन्दिर में अंग्रेजी फौज द्वारा तोडी-फोडी मूर्तियों को देखा। उस मूर्ति को वे १७ वर्ष दिल में दबाये रहे और १८७३ में सत्यार्थप्रकाश में कुछ इस प्रकार लिखा कि—

१८५७ में जब अंग्रेजों ने मूर्तियां तोडीं तो मूर्ति एक मक्खी की टाग भी न तोड सकी। पर बाघर फौज वीरता से लडी और अंग्रेजों के छक्के छुडा दिए। बाघेर नाना साहब के राजपूत फौजी थे जो शिवराजपुर (जि० कानपुर) के पास अंग्रेजों से खब लडे थे।

४ स्वामी जी १८५७ से १८६० तक विद्रोह का नेतृत्व करते रहे और उसके धराशायी होने पर भूमिगत होकर रहे और १८६० में पुन. मथुरा दण्डी विरजानन्द जी के पास आप विद्याध्ययनरत रहे। वहां से १८६३ में अपने मिशन पर फिर रजवाडो की ओर प्रस्थान किया। जयपुर में उन्होने भागवतादि वैष्णव धर्म का खण्डन करके शैव मान्यता स्थापित की। देवेन्द्रनाथ ने लिखा है कि जयपुर में उनके प्रचार स्वरूप मनुष्यों ने स्वयं रुद्राक्ष की मालाएँ पहिनीं और अपने जानवरों को भी पहिना दीं। स्पष्ट है कि दयानन्द सरस्वती में चूहे की घटना के १८ वर्ष बाद भी शैव कर्मकाण्ड अवशिष्ट था।

५ कानपुर में जो उन्होंने विज्ञापन बांटा था उसमें ब्राह्मण ग्रन्थों को भी वेद के साथ प्रमाण ग्रन्थ माना था। यह १८६९ ई० के प्रारम्भ की बात है। पर १८७९ के अक्तूबर में काशी शास्त्रार्थ हुआ। उसमें चर्चा का विषय इतना ही था कि मूर्ति पूजा द्वारा ईश्वर प्राप्ति का वेदों में विधान नहीं है। मूर्ति पूजा से अन्य हानियों या पहलुओ पर कोई चर्चा न थी। उनका राष्ट्रपरक दृष्टिकोण तो १८७२ में कलकत्ता निवास के समय बना, क्योंकि फिर हम उन्हें राष्ट्रीय समस्याओं में रत पाते हैं। वही से वे एक सस्था बनाने का निश्चय करके बम्बई लौटे थे।

६ बनारस में उनसे नेपाली विद्वान् माधवराव जोशी मिले थे। (इन्हीं के पुत्र शुक्रराज शास्त्री को वहां की राणा सरकार ने आर्य-समाज का प्रचार करने के कारण फांसी पर लटका दिया था।) नेपाल के एक राजा रणवीर विक्रमशाह ने (१७७७-१७९६ ई०) मूर्ति की शक्ति देखने के परीक्षण किये थे। मूर्ति-वैभव की निस्सारता पाकर उसने ४ राजकीय कार्य किये थे—

(१) गुनघा भवानी की मूर्ति तुडवा अन्त्येष्टि करा के उसे बागमती नदी मे फेंकवा दिया।

(२) गुहेश्वरी देवी की मूर्ति के छिद्र में बास डाला गया यह दिखाने के लिए कि उसके अन्दर कुछ नहीं है।

(३) शीतला देवी जो बीमारियो का कारण मानी जाती थी, की मूर्ति की नाक को खुकरी से काट दिया और मूर्ति को कुत्ते की लीद का धुआं सुघाया ताकि वह पूजकों को बीमार करना भूल जाये।

(४) उसने महाकाल भैरव की नाक भी खुखरी से कटवा दी ताकि भैरव जी जनता को दुखी करना भूल जायें।

यह प्रसङ्ग स्वामी जी को माधवराव जोशी ने सुनाये थे। प्रतीत होता है कि सोमनाथ की भूमि में जन्मे दयानन्द सरस्वती को गुजरात में गजनवी द्वारा मूर्ति को तोडने की कहानी भी याद आई होगी। उन्होंने निश्चय किया कि इस मूर्तिपूजा प्रक्रिया के भग्नावशेष भी मानस से निकाल देना चाहिए। सो काशी शास्त्रार्थ वाला वर्ष ही वह समय है जबकि वे ऐसा दृढतापूर्वक निश्चय कर पाते हैं। वही समय उनके मुख्य ग्रथ लेखन प्रारम्भ का है और उसी अवधि के आस-पास उन्होने मूर्ति-पूजा के वेदों में न होने से जो शास्त्रार्थ प्रक्रिया शुरू हुई थी, उसके परिपक्व होने का है।

७ वेदभाष्य करते समय यह उदभासित हुआ कि यह जो भयानक रुद्र और शिव पुराणकार ने प्रस्तुत किया है, वह तो वेदो में कल्याणकारी विशेषण वाला गुण है। यहा पर हीगल द्वारा वर्णित मान्यता सिद्ध होती है कि किसी वाद में से उसका प्रतिवाद (विरोधी अंश) प्रकट होता है। फिर उस विरोध का भी विरोध प्रकट होकर पूर्व मान्यता से मिलकर पूर्व पथ को पुन. प्रशस्त करता है। इसके लिए उन्ने थीसिस वाद, एन्टीथीसिस प्रतिवाद और सिनथेसिस सवाद शब्द प्रयुक्त किए हैं।

पौराणिक युग में वैदिक शिव का पराभव होकर ऐतिहासिक शिव प्रगट हुआ था जिनके लिंग की पूजा प्रचलित हुई थी और इस एन्टीथीसिस (प्रतिवाद) को दयानन्द सरस्वती ने पलट कर पूर्व मान्यता करके सिनथेसिस कर दी। उन्होने पारिवारिक शैव कर्मकाण्ड की प्रक्रिया को पलट कर निराकार ईश्वर की स्तुति और अभ्यर्थना स्थापित की। उन्हें वास्तविक शिव मिल गया और उन्होने आर्यजनों हेतु निर्धारित सध्या के अन्त में पाठ करने हेतु यजुर्वेद का निम्न मन्त्र (अध्याय—१६, मन्त्र-४१) विनियोजित किया।

ओ३म् नमः शम्भवाय च मयोभवाय च, नमः शङ्कराय च मयस्कराय च, नम शिवाय च शिवतराय च।

और फिर इसका अर्थ यों किया—

जो सुख स्वरूप, ससार के उत्तम सुखों का देने वाला, कल्याणकर्त्ता, मोक्ष स्वरूप, धर्मयुक्त कर्मों को ही करने वाला, अपने भक्तों को सुख का देने वाला और धर्म कामो में युक्त करने वाला, अत्यन्त मगल स्वरूप और धार्मिक मनुष्यो को सुख

(शेष पृष्ठ ६ पर)

ब्रह्मा संसार का पहिला धर्म गुरु

—पं० शान्तिप्रकाश जी

हमारे शास्त्र ब्रह्मा को संसार का प्रथम गुरु मानते हैं। जैसा कि उपनिषदों में लिखा है कि "यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै।"

परमात्मा ब्रह्मा को पूर्व बनाता और उसके लिए (चार ऋषियों द्वारा) वेद का ज्ञान देता है।

अन्यत्र शतपथादि में भी अग्नि वायु आदित्य और अंगिरा पर ऋग्यजु सामाथर्व का आना लिखा है।

सायण ने अपने ऋग्वेदोपघात में इन चार ऋषियों पर उन्हीं चार वेदों का आना स्वीकार किया है। वेदों में वेदों को एक पर प्रकट होना नहीं स्वीकारा। देखिये—

यज्ञेन वाचः पदवीयमायन्तामन्वविन्दन्नृषिषु प्रविष्टाम्। ऋ० मण्डल १० इस मन्त्र में 'वाचः' वेद वाणियों के लिए बहुवचन है तथा "ऋषिषु प्रविष्टाम्" ऋषियों के लिए बहुवचन आया है।

'चत्वारि वाक् परिमिता पदानि' चार वेद वाणियां हैं जिनके अक्षर पदादि नपे तुले हैं। अतः उन में परिवर्तन हो सकना असम्भव है क्योंकि वह ईश्वर की रचना हैं।

देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति। अथ० १०।८।३२

परमेश्वर देव के काव्य को देख जो न मरता है और न पुराना होता है। सनातन ईश्वर का ज्ञान भी सनातन है। शाश्वत है। अपूर्वेणेषिता वाचस्ता वदन्ति यथायथम्। अथर्व १०।८।३३ (अद्वितीय अनुपमेय) ईश्वर ही वेद वाणियों का प्रेरक है, उन वेद वाणियों को ऋषि लोग यथावत् बोल कर उनका प्रचार करते हैं।

यत्र ऋषयः प्रथमजा ऋचः साम यजुर्मही। अथ० १०।७।१४ संसार में प्रथम उत्पन्न हुए ऋषि लोग ऋग्वेद सामवेद, यजुर्वेद तथा पृथ्वी के वैज्ञानिक तत्त्व को प्रकट करने में समर्थ अथर्ववेद का प्रकाश ईश प्रेरणा से करते हैं।

प्रेणा तदेषां निहितं गुहाविः॥ ऋ० १०।७।११

इन ऋषियों की आत्म बुद्धि रूपी गुहा में निहित वेद ज्ञान राशि ईश प्रेरणा से प्रकट होती है।

इस प्रसिद्ध मन्त्र में भी ऋषियों के लिए एषां का प्रयोग बहुवचनान्त है।

अतः उपनिषत् के प्रथम प्रमाण का अभिप्राय ब्रह्मा के लिए वेदों का ज्ञान ऋषियों द्वारा प्राप्त हुआ, यह स्पष्ट है।

अग्नि वायु आदित्य और अंगिरा ने चारों वेदों का पूर्ण ज्ञान जिन ऋषियों को दिया उनमें ब्रह्मा ने सब से प्रथम मनुष्य में वेदधर्म का प्रचार किया और धर्म की व्यवस्था तथा यज्ञों का प्रचलन किया। अतः ब्रह्मा जी संसार के सब से पहले धर्म संस्थापक गुरु माने जाने लगे। क्योंकि वेद में ही लिखा है कि—

ब्रह्मा देवानां पदवी। ऋग्वेद ९।९६।६

ब्रह्मा विद्वानों की पदवी है।

बड़े-बड़े यज्ञों में चार विद्वान् मन्त्र प्रसारण का कार्य करते हैं। उनमें होता, उद्गाता, अध्वर्यु और ब्रह्मा अपने-अपने वेदों का पाठ करते हुए ब्रह्मा की व्यवस्था में ही कार्य करते हैं। यह प्राचीन आर्य मर्यादा इस मन्त्र के आधार पर है—

ऋचां त्वः पोषमास्ते पुपुष्वान् गायत्रं त्वो गायति शक्वरीषु। ब्रह्मा त्वो वदति जातविद्यां यज्ञस्य मात्रां वि मिमीत उ त्वः।

ऋग्वेद १०।७१।११

ऋग्वेद की ऋचाओं की पुष्टि होता, साम की शक्तिदात्री ऋचाओं की स्तुति उद्गाता, यजु मन्त्रों द्वारा यज्ञ मात्रा का अवधारण अध्वर्यु द्वारा, यज्ञ की सारी व्यवस्था और यज्ञ कराने वाले होतादि पर नियन्त्रण ब्रह्मा करता है।

विश्व का आदि धर्म गुरु ब्रह्मा है। ऐसी वैदिक धर्म की मान्यता है। कुरान शरीफ की सूरा बकर आयत १२४ का स्पष्ट अर्थ है "ईश्वर ने इब्राहीम को संसार का इमाम (धर्म का नेता) बनाया। इब्राहीम ब्रह्मा का अपभ्रंश मात्र ही प्रतीत होता है। विद्वान् लेखक ने बड़े प्रभावी ढंग में सप्रमाण विषय पर विस्तृत विवेचन किया है।

—सम्पादक

मनु धर्म शास्त्र में तो स्पष्ट वर्णन है कि—

अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्। दुदोह यज्ञसिद्ध्यर्थमृग्यजुःसामलक्षणम्। मनु० १।२३ ब्रह्मा जी ने अग्नि वायु आदित्य ऋषियों से यज्ञ सिद्धि के लिए ऋग्यजु साम का दोहन किया।

मनु के इस प्रमाण में अथर्व वेद तो ब्रह्मा जी का अपना वेद है।

जहां-जहां यज्ञ का वर्णन होगा वहां तीन वेदों का वर्णन होगा। तथा चारों वेदों का विभाजन छन्दों की दृष्टि से भी ऋग्यजु साम के नाम से पद्यात्मक, गद्यात्मक और गीतात्मक रूपेण किया गया है। अतः ज्ञान कर्मोपासन विज्ञान की दृष्टि से वेद चार और छन्दों की दृष्टि से वेद त्रयी का दो प्रकार का विभाजन है। कुछ भी हो वेद शास्त्र उपनिषद् तथा इतिहास के ग्रन्थों में ब्रह्मा को प्रथम वेद प्रचारक, संसार का अगुआ या पेशवा के नाम से प्रख्यात माना गया है।

यहूदी, ईसाई और मुसलमान भी ऐसा ही संस्कारवशात् मानते चले आए हैं। जैसा कि उनकी पुस्तकों से प्रकट है।

ब्रह्मा यज्ञ का नेता अगुआ या पेशवा है। यज्ञ सब का महोपकारक होने से देव पूजा संगतिकरण दानार्थक प्रसिद्ध है। इसी को सब से बड़ा त्याग और कुर्बानी माना गया है। किन्तु वाम मार्ग प्रचलित होने पर महाभारत युद्ध के पश्चात् पशु-यज्ञों का प्रचलन भी अधिक से अधिक होता चला गया। इससे पूर्व न कोई मांस खाता और न यज्ञों के नाम से कुर्बानी होती थी।

बाईबल के अनुसार भी हजरत नूह से पूर्व मांस खाने का प्रचलन नहीं था जैसा कि वाचटावर बाईबल एण्ड ट्रैक्ट सोसायटी आफ न्यूयार्क की पुस्तक 'दो ट्रुथ दैट लीड्स ईटर्नल लाईफ' में लिखा है।

यहूदियों और ईसाइयों के अनुसार मांस की कुर्बानी खुदा के नाम से नूह के तूफान के साथ शुरू हुई है। तब इसको हजरत इब्राहीम के नाम से शुरू किया गया कि इब्राहीम ने खुदा के लिए अपने लड़के की कुर्बानी की किन्तु खुदा ने लड़के के स्थान पर स्वर्ग से दुम्बा भेजा। जिसकी कुर्बानी दी गई। स्वर्ग से दुम्बा लाने की बात कससुलम्बिया में लिखी है।

यहूदी कहते हैं कि हजरत इब्राहीम ने इसहाक की कुर्बानी दी थी जो मुसलमानों के विचार से हजरत इब्राहीम की पत्नी एर से उत्पन्न हुआ था, किन्तु मुसलमानों का विश्वास है कि हजरत इब्राहीम की दासी हाजरा से उत्पन्न हुए हजरत इसमाइल की कुर्बानी दी गई थी। जिसके बदले में हजरत जिब्राइल ने बहिश्त से दुम्बा लाकर कुर्बानी की रसम पूरी कराई।

इसीलिए मुसलमान भी हजरत इब्राहीम की स्मृति में पशुओं की कुर्बानी देना अपना धार्मिक कर्तव्य समझते हैं।

मैं कहता हूं कि भूमि के पशुओं की कुर्बानी की आवश्यकता खुदा को होती तो बहिश्त से दुम्बा भेजने की आवश्यकता न पड़ती।

बाईबल के अनुसार तो पशुबलि की प्रथा हजरत इब्राहीम के बहुत पहिले हजरत नूह के युग में आरम्भ हुई है। जैसा कि पीछे वाच एण्ड टावर का प्रमाण दिया जा चुका है। किन्तु वास्तव में ब्रह्मा मनु से पूर्व हुए हैं। मनु को ही नूह माना जाता है।

हाफिज अताउल्ला साहब बरेलवी वर्तमान राजस्थान के अनुसार हजरत इब्राहीम तो ब्रह्मा जी का ही नाम है। क्योंकि वेदों में ब्रह्मा सरस्वती, बाईबल में इब्राम सर और इसलाम में इब्राहीम सर यह वैयक्तिक नाम हैं। जो समय पाकर रूपान्तर होगए। सर सरस्वती का संक्षेप है। आर्य जाति में वती बोलना न बोलना अपनी इच्छा पर निर्भर है जैसा कि पद्मावती को पद्मा और सरस्वती को सर बोला जाता है। जो शुद्ध संस्कृत का शब्द है। सरस्वती वेदों में कई बार आया है। जैसा कि—

चोदयित्री सूनृतानां चेतयन्ती सुमतीनाम्। यज्ञं दधे सरस्वती॥

ऋ० १।३।११।

सत्य का वक्ता, धर्मात्मा द्विज, ज्ञान विज्ञान युक्त लोगों का धर्म की प्रेरणा करती हुई, परोक्ष पर विश्वास रखने वाले सुमतिमान् लोगों को शुभ मार्ग बताती हुई सरस्वती-वेद वाणी यज्ञों (पंच महायज्ञादि) की प्रस्थापना करती है।

अतः स्पष्ट है कि सरस्वती वेद वाणी को कहते हैं और ब्रह्मा चार वेद वक्ता होने से ही पौराणिकों में चतुर्मुख प्रसिद्ध हो गया है। चत्वारो वेदा मुखे यस्येति चतुर्मुख।

लुप्त बहुव्रीहि समास का यह एक अच्छा उदाहरण है। चारों वेद जिसके मुख में कण्ठस्थ हैं। चार

ब्रह्मा संसार का पहिला धर्म गुरु

हैं। चार वेद निपुण विद्वान् का नाम ही ब्रह्मा है। ब्रह्मा विद्वानो की एक उच्च पदवी है। जो प्रारम्भ सृष्टि से अब तक चली आ रही है, और जब तक ससार है, यह पदवी मानी जाती रहेगी। अनेकानेक ब्रह्मा ससार में हुए हैं और होंगे।

अब भी यज्ञ का प्रबन्धक ब्रह्मा कहलाता है। ब्रह्मा का वेद पाठ और यज्ञ के साथ विशेष सम्बन्ध है। वेद वाणी को सरस्वती कहा गया है।

यहूदी, ईसाई और मुसलिम मतों मे सरस्वती का सर और ब्रह्मा का इब्राम तथा इब्राहीम बन जाना क्या बडी बात है।

ब्रह्मा यज्ञ का आदि प्रवर्तक है। वेद कुरान और बाईबल इसमें एक मत हैं। यज्ञशाला चौकोन बनाई जाती है। इसीलिए मक्का मे काबा भी चौकोन है, जो इब्राहीम ने बनवाया था। यह यज्ञीय स्थान है। यज्ञ में एक वस्त्र जो सिला न हो पहनने की प्राचीन प्रथा है। मुसलमानो ने मक्का के हज्ज में इस प्रथा को स्थिर रखा हुआ है। यज्ञ को वेद में अध्वर कहा गया है। ध्वरति हिंसाकर्मा तत्प्रतिषेध। अध्वर के अर्थ हैं, जिसमे हिंसा न की जाय। इसलिए मुसलमान हाजी हज्ज के लिए एहराम बाध लेने के पश्चात् हिंसा करना महापाप मानते हैं।

वैदिक धर्मियो में वाममार्ग युग मे हिंसा का प्रचलन हुआ। वाममार्ग के पश्चात् ही वैदिक धर्म का ह्रास होकर बुद्ध, जैन, यहूदी ईसाई मुसलिमादि मतो का प्रचलन हुआ है। यज्ञों में पशु हत्या और कुर्बानी में पशु बलि की प्रथा भी वाममार्ग =उल्टा मार्ग ही माना गया है। जो वास्तव मे सच्चे यज्ञों अथवा सच्ची कुर्बानी का भाग नहीं है।

आर्यों के पाच यज्ञो में नमस्कार का प्रयोग हुआ है। नमाज नमस का रूपान्तर है। पाच नमाज तथा पाच इसलाम के अरकान पचयज्ञों के स्थानापन्न हैं —

(१) ब्रह्म यज्ञ=दो समय सध्या —नमाज तथा रोजा कुरान के हाशिया पर लिखा है कि पहिले दो समय नमाज का प्रचलन था। देखो फुर्कान आयत ०५।

(२) देव यज्ञ=हज्ज तथा जकात या दान पुण्य।

(३) बलिवैश्व देव यज्ञ= कुर्बानी। कुर्बानी पशुओं की नहीं किन्तु पशु पक्षी, दरिद्रादि के लिए बलि देना ही सच्ची कुर्बानी है। धर्म के लिए जीवन दान महाबलिदान है।

(४-५) पितृ यज्ञ तथा अतिथि यज्ञ आर्यों के पच यज्ञ और इसलाम के पांच अरकानों का कुछ तो मेल है ही। इसलाम के पाच अरकान नमाज, जकात, रोजा, हज्ज और कुर्बानी हैं।

कुर्बानी शब्द कुर्ब से निकला जिसके अर्थ समीप होना अर्थात् ईश्वरीय गुणों को धारण कर ईश्वर का सान्निध्य प्राप्त करना, इन अर्थों में पशु हत्या जो हिन्दुओ के पशु यज्ञ की भाति बिगाड का परिणाम मात्र है।

वेदों मे यज्ञ को अध्वर कहा है, जिसके अर्थ हैं, "ध्वरति हिंसाकर्मा तत्प्रतिषेध" ध्वर नाम हिंसा और अध्वर के अर्थ हिंसा रहित शुभ कर्म ही यज्ञ हैं। इसी प्रकार कुर्बानी शब्द में भी हिंसा की भावना विद्यमान नही।

ब्रह्मा ने वेदो के आधार पर यज्ञों का प्रचलन किया तथा यज्ञो में सबसे बडे विद्वान् को आर्यों मे ब्रह्मा की पदवी से विभूषित किया जाता है। अत ब्रह्मा शब्द रूढिवादी नही। अनेक ब्रह्मा हुए हैं और होंगे भी। किसी समय पैलस्टाइन मे ब्रह्मा को इब्राम और अरब देशो मे इब्राहीम शब्द रूढ हो गया।

वैदिक ज्ञान को वेद मे सरस्वती कहा है लोक मे पद्मावती को केवल पद्मा और सरस्वती का केवल सर कहने की प्रथा भी है। अत. पुराणों मे ब्रह्मा सरस्वती तथा तौरेत व इञ्जील मे इब्राम सर और इसलाम मे भी इब्राहीम सर, शब्दो का प्रचलन होने से सिद्ध होता है फिर यह दोनो शब्द वेदो के अपभ्रंश मात्र इन मतो मे विद्यमान हैं।

कुरान शरीफ मे लिखा है कि हजरत साहिब फरमाते हैं कि—

(१) लोग कहते हैं कि यहूदी या ईसाई हो जाओ किन्तु मैं तो इब्राहीम के धर्म को मानता हूं जो एक तरफ का था और मूर्ति पूजक न था। परमात्मा का सच्चा उपासक था। सूरा बकर आयत १३५।

(२) ईश्वर ने इब्राहीम को ससार का इमाम=(धर्म का नेता) बनाया। सूरा बकर आयत १२४।

(३) ऐ लोगो : इब्राहीम के सम्बन्ध में क्यों झगडते हो और इब्राहीम पर तौरेत और इञ्जील नही उतरी, किन्तु यह तौरेत व इञ्जील तो उनके बहुत पीछे की हैं। पर तुम समझदारी क्यो नही करते।

इब्राहीम न यहूदी था न ईसाई किन्तु एक ओर का मुसलमान था वा मुशरिक मूर्ति पूजक न था तथा अनेक ईश्वरवादी भी न था। आल इमरान आयत ६४,६६।

अब इब्राहीम के धर्म को मानो जो एक निराकार का उपासक था, और मूर्ति पूजक न था। आल इमरान आयत ९४। कुरान शरीफ मे हजरत इब्राहीम के यज्ञ मण्डप का नाम काबा शरीफ रखा है। काबा चौकोन यज्ञशाला की भाति होने से भी प्रमाणित है कि किसी युग मे यह अरब के लोगो का यज्ञीय स्थान था, जहा हिंसा करना निषिद्ध था। जिसकी परिक्रमा भी होती थी। और उपासना करने वालों के लिए उसे हर समय पवित्र रखा जाता था। इसकी आधारशिला इब्राहीम और इस्माईल ने रखी थी। देखो सूरा बकर आयत १२५ से १२७।

कुरान शरीफ मे स्पष्ट लिखा है कि कुर्बानी आग से होती थी। आल इमरान आयत १८२। खुदा की सुन्नत कभी तबदील नही होती। सूरा फतह आयत २४।

मूसा को पैगम्बरी आग से मिली जहा जूती पहन के नहो जाया जाता। सूरा त्वाह आयत ११-१३। खुदा को कुर्बानी में पशु मास और रक्त स्वीकार नही। खुदा तो मनुष्यो से तकवा अर्थात् पशु-जगत् पर दया=परहेजगारी=शुभाचार स्वीकारता है। सूरा हज्ज आयत १७।

"हज्ज और अमरा आवश्यक कर लेना एहराम से हैं। एहराम यह कि नियत करे आरम्भ करने की और वाणी से कहे लब्बैक। पुनः जब एहराम मे प्रविष्ट हुआ तो स्त्री पुरुष गमन से पृथक् रहें। तथा पापो और पारस्परिक झगडो से पृथक् रहें। बाल उतरवाने, नाखून कटवाने सुगन्ध लेप तथा शिकार मारने से पृथक् रहें। पुरुष शरीर पर सिले वस्त्र न पहिने, सिर न ढके। स्त्री वस्त्र पहिने, सिर ढाके किन्तु वस्त्र मुख पर न डाले। मौजुहुल्कुरान। सूरा बकर आयत १९७।

इस समस्त प्रमाण भाग का एक ही अभिप्राय है, कि हज्ज में हिंसा की गुजाइश नहीं। कुर्बानी= कुर्बे खुदा अर्थात् ईश्वरीय सान्निध्य प्राप्ति का नाम हुआ। अत: कुरान शरीफ मे पशुओं की कुर्बानी की मुख्यता नहीं है। ऐसा कहीं नहीं लिखा कि जो पशुहत्या न करे वह पापी है। हा यह तो लिखा है कि खुदा को पशुओं पर दया करना ही पसन्द है। क्योंकि वह खून का प्यासा नहीं और मांस का भूखा नहीं। सूरा जारियात आयत ५६-५८।

कुछ स्थानो पर मास खाने का वर्णन है, किन्तु वह मोहकमात= पक्की आयतें न होकर मुतशाबिहात =सदिग्ध हैं अथवा उनकी व्याख्या आपत्तिकाल में केवल जीवन धारण के लिए अत्यन्त अल्प मात्रा मे प्रयुक्त करने का विधान है। देखो सूरा बकर आयत १७३

अब मुसलिम ससार मे प्रार्थना है कि कुरान शरीफ मे मास न खाना पाप नहीं है। खाना सन्दिग्ध है। आत्मोन्नति तथा परमात्मा प्राप्ति के हेतु सन्दिग्ध कर्म करना त्याज्य होने से निरामिष होने मे ही भलाई है। यही दोनें इब्राहीम और ब्रह्मा का धर्म है। जिस पर चलने के लिए कुरान शरीफ मे बल दिया है।

इसी आधार पर ही आर्य मुसलिम एकता तो होगी ही किन्तु राष्ट्र मे हिन्दू मुसलमानों के एक कौम होने का मार्ग भी प्रशस्त हो जाएगा। परमात्मा करे कि ऐसा ही हो।

आर्य वीर दल की नवीन शाखा स्थापित की गयी

ग्राम ईसापुर मे श्री कृष्ण आर्य के परिश्रम से आर्यवीर दल शाखा की स्थापना की गयी है। आर्यवीरो के अखाडे में कुश्तियों तथा अन्य सुन्दर कार्य को देखकर सभा प्रधान डा० धर्मपाल ने रविवार ३।१।८८ को, आर्यवीर दल के कार्यकर्ताओ के कार्य की सराहना की और विश्वास दिलाया कि आर्यवीरों को पूरा प्रोत्साहन दिया जायेगा। इस अवसर पर श्री स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती, वेद प्रचार अधिष्ठाता, श्री प्रियतमदास रसवन्त अधिष्ठाता आर्यवीर दल, श्री कृष्णपाल आर्य, शिक्षक भी उपस्थित थे। ग्राम पचायत ने २० बीघा जमीन आर्यसमाज को देने का प्रस्ताव किया है। हमें विश्वास है कि ग्राम ईसापुर में आर्यसमाज का कार्य बढ़ेगा।

दस नियम गान

ऋषि ने आर्यसमाज दिया, जिसमे हर उपकार भरा है।
दयानन्द के दस नियमों में, विश्व शांति का सार भरा है।।

(१)

विद्या सत्य, पदारथ विद्या, सब से जो जाना जाता है।
उसका परमेश्वर आद मूल, सब ज्ञान उसी से आता है।।
नियम प्रथम यह पावन प्यारा, गुरु गीन ईश का गाता है।
परमेश्वर का रूप निराला, नियम दूसरा बतलाता है।।
इन नियमों के परिपालन से, हर्ष हृदय हर हार हरा है।
दयानन्द के दस नियमों मे, विश्व शांति का सार भरा है।।

(२)

ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, दयालु अजन्मा निर्विकार है।
सर्वशक्तिमान् न्यायकारी, अनादि अनन्त निराकार है।।
अजर अमर अभय सर्वव्यापक, सर्वेश्वर सर्वाधार है।
सर्वान्तर्यामी नित्य पवित्र, सृष्टिकर्त्ता अनुपम अपार है।।
उपासना योग्य उसी की है, उसमें ही उद्गार भरा है।
दयानन्द के दस नियमों में, विश्व शांति का सार भरा है।।

(३)

वेद सत्य सब विद्याओं की, पुस्तक प्रिय अघट खजाना है।
आर्य जनो का परम धर्म यह, श्रुति पढना और पढाना है।।
हो वेद ज्ञान विस्तार सदा, श्रुति सुनना और सुनाना है।
तमतोम हीन हो हृदय व्योम, त्रिनियम सदा अपनाना है।।
विद्या की विविध विधाओ का, वेदों में भण्डार भरा है।
दयानन्द के दस नियमों मे, विश्व शांति का सार भरा है।।

(४)

तजकर मिथ्या सत्य ग्रहण हित, रहना होगा तैयार सदा।
शुभ सत्य तभी स्थित होगा, जब जाये असत्य मत यदाकदा।।
सत्य कौन सा, क्या असत्य है कर लेना पहिचान सर्वदा।
चौथा नियम मोक्ष सुखदाता, हम को उत्तम है भाग्यप्रदा।।
मानव की शुभ योनि कि जिसमे, सत्य श्रेष्ठ शृङ्गार भरा है।
दयानन्द के दस नियमो में, विश्व शाति का सार भरा है।।

(५)

है नियम पाचवा धर्म प्राण, सब करो काम धर्मानुसार।
धर्मानुसार का अर्थ यही, सत्य झूठ का करके विचार।।
मानव का धर्म महा धन है, सम्भालत सदा है सदाचार।
दिन प्रतिदिन के सर्व कर्म जो, हो धर्म भरे व्यवहार भार।।
उत्तम धर्म धारणा जिसमें, जीवन का परिहार भरा है।
दयानन्द के दस नियमो मे, विश्व शाति का सार भरा है।।

(६)

इस समाज का मुख्य ध्येय है, सब ससार के उपकार का।
शारीरिक आत्मिक सामाजिक, हर उत्कर्ष के सचार का।।
कार्य आर्यसमाज का असीम, द्यौ से भूमि तक के प्यार का।
यह नियम छठा दे हृदय घटा, सब ससार को परिवार का।।
सहयोग सगठन में सदैव, प्रगतियुक्त उद्धार भरा है।
दयानन्द के दस नियमो मे विश्व शांति का सार भरा है।।

(७)

प्रीति पूर्वक धर्मानुसार, सब यथायोग्य व्यवहार करें।
हो नियम सातवें का पालन, जग मे तो शिष्टाचार करें।।
गुरु, भ्रात, सखा, पितु, मां भगिनी, हर सम्बन्धी सत्कार करें।
इससे भी ऊपर उठ करके, हर प्राणी से हम प्यार करें।।
निस्वार्थ प्रेम विस्तार करे, जिसमें हर्ष अपार भरा है।
दयानन्द के दस नियमो में, विश्व शान्ति का सार भरा है।।

(८)

कर दो तुम नाश अविद्या का, निश दिन विद्या की वृद्धि करो।
अभ्यास निरन्तर विद्या का, कर स्वय बुद्धि की शुद्धि करो।।
विज्ञान निकालो वेदो से, आविष्कारों की सिद्धि करो।
उत्तम विद्या के साधन से, स्वाधीन सदा समृद्धि करो।।
नियम आठवें के पालन से वैभव मय व्यापार भरा है।
दयानन्द के दस नियमों में, विश्व शांति का सार भरा है।।

(९)

प्रत्येक व्यक्ति को करना, निज उन्नति से सन्तोष नहीं।
सबकी उन्नति में निज उन्नति, शुभ सत्य यही है तोष सही।।
हर्ष हमे हो सुखी पडोसी, सच्चे सुख का है कोष यही।
सर सम्भव ऐसा यत्न करो, हो शेष नहीं दु ख दोष कहीं।।
नौवे नियम नवल में बल है, उन्नति का आगार भरा है।
दयानन्द के दस नियमों में, विश्व शांति का सार भरा है।।

(१०)

जब पालन हो परतन्त्र करें, नियम समाज सर्व हितकारी।
सभी मनुज उनमे स्वतन्त्र हों, प्रत्येक नियम जो हितकारी।।
मुक्ति लाभ सगठन शक्ति में, होता अनुशासन शुभकारी।
नियम दशम दे विश्व राष्ट्र के, सर्व सगठन को बल भारी।।
नेताओं का कर्त्तव्य और, जनता का अधिकार भरा है।
दयानन्द के दस नियमो में विश्व शांति का सार भरा है।।

—देव नारायण भारद्वाज

आर्यसमाज साहब गंज द्वारा वैदिक धर्म प्रचार शिविर का आयोजन

जिला आर्योपप्रतिनिधि सभा गोरखपुर एव नगर आर्यसमाज गोरखपुर द्वारा ग्राम हरपुर महन्त थाना घुघली मे वैदिक धर्म प्रचार शिविर दिनांक २८, २९ दिसम्बर को आयोजित किया गया जिसमे यज्ञोपरान्त विशाल जनसभा को सम्बोधित करते हुए जिला आर्योपप्रतिनिधि सभा के प्रचार अधिष्ठाता पण्डित द्विजराज शर्मा जी ने समस्त हिन्दुओं से छुआछूत समाप्त करने की तथा बाल-विवाह, मद्यपान आदि परित्याग कर राष्ट्र रक्षा हेतु सगठित होकर रहने का ओजस्वी विचार दिया।

सभा का सचालन जिला सभा के मन्त्री रमेश प्रसाद गुप्त ने किया सभा में श्री देवीलाल आर्य, विद्यावती आर्या, कलावती आर्या, सावित्री देवी, मनोरमा आर्या, राजमगल विश्वकर्मा आदि ने अपने विचार व्यक्त किये।

आगन्तुकों का स्वागत श्री चन्द्रमणि पटेल, श्री रामकिसन चौधरी, श्री रामाशकर चौधरी आदि ने श्रद्धापूर्वक किया। हजारों नर-नारियों ने शीत ऋतु होने पर भी रात्रि ग्यारह बजे तक विचार सुने।

(पृष्ठ ३ का शेष)

दयानन्द सरस्वती द्वारा…

देनेहारा है। उस शिव को हमारा बारम्बार नमस्कार हो।

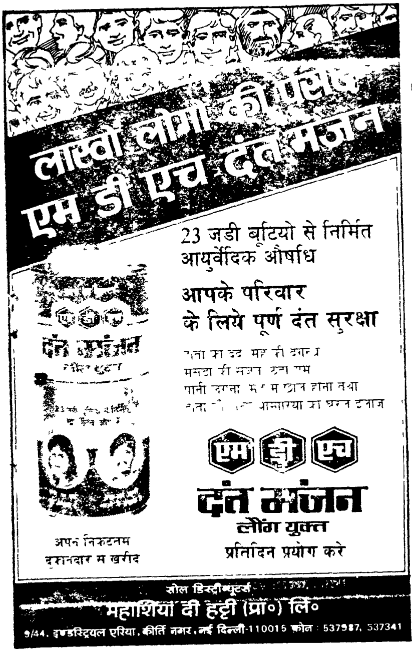
जिस सच्चे शिव की तलाश में वे निकले थे, वह वही निराकार ब्रह्म ही तो था मिल गया। परन्तु इस उपलब्धि में उन्हें १८ वर्ष का अध्ययन और विचरण करना पडा। परन्तु वे सच्चे शिव की अनुभूति अकेले ही न करके जन-जन को करा गए क्योंकि जो उनका साहित्य पढता है, वह उनके पथ का अनुगामी बन जाता है। किया तो हजरत मुहम्मद ने भी यही था, पर उन्होंने बाहुबल से पराजितों के देवस्थल की मूर्तियां तोडी थीं। उनके अनुयायियों ने भी यही किया था। परन्तु बाद में सगे असवद, कब्र और ताजिया बनकर वह मूर्ति पूजा उनमें भी पुन अवतरित हो गई क्योंकि अनध्ययनशीलों की यह मानवीय कमजोरी है कि वे पार्थिव पदार्थों में देवत्व की कल्पना करके उन्हें भगवान् मानकर पूजा करने ही लगते हैं। केवल श्रेष्ठ (आर्य) जन ही उस प्रक्रिया को लांघ कर सच्चे भगवान् की सच्ची पूजा-स्तुति का आनन्द लाभ करते हैं। हम आर्यजनों पर महर्षि का यह ऋण है। इस कल्याणमयी प्रक्रिया को उद्भासित करते रहना हमारा परम धर्म है कि मानव मात्र सुपथगामी हों, सच्चे शिव की आराधना करें।

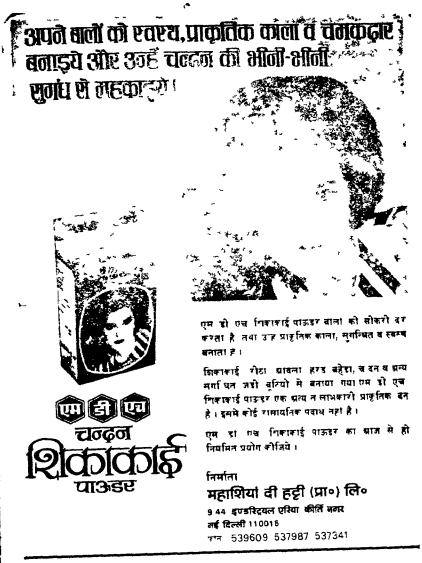
(पृष्ठ १ का शेष)

पूर्वी दिल्ली में स्वामी…

स्वामी आनन्द बोध ने कहा—सती प्रथा जैसी कुप्रथाएं अभी भी हमारे देश में विद्यमान हैं। देश को तोडने वाली विध्वसक शक्तियां भी हमारे देश में अपना घृणित कार्य करने में लगी हैं। आर्यों को अपने जनजागरण के पुनीत कार्य में सलग्न रहना चाहिए। निराश और हताश होने की आवश्यकता नहीं, आवश्यकता है उत्साह से आगे कदम बढ़ाने की।

इस अवसर पर श्री रामशरणदास आर्य, श्री मांगेराम आर्य, श्री श्यामसुन्दर विद्यमानी विश्वम्भरनाथ भाटिया आदि महानुभाव मच पर विद्यमान थे। मन्च का सचालन श्री मा० मनोहरलाल ने किया।


लाखों लोगों की पसंद
एम डी एच दंत मंजन
23 जडी बूटियो से निर्मित
आयुर्वेदिक औषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दंत सुरक्षा
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
प्रतिदिन प्रयोग करे
अपने निकटतम
दुकानदार से खरीदे
सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स
महाशियाँ दी हट्टी (प्रा०) लि०
9/44, इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-110015 फोन : 537987, 537341


अपने बालों को स्वस्थ, प्राकृतिक काला व चमकदार बनाइये और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी सुगंध से महकाइये।
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर
एम डी एच शिकाकाई पाउडर बालो की सीकरी दूर करता है तथा उन्हें प्राकृतिक काला, सुगन्धित व स्वस्थ बनाता है।
शिकाकाई रीठा आवला हरड बहेडा, चंदन व अन्य सुगंधित जडी बूटियो से बनाया गया एम डी एच शिकाकाई पाउडर एक अत्यन्त लाभकारी प्राकृतिक देन है। इसमे कोई रासायनिक पदार्थ नही है।
एम डी एच शिकाकाई पाउडर का आज से ही नियमित प्रयोग कीजिये।
निर्माता
महाशियाँ दी हट्टी (प्रा०) लि०
9 44 इण्डस्ट्रियल एरिया कीर्ति नगर
नई दिल्ली 110015
फोन 539609 537987 537341


आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
नई दिल्ली-110005
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
alignpoint

जिसके घर में वेद नहीं वह आर्यसमाजी नहीं

—विद्यानन्द सरस्वती

समाज सुधार आदि के जो कार्य महर्षि दयानन्द या आर्यसमाज ने किये उनके करने वाले महापुरुष और सगठन पहले भी हो चुके थे और आज भी हैं। एक ही बात ऐसी है जिसे करना तो दूर, न किसी ने पहले कहा और न आज कहता है। और वह है आर्यसमाज का तीसरा नियम—"वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढना पढाना, और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।" यही दयानन्द की विशेषता है और इसी से आर्यसमाजी की पहचान होती है। वेद को पढ़कर उसके अनुकूल आचरण करने वाला ही आर्यसमाजी कहला सकता है। और यह तब तक सम्भव नहीं जब तक उसके घर में वेद न हो। जिनके घर मे वेद नही उन से मिलकर बना सगठन, और कुछ भी हो, आर्यसमाजी नहीं कहला सकता। इसलिए प्रत्येक आर्यसमाज का कर्त्तव्य है कि अपने रजिस्टर में अंकित प्रत्येक सदस्य के घर में कम से कम एक वेद तो पहुचाये ही। मैं इसे आन्दोलन का रूप देना चाहता हू, आर्यसमाजों के सहयोग से। जहां जाता हू, इसकी प्रेरणा करता हूं। लोग हमारी बात मानते हैं। प्रत्येक समाज स्वामी जी के भाष्य वाले यजुर्वेद की सौ-सौ प्रतियों का आर्डर देती है परन्तु इस पवित्र कार्य मे न सार्वदेशिक सभा सहयोग कर रही है और न परोपकारिणी सभा। दोनों सभाओं ने उक्त वेद का मूल्य चालीस रुपये रखा हुआ था, परन्तु जैसे ही सौ सौ प्रतियों के आर्डर पहुचे, वैसे ही पहलि से छपे मूल्य को बढा कर पहले परोपकारिणी सभा ने सौ रुपये और तत्पश्चात् सार्वदेशिक सभा ने साठ रुपये कर दिये। इससे मुझे और मेरे साथ आर्यसमाजों और दयानन्द मठ को बडी निराशा हुई। विवश होकर मुझे दूसरी व्यवस्था करनी पडी। मेरे अनुरोध पर 'भगवती प्रकाशन' ने ४० रुपया मूल्य पर ही उक्त वेद देने की योजना को स्वीकार कर उसे तत्काल कार्यान्वित करना स्वीकार कर लिया है। यह सस्करण अब तक उपलब्ध सभी सस्करणों से कहीं अधिक सुन्दर, शुद्ध और प्रामाणिक होगा। इस शुभ कार्य मे जनता का सहयोग अपेक्षित है। मेरा प्रत्येक आर्यसमाज से अनुरोध है कि वह अपनी सदस्यों की सख्या को देखकर २५,५० व १०० प्रतियों के मूल्य के रूप में एक, दो या चार हजार रुपये ड्राफ्ट द्वारा श्री स्वामी जगदीश्वरानन्द जी सरस्वती, मन्त्री भगवती प्रकाशन, एच-१/२ माडल-टाउन दिल्ली को तत्काल भेज दे। उन्हीं का पैसा यजुर्वेद भाष्य के रूप में उन्हें वापिस मिल जायेगा। क्योंकि पुस्तक बिल्कुल लागतमात्र मूल्य पर दी जायेगी, इसलिए प्रेषण व्यय ग्राहकों को वहन करना होगा। यह आर्यसमाजों और आर्यसमाजियों की वेद के प्रति आस्था का प्रश्न है।



दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री डा० धर्मपाल द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५६

ओ३म्

साप्ताहिक

आर्य सन्देश

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

वर्ष १२ अंक १४ | रविवार २४ जनवरी १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | माघ २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर ३० पौंड

संघर्ष जारी रहेगा

—डा० धर्मपाल

आर्यसमाज चूना मण्डी, पहाड़ गंज नई दिल्ली के तत्त्वावधान में दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के नव निर्वाचित प्रधान एवं महामन्त्री का स्वागत किया गया। इस अवसर पर दिल्ली की विभिन्न संस्थाओं के अधिकारी विद्यमान थे। गण्यमान्य जनों द्वारा पुष्पमालाओं से प्रधान एवं महामन्त्री का स्वागत किया गया।

इस अवसर पर बोलते हुए डा० धर्मपाल ने कहा आप सब की शुभ कामनाओं एवम् आशीर्वाद के लिए मैं आभारी हूं। मुझे विश्वास है आप सब का पूर्ण सहयोग हमें मिलता रहेगा। हमारे सामने ग्राम-प्रचार का कार्य तथा सार्वजनिक स्थान पार्क आदि में प्रचार कार्य मुख्य है, उस पर हम अधिक बल देंगे। आर्य समाजों के साप्ताहिक सत्संग को उपदेशकों की व्यवस्था को सुचारु किया जायेगा। हमारी कोशिश होगी दिल्ली की पाठ्य पुस्तकों में इतिहास विषयक जो विसंगतियां हैं उन्हें ठीक कराने के लिए जोरदार अभियान चलाया जाये। संस्कृत भाषा को उचित सम्मान दिलाने के लिए भी आर्यसमाज अपना अभियान जारी रखेगा।

डा० धर्मपाल ने कहा—हम ने दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रकाशन को समृद्ध बनाने की कोशिश की जो काफी हद तक सफल रही अब उसे और आगे उन्नत करने का भी हमारा लक्ष्य है। हमारी यह भी इच्छा है कि हम और अधिक संगठित सुदृढ होकर वैदिक धर्म की सेवा करें।

दिल्ली सभा के महामन्त्री श्री सूर्यदेव ने कहा आर्यसमाज का प्रचार कार्य में तो हमें बढ चढ कर योगदान देना ही चाहिए। हमारा प्रयत्न यह भी होना चाहिए कि हमें सभी संस्थाओं में एक साथ अपने पर्व मनाने चाहिए। पिछले दिनों श्रद्धानन्द बलिदान दिवस के अवसर पर दिल्ली दूरदर्शन ने स्वामी श्रद्धानन्द का समाचार एक पंक्ति के रूप में दिया। जब कि सारा दिन ईसा-मसीह की शिक्षाओं से सम्बन्धित कार्यक्रम होते रहे। हम सब को सूचना प्रसारण मन्त्री तथा दूरदर्शन के निदेशक के नाम पत्र लिख कर विरोध प्रकट करना चाहिए। हमें अपने धर्म के प्रति जागरूक रहना चाहिए।

इस अवसर पर स्वामी आनन्द बोध ने भी आशीर्वाद एवं सम्बोधन दिया आर्यसमाज के मन्त्री व प्रधान ने कार्यक्रम का काफी प्रभावपूर्ण ढंग से आयोजन किया।

पाक सीमा से शस्त्रों की तस्करी जोरों पर

चण्डीगढ़, १८ जनवरी। आतंकवादी पिछले एक साल से पाकिस्तानी सीमा के जरिए भारी मात्रा में उन्नत और परिष्कृत किस्म के हथियारों को तस्करी करने में कामयाब रहे हैं। इस बात से पंजाब पुलिस काफी चिंतित है। आतंकवादी जिन हथियारों की तस्करी कर रहे हैं उनमें रिमोट कण्ट्रोल जैसे चालित उन्नत हथियार भी शामिल हैं। खास बात यह है कि हथियारों की सप्लाई उनके लिए एकदम 'सुगम व पर्याप्त मात्रा' में हो रही है।

पंजाब पुलिस को इस बात का पता पकड़े गए आतंकवादी से पूछताछ व गुप्तचरों की रिपोर्टों से पता चला है। राज्य पुलिस प्रमुख व आंतरिक सुरक्षा सचिव श्री जूलियस रिबेरो ने खुद माना कि 'पुलिस द्वारा सीमा को सील करने की बड़ी से बड़ी कोशिशों के बावजूद शस्त्रों की 'आपूर्ति' ज्यों की त्यों है और आतंकवादियों के लिए हथियारों की कोई कमी नहीं है।" यह कहते हुए श्री रिबेरो के चेहरे पर चिन्ता स्पष्ट पढ़ी जा सकती थी।

लेकिन ऐसा भी नहीं है कि पुलिस इस दिशा में एकदम असफल रही हो। पुलिस ने पिछले एक साल में एक उन्नत चीनी राईफल (६०-एके, ४७), ७० अन्य राईफलें, ३२० रिवाल्वर, १४८० पिस्तौलें बरामद की हैं। इनमें अधिकांश शस्त्र पश्चिमी देशों के बने हैं। इसके अलावा ३२० सिंगल व डबल बैरल की बन्दूकें, ६० कारबाइन व मशीनगनें तथा भारी मात्रा में गोला बारूद, बरामद किया है। इसके साथ ही कस्टम विभाग ने ८७ मशीनगनें, पिस्तौलें आदि बरामद किए हैं। लेकिन यह सब जो हथियार तस्करी से भारत में आये हैं, उसका एक तिहाई भी नहीं है। यह बात एक वरिष्ठ गुप्तचर अधिकारी ने कही।

आतंकवादियों ने भी अब घटिया और घिसे-पिटे हथियारों की जगह बढ़िया व उन्नत किस्म के शस्त्र इस्तेमाल करने शुरू कर दिये हैं। ये हथियार पाकिस्तान से खरीदे

(शेष पृष्ठ ८ पर)

शिवरात्रि, बोध दिवस के रूप में जोर शोर से मनायें

—स्वामी आनन्द बोध

आगामी १६ फरवरी १९८८ को ऋषि बोध दिवस है। हम चाहते हैं कि इस कार्यक्रम को दूरदर्शन द्वारा राष्ट्रीय कार्यक्रम के अन्तर्गत पूरा स्थान दिया जाये। इसके लिए मैंने सूचना एवं प्रसारण मन्त्री श्री अजीत पांजा को पत्र लिखा है। प्रतिलिपि संलग्न है। आप भी इसी आधार पर अपने क्षेत्रीय अधिकारियों एवं नेताओं को इस कार्यक्रम को उचित स्थान देने के लिए प्रयत्न करें और अपनी सभा, आर्यसमाजों तथा सभ्रांत महानुभावों की ओर से ऐसे ही हजारों पत्र केन्द्रीय सूचना एवं प्रसारण मन्त्री भारत सरकार को लिखवा कर शिवरात्रि के दिन ऋषि बोध कार्यक्रम को व्यापक रूप से प्रसारित करने की मांग करें।

आगामी १६ फरवरी को आपकी सभा की ओर से तथा नगर की सभी आर्यसमाजों की ओर से मिल-

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

स्वास्थ्य के आधार

—रघुवीर प्रसाद त्रिवेदी

वैदिक काल में आयुर्वेद भी था और वैद्य भी थे। उस समय की बहुत सी बातें संहिताकालीन आयुर्वेद में छूट गई हैं। 'पचदशी' में पच कोशो (आवरणो) का वर्णन है, अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय तथा आनन्दमय।

प्राचीनो का यह अभिमत था कि प्रत्येक जीवित परमाणु मे आत्मा का निवास होता है। यह आत्मा आनन्दमय कोश के परकोटे मे बन्द रहता है। जैसे सूर्य अपना प्रकाश सर्वत्र फैलाता है वैसे आत्मा का प्रकाश इस पूरे क्षेत्र (आनन्दमय) पर पडता है। इस कोश से बाहर का परकोटा विज्ञानमय होता है। इसमें जीव-रूप कोशिका की बुद्धि निवास करती है। पुरुष यदि जीवात्मा है तो प्रकृति आनन्दमय कोश है। विज्ञानमय कोश साख्य के 'महत्' का प्रतिनिधि है। उसके बाहर का परकोटा अहकार का क्षेत्र है जिसे मनोनिवास भी कहा जा सकता है। फिर प्राण का परकोटा है जो वायु-रूप भाग का व्यवस्था करता है। सब से बाहर अन्नमय, अर्थात्, रस की स्थिति है। इस कोष की व्याप्ति बहुत रहती है। इसी मे पञ्च महाभूतो का राज्य है। त्रिदोष या पच दोष या पचभूतात्मक स्थिति मात्र इस स्तर में रहती है।

हमारा लक्ष्य था, 'अदीना स्याम शरद शतम्', पूर्ण स्वस्थ रह कर सौ वर्षों तक तथा उससे आगे भी जीवित रहना। पर यह लक्ष्य कैसे पूरा होगा यदि हमें अवाप्तक्षमताभावोमलक्षण का रोग जिसे 'एड्स' कहते हैं, हो जाए, जिसके निदान के छह मासो के अन्दर निश्चित ही मृत्यु हो जाती है, या 'ल्यूपस एरिथिमेटोसस' हो जाए जिसमें मुखमण्डल पर तितली जैसा दृश्य उपस्थित होते ही छह मासो मे निधन हो जाता है या कैसर लिम्फोमा या मार्कोमा बने या ऐसा पागलपन सवार हो जाए जो जीवन को नरक बना के रख दे, या भोपाल जैसी दुर्घटना या रूस की परमाणु-भट्टी से विकिरण की समस्या खड़ी कर बैठे। इन सब से ऐसी तबाही बर्पा होगी कि जीवन का कोई अश शेष नहीं रहेगा। मनुष्य की बुद्धि का एटम बम छोड़ने तक दूषित करने की जो मनोवृत्ति है उसके सुधारने का उपाय प्राचीन काल मे था।

२ प्राण· ये उपाय उपनिषदो में बतलाए गए थे जिन्हें हम अब पूरे के पूरे भूल गए हैं। जो उपाय विश्व को जीवित रखने के लिए अति महत्त्वपूर्ण थे, वे आज पूरी तरह हमारी आख से ओझल हो चुके हैं। प्राण को महत्ता पर बृहदारण्यक उपनिषद् में जो चर्चा हुई उस पर तनिक दृष्टिपात करें।

सोयास्य आङ्गिरसोऽङ्गाना हि रस प्राणो वा अङ्गानां रस प्राणो हि वा अङ्गानां रसस् तस्माद् यस्मात् कस्माच् चाङ्गात् प्राण उत्क्रामति तद् एव तच् छुष्यत्य् एष हि वा अङ्गाना रस । ३ १९, अर्थात् प्राण जीवित व्यक्ति के देह में रहता है यह सभी शरीरागो मे रस-रूप से व्याप्त है। इसीलिए इसे 'अयास्य' और 'आङ्गिरस' कहा जाता है। प्राण जब शरीर के किसी अग को त्याग देता है तो वह उसके अभाव में सूख जाता है, अर्थात्, अगो के जीवन और मरण का सम्बन्ध प्राण के साथ बधा हुआ है। प्राण शरीर के प्रत्येक देह-परमाणु (सैल), ऊतक (टिश्यू) और सस्थान (सिस्टम) से सम्बद्ध है। शकर अपनी टीका में इस प्राण को आत्मा मानते हैं, अत कार्य-करणानाम आत्मा प्राण' इत्य् एतत् सिद्धम । कार्य (पच-भूत) और करणो (इन्द्रिया पच ज्ञानेन्द्रिया, पच कर्मेन्द्रिया और उभयात्मक मन) के आत्मा का नाम प्राण' है। इससे, भूतो और इन्द्रियो से पृथक् सत्त वान् प्राण है, यह सिद्ध हो जाता है। इसी उपनिषद के पाचवे ब्राह्मण मे आत्मा के तीन अन्नो का वर्णन है। त्रीण्य् आत्मने कुरुतेति मनो वाच प्राणम तान्य् आत्मने कुरुत। आत्मा ने अपने लिए ३ अन्न किए, मन, वाणी और प्राण। इन्ही के कारण आत्मा मनोमय, वाङ्मय और प्राणमय है। ये तीन अन्न तीन वेदों का प्रतिनिधित्व करते हैं। वाक् से ऋग्वेद, मन से यजुर्वेद तथा प्राण से सामवेद अभिप्रेत है। इनके भी तीन रूप हैं-विज्ञात (वाक् का रूप), विजिज्ञासत्व (मन का रूप) तथा अविज्ञात प्राण का रूप)।

अथेतस्य प्राणस्याप शरीरम्। इस प्राण का शरीर आप (जल) से निर्मित है। उसका ज्योति रूप चन्द्रमा का है। इस प्रकार प्राण चन्द्रमा के समान परम शीतल है।

मिथिला के राजा जनक थे। उनके पास एक बडे तपस्वी विद्वान्, याज्ञवल्क्य पहुचे। उन्होंने राजा से जीवन के महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा की। उनमें एक चर्चा प्राण-विषयक थी। जनक ने शुल्व के पुत्र उदक का उद्धरण देकर कहा, प्राणो वै ब्रह्मेति, प्राण 'ब्रह्म' है फिर पूछा कि इस प्राण के आयतन और प्रतिष्ठा के सम्बन्ध में कुछ कहें। यह सारा वार्तालाप बडा ही रोचक है। इसे बृहदारण्यक उपनिषत् के चौथे अध्याय के प्रथम ब्राह्मण में पढा जा सकता है। जनक के सन्तुष्ट होने पर उसने स्वस्थ और पुष्ट एक सहस्र गौए याज्ञवल्क्य को भेंट कीं। पर ऋषि ने उन्हें तब तक लेने से इनकार कर दिया जब तक कि प्रश्नकर्त्ता पूर्ण रूप से सन्तुष्ट न हो जाए। उसके बाद इस विषय पर विस्तार से चर्चा की गई। इस प्रसग के भाष्य में शङ्कर ने प्राण को इन शब्दों में समेटा है, स एष हृदयभूतस् तैजस· सूक्ष्मभूतेन प्राणेन वि-ध्रियमाण प्राण एव भवति। अर्थात् हृदयभूत तैजस, सूक्ष्मभूत प्राण से धारण किए जाने पर प्राण हो हो जाता है।

३ तेज यहा एक और महत्त्वपूर्ण विषय का परिचय दिया गया है जिसे तैजस् या तेज कहा जाता है। यह तेज एक ज्योति है जो हमारे शरीरों को घेरे रहती है तथा शरीर के हर भाग से प्रकट होती है। याज्ञवल्क्य ने इस ज्योति के पाच भेद किए हैं, आदित्य, चन्द्र, अग्नि, वाक् आत्मा। अणुओ के प्रचण्ड विकिरण के फूट पडने से जब हमारा तेज अस्तगत हो जाता है तो मृत्यु हो जाती है। पुरुष मे पहले 'आदित्य' ज्योति रहती है। उसके अस्त होने पर 'अग्नि' ज्योति क्रियाशील रहती है। बाद मे वाक्' ज्योति के अधीन शरीर-व्यापार चलता है। अन्त में 'आत्म'-रूपी ज्योति के सहारे शरीर चलता है।

बाद में जनक ने पूछा, 'कतम आत्मेति', आत्मा कौन है? आत्मा को ज्येष्ठ और श्रेष्ठ माना गया है।

आगे के प्रसंग में पांचाल क्षेत्र में जहां काम्पिल्य राजधानी थी वहीं आरुणि का पुत्र श्वेतकेतु, जैवालि के पुत्र प्रवहण के पास गया और उससे पंचाग्निविद्या की चर्चा की जिसका सम्बन्ध तैजस तत्व के साथ आता है।

इस प्रकार, प्राण और तेज का वर्णन और विचार बहुत विस्तार से, वैज्ञानिकरीत्या किया गया है। उनके संरक्षण से व्यक्ति शतजीवी हो सकता है।

इसी प्रकार छान्दोग्योपनिषद् में भी इस विलुप्त शृङ्खला के ताले की कुजी इन शब्दों में दी गई है, अन्नमय मन, आपोमय प्राण तेजोमयी वाक्। भुक्त अन्न तीन भागों में विभाजित होता है, स्थूलांश (पुरीष), मध्यमांश (मांस) और सूक्ष्मांश (मन)। इसीलिए कहा है, जैसा अन्न वैसा मन। इसी प्रकार, पिया हुआ जल तीन भागों में विभाजित होता है, स्थूलाश (मूत्र), मध्यमांश (रक्त) तथा सूक्ष्मांश (प्राण)। कहा भी जाता है, जैसा पानी वैसा प्राणी। इसी प्रकार, प्राप्त हुआ तेज भी तीन भागो में विभाजित होता है, स्थूलाश (अस्थि), मध्यमांश (मज्जा) और सूक्ष्माश (वाक्)।

वसंत मेला एवं धर्मवीर हकीकत राय बलिदान दिवस समारोह

अखिल भारतीय हकीकत राय समिति एवम् आर्यसमाज सरोजिनी-नगर नई दिल्ली की ओर से वसन्त मेला एवम् धर्मवीर हकीकत राय बलिदान दिवस रविवार २४ जनवरी, १९८८ को प्रात ८-३० बजे से दोपहर १-३० तक आर्यसमाज सरोजिनी नगर नई दिल्ली में बडे समारोहपूर्वक मनाया जाएगा। कार्यक्रम निम्न प्रकार होगा।

प्रात ८ ३० से ९-३० बजे बृहद् यज्ञ

९-३० से १० बजे भजन (श्री गुलाब-सिंह राघव)

१० बजे से १२ बजे बच्चो का रोचक कार्यक्रम (धर्मवीर हकीकत राय की जीवनी पर)

१२ से १-३० बजे श्रद्धांजलि सभा-स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती की अध्यक्षता में।

१-३० बजे प्रीति भोज

अधिक से अधिक सख्या में पधार कर वीर हकीकत को श्रद्धांजलि अर्पित करे।

मन्त्री
रोशनलाल गुप्ता

वायुमण्डल को निर्विष करने का वैदिक उपाय

—यशपाल आर्यबन्धु

★

विज्ञान के इस युग में जब से औद्योगिक सभ्यता का विकास हुआ है, वायुमण्डल विषाक्त होता जा रहा है। जङ्गलों के अन्धाधुन्ध कटने से यह विष और भी तीव्रता से फैलता जा रहा है। और स्थिति यहां तक आ पहुंची है कि प्राणियों को सांस लेने के लिए शायद शुद्ध वायु ही उपलब्ध न हो। यही स्थिति जल और अन्य पदार्थों की भी है। अणु और परमाणुओं के इस युग में पर्यावरण जिस तीव्रता से बिगड़ता जा रहा है, वह वस्तुतः चिन्ता का कारण बन रहा है। प्रसिद्ध अमेरिकन परमाणु शास्त्री एडवर्ड टेलर का मत है कि परमाणु बमों के विस्फोट से जो विषैले पदार्थ तथा गैस वायुमण्डल में मिल रही है, उससे सम्पूर्ण जीव जगत् के अस्तित्व को ही खतरा पैदा हो गया है। उन्होंने आशंका प्रकट की है कि यदि परमाणु विस्फोट का यही क्रम इसी प्रकार से चलता रहा तो पता नहीं कि मानव का अस्तित्व भी रहेगा या नहीं?

परमाणु विस्फोटों से निकले जहरीले पदार्थों तथा गैसों का प्रभाव प्रजनन कोषों पर पड़ता है, जिससे आनुवंशिक विकार पैदा होते हैं तथा भावी सन्तानों पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है। वियतनाम युद्ध में प्रयुक्त विषैली गैसों के दुष्परिणाम संसार के सम्मुख हैं, जहां ८२ से ८४ प्रतिशत तक बच्चे विकलांग पैदा हुए। यही स्थिति भोपाल की कुख्यात गैस दुर्घटना के पश्चात् उत्पन्न हुई। वहां अब तक विकलांग बच्चे उत्पन्न हो रहे हैं और न जाने कितने प्रकार की बीमारियां जोर पकड़ रही हैं। अतः आवश्यकता इस बात की है कि वायुमण्डल को तुरन्त निर्विष करने के उपाय किये जायें।

वायुमण्डल किस तरह निर्विष हो, यह विचारणीय है। परम पिता परमात्मा ने अपनी असीम कृपा से मानव की प्रत्येक समस्या का हल वेद में दिया है। आइये, देखें वेद इस विषय में क्या निर्देश देते हैं। यजुर्वेद इस विषय में सुस्पष्ट निर्देश देता है। यजुर्वेद के छठे अध्याय के सोलहवें मन्त्र में इस सम्बन्ध में कहा है कि—"घृतेन द्यावापृथिवी पूर्येथाम्" अर्थात् घृत से अन्तरिक्ष और पृथिवी को पूर दो। पर यह कैसे हो? इतना घृत कहां से आये, जिससे पृथिवी और अन्तरिक्ष को पूर दिया जाये? इसके लिए भी वेद ने उपाय सुझा दिया है। वह क्या? वह है—'घृतेन वर्धयामसि' (यजु० ३/३) घृत से यज्ञ को बढ़ाओ। यज्ञ में डाला हुआ घृत थोड़ी मात्रा में ही क्यों न हो, वह वायुमण्डल में सर्वत्र फैल जाता है। महर्षि दयानंद का ऐसा ही मत है। महर्षि का कथन है कि—"अब कोई शंका करे कि होम एक छोटी-सी कृति है, इससे ब्रह्माण्ड वायु कैसे शुद्ध होगा? समुद्र में एक चम्मच भर कस्तूरी डालने से क्या सारा समुद्र सुगन्धित और शुद्ध होगा? इसका समाधान यह है कि सौ घड़े रायते में थोड़ी सी ही बघार से रुचि आ जाती है। यह प्रत्यक्ष है। इसकी जैसी उत्पत्ति समझी जाती है तद्वत् यह प्रकार भी है।" (देखें पूना प्रवचन, यज्ञ और संस्कार विषयक व्याख्यान) इतना ही नहीं, महर्षि एक अन्य शंका उठा कर उसका इस प्रकार समाधान देते हैं—"कोई ऐसी शंका करे कि होम तो यहां करो और अमेरिका में उसका परिणाम कैसे होगा? तो उसका समाधान यह है कि वायु द्वारा शुद्धि सर्वत्र फैले यह वायु का धर्म है।" और वायु अपने धर्म का निर्वाह करता ही है—यह भोपाल आदि में घटित विषैली गैस दुर्घटनाओं से भी सिद्ध हो गया है।

महर्षि के जीवन चरित्र में भी इस बात का उल्लेख मिलता है कि ऐसी ही एक शंका मुसलमानों के सुप्रसिद्ध नेता सर सय्यद अहमद खां ने भी की थी। उन्होंने महर्षि से कहा था कि—"आपकी अन्य बातें तो युक्तियुक्त प्रतीत होती हैं परन्तु यह बात कि थोड़े से हवन से वायु का सुधार हो जाता है, हमें युक्तियुक्त नहीं जान पड़ती। तब महर्षि ने दाल में बघार के इसी उदाहरण से उन्हें सन्तुष्ट किया था। स्पष्ट है कि यज्ञ में डालने से घृत के गुण और परिणाम दोनों वृद्धि को प्राप्त होते हैं। हम नित्य देखते हैं कि हमारे घर में चाहे घृत का पूरा टिन भरा पड़ा हो, किन्तु वह वायुमण्डल को सुवासित नहीं कर सकता। उसी घृत में से छः माशे घृत लेकर तीव्र अग्नि में डाला जाये तो पूरे घर को सुवासित कर देता है। स्पष्ट है कि अग्नि में डालने से उसके सूक्ष्म कण वायुमण्डल में फैल जाते हैं।

वायुमण्डल को सुवासित करने की सामर्थ्य गोघृत में है—

गाय के घी में विषनाशन की अपार शक्ति है। संसार में सब प्रकार के विषों को यदि हम केवल एक गोघृत से ही दूर करना चाहें तो निर्विवाद कर सकते हैं घृत हवन की मुख्य हवि है। हविष द्वारा सूक्ष्मीकृत घृत जब अन्तरिक्ष में पहुंचता है तो उसके विष को हर कर उसे विष रहित कर देता है। पं० वीरसेन जी वेदश्रमी का कथन है कि—"गोघृत में विषनाशक शक्ति है। जब कोई विष खा लेता है तो उसका उपचार गोघृत से सरलता से हो जाता है। जब सांप काट लेता है, तो उसको गोघृत पिलाने से जीवन मिलता है। इसी प्रकार इस विषाक्त वायुमण्डल का विष भी गोघृत के द्वारा नष्ट होता है। वायुमण्डल में घृत को व्याप्त करने का एक ही प्रकार है कि अग्नि में घृत की आहुतियां प्रदान कर वायुमण्डल को यज्ञ सौरभ से पूर्ण कर दिया जाये जिससे वायुमण्डल निर्विष हो सके। इससे सरल एवं कम व्यय का अन्य कोई उपाय है ही नहीं।" (द्रष्टव्य जन-ज्ञान आश्विन सम्वत् २०३५ पृष्ठ ५७)

यज्ञ में घृत तभी लाभप्रद होता है, जब उसे अच्छी तरह संस्कारित किया जाता है। इसके लिए महर्षि केसर, कस्तूरी, जायफल, जावित्री, अगर-तगर तथा चन्दन आदि तपे हुए घी में डालने का विधान किया है। इन पंक्तियों के लेखक ने स्वयं घृत में इन वस्तुओं का प्रयोग करके देखा है। इस घृत से यज्ञ करने का आनन्द ही कुछ और है। सर्वत्र दिव्य यज्ञ सौरभ फैल जाता है और एक अपूर्व मस्ती-सी वातावरण में छा जाती है। यज्ञ में भी अच्छी तरह से तपे हुए गरम घृत की आहुतियां देनी चाहिए, जमे हुए घृत की नहीं। ऐसे तपे हुए संस्कारित घृत की आहुति जब यज्ञाग्नि में दी जाती है, तो उसकी शोधक शक्ति और भी कई गुना बढ़ जाती है।

अन्त में हम यही कहेंगे कि पर्यावरण शोधन कार्य, अतिवृष्टि, अनावृष्टि महामारी आदि उपद्रवों की शांति प्रचण्ड अग्नि में तपे हुए संस्कारित घृत के द्वारा ही सम्भव है। यह अन्य किसी भी उपाय से सम्भव नहीं। दुःख है आज इस ओर सब से कम ध्यान दिया जा रहा है और कहा यह जाता है कि जब खाने को ही घी नहीं मिलता तो जलाने को कहां से आये? किन्तु हम भूल जाते हैं कि एक बार खाने को न भी मिले तो भी जलाने (होम करने के लिए) जैसे भी हो अवश्य व्यवस्था करनी चाहिए, क्योंकि घी खाने की अपेक्षा हवन आदि में जलाना कहीं अधिक श्रेयस्कर एवं उपयोगी है। साथ ही हवन सामग्री भी शुद्ध एवं ऋत्वनुकूल हो। हमारा विश्वास है कि यदि हवन सामग्री न भी हो तो, भी केसर, कस्तूरी, जायफल, जावित्री, अगर, तगर, चन्दन चूरा तथा छोटी इलायची कूट कर तपे हुए घी में डाल कर आहुतियां दी जावें तो साधारण सामग्री की अपेक्षा अधिक लाभप्रद है। आवश्यकता इस बात की है कि यह यज्ञ प्रारम्भ करें। क्योंकि पर्यावरण की शुद्धि तो यज्ञ करने से ही होगी, बातें बनाने से नहीं।

शुद्धि संस्कार

आर्यसमाज, साकेत, नई दिल्ली में ७।१।८८ को पुष्प विहार निवासी श्री अली हुसैन का शुद्धि संस्कार हुआ। उन्होंने अपनी स्वेच्छा से वैदिक धर्म को अपनाया। उनका नाम अजय कुमार अग्रवाल रखा गया। यह शुद्धि संस्कार पं० मदनमोहन शास्त्री ने कराया। आर्यसमाज साकेत के अधिकारियों और सदस्यों ने श्री अजय कुमार अग्रवाल को बधाई दी और शुभ कामना प्रकट की। श्री लखीराम कटारिया, प्रधान ने आर्यसमाज की ओर से उनको सत्यार्थप्रकाश ग्रन्थ और सन्ध्या हवन की पुस्तक भेंट कीं। श्री राजेन्द्र पाल गुप्त, मंत्री ने कहा कि वैदिक धर्म उनके जीवन में नई ज्योति और चेतना लाएगा।

समाज और राष्ट्र के सुव्यवस्थित, सन्तुलित एवं सर्वतोमुखी विकास की रक्षा और प्रगति के लिए मानव-मनीषा ने प्रत्येक क्षेत्र में जो कुछ 'समूह' सुसगठित किये हैं, उन्हीं की दायित्व की लघुता-गुरुता के अनुपातिक आधार पर 'समिति' या संस्था की अभिधा प्रदान की जाती है। इन समितियो और संस्थाओ के अपने-अपने लक्ष्य, सिद्धान्त, साधन और कार्यक्रम होते हैं जिनकी परिपूर्ति के लिए अनुयायियों के सक्षम अनुशासन, कार्य विभाजन की सुचारुता युगीन एवं शाश्वत दायित्व बोधपरक मनस्विता का होना तो अनिवार्य ही है, साथ ही कुछ प्रेरणाप्रद ज्ञान-कर्म के समन्वयकर्त्ता प्रेरणा स्रोतो की भी अपेक्षा अंगीकार की गई है। ऐसे ही प्रेरणा-स्रोतों मे लाला लाजपतराय, लाला हरदयाल सुभाषचन्द्र बोस योगिराज अरविन्द घोष लोकमान्य तिलक प्रभृति की पंक्ति में आसन पाने के अधिकारी महात्मा नारायण स्वामी जी भी हैं।

महात्मा नारायण स्वामी में प्रखर प्रतिभा, विशिष्ट विवेचन-क्षमता, संतुलित चिन्तन, अभिव्यक्ति नैपुण्य अगाध आत्म विश्वास, असीम वैदग्ध्य और चिरन्तन अध्ययन-प्रियता सदृश उदात्त गुणो के साथ ही उद्दाम लगन, अविचल उत्साह सफल कर्मठता, लोक-संग्रह-कुशलता, चित्ताकर्षिणी वाग्मिता सदृश सशक्त उपादान भी आकर घुल-मिल गए थे आर्यसमाज के बलिदान तत्पर, अग्निगामी और दिग्दिगन्त व्यापी इतिहास मे हम उन्हें प्रबुद्ध चिन्तक, निष्पक्ष विचारक और सन्तुलित दार्शनिक के रूप मे सदैव अपने स्मृति पटल पर अधिष्ठित किये रहेंगे, इसमें तनिक भी ननु नच के लिए स्थान नही है।

जन्म, आदि —[illegible] राऊ नामक स्थान मे मन्त्र जन्म का दायित्व वहन करने [illegible] श्री सूर्य-प्रसाद के घर मे कनकसम सुन्दर उल्लास का वातावरण बना देने वाला जो शिशु १८६६ ई० को वसन्तपंचमी को उत्पन्न हुआ और जिसे नाम करण-संस्कार की परिधि मे नारायण प्रसाद घोषित किया गया, वही कालान्तर मे हमारा चरित-नायक महात्मा नारायण-स्वामी बना।

महर्षि-साक्षात्कार—शिक्षा के प्रारम्भिक सोपानों को लाघ कर, जब नारायण प्रसाद ने नवीं कक्षा में पदार्पण किया, उसी समय हाथ-

बसन्त पंचमी जिनकी जन्म तिथि है

महात्मा नारायण स्वामी

—भैरवदत्त शुक्ल

रस में महर्षि दयानन्द का शुभागमन हुआ। किशोर वय मे उनके सन्निध्य-सत्संग से नारायण प्रसाद को भले ही कुछ विशेष लाभ होने का सुअवसर नहीं मिल पाया, तथापि उनके साक्षात्कार की ही अमिट छाप उन्हें अनुप्रेरित करने के लिए विशेष प्रभावकारिणी सिद्ध हुई।

आपत्तियो का आक्रमण—जिस समय वे मैट्रिक कर (वर्तमान हाईस्कूल) उत्तीर्ण कर चुके उसी समय उन पर से पिता की संरक्षिणी छाया हट गयी और गृह-पालन का भार अंगीकार करने के कारण, शिक्षा का रथ रोक कर, उन्हें नौकरी का आश्रय ग्रहण करना पडा। उन्होने क्रमशः हाथरस और अलीगढ में शिक्षा के अलक-जालों मे उलझकर सुहावने सपनो का मनोरम महल बना लिया था किन्तु विपत्ति के वज्रपात से आक्रान्त होकर, बाईस वसन्तो के अनंतर, मुरादाबाद की कलक्टरी का क्लर्क बनना पडा। वय के तेईसवें वर्ष के व्यतीत होते ही, वे परिणय-पाश मे आबद्ध होकर गृहस्थ आश्रम मे प्रविष्ट हुए। कभी-कभी महत्वाकांक्षी व्यक्तित्व के पीछे दुर्भाग्य हाथ धोकर पीछे पड जाता है। अभी नारायण प्रसाद ने तारुण्य-सागर को उत्ताल तरगों का सन्तरण भी नही कर पाया था, अचानक ही एक बेटे को जन्म देकर, सहचरी ने साथ छोड कर परम-धाम का मार्ग लिया। कुछ महीनो तक वियोग-वह्नि की लोल लपटों मे झुलसते हुए उन्होने नवजात शिशु के स्नेहपूर्ण लालन को और ध्यान दिया किन्तु वह भी रूठ कर परलोकगामी हो गया।

ऊह पोह की स्थिति—इस विधुर, पुत्र-वियोग जन्य व्यथापूर्ण संक्रमण-काल में नारायण प्रसाद की जो दशा हुई, कोई भुक्तभोगी ही समझ सकता है। इससे अधिक भयावही विकट परीक्षा दूसरी हो ही नहीं सकती। तत्कालीन अधोगत-अधःपतित हिन्दू समाज में पुरुष के लिए दूसरा विवाह कर लेना तनिक भी कठिन नहीं था। अस्सी-अस्सी वर्ष के खूसट वृद्धजनों के दो ही नहीं कई-कई विवाह हो जाया करते थे। छः-छः सात-सात बेटे-बेटियों वाले बाप तक क्रमश दो-तीन-चार विवाह कर लेना न केवल अपना प्रमुख अधिकार समझते थे वरन् गौरव और महत्व का कार्य भी माना करते थे। ऐसे वातावरण में नारायण-प्रसाद कि कर्त्तव्यविमूढता के व्यूह में उलझ गये थे। अच्छी नौकरी होने के कारण, तत्कालीन युवक के लिए परिणय प्रलोभन रोक पाना बहुत ही कठिन था।

कठोर प्रतिज्ञा—ईश्वर के अनुग्रह और सुयोग के कारण, अब तक नारायण प्रसाद का व्यक्तित्व आर्य-सामाजिक वातावरण की ओर थोडा-सा मुड चुका था। समाज-सुधार की मन्द गति-गामिनी हवा के झोंके उन्हें लगने लगे थे। यही कारण है कि उन्होने अविचल भाव से दृढ संकल्प शक्ति का संबल लेकर प्रतिज्ञा की— मैं दुबारा विवाह-पाश में आबद्ध न होकर आजीवन आर्यसमाज की सेवा में संलग्न रहूंगा।' मुरादाबाद निवासी श्री हरसहाय के सत्संग से लाभान्वित होकर वे आर्यसमाज की ओर आकृष्ट हुए थे। जब उन्होंने प्रज्ञा का संबल लेकर 'सत्यार्थप्रकाश' का अनुशीलन किया, तब तो उनके जीवन की दिशा ही परिवर्तित हो गई। उनके रहन सहन मे अप्रत्याशित बदलाव आ गया।

कठोर कर्म-क्षेत्र में अवतरण—नारायण प्रसाद ने गृहस्थ जीवन के सुख-साधनो पर लात मार कर कठोर कर्म-परिसर में उतरने का निश्चय किया। अब वे अध्ययन-मनन, चिन्तन-अनुचिन्तन, संघटन-सुप्रबन्ध प्रभृति कर्म-जालो मे उलझ गये। सामाजिक सुधार, भाषण-प्रवचन, वेद-उपनिषद्-दर्शन आदि से सबद्ध ग्रन्थो के स्वाध्याय में लीन होकर उनका व्यक्तित्व अत्यन्त प्रभविष्णु, प्रकृति अत्यधिक सहिष्णु और जीवन-क्रम उदात्त बन गया।

यही कारण है कि उनके भव्य व्यक्तित्व के संसर्ग से गुरुकुल सिकन्दराबाद, गुरुकुल फर्रुखाबाद और गुरुकुल वृन्दावन प्रभृति आर्य-शिक्षा-संस्थाएँ उत्तरोत्तर प्रगति की ओर अग्रसर हुईं। इन संस्थाओं के सुप्रबन्ध में उन्होंने १९०५ ई० से लेकर १९१९ ई० तक की समयावधि खपायी। वे उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा के उन्नायकों में भी परिगणित किये जाते हैं। प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से उन्होंने न जाने कितनी समाज-सेवी संस्थाओ को लाभान्वित किया। वस्तुत उनकी उपलब्धि बहुमुखी है।

वानप्रस्थाश्रम का वरण—गुरुकुल वृन्दावन के मुख्याधिष्ठाता के रूप में जब मुंशी नारायण प्रसाद ने जीवन के पचास पावस व्यतीत कर लिये तो उन्हें वानप्रस्थाश्रम का ध्यान आया। वे विधिवत् वानप्रस्थी हो गये। उसी समय से उनके नाम के पूर्व महात्मा विशेषण सबद्ध हो गया। वानप्रस्थाश्रम की शास्त्र-विहीत मर्यादा का परिपालन करते हुए अलमोडा के समीप रामगढ के एकान्तपूर्ण परिसर में उन्होंने योग और स्वाध्याय-साधना का उत्तरोत्तर विकास किया। यहीं रहते हुए उन्हें कई योगियों के सामीप्य से बहुत सी यौगिक जटिलताओं के जानने-सुलझाने के बहुमूल्य क्षण प्राप्त हुए। यही कारण है कि उन्हें योग का बहुत ही अच्छा अभ्यास था। ज्वालापुर (हरिद्वार) में गङ्गा नहर के पास अवस्थित आर्य विरक्त आश्रम आज भी सुचारु रूप से गतिशील बना उनकी संस्थापना के सुकृत्य की स्मृति संजो रहा है। उन्होंने वस्तुत भारतीय समाज से विलुप्त प्राय वानप्रस्थाश्रम की उपादेयता और महत्ता का उद्घाटन किया।

सार्वदेशिक सभा का सचालन—१० मई, १९२२ ई० को व संन्यासाश्रम मे प्रविष्ट होकर 'महात्मा-नारायण स्वामी' के पवित्र अभिधान मण्डित हुए। स्वामी श्रद्धानन्द द्वारा प्रेरित किये जाने पर उन्होने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अध्यक्षता विनम्रता के साथ अंगीकार की और कई वर्षों तक सक्षम-सफल सचालन करते रहे।

महर्षि दयानन्द-जन्म-शताब्दी के पुरोधा—१९२५ ई० में महर्षि दयानन्द जन्म-शताब्दी का सम योजन हुआ। मथुरा का समग्र वातावरण आर्य भावनाओं की उदात्त अभिव्यंजना से महक उठा। आर्यसमाज के इतिहास में उस समारोह का उल्लेख्य स्थान है। उसकी असाधारण भव्यता, अप्रतिहत गरिमा और प्रभावोत्पादिनी महिमा के संरक्षण में यदि स्वामी श्रद्धानन्द जी भास्वर प्रकाश स्तम्भवत् माने जायें तो महात्मा नारायण स्वामी को उसका प्राण-स्पन्दन स्वीकार

महात्मा नारायण स्वामी

कर लेना अतिशयोक्ति नहीं है। उसकी सफलता के लिए महात्मा नारायण स्वामी ने अपनी सारी बुद्धि, कर्मठता, लगन, क्षमता और सामर्थ्य खपा दी थी। देश-विदेश के लाखों व्यक्तियों ने उसमें भाग लिया था। उस समारोह की व्यवस्था में एक भी त्रुटि दृष्टिगत नहीं हुई। किसी भी व्यक्ति को रंचमात्र भी कष्ट की अनुभूति नहीं हुई। पदे-पदे सुव्यवस्था, सन्तुलन और प्रभावत्ता का एकछत्र आधिपत्य बना रहा। उससे आर्यसमाज की गरिमा में चार चांद लग गये। इसी प्रकार, नवम्बर, १९२७ ई० में महर्षि दयानन्द निर्वाण शताब्दी के आयोजन का भी सम्यक् दायित्व अपने कंधों पर लेकर महात्मा नारायण स्वामी ने अजमेर की परिधि को आर्य-भावनाओं का कलित केन्द्र बना दिया।

सिंध-सत्याग्रह के अग्रणी—जब मुस्लिम लीग के दुष्प्रभाव से आक्रान्त होकर सिंध शासन ने 'सत्यार्थ-प्रकाश' पर प्रतिबन्ध लगाने की घोषणा की तो उससे समस्त आर्य-सामाजिक सागर में विक्षोभ की लहरें उठने लगीं। सर्वत्र विरोध-प्रदर्शन, भाषण-आयोजन एवं सभा-सचालन सम्पादित किये गये। इतने पर भी सिंध का मुस्लिम शासन अपने दुराग्रह पर अड़ा रहा। अततः दुराग्रह के विरोध में जब सत्याग्रह करने का निर्णय लिया गया तो सब से पहले सत्याग्रहियों की टोली का नेतृत्व महात्मा नारायण स्वामी ने ही सम्भाला। उनकी सिंह-गर्जना से कराची का क्षेत्र गुंजायमान हो उठा और तीन दिन की अवधि के उपरान्त ही सिंध-शासन को झुककर अपनी घोषणा वापस लेनी पड़ी।

हैदराबाद सत्याग्रह के सजग सेनानी—आर्यसमाज का इतिहास वस्तुतः त्याग, बलिदान और अनवरत संघर्ष का इतिहास है। उसी की प्रमुख कड़ी के रूप में हैदराबाद (दक्षिण) का सत्याग्रह माना जाता है। वहां पर हिन्दुओं की संख्या मुसलमानों की अपेक्षा बहुत ही अधिक थी और आज भी है। उस समय वह मुस्लिम रियासत थी और वहां का शासक निजाम भी मुसलमान ही था। वहां पर न केवल आर्यसमाजियों पर ही वरन् समस्त हिन्दू जनता पर अत्याचार किये जाते थे। हिन्दुओं के बहुत से धार्मिक और सामाजिक अधिकारों पर रोक लगी हुई थी। जब कई बार विनम्र अनुरोध किये गये, आवेदन-पत्रों पर आवेदन पत्र प्रेषित किये गये और निजाम के कानों पर जूं तक नहीं रेंगी तो उस कट्टर धर्मान्ध शासक को होश में लाने के लिए रियासत की सीमा पर ब्रिटिश राज्य-सीमा में ही स्थित शोलापुर को केन्द्र बनाकर सत्याग्रह का संचालन करने के लिए हिन्दुओं को विवश होना पड़ा। उसके भी प्रथम सर्वाधिकारी महात्मा नारायण स्वामी ही थे।

इस सत्याग्रह से सम्पूर्ण भारत में हलचल-सी पैदा हो गई। आर्यसमाज के नेतृत्व में निरन्तर छः मास तक चलने वाले इस सत्याग्रह का विशेष महत्व यह भी है कि इसमें रंचमात्र भी अनुशासनहीनता या अव्यवस्था के लक्षण दृष्टिगत नहीं हुए जिसका अधिकांश श्रेय महात्मा नारायण स्वामी को ही है। इससे प्रभावित होकर महात्मा गांधी को भी इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा करनी पड़ी। छः मास की अवधि के उपरान्त निजाम झुकने के लिए विवश हुआ और हिन्दुओं को अपहृत धार्मिक एवं सामाजिक स्वतन्त्रता वापस मिल गई।

सक्षम साहित्यकार—अत्यन्त व्यापृत जीवन होते पर भी, महात्मा नारायण स्वामी अध्ययन-मनन और लेखन के लिए कुछ न कुछ समय निकाल ही लेते थे। यही कारण है कि आर्यसमाज के विभिन्न समारोहों, उत्सव-आयोजनों, शिक्षा-प्रबन्धों और सार्वजनिक आन्दोलनों में उलझे रहने के बावजूद उन्होंने गहन अध्ययन का पथ विस्तृत किये रखा, स्वाध्याय-शीलता अक्षुण्ण बनाये, वैदिक वाङ्मय का अनवरत अनुशीलन किया और आर्यसमाज की मान्यताओं को सुदृढ़ सबल लेकर अत्यन्त उपादेय बहुमूल्य उत्कृष्ट साहित्य की सर्जना भी की।

इसके साक्ष्य के लिए उनके समसामयिक साप्ताहिकों और मासिकों में प्रकाशित लेख और छोटे-छोटे ट्रैक्ट प्रस्तुत किये जा सकते हैं। इनके अतिरिक्त उनके प्रणीत ग्रंथों में निम्नलिखित ग्रन्थ विशेष उल्लेखनीय हैं—

(१) दशों उपनिषदों का भाष्य—इसकी लोक-प्रियता का प्रमुख प्रमाण यही है कि इसका कई बार पुनर्मुद्रण हुआ है। किसी भी संस्करण की एक भी प्रति बचने नहीं पाती। भाषा अत्यन्त सरल है, शैली मनोरम और प्रभावमयी है और विषय-विवेचन अत्यन्त स्पष्टता के साथ किया गया है।

(२) मृत्यु और परलोक—इस ग्रन्थ में विद्वान् लेखक ने भारतीय मान्यता और पाश्चात्य भौतिकवादी सिद्धान्तों का आलोडन-विलोडन करने के अनन्तर मृत्यु और परलोक सम्बद्ध लोक-जिज्ञासा के शमन का स्तुत्य प्रयास किया है।

(३) आत्म-दर्शन—इसमें आत्मा-विषयक संशयों का निराकरण किया गया है।

(४) कर्म-रहस्य—'कर्म' विषयक प्रत्येक तथ्य का संक्षिप्त स्पष्ट उद्घाटन करने में लेखक को पर्याप्त सफलता मिली है।

(५) विद्यार्थी-जीवन-रहस्य—इस पुस्तक में स्वामी जी ने विद्यार्थी जीवन की परिधि में आने वाली समस्त समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया है।

(६) सन्ध्या-रहस्य—सन्ध्या के स्वरूप, विधि विधान, उपयोग आदि पक्षों पर बड़ा ही सुन्दर विवेचन करते हुए लेखक ने इस लघु ग्रंथ में तत्व-ज्ञान ही भर दिया है।

(७) प्राणायाम-विधि इस पुस्तक में योग के प्रमुख अंग प्राणायाम से सम्बद्ध प्रत्येक तथ्य का अनुभव और अध्ययन के आधार पर विवेचन करने में लेखक सफल हुआ है।

प्रचारार्थ परिभ्रमण : अपनी साहित्य-सर्जना द्वारा उन्होंने जो कुछ भी समाज के लिए किया है, उसी का बहुत अधिक महत्त्व है। परन्तु, वे तो अपने जीवन का एक एक क्षण लोक-सेवा पर आहुत करने के लिए तत्पर रहते थे। कोई भी ऐसा महीना नहीं होता था जब वे कहीं न कहीं प्रार्य समाजों को प्रचारार्थ परिभ्रमण न करते हों। ये यात्राएं आसेतु हिमालय भारत के किसी भी क्षेत्र से सम्बद्ध हो सकती थीं। चाहे बिहार हो या बंगाल, आसाम हो या उड़ीसा, पंजाब हो या राजस्थान, दिल्ली हो या उत्तर प्रदेश, सब कहीं कभी न कभी वे पहुंच अवश्य जाया करते थे। महर्षि दयानन्द के मिशन की पूर्ति करने के लिए वे प्राण-पण से सचेष्ट रहते थे।

लोक-प्रियता—उनका स्वभाव इतना सरल, भाषण-शैली इतनी मोहक और विवेचन इतना तथ्य-सम्बलित होता था कि 'सभाओं' या 'समाजों' के वार्षिक उत्सवों पर जिस समय वे भाषण देने के लिए तत्पर होते थे, उस समय पण्डाल खचाखच भर जाया करता था। चाहे आर्यसमाजी हो या पौराणिक, आस्तिक हो या नास्तिक, मुस्लिम हों या ईसाई—सभी उनके उपदेशों से लाभ उठाते थे।

विषय का मण्डन तो वे मौलिकता के साथ करते ही थे किन्तु खण्डन करते समय भी शिष्टता, शालीनता, मर्यादा और गंभीरता के साथ तर्क अकाट्य प्रमाण प्रस्तुत करते-करते इतना प्रभाव जमा लेते थे कि प्रतिपक्षी को भी प्रतिपक्ष की परिधि से निकल कर उनकी प्रशंसा करनी ही पड़ती था।

आदर्श अपरिग्रही और सफल सन्यासी—वैसे व्यक्तिगत जीवन में वे प्रायः अपरिग्रही थे। आवश्यकता से अधिक किसी भी वस्तु या पदार्थ का संचय करना उनकी प्रकृति के सर्वथा विपरीत था। न तो उन्हें कभी खाली बैठने की आदत पसन्द थी, न वे किसी की निन्दा करते थे और न गपशप, हंसी विवाद, चमत्कार चाकचिक्य आदि के ही पास जाते थे।

वस्त्र भोजन निवास के बारे में चिंतन होता तो उन्होंने सीखा ही नहीं था। लोकैषणा तो उन्हें छू भी नहीं सकती थी। अन्य सन्यासियों के समान उन्होंने कभी भी अपना प्रभाव-क्षेत्र बढ़ाने की चेष्टा नहीं की। यदि कभी भी श्रद्धालु जनता की ओर से उन्हें मेवा, फल, मिष्टान्न या बहुमूल्य भेंट आदि देने का प्रयास किया गया, उन्होंने या तो ग्रहण करने से स्पष्ट इन्कार कर दिया या वहीं पर उपस्थित जन-समूह में वितरित कर दिया।

वे अहर्निशि स्वाध्याय, पठन-मनन, आत्म चिन्तन, सिद्धांत-चर्चा, शङ्का-समाधान आदि में ही व्यापृत रहते थे। वे न तो धनाढ्य व्यापारियों के ठौर-ठिकाने की ही खोज करते थे और न उन पर अपना सिक्का ही जमाते थे। सच पूछा जाय तो वे अपरिग्रह-व्रत का कठोर परिपालन करने वालों में थे और आदर्श सन्यासी के रूप में अनुकरणीय चरित्रवान् महात्मा थे। लोक-कल्याण ही उनका चरम-परम लक्ष्य था।

(शेष पृष्ठ ६ पर

(पृष्ठ ५ का शेष)

महात्मा नारायण स्वामी

आर्ष परम्परा के समुद्धारक—स्वामी जी की प्रतिभा ने विभिन्न क्षेत्रों में फैल कर अपने प्रभाव का मूल्यांकन करने में कोर-कसर नहीं रखी। परन्तु यदि उनके सारे जीवन पर सूक्ष्म दृष्टि से अनुशीलन किया जाये तो स्पष्ट प्रतीत होगा कि वे प्रकृति से गम्भीर, वृत्ति से अध्येता और आर्ष परम्परा के समुद्धारक थे। शिक्षा के क्षेत्र में उन्होंने वैदिक गुरुकुल व्यवस्था का व्यावहारिक पक्ष-पोषण किया। दार्शनिक परिधि में वैदिक सिद्धांतों का युक्ति-सवलित मण्डन किया और वैदिक संस्कृति के पोषण के लिए अथक प्रयास करने में कभी पीछे रहना पसन्द नहीं किया।

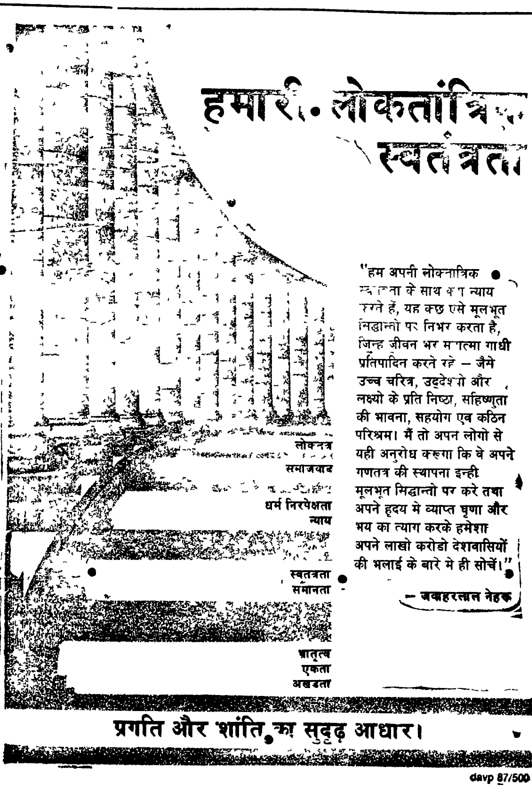
जो कुछ भी उन्होंने सीखा पढ़ा, उसका सार्वजनिक प्रचार-प्रसार करते हुए व्यावहारिक जीवन में भी सदुपयोग किया। इसीलिए उनमें उदारता का मधु था, समष्टिपरक विकास का स्पन्दन था और अहंकार या दर्प का लेशमात्र भी नहीं था। वे शुद्ध अहिंसक होते हुए भी असत्य के विरोध के लिए कटिबद्ध रहते थे, अन्याय-उत्पीड़न का प्रतिरोध करना अपना पुनीत कर्त्तव्य मानते थे और रूढ़ि, अन्धविश्वास और संकीर्णता के घोर विरोधी थे।

पार्थिव काया का परित्याग—स्वदेश-भारत और पाकिस्तान, दो खण्डों में बंट कर जब स्वतन्त्र हो गया और हिन्दू-मुस्लिम दंगों की विकरालता से त्रस्त जन-जीवन त्राहि-त्राहि करने लगा तो उन्हें वातावरण जन्य घुटन में मानसिक पीड़ा की अनुभूति हुई। अन्ततः १५ अक्तूबर, १९४७ ई० को बरेली में पार्थिव काया के सारे बन्धन तोड़ कर उनकी आत्मा अगली जीवन-यात्रा के लिए उन्मुक्त होकर चल पड़ी।

हमारा दायित्व केवल आर्य-सामाजिक परिप्रेक्ष्य में ही नहीं वरन राष्ट्रीय दृष्टि से भी हमारा यह पुनीत दायित्व है कि इस तपोनिष्ठ जागरूक सन्यासी की समस्त साहित्य-सम्पदा का शुद्ध सुन्दर अल्पमोली संस्करण निकाल कर भारत भर में प्रचारित करें और ट्रैक्टों एवं लेखों के संकलन तैयार करें।—उनके प्रति सच्ची श्रद्धा तो उसी समय हो सकती है जब गुरुकुल सिकंदराबाद, गुरुकुल फर्रुखाबाद और गुरुकुल वृन्दावन का अधिक से अधिक विकास कर के, उन्हें दर्शन, योग और वेद-विद्या का राष्ट्रीय केन्द्र बना दिया जाये। इसके लिए प्रतिनिधि सभाओं और 'समाजों' का हम आह्वान करते हैं।

अंधेरी रात में आलोक भर दें!

रात का भारी अन्धेरा
आ गिरा धरती के मन पर।
घोंट डाला बादलों ने,
दम सितारों का गगन पर
बन्द हैं फूल की आँखें,
मौन कलियों के अधर हैं
और विहगों के रसीले,
गान भी जाने किधर हैं?
आह या निस्तब्धता?
मरघट है या संसार है यह?
क्यों न हम इस दुःख के
पतझार पर अंगार धर दें?
साथियो आओ
अन्धेरी रात में आलोक भर दें।
मार्ग से विचलित भटकते
फिर रहे हैं आज राही
लक्ष्य की तो बात क्या,
जिनको नहीं अपना पता ही।
हो के घायल झाड़ियों से,
शूल पर पग धर रहे हैं।
जिनकी आँखें ही नहीं,
वे पथ प्रदर्शन कर रहे हैं।
भय है इनकी दुर्दशा
इनमें न भर डाले निराशा।
है समय आओ
भटके राहियों को हम डगर दें।
साथियो आओ
आओ हम यह नैशतम चीरें,
सवेरा खोज लाएँ।
सूर्य की किरणें क्षितीज पर
फिर मचल कर मुस्कराएं।
मुस्कराएं फूल, कलियों के
जगें अरमान फिर से
और विहगों को
रसीले गान का हो ध्यान फिर से
आप कण कण करवटें लें,
जगमगाए विश्व सारा।
महर्षि के सैनिको,
आओ निशा को प्राप्त कर दें,
साथियो आओ अन्धेरी रात में,
आलोक भर दें।



वैदिक धर्म में दीक्षित

बुधवार दिनांक ६।१।१९८८ को आर्यसमाज मन्दिर में—आर्यसमाज के प्रधान माननीय श्री बी०बी० सिंघल के प्रयास से स्विटजरलैण्ड के नव-दम्पती को वैदिक धर्म में दीक्षित किया गया तथा उनके नाम परिवर्तन कर क्रमशः कु० भारती तिवारी तथा मदनमोहन तिवारी रखा गया। दोनों ने प्रतिज्ञा की कि हम जीवन में अण्डा, मद्य, मांस का कभी भी सेवन नहीं करेंगे और वैदिक धर्मी रह कर सादगीपूर्ण जीवन बितायेंगे।

टंकारा चलो टंकारा चलो

१ आर्यसमाज मन्दिर चूना मण्डी से एक बस १२।२।८८ रात्रि १० बजे चलेगी और २२।२।८८ दिल्ली पहुंचेगी।

२ आने-जाने दैनिक यज्ञ और भोजन का प्रबन्ध बस की तरफ से होगा आने-जाने और भोजन का मार्ग खर्च ६५०/ प्रति सवारी होगा।

३ इसमें आप दर्शनीय स्थान देखेंगे। अजमेर, पुष्कर, नाथद्वार, अहमदाबाद, जामनगर, राजकोट, मोरवी, टंकारा, द्वारका, द्वारकाबेट, पोरबन्दर, सोमनाथ का मन्दिर, कन्या गुरुकुल, उदयपुर, चित्तौड गुरुकुल और चित्तौड का किला तथा जयपुर वगैरा।

४. सवारी अपने पैसे ७।२।८८ तक अवश्य जमा करा दें प्रार्थना है साथ ही अपनी आयु, नाम और समाज का पता भेज द।

५ सवारी को सीट नं० अलाट किया जायेगा अपनी सीट पर बैठेगी और आधी सवारी को सीट नहीं मिलेगी।

कार्य क्रम

१२।२।८८ दिल्ली से रात्रि १० बजे अजमेर
१३।२।८८ अजमेर १० बजे प्रात से पुष्कर राज नाथद्वारा।
१४।२।८८ प्रात नाथद्वारा से अहमदाबाद, राजकोट जामनगर।
१५।२।८८ जामनगर से वाया मोरवी टंकारा (टंकारा में १७।२।८८ तक)
१८।२।८८ टंकारा से द्वारका, द्वारका बेट, पोरबन्दर, सोमनाथ का मन्दिर कन्या गुरुकुल।
१९।२।८८ पोरबन्दर से उदयपुर।
२०।२।८८ उदयपुर से चित्तौड।
२१।२।८८ चित्तौड से जयपुर।
२२।२।८८ जयपुर से दिल्ली रात्रि ९ बजे।

—प्रियतमदास रसवन्त (मन्त्री)

राणा शिवा कब जागेगा ?

—राधेश्याम आर्य विद्यावाचस्पति

यह कैसा—
ताण्डव नर्तन है
दानवता का ?
राम कृष्ण के
गौतम-गांधी के
दया विवेकानन्द के
दिव्य देश में
हाहाकार मचा चतुर्दिक्
आती करुणा पुकारें हैं
गांव-गांव से
गली-गली से
आर्तनाद से हुआ प्रकम्पित
व्योम आज है,
सजा हुआ है
दानवी प्रवृत्तियों का
अनुपम साज,
राणा-शिवा कब जागेगा ?
शंकर अपना नेत्र तीसरा
कब खोलेगा ?
परशुराम कब कर में अपने
फरसा लेकर निकल पडेगा ?
जिससे
धरती की दानवता
धूलि-धूसरित हो जायेगी
मानवता की पावन गरिमा
भूमण्डल पर छा जाएगी
एक विहँसता सा समाज
मानव का
सुख-समृद्धि-सफलता से परिपूर्ण
होगा वसुधा पर।
वैदिक धर्म ध्वजा पावन सी
फहराएगी धरती पर
मानवता की विजय पताका
लहराएगा अवनी-अम्बर,
वेदों के पथ का अनुयायी
होगा सारा विश्व महान्।

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R N. No. 32387/77 Post in N.D.P.S.O on 21, 22-1-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 13[illegible]
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान विना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३[illegible]

(पृष्ठ १ का शेष)

शिवरात्रि, बोध दिवस···

कर ऋषि बोध दिवस के उपलक्ष्य मे कोई भव्य कार्यक्रम प्रस्तुत किया जाना चाहिए ताकि दूरदर्शन वाले उसे ग्रहण कर सके। मैं सभी प्रान्तीय समाजो को इस विषय मे उचित निर्देश दे रहा हू। इससे पूर्व निर्वाण दिवस के समारोह के अवसर पर भी ऐसी ही प्रेरणा की गई थी किन्तु एक दो सभाओं ने ही इस आदेश का पालन किया था। मैं चाहता हू कि आगामी १६ फरवरी को होने वाले ऋषि बोध दिवस के लिए आप हर प्रकार से प्रयत्न कर के दूरदर्शन पर इसे राष्ट्रीय स्तर पर प्रदर्शित कराने मे सहयोग करेंगे। कृपया की गई कार्रवाई से अवगत करवें।

सलग्न केन्द्रीय सूचना एव प्रसारण मन्त्री जी को भेजे गए पत्र की प्रतिलिपि।

माननीय श्री अजीत पाजा जी!

१९वीं सदी में महान् समाज-सुधारक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सामाजिक कुप्रथाओं, रूढिवाद, अंधविश्वास, आडम्बर, बाल-विवाह, मृत काल जैसी प्रथाओं का घोर विरोध करते हुए वेद प्रतिपादित सिद्धातों के आधार पर विश्व के मानव मात्र मे भाई-चारा, राष्ट्र-प्रेम, सदभाव, धार्मिक जागृति के सन्दर्भ में सर्वव्यापक एक ईश्वर की उपासना तथा प्राचीन वैदिक धर्म की स्थापना के साथ १८७५ में आर्य-समाज की स्थापना कर के देश को अंग्रेजी पराधीनता से मुक्त कराने का उद्‌घोष किया था। स्वामी दयानन्द ने ही स्वराज्य शब्द को भारतीय जनता के समक्ष रखा था। उनके इस महान् कार्य की प्रशंसा दादा भाई नौरोजी तथा महात्मा गांधी ने भी की थी।

शिवरात्रि का पावन पर्व हिंदुओं द्वारा विभिन्न रूपों में मनाया जाता है। किन्तु आर्य जगत् की ओर से यह पर्व महर्षि दयानन्द बोध दिवस के रूप में मनाया जाता है। शिवरात्रि पर्व पर ही उन्हें बोध हुआ था और शिव मन्दिर से निकल-कर वह सच्चे शिव की खोज में घर छोड कर चले गए थे।

आगामी १६ फरवरी १९८८ की शिवरात्रि (महर्षि बोध दिवस) पर्व है। हमारा निवेदन है कि इस दिन आर्यसमाज द्वारा संचालित बोध-दिवस के कार्यक्रम को राष्ट्रीय स्तर पर दूरदर्शन से प्रसारित किया जाये। इसके लिए जो सामग्री आदि अपेक्षित होगी, वह हम देंगे।

इस विषय में आर्यसमाज का एक शिष्ट मण्डल आपसे मिलना चाहता है, कृपया तिथि व समय की सूचना देकर अनुगृहीत करें।

(पृष्ठ १ का शेष)

पाक सीमा से···

जाते हैं जहां इनका काला बाजार खुल्लम खुल्ला चल रहा है। खालिस्तान कमांडो फोर्स, खालिस्तान फोर्स, खालिस्तान लिबरेशन आर्मी, बब्बर खालसा व भिंडरांवाले टाईगर के आतंकवादी पाक सीमा के पार ऐसे कई ठिकानों से सम्पर्क रखते हैं जो हथियार सप्लाई करते हैं।

जिंदा, तरसेम सिंह, मोहिंदर-सिंह 'शर्मा' जैसे आतंकवादियों से पूछताछ में कई हथियार तस्करों का पता तो चला है लेकिन हैरानी की बात यह है कि पुलिस अभी तक किसी बडे तस्कर को नहीं पकड़ पाई। हां, 'कोफेपोसा' के तहत २५ छोटे-मोटे तस्करों को जरूर पकड़ा है।

ऋषि बोधोत्सव पर विशेष अंक

शिवरात्रि, ऋषि बोधोत्सव पर हम अपने पाठकों के लिए ऋषि जीवन से सम्बन्धित कुछ अतिरिक्त जानकारी प्रकाशित कर रहे हैं। सभी विद्वानो और पाठकों से अनुरोध है कि महर्षि के सम्बन्ध में अधिक से अधिक जानकारी प्रकाशन हेतु भेजने का कष्ट करें। —सम्पादक

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् DUPLICATE कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ . अंक १५ | रविवार ३१ जनवरी १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | माघ २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य . एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में १० डालर, ३० पौंड

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा सम्पन्न

भगवान देव शर्मा अनेक आरोपों के कारण आर्यसमाज से निष्कासित

सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा का अधिवेशन दिल्ली में २४ जनवरी १९८८ को सभा प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ।

सम्मेलन में एजेण्डे के विषयों के अतिरिक्त निम्न प्रस्ताव भी पारित हुए—

(१) पंजाब में आतंकवादियों की गतिविधियों के विषय में।

(२) आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्संगों, अन्तरंग बैठकों तथा अधिवेशन की बैठकों में शोक प्रस्ताव के पश्चात् केवल शांति पाठ किया जावे।

(३) आर्यसमाज के अन्तर्गत चलने वाली शिक्षण संस्थाओं का नाम केवल दयानन्द आर्य वैदिक विद्यालय अथवा महाविद्यालय ही रखना चाहिए।

(४) आर्यसमाज के भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में गत अन्तरंग २०।१२।८७ में जो निर्णय हुए हैं, उन पर सभी आर्यसमाजें प्रभावी रूप से कार्रवाई करें।

इस अधिवेशन में दो मुख्य निर्णय निम्न प्रकार हुए :

(१) श्री भगवान देव शर्मा को संगठन विरोधी कार्रवाइयों के कारण आर्यसमाज की प्राथमिक सदस्यता से निष्कासित किया गया।

(२) आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब में श्री सेठ योगेन्द्रपाल जी को वैधानिक प्रधान घोषित किया गया।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की २५।१।८८ की अन्तरंग सभा द्वारा श्री भगवानदेव शर्मा को अनुशासनहीनता की पराकाष्ठा कर के छल-कपट युक्त व्यवहार तथा सार्वदेशिक सभा एवम् इसके वरिष्ठ अधिकारियों के विरुद्ध असत्य एवम् मनगढ़न्त झूठे आरोप लगाने तथा सभा प्रधान जी के नाम भेजे गए पत्रों पर सदन में विचार होने से पूर्व उन्हें सभी आर्यसमाजों, आर्यसमाज के समाचार पत्रों, सार्वदेशिक सभा के सदस्यों और दिल्ली प्रशासन के वरिष्ठ अधिकारियों को बदनाम करने की कुचेष्टा करने के कारण सर्वसम्मति से आर्यसमाज की प्राथमिक सदस्यता से निष्कासित कर दिया गया है।

सदन में डा० गोविन्द राय चौधरी द्वारा भगवानदेव के विरुद्ध चारित्रिक दोष सम्बन्धी जो विस्तृत पत्र सभा प्रधान जी को भेजा गया था, वह भी पढ़ कर सुनाया गया। श्री भगवानदेव को इसी प्रकार की अनुशासनहीनता के कारण पहले भी सार्वदेशिक सभा की १५।७।७६ की अन्तरंग सभा द्वारा आर्यसमाज से निष्कासित कर दिया गया था किन्तु उसके द्वारा लिखित में खेद प्रकट करने और भविष्य में ऐसा न करने के आश्वासन पर क्षमा किया गया था।

धर्मवीर हकीकत बलिदान दिवस समारोह पूर्वक सम्पन्न

वक्ताओं द्वारा प्रेरक उद्‌बोधन

२४ जनवरी आर्यसमाज विनय नगर, नई दिल्ली में वेद प्रचार मण्डल दक्षिण के तत्वावधान में धर्मवीर बाल हकीकत राय बलिदान दिवस उत्साहपूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर एक विराट् यज्ञ हुआ। यज्ञ की पूर्णाहुति के पश्चात् विभिन्न स्कूलों के छात्रों द्वारा वीर हकीकत से सम्बन्धित कविताएं, भाषण एवं नाटकों का मंचन किया गया। छोटे-छोटे शिशुओं के मुख से रोमाञ्चित करने वाले शब्द बलिदानी बाल वीर के प्रति श्रद्धा जगा रहे थे। इस अवसर पर श्रद्धाञ्जलि सभा श्री रतनचन्द सहदेव जी की अध्यक्षता में हुई। जिसमें क्षितीश वेदालंकार, श्री यशपाल सुधांशु, डा० शिवकुमार एवं सभा प्रधान डा० धर्मपाल ने अपना सम्बोधन दिया।

डा० धर्मपाल ने कहा—अपने इतिहास को वीर पुरुषों के महान् चरित में, बलिदानियों की गाथा को पढ़ना और सुनना अत्यन्त आवश्यक है। अपने धर्म एवं संस्कृति की रक्षा के लिए प्रेरणा भी हमें बलिदानियों के कार्यों से मिलती है। धर्मवीर हकीकत का बलिदान मतान्ध शासक एवं इस्लामी असहिष्णु प्रवृत्ति के कारण हुआ। इस बालवीर की हत्या के मूक दर्शक सहिष्णु हिन्दुओं को भी दोषी माना जायेगा। दुःख की बात है कि हमारी तथाकथित सहिष्णुता, जो अन्याय के सामने पीठ कर लेने की भी हमारी प्रवृत्ति है वह अब भी हममें विद्यमान है। हकीकत का बलिदान व्यर्थ नहीं गया, पंजाब का हिन्दू समाज इस घटना से हिल गया। उसके बाद घटनाओं से पता चलता है पंजाब में अन्यायी मुस्लिम शासन का अन्त हुआ। और इससे बढ़कर हिन्दुओं में अपनी संस्कृति और धर्म के प्रति कट्टरता बढ़ी। इसलिए याद रखें बलिदान देश और धर्म में जान फूंकने का काम करते हैं। हमें बलिदानी वीरों को सदा याद करते रहना चाहिए।

आर्य केन्द्रीय सभा के महामन्त्री डा० शिवकुमार ने विद्वत्ता पूर्ण झकझोरने वाला सम्बोधन दिया। उन्होंने धर्म और संस्कृति गौरव गरिमा का भी बखान किया। श्री क्षितीश ने कहा—जोर देने पर, और प्रलोभन देने पर भी, भय दिखाने पर हकीकत अपना धर्म छोड़ने को उद्यत नहीं हुआ, बल्कि मरना स्वीकार कर बलिदान हो गया। दूसरी तरफ कालीचरण बंगाल के सैनिक युवक का भी उदाहरण है जो बादशाह की बेटी को हिन्दू बना लेने की प्रार्थना उस समय के ब्राह्मण पुजारियों के पास जाकर करता रहा और उसे हिन्दू समाज ने अपनाया नहीं बल्कि अपमानित कर निकाल दिया, जिसका परिणाम वह मुसलमान बना। इतिहास में कालीचरण,

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

सर्व समृद्धि वर्षक परब्रह्म

महात्मा दयानन्द वानप्रस्थ

ओ३म् क्वा३स्य वृषभो युवा तुविग्रीवो अनानत । ब्रह्मा कस्त सपर्यति ॥ साम० १४२

ऋषि- प्रगाथ , काण्व । देवता इन्द्र । छन्द- गायत्री—

१ वृषभ - भक्त जब अपने ऊपर अनन्त उपकारों को अनायास स्वत होते देखता है तो सोचता है, कि कोई कार्य कारण बिना नही होता । यह प्राण प्रकाश पानी, भोग पदार्थ, हर मौसम को फसलें फल अनन्त मिल रहे हैं। कौन है दानी जो अपनी उदारता से भेज रहा है ?

यह केवल पृथ्वी ऊपर ही नही, पृथ्वी के भूगर्भ में अनन्त सम्पत्ति पडी है, जितनी हम निकालते हैं, तो भी समाप्त होने का प्रश्न ही नही।

उपमा—बेटा दुकान से आया तो घर पर कोई नही था। उसे बडी भूख लगी हुई थी। रसोई में गया, आश्चर्य मे पडा, कि बहुत मन पसद गुलाब जामन बने पडे थे। ख्याल आया यह मेरे मन पसद गुलाब जामन मेरी माता जी के सिवाय हमारे घर में और कोई नही बना सकता। मां जी ने आने का पत्र नहीं लिखा—फिर विचार आते हैं, कितना स्नेह है, कि मेरी मन पसद चीज तैयार कर रखी। माता जी के दर्शन नहीं किए, पर कार्य को देख मा का स्नेह उमड पडता है, मां की तसवीर सम्मुख है और जीवन में मिला मा का प्यार, सेवा, एक-एक करके दृश्य सामने आ रहे हैं, और और श्रद्धा के आसू निकल पड़े। यहा तक कि भूख का ध्यान भी छूट-सा गया, अनायास मुह मे निकल पडा, मेरी प्यारी अम्मा मेरी प्यारी अम्मा।

२ युवा—यह [illegible] है, इन सब मे [illegible] शक्ति है।

१ (क) सूर्य मे कितनी शक्ति है कि सारे सौर [illegible] रहा है। कितना प्रकाश देता अन्धकार को मिटाता है [illegible] हटाने का एकमात्र साधन प्रकाश। फिर कमाल [illegible] है कि [illegible] देर [illegible]।

(ख) किस तरह समुद्र से अनुपयोगी जल उठाता व शुद्ध कर के अमृत तुल्य बरसाता है।

(ग) बिना हमारी प्रार्थना के फसलों को फलो को पकाता, उपयोगी बनाता है।

(२) समुद्र कितना अगाध जल है, कितनी लहरें, तूफान उठते हैं। फिर यह रत्नाकर भी है। कीमती मोती, इस पानी के मीलो नीचे तेल की नहरें बह रही हैं। ये अन्दाज सम्पत्ति है, बनाने वाला कारीगर, कारखाना नजर नहीं आता। क्व स्य कहां स्थित हो, कहां छिपे हो।

(३) पृथ्वी पहाड कब बनाते हो। अनखुट भण्डार किस मसाले मे बनाते हो। हर देश की मिट्टी का रग अलग-अलग। जलवायु का प्रभाव अलग-अलग।

(४) वायु—मरुत्-जीवनाधार है। कितनी शक्ति है। आंधी का मुकाबला नहीं कर पाते। हमारी मर्जी से नहीं चलती। फिर किसका विधान है।

यह प्राण किसके आदेश से आ-जा रहे हैं। हम लेना चाहते हैं तो कौन इनके आने-जाने को स्थगित कर देता है? लाख कोशिश पर एक भी अधिक नहीं मिल पाता।

(५) अग्नि—जब तक यह अग्नि न आए, तो किसी भी स्थान पर गति सम्भव न हो। इन अग्नियो में अग्नित्व किसका है ?

इन शक्तियों को देखकर विस्मय होता है कि इनका आधार नहीं सूझता।

३ तुविग्रीवा—विराट् स्वरूप बन हम सब जीवो को देखते हैं। कर्मफल दाता है। हम कितना जोर लगा लें परन्तु अनुकूलता चली जाती है, प्रतिकूलता आ ही जाती है। जवानी चली जाती है और बुढ़ापा आ ही जाता है। फिर कर जाता ही नहीं, मरघट तक साथ रहता है।

४ अनानत—महान् शक्ति, भौतिक जगत् की शक्तियो के अतिरिक्त और भी विचित्र शक्तियां है।

(१) मन-विचार शक्ति, कितनी [illegible], कोई रुकावट नहीं।

गिराए तो राक्षस बना दे, उठाए तो ऋषि बना दे।

सकीर्ण हो तो सन्तान न समाए। विशाल हो तो ससार इसमें समा जाए।

उपमा—सकीर्णता अपवित्रता थी तो मुन्शीराम था सब दोष थे।

परिवर्तन आया तो श्रद्धानन्द ऋषि बना। गुरुकुल के लिए अपनी कोठी व अपने पुत्र ही दे डाले। अपने प्राण हिन्दु जाति के लिए दे दिए।

(२) बुद्धि-मेधा-प्रज्ञा-ऋतम्भरा-देव बुद्धि उसी परमेश्वर निराकार सर्वशक्तिमान् सर्वज्ञ अजर अमर से मिलता है। अनुभूति करा दे। जो फिसले तो शोक भय मोह चिन्ता का ग्रास तो जीवन काल में बनाए रखे और मरने के उपरान्त चौरासी के चक्र में पटक दे।

(३) धैर्य—सहनशक्ति, विवेक, आत्मबल, अनन्य भक्ति, आत्म-समर्पण, पूर्ण विलीनता। यह सीढ़ियां हैं, देवयान मार्ग की उन्नति स्तम्भ की सूक्ष्मदर्शी विद्वान् महान् विस्तार बताते हैं। इन सबका अलग-अलग। इन सबकी उपलब्धि परमेश्वर द्वारा पात्रों को ही होती है। इनको पाने के लिए दीर्घकाल तक साधना करनी होती है। फिर इनकी प्रभु देव बडी कठोर परीक्षाएं भी लेते हैं। उत्तीर्ण होने वालों को निहाल भी करते हैं।

यदि अभी तक न पहुंच पावें तो मन्त्र परामर्श देता है।

५. कस्तं ब्रह्मा सपर्यति—जो ब्रह्म ज्ञानी, उस सत्व स्वरूप परमेश्वर की भलीभांति उपासना करते हैं, उस परमेश्वर में विचरण करते हैं, उसके इर्द-गिर्द घूमते आज्ञाओं का पालन करते हैं। वेद मार्ग का अनुसरण करते हैं उसकी रजा में रजामन्द रहते हैं। ऐसे ज्ञानी तपस्वियों के चरणों में बैठ सहवास कर, उनकी सेवा का सौभाग्य प्राप्त कर, उन जीवन ज्योतियों से अपने अन्दर प्रकाश कर। अन्धकार को मिटा ठोकर खाने से बच, प्राकृतिक सौन्दर्य के मायाजाल, आकर्षण से ऊपर उठकर अपने कर्त्तव्य को समझ निभा। छुट्टी के सवालों को हल करने में शेष जीवन को जुटा, जैसे काष्ठ के संग लोहा तर जाता है तेरा भी कल्याण हो जावेगा।

निष्कर्ष—

(१) परमेश्वर के दान व उपकारों का ध्यान कर।

(२) परमेश्वर के कर्मफल दाता स्वरूप का ध्यान कर।

(३) परमेश्वर के अन्तर्यामी होने व अन्दर के खजानों का विचार कर।

(४) यदि परमेश्वर तक विचारने की योग्यता न हो, तो किसी ज्ञानी तपस्वी ब्रह्मज्ञानी की सेवा में रह कर, अपने नश्वर जीवन को सार्थक बना ले।

न्यूटन का नियम गलत है ?

बम्बई १८ जनवरी। 'ब्रह्मांड का हरेक कण एक दूसरे को अपनी ओर खींचता है।' न्यूटन का गुरुत्वाकर्षण का यह नियम गलत साबित कर दिया गया है। यह दावा हुबली के एस्ट्रोफिजिक्स रिसर्च सेंटर के वैज्ञानिक नवीन शाह का है।

नवीन शाह ने २३ साल के अध्ययन के बाद दावा किया है कि स्टैलर बाडीज (यानी सूर्य और और तारे) बाहरी पिंडों पर प्रतिकर्षण बल (फोर्स आफ रिपल्शन) लगाते हैं। जब कि ग्रह अवस्था के पिंडों (नान स्टैलर बाडीज) में गुरुत्वाकर्षण बल काम करता है। इस तरह साबित होता है कि तारे आकर्षण बल लगाते हैं और ग्रहों मे गुरुत्वाकर्षण बल काम करता है। इन सबो की मात्रा के अनुपात के मद्देनजर ब्रह्मांड में कुल मिला कर गुरुत्वाकर्षण बल नहीं बल्कि प्रतिकर्षण बल काम करता है।

श्री शाह की परिकल्पना है कि सूर्य के प्रतिकर्षण और ग्रहो के गुरुत्वाकर्षण के एक साथ होने के कारण सौरमण्डल स्थिर बना है।

शाह के नये सिद्धांत के मुताबिक तारों से तापीय-एटमी प्रतिक्रियाओं के जरिये ५० फीसदी ऊर्जा ऐसी निकलती है जो प्रतिकर्षण बल लगाने का काम करती है। बाकी ऊर्जा सिर्फ ताप और विद्युत् चुम्बकीय विकिरण के रूप में निकलती है। गुरुत्वाकर्षण बल की तुलना मे तारों का वह प्रतिकर्षण बल बहुत ज्यादा होता है। इसलिए जब कोई पिंड या सूर्य या तारे के पास से गुजरता है तो वह आकर्षित न होकर दूर हट जाता है। वैज्ञानिक का निष्कर्ष है कि न्यूटन और आइंस्टीन के नियम सिर्फ पिंडों पर लागू होते हैं।

प्रभु की ओर

—श्रीमती लता बन्सल, साकेत, नई दिल्ली

आध्यात्मिक जगत् में विचारकों के जिन पर चर्चा की है, वे मुख्य रूप से तीन हैं—मैं क्या हूं ? जगत् क्या है ? और भगवान् क्या है ? यही वे मुख्य विषय हैं, जिनका जानना जीवन की पूर्णता व सफलता के लिए अनिवार्य है। मैं क्या हूं, यह प्रत्यक्ष है, किन्तु इसके तत्व को भी हमें जानना चाहिए। जगत् क्या है—यह भी सभी जानते हैं। अब तीसरा प्रश्न है - भगवान् क्या है ?

संसार का एक बड़ा भारी जन-समुदाय भगवान् की खोज में लगा हुआ है और उस तक पहुंचना चाहता है। किन्तु वह प्रत्यक्ष तो है नहीं, इसलिए उसकी सत्ता में दृढ़ विश्वास और निश्चय ही उसकी उपासना को सफल बना सकते हैं। यदि हमारी बुद्धि यह स्वीकार करती है कि घड़ी के अनेक पुर्जे हैं, जिन से वह चलती है किन्तु उसका निर्माण किसी बुद्धिमान् व्यक्ति ने किया है, तो हमें यह भी मानना पड़ेगा कि सृष्टि में सूर्य, चन्द्र, तारे, ग्रह-उपग्रह सब अनादि काल से बिना एक दूसरे से टकराये नियमानुसार भ्रमण कर रहे हैं तो अवश्य ही इनके पीछे कोई बुद्धि काम कर रही है। वह अदृश्य व महान् शक्ति 'भगवान्' ही है। वह शक्ति ही इस संसार का संचालन कर रही है।

केनोपनिषद् का मुख्य विषय ब्रह्म की विस्तृत व्याख्या ही है। ब्रह्म का हमारे जीवन के साथ तथा संसार के साथ क्या सम्बन्ध है, इसको बताते हुए केनोपनिषद् का ऋषि कहता है—

श्रोत्रस्य श्रोत्र मनसो मनो यद्
वाचो ह वाचꣳ स प्राणस्य प्राणः।
चक्षुषश्चक्षुरतिमुच्य धीराः
प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति ॥

वह शक्ति ही हमारे मन का मन, प्राणों का प्राण, तथा वाणी की वाणी है अर्थात् मन, प्राण, वाणी आदि उसी से शक्ति ले रहे हैं। वह परब्रह्म पुरुषोत्तम ही इन सब का प्रेरक है। उसको जानकर ज्ञानीजन जीवन्मुक्त हो जाते हैं।

गीता के १३वें अध्याय में श्री कृष्ण जी कहते हैं—

ज्ञेयं यत्तत्प्रवक्ष्यामि
यज्ज्ञात्वाऽमृतमश्नुते ।
अनादि मत्पर ब्रह्म
न सत्तन्नासदुच्यते ॥
(भ०गी० १३, १२)

अर्थात् वास्तविक ज्ञान है परमात्मा को जानना। इस को जानने पर परमानन्द की प्राप्ति होती है और जीवन अमृतमय बन जाता है। वह परम ब्रह्म अनादि है। दिखाई न देने के कारण असत् है पर क्योंकि 'है', इसलिए सत्य भी कहा जा सकता है।

परमात्मा के विषय में इतना जान लेने के पश्चात् हमें यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि संसार में कोई भी व्यक्ति अपना मालिक नहीं।

हम मालिक इसलिए नहीं, क्योंकि हमारे हाथ में कुछ नहीं है। परमात्मा के हाथ में सब कुछ है, इसलिए वह मालिक है। ईशोपनिषद् का पहला मन्त्र इसी विषय की पुष्टि करता है।

हम सुख-दुःख के उतार-चढ़ाव के अधीन हैं। किन्तु फिर भी शास्त्र कहते हैं कि तुम अपने मालिक स्वयं हो सकते हो, किन्तु कब ? प्रकृति को अपने अधीन कर के। अभी तो हम प्रकृति के ही दास हैं। प्रकृति के नियम अटल हैं। किन्तु यह सब न जानते हुए हम सर्दी-गर्मी के साथ-साथ सुखी-दुःखी होते रहते हैं। यदि मुझे पता चल जाये कि यह जड़ प्रकृति ही नहीं, मैं भी उसके अधीन हूं और जब भी मैं उसके नियम के बाहर जाता हूं, तो दुःख उठाता हूं। सो यदि मैं चाहूं तो प्रकृति को अपने अधीन कर सकता हूं। मुझे यह ज्ञान होना चाहिए कि मैं 'आत्मा' हूं और इन सब से ऊपर हूं, तो हम बहुत से दुःखों से छुटकारा पा जायेंगे।

हमें यह पता होना चाहिए कि वह हमारा मालिक ही नहीं, मित्र, बन्धु, सखा व सब से बढ़ कर पिता भी है। पिता किसी को दुःख नहीं देता, जो कुछ दुःख है, वह हमारी अपनी गलती का परिणाम है।

जिस परिवार को हम प्रेम करते हैं, उसके लिए दिन-रात लगे रहते हैं। जब हम दावा करते हैं और यह दिखावा करते हैं कि हम प्रभु-प्रेमी हैं, तो प्रश्न उठता है कि उसके लिए हम क्या करते हैं ? हमारे जीवन का उद्देश्य था कि जीवनयात्रा में निरन्तर आगे बढ़ें। किन्तु केवल मात्र हरकत हो रही है और कुछ नहीं। आजकल प्रायः हमारी श्रद्धा तथा सेवा संस्थाओं संगठनों तथा आश्रमों आदि से ही सम्बन्धित रह गई है। उन में ही हम लगे रहते हैं और अपने उन्हीं कार्यों में सन्तुष्ट रहते हैं। आध्यात्मिक जीवन की ओर हमारा ध्यान नहीं जाता। हम सांसारिक वस्तुओं का सहारा ढूंढते हैं, किन्तु ये सब सहारे धीरे-धीरे कर के खतम हो जाएंगे। केवल मात्र एक 'उसका' ही सहारा साथ रहेगा। उपनिषद् ने भी कहा है—

एतदालम्बनं श्रेष्ठ-
मेतदालम्बनं परम् ।
एतदालम्बनं ज्ञात्वा
ब्रह्मलोके महीयते ॥

यह ओ३म्कार ही परब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति के लिए सब प्रकार के आलम्बनों में से सब से श्रेष्ठ आलम्बन है और यही चरम आलम्बन है, इससे परे और कोई आलम्बन नहीं है अर्थात् परमात्मा के श्रेष्ठ नाम की शरण हो जाना ही उसकी प्राप्ति का सर्वोत्तम एवम् अमोघ साधन है। इस रहस्य को समझ कर जो साधक श्रद्धा और प्रेमपूर्वक इस पर निर्भर करता है, वह निस्सन्देह परमात्मा की प्राप्ति का परम गौरव लाभ करता है।

सम्पादक के नाम पत्र

'आर्यसन्देश' का 'महर्षि दयानन्द निर्वाण विशेष अंक', १८ अक्तूबर, १९८७, मेरे सामने है। 'कालजयी राष्ट्रनिर्माता देव दयानन्द' पर जो सम्पादकीय आपने लिखा, मैंने उसे आद्योपान्त पढ़ा। ऋषि दयानन्द की वायसराय से जो वार्तालाप हुई उससे महर्षि कितने बेबाक और निडर थे, यह प्रतीत होता है। लार्ड नार्थ ब्रुक अवाक् रह गये जब उनको पता चला कि यह फकीर अंग्रेजी शासन की प्रशंसा न कर के उनके विरोध में बोलता है, तो उन्होंने गुप्तचरों को स्वामी जी के पीछे लगा दिया, ताकि उनकी सभी गतिविधियों की जानकारी सरकार को मिलती रहे। आपके यह विचार खोजपूर्वक हैं कि भू० पू० लोकसभा अध्यक्ष अनन्त शयनम आयंगर महर्षि दयानन्द को राष्ट्रपितामह कह कर पुकारते थे एवं गांधी जी को 'राष्ट्रपिता'। इस प्रकार श्रीमती एनिबिसेन्ट का यह मत कि भारत को मानसिक दासता से मुक्त कराने वाले स्वामी दयानंद प्रथम व्यक्ति थे, एवं यदुनाथ सरकार का यह विचार कि आने वाली पीढ़ी को जीवन व विचारधारा देने वाला लंगोटबन्द दयानन्द है, यह सिद्ध करता है कि सम्पादकीय लिखने के लिए आपने काफी ग्रन्थों को उलटा-पुलटा। यदि आपके नाम के साथ 'रिसर्च स्कालर' की संज्ञा जोड़ दी जाए तो इसमें अतिशयोक्ति न होगी।

आचार्य शिवराज मौलवी फाजिल का लेख पृष्ठ ७ पर लिखा पठनीय है। उनका यह कहना कि आज के करोड़ों मुसलमान अरब, ईरान देशों से नहीं आए, अपितु हमारी हिन्दु जाति के वंशधर हैं और हमारी ही कमजोरियों के कारण हम से बहुत दूर चले गए हैं, बहुत हद तक सत्य है।

आपके आने के पश्चात् 'आर्य-सन्देश' का स्तर ऊंचा उठ रहा है, यह मेरी धारणा है। भविष्य में आप भी ऐसे ओजस्वी सशक्त एवं प्रेरणादायक विचार देते रहेंगे इसी कामना के साथ।

अब सोयेंगे हम सारी रात

जागरेब, १८ जनवरी (तानजुग और प्रेट्र)। खर्राटों और मच्छरों का नींद की दुनिया से नामोनिशान मिटा देने का इन्तजाम हो गया है। युगोस्लाविया के एक डाक्टर फाजो कजफेज ने खर्राटों को शांत करने की दवा बना ली है जो अप्रैल तक बाजार में आ जाएगी। इसका ब्रांड नेम 'बोकोस्लिप' है।

उधर विश्व स्वास्थ्य संगठन की पत्रिका 'वर्ल्ड हेल्थ' ने छापा है कि अगर शंक्वाकार मच्छरदानियों में 'पेर्मेथिन' नामक कीटनाशक लगा हो तो मच्छरों से पूरी मुक्ति मिल सकती है। यह दवा मनुष्यों के लिए पूरी तरह सुरक्षित है और मच्छर इसके जरा से सम्पर्क में आते ही मर जाएंगे। ये मच्छरदानियां अभी बाजार में नहीं आई हैं पर पेर्मेथिन' का गाढ़ा मिश्रण बाजार से लेकर कोई भी अपनी मच्छरदानी को मच्छर विरोधी दुर्ग में बदल सकता है।

डा० कजफेज का कहना है कि ४५ साल से ऊपर का हर दूसरा

(शेष पृष्ठ ५ पर

प्रकृति में तो वसन्त है पर जीवन में वसन्त कहां ?

—चमनलाल, अशोक विहार

मानव जाति के प्रत्येक वर्ग में अपनी-अपनी परम्पराओं व मान्यताओं के अनुसार पर्व-त्योहार मनाये जाते हैं। यह समाज की चेतना का एक जीता जागता स्वरूप है। इनमें आबाल-वृद्ध व्यक्तियों के मनोरञ्जन के साथ समाज के ऐतिहासिक सांस्कृतिक एव बौद्धिक प्रसग अन्तर्निहित रहते हैं। प्रतिवर्ष इनका स्मरण तथा अनुष्ठान व्यक्ति में उल्लास व साहस को उत्पन्न कर जीवन की गति में एक नई चेतना को जगाता है। मानव जीवन में इनका बडा महत्व है और हमारी सस्कृति व सभ्यता के अभिन्न अग हैं। इसमें लेशमात्र भी सन्देह नहीं है कि यदि इन त्योहारों पर्वों को हमारे जीवन से निकाल दिया जावे तो आर्य वैदिक सस्कृति का विशाल भवन क्षण भर में धराशायी हो जावेगा। याद रखिये कि वास्तव में यही पर्व हैं जो वर्षों की गुलामी दासता और विदेशियों के घोर अत्याचारों के बावजूद भी हमारी प्राचीन सभ्यता और सस्कृति को जीवित रख पाये हैं, जबकि अन्य च.रों सभ्यताओं (यूनान, रोम, चीन और मिस्र) का आज चिह्न तक भी शेष नहीं है। महाकवि डा० इकबाल ने एक प्रसग में ठीक ही तो कहा था—

यूनान, मिस्र, रोमा
मिट गये जहान से,
कुछ बात है कि हस्ती
मिटती नहीं हमारी।
वर्षों रहा जमाना
जहरो सितम हमारा,
तो भी बाकी है
नामो निशां हमारा ॥

भारतीय वैदिक समाज में और अन्य वर्गों की अपेक्षा पर्वों की सख्या पर्याप्त अधिक है। उनमें से एक वसन्त पञ्चमी का महान् पर्व-त्योहार भी है। जो प्रति वर्ष मकर सक्रान्ति के कुछ ही दिन पश्चात् माघ शुक्ला पञ्चमी को बडे उल्लास के साथ प्राय समस्त भारत मे मनाया जाता है। सारे विश्व में भारतवर्ष ही एक ऐसा अद्भुत भूखण्ड है जहा छ ऋतुओं का वास है जबकि अन्य सब देशों में कहीं एक और दो, तीन से अधिक नहीं पाई जाती। और इन्हीं ऋतुओं के कारण यह देश प्राकृतिक सौन्दर्य धन से सुसम्पन्न कहा जाता है। ब्राह्मण ग्रन्थों में द्वादश आदित्यों का विशद वर्णन उपलब्ध है। यजुर्वेद २२।३२ में इन द्वादश आदित्यों के नाम हैं—

मधु-माधव, शुक्र शुचि, नभ-नभस्य, इष-ऊर्ज, सह-सहस्य, तप-तपस्य।

यही दो-दो आदित्यों के छह जोडे छह ऋतुओं के द्योतक हैं। जो वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त और शिशिर नामो से सर्वविदित हैं। इन का वर्णन हमारे साहित्य में बडे काव्यपूर्ण ढग से किया गया है। भारत के शेक्सपीयर महाकवि कालीदास ने इन मोहक ऋतुओं का वर्णन अपने ग्रन्थों में बडी सुन्दरता से किया है। वैदिक साहित्य में इन ऋतुओं को 'रम्या' कहा गया है। जो सामवेद (मन्त्र ६१६) में इस प्रकार है—

वसन्त इन्नु रन्त्यो ग्रीष्म इन्नु रन्त्य. वर्षाण्यनु शरदो हेमन्तः शिशिर इन्नु रन्त्य.।

अर्थात् हे ईश्वर! तेरी व्यवस्था से यह छह की छह ऋतुए अपनी-अपनी समय पर आती हैं और अपना अपना मनमोहक नृत्य करके चली जाती हैं। प्रभु ने इनको मानव के मन प्रसाद के लिए ही बडी रमणीयता युक्त बनाया है। यही मानव जीवन की जडता और नीरसता को दूर करने में सहायक होती हैं। इन सबका अपना अपना -विलक्षण स्वरूप है और बडा महत्वपूर्ण है। इन में सर्वश्रेष्ठ ऋतु 'वसन्त" मानी जाती है जिससे इस के विशेष वैभव पूर्ण होने के कारण ऋतुराज भी कहते हैं। आर्यों (हिन्दुओं) के पचांग के अनुसार वसन्त ऋतु के महीने चैत्र और वैशाख के होते हैं। यद्यपि यह ऋतु जैसा कि पहले कहा जा चुका है प्रतिवर्ष माघ शुक्ला पञ्चमी के अवसर पर आती है, अर्थात् इस ऋतुराज के स्वागत के लिए प्रकृति चालीस दिन पहले ही से तैयारी आरम्भ कर देती है। इस समय प्रकृति अपने पूरे यौवन में पूर्ण कला में होती है। जितने रग-बिरंगे फूल इस मौसम में पाये जाते हैं उतने अधिक अन्य किसी भी ऋतु में देखने को नहीं मिलते। इसीलिए तो कहावत है कि हसती हुई पृथ्वी को चित्रित करने के लिए मानो प्रकृति फूलों की पिटारी खोल देती है। सच तो यह है कि विविध प्रकार के फूल ऋतुराज वसन्त के आगमन की सूचना के द्योतक हैं।

इस समय लहराती हुई खेती और धीरे-धीरे चलती हुई सुगन्धित वायु और हसता हुआ वन प्रदेश सभी आबाल वृद्ध के मनों को मोह लेते हैं। इस समय शीत का प्रकोप कम हो जाता है और सारी प्रकृति देवी वसन्ती बाना पहने होती है। खेतों मे सरसों के वसन्ती रङ्ग के फूलों की चादर सी बिछी होती है और वनों में ढाक के फूलों की लाल आभा छा जाती है। उद्यानों, बागीचों में गेंदे के पीले-पीले फूलों की कुछ अपनी ही निराली शोभा होती है। सूरजमुखी के सुन्दर-सुन्दर वसन्ती रङ्ग के फूलों की कुछ अपनी ही आभा होती है। गुलाब अपनी गुलाबी बहार में मस्त है तो सफेद कुन्द की कलिया दात दिखलाकर हसती हुई प्रतीत होती हैं। कमल अपने पुष्प नेत्रों से मानो प्रकृति के आभा सौन्दर्य को देख फूला नहीं समाता। बागों में आम के वृक्षों पर आये बौर की अपनी ही कुछ निराली छवि होती है। उस पर मडराते हुए भौरों की झीनी-झीनी गूज और शाखाओं पर बैठी कोयल की मीठी कूक उसकी शोभा को चार चांद लगा देती है। यही नहीं, इस समय वनस्पतियों में भी नये रस का सचार हो जाता है, और समस्त वायुमण्डल मद-मोद से भरपूर हो जाता है। इस प्रकार मानो प्रकृति देवी सजी-सजाई नव विवाहित दुल्हन की तरह प्रतीत होती है। इस के साथ ही चेतन जगत् में भी कुछ अनोखा सा जीवन दीख पडता है। शीत के कारण धीरे-धीरे सुन्दर पक्षी जो कहीं अज्ञात स्थान पर छुप कर बैठ गये थे, वे भी वसन्त के आने पर मानो उस ऋतुराज का स्वागत करने हेतु फिर से खुले वृक्षों पर आ बैठते हैं। इसलिए सब दिशायें-प्रदिशायें सुरीली मीठी आवाजों वाले नाना प्रकार के पक्षियों के कलरवों से गूज उठती हैं। ऐसे सुन्दर वातावरण में प्रकृति के ही पचभूतों से बना सर्वश्रेष्ठ प्राणी (मानव) भला ऋतुराज के स्वागत के लिए क्योंकर पीछे रहता। अत. सब नगरों एवं ग्रामों में भी आबाल वृद्ध, स्त्री-पुरुष प्राय सभी वसन्ती परिधान में दिखाई पडते हैं। इस समय मानव के मन की अवस्था कुछ और ही होती है। स्वास्थ्य की दृष्टि से भी यह ऋतु बडी उपयोगी है। वैदिक साहित्य में आया है कि इस मौसम में भ्रमण करना, व्यायाम और तेल मर्दन करके स्नान करना अति स्वास्थ्यप्रद है। महर्षि चरक ने "वसन्ते भ्रमण पथ्यम्" कहा है।

हां! प्रकृति में तो वसन्त आ गया, परन्तु ओ! भारत के मानव तुझे क्या कोहरा लग गया कि इस देश के किसी भी निवासी में इस सुन्दर ऋतुराज का कोई भी चिह्न दिखाई नही देता। सभी जगह मायूसी उदासी, मुर्दनी और आतङ्क छाया हुआ है। यदि कहीं वसन्त की सुगन्धित मोहक समीर शरीर को छू भी जावे तो दुखी हृदय से तुरन्त आवाज आती है—

न चल ए न कहते वादे बहारी,
राह लग अपनी,
तुझे अठखेलियां सूझे हैं,
हम बेजार बठे हैं ॥

और यदि किसी अवसर पर कुछ हँसी भी आ जावे, तो वास्तव में तो गमे दिल को छुपाकर ही झूठी हँसी का प्रदर्शन ही करना पडा। किसी ने बडा सुन्दर ही तो कहा है—

अपने गम को भी,
खुशी का मर्तव देना पडा।
कसकते गम पर भी,
रसमन मुस्करा देना पडा।
हँसने को तो हँस रहे हैं,
लेकिन यह कौन जाने।
कितने ही गम छुपे हैं,
इस मजबूरी की हँसी में ॥

प्रकृति में तो वसन्त है पर जीवन में वसन्त कहां ?

यह सब इसलिए कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् गत चालीस वर्षों में वास्तव में देश को कोई सच्चा, तपस्वी, समाविद देशभक्त नेता नहीं मिला। सभी कुर्सियों के भूखे, तिजोरियों के भरने वाले स्वार्थी, अपनी और अपनी पार्टी को सत्ता में रखने हेतु देशद्रोही अराष्ट्रवादी लोगों की वोटों को बटोरने हेतु राष्ट्रीय हितों की बलि देते रहे। जिसका परिणाम आज यह हुआ कि वही तथाकथित अपने को अल्पसंख्यक वर्ग के लोग देश को जड़ें उखाड़ने मे लगे हुए हैं और विघटन के विषैले बीज बो रहे हैं। यह अराष्ट्रीय तत्व आज बड़े दलबल के साथ अपनी सर्वथा अनुचित मांगें मनवाने के लिए देश में अशान्ति और बदअमनी का वातावरण पैदा करके देश की जड़ो को खोखली करने पर तुले हैं। इसी कारण सीमावर्ती क्षेत्रों प्रदेशों में बड़ा तनाव बना हुआ है। क्या त्रिपुरा क्या गुजरात क्या असम क्या नागालैण्ड, कश्मीर सभी में बहुसंख्यकों को चुनौतियो का सामना करना पड रहा है। पंजाब की तो दुर्दशा की बात ही क्या है। बाजार, दुकान, घर, आफिस, बस, रेलगाड़ी या वायुयान कहीं भी तो किसी भले मानस का जीवन सुरक्षित नहीं है। खुले आम बेगुनाह का नरसंहार हो रहा है। मां बहनों को हया बचाना बड़ा कठिन हो गया है। आबल वृद्ध सभी पुरुषों की गाजर मूली की तरह से हत्या कर दी जाती है। परिवार के परिवार तलवार के घाट उतारे जा रहे हैं। बैंक लूटे जा रहे हैं, पुलिस चौकियों पर आक्रमण करके आतंकवादी आतंक फैला कर जीवन को अस्त व्यस्त कर रहे हैं, परन्तु दुःख है किसी भी सत्ताधारी के कान पर जूं तक नहीं रेंगती। सभी मानो आमोद-प्रमोद की नींद में मस्त खर्राटे मारते प्रतीत होते हैं। इधर देश सूखे और बाढ से ग्रस्त है। अरबों रुपये की फसलें बरबाद हो गई हैं, लोगों को दो जून पेट की आग बुझाना कठिन हो रहा है, उधर देश के नेता लोग करामबार अपने सम्बन्धियों तथा इष्ट मित्रों के साथ दूर-दराज प्रदेश में हवाखोरी को जाते हैं, जिस कार्य पर बेचारी मूक जनता की पसीने की कमाई का लाखों नहीं करोड़ों रुपया व्यय किया जा रहा है। सरकार की सारहीन और दूषित नीतियों के कारण देश को 'वादों' की आन्धी ने भी कुछ कम नहीं घेरा हुआ है। भाषावाद, प्रदेशवाद, अलगाव वाद और आतङ्कवाद आदि अनेक विषैले वादों ने राष्ट्र के जीवन में बड़ी उथल-पुथल उत्पन्न कर दी है। जीवन का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं है जहां भ्रष्टाचार ने अपने पांव न जमा रखे हों। राजनीति के क्षेत्र में तो इसका सर्वाधिक बोलबाला है। स्वीडन के बोफोर्स, इग्लेण्ड के साऊथ लैण्ड, वेस्ट जर्मनी के एच० डी० डब्लू, और अमेरिका के फेयरफैक्स के काण्डों के कारण देश की जो दुर्गति हुई और प्रतिष्ठा की क्षति हुई, वह कभी भी भुलाई नहीं जा सकेगी। सत्ता में रहने वाले और इन तथाकथित नेताओं से मेल-जोल रखने वाले समाचार पत्र की रिपोर्ट के अनुसार अरबों रुपया रिश्वत का हड़प कर विदेशी बैंकों में जमा कराकर स्वयं तो अरबपति हो गये परन्तु देश की अर्थव्यवस्था को नुकसान पहुंचाकर देश को निर्धन कर दिया है। इनको ही देखकर युवा वर्ग जो किसी भी देश का सुन्दर भविष्य होता है, आज बिना सही दिशा पाये मादक द्रव्यों के इतने शिकार हो गये हैं कि जिससे छुटकारा पाना बड़ा कठिन हो गया है। स्त्री जाति का बुरा हाल है। नव विवाहित युवतियों के जीवनों को उनके सुसराल वाले इतना दुखदायी बना देते हैं कि या तो वह स्वयं आत्मघात करने पर विवश हो जाती है या सुसराल वाले ही उसको जला डालते हैं। अराजकता के कारण कुछ पुरानी सामाजिक कुरीतियां फिर से उभर आ रही हैं। इसीलिये रूपकवर जैसी मासूम युवतियों को अपने पति के शव के साथ चिता मे जबरन जला दिया जाता है। रुपये पैसे के लोभ में स्वप्नों के आधार पर माताएं अपने मासूम होनहार बच्चों की निर्मम हत्या करती लेशमात्र भी नहीं डरती-घबराती। देश में भ्रष्टाचार-अराजकता का बोलबाला है। ससद में जहां प्रतिदिन लाखों रुपयों का खर्च बताया जाता है। कोई भी दिन ऐसा नहीं जाता जब विपक्ष के पार्टियो के सदस्य किसी न किसी विषय पर सरकार से सन्तोष जनक उत्तर न पाकर, ससद भवन से बाहर न जाते हों। सत्ताधारी पार्टी अपने बहुमत के कारण अपनी मनमानी करने पर तुली हुई है और इन्हीं सारहीन नीतियों के कारण आज देश में चहु ओर अशान्ति के बादल छाये हुए हैं प्रश्न होता है कि क्या इसी दुर्गति के लिए स्वतन्त्रता संग्राम में लोगों ने अपने जीवन की बलि दी थी। ऐसी विचित्र स्थिति में भला क्या कोई वसन्त को जीवन में धारण करे। ऐसी अन्धकारमय स्थिति को आर्य जगत् के ओजस्वी कविवर श्री शरर जी ने किसी प्रसग में इन शब्दों में व्यक्त किया है।

खिजां के दौर में अपना
चमन हुआ बरबाद।
बहार में भी कली
मुस्करा न सकी।

गुलाम थे तो गुलामी का,
गम सताता रहा।
रिहा हुए तो रिहाई भी
रास आ न सकी।

नदीम आज भी हरसू
वही अन्धेरा है।
कहीं भी नूर की नन्हीं
किरण नहीं मिलती।

अजब खामोशी है हर
सिमत यूं का आलम है।
अवाम सहमे हुए हैं
जबां नहीं हिलती।

बने हैं कौम के रहबर
जबां के जादूगर।
कहीं न हुसने अमल है
न खूनी करदार।

अवाम भेड़ों की मानिन्द
हांके जाते हैं।
दहाड़ते हैं हर सितम
गाजी गुफतार।

नशा पिलाया वह
मजहब के ठेकेदारों ने।
कि आंख भी खुले
और भागते रहिए।

ये पहरेदार सयासत
के भी नहीं कुछ कम।
सुला भी देते हैं,
कहते हैं जागते रहिए।

ऐसी अन्धेरी मे से बचकर निकलना नितान्त कठिन है। महाभारत के एक प्रसग में कृष्ण जी ने महात्मा विदुर को बड़ा ही सुन्दर कहा था कि कोई विरला ही व्यक्ति ऐसी स्थिति में डूबती किश्ती को सफलता पूर्वक किनारे पर लगा सकता है और इसको मौत के मुह से बचा सकता है। वर्तमान में तो कोई ऐसा देश-हित चिन्तक निःस्वार्थ व्यक्ति दीख नहीं पड़ता जो ऐसा साहस का कार्य करने में समर्थ हो। इसलिए कविवर शरर जी ने बड़ा अच्छा कहा—

कोई करिश्मा हो, शायद
तो जाग उठे वतन।
के जागने पर मुकद्दर
भी सो नहीं पाता।
मगर करिश्मा तो करिश्मा
है बाका तो नहीं।
शरर यह सोचा तो
जाता है, हो नहीं पाता।

बन्धुओ! इस ग्रस्त-व्यस्त देश की स्थिति में जनता आर्यसमाज की ही ओर आखें लगाए देख रही है। और कोई भी ऐसी संस्था है भी तो नहीं जो देश के हितों को ध्यान मे रखकर कुछ कार्य करे। वैसे भी देश जागरण में आर्यसमाज का ही बहुत बड़ा हाथ है। आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि ने इसी देश के हितों के लिए अपने जीवन को बलि दी। उसी से अनुप्राणित होकर आरम्भ से ही देश का प्रहरी बना चला आ रहा है। अब अपनी देशभक्ति और अपनी परम्परा के अनुसार आर्यसमाज के नेताओं का यह पवित्र कर्तव्य हो जाता है कि वह देश की नब्ज को जाने और अन्य देशप्रेमी आर्यों के साथ मिलकर कुछ ऐसा ठोस कार्यक्रम बनाए जिससे इस देश को डूबती नैया को सफलता पूर्वक किनारे पर लगाया जा सके। यही देशभक्ति की सच्ची भावना हमारे जीवनो में वसन्त ला सकती है, अन्यथा प्रकृति की बहारें हमें कदाचित सार न आयेंगी। अत जीवन में वसन्त लाने हेतु कुछ कर डालने का व्रत लेकर आगे बढो।

●

(पृष्ठ ३ का शेष)

अब सोयेंगे सारी रात हम

व्यक्ति खर्राटे लेता है और दूसरों की नींद में खलल डालता है। नाक और गले की बलगम वाली झिल्ली सूख जाती है। जिससे मुह से सास लेनी पड़ती है और खर्राटे आते हैं। 'स्नोकोस्लिप' दवा बूदों के रूप मे नाक में सोने से पहले डाली जाएगी।

इस दवा मे १२ कुदरती चीजें हैं इसलिए यह दूसरे खर्राटा विरोधक दवाओं की तरह कोई बुरा असर नही डालती। दवा का १००० खर्राटे मारने वालों पर ७० दिन तक कामयाब परीक्षण किया गया है। अमेरिकी कम्पनी एबट और स्वीडन की सरकारी दवा कम्पनी इसे बनाना चाहती हैं।

●

लोगों का दिल कैसे जीतें

डेल कारनेगी के अनुभव

★

यदि आप के मिजाज का पारा चढ़ा हुआ है और आप लोगो को दो-एक बातें कह देते हैं, तो अपने हृदय का भार उतार कर आपको आनन्द आता है। परन्तु दूसरे व्यक्ति की क्या दशा होती है ? क्या वह भी आपके आनन्द मे भाग लेगा ? क्या आपका झगडालू स्वर, आपका विरोधी भाव उसके लिए आपके साथ सहमत होना सरल कर देगा ?

वुडरो विलसन ने कहा था, 'यदि आप मेरे पास लडने की तैयारी कर के आयगे तो मैं समझता हूं कि मैं आपको वचन दे सकता हूं कि मैं आप से भी दुगुनी तेजी के साथ लडने के लिए तैयार हो जाऊंगा। परन्तु यदि आप मेरे पास आकर कहते हैं, 'आइए, बैठ कर परामर्श करें, और यदि, हमारा एक दूसरे से मतभेद हो तो समझें कि इस मतभेद का क्या कारण है विचारार्थ विषय क्या है,' तो हमें तुरन्त ही पता लग जायेगा कि असल मे हम मे एक दूसरे से बहुत अन्तर नही, जिन बातो पर हमारा मतभेद है, वे थोडी हैं और जिन पर हम सहमत हैं, वे बहुत हैं और कि यदि हम मे इकट्ठे होने की अभिलाषा, अकपटता, पटुता और धैर्य हो तो हम इकट्ठे हो जायेगे।''

वुडरो विलसन के कथन की सचाई को जितना जॉन डी रॉक फल्लर समझता है उतना कोई दूसरा नही। कोलरेडो मे लोग रॉक फल्लर से बडी घृणा करते थे। अमेरिकन उद्योग धन्धे के इतिहास मे एक अतीव खूनी हडताल दो भीषण वर्षों से राज्य को हैरान कर रही थी। खान खोदने वाले लडके मजदूर कोलोरेडो की ईन्धन और लोह कम्पनी' से अधिक मागते थे, और रॉक फल्लर के हाथ मे उस कम्पनी का प्रबन्ध था। सम्पत्ति नष्ट कर दी गई थी, सेनाएं बुलाई गई थी। रक्त-पात किया गया था। हडतालियों पर गोली चलाई गई थी, उनके शरीर गोलियों से छलनी कर दिये गए थे।

ऐसे समय में, जब कि वायुमण्डल घृणा से खौल रहा था रॉक फल्लर हडतालियों को प्रेरणा कर के अपने विचार का बनाना चाहता था। और उसने बना लिया। कैसे ? वह कथा इस प्रकार है। मित्र बनाने मे कई सप्ताह बिताने के बाद, रॉक फल्लर ने हडतालियों के प्रतिनिधियों के सामने भाषण किया। यह भाषण, सारे का सारा ही, बहुत उत्कृष्ट है। इससे विस्मय-जनक परिणाम हुआ। इसने घृणा की उन तूफानी लहरों को शान्त कर दिया जो रॉक फल्लर को निगल जाने की धमकी दे रही थीं। इससे उसके बहुत से प्रशसक बन गए। इस भाषण मे सच्ची बातों को ऐसे मित्रोचित ढग से प्रस्तुत किया गया कि हडताली काम पर वापस चले गये और उन्होने वेतन वृद्धि के लिए एक शब्द भी मुह से नहीं निकाला। यद्यपि इस के लिए वे तुमुल युद्ध कर रहे थे।

उस अपूर्व भाषण का आरम्भ इस प्रकार होता है। देखिए इस में मित्रभाव कैसा स्पष्ट चमक रहा है।

स्मरण रहे कि रॉक फल्लर उन लोगों मे बात कर रहा है जो, कुछ ही दिन पहले उसके गले में फांसी लगा कर सेब के पेड के साथ लटका देना चाहते थे, तो भी उसका व्यवहार ऐसा मित्रोचित और कृपालु था मानो वह चिकित्सा द्वारा जनता की निष्काम सेवा करने वाले परोपकारी दल के सामने भाषण कर रहा हो। उसका भाषण इस प्रकार के वचनो से उज्ज्वल हो रहा था। मुझे यहा आने का गर्व है, आपके घरो मे आपके दर्शन कर के आपके स्त्री, बच्चो से मिला हू, हम यहा अपरिचितो के रूप मे नही मित्रो के रूप मे हैं, पारस्परिक मित्रता का भाव, हमारे साझे के हित, आपके सौजन्य के प्रताप से ही मैं यहा आ सका हू।

रॉक फल्लर ने कहना आरम्भ किया, "मेरे जीवन में यह स्मरणीय दिवस है। यह पहला अवसर है कि मुझे इस बडी कम्पनी के नौकरों के प्रतिनिधियों, इसके अफसरों और सुपरिण्टेण्डेण्टों से, इकट्ठे, मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मैं आपको विश्वास दिला सकता हू कि मुझे यहा आने का गर्व है। जब तक मैं जीता हू इस जन-समूह को कभी न भूलूगा। यदि यह सभा आज से दो सप्ताह पहले होती, तो मैं आप मैं से अधिकांश के लिए अपरिचित के रूप मे यहां खडा होता, केवल थोडे से मुखमण्डलों को ही पहचान पाता। मुझे गत सप्ताह दक्षिणी कोयले की खानों में सभी पड़ावों को देखने, और थोडे से अनुपस्थितों के सिवा, कार्यत शेष सभी प्रतिनिधियों के साथ व्यक्तिगत रूप से बातचीत करने का अवसर मिला है। आप के घरों में जाने के कारण, मैं आपके स्त्री-बच्चो से मिल आया हूं। इसलिए हम यहां अपरिचितों के रूप में नहीं, वरन् मित्रों के रूप में मिले हैं। उसी पारस्परिक मित्रता के भाव से अपने साझे के हितों पर विचार करने का अवसर पाकर मुझे प्रसन्नता हो रही है।

"यह सभा कम्पनी के कर्मचारियो और नौकरों के प्रतिनिधियों की है। इसलिए आपके सौजन्य के प्रताप से ही मैं यहां आ सका हू। कारण मुझे न अफसर और न प्रतिनिधि होने का सौभाग्य प्राप्त है। तो भी मैं अनुभव करता हू कि आप लोगों से मेरा प्रगाढ संसर्ग है क्योंकि मैं एक प्रकार से, मूल धनवानों (स्टाक-होल्डर) अनुशासकों (डायरेक्टरों), दोनो का प्रतिनिधि हूं।"

क्या यह शत्रुओ को मित्र बनाने की ललित कला का उज्ज्वल उदाहरण नही ?

मान लीजिए, रॉक फल्लर ने इस से भिन्न कार्यप्रणाली ग्रहण की होती। मान लीजिए, वह उन खान खोदने वालों के साथ बहस करता और उनके मुह पर विनाशकारी तथ्यो की बाढ मारता। मान लीजिए कि, न्याय के सभी सूत्रों द्वारा, यह सिद्ध कर देता कि वे गलती पर हैं। तो क्या घटना होती ? अधिक क्रोध, अधिक घृणा, अधिक विद्रोह उठ खडा होता।

यदि किसी मनुष्य का हृदय आपके प्रति विरोध और दुर्भाव से पीडित हो रहा है, तो आप सारे ससार का तर्क लगा कर भी उसे अपने विचार का नहीं बना सकते। डांट-डपट करने वाले माता पिताओं, निरकुश प्रभुओं एव पतियों और तग करने वाली पत्नियों और तग करने वाले पतियों को अनुभव करना चाहिए कि लोग अपना मत-परिवर्तन करना नहीं चाहते। परन्तु, यदि हम सौम्य और मित्रवत् हों, तो उनको भी वैसा ही सौम्य और मित्र बनाना सम्भव हो सकता है।

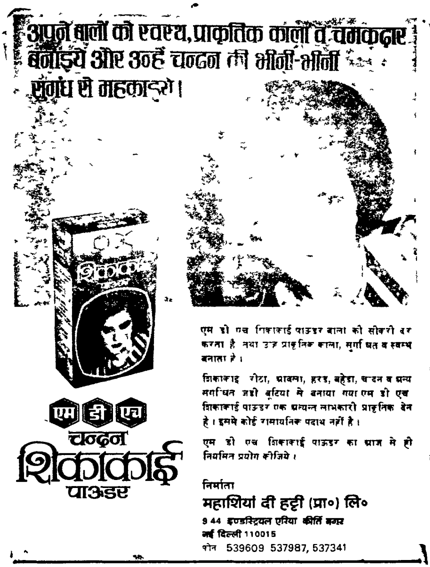
लिंकन ने वस्तुतः यही बात सौ वर्ष पहले कही थी। उनके शब्द ये हैं—

यह एक पुरानी और सच्ची कहावत है कि "एक बूद मधु जितनी मक्खियां पकड सकता है उतनी एक गैलन सिरका नहीं।" यही बात मनुष्य की है। यदि आप किसी मनुष्य को अपने पक्ष का बनाना चाहते हैं, तो पहले उसे विश्वास कराइए कि आप उसके सच्चे मित्र हैं। इसी में वह मधु-बिन्दु है जो उसके हृदय को पकडता है, जो आपकी इच्छा चाहे जो कहे, उसकी विचार-शक्ति को प्रेरित करने का सीधा मार्ग है।

व्यापारी लोग जानते हैं कि हडतालियों के प्रति मित्रवत् होना लाभदायक रहता है। उदाहरणार्थ, जब ह्वाइट मोटर कम्पनी के कारखाने में ढाई सहस्र नौकरों ने मजदूरी बढाने के लिए हडताल कर दी, तो कम्पनी के प्रधान राबर्ट फ० ब्लैक ने चिढ़ कर उनकी निंदा नहीं की धमकाया नहीं और न अत्याचार और कम्यूनिस्टों की बात की। उसने सचमुच हडतालियो की प्रशसा की। उसने समाचार-पत्रों में विज्ञापन छपाया, जिस में 'शांतिपूर्ण ढग से काम छोडने'' के लिए उनकी बडाई की। हडताल मे मनुष्यो को काम रोकने के लिए नियुक्त व्यक्तियों को निकम्मे बैठे देख उसने उनको दो दर्जन बेसबॉल बैट और दस्ताने ले दिए, और उन्हें खाली भूमि खण्डो पर गेंद खेलने के लिए निमन्त्रित किया। जो लोग बोलिंग खेलना पसन्द करते थे, उन के लिए उसने एक चौक किराए पर ले दी।

प्रधान ब्लैक के इस मित्रभाव ने वही काम किया जो मित्रभाव सदा किया करता है। इससे मित्रता उत्पन्न हो गई। इसलिए हडतालियों ने झाड, फावडे, और कूडे की गाडियां उधार लीं, और फैक्टरी के इर्द-गिर्द से दियासलाइयां, कागज के टुकडे, सिग्रेट के अवशिष्ट भाग और सिगार के कुन्दे उठाने लगे। इसकी कल्पना कीजिए ! कल्पना कीजिए मजदूरी बढ़ाने और अपने सघ की स्वीकृति के लिए लडने वाले हडताली फैक्टरी की भूमि को, साफ कर रहे हैं। अमेरिकन मजदूरों की लडाइयों के लम्बे और तूफानी इतिहास में ऐसी घटना पहले कभी नहीं सुनी गई थी। हडताल एक सप्ताह के भीतर ही समझौता होकर समाप्त हो गई। कोई दुर्भाव या विद्वेष भी उत्पन्न नहीं हुआ।


लाखों लोगों की पसन्द
एम डी एच दंत मंजन
23 जडी बूटियो से निर्मित
आयुर्वेदिक औषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दंत सुरक्षा
दांतो का दर्द, मुह की दुर्गन्ध
मसूडो की सूजन
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
प्रतिदिन प्रयोग करें
537987, 537341


अपने बालों को स्वस्थ, प्राकृतिक काले व चमकदार बनाइये और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी सुगंध से महकाइये।
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाऊडर
निर्माता
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9 44 इण्डस्ट्रियल एरिया कीर्ति नगर
नई दिल्ली 110015
फोन 539609 537987, 537341


आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
अजमल खान रोड
करोल बाग
नई दिल्ली-110005
फोन 582036, 5715678
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
alignpoint

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N. No. 32387/77 Post in N.D.P S O on 2° 29 8 Licensed to post without prepayment, Licence No. U. 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

आर्यसमाज न्यू मोती नगर में वीर हकीकत बलिदान दिवस

२३ जनवरी नई दिल्ली। आर्यसमाज न्यु मोतीनगर, नई दिल्ली में एक समारोह हुआ। यह समारोह बालवीर हकीकतराय के बलिदान-दिवस के रूप में मनाया गया। इस अवसर पर पश्चिम दिल्ली की आर्यसमाजों की ओर से दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान एवम् महा मन्त्री का भी स्वागत किया गया।

प्रमुख वक्ता स्वामी विद्यानन्द ने कहा—देश धर्म एवम् सस्कृति की रक्षा करने का दायित्व और किसी पर हो या न हो पर ऋषि दयानन्द के अनुयायियों पर तो है ही। हमे अपने वैदिक धर्म के प्रचार एवं प्रसार के कार्य को और अधिक शक्ति से आगे बढ़ाना चाहिए। उन्होंने नवनिर्वाचित अधिकारियों के द्वारा किये गये दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के उन्नत कार्यों के लिए साधुवाद दिया तथा कहा—मैं दोनो अधिकारियो को काफी समय से जानता हूं। उनकी योग्यता और दक्षता को नकारा नहीं जा सकता। मैं आशा करूंगा, आने वाले काल मे ये और भी दक्षता से कार्य करेंगे तथा सब के प्रिय हो सकेंगे। श्री सूर्यदेव एवम् डा० धर्मपाल ने इस अवसर पर सब का धन्यवाद किया तथा बालवीर हकीकत की बलिदानी भावना की जी भर कर प्रशसा की। श्री मनोहरलाल कुमार ने प्रेरक उद्बोधन दिया। श्री भारतमित्र शास्त्री ने भी श्रद्धांजलि अर्पित की। कार्यक्रम का संयोजन श्री नरेन्द्र म आर्य ने किया।

पुरोहित चाहिए

आर्यसमाज गांधी नगर में एक सुयोग्य एवम् लगनशील पुरोहित की आवश्यकता है। कृपया शीघ्र मिलें अथवा लिखें।

—महेन्द्र पाल वर्मा
प्रधान

(पृष्ठ १ का शेष)

धर्मवीर हकीकत......

काली पहाड के नाम से कुख्यात हुआ और निर्दयता से उसने हिन्दुओं को मरवाया। पूरे बंगाल को मुसलमान बना दिया। उसका दोष, हमारे हिन्दूसमाज के तत्कालीन संकुचित अन्धविश्वास को दिया जायेगा।

श्री यशपाल सुधांशु ने कहा—स्वामी दयानन्द की क्रान्तदर्शिता का परिणाम है कि आज हममें विधर्मी भी आकर वैदिक धर्म को स्वीकार कर रहे हैं। आर्यसमाज की विचार धारा के प्रभाव से हिन्दू समाज के दूसरे लोग भी अब शुद्धि के कार्य करने लग पड़े हैं। श्री सुधांशु ने कहा अपने देश व धर्म की रक्षा, एवं अखण्डता के लिए हमें बलिदानी पैदा करने होंगे। अपने बच्चों को वीरता, साहस एवं शौर्य की गाथाएं सुनायें जिससे उनमें वीरता का रक्त संचरित हो सके।

इस अवसर पर अनेक अन्य वक्ताओं ने भी विचार व्यक्त किये। जिसमें मुख्य बात यह कही—हमें विधर्मी विदेशी शक्तियों के प्रहारों को रोकने के लिए योजना बद्ध उपायों से अपने समाज की रक्षा करनी चाहिए। कार्यक्रम के संयोजक श्री रोशन लाल गुप्त थे। मंच संचालन श्री पुरुषोत्तम ने किया। कार्यक्रम उपस्थिति की दृष्टि से भी काफी सफल रहा।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक

ओ३म्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ . अंक १६ | रविवार ७ फरवरी १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | फाल्गुन २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर ३० पौंड

बिन्दापुर में नवीन आर्यसमाज की स्थापना

नई दिल्ली, "युग पुरुष महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने हेतु सामाजिक कुरीतियो के उन्मूलन एवम् समस्त ससार के उपकार के लिए स्थान-स्थान पर आर्यसमाज की स्थापना करनी चाहिए ।" ये उदगार सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने गणतन्त्र दिवस पर चौ० सुल्तानसिंह मैमोरियल ट्रस्ट द्वारा बिंदापुर मे आर्यसमाज मन्दिर ' की स्थापना के अवसर पर व्यक्त किये। स्वामी आनन्द बोध ट्रस्ट द्वारा आयोजित राष्ट्र रक्षा सम्मेलन में मुख्य अतिथि के रूप में बोल रहे थे ।

स्वामी आनन्द बोध ने आगे कहा कि आर्यसमाज कोई मत मजहब या सम्प्रदाय नहीं है अपितु यह एक क्रातिकारी आन्दोलन है और ऋषि दयानन्द ने रूढ़िवाद को समाप्त करने के लिए सत्य सनातन वैदिक धर्म के पुनरुद्धार हेतु आर्यसमाज की स्थापना की थी। स्वामी आनन्द बोध ने देश-निर्माण में यज्ञो की महत्ता तथा राष्ट्र की एकता व अखण्डता को सुदृढ करने पर भी बल दिया। स्वामी जी ने आगे कहा कि स्वतन्त्रता सेनानी चौ० सुल्तानसिंह की स्मृति मे आर्यसमाज की स्थापना कर उनके पुत्रो ने सुल्तानसिंह के नाम को अमर कर दिया है।

स्वाधीनता सेनानी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के उप प्रधान रामचन्द्र वन्देमातरम् ने इस पुनीत अवसर पर राष्ट्र की एकता व अखण्डता को बनाये रखने का सकल्प लेने का आह्वान किया । उन्होने आगे कहा कि भारत हमारा राष्ट्र है और सब सर्वप्रथम भारतीय हैं और बाद में कुछ और। उन्होने भाषा, सस्कृति व भौगोलिक इकाई जैसे तत्वो के आधार पर राष्ट्र के सच्चे स्वरूप को पहचानने का अनुरोध किया । श्री वन्देमातरम् ने कहा कि आर्य भारत के मूल निवासी थे और सच्चे ऐतिहासिक ज्ञान द्वारा बच्चो का निर्माण करना चाहिए ।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री श्री सच्चिदानन्द शास्त्री ने कहा कि अग्रेज स्वामी दयानन्द को एक ऐसा विद्रोही मानते थे जो देश की स्वतन्त्रता के लिए लोगो में क्राति की ज्वाला प्रज्वलित करता था। श्री शास्त्री जी ने कहा कि स्वामी दयानन्द ने अन्धविश्वास, कुरीतियों के कीचड से राष्ट्र की गाडी को निकाला था और आज हमें आचरण में आर्यत्व लाकर परिवार, समाज व राष्ट्र का निर्माण करना चाहिए।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल आर्य ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि आज राष्ट्र को न केवल विदेशियो से खतरा है अपितु बाहरी ताकतो की शह पर आन्तरिक अस्थिरता पैदा करने वाले तत्वो से भी खतरा है उन से सघर्ष करने मे हमें अपना योगदान देना चाहिए। पेट्रो डालर द्वारा धर्म परिवर्तन पर भी चिन्ता व्यक्त की तथा इस दिशा मे आर्यसमाज द्वारा किये जा रहे श्रेष्ठ कार्यों का भी जिक्र किया ।

इस अवसर पर चनन देवी ट्रस्ट के मन्त्री श्री ओमप्रकाश आर्य, प्रति-

(शेष पृष्ठ ८ पर)

ला० ओंकारनाथ शालवाले को पत्नी वियोग



स्व० श्रीमती कमलेश

श्री ला० ओंकारनाथ (सुपुत्र श्री रामगोपाल शालवाले) की धर्मपत्नी श्रीमती कमलेश का ४९ वर्ष की आयु में निधन हो गया। वे कुछ समय से बीमार चल रही थी। उनके दो सुपुत्र दो सुपुत्रियां हैं। दो सुपुत्रियो का विवाह हो चुका है। श्रीमती कमलेश शान्त स्वभाव की धर्मपरायण महिला थीं। यज्ञ याग के प्रति उनकी असीम श्रद्धा थी।

श्रीमती कमलेश की स्मृति मे १ फरवरी को आर्यसमाज दीवान हाल में श्रद्धाञ्जलि सभा आयोजित की गयी जिसमें दिल्ली प्रदेश की अनेकों आर्यसमाजों के प्रतिष्ठित

(शेष पृष्ठ ८ पर)

॥ ओ३म् ॥

ऋषि बोधोत्सव—ऋषि मेला

१६ फरवरी १९८८ मंगलवार

फिरोजशाह कोटला मैदान

प्रातः ८ बजे से सायं ४ बजे तक

प्रात. ८-०० बजे बृहद् यज्ञ ब्रह्मा प० यशपाल सुधांशु
प्रात ९-३० बजे ध्वजारोहण, स्वामी विद्यानन्द जी सरस्वती
प्रात १०-०० बजे मन्द दौड, नियम दौड, कबड्डी, रस्साकशी योगासन
दोपहर १२-०० बजे भाषण प्रतियोगिता
" १-३० बजे सास्कृतिक कार्यक्रम
" २-०० बजे पारितोषिक वितरण
" ३-०० बजे सार्वजनिक सभा

निर्दिष्ट कार्यक्रमानुसार आप सब सपरिवार एव इष्ट मित्रो सहित सादर आमन्त्रित हैं। आर्यसमाजों के अधिकारी अधिक से अधिक सदस्यों सहित विशेष बसो द्वारा समारोह मे सम्मिलित होकर सभा को अपना पूर्ण सहयोग प्रदान कर।

निवेदक

महाशय धर्मपाल
प्रधान

शिवकुमार शास्त्री
महामन्त्री

आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली राज्य
१५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१

सम्पादक—प० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

वयं जयेम त्वया युजा
वृतमस्माकमशमुदवा भरे भरे।
अस्मभ्यमिन्द्र वरिवः सुगं कृधि
प्र शत्रूणां मघवन् वृष्ण्या रुज ॥
ऋ० १।१०२।४

ऋषि कुत्स आङ्गिरसः।
देवता : इन्द्र. । छन्दः-स्वराट् त्रिष्टुप् ।

इन्द्र मघवन् त्वया युजा वयम् वृतम् । जयेम भरे भरे अस्माकम् अशम् उत् अव शत्रूणां वृष्ण्या रुज अस्माकम् वरिव सुगम् कृधि ॥

इन्द्र=इन्+द्र=शत्रु, द्र=दारयिता, शत्रु को विदीर्ण करने वाला।

शत्रु—शद्+रु=डाह करना, दूसरे की उन्नति को देख जलने वाला।

मघवन् इन्द्र—ऐश्वर्यशाली—शक्तिशाली प्रभु स्वय शस्त्र लेकर नहीं लडता, परन्तु भक्तों को प्रेरणा दे कर कठिनाई दूर करता है और आततायी ईर्षालु को सत्प्रेरणा की बात नहीं मिलती वह अपने अहंकार के वशीभूत राक्षसी प्रवृत्तियों में बढ़ता हुआ पतन के गड्ढे में गिरता है। राष्ट्र यज्ञ में कई मोर्चे हैं :—

१ कृषि—अन्नोत्पादन करके अन्नाभाव मिटाना।

२ विद्या का दान देकर राष्ट्र में अज्ञान रूपी असुर का वध करना।

३. औषधियों का अनुसन्धान करना व उपचार करके स्वास्थ्य की वृद्धि करना।

४ राष्ट्र में प्रचार द्वारा सभ्यता शिष्टाचार, धर्मपरायणता को बढ़ाना।

५ शिल्प आविष्कारों द्वारा राष्ट्र को सुरक्षित, सक्षम, समृद्धिशाली बनाना।

६ पडोसी राष्ट्र के आक्रमण करने पर वीरों में प्राण न्योछावर का उत्साह देना।

इनकी सफलता के लिए इन्द्र सूझ व साहस प्रदान करता है। यदि प्रारम्भ में कहीं असफलता भी हो जाए तो धैर्य देकर उपचार में जुटाए रखता है और आस्तिक, कर्तव्यनिष्ठ राष्ट्र वीरों की विजय निश्चित होती है।

१ अतः हे मघवन् इन्द्र! हमें उत्साह धैर्य विवेक आस्तिकता प्रदान कर।

२ त्वया युजा—आपसे मिलकर शत्रुओं पर विजय पाने में सफल हो

राष्ट्रयज्ञ के लिए दृढ़ संकल्प करें

—महात्मा दयानन्द

सकते हैं, किन्तु मिलन किन का किस विधि से होगा यह विचारणीय विषय है।

(क) मिलन सजातियों का होता है, चैतन्य नारायण से हम चैतन्य नर ही मिल पावेंगे तो हमें अपने अन्दर चैतन्यता को सजग करना होगा।

(ख) अहंकार एक दूसरे से नहीं मिल सकते, मिलन हेतु निरहंकारी बनना होगा।

(ग) मिलने के लिए गुण, कर्म, स्वभाव एक जैसे होने चाहिए। एक पक्ष की ओर चलने वाले हमसफर तो मिल सकते हैं, विपरीत दिशा में जाने वालों के मिलन का प्रश्न ही नहीं उपजता।

(घ) मिलने की विधि तो केवल आत्म समर्पण ही है—

१ समिधा अग्निवत् तभी होगी जो अग्नि के अर्पित होगी।

२ चीनी शरबत तभी बनेगी जो जल के अर्पित होगी।

३. शिष्य विद्या तभी पावेगा जो गुरु के अर्पित होगा।

(३) वयम् वृत्रम् जयेम—कि हम घेरा डालने वाले शत्रु पर विजय पावें।

(क) शत्रु की शक्ति, शत्रु की कमजोरियों को, शत्रु के प्रहार करने के तरीके, शत्रु के सप्लाई स्रोतों को, शत्रु कब गाफिल होता है। इत्यादि इन तथ्यों को जानें। इनको जानने के लिए हमारे निरीक्षा के साधन, गुप्तचर विभाग बडे विश्वास पात्र राष्ट्र के परम हितैषी जीवन को जोखम में डालने वाले, कष्टों को सहन करने में सक्षम पर्याप्त संख्या में हों। राष्ट्र जहाँ ऐसे व्यक्तियों को अच्छा वेतन दे, वहाँ उनके परिवारों की रक्षा व उन्नति का पूरा पूरा प्रबन्ध करके उन्हें चिन्ता मुक्त कर दे।

(ख) राष्ट्र की सेना व सेनानी पक्के देशभक्त हों—जहां उन्हें क्षात्र धर्म की प्रेरणा दें वहां उनको आधुनिक शस्त्रों से लैस करें और वह उन के प्रयोग में भी प्रवीण बनाए गए हों—अपने प्राणों से देश के सम्मान को अधिक बहुमूल्य मानने वाले हों।

(ग) राष्ट्र की सुरक्षा के साधन बचाव पंक्ति बडी सुदृढ़ हो, विशेष कर राष्ट्र के अन्दर देशद्रोही अथवा शत्रु के हितैषी, उनके गुप्तचर को कभी सहन न करना चाहिए। उन्हें समूल नष्ट करें उनके परिवार भी दया व रक्षा के पात्र बिल्कुल नहीं वरना यह राजनैतिक अपराध होगा। जैसे पृथ्वीराज चौहान ने किया, फिर १९४७ में कांग्रेस के नेताओं ने किया और राष्ट्र में सांप पाल कर राष्ट्र अहित हुआ।

(घ) हमें भारत में हिन्दू राष्ट्र की घोषणा करके भारत के इस्लामीकरण व ईसालैण्ड बनाने के स्वप्नों को विफल बनाना होगा, इन वृत्रों के षड्यन्त्रों को भस्मीभूत करना होगा।

जो भाग लेने आए वह चौके के स्वामी बनने का प्रयत्न करने लगे, कृतघ्नों को कृतघ्नता त्यागने का पाठ पढ़ावें अथवा धरा चिजवायें।

(४) भरे भरे अस्माक अशम् उत् अव—हर संग्राम में या हर मोर्चे पर हमारी रक्षा हो।

हमारी रक्षा तभी होगी जब हम सर्वत्र आत्मसमर्पण करेंगे। परमेश्वर की आज्ञाओं का श्रद्धायुक्त बन कर पालन करेंगे।

१. रक्षा के रूप होंगे—सत्प्रेरणायें मिलेंगी।

२. प्रतिकूलताएँ अनुकूलताओं में बदलेंगी।

३. जहां से असहयोग की सभावना होगी वहां से सहयोग मिलेगा।

४. राष्ट्र के सदस्य गणों में सहानुभूति, राष्ट्र सेवा की भावनाएँ प्रबल होंगी।

५. प्राकृतिक शक्तियां सहयोग देंगी।

(५) शत्रूणां वृष्ण्या प्र रुज—शत्रुओं के बलों को तोड़ दें।

शत्रुओं, आततायियों में अहंकार स्वार्थ रहता है। पहले तो वह सगठित हो जाते हैं, परन्तु फिर कहीं जरा सी अनबनी हुई कि सम्मान के प्रश्न बना कर फूट पड जाती है। एक दूसरे को धोखा देते हैं, दल बदलते हैं। इस प्रकार उनका बल टूटता है। ऐसी स्थिति शीघ्र उपजावें प्रभु देव।

२ कठिनाइयों में से निकलने की सूझ नहीं मिलती।

३. किसी भी काम में सफलता नहीं होती।

४ आततायी मन्द मति वालों के अनुमान सब गलत निकलते हैं—मार खाते हैं जैसे हिटलर के अनुमान गलत निकले, इतना बल होने पर भी पराजित हुआ।

५ प्राकृतिक शक्तियां अनुकूल नहीं रहतीं, सेना में रोग उत्पन्न हो जाते हैं। जलवायु प्रतिकूल, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, ओले, दलदलें, बाढ़ इत्यादि सब प्रकार अनिष्ट होते हैं।

(६) अस्मभ्यं वरिवः सुगम कृधि—हमारे लिए विजय प्राप्ति सुगम बना दीजिये परमेश्वर अपने आश्रितों के लिए विजय प्राप्ति सुगम बनाते हैं।

१. सत्प्रेरणा प्रदान करते हैं।

२ जीत हो चाहे हार परन्तु उत्साह ऊंचा रहता है।

३ क्षति की स्थिति भले ही प्रारम्भ में हो, पर गंभीरता व धैर्य के आधार पर कभी निराशा नहीं घेरती यह प्रभु की दया है।

४. जहां से असहयोग की आशंका होती है वह प्रभु प्रेरणा से स्वय आकर सहयोग देते हैं आश्चर्य होता है।

५ उपज खूब पकती है, अन्न जल की कमी नहीं रहती।

६. कोई दैवी प्रकोप नहीं होता। सब स्वस्थ, उत्साही बने रहते हैं। विजय प्राप्ति के अन्दर पक्का सुदृढ़ विश्वास रखकर कार्य रत रहते हैं।



एक श्रद्धाञ्जलि : समर्पित व्यक्तित्व के प्रतीक स्वामी सोमानन्द सरस्वती

पं० नरेन्द्र

—डा० भवानीलाल भारतीय

पं० नरेन्द्र जी के पूर्वज मूलत. उत्तर प्रदेश के रहने वाले थे। किन्तु दक्षिण हैदराबाद की सरकारी सेवा में उनके पर्याप्त समय से रहने के कारण उन्हें निजाम राज्य का नागरिक स्वीकार कर लिया गया था। पण्डित जी के पिता राय केशवचन्द्र प्रसाद उर्दू, फारसी के विद्वान् तथा सुरुचि एवम् प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे। निजाम ने पं० नरेन्द्र के परिवार को मनसबदारी प्रदान की किन्तु जब नरेन्द्र जी देश और धर्म के प्रति अपनी सम्पूर्ण निष्ठा प्रदर्शित करते हुए निजाम की सरकार के विद्रोही बन गये तो उनकी यह मनसब छीन ली गई।

प० नरेन्द्र ने अपने जीवन की मुख्य घटनाओं का उल्लेख "जीवन की छाव" शीर्षक एक आत्मकथात्मक निबन्ध में किया है जो उनके संन्यास ग्रहण के अवसर पर हैदराबाद समाचार साप्ताहिक ने अपने विशेषांक के रूप में मार्च १९७६ में प्रकाशित किया था। जीवन के प्रारम्भिक वर्षों में नरेन्द्र जी पर्याप्त समय तक आध्यात्मिक, भक्ति और ईश्वर की तलाश में इतस्ततः भटकते रहे। सम्भवतः यह उनका जिज्ञासा काल था।

आर्यसमाज से उनका पहला परिचय प० रामचन्द्रजी देहलवी की वक्तृताओं के कारण हुआ। उस समय निजाम राज्य में सिद्दीक दीनदार नामक व्यक्ति अपने आपको लिंगायत मत के प्रवर्तक बसवेश्वर का अवतार बता कर हिन्दुओं का धर्म परिवर्तन कर रहा था। उसने "सरवरे आलम" नामक पुस्तक प्रकाशित की जिसमें हिन्दू देवी-देवताओं की निन्दा थी। दीनदार का भण्डाफोड करने के लिए १९२६ में प्रसिद्ध आर्यसमाजी विद्वान् और वक्ता पं० देहलवी जी को हैदराबाद आमन्त्रित किया गया। सुलतान बाजार के देवीदीन बाग में पं० जी के भाषण होने लगे।

पं० रामचन्द्र देहलवी के प्रभावोत्पादक तर्कपूर्ण भाषणों ने युवा नरेन्द्र की काया पलट दी। वे अन्धकार को छोड़ कर प्रकाश में आ गये। पं० बुद्धदेव जी विद्यालंकार ने उनकी विभिन्न शंकाओं का समाधान किया। उर्दू सत्यार्थप्रकाश की एक प्रति नरेन्द्रजी ने खरीदी, उसका आद्योपान्त अध्ययन कर गये। अब तो उन्हें आर्यसमाज के सिद्धांतों का आलोक प्राप्त हो चुका था। प० केशवराव कोरटकर तथा श्री चन्दूलाल आदि हैदराबाद के आर्य-नेताओं के सम्पर्क में आकर वे शीघ्र ही हैदराबाद आर्यसमाज के सक्रिय कार्यकर्ता बन गये।

इसके बाद की कहानी लम्बी है। नरेन्द्र जी ने लाहौर के दयानन्द उपदेशक विद्यालय में १९३० में प्रवेश लिया। वहां स्वामी स्वतंत्रतानन्द जी के चरणों में बैठ कर उन्होंने विस्तृत शास्त्राध्ययन किया और दीक्षान्त के रूप में स्वामी जी से भिन्न पाठ सीखा—"एक बात याद रखना, खाना घर का खाना, काम दयानन्द का करना और गालियां आर्यसमाज वालों की खाना।" नरेन्द्र जी ने इस बात को जो गांठ बांधा तो कभी उसे विस्मृत नहीं होने दिया।

सार्वजनिक जीवन में प्रवेश

अब तो नरेन्द्र जी का विस्तृत सार्वजनिक जीवन आरम्भ हो गया। विवाह कर गृहस्थ के बन्धन में तो वे बधे ही नहीं थे। १९३२ में उन्होंने महात्मा गांधी जी से प्रेरणा लेकर लाहौर के अनारकली बाजार में सत्याग्रह किया और कारावास की यात्रा की। १९३३ में हैदराबाद नगर में जाकर अपनी मातृसंस्था आर्यसमाज की सेवा में जुट गये। हैदराबाद में आर्यसमाज के प्रचार कार्य में तत्कालीन निजाम शासन की ओर से अनेक कठिनाइयां पैदा की जाती थीं। धार्मिक स्वतन्त्रता के हेतु आर्यसमाज ने जिस बहादुरी और क्षमता के साथ १९३९ में सत्याग्रह संग्राम का संचालन किया वह इतिहास का एक अविस्मरणीय तथ्य है। प० नरेन्द्र जी की भूमिका तो इस संग्राम में सर्वप्रधान थी ही।

परन्तु इससे भी पूर्व वे निजामशाही के अत्याचारों का विरोध करने हेतु अनेक बार जेल यात्राएं कर चुके थे। उन्हें हैदराबाद के कालापानी मनानूर में एक वर्ष ५ मास २१ दिन तक कैद रखा गया।

सत्याग्रह समाप्त होने के पश्चात् हैदराबाद राज्य मे प्रति वर्ष आर्य-सम्मेलन धूमधाम से आयोजित होने लगे। एक ऐसे ही सम्मेलन में जो २२ अप्रैल १९४५ को गुलबर्गा में मनाया जा रहा था। निजाम की पुलिस ने आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं की निर्ममता से पिटाई की जिसके परिणामस्वरूप प० जी के पांव की हड्डी निर्ममता से तोड दी गई।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भी हैदराबाद के निजाम ने अपने राज्य को स्वतन्त्र प्रभु सत्ता सम्पन्न रखने के लिए जो अवांछनीय कार्य किये, कासिम रिजवी के नेतृत्व में रजाकारों के संगठन ने वहां की जनता पर किस प्रकार अत्याचार किये, वह एक लम्बी कहानी है, हैदराबाद कांग्रेस ने स्वामी रामानन्दतीर्थ के नेतृत्व में सत्याग्रह किया। प० नरेन्द्र जी को सत्याग्रह प्रारम्भ होने से पूर्व ही गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया। अन्तत. हैदराबाद का भारत में विलय हुआ और प० नरेन्द्र जी का तप और त्याग रंग लाया।

आर्यसमाज के आन्दोलनों का नेतृत्व

देश को स्वाधीनता के लिए प० नरेन्द्र ने जो कुछ किया वह तो देश के इतिहास में स्मरण रहेगा ही। आर्यसमाज द्वारा सचालित विभिन्न कार्यक्रमों और आन्दोलनों में भी वे पीछे नहीं रहे। पंजाब के हिन्दी रक्षा आन्दोलन तथा गो रक्षा आन्दोलन में भी वे नेताओं की अग्रिम पंक्ति में रह कर आर्यजनता को मार्गदर्शन देते रहे।

आर्यसमाज के महा सम्मेलनों और उत्सवों में व्यवस्था एवम् प्रबन्ध कार्य सम्पादित करने में प० जी को अपूर्व दक्षता प्राप्त थी। अतः १९५१ ई० में मथुरा में आयोजित दयानन्द दीक्षा शताब्दी, हैदराबाद आर्य महासम्मेलन १९६८, आर्य महासम्मेलन अलवर १९७६ और १९७५ में आर्यसमाज शताब्दी महोत्सव दिल्ली के संयोजक के रूप में उन्होंने अपना उल्लेखनीय योगदान दिया। ●

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा द्वारा पारित प्रस्ताव

पंजाब

पंजाब में आतंकवादियों की गतिविधियां पिछले कुछ मास से फिर तेज हो गई हैं। यह सभा सरकार की हठधर्मी को इसके लिए दोषी मानती है। यदि सरकार ने वहां कम से कम पांच वर्ष के लिए सैनिक शासन लागू कर दिया होता, भूतपूर्व सैनिकों को परिवार सहित सीमावर्ती क्षेत्र में बसाने की योजना पर बल दिया होता और सीमान्त के साथ-साथ एक ५ मील चौडी सुरक्षा पट्टी बना दी होती तो आतंकवाद पर नियन्त्रण हो सकता था। आज पंजाब में निरन्तर जो निरपराध व्यक्तियों का नर-संहार हो रहा है, वह न होता।

सार्वदेशिक सभा इस तथ्य की ओर ध्यान दिलाना चाहती है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद ही निजामशाही के विरुद्ध पुलिस कार्यवाही के पश्चात् सैनिक प्रशासन की स्थापना के कारण ही हो भूतपूर्व हैदराबाद रियासत में व्यवस्था कायम हो सकी थी।

अत यह सभा सरकार से प्रार्थना करती है कि लगभग एक वर्ष पूर्व जो सुझाव इस विषय में सार्वदेशिक सभा की ओर से प्रधान मन्त्री जी को दिये गये थे, उन पर पुन विचार कर के पंजाब का शासन जल्दी से जल्दी सेना को सौंप दिया जाय तथा तथा सीमावर्ती क्षेत्रों में भूतपूर्व सैनिकों को बसा कर सीमा के साथ एक सुरक्षा पट्टी का निर्माण किया जाय।

धारावाहिक टी० वी० सीरियल तमस का विरोध

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा तमस चलचित्र (टी० वी० धारावाहिक सीरीज) को दिखाये जाने का विरोध करती है। साम्प्रदायिकता को नष्ट करने के स्थान पर ऐसे चलचित्र बीते हुए काल की हिंसा की घटनाओं को दिखाती है जो स्वतन्त्रता प्राप्ति के पूर्व व पश्चात् घटीं। इस प्रकार के प्रदर्शन

(शेष पृष्ठ ५ पर

कश्मीर की चिट्ठी

लेखक . उदगीथ साधनास्थली हिमाचल के संस्थापक
—ब्र० आचार्य आर्य नरेश, वैदिक प्रवक्ता

★

"कश्मीर में रहना होगा तो,
या इलाही कहना होगा,

यह उपरोक्त नारा सितम्बर मास मे अपनी बारामूला तथा कश्मीर की आर्य प्रचार यात्रा मे सुनने को मिला। इतना ही नहीं अपितु मुहर्रम के दिन श्रीनगर लालचौक में एकत्रित होने वाले युवक दिन के लगभग बारह बजे पुलिस की आख से आंख मिला कर यह भी बाल रहे थे—'पाकिस्तान जिन्दाबाद' 'इस्लाम का होगा भारत में राज्य'। इतना कुछ सुनने पर भो भारत की पुलिस चुपचाप यह सब कुछ सुनतो रही।

आश्चर्य की बात हैं कि पजाब के आतकवादियों को खुलेआम सहयोग देने वाले पाकिस्तान को मुर्दावाद कहने पर तो हम लोगो को गिरफ्तारी के वारट निकलते हैं पर भारत में उसके जिन्दाबाद कहने पर कोई आपत्ति नहीं होती। श्रीनगर तथा बारामूला में कई स्थानों पर भ्रमण करने से यह पता चला कि कश्मीर के अधिकतर मुसलमान वहा पर 'आजाद कश्मीर' न चाह कर पाकिस्तान का राज्य चाहते हैं। श्रीनगर में भारत के अन्य स्थानो से आने वाले लोगों को स्थानीय मुसलमान ऐसा कहते सुने जाते हैं कि आप भारत से आये हैं? जैसे कि वे स्वय कहीं भारत से बाहर रहते हो। पजाब से आए एक चार्टर्ड अकाऊटेट ने जब सत्सग से प्रभावित होकर अपने निवास पर हवन करना शुरू किया तो घर की मालकिन मकान ने उन्हें ऐसा करने से रोक दिया। वह युवक निराश होकर मुझे मिला और कहने लगा कितनी विचित्र बात है कि हम किराया देने पर भी यहां अपना पूजा-पाठ नहीं कर सकते।

वैसे भी कश्मीर में एक ऐसा वातावरण बनता जा रहा है जिस से दुखी होकर हिन्दू लोग स्वय ही कश्मीर को छोड दें। कुछ वर्षों पहले तक कश्मीरी भाषा देवनागरी जैसी लिपि मे थी। अब उसे उर्दू की लिपि में कर दिया गया है। हिन्दी पढने की अनिवार्यता समाप्त कर दी गई है। राजकीय नौकरियों में ९०% स्थान केवल मुसलमानों को दिया जाता है और शेष १०% स्थान कुल मिलाकर ब्राह्मण, डोगरा, सिख आदि हिन्दुओं तथा ईसाई लोगो को दिये जाते हैं। परीक्षा परिणाम में भी काफी घोटाला किया जाता है। इस से दुखी होकर हिन्दू युवा पीढ़ी तेज गति से कश्मीर को छोड कर बाहर जा रही है। ग्रामों में भी हिन्दुओं के लगभग ५% से १०% होने के कारण उन्हे दबाया जाता है। अनधिकार चेष्टा होती है, इज्जत खतरे में रहती है तथा कब्जा होता है। इसके परिणामस्वरूप ग्रामों से भी लोग खिसक रहे हैं।

बारामूला में अपने निवास के दौरान यह देखा कि लगभग ७-८ बजे के बाद सडकों पर सन्नाटा छा जाता है। होटलों में परदे के पीछे गाय कटती है और परदे के सामने खुले आम गाय का मास बिकता है। गत दिनों जब भिण्डरवाले की मृत्यु हुई थी, तो मुसलमानों ने हिन्दुओं के मन्दिर तथा घरों को तोडने में गुमराह हुए सिखों की पूरी सहायता की और गत दिनों जब एक मुसलमान नौजवान लडकी को भगा ले गया, तब होश आया कि हम कहां खडे हैं। मुसलमान-सिख की भाई-भाई की सारी भलाई मिट्टी में मिल गई। सिखों को अपनी भूल व वास्तविक स्वरूप का पता चला और उन्होंने लडका-लडकी को ढूढने के पश्चात् बिना विचारे ही दोनों को कत्ल कर दिया। सच्चाई यह है कि हर मुसलमान अन्दर से जानता है कि यह सिख लोग वास्तव में हिन्दू ही हैं कुछ और नहीं हैं।

वास्तविकता यह है कि बारामूला तथा कश्मीर के सिख भाई किसी मुसलमान की दुकान से पका हुआ भोजन नहीं लेते हैं और न ही उनके घर पर विवाह-शादियों में जाते हैं जब कि हिन्दुओं के साथ सब व्यवहार करते हैं। बारामूला के जिस मन्दिर को अज्ञान के कारण तोडा गया था, सिख लोग आज उसी से जब पानी भरने जाते हैं, तो उनकी हालत देखने लायक होती है। श्रीनगर से बारामूला तक मैं जिस बस में यात्रा कर रहा था वह बस अपने ही सिख भाई की थी। एक खिडकी के शीशे पर सतनाम वाहिगुरु आदि लिखा था। ड्राईवर कडक्टर भी सिख थे। सामने वाले शीशे पर गुरु नानकदेव जी की तस्वीर थी। बस चलते ही अनेकों मुसलमानों ने सिगरेटों के धूएँ की बम-बारी शुरू कर दी। मैंने सोचा कि अनेकों सिख यात्री उन्हें अभी रोक देंगे मगर किसी की आवाज न निकली। सब चुपचाप सावधान होकर बिना हिले डुले सिगरेट का धुआं फाकने लगे। पर हम से न रहा गया, अपने आस-पास बैठे सब लोगों को सिगरेट बन्द करने को कहा, इसका अच्छा प्रभाव निकला पर मैं सोचने लगा क्या कश्मीर के सिखों को सिगरेट का धुआं अगरबत्ती जैसी सुगन्ध देता है? वास्तविकता यह है कि सिख वहां पर मजबूर हैं।

मेरठ की घटनाओं का भी कश्मीरी मुसलमानों पर उल्टा प्रभाव पडा है। स्थानीय नेताओं ने उन्हें काफी गुमराह किया है। जब से भूतपूर्व मुख्य मन्त्री जी० एम० शाह (गुलाम मुहम्मद शाह) 'मुसलिम यूनाइटेड फ्रन्ट' भारत विरोधी नई पार्टी में शामिल हुए हैं। तब से कश्मीर का वातावरण और गरम हो गया है। अब शरियत की खूब दुहाई दी जा रही है। शाह ने अगस्त मास में कश्मीरी मुसलमानों को मुसलमान मजहब विरोधी कार्य नसबन्दी न करने की अपील की है। पर शरियत की दुहाई देने वाले शाह ने बाल कटा कर बुरका उतार कर बिना दुपट्टे के छाती निकाल कर चलने वाली मुसलमानियों को कोई आदेश नहीं दिया है।

बारामूला के गवर्नमेंट गर्ल्स हाई स्कूल में १५ नहीं १४ अगस्त को झण्डा फहराया गया। और वह झण्डा भारत का तिरगा न होकर पाकिस्तान का चांद तारे वाला झण्डा था। गत दिनों जब एक हिंदू बहिन श्रीनगर में सब्जी बेचने वालों से कुछ भाव को कम करने के लिए बोली तो उसने अकड कर तथा आंख निकाल कर उत्तर दिया, क्यों कम कर लें? तुम्हारे बाप की है या तुमने कमाई है। हम जो चाहे दाम लेंगे। यह जो रंग-बिरंगी साडी डालकर गाडी में घूम रही हो, यह किसकी है? एक दिन सब ले लेंगे। कश्मीर की अधिकतर मुस्लिम महिलाएँ हिन्दुओं को मुसलमान बनाने की कोशिश में रहती हैं, जिससे कि उन्हें कुरान का बहिश्त मिल सके।

यह बात सर्वविदित है कि १९४७ के पश्चात् पाकिस्तान से उजड कर आए हुए हिन्दू लोगों को आज तक भी कश्मीर की नागरिकता नहीं मिली है। स्किन स्पेशलिस्ट डा० मुहम्मद नौशेरी ने मेरठ की घटना का सकेत करते हुए कहा, जिस प्रकार से हमारे मेरठ में रहने वाले मुसलमानों को मारा गया है। वसे हम भी यहा के हिन्दुओं को घरों से खींच कर काट-काट कर मार देंगे। कश्मीर की हालत काफी नाजुक होती जा रही है। एक अकेला श्री जगमोहन जी आखिर क्या कर सकते हैं? अनन्तनाग हिन्दू तीर्थ का नाम बदल कर इस्लामाबाद कर दिया गया है। मोहमदाबाद और नूराबाद भी हिंदू नगरों के बदले हुए नाम हैं। श्रीनगर में स्थित ललघद महिला हास्पिटल का नाम बदलने की तैयारी हो रही है। यह एक पढ़ी-लिखी हिन्दू कवयित्री थी। अब इसका नाम बदल कर लल आरिफ कहने लग गए हैं। लाल चौक के पास खडी हुई वैदिक प्रचार वाहन की ओर सकेत कर के एक मुसलमान सिपाही ने पूछा कि आपने अपनी गाडी का ऐसा रग अर्थात् केसरिया रग क्यों रखा है। आश्चर्य है कि हिंदू ही नहीं बल्कि उन्हें हिंदुओं को गाडियों से भी नफरत है।

जब कभी भी कश्मीर में दगा भडकता है तो स्थानीय मुसलमान इकट्ठे होकर नारे लगते हैं (इण्डियन डाग्स गो बैक) अर्थात् भारतीय कुत्तो वापिस जाओ। खेद है कि इतनी गम्भीर परिस्थिति होने पर भी बहुसख्यक कश्मीरी पण्डित अभी भी जागे नहीं हैं। जाति-पांति तथा पुरानी रूढिवादी परम्पराओं में अभी भी फंसे हुए हैं। उनका उठना-बैठना अधिकतर मुसलमानों के सग है। ९०% पण्डित मांस खाते हैं और मुसलमानों के सग अधिकतर व्यवहार होने के कारण आज भी अनेकों हिन्दू लडकियां मुसलमान बन कर उनसे विवाह कर लेती हैं। क्योंकि गाय का मांस खाए बिना कोई मुसलमान नहीं बन सकता

(शेष पृष्ठ ५ पर)

तारों को निगल लेता है 'ब्लैक होल' !

अमेरिका के ओहायो स्टेट विश्वविद्यालय के दो खगोलविदों 'ब्रण्डले पीटरसन' तथा 'फरलेंड' ने लगभग दो वर्ष पूर्व एन०जी०सी० ५५४८ नाम की आकाश गगा का अवलोकन करते हुए अनायास ही 'ब्लैक होल' को खोज लिया और उसे तारे निगलते हुए देखा।

लगभग २० वर्ष पूर्व से खगोल शास्त्री इसके अध्ययन मे लगे हुए थे। वास्तव में उन्हें तब आश्चर्य होता था जब कोई तारा अपने पथ से विचलित हो जाता था और उस एक खास क्षेत्र को पार कर जाने के पश्चात् पुन. अपने मार्ग पर आ जाता था। इससे वैज्ञानिकों ने अनुमान लगाया कि तारे का अपने स्थान से हट जाना ये दर्शाता है कि कोई अन्य 'ग्रह' या 'तारा' जिसकी खोज अभी तक नहीं हुई है इसके रास्ते में आ रहा है।

वास्तव में जब किसी तारे से प्रकाश, ताप आदि के रूप में निकलने वाली ऊर्जा, उस तारे पर बाहर की ओर दबाव उत्पन्न करती है तो ये दबाव उस तारे की सहिता द्वारा केन्द्र की ओर लगने वाले गुरुत्वाकर्षण बल को सन्तुलित रखता है। परन्तु जिस समय उस तारे की ताप-नाभिकीय ऊर्जा का भण्डार समाप्त हो जाता है, तब उस तारे की गुरुत्वाकर्षण मृत्यु हो जाती है।

अब अगर उस तारे का भार सूर्य के भार से १६ गुना अथवा इससे ज्यादा हो, तो वह तारा स्वय के केन्द्र की ओर लगने वाले गुरुत्वाकर्षण बल के कारण लगातार छोटा होता चला जाएगा तथा आकार के साथ-साथ इसकी त्रिज्या भी छोटी होती चली जाएगी, परतु इस तारे में अन्दर की ओर से लगने वाले गुरुत्वाकर्षण बल के कारण छोटे होने की इस प्रक्रिया में इसकी त्रिज्या अब एक विशेष लम्बाई की रह जाएगी (स्वाधीन त्रिज्या), तब इसके अन्दर की ओर लगने वाला गुरुत्वाकर्षण बल अनन्त होगा, जो तारे के सारे पदार्थ को चारों ओर से दबा कर केन्द्र में ले आएगा और उस तारे को निगल लेगा।

इस प्रक्रिया में केन्द्र का आयतन तो शून्य हो जाता है और उस तारे की 'गुरुत्वाकर्षण मृत्यु' हो जाती है। 'स्वाधीन त्रिज्या' वाल अनन्त शक्ति के इसी गोले को ब्लैक होल कहते हैं।

इस ब्लैक होल मे केवल एक ही रास्ता होता है। अर्थात् इसके अन्दर कोई भी चीज जा तो सकती है परन्तु फिर बाहर नहीं आ सकती। इसके अन्दर क्या है? अन्दर गई वस्तु बाहर क्यों नहीं आ सकती ये अनबूझ पहेली है।

वैज्ञानिकों का कहना है कि आकाश में अनगिनत ब्लैक होल हैं। इनमें छोटे-छोटे ब्लैक होल अधिक हैं। यदि कोई बडा ब्लैक होल हमारी पृथ्वी के सामने आ जाए तो ये सारी पृथ्वी उसके गर्भ में चली जाएगी। एक अनुमान के अनुसार एक अरब वर्ष बाद हमारा सूर्य भी एक विशाल ब्लैक होल मे बदल जायेगा।

जब ब्लैक होल के स्थान का पता लगाना होता है तो तब वैज्ञानिक विद्युत् चुम्बकीय तरगे भेजते हैं। यदि ये तरगें अकारण ही मुड जाती हैं तो वैज्ञानिक समझ जाते हैं कि अमुक स्थान पर ब्लैक होल है। यह ब्लैक होल न तो हम आंखों से देख सकते हैं और न ही किसी यन्त्र से क्योंकि ब्लैक होल में सूचना लाने के लिए भेजी प्रकाश किरणें और रेडियो तरगें दोनों ही उसी मे समा जाती हैं। कोई भी सूचना लेकर वापस नहीं आतीं।

(पृष्ठ ४ का शेष)

कश्मीर की चिट्ठी

इसलिए उसको भी वे खा जाती हैं। एक तरफ तो कश्मीरी पण्डित अपनी लडकियो के लिए ब्राह्मण परिवार का खूबसूरत पढ़ा लिखा, अच्छी नौकरी वाला कश्मीरी लडका ही ढूढ़ते रहते हैं और दूसरी ओर जाति-पाति के पचड में फसे हुए अन्धविश्वासी लोगों की बेटियां बूढी होती-होती किसी मुसलमान लडके से विवाह कर लेती हैं। गत दिनों एक एम०ए० पास खूबसूरत कश्मीरी लडकी ने मुसलमान सफाई मजदूर से विवाह कर लिया। कितने आश्चर्य तथा दुख की बात है जो आर्य युवतियां गो मांस भक्षक, चरित्रहीन देश के घातकों को सूरत भी दिखाना न चाहती थीं। और अपने चरित्र को बचाने के लिए आत्महत्या कर लेती थीं, वे आज कहां खडी हैं।

धारा ३६० से स्वाधीय मुसलमान भी दुःखी हैं। कश्मीरी निवासी गुलजार अहमद सुपुत्र श्री अब्दुल खलिक दार ग्राम गढीपुरा जिला अनन्तनाग ने मिलने पर कहा कि इस धारा के लगे रहने से बाहर के लोग कश्मीर में फैक्टरियां नहीं लगाते जिस कारण हमारे जैसे अनेकों दसवीं पढ़े-लिखे लोग बहुत बडी सख्या में बेकार हो रहे हैं। हमें हर वर्ष कश्मीर से बाहर अमृतसर, सोलन तथा शिमला आदि स्थानों पर कुली का काम करना पडता है।

कश्यप ऋषि के द्वारा बारामूला पहाड को काट कर वहां का पानी निकाल कर बसाये हुए आर्य कश्मीर की आज ऐसी दुर्दशा है कि ऋषि सन्तानों का दम घुट रहा है। यदि भारत के नेताओं, सेना के जवानों तथा कश्मीरी पण्डितों को अपने देश तथा देश की सस्कृति मे किंचित् मात्र भी प्यार है, तो उन्हें चाहिए कि जाति-पाति, मांसाहार, पशुबलि, वोट, नोट तथा सुख को ओट का शीघ्र लोभ छोड कर नीति, शक्ति तथा वैदिक सस्कृति के आचरण के द्वारा सगठित होकर इसे बचाने का प्रयत्न करें।

आर्य जाति में नवचेतना के लिए संस्कार आवश्यक

—शिवकुमार शास्त्री

उत्तम सन्तान के लिए ऋषियों ने माता-पिता के कर्त्तव्यों पर गम्भीर मनन किया है। माता के विचार और आचार का प्रभाव बच्चे के माता के गर्भ में आने पर ही उसे प्रभावित नहीं करते अपितु माता जब से रजस्वला होती है तब तक के आचार और व्यवहार भी सन्तान को प्रभावित करते हैं। आर्य जाति में परम्परा से यह रीति चली आती है कि रजस्वला एकान्त में शान्त रह कर तीन दिन तक न दिन में सोये, न आंख में सुरमा डाले, न रोये, स्नान न करे, न तेल लगाये, न उबटन करे, न नाखून काटे, न दौडे, न हसे, न अधिक बात करे, न ऊँचे शब्द सुने न कथो करे आदि-आदि। रजस्वला की यह दिनचर्या सुश्रुत के विधान के अनुसार है। क्यों ऐसा करना चाहिए ? और इसके विपरीत चलने से क्या हानि होगी ? इस पर सुश्रुत ने कहा—"दिवा स्वपन्त्याः स्वापशील, दिन में सोने वाली रजस्वला के गर्भ से उत्पन्न बालक बहुत निद्रालु होगा। अञ्जनात् अन्धः, काजल लगाने से बच्चा अन्धा हो सकता है। रोदना-द्विकृतदृष्टि, रोने से विकृत दृष्टि, भेंगा आदि, स्नानानुलेपनाद् दुःख-शील., स्नान और उबटन से दुःख-शील, अभ्यगात कुष्ठी, तैलमर्दन से कोढ़ी आदि भयकर रोग बालक को हो सकते हैं—अतः बच्चों को सुसंस्कृत करने का काम बच्चे के माता के पेट में आने से पूर्व ही प्रारम्भ हो जाता है। बच्चे के गर्भ में आने से लेकर उत्पत्ति तक ऋषियों ने तीन संस्कारों का विधान किया। पहला गर्भाधान, दूसरा पुंसवन और तीसरा सीमन्तोन्नयन। रजस्वला की दिनचर्या और स्नान के पश्चात् आवश्यक तिथि, समय और खान-पानादि का ध्यान रखने के लिए पहला संस्कार है। उसके पश्चात् गर्भ की रक्षा और पुष्टि के लिए पुंसवन और सीमन्तोन्नयन दो संस्कार हैं। इसमे माता के विचार और आचार का गम्भीर प्रभाव गर्भस्थ बालक पर होता है। आर्यसमाज के वयोवृद्ध विद्वान् श्री प० सुरेन्द्र शर्मा गौर ने गृहस्थियों के लिए लिखी "जीवन का आनन्द" नाम की पुस्तक में एक अमेरिकन दम्पती के शिशु की घटना का उल्लेख किया है, उस घटना को प्रभाव-कारिणी समझ कर उससे मैं अपने पाठकों को भी परिचित कराना उपयोगी समझता हूं। घटना का उल्लेख इस प्रकार है—

विवाहानन्तर एक दम्पती को एक पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। प्रसव होने पर बच्चे को स्नान करा के नर्स ने उसके अंगों का परीक्षण किया, सब शरीर की देखभाल करने के बाद नर्स ने बच्चे की आंखों को देखते हुए कहा कि वैसे तो आपका बच्चा स्वस्थ है, किन्तु इसकी दांयी आंख में दो धब्बे से हैं, कुछ बडा होने पर किसी आंखों के डाक्टर को दिखा कर जान लेना कि ये धब्बे आगे चलकर बच्चे की दृष्टि को तो प्रभावित नहीं करेंगे।

जो माता पिता बच्चे के जन्म से प्रसन्न थे, वे नर्स की इस बात को सुन कर चिन्तित हुए। बच्चा जब तीन महीने का हुआ तो उन्होंने आंखों के डाक्टरों को दिखाना प्रारम्भ किया और जिसने जो औषध बतायी वह डाली। किन्तु वे धब्बे ज्यों का त्यों रहे और बच्चा तीन वर्ष का हो गया। एक दिन बच्चे की माता ने चिन्तित होकर कहा कि बच्चे की आंख के धब्बे इतने डाक्टरों के उपचार से भी ठीक नहीं हुए मेरी सम्मति है कि आंखों के सब से बडे डाक्टर को बच्चे की आंख दिखाइये। नहीं तो रोग आयु के साथ पुराना हो रहा है। यदि किसी प्रकार इन धब्बों का असर बीनाई पर हुआ तो यह सारे जीवन दुःखी रहेगा और हमारी की लापरवाही के लिए हमें कोसेगा।

देवी के अनुरोध के अनुसार दूसरे दिन बच्चों का पिता आंखों के सब से बडे डाक्टर के पास बच्चे को ले गया और धब्बों को सारी बात सुना कर डाक्टर से देखने की प्रार्थना की। डाक्टर ने बच्चे की आंख उत्तम यन्त्रों से भली प्रकार देखी और बच्चे के पिता को कहा कि इन धब्बों का बच्चे की दृष्टि पर कोई दुष्प्रभाव नहीं है। इस से आप निश्चिन्त रहें। इसके पश्चात् यन्त्र से धब्बों को देखते हुए डाक्टर ने कहा जिन्हें आप धब्बा कह रहे हैं, मुझे तो ये अंग्रेजी के जे० और डी० अक्षर प्रतीत हो रहे हैं। डाक्टर की बात को आश्चर्य से सुनते हुए बच्चे के पिता ने कहा। यदि ये अंग्रेजी के जे० और डी० अक्षर हैं तो बच्चे की आंख में कैसे लिख गये ? डाक्टर ने कहा– यह मैं नहीं बता सकता। किन्तु हैं ये जे० और डी० अक्षर ही। मेरी दृष्टि में बच्चे की आंख ठीक है और इसे किसी उप-चार की आवश्यकता नहीं है।

डाक्टर की बात सुनकर उसे सन्तोष नहीं हुआ और उसको यह धारणा बनी कि रोग डाक्टर की समझ में नहीं आया। यह अक्षरों का बहाना लगा कर मुझे टाल रहा है। अब और चारा ही क्या है ? वह चिन्तामग्न होकर डाक्टर के औष-धालय से घर को चल दिया।

इधर माता बच्चे की आंख का समाचार जानने को उत्सुक बैठी थी। दूर से ही अपने पति को आता देखकर घर से दौड पडी और बच्चे को गोद में उठाकर प्यार किया और अपने पति से पूछा डाक्टर ने क्या बताया है ? वह बेचारा पहले ही खिन्न था। उत्तर में कहा—डाक्टर ने क्या बताया है ? एक सर दर्द और दे दिया है। वह कहता है कि ये धब्बे नहीं हैं। मुझे तो अंग्रेजी के जे० और डी० के अक्षर प्रतीत होते हैं। मैंने उससे पूछा कि ये बच्चे की आंख में कैसे लिख गये तो डाक्टर का यह उत्तर था कि यह मैं नहीं जानता।

इस जे० और डी० अक्षरों की बात सुन कर बच्चे की माता ने चकित होते हुए स्वयं बच्चे की आंख को सावधानी से देखा तो उसे भी वे अक्षर स्पष्ट दिखाई दिये। माता ने प्यार से बच्चे को छाती से चिप-टाते हुए प्रेमाश्रु बरसा कर कहा तुम व्यर्थ ही तीन वर्ष तक चिन्ता में घुलते रहे। इन अक्षरों का कारण तो मैं हूं। ये कैसे लिखे गये यह डाक्टर नहीं बता सकता, मैं बताती हूं।

उधर सोच-सोचकर उसके पति का मस्तिष्क चकरा रहा था। वह देवी अपने पति को पुस्तकों के कमरे में ले गयी और अलमारी में पहले नम्बर की पुस्तक निकाल कर जो "जान डिक्सन" नाम के एक वीर पुरुष की जीवन गाथा थी दिखाई। देवी ने कहा यह पुस्तक कालिज मेरे पाठ्य क्रम में थी। यह मुझे इतनी पसन्द थी कि कालिज की शिक्षा समाप्ति के बाद भी न जाने मैंने इसे कितनी बार पढ़ा ? आप से विवाह के बाद भी पितृगृह से इस पुस्तक को विशेष रूप से लायी।

जब यह बालक मेरे गर्भ में था तो मैं इस पुस्तक को पढ़ती रहती थी और जान डिक्सन नाम का संक्षिप्त रूप जे०डी० मेरे मस्तिष्क में घूमता रहता था। मैं आंख मींच-कर प्रभु से याचना करती रहती थी कि वह मेरा गर्भस्थ बालक उसी प्रकार का वीर बने जैसा जॉन डिक्सन था। मेरी इस भावना और तन्मयता का ही यह प्रभाव हुआ कि रात-दिन मेरे मानस-चक्षु में लिखे हुए जे०डी० अक्षर इसकी आंख में उभर आये।

शास्त्रीय दृष्टि से विश्लेषण करें तब भी यह बात सर्वथा सुसगत बैठती है। अन्न का सूक्ष्म भाग मन बनता है। बच्चा मां के गर्भ में नाड़ के द्वारा माता से ही आहार प्राप्त करता है और उस आहार के सूक्ष्म भाग के रूप में माता के संस्कार स्वतः बच्चे के मस्तिष्क में पहुंच गये। "अङ्गादङ्गात् सम्भवति हृदयादधिजायसे" सन्तान माता-पिता के अंग-अंग के प्रभाव को लेकर उत्पन्न होती है, वह हृदय से भी प्रभावित होती है। अतः स्पष्ट है कि जन्म से पूर्व विहित इन संस्कारों का भी कितना महत्व है ?

(पृष्ठ ३ का शेष)

सीरियल तमस का…

से निश्चय ही देश की स्थिरता व अखण्डता को आघात पहुंचता है।

सार्वदेशिक सभा भारत सर-कार से मांग करती है कि वह इस प्रकार के धारावाहिक टी० वी० अथवा अन्य किसी भी माध्यम से इसके प्रदर्शन पर रोक लगा देवे।

सूखा राहत कोष में योगदान

आर्यसमाज माडल टाउन के सभी सदस्यों ने मिलकर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा को ग्यारह हजार दो सौ पचास रुपये का भेंट सूखा राहत कोष में दिया।

श्री कृष्णचन्द्र शर्मा
मन्त्री
आर्यसमाज माडल टाउन दिल्ली-९





शोक प्रस्ताव

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के समस्त अधिकारी एवं कर्मचारी आर्यसमाज के कर्मठ कार्यकर्त्ता सुप्रसिद्ध व्यवसायी श्री चमनलाल ग्रोवर जी के भ्राता श्री मनोहर लाल ग्रोवर जी के अकस्मात् देहावसान पर महरा दुःख एवं शोक व्यक्त करते हैं तथा परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि वे दिवगत आत्मा को सद्गति प्रदान करे तथा उनके वियोग में सतप्त दुःखी परिवार एवं इष्टमित्रों को इस महान् दुःख को सहने की शक्ति तथा सामर्थ्य प्रदान करे। सभा के साप्ताहिक पत्र आर्यसन्देश का सम्पादक मण्डल भी श्री ग्रोवर जी के परिवार के प्रति अपनी संवेदना व्यक्त करता है।

डा० धर्मपाल
प्रधान

एक सौ साठ ईसाईयों द्वारा वैदिक धर्म में प्रवेश

उडीसा का फुलवानी जिला जगल पहाडों से घिरा हुआ है अत वहाँ के आदिवासियों का बाहर से सम्पर्क कम होने के कारण आज भी अपनी पुरानी परम्परा में दृढ़-विश्वास है। ये कन्ध जाति के आदिवासी अत्यन्त भोले-भाले एवम् सरल हैं, इनकी इसी सरलता का लाभ उठा कर ईसाई पादरियों ने अपना जाल सब ओर फैलाया है। अतः उस क्षेत्र में हम गत वर्ष से यत्नशील थे। परन्तु स्थानीय लोगों के सहयोग पर इस वर्ष हमें सफलता मिली। आर्यसमाज के कार्यकर्त्ताओं द्वारा प्रेरणा देने पर १६० से अधिक ईसाइयों ने समारोह के साथ मकर संक्रांति के पवित्र पर्व पर यज्ञ कुण्ड की पवित्र अग्नि में आहूति देकर वैदिक धर्म की दीक्षा ली।

सस्कार श्री प० विशि केसन शास्त्री एवम् सुभाष शास्त्री ने कराया, इस कार्य में श्री नारायण प्रधान व श्री दासरथी प्रधान ने महत्वपूर्ण सहयोग दिया। समारोह कासारा कार्यक्रम श्री स्वामी धर्मानन्द जी प्रधान उत्कल आर्य प्रतिनिधि सभा की देख-देख में हुआ।

आर्यसमाज पश्चिम विहार द्वारा ऋषि बोधोत्सव

आर्यसमाज पश्चिम विहार द्वारा २१ फरवरी १९८८ को ऋषि बोधोत्सव बडी धूमधाम से मनाया जा रहा है। इस अवसर पर सामवेद का बृहद् यज्ञ, उच्च कोटि के विद्वानों के भाषण तथा ऋषि लगर की व्यवस्था की गई है। आसपास की अन्य आर्यसमाजों को भी इस में आमन्त्रित किया गया है। "ऋषि लगर के लिए दान आर्यसमाज के एक श्रद्धालु सदस्य श्री मुन्शीराम गुलाटी ए १/१९१ पश्चिम विहार द्वारा किया गया है।"

आर्य सन्देश

धार्मिक साहित्य, वेद, दर्शन, उपनिषद्, गीता, महाभारत आदि के विवेचना पूर्ण लाभदायक प्रेरक साहित्य के लिए 'आर्य सन्देश' एवम् आर्यसमाज की गतिविधि से परिचय के लिए और देश हित के लिए सत्पथ प्रदर्शक 'आर्य सन्देश' साप्ताहिक दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के मुखपत्र के ग्राहक बनकर और बनाकर आर्यसमाज के प्रगति के कार्य में अपना महत्व पूर्ण सहयोग प्रदान कीजिये।

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R N No. 32387/77 Post in N.D P.S O on 4, 5-2-88 Licenced to post without prepayment, Licence No U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस न० यू १३९

भाषण प्रतियोगिता

ऋषि बोधोत्सव मंगलवार १६ फरवरी १९८८

मध्याह्न १२ बजे के अवसर पर

आर्य युवक परिषद दिल्ली (पञ्जीकृत) द्वारा आयोजित भाषण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया है।

विषय स्वतन्त्रता संग्राम मे आर्यसमाज का योगदान

इस अवसर पर विजेताओं को "नवनीत लाल सत्यप्रिय धर्मार्थ ट्रस्ट' की ओर से तीन पुरस्कार—

प्रथम	३०० रु०+एक शील्ड
द्वितीय	२०० रु०+एक शील्ड
तृतीय	१०० रु०

के अतिरिक्त वैदिक साहित्य भेंट किया जायेगा सभा की अध्यक्षता श्री प्रकाशचन्द जी गुप्ता एडवोकेट करेंगे।

इस प्रतियोगिता मे भाग लेने वाले अपना नाम १५ फरवरी तक निम्न पते पर भेज द।

ओमप्रकाश
मन्त्री आर्य युवक परिषद्

(पृष्ठ १ का शेष)

बिन्दापुर में नवीन......

निधि सभा के वेद प्रचार अधिष्ठाता स्वामी स्वरूपानद आदि ने भी विचार व्यक्त किये। श्री अशोक-कुमार ने मंच संचालन किया। इस से पूर्व प० बृजपाल शास्त्री के ब्रह्मत्व मे यज्ञ का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर केन्द्रीय सभा के मन्त्री श्री विमल कान्त शर्मा, श्री सुरेन्द्र कुमार हिन्दी, श्रीमती ईश्वरी देवी प्रधाना, स्त्री आर्यसमाज शालीमार बाग आदि अनेक महानुभाव भी उपस्थित थे। इससे पूर्व ब्रह्मचारी वीरेन्द्र कुमार ने तथा ब्रह्मचारिणी रामप्यारी के नेतृत्व मे आर्य युवतियो ने योग के रोमांच-कारी प्रदर्शनो द्वारा उपस्थित जन-समुदाय को मन्त्र मुग्ध कर दिया। नवजीवन मण्डल स्कूल के बच्चो ने अनेकता में एकता भाषण में प्रेरित विचार प्रस्तुत किये।

(पृष्ठ १ का शेष)

ला० ओंकारनाथ....

जनो ने भाग लिया। इस अवसर पर प० यशपाल सुधांशु एव श्री प० शिवकुमार शास्त्री ने सान्त्वना के लिए शास्त्रोक्त उद्बोधन दिया।

श्रीमती कमलेश की स्मृति में श्री ओंकार नाथ ने ५ हजार रुपये की स्थिर निधि के लिए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा में देने की घोषणा की। इस निधि का ब्याज दयानन्द सेवाश्रम द्वारा किये जा रहे सेवा कार्यों में प्रयोग किया जा सकेगा।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ : अंक १७ | रविवार २४ फरवरी १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | फाल्गुन २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य : एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ३० डालर, १० पौंड

आर्यसमाजों के अधिकारी ऋषि-बोधोत्सव (शिवरात्रि) और मार्च मास में आर्यसमाज स्थापना दिवस पर विशेष आयोजन रखें

आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य वेद का प्रचार प्रसार करना है। सभा इस कार्य में लगातार प्रयत्नशील है। आर्यसमाजों का भी दायित्व बनता है कि वह इस कार्य में सभा का तन, मन, धन से सहयोग करें। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल आर्य ने दिल्ली की समस्त आर्यसमाजों के अधिकारियों से अनुरोध किया है कि वे फरवरी और मार्च मास में आ रहे ऋषि बोधोत्सव (शिवरात्रि) और आर्यसमाज स्थापना दिवस के अवसर पर अपनी-अपनी समाजों में तथा सार्वजनिक स्थानों पर विशेष कार्यक्रमों का आयोजन करें। एक-एक सप्ताह की कथाओं, वेद पारायण यज्ञों, उत्सवों, समारोहों का आयोजन रखें, प्रातः प्रभात फेरियां निकालें, अधिक से अधिक साहित्य वितरण करें। सभा इस कार्य में आर्यसमाजों का पूर्ण सहयोग करेगी। सभा के पास महोपदेशकों, उपदेशकों, भजनोपदेशकों, गायकों की समुचित व्यवस्था है। सभा के अन्तर्गत स्वामी स्वरूपानद जी सरस्वती महात्मा रामकिशोर जी वैद्य, प्रा० पं० हरिदेव जी सि० भूषण, प० सत्यदेव जी स्नातक, प० चुन्नीलाल जी आर्य, पं० वेदव्यास जी आर्य, प० ज्योति प्रसाद जी आदि महानुभावों की दिन रात प्रचार के लिए सेवायें उपलब्ध हैं। आप सभी महानुभावों की दिल्ली के अतिरिक्त समूचे भारतवर्ष में बहुत मांग है। सभा ने साहित्य प्रचार के लिए छोटे-छोटे ट्रैक्ट, स्कूली बच्चों के लिए पाठ्य पुस्तकें प्रकाशित कराई हुई हैं (जिनकी सूची प्रति सप्ताह आर्य सन्देश में प्रकाशित की जाती है।) सभा बहुत ही सस्ते अथवा लागत मूल्य पर इन्हें प्रचार कार्य के लिए देती है। आर्यसमाजों को इसका पूरा-पूरा लाभ उठाना चाहिए और साहित्य प्रचार प्रसार कार्य में अपना सहयोग देना चाहिए।

आर्यसमाजें आज ही अपने-अपने कार्यक्रम निश्चित कर उपदेशक व्यवस्था के लिए सभा कार्यालय से सम्पर्क करें और वेद प्रचार कार्य में अपना पूर्ण योगदान दें।

सभा ने ग्रामों, पुनर्वास कालोनियों, झुग्गी-झोंपड़ियों और पिछड़ी बस्तियों में प्रचार तथा साहित्य वितरण के लिए एक प्रचार वाहन रखी हुई है, जिस पर लाउडस्पीकर टेप रिकार्डर, दरियों, हवन कुण्ड, ढोलक, हारमोनियम आदि की समुचित व्यवस्था है। प्रतिदिन प्रचार कार्य के लिए समर्पित है। प्रचार वाहन भोजनावकाश के समय सरकारी कार्यालयों तथा सार्वजनिक स्थानों पर प्रचार के लिए जाती है और ग्रामों की मांग अनुसार प्रत्येक सप्ताह के शुक्रवार और शनिवार को रात्रि में भी प्रचार कार्य करती है। समाजों को इससे भी पूरा लाभ उठाना चाहिए। आप अपने समीपस्थ के ग्रामों, पुनर्वास कालोनियों, पिछड़ी बस्तियों में रात्रि प्रचार के आयोजन रखें। और सभा कार्यालय से दिन और समय निश्चित कर लें। प्रचार वाहन आपके यहां पहुंचेगी और प्रचार करेगी। आर्यसमाजों पर किसी प्रकार का कोई बोझ नहीं पड़ेगा। समुचित व्यय सभा की ओर से ही किया जाता है। आर्यसमाजों को इस सुनहरी अवसर का अवश्य लाभ उठाना चाहिए।

—जगदीशलाल, वेदप्रचार विभाग

विमोचन

१४ फरवरी (रविवार) २.३० बजे मध्याह्न आर्यसमाज अनारकली (मन्दिर मार्ग) में ऋषि बोधोत्सव व युवा उद्घोष का "कुरीति उन्मूलन विशेषांक" का विमोचन स्वामी आनन्द बोध सरस्वती (प्रधान, सार्वदेशिक सभा) की अध्यक्षता में होगा।

अमर शहीद प० लेखराम का "शहीद दिवस" आर्यसमाज राणा-प्रताप बाग में रविवार ६ मार्च प्रात. १० बजे केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् की ओर से होगा।

चन्द्रमोहन आर्य
प्रेस सचिव
केन्द्रीय आर्य युवक परिषद्

ऋषि बोधोत्सव

आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली के तत्वावधान मे
१६ फरवरी १९८८ मंगलवार
फिरोजशाह कोटला मैदान
प्रातः ८ बजे से सायं ४ बजे तक

इस अवसर पर प्रात ८ बजे से यज्ञ होगा जिसके ब्रह्मा होगे प० यशपाल सुधांशु।

कार्यक्रम :

ध्वजारोहण — स्वामी विद्यानन्द जी
श्रद्धांजलि सभा — २.३० बजे से

अध्यक्ष—स्वामी आनन्द बोध सरस्वती
श्री कृष्णचन्द "पन्त" रक्षामन्त्री भारत सरकार
श्री सीताराम केसरी
श्री जत्थेदार सिंहपाल सिंह
डा० सत्यकेतु विद्यालंकार
आचार्य विशुद्धानन्द मिश्र
आचार्या कमलारत्नम्
श्री विनोद मिश्र—सम्पादक, दैनिक हिन्दुस्तान

निवेदक .

महाशय धर्मपाल — प्रधान
शिवकुमार शास्त्री — महामन्त्री

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए० | प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

वेदों में यज्ञ एवं भावना

– प्रतिभा मूना, बम्बई

वेदानुसार यज्ञ का महत्व इस संसार में अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है। वैसे तो यज्ञ के बहुत से प्रकार हैं—देवयज्ञ, पितृयज्ञ, मानयज्ञ, बलि-वैश्वदेव यज्ञ, अश्वमेघ यज्ञ, लेकिन इन सबो मे अग्निहोत्र यज्ञ, विश्व-कल्याण के लिये किया जाता है। इस यज्ञ से आधिदैविक, आधि-भौतिक, आध्यात्मिक इन सभी के प्रकोपों से बचा जा सकता है

इसे यजुर्वेद का यह अन्तिम अध्याय यानि ४०वाँ अध्याय, जो दर्शन सिखाता है—वह दर्शन है—एकता। यदि यही एकता सब में नजर आ जाये तो वह हिरण्यपात्र है।

जन-नर-सुर-असुर-धीर

जन —एकता

नर —जो कर्म में लिप्त नहीं होता उसे नर कहते हैं।

धीर —जो विवेचन करता है समझता है वह धीर है।

सुर—जो सहन करते हैं।

असुर—जो काम नहीं करते वह तामसिक वृत्ति के लोग हैं।

यश —सत्य के मान लेने से फिर वह यज्ञ मे परिवर्तित हो जाता है।

श्री —जो आचरण में आ गई वह श्री है।

बहुत मनुष्यो में जो कोई मनुष्य आपका भक्त होकर यजमान बनकर यज्ञ करता है वह परमैश्वर्यवान हो जाता है।

हवन से वेदमंत्रों का रक्षण होता है और ईश्वर के अस्तित्व का पता चलता है।

अग्निहोत्र (भौतिक अग्नि) दूर और समीपस्थ सब प्राणियों का उपकार करता है इसलिये यज्ञ आरम्भ करने के पहले अग्नि विषयक मन्त्रो द्वारा पाठ करना चाहिये।

वैसे तो इस दुनिया मे सभी प्राणी मरते और जन्म लेते हैं कोई अमर नहीं परन्तु परमात्मा के उपासकों को और अग्निहोत्रियो को प्राण अधिक मिलता है और वे दीर्घजीवी होते हैं।

यह यज्ञ अग्नि सग्राम में विजयप्रद है शत्रुओ का नाश करने वाला है। राज्य स्थापित करने के लिए प्रजारक्षार्थ किये जाते हैं उन मे भी अग्नि रूपी शस्त्र ही विजयप्रद है क्योंकि जो सग्राम में वायु आदि गत सूक्ष्म जन्तुओ को दूर करते के लिए और शरीर स्वास्थ्य के लिए आग्नेय द्रव्य जो होमादि द्वारा उत्पन्न होकर शरीरों और वायु आदि मे फैलते हैं उन्ही के द्वारा विजय होता है।

जो पूर्ण ब्रह्मचर्य से विद्या पढकर नियमपूर्वक हवन आदि करते हुए धर्म का आचरण करते हैं उन्हें मृत्यु मध्य मे नहीं दबाती।

हवन से द्युलोक, पृथ्वी लोक शुद्ध और पवित्र होते हैं।

यह अग्निहोत्र हमारी प्राणवायु, अपानवायु का शक्तिवर्धक होता हुआ हमारी ज्ञानेन्द्रिय के तेज को प्राप्त कराता है।

अग्नि को, यज्ञ का विधायक होने से विधाता और यज्ञरूप शोभन कर्म का प्रधान साधन होने से सुकर्मा और प्रकाशमान होने से देव कहा गया है। वह देवदूत अग्नि दूरस्थ तथा समीपस्थ सब देवों के मार्गों को पहचानता अर्थात् उस-उस देवता को उसका भाग पहुचाने मे समर्थ है। अग्नि मनुष्यो के समान मरण-धर्मा न होने से अमर, देवों का दूत होने से होता, और प्रकाश से बुद्धि का प्रेरक होने से ज्ञानेन्द्रियों का भी प्रेरक है।

होता लोग (हवन इत्यादि करने मे) तीनों लोको का उपकार करते है।

जो मनुष्य अग्नि का भली प्रकार से उपयोग करते हैं व उपयोग करना जानते हैं और होमादि में काम में लाते हैं वा परमेश्वर की उपासना करते हैं उनका बल क्षीण नहीं होता। उनके अन्न का पावन शरीरादि की वृद्धि और रक्षा होती है।

यजुर्वेद का अर्थ है कि हमें सत्य के दर्शन हों। तत्व के दर्शन से हम ऋषि बन जाते हैं। हमारी इन्द्रिया पशु भी हैं और देवता भी, हमें यज्ञ में भोगविलास की बलि देनी है। इसमें पशु है—भोगविलास और देवता धर्म है।

तात्पर्य यह है कि जो लोग नित्य प्रति होम से वायु आदि देवों को हव्य देकर अग्निदूत के द्वारा तृप्त करते और उनकी कराई तृप्ति से प्रसन्न हुए वे वायु आदि देवता उनकी और उनके सन्तानों की आयु की रक्षा करते तथा सब प्रकार उनकी कामना पूरी करते हैं।

यह यज्ञरूपी अग्नि हव्यदान से होम करने वाले कर्म के नेता कर्म-काण्डियों की रक्षा करता है और उनकी वाणियों को सुनता हुआ अर्थात् जैसा वे चाहते हैं वैसा उनका उत्तम काम पूर्ण करता है।

अब सवाल यह है कि हवन किस प्रकार बलदायक है। इसमें कौन सी सामग्री डाली जाती है जिससे यह इतना शक्तिशाली हो जाता है, शास्त्र में यह सामग्री है सोम जडी बूटी। यह सोमबूटी पीतवर्ण, श्वेत, और हरितवर्ण होती है। जब इसे अग्नि में डाला जाता है तब यह चर-चर शब्द करता है।

जब सोम का हवन करते हैं तब वह हरितवर्ण सोम धूम्र रूप में परिणत होता हुआ अग्नि लोक में ही स्थित न होकर वायुलोक में पहुचता है। वायु में फैल कर वह मेघमण्डल के जल का शोधन करती है और फिर जल के माध्यम से भूलोक में धरती में फैल जाती है और सारे अन्न और वनस्पतियो को प्रभावित कर देती है।

जैसे मनुष्य के देह में देहरक्षार्थ प्राण और अपान हैं वैसे इस ब्रह्माण्ड में भी हैं। सोमादि के होम से इनकी अवस्था सुधरने और प्रबल होने पर प्राणियों का उत्तम निर्वाह होता है।

जब हम आचमन करते हैं उस समय यह भावना रहनी चाहिये कि हे ईश्वर तू अमृत है उस अमृत का मैं पान कर रहा हूं। आचमन में बताये सत्य, यश और श्री की भावना को लेकर यदि हम यज्ञ करेंगे तो हमें शान्ति प्राप्त होगी। उस समय हमारे मन में मैत्री, करुणा, कल्याण आदि के भाव उत्पन्न होंगे, जैसे विश्व मैत्री, पडोसियों की सुख-समृद्धि में प्रसन्नता, दीन दुखियों के प्रति करुणा।

यह सोम दशापवित्र पर आसिंचन किया जाता है। अन्तरिक्ष की वायु में द्युलोक में हलकी चाल-वाला होकर विविध प्रकार से पहुंचता है। सोम नाम की पत्तियाँ पीस कर इसका रस निकाला जाता है। इससे यह एक द्रव्य पदार्थ है और इस सोम शब्द से अन्न बना है और अन्न रस बनाता है इसलिए सोम ही अन्न है। यह सोम यज्ञ का नेता है।

यह सोम अग्नि में पडे हव्य-पदार्थ द्युलोक और पृथ्वी लोक के मध्य में स्थित बलशाली आकाश-विहारी सूर्य किरणों में समाहित होकर फिर जल में मिलता है। फिर बिजलीरूपी अस्त्रों को धारण करता हुआ जलों की लहरीयुक्त अन्तरिक्ष में जाकर ठहरता है तथा उस स्थान को पवित्र करता है। यह पवित्र किया वायु वृष्टि की सिद्धि के लिए यज्ञ-स्थल में आकर बैठता है। यह सोमरस द्रोणकलशों में भरा रहता है। इस सोम को आकाश स्थित चन्द्रमा अपनी किरणों द्वारा आलिंगन करता है।

चन्द्रमा आकाश के नियत स्थान में स्थित हुआ मधु टपकाने वाले कोश अपने मण्डल को अपनी किरण-रूप से वाणी के प्रति भेजता है अर्थात् सोम का प्रभाव वाणी की मधुरता पर पडता है।

तुष्टि-पुष्टि कारक सोम के होम से पवित्र सूर्य की किरणें भी विशेष परिपूरित होती हैं।

भाव यह है कि अग्नि की लपट के साथ वायु चल पडने से अग्नि को वायु को सहायता प्राप्त होती है जिस से वह दूरस्थ देव भाग भी पहुचा सकता है। इन सब से यही पता चलता है प्रत्येक व्यक्ति को नित्य-प्रति हवन करना चाहिये। यज्ञ द्वारा अपना तथा समस्त संसार का कल्याण करना चाहिये।

चतुर्वेद शतक महायज्ञ

आर्यसमाज रामकृष्ण पुरम सेक्टर ९ के नवनिर्मित हाल के उद्घाटन समारोह के शुभ अवसर पर चतुर्वेद शतक यज्ञ का प्रारम्भ १७ फरवरी से २१ फरवरी तक होगा। इस अवसर पर अनेक विद्वान् सन्यासी पधारेंगे। समय प्रात ७ से ९ बजे तक तथा साय ५ बजे से ७ बजे तक रहेगा।

मन्त्री
ओमप्रकाश कपूर


लाखों लोगों की पसंद
एम डी एच दंत मंजन
23 जडी बूटियो से निर्मित
आयुर्वैदिक औषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दंत सुरक्षा
दातो का दर्द, मुह की दुर्गन्ध
मसूड़ो की सूजन, ठडा गम
पानी लगना, मुह में छाले होना तथा
दाना की अन्य बीमारियो का घरेलू इलाज
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
537987, 537341


बनाइये और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी
सुगंध से महकाइये।
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर
एम डी एच शिकाकाई पाऊडर बालों को सीकरी दूर करता है तथ उन्हें प्राकृतिक काला, सुगन्धित व स्वस्थ बनाता है।
शिकाकाई रीठा, आंवला, हरड, बहेडा, चन्दन व अन्य सुगंधित जडी बूटियो से बनाया गया एम डी एच शिकाकाई पाऊडर एक अत्यन्त लाभकारी प्राकृतिक देन है। इसमें कोई रासायनिक पदार्थ नहीं है।
एम डी एच शिकाकाई पाऊडर का आज से ही नियमित प्रयोग कीजिये।
निर्माता :
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9 44 इण्डस्ट्रियल एरिया कीर्ति नगर
नई दिल्ली 110015
फोन 539609 537987 537341


आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
अजमल खान रोड
करोल बाग
नई दिल्ली-110005
फोन 582036
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
alignpoint

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N. No. 32387/77 Post in N.D.P.S.O on 11, 12-2-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

ऋषि बोधोत्सव (शिवरात्रि) पर ऋषि जन्म स्थान टंकारा में भव्य समारोह

ऋषि जन्मस्थान टंकारा में महर्षि दयानन्द स्मारक ट्रस्ट टंकारा की ओर से प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी ऋषि बोधोत्सव (शिवरात्रि) के शुभ अवसर पर १५, १६, १७ फरवरी १९८८ तदनुसार सोम मंगल, बुधवार को एक भव्य समारोह का आयोजन किया गया है। इस अवसर पर एक सप्ताह तक यजुर्वेद पारायण यज्ञ का आयोजन होगा, जिसमें देश देशान्तर से पधारे ऋषि भक्त आर्य विद्वान तथा सन्यासी, महात्मा इस सुअवसर पर ऋषि के चरणों में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करेंगे।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल तथा महामन्त्री श्री सूर्यदेव जी ने दिल्ली की समस्त आर्यसमाजों से अनुरोध किया है कि वे तन मन, धन से इसको सफल बनायें और अधिक से अधिक बहन भाई इस अवसर पर वहां पहुंचें। कन्या गुरुकुल बड़ौदा, पोरबन्दर तथा जामनगर की कन्याएं, टंकारा उपदेशक विद्यालय के विद्यार्थी, आर्य वीर दल ओगध्रा एवं अन्य संस्थाओं के युवक समारोह में कार्यक्रम प्रस्तुत करेंगे। अभ्यागतों के आवास का पूर्ण प्रबन्ध टंकारा ट्रस्ट की ओर से नि:शुल्क किया गया है।

महर्षि दयानन्द स्मारक ट्रस्ट टंकारा के अन्तर्गत गो-संवर्धन केन्द्र (विशाल गौशाला), अन्तर्राष्ट्रीय उपदेशक महाविद्यालय, दिव्य दयानन्द दर्शन चित्र गृह, अतिथि गृह, आर्य साहित्य प्रकाशन, पुस्तकालय एवं आर्ष ग्रन्थ (प्रकाशन) सुचारु रूप से कार्य कर रहे हैं। दिल्ली की आर्यसमाजें अपनी सामर्थ्य अनुसार इस कार्य में अपना आर्थिक सहयोग प्रदान करें।

शोक समाचार

दिनांक २६-१-८८ को आचार्य विश्वबन्धु जी शास्त्री का हृदयगति अवरुद्ध होने के कारण देहावसान हो गया। उनकी आयु ७७ वर्ष की थी। संस्कृत, व्याकरण ... आदि के धुरन्धर विद्वान् थे ... अनेकों शास्त्रार्थ किये। आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के भूतपूर्व प्रधान थे। अब उनके दो पुत्र हैं। आर्य पुरोहित सभा उनके निधन पर हार्दिक शोक प्रकट करती है।

निवेदक—मेघश्याम

वार्षिकोत्सव

आर्यसमाज शालीमार बाग पूर्वी का सप्तम वार्षिकोत्सव ११ फरवरी से १४ फरवरी तक सम्पन्न हो रहा है। इस अवसर पर बाल सम्मेलन, महिला सम्मेलन, संस्कृति रक्षा सम्मेलन का आयोजन किया गया है।

१४ फरवरी को ११ बजे से १ बजे तक संस्कृति रक्षा सम्मेलन में स्वामी विद्यानन्द, श्री प्रो० शेरसिंह, प्रो० पुरुषोत्तम एम० ए०, डा० शिवकुमार, प० यशपाल सुधांशु, डा० धर्मपाल, श्री सूर्यदेव, डा० महेश विद्यालंकार आदि महानुभाव सम्बोधन देंगे। अध्यक्षता श्री प्रकाशचन्द्र शास्त्री करेंगे।

मन्त्री—देवराज कालड़ा

विशेषांक

आर्य सन्देश का ऋषि बोधोत्सव विशेषांक २१ फरवरी को प्रकाशित हो रहा है। पाठकगण ध्यान रखें।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, ... नगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५६

ओ३म्

आर्य सन्देश

ऋषि बोध विशेषांक

इस अंक का मूल्य १० रुपये वार्षिक २५ रुपये आजीवन २५० रुपये विदेश मे ५० डालर, ३० पौंड

फाल्गुन २०४४ वर्ष १२ अंक १८ रविवार २१ फरवरी १९८८ दयानन्दाब्द १६३



सम्पादक—यशपाल 'सुधांशु' एम० ए० प्रधान सम्पादक—डा० धर्मपाल

प्रकाशक

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा

१५, हनुमान् रोड, नई दिल्ली-११०००१

विषय-सूची

सम्पादकीय

वैचारिक बोध के लिए

पर्वतों की धवल उत्तुंग, शिखरों पर बिखरती हुई, वनों की ऊंची तीखी चोटियों को बंधती हुई या महानगरों की गगनचुम्बी इमारतों पर फिसलती हुई, सूरज की किरणें जैसे ही धरती को जागरण का बोध कराती हैं, कण-कण जल-थल स्वर्णिम हो जाता है और सूर्य-प्रभा के तीखा होते ही जीवन की दौड़ शुरू हो जाती है। अलसाई अंखड़ियों को मलते हुए जब हम उठते हैं शाश्वत-सी जीवनचर्या प्रारम्भ हो जाती है। सब से पहले इच्छा होती है अखबार की सुर्खियों पर दृष्टि डालने की। मोटे काले अक्षरों में राजनीति के दांव-पेंच, हिलती, डुलती कुर्सियां, विश्व की अस्त्र-शस्त्र संग्रह की अन्धी दौड़, बारूद, यूरेनियम के आघात को सहती धरती या फिर चोर बाजारी, घोखाधड़ी, अपहरण की वारदातें, धधकती सुलगती दहेज की वेदी पर सुहागिनें, इन सब को समेटने वाले अखबारों का स्वाध्याय हमारी दिनचर्या का एक अंग सा बन गया है। मनुष्य समुदाय या समाज में जीने वाला प्राणी है, इसका जीवन कुछ एक विचारों पर टिका है। जैसे विचार व्यक्ति के हैं उन्हीं के आधार पर वह अपना संसार बनाया करता है, चाहे वह काल्पनिक ही क्यों न हो। अतः विचार, आचार को, आचार व्यवहार को जन्म देते हैं। जैसे हमारे विचार हैं वैसा ही होता है, हमारा व्यवहार। विचार उपजते हैं पठन, पाठन, श्रवण, श्रावण से। तो प्रकट ही है कि प्रात ही हमारी वैचारिक भूमि पर उगते हैं नागफनी और बबूल के कांटे। इन्हीं से हम अनुप्राणित होते रहते हैं क्योंकि हमारा सारा ही चिन्तन अखबारी हो गया है। अखबार ही हमारे सूने देवालय पर उतर आये हैं। भारत ऋषि मुनियों की धरती है, इस धरती पर उनकी वाणी, उनके विचार (मन्त्र) आज भी जीवित हैं, सदा रहेंगे ये अमर विचार। सदा ही मनुष्य समाज को दिशा प्रदान करते रहेंगे। अमर ग्रन्थों के अगाध सागर में कुशल तैराक की तरह जो भी डुबकी लगायेगा, अमूल्य रत्नों का अधिकारी बन जायेगा, और यह डुबकी ज्ञान के सागर में लगायी जा सकती है स्वाध्याय के द्वारा, जिसे ऋषियों ने मनुष्यों का अनिवार्य नैत्यिक कर्म माना है। इससे ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ, सन्यासी कोई भी आश्रमी नहीं बच सकता। संन्यासी की अग्निहोत्र से मुक्ति है पर इससे नहीं। महर्षि याज्ञवल्क्य कहते हैं, यदि कोई व्यक्ति सुगन्धित तैल लगाकर शृङ्गारित होकर, गुदेले आसनों पर लेटा हुआ स्वाध्याय करता है, वह मानो चोटी से नाखून तक का श्रम, तप कर रहा है। महर्षि मनु स्वाध्याय को परम तप कहते हैं। देव दयानन्द वेद स्वाध्याय को परम धर्म कहते हैं। योगदर्शनकार स्वाध्याय को योग मानते हैं। छान्दोग्य का ऋषि कहता है धर्म तीन कन्धों पर, आधारों पर टिका है—यज्ञ, अध्ययन दान। अत धर्म का ज्ञान अध्ययन के द्वारा ही मिल सकता है। स्वयं वेद माता कहती है, पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभि. सभृत रस। तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिमधूदकम्॥ ऋ० ९।६७।३२। जो व्यक्ति अग्नि, वायु, अंगिरा आदि ऋषियों के द्वारा एकात्मना धारित ज्ञान को अधिग्रहण करने के लिए, स्वाध्याय, अध्ययन करता है उसे अनेक मधुर ज्ञान धाराओं का आनन्द प्राप्त होता है। अत. स्पष्ट है स्वस्थ विचारों के लिए उत्तम ग्रन्थों का स्वाध्याय किया जाये।

आर्यसन्देश के माध्यम से हम यह प्रयास कर रहे हैं कि आर्ष ग्रन्थों के अमूल्य रत्न आपकी अंजलि में उडेल सकें। हम प्रत्येक आर्य पव पर आपके लिए विशेषांक देने का प्रयत्न करते हैं। आशा है बोध पर्व का यह विशेषांक हमारे पाठकों को पसन्द आयेगा।

—यशपाल सुधांशु

हमें बोध कब होगा ?

—ले० अनिल आर्य, सम्पादक, युवा उद्घोष

महर्षि दयानन्द जी को बोध हुआ, वैदिक धर्म प्रचार का बीडा उठाया व आर्यसमाज की स्थापना की। कुरीतियों, अन्धविश्वासों व पाखण्डो, रूढ़ियो पर कुठाराघात किया व पाखण्ड खण्डिनी पताका फहराकर वैचारिक क्रान्ति की घोषणा की। आज के समाज में पहले से अधिक जटिल स्थिति है, विषमताएँ भी बढ़ी हैं, सर्वत्र भ्रष्टाचार, अनाचार, शराब का बोलबाला नजर आता है। सामाजिक मूल्यों की अस्मिता का प्रश्न उपस्थित हो गया है। आज यह चर्चा उठने लगी है कि भावी कार्यक्रम आर्यसमाज का क्या हो ? यह एक थोथी बात है आर्यसमाज के पास एक विशाल कायक्षत्र है। छठे नियम में महर्षि लिखते हैं—'ससार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक आत्मिक व सामाजिक उन्नति करना।"

क्या जाति, सम्प्रदाय के दायरे विशेष से ऊपर उठकर समाज के सर्वाङ्गीण विकास का कार्यक्रम किसी के पास है। खुली छूट है व्यक्ति अपनी सोच के अनुसार कार्य क्षत्र का चयन कर समाज के उत्थान के लिए कार्य कर सकता है। लेकिन आज स्थिति यह है कि इतना व्यापक कार्यक्रम होने के बावजूद हम पिछडते जा रहे हैं, हमारी आवाज का वह कौमत, दमखम नहीं रह गया जो स्वतन्त्रता से पूर्व था। क्या कारण है कि प्रेस व दूरदर्शन में हमारे समाचारों को स्थान नही मिल पाता। हमारा वह ओज, वह शक्ति कहां गई ?

जिस आन्दोलन को अग्रेज सरकार नही झुका सकी, जिसके दीवाने 'चोट खाकर तो सीने उभर आयेंगे' या 'रास्ता कर दो खाली, आई फौज दयानन्द वालो' आदि गीतों का उद्घोष कर नये रक्त का सचार करते रहे। निजाम हैदराबाद को जिस के आगे झुकना पडा और जिसकी आज भी शिक्षा में, राजनीति में छाप दिखाई पडती है वो आर्यसमाज कहा गया ? जिसके लिए एक अग्रेजो लेखक लिखने को मजबूर हो गया "जहा-जहां आर्यसमाज है वहा वहा विद्रोह का स्वर है" या 'मुझे एक आग दिखाई देती है जो समस्त समाज की बुराइयों को जलाकर नष्ट कर देगी"।

क्यों ? आज वह सब नहीं है, क्या हम ने कभी सोचा है ?

दुनिया में कोई भी परिवर्तन युवा शक्ति ही लाया करती है। ससार मे किसी भी फौज में युवक ही लिये जाते हैं। परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में युवा ही उत्पन्न किये। कोई भी आन्दोलन युवाओं के आगे रहने से ही गतिशील रहता है। क्योंकि युवा में ही जोड-तोड व निर्माण की शक्ति होती है लेकिन हम इस सृष्टि नियम को ही भूल गये, उसी का परिणाम है कि आर्यसमाज में शिथिलता आ गयी है। आज यह चर्चा का स्वर उठने लगा है कि आर्यसमाज मे युवा पीढी नही आ रही। हमने क्या कार्यक्रम दिया है युवा पीढ़ी को, क्या आदर्श दिये हैं अपने परिवार में। कहीं कमी अवश्य है, जिसका हमे चिन्तन करना होगा। आर्यसमाज को यदि अपना गौरवशाली स्थान दिलाना है तो हमे आर्यसमाज के मत, सम्प्रदाय या संस्थावादी स्वरूप को उखाड फेंकना होगा। उसे आन्दोलनकारी रूप देकर आम आदमी के दर्द की आवाज बनाना होगा। जब शोषितों, असहायों की आवाज बनेगा, युवा शक्ति को कार्यक्रम मिलेगा। क्योंकि यह युवक का स्वभाविक प्रकृति है वह खाली नहीं बैठ सकता, उसे जहा कार्यक्रम मिलेगा वहां वह स्वय पहुच जायेगा। अब आवश्यकता इस बात की है कि तेजस्वी व विश्वसनीय नेतृत्व जो युवा पीढ़ी की भावना व आकाक्षा को समझता हो तथा नेतृत्व की क्षमता रखता हो। यदि समाज के हितों के साथ आर्यसमाज को जोड पायें तो एक नये अध्याय की शुरुआत होगी। ❑

सत्यार्थप्रकाश के दर्पण से—

महारानी विक्टोरिया का सन्देश

गजानन्द आर्य, कलकत्ता

'हमारी प्रजा अनुभव करेगी कि हमारे शासन में सबके लिए स्वाधीनता, समानता और न्याय की नीति सुरक्षित है। उनको सुख शान्ति से रखना, उनकी समृद्धि बढ़ाना और उनका कल्याण साधन करना ही सर्वदा हमारे साम्राज्य का उद्देश्य और लक्ष्य रहा है।"

उपरोक्त शब्द हैं महारानी विक्टोरिया के संदेश के जो उन्होंने दिल्ली दरबार के आयोजन के अवसर पर १ जनवरी १८७७ को "भारत सम्राज्ञी" की उपाधि ग्रहण करने के अवसर पर प्रसारित किये थे। सत्यार्थप्रकाश का द्वितीय संस्करण सन् १८८२ में लिखा गया है। महारानी के सन्देश के पांच वर्ष पश्चात् की वस्तुस्थिति जानने के लिए सत्यार्थ ही एक ऐसा ग्रन्थ है जिसमें कथनी और करनी के अन्तर को बड़ी निर्भयता से व्यक्त किया गया है। यूरोप के इतिहास में महारानी विक्टोरिया का शासनकाल बहुत अच्छा माना गया है। महारानी ने सन् १८३७ से १९०१ तक शासन किया है। इनके शासनकाल में भारत का सैनिक विद्रोह सन् १८५७ में हुआ जो कि बड़ी सख्ती से दबा दिया गया। इस विद्रोह के पश्चात् शीघ्र ही नवम्बर १८५८ में इलाहाबाद में महारानी की घोषणा प्रसारित हुई जिसमें देशी राजा महाराजाओं को अभयदान एवं देशवासियों को सरकारी सेवाओं में स्थान देने का आश्वासन था।

इन सब आश्वासनों और सन्देश के पीछे विदेशी शासकों का मुख्य उद्देश्य था भारत को पराधीन बनाये रखना। कोई स्वाभिमानी व्यक्ति इस पराधीनता को स्वीकार भला कैसे कर सकता। पर इन किसी में साहस और आत्मबल आना बड़ा कठिन था। देशभक्ति के तराने सिखाने वाले नेतृत्व का अभाव था और राजभक्ति के गीत हर कहीं सुनाई दे रहे थे। ऐसे समय में एक संन्यासी ने एक ग्रन्थ लिखा सत्यार्थप्रकाश। देश को जागृत करने एवं विदेशी शासन के विरुद्ध आवाज उठाने वाला यह पहला ग्रन्थ है। विक्टोरिया महारानी के संदेश के उत्तर में सम्भवतः लिखा गया कि "कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है। मत-मतान्तर के आग्रहरहित अपने और पराये का पक्षपातशून्य, प्रजा पर पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है।"

ग्रन्थकार ने विदेशी शासन की तत्कालीन परिस्थितियों का यथार्थ परिचय बड़ी निर्भयता से लिखा है। एक जगह एक प्रसंग में उन्होंने लिखा है कि "यद्यपि राजा को ऐश्वर्यवान् और प्रजापालन में समर्थ होने से श्रेष्ठ मानें तो ठीक है, परंतु जो अन्यायकारी पापी राजा हो उसको भी परमेश्वरवत् मानते हो तो तुम्हारे जैसा कोई मूर्ख नहीं।" इस वाक्य से पता लगता है कि लेखक को अच्छा कहा जाने वाले परदेशी शासन और कोई भी अन्यायकारी पापी राजा की राजभक्ति मान्य नहीं है। अंग्रेजों के शासन में बाइबिल के सम्बन्ध में समीक्षा करते हुए उन्होंने शासन की नीति को जिस प्रकार आड़े हाथों लिया वह पठनीय है। "अनुमान होता है इसी से ईसाई लोग ईसाइयों का

बहुत पक्षपात कर किसी गोरे ने काले को मार दिया हो तो भी बहुधा पक्षपात से निरपराधी कर छोड देते हैं।"

अपने समय की न्याय की दुहाई देने वालो पर यह करारा तमाचा है। अंग्रेजों द्वारा भारतीयो का निरादर लेखक को बहुत खटकता है पुस्तक मे एक स्थान पर ईसाई से प्रश्न किया गया है कि आप लोग किसी पवित्र स्थान पर जाने पर सिर का हैट उतार लेते हो परन्तु पाव के जूते नही उतारते जबकि बाइबिल मे ईश्वर ने मूसा से कहा था कि पवित्र स्थान में जूते नही ले जाने चाहिए? ईसाई के उत्तर मे जब यह कहा 'हमारे यूरोपदेश मे शीत अधिक है इसलिए हम जूते नही उतारकर हैट उतार लेते हैं।" इस पर ग्रन्थकार ने ईसाई को परामर्श दिया है कि जब यूरोप देश मे जाओ तब ऐसा नही करना परन्तु जब हमारे घर मे बिछौने (अर्थात् बैठने के उपयुक्त स्थान) मे आया करो तब तो जूता उतार दिया करो। बाईबिल के विरुद्ध तुमको न चलना चाहिए।

एक और स्थान पर लेखक भारतीयो को स्मरण कराता है कि 'देखो! यूरोपियन लोग अपने देश के बने हुए जूते को आफिस और कचहरी में जाने देते हैं इस देशी जूते को नही। इतने मे ही समझ लेओ कि अपने देश के बने जूतो का भी कितना मान प्रतिष्ठा रखते हैं उतना अन्य देशस्थ मनुष्यो का नही करते।" सब से अधिक कष्ट ग्रन्थकार को गाय आदि पशुओ के विनाश पर हुआ है। बाईबिल की एक आयत की चर्चा मे लेखक कहता है "जब ईसाइयो का खुदा भी बैलो का बलिदान लेवे तो उसके भक्त बैल-गाय के बलिदान की प्रसादी से पेट क्यो न भरे? और जगत् को हानि क्यों न करें?" इस प्रकार की हानि से द्रवित होकर सत्यार्थप्रकाश मे लिखा "जब से विदेशी मांसाहारी इस देश मे आके गौ आदि पशुओ के मारने वाले मद्यपानी राज्याधिकारी हुए हैं तब से क्रमश आर्यों के दुख की बढती होती जाती है।"

आर्यो के दुखो का कारण मूर्तिपूजा भी रही है। सन् १८५७ में अंग्रेजो द्वारा तोपो से मन्दिर की मूर्तियाँ उडा देने की घटना को याद कराते हुए लिखा है, मन्दिर की मूर्तियाँ एक मक्खी की टाग भी न तोड सकी, प्रत्युत बघर लोगो ने मुकाबला अवश्य किया। श्रीकृष्ण जैसा कोई होता तो शत्रुओ के धुर्रे उडा देता और शत्रु भागते फिरते। इस प्रकार की चर्चा से अंग्रेजो के प्रति आक्रोश स्पष्ट दीख रहा है। अंग्रेजो की ओर से किये गये अभिमान की बातो का उत्तर सत्यार्थप्रकाश मे बहुत स्थानो पर मिलता है। अब प्रश्न यह है कि अकेले ऋषि ने इतने बडे साम्राज्य के विरुद्ध बगावत का झण्डा क्यो खडा किया? उनको अपने जीवन का खतरा नही था क्या? इसका उत्तर सत्यार्थप्रकाश मे है। ऋषि लिखते हैं—'अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नही अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओ (चाहे वे महाअनाथ निर्बल और गुणरहित क्यो न हो) की रक्षा उन्नति प्रियाचरण सदा किया कर। अधर्मी चाहे चक्रवर्ती, सनाथ, महाबलवान और गुणवान भी हो तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया कर। जहाँ तक हो सके अन्यायकारियो के बल की हानि और न्यायकारियो के बल की उन्नति सर्वथा किया कर। इसी काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावे परन्तु इस मनुष्यपन रूप धर्म से पृथक् कभी न होवे।"

सत्यार्थप्रकाश की ये पंक्तियाँ—देशभक्त, ईश्वरभक्त और बलिदानी बनने के लिए एक घुट्टी है प्रेरणा है और आदेश है।

ऋषि की आत्मकथा से—

अद्‌भुत बोध

—सत्यानन्द आर्य

"मैं सच्चे शिव के दर्शन करूंगा" ऐसा दृढ निश्चय कर १४ वर्षीय बालक मूलशकर घर से क्यों निकल पडा, ऐसी कौन सी घटना थी जिस से वे प्रेरित हुए शिव को जानने को। स्वामी दयानन्द ने स्वयं वर्णन किया है उस अमर घटना का जिसने युग प्रवर्तक दयानन्द को अद्‌भुत बोध प्रदान किया। वर्णन इस प्रकार है—

"पिता की आज्ञा के अनुसार मैं उस दिन रात्रि के समय अन्यान्य लोगों के साथ सम्मिलित होकर शिव मन्दिर में गया। शिवरात्रि का जागरण चार पहरों में विभक्त होता है, दो पहरों के पश्चात् जब निशीप काल आया तब पुरोहित और अन्यान्य लोग मन्दिर से बाहर आ कर सो गये। मैं बहुत दिन से सुनता था कि यदि वह मनुष्य जिसने व्रत धारण किया है शिवरात्रि को सो जायेगा तो वह अभिलषित फल की प्राप्ति से वचित रहेगा। इसीलिए बीच-बीच मे निद्रा के वेग से अभिभूत होने पर भी मैं पुन: पुन आंखों में जल सिंचन कर के जागरित रहा। पिता जी भी मुझको जागने का आदेश देकर निद्राविष्ट हो गये। तभी मैंने साश्चर्य देखा कि कुछ चूहे शिवपिण्डी पर खेलने खाने लगे। उस समय विचारपर विचार आकर मेरे हृदय पर अधिकार जमाने लगे। मेरे मन मे नाना प्रकार के प्रश्न उठने लगे फलत मैं चिन्ता स्रोत से विचलित हो गया। मैं आप ही अपने से जिज्ञासा करने लगा कि शास्त्र मे कहा गया है कि महादेव विचरण करते हैं, भोजन करते हैं, सोते हैं, पीते हैं त्रिशूल धारण कर सकते हैं, डमरू बजाते हैं और मनुष्य को शाप प्रदान कर सकते हैं तो क्या वह महादेव यही वृषवाहन पुरुष हैं जो मेरे सामने हैं। क्या यही वह पुराण कथित कैलाशपति परमेश्वर हैं? इस चिन्ता से अत्यन्त अस्थिर चित्त हो कर मैंने पिता को जगा कर जिज्ञासा की कि क्या यह निकट शिवमूर्ति ही वह शास्त्रोल्लिखित महादेव हैं? उसके उत्तर में पिता ने कहा—"तू यह बात क्यों पूछता है?" मैंने कहा कि यदि वह मूर्ति ही सर्वशक्तिमान् जीवन्त परमेश्वर है तो यह अपने शरीर के ऊपर चूहों को दौडता हुआ देखता हुआ और चूहों के सम्पर्क से अपवित्र होता हुआ भी उनको नहीं भगा देता। तब पिता ने मुझे समझाने की चेष्टा की कि कैलाशपति महादेव की इस प्रस्तरमय मूर्ति ने पवित्रचित्त ब्राह्मणों द्वारा की हुई प्रतिष्ठा के कारण देवत्व लाभ कर लिया है। विशेषत: इस पापमय कलियुग में महादेव का साक्षात्कार होना असम्भव है। इसलिए पाषाणादि की मूर्ति में ही उनकी सत्ता कल्पित की जाती है। पिता की इन बातो से मेरी तृप्ति नहीं हुई। अस्तु, श्रान्त और क्षुधित होने के कारण मैंने घर लौटने की आज्ञा मागी। पिता ने आज्ञा देकर मेरे साथ एक सिपाही कर दिया और इस विषय में कि मैं भोजन कर के व्रत भग न करूं बारम्बार मुझ से कह दिया, परन्तु घर मे आकर जब मैंने माता से क्षुधा की कथा को प्रकाशित किया, तब उन्होंने जो कुछ मुझे आहार के लिए दिया उसको मैं बिना खाये नहीं रह सका। भोजन के पश्चात् मुझे गहरी नींद आ गई। दूसरे दिन पिता ने घर में आ कर सुना कि मैंने व्रत भग किया है, यह सुन कर वे मेरे ऊपर बडे क्रोधित हुए और मुझ को यह यह समझाने लगे कि मैंने व्रत भग कर के महापाप किया है। परन्तु मैं उस पाषाण की मूर्ति को परमेश्वर भाव से विश्वास न कर सका और मन में सोचने लगा कि फिर मैं उसकी कैसे उपासना करूंगा और उसके लिए उपवास रखूंगा। ●

बोध निशा करती आवाहन

ऋषि का दाय संभाले, फिर भी,
[illegible] तनिक भी जुटा न पाते,
चारों वेदों की निधि लेकर,
अज्ञान-तिमिर कुछ हटा न पाते,
[illegible] सब सोये,
उपनिषदों के स्वर अनसोये,
[illegible] - कवच की जंजीरें को,
[illegible] - शक्ति से काट न पाते;

[illegible] की पलकों में,
[illegible] उलझन?
आर्यो! कान खोल कर सुन लो,
बोध-निशा करती आवाहन!

[illegible] में रोती,
[illegible] पग-पग पर गीता,
राम रावणों से हारे हैं,
[illegible] सिसकती सीता,
[illegible] की है बन आयी,
[illegible] के बह पानी,
[illegible] की व्यर्थ हो गयी,
[illegible] अर्जुन का है रीता;

सहम युधिष्ठिर दुबक रहे हैं,
विजय पा रहे शठ दुर्योधन!
आर्यो! कान खोल कर सुन लो,
बोध-निशा करती आवाहन!

[illegible] ईसाई होता,
[illegible] - सैन्य के आगे,
[illegible], त्रिपुरा सारा,
फिर भी [illegible] न तनिक भी जागे,
[illegible] तो भीगी बिल्ली सी,
[illegible] रही बस, खिल्ली-सी,
[illegible] में फूट पनपती,
[illegible] विलम्बित होकर जागे,

शान्ति-कटक औरों के घर में,
अपने घर अस्थिर-अशान्त मन!
आर्यो! कान खोल कर सुन लो,
बोध-निशा करती आवाहन!

अव्यवस्था की आग लगी है,
रक्षा का ढांचा बिगड़ा है,
कागजी फाइलों पर फला,
नौकरशाही का [illegible] है,
हिन्दी को देश-निकाला है,
'इंग्लिश' को गया उछाला है,
हिन्दू मुस्लिम सिख तहस-नहस,
दक्षिण-उत्तर का झगड़ा है;

दल-दलदल में अस्तित्व फंसा,
तुम में न तनिक पर उद्वेलन!
आर्यो! कान खोल कर सुन लो,
बोध-निशा करती आवाहन!!

अब भी अवसर है, जाग उठो,
जड़िमा के बन्धन दूर करो,
खल-सूचक सारे पक्ष कुचल,
एकत्व प्रेम भरपूर करो,
'मा भे' का उद्घोष मुखर कर,
संरक्षण की शक्ति प्रखर कर,
अलगाववाद का गला काट,
पशु-बल सब चकनाचूर करो,

संसार सभी परिवार मान,
मानवता का करलो पोषण!
आर्यो! कान खोल कर सुन लो,
बोध निशा करती आवाहन!!

—भैरवदत्त शुक्ल
महाराजा अग्रसेन विद्यालय,
तिकुनिया, जि खीरी (उ प्र)

आर्य जाति में नवचेतना के लिए संस्कार आवश्यक

शिवकुमार शास्त्री

ऋषियों ने गम्भीर चिंतन करके मानव जीवन की सार्थकता चार फलों से मानी, जिनका नाम धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्रसिद्ध है। जैसे अच्छे वृक्ष की सार्थकता उस में फल लगने से है उसी प्रकार शास्त्रकारों ने मानव-शरीर को भी एक वृक्ष मानकर उसकी सार्थकता के लिए चार फल लगने आवश्यक बताये हैं। सांसारिक वृक्ष और मानव-शरीर वृक्ष में इतना ही अंतर है कि वृक्षों की जड़ नीचे होती है, उसका स्कन्ध और शाखा प्रशाखाएं ऊपर को होती हैं। किन्तु मनुष्य के शरीर वृक्ष के लिए कहा कि "ऊर्ध्व-मूलोऽर्वाक्शाख" इसकी जड़ (शिर) ऊपर को है और हस्तपाद आदि शाखाएँ नीचे को हैं। इस वृक्ष की सार्थकता इस पर चार फल धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष लगने से है। मानव जीवन का चरम लक्ष्य 'अत्यन्तदुःखनिवृत्ति"= मोक्ष है। इस सन्दर्भ में एक बात और गम्भीरता से समझने की है कि सांसारिक वृक्ष जिस भी जाति का हो उस पर एक ही प्रकार के फल लगेंगे। आम के वृक्ष पर आम ही लगेंगे। यह नहीं हो सकता कि उसकी एक शाखा पर आम लगें, दूसरी पर अमरूद तीसरी पर सन्तरे और चौथी पर माल्टा। किन्तु मानव-शरीर वृक्ष पर विभिन्न प्रकार के चार फल धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष लगने आवश्यक बताए। ये कैसे सम्भव होंगे? जहां धर्मोपार्जन की दृष्टि से कर्म किये जायेंगे उनसे अर्थलाभ कैसे होगा? और आज कल तो यह प्रसिद्ध है कि पैसा तो कुछ हेरा-फेरी से ही कमाया जाता है। व्यापार और व्यवसाय धर्माचरण से नहीं चल सकते। इसी प्रकार अर्थार्जन कर के संसार के भोग भोगने से मोक्ष कैसे मिलेगा? मोक्ष में ये विषयोपभोग ही तो बाधक हैं।

वैदिक मनीषियों ने इस उलझन को बहुत बुद्धिमत्ता से सुलझाया है। उन्होंने बताया कि इसमें यह विरोधाभास ऊपर से ही दिखाई देता है वास्तविक नहीं। मनुष्य के सब कर्मों के मूल में धर्म रहना चाहिए। धर्म की जड़ में से ही अर्थ की शाखा फूटनी चाहिए। धर्मात्मा अर्थार्जन के लिए पवित्र साधन अपनायेगा। वहां अर्जित धन से धर्म के ही काम करेगा। कहीं शिक्षा का विस्तार होगा और कहीं शारीरिक दुःखों से पीडित लोगों के लिए आतुरालय स्थापित होंगे। ये काम तो अर्थ के माध्यम से ही हो रहे हैं। किन्तु हैं ये धर्म के काम। इस प्रकार देखिए कि अर्थ धर्म में तो समाहित होकर धर्ममय हो गया। धर्म के विस्तार के लिये भी साधन तो अपेक्षित हैं उन साधनों की पूर्ति तो धन से ही होगी। इसी प्रकार संसार के क्रम को अक्षुण्ण रखने के लिए काम का होना भी आवश्यक है। मानव धर्म शास्त्र में कहा है—

> अकामस्य क्रिया काचिद्,
> दृश्यते नेह कर्हिचित्।
> यद्यद्धि कुरुते किञ्चित्,
> तत्तत्कामस्य चेष्टितम्॥

कामनारहित मनुष्य की संसार में कोई गतिविधि नहीं हो सकती। छोटा और बड़ा जो भी काम होता है वह सब काम का ही परिणाम है। अतः वैयक्तिक और सामाजिक आवश्यकताओं की

पूर्ति के लिए दूसरों को हानि बिना पहुंचाये जितने जो काम किये जाते हैं, उन्हीं का नाम धर्म है। ये शास्त्र विहित कर्म बिना काम के नहीं हो सकते। इस विश्लेषण से यह सिद्ध हो गया कि धर्म और काम में कोई विरोध नहीं है अपितु एक दूसरे के पूरक हैं। इस क्रम से मनुष्य के विचार और आचार में धर्म, अर्थ और काम परिणत हो जायें तो गौतम मुनि ने न्याय दर्शन मे कहा–'दु:खजन्मप्रवृत्तिदोष-मिथ्याज्ञानानामुत्तरोत्तरापायेतदनन्तरापायादपवर्गः।"

विवेकपूर्ण आचरण अर्थात् धर्म से मिथ्या ज्ञान नष्ट हो जाएगा। मिथ्या ज्ञान के विनाश का परिणाम होगा कि दूषित कर्म नष्ट हो जायेंगे। दूषित कर्मों के समाप्त होने से बन्धक कर्मों में प्रवृत्ति रुक जाएगी। इसका परिणाम कर्म फल को भोगने के लिए होने वाला जन्म ही समाप्त हो जायेगा। जब जन्म ही नहीं रहा तो मृत्यु तो अपने आप समाप्त हो गई और जन्म मृत्यु के न रहने पर दुःखों के होने का तो प्रश्न ही नहीं। बस इस जन्म-मरण के बन्धन से छूटने का नाम ही मोक्ष है। मोक्ष वह स्वय सिद्ध फल है जो धर्मार्थ काम के उचित निर्वाह से प्राप्त होता है। उसके प्राप्त करने के लिये पृथक् से कोई कर्म करने की आवश्यकता नहीं।

तो मानव जीवन के लक्ष्यभूत इस सफल जीवन की पात्रता प्राप्त कराने के लिये जो कर्म किये जाते हैं, उन्हीं का नाम संस्कार है।

टंकारा प्रिय ग्राम

है गुजरात प्रान्त में, टकारा प्रिय ग्राम
उमी दरिया के तट पर, शिव मंदिर का नाम
सभी मस्त थे नींद में, मूल जाग रहा दर्शनों की उम्मीद में।
बैठा था वह आंख बिछाये शिवलिंग पर टकटकी लगाये॥
समय रात का लम्बा था, देखा जब एक अचम्भा था।
चूहे उछल-कूद मचाते थे, अक्षत बीन-बीन कर खाते थे॥

जब अर्ध रात्रि बीती जा रही थी कज्जल निशा बरसा रही थी।
मदिर में दीप जल रहा था, चूहों का दल चढ़ावा निगल रहा था।
मूल की महात्मा बुद्ध से आगे चेतना बढ़ती गई,
निर्मल प्रज्ञा शुद्ध चिन्तन हिम शैल पर चढती गई।
साधना को दुलराया, ज्ञान का सूर्य चमकाया, पाषाण मूर्ति हिली नहीं।
वह रात पूर्णिमा खिली नहीं।
आचार्य शकर से भी अधिक अटूट व्रतधारी बना।
मूल शकर से वेदव्रती मानवी दयानन्द ब्रह्मचारी बना॥

—रामकिंकर, मौजपुर, दिल्ली

देवालय—
महर्षि दयानन्द की दृष्टि में

लेखक . यशपाल आर्यबंधु

साधारणतया देवालय का अर्थ उन देवमन्दिरों से लिया जाता है, जहां किसी तथाकथित देवता की मूर्ति स्थापित कर उसका पूजन किया जाता हो। किन्तु यह इसका रूढ़ अर्थ है, मूल अर्थ नहीं। देव चेतन भी हैं और जड भी। किन्तु पूजा केवल चेतन देवों की ही होती है, जड की नहीं। यह इसलिए कि पूजा का अर्थ सत्कार है और सत्कार केवल चेतन का ही हो सकता है, जड का नहीं। महर्षि दयानन्द की ऐसी ही मान्यता है। पूना के अपने सातवें प्रवचन में महर्षि स्पष्ट रूप से उद्घोषित करते हैं कि– 'चेतन पदार्थों ही का केवल सत्कार सभावित है, जड पदार्थों का अर्थात् मूर्तियों का सत्कार नहीं सम्भव होता।"

यज्ञ का एक अर्थ देवपूजा भी है। देवपूजा से क्या तात्पर्य है, यह विचारणीय है। इस सम्बन्ध में महर्षि ने जो विचार दिये हैं, वह उल्लेखनीय हैं। स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश में "देव" का अर्थ विद्वान् करते हुए महर्षि आगे लिखते हैं कि—"उन्हीं विद्वानों, माता, पिता, आचार्य, अतिथि, न्यायकारी राजा और धर्मात्मा जन, पतिव्रता स्त्री और स्त्रीव्रत पति का सत्कार करना देवपूजा कहाती है। इस से विपरीत अदेवपूजा।" पूना के यज्ञ और सस्कार विषयक सातवें प्रवचन में महर्षि इस सम्बन्ध में निम्न विचार व्यक्त करते हैं—"अब प्रथम देव पूजा के विषय में विचार करें। केवल देव का मूल अर्थ द्योतक अर्थात् प्रकाश स्वरूप है, और वेद-मन्त्रों की भी देव सज्ञा है, क्योंकि उनके कारण विद्याओं का द्योतन अर्थात् प्रकाश होता है। ... देव शब्द का अर्थ परमात्मा भी है, क्योंकि उसने वेद का अर्थात् ज्ञान का और सूर्यादि जडों का प्रकाश किया है। देव अर्थात् विद्वान् ऐसा भी अर्थ होता है, क्योंकि शतपथ ब्राह्मण नामक ग्रंथ में "विद्वासो हि देवा" ऐसा वर्णन किया है।

पूजा का अर्थ सत्कार है। इस प्रकार—"देव की पूजा कहने से परमात्मा का सत्कार करना, यह अर्थ होता है।" (वही) यह हम पूर्व ही लिख आये हैं कि सत्कार केवल चेतन का ही होता है, जड का नहीं। अब ईश्वर का सत्कार कैसे होता है; इस विषय में महर्षि के विचार देखें। वे अपने इसी प्रवचन में आगे कहते हैं कि—' मुख्य तत्त्व से वेदमन्त्र के पठन से ईश्वर का सत्कार होता है, इसलिए प्राचीन आर्य लोगों ने होम के स्थल में मन्त्रों की योजना की है।" इसी आधार पर महर्षि ने "यज्ञशाला को देवायतन अथवा देवालय कहा है।" (वही) महर्षि मनु का निम्न श्लोक उद्धृत कर के लिखते हैं कि—"स्वाध्यायेनार्च्चयेतर्षीन् होमैर्देवान्यथाविधि।" इस कथन से अर्वाचीन देवालय अर्थात् मन्दिरों को कोई न समझे, देवालय का अर्थ तो यज्ञशाला ही है।" (वही)

चेतन देवताओं की पूजा सत्कार से होती है और जड देवों की पूजा पुष्टि, शोधन और वर्धन से होती है। देव-यज्ञ से ये दोनों कार्य साधे जाते हैं। वेदमन्त्रो के पाठ से ईश्वर का सत्कार और

ब्रह्मा, होता आदि विभिन्न यज्ञ के लिए आवश्यक पदों पर विद्वानों की नियुक्ति एवम् दक्षिणा आदि से उनका सत्कार किया जाता है। यज्ञ मे घृतादि हव्य पदार्थों की आहुति देने से जड देवों की पुष्टि, वर्धन तथा शोधन होने से यह भी देवपूजा है। अग्नि को देवों का मुख कहा गया है। अग्नि में डाला यज्ञीय पदार्थ वैसे ही समस्त देवों को पहुचता है, जैसे हम अपने मुख में कोई खाद्य पदार्थ डालते है तो वह शरीर के समस्त अगों को पहुच जाता है।

पौराणिक लोग ऐसा माने बैठे हैं कि देवलोक से देवगण हमारे यज्ञ को हवि लेने यज्ञशाला में आते हैं। महर्षि इसे सर्वथा कपोलकल्पित मानते हैं। उनका कथन है कि—'कोई-कोई कहते हैं कि होम अर्थात् देवतोद्देश त्याग है। देवता लोग यजनदेश में आकर सुगन्ध लेते हैं, इसलिए होम करना चाहिये, तो यह कहना अप्रशस्त है। क्या देव-लोक में कुछ सुगन्धि की न्यूनता है, जो वे हमारे क्षुद्र हविर्द्रव्य की अपेक्षा करते हैं?" इसी तरह कोई-कोई कहते हैं कि श्राद्ध आदिकों मे पितृ लोग आते हैं और यदि उन्हें श्राद्धान्न और तर्पण का जल न मिले तो तृषार्त्त रहते हैं। तो क्या वे प्यासे रह कर भूखों मरेंगे? और पितृलोक में सब दरिद्रता ही दरिद्रता है? सारांश यह कि सब समझ और विचार ठीक नहीं है। क्योंकि देवलोक में वा पितृलोक में कुछ न्यूनता नहीं है। होम हवन उनके उद्देश्य से कर्त्तव्य नहीं है, किन्तु सुवृष्टि और वायु शुद्धि होम-हवनादि से होती हैं, इसलिये होम करना चाहिये। क्योंकि सब प्रकार के नैरोग्य और बुद्धि-वैशुद्धय को वायु और जल का ही आधार है।" (वही)

हवन से परमेश्वर की सेवा की बात महर्षि ने स्वीकारी है। उनका कथन है कि—"होम-हवन से परमेश्वर की सेवा कैसे होती है, ऐसा यदि कोई कहे तो उसे विचार करना चाहिये कि सेवा का अर्थ प्रिय आचरण है। परमेश्वर की सेवा अर्थात् उसको जो प्रिय है, वह आचरण करने से वह न्यायकारी होने के कारण उसके द्वारा योग्य प्रत्युपकार होता है, ऐसा एक नियम ही है। (वही) यज्ञशाला में यज्ञ करते समय वेद मन्त्रों का जो पाठ किया जाता है, इस से जहां ईश्वर का सत्कार होता है, वहां वेद को रक्षा होने से सर्व विद्याओं का द्योतन करने वाले देव का भी सत्कार होता है।

उपरोक्त प्रमाणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि यज्ञ ही वास्तविक देव-पूजा है और यज्ञशाला ही वास्तविक देवालय या देवायतन है। कल्पित देवी-देवताओं की मूर्तियों वाले मन्दिर वास्तविक देवालय नहीं। महर्षि का यही मन्तव्य है।



सर्वतोमुखी क्रान्ति के अग्रदूत : महर्षि दयानन्द

—डा० शिवकुमार शास्त्री
महामन्त्री, आर्य केन्द्रीय सभा, दिल्ली राज्य

प्रसिद्ध इतिहासकार रोम्यां रोला ने युग प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती के सम्बन्ध में अपने उद्‌गार प्रकट करते हुए कहा था—'आर्यसमाज सब मनुष्यों एवम् सब देशों के प्रति न्याय और स्त्री पुरुषों की समानता को सिद्धान्त रूप में स्वीकार करता है। यह जन्मना जात-पांत का विरोधी है और गुण, कर्म, स्वभाव के आधार पर वर्ण-व्यवस्था को मानता है। इस विभाजन से धर्म का कोई सम्बन्ध नहीं। अस्पृश्यता से आर्यसमाज को घोर घृणा है। स्वामी दयानन्द से बढ़ कर हरिजनों के हितों का रक्षक दूसरा कोई कठिनाई से ही मिलेगा। स्त्रियों को दयनीय स्थिति से उभारने, समान अधिकार दिलाने और शिक्षा की उपयुक्त व्यवस्था कराने में दयानन्द जी ने बडी उदारता और बहादुरी से काम लिया।

भारत में जो इस समय राष्ट्रीय पुनर्जागरण दीख रहा है उस में भी स्वामी दयानन्द ने प्रबल शक्ति के रूप में काम किया।—दयानन्द राष्ट्रीय संगठन और पुनर्निर्माण का उत्साही मसीहा था। मैं समझता हू—राजनीतिक जागरण के बनाये रखने और सही दिशा देने में उनका प्रमुख हाथ रहा है।

इतिहास साक्षी है कि जिस समय देव दयानन्द का प्रादुर्भाव हुआ उस समय प्राचीन वैदिक धर्मी नाना प्रकार के मत-मतान्तरों की मदिरा से मत्त होकर पथभ्रष्ट हो चुका था। एक ईश्वर के स्थान पर अनेक मनमाने ईश्वर बना लिए गये थे, श्रेष्ठतम कर्म यज्ञ हिंसा का शिकार हो रहा था; वेदों के भाष्य के नाम पर अनर्गल प्रचार हो रहा था, विधर्मी वेदों को गडरियों के गीत कह कर हमारे धर्म की खिल्ली उड़ा रहे थे, अन्धविश्वास और पाखण्ड चरम सीमा पर था, गुरु को ईश्वर से बड़ा समझा जाता था, स्वार्थी और पाखण्डी पण्डितों ने 'स्त्रीशूद्रौ नाधीयताम्' का फतवा देकर इनके लिए वेदों का द्वार सदा के लिए बन्द कर रखा था। बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह और बहु-विवाह पर जहां कोई प्रतिबन्ध नहीं था वहां विधवा विवाह तथा पुनर्विवाह की चर्चा तक करना अपराध माना जाता था। हरिजन देव मन्दिरों में नहीं जा सकते थे, वे सवर्णों के कुओं से पानी नहीं भर सकते थे, सतीप्रथा एवम् यज्ञों में पशुबलि जैसी बुराइयां धर्म के नाम पर पनप रही थीं,। हिंदू समाज प्याज के छिलकों की तरह सारहीन बना हुआ था; राजनैतिक दृष्टि से हम परतन्त्र तो थे ही आपस में राजा-महाराजा एक दूसरे का विरोध कर अंग्रेजों सत्ता के हाथ मजबूत कर रहे थे, अनाथों एवम् विधवाओं का क्रन्दन समाज के लिए अभिशाप बना हुआ था, विदेशी शिक्षा चिन्तकों, विचारकों एवम् मनीषियों के स्थान पर केवल मात्र क्लर्क बना रही थी। सन् १८५७ के स्वतन्त्रता संग्राम के बाद सभी के मन बुझे हुए थे, उस समय के शासक सुरा और सुन्दरी के पाश में जकड़े हुए थे। सम्पूर्ण भूमण्डल पर सार्वभौम चक्रवर्ती साम्राज्य स्थापित करने वालों की सन्तान अपने गौरव को भूल कर अंग्रेजों

की चाटुकारिता करने में ही अपने को धन्य समझने लगी थी, राणा और शिवा की सन्तान अन्याय के खिलाफ बोल नहीं पा रही थी।

ऐसी विषम से विषमतर और विषमतर से विषमतम परिस्थितियों में देव दयानन्द ने आर्य-जाति को झकझोरा। आज देश में जो शुभ लक्षण दिखाई दे रहे हैं उन के मूल में देव दयानन्द का अथक परिश्रम विद्यमान है।

स्वराज्य शब्द का बोध कराने वाले महर्षि दयानन्द की कृपा से हमारे देश मे नई चेतना और जागृति आई थी। स्वामी जी ने हिन्दू धर्म को, जो प्याज के छिलकों की तरह बटा हुआ था—सगठित करने के लिए एकेश्वरवाद, त्रैतवाद एवम् पंचमहायज्ञों का विधान किया।

हिन्दी भाषा के वे प्रबल समर्थक थे। महर्षि संस्कृत के प्रकाण्ड पण्डित और अहिंदी भाषी होते हुए भी उन्होंने अपने ग्रन्थ आर्यभाषा (हिन्दी) में लिखे। सभी आर्यसमाजियों के लिए हिन्दी में व्यवहार करना आवश्यक बताया।

नारी, जो कि पैरों की जूती और नरक का द्वार समझी जाती थी देव दयानन्द के लिए पूजा एवम् श्रद्धा के योग्य थी। उन्होंने राजर्षि मनु के डिण्डिम घोष का पुनरुद्घोष करते हुए कहा—'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।'

स्वराज्य और स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग के लिए तत्कालीन राजा-महाराजाओं को प्रेरित किया।

गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को जन्म देकर उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में सब को समान अधिकार देने का प्रयास कर ऊँच-नीच को भावना को समाप्त किया। गौ को भारत की समृद्धि का कारण बताते हुए उनकी हत्या पर रोक लगाने की ब्रिटिश शासन से जोरदार मांग की।

मजहबी जुनून से हट कर स्वामी जी ने कहा—

'मेरा कोई नवीन कल्पना वा मत मतान्तर चलाने का लेशमात्र भी अभिप्राय नहीं है किन्तु जो सत्य है उसको मानना, मनवाना और जो असत्य है उसको छोडना और छुडवाना मुझ को अभीष्ट है। यदि मैं पक्षपात करता तो आर्यावर्त्त में प्रचलित मतों में से किसी एक मत का आग्रही होता।'

आपस की फूट के भयकर परिणामों की चर्चा करते हुए स्वामी जी ने चेतावनी दी—

''जब भाई-भाई आपस में लडते हैं तब तीसरा विदेशी आ कर पन्च बन बैठता है।'

'आपस की फूट के कारण कौरवों, पाण्डवों एवम् यादवों का सत्यानाश हो गया सो तो हो गया परन्तु वह भयकर राक्षस अब भी आर्यों के पीछे लगा है। न जाने कभी छूटेगा या आर्यों को सब सुखों से छुडा कर दु ख सागर में डुबा मारेगा।'

शिवरात्रि का यह महान् पर्व हमारे आत्म-निरीक्षण का पर्व है। जिस ऋषि ने बोध प्राप्ति से लेकर जीवन के अन्त तक अपना प्रत्येक क्षण ससार के उपकार में व्यतीत किया, जिसने विष पीकर अमृत प्रदान किया उस महान् ऋषि के बोधोत्सव को मनाते हुए हम सभी प्रतिज्ञा करें कि देव दयानन्द के अधूरे कार्यों को पूरा करने का सकल्प करते हुए 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' के नारे को सार्थक सिद्ध करें।

शिवरात्रि व्रत तथा जागरण

—डा० रविदत्त शर्मा आचार्य
अन्तर्देशीय संस्कृत सेवाश्रम, धनौली, आगरा

इष्ट देव को प्रसन्न करने के लिए प्रति वर्ष फाल्गुन वदी त्रयोदशी को शिवरात्रि का पर्व मनाया जाता है, पूर्ण रात्रि को जागरण कर के भक्ति गीत गाये जाते हैं, अच्छे पदार्थों से व्रत का पारायण किया जाता है, साथ ही कुछ मतवाले भांगादि का सेवन इसलिये करते हैं, क्योंकि शंकर भगवान् भांग-धतूरे का सेवन करते थे। उन भक्तों से एक प्रश्न है कि वे जो गांजा तथा मदिरापान करते हैं वह भी क्या आपके इष्टदेव की प्रेरणा ही है? कुछ मन्दिरों में तो नित्य प्रति यही कार्यक्रम चलता है। वहां कोई सम्मानित व्यक्ति जा ही नहीं सकता। गंगानगर के राममन्दिर में देखा कि महात्मा जी की आंखें देख कर लगता था मानो कोई डाकू हो। एक भक्त गांजा रगड रहा था तो दूसरा भांग पीस रहा था जब कि सत्संग होने वाला था। यह स्थिति है भगवान् के मन्दिरों की और दुर्व्यसनों के मारे हुए भक्तों की यदि यदि ये लम्पट मन्दिर में सारी रात चिल्लाते रहें तो कुछ भी मिलने वाला नहीं, यदि मूर्ख व्यक्ति ऐसी भूल करे तो क्षम्य है परन्तु जो कट्टर ब्राह्मण हैं उनकी आंखें भी अभी तक नहीं खुली हैं, जब कि पतन जारी है।

अविद्या से ग्रसित जन व्रत रखते हैं परन्तु वे व्रत के विषय में पूर्णतः अनभिज्ञ हैं। जिन्होंने अपने वेद-शास्त्रों को भुला दिया उन्हें क्या जानकारी हो सकती है? यजुर्वेद में व्रत का स्वरूप देखिये—

> अग्ने व्रतपते व्रत चरिष्यामि
> तच्छकेय तन्मे राध्यताम्।
> इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि॥

परमेश्वर से प्रार्थना की गई है कि मैं सदैव व्रत का आचरण करूँगा, मुझे ऐसा सामर्थ्य प्रदान करो जो उसे पूरा कर सकू, सफलता प्राप्त हो। मैं असत्य से सत्य की ओर चल रहा हूं। जीवन मे सत्य को धारण करना ही व्रत है। मन, वाणी और कर्म से सत्य का पारायण होता है। उस व्रत का पालन हम को तो करना ही है साथ में आगे आने वाली पीढी को भी धरोहर के रूप में देना है। एक मन्त्र में प्रार्थना की गई है कि हे आनन्दप्रद प्रभो हम तेरे व्रत को तन-मन से पूर्ण करें और अकेले ही नहीं अपितु अपने प्यारे बच्चों के साथ उसका सेवन करें—

> वय सोम व्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रत।
> प्रजावन्त सचेमहि॥ ऋ० १०।५७।६॥

क्या कोई भी भक्त गर्व के साथ यह कह सकता है कि उसने सत्य के व्रत को धारण करने की प्रतिज्ञा की है? शिवरात्रि के अतिरिक्त एकादशी-व्रत, पूर्णिमाव्रत, अष्टमीव्रत, गणेश चतुर्थीव्रत, सन्तोषीव्रत, सत्यनारायणव्रत, नवरात्रव्रत, वट-सावित्री अमावस्याव्रत आदि अनेकों व्रत हैं, परन्तु सब वेदविरुद्ध हैं। इस प्रकार के व्रतों से हमारी कर्म श्रृङ्खला पर कोई प्रभाव नहीं पडता। व्रत के द्वारा कर्म का प्रशिक्षण प्राप्त होता है, उस से क्षमता प्राप्त होती है, क्षमता से श्रद्धा और श्रद्धा से सत्य की उपलब्धि होती है—

> व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
> दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते॥
> यजु० १९।३०

व्रत का दीवाला तब निकलता है जब कि हमारे ही भाई तीर्थों पर जाकर किसी एक सब्जी या फल को छोड़ने का व्रत करते हैं और माताएँ निराहार रह कर पीर साहब पर चादर चढ़ाती हैं। बड़े आश्चर्य एवं दुःख का विषय है कि अनेक देवताओं के होते हुए भी कब्र से मुराद पूरी करने की प्रार्थना करते हैं। मजार पर एक व्यक्ति झाड़ू ले कर सब को मारता है और हमारी बहिनें उस के स्पर्श से अपने को धन्य मानती हैं। यही हमारे व्रतों का स्वरूप है।

शिवरात्रिव्रत के साथ-साथ जागरण भी सम्मिलित है, जो भी भक्त रात भर जागता रहता है उस पर भगवान् शङ्कर प्रसन्न होते हैं स्वस्थ मस्तिष्क से तनिक विचार करें, क्या उस जागरण से कुछ हाथ लगा? यदि हेरा-फेरी कर के कुछ धन मिल गया तो उस में किस की कृपा है? व्यवहार में ऐसा देखा गया है कि कोई भी व्यापारी आँखें बन्द कर के अर्जन में जुटा हुआ है तो धन की वृद्धि हो जाती है। धर्म-नियम को ठोकर मारकर यदि धन के ही पीछे पड़ गये और संग्रह भी कर लिया तो उस से कितना उत्थान हुआ यह भी विचारणीय विषय है। धन से कामना पूर्ण हो सकती है श्रेय नहीं मिलता। ऐसा ही पर्व का जागरण है, जिस में भूल से यही समझ बैठते हैं कि हमारी आर्थिक उन्नति का कारण जागरण है। किन्तु इस विषय में श्रुति का मन्तव्य इस प्रकार है—

त त्वा विप्रा विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते।
हव्यवाहममर्त्यं सहोवृधम्॥ ऋ० ३।१०।९

हमारे स्तोत्रों व हवि को स्वीकार करने वाले, बल की वृद्धि करने वाले प्रकाशस्वरूप प्रभु की स्तुति-प्रार्थना-उपासना वे ही लोग करते हैं जो सतत जागरूक हैं, मेधावी हैं, उत्तम स्तोता हैं। केवल एक रात्रि के जागरण से ही उपासना का कार्य पूर्ण नहीं हो जाता, यह तो जीवन भर का अथवा जन्म-जन्मान्तर का निरन्तर चलने वाला कार्यक्रम है। एक रात्रि में ही सिद्धि प्राप्त हो जाती तो ऋषि-मुनियों ने भूल की जो कि वेद-दर्शन-उपनिषदों में जीवन खपा दिया। अनेकों जन्मों की तपस्या के पश्चात् प्रभु की कृपा हो जाय तो दिव्य-ज्योति का साक्षात्कार हो सकता है। साधना की अवधि इतनी छोटी नहीं होती, जितनी कि साधारण लोग सोचते हैं। मनुष्य कितना भ्रान्त है कि प्रतिमा पर पुष्प चढ़ा कर मोक्ष का अधिकारी बनना चाहता है, नींद न आने देने को जागरण मान लेता है। यदि कुछ उपलब्धि न हुई तो जागरण कैसा? वेद में तो इसका कुछ और ही फल बताया है—

यो जागार तमृचः कामयन्ते,
यो जागार तमु सामानि यन्ति।
यो जागार तमयं सोम
आह तवाहमस्मि सख्ये न्योकाः॥
ऋ० ५।४४।१४

जो जागता है, ऋचाएँ उसी की कामना करती हैं साम उसे प्राप्त होते हैं और जो परमेश्वर की उपासना का फल है वह सोम भी उसे प्राप्त होता है। परमानन्द के भण्डार को वह अनायास ही प्राप्त कर लेता है। अब यह विचार करना है कि इस जागरण का अधिकारी कौन है? क्या यह जागरण की क्रिया इतनी आसान है कि कोई भी कर ले? वेद में इसका अधिकार ज्ञानी को मिला है। जो व्यक्ति साधना के मर्म को जानता है, उपासना का रहस्य समझता है श्रेय मार्ग का पथिक है, सांसारिक चमक-दमक से ऊपर उठ चुका है, अपने इष्ट देव पर सभी लाखों को समर्पित कर चुका है, प्रत्येक आकृति में प्रभु को ही देखता है तथा अन्धकार से निकल कर सदैव प्रकाश में विराजता है, उसे अग्नि शब्द से अभिहित किया गया है—

अग्निर्जागार तमृचः कामयन्ते
ऽग्निर्जागार तमु सामानि यन्ति।

अग्निर्जागार तमयं सोम
आह तवाहमस्मि सख्ये न्योका ॥
ऋ० ५।४४।१५

यह जागरण भी विचित्र है जिसका सम्बन्ध इन्द्रियों से न होकर आत्मा से होता है। इन्द्रियां सदैव अपने विषयों के प्रति जागरूक हैं। जब तक आत्मा से सीधा सम्बन्ध नहीं हो जाता, तब तक उपासना नहीं होती। आत्मस्थ होकर ही प्रभु का चिन्तन होता है जिसे ध्यान, धारणा, समाधि आदि नाम दिये गए हैं। गाना-बजाना आदि से साधना नहीं होती। मनुष्य को धोखा दिया जा सकता है परन्तु परमात्मा के साथ ऐसी बात नहीं है। चित्तवृत्तियां तो इधर-उधर भाग रही हैं और हो रहा है जागरण। किसी विषय को जब तक आत्मा ग्रहण नहीं करता तब तक मनुष्य पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। बाहर के प्रकाश से अन्दर का अन्धकार नहीं मिटाया जा सकता। बस यही भूल है कि हम ईश्वर को वाणी का विषय बनाये हुए हैं। वाणी को सामर्थ्य प्रदान करने वाली शक्ति अगोचर है। शास्त्रों के अनुसार जागरण वही है, जिस में उस सर्वनियन्ता का साक्षात्कार होता है। वह ऐसा जागरण है जिस के बाद सोने की आवश्यकता नहीं होती।

यदि शिव का अर्थ ईश्वर है तो शिवरात्रि का अर्थ ईश्वर की रात्रि हुआ। क्या सभी भक्तों को ईश्वर का दर्शन हो जाता है? सभी अपने हृदय पर हाथ रख कर देखें कि दर्शन हुआ अथवा व्यर्थ ही रात्रि की नींद गँवायी, हमारी आत्मा जब भी परमात्मा से सम्बद्ध हो जाय तभी शिवरात्रि होगी। यह ही आत्मकल्याण की घड़ी होगी। शिवरात्रि का फल तभी प्राप्त हो सकता है, जब कि हम वेद-वर्णित मार्ग का अनुसरण करें और व्रत-जागरण आदि को व्यवस्थित रूप दें। अव्यवस्थित क्रियाओं से कुछ लाभ नहीं होता। कोरी कल्पनाओं के सहारे जन्म-जन्मान्तर भटकने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। अत. सत्य का व्रत धारण कर आत्मा के द्वारा उस सत्यस्वरूप का साक्षात्कार करना ही सच्चा व्रत एवं जागरण होगा तथा अखंड ज्योति में रमण करना ही व्रत का फल होगा। धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष इन चारों पदार्थों की प्राप्ति करना आर्य का कर्त्तव्य है। अपने पर्वों का स्वरूप इस प्रकार का निर्धारित किया जाय जिस से कि पुरुषार्थ की प्राप्ति हो। अपने जीवन को वेदानुकूल बना कर ही ऐसा सम्भव है अन्यथा लक्ष्यविहीन जाति युगों तक भटकती ही रहेगी।

●

बोध शिव रात्रि व्रत

आई है शिव रात पुन, दयानन्द की याद दिलाने को।
सच्चे शिव के व्रतधारी की, गाथा को दोहराने को॥

टकारा गुजरात प्रान्त में, कस्बा नदी किनारे पर।
रखा मूल ने व्रत था उस दिन, निज पितु मात इशारे पर॥
शिव मन्दिर के द्वारे पर, शंकर का दर्शन पाने को।
सच्चे शिव के व्रतधारी की, गाथा को दोहराने को॥१॥

आधी रात व्यतीत हुई, भगतों को नींद सताने लगी।
लगे ऊंघने नरनारी सब, नींद पिता को आने लगी॥
तड़फ हुई जब हृदय अन्दर, शिव को भोग लगाने को।
सच्चे शिव के व्रतधारी की, गाथा को दोहराने को॥२॥

देख रहे टकटकी लगा, मूल अकेले जाग रहे।
शिव प्रतिमा के ऊपर निर्भय, चूहे लगा छलांग रहे॥
उछल कूद कर रहे परस्पर, लगे चढावा खाने को।
सच्चे शिव के व्रतधारी की, गाथा को दोहराने को॥३॥

देखा अजब नजारा तो, शिव दर्शन की बढ़ भूख गई।
मगर यहाँ पर बिन वरषा के, सारी खेती सूख गई॥
आँखों पर दे जल के छींटे, बैठा ध्यान लगाने को।
सच्चे शिव के व्रतधारी की, गाथा को दोहराने को॥४॥

शिव कैलाशी वासी की वह, प्यारी सूरत मिली नहीं।
जिस फूल पै भंवरा मस्त हुआ, वह कली बाग में खिली नहीं॥
शिव प्रतिमा न हिली उठी, चूहों को दूर भगाने को।
सच्चे शिव के व्रतधारी की, गाथा को दोहराने को॥५॥

भूखा प्यासा रहकर भी तो, शिव का दर्शन पाया नहीं।
निकल पडा शिव मन्दिर से, जो सोये उन्हें जगाया नहीं॥
घर जाकर आवाज लगाई, मां भोजन दे खाने को।
सच्चे शिव के व्रतधारी की, गाथा को दोहराने को॥६॥
आई है शिवरात पुनः, दयानन्द की याद दिलाने को!

रचयिता—स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती
अध्यक्ष, वेद प्रचार

ऐसे थे हमारे क्रान्तिकारी देशभक्त ऋषिवर

चमनलाल, अशोक विहार

पांच सहस्र वर्ष पूर्व ठीक आज की ही तरह विश्व के क्षितिज पर भारों की अन्धेरी तमिस्र अपनी विगूढ़ कालिमा के साथ छाई हुई थी तब भी भारत में जब, धन, शक्ति को साहस की कोई कमी नहीं थी, परन्तु एक अकर्मण्यता भी थी जिस से सब कुछ अभिभूत, मोहाच्छन्न और तमसावृत था। ऐसे विकट समय में मानव के कल्याण के हेतु परलोक नीति और अध्यात्म को समन्वय के सूत्र में बांधने वाले योगीराज श्री कृष्ण महाराज का जन्म हुआ था। इसके पश्चात् भी अनेक महापुरुष समय-समय पर इस धरती पर आए। और उनके जीवनों पर दृष्टिपात करने से विदित होता है कि प्रत्येक में कोई न कोई विशेषता पाई जाती है। उनमें कोई धर्म सस्कारक है तो कोई स्वराज्य स्रष्टा है तो कोई परम निःस्पृह परिवार है तो कोई विलक्षण राजनीतिज्ञ है। परन्तु कृष्ण जी के पश्चात् गत पाच सहस्र वर्षों में एक ही ऐसा विलक्षण, सन्यासी आदित्य ब्रह्मचारी दयानन्द हुआ जिसमें इन सब आदर्शों की एक साथ परिणति हुई है।

ऐसे महापुरुष का सन् १८२४ मे गुजरात प्रान्त की मोरवी रियासत के टकारा नाम के ग्राम में श्री करषण लाल त्रिवेदी के घर जन्म हुआ। जिसका नाम मूलशकर रखा गया। यही मूलशकर आगे जाकर महर्षि दयानन्द के नाम से समस्त भारत में प्रसिद्ध हुआ। यह युग पुरुष थे और १९वीं शताब्दी के महान् क्रान्तिकारी अद्भुत व्यक्ति थे। भारत के मृत्युमय शरीर में पुन. प्राण स्थापना करने वाले भी यही देव दयानन्द ही थे। यही नव जागरण के अग्रदूत हैं। जिन्होंने अपना सारा जीवन मानव के उत्थान और निर्माण के हित अर्पित कर दिया था। यदि निष्पक्ष भाव से विचार किया जावे, तो धरती के प्रागण में दयानन्द सा महान् दार्शनिक मानवता का पुजारी सत्य का अन्वेषक और प्रचारक कल्याण मार्ग का द्रष्टा गत पाच हजार वर्षों में कृष्ण महाराज के पश्चात् और कोई व्यक्ति हुआ ही नही। इतना महान् व्यक्तित्व रखते हुए भी उनकी एक बडी विशेषता यह है कि उन्होंने अपना कोई नवीन मत नहीं चलाया और न ही कोई आश्रम न समाधि बनवाई, उनका तो यही कहना था कि मैं तो ब्रह्मा से लेकर जैमिनी पर्यन्त ऋषि मुनियों की जो वैदिक विचार धारा उन्होंने चलाई थी मैं उसी विचार धारा का पोषक हूं और उसी को पुन जीवित करने में लगा हूं क्योंकि वही पवित्र विचार धारा है, जो मानव कल्याण का हित करने वाली है।

ऐसे महान् युग प्रवर्तक, देशभक्त, दिव्य गुण पुरुष की महानता शब्दों में नहीं आंकी जा सकती फिर भी आज की सब से बडी आवश्यकता यह है कि उनके दिव्य जीवन से प्रेरणा लेकर अपने और मानव मात्र के कल्याण को अग्रसर हों। यहा कुछ घटनाओं पर आधारित उनके जीवन के कुछ अंश यहा दिये जा रहे हैं।

हमारे धर्म ग्रन्थों में वीर्य रक्षा ब्रह्मचर्य के पालन पर सबसे अधिक ध्यान दिया गया है। अप्रमाणनीय भवति।' इस का विशद वर्णन स्थान-स्थान पर

मिलता है। अथर्ववेद में आया है—ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत" अर्थात् देव ब्रह्मचर्य के पालन से मृत्यु को भी पार कर जाते हैं। बड़े-बड़े महापुरुष इस का पालन करते आ रहे हैं। त्रेता में पवन पुत्र महावीर हनुमान्, परशुराम, द्वापर में भीष्म पितामह इसके पश्चात् शङ्कराचार्य ने इस महाव्रत को धारण करके जन साधारण के उत्तम स्वास्थ्य के लिए एक उदाहरण उपस्थित किया। आधुनिक काल में युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द ने इस ब्रह्मचर्य के महत्त्व पर अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय सम्मुल्लास में बडा बल दिया है और लिखा है कि जो मनुष्य इस ब्रह्मचर्य को प्राप्त होकर विवाह नहीं करते, वे सब प्रकार के रोगो से रहित होकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त होते हैं। ऋषि ने स्वय इस का पालन किया जिस कारण उनका शरीर वज्र की भांति पुष्ट और चेहरा सूरज की मानिन्द चमकता था, और विरोधी लोग उनके धधकते चेहरे को देख कर पस्त हिम्मत हो जाते थे। उनके विमल ब्रह्मचर्य से सम्बन्धित कुछ घटनाएँ इस प्रकार हैं—एक बार महर्षि देव दयानन्द एक शिवालय के पास से निकल रहे थे तो चलते-चलते उन्होंने अपना सिर झुका दिया, इस पर तुरन्त एक पौराणिक बोल उठा—कि देखा हमारी मूर्तियों में कितनी शक्ति है कि दयानन्द जैसे महान् मूर्ति पूजा विरोधी नास्तिक को भी उसके आगे सिर झुकाना पडा। इस पर ऋषि ने वहां बैठी एक नग्न बालिका की ओर सकेत करते हुए कहा—'देखते नहीं यही मातृशक्ति है' जिसके आगे मैंने सिर झुकाया है। कितना पावन विचार! एक छोटी सी बालिका में भी मातृशक्ति की इतनी बडी पवित्र भावना।

एक बार जब स्वामी जी प्रचारार्थ बगाल (कलकत्ता) गये हुए थे, तो उनके एक भक्त अश्विनी कुमार दत्त ने एक दिन सत्सग के पश्चात् एकान्त में पूछा कि क्या कभी कामवासना ने आपको नही सताया, स्वामी जी ने दो मिनट मौन हो अपने जीवन पर ध्यान देकर कहा "नहीं" तब तो दत्त जी चकित होकर बोले कि यह तो सम्भव हो सकता है कि काम वासना होने पर आदमी अपने प्रबल विचार शक्ति से उस के प्रवाह को रोक ले, परन्तु इस विचार का न आना कैसे सम्भव है। स्वामी जी ने गम्भीरता से उत्तर दिया 'अश्विनी' इसके लिए तो मेरे पास कोई अवकाश ही नहीं है। कैसे विचित्र थे वह ब्रह्मचारी। ब्रह्मचर्य बल का प्रदर्शन करने के लिये जालन्धर में सरदार विक्रमसिंह की बग्गी को पीछे से पकड कर खडे होकर घोडों के जोर लगाने पर भी रोक दिया। एक और घटना, स्वामी जी गगा किनारे ध्यान करते थे, कि दो गुण्डे पहलवानों ने उनको उठाकर गगा में फेंकना चाहा, परन्तु समाधि खुलने पर स्वामी जी ने अपने ब्रह्मचर्य के बल से उन दोनो गुण्डों को बगलों में दबाकर गंगा में दे मारा बेचारों को लेने के देने पड गये। एक और घटना मे जब एक शकट बोझ के कारण दलदल में धस गया और यथासम्भव कोशिश करने पर भी बैल उसे निकाल न सके, तो उस रास्ते से जाते स्वामी जी ने जब इस दृश्य को देखा, तो बैलो पर दया आने के कारण उन्होंने शकट वाले को कहा कि तुम बैलों को हटा लो, मैं तुम्हारी गाडी को अकेला दलदल से बाहर निकाल दूँगा। स्वामी जी ने जुए को अपने कन्धों पर रखकर बलपूर्वक गाडी को बाहर खेंच निकाला। कर्णवास में सरदार कर्णसिंह की तलवार के दो टुकडे करने की घटना कौन नहीं जानता। ऐसे थे हमारे देव दयानन्द आदित्य ब्रह्मचारी।

महर्षि पतञ्जलि ने महाभाष्य मे एक स्थान पर लिखा है कि—"एक शब्द सम्यक् ज्ञात सुप्रयुक्त स्वर्गे लोके कामधुक् भवति।" अर्थात् वेद का केवल शब्द ही यदि वह पूरे तौर पर समझकर जीवन मे प्रयोग मे लावे तो वह अद्भुत आश्चर्य जनक सिद्धि प्राप्त करा देता है। सचमुच यह बात हम महात्मा बुद्ध और स्वामी शकराचार्य जो एक शब्द'मृत्यु' से बचने के उपाय खोजने में निकले

इनके पश्चात् महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती के जीवन से मिलती है जो 'शिव" शब्द को लेकर और महात्मा बुद्ध, स्वामी शकर की तरह 'मृत्यु' शब्द को लेकर घर से निकले और कहना न होगा कि अपनी पूर्ण निष्ठा के कारण दोनों प्रयत्नों मे सफल मनोरथ हुए। वह वेद के सच्चे पुजारी थे और आध्यात्मिकता मे पूर्ण विश्वास करते थे। वह कहा करते थे —भारत की सबसे बड़ी सम्पत्ति उसकी आध्यात्मिकता की निधि है, सब कुछ खोकर उसको रक्षा करनी चाहिए। परन्तु दुख है कि भौतिकता का भूत हमारे जीवनो मे इतना छा गया है कि आध्यात्मिकता जैसी पवित्र वस्तु को ही सबसे तुच्छ समझकर अपने जीवनो मे से ऐसे निकाल कर फेंक दिया है जैसे कोई गृहिणी दूध मे पडी मक्खी को निकाल बाहर फेंक देता है। यही कारण आज हमारे घोर पतन का जीवन मे व्यापे भ्रष्टाचार का है।

स्वामी जी बड़े देशभक्त थे। उन्होने प्रत्यक्ष रूप मे १८५७ के सैनिक विद्रोह मे सक्रिय भाग लिया, परन्तु किन्हीं कारणो से इसमे विफलता के कारण बड़े दुखी रहने लगे और तत्पश्चात् अप्रत्यक्ष रूप से इस काम में मृत्यु पर्यन्त लगे रहे। वह देश को विदेशी शासन की जजीरो से मुक्त कराना चाहते थे और स्वतन्त्रता प्राप्त करके चक्रवर्ती राज्य की स्थापना के स्वप्न भी लिया करते थे। उनके ग्रन्थों में स्थान स्थान पर वेदमन्त्रो को व्याख्या करते हुए चक्रवर्ती साम्राज्य की ओर सकेत मिलते हैं। देशी राज्यो में प्रचार करके वहा के राजाओं-महाराजाओं को मानसिक दासता को हटाकर देशभक्ति को जगाने का ही एकमात्र उद्देश्य था। कांग्रेस से भी बीसियो वर्ष पूर्व उन्होंने हम को 'स्वराज्य' शब्द दिया था। सन् १८७२ में कलकत्ता में लार्ड नार्थ ब्रुक के आमन्त्रण पर लार्ड से बातचीत के दौरान बडी निर्भीकता से कहा था कि उत्तम से उत्तम विदेशी राज्य से अपना राज्य कैसा भी हो, कहीं अच्छा है और मैं तो नित्य प्रति प्रार्थना करता हू कि विदेशी राज्य से जल्द से जल्द मुक्ति मिले। वह देशवासियों को दुर्दशा देखकर इतने व्याकुल और चिन्तित रहते थे जैसे महात्मा भरत मर्यादा पुरुषोत्तम राम की जुदाई के कारण। कई बार ऋषि रात को सोते जागते और बडे व्याकुल होकर कमरे में फिरने लगते और दर्द से कराहने लगते तो समीप ही पडे सेवक पूछते महाराज कैसा दर्द है। किसी वैद्य, डाक्टर, हकीम को बुलाया जाये तो ऋषि कहते यह दर्द किसी डाक्टर से दूर करने योग्य नहीं, यह तो देशवासियों की दुर्दशा के कारण है। इसी देश प्रेम के लिए उन्हें विष के घूट पीने पडे। प्राचीन काल में शकर ने, फिर सुकरात और मध्यकाल मे मीरा ने जो विषपान किया, उससे कहीं अधिक हलाहल विष ऋषि ने कितने ही बार अपने जीवनकाल में पान किया, और अन्त में काच पीस पीस कर दूध मे दिया गया हलाहल विष ही उनका प्राणलेवा सिद्ध हुआ।

सचमुच ऋषि वेद के शब्दों मे कहा करते थे कि हम तेरे लिए बलिदान करने वाले हों। "वय तुभ्य बलिहृत स्याम"—अथर्ववेद। इन्हीं ऋषि वचनों से अनुप्राणित होकर आर्यसमाज के सेवको ने लाखों की सख्या मे स्वतन्त्रता सग्राम में भाग लिया। अपने जीवनो को हस-हस कर बलि दी। यह बात कांग्रेस के स्वतन्त्रता सग्राम के इतिहास लेखक श्री पट्टाभि सीतारमैया ने लिखी कि इस स्वतन्त्रता सग्राम में सबसे अधिक सख्या में बलि देने वाले आर्यसमाजी हैं।

वेद के कई मन्त्र मुझे ऐसे प्रतीत होते हैं कि मानो वह प्रात. स्मरणीय युग पुरुष युग प्रवर्तक महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती की जीवन की घटनाओ को देखकर ही बनाये गये हों, क्या वे मन्त्र ऋषि के जीवन पर शत प्रतिशत लागू होते हैं। स्मरण रहे ऐसा सम्भव नही, क्योंकि वेद मन्त्र तो ईश्वरीय ज्ञान है जो प्रभु ने अपनी अपार कृपा से मानव मात्र के कल्याण के लिए सृष्टि के आदि

में चार ऋषियों द्वारा हमें दिया। परन्तु यह उसी तरह ऋषि जीवन से सम्बन्धित हो जाते हैं जिस प्रकार भारत के ज्योतिष विज्ञान में उन बारह नक्षत्र मण्डलों के नाम जो पृथ्वी जिस परिधि पर सूर्य के गिर्द घूमती है, पर बने हुए हैं, इस पृथ्वीलोक में उपलब्ध कुछ जड-चेतन पदार्थों की प्राकृति से मिलते जुलते पदार्थों के नाम पर रख लिये हैं, यद्यपि जो वास्तव में किसी ने उनको वैसी प्राकृति वाला बनाया नहीं है—मेष, वृष मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ, मीन।

उन मन्त्रों में से कुछ मन्त्र मैं यहाँ उदाहरणार्थ देता हूँ—

प्रोथदश्वो न यवसेऽविष्यन् यदा मह सवरणाद्व्यस्थात्।

आदस्य वातो अनु वाति शोचिरध स्म ते व्रजनं कृष्णमस्ति।

सामवेद उत्त० प्र० ५। अर्ध १। द० ८। २

अर्थात् जैसे कोई शक्तिशाली घोडा किसी घास आदि की कामना वाला होकर शोर करता हुआ अपने बेडे से निकलता है तो बाजार में सभी चलते फिरते लोग उसके लिए रास्ता छोड़कर एक ओर हो जाते हैं। यह कहते हुए कि 'वह आया', 'वह आया!' ठीक इसी प्रकार महर्षि जब ज्ञानदीप्ति से प्रकाशित हो, गुरु विरजानन्द जी की कुटी से अज्ञान-अन्धकार को छिन्न-भिन्न करने हेतु सब विघ्न-बाधाओं की दीवारों को चीरते हुए कार्य क्षेत्र में उतरे, तो जिस ओर भी उन्होंने सुधार का बिगुल बजाया, सारी जनता उन के लिए रास्ता साफ करती हुई, उनके पीछे-पीछे हो ली थी। एक और मन्त्र—

उत नः सुभगाँ अरिर्वोचेयुर्दस्म कृष्टय.। स्यामेदिन्द्रस्य शर्मणि। ऋ० १।४।६

अर्थात् सच्चे सौभाग्यशाली वही पुरुष होते हैं जिनकी प्रशंसा उनके विरोधी विचार धारा वाले भी किये बिना न रह सकें। ऐसे महान् व्यक्तियों में स्वामी जी का नाम सर्वोपरि आता है, जिनकी प्रतिभा, कार्य कुशलता, देश-प्रेम, प्रभु भक्ति, ब्रह्मचर्य, ईश्वर विश्वास और सत्य परायणता की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए हमें अनेकों स्वदेशी अथवा विदेशी चिन्तक मिलते हैं। उस बडी सूची से फ्रांस के प्रसिद्ध ग्रन्थकार, महान् चिन्तक व विद्वान् और यूरोप के महान् मस्तिष्कों का प्रतिनिधित्व करने वाले श्री रोमारोल्या के उद्गार जो उन्होंने एक पुस्तक में ऋषि के सम्बन्ध में लिखे हैं, उन का देना अत्यन्त उचित समझता हूं। उनकी फ्रेंच भाषा और उसका अंग्रेजी अनुवाद न देता हुआ स्थानाभाव के कारण उसका हिन्दी अनुवाद ही देता हू जो इस प्रकार हैं। जिनके लिखने में तो मानो जैसे अपनी लेखनी ही तोड दी हो। ये उद्गार महर्षि के वास्तविक रूप के द्योतक हैं।

सिंह समान निर्भीक प्रकृति वाला यह महापुरुष (दयानन्द) उन व्यक्तियों में से था, जिन्हें भारत का मूल्यांकन करते हुए यूरोप भुलाने की चेष्टा करना हुआ भी भुला न सकेगा, क्योंकि ऐसा करना उसके (यूरोप) के लिए मंहगा सौदा सिद्ध होगा। इस महान पुरुष दयानन्द में विचार, कर्म और नेतृत्व की प्रतिभा का अनुपम सम्मिश्रण था।

दयानन्द पाश्चात्य विचारों से विमोहित दार्शनिकों के साथ समझौता करने वाले महानुभाव न थे।

उस (दयानन्द) पर विजय पाना असम्भव था क्योंकि वे वैदिक वाङ्मय और संस्कृत के अनुपम भण्डार थे। उनके शब्दों की धडकती हुई आग से उनके विरोधियों का विरोध भस्मसात् हो जाया करता था। वे लोग जल की प्रबल बाढ़ के साथ दयानन्द की तुलना किया करते थे। शंकराचार्य के पश्चात् दयानन्द जैसा वेदवित् भारत में उत्पन्न नहीं हुआ।

…विन्द की उग्र और प्रौढ़ शिक्षाएँ उनके देशवासियों की विचारधारा के अनुकूल थीं और उन शिक्षाओं से भारतीय राष्ट्रीयता का सर्वप्रथम नवजागरण हुआ।

महान् वीर योद्धा दयानन्द का उत्साहपूर्वक स्वागत होने का कारण इस पृष्ठभूमि के प्रकाश में सहज ही में समझ में आ सकता है कि वह स्वय वेदों के उग्र प्रचारक थे और वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् और मर्मज्ञ थे। वे ऋषियों की परम्परा के अग थे और वीर भावना के साथ प्राचीन भारत के पवित्र ग्रन्थों को साथ लेकर कार्यक्षेत्र में अवतीर्ण हुए थे। उन्होंने अकेले भारत पर आक्रमण करने वालों के विरुद्ध मोर्चा लगाया।

दयानन्द ने अपने देश के प्राचीन व अर्वाचीन किसी भी निवासी को क्षमा नहीं किया, जिस ने किसी न किसी रूप में उस भारत के एक सहस्र वर्ष में हुए पतन में योग दिया था, जो किसी समय ससार का शिरमौर था।

सत्य यह है कि भारत के लिए वह दिन एक युग प्रवर्तक दिन था। जब एक ब्राह्मण ने न केवल यह स्वीकार किया कि उस वेद ज्ञान पर मानव-मात्र का अधिकार है जिसका पठन-पाठन उस से पूर्व के ब्राह्मणों ने निषिद्ध कर दिया था, अपितु इस बात पर भी बल दिया कि वेदों का पढना-पढ़ाना और सुनना सुनाना आर्यों का परम धर्म है।

दयानन्द ने भारत के निष्प्राण शरीर में अपना अदम्य उत्साह, अपना दृढ निश्चयात्मक सकल्प और सिंह जैसा रक्त भरकर उसे सजीव किया। उनके शब्द वीरोचित शक्ति के साथ गूज गये।

सब से मुख्य बात यह है कि दयानन्द को अस्पृश्यों की विद्यमानता का घृणित अध्याय सर्वथा असह्य था। उनके अधिकारों का जितनी उग्रता से दयानन्द ने समर्थन किया उतनी उग्रता से अन्य किसी ने नहीं किया। अस्पृश्य कहे जाने वाले जन पूरी समानता के आधार पर आर्यसमाज में प्रविष्ट होते हैं।

वस्तुत. भारतीय राष्ट्रीय चेतना के पुनर्जन्म और जागरण में जो इस समय (१९३०) उस देश में अपने पूर्ण यौवन में देख पड रही है, सबसे प्रबल प्रेरणा दयानन्द से प्राप्त हुई थी।

ऐसे महान् दिव्य पुरुष का बोध दिवस पर्व प्रति वर्ष महाकल्याणी शिवरात्रि के अवसर पर मनाया जाता है। इस अवसर पर कुछ सभायें होती हैं और उन के जीवन से सम्बन्धित कुछ भाषण होते हैं और बस हम अपने कर्तव्य की इति श्री समझते हैं। परन्तु आर्य बन्धुओ ! यह बडी भारी भूल है। ऐसे महापुरुष के जीवन सम्बन्धी पर्व को मनाने का एकमात्र उद्देश्य यह होना चाहिए कि हम उनके जीवन से प्रेरणा लेकर, उनके अधूरे कामों को पूरा करने का भरसक प्रयत्न करें और उनकी शिक्षाओं और विचारों को मानव कल्याण के लिए, देश के दूर-दराज स्थानों में जन साधारण तक पहुचाने का यथाशक्ति प्रयत्न करें। वेद का यह मन्त्र भी इसी बात की ओर सकेत कर रहा है

त्वावत पुरुवसो वयमिन्द्र प्रणेत:। स्मसि स्थातर्हरीणाम्॥ साम० पू० प्र० २।द० ५।६

आज मानवता दानवता में बदल गई है। यह ऋषि-मुनियों का देश राम कृष्ण की पवित्र जन्म-भूमि घोर भ्रष्टाचार का गढ़ बन गया है। देश-हितो की बलि अपने स्वय के और पार्टी के हितों की सिद्धि के लिए दी जा रही है। बुद्धिजीवी लोग कुछ भी करने में अपने आपको असमर्थ पाते हैं और सरकटे पक्षियो की तरह तडप रहे हैं। इस समय कोई सस्था अथवा नेता ऐसा नहीं दीख पडता जो कृष्ण-दयानन्द की तरह जान की बाजी लगाकर मानवता की रक्षा के लिए आगे आये। सब की आंखें अपने आप को देश का प्रहरी कहलाने वाली, ऋषि दयानन्द की आर्यसमाज पर लगी है। अत: हमें उनकी आज्ञाओं पर ध्यान देकर कुछ ऐसे कार्यक्रम बनाने चाहिए जिससे कि पुन मानवता को उसका उचित स्थान दिलाया जाए। इस बोध दिवस के पुण्य पर्व पर हम कुछ छोटे-बडे व्रत धारण करके देश में भ्रष्टाचार और विघटन की धडकती हुई ज्वाला को शान्त करने में योग दें। यही सच्ची श्रद्धाजलि ऋषि के प्रति होगी। ●

गौरव गान

कर्मयोग के दिव्य दिवाकर, ब्रह्मवाद के भव्याकाश,
अहोभाग्य है उस धरती का, जहाँ तुम्हारा पुण्य प्रकाश,
एक तुम्हारे ही संबल से, दिशि दिशि हुआ अविद्या-नाश,
पाखण्डों की जली होलियाँ, दम्भ-दैत्य सब हुए हताश,
धूलि धूसरित किए तुम्हीं ने, रूढिवाद के रीति रिवाज।

धन्य धन्य हे आर्यसमाज ॥१॥

सार्वभौम सन्देश-सुवाहक, प्रीति रीति के चिर-उन्मेष,
मुखरित हैं तव श्वास श्वास से, श्रुतियों के स्वर्णिम सन्देश,
भीषण भय-भ्रम-भ्रान्ति-निवारक, भव्य तुम्हारे प्रिय उपदेश,
बाट तुम्हारी जोह रहे हैं चिन्तनशील सुधी सविशेष,
जगती आशा भरे नयन से खडी सजाए अपना साज।

धन्य धन्य हे आर्यसमाज ॥२॥

हे अध्यात्म-सुधा के वितरक, हे आनन्द-सिन्धु लवलीन!
सद्विद्या के चतुर चितेरे, काव्य तुम्हारा नित्य नवीन,
स्वाभिमान-संगीत-सुगायक, पौरुष-पथ के पथिक प्रवीण,
न्याय-नीति के अभिनव नायक, तन-मन से समरस स्वाधीन,
ज्ञान-गगन के तरुण-अरुण तुम, मधुमय मानवता की लाज।

धन्य धन्य हे आर्यसमाज ॥३॥

साम्य-सुधा के चारु चन्द्रमा, हे समाजवादी आदित्य,
प्रगतिशील भावों के पोषक, नवजागृति के शुचि साहित्य,
जन-जन के मन की मृदु धडकन, कण-कण के शुभचिंतक नित्य,
अणु अणु के उर-अन्तर में हैं अंकित सभी तुम्हारे कृत्य,
प्रजातन्त्र के मन्त्र-प्रदाता, राष्ट्र-भावना के अधिराज।

धन्य धन्य हे आर्यसमाज ॥४॥

युग युग तक तुम अमर रहोगे, मानवता का ले गुरु भार,
सर्वकाल में सर्वजनों को दिया करोगे दिव्य दुलार,
भटके हुए भ्रमित यात्रों को उद्बोधन देकर सुकुमार,
भव-सागर से पार करोगे बनकर उन सब की पतवार,
शान्ति-यज्ञ के उद्भट ब्रह्मा, क्रान्ति कुमारी के सिर ताज।

धन्य धन्य हे आर्यसमाज ॥५॥

मलय-पवन-प्रेरित पुष्पों के हे सुरभित विस्तृत उद्यान!
मुक्ता युक्त परमहंसों के कीर्तिमान पावन वरदान,
गूंज रहे तुम कर्ण सुखद बनकर, ज्यों कोकिल के कल गान,
पल-पल क्षण-क्षण झांक रहे हैं, तुम में अगणित स्वर्ण विहान,
सद्‌मन्त्रों से अनुप्राणित तुम, मदमाते अक्षय ऋतुराज।

धन्य धन्य हे आर्यसमाज ॥६॥

सत्यनिष्ठ विज्ञान-विशारद, ज्ञान-ध्यान मय दिव्य हविष्य,
यज्ञ-योग की आंखमिचौनी, ललित ललाम तुम्हारे दृश्य,
निस्सन्देह तुम्हारा ही है, एकमात्र अति भव्य भविष्य,
यह सारा संसार बनेगा, श्रद्धा सहित तुम्हारा शिष्य,
कल तो मात्र तुम्हारा ही है, कहते यही सुधीजन आज।

धन्य धन्य हे आर्यसमाज ॥७॥

अति गरिमामय शृङ्ग तुम्हारे, हे गौरव-गिरि उच्चादर्श,
अचल अकंपित योग निष्ठ-सम, तुम तन्मयता के उत्कर्ष,
सर्वलोक कल्याण क्रियारत, मूर्त रूप सन्तत संघर्ष,
भीतर से मृदु सरस सुकोमल; बाहर से कर्कश दुर्धर्ष,
अर्जन और विसर्जन में रत, प्रिय स्थितप्रज्ञ महिम गिरिराज।

धन्य धन्य हे आर्यसमाज।
धन्य धन्य हे आर्यसमाज ॥८॥

रचयिता—प्रो० सत्यपाल बेदार 'सरस'

स्वामी दयानन्द की राजनीतिक चेतना

—नीरज ठाकुर

आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द सरस्वती की गणना आधुनिक भारत के निर्माताओं में की जाती है। सामाजिक धरातल पर स्वामी दयानन्द ने जन-जागरण करने में प्रमुख भूमिका का निर्वाह किया। उनके बहुमुखी व्यक्तित्व का प्रभाव तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्रों में व्यापक रूप से पड़ा। स्वामी दयानन्द का मूल्यांकन प्राय सामाजिक दृष्टि से ही अधिक हुआ है। स्वामी जी एक समाज सुधारक तो थे ही, साथ ही साथ वे एक महान् क्रान्तिकारी तथा कुशल राजनीतिज्ञ भी थे। उनके राजनीतिक स्वरूप पर प्रकाश आर्यसमाज तथा आर्यसमाजेतर विद्वानो द्वारा प्राय कम ही डाला गया है। प्रस्तुत आलेख में स्वामी दयानन्द के राजनीतिक व्यक्तित्व को उजागर करने का प्रयास किया गया है। अस्तु।

भारतीय पुनर्जागरण का इतिहास इस बात का साक्षी है कि यहाँ के निवासी कुछ विलम्ब से ही होश में आते हैं। १६ वीं शताब्दी से ही यूरोप वाले हमारे समुद्र पर एकाधिकार जमाने लगे थे। इस सकट का विकट दौर १८वी शताब्दी से आरम्भ हुआ। जबकि भारत भूमि को जीतकर भारतीयों को गुलाम बनाने की चेष्टा करने लगे। इस सकटमय दौर से भी पूर्व भारत के अनेक प्रान्तों में पुनरुत्थान की प्रक्रिया प्रारम्भ हो चुकी थी। नवीन पुनर्जागरण की लहर भी महाराष्ट्र से ही उठी। यद्यपि इसका बीज-वपन बगाल मे हो चुका था।

अठारहवीं सदी के मध्य भारत के मुगल साम्राज्य की बागडोर मराठा दरबार में पहुंची। एक प्रकार से समस्त भारत के नेतृत्व की जिम्मेदारी महाराष्ट्र के पेशवा पर थी। उस समय (सन् १७५६ में) बाला जी बाजीराव ने एक बड़ी भारी भूल की। उसने कोंकण तट के एक विद्रोही सरदार को कुचलने के लिए अंग्रेजों से सहायता की माग की। परन्तु क्लाइव के सहायता देने से पूर्व ही विद्रोही सरदार ने आत्मसमर्पण कर दिया। परिणामत अपना अधिकार मानते हुए क्लाइव ने उस दुर्ग पर अंग्रेजी झण्डा फहरा दिया। परन्तु तभी कुछ दूरदर्शी भारतीयों ने समझ लिया कि यदि भारतीयों को यूरोप वालों के बढ़ते हुए प्रभाव को रोकना है तो आधुनिक विज्ञान और तकनीक को सीखना चाहिए। तत्कालीन झांसी के सूबेदार रघुनाथ हरी ने अंग्रेजों के साथ भौतिकी (फिजिक्स) तथा रसायन (कैमिस्ट्री) विज्ञानों का अध्ययन किया। रघुनाथ ने दूर दूर से हस्तलिखित प्रतियां मंगाकर विशाल सग्रह किया। परन्तु सन् १८५८ में अंग्रेज सेनापति सर ह्यू रोज ने इस प्रकार के अनेक सग्रहों को जलाकर खाक कर दिया था। यह ध्यान देने योग्य तथ्य है कि महारानी लक्ष्मीबाई इसी रघुनाथ हरी के सबसे छोटे भाई की पुत्रवधू थीं।

झांसी से नवजागरण की प्रेरणा भारत के अनेक प्रान्तों तक भी पहुंची। सन् १७९६ में रघुनाथ हरी का देहान्त हुआ। तब तक भारत का मुख्य भाग स्वतन्त्र था। परन्तु बगाल पर अंग्रेजों का प्रभुत्व छा चुका था। प्रसिद्ध समाज सुधारक राजा राममोहन राय की आयु २२ वर्ष की हो चुकी

थी। राममोहन राय ने भी इस सत्य को पहचाना कि नवीन ज्ञान को अपनाकर उसे भारतीयों तक पहुंचाना चाहिए। राजा राममोहन राय के जीवन काल (१७७४–१८३३) में ही भारत का मुख्य भाग अंग्रेजों के अधीन हो चुका था। लगभग इसी समय महाराष्ट्र ने भी अंग्रेजी शासन को छाते हुए देखा। भारतीयों के छुटपुट प्रयत्न अंग्रेजों की गुलामी के जुए से बचा नहीं सके। अन्तिम पेशवा का सेनापति बापू गोखले (१८१८) तीसरे अंग्रेज-मराठा युद्ध में अपने प्राणों की आहुति देकर भी देश को न बचा सका।

इस प्रकार समस्त भारत में स्थान-स्थान पर अंग्रेजी राज्य के विरुद्ध जन-जागरण के प्रयास हो रहे थे। तभी सन् १८४७ में नर्मदा नदी के किनारे घूमते-घूमते गुजरात में जन्मे स्वामी दयानन्द का ध्यान भी इस धीमे किन्तु सहज नवजागरण की ओर आकर्षित हुआ। स्वामी जी के मन में देश के लिए कुछ कर गुजरने की अभिलाषा जागृत हुई। सन् १८५५ में स्वामी दयानन्द हरिद्वार के कुम्भ मेले पर जा रहे थे। उत्तर भारत में उस समय जनचेतना स्वतन्त्रता के लिए छटपटा रही थी। स्वामी दयानन्द ने स्पष्ट रूप से यह अनुभव किया कि भारतीयों के दिलों में अंग्रेजों के विरुद्ध तीव्र प्रतिक्रिया धड़क रही है।

स्वामी दयानन्द ने अपने स्वकथित आत्मचरित में लिखा है कि "रास्ते में, बाजारों में, दुकानों में, यात्रियों में, साधु-सन्यासियों में, धनियों-गरीबों में, उस समय मुख्य रूप से यही चर्चा थी कि अब सहना कठिन है।" स्वामी जी ने अपनी आँखों से अंग्रेजों के अत्याचार को देखा था और सोचा कि "मैं देश-जाति-धर्म की रक्षा के लिए सभी देशवासियों को प्रेरणा दूंगा तथा संगठित रूप से मातृभूमि की सेवा और रक्षा करने के लिए अनुरोध करूंगा।"

स्वामी जी ने कुम्भ के मेले में अनेक सम्प्रदायों के मुखियाओं से बातचीत की किन्तु सब तरफ से निराशाजनक उत्तर मिले। इस निराशा में भी स्वामी दयानन्द को आशा की किरण दिखाई दी जब उन पांचों महानुभावों से उनकी भेंट हुई जो आगे चल कर प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम के कर्णधार बने। स्वामी जी हरिद्वार से लगभग एक मील दूर नील पर्वत पर ठहरे थे। ये पाँचों महानुभाव स्वामी दयानन्द जी के पास पहुचे। इन पाँचों के नाम हैं—(१) धुन्धु पन्त (नाना साहब), (२) अजीमुल्ला खाँ, (३) बाला साहब, (४) तांत्या टोपे, (५) बाबू कुंवर सिंह। स्वामी जी से इन पाँचों की जो बातचीत हुई उसका विवरण यहाँ प्रस्तुत है—

सबसे पहले नाना साहब ने प्रश्न किया, "महाराज, विदेशी अंग्रेज स्वदेश और स्वधर्म को धीरे-धीरे नष्ट कर रहे हैं। इसे किस प्रकार रोका जा सकता है?" स्वामी दयानन्द का उत्तर था, "विदेशी अंग्रेजों को भारत पर शासन करने का कोई अधिकार नहीं है। राजनीतिक तथा नैतिक दृष्टि से भी यह अनुचित है। भारत जब मन-प्राण से संगठित होकर इसका प्रतिरोध कर कहेगा कि हम अंग्रेजों को नहीं चाहते हैं। तभी अंग्रेज भारत छोड़ने को बाध्य होंगे।"

अजीमुल्ला खाँ ने प्रश्न किया, "महात्मन्! भारत में व्यापक प्रजा विद्रोह के विषय में आपका क्या मत है?" स्वामी जी ने उत्तर दिया, "जब तक राष्ट्र का आन्दोलन धर्म की भित्ति पर स्थित होकर चलता रहेगा, इसका परिणाम भुगतना होगा। प्लासी युद्ध (१७५७) से एक शत वर्ष बाद यह युद्ध आरम्भ होने वाला है जो एक शत वर्ष तक चलेगा। युद्ध अवश्यम्भावी है परन्तु इसमें अनेक आहुतियां देनी पड़ेंगी।"

तांत्या टोपे ने पूछा, "स्वामी जी! जिस प्रजा विद्रोह का आभास आपकी नजर में आ रहा है उसका क्या कारण है?" स्वामी जी ने कहा, "कृष्णांगों के प्रति श्वेतांगों का जो सदा से सब

जगह व्यवहार रहा है, ऐसा निर्दय तथा निर्लज्ज व्यवहार पशुओं के प्रति भी नहीं देखा जाता। इन सब कारणों की वजह से प्रजा विद्रोह अवश्यंभावी नजर आता है।"

बिहार के बाबू कुंवर सिंह ने शंका प्रकट की— "स्वामी जी महाराज, युद्धों में जय-पराजय अनिश्चित होती है। मैं आप से पूछता हूं कि हमारा यह प्रजा-जागरण युद्ध सफल होगा या असफल? स्वामी जी ने उत्तर दिया, "स्वतन्त्रता युद्ध कभी असफल नहीं होता। भारत धीरे-धीरे सौ वर्षों में परतन्त्र बना है। इसे स्वतन्त्र बनने में और सौ वर्ष बीत जायेंगे। तब भारत पूर्ण स्वतन्त्र बनकर जगत् में पुनः अपने गौरव को प्रकाशित करेगा। इस स्वतन्त्रता संग्राम में अनेक मूल्यवान आहुतियां डाली जायेंगी।

उपर्युक्त कथन स्वामी दयानन्द जी की राजनीतिक सूझ तथा दूरदर्शिता की ओर स्पष्ट रूप से संकेत करते हैं। उनका यह राजनीतिक चिन्तन उन के क्रान्तिकारी व्यक्तित्व तथा स्वस्थ राष्ट्रीय दृष्टिकोण को भी प्रकट करता है।

१८५७ के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम से कुछ पूर्व स्वामी जी कानपुर, बिठूर, झांसी और बनारस के मध्य चक्कर लगा रहे थे। इन स्थानों पर वे किस-किस से मिलकर क्या-क्या योजनाएं बना रहे थे। यह अभी भी खोज का ही विषय है। लगभग इसी समय में महाराष्ट्र तथा कन्याकुमारी की यात्रा पर भी गये।

सन् १८५५ में जब स्वामी दयानन्द हरिद्वार के कुम्भ मेले में गये थे तभी उन्होंने अपने दीक्षा गुरु स्वामी पूर्णानन्द जी से कुछ राजनीति सम्बन्धी प्रश्न किए। तब स्वामी पूर्णानन्द जी ने कहा था, "दर्शन या व्याकरण विषयक प्रश्नों का समाधान तो हम कर सकते हैं परन्तु तुम्हारे इन राजनीतिक प्रश्नों का उत्तर हमारे योग्य शिष्य विरजानन्द दे सकते हैं। भारत की राजनीतिक स्थिति की समस्या और समाधान से विरजानन्द परिचित हैं। अतः उनके पास मथुरा जाओ।" परन्तु दयानन्द पांच वर्षों तक मथुरा न जाकर उपर्युक्त स्थानों पर ही भ्रमण करते रहे। उन्होंने ऐसा क्यों किया ? इसका कुछ आभास उपरिलिखित कुछ स्वतन्त्रता सेनानियों के वार्तालाप से मिल सकता है। स्वामी जी ने अपने महान् ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' में यथा-स्थान जो भाव व्यक्त किए हैं, उन (विचारों) से उनकी राजनीतिक रुचि तथा भावना का पता चल जाता है। सर्वविदित है कि स्वामी दयानन्द के देखते-देखते भारत का प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम असफल हो गया। इससे उन्हें कितनी पीड़ा और वेदना हुई होगी इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

स्वामी दयानन्द के मन में देश को स्वाधीन देखने की प्रबल अभिलाषा थी। इसीलिए उन्होंने चाहे धार्मिक प्रसंग हो या सामाजिक प्रायः राजनीतिक प्रश्नों को अवश्य उभारा है। यहां तक कि उन्होंने ईश्वर के लिए भी राजा, महाराजा, महाराजाधिराज, सम्राट् आदि शब्दों का प्रयोग किया है। जो अपने आप में अभूतपूर्व है।

सन् १८५७ में स्वामी दयानन्द ने पुनः अपनी यात्रा प्रारम्भ की। इस बार उन्होंने बंगाल में राजा राममोहन राय के अनुयायियों से सम्पर्क किया। राजा राममोहन राय ने जो सुधारवादी कदम उठाए थे स्वामी जी उन से प्रभावित थे। महाराष्ट्र में वे प्रसिद्ध समाजसेवी गोपाल हरि देशमुख से मिले। गोपाल हरि देशमुख तब तक महाराष्ट्र में जागृति उत्पन्न कर चुके थे। किन्तु स्वामी दयानन्द की योग्यता, प्रतिभा तथा क्षमता को देख कर गोपाल हरि ने उन्हें अपना गुरु स्वीकार कर लिया।

सन् '५७ के स्वतन्त्रता संग्राम के असफल होने के कारणों को स्वामी दयानन्द ने निकट से समझने की कोशिश की। उन्होंने जान लिया कि भारत में

राजनैतिक क्रान्ति की अपेक्षा सामाजिक व सांस्कृतिक क्रान्ति की अधिक आवश्यकता है। 'आर्यसमाज' की स्थापना करके उन्होंने अपने इस मन्तव्य को स्पष्ट कर दिया। स्वामी जी ने अपने सुयोग्य शिष्य श्यामजी कृष्ण वर्मा को यूरोप से विशेष रूप से जर्मनी से सम्पर्क स्थापित कर सामरिक विज्ञान तथा शिल्प सीखने की दृष्टि से वहाँ भेजा। श्याम जी कृष्ण वर्मा ने लन्दन में 'इण्डिया हाउस' की स्थापना की, जहाँ से अनेक क्रान्तिकारियों ने भारत को स्वतन्त्र कराने की प्रेरणा ली तथा प्रयास किये। वैज्ञानिक गतिविधि को सीखने के सम्बन्ध से जर्मनी के साथ हुआ स्वामी जी का पत्र व्यवहार आज भी सुरक्षित है। इस पत्र व्यवहार से स्पष्ट होता है कि दयानन्द भारत से काफी संख्या में कुछ होनहार छात्रों को विज्ञान तथा शिल्प कला सीखने के लिए जर्मनी में भेजने का प्रबन्ध कर रहे थे किन्तु दुर्भाग्यवश उनकी यह इच्छा उस समय पूरी नहीं हो सकी।

स्वामी दयानन्द ने जिस बात को राष्ट्र के लिए महत्वपूर्ण समझा उसे व्यावहारिक रूप देने का प्रयास भी किया। राजा राममोहन राय तथा रघुनाथ हरि के मन में भी यह विचार आया था कि नया ज्ञान-विज्ञान पुराने ज्ञान के साथ अपनी भाषाओं में प्रस्तुत करना चाहिए। किन्तु यह लोग इस सन्दर्भ में कोई निश्चित रूपरेखा राष्ट्र के समक्ष प्रस्तुत नहीं कर सके। राजा राममोहन राय की मृत्यु के पश्चात् ब्रह्म समाज का झुकाव तो बिल्कुल ईसाइयत की ओर झुक गया। स्वामी जी राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली की कल्पना करते थे, जिसे उनके योग्य शिष्य स्वामी श्रद्धानन्द ने साकार रूप प्रदान किया। स्वामी दयानन्द के हिन्दी के प्रति अथाह प्रेम से भारतेन्दु हरिश्चन्द्र इतने प्रभावित थे कि उन्होंने 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' पत्रिका के संपादक-मण्डल में भी स्वामी जी का नाम समाविष्ट किया हुआ था। प्रत्येक मूल्य पर राष्ट्र को अनवरत प्रगति की ओर देखने को उत्सुक दयानन्द ने स्पष्ट शब्दों में घोषणा की कि कोई कितना ही करे परन्तु स्वदेशी राज्य सर्वोपरि होता है।

भारत को पराधीन देखकर दयानन्द सरस्वती के हृदय में एक टीस सी उठती थी, असीम पीड़ा होती थी। तभी तो उन्होंने बार-बार राजस्थान के राजाओं को राज्य धर्म का मर्म समझाने का प्रयास किया। बनारस के पण्डितों को बार-बार यह चेतावनी दी कि सत्य धर्म को समझो। स्वामी जी के शिष्य श्याम जी कृष्ण वर्मा ने आगे चलकर विनायक दामोदर सावरकर को देश को स्वतन्त्र कराने की प्रेरणा दी। अमर शहीद भगत सिंह के दादा, उनके पिता किशन सिंह तथा चाचा अजीत सिंह ने भी स्वामी दयानन्द से ही प्रेरणा पाकर क्रान्तिकारी कार्य किए। दयानन्द के समकालीन विष्णु शास्त्री चिपलूणकर तथा बंगाल में बंकिमचन्द चटर्जी भी इनकी विचारधारा से सहमत थे। बंकिम ने स्वामी दयानन्द तथा उनके राजनीतिक-सामाजिक कार्यों से प्रेरणा लेकर ही सरकारी नौकरी छोड़कर 'आनन्द मठ' जैसा महान् क्रांतिकारी उपन्यास लिखा, जिसमें 'वन्दे मातरम्' का अमर गीत' भारत माता की आत्मा बन कर प्रकट हुआ। सन् १८५७ के पश्चात् इस देश में स्वतन्त्रता की खुली पुकार किसी भी व्यक्ति ने नहीं लगाई, किन्तु स्वामी जी इसके अपवाद हैं। उन्होंने निर्भीकता से 'स्वराज्य' के प्रति अपने विचार व्यक्त किये। (सन् १८५७ के पश्चात् सन् १९०६ में लोकमान्य तिलक ने 'स्वराज्य मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है" का नारा दिया)। एक समय ऐसा भी आया कि आर्यसमाज को ही इस देश में राष्ट्रीयता का प्रतीक माना जाने लगा था। आर्यसमाजी होना ही 'विद्रोही' तथा राष्ट्रभक्त माना जाता था। सुप्रसिद्ध क्रांतिकारी रामप्रसाद बिस्मिल के आदर्श स्वामी दयानन्द ही थे। एक भाषा, एक संस्कृति तथा एक राष्ट्र की भावना की परिकल्पना सर्वप्रथम स्वामी दयानन्द ने ही १९वीं शताब्दी में प्रस्तुत की थी। यहाँ तक कि उनका खण्डन-मण्डन भी राष्ट्रीय विचारों से ओतप्रोत था। दलितोद्धार,

स्वदेशी का प्रचार, हिन्दी का प्रचार, जाति-पाँति का खण्डन, गो-रक्षा स्त्री शिक्षा, गुरुकुल शिक्षा-प्रणाली, वेद का प्रचार आदि बातों को स्वामी जी ने अपने प्रचार का मुख्य लक्ष्य बनाया। इस में उन्हें पर्याप्त सफलता भी मिली।

यह एक तथ्य है कि १९वीं शताब्दी के ७वें दशक से २०वी शताब्दी तक भारत का कोई भी महत्वपूर्ण सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक तथा साहित्यिक क्षेत्र ऐसा नहीं है जिस पर स्वामी दयानन्द या उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज का प्रभाव न पड़ा हो। महात्मा गांधी, रवीन्द्रनाथ टैगोर, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, लाला लाजपत राय, महादेव गोविन्द रानाडे, बाल गंगाधर तिलक, केशवचन्द्र सेन जैसे अनेक महत्वपूर्ण व्यक्ति स्वामी जी से प्रभावित थे। सच तो यह है कि इस राष्ट्र के संदर्भ में स्वामी दयानन्द का कृतित्व अविस्मरणीय है।

आ गई संकल्प वेला

आज फिर से देख लो,
यह बोध का है पर्व आया।
जागरण का नाद इसने,
अवनि-अम्बर पर गुंजाया।

था इसी शिवरात्रि ने ऋषि-
वर दयानन्द को जगाया।
इस धरा पर वेद का फिर,
दिव्य सा अमृत बहाया।

भूमिमण्डल पर ध्वजा थी,
वेद की फिर लहलहायी।
बज उठी थी भूमि पर फिर,
नव्य जागृति की शहनायी।

वेद के पथ का पथिक,
फिर से बना यह विश्व था।
तुंग शिखरों पर प्रगति के,
फिर चढ़ा धर्मध्वज था।

ऋषि दयानन्द के हृदय में,
जग उठी नव शक्ति थी।
वेद के प्रति, राष्ट्र के प्रति,
जग उठी नव भक्ति थी।

जग उठे शिवरात्रि पर फिर,
शक्ति नूतन जन-मनों में।
विश्व का उपकार करने—
को जगे नव ज्योति कण में।

दिव्य सा संदेश लेकर—
आ गयी संकल्प वेला।
विश्व में आर्यत्व भरने—
तुम बढ़ो! निर्भय! अकेला!!

—राधेश्याम 'आर्य' विद्यावाचस्पति
मुसाफिरखाना, सुलतानपुर (उ.प्र.)

टालस्टाय और ऋषियों का ज्ञान

लेखक : एलक्जेण्डर शिफमेन

अंग्रेजी लेख का हिन्दी रूपांतर

वेदों के अलावा टालस्टाय प्राचीन भारतीय महाकाव्य से भी परिचित थे विशेष कर सुप्रसिद्ध महाभारत और रामायण से।

टालस्टाय ने अपने आपको उपर्युक्त महाकाव्यों से बहुत अच्छे रशियन और पाश्चात्य योरोपीय अनुवादों के द्वारा परिचित किया। यस्नाया पोलयाना वाचनालय में १९८४ में पेरिस में प्रकाशित फ्रेंच भाषा में सम्पादित रामायण आज भी दो पुस्तकाकार में विद्यमान हैं।

महाभारत के प्रत्येक अंशों में से टालस्टाय को भगवद् गीता बहुत पसन्द थी जिसको कि वह अक्सर अपनी डायरी और पत्रों में उद्धृत करते थे। वह अपने चित्त का हुलास और प्रसन्नता उन कवितामय ऊंचाइयों को जहां तक भारतीय पहुंचे थे, न केवल अपने रशियन मित्रों और सम्बन्धियों को व्यक्त करते थे बल्कि अपने भारतीय मित्रों को लिखते थे। भारतीय स्कालर एस० आर० चितले के इस आक्षेप कि उन्होंने महाभारत के मुख्य विचार को स्वीकार नहीं किया है। उत्तर में टालस्टाय ने फरवरी १९०८ में लिखा—

"मुझे यह जान कर अत्यन्त दुःख हुआ कि आप यह विचार रखते हो कि मैं भगवद् गीता के मुख्य सिद्धान्त कि मनुष्य अपनी समस्त आध्यात्मिक शक्तियों को अपने कर्त्तव्य कर्म की पूर्ति में लगाये···को स्वीकार नहीं करता हूं। मैं तो सदैव इन विचारों से पूर्णतया सन्तुष्ट हूं और इन्हें मैं सदैव स्मरण रखने का प्रयत्न करता हूं। मैं उन लोगों को जो उपर्युक्त सिद्धान्त पर शंका उपस्थित करते हुए मेरी राय प्राप्त करना चाहते हैं, समझाने का प्रयत्न करता हूं। और अपने लेखों में भी व्यक्त करने का प्रयत्न करता हूं।

टालस्टाय के पत्र और डायरियों के विशेषकर बाद में सम्पर्क ज्ञान पर एकत्रित की गई विचार सामग्री में महाभारत और रामायण के महत्वपूर्ण वचन विद्यमान हैं। इसके अलावा उनकी विचार सामग्री में भारतीय किसानों में प्रचलित कथाएँ किंवदंतियां और गाथाएँ भी अंकित की गई हैं। लेखक ने उन में से बहुत सी बातें अपनी कृति 'स्वाध्याय के लिए रशियन पुस्तकें' में भी सम्मिलित किया है। १८७० ई० में लेखक ने नवयुवकों के लिए उन बातों को अपने लघु कथाओं के रूप में लिखा है।

टालस्टाय चाहते थे कि प्राचीन भारत का साहित्य रशियन पाठकों के हृदयों तक अपने उच्च कलायुक्त रूप में पहुंचे और इसीलिए उन्होंने अपने राष्ट्रीय आकार उत्साह और सामयिक वातावरण को बनाये रखने का प्रयत्न किया। बहुत से मामलों में वह बहुत अधिक सफल हुए। यह कहने में अतिशयोक्ति नहीं होगी कि वह टालस्टाय ही थे। जिन के माध्यम से रशियन

(शेष पृष्ठ ३३ पर)

अग्निहोत्र की अवश्य कर्तव्यता

—डा० प्रशस्यमित्र शास्त्री

मनुस्मृति के दूसरे अध्याय के ७०-७१वें एवम् चतुर्थ अध्याय के २१वें श्लोकों में पञ्च महायज्ञों का उल्लेख एवम् परिगणन करते हुए इन्हें जहां तक सम्भव हो अवश्य करने का विधान महाराज मनु ने लिखा है।

(१) इन पञ्च महायज्ञों में तथा स्मार्त्त श्रौत समस्त यज्ञों में भी अग्निहोत्र प्रथम कर्म है। यद्यपि यह सबसे छोटा यज्ञ है। किन्तु चूंकि इस कर्म द्वारा मनुष्य प्रतिदिन दोनों समय में बंधा हुआ अर्थात् बन्धन युक्त होता है, साथ ही शुभ भावनाओं से ओत-प्रोत होता है अतः इस लघु यज्ञ को भी सब से महान् माना गया है।

(२) समस्त यज्ञों में अग्निहोत्र ही ऐसा यज्ञ है जो किसी न किसी रूप में चारों आश्रमों से सम्बन्ध रखता है। अन्य यज्ञ प्राय गृहस्थाश्रम से ही संबध रखते हैं। यह भी एक कारण है अग्निहोत्र की प्रमुखता का।

(३) अग्निहोत्र की अवश्य कर्त्तव्यता के संदर्भ में शतपथ ब्राह्मण में एक अत्यन्त मनोरंजक अर्थवाद निम्न प्रकार मिलता है—

प्रजापति ने सभी प्राणियों को मृत्यु के लिए दिया किन्तु ब्रह्मचारी को ही नहीं दिया। तब मृत्यु ने ब्रह्मचारी में भी अपना भाग मांगा। इस पर प्रजापति ने कहा कि जिस रात्रि में ब्रह्मचारी अग्नि में समिधा नहीं देगा, वही तेरा भाग होगा। इसलिए जिस रात्रि में ब्रह्मचारी समिदाधान नहीं करता उसी में मृत्यु उस के आयु के भाग को ग्रहण कर लेता है।

(शतपथ ब्राह्मण ११।३।३।१)

(४) स्वामी दयानन्द ने भी अपने ग्रंथों में जहां-तहां यज्ञकर्मों का निर्देश किया है। वहां सर्वत्र 'अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यन्त' शब्दों का प्रयोग किया है। इस शब्दावलि से महर्षि के मत में अग्निहोत्र यज्ञों में प्रथम प्रमुख है।

गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है—

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्विषैः ।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ।।
गीता ३।१३)

अर्थात् जो यज्ञ कर के शेष को खाते हैं वे सब पापों से छूट जाते हैं और जो बिना अग्निहोत्र किए खाते हैं वे मानो अपने लिए पाप को ही खाते हैं।

इसीलिए ब्राह्मण ग्रंथों में लिखा है—

अग्निहोत्र सायप्रात गृहाणां निष्कृति चिष्टम्।
सुहुत यज्ञक्रतूनां परायण स्वर्गस्य लोकस्य ज्योतिः ।।
(तै० ब्रा० १०।६३।१)

अर्थात् श्रद्धापूर्वक विधि के अनुसार किया हुआ अग्निहोत्र घर का शोधक और स्वर्ग मार्ग में दीपक के समान है।

अग्निहोत्र की व्याख्या

द्रव्यमय यज्ञ तो एक प्रतीक है त्याग और लोकोपकार-सकल्प की भावना का। इसकी व्याख्या-

तिम व्याख्या याज्ञवल्क्य महर्षि और राजा जनक के सवाद के रूप में शतपथ ब्राह्मण ११।३।१।१ में निम्न प्रकार पायी जाती है—

जनक — याज्ञवल्क्य जानते हो अग्निहोत्र को ?
याज्ञवल्क्य — हां सम्राट्।
जनक — अग्निहोत्र क्या है ?
याज्ञवल्क्य — पय (दूध) ही।
जनक — पय (दूध, घी) न हो तो किस से यज्ञ करे ?
याज्ञवल्क्य — व्रीहि (धान) और (यव) जौ से।
जनक — व्रीहि और यव उपलब्ध न हो तो किस से यज्ञ करे।
याज्ञवल्क्य — जो अन्य औषधिया हों उन से।
जनक — अन्य औषधिया भी उपलब्ध न हों तो किस से ?
याज्ञवल्क्य — जल से।
जनक — यदि जल भी उपलब्ध न हो तो किस से होम करे ?
याज्ञवल्क्य — नहीं जब कुछ था पृथ्वी पर तब भी होम होता था (प्रजापति द्वारा) इसलिए सत्य को श्रद्धा में हुत करे।

इस प्रश्नोत्तर से अग्निहोत्र का अवश्य कर्त्तव्यता का बोध होता है। वर्तमान युग में स्वामी दयानन्द एवम् आर्यसमाज को ही इसका महान् श्रेय प्राप्त है कि उसने भारतीय संस्कृति के मूल एवम् मानव कल्याण के प्रतीक इस वैदिक यज्ञ का प्रचार और प्रसार कर के उसे पुनः जन-जन तक पहुचाने का सकल्प लिया है।

(पृष्ठ ३१ का शेष)

टालस्टाय और ऋषियों का ज्ञान

पाठक भारतीयों के प्राचीन ज्ञान और वीरता से परिपूर्ण शौर्यमय महाकाव्यों के प्रति अपना स्नेह रखते हैं।

टालस्टाय का भारत की दार्शनिकता को रशियनों को समझाने में योगदान, कोई कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। टालस्टाय ही थे जिन्होंने शंकराचार्य, महर्षि दयानन्द, रामकृष्ण, स्वामी विवेकानन्द आदि जैसे दार्शनिकों की ओर रशियन स्त्री पुरुषों का ध्यान खींचा। उनका इन दार्शनिको के अनुवाद, बौद्ध मत पर उनका निबंध और भारतीय साहित्य एवम् महाकाल का अनथक प्रचार रशियन और भारतीयों की शताब्दी पुरानी मित्रता को प्रदर्शित करने वाला प्रकाशमान पृष्ठ है।

चेतनता ने जड़ता ढाई

रात के अंधेरे में, कालिमा के घेरे में।
बैठा था जिज्ञासु, प्रभु दर्शन का पिपासु।
सोच रहा था, विचार रहा था।
अंदर को छिपी, ज्योति उभार रहा था।
मूलशंकर व्रतधारी था, पिता का आज्ञाकारी था।
जागते रहना है सोना नहीं, व्रत का फल
खोना नहीं।

निद्रा देवी तो आती थी, नयनों पर छा जाती थी।
बालक का चित्त कोमल था, अंतर ज्योति का
सबल था।
मन में अभिलाषा थी, विश्व कल्याण की आशा थी।
सारा शरीर सावधान था चारों कोनों में
ध्यान था।
भक्तगण तो सोए थे, मीठी नींद में खोए थे।
स्वरों का नाद छाया था, पर मूल नहीं घबराया था।
बाल तपस्वी बैठा था, मन प्रभु महिमा मे बैठा था।
मंदिर के कोने खटपट हुई, सूक्ष्म दृष्टि उधर
झटपट गई।
विस्मय उर में जागा देखा एक चूहा भागा।
मूषक जी मिठाई खाते थे, मूल को समझाते थे।
यह शिव नहीं पाषाण है, जड है इसमें न प्राण है।
बाल हृदय डगमगाया, सत्य ने प्रकाश दिखाया।
निराशा भागी आशा जागी, मूल-मन की
भीति भागी।
प्रभु-मिलन की आशा जागी, प्रश्न दीपिका
जगने लगी।
ओ शिव क्या तुम वही हो, जो असुरो को मारते हो।
इस एकान्त काली रात्रि मे, एक चूहे से हारते हो।
पर नायक नहीं हारेगा, तेरी खोज में सब वारेगा।
तू तो मेरा प्यारा है, जीवन का एक सहारा है।
मन का भ्रम का टूट गया दिल का संशय छूट गया।
छोड़ा छोड़ा सब कुछ छोड़ा, सच्चे शिव से
नाता जोड़ा।
प्रभु प्रेम के पंख लगाए, पंछी उड़ गया देश पराए।
धरती छानी नदिया छानी, पर्वत से टकराया।
ज्ञान विवेक की प्यास ने, जंगल-जंगल भटकाया।

फूल-फूल पर घूमा भौंरा,
मधुमक्खी बन शहद बटोरा।
मथुरा नगरी ने प्यास जगाई,
विरजानन्द की ली शरणाई।
गुरु चरणों को कमल बनाया,
बरसों तक उस पर मंडराया।
श्रद्धा प्रेम का देकर दान,
पाया वैदिक पावन-ज्ञान।
गुरु गरिमा से पा आनन्द,
भारत को मिला दयानन्द।
चारों वेदों का हुआ प्रचार,
दीन दुखियों का हुआ उद्धार।
नारी को साम्राज्य मिला,
भक्ति को ज्ञान का ताज मिला।
चेतनता ने सब जड़ता ढाई,
आत्म-ज्ञान ने ली अंगड़ाई।
सत्य-ज्ञान के पाकर दर्शन,
ईश-भक्ति का पा आकर्षण।
उजड़ा भारत आबाद किया,
जन जन मन का शाद किया।
हर वर्ष ही शिवरात है आती,
हम को यह सन्देश है सुनाती।
सदा जागते रहना सीखो,
पापों से भागते रहना सीखो।
ईश-प्रेम से मुंह नहीं मोड़ो,
श्रद्धा का आंचल मत छोड़ो।
शिवरात्रि सबका कल्याण करेगी,
जन-जन का निर्माण करेगी।
मानवता की गोद भरेगी।
सब कष्टों को दूर करेगी॥

—प्रकाशवती शास्त्री

शिवरात्रि और आर्यसमाज

—डा० महेश विद्यालंकार

पर्व हमारी सांस्कृतिक चेतना के अभिन्न अंग हैं। पर्वों से जीवन में उल्लास, उत्साह, गति, संगति, चेतना एवम् प्रेरणा मिलती है। परस्पर संगठन की भावना जाग्रत होती है। पर्व जीवन्त चेतना के प्रतीक हैं। भारतीय संस्कृति पर्वों से भरी-पूरी है। ऋतुओं, फसलों, महापुरुषों, धर्म-गुरुओं, तीर्थों और विशेष घटनाओं के साथ पर्वों का गहरा सम्बन्ध है। इसलिए भारतीय जन-मानस पर्वों के आगमन की प्रतीक्षा में उत्सुक रहता है।

शिवरात्रि भारत का महान् पर्व है। इसका सम्बन्ध शिव जी की उपासना, व्रत एवं संकल्प से है। सभी धार्मिक-आस्था वाले इस को किसी न किसी रूप में महत्व देते हैं। इसी दिन देवात्मा दयानन्द को आत्मबोध हुआ था। हृदय में सत्य-ज्ञान और धर्म का प्रकाश उदय हुआ था। जीवन-परिवर्तन की ओर मुड गया था। इसलिए आर्य-समाज का शिवरात्रि के साथ विशेष एवम् गहरा सम्बन्ध है। आर्यसमाज के इतिहास में यह दिन सदैव स्मरणीय और वन्दनीय रहेगा। यह तिथि ही आर्यसमाज के निर्माण का शुभारम्भ है। अत आर्यसमाज के लिए यह दिन बोधोत्सव है। ज्ञान-पर्व है। ज्योति और प्रकाश का महोत्सव है। जीवन परिवर्तन का अवसर है। व्रत और संकल्प का प्रभात है। निर्माण और चेतना की मङ्गल वेला है। इसी पुण्य तिथि पर महामानव दयानन्द के हृदय में सत्य का तूफान उठा था। सारी रात श्रद्धा, आस्था तथा निष्ठा से भरा हुआ सच्चे शिव के दर्शन के लिए एकटक लगाये हुए जागता रहा। जब कि सारा मन्दिर निद्रा की गोद में था। विचित्र घटना घटित हुई। चूहा शिव जी के नैवेद्य को निडर होकर खा रहा है। उस ऋषि का विश्वास, आस्था एवम् श्रद्धा खण्डित हो उठी। मन नाना प्रकार के संकल्प-विकल्पों मे डूब गया। अनेक प्रश्न उभरने लगे। शिवरात्रि का व्रत तोड दिया। यह सच्चा शिव नहीं हो सकता है? जो एक चूहे से भी अपनी रक्षा नहीं कर पा रहा है? वह हमारी रक्षा क्या करेगा? स्वामी जी सच्चे शिव के दर्शन और प्राप्ति के लिए निकल पडे। अन्ततः सच्चे शिव के दर्शन और प्राप्ति में सफल हुए। इसी मूल घटना ने मूलशंकर को महर्षि दयानन्द के नाम से इतिहास और संसार मे प्रसिद्ध किया।

आर्यसमाज की रीति नीति, पूजा-पद्धति, मान्यताएँ, दर्शन, चिन्तन आदि अन्य मत-मतान्तरों व विचारधाराओं से अलग हैं। इस के मूल आधार में सत्य, धर्म, तर्क एवम् बुद्धि है। इस मे अन्धविश्वास, पाखण्ड झूठ, मन्त्र तन्त्र, जादू-टोना, एवम् रूढि-वादिता आदि नहीं हैं। यह तो सत्य-सनातन वैदिक परम्परा का ही प्रचारक और प्रसारक रहा है। इसी कारण आर्यसमाज पन्थ मजहब, सम्प्र-दाय आदि नहीं है। यह तो एक जीवन्त क्रांति है। आन्दोलन है। जीवन पद्धति है। सुधारक-चिन्तन है। इस मे किसी देवदूत, पैगम्बर और अवतार का स्थान नही है। इस में एकेश्वरवाद की पूजा है। परमात्मा एक है। वह तीनो कालो मे विद्यमान रहता है। वह जन्म-मरण-सुख-दुःख आदि सांसा-रिक बातों से पृथक् है। उसके गुण-कर्म स्वभाव से असंख्य नाम हैं। वह गुण-कर्म-स्वभाव के कारण सविता, विष्णु, रुद्र, गणेश आदि अनेक नामक है। जैसे व्यक्ति एक होता है वह किसी का पुत्र है, किसी का पिता है, किसी का पति है, तो किसी का भाई है। गुण-कर्म-स्वभाव से उस के कई रूप हैं। ऐसे ही परमात्मा भी अनेक रूपों वाला है। उसका

एक नाम शिव भी है। शिव का अर्थ है जो सदैव मङ्गल और कल्याण करता है। ये दोनों गुण उस परमात्मा में सदैव रहते हैं। अतः वह घट-घट व्यापी परमात्मा ही सच्चा शिव है। उसी की पूजा-उपासना और साधना करनी चाहिए।

आज सत्य और इतिहास ओझल हो गया है। अन्धविश्वास और रूढियों की पूजा होने लगी है। धर्मग्रन्थ, पुराण एवम् इतिहास साक्षी है—कि प्राचीन काल में यहा नागजाति का राज्य रहा है। नागजाति के गणपति शङ्कर जी थे। नागजाति शिव जी का चिह्न अपने मुकुट पर लगाती थी। नागजाति ने राष्ट्र का सर्वोच्च रक्षक शिव जी को मान कर उनके नाम के अनेक मन्दिर स्थापित किये थे। शिव जी का सम्बन्ध नागजाति से था। आज हमने नाग का अर्थ सर्प कर के शिव जी के गले में सर्पों की माला पहना दी। शिव जी का लिंग अर्थात् चिह्न त्रिशूल था। नागजाति ने त्रिशूल-रूपी चिह्न को अपने राज्य की ध्वजा घोषित किया था। आज भी प्रत्येक राष्ट्र की अपनी अलग-अलग ध्वजाएँ हैं। हमने अर्थ का अनर्थ कर के लिंग का अर्थ शिश्न लगाया। जो कि तर्क सगत नहीं है। यह इतिहास के अनुसन्धान का विषय है। आर्यसमाज ऐसे अनेक सत्य तथ्यों तक सब को बताना और पहुंचाना चाहता है।

आर्यसमाज राष्ट्र, समाज, जाति और जीवन में व्याप्त अनेक बुराइयों, सामाजिक कुरोतियों, अन्धविश्वासों एवम् पाखण्डों को हटाना और मिटाना चाहता है। आज मन्दिर अपने वास्तविक स्वरूप से हटते जा रहे हैं। जो स्थान धार्मिक, सात्विक, सर्वहितकारी, शान्त, प्रेम, दया, सेवा आदि के स्थल होने चाहिए। वहा हिंसा लूट-पाट, अधार्मिकता, लडाई-झगडे आदि हो रहे हैं। अन-होनी घटनाएँ हो रही हैं। मानव की प्रवृत्तियां पशुता की ओर जा रही हैं। मानवीय मूल्य बडी तेजी से बदले और तोडे जा रहे हैं। ऐसे विकट समय में आवश्यकता है हिन्दू जाति को अपने गौरवमय इतिहास से सस्कृति से, आदर्श ग्रन्थों से, महापुरुषों से, इतिहास से और महान् परम्पराओं से शिक्षा तथा प्रेरणा लेनी चाहिए।

महर्षि के जीवन में शिवरात्रि की रात सत्य की खोज और जीवन-परिवर्तन का कारण बन कर आई थी। इस से पूर्व कितनी शिवरात्रिया आई होंगी? आज भी आ रही हैं? कहीं कोई परिवर्तन नजर नही आता है। कोई भी मूल सत्य तक नहीं पहुंच सका है। यह उस महाभाग की गहन चेतना और पकड का ही परिणाम है कि उसने शङ्कर के मूल को खोज निकाला। ऋषि महान् शिक्षक और उद्धारक थे। उन्होंने ससार के लोगों को अन्धकार से प्रकाश की ओर, असत्य से सत्य की ओर अधर्म से धर्म को ओर, मृत्यु से अमरता की ओर आने का मार्ग दिखाया। वे भारत को वैदिक-कालीन गौरव, आदर्श और सम्मान में देखने का स्वप्न लेकर आए थे। वे मनु के इस कथन को साकार करना चाहते थे—

> एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मन ।
> स्व स्व चरित्र शिक्षरेन् पृथिव्यां सर्वमानवा ॥

समग्र वसुधा के लोगो! भारतभूमि की शरण में आओ। यहाँ से जीवन और चरित्र के लिए उन्नत शिक्षा ग्रहण करो। इसी में तुम्हारा कल्याण सम्भव है।

उस महायोगी का वेद, धर्म, सस्कृति, शिक्षा, नारी उद्धार, शुद्धि एवम् राष्ट्रीय एकता आदि प्रत्येक क्षेत्र में महत्वपूर्ण एवम् स्मरणीय योगदान रहा है। उन्होंने जीवन मे कभी भी गलत बातो के लिए समझौता नहीं किया था। वे सत्य के पोषक थे। सत्यमय जीवन जिया। सत्य के लिए ही हसते-हसते जहर पी गए। कवि के शब्दो में—

> सदियों तक इतिहास समझ न सकेगा।
> तुम मानव थे या मानवता के महाकाव्य॥

□

ऋषि दयानन्द का शिक्षा दर्शन

लेखक · वेद मार्तण्ड आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति

१ ऋषि दयानन्द ने मानव जीवन के सभी क्षेत्रों से सम्बन्ध रखने वाली सभी समस्याओ पर विचार किया है और वेद तथा वेदानुकूल अन्य शास्त्रों के आधार पर उन समस्याओ के इस युग के लिए सर्वथा नवीन और अनूठे समाधान अपने 'सत्यार्थप्रकाश' आदि ग्रन्थो में उपस्थित किये हैं। विभिन्न समस्याओ के सम्बन्ध मे ऋषि दयानन्द ने जो विचार और समाधान दिए हैं यदि उनके अनुसार मानव का जीवन बीतने लगे तो धरती स्वर्ग-धाम बन सकती है और मनुष्य के व्यक्तिगत और सामाजिक सब प्रकार के कष्ट क्लेश दूर होकर यह उन्नति और सुख समृद्धि की चरम सीमा पर पहुच सकता है।

२. शिक्षा की समस्या मानव की एक बहुत बडी समस्या है। मनुष्य का सब कुछ उसकी इस समस्या पर निर्भर करता है। मनुष्य का व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन किस प्रकार का होगा, यह इस बात पर निर्भर करता है कि हम अपने बच्चो को किस प्रकार की शिक्षा देते हैं। ऋषि दयानन्द ने शिक्षा के सम्बन्ध में भी सर्वथा नये और निराले विचार दिए हैं। शिक्षा के सम्बन्ध मे विचार करते हुए सब से बडा प्रश्न यह उपस्थित होता है कि बालकों की शिक्षा सस्थाएँ किस प्रकार के वातावरण में हों, शिष्य और शिक्षकों के सम्बन्ध किस प्रकार के हों, बालकों को पढाया जाए, बालकों का का रहन-सहन तथा दिनचर्या किस प्रकार की हो और राष्ट्र के प्रत्येक बालक को बिना किसी भेद-भाव के ऊंची से ऊंची शिक्षा मिल सके। इसके लिए क्या व्यवस्था की जाये, ऋषि ने शिक्षा विषयक सभी समस्याओ पर अपने ग्रन्थो में विस्तार से विचार किया है। ऋषि के इस सम्बन्ध मे जो विचार हैं उनका अति सक्षिप्त उल्लेख हम इन पक्तियो में कर रहे हैं।

३ शिक्षा सस्थाएँ नगरों से दूर प्राकृतिक सौन्दर्य से युक्त स्थानो में बनाई जानी चाहिए। जहा स्वाभाविक प्राकृतिक सौन्दर्य न हो वहा सुन्दर लता, वृक्षादि लगाकर शिक्षणालय के स्थान को हरा-भरा और शोभाशाली बना लेना चाहिए। जिसमें बालको का शारीरिक स्वास्थ्य भी ठीक रहे और मानसिक भी। बच्चों को नगर का धुआं, धूल धमक्कड और दुर्गन्ध से भरी हवा में सांस लेना पडे और वे नगर निवासी गृहस्थों के शान-शौकत तथा शृङ्गार से भरे जीवन से भी पृथक् रहें और इस प्रकार गृहस्थों के विलासमय जीवन को देखकर कच्ची उमर मे ही उन के मन में विलास प्रियता के निकम्मे विचार न उठने लगें। बालक शिक्षा समाप्ति से पूर्व नगरों में अपने घरों मे नही जा सकगे। ये चौबीस घण्टे अपने गुरुओं के साथ शिक्षा सस्थाओं के आश्रमों में ही रह सकेंगे।

४ गुरु और शिष्य एकान्त में रहेंगे, शिष्यों के चौबीस घण्टों के जीवन पर गुरुओं की आंख रहेगी। गुरु शिष्यों के साथ रह कर उनके जीवन का निर्माण करेंगे। गुरु लोग शिष्यों को उनके हाल पर छोड कर नगरों में रहने के लिए नहीं जा सकेंगे। गुरुओ का अपने शिष्यों के साथ इतना

घनिष्ठ सम्बन्ध होगा जितना मां का अपने गर्भ में पड़े बच्चे के साथ होता है। मां को अपने गर्भ में स्थित बच्चे के प्रति जितना प्यार और हित-कामना होती है उतना ही प्यार और हित-कामना गुरु में शिष्य के प्रति होनी चाहिए। मां को अपने गर्भ में स्थित बच्चे के प्रति जितनी एकात्मकता होती है उतनी ही एकात्मकता गुरु की शिष्य के प्रति होनी चाहिए। जिस प्रकार मां के गर्भ में स्थित बच्चे पर मां के अतिरिक्त बाहर का किसी प्रकार का प्रभाव नहीं पड़ सकता, उसी प्रकार गुरुओं के अतिरिक्त शिष्यों पर बाहर के लोगों का कोई प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए। गुरु लोग बाहर के जिन लोगों को व्याख्यान आदि के लिए बुलाना आवश्यक समझें उन्हीं का प्रभाव उन पर पड़ना चाहिए। जिस प्रकार मां को अपने गर्भ में बच्चे को सब प्रकार से श्रेष्ठ और बढ़िया बनाने की ही चिन्ता रहती है, उसी प्रकार गुरुजनों को अपने छात्रों को सब प्रकार से श्रेष्ठ और उत्तम बनाने की चिन्ता रहती है।

जब गुरुओं की शिष्यों के साथ इतनी गहरी घनिष्ठता होगी और वे शिष्यों की मां की तरह हित कामना करेंगे तो शिष्य सदैव उनकी आज्ञाओं का पालन करेंगे और छात्रों मे आज की सी अनुशासन हीनता की समस्या उत्पन्न नहीं होगी।

५ बालकों को क्यों पढ़ाना चाहिए, इस सबंध में भी ऋषि ने बड़े विस्तार से विचार किया है। 'सत्यार्थप्रकाश', संस्कारविधि और ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका में किस प्रकार के ग्रन्थ पढ़ने चाहिए और किस प्रकार के नहीं। ऋषि की उस पाठविधि का ध्यान से विश्लेषण करने पर एक बात तो यह स्पष्ट रूप से सामने आती है कि ऋषि की सम्मति में पाठविधि में भौतिक विद्या विज्ञान (फिजिकल साइंस) और आध्यात्मिक (सुपरीदिकल साइंस) दोनों का ही समावेश होना चाहिए। ऋषि ने जिन ग्रन्थों का उल्लेख किया है उन में रसायन, भौतिक, गणित, ज्योतिष, अर्थशास्त्र, राजनीति, युद्ध विद्या, शिल्पकला, आयुर्वेदादि भौतिक विद्या विज्ञानों का भी वर्णन है। उस पाठविधि में संगीत के अध्ययन की व्यवस्था है। संस्कृत भाषा और उसके उच्च अध्ययन की व्यवस्था तो है ही, ऋषि दयानन्द ने यह भी लिखा है कि प्रारम्भ से ही बल्कि पाठशाला में जाने से पहले ही घर मे ही बालकों को विदेशी भाषाओं का सिखाना आरम्भ कर देना चाहिए। इससे यह संकेत मिलता है कि विदेशी भाषा में जो ज्ञान विज्ञान है उस के पठन-पाठन के पक्षपाती ऋषि दयानन्द भी थे। ऋषि दयानन्द की पाठविधियों में तर्क और दर्शन शास्त्र को पढ़ाने की व्यवस्था है। चारों वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ और उपनिषदों के पठन-पाठन की व्यवस्था भी वहां है। वेदों में भौतिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार की विद्याओं की व्यवस्था है। दर्शनों में, उपनिषदों में आध्यात्मिक विद्याओं का वर्णन है। इस प्रकार ऋषि की सम्मति में भौतिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार की विद्याएं साथ-साथ पढ़ाई जानी चाहिए। तभी मानव का सन्तुलित विकास हो सकेगा। किसी एक प्रकार की ही विद्याओं को पढ़ने पढ़ाने से व्यक्ति एकांगी हो जाएगा। जिस के कारण व्यक्ति और समाज दोनों की हानि होगी। आज के संसार में जो कलह लड़ाई झगड़े युद्ध और अशान्ति दिखाई देती है वह शिक्षा में आध्यात्मिक विद्याओं को स्थान न देने का ही परिणाम है। ऋषि दयानन्द ने जो विस्तृत पाठविधि दी है वह सब विद्याओं के ज्ञाता, उच्च-कोटि के महा विद्वान् व्यक्ति के तैयार करने की दृष्टि से दी है। 'सत्यार्थप्रकाश' के तृतीय समुल्लास के अन्त में उन्होंने एक न्यूनतम पाठविधि की ओर भी संकेत किया है। उन्होंने लिखा है कि जैसे पुरुषों को व्याकरण, (निरुक्त) धर्म और अपने व्यवहार (आजीविकोपार्जन) की विद्या न्यून से न्यून अवश्य सीखनी चाहिए। (वैसे स्त्रियों को भी व्याकरण, धर्म, वैद्यक, गणित, शिल्प विद्याएं तो अवश्य सीखनी चाहिए। सुविधानुसार

पाठविधि में अधिक से अधिक विषयों को पढ़ाने की व्यवस्था की जानी चाहिए।

६ ऋषि दयानन्द छात्रों में वासनाओं को भड़काने वाले काव्य, नाटक, उपन्यास आदि पढाने के घोर विरोधी थे। वे छात्रों के जीवन में ब्रह्मचर्य; संयम और पवित्रता पर अधिक बल देते हैं। ग्रीस के प्राचीन महान् दार्शनिक प्लेटो ने भी इस प्रकार के कामोत्तेजक साहित्य को पढ़ाने का घोर विरोध किया है। इसी प्रकार आधुनिक विद्वान् एल्डस हक्सले ने भी इस प्रकार के साहित्य को पढ़ाने का घोर विरोध किया है। इसी प्रकार ऋषि दयानन्द ने श्राद्ध, मूर्तिपूजा, अवतारवाद, भूत और प्रेतादि और अन्धविश्वास की शिक्षा देने वाले साहित्य का भी तीव्र विरोध किया है।

(७) बालकों को अन्य विषयों की शिक्षा के साथ-साथ योग की शिक्षा भी प्रारम्भ से ही देनी चाहिए। योगदर्शन आदि योग विषयक साहित्य भी पढाया जाना चाहिए और योग के यम, नियम, आसन, प्राणायाम आदि इन आठ अंगों का क्रियात्मक अभ्यास भी कराना चाहिए। आसनों और प्राणायाम के अभ्यास से उन में मानसिक और आत्म पवित्रता उत्पन्न होगी जिस के कारण वे सब प्रकार की बुराइयों और दोषों से बचे रहेंगे, तथा योग के निरन्तर अभ्यास से वे परमात्मा के दर्शन के अधिकारी भी एक दिन हो जाएंगे।

८. योग के यम और नियमों में शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणिधान ये पांच नियम कहलाते हैं। इन नियमो के पालन से छात्र-शरीर और वस्त्र की दृष्टि से स्वच्छ रहना सीखेंगे।

२ सफलता और असफलता में एक रस रहना सीखेंगे। (३) साज सिंगार तथा बनाव-ठनाव से दूर रह कर सादगी और कष्ट सहने को तपस्या का जीवन बिताना सीखेंगे (४) उन में उत्तम और ज्ञानवर्द्धक ग्रन्थों के अध्ययन की क्षमता जागृत होगी (५) वे ईश्वर के उपासक बनेंगे। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह ये पांच यम कहलाते हैं। उन पांच यमों के पालन से छात्र १—अपने स्वार्थ के लिए किसी प्राणी को किसी प्रकार का भी कष्ट न देंगे प्रत्युत दूसरे के कष्टों को दूर करने की भावना को अपने अन्दर जागृत करेंगे। २—सत्य का पालन करना और असत्य से दूर रहना सीखेंगे। ३—किसी भी प्रकार की चोरी की वृत्ति से पृथक् रहना सीखेंगे। ४—मन और इन्द्रियों को वश में रख कर अपनी जननेन्द्रियों को वश में रखने वाले सयमी बनेंगे। ५—वे लोभ और लालच से परे रहने वाले और आवश्यकता से अधिक धन सम्पत्ति अपने पास न रखने की वृत्ति वाले बनेंगे। ये दसों बातें जिन छात्रों के जीवन में ढल जाएँगी उन के जीवन में आगे चल कर किसी प्रकार के पाप या बुरे कार्य नहीं होंगे और आज के समाज में जो घोर चरित्रभ्रष्टता पाई जाती है वह चरित्रभ्रष्टता इस प्रकार की शिक्षा दीक्षा में पले युवको से बने समाज में कभी दिखाई नही देगी। ऋषि दयानन्द ने अपनी शिक्षा-पद्धति में इन यम-नियमों का पालन एक आवश्यक अंग रखा है।

●



गुरूकुल
कांगड़ी फार्मेसी की
आयुर्वेदिक औषधियां सेवन कर स्वास्थ्य लाभ करें
गुरूकुल
च्यवनप्राश
पूरे परिवार के लिए शक्तिवर्धक
एव स्फर्तिदायक रसायन।
खासी ठड व शारीरिक एव
फेफडों की दर्बलता मे
उपयोगी आयुर्वेदिक
औषधीय टानिक
च्यवनप्राश
गुरूकुल
पायोकिल
दांतों व मसूडों के समस्त रोगों
में विशेषत पायोरिया
के लिए उपयोगी
आयुर्वेदिक औषधि
गुरूकुल
चाय
जकाम व इन्फलुएंजा
आदि में जडी बूटियो
से बनी लाभकारी
आयुर्वेदिक औषधि
चाय
गुरूकुल कांगड़ी फार्मेसी हरिद्वार (उ० प्र०)

जागते रहो

लेखक : यशपाल आर्यबन्धु

एक मूषक ने जगाया उग्र ऊहापोह—
जन्म के संग क्रांति लाया सत्य का विद्रोह।

एक सौ चालीस वर्ष पूर्व शिवरात्रि पर घटित चूहे की घटना इतनी प्रसिद्ध है कि उसे दुहराने की आवश्यकता नहीं। वस्तुत उस शिवरात्रि का मूषक वह केन्द्र बिन्दु बना जहां से समस्त दिशाओं ने एक तीव्रतर सुधारात्मक मोड लिया। कारण कि मूलशंकर का उस रात्रि का जागरण एक अनोखा जागरण था जिसके सम्बन्ध में कविवर सौमित्र ने ठीक ही कहा है—

"तुम जगे ऐसे कि फिर सोये नहीं पल भर।
प्रात लाया रात भर का जागरण ऋषिवर।"

महर्षि केवल शिवरात्रि की उस रात्रि को जगा हो ऐसी बात नहीं, सत्य तो यह है कि उसके बाद वह सो ही नहीं पाये। जैसे—

"इक तकमीले ख्वाब की खातिर
उम्र भर जागता रहा कोई।"

ऋषि स्वयं ही नहीं जगे संसार को भी जगा गये।

शिवरात्रि की यह घटना ही आगे आने वाले महान् आन्दोलन का आधार बनी। बडे कार्यों के सम्पादन के लिए बडी तैयारियों की आवश्यकता पडती है। महर्षि ने भी इस बडे क्रांतिकारी सुधार आन्दोलन के लिए भारी तैयारी की थी। अपनी आयु के १४ वर्ष से लेकर ५१ वर्ष तक वह इसी तैयारी में लगे रहे, तब जाकर कहीं इस आन्दोलन की नींव रखी जो आज आर्यसमाज के नाम से सुविख्यात है। पं० गङ्गाप्रसाद उपाध्याय ने ठीक ही लिखा है कि शिवरात्रि की "इस छोटी-सी बात पर सुधार का जो एक विशाल भवन खडा किया गया, उसी का नाम आर्यसमाज है।" (भारतीय पतन और उत्थान की कहानी, पृष्ठ ६१)।

महर्षि द्वारा प्रवर्तित इस आन्दोलन का इतिहास सामाजिक, सांस्कृतिक, बौद्धिक तथा राजनीतिक क्रांति के अभियान का एक समुज्ज्वल इतिहास है। किन्तु दुर्भाग्य! जिस समाज को राष्ट्र का पुरोहित बन कर जगना और जगाना था, वह स्वयं ही आलस्य, प्रमाद एवम् अकर्मण्यता की गहरी निद्रा में सो गया और सर्वत्र एक मुर्दनी सी छा गयी।

यह सब देख कविवर लाखनसिंह भदौरिया 'सौमित्र' की लेखनी तडप उठती है कि—

"इस सवाल ने फिर सिर उठाया है;
समाज श्मशान है कि बगीचा है।
जिसके सपनों में आप सोये थे,
जिसे अपने लहू से सींचा है॥
कैसा पहरा है चौकीदारों का,
बाग बरबाद किए जा रहे हैं लोग।
समय दे रहा चुनौतियों पे चुनौतियां,
देखता हूं पिये जा रहे हैं लोग॥"

आज सर्वत्र यही चर्चा है—

"बाग की रंगीनियों को क्या हुआ,
बागबानों से यह पूछना चाहिए।"

किन्तु हमारी यह स्थिति है कि—

"दामन जला कर हमने घर भी जला दिया।
दुनिया को पता तो चला कि रोशनी हुई।"

पर क्या ?

"इसलिए तकदीर ने चुनवाए थे तिनके।
बन जाए नशेमन तो कोई आग लगा दे।"

आर्यों ! ऋषि की भावनाएं आज तुम्हें कोस-कोस कर कह रही हैं—

"उजाड़े हैं गुलिस्तां तुम ने जिन हाथों से दीवानो।
अगर तुम चाहते तो इन से वीराने सवर जाते॥"

दोषी कौन ?

आखिर इस सब के लिए दोषी कौन है ? सामान्यतः इस के लिए आज सर्वत्र नेतृत्व की आलोचना की जा रही है। हम नेतृत्व को निर्दोष नहीं ठहराते किन्तु हम स्वय को भी कम दोषी नहीं पाते। हमारी यह प्रवृत्ति सी बन गई है कि हम प्रत्येक बात के लिए नेतृत्व को दोषी ठहरा कर अथवा भर पेट कोस कर अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ बैठते हैं। हम उस युग को क्यों भूल जाते हैं जब महर्षि के देहावसान के पश्चात् अभी सही नेतृत्व उभर भी न पाया था कि सर्वसाधारण में वह जोश था कि देखते ही बनता था। तब आर्यसमाज का प्रत्येक सदस्य एक उपदेशक था, एक जिम्मेदार नेता था, एक आदर्श सेवक था और था एक सजग प्रहरी। तब दूसरे के मुख ताकने की प्रवृत्त नही थी। एक अपूर्व उत्साह था प्रत्येक में। क्या वह युग पुन उपस्थित नहीं किया जा सकता। अनुयायी नेतृत्व को बल प्रदान करते हैं और नेतृत्व अनुयायियो को दिशा निर्देश। दोनो एक दूसरे के पूरक हैं। सफल नेतृत्व सगठन को चमका देता है जब कि कमजोर नेतृत्व आन्तरिक कलह का कारण बनता है। वैसे ही जागरूक अनुयायी नेतृत्व को सदा सचेत रखते हैं जबकि निष्क्रिय अनुयायी नेतृत्व को प्रमादी बनाने में हेतु बनते हैं। हमें यह नहीं भूल जाना चाहिए कि नेता भी आखिर हम में से ही तो बनते हैं, वे कहीं बाहर से नहीं आते। अतः नेतृत्व की आलोचना व्यर्थ है। स्वयं जगना होगा, उठना होगा और निर्माण करना होगा नये समाज का। उठो शिवरात्रि जगाने आई है।

"नशेमन पर नशेमन इस तरह तामीर करता जा,
कि बिजली गिरते-गिरते आप ही बेजार हो जाये।"

और इसके लिए नेतृत्व का मुह ताकने से काम नहीं चलेगा।

"बस मीरे कारवां पर न छोड़ो कारवां अपना।
तुम भी खुद ही ले के इन्हें जवां जागते रहो।"

यही आज की शिवरात्रि का संदेश है और शिवरात्रि यही कहने आई है।

आज को शिव-रात फिर सन्देश लायी है,
और ऐसी रात को शत-शत बधाई है।
हर मनुज बोले, यही वर मांगता हू मैं,
आ गई शिव-रात तो लो जागता हू मैं,
शक्ति दो प्रभुवर, कलुष सब त्यागता हूं मैं,
हर शिवालय से कहे तम, भागता हूं मैं॥
कामना जागे, किसी में तो यही जागे,
मांगना चाहे मनुज तो बस यही मांगे।
कोख दो, तो मूलशकर मातु जैसी दो,
जन्म दो पुण्य भू गुजरात जैसी दो।
प्रात दो, ऋषि-बोध के उस प्रात जैसी दो,
रात दो तो फिर उसी शिवरात जैसी दो॥

ज्योति के फूल

देव दयानन्द को नमन

—श्रीमती सावित्री देवी शर्मा, एम० ए० वेदाचार्य

टंकारेति प्रवासमृद्धि-बहुले मोर्वीप्रदेशस्थिते,
ग्रामे शास्त्रपुराणपाठ-कुशले. सुब्राह्मणे सेविते ।
श्रीकृष्णाख्य-द्विजगृह स्वजनुषा सो वै समालोकयत्,
मानार्हाय मनस्विने मुनिदयानन्दाय तस्मै नम. ॥

युग-प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्व, फलक पर छायी हुई विविध विकृतियों के सुधारक के रूप में इस शस्य-श्यामला भारतभूमि पर अवतीर्ण हुए थे। अलकनंदा के तट पर खड़े होकर उस ऋषि ने अपने ज्योतिर्मय नयनों से जिधर देखा, उधर अन्धकारमय तमिस्रा हो दीखी। आध्यात्मिक, शास्त्रीय, सामाजिक, राजनैतिक, पारिवारिक एवं धार्मिक, सभी दुरन्त समस्याएं किसी मन्त्रार्थद्रष्टा दार्शनिक द्वारा समाधान माग रही थीं। महर्षि ने वस्तुतः सत्यार्थ-प्रकाशक वेद-चतुष्टय को ही अपना परम आधार मान कर कुशल वैद्य के समान सभी रोगों का निदान एवम् तदर्थ सफल चिकित्सा प्रारम्भ की, जिसका विवरण क्रमश निम्नांकित है

१. आध्यात्मिक

आध्यात्मिक क्षेत्र में विभिन्न वादों में दार्शनिक उलझे हुए थे: अद्वैतवाद, द्वैतवाद, द्वैताद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद, जसे विषयों के साम्प्रदायिक खण्डन-मण्डन में ही अपनी शक्ति का दुरुपयोग कर रहे थे। ऋषिवर ने ईश्वर जीव-प्रकृति के रूप मे तीन अनादि सत्ताओं को तर्कसगत समीक्षा प्रस्तुत कर 'त्रैतवाद' का उद्घोष किया है। सर्वव्यापक-सर्वान्तर्यामी सच्चिदानन्दस्वरूप परमात्मा जगत्पति है। अनन्त जीवों के कल्याणार्थ उसने इस दृश्यमान जगत् की रचना की है। संसार की अनेक भाषाओं के कारण उस प्रभु के नाम भिन्न-भिन्न हो सकते हैं, किन्तु सकल विश्व की नियामक शक्ति एक परमेश्वर ही है। हम सभी आत्माएं उसकी अमृत सन्तानें हैं। प्रकृति हमारी जगदम्बा माता तथा परमात्मा सब का पिता है। अतः साम्प्रदायिक सघर्षों का कोई औचित्य प्रतीत नहीं होता है।

२ शास्त्रीय

१ ऋषि दयानन्द के अवतरण से पूर्व भारतीय दर्शनों में अन्तर्निहित एकरूपता को न समझकर दार्शनिक इन्हें अलग-अलग साम्प्रदायिक ग्रन्थ समझते थे। ऋषि ने इन षड्दर्शनों को वेदार्थ-ज्ञान का आधार बताकर विद्वानों के समक्ष इनका समन्वित रूप प्रस्तुत किया। इस से अवरुद्ध मार्ग खुला। पौरस्त्य एवम् पाश्चात्य विद्वानों ने इस दृष्टि से दर्शनों से, स्वाध्याय से वैदिक ज्ञान के गाम्भीर्य को समझने की चेष्टा की।

२ सूत्र-ग्रन्थों के आधार पर चलने वाली पुरातन वेदभाष्य-प्रणाली को नई दिशा देते हुए महर्षि ने मन्त्रार्थ बोध के लिए यास्क प्रणीत नैरुक्त प्रक्रिया का अवलम्बन किया, जिस से वेद के विलक्षण प्रतीकों द्वारा दिग्भ्रान्त विचारकों की अन्तर्दृष्टि खुली। विदेशियों द्वारा गडरियों के गीत कहे जाने वाले वेद आज सार्वभौम विश्व संस्कृति के प्राण-स्वरूप प्रतीत हो रहे हैं। ऋषि दयानन्द की उद्बोधन शैली का यह लोकोत्तर प्रभाव था। साथ ही ब्रह्मा से लेकर जैमिनी-पर्यन्त आर्ष-परम्परा से परिपुष्ट भाष्य का आदर्श भी ऋग्वेद-यजुर्वेद के भाष्यों में उन्होंने प्रकट किया।

३. सामाजिक

अनेक सामाजिक कुरीतियों के प्रचलन से देश की अन्तःस्थिति बिगड़ चुकी थी। वर्ग-संघर्ष विकराल रूप से मनावता को जर्जर बना रहा था। वर्णाश्रम-व्यवस्था के मौलिक चिन्तन से इन सभी "बाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, अस्पृश्यता, नारी-जाति में अशिक्षा" आदि समस्याओं का तात्त्विक समाधान उन्होंने प्रकाशित किया। आज की शिक्षिता नारी में उन्हें गार्गी, मैत्रेयी, लोपामुद्रा, भारती, विद्योत्तमा, सीता, सावित्री जैसी विदुषी देवियों के दर्शन हुए। उनकी दृष्टि में सम्मानित मातृशक्ति ही विश्व में स्वर्गीय साम्राज्य की संस्थापिका हो सकती है। परिणामतः आज भारत के कोने-कोने में कन्या गुरुकुलों की स्थापना हो चुकी है। असंख्य देवियां वेद-शास्त्रों में पारंगता होकर सारस्वत वैभव की अधिकारिणी बनी हुई हैं। यह सब है ऋषि-कृपा का प्रसाद।

४ राजनैतिक

विदेशी शासकों की पराधीनता से मुक्त स्वतंत्र भारत की कल्पना को साकार करने के लिए महर्षि ने सर्वप्रथम "स्वराज्य" शब्द का प्रयोग किया था। प्रजा पर पुत्रवत् कृपा-दृष्टि वाला, निष्पक्ष, न्यायप्रिय होने पर भी विदेशी राजा स्वदेश के लिए कभी हितकारी नहीं हो सकता। अपने देश में अपना ही राजा हो! 'सत्यार्थ-प्रकाश' के छठे समुल्लास में वेदानुमोदित राजनैतिक व्यवस्था एवम् वैदिक विचारधारा सम्मत संविधान पर प्रकाश डाला गया है।

५. आर्थिक

अपने देश की आर्थिक विपन्नता को देख कर महर्षि का वीतराग हृदय भी द्रवित हो उठा। देश को पूर्ववत् समृद्धिशाली बनाने के लिए "गो-करुणानिधि" नामक पुस्तक लिख कर संसार के अर्थशास्त्रियों को उन्होंने चुनौती दी। गो-रक्षा द्वारा कृषि-उत्पादन में अभिवृद्धि होने से ही दरिद्रता का समूल नाश संभव है। इस प्रयोजन के लिए अनेक स्थानों पर गो-कृष्यादिरक्षिणी सभाओं का भी निर्माण किया।

६. धार्मिक

इस धराधाम पर महर्षि के शुभागमन से पूर्व 'धर्म' शब्द मत, सम्प्रदाय या मजहब का पर्यायवाची समझा जाता था। अतः हमारा धर्म, धर्मग्रन्थ, धर्मस्थान, धार्मिक महापुरुष सभी बटे हुए थे। धर्म के नाम से वैदिक धर्म का भी डंका बजाया गया। इस सदाचारमय धर्म-चक्र के प्रवर्तना में विश्व के श्रेष्ठ पुरुषों का, एकता के सूत्र में आबद्ध होने के लिए उन्होंने सादर आह्वान किया।

७ पारिवारिक

पारिवारिक संगठन को विश्व का सर्वश्रेष्ठ प्राथमिक विद्यालय मान कर गुरुवर दयानन्द ने आश्रमों में श्रेष्ठ गृहस्थाश्रम के लिए सुनियोजित आचारसंहिता बनाई। फलस्वरूप इन्हीं सभ्य परिवारों में प्रशिक्षित कितने ही देशभक्तों—लाला लाजपतराय, महात्मा हंसराज स्वामी श्रद्धानन्द, सरदार भगत सिंह, रामप्रसाद बिस्मिल आदि ने देश-हित में अपना तन-मन-धन समर्पित कर दिया।

अत हम कह सकते हैं कि सत्य-सनातन वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द ने आजीवन देश की विकट परिस्थितियों में संघर्षरत रह कर सार्वजनिक कल्याण-मार्ग का निर्देश किया। आधुनिक स्वतन्त्र भारत के कर्णधार यदि ध्यानपूर्वक उनके आदर्श सिद्धान्तों का आचरण करें तो स्वदेश में व्याप्त अराजकता एव भ्रष्टाचार का निवारण अवश्यम्भावी है। योगिराज अरविन्द ने कहा था—"यदि ससार के महापुरुषों को पर्वत की चोटियां माना जाये तो देव दयानन्द उन सभी में सर्वोच्च शिखर माने जायेंगे।

पाषाणैरस्याहतोपि सुमना. प्रादात् शुभ सौरभम्,
माक्षाम्मातृवसुन्धरेव मनस सद्भावमावेदयत्।
कष्टैर्येन परोपकारव्रतिना सञ्जीवन आपितम्,
श्रद्धेयाय महर्षये गुरुदयानन्दाय तस्मै नमः॥

ESTD. : 1962 (Approved by Govt of India) Phones 7111073
B O 7125933

Manohar Chit Fund & Financiers (P) Ltd.

2, Vijay Nagar Market, Delhi-110009.

Chit Value	Monthly subscription	Chit Period	Chit Value	Monthly subscription	Chit Period
Rs. 90,000	3000/-	30 Months	Rs 30,000	1000/-	30 Months

Special Gifts

One Priya Hot Pack with 4 Long Lasting Stainless Steel contents with Plates to prevent spilling; used as an Ice Pail also.

Special Gifts

One Priya Casserole Hot case (CHAPATI BOX)

Rs 25,000 500/- 50 Months

Special Gifts

One Priya Casserole Hot case (CHAPATI BOX)

ESTD 1973 (Approved by Govt of India) Phone 71110"3

RAJU TRADERS (CHIT FUND) Regd.

2, Vijay Nagar Market, Delhi-110009

Chit Value	Monthly Sub	Chit Period	Chit Value	Monthly Sub	Chit Period
Rs 10 000	Rs 200/-	50 Nonths	Rs 15,000	Rs 300/-	50 Months

Special Gifts

6 STEEL PLATES SMALL

Special Gifts

6 STEEL PLATES SMALL

Rs 20,000 Rs. 400/- 50 Months

Special Gifts

ONE HANDY THERMAS



अपने बालों को स्वस्थ, प्राकृतिक काला व चमकदार बनाइये और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी सुगंध से महकाइये।
एम डी एच शिकाकाई पाउडर बालों की सीकरी दूर करता है तथा उन्हे प्राकृतिक काला, सुगन्धित व स्वस्थ बनाता है।
शिकाकाई रीठा, आवला, हरड, बहेडा, चन्दन व अन्य सुगन्धित जडी बूटियों से बनाया गया एम डी एच शिकाकाई पाउडर एक अत्यन्त लाभकारी प्राकृतिक देन है। इसमे कोई रासायनिक पदार्थ नहीं है।
एम डी एच शिकाकाई पाउडर का आज से ही नियमित प्रयोग कीजिये।
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर
निर्माता :
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9/44 इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर
नई दिल्ली 110015
फोन 539609 537987, 537341

विज्ञापन दरें

क्रमांक		सादा	रगीन
१	अन्तिम पृष्ठ पूरा	८००/-	१,०००/- रु०
२	अन्तिम पृष्ठ आधा	४००/-	५००/- रु०
३	अन्तिम चौथाई पृष्ठ	२००/-	२५०/- रु०
४	अन्दर का पूरा पृष्ठ	६००/-	८००/- रु०
५	अन्दर का आधा पृष्ठ	३००/-	४००/- रु०
६	अन्दर का चौथाई पृष्ठ	१५०/-	२००/- रु०

सूर्यदेव
(प्रधान सम्पादक)
आर्यसन्देश साप्ताहिक
१५ हनुमान् रोड,
नई दिल्ली-११०००१

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष ११ : अंक १६ | रविवार २८ फरवरी १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | फाल्गुन २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३

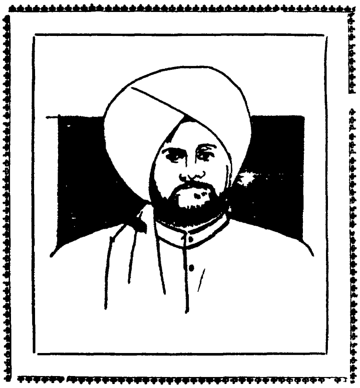
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में १० डालर ३० पौंड

जन्म दिवस पर विशेष

अमर बलिदानी पं० लेखराम

धर्म पर बलिदान होने वाले वीर योद्धा पं० लेखराम का स्मरण आते ही एक दिव्य आकृति मानसपटल पर उभरती है। एक ऐसे मांझी की याद आती है जो उफनती नदी के प्रबल वेग की विपरीत धारा में अपनी नाव खेता चलता है और कभी थकता नहीं, निराश भी नहीं होता। समाज ऐसे लोगों को उन्मत्त कहा करता है। धर्म की धुन के धनी पं० लेखराम का जीवन महर्षि दयानन्द और वैदिक धर्म के प्रति पूर्ण समर्पित था। वे अपनी धर्म प्रचार यात्रा में कभी थके नहीं, रुके नहीं। विदेशी षड्यन्त्रों के जाल में भारतीय संस्कृति विगत शताब्दियों से जकड़ी चली आ रही है। इस देश के भोले-भाले नागरिकों का छल-बल से धर्म परिवर्तन किया जाता रहा है। १९वीं सदी में हिन्दू धर्म उस कच्चे आटे के दीपक की तरह हो गया था जिसे घर में रखें तो चूहे खा जायें और बाहर रखते हैं तो कौए उठा ले जायें। किसी के छूने मात्र से ही धर्म से भ्रष्ट, जाति से अलग कर दिया जाता था। ऐसे कच्चे धागे जैसे धर्म को तोड़ने के लिए अनेक मतावलम्बी ईसाई और मुसलमान हिन्दुओं को अपने जाल में जकड़ते चले आ रहे थे। उस काल में महर्षि दयानन्द द्वारा दिया शुद्धि सुदर्शन चक्र पं० लेखराम ने अपने हाथ में उठा लिया। और इस का ऐसी कुशलता के साथ संचालन किया कि अनेक बिछुड़े भाई फिर हिन्दू होकर अपने पुराने घर में लौट आये। उनके जीवन की इस घटना से तो अनेक परिचित ही [illegible] है। जब [illegible] प्रमुख ग्राम में कुछ हिन्दू मुसलमान होने जा रहे हैं, [illegible] पर बैठे भोजन कर रहे थे [illegible] द्वारा उन्हें सूचना मिली। उसी अवस्था में उठ कर वे रेलगाड़ी द्वारा उस गांव के लिए चल पड़े। उस गांव में कोई रेलवे स्टेशन नहीं था उन्होंने चलती गाड़ी से छलांग लगा दी। रेल से गिरने से उन्हें चोट भी लगी खून से रंगे वस्त्रों से ही वे उस स्थल पर पहुंचे जहां कुछ हिन्दू भड़कावे में आकर अपना धर्म परित्याग करने आ रहे थे। जैसे ही उन्होंने पं० लेखराम को और उन के त्याग को देखा वे भाव-विभोर हो गये। उन्होंने यह कहकर धर्म-परिवर्तन से अपना निश्चय बदल लिया कि 'जिस धर्म में ऐसे हमारे रक्षक भाई हैं जो अपनी जान पर खेल कर हम को बचाने आए हैं, हम उस धर्म को कदापि नहीं त्याग सकते।'

पं० लेखराम ने अपने जीवन-काल में अनेक पुस्तकें लिखीं जो लगभग ३१ हैं। ये सभी पुस्तकें विधर्मियों के प्रश्नों के उत्तर में लिखी गयीं। महर्षि दयानन्द के प्रामाणिक जीवन चरित्र को लिखने का श्रेय भी धर्मवीर लेखराम को ही जाता है। देश के कोने कोने में जाकर उन्होंने अलभ्य तथ्य एकत्रित किये। हिन्दू देवी देवता और संस्कृति पर कीचड़ उछालने वाले अनेक मुल्ला मौलवी विधर्मियों से उन्होंने अनेक शास्त्रार्थ भी किये। उनकी विद्वत्ता में तर्क-प्रहारों से विधर्मी जनों में आतंक फैल गया। उन पर मिर्जापुर प्रयाग लाहौर, मेरठ, दिल्ली बम्बई की अदालतों में मुकदमे भी डाले गये परन्तु अदालत द्वारा उनके लेखों व भाषणों में कोई भी आक्षेप की बात न पाकर मुकदमे खारिज कर दिये गये। चारों ओर से लोहा लेने से मुसलमान मतान्ध क्रुद्ध हो गये। ऐसे ही एक नीच हत्यारे की वे बलि चढ़ गये।



उन्होंने आर्यसमाज के भव्य भवन को बनाने में नींव का कार्य किया है। ऐसा उपदेशक, ऐसा लेखक ऐसा अमर सेवक, ऐसा क्रान्तिकारी पाकर आर्यसमाज गर्वित है। उनके बलिदान के पश्चात उन की पत्नी का त्याग भी स्तुत्य है। उनके बीमे से २००० रुपये मिले। वे उन्होंने गुरुकुल कांगड़ी में दान कर दिये छात्रवृत्ति के लिए। उसी छात्र-वृत्ति से आज पं० बुद्धदेव विद्यालंकार जैसा ओजस्वी विद्वान आर्यसमाज को मिला है। धन्य है वीर लेखराम धन्या है उनकी पत्नी श्रीमती लक्ष्मी देवी धन्य है महर्षि दयानन्द जिन्हें ऐसे बलिदानी शिष्य मिले।

आर्यसमाज का अनेक बलिदानियों से शोभित है परन्तु आज हम उन वीर बलिदानी शहीदों की शौर्य कथाओं को भूलते जा रहे हैं। स्वामी श्रद्धानन्द और महात्मा हंसराज को तो फिर भी स्मरण किया जाता रहा है। शहीद लेखराम कुछ उपेक्षित हो रहे हैं। उनकी वीरता को न पूजा न सराहा तो वीरता की जननी बांझ हो जायेगी क्योंकि—

प्रेरणा शहीदों से यदि हम न लेंगे,
आजादी ढलती हुई सांझ हो जायेगी।
यदि वीरों की पूजा हम नहीं करेंगे,
तो सच मानो वीरता बांझ हो जाएगी।

—यशपाल सुधांशु

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए० | प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

धर्म

—स्वा० ब्रह्मानन्द 'वेदभिक्षु'

धर्म (सत्य) ससार का आधार है।

धारण करने से इसका नाम 'धर्म' पडा है। धर्म प्रजा को धारण करता है। जिससे धारण होता हो वह निश्चय से 'धर्म' है।

—महाभारत

सत्येनोत्तभिता भूमि
सूर्येणोत्तभिता द्यौ ।
ऋतेनादित्यास्तिष्ठन्ति
दिवि सोमो अधिश्रित ॥

—अथर्व० १४।१।१

शब्दार्थ—(सत्येन) सत्य- धर्म से (उत्तभिता) रुकी हुई है (भूमि) पृथिवी (सूर्येण) सूर्य से (उत्तभिता) रुका हुआ है (द्यौ) द्युलोक।

(ऋतेन) प्राकृतिक नियम से (आदित्या) प्रत्येक सूर्य लोक (तिष्ठन्ति) ठहरे हुए हैं (दिवि) द्युलोक में (सोम) आनन्द का स्रोत (अधिश्रित) व्याप रहा है।

भाव—सत्य-धर्म से पृथ्वी रुकी हुई स्व मर्यादा पर गतिमान है। सूर्य से परावर्ती प्रकाश मान नक्षत्र समूह द्युलोक मे ठहरे हैं। उस प्राकृतिक प्रकाशालोक से आदित्यगण रुक रहे हैं और आनन्द का स्रोत (परमेश्वर) सारे द्युलोक मे व्याप रहा है।

विशेष—धर्म सृष्टि का आधार है और धर्म से ही जगत् के सारे व्यापार चल रहे हैं। कहते हैं कि तू सत्य कहता है, धर्म करता है और असत्य कहता है, तो अधर्म करता है। अर्थात् सत्य ही धर्म है और धर्म ही सत्य है। धर्म विश्वास की जननी है। धर्म से ही एक दूसरे पर विश्वास किया जाता है। धर्म सत्य प्रेम का बीज है। धर्मात्मा बनना ईश्वर को अपनाना है। धर्म से पृथ्वी ही नहीं, बल्कि मनुष्य की स्थिरता एव दृढता भी कायम है। जिस प्रकार सूर्य से उसके उपग्रह ठहरे एव प्रकाशित हैं उसी प्रकार से धर्म से उनके ब्रह्माण्डीय आदित्य लोक प्रकाशित और ठहरे हैं। धर्म ही आनन्द का सागर है। धर्मात्मा सर्वदा आनन्दित रहता है। धर्मात्मा को कभी भय नहीं सताता है। जिसके हृदय में धर्म है उसके हृदय में ईश्वर का वास है। अत मन्त्रोक्त वह 'सोम' धर्मात्मा के हृदयाकाश में प्रकाशित रहता है। 'धरतीति धर्म.' धारण करने वाला धर्म है। जो विश्व-ब्रह्माण्ड को धारण करने की शक्ति है वह धर्म है। परमेश्वर के 'ऋत' नियम से ही धर्म है। वैशेषिक दर्शन में धर्म की परिभाषा इस प्रकार दी गई है—'यतोऽभ्युदयनि श्रेयससिद्धि स धर्मः' अर्थात् जिस से लोक और परलोक की सिद्धि हो वह धर्म है। स्व कर्तव्यों का पालन करते हुए ससार को अदृष्ट महानतम शक्ति में विश्वास करना धर्म है। ब्रह्माण्ड की विचित्र रचना के पीछे कोई रहस्यमय शक्ति है, उस पर विश्वास ही धर्म है। मत्र में बडे-बडे लोकों का आधार वर्णन उसी परम शक्ति की ओर सकेत कर रहा है। आओ, ऐसी (सर्वाधार) शक्ति का गीत गायें—

धर्म गीत—

धर्म की राह चल प्यारे
धर्म ही काम आयेगा।
मिलेगा सुख इसी से ही
यही दुख को छुडायेगा॥

कहाता सत्य जो जग में
वही तो धर्म प्यारा है।
इसी पर जग टिका सारा
इसी से बल को पायेगा॥

ये नक्षत्र चाँद और तारे
हैं आश्रित धर्म पर सारे।
बनाये नियम प्रभु ने हैं
इन्हीं से स्वर्ग पायेगा॥

प्रभु आनन्द घन प्यारा
छुपा है धर्म में प्यारा।
बना ले धर्ममय जीवन
तभी आनन्द आयेगा॥

धर्म का ज्ञान वेदों में
बताया ईश ने सारा।
बनो तुम "वेदभिक्षु" रे
धर्म ही साथ जायेगा॥

स्वावलम्बन

—स्वा० ब्रह्मानन्द 'वेदभिक्षु'

विद्वान् मनुष्यो को चाहिए कि वे स्वय स्वावलम्बी बन और अन्य लोगों को भी स्वावलम्बन का उपदेश करें। अपनी उन्नति के लिए पराश्रित नहीं होना चाहिए। जो मनुष्य स्वावलम्बन के द्वारा प्रगति करते है, उनका ही ससार मे उत्तम यश होता है। —अथर्ववेद

स्वय वाजिस्तन्व कल्पयस्य स्वय यजस्व स्वय जुषस्व। महिमा तेऽन्येन न सनशे॥

—यजुर्वेद २३।१५

पदार्थ- (स्वयम्) अपने आप ही (वाजिन्) समर्थ शक्ति युक्त आत्मन् तू (तन्वम्) अपने शारीरिक विकास अथवा आय विस्तार को (कल्पयस्य) सशक्त वा फैला, तू (स्वयम्) अपने आप (यजस्व) यज्ञ अर्थात् ज्ञान, कर्म और उपासना रूप कर्मों का अनुष्ठान कर और (स्वयम्) अपने आप ही (जुषस्व) उनका सेवन=भोग कर।

(महिमा) महत्ता (ते) तेरी (अन्येन) दूसरों के द्वारा (न) नहीं (सनशे) प्राप्त की जा सकती है॥

आत्मन्! तू शक्ति का स्रोत है। तेरे भीतर अपरिमित शक्ति भण्डार है। क्यो दूसरो के मुह ताकता फिरता है? अरे, स्वय ही कर और स्वय ही किए हुए का भोग कर। कटु और मधुर तेरी ही करनी के फल हैं। भाग्य को कोसने वाले भाग्य कुछ नहीं है, यह तेरी कोरी कल्पनाओ का हौवा मात्र है। अपनी शक्ति पर भरोसा कर और परिश्रम रूपी पुरुषार्थ से ससार में सुख भोग। परमात्मा ने इसीलिए तुझे कर्म करने की स्वतन्त्रता दी और सब कुछ अमूल्य निधियाँ तुझे भेट की हैं। इतने पर भी यदि तू अपने उज्ज्वल भविष्य का भानु उदय न कर सका तो तेरा बडा ही अनिष्ट होगा। बुद्धि से सत्यासत्य का निर्णय कर, मन से मनन, चित्त से चिन्तन करता हुआ और अहकार से स्वय को भली प्रकार पहचान कर दुःखी मत हो। स्वय कर्म कर और स्वय भोग कर—

उत्थान पतन करने में
स्वय ही जीव तुम्हारी करनी है।
पाप पुण्य की गठरी सिर पर
तुमको ही यह धरनी है॥

क्षमा नहीं हो सकते हैं
अपराध जो तुमने कर डाले।
बीज जो बोया धरती में
वह काट फसल अब भरनी है॥

न्याय अटल है न्यायी का
टल सकता नहीं पलभर भी।
कर्म भोग की सरिता तुमको
जीव स्वय हो तरनी है॥

स्वय यज्ञ कर स्वय भोग कर
नहीं महिमा तेरी और कहीं।
"वेदभिक्षु" तेरी उन्नति का भी
साज ही सारी करनी है॥

फैलाकर उसने ज्ञान-विभा
मानवता को कर दिया पूत!

—सुश्री पकज कुमारी

छायी थी घोर तमिस्रा तब,
दहलाती भू के दिग्दिगन्त।
अज्ञान विहँसता था प्रतिपल
मानवता का हो रहा अन्त॥

ऐसे में प्रकटा नवालोक,
उस ज्ञान सूर्य का वसुधा पर।
वैदिक सस्कृति का चला चक्र
द्रुत ग्राम-ग्राम औ' नगर-नगर॥

वह ज्ञान सूर्य था दयानन्द!
भागा जिससे पाखण्ड-भूत!
फैलाकर उसने ज्ञान विभा
मानवता को कर दिया पूत!

बतला उसने प्रभु का स्वरूप,
बतलाया ससृति का रहस्य।
आर्यत्व जिसे कहते अनुपम,
बतलाया उसने, महात्म्य
का त्याग किया जग में सत्वर।

फैला जिससे आलोक प्रखर।
फिर आर्यसमाज बना धारक
सब आर्य लगे होने तत्पर॥

है तेज अमर शाश्वत उसका,
वह मानवता का था सपूत।
फैलाकर उसने ज्ञान-विभा,
मानवता को कर दिया पूत!

नारी का अपमान क्यों

—राधा शर्मा, अलीगढ

★

अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी आचल में है दूध और आँखों मे पानी।

ढोल, गँवार, शूद्र, पशु नारी,
ये सब ताडन के अधिकारी।

उक्त पक्तियो के शब्दार्थ और भावार्थ यदि समान है तो यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि महान् योग्य और अतुलनीय विभूतियो द्वारा नारी महत्व के अस्तित्व का दुर्दशा की पराकाष्ठा पर पहुचाने का असफल प्रयास किया है जिससे आभास हुआ कि जानबूझ कर नारी जाति का अपमान किया गया है। इस परिप्रेक्ष्य मे जब सत कबीर की निम्न पक्तिया याद आती हैं तो इन कवियो पर तरस आता है।

सतो देखहु जग बौराना,
हिन्दू कहे मोहि राम पियारा,
तुरक कहे रहमाना,
आपस मे दोऊ लरि लरि मुये,
मरम न काहू जाना।

मरम न काहू जाना भाव से विचारो की शृङ्खला टूटती है और लगता है कि नारी का नही अपितु प्रकृति का अपमान किया है, जिसका अधिकार मानव को नहीं है।

प्राकृतिक देन ! नारी और पुरुष अनादि से एक दूसरे के पूरक हैं। नारी ! मिले जुले मानव जीवन रथ का, पुरुष के समान, एक मजबूत चक्र है तथा जीवन को सुख का अभय दान देने वाली एक अनबूझ और बेमिसाल शक्ति है। पुरुष की अपूर्णता को पूर्ण करने वाला अद्भुत और अलौकिक वरदान है, नारी। प्रत्येक क्षेत्र मे गौरवपूर्ण अधिकार प्राप्त पुरुष की सहभागिनी है, वह उपासना और आराधना की जीती जागती मातृत्व पूर्ण प्रतिमा है।

नारी, पुरुष की दासी नही, मनोरजन का साधन और वासना तृप्ति की वस्तु नहीं। खरीदी हुई भैंस नहीं है जिसे जब जहाँ चाहा किसी भी खूँटे से बाध दिया जाये, अपितु मातृत्व पूर्ण स्नेहमयी जननी है, समाज में गृहलक्ष्मी का स्थान प्राप्त दैवी शक्तियों से भरपूर नारीत्व गुणो से युक्त प्रेममयी गृहिणी के रूप मे पुरुष का सौभाग्य है।

नारी की अनुपस्थिति मे पुरुष अस्तित्व विहीन है, शून्य है। नारी ! माँ है, बहिन है, पुत्री है, पत्नी है, प्रेयसी है और देवी है जो ममता, प्रेम, दया, माया, सहिष्णुता, करुणा उदारता, त्याग और बलिदान की अनुगामिनी है।

यह सच है कि जहा नारी की पूजा होती है, देवता वहाँ रमण करते हैं।

रोमशा तथा लोपामुद्रा नारियाँ वेद के अनेको सूक्तों की ऋषिकाए हैं। सीता, सुलोचना, अनसूया, सावित्री, मदनमजरी, मैनासुदरी आदि सती आदर्श के रूप मे आज भी विद्यमान हैं।

द्रौपदी गान्धारी, कुन्ती, मन्दोदरी आदि शक्ति आदर्श हैं। भीलनी, राधा, मीरा आदि सच्चे प्रेम और श्रद्धा की अमिट छाप हैं। सती सावित्री ने मृत्यु को परास्त कर अपने सुहाग का स्वय निर्माण किया था। मैत्रयी, गार्गी, विद्योत्तमा, प्रकाण्ड पण्डिता रह चुकी हैं। कैकेयी अपने पति दशरथ के साथ सदैव युद्ध भूमि मे रहीं और नित नवीन दिशा प्रदान की थी मन्दोदरी ने अपने पति रावण को युद्धकला में दक्ष किया था।

पन्ना धाय की वफादारी की मिसाल पुरुष प्रस्तुत नहीं कर सका और दक्षिण भारत मे सम्राट् गणपति देव की एक मात्र सन्तान रुद्रमा देवी और उत्तर में रजिया सुलतान तथा दुर्गावती, अहिल्याबाई, लक्ष्मीबाई, पद्मिनी आदि नारियो की शूरवीरता, विलक्षण नेतृत्व और तलवारों की चमक आज भी रोंगटे खड़े कर देती है। स्वतन्त्रता सग्राम की दीवानी अजीजनबाई, कमला चटर्जी, बेलामित्र, विचित्रादेवी, शास्त्रीदेवी आदि क्रान्तिकारी महिलायें भारत स्वतन्त्र कराने में पुरुषों से पीछे नहीं रही हैं।

सरोजिनी नायडू, विजयलक्ष्मी पण्डित, सुभद्राकुमारी चौहान, महादेवी वर्मा आदि उच्च शिखर प्राप्त नारियाँ रही हैं। मदर टैरेसा विश्वविख्यात समाजसेविका हैं। इन्दिरा गांधी के विवेक, दूरदर्शिता तथा पक्के इरादे के सामने दृढ़ से दृढ़ पुरुष भी ऊँची गर्दन करके उनसे बात करने का साहस नही जुटा पाता था। पुलिस कमिश्नर किरण बेदी, उपायुक्त कमलजीत देयोल, कुसुमलता मित्तल आई०ए० स० श्रीमती अजनी प्रसाद प्रशासक अलीगढ विकास प्राधिकरण क्रिकेट खिलाडी शमिता चक्रवर्ती, उडनपरी पी०टी० उषा, पहाडी चढाई विजेता बिछेन्द्रीपाल आदि शिरोमणि नारियाँ हो तो हैं।

पुरुष समाज को दहला देने वाली खूंख्वार दस्यु सुन्दरी पुतलीबाई और फूलनदेवी आदि का नाम पुरुष चाहते हुए भी, भुला नही पा रहे हैं। इनको दिन में याद आ जाने पर भी मर्द कहाने वालो की आज भी रात्रि की नींद उड जाती है।

इतिहास साक्षी है कि नारी प्रतिभा विद्वत्ता, चपलता और क्रूरता, शासन अथवा प्रशासन से अर्थात् कमशौर्य के किसी भी क्षेत्र मे पुरुष से पीछे नहीं रही हैं और आज जनगणना के अनुसार भी पुरुष बहु सख्यक नही हैं।

सदियों से अत्याचार सहन करती आयी है नारी ! क्यो ? चरित्र, नैतृत्व और आर्थिक दृष्टिकोण से पुरुष की अपेक्षा पिछडी हुई रही है और पुरुष ने लज्जावती नाम की सज्ञा से विभूषित कर सामाजिक जजीरो से जकड दिया है नारी को।

चालीस वर्ष पुराने लोकतान्त्रिक देश भारत में आज भी दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती, भगवती, महाकाली आदि आदि देवियों की पूजा होती है और तो और नदी, नालो, पशुओ और बेजान पत्थरों तक की पूजा होने वाले स्वतन्त्र देश मे आज दहेज के भूखे भेडियों द्वारा जीवित गृह देवियों को, अपनी अर्धाङ्गिनियो को दिन में पीटना, तडपाना, भूखा-प्यासा रखना, घुटन और उलाहने देना तथा तरह-तरह के अत्याचार और शोषण देने के साथ ही साथ उनका मौन शोषण भी किया जा रहा है और उन्हें जीवित जलाया जा रहा है या जल जाने अथवा मिट जाने के लिए बाध्य किया जा रहा है। पुरुष ने समस्त पृथ्वी की वेदना, कितने दर्दनाक पल भर दिये हैं नारी के जीवन में।

एक रावण ने पतिव्रता नारी का सतीत्व नष्ट करना चाहा था। एक दुशासन ने भरी सभा मे द्रौपदी को नगा करना चाहा था। भगवान राम/कृष्ण ने रक्षा की थी परन्तु आज रावण और दुशासन एक-एक नहीं अपितु अनगिनत और रोज गली गली मे पैदा हो रहे हैं। कितने राम और कृष्ण जन्म लगे पृथ्वी की सुन्दरतम प्रतिमा की सुरक्षा के लिए। भगवान उन्ही की रक्षा करता है जो स्वय अपनी रक्षा करते हैं। आज एक राम या कृष्ण इन अनगिनत आधुनिक दानवो का सहार कर नारी की अस्मत नही बचा पायेगा।

नारी जागरण आज आवश्यक हो गया है। नारी को शक्ति का बोध कराना होगा और प्रकृति द्वारा प्रदान शक्ति को पहचानना होगा तभी प्रत्येक क्षेत्र में वर्तमान पुरुष प्रधान युग में समान अधिकार पा सकेगी और सुरक्षित सम्मान रह सकेगी।

नारी अभी तक अचेत है, अबोध है। आज किसी के रहमोकरम पर पलने वाली अब अबला नही है तू ! नारी के आचरण से रा ने वाले अब भी ... देख ... सत्य ... पुकार है और इसीलिए तुझे सावधान किया जा रहा है—

इतना रहे ख्याल कि
जुल्म ढाने के साथ-साथ।
अब हम भी बदल चुके हैं
जमाने के साथ-साथ॥

प्रगति के पाच मन्त्र

सेवा के बिना—विद्या बेकार। परहेज के बिना—औषधि बेकार। आचरण के बिना—सत्सग बेकार। सात्विक भोजन के बिना—योग-साधना बेकार। प्रचण्ड सुधारक शक्ति के बिना—प्रभु भक्ति बेकार।

आर्यो ! सुभाषचन्द्र बोस, श्याम जी कृष्ण वर्मा, मदन लाल ढींगरा, प० रामप्रसाद बिस्मिल, चन्द्रशेखर आजाद, स्वामी श्रद्धानन्द, भक्त अमीचन्द, योगेश्वर कृष्ण, बन्दा बैरागी, समर्थ गुरु श्री रामदास, चाणक्य एव महर्षि दयानन्द के पद-चिह्नों पर चलकर व सगठित होकर राष्ट्र को बचाओ।

आइये ! हम चिन्तन कर तथा अपना आचरण सुधारें।

'वेदों के राजनीतिक सिद्धान्त' पर विचार विमर्श

लेखक—डॉ० ज्वलन्त कुमार शास्त्री, एम० ए०, पी-एच० डी०
प्राध्यापक, सस्कृत विभाग, रणवीर रणजय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अमेठी (उ० प्र०)

ऋषि निर्वाण शताब्दी पर वेद-मार्तण्ड आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति की महत्वपूर्ण कृति "वेदो के राजनीतिक सिद्धान्त" का प्रकाशन हुआ। इस ग्रन्थरत्न के प्रकाशन से पूर्व डा० रामनाथ वेदालकार ने अपने एक लेख में आचार्य प्रियव्रत जी की इस रचना का पूर्व परिचय आर्य जगत् को दिया था। स्वामी सत्यप्रकाश जी सरस्वती जी ने ऋषि निर्वाण शताब्दी पर आयोजित वेद सम्मेलन के अध्यक्षीय भाषण में (जो लिखित रूप मे छपा था और बाद मे आर्य पत्रो में भी छपा) भी इस ग्रन्थरत्न की चर्चा की थी। इस पुस्तक पर और कोई चर्चा आर्य-पत्रो मे नहीं हुई। एक लम्बे अन्तराल के बाद डा० प्रज्ञा देवी जी का इस ग्रन्थ की समीक्षा से सम्बन्धित एक निबन्ध अक्टूबर-नवम्बर मे मे विविध आर्यपत्रो मे "क्या वेदों के आधिदैविक अर्थ उपेक्षणीय हैं? शीर्षक से छपा। आचार्य प्रियव्रत जी ने डा० प्रज्ञा देवी जी की उक्त समीक्षा के सन्दर्भ में अपना स्पष्टीकरण "वेदों के आधिदैविक अर्थ उपेक्षणीय नही है" शीर्षक से आर्य-पत्रों मे प्रकाशित कराया है। जुलाई १९८७ में श्री रामकृष्ण आर्य का एक लेख आर्य मसार में "क्या वेद केवल राजनीतिक सिद्धान्तो के ही ग्रथ हैं?" छपा था। इस लेख का सन्दर्भ देते हुए पुन डा० प्रज्ञा देवी जी का एक निबन्ध "वेद राजनीति के ही नहीं समस्त विद्याओं के आकर ग्रन्थ है" 'आर्य मित्र' मे छपा है।

इस ग्रथ को आर्यसमाज की अनेक सस्थाओ द्वारा पुरस्कृत भी किया गया है। पुनरपि मेरी समझ से इस ग्रन्थ की जितनी अधिक चर्चा (प्रशसा या समीक्षा भी) होनी चाहिए थी, उतनी नहो हुई। आर्य-समाज में स्वाध्याय शीलता का वर्तमान शोचनीय स्थिति ही सम्भवत. इसका कारण है। आर्य विद्वानो द्वारा वैदिक साहित्य की सेवा मे लिखे गए हैं—"वैदिक इतिहासार्थ निर्णय" प० शिवशकर शर्मा काव्यतीर्थ), 'वैदिक सम्पत्ति' (प० रघुनन्दन शर्मा) प्रभृति अमूल्य ग्रथो की परम्परा मे यह ग्रन्थ है, ऐसा मेरा मानना है, जो आचार्य जी के वेदो पर सुदीर्घ चिन्तन, मनन और आलोडन का ही सुपरिणाम है। अस्तु।

किसी भी कृति के प्रथम सस्करण में सशोधन और परिमार्जन को गुजाइश रहती ही है। ग्रथ छपने के बाद ग्रन्थ की त्रुटियों, न्यूनताओं, भूलों और सशोध्य स्थलों की ओर ध्यान स्वय लेखक का और समालोचकों का जाता है। 'वैदिक सम्पत्ति' में भी ऐसे स्थल थे और 'वैदिक इतिहासार्थ निर्णय' में भी। प्रस्तुत समालोच्य ग्रन्थ भी इसका अपवाद नही है। इसी दृष्टि से कुछ विचार प्रस्तुत कर रहा हूँ। आचार्य जी अन्यथा न लगे।

इस ग्रन्थ मे सर्वाधिक खटकने वाली बात यह है कि आचार्य जी वेद के अग्नि, इन्द्र, वरुण, रुद्र, मरुत्, सोम, नर आदि शब्दों के स्व अभीष्ट अर्थ लिखने के बाद अन्य अर्थ-निषेधक वाक्य भी लिख चलते हैं। मेरी समझ से अन्य अर्थों के निषेधक वाक्यों को इस ग्रन्थ से निकाल देना चाहिए। डा० प्रज्ञा देवी जी की भी प्रमुख आपत्ति यही है कि आचार्य जी स्वकृत अर्थों का प्रतिपादन करने के बाद यह क्यों लिखते हैं कि 'इस मन्त्र या पद का अन्य कोई अर्थ नहीं हो सकता।" आचार्य जी ने प्रज्ञा बहिन जी की इस आलोचना के उत्तर मे लिखा है "लिखते समय मेरा ध्यान उन शब्दों के सायणाचार्य आदि के अर्थों की ओर था। इन लोगो के अर्थ मुझे सगत नही लगे। इसलिए अपनी बात पर जोर देने के लिए मैंने वैसा लिख दिया है।" किन्तु आचार्य जी को मन्त्रो का अर्थ लिखते समय उन मन्त्रो या मन्त्रोपात्त शब्दों का सायणाचार्य के अतिरिक्त ऋषि दयानन्द कृत अर्थों की ओर भी ध्यान रहा होगा। सायण के अर्थ असगत दीखे होगे यह तो माना किन्तु ऋषि दयानन्द के अर्थों मे कौन-सी असगति दिखाई पड़ी जो आचार्य जी को अपनी बात पर जोर देने के लिए—"ये लोग उन विशेषणो को आग में घटा लेते हैं यह हम कभी नहीं समझ सके", "इन स्थलों मे अग्नि का अर्थ साधारण आग कभी सगत नहीं हो सकता", "अग्नि के ये तीन कर्म जड आग में सगत नहीं हो सकते।" (खण्ड १, पृ० ७९, ८०, ८२) जैसे वाक्य लिखने पड़े। इस ग्रन्थ में इस प्रकार की पक्तियों को हम उचित नहीं समझते। आचार्य जी द्वारा उद्धृत मन्त्रो में ऋग्वेद के वे मन्त्र भी है जिन पर ऋषि दयानन्द का भाष्य उपलब्ध है। उदाहरणार्थ ऋग्वेद के "अग्निमग्निहवीमभि. सदा हवन्त विश्पतिम् (ऋ० १।१२।२) कविमग्नि सत्यधर्माणम् (ऋ० १।१२।७)। इन मन्त्रो को आचार्य जी ने अपने ग्रन्थ के प्रथम खण्ड (पृ० ७९-८०) पर दिया है और इन मन्त्रों में आये अग्नि शब्द का 'सम्राट्' अर्थ करते हुए 'यहा अग्नि का प्रसिद्ध भौतिक आग अर्थ नहीं हो सकता' यह भी लिख देते हैं। जबकि इन मन्त्रों में आये 'अग्नि' शब्द का अर्थ महर्षि दयानन्द ने क्रमश परमेश्वर, प्रसिद्ध भौतिक अग्नि तथा बिजली (ऋ० १।१२।२) मे) तथा ज्ञाता और दाहक अग्नि (ऋ० १।१२।७ में) किया है। आचार्य जी ने अपने स्पष्टीकरण में यह लिखा है—"मेरे ग्रथ का विषय तो मन्त्रों में वर्णित राजनीति विज्ञान को दिखाना है। इसलिए मैंने राजनीति विषयक अर्थ मन्त्रों के किये हैं, आधिदविक नहीं।" फिर आधिदैविक, आधिभौतिक आदि अर्थों का प्रत्याख्यान या अपलाप करने की क्या आवश्यकता थी? आचार्य जी के अनुसार जब विषय भेद क्षेत्र भेद में मन्त्रों के विविध अर्थ हो सकते हैं तब सैकडों बार यह लिखने का क्या औचित्य है?—यहां अग्नि का अर्थ सम्राट् ही लेना चाहिए (खण्ड १) 'राजा का चुनाव' अनुच्छेद पृ० २३ यहा अग्नि का अर्थ आग न लेकर शरीरधारी सम्राट् ही लेना चाहिए (पृ० २४), आग अर्थ में सारा सूक्त सुन्दर ढग से घट ही नहीं सकता (पृ० २५), अग्नि का अर्थ इन मन्त्रों में तथा पूव मन्त्रो में सम्राट् ही करना होगा आग नहीं (पृ० २६), अग्नि विषयक सूक्त के वर्णन सम्राट् पर ही अधिक सगत रीति से लग सकते हैं आग पर नही (पृ० २७), आग अर्थ में इनकी सगति दु [illegible] है (पृ० २८), आग अर्थ में ये विशेषण [illegible] नहीं हो सकते (पृ० २९), अग्नि का अर्थ [illegible] ही [illegible] का सकता है [illegible] नहीं (पृ० [illegible]), आग में ये वर्णन सगत नहीं हो सकते (पृ० ३१), इत्यादि अग्नि के विशेषण भी आग में सगत नहीं हो सकते (पृ० ३२) अग्नि के ये सारे ही कार्य राजा परक अर्थ में सगत हो सकते हैं आग परक अर्थ में नहीं (पृ० ३३), यहां अग्नि का अर्थ आग न लेकर राजा ही लेना चाहिए (पृ० ३६), मन्त्र गत वर्णन तथा पूर्व लिखित प्रमाणों के आधार पर यहां अग्नि का अर्थ सम्राट् ही करना चाहिए। मन्त्र गत वर्णन केवल सम्राट् में ही हो सकता है, जड आग में नहीं (पृ० ३७)। इसी प्रकार इस के आगे 'इन्द्र' का अर्थ करते हुए आचार्य जी लिखते हैं—इन्द्र शब्द का अर्थ सम्राट् ही ऐसे स्थलों में लेना उचित है (पृ० ३९), इसलिए इन्द्र का अर्थ सम्राट् लेना ही अधिक उपयुक्त है (पृ० ४३), मन्त्र गत वर्णन यह सिद्ध करता है कि यहां इन्द्र का अर्थ सम्राट् हो लेना चाहिए (पृ० ४५), यहां इन्द्र का अर्थ सम्राट् ही लेना अधिक सुसगत है (पृ० ४६) इन्द्र का यह विशेषण भी यहा सूचित करता है कि यहां इन्द्र का अर्थ सम्राट् या भूपति करना चाहिए (पृ० ४६), यहा इन्द्र का अर्थ सम्राट् ही लेना चाहिए, यह मन्त्रगत वर्णन से स्पष्ट है (पृ० ४७), यह सारा वर्णन और यह सारे विशेषण सम्राट् अर्थ में अधिक उचित रीति से सगत होते हैं। इसलिए अर्थ-निर्णय के प्रमुख निर्णायक औचित्य के आधार पर हमें यहां इन्द्र का अर्थ सम्राट हो करना होगा (पृ० ४९), जो अर्थ हम ने ऊपर किया है वही करना होगा और उस अर्थ में इसकी सगति सम्राट् अर्थ में ही हो सकती है (पृ० ५१), इस सारे सूक्त में जो इन्द्र का वर्णन हुआ है उससे भी यही स्पष्ट प्रतीत होता है कि यहां इन्द्र का अर्थ सम्राट् करना चाहिए। सूक्त गत इन्द्र के ये सारे वर्णन सम्राट् में ही अधिक सुन्दर रीति में सगत होते हैं (पृ० ५१), ऐसी अवस्था में इस सूक्त तथा सूक्तान्तरों की साक्षी के आधार पर हमें इन्द्र का अर्थ सम्राट् ही करना चाहिए (पृ० ५२), मन्त्र गत वर्णन तथा पूर्व प्रमाणों के आधार पर यहां इन्द्र का अर्थ राष्ट्र मे ऐश्वर्य देने वाला सम्राट् ही करना चाहिए (पृ० ५३), इसी प्रकार "अग्नि और इन्द्र" नामक चतुर्थ अनुच्छेद में भी आचार्य जी लिखते हैं—इन कर्मों को करने वाला अग्नि कभी आग नहीं हो [illegible] (पृ० [illegible]), यह [illegible]

वेदों के राजनीतिक सिद्धान्त पर विचार विमर्श

घट सकता (पृ० ८७), इन मन्त्रों में जो अग्नि का जो वर्णन है वह किसी संगठित और व्यवस्थित राज्य के अधिपति में ही घट सकता है लोक प्रसिद्ध आग में नहीं (पृ० ९१)।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आचार्य जी अपने ग्रन्थ में उद्धृत इन्द्र और अग्नि सूक्तों में आये इन्द्र और अग्नि शब्द का अर्थ राजा या सम्राट् करते हुए भौतिक अग्नि आदि अन्य अर्थों का प्रत्याख्यान करते है। आचार्य जी की इस मान्यता से हम सहमत नही हो सकते, क्योंकि उन्हीं अग्नि और इन्द्र सूक्तों में आये अग्नि और इन्द्र शब्द का क्रमश भौतिक अग्नि और परमात्मा आदि अर्थ स्वामी दयानन्द तथा अन्य आर्य विद्वानों ने किया है और उसकी सगति भी लगायी है। यथा ऋषि दयानन्द ने ऋग्वेद के प्रथम सूक्त में अग्नि शब्द का परमेश्वर और भौतिक अग्नि अर्थ किया है। द्वितीय मण्डल के प्रथम सूक्त में अग्नि शब्द की विद्युदादि व्याख्या तृतीय और चतुर्थ मण्डल के प्रथम सूक्त में अग्नि शब्द का विद्वान् अर्थ किया गया है। पचम और षष्ठ मण्डल के प्रथम सूक्त में अग्नि शब्द से भौतिकाग्नि और सप्तम मण्डल के प्रथम सूक्त में अग्नि शब्द से विद्युत् की व्याख्या ऋषि ने की है। अन्यत्र अपने वेदभाष्य में ऋषि दयानन्द ने अग्नि शब्द के अनेक अर्थ किये हैं। जैसे अग्नि का अर्थ—जठराग्नि (यजु० ५।९), सूर्य (यजु० ५।९), युद्ध जन्य क्रोधाग्नि (यजु० ६।१८), सर्वविद्या प्राप्त विद्वान् (यजु० ६।१६), न्याय मार्ग मे चलने वाला विद्वान् (१।१०।३) तथा सब विद्या का जानने वाला और बताने वाला विद्वान (ऋ० १।१०५।१४)।

आचार्य जी अपने बचाव में लिखते हैं कि "मैंने अपने ग्रन्थ की भूमिका में 'वेद मे विविध ज्ञान-विज्ञान' शीर्षक में स्पष्ट लिखा है कि वेद के शब्दों के क्षेत्र-भेद से विविध प्रकार के अर्थ हो जाते हैं। वेद में इन्द्र शब्द के परमात्मा, जीवात्मा, राजा और विद्युत् तथा अन्य अनेक अर्थ हो जाते हैं। इस भांति वेद के कितने ही स्थलों पर इन्द्र के विशेषणों और वर्णनों से स्पष्ट प्रतीत होता है कि वहा इन्द्र का अर्थ विद्युत् है।" आचार्य जी ने अपनी पुस्तक के प्रथम खण्ड के पृ० ९३ पर भी लिखा है—प्रकरण के अनुसार उसका (इन्द्र और अग्नि शब्दों का) अर्थ कहीं परमात्मा, कहीं सम्राट् और कहीं कुछ और करना चाहिए।

आचार्य जी द्वारा स्पष्टीकरण में लिखे गये इन वाक्यों का यह तात्पर्य नहीं है कि उन्होंने जिन स्थलों में अग्नि और इन्द्रादि शब्दों का सम्राट् अर्थ किया हैं उन्हीं स्थलों मे अग्नि और इन्द्र शब्द का परमात्मा, जीवात्मा या विद्युत् आदि अन्य अर्थ भी हो सकते हैं। अपितु वे यह कहना चाहते हैं कि उन के द्वारा उद्धृत मन्त्रों से भिन्न मन्त्रों में आये अग्नि और इन्द्रादि शब्दो का परमात्मा, जीवात्म या विद्युत् आदि अर्थ होगा। आचार्य जी के उपरिलिखित वाक्यों में रेखाकित शब्दों से यही ध्वनि निकलती है। आचार्य जी ने अग्नि और इन्द्र सूक्त से सम्बन्धित जो स्थल उद्धृत किए हैं वहाँ उनके अनुसार मन्त्रगत वर्णनों, विशेषणों प्रकरण और औचित्य के आधार पर अग्नि इन्द्रादि शब्द का सम्राट् या राजा अर्थ ही सगत हो सकता है अन्य अर्थ नही। इसीलिए उन्होंने उन मन्त्रों का स्व अभीष्ट अर्थ लिखते हुए भी लिख दिया है कि यहाँ अन्य अर्थ सगत नहीं हो सकता। उनके इस अन्य अर्थ निषेधक पचासों वाक्यों को ऊपर मैंने उद्धृत कर दिया है। यदि आचार्य जी उन मन्त्रों में अपने अभीष्ट अर्थों से भिन्न अर्थों की भी सगति समुचित समझते तो उन्हें इस प्रकार के अन्य अर्थ निषेधक वाक्यों को सैकडों बार बलपूर्वक लिखने की क्या आवश्यकता थी। यह तो सभी जान रहे हैं कि आप वेदों में राजनीतिक विज्ञान परक अर्थ प्रस्तुत कर रहे हैं। अधिदेव, अधिभूत या अधियज्ञपरक विषय और अर्थ का विचार आपके ग्रन्थ का उद्देश्य नहीं है। अत अधिराष्ट्र परक अर्थ के प्रतिपादन के बाद अन्य अर्थ निषेधक वाक्यों का तात्पर्य उन स्थलों में राष्ट्र या राजनीतिपरक अर्थ से भिन्न अध्यात्मिक, अधिदेव, अधियज्ञ या अधिभूतपरक अर्थ के प्रत्याख्यान से ही है। आचार्य जी अपने लेख में लिखते हैं कि सायणाचार्य के असगत अर्थों के प्रत्याख्यान से मेरा तात्पर्य है। लेकिन आचार्य जी के ग्रन्थ से उन मन्त्रों के राष्ट्रपरक अर्थ के बाद भौतिक अग्नि परक अर्थ के प्रत्याख्यान का स्पष्टत. और शतशः उल्लेख है, और उन मन्त्रों का भौतिक अग्निपरक अर्थ ऋषि दयानन्द ने किया है।

आचार्य जी अपने ग्रन्थ के प्रथम खण्ड में अग्नि सूक्त से सम्बन्धित अनेक मन्त्रों को उद्धृत कर मन्त्रगत 'विश्पतिम्', 'चर्षणीनाम्', 'चर्षणि.' इत्यादि शब्दों के आधार पर अग्नि शब्द का सम्राट् अर्थ करते हुए यह लिखते हैं—"इन स्थलों में अग्नि का अर्थ साधारण आग कभी सगत नहीं हो सकता" (पृ० ८०)। जबकि इन्हीं सूक्तों में अनेक मन्त्रों का अर्थ करते हुए ऋषि ने 'अग्नि' का अर्थ सूर्य किया है। विश्पतिम्, चर्षणीनाम् और चर्षणि का अर्थ भी क्रमश 'प्रजाया पालकम् सूर्यम्', 'ऐश्वर्येण प्रकाशमानानाम्', 'चायिता अ दित्य' किया है। यही स्थिति 'सोम आयु ओषधि और अहि' आदि शब्दों की है। आचार्य जी ने इन शब्दो का अर्थ क्रमश 'स्नातक, मनुष्य शिक्षा-संस्था और जल निरोधक पदार्थ' किया है और अन्त मे लिख दिया है कि मेरे द्वारा उद्धृत इन स्थलों मे आये इन शब्दों का अर्थ इससे भिन्न नही हो सकता है। अन्य अर्थ दूसरे स्थलो में प्रकरणानुसार होगे। इसी शृंखला मे 'वेदो के राजनीतिक सिद्धान्त' के द्वितीय भाग मे 'राष्ट्र मे नहरें खुदवाई जायें' अनुच्छेद ५, पृ० २८, २९ पर १९ मन्त्र आचार्य जी ने प्रस्तुत किए हैं। उन में से प्रथम तीन मन्त्रो ऋ० १।३२।१ २, ११ का अर्थ करते हुए मन्त्रगत अहि शब्द का अर्थ 'शिला भूमि आदि जल के गति निरोधक पदार्थ' करते हैं। यह तो ठीक है किन्तु सर्वाधिक आपत्तिजनक बात यह है कि इसी स्थल पर 'अहि शब्द का अर्थ' शीर्षक के अन्तर्गत पृ० ३० पर आचार्य जी लिखते हैं—आम तौर मे इस का (अहि का) अर्थ मेघ किया जाता है। कई जगह इसका अर्थ मेघ होता भी है। पर प्रस्तुत मन्त्रो में मेघ अर्थ नहीं लिया जा सकता। ऐसे प्रसगों में प्रचलित टीकाकार अहि और पर्वत शब्दो का अर्थ प्राय मेघ ही किया करते हैं।

स्पष्ट है कि आचार्य जी ऋग्वेद के १।३२।१, २, ११ मन्त्रो में अहि शब्द का मेघ अर्थ गलत समझते हैं। इतना ही नही अहि का मेघ अर्थ क्यों गलत है इसका कारण बताते हुए आचार्य जी लिखते हैं—'यदि पर्वत का मेघ अर्थ ही लें तो भला मेघ में रहने वाला यह मेघ कौन होगा?' जबकि ऋषि दयानन्द ने इन मन्त्रों मे आये अहि शब्द का मेघ अर्थ किया है। मेघ में रहने वाला मेघ की असम्भावनापरक आपत्ति का उत्तर ऋषि दयानन्द ने यह दिया है 'फिर वही मेघ आकाश में से नीचे गिर के पर्वत अर्थात् मेघ मण्डल का पुन. आश्रय लेता है' (ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका)।

इस सम्बन्ध में आचार्य जी की आपत्ति का युक्तियुक्त और तर्कपूर्ण परिहार डा० प्रज्ञा देवी जी ने ऋषि दयानन्द के ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका के आलोक में अपने प्रथम निबन्ध में किया है। आचार्या प्रज्ञा जी के द्वारा की गई समीक्षा के इस महत्वपूर्ण मुद्दे पर आचार्य जी अपने स्पष्टीकरण (द्र० 'वेदों के आधिदैविक अर्थ उपेक्षणीय नहीं हैं') में सर्वथा मौन साध लिए हैं।

कोई आर्य विद्वान् वेदों में रूढि शब्द है ऐसा नहीं मानता। आचार्य जी मन्त्रार्थ की यौगिक पद्धति को निःसन्देह मानते हैं। तभी तो राजनीति प्रभृति विविध ज्ञान-विज्ञान परक वेदों का अर्थ हो सकेगा जैसा कि उन्होंने अपने स्पष्टीकरण वाले लेख में भी लिखा है। इसी प्रकार अपनी पुस्तक के प्रथम खण्ड के (पृ० ७, विषय प्रवेश) पर लिखा है—'इस प्रकार वेद में रूढिवाद का स्थान नही रहने देना चाहिए।' इस के बावजूद 'वेदों के राजनीतिक सिद्धान्त' मे आचार्य जी द्वारा वेदों में रूढि शब्द भी होते हैं ऐसा लिखा गया है। उदाहरणार्थ—(१) जब वेद और लोक मे विद्युत् का अर्थ बिजली होता है तो 'विद्युद्रथ' में भी उसका अर्थ बिजली ही क्यो न करें? दयानन्द के अनुयायी वेद में यौगिक अर्थ वहाँ करते हैं जहाँ वैसा किये बिना वेद निरर्थक और विज्ञान विरुद्ध बात कहता हुआ प्रतीत हो। जहा रूढ अर्थ मान कर भी वेद शिक्षाप्रद वैज्ञानिक अर्थ देता हो वहाँ हम यौगिकवाद का सहारा नही लेते हैं। (खण्ड २, पृ० १६७)

(२) दयानन्द के अनुयायी यौगिकवाद का वही आश्रय लेते हैं जहा वैसा करने से अर्थ मे चमत्कार उत्पन्न होता है और वह अधिक शिक्षाप्रद बनता हो। हम सर्वत्र यों ही बिना हेतु के यौगिकवाद का सहारा नही लेते हैं। प्रस्तुत मरुत् सम्बन्धी मन्त्रों में नर का सुप्रसिद्ध और रूढ अर्थ मनुष्य करने पर अर्थों में चमत्कार उत्पन्न होता है और वह राष्ट्रोपयोगी व्यावहारिक शिक्षा देने वाले बन जाते हैं। अत यहाँ हमें नर का रूढ अर्थ मनुष्य ही करना चाहिए (खण्ड ३, पृ० १७)।

(क्रमशः)

बछड़ा

एष प्रकोशे मधुमाॅ अचिक्रददिन्द्रस्य वज्रो वपुषो वपुष्टम ।
अभ्यृतस्य सुदुघा घृतश्चुतो वाश्रा अर्षन्ति पयसा च धेनव ॥

ऋषि —कवि =क्रान्तद

(इन्द्रस्य) आत्मा की (एष वपुषो वपुष्टम) यह बीज बोने वालो मे सबसे उत्तम (मधुमान् वज्र) मधुर बिजली (कोशे) हृदय-कोष में (प्र-अचिक्रदत) खूब गर्जी है। (ऋतस्य च) और ऋत की (सुदुघा) उत्तम दूध देने वाली (घृतश्चुत) घी टपकाती हुई (वाश्रा धेनव) रभा रही गाये (पयसा अभि-अर्षन्ति) दूध सहित चारो ओर से प्राप्त हो रही हैं।

ब्रह्माण्ड को गोशाला में मैं अपने आप को बछड़ा सा पाता हू। सपूर्ण प्रकृति मुझे माता सी दीख रही है। सब ओर से मानो दूध को नहरे सी बह रही हैं। मेरे बिना जाने, मेरे रोम-रोम में प्रकृति-माता का दूध प्रवेश कर रहा है, कर रहा है। गाये दौड-दौड कर अपने बछड़ों के मुख में दूध उंडल रही हैं। दौडती हुई गौ का रभा नाद कैसा सुहावना प्रतीत होता है। इस नाद मे दूध है—घी है। एक रस है जो बछडे को आत्मा को तृप्त करता जा रहा है।

गाये जगल में घूमती रही और बछडे बाडे मे बध रहे। परन्तु बध हुए बछडो मे एक बिजली थी। वह उनके हृदयो की आवाज मे बोल रही थी गरज रही थी। गैया का हृदय उसे सुन रहा था। औरो को सुनाई न देने वाली यह गरज गाय के शरीर मे दूध की खेती उगा रही थी। बछडे का प्यार न हो तो गौ खाती है, पीती है, चरती है जुगाली करती है परन्तु उसके स्तनो में दूध नही उतरता। दूध बछडे के प्रेम से ही पैदा होता है। यही प्रेम आत्मा का वह मीठा वज्र है जो विश्व-धेनु की विशाल छातियो मे दूध की गगा बहाता है।

ससार के इस बाडे में हमे युगो बीत गये। प्रकृति माता का स्तन-पान हम प्रतिक्षण करते थे, परन्तु इसका साक्षात् बोध भूख ही के समय हुआ। हमारा पेट भर गया, हम चुप हो रहे। गैया को भुला दिया। सायकाल फिर पेट खाली हुआ और हम ने आतुर शब्द में माता को पुकारा। उसके रभा-नाद और दूध की मीठी-मीठी धारा का खूब जोरो से खीच-खींच कर, भींच-भीच कर आस्वादन किया। भूख मिटी और फिर वही आमोद प्रमाद। माना जैसे थी ही नही।

परन्तु अब तो हृदय की घण्टी हर क्षण बज रही है। यह घण्टी बज तो पहले भी रही थी परन्तु अज्ञात। अब आत्मा की भूख हर समय बाचाल रहती है। मेरे कान उस पर लग गये हैं। वायु गाय बनकर हर समय मेरी ओर आ रही है। सूर्य की किरणें एक अनन्त गल्ले के रूप मे मेरे प्राणो को, मेरे हृदय को, मेरे सम्पूर्ण शरीर का शुभ्र श्वेत दुग्ध पान करा रही है। प्रकृति की वह कौन सी शक्ति है जो रभा-रभा कर मेरे सहस्र मुख शरीर में सहस्र-धार दूध के सहस्र मुख स्रोत नही बहा रही है। प्रकृति की प्रत्येक चेष्टा मे गान है, रभा नाद है। मेरे हृदय मे उसके लिए उत्सुकता है जो गरज गरजकर सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को अपनी ओर बुला रही है।

मैंने कर्मों की खेती से पृथ्वी को उर्वरा बनाया है। प्रकृति माता की सम्पूर्ण विभूति मुझ बछडे की कर्म-रूप कृषि का फल है। मेरा प्यार मेरी माता की छातियों को दूध से छलका रहा है। मैं उससे और प्यार करूगा, अधिक और अधिक कर्म का हल चलाऊँगा, जिससे प्रकृति के स्तनों मे दूध छलकता रहे और मैं उसे जी भर-भर के पान करता जाऊँ, करता जाऊँ।

क्या इसी तुला मे मनुज कर्म ?
तुलते बन-बन नव कल्प-धर्म ?
है विश्व-तुला का यही मर्म ?
है कल्प कर्म का मूर्त सार ?

उस देश का नक्शा क्या होगा ?

जिस देश में गौएं कटती हैं, उस देश का नक्शा क्या होगा ?
जिस दीप से तेल निकल जाए, उस दीप से रोशन क्या होगा ?
पहचान सके न उन रत्नों को, हम कांच समझकर फक रहे।
देखने वाले हैं खडे - खडे सब, मूक बने - से देख रहे।
रत्नों से भरा घर खाली हो, फिर पछता करके क्या होगा ?
फूलों की हरी-भरी बगिया हो राख रही अगारों से।
व्याकुल भौंरे औ पक्षीगण अब बिखर रहे उन डारों से।
जो फूल देव के मस्तक का, वो फूल कुचल कर क्या होगा ?
गोपाल-कृष्ण और भीमार्जुन सब गौओं के हितकारी थे।
गौतम प्रबुद्ध और गांधी जी अहिंसा - व्रत के धारी थे।
जिस धरती पर बहती गगा उस खून बहाकर क्या होगा ?
आजाद वतन अब अपना है पर माँ की हत्या रुकी नहीं।
जजीरों से जकडी गैया अब खैर न उसकी यहां कहीं।
माँ की छाती पर खंजर है, इस निर्दय को कुछ क्या होगा ?

—कल्याणकवि प्रयाग साह मुंशी





ऋषि दयानन्द को बोध मानव के लिए हुआ

नई दिल्ली, १६ फरवरी।

स्वामी दयानन्द को बोध अपने लिए नहीं, मानव मात्र के लिए हुआ था। उन्होंने सकीर्णता छोडने और असत्य से हटने का जो सन्देश दिया था उसे अपनाकर हम जटिल से जटिल समस्याओं को हल कर सकते हैं। 'ऋषि बोधोत्सव' के मौके पर एक सभा में यहा वक्ताओं ने एक स्वर मे यह बात कही।

इका के कोषाध्यक्ष सीताराम केसरी का कहना था कि स्वामी दयानन्द को ज्ञान तो जन्म से ही था। शिवरात्रि पर उन्होने कुछ महत्त्वपूर्ण निश्चय किये जिससे देश की दिशा बदल गई। हमें उन से प्रेरणा लेकर निजी और सार्वजनिक जीवन के परिष्कार का सकल्प लेना चाहिए।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष स्वामी आनन्द बोध ने मुस्लिम समुदाय से उदारता दिखाने की अपील की ताकि राम जन्मभूमि का मसला हल हो सके। उन्होंने कहा कि आर्यसमाज का ध्येय झूठ और अविद्या को मिटाना है। यह विश्व के सभी भागो मे पीडित मानवता के कल्याण के लिए काम कर रहा है।

इका सासद रामचन्द्र विकल ने कहा कि सारे विश्व को अपना कुटुम्ब मानने का सन्देश भारत ने ही दिया है। आर्य प्रतिनिधि सभा, राजस्थान के अध्यक्ष चौधरी छोटूसिह एडवोकेट ने कहा कि सारे ससार के बुद्धिजीवियो ने दयानन्द के तार्किक दृष्टिकोण को मजूर किया है।

सभा के अध्यक्ष गुरुकुल कागडी विश्वविद्यालय के कुलाधिपति सत्यकेतु विद्यालकार ने कहा कि सत्यार्थ-प्रकाश अद्भुत ग्रन्थ है जिसमें वैदिक ज्ञान का सार निहित है। आर्य केन्द्रीय सभा की ओर से आयोजित इस सभा में राजधानी की सभी आर्यसमाजों और आर्य शिक्षण संस्थाओं ने भाग लिया।

सभा की ओर से फिरोजशाह कोटला मैदान में 'ऋषि मेले' का भी आयोजन किया गया। मेले म सांस्कृतिक कार्यक्रम और कई तरह की प्रतियोगिताएँ रखी गयी और विजेताओं को इनाम बाटे गये। बडी सख्या में स्कूली बच्चो ने इन मे हिस्सा लिया।

कार्यक्रम का प्रारम्भ प्रात ८ बजे यज्ञ मे हुआ। इस यज्ञ के ब्रह्मा थे प० यशपाल सुधाशु। यज्ञ में श्रद्धालु जनों ने भाव-विभोर होकर आहुतियाँ प्रदान कीं तथा सेवा करने का व्रत लिया। कार्यक्रम का संचालन डा० शिवकुमार ने किया।

आर्यसमाज बाँगरमऊ का पन्द्रहवाँ वार्षिकोत्सव सम्पन्न

विगत २६ से २९ जनवरी तक बाँगरमऊ (उन्नाव) आर्यसमाज का वार्षिकोत्सव समारोहपूर्वक सम्पन्न हुआ। सर्वश्री ब्रह्मदत्त स्नातक, स्वामी वेदमुनि परिव्राजक, डा० आनन्द सुमन, प० रघुराज शर्मा, स्वामी महावीर आर्य, प० युगल किशोर व सीताराम आर्य के उपदेशों व भजनोपदेशों ने श्रोताओं को आत्म विभोर किया। डा० सुमन के पौरोहित्य में लगभग एक दर्जन युवक-युवतियो का सामूहिक यज्ञोपवीत सस्कार सम्पन्न हुआ। डा० सुधाशु मोहन के सचालन मे राष्ट्र-रक्षा एव धर्म-रक्षा सम्मेलन आयोजित किया गया। श्री सुरेशचन्द्र आर्य ने आभार व्यक्त किया।

डा० सुधांशु मोहन
मन्त्री, आर्यसमाज बाँगरमऊ

आभार प्रदर्शन

श्री भास्कर घोष
महानिदेशक, दूरदर्शन निदेशालय
मण्डी हाउस, नई दिल्ली-१

महोदय !

स्वामी दयानन्द सरस्वती बोध दिवस पर दूरदर्शन द्वारा १५ फरवरी और १६ फरवरी को वृत्तचित्र एव परिचर्चा का प्रसारण किया, इसके लिए हम आपके आभारी हैं। कृपया इस प्रकार के कार्यक्रम प्रत्येक पर्व पर दिखायें, तो जनभावना का आदर हो सकेगा।

हमारा आप से यह भी निवेदन है कि इस प्रकार के कार्यक्रम विदेशों में बसे प्रवासी भारतीयों को भी दिखाने की व्यवस्था करें।

सूर्यदेव
(महामन्त्री)
दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा

नोट—सभी आर्यजनों से प्रार्थना है इस प्रकार के पत्र आप भी व्यक्तिगत पते से लिखकर दूरदर्शन को भेजें। जिससे आपके कार्यक्रम अधिक से अधिक दिखाये जा सकें।

अभिनन्दन

(२६ जनवरी, १९८८ को आर्यसमाज डोंगरमऊ में डा० आनन्द सुमन, भूतपूर्व पौत्र नवाब छतारी के स्वागत में प्रस्तुत अभिनन्दन गीत।)

लव, कुश को धरती पर करते आज आपका अभिनन्दन।
रामराज्य भारत में लाओ फिर से हे आनन्द सुमन !

बढ़ा देश में पाप स्वार्थ औ भीषण अत्याचार।
अबलाओं का शोषण होता, मचता हाहाकार।
अन्यायी को दण्डित करके बन्द करो दारुण क्रन्दन।
रामराज्य भारत में लाओ फिर से हे आनन्द सुमन !

धर्म, नीति, संस्कृति पर संकट के बादल मंडराते।
मातृभूमि के प्यारे बेटे बहुविधि कष्ट उठाते।
प्रमुदित सुमनों से भर दो यह भारत का प्यारा उपवन।
रामराज्य भारत में लाओ फिर से हे आनन्द सुमन !

आर्यों का फिर राज्य बने यह आर्यावर्त महान।
हम सब मिलकर गायें सस्वर इसका गौरव गान।
नूतन आशा और उमंगों से पूरित होवें जन-जन।
रामराज्य भारत मे लाओ फिर से हे आनन्द सुमन !

—डा० सुधांशु मोहन

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५१

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष ११ अंक २० | रविवार ६ मार्च १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | फाल्गुन २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर ३० पौंड

सम्पादकीय—

होली—प्रकृति का महोत्सव

भारत देश अपनी गरिमामयी परम्पराओं से, आध्यात्मिक सम्पदाओं से संस्कृति सभ्यता की विशेषताओं से सम्पन्न रहा है। इन्हीं विशेषताओं में एक विशेषता है यहाँ के पर्व (त्यौहार)। संसार के सभी वर्ग सम्प्रदाय एवं जातियों में और देशों में कोई न कोई दिन नियत है जब वे अपने समस्त दुःख दर्द भुला कर उत्सव मनाते हैं। व्यक्ति विषाद अवसाद में घिरा न रहे एक ही रस में वह खिन्न न हो जाये, वह जीवन के समस्त रंगों रसों का स्वाद ले सके, इसी धारणा को ही लेकर सम्भवतः हमारे पूर्वजों ने पर्वों की संरचना की थी। समस्त विश्व में सब से अधिक पर्व भारत में ही मनाये जाते हैं।

वसन्त ऋतु का आगमन हो गया है। नौ रसों से रसित, नव रंगों के परिधानों से विभूषित प्रकृति अपनी नाट्य कला का समस्त भुवन में परिचय दे रही है।

सेम्बल की ऊंची ऊंची डालियों पर झूलते लाल लाल फूल, खेत में फूलती पीली-पीली सरसों, बागों में महकती अमराई, वन की कटीली झाड़ियों में सजे फूलों के गुच्छे, शुष्क वृक्षों की चोटियों से निकलते अंकुर पर्वत की ऊबड़ी शृंखला पर उगती हरी-हरी घास और ऊँचे शिखर से धरती के सीने पर गिरता गर्जता झरना, मचलती इठलाती नदियों की निर्मल धारा बांसों के झुरमुट से आती पपीहे की मधुर रागिनी, कोयल और बुलबुलों की कूक से कूकते उपवन यह महोत्सव है उस परम विधाता की सृष्टि का, जो महोत्सव अविराम चल रहा है। हर ऋतु मोहक उत्सव लेकर आती है और कह कर जाती है मानव क्यों तू निराश है उठ! उत्सव मना गुनगुना खिलखिला झूम झूमकर उस परम आनन्ददाता के गीत गा। जब प्रकृति में उत्सव है फिर मानव जीवन में पर्वों का उत्सवों का उल्लास क्यों न हो ऐसा ही एक उल्लास है होली। जी हाँ, होली जो यज्ञ का अपभ्रंश है। नवीन फसल के आगमन की खुशी का महोत्सव है। समस्त भेदभाव भुलाकर गले मिलकर एक हो जाना और आनन्द सिन्धु में डूब जाना इसका सन्देश है। रवीन्द्र नाथ टगोर ने गाया था—उत्सव हमार जाति आनन्द हमार गोत्र। उत्सव ही हमारी जाति है और आनन्द ही हमारा गोत्र है। सब कुछ भूलकर आनन्द-उत्सव में मस्त हो जाना पर्व है।

वेद में कहा है—हसा मुद हसा नृत। प्रसन्नता में झूम और हसते नाचते जीवनयापन कर। जीवन में समस्याएँ हैं कठिनाइयाँ भी हैं परन्तु उन्हीं से दुःखी होते रहने से जीवन कुसुम मुरझा जाता है।

इस ऋतु में गेहूं, चना, मटर, सरसों जौ आदि के पकने की दशा में यह पर्व मनाया जाता है। रूस में फसल काटने पर किसान अपने सगे सम्बन्धियों एवं मित्रों को दावत देकर उत्सव मनाते हैं। जापान में धान की फसल कटने पर उत्सव मनाते हैं। चावल की रोटियाँ एवं मादक द्रव्यों से आनन्द मनाते हैं। इंगलैण्ड में पोल (May Pole) का उत्सव मनाया जाता है। योरोप में (St Valentine's day) सेन्ट वेलन्टाइन का दिवस मनाया जाता है।

इस प्रकार की उत्सव परम्परा होती भी है। परन्तु आज यह पर्व बड़ा विकृत रूप ले चुका है। असभ्य और अशिष्ट बन कर रंग फेंकना गरीबों के एक दो मात्र वस्त्र को रंग देकर बेकार कर देना तथा गोबर, कीचड़ तेजाब, रेत आदि प्रमत्त होकर फेंक देना मनुष्यता से नीचे गिरना है। होली के पर्व को आज शराब पीकर ऊधम मचाने वालों ने भी गन्दा कर दिया है।

रंग की आड़ में अश्लीलता भी हेय है। हमारी संस्कृति में भाभी आदि को माता की दृष्टि से देखा जाता है उनके साथ अभद्रता का व्यवहार होली की आड़ लेकर करना अधमता है सभी सभ्य जनों को ये दोष दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए। हर नौजवां को अपनी हिम्मत और शक्ति से दीन दुखियों के आंसू पोंछ खुशियों के फूल खिला न रहना चाहिए। जोश ने सच कहा है—

नवीन युग के उपासना की अभिलाषा की तुझे कसम है
तू अब नये विचारों के भगवान पैदा कर।
बहार में तो जमीन से ही बहार उग आती है
गर तू मर्द है तो खिजा में बहार पैदा कर॥

—यशपाल सुधांशु

शाहदरा में ऋषि बोधोत्सव मनाया गया

आर्यसमाज अनाज मण्डी शाहदरा में पूर्वी दिल्ली की आर्यसमाजों की ओर से ऋषि बोधोत्सव मनाया गया। सभा की अध्यक्षता श्री सूर्य देव ने की। इस अवसर पर श्री सच्चिदानन्द शास्त्री, बाल दिवाकर हंस एवं डा० धर्मपाल जी ने जनसमूह को सम्बोधित किया। सभा प्रधान श्री धर्मपाल ने कहा ऋषि दयानन्द ने एक भाषा के सूत्र में भारत को एक करने का प्रयत्न किया। भाषा का मसला अभी भी ज्यों का त्यों है। दुर्भाग्य की बात है स्वतन्त्र देश की हमारी मातृ भाषा का अभी भी एक विदेशी भाषा मुंह चिढ़ा रही है। आंग्ल भाषा का स्वर अभी भी मुखर है। हमें हिन्दी भाषा को राज सिंहासन पर बैठाने का अपना प्रयत्न जारी रखना चाहिए।

इस अवसर पर श्री सच्चिदानन्द शास्त्री ने कहा ऋषि दयानन्द ने देश की सुषुप्त आत्मा को जाग्रत करने का, अपनी सांस्कृतिक-धार्मिक अस्मिता का बोध कराने का महान तप किया। वे इस सदी के महान ऋषि थे। संसार उन्हें सदा याद करेगा। श्री सूर्यदेव ने कहा—वे एक बार जागे और फिर कभी सोये नहीं। उनके अन्दर जागरण निरन्तर बढ़ता गया। वे मानवमात्र को जगाना चाहते थे कि व्यक्ति का अज्ञान अन्धकार दूर हो और जीवन में ज्ञान की ज्योति जगे। हमें अपने ऋषि के मन्तव्यों को श्रद्धापूर्वक अपने जीवन में उतारना चाहिए। इस अवसर पर श्रीमती ईश्वर देवी चमन ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए० | प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

आर्यसमाज के महान् शिक्षाशास्त्री

प्रो० दीवानचन्द

ले०—डा० भवानीलाल भारतीय

आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री, दार्शनिक तथा लेखक प्रो० दीवानचन्द्र का जन्म १ जुलाई १८७८ को पंजाब के जेहलम जिले के मघोई नाम ग्राम मे हुआ। इनके पिता का नाम श्री नानकचन्द तथा माता का नाम वजीरदेवी था। इनकी प्रारम्भिक शिक्षा गाँव के स्कूल मे हुई, जहा से दिसम्बर १८८८ मे इन्होने प्राइमरी परीक्षा पास की। पुन मिडिल की पढाई के लिए समीपवर्ती ग्राम गोहताय मे भेजे गए। तीन वर्ष तक यहाँ पढने के अनन्तर १८९३ में गुजरावाला के मिशन स्कूल में प्रवेश लिया। गुजरावाला निवास के समय ही दीवानचन्द आर्यसमाज के सम्पर्क में आये। मार्च १८९७ में इन्होंने लाहौर जाकर हाई स्कूल की परीक्षा दी और छात्रवृत्ति सहित उत्तीर्ण हुए। इसी वर्ष वे डी ए वी कालेज लाहौर में प्रविष्ट हुए। उस समय महात्मा हंसराज कालेज के प्रिंसिपल थे एफ ए के उनके सहपाठियो में प्रो० रामदेव तथा आनन्द स्वरूप साहब जी महाराज (राधा स्वामी सम्प्रदाय के आचार्य) के नाम उल्लेखनीय हैं। एक वर्ष तक गवर्नमेण्ट कालेज लाहौर मे अध्ययन करने के उपरान्त दीवानचन्द ने डी ए वी शिक्षा सेवा में आजीवन कार्यकर्ता के रूप में प्रवेश किया। उस समय आर्यसमाज के शिक्षा कार्य हेतु समस्त जीवन समर्पित कर देने वाले व्यक्तियों को निर्वाहार्थ ७५ रुपये मासिक मिलते थे।

नवम्बर १९०५ मे दीवानचन्द ने कलकत्ता विश्वविद्यालय से दर्शन विषय लेकर एम ए की परीक्षा दी तथा उत्तीर्ण हुए [illegible] कालेज लाहौर में अब उन्हें दर्शनशास्त्र के प्रोफेसर पद पर नियुक्त किया गया। इस पद पर वे १५ वर्ष तक (१९०४ से १९ ९ तक) रहे। इसी अवधि में लाला दीवानचन्द ने आर्यसमाज के कामो में सक्रिय रूप से भाग लिया। कुछ वर्षों तक वे आर्य प्रादेशिक सभा के मुख पत्र आर्य गजट' के सम्पादक भी रहे। विभिन्न स्थानो पर प्रचारार्थ जाने का अवसर भी उन्हें मिलता रहता था।

१९१९ मे जब कानपुर में डी ए वी कालेज खुला तो प्रो० दीवान चन्द को उस का प्रथम प्रिंसिपल नियुक्त किया गया। यहां वे २१ वर्ष तक रहे। प्रो० दीवानचन्द के कार्यकाल मे कालेज का सर्वतोमुखी विकास हुआ और वह प्रांत का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शिक्षण संस्थान बन गया। कुछ समय तक वे आगरा विश्वविद्यालय के कुलपति भी रहे। १२ जुलाई १९४० को डी ए वी कालेज कानपुर के प्राचार्य पद से निवृत होकर प्रो० दीवानचन्द लाहौर चले गये। इस वर्ष के प्रारम्भ में ही उन्हें डी ए वी कालेज प्रबन्धकर्तृ सभा का प्रधान चुन लिया था। लगभग साढे तीन वर्ष तक लाहौर में रहकर उन्होने डी ए वी शिक्षण संस्थाओ का संचालन किया। १९४४ के प्रारम्भ में वे पुन कानपुर आ गये। प्रो० दीवानचन्द का अवशिष्ट जीवन कानपुर में ही व्यतीत हुआ।

प्रो० दीवानचन्द दर्शनशास्त्र के उच्चकोटि के विद्वान्, विख्यात लेखक तथा अनुभवी शिक्षा मर्मज्ञ थे। उन्होंने अपने जीवनकाल में अनेक ग्रन्थ लिखे, जिनका विवरण निम्न प्रकार है—

१. जीवन ज्योति—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधिसभा जालन्धर से प्रकाशित।
२ स्वाध्याय संग्रह—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा जालन्धर से प्रकाशित।
३ कर्मयोग।
४ महर्षि दर्शन—आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा पंजाब जालन्धर से प्रकाशित।
५ दयानन्द शतक।
६ वेद उपदेश।
७ दीपक।
८ कठ उपनिषद्।
९ प्रश्न उपनिषद्—दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार ग्रन्थमाला-२ सं० २०१९ वि०।
१० मुण्डक उपनिषद्—नानकचन्द वजीरदेवी ट्रस्ट, कानपुर से २०१४ वि० में प्रकाशित।
११ उपनिषद् दिग्दर्शन—विश्वेश्वरानन्द वैदिक संस्थान होशियारपुर से १९५९ में प्रकाशित।
१२. उपनिषत् प्रवचनमाला—दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय हिसार से प्रकाशित २०२० वि०।
१३ गीता दिग्दर्शन—नानकचन्द वजीरदेवी ट्रस्ट कानपुर से १९६१ में प्रकाशित।
१४ मानसिक चित्रावली-१—कुछ संस्मरण—नानकचन्द वजीरदेवी ट्रस्ट कानपुर, १९६० में प्रकाशित
१५. महात्मा हंसराज—नानकचन्द वजीरदेवी ट्रस्ट कानपुर से १९६४ में प्रकाशित।

उर्दू ग्रन्थ—

१ जीवन रहस्य
२ दुनिया के सौ महापुरुष
३ आर्य सिद्धान्त
४. सांख्य दर्शन
५ विचार माला।

अंग्रेजी ग्रन्थ—

1 The Arya Samaj
2. Life fever lasting स्वामी दयानन्द जन्म शताब्दी के अवसर पर नारायण एण्ड कम्पनी कानपुर से १९२५ में प्रकाशित।
3 Short studies in the Upnishads 1938.
4 Short studies in the Bhagvadgita 1950
5. Fundamentals of Religion नानकचन्द वजीरदेवी ट्रस्ट कानपुर से प्रकाशित।

प्रो० दीवानचन्द ने तर्क शास्त्र, आचार शास्त्र, तत्त्व ज्ञान आदि दर्शन शास्त्र के विभिन्न अंगों पर उपयोगी पाठ्य पुस्तकें भी लिखीं। जिनके नाम निम्न हैं—

1 Logic Deduction and Induction
नीति विवेचन
तत्त्व ज्ञान
पश्चिमी दर्शन
दर्शन संग्रह।

हुकहुकी - लुटलुटी

लेखक—स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती

कहानी पुरानी है, मगर मुझे याद दिलानी है। नदी का किनारा था, बडा प्यारा था, बालु रेत था, खरबूजों का खेत था। एक गीदड को खरबूजों के खानें को मन ललचाया मगर वहा तक नहीं पहुच पाया। कारण नदी में पानी गहरा था और खरबूजों के खेत पर रखवाले का पहरा था। जब उधर से हवा का झोंका आता, तभी मुह में पानी भर आता। एक दिन ऊँट चला आया। पानी पीकर चलना चाहा, तभी गीदड पास आया और फरमाया कि दादा जी उधर खरबूजों का खेत है। अगर आप मेरे साथ चलें तो खरबूजे खायें और आनन्द पायें। अब रात्रि है रखवाला सो रहा है, नीद में खो रहा है। चलो दोनों चलें। मुझे अपनी पीठ पर बिठा लो और भूख मिटा लो। खरबूजे खा लो। गीदड की बात सुनकर उंट के मुह में पानी भर आया, जाने को हरषाया। गीदड पीठ पर बिठा लिया, नदी में होकर चल दिया। खेत में पहुच गये खरबूजे खानें लगे। गीदड एक खरबूजे से पेट भर चुका था और ऊँट बेल समेत अपना काम कर रहा था। गीदड बोला, चलो दादा जी मेरा हुकहुकी का समय हो गया है। ऊँट बोला, अरे मुझे पेट भर लेने दो अभी हुकहुकी न लगाना। गीदड बोला, मेरा तो हुकहुकी का समय टल नहीं सकता, मैं एक क्षण भी नहीं रुक सकता और इतना कहकर हुकहुकी लगाना शुरु कर दिया। जोर से हो-हल्ला मचाया। रखवाला जागा और डण्डा उठाया। गीदड़ तो भाग गया, ऊँट दादा की खूब पिटाई हुई। ऊँट पिटकर नदी के किनारे आया। वहाँ गीदड़ खड़ा पाया और कहा, दादा जी ज्यादा चोट तो नहीं आई। जल्दी चलो नदी से पार हो जाओ। ऊँट ने नदी में प्रवेश किया। पीठ पर गीदड को बिठा लिया। नदी को बीच धार में आया। ऊँट ने फरमाया, भैया गीदड अब मेरा लुटलुटी का समय हो रहा है मैं लुटलुटी लगाता हू और तुझे सबक सिखाता हूं। गीदड घबराकर बोला, दादा जी उधर किनारे पर तो पहुचा दो, वहाँ जाकर लुटलुटी लगा दो। ऊँट बोला, लुटलुटी का समय नहीं टाल सकता। समय का ध्यान रखना जरूरी है। तुझे पार करना मेरी मजबूरी है। इतना कह कर ऊँट ने नदी की बीच धार में डुबकी लगाई। गीदड की जान नहीं बच पाई पानी में बह गया और मरते-मरते कह गया, यह मेरी करनी का ही फल है, जो मुझे भोगना पड़ा है। अगर मैं हुकहुकी न लगाता तो लुटलुटी का सामना करना नहीं आता। ऊँट दादा हरषा रहा था, गीदड बहा जा रहा था। कहानी खतम हुई। गीदड की मौत हुई। इसे कहते हैं जैसी करनी वैसी भरनी। जैसा किया वैसा पा लिया। उधर हुकहुकी का समय आया ऊँट को पिटवाया, इधर लुटलुटी ने गीदड़ को पानी में बहाया। इसलिए ठीक ही कहा है—

जैसे को तैसा मिला,
हो सीधा फिलहाल।
अपने कटु व्यवहार से,
मारा गया शृगाल॥

अर्थात् जो जिसके साथ जैसा व्यवहार करता है उसका परिणाम वैसा ही निकलता है। इसलिए हमें अपनी ही भलाई को नहीं देखना है, दूसरों की भलाई में ही अपना भला होता है।

इस मनुष्य को क्या होता है? (ततः प्र०) अर्थात् उस अन्तर्यामी परमात्मा की प्राप्ति, और (अन्तराय) उसके अविद्यादि क्लेशों तथा रोगरूप विघ्नों का नाश हो जाता है ।।१८।।

वे विघ्न नव प्रकार के हैं—(व्याधि०) एक (व्याधि) अर्थात् धातुओं की विषमता से ज्वर आदि पीड़ा का होना। दूसरा (स्त्यान) अर्थात् सत्य कर्मों में अप्रीति। तीसरा (संशय) अर्थात् जिस पदार्थ का निश्चय किया चाहे, उसका यथावत् ज्ञान न होना। चौथा (प्रमाद) अर्थात् समाधि साधनों के ग्रहण में प्रीति और उनका विचार यथावत् न होना। पांचवां (आलस्य) अर्थात् शरीर और मन में आराम की इच्छा से पुरुषार्थ छोड़ बैठना। छठा (अविरति) अर्थात् विषय सेवा में तृष्णा का होना। सातवां (भ्रान्तिदर्शन) अर्थात् उलटे ज्ञान का होना, जैसे जड़ में चेतन और चेतन में जड़ बुद्धि करना तथा ईश्वर में अनीश्वर और अनीश्वर में ईश्वर भाव करके पूजा करना। आठवां (अलब्धभूमिकत्व) अर्थात् समाधि की प्राप्ति न होना। और नवां (अनवस्थितत्व) अर्थात् समाधि की प्राप्ति होने पर भी उस में चित्त स्थिर न होना। ये सब चित्त की समाधि होने में विक्षेप अर्थात् उपासनायोग के शत्रु हैं ।।१९।।

अब इन के फल लिखते हैं—(दुःखदौर्म०) अर्थात् दुःख की प्राप्ति, मन का दुष्ट होना, शरीर के अवयवों का कांपना, श्वास और प्रश्वास के अत्यन्त वेग से चलने में अनेक प्रकार के क्लेशों का होना, जो कि चित्त को विक्षिप्त कर देते हैं। ये सब क्लेश अशान्त चित्त वाले को प्राप्त होते हैं, शान्त चित्त वाले को नहीं ।।२०।

और उनके छुड़ाने का मुख्य उपाय यही है कि (तत्प्रतिषेधा०) जो केवल एक अद्वितीय ब्रह्मतत्त्व है उसी में प्रेम, और सर्वदा उसी की आज्ञापालन में पुरुषार्थ करना है, वही एक उन विघ्नों के नाश करने को वज्ररूप शस्त्र है, अन्य कोई नहीं। इसलिए सब मनुष्यों को अच्छे प्रकार प्रेमभाव से परमेश्वर उपासना योग में नित्य पुरुषार्थ करना चाहिए, कि जिससे वे सब विघ्न दूर हो जावें ।।२१।।

मोक्ष-मार्गदर्शन

(ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका से)

—पुष्करलाल आर्य

★

आगे जिस भावना से उपासना करने वाले को व्यवहार में अपने चित्त को प्रसन्न करना होता है, सो कहते हैं—

अर्थात् इस संसार में जितने मनुष्य आदि प्राणी सुखी हैं, उन सबों के साथ मित्रता करना। दुखियों पर कृपादृष्टि रखनी। पुण्यात्माओं के साथ प्रसन्नता। पापियों के साथ उपेक्षा, अर्थात् न उनके साथ प्रीति रखना और न वैर ही करना। इस प्रकार के वर्तमान से उपासक के आत्मा में सत्यधर्म का प्रकाश और उसका मन स्थिरता को प्राप्त होता है ।।२२।।

(प्रच्छर्दन०) जैसे भोजन के पीछे किसी प्रकार से वमन हो जाता है वैसे ही भीतर के वायु को बाहर निकालकर सुखपूर्वक जितना बन सके उतना बाहर ही रोक दे। पुन धीरे-धीरे भीतर लेके पुनरपि ऐसे ही करे। इसी प्रकार बारम्बार अभ्यास करने से प्राण उपासक के वश में हो जाता है और प्राण के स्थिर होने से मन, मन के स्थिर होने से आत्मा भी स्थिर हो जाता है। इन तीनों के स्थिर होने के समय अपने आत्मा के बीच में जो आनन्दस्वरूप अन्तर्यामी व्यापक परमेश्वर है, उसके स्वरूप में मग्न हो जाना चाहिए। जैसे मनुष्य जल में गोता मारकर ऊपर आता है, फिर गोता लगा जाता है, इसी प्रकार अपने आत्मा को परमेश्वर के बीच में बारम्बार मग्न करना चाहिए ।।२३।।

(योगाङ्गानु०) आगे जो उपासना योग के आठ अंग लिखते हैं, जिनके अनुष्ठान से अविद्यादि दोषों का क्षय, और ज्ञान के प्रकाश की वृद्धि होने से जीव यथावत् मोक्ष को प्राप्त हो जाता है ।।२४।।

(यमनियमा०) अर्थात् एक (यम) दूसरा (नियम), तीसरा (आसन) चौथा (प्राणायाम), पांचवां (प्रत्याहार), छठा (धारणा), सातवां (ध्यान) और आठवां (समाधि)। ये सब उपासना योग के अंग कहाते हैं और आठ अंगों का सिद्धान्तरूप फल संयम है ।।२५।।

(तत्राहिंसा०) उन आठों में से पहला 'यम' है। सो पांच प्रकार का है—एक (अहिंसा) अर्थात् सब प्रकार से, सब काल में, सब प्राणियों के साथ, वैर छोड़ के प्रेम प्रीति से वर्तना। दूसरा (सत्य) अर्थात् जैसा अपने ज्ञान में हो, वैसा ही सत्य बोले, करे और माने। तीसरा (अस्तेय) अर्थात् पदार्थ वाले की आज्ञा के बिना किसी पदार्थ की इच्छा भी न करना, इसी को चोरीत्याग कहते हैं। चौथा (ब्रह्मचर्य) अर्थात् विद्या पढ़ने के लिए बाल्यावस्था से लेकर सर्वथा जितेन्द्रिय होना, और पच्चीसवें वर्ष से लेकर अड़तालीस वर्ष पर्यन्त विवाह का करना, परस्त्री, वेश्या आदि का त्यागना, सदा ऋतुगामी होना, विद्या को ठीक-ठीक पढ़ कर सदा पढ़ाते रहना, और उपस्थ इन्द्रिय का सदा नियम करना। पांचवां (अपरिग्रह) अर्थात् विषय और अभिमानादि दोषों से रहित होना। इन पांचों का ठीक ठीक अनुष्ठान करने से उपासना का बीज बोया जाता है ।।२६।।

(शौच०) पहिला (शौच) अर्थात् पवित्रता करनी सो भी दो प्रकार की है—एक भीतर की, और दूसरी बाहर की। भीतर की शुद्धि धर्माचरण, सत्यभाषण, विद्याभ्यास, सत्सग आदि शुभगुणों के आचरण से होती है। और बाहर की पवित्रता जल आदि से शरीर स्थान मार्ग वस्त्र खाना पीना आदि शुद्ध करने से होती है। दूसरा (सन्तोष) जो सदा धर्मानुष्ठान से अत्यन्त पुरुषार्थ करके प्रसन्न रहना और दुःख में शोकातुर न होना। किन्तु आलस्य का नाम सन्तोष नहीं है। तीसरा (तप.) जैसे सोने को अग्नि में तपा कर निर्मल कर देते हैं, वैसे ही आत्मा और मन को धर्माचरण और शुभगुणों के आचरणरूप तप से निर्मल कर देना। चौथा (स्वाध्याय) अर्थात् मोक्षविद्याविधायक वेदशास्त्र का पढ़ना-पढ़ाना और ओंकार के विचार से ईश्वर का निश्चय करना-कराना। और पांचवां (ईश्वरप्रणिधान) अर्थात् सब सामर्थ्य, सब गुण, प्राण, आत्मा और मन के प्रेमभाव से आत्मादि सत्य द्रव्यों का ईश्वर के लिए समर्पण करना। ये पांच नियम भी उपासना का दूसरा अंग हैं ।२७।।

अब पांच यम और पांच नियमों के यथावत् अनुष्ठान का फल कहते हैं—(अहिंसाप्र०) अर्थात् जब अहिंसा धर्म निश्चय हो जाता है, तब उस पुरुष के मन से वैरभाव छूट जाता है, किन्तु उसके सामने व उसके सग से अन्य पुरुष का भी वैरभाव छूट जाता है ।।२८।।

(सत्यप्र०) तथा सत्याचरण का ठीक-ठीक फल यह है कि जब मनुष्य निश्चय करके केवल सत्य ही मानता, बोलता और करता है, तब जो जो योग्य काम करता और करना चाहता है, वे वे सब सफल हो जाते हैं ।।२९।।

चोरीत्याग करने से यह बात होती है कि (अस्तेय०) अर्थात् जब मनुष्य अपने शुद्ध मन से चोरी के छोड़ देने की प्रतिज्ञा कर लेता है, तब उसको सब उत्तम पदार्थ यथायोग्य प्राप्त होने लगते हैं। और चोरी इसका नाम है कि मालिक की आज्ञा के बिना अधर्म से उसकी चीज को कपट से वा छिपाकर ले लेना ।।३०

(ब्रह्मचर्य०) ब्रह्मचर्य सेवन से यह बात होती है कि जब मनुष्य बाल्यावस्था में विवाह न करे, उपस्थ इन्द्रिय का संयम रखे, वेदादि शास्त्रों को पढ़ता-पढ़ाता रहे, विवाह के पीछे भी ऋतुगामी बना रहे और परस्त्रीगमन आदि व्यभिचार को मन, कर्म, वचन से त्याग देवे, तब दो प्रकार का वीर्य अर्थात् बल बढ़ता है—एक शरीर का, दूसरा बुद्धि का। उसके बढ़ने से मनुष्य अत्यन्त आनन्द में रहता है ।।३१।।

(अपरिग्रहस्थै०) अपरिग्रह का फल यह है कि जब मनुष्य विषयासक्ति से बचकर सर्वथा जितेन्द्रिय रहता है, तब मैं कौन हूं? कहां से आया हूं? और मुझ को क्या करना चाहिए? अर्थात् क्या काम करने से मेरा कल्याण होगा? इत्यादि शुभ गुणों का विचार उसके मन में स्थित होता है। ये ही पांच यम कहाते हैं। इनका ग्रहण उपासकों को अवश्य करना चाहिए ।।३२।।

(शेष पृष्ठ ६ पर)

धर्म क्या है ?

—पं० बुद्धदेव विद्यालंकार (स्वामी समर्पणानन्द जी)

सूर्य उदय हुआ है या नहीं, यह बात कहकर बतानी नहीं पड़ती। प्रकाश और गर्मी स्वयं इस बात का परिचय देते हैं कि सूर्योदय हो गया है। इसी प्रकार यदि कोई मनुष्य धर्मात्मा हो तो उसका परिचय यह कहकर नहीं दिया जा सकता कि वह मनुष्य धर्मात्मा है, क्योंकि उस ने सौ बार नाम का जाप किया है, हजार बार गायत्री जपी है, एवं वह नित्य धर्म-पुस्तक का पाठ करता है। कोई मनुष्य सचमुच धर्मात्मा है या नहीं इसका पता इस बात से लगता है कि उसके चारों ओर रहने वालो पर उसके व्यवहार से कोई सुखदायक प्रभाव पड़ता है या नहीं। अपने चारों ओर की अवस्थाओं मे परिवर्तन धर्मात्मा-रूपी सूर्य की धूप है। बस, यदि हम यह जानना चाहें कि हम धर्मात्मा हैं या नहीं, तो इसे हम अपने पूजा-पाठ से नहीं माप सकते। इसे हम अपने चारों ओर होने वाले सुखदायक परिवर्तन से जान सकते हैं। लैम्प मे प्रकाश है या नहीं, इसे हम इस बात से नहीं नाप सकते कि उसमें पूरा तेल भरा है या नहीं। लैम्प के प्रकाश का माप केवल इस बात से हो सकता है कि उसके चारों ओर का अन्धकार दूर हुआ है या नहीं। सूर्य बिना तेल बत्ती के प्रकाशमान है, एवं बुझा हुआ दीपक तेल-बत्ती के होते हुए भी प्रकाशहीन है। इसी प्रकार कई मनुष्य पूजा-पाठ के बिना भी धर्मात्मा हैं, वे सूर्यवत् हैं, और कई मनुष्य पूजा-पाठ करते रहने पर भी धर्म-हीन हैं। वे पाखण्डी हैं। परन्तु साधारण मनुष्यों को लैम्प के समान प्रकाश उत्पन्न करने के लिए पूजा-पाठ रूपी तेल-बत्ती की आवश्यकता रहती है। जो मनुष्य साधारण होते हुए भी पूजा-पाठ से तथा सत्संग से हीन है उनका दीया भी बुझा रहता है। यह बात दूसरी है कि उनके दिये बुझने का कारण पाखण्ड का धुआं नहीं, अभिमान की आंधी है। दिया धुए से बुझे चाहे आंधी से—इससे उसके प्रकाशहीन होने में कुछ अन्तर नहीं आता। जिस मुहल्ले में तुम रहते हो यदि उसकी नालियाँ दुर्गन्ध-युक्त हैं और चारों ओर कीचड सड रहा है, मच्छरों की बस्तियाँ बस रही हैं, लोग मैले-कुचैले, अनपढ़, रोगों के मारे और निर्धनता के सताये हुए हैं और तुम इन अवस्थाओं में परिवर्तन करने के लिए कुछ नहीं कर रहे हो तो मत समझो तुम धर्मात्मा हो। चाहे तुम कितनी भी लम्बी समाधि लगाते हो, कितना भजन-कीर्तन करते हो, कितने घण्टे-घड़ियाल बजाते हो और कितनी भी सामग्री फूक देते हो, तो भी तुम धर्मात्मा नहीं हो। यदि तुम्हारे मन्दिर की आरती ने, तुम्हारी लम्बी सन्ध्याओं ने और तुम्हारी पांच नमाजों ने तुम्हारी आँखों को गरीबों का दुःख देखने के लिए, तुम्हारे कानों को उनकी दर्द-भरी आहें सुनने के लिए और तुम्हारे हाथों को उनके कष्ट-निवारण के लिए विवश नहीं किया तो तुम आँखें रखते भी अन्धे हो, कान रखते भी बहरे हो, हाथ रखते भी लूले हो। संसार में आज तक जितने भी महात्मा धर्म का प्रचार करने आये वह इस ही समवेदना की भावना का प्रकाश तुम्हारे दिये-बत्ती में जलाने आये थे। पादरी लोग जब कहते हैं कि मसीह ने अन्धों को आँखें दीं, बहरों को कान दिये, लूले लंगड़ों को हाथ-पैर दिये, तो वह उस महात्मा के कारनामों को ठीक रूप से पेश नहीं करते। संसार के सभी महात्माओं ने अन्धों को आँखें दीं, बहरों को कान दिये, लूले लंगड़ों को हाथ-पैर दिये। पर हम अभागे संसार ने काम, क्रोध, मोह, लोभ, आलस्य, प्रमाद आदि के घोर विष से अपने आपको अन्धा, बहरा लूला, लंगड़ा बना डाला। जिस समय महात्मा पुरुषों की प्रेरणा से जागृत हुई संवेदना की भावना हमें अपने चारों ओर फैली हुई बिगड़ी अवस्था को परिवर्तित करके, इस धरती को साफ सुथरी और आनन्द-भरी बनाने के लिए कटिबद्ध करती है, उस समय हमारी खोई हुई आँखें वापिस मिल जाती हैं, हमारे बहरे कान सुनने लगते हैं, और हमारे कटे हुए हाथ-पैर फिर हरे हो जाते हैं। बस, जहाँ यह अपने चारों ओर की अवस्था को सुखमय दशा में परिवर्तन करने की प्रबल भावना जीती है, वही धर्म है। यही धर्म का स्वरूप है। ●

आर्यसमाज क्या करे ?

—सुरेशचन्द्र वेदालंकार, एम० ए० एल० टी०

'आर्य' शब्द की बड़ी लम्बी-चौड़ी व्याख्याएँ की जाती हैं। उन व्याख्याओं में अतिशयोक्ति भी नहीं है। निरुक्त के अनुसार 'ईश्वरपुत्र' को आर्य कहते हैं। ईश्वर के पुत्र वैसे तो सभी हैं, पर जिसमें विशेष रूप से दैवी और ईश्वरीय गुण वीरता, उदारता, शक्तिमत्ता, गति-शीलता आदि होते हैं, वह ईश्वर पुत्र है। वेद, वाल्मीकि रामायण, विदुर नीति, चाणक्य नीति, कौटिल्य अर्थशास्त्र, धम्मपद, शब्दकल्पद्रुम आदि भारतीय ग्रन्थों और अंग्रेजी साहित्यकारों ने भी इसके अनेक अर्थ लिखे हैं। अरविन्द योगी ने तो यहां तक लिख दिया है कि मानवीय भाषा में अन्य कोई शब्द इतना पवित्र इतिहास नहीं रखता है।

परन्तु 'आर्य' शब्द की इस व्यापक व्याख्या की ओर न जाकर 'आर्य' शब्द के धात्वर्थ की ओर जाना चाहता हूँ। आर्य शब्द व्याकरण में 'ऋ गतौ' इस धातु से बना है जिसके अर्थ ज्ञान, गमन और प्राप्ति हैं। जिस मनुष्य का ज्ञान निर्दोष और उसके अनुकूल आचरण हो तो वह मनुष्य 'आर्य पद' का अधिकारी है। वास्तव में आर्य पुरुष वह है जिसका जीवन क्रिया-शील है जो अकर्मण्य नहीं है। वह यह मानता है कि आलस्य और और उपेक्षा मनुष्य के नाश का कारण होता है और वह मनुष्य का सबसे बड़ा दुश्मन है। इसी तरह आर्यसमाज वह समाज है जो कर्मण्य है, गतिशील है। समाज में कर्मण्यता और गतिशीलता का तात्पर्य है कि अपने चारों ओर फैली हुई रूढ़ियों, अन्धविश्वासों और अन्याय तथा भूलों से राज्य को बचाकर, समाज को बचाकर उन्हें प्रकाश और सच्चाई की ओर ले जाए। इस दृष्टि से आर्यसमाज को आज देश और समाज की परिस्थितियों में क्या करना चाहिए, हमें सोचना है।

आज देश फूट, साम्प्रदायिकता और चारों ओर से आक्रमण की स्थिति में है।

आर्यसमाज को गतिशील और सच्चे अर्थों में आर्य बनने के लिए और देश की एकता के लिए प्रयत्न करना चाहिए। मैं निम्न बातों की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ—

अब तो देश की अखण्डता को नष्ट करने के प्रयत्न इस सीमा तक पहुंच चुके हैं कि पहले जहां भारत के मुसलमानों ने मुस्लिम जातीयता के नाम पर भारत का अंगभंग करके पाकिस्तान का निर्माण किया, जहाँ सिखों ने सिख जातीयता के नाम पर सिखिस्तान की मांग की वहां अब द्रविड़स्थान, क्रिश्चियनस्थान, अछूत-स्थान, बौद्धस्थान, मुस्लिमस्थान, जाटस्थान, ब्राह्मणस्थान, आदि-वासीस्थान के गगनभेदी नारे आकाश मे गूंज रहे हैं और एक के बाद दूसरा नारा जोर पकड़ता जा रहा है। आन्ध्र में तेलगुदेशम' का बीज बोया जा चुका है और वहां के मुख्य-मन्त्री ने तमिलनाडु के मुख्यमन्त्री को अपना बड़ा भाई मान लिया। उड़ीसा में 'जगन्नाथदेशम्' की नींव पड़ चुकी है। पर आज का राष्ट्रीय नागरिक जो सम्पूर्ण देश को एक मानता है, जो 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' में विश्वास रखता है, जो साम्प्रदायिकता' जातीयता का विरोध कर रहा है, जो क्षेत्रीयवाद के विरोध में आदर्श माँ के रूप में भारतमाता की कल्पना करता है, निरीह और निष्क्रिय होकर खड़ा है। क्या दिल्ली एवं भारत की आर्यसमाजें ऐसे लोगों का संगठन एवं उनमें उत्साह नहीं भर सकतीं ?

आर्यसमाज सोचे कि पाकिस्तान क्यों बना ? क्या यह हमारे राज-नीतिक दिवालियेपन का प्रमाण न था ? यह विभाजन की बुद्धि एवं संस्कार हम में इतने दृढ़ हो गए कि हम ने अन्तर्विभाजन की मांगें प्रारम्भ कर दीं। कश्मीर का विभाजन हुआ और अब पुनर्वास विधेयक, वहाँ लागू ३७० धारा आदि कश्मीर को भारत से अलग करने की दिशा के पग नहीं हैं क्या ? (क्रमश)

वार्षिकोत्सव सम्पन्न

आर्यसमाज बांकनेर का वार्षि-कोत्सव २७ से २८ फरवरी तक धूम-धाम से मनाया गया। २७ फरवरी को ग्रामीण युवकों को शारीरिक उन्नति के लक्ष्य की ओर चलने के लिए खेलकूद प्रतियोगिता का आयो-जन किया, जिसका उद्घाटन डा० धर्मपाल, सभा प्रधान ने किया। उन्होंने अपने भाषण में स्वास्थ्य सबंधी आवश्यक बातें बतायीं। इस अवसर पर अनेक ग्रामीण गण्यमान्य जन उपस्थित थे। यह आर्यसमाज युवकों को ऋषि दयानन्द की मान्य-ताएं अपनाने का अच्छा प्रयत्न कर रही है। आर्यसमाज ने ग्राम में कुश्ती आदि के लिए अखाड़े भी चलाए हैं।

'वेदों के राजनीतिक सिद्धान्त' पर विचार विमर्श

लेखक—डॉ० ज्वलन्त कुमार शास्त्री, एम० ए०, पी एच० डी०
प्राध्यापक संस्कृत विभाग, रणवीर रणञ्जय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
अमेठी (उ० प्र०)

(गतांक से आगे)

हम यह नहीं समझ सके कि विद्युत् और नर का बिजली और मनुष्य अर्थ करने में क्या आपत्ति हुई कि वेदों में रूढ़ि शब्द और रूढ़िवाद परक अर्थ मानने की आवश्यकता पड़ गई। आचार्य जी के उपर्युक्त दो उद्धरण उनके ग्रन्थ की भूमिका में लिखी गई स्वयं उनकी मान्यताओं के भी विरुद्ध हैं। ऋषि दयानन्द वेद के एक शब्द को भी रूढ़ि नहीं मानते। विद्युत् शब्द का बिजली अर्थ उसके यौगिक अर्थ(द्युत दीप्तौ= चमकने वाली) के आधार पर ही किया जाता है। नर शब्द निम्न धातुओं से बनता है—(१) नृ नय (ले जाना) क्र्यादि गण, परस्मैपदी नृणाति पाणिनि कृत धातुपाठ।(२) नृ नये(भ्वादि, नरयति) द्र०—क्षीरतरंगिणी, पृ० ११६, द्वितीयावृत्ति, रा० क० द्र०, वि० सं० २०४२। (३) नृ नये—विनये (भ्वादि, नरति, नरयति-विनीतो भवति नर, नृ, नरक., नर्ता—चत्वारो विनये) द्र० काशकृत्स्न धातुव्याख्यानम् पृ०१०२, भारतीय प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान अजमेर, वि० सं० २०२२। अतः नर का अर्थ नेता, ले चलने वाला और विनीत पुरुष हो सकता है। साथ ही नर का मनुष्य अर्थ करना भी रूढ़िवाद या रूढ़ार्थ नहीं है। लौकिक साहित्य में भी जब शक्र, इन्द्र और पुरन्दर शब्द एक अर्थ में प्रयुक्त होते हुए भी इनके प्रवृत्ति के निमित्त भेद होते ही हैं। जैसा कि आचार्य धनिक ने धनञ्जय कृत दशरूपक की अवलोक टीका में लिखा है—"एकस्मिन्नर्थे प्रवर्त्तमानस्य शब्दत्रयस्य इन्द्र पुरन्दर शक्र इतिवत् प्रवृत्तिनिमित्त-भेदो दर्शित।" इसी प्रकार नर, मनुष्य मानव मर्त्य आदि शब्द एक अर्थ में प्रवृत्त होते हुए भी इनके प्रवृत्ति के निमित्त भेद तो होंगे ही। फिर वैदिक शब्द तो सभी आचार्यों के मत में यौगिक (धातुज) हैं फिर इन्हें (एकाध शब्द को भी) रूढ़ि कैसे माना जा सकता है? जैसा कि निरुक्त शास्त्र के प्रवक्ता यास्क आदि और व्याकरण शास्त्र के प्रवक्ता शाकटायन आदि का मत है—"नामानि सर्वाण्याख्यातजानि इति शाकटायनो नैरुक्तसमयश्च।" (निरुक्त १।१२)। 'नाम च धातुजमाह निरुक्ते व्याकरणे शकटस्य च तोकम्।" (महाभाष्यम् ३।३।१)।

ऋग्वेद १०।१२५ वागाम्भृणी सूक्त के सम्बन्ध में आचार्य जी लिखते हैं—'हम प्रचलित वागाम्भृणी को सूक्त का देवता मानने के लिए बाधित नहीं हैं। क्योंकि यह पद सूक्त में नहीं आता है। हमारी सम्मति में सूक्त का देवता 'राष्ट्री सगमनी' होना चाहिए। पर 'वागाम्भृणी' का अर्थ इस सूक्त में (परमेश्वर) नहीं लिया जा सकता। क्योंकि वागाम्भृणी का अर्थ निर्णय करने में हमें उसके सूक्तगत वर्णन को भी ध्यान में रखना होगा। इसलिए वागाम्भृणी ऐसी वाणी होनी चाहिए जिसमें 'राष्ट्री सगमनी' पदों का अर्थ भी संगत हो सके। अर्थात् वह ऐसी वाणी होनी चाहिए जो 'राज्य सम्बन्धी इकट्ठा होने की जगह में' बोली जाती हो। परमात्मा की वाणी में यह बात संगत नहीं हो सकती। अतः हमें वागाम्भृणी का अर्थ बहुतों की वाणी (संख्यागत महत्व में) ऐसा करना होगा। बहुतों की वाणी राष्ट्र के लोगों की वाणी ही हो सकती है।" (खण्ड १, पृ० २२१, २२०)।

यह सम्पूर्ण सन्दर्भ ही विचारणीय है। किसी मन्त्र या सूक्त का देवता होने के लिए उस देवता वाचक शब्द का मन्त्रों में उल्लेख होना आवश्यक नहीं है। जैसे ऋग्वेद १०।१९० के अघमर्षण सूक्त में अघमर्षण या भाववृत्त शब्द नहीं है पुनरपि इस सूक्त को अघमर्षण सूक्त कहा जाता है और इस सूक्त का देवता भाववृत्त है।

'राष्ट्री और सगमनी' शब्द का अर्थ क्रमशः धात्वर्थ के आधार पर (राज्, ष्ट्रन्, ङीप्) 'प्रकाशित करने वाली' और (सम्, गम्लृ, ल्युट, ङीप्) 'मेल कराने वाली' भी हो सकता है। कुछ आचार्यों ने राष्ट्री का अर्थ 'विश्व सम्राज्ञी' अर्थात् परमात्मा और सगमनी का अर्थ (ऐश्वर्यों को, लोकों को) प्राप्त कराने वाली' किया है। (द्र०—चतुर्वेद भाष्यकार स्व० प० जयदेव विद्यालंकार का ऋग्वेद भाष्य भाग ७, पृ० ५१८, प्रथमावृत्ति)। इस प्रकार वागाम्भृणी का अर्थ उस महान् प्रभु की वाणी (गुणगत और परिमाणगत महत्व में) हो सकता है। डा० रामनाथ वेदालंकार ने भी इस मन्त्र का परमेश्वर परक अर्थ किया है (द्र०—वेद मञ्जरी पृ० २३७, प्रथम संस्करण)। क्या इन विद्वानों के परमेश्वर परक अर्थ गलत हैं?

वेदार्थ मे ऊहा और तर्क अनन्य सहायक होते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है। किन्तु पूर्वकृत आचार्यों द्वारा किए गए अर्थों और वैदिक प्रमाणों को सर्वथा अनदेखा करके केवल तर्काधारित अर्थ प्रामाणिक नहीं हो सकता। ऐसी स्थिति में अर्थ बहुधा असंगत भी हो जाता है। यथा आचार्य जी ने प्रस्तुत ग्रन्थ के दूसरे खण्ड के पृ० १७१ पर 'आवो रथो अश्विना...' (ऋ० १०।१।११८।१) तथा 'त्रिबन्धुरेण त्रिवृता' (ऋ० १।११८।२) मन्त्रों को उद्धृत किया है। प्रथम मन्त्र में 'त्रिबन्धुर' का अर्थ करते हुए आचार्य जी लिखते हैं—'त्रिबन्धुर शब्द का क्या भाव है यह चिन्तनीय है। ऊपर उड़ते हुए विमान के तीन प्रधान अंग—दो पक्ष और एक धड़ ही दिखते हैं। सम्भवतः इस विचार से उसे त्रिबन्धुर कहा गया है।' (खण्ड २, पृ० १७७-१७८)

यहाँ इस मन्त्र में 'त्रिबन्धुर' शब्द का अर्थ रथ में सारथी के बैठने का तीन स्थान है, जैसा कि महाभारत में लिखा है—

अन्ये छत्रं वरूथं च
बन्धुरं च तथा परे।
गन्धर्वा बहुसाहस्रा-
स्तिलशो व्यधमन् रथम्॥

अर्थ– हजारों संख्या वाले गधर्वों ने रथ के टुकड़े-टुकड़े उड़ा दिए। किन्हीं ने छत्र छोड़ दिया, किन्हीं ने वरूथ छत्र के ऊपर के भाग को तोड़ दिया, अन्यों ने बन्धुर-सारथी के बैठने के स्थान को नष्ट कर दिया।

इस प्रकार वेदों के राजनीतिक सिद्धान्त के थोड़े से स्थलों पर इस लेख में मैंने अपने विचार प्रस्तुत किये हैं। आशा है आचार्य जी और अन्य आर्य वैदिक विद्वान् इस पर गम्भीरता से विचार करेंगे।

आर्यसमाज सूखा राहत केन्द्र

गत ३ वर्ष से उड़ीसा में भयंकर अकाल की स्थिति है। भूख से मौतों की संख्या बढ़ती जा रही है। इस दुरवस्था से लोगों की रक्षा करने के लिए उड़ीसा में आर्यसमाज की तरफ से अकाल सहायता केन्द्र गत नवंबर १९८७ से प्रादेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के तथा अन्य समाजों के सहयोग से गुरुकुल आश्रम आमसेना के माध्यम से चलाये जा रहे हैं।

इस केन्द्र का विधिवत् उद्घाटन गुरुकुल आमसेना के महोत्सव के अवसर पर ८ फरवरी को श्री स्वामी दिव्यानन्द जी की अध्यक्षता में इस क्षेत्र के सांसद श्री जगन्नाथ पटनायक ने किया। श्री महात्मा प्रेम प्रकाश जी धूरी, श्री देव शर्मा जी वानप्रस्थी आदि ने ५०० लोगों को अपने हाथों से अन्न वितरण किया। बी० डी० ओ० कोमना एवं बी०डी० ओ० बोडेन को १००० से अधिक नयी साड़ियाँ व धोती उनके क्षेत्र में बाँटने के लिए दी गयीं। सांसद श्री जगन्नाथ पटनायक के साथ श्री ब्र० वीरेन्द्र कुमार जी १०० धोतियाँ, १०० साड़ियाँ बाँटकर आये।

इतने विशाल स्तर पर सहायता कार्य देखकर उत्सव में आये विद्वानों एवं आर्य जनता ने अत्यन्त हर्ष एवं आश्चर्य प्रकट किया। और श्री स्वामी धर्मानन्द जी को अनेकशः धन्यवाद दिया। इस सहायता कार्य पर लगभग ७० हजार रु० खर्च हो चुके हैं। प्रादेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली का इस कार्य में विशेष सहयोग मिल रहा है। इसे आगामी सितम्बर ८८ तक चलाना है। आशा है सभी दानी महानुभाव इस कार्य में मुक्त हस्त से सहयोग करेंगे।

वामदेव आर्य
मुख्याध्यापक
गुरुकुल आश्रम, आमसेना
खरियार रोड, कालाहाडी

ऋषि बोधोत्सव एवं सीताष्टमी पर्व

प्रांतीय आर्य महिला सभा दिल्ली राज्य के तत्वावधान मे

दिनांक : ७ मार्च १९८८ सोमवार
स्थान : दीवान हाल आर्यसमाज चांदनी चौक
समय : प्रात: ११ बजे से साय ५ बजे तक

प्रिय धर्म प्रेमी बहिनो आपको सहर्ष सूचित किया जाता है कि क्रांति के अग्रदूत महर्षि दयानन्द सरस्वती का बोध दिवस तथा माता सीता की अष्टमी का पुनीत पर्व मान्य बहिन प्रभात शोभा जी पण्डिता की अध्यक्षता मे सम्पन्न होने जा रहा है। आशा है आपके स्नेह सहयोग से सफल होगा। यथासमय अधिक से अधिक संख्या में पधार कर धर्म लाभ उठायें और पर्व की शोभा बढ़ाय।

।। कार्यक्रम ।।

यज्ञ : ब्रह्मा श्रीमती शान्ति देवी जी अग्निहोत्री
ध्वजारोहण श्रीमती तारा जी वैद
ओ३म् की व्याख्या श्रीमती सावित्री देवी जी दीवान हाल
ध्वज गीत बहिनों द्वारा

आर्य कन्या गुरुकुल राजेन्द्र नगर की छात्राओं द्वारा वेद गान और स्वागत गीत। अशोक विहार मंडली, गुणवती तथा कृष्णा चड्ढा का भजन स्वागत भाषण सरला जी महता (प्रधाना प्रांतीय आर्य महिला सभा)
मुख्य अतिथियों का अभिनन्दन
श्रीमती राजेन्द्र कुमारी वाजपेयी (समाज कल्याण राज्य मन्त्री)
श्रीमती किरण बेदी (पुलिस उप कमिश्नर)
श्रीमती निर्मल कपूर (धर्मपत्नी उपराज्यपाल)
श्रीमती सुन्दरवती नवल प्रभाकर (एम० पी०)
आशीर्वाद स्वामी आनंद बोध जी सरस्वती
(प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा)
महिला सम्मेलन अध्यक्षा प्रभात शोभा
उद्घाटन भाषण ऊषा शास्त्री
भाषण राजेन्द्र कुमारी वाजपेयी, किरण बेदी, सुन्दरवती नवल प्रभाकर।
अध्यक्षीय भाषण

श्रीमती सरला महता (प्रधाना)
श्रीमती प्रकाश आर्या (मन्त्रिणी)

४७ परिवारों के २२१ ईसाई वैदिक धर्म में

८ फरवरी को गुरुकुल आमसेना के महोत्सव पर १५ परिवारों के ४१ ईसाई तथा १० फरवरी को ग्राम टुंगी बन्दली (सम्बलपुर) में ४२ परिवारों के १८० ईसाइयों ने पुन वैदिक धर्म मे प्रवेश किया। इस अवसर पर श्री महात्मा प्रेम प्रकाश जी धूरी, श्री स्वामी ओमानन्द जी हरिद्वार, श्री वानप्रस्थी देव शर्मा जी दयानन्द मठ दीना नगर आदि अनेक साधु-संन्यासी इन्हें आशीर्वाद देने के लिए उपस्थित थे। संस्कार समारोह अत्यन्त उल्लासमय वातावरण में श्री प० विधिकेशन शास्त्री ने कराया। ग्राम टुंगी बन्दली में ईसाई प्रचारकों ने बहुत बाधा डालने की चेष्टा की परन्तु ग्रामवासियों के प्रयत्न से उनका षड्यन्त्र असफल हो गया। ध्यान रहे इस समारोह का आयोजन ठीक चर्च के सामने उत्साही ग्रामवासियों ने किया था।

ध्यान रहे गत कई वर्ष से शुद्धि का यह आन्दोलन श्री स्वामी धर्मानन्द जी सरस्वती प्रधान, उत्कल आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रयत्न और पुरुषार्थ से चल रहा है। इस महत् कार्य में सार्वदेशिक सभा के प्रधान पूज्य स्वामी आनन्द बोध जी, उप मन्त्री पृथ्वीराज जी शास्त्री, श्री महात्मा प्रेम प्रकाश जी धूरी आदि का पूर्ण आशीर्वाद एवं सहयोग मिल रहा है।

वामदेव आर्य
मुख्याध्यापक
गुरुकुल आश्रम, आमसेना
खरियार रोड, कालाहांडी

नेपाल में विश्व हिन्दू सम्मेलन का विराट आयोजन

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री रामाज्ञा वैरागी ने नेपाल में आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार की सम्भावनाओं पर आवश्यक जानकारी प्राप्त करने के लिए नेपाल का दौरा किया। इस क्रम में आप ने विश्व हिन्दू संघ के अध्यक्ष श्री नागेन्द्र प्रसाद रिजाल (नेपाल के भू०पू० प्रधानमन्त्री) से सम्पर्क भी स्थापित किया। रिजाल सम्प्रति २५ से २८ मार्च, ८८ तक आयोजित नेपाल में होने वाले विश्व हिन्दू सम्मेलन के व्यापक आयोजन में अपने सहकर्मियों के साथ अहर्निश संलग्न हैं। उन्होंने ६० देशों को आमन्त्रित किया है, जिसमें ४० देशों के प्रतिनिधियों के आने की स्वीकृति प्राप्त हो चुकी है। हजारों प्रतिनिधि सम्मिलित होंगे। सम्मेलन का उद्घाटन २५ मार्च को महाराजाधिराज वीरेन्द्र वीरविक्रमशाह देव के यशस्वी कर-कमलों द्वारा सम्पन्न होगा। सम्मेलन में वर्तमान अनेक महत्वपूर्ण विषयों पर गम्भीरता से विचार होगा। सभी अपेक्षित कलौ युगे के अनुसार आज विश्वभर के हिन्दुओं को संगठित होकर अपने अस्तित्व एवं संस्कृति की रक्षा के लिए सन्नद्ध होने की परम आवश्यकता है।

सर्वेन्द्र शास्त्री
(सहमन्त्री सभा)
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
नया टोला, पटना-४

मोक्ष-मार्ग दर्शन

(पृष्ठ ३ का शेष)

परन्तु यमों का नियम सहकारी कारण है, जो कि उपासना का दूसरा अंग कहाता है, और जिसका साधन करने से उपासक लोगों का अत्यन्त सहाय होता है। सो भी पांच प्रकार का है। उनमें से प्रथम शौच का फल लिखा जाता है—

(शौचात्स्वा०) पूर्वोक्त दो प्रकार के शौच करने से भी जब अपना शरीर और उसके सब अवयव बाहर भीतर से मलीन ही रहते हैं, तब औरों के शरीर की भी परीक्षा होती है कि सबके शरीर मल आदि से भरे हुए हैं। इस ज्ञान से वह योगी दूसरे से अपना शरीर मिलाने में घृणा अर्थात् संकोच करके सदा अलग रहता है ।।३३।।

और उसका फल यह है कि (सत्त्व०) अर्थात् शौच से अन्तःकरण की शुद्धि, मन की प्रसन्नता और एकाग्रता, इन्द्रियों का जय तथा आत्मा के देखने अर्थात् जानने की योग्यता प्राप्त होती ।।३४।।

तदनन्तर (सन्तोषाद०) अर्थात् पूर्वोक्त सन्तोष से जो सुख मिलता है, वह सबसे उत्तम है और उसी को 'मोक्ष' सुख कहते हैं ।।३५।।

(कायेन्द्रिय०) अर्थात् पूर्वोक्त तप से उनके शरीर और इन्द्रियां अशुद्धि के क्षय से दृढ़ होकर सदा रोगरहित रहते हैं ।।३६।।

तथा (स्वाध्याय०) पूर्वोक्त स्वाध्याय से इष्टदेवता अर्थात् परमात्मा के साथ सम्प्रयोग अर्थात् साक्षात् होता है। फिर परमेश्वर के अनुग्रह का सहाय, अपने आत्मा की शुद्धि, सत्याचरण, पुरुषार्थ और प्रेम के सम्प्रयोग से जीव शीघ्र ही मुक्ति को प्राप्त होता है ।।३७।।

तथा (समाधि०) पूर्वोक्त प्रणिधान से उपासक मनुष्य सुगमता से समाधि को प्राप्त होता है। ३८।।

राष्ट्र के प्रहरी

राष्ट्र एक इतिहास पुरुष है
जो सर्वदा ही
महासिन्धु की उत्ताल तरंगों से
अभिसिंचित
शीतल मंद सुगन्ध पवन की
थपकियों से अभिमर्दित
भावाभावों के झंझावातों से
अविचलित
ऊर्ध्व गति का परिचालक
भूमा और व्योम का पालक
मार्तंडन का पोषक
और मंगलाचरण का उद्घोषक है।

हिमगिरि के उत्तुंग शिखरों से
आच्छादित
हिन्द महासागर की जल-ऊर्मियों से
संस्पर्शित
राष्ट्र एक इतिहास पुरुष है।

—नीरज ठाकुर
८७-ग्रीन पार्क, पानीपत (हरियाणा)

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१

B. N. No. 32387/77 Post in N.D.P.S.O on 3, 4-3-88 Licenced to post without prepayment. Licence No. U 139

दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यु १३९

देव दयानन्द के आदर्शों से प्रेरणा लें —स्वामी आनन्द बोध

'देव दयानन्द के आदर्शों का हमें चिन्तन व मनन करना चाहिए और उन से प्रेरणा लेकर सत्य आचरण द्वारा समाज व राष्ट्र का निर्माण करना है।' यह उद्गार सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने महाशय चुन्नीलाल चैरिटेबल ट्रस्ट द्वारा १२ फरवरी को आयोजित महर्षि दयानन्द सरस्वती के १६४वें जन्मोत्सव के अवसर पर व्यक्त किए।

स्वामी आनन्द बोध ने आगे कहा कि पूज्य महात्मा स्व० आनन्द स्वामी के पौत्र श्री नवीन सूरी ने राजधानी से हिन्दी मिलाप सन्देश दैनिक समाचार पत्र जारी किया है और इसके मुख्य पृष्ठ पर गायत्री महामन्त्र अंकित रहता है। इसके लिए वे साधुवाद के पात्र हैं। स्वामी आनन्द बोध ने आगे कहा कि यह आर्य जनता का अपना पत्र है और इसे अपनाकर सहयोग प्रदान करना चाहिए। उल्लेखनीय है कि मिलाप सन्देश में आर्यसमाज के पर्वों से सम्बन्धित लेख एवं आर्यसमाज के कार्यक्रमों एवं गतिविधियों के समाचार प्रमुखता से प्रकाशित किए जाते है।

समारोह के अध्यक्ष पूर्व सांसद स्वामी रामेश्वरानन्द जी ने महर्षि दयानन्द सरस्वती को श्रद्धासुमन अर्पित करते हुए कहा कि उत्तम सन्तान से ही राष्ट्रनिर्माण सम्भव है। अत हमें अपनी सन्तानों को अच्छे सस्कार देकर हर दृष्टि से सुयोग्य बनाना चाहिए ताकि वे आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार के कार्य मे योगदान दे सकें।

दैनिक मिलाप के सम्पादक श्री नवीन सूरी ने दयानन्द सरस्वती को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा कि हमें वैदिक धर्म के मूल सिद्धान्तों का कडाई से अनुपालन कर आर्यसमाज को सुदृढ़ करना चाहिए। श्री सूरी ने आगे कहा कि वेद में जहां एक ओर पद, धन व यश की कामना व प्राप्ति के लिए यत्न करने को कहा गया है, वहीं यह भी स्पष्ट आदेश दिये गये हैं कि हमारे कर्म व जीवन धर्म की नींव पर ही आधारित होने चाहिए।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल आर्य ने महर्षि दयानन्द सरस्वती को एक युगपुरुष बताते हुए कहा कि स्वामी जी ने राजनैतिक, सामाजिक व आर्थिक क्षेत्रों में चिन्तन को एक नई दिशा ही प्रदान नही की अपितु स्वराज्य प्राप्ति, गो-रक्षा, कृषि-सुधार, पर्यावरण शुद्धि आदि के उल्लेखनीय योगदान दिया।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री श्री सूर्यदेव ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि हमें सत्य को अपनाना चाहिए और सच्चाई का दामन थाम कर ही हम समाज व राष्ट्र की सेवा कर सकते हैं। यही स्वामी जी के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी। आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली के मन्त्री डा० शिवकुमार शास्त्री ने स्वामी दयानन्द सरस्वती को श्रद्धासुमन अर्पित करते हुए कहा कि हमें एक प्लेटफार्म पर एकत्रित होकर एक राजनीतिक मच बनाना चाहिए

विद्यालय

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५६

ओ३म्

साप्ताहिक

आर्य सन्देश

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

वर्ष १२ : अंक १९ | रविवार १३ मार्च १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | चैत्र २०४४ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर १० पौंड

दिल्ली प्रान्तीय महिला सभा का सम्मेलन सम्पन्न

महर्षि दयानन्द ज्ञान के प्रखर सूर्य थे

—राजेन्द्र कुमारी वाजपेयी

७ मार्च। प्रान्तीय महिला सभा दिल्ली के तत्त्वावधान मे ऋषि बोधोत्सव एवं सीताष्टमी का कार्यक्रम धूमधाम से सम्पन्न हुआ। इस की अध्यक्षता श्रीमती प्रभात शोभा ने की। दिल्ली की एक सौ आर्यसमाजों की महिलाओं ने भारी संख्या में इसमें भाग लिया। कार्यक्रम का प्रारम्भ यज्ञ से हुआ। श्रीमती सरला महता ने स्वागत भाषण पढ़ते हुए कहा—विश्व वैचारिक क्रान्ति के अग्रदूत महर्षि दयानन्द सरस्वती का बोध दिवस मनाते हुए मैं हृदय से श्रद्धा सुमन-सा अर्पित करती हूँ और कवि के शब्दों में "धन्य है तुझ को ऐ ऋषि तू ने हमें बचा लिया। सो सो के लुट रहे थे हम तू ने हमें जगा दिया।" युगद्रष्टा वन्दनीय देव दयानन्द ने नारी जाति पर जो उपकार किये उन्हें हम कभी विस्मृत नहीं कर सकते। वेद ज्ञान की ज्योति से सर्व भू-मण्डल को मानवीय अधिकारों और कर्तव्यों का बोध कराकर भटकते मानव का मार्ग प्रशस्त किया। पाखण्ड, अन्याचार, अनाचार, भ्रष्टाचार, नास्तिकता, अन्धविश्वास छुआछूत जैसी कुरीतियों का जड़ से उन्मूलन किया। भारतीय सभ्यता संस्कृति के प्रति अटूट श्रद्धा निष्ठा की भावनाएँ जाग्रत की। ऋषिवर का आदि से अन्त तक का जीवन पूर्णतया राष्ट्रीय जागरण और वैदिक चेतना से ओत-प्रोत मिलता है। आज जो नारी का गौरवमय अधिकार स्थान प्राप्त हुआ है वह ऋषिवर की ही देन है।

भारतीय ही नहीं को सर्व भूतल की नारी जाति का गौरवपूर्ण रत्न सीता माता का जीवन है। उसका जन्म-दिवस बड़ी श्रद्धा व निष्ठा से केवल मात्र प्रान्तीय आर्य महिला सभा ही मनाती है। माता सीता का जीवन प्रेरणा का पुञ्ज है जो एक आदर्श पुत्री, पत्नी और निर्मात्री माँ की भूमिका निभाता है। उन का समूचा जीवन ऐतिहासिक सामाजिक और धार्मिक कीर्ति का स्तम्भ है।

श्रीमती राजेन्द्र कुमारी वाजपेयी ने इस अवसर पर अपना उद्बोधन देते हुए कहा—ऋषि दयानन्द ने जो महिला उत्थान कार्य किया वह अद्भुत था। उन्होंने अज्ञान-अन्धकार से दूर करने के लिए सूर्य बनकर कार्य किया। ऋषि के ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में नारी की महत्ता तथा अज्ञान, अन्धविश्वास से दूर होने पर विशेष बल दिया गया है। महर्षि ने दुनिया को 'वेदों की ओर लौटो' का अनुपम सन्देश दिया।

समारोह में मुख्य वक्ता के रूप में बोलते हुए विख्यात महिला पुलिस डिप्टी कमिश्नर श्रीमती किरण बेदी ने कहा—मुझे अपने नारी होने पर गर्व है और गर्व उन माता-पिता पर जिन्होंने मुझे प्रबल शक्तिमती होने की घुट्टी पिलायी। मैं अपनी युवा बहनों को प्रेरणा देना चाहती हूँ कि वे उत्साहपूर्वक जीवन में आगे बढ़ें। और अपने पैरों पर खड़े होना सीखें। मैं अपनी माताओं से भी प्रार्थना करूंगी किसी दहेज जोड़ने की चिन्ता बेटी के लिए न करो। उन्हें इस योग्य बनाओ कि वे कभी किसी पर निर्भर न हों और दुनिया में सिर उठाकर जी सके। अपनी सन्तान में आत्मविश्वास पैदा करो, पुरुषों को दोष देना ठीक नहीं। हमें अपने को योग्यतम बनाना चाहिए।

स्वामी आनन्द बोध ने कहा—देश को गर्व उन वीरांगनाओं पर है जिन्होंने किसी पर निर्भर न होकर अपनी अलग पहचान बनाई और गगन में सितारे की तरह चमकी। माता सीता का महान् चरित्र संसार में पतिभक्ति के आदर्श रूप में सदा याद किया जायेगा।

श्री सूर्यदेव व डा० धर्मपाल तथा डा० शिवकुमार जी ने अपने विचार व्यक्त किये। इस समस्त कार्यक्रम का संचालन श्रीमती प्रकाश आर्या ने किया।

आर्यसमाज स्थापना दिवस

मावलंकर हाल, रफी मार्ग, नई दिल्ली

१९ मार्च ८८, शनिवार, मध्याह्नोत्तर २ से ५ बजे तक

अध्यक्ष—प्रो० शेरसिंह प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा

मुख्यातिथि—श्री महेन्द्रसिंह 'साथी' महापौर दिल्ली

आशीर्वाद—श्री स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती

— वक्ता

श्री रामचन्द्र 'विकल' सांसद	डॉ० वाचस्पति उपाध्याय
श्री रामनाथ सहगल	श्री नवीन सूरी संपादक मिलाप सन्देश
डॉ० प्रशान्त वेदालंकार	श्रीमती शकुन्तला आर्या
डॉ० महावीर मीमांसक	

इस समारोह में आप सब सपरिवार एवं इष्ट मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं। कृपया बसों द्वारा भारी संख्या में पहुंचें।

निवेदक

महाशय धर्मपाल (प्रधान) — डॉ० शिवकुमार शास्त्री (महामन्त्री)

आर्य केन्द्रीय सभा, दिल्ली राज्य

१५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१

दूरभाष ३१०१५०, ३१११८०

सम्पादक—प० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

मुण्डक उपनिषद् का स्वाध्याय

(२, १, १, ७ से ३, २, ८—११ तक)

—प्रस्तुति वेद सविता

★

उपनिषद् के प्रथम मुण्डक में सकाम कर्मों की तुच्छता दिखाई गई है। उनसे विरत होने एवं गुरु की शरण में जाकर ब्रह्मविद्या का उपदेश प्राप्त करने का प्रसंग भी चला। अब इस मुण्डक में उस ब्रह्मविद्या का वर्णन किया जा रहा है। जिस प्रकार प्रज्वलित हुए अग्नि से एक समान अनेक चिंगारियाँ निकल पड़ती हैं उसी प्रकार उस अविनाशी ब्रह्म से विविध प्रकार के भाव उत्पन्न होते हैं और उसी में विलीन हो जाते हैं।

वह परमात्मा दिव्य है। उसकी कोई मूर्ति नहीं। वह जगत् के भीतर बाहर, सर्वत्र व्याप्त है तथा अजन्मा है। उसमें प्राण नहीं पर सब इन्द्रियां उसी में उत्पन्न होती हैं। उसी में पंचभूतों का भी प्रादुर्भाव होता है। वेद उसी की वाणी है। उसी से वह अग्नि उत्पन्न होता है जिसकी समिधा सूर्य बनता है। उसी से ऋक्, यजु, साम, दीक्षा, यज्ञ, क्रतु दक्षिणा, संवत्सर और विभिन्न लोक उपजते हैं। सूर्य, चन्द्र, आदि ज्योतियों तथा देवों, मनुष्यों, पशुओं, सभी प्राणियों का उद्भव भी उसी से है।

मनुष्य-व्यक्तित्व में जो भी शक्तियाँ हैं वे उसी परमेश्वर से आती हैं। अहंबुद्धि, मन एवं पांच ज्ञानेन्द्रियों के सप्तक में जो सात प्राण कार्यरत हैं वे भी उसी से उपजते हैं। इन सातों के प्रभाव से उद्भूत होने वाली सप्त वासनायें और उनको तृप्त करने वाले सात विषय-रूपी समिधायें तथा सात प्रकार के होम और सात लोक, जिन में ये सातों प्राण विचरण करते हैं वे भी उसी परमेश्वर से प्रादुर्भूत होकर मनुष्य-व्यक्तित्व की गुहा में छिपे रहते हैं। बाह्य जगत् में भी सभी समुद्र, पर्वत, नदियाँ, औषधियाँ और सभी रस उसी से पैदा होते हैं तथा वह सबका अन्तरात्मा है।

वह 'पर' ब्रह्म ही सम्पूर्ण विश्व के रूप में व्यक्त हो रहा है। वही कर्म और तप के रूप में प्रकट होता है और साथ ही वह 'परात् पर' ब्रह्म भी है। उस ब्रह्म को जो कोई गुहा में स्थित हुआ जान लेता है उसकी अविद्यामयी ग्रन्थि खुल जाती है।

'पर' ब्रह्म का एक 'महत् पद' है जो हमारे भीतर, हृदय-गुहा में सन्निहित और व्यक्त है। वह सत् एवं अ-सत्, दोनों के परे है। उसमें गतिशील, प्राणनशील तथा निमेष एवं अनिमेष करने वाला, सारा जगत् समर्पित है। सब प्रजाओं का जो विज्ञान है उससे भी वह श्रेष्ठ है। वह ज्योतिर्मय है, अणुओं से भी सूक्ष्म है। वह 'अक्षर' ब्रह्म ही हमारे भीतर प्राण, वाक् तथा मन रूप में विद्यमान है। हमें उसी को लक्ष्य बनाना चाहिए। प्रणव रूपी धनुष् पर आत्म-रूपी तीर को उपासना के द्वारा तीक्ष्ण करके रखना चाहिए। तत्पश्चात् भावपूर्ण चित्त द्वारा उस तीर को खींचकर अविनाशी परमेश्वर को लक्ष्य बना कर उसी में तन्मय हो जाना चाहिए।

जिस आत्मा में सभी प्राणों सहित हमारा मन ओत-प्रोत है उस आत्मा को जानो। और सब बातों को छोड़ो, क्योंकि वही 'पर' ब्रह्म-रूपी अमृतत्व को जोड़ने वाला पुल है। जैसे रथनाभि में रथ के सभी अरे एकत्र होते है उसी प्रकार हमारी सभी नाड़ियाँ आत्मा में केन्द्रित हैं। वह आत्मा हमारे भीतर अनेक इच्छाओं, भावनाओं आदि के नानात्व में विचरण करता है। उस आत्मा का 'ओम्' नाम से ध्यान करना चाहिए जिससे अन्धकार से परे की स्थिति—'स्वस्ति' प्राप्त हो सके।

मनुष्य-व्यक्तित्व के आत्म-गत 'ओम्' से परे एक व्योम (व्य्= ओम), नामक स्तर है। इसको दिव्य ब्रह्मपुर भी कहते हैं। यहीं वह ब्रह्म प्रतिष्ठित है जिसकी महिमा सार्वभौमिक है। वही प्रत्येक व्यक्ति के भीतर 'मनोमय' आत्मा होकर प्राण और शरीर का चालक बनता है। विज्ञान के द्वारा योगिजन उसी आनन्दस्वरूप अमृतत्व को जान पाते हैं। उसके 'पर' और 'अवर' रूप को जान लेने से हृदय की ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं तथा सभी संशय मिट जाते हैं और कर्म भी क्षीण हो जाते हैं।

'पर' ब्रह्म, आत्मा से अभिन्न, सब ज्योतियों की ज्योति है। वह हमारे भीतर हिरण्मय कोश में आत्मा से युक्त होकर विराजमान है। इसलिए जो आत्मवेत्ता हो जाते हैं वे उस निष्कल ब्रह्म को भी जान लेते हैं। ब्रह्मलोक में स्थित इस ज्योति के सामने सूर्य, चन्द्र, तारागण तथा विद्युत् का प्रकाश भी फीका पड़ जाता है, अग्नि की तो बात ही क्या! वही मूल ज्योति है जिसके प्रकाश से सभी कुछ प्रकाशित है। ब्रह्म ही हमारे आगे-पीछे, दायें-बायें और आन्तरिक जगत् में विराजमान है।

मानवदेह एक वृक्ष है। इस वृक्ष को दो सुपर्ण (सुन्दर पंख वाले पक्षी) आलिङ्गन कर रहे हैं। ये दोनों जुड़े हुए पक्षी परस्पर मित्र हैं। इन में से एक पक्षी जीवात्मा है जो शरीर-रूपी वृक्ष पर उत्पन्न होने वाले स्वादिष्ठ कर्म-फलों का आस्वादन करता है। दूसरा पक्षी परमात्मा है जो केवल देखता है। जीवात्मा मानव-देहरूपी वृक्ष में आसक्त हुआ है। वह अज्ञानवश समझता है कि मैं शरीर ही हूं। पर इस विवशता से वह दुःखी होता है क्योंकि वह शरीर का स्वामी नहीं हो पाता है। वास्तविक स्वामी तो 'पर' ब्रह्म परमेश्वर है। उसकी उपासना करके जब वह उसको जानता है तभी उसका शोक दूर होता है।

'पर' ब्रह्म दिव्य-स्वर्णिम-वर्ण-वाला है। जीवात्मा जब उस का साक्षात्कार करता है तो वह पुण्य एवं पाप, दोनों से रहित होकर सर्वथा निर्मल हो जाता है तथा सर्वोत्कृष्ट साम्य को प्राप्त कर लेता है।

'पर' ब्रह्म परमात्मा प्राण-रूप में पंच भूतों के माध्यम से प्रकाशित हो रहा है। इस तथ्य को विज्ञान-पूर्वक जानने वाला विद्वान् कभी भी अतिवादी होकर यह नहीं कहता कि मैंने उसको जान लिया है। वह ब्रह्म-वेत्ताओं में श्रेष्ठ व्यक्ति सभी क्रियाओं को करता हुआ भी आत्मरत और आत्मक्रीड रहता है। उस परमात्मा को सत्य, तप, ब्रह्मचर्य और सम्यक् ज्ञान द्वारा ही जाना जा सकता है। वह हमारे शरीर के भीतर शुभ्र और ज्योतिर्मय होकर विराजता है। उस को वे योगिजन ही जान सकते हैं जो दोषरहित हो चुके हैं।

जो सत्य परमात्मा को जानने का साधन माना गया है वह स्वतः ही सुलभ नहीं होता। असत्य तो दौड़कर चिपक जाता है पर सत्य के लिए निरन्तर पुरुषार्थ करना पड़ता है। जिस 'देवयान' के द्वारा परमात्मा की प्राप्ति होती है उस को विस्तार देने वाला सत्य ही है। इसी के द्वारा आप्तकाम ऋषिगण उस 'पर' ब्रह्म को प्राप्त करते हैं जो सत्य का परम धाम है।

परमात्मा को कहाँ खोजें? यह एक सनातन प्रश्न है। इसका उत्तर देते हुए उपनिषत्कार कहता है कि वह परमात्मा यद्यपि बहुत बृहत्, दिव्य, अचिन्त्य तथा सूक्ष्मातिसूक्ष्म है पर वह अत्यन्त दूर होते हुए भी हम सबके अति निकट है। वह यहीं, ज्ञानियों की हृदय-गुहा में विराजमान है। इसलिए उसे ढूढने के लिए हमें अपनी हृदय-गुहा में प्रवेश करने की साधना करनी होगी।

ब्रह्म को स्थूल नेत्रों से नहीं देखा जा सकता। वाणी द्वारा उस का वर्णन भी सम्भव नहीं। इन दो इन्द्रियों के अतिरिक्त अन्य कोई इन्द्रिय तप अथवा कर्म के द्वारा नहीं जान सकती। इसकी प्राप्ति ज्ञान के द्वारा ही सम्भव है। ज्ञान के द्वारा सत्वगुण, रजोगुण एवं तमोगुण से रहित होकर साधक सर्वथा विशुद्ध हो जाता है। तभी, ध्यान करते हुए साधक उस निष्कल ब्रह्म को देख पाता है।

'पर' ब्रह्म सूक्ष्मातिसूक्ष्म है। अतएव पंच ज्ञानेन्द्रियों द्वारा उसे नहीं जाना जा सकता। इन पांचों इन्द्रियों का प्राण जब हमारे चित्त में लीन हो जाता है तो उस चित्त के द्वारा ही परमात्मा को जाना जा सकता है। सामान्यतः हमारा चित्त प्राणों से ओत-प्रोत रहता है। इसलिए प्राणों की उठती हुई लहरियों के कारण चित्त में क्षोभ रहता है। जब यह क्षोभ समाप्त हो जाता है तभी चित्त शुद्ध होता है और उस शुद्ध चित्त में आत्मा विशेष रूप से व्यक्त हो जाता है।

रजोगुण और तमोगुण से रहित होकर जिसका सत्त्वगुण शुद्ध हो गया है वह मन से जिस जिस लोक को प्राप्त करने का संकल्प करता है और जो जो कामना करता है वह सब उसे प्राप्त हो जाता है। अतः ऐश्वर्य की कामना करने वालों को आत्मज्ञ योगियों की सेवा-शुश्रूषा करनी चाहिए।

(शेष पृष्ठ ७ पर)

होली—नवसस्येष्टि पर्व की कुछ महत्वपूर्ण बातें

लेखक—चमनलाल, अशोक विहार

त्यौहारों-पर्वों का जितना अत्यधिक प्रचलन इस हमारे ऋषि-मुनियों-राम कृष्ण की जन्म भूमि भारतवर्ष में है सम्भवत: किसी भी देश में इतना न हो। अभी-अभी गत दो मास जनवरी और फरवरी में लगभग चार पर्व हम मना चुके हैं—मकर सक्रान्ति, वसन्त पचमी, शिव रात्रि-ऋषि बोधोत्सव। और लो अब लेखराम तृतीया और होली का महापर्व भी आ चुका। निस्सन्देह पर्वों का व्यक्ति और समाज के जीवन में एक विशेष महत्व है। ये अपने-अपने समय पर प्रति वर्ष आते हैं और अपनी छाप लगाकर चले जाते हैं। इनका अनुष्ठान व्यक्ति और समाज के जीवन में एक महान प्रेरणा उत्पन्न करता है जिससे मृत प्राय: व्यक्ति व समाज में जीवन का सचार प्रतीत होने लगता है और यह भौतिकता प्रधान युग भी कुछ ही देर के लिए सही, मानव कुछ न कुछ आस्तिकता की भावना को अनुभव करने लगता है।

होली का परम पावन पर्व इस वर्ष चार मार्च को मनाया गया। प्रति वर्ष यह पर्व वसन्त पचमी के ठीक चालीस दिन पश्चात् फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा को बडे उल्लास से मनाया जाता है।

इस पर्व का वैदिक नाम नवान्नेष्टि है, अर्थात् नवीन अन्न प्राप्त होने पर यज्ञ करना। प्राचीन काल मे आर्य लोगों ने सम्भवत यह नियम बना लिया होगा कि कोई भी आदमी बिना यज्ञ किये नये अन्न का भोग न करे। हमारे धर्म ग्रन्थों-गृह्य सूत्रों में आया है—

नानिष्ट्वाग्रयणेन
नवसस्यमश्नीयात्।
नवसस्योत्पत्तौ
नवसस्येष्ट्या यजेत ॥

अर्थात् नया अन्न उत्पन्न होने पर 'नवसस्येष्टि' नामक यज्ञ करे और जब तक कि अन्न पहले उत्पन्न हुए अन्न से होम न कर लें उसे न खायें। इस को इस प्रकार से और भी स्पष्ट कर दिया है हमारे ऋषियों ने—

पर्वण्याग्रयणे कुर्वीत। वसन्ते यवानां शरदि व्रीहीणाम्। अग्रपाकस्य पयसि स्थालीपाक श्रपयित्वा तस्य जुहोति।

अर्थात् पर्व में नवीन अन्न से होम करें, वसन्त ऋतु में यवों से और शरद ऋतु में चावलों से इत्यादि।

वास्तव में अन्न परमात्मा की ही महती कृपा से उत्पन्न होता है। यदि उस की कृपा न हो तो असीम पुरुषार्थ करने पर भी अन्न प्राप्त होना सम्भव नही है और हम प्राय देखते भी हैं कि बनी-बनाई तैयार फसल, जिसे देखकर किसान फूला नहीं समा रहा है प्रकृति के जरा से आघात से बात की बात मे चौपट होती देखी जाती है। आर्य पुरुष अपनी इस असमर्थता को भली भांति समझते थे। अत वे परमात्मा के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते नहीं अघाते थे।

वैदिक नवसस्येष्टि का नाम प्रचलित 'होली' नाम पडने का कारण तो स्पष्ट ही है। इस अवसर पर (फाल्गुन पूर्णिमा) के दिनों गर्मी 'रबी' की फसल के अवसर पर अन्न (चना, गेहू, यव आदि) अर्ध परिपक्व अवस्था में होता है और उस की बालों टहनियों को जब आग में भूनते हैं तो उसकी संज्ञा लोक में 'होला' होती है जैसा कि हमारे साहित्य में लिखा मिलता है—

तृणाग्निभ्रष्टार्द्धपक्वशमीधान्य होलक:।

अर्थात् जो अर्ध पका अन्न फूस में आग में भूना जाता है उसे सस्कृत में होलक कहते हैं और यही शब्द हिन्दी भाषा में 'होला' कहलाने लगा और कालान्तर में यह भी बिगडकर 'होलिका' और अब अन्त में 'होली' हो गया।

इस पर्व होली का पौराणिक रूप भी बडा शिक्षाप्रद है। हमारे किन्हीं त्यौहारों के साथ कुछ महापुरुषों से सम्बन्धित घटनाएँ भी कालान्तर में जुड गई हैं। इसी प्रकार इस पर्व से सम्बन्धित एक आख्यायिका श्रीमद्भागवत में कुछ इस प्रकार आती है—

हिरण्यकशिपु एक बडा अन्यायी तथा महानास्तिक, ईश्वर की सत्ता को न मानने वाला राजा था। प्रह्लाद नाम का उस अत्याचारी राजा का पुत्र बडा ही आस्तिक और ईश्वरभक्त था। क्योंकि ईश्वरभक्त प्रह्लाद अपने अन्यायी नास्तिक पिता की बात नहीं मानता और उस की सत्ता से भी इन्कार करता है। अत हिरण्यकश्यपु अपने पुत्र की गतिविधियों को पसन्द नहीं करता और उसे रोकने के लिए वह उसे तरह-तरह के त्रास देता है। परन्तु परन्तु वह ईश्वरभक्त प्रह्लाद इन त्रासों की लेशमात्र भी चिन्ता नहीं करता। अन्त में नृसिह नाम का एक अवतार होता है जो हिरण्यकश्यपु का संहार कर देता है। यह एक अलकारपूर्ण अत्यन्त शिक्षाप्रद आख्यायिका है, जिसका अभिप्राय केवलमात्र यही है कि माया जाल में फसे रहने वाले व्यक्ति का नाम 'हिरण्यकश्यपु' है अर्थात् जो सदैव सोना-चांदी, धन-दौलत की ही देखे, उसमें ही ग्रसित रहे।

हिरण्यमेव पश्यतीति हिरण्यकश्यपु।

ऐसा निरुक्त के अनुसार आदि और अन्त के अक्षरों का विपर्यय होकर 'पश्यक' को 'कश्यप' बन जाता है। ऐसे मदान्ध लोगों का अन्त में बुरी तरह से नाश होता है।

दूसरी ओर परमात्मा की भक्ति में सदा लीन रहने के कारण जिस को आनन्द लाभ होता है उसे प्रह्लाद कहते हैं। प्रह्लाद स्वय सताया जाने पर भी सब की मङ्गल कामना ही करता है। उसका यही कहना था कि "किसी का कुछ भी हरण नही करना चाहिए। जो लोग माया मे ही रत रहते हैं और परमात्मा की सत्ता से इन्कार करते हैं उनका कभी भी आदर नहीं करना चाहिए। अपने चित्त को निर्मल बनाकर परमात्मा की शरण में जाना चाहिए और इस प्रकार आचरण करते हुए भव सागर से पार कर जाना चाहिए।"

आज सारा देश हिरण्यकश्यपु बना हुआ है प्रह्लाद के समान तो कोई दिखाई ही नहीं देता। सबको रुपया-पैसा, धन-दौलत, वैभव, सत्ता चाहिए, चाहे आये किसी भी न्याय अन्याय साधनों से। इस लालच, कञ्चन व कामिनी के मतवालों ने अपने हितों के लिए देश-राष्ट्र के हितों की बलि दे डाली। समाचार पत्रों की रिपोर्टों के अनुसार और ससद में विपक्षियों द्वारा उठाये गये अनेक मुद्दों से पता चलता है कि तथाकथित सत्ताधारी लोग, उनके इष्टमित्र और बडे-बडे व्यापारी लोग बोफोर्स, फेयरफैक्स, जर्मनी के पनडुब्बी और साउथ लैण्ड के हेलीकाप्टर के सौदों में भ्रष्टाचार के मामलों में फसे करोडों रुपये हजम कर गये और उस अरबो रुपये की राशि को विदेशी बैंकों में जमा करा कर देश को निर्धन ही नहीं किया अपितु इसकी अर्थव्यवस्था को भी महान हानि पहुचाई है। इस प्रकार के लोग यह नही समझते कि इस क्षणभगुर जीवन में इतने अराष्ट्रीय काम करके देश को क्यों हानि पहुंचाई जाये। इस जीवन का कोई भरोसा नही कि कब यह कच्चे घडे की मानिन्द यह शरीर समाप्त हो जाये। किसी सन्त ने ठीक ही तो कहा है—

नर तन है कच्चा घडा,
लिये फिरे है साथ।
धाका लागा फुटिगा,
कछु न आवे हाथ ॥

वेद ने भी मानव को चेतावनी देते हुए कहा है—

अश्वत्थे वो निषदनम्,
पर्णे वो वसतिष्कृता।
गोभाज इत्किलासथ,
यत्सनवथ पुरुषम् ॥

परन्तु आज का मानव हिरण्यकश्यपु की तरह इस विषय भोगों के जीवन के विनाश के परिणामो से इतना लापरवाह हो गया है, उसने धार्मिकता को तो जीवन में से ऐसा तुच्छ समझकर बाहर फेंक दिया है जैसे कोई गृहिणी दूध मे पडी मक्खी को निकालकर फक देती है।

अत इस होली पर्व से सम्बन्धित हिरण्यकश्यपु-प्रह्लाद की पौराणिक कथा से यह शिक्षा आज के गोमक्त मानव को लेनी चाहिए कि हिरण्यकश्यपु की तरह उसका नाश अवश्यम्भावी है। अत उसको अराष्ट्रीय देशद्रोही कामो से परहेज करना चाहिए। यह तो आध्यात्मिक शिक्षा है। परन्तु इस त्यौहार से एक बडी सामाजिक शिक्षा भी मिलती है। वैदिक तथा पौराणिक महत्व के अतिरिक्त इस होली के पर्व की एक सामाजिक विशेषता भी विचारणीय है। स्मृतियों में होला से अगले दिन चैत्र मास की प्रतिपदा को महा अस्पर्श चाण्डाल तक के स्पर्श को भी वैधानिक माना है—

(शेष पृष्ठ ५ पर)

वेद और राष्ट्रीय एकता

ले०—डा० भवानीलाल भारतीय

★

मुण्डकोपनिषद् में परा और अपरा नाम से विद्याओं का द्विविध विभाजन किया गया है। अपरा विद्या के अन्तर्गत ऋग्, यजु, साम और अथर्व—इस वेद चतुष्टयी की गणना की गई है जबकि परा विद्या उसे कहा गया है जो हमें अक्षर ब्रह्म का ज्ञान कराती है। मेरे विचार से वेदों को अपरा विद्या के अन्तर्गत परिगणित करने से उनके महत्त्व को न तो न्यून करके ही आंका गया है और न इससे उसके गौरव में ही कोई कमी हुई है। वेदों में अध्यात्म विद्याएँ तो अपने मूल रूप में मिलती ही हैं, मनुष्य के इहलौकिक और भौतिक विकास के अनेक उपयोगी सूत्र भी उनमें उपलब्ध होते हैं। मानव की वैयक्तिक, पारिवारिक और सामाजिक उन्नति के नानाविध उपदेश वेदों में यत्र तत्र सर्वत्र दृष्टिगोचर होते हैं। वेदों में राष्ट्र की कल्पना; राष्ट्र रक्षा के प्रयत्न, राष्ट्रोन्नति के उपाय, राष्ट्रीय एकता के सवर्धन आदि से सम्बन्धित प्रश्नों की विस्तार से चर्चा है तथा राष्ट्र के सभी घटकों में पारस्परिक सौमनस्य स्थापित करने के बहुविध उपाय सुझाये गये हैं।

इस दृष्टि से अथर्ववेद का निम्न मन्त्र हमारा ध्यान सहज ही आकृष्ट करता है जिसमें कहा गया है कि प्रजा का सुख और कल्याण चाहने वाले स्वर्गीय सुख को प्राप्त ऋषियों ने प्रथम तप और व्रतों का अनुष्ठान किया। तत्पश्चात् राष्ट्र भावना, राष्ट्रीय बल और ओज प्रकट हुआ। अतः यह आवश्यक है कि इस राष्ट्र-भावना, राष्ट्रीय शक्ति और ओज की पूर्ति तथा उसे स्थायी बनाने के लिए राष्ट्र के दिव्य नेता, देवनागण परस्पर मिलकर राष्ट्रार्चन हेतु एक दूसरे को सम्मान दें तथा श्रद्धापूर्वक राष्ट्रदेव के समक्ष प्रणिपात करें। वेद में राष्ट्र की कल्पना भूमि माता के रूप में की गई है और राष्ट्रोन्नति के सर्वोत्कृष्ट उपायों को अथर्ववेद के भूमिसूक्त में प्रस्तुत किया गया है।

अथर्ववेद के १२वें काण्ड का प्रथम सूक्त ही वेद का राष्ट्रीय गीत है जिसमें मातृभूमि की अर्चना का माहात्म्य वर्णन है। जिस राष्ट्रीय एकता की हम प्राय: बात करते हैं वह उतनी सुगम नहीं है जितनी दिखाई पड़ती है। वस्तुतः राष्ट्रोन्नति के जिन सूत्रों को अथर्ववेद के इस भूमिसूक्त में वर्णित किया गया है उनका राष्ट्र के नागरिकों के द्वारा धारण किया जाना आवश्यक है।

ऐसा होने पर ही राष्ट्र की सुरक्षा और एकता की आशा की जा सकती है क्योंकि सत्य, ऋत, उग्रता, दीक्षा, तप, ब्रह्म और यज्ञ ही राष्ट्र के वे आधारभूत तत्व हैं जिन को सुनिश्चित कर हम अपनी राष्ट्रीयता को सुरक्षित कर सकते हैं।

राष्ट्रीय एकता को न तो केवल पाठ्य पुस्तकों के माध्यम से ही बनाया जा सकता है और न सभाओं और समितियों में केवल बौद्धिक चर्चा करके ही उसे सुदृढ़ किया जाता है। इसके लिए आवश्यक है कि हम राष्ट्र के भौतिक स्वरूप और उसके विस्तार का निरन्तर चिन्तन करते रहें। इसी अभिप्राय को व्यक्त करते हुए आलोच्य सूक्त में कहा गया है—

यस्यां समुद्र उत सिन्धुरापो
यस्यामन्नं कृष्टयः सम्बभूवुः।

विभिन्न समुद्रों और नदियों के जलस्रोतों को धारण करने वाली तथा नाना अन्नों को उपजाने वाली यह भूमि ही अपने निवासियों को भोज्य पदार्थ प्रदान करती रही है। अतः इस मातृभूमि के निवासियों को भी उसके सतत हितचिन्तन में रत रहना चाहिए। 'माता भूमिः पुत्रोऽहम् पृथिव्याः' इस सूत्र को वेद ने निर्विवाद रूप में प्रस्तुत कर यह स्पष्ट कर दिया है कि चारों दिशाओं तक जिसका विस्तार है, जो धरती खेती के द्वारा हमें अन्न प्रदान करती है तथा जिस पर रहकर सभी प्राणी सचेष्ट होते हैं उसके प्रति हम अपने कर्त्तव्यों को जान तथा तदनुकूल आचरण करें।

राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ बनाने के लिए राष्ट्र के गौरवमय अतीत से नागरिकों को अवगत कराना आवश्यक हो जाता है। अपने गरिमापूर्ण अतीत को स्मृतिपथ से ओझल कर यदि हम राष्ट्रीय एकता की बात करते हैं तो वह एक दुःस्वप्न मात्र ही होगा। इसी अभिप्राय को व्यक्त करने वाला निम्न मन्त्र द्रष्टव्य है—

यस्यां पूर्वे पूर्वजना विचक्रिरे
यस्यां देवा असुरानभ्यवर्तयन्।

जिस मातृभूमि की गोद में हमारे यशस्वी पूर्वजों ने नाना प्रकार के गौरवशाली कार्य किये और जहाँ सत्य, धर्म और न्याय की रक्षा में तत्पर देवताओं ने असत्य, अन्याय और अधर्म के पक्षपोषक असुरों को निरन्तर पराजित किया, वहीं धरती और उसका पुण्य स्मरण उसके निवासियों में ऐश्वर्य और तेज को धारण कराता है।

अथर्ववेद के इस सूक्त में भूमि माता के लिए जिन विशेषणों का प्रयोग हुआ है वे भी इस तथ्य के द्योतक हैं कि धरती को केवल भौतिक द्रव्यों का समूह मात्र मान लेना ही पर्याप्त नहीं है। यह विश्वम्भरा और वसुधानी है। सब का आधार होने से इसे 'प्रतिष्ठा' कहा गया है। स्वर्ण आदि रमणीय पदार्थों को अपने भीतर रखने के कारण यह 'हिरण्यवक्षा' है और चराचर पदार्थों को अपने ऊपर बसाने वाली होने के कारण यह 'जगतो निवेशनी' है। राष्ट्रवासियों के भीतर उत्साहरूपी ऊष्मा है उस वैश्वानर अग्नि का स्रोत या आधार होने के कारण इसी धरती को 'वैश्वानर बिभ्रती' भी कहा गया है। राष्ट्र की सुरक्षा और राष्ट्र की एकता एक-दूसरे पर अनिवार्यतः निर्भर है। यदि राष्ट्र की एकता में किसी प्रकार की ढील दी जाती है तो उसका परिणाम राष्ट्रीय एकता को नष्ट करने वाले तत्वों को प्रोत्साहन देना ही होगा। राष्ट्र को असुरक्षित जानकर ही राष्ट्रघाती लोगों को बल मिलता है और वे देशवासियों में परस्पर विसंवाद की स्थिति उत्पन्न करते हैं जो अन्ततः राष्ट्र के विनाश का कारण बनती है। अतः अथर्ववेदीय राष्ट्रसूक्त की यह सुविचारित धारणा है कि मातृभूमि की रक्षा में कभी प्रमाद नहीं करना चाहिए। इसके रक्षकों को हम देव नाम से अभिहित करते हैं और वे ही सदा सजग होकर इस धरती माता की रक्षा में सफल रहते हैं।

यां रक्षन्त्यस्वप्ना विश्वदानीं
देवा भूमिं पृथिवीमप्रमादम्।

राष्ट्र के इन यौगिक रक्षकों से रक्षित यह मातृभूमि ही हमें नाना प्रकार के मधुर रसों और अर्थ को प्रदान करने में समर्थ होती है।

राष्ट्रीय एकता की एक अनिवार्य शर्त है भूमि माता से हमारा निकट का परिचय। जैसा कि हम उल्लेख कर चुके हैं राष्ट्रीय एकता न तो गोष्ठियों से सम्पन्न की जा सकती है और न इसे बैठकखानों के वाद-विवाद के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। वस्तुतः राष्ट्र के नागरिकों को अपने राष्ट्र के नानाविध रूपों का चाक्षुष प्रत्यक्ष होना चाहिए। जिस विशाल नगपति को हम ने भारत-जननी का हिमकिरीट कहा और जिसे हम ने मातृभूमि का दिव्य भाल कह कर गौरवान्वित किया यदि उसके गगनचुम्बी हिमशिखरों को हम ने प्रत्यक्ष नहीं देखा, यदि हम धरती के वक्षस्थल पर फैले सघन अरण्यों से परिचित नहीं हुए और मातृभूमि की उस मिट्टी को गोद में हम ने क्रीडा नहीं की, जो बभ्रु, कृष्णा, रोहिणी, विश्वरूपा है तो राष्ट्र की एकता की बात हमारे लिए वाग् विलास होकर ही रह जाएगी। जिस राष्ट्र को हम जानते ही नहीं, उसकी एकता कैसे करेंगे?

वस्तुतः राष्ट्र के साथ राष्ट्रवासी एक प्रकार के निजत्व का बोध करते हैं। इस अन्नदायिनी भूमि के साथ उनकी आत्मीयता स्थापित हो जाती है। तभी तो हम इस जड़ धरती को माता कहकर पुकारते हैं। स्थूल दृष्टि से देखें तो मातृभूमि क्या है—इसमें शिलाएं, पत्थर और धूल के कण ही तो हैं। पुनः यह धरती हमारे आदर और सम्मान का पात्र कैसे बन जाती है। बात सीधी सी है। पत्थर की शिलाओं और धूल-मिट्टी का यह ढेर ही हमारी पूजा, आराधना और उपासना का पात्र तब बनता है जब हमारे राष्ट्रनेता उसका सम्यक् रूप से धारण पोषण कर उसमें राष्ट्र की आत्मा को स्थापित करते हैं। सा भूमिः संधृता धृता—सम्यक् प्रकार से धारित धरती ही हमारे अभ्युदय, विकास और उन्नति का कारण बनती है। बनती है। अब यह धरती हमारे लिए पत्थरों और चट्टानों का ढेर न रहकर वन्दनीय मातृभूमि बन जाती है। हमारे साथ उसका आत्मिक सम्बन्ध जुड़ जाता है। उसकी रक्षा करने के लिए हम अपनी जान की बाजी लगाने के लिए तैयार हो जाते हैं और स्वदेश गौरव को स्वाभिमान और अस्मिता के साथ जोड़ लेते हैं। इसीलिए इस हिरण्यवक्षा पृथ्वी को हम बार-बार नमन करते हैं और

वेद और राष्ट्रीय एकता

माता के रूप में उसकी वन्दना करते हैं।

मातृभूमि के साथ आत्मीयता का सूत्र जुड़ जाने पर ही जहां उस के पत्थरों और चट्टानों, उसकी धूल और मिट्टी को हम स्नेहसिक्त दृष्टि से देखने लगते हैं वहां उसके वक्ष पर उगे वृक्षों, वनस्पतियों और लताओं से भी बन्धुत्व भाव स्थापित करते हैं। हमारे प्राचीन साहित्य से ऐसे शतश: उदाहरण दिये जा सकते हैं जहां वृक्षों और लताओं को हमारे पूर्वजों ने अपने हमजोली, सखा और बन्धु के रूप में देखा और सम्बन्धित किया है। स्वदेश के प्रति निष्ठा का भाव कोई क्षणिक प्रवृत्ति नहीं है। इसे अस्थायी भाव के रूप में लेना उचित नहीं होगा। हम चाहे किसी स्थिति में रहें, स्वदेश की चिन्ता में ही हमें अपने प्रत्येक क्षण को व्यतीत करना है। इसी भाव का बोधक निम्न मन्त्र है।

उदीराणा उतासीनास्तिष्ठन्त प्रक्रामन्त.। पद्भ्यां दक्षिणसव्याभ्यां मा व्यथिष्महि भूम्याम् ॥

हमारी मातृभूमि किसी भी स्थिति में हम से न तो तिरस्कृत हो और न ही व्यथित हो।

वनस्पतियों की ही भाँति शुद्ध जल की पावन धारा प्रवाहित करने वाली यह धरती हमें स्वस्थ और पवित्र रखती है। राष्ट्र की सुरक्षा की बात हम पहले भी कर चुके हैं। इसके लिए निरन्तर सावधानी अपेक्षित है। राष्ट्रवासियों की पारस्परिक एकता की परीक्षा भी उसी समय होती है जब कोई आक्रमणकारी हमारे किसी दुर्बल छिद्र को देखकर अथवा हमें राष्ट्र रक्षा में असावधान पाकर किसी दिशा से हमारे देश पर आक्रमण करता है। हमारे देश का वर्तमानकालिक इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब जब पड़ोसी देशों ने हमारी मातृभूमि पर हमला किया है तब तब इस देश के निवासी अपनी सम्पूर्ण विभिन्नताओं और भिन्नताओं को भूलकर फौलाद की दीवार की भाँति शत्रु के आक्रमण का प्रतिकार करने के लिए तैयार हुए हैं। भूमि सूक्त का निम्न-मन्त्र इसी अभिप्राय को प्रकट करता है—

मा न पश्चान्मा पुरस्ता-
नुदिष्ठा मोत्तरादधरादुत।
स्वस्ति भूमे नो भव मा विद-
न्परिपन्थिनो वरीयो यावया वधम् ॥

पूर्व और पश्चिम, उत्तर और दक्षिण किसी भी दिशा से हमें पीड़ा न हो। यह धरती हमारे लिए स्वस्तिदायिनी हो तथा मार्गावरोधक शत्रु हमें पीड़ित न करें। उनके द्वारा की गई हिंसा का निवारण करने में हम सफल हों।

रत्नगर्भा और नाना मूल्यवान धातुओं को अपने भीतर धारण करने वाली यह धरती हमारे राष्ट्र की समृद्धि का कारण है। धरती को खोदकर ही बहुमूल्य रत्न प्राप्त किये जाते हैं तथा कृषि कर्म के द्वारा वृक्ष वनस्पतियाँ उगाई जाती हैं। इसी भाव का द्योतक निम्न मन्त्र है—

यत्ते भूमे विखनामि क्षिप्र तदपि रोहतु।

किन्तु हमारा खनन कार्य सीमा को पार न कर जाये, अन्यथा भूमि के गर्भ में स्थित सारे मूल्यवान पदार्थ एकबारगी ही समाप्त हो जायेंगे। □

(पृष्ठ ३ का शेष)

होली—कुछ महत्वपूर्ण....

चैत्रे मासि महाबाहो
पुण्ये तु प्रतिपद्दिने।
यस्तत्र श्वपच स्पृष्ट्वा
स्नान कुर्यान्नरोऽधम।
न तस्य दुरित किञ्चिन्ना-
धयो व्याधयो नृपते ॥

विश्व बन्धुत्व का इससे अच्छा भाव और क्या होगा। आज देश पर अस्पृश्यता का महान कलक का टीका लगा है। आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द को अस्पृश्यों की विद्यमानता का घृणित अन्याय सर्वथा असह्य था। उनके अधिकारों का जितनी उग्रता से महर्षि ने समर्थन किया, उतनी उग्रता से अन्य किसी ने नहीं किया। महर्षि ने इस कार्य में अपने जीवन की बलि तक दे दी। उनके पश्चात् उनके द्वारा स्थापित आर्यसमाज और उस के महान् नेता हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द और पण्डित लेखराम जैसे महारथियों ने अपने जीवन की बलि दे दी। सत्य है कि आर्यसमाज के इस महान कार्य को सरकार ने अपना लिया और विधान में उनको सवर्णों के से समान अधिकार दे तो दिये हैं, तो भी कुछ प्रदेशों में आज भी सवर्ण हिन्दू लोग उन तथाकथित हरिजनों और अछूतों पर अत्याचार करते जरा भी लज्जित नहीं होते। अतः इस सामाजिक बुराई, कुरीति को दूर करने का व्रत इस होली के पवित्र पर्व पर लेना चाहिए। सब भेदभावों को मिटा कर आपस मे गले मिलने का भाव और किसी पर्व में नहीं देखा जाता। अत सामाजिक दृष्टि से भी यह एक महत्वपूर्ण पर्व है।

अत. इस पर्व के अवसर पर बड़े बड़े यज्ञ करके, 'नवसस्येष्टि' को सार्थक करना चाहिए। भगवान के प्रति कृतज्ञता प्रकट करके नव अन्न का सेवन करना चाहिए। यज्ञ करने से पौष्टिक व कीटाणुशून्य अन्न प्राप्त करके शरीर को हृष्ट-पुष्ट करके देश को सशक्त बनाना चाहिए और भौतिकता को छोड़कर आध्यात्मिकता की ओर जाने का प्रयत्न करके देश में फैले भ्रष्टाचार को दूर करने में योग देना चाहिए। और साथ ही हरिजनों, अछूतों की समस्याओं का हल करके उनको अपनी जाति का एक अभिन्न अंग मानकर उनसे सद्व्यवहार करके यह अस्पृश्यता का कलक मिटाने का व्रत लेना चाहिए। यही कुछ महत्वपूर्ण देश-राष्ट्र हितकारी शिक्षाएँ हमें इस पर्व को मनाते हुए जीवन में धारण करनी चाहिए। आज के देश के जीवन में इन का अपनाना कहीं अधिक आवश्यक है।

पश्चिमी दिल्ली के किरण गार्डन में रामनवमी पर्व एवं आर्यसमाज स्थापना दिवस समारोह का विशाल आयोजन

नई दिल्ली। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के पश्चिमी दिल्ली क्षेत्र के मन्त्री श्री ओमप्रकाश आर्य ने एक प्रेस वक्तव्य मे बताया कि सभा से सम्बन्धित शाखा आर्यसमाज बिन्दापुर के तत्वावधान में आगामी १० अप्रैल १९८८ रविवार को प्रात ८ बजे से १ बजे तक पश्चिमी दिल्ली के नजफगढ रोड पर स्थित किरण गार्डन में रामनवमी पर्व एव आर्यसमाज स्थापना दिवस समारोह को विशाल स्तर पर मनाने का आयोजन किया जा रहा है। समारोह में उच्चकोटि के वैदिक विद्वानों, सन्यासी महात्माओ, राजनीतिक नेताओं तथा धार्मिक नेताओं को आमन्त्रित किया जा रहा है।

समारोह का शुभारम्भ प्रात ८ बजे यज्ञ, भजनों एव सांस्कृतिक कार्यक्रमों द्वारा किया जायेगा तथा प्रात १० बजे से १ बजे तक सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया है। सार्वजनिक सभा की अध्यक्षता के लिए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के माननीय प्रधान पूज्य स्वामी आनन्द बोध सरस्वती जी से प्रार्थना की गई है।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा ने ग्राम प्रचार, पुनर्वास कालोनियों, पिछडी बस्तियों में वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार का जो बीडा उठाया हुआ है, उसमें भी ऐसे आयोजन सक्रिय सहयोग करते हैं। पश्चिमी दिल्ली मे पूर्व भी गत माह ग्राम बिन्दापुर, सागरपुर में प्रचार के सफल आयोजन किये जा चुके हैं। हमारा लक्ष्य है कि दिल्ली के प्रत्येक ग्राम में, देहाती क्षत्रों तथा पुनर्वास बस्तियो में ऐसे आयोजन रखे जायें ताकि वहां की स्थानीय जनता को वैदिक धर्म तथा आर्यसमाज के मन्तव्यो की जानकारी मिल सके। ऐसे अवसरो पर सभा की ओर से वैदिक साहित्य पर्याप्त मात्रा में वितरित किया जाता है। समारोह का सयोजन आर्यसमाज बिन्दापुर के अधिकारी तथा प० अशोककुमार जी की ओर से किया जा रहा है।

—ओमप्रकाश आर्य
मन्त्री

आर्यसमाज सागरपुर का वार्षिकोत्सव सम्पन्न

आर्यसमाज सागरपुर का वार्षिक उत्सव दिनांक १९ से २१ फरवरी १९८८ तक मनाया गया जिसमें वेद को महत्ता व मानव पतन पर गोष्ठी डा० धर्मपाल आर्य प्रधान, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा की अध्यक्षता में हुई। जिस में स्वामी अग्निदेव भीष्म, डा० फत्तेसिह आदि विद्वानों के भाषण हुए तथा दोपहर बाद दयानन्द वेद विद्यालय (गुरुकुल) तथा आर्य वीर दल, सागरपुर के द्वारा योग प्रदर्शन हुआ जिसमें दो गाडियों का रोकना, कांच का पीसना जजीर का तोडना, मोटे-मोटे सरियो का मोडना, छाती पर पत्थर तोडना आदि प्रदर्शन दिखाये गये। जिसको देखने के लिए लगभग २००० लोग एकत्रित हुए तथा प्रदर्शन देखकर आश्चर्यचकित होकर उत्साहवर्धन हेतु पारितोषिक भी दिया। अगले दिन रविवार २१ फरवरी १९८८ को प्रात. राष्ट्र रक्षा यज्ञ की पूर्णाहुति यज्ञ मुनि (वानप्रस्थी) की अध्यक्षता मे पूर्ण हुई तथा उसके तुरन्त बाद मानव धर्म व ईश्वर प्राप्ति का साधन योग पर गोष्ठी श्री क्षेमचन्द आर्य प्रधान आर्यसमाज सागरपुर की अध्यक्षता में हुई जिसमें सांसद श्री रामचन्द्र विकल, ब्रह्मचारी आर्य नरेश, श्री सूर्यदेव महामन्त्री दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा आदि विद्वानों ने अपने विचारों के द्वारा सागरपुर की जनता का मार्गदर्शन किया। इस अवसर पर प० सत्यदेव जी स्नातक, प० तुलसीराम जी व श्री नारायण सिंह जी भजनोपदेशकों ने भजनों के भजनों के द्वारा वेद प्रचार में सहयोग दिया तथा आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा प्राप्त आर्य साहित्य का वितरण किया गया।

बृजपाल आर्य
मन्त्री
आर्यसमाज सागरपुर
नई दिल्ली-४६

सीताष्टमी पर्व सम्पन्न

दक्षिण दिल्ली आर्य महिला मण्डल के तत्वावधान में सीताष्टमी पर्व बडे धूमधाम से आर्यसमाज मालवीय नगर में मनाया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्रीमती सरला महता ने की। विशेष अतिथि के रूप में 'छोटी माँ' अपर्णा आश्रम मधुवन (करनाल) उपस्थित थीं। विभिन्न स्त्री आर्यसमाजो की प्रतिनिधि बहिनों ने माता सीता को गुण गरिमा का वर्णन अपने गीतों एव कविताओं द्वारा किया। ध्वजारोहण श्रीमती हीरा देवी जी के द्वारा सम्पन्न हुआ। दोपहर बाद श्रद्धाजलि सभा का आयोजन किया गया। जिसमें प्रसिद्ध समाजसेविका श्रीमती मोहनी गर्ग, विश्व हिन्दू परिषद, महिला विभाग की सगठन मन्त्री श्रीमती कृष्णा जी शर्मा एव श्रीमती प्रकाश सूद ने माता सीता के गुणों का अपने शब्दों में सरसता लाते हुए कहा कि माता सीता ने समाज को सदा दिया ही दिया है लिया कुछ नहीं। ऐसी महान् विभूतियों के सिर पर धरती आधारित है।

मण्डल अध्यक्षा श्रीमती शकुन्तला आर्या ने माता सीता के मातृ रूप की प्रशस्ति करते हुए कहा—जिस प्रकार माता सीता ने लव कुश जैसे पराक्रमी और साहसी पुत्रों का निर्माण करके युद्ध में लक्ष्मण को छठी का दूध याद कराया था उसी प्रकार आज भी योग्य वीर सन्तानों का निर्माण करके आसुरी तत्वो के फूकारते हुए विषधरों को कुचल, शान्ति मे विष वमन करने वाले आतकवादियों का समूलोच्छेद कर दें।

मन्त्रिणी
कृष्णा ठुकराल

आर्यसमाज मुरैना का ३४वाँ वार्षिकोत्सव

कार्यक्रम स्थल
आर्यसमाज मदिर, मुरैना (म०प्र०)
(म० प्र० विद्युत मण्डल कार्यालय के सामने)

आर्यसमाज मुरैना का ३४वाँ वार्षिकोत्सव दिनांक १४, १५, व १६ मार्च १९८८ सोमवार, मगलवार तथा बुधवार को आयोजित किया जा रहा है जिसमें आर्य जगत् के प्रसिद्ध धर्मोपदेशक, आर्य भजनीक, योग तथा धनुर्विद्या विशारद पधार रहे हैं। स्थानीय प्रतिष्ठित विद्वान् जिनमे मुख्यत डा० शकर सिह तोमर, प० श्यामाचरण शर्मा, प० कृपाचार्य जी, अधिवक्ता श्री बाबूलाल गुप्ता, प० बालमुकुन्द शास्त्री, अभिभावक श्रीमती सुधा बघल, श्रीमती इन्दिरा इन्दु भी सम्मेलन में भाग ले रहे हैं। महिलाओं तथा छात्र छात्राओं का भी कार्यक्रम रखा गया है।

कृपया आप भी अपने परिवार तथा इष्ट मित्रो सहित पधारकर आयोजन की शोभा बढ़ायें।

बाहर से पधारने वाले महानुभाव—

१ पं० रामदत्त शर्मा
आचार्य गुरुकुल एटा (उ० प्र०)

२ प० नरदेव शास्त्री
आर्य भजनोपदेशक भरतपुर (राजस्थान)

३ प्रो० गंगाराम वर्मा
योग एव धनुर्विद्या विशारद, एटा (उ०प्र०)

कार्यक्रम :

प्रतिदिन प्रात ७.३० से ८.३० बजे तक
वेद मन्त्र पाठ एव हवन

प्रतिदिन प्रात ८.३० से १०.३० बजे
भजन, प्रवचन, योग तथा धनुर्विद्या प्रदर्शन

प्रतिदिन अपराह्न ३ से ४ बजे तक
महिलाओं द्वारा भजन एवं प्रवचन

प्रतिदिन रात्रि ७ से १० बजे तक
भजन, व्याख्यान तथा प्रवचन

महर्षि दयानन्द बोधोत्सव पर्व सम्पन्न

आर्यसमाज सेक्टर ७ ए में फरीदाबाद क्षेत्र की समस्त आर्य समाजों की ओर से बडी धूमधाम तथा सोल्लास मनाया गया। यज्ञ के ब्रह्मा पं० श्री ब्रह्मप्रकाश वागीश विद्यावाचस्पति थे। समारोह के मुख्य अतिथि प्रधानाचार्य श्री आर्य वीर भल्ला डी० ए० वी० विद्यालय सेक्टर-१४ फरीदाबाद थे। अध्यक्षता श्री भीमसेन जी वेदालकार बल्लभगढ़ ने की। मुख्य वक्ता श्री महेश विद्यालकार दिल्ली तथा प० ब्रह्मप्रकाश शर्मा वागीश आदि थे। अनेक छात्र-छात्राओं ने प्रभावशाली कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

अन्त में प्रीतिभोज (ऋषि लंगर) का विशाल आयोजन हुआ जिसमें लगभग दो हजार लोगों ने भाग लिया तथा दिल खोल कर दान दिया।

यह समस्त कार्यक्रम परमात्मा तथा जनता जनार्दन के सहयोग से सफलतापूर्वक १६।२।८८ को सम्पन्न हुआ।

—ब्रह्मप्रकाश वागीश

(पृष्ठ - का शेष)

मुण्डक उपनिषद्

पिछले खण्ड मे आत्मज्ञ की बात हुई। वह अप्रत्यक्ष उस 'पर' ब्रह्म के धाम को भी जान लेता है जिस मे सारा शुभ्र विश्व निहित है। इस ब्रह्म की जो निष्काम भाव से उपासना करते हैं वे इस शुभ्र विश्व से भी परे पहुच जाते हैं। जो कोई सकाम कर्म करता है वह अपनी कामना के अनुसार यत्र तत्र जन्म लेता है। पर जो निष्काम भाव से रमण होता है उसको कामनाएँ विलीन हो जाती हैं और वह स्वय अपने आत्मा के शुद्ध रूप को प्राप्त कर कृतकृत्य हो जाता है।

आत्मा को जानना सरल नहीं है। न तो उसे प्रवचनों के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है, न बुद्धि के द्वारा और न ही बहुत सा ज्ञान बटोरकर। जिस व्यक्ति को यह आत्मा वरण करता है वही उसे प्राप्त कर पाता है क्योंकि आत्मा अपना स्वरूप उसी को व्यक्त करता है।

कोई बलहीन मनुष्य आत्मा को नहीं पा सकता। आलस्य और असावधानी रखने वाले को भी आत्मज्ञान नहीं हो सकता और न दिखावटी तप से उसकी प्राप्ति हो सकती है। जो साधक इन उपायो को ठीक पूर्वक अपनाता है उसी का आत्मा ब्रह्मलोक को प्राप्त करता है। ज्ञानतृप्त ऋषि लोग परमात्मा को प्राप्त कर वीतराग, प्रशान्त एव कृतकृत्य हो जाते हैं। वे सर्वव्यापक परमात्मा को प्राप्त करके उस सर्वरूप परमात्मा मे प्रवेश कर जाते हैं। रजोगुण और तमोगुण से रहित होकर उन योगियो का सत्त्वगुण शुद्ध हो जाता है और वे वेदान्त-विज्ञान के द्वारा अर्थ को सुनिश्चित करके ब्रह्म लोको मे पहुचकर सर्वथा मुक्त हो जाते हैं।

आत्मा को षोडशी अर्थात् सोलह कलाओ वाला कहा जाता है। इन कलाओं मे पाच कर्मेन्द्रियाँ, पच प्राण और पच ज्ञानेन्द्रियाँ, ये मिल कर पन्द्रह कलाएं होती हैं और मन ही सोलहवीं कला होता है। मन के अन्तर्गत सभी पन्द्रह कलाओं के अधिष्ठाता देव आ जाते हैं। इन पन्द्रह कलाओं सहित, मन सभी कर्म एव विज्ञानमय, आत्मा, ये सब परम अविनाशी ब्रह्म में एकीभूत हो जाते हैं।

'परात् पर' ब्रह्म के दिव्य स्वरूप मे आत्मा को सभी शक्तियाँ किस प्रकार विलीन हो जाती हैं, इस बात को अब बताया जा रहा है। जैसे सभी नदियाँ प्रवाहित होती हुई जब समुद्र में जाती हैं तो अपने नाम-रूप को खोकर समुद्र में विलीन हो जाती हैं उसी प्रकार ज्ञानी जन अपने नाम-रूप को छोडकर 'परात् पर' ब्रह्म मे एकीभूत हो जाता है।

पूरे मुण्डक उपनिषत् की फल-श्रुति बतलाते हुए कहा गया है कि जो उस 'पर' ब्रह्म को जानता है वह स्वय ब्रह्म हो जाता है। उसके कुल मे कोई भी ब्रह्म को न जानने वाला नहीं रहता। वह शोक और पाप से रहित होकर आन्तरिक ग्रन्थियो से मुक्त होकर 'अ-मृत' बन जाता है। इस कथन के समर्थन मे एक मन्त्र को उद्धृत करते हुए कहा गया है कि ब्रह्मनिष्ठ और वेदज्ञ पुरुष किस को उपदेश करें? कर्म करते हुए और उस 'पर' ब्रह्म परमात्मा मे श्रद्धा रखते हुए, जो स्वय को समर्पित कर देते हैं उन्हीं को ब्रह्मविद्या का उपदेश करना चाहिए क्योंकि वे विधिवत् श्रेष्ठतम व्रत को वरण कर चुके होते हैं।

—वेदसविता प्रस्तुति

ऋषि दयानन्द का गृह त्याग

निर्मोही उस बालक ने जब छोड दिया टकारा।
आजीवन वह गया नहीं जब छोड दिया टकारा।
कष्ट सहे लाखों निर्मोही उस बालक ने।
आजीवन वह गया नहीं जब छोड दिया टंकारा।
पन्द्रह बार विष पान किया उस बालक ने।
आजीवन वह गया नहीं जब छोड दिया टकारा।

—धर्मेन्द्रनाथ शर्मा शास्त्री आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R N No. 32387/77 Post in N.D.P.S.O on 10, 11-3-88 Licenced to post without prepayment, Licence No U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० नं० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

राजस्थान—आर्यसमाज के गौरवशाली कीर्तिमानों का गढ़

—स्वामी आनन्दबोध सरस्वती

अलवर २५ फरवरी। आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के प्रधान श्री छोटूसिंह एडवोकेट के सान्निध्य मे वैदिक विद्यालय मे एक बहुत बडा कार्यक्रम सम्पन्न हुआ जिसमें ५०० कन्याओ ने वेद पाठ, सध्या व यज्ञ किया। सुप्रसिद्ध उद्योगपति श्री सत्यदेव भारद्वाज ने सपत्नीक इसमे भाग लिया। इसके उपरान्त दयानन्द भवन में एक बडा भारी समारोह हुआ जिसमे हजारों लोगो ने भाग लिया।

स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने कहा—राजस्थान आर्यसमाज के गौरवशाली कीतिमानों का गढ रहा है। श्री छोटूसिह एडवोकेट ने इस विद्यालय की स्थापना करके राजस्थान में आर्यसमाज के कीर्तिमान को बढाया है। भव्य यज्ञशाला हमारी वैदिक परम्पराओ को नयी शक्ति दे रही है। सती प्रथा के विरोध मे राजपूताना में प्रथम बार जो ऐतिहासिक रैली हुई है उसका श्रेय भी श्री छोटूसिह को जाता है।

स्वामी आनन्दबोध सरस्वती ने नोआखाली हत्याकाण्ड की चर्चा करते हुए कहा कि महात्मा आनन्द स्वामी जी ने जब यह प्रस्ताव किया कि आर्यसमाज के आर्य वीरो का जत्था वहा जाना चाहिए तो श्री ओमप्रकाश जी त्यागी को सार्वदेशिक सभा की ओर से सेनानायक बनाकर उनके साथ १०१ आर्य वीरो को कलकत्ता भेजने का निर्णय लिया गया था। उस अवसर पर जब मैं अलवर आया तो श्री छोटूसिह द्वारा अलवर मे आर्य वीर दल का प्रभावशाली सगठन बना हुआ था। यहीं से आर्य वीरो को तैयार करके श्री त्यागी जी के नेतृत्व में नोआखाली भेजा गया। जहा उन्होंने ४०,००० बगाली हिन्दुओं को, जो जबरदस्ती मुसलमान बनाये गये थे, पुन: वैदिक धर्म में वापस लाने का सराहनीय कार्य किया। उन्ही दिनों महात्मा गाधी भी नोआखाली मे पहुच चुके थे। जब उनको श्री त्यागी जी के कार्यों का पता चला तो उन्होंने ठक्करबाबा के माध्यम से त्यागी जी को अपने पास बुलाया और कहा कि सुचेता कृपलानी को कुछ मुसलमान गुण्डे जबरदस्ती मुसलमान बनाना चाहते हैं और उनके अपहरण की चेष्टा की जा रही है। आप को उस की रक्षा करनी है। त्यागी जी ने महात्मा जी को विश्वास दिलाया कि जब तक हमारा एक भी आर्य वीर जीवित रहेगा, सुचेता पर कोई हाथ नहीं लगा सकेगा। रात्रि के २ बजे जब मुसलमानों ने सुचेता जी के अपहरण की चेष्टा की तो जागरूक आर्य वीर बमों व रिवाल्वर के साथ मुसलमान गुण्डों पर टूट पडे। जोरदार संघर्ष के पश्चात् मुसलमान गुण्डे भाग खडे हुए। जब महात्मा जी को यह समाचार दिया गया तो उन्होंने प्रसन्नता प्रकट करते हुए आर्य वीरों को धन्यवाद दिया। आज राष्ट्रीय एकता, अखण्डता के लिए आर्य वीरों के उस कीर्तिमयी परम्परा को दुहराने का पुन वक्त आ गया है।

श्री सत्यदेव भारद्वाज ने कहा वैदिक धर्म ही सर्वोत्तम धर्म है, यही मानव जीवन के विकास का आधार है। विदेशों में आर्यसमाज की प्रगति की विस्तार से उन्होंने चर्चा की।

अन्त मे श्री छोटूसिह एडवोकेट ने कार्यक्रम के समापन पर सब का आभार प्रकट किया।

प्रचार विभाग
सार्वदेशिक सभा, दिल्ली

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष ११ : अंक २२ | रविवार २० मार्च १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | चैत्र २०४४ | दयानन्दाब्द—१६१

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

आचार्य वैद्यनाथ का निधन—
आर्य जगत् की अपूरणीय क्षति

वेदों के भाष्यकार, दर्शन, उपनिषद्, कल्प सूत्र, वेदवेदाङ्गों के मर्मज्ञ अनेक भाषाओं के धाराप्रवाह वक्ता, शास्त्रार्थ महारथी, प्रख्यात लेखक, कुशल वक्ता श्री आचार्य वैद्यनाथ का १२ अप्रैल को निधन हो गया। वे ७६ वर्ष के थे। आचार्य जी ने अपने जीवनकाल में ६० पुस्तकें लिखकर वैदिक धर्म की अपूर्व सेवा की। उन्होंने सामवेद, अथर्ववेद और ऋग्वेद के नवम मण्डल का भाष्य किया जो उनकी उद्भट विद्वत्ता का परिचायक है। रोगशय्या पर लेटने से पूर्व वे यजुर्वेद का भाष्य कर रहे थे, केवल आठ अध्याय का ही भाष्य कर पाये थे।

आचार्य वैद्यनाथ का जन्म १९१२ में जौनपुर उत्तर प्रदेश में हुआ था। उन के पिता जी श्री वासुदेव शर्मा कान्यकुब्ज धनाढ्य ब्राह्मण थे। श्री वैद्यनाथ जी ने १६ वर्ष की आयु में ही अपना घर-बार छोड दिया था और अपनी शिक्षा के साथ वे देश की स्वाधीनता के लिए कार्य करने लग पडे थे। प० जवाहरलाल नेहरू के साथ वे स्वाधीनता प्राप्ति के लिए इलाहाबाद नमी जेल में कैद रहे। देश की आजादी तक उन्होंने स्वाधीनता के लिए हरसम्भव योगदान दिया। उसके बाद बिना किसी अपेक्षा के वे राजनीति से सीधे आर्य समाज और वैदिक धर्म की सेवा के लिए लग गये। प्रसिद्ध उपदेशक विद्यालय "दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय" लाहौर के वे प्रिंसिपल रहे। गुरुकुल पोरबन्दर के आचार्य तथा बनारस विश्वविद्यालय के पुस्तकालयाध्यक्ष रहे। आर्य गुरुकुल एटा के मृत्युपर्यन्त कुलाधिपति रहे। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि के १२ वर्ष तक अनुसन्धान विभाग के अध्यक्ष रहे और अब तक सार्वदेशिक के धर्माधिकारी रहे।

आचार्य जी का स्वभाव शान्त, गम्भीर तथा सरल था। वे पूर्णतया धार्मिक और आध्यात्मिक जीवन जीते थे। उन्हें धनलिप्सा, यशेच्छा नहीं रही। आग्रह करने पर भी उन्होंने अपनी जीवनी नहीं लिखी और न कहीं अपना चित्र देने का प्रयत्न किया। प्रात. ३ बजे उठकर प्राणायाम ध्यान करने के बाद घटों तक वेदपाठ किया करते थे। महर्षि दयानन्द के वे सच्चे अनुयायी थे। उन की प्रवचन शैली हृदयग्राही विद्वत्तापूर्ण तथा सैद्धान्तिक होती थी। व्याकरण, साहित्य, गणित, विज्ञान, दर्शन, वेद आदि कैसा भी विषय उन्हें दिया जाता, वे इस कुशलता से व्याख्या करते कि श्रोता सुनकर चकित रह जाते।

आचार्य जी १५ सितम्बर १९८७ से बीमार चल रहे थे। उनके पीछे उन की धर्मपत्नी श्रीमती उर्मिला शास्त्री तथा एक विवाहिता पुत्री श्रीमती शमी हैं। उनके दामाद श्री रोशनलाल अच्छे प्रकाशक हैं।

आचार्य जी ने हिन्दी इगलिश में पुस्तकें लिखीं। जिनमें वैदिक यज्ञ दर्शन, दर्शन तत्त्व मीमांसा, वैदिक ज्योति, कर्म मीमांसा, वैदिक युग और आदि मानव, साइन्सिज इन वेदाज, संस्कार विधि का इगलिश अनुवाद आदि प्रमुख हैं।

उनका अन्तिम सस्कार निगम बोध घाट पर किया गया। जिस में आर्यसमाज के प्रतिष्ठित जनों ने भाग लिया। स्वामी आनन्द बोध ने गहरा दुःख प्रकट करते हुए कहा—आचार्य जी के निधन से अपूरणीय क्षति हुई है। वे वैदिक धर्म के रक्षक वकील थे। महर्षि दयानन्द के अग्रणी सेनानायकों में सर्वतन्त्र स्वतन्त्र विद्वान् थे। कृतज्ञ आर्य जगत् उन्हे सदा याद करेगा।

हैदराबाद से पधारे प० वन्दे मातरम् ने हार्दिक शोक व्यक्त करते हुए कहा—आर्य जगत् के लिए यह गहरा सदमा है। आर्य जगत् को इन विद्वत्ता के धनी पर सदा गर्व रहेगा। हमें ऐसे योग्यतम विद्वान् आर्यसमाज मे तैयार करने होगे। ज्वालापुर हरिद्वार से पधारे महात्मा आर्य भिक्षु ने कहा—आचार्य जी ने हिन्दी इगलिश दोनों भाषाओ से देश-विदेश में आर्यसमाज का प्रचार प्रसार किया। आचार्य जी का जीवन, आदर्श ब्राह्मण, अद्भुत वक्ता और कर्मठ नेता का आदर्श रूप था।

आचार्य वैद्यनाथ का दाह कर्म निगम बोध घाट पर सम्पन्न हुआ। जिस मे गुरुकुल गौतम नगर के आचार्य तथा विद्यार्थी गण ने अन्य विद्वानो के साथ मन्त्र पाठ किया। आर्यसमाज के अनेक वरिष्ठ जन इस अवसर पर उपस्थित थे।

आचार्य जी की स्मृति मे १३ मार्च को आर्यसमाज दीवान हाल में श्रद्धाञ्जलि सभा हुई जिसकी अध्यक्षता प० रामचन्द्रराव वन्दे मातरम् ने की। मुख्य वक्ता थे स्वामी आनद बोध, डा० धर्मपाल, श्री पृथिवीराज शास्त्री, डा० शिवकुमार शास्त्री, श्री सूर्यदेव, श्री यशपाल सुधांशु, प० सच्चिदानन्द शास्त्री आदि।

राष्ट्र के प्रहरी

(१)

हम रहें न रहें
पर राष्ट्र का अस्तित्व रहना चाहिए
यही है ध्येय हमारा
और हम इसे प्राण-प्रण से पूरा
करेंगे।

इसी के लिए
हम जिएँगे-मरेंगे
प्रत्येक कष्ट सहन करेंगे
हर मूल्य पर
इसकी आन बान की
रक्षा करेंगे, सतर्क रहेंगे।

ताकि—
आने वाली पीढ़ियाँ
अपने प्राण-प्रिय राष्ट्र के
गौरव और मर्यादा को
सभ्यता और सस्कृति को
कर्म के मर्म को
मानव के धर्म को
विस्मृत न कर दें
आवश्यकता पडे तो
समय आने पर
अपने प्राणों की आहुति से
इन तत्त्वों की पूर्ति कर दें।

(२)

राष्ट्र एक चेतन यज्ञ है
और हम इसकी समिधाएँ
त्याग-भावना सामग्री
आत्म-समर्पण घृत
और स्वतन्त्रता सुगन्ध
जब इस पावन-पुण्य-पुनीत
चेतन यज्ञ में
समिधाओं की अग्नि
त्याग की सामग्री
और आत्म-समर्पण के घृत से
स्वतन्त्रता की सुगन्ध प्रसारित होगी
तभी राष्ट्र यज्ञ सफल होगा।

—नीरज ठाकुर

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

क्या बिगाड़ेगी अगर..........?

—स्वामी वेदमुनि परिव्राजक
अध्यक्ष—वैदिक संस्थान नजीबाबाद (उ० प्र०)

★

पिछले दिनों वैदिक संस्थान नजीबाबाद से "मुसलमान बन्धुओ ! विचार करो, अयोध्या में रामजन्म मन्दिर या मस्जिद" शीर्षक से एक लघु पुस्तिका प्रकाशित हुई थी। इस पुस्तक मे चार लघु लेख हैं। पहला लेख श्री अमरेश आर्य 'अफजल उलमा" एम ए पी एच डी का है। उन्होंने अयोध्या जाकर उस भवन का स्वय निरीक्षण किया और अपने निरीक्षण परिणाम को इस प्रकार घोषित किया है कि इस इमारत का रुख स्वय बता रहा है कि सचमुच यह इमारत मस्जिद के रूप मे निर्मित नहीं है। क्योंकि इसमें नमाज मे खडे होने के स्थान का रुख ठीक तरह से "किबला" को ओर नहीं है। इमारत के अन्दर और बाहर की दीवारो पर जो स्थापत्य है, वह मस्जिद में नही, हिंदू मन्दिरो मे पायी जाती है। इस इमारत के आस-पास 'वज्" करने का स्थान नहीं है और न ही ऐसे स्थान का कोई निशान है। इसके आस-पास की आबादी उपासनागृह आदि से यह प्रमाणित होता है कि यहा किसी मस्जिद का वजूद ही नहीं था। इसमें लगे पत्थर में यह लिखा हुआ है कि इस इमारत को मस्जिद में रूपान्तर करने से पूर्व यह एक ऐसा उपासना-गृह था, यहा पर श्री राम सीता और हनुमान की पूजा की जाती थी।" किसी पीर या मुर्शिद को खुश करने के लिए इस इमारत के ऊपरी हिस्सो में थोडा सा रूपान्तर कर के अधूरा मस्जिद का रूप दिया गया है। विद्वान् लेखक ने अपनी निरीक्षण सूचना मे आलमगीरिया में गुजमरात तथा बहरुल शईक के हवाले से यह भी उल्लेख किया है कि जबरदस्ती कब्जा की हुयी इमारत को यदि मस्जिद मे रूपान्तरित किया जाये तो ऐसी मस्जिद में नमाज पढना निषिद्ध है। फिर उन्होंने इस विषय पर सार्वजनिक रूप से शास्त्राथ के लिए उसे मस्जिद बताने वालो को मस्जिद सिद्ध करने के लिए चैलेन्ज भी किया है।

दूसरा लेख स्वय मेरा है। सन् १९६१ की श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के अवसर पर ससद में श्री पंडित प्रकाशवीर शास्त्री द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव और आर्यसमाज दीवान-हाल की महती सभा में श्री कृष्ण जन्म दिन पर होने वाले अपने भाषण में जो कुछ कहा था, इस लेख मे उसका उल्लेख है।

तीसरा लेख है श्री सीताराम गोयल का। आपने "दि रिपोर्ट आफ दि आर्क्योलौजिकल सर्वे आफ इण्डिया न्यू सीरीज वौल्यूम एक" के पृष्ठ ६ से ६८ तक के प्रमाणों से यह सिद्ध किया है कि वास्तव में यह राम जन्म स्थान है। इस रिपोर्ट में लिखा है कि "अयोध्या में बाबर की मस्जिद का निर्माण हिजरी सन् ९३० अथवा ईसवी सन् १५२८ में मीरखान द्वारा ठीक उसी स्थान पर करवाया गया, जहा "रामचन्द्र जन्म स्थान मन्दिर" बना था। इस मन्दिर के बहुत से भागो को मुसलमानों ने बाबर की मस्जिद के निर्माण में प्रयुक्त किया है।"

चौथा लेख श्री डा० वेदनपाल सिंह जी का है। उन्होंने श्रीराम-जन्म मन्दिर के मस्जिद में रूपातरित होने की ऐतिहासिकता का वर्णन किया है। इस प्रकार के लेखों को झुठलाने के लिए आवश्यक है कि मस्जिद के पक्षधर अपने पक्ष को सिद्ध करने के लिए सार्वजनिक रूप से मन्च पर आना स्वीकार करें और इसके लिए चाहे उक्त लेखकों से अथवा हम से पत्र-व्यवहार कर समय व स्थान निश्चित कर लें। बुद्धिमानों का कार्य है कि वह सत्य को जानने का प्रयत्न करे और जो बात सत्य सिद्ध हो जाये, उसे ईमानदारी से स्वीकार कर लें। यदि कोई इसके लिए तयार नही तो उसे दुराग्रही के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है?

दुराग्रह वही लोग किया करते हैं, जो न्याय और नैतिकता से दूर का भी सम्बन्ध नही रखते और जगल के कानून में विश्वास रखते हैं। परन्तु क्या कहा जाय भारत के मुसलमानों को? यह दुनिया से निराले हैं। सस्थान द्वारा प्रकाशित इस पुस्तिका को पढ़ कर नजीबाबाद के किसी दीनदार की दीनी कढ़ी मे उबाल आया तो उसने "बाबरी मस्जिद का एक सिपाही" अपना नाम लिख कर एक धमकी भरा "फुलस्केप साइज" के चार पृष्ठ का पत्र हमें लिख मारा। इस से सिद्ध है कि वह यह मानते हैं कि उक्त लेखों में तथ्यों का प्रकाशन किया गया है, उन्हें झुठलाया नहीं जा सकता किन्तु हठधर्मी पूर्वक मजहबी जनून का प्रदर्शन तो किया जा सकता है। हम ऐसे लोगों को यह कह देना चाहते हैं कि इन धमकियों से हम भयभीत होने वाले नहीं हैं। वह जब चाहें अपनी इच्छा पूरी कर लें। हम तो—

है जामे शहादत पीने को।
जामा ही शहीदी पहना है॥

लगता है मां भारत को बलिदानों की आवश्यकता है और इस शृङ्खला में एक कडी मुझे भी बनना है। मैं प्रसन्नतापूर्वक तैयार हू। आर्यसमाज का इतिहास है ही बलिदानों का इतिहास। आर्यसमाज के सस्थापक स्वनामधन्य महर्षि दयानन्द ने स्वय अपना जीवन होम कर आर्यों के बलिदानों की आधारशिला रखी थी। सन् १९३९ के हैदराबाद और सन् १९५७ के पजाब के सत्याग्रहों के बलिदानों के अतिरिक्त भी आर्यों ने अनेक बलिदान समय-समय पर दिये हैं। सर्व श्री धर्मवीर, पण्डित लेखराम जो आर्य पथिक, महाशय राजपाल जी, स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज, महात्मा भक्त फूलसिंह जी के बलिदान तो इतिहास प्रसिद्ध हैं अब की मेरी बारी सही।

हमने सदैव बलिदान ही दिये हैं। सीने पर गोलिया और पेट में छुरे खाये हैं, कभी किसी की हत्या नहीं की। अब भी बलिदान देने को तैयार हैं। यदि मां भारत को अब की बार मेरे बलिदान की आवश्यकता है तो यह मेरा सौभाग्य होगा। बलिदान ही होगा, मृत्यु नहीं। आर्य कभी नहीं मरता। हम तो कलेवर बदलते हैं, सो—

आत्मा है मैं बदल
डालूगा फौरन चोला।
क्या बिगाड़ेगी अगर
मेरी कजा आवेगी।

बहुत दिनों से इस प्रकार का कोई बलिदान हुआ भी नहीं। इस प्रकार के बलिदानों की शृङ्खला यदि प्रारम्भ हो जाय तो सचमुच आर्य जाति में जीवन आ जाये। जातियों को जीवन बलिदानों से ही मिलता है। इस्लाम के रक्त-रंजित इतिहास में एक पृष्ठ और युक्त करने के लिए पत्र लेखक अपना दीन का गाजी बनने का शौक पूरा कर ले।

है छूट नहीं घर से ऊपर और
जान से ऊपर मार नहीं।
वह अपना शौक करे पूरा,
मुझे इससे भी इन्कार नही॥

घर है ही नहीं, उसे पहले ही छोड़े फिर रहा हूं। जहां तक जान की बात है, यह एक दिन जानी ही है। छिप कर नहीं, वह मुझे पुकार कर, सावधान कर के गोली मारे। मैं छाती तान कर उसका स्वागत करूंगा।

मैं ऐसा नही मानता कि सभी मुसलमान इसी प्रकार के वहशी होते हैं, मगर मैं कहना यह चाहता हूं कि जो साहबे ईमान मुसलमान हैं, ऐसे अवसरों पर वह चुप क्यों रहते हैं? उन्हें आवाज उठानी चाहिये। इस प्रकार की दरिन्दगी के धब्बों को इस्लाम की चादर पर अब अधिक न लगने दें। उस पुस्तिका के पहले लेख में श्री अमरेश आर्य ने जो तथ्य दिये हैं और "आलम गीरिया मे गुजमरात" तथा 'बहरुल शईक" के जो हवाले दिये हैं क्या वह मिथ्या है? यदि वह ठीक हैं तो ईमानदार, शिक्षित मुसलमानों को खुले आम वास्तविकता को स्वीकार करना चाहिये और इस प्रकार के फितना बरपा करने वालो को भर्त्सना (मरम्मत) करनी चाहिये। यदि वह अयोध्या आकर इन तथ्यों को जाच कर सत्य उजागर करने को तैयार नही तो "आलमगीरिया मे गुजमरात" तथा 'बहरुल शईक" को देखें और फिर "इस्लाम की रूह" के हवाले से ही इस प्रकार के वहशियाना विचार रखने वाले लोगों की भर्त्सना करें। यदि मुसलमानों का शिक्षित वर्ग आगे आकर इस प्रकार की ईमानदाराना आवाज उठायेगा तो वह न केवल इस्लाम की पाबन्दी करेगा अपितु मानव धर्म (मजहबे इन्सानियत) की भी बहुत बड़ी सेवा करेगा। ममनति बिस्सरेश।

★ ★

आर्यसमाज और राजनीति

ले०—बलराज मधोक

★

गत कुछ समय से आर्यसमाज की पत्र पत्रिकाओं में स्वतन्त्रता से पूर्व भारत की राजनीति में आर्यसमाज की भूमिका और स्वतन्त्र देश की राजनीति को आर्यसमाज के सिद्धान्तों के अनुरूप ढालने, इसका भारतीयकरण करने और राजनैतिक क्षेत्र में भी हिन्दू समाज को दिशा देने सम्बन्धी लेख छप रहे हैं। डा० हर्षनारायण और डा० भवानीलाल भारतीय के "राजनीति का भारतीयकरण सम्बन्धी लेख विशेष रूप में विचारणीय हैं।

आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती राष्ट्र के जीवन में राजनीति के महत्व को समझते थे। इसलिए उनके द्वारा चलाए गए राष्ट्रोत्थान के अभियान में राजनैतिक चेतना पैदा करने और देश को राजनीति को राष्ट्रहित के अनुरूप दिशा देने की ओर विशेष ध्यान दिया गया था। वर्तमान युग में आर्यावर्त्त में आर्य राजनीति अथवा हिन्दुस्तान में हिन्दू राजनीति के वे प्रथम व्याख्याता और अग्रदूत थे। उन्होंने न केवल १८५७ के सशस्त्र स्वतन्त्रता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की अपितु उसके विफल हो जाने के बाद भी सारा देश कुछ समय के लिए हतप्रभ हो गया था, उन्होंने स्वतन्त्रता की आकांक्षा को जीवित रखा। १८५७ में अंग्रेजों की विजय के बाद सब से पहले महर्षि ने ही हिन्दुस्तान में राजनैतिक चेतना और राष्ट्रीयता की भावना जगाने और इसे पुन. स्वतन्त्र कराने के लिए आवाज उठाई थी। राष्ट्र चेतना के आधार के रूप में राष्ट्रीय संस्कृति के सम्बन्ध मे जागरूकता पैदा करना, राष्ट्रीय स्वाभिमान को जगाना, राष्ट्रीय एकता के मूल सूत्र के रूप में हिन्दी को राष्ट्रभाषा और देवनागरी लिपि को राष्ट्रीय लिपि के रूप मे प्रस्तुत करना, राष्ट्रीय हिन्दू समाज को सुदृढ़ करने के लिए उसमें व्याप्त छुआछूत आदि कुरीतियों को मिटा कर समाज में एकरूपता पैदा करना, उनके द्वारा शुरू की गई सर्वतोमुखी समग्र क्रान्ति के प्रमुख अंग थे। उन्होंने अपने जीवन के अंतिम वर्ष कुछ देशी नरेशों के जीवन और चिन्तन को बदलने और उन्हें भावी स्वतन्त्रता संग्राम में प्रभावी भूमिका अदा करने हेतु तैयार करने में बिताए। वे इस बात को समझते थे कि बिना प्रबल शक्ति और संघर्ष के देश को स्वतन्त्र नहीं किया जा सकता। वे देशी नरेशों की शक्ति का इस दिशा में प्रयोग करना चाहते थे। सत्यार्थ प्रकाश में भी पूरा छठा समुल्लास राजनीति पर लिख कर उन्होंने अपने अनुयायियों और अपने द्वारा प्रस्थापित आर्यसमाज के सभासदों और समर्थकों को राजनीति की उपेक्षा न करने का सन्देश दिया।

यह महर्षि दयानन्द के जीवन और चिन्तन का ही प्रभाव था कि उनके निधन के बाद आर्यसमाज को ब्रिटिश शासक एक क्रान्तिकारी और बगावती (सेडिशियस) आन्दोलन मानने लगे। आर्यसमाज से प्रभावित लोगों के देश के स्वतन्त्रता आन्दोलन में दिये गए योगदान को आर्यसमाज के कट्टर आलोचक भी नकार नहीं सकते। महात्मा गांधी का कांग्रेस पर वर्चस्व कायम होने तक कांग्रेस की नीति रीति पर महर्षि दयानन्द के चिन्तन का प्रभाव और आर्यसमाज की छाप स्पष्ट दिखती थी। परन्तु जब गांधी जी ने खिलाफती मुल्लाओं के प्रभाव में आकर कांग्रेस को नीति-रीति को मुस्लिम पोषक रूप देना और हिन्दुओं में हीन भावना पैदा करना शुरु किया तो भाई परमानन्द, लाला लाजपत राय और स्वामी श्रद्धानन्द जैसे अनेक आर्यसमाजी नेताओं ने उस नीति के विरोध स्वरूप कांग्रेस को छोड दिया, परन्तु स्वतन्त्रता आन्दोलन में उनका योगदान बना रहा। राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन और लाल बहादुर शास्त्री जैसे अनेक आर्यसमाजी बन्धु तब भी कांग्रेस के अन्दर से कांग्रेस की नीतियों को प्रभावित करने का प्रयत्न करते रहे। सरदार पटेल का यथार्थवादी और राष्ट्रवादी चिन्तन महर्षि दयानन्द के चिन्तन के निकट था। इसलिये उनके रहते हुए गांधी, नेहरू और मौलाना आजाद की तिकडी के बावजूद कांग्रेस में एक प्रभावी, राष्ट्रवादी हिन्दुत्ववादी 'लॉबी' बनी रही।

१९५० में सरदार पटेल के निधन के बाद कांग्रेस दल और कांग्रेस शासन पर प० नेहरू और मौलाना आजाद पूरी तरह हावी हो गए। इनकी पाकिस्तान और खंडित भारत में रह गए मुसलमानों की हिन्दुस्तान और हिन्दुओं के हितों की कीमत पर तुष्टिकरण की नीति के कारण आर्यसमाजी और अन्य प्रबुद्ध हिन्दुओं में व्यापक रोष फैलने लगा। डाक्टर श्यामा प्रसाद मुकर्जी ने इस नीति के विरोध मे ही प० नेहरू के मन्त्रिमंडल को छोडा था। वे आर्यसमाज के भी अति निकट थे। वे एक आर्यसम्मेलन की अध्यक्षता भी कर चुके थे। इसीलिए वे आर्यसमाज से सम्बन्धित तथा अन्य राष्ट्रवादी हिन्दुत्ववादी तत्वों की आशा का केन्द्र बन गये।

भारतीय जनसंघ का निर्माण इस परिस्थिति का परिणाम था। इसके बनाने मे उस काल के प्रमुख आर्यसमाजी बन्धुओं–महाशय कृष्ण, आचार्य रामदेव, लाला योधराज, लाला बलराज, वैद्य गुरुदत्त इत्यादि ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। भाई महावीर और मैं उस समय राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के साथ सम्बन्धित थे। परन्तु हमारी भी पृष्ठभूमि आर्यसमाज की ही थी। इसलिये मेरे द्वारा लिखे गए जनसंघ के प्रथम घोषणा पत्र पर महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज के चिन्तन की भी छाप थी।

राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के कर्णधार भी परिस्थिति से क्षुब्ध थे। परन्तु वे डाक्टर मुकर्जी को समर्थन देने के मामले में एकमत नहीं हो पा रहे थे। जब डाक्टर मुकर्जी ने उनके निर्णय की प्रतीक्षा किए बिना समान विचार वाले अन्य लोगों के सहयोग से राजनैतिक हिन्दुत्ववादी संगठन बनाने का फैसला कर लिया तब संघ के नेताओं ने उन्हें संघ का भी समर्थन देने का निर्णय कर लिया।

जनसंघ की गाडी को चलाने के लिए पहली बडी आर्थिक सहायता महात्मा हंसराज के सुपुत्र लाला योधराज से मिली। जनसंघ की पहली कार्यसमिति में आर्यसमाज से सम्बन्धित बन्धुओं की संख्या अधिक थी। जनसंघ को एक प्रभावी हिन्दुत्ववादी संगठन बनाने में आर्यसमाज का योगदान किसी तरह भी संघ के योगदान से कम नहीं था।

यह स्थिति १९६७ तक बनी रही। उस समय मैं भारतीय जनसंघ का अखिल भारतीय अध्यक्ष था। भारत और भारतीय राजनीति का भारतीयकरण और हिन्दूकरण १९६७ के लोकसभा के चुनाव में जनसंघ के मुख्य मुद्दे थे। उस चुनाव में लाला रामगोपाल शालवाले (स्वामी आनन्द बोध सरस्वती) स्वर्गीय श्री ओमप्रकाश पुरुषार्थी, श्री यज्ञदत्त शर्मा, श्री शिवकुमार शास्त्री श्री जगदेव सिद्धान्ती, स्वामी रामेश्वरानन्द, स्व० श्री प्रकाशवीर शास्त्री, श्री निरञ्जन वर्मा इत्यादि अनेक प्रमुख आर्यसमाजी बन्धु जनसंघ के टिकट पर या जनसंघ के समर्थन से चुन कर संसद में पहुंचे थे और उन्होंने देश की राजनीति को प्रभावी ढंग से आर्यसमाज के चिन्तन के अनुसार प्रभावित भी किया था।

१९६७ के अन्त में मेरे द्वारा जनसंघ का अध्यक्ष पद छोडने और मेरे उत्तराधिकारी श्री दीनदयाल उपाध्याय की १९६८ के शुरू में रहस्यमय हत्या के बाद जनसंघ की बागडोर ऐसे तत्वों के हाथ में आ गई जिनके प्रेरणा स्रोत न महर्षि दयानन्द थे और न वीर सावरकर और न डा० मुकर्जी और न डा० हेडगेवार। उसके बाद जनसंघ का भी वही हाल हुआ जो गांधी जी के आने के बाद कांग्रेस का हुआ था। फलस्वरूप वैद्य गुरुदत्त और मेरे जैसे अनेक आर्यसमाजी व हिन्दुत्ववादियों ने या तो जनसंघ को छोड दिया और या जनसंघ के नये नेतृत्व ने उन्हें निकाल दिया। फलस्वरूप जनसंघ अपना वैचारिक आधार खो बैठा। यही कारण था कि १९७७ में बनी जनता सरकार का सब से बड़ा घटक होने के बावजूद जनसंघ उसकी नीति-रीति को राष्ट्रवादी और हिन्दुत्ववादी दिशा देने में पूरी तरह विफल हुआ। यदि इसके नेताओं ने अपना वैचारिक आधार न छोडा होता तो वे वैचारिक स्तर पर चौधरी चरण सिंह जैसे आर्यसमाजी के साथ तालमेल कर के भारत की राजनीति के भारतीयकरण कर के भारत को आन्तरिक व बाहरी नीतियों को राष्ट्रवादी दिशा दे पाते।

जनता पार्टी के विघटन के बाद जनसंघ के नये कर्णधारों ने जनसंघ के नाम, केसरिया झण्डे, विचारधारा और प्रेरणास्रोतों का परित्याग कर के भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) के नाम से कांग्रेस

(शेष पृष्ठ ६ पर)

प्रभु-भक्त दयानन्द

आचार्य भद्रसेन

मनुष्य जीवन का मुख्य उद्देश्य अपनी आत्मिक ज्योति को प्राप्त करना, तथा उसके विमल प्रकाश द्वारा निज अन्तःकरण में प्रभु के दिव्य दर्शनों को प्राप्त करना है। वही मनुष्य इस भवजाल के जन्म-मरण रूपी बन्धन से मुक्त हो सकता है, तथा इह लोक में भी सुख और शान्ति का अनुभव कर सकता है, जिसने अपने निर्मल अन्तःकरण में उस प्रभु का साक्षात् कर लिया है। जो मनुष्य अहर्निश सांसारिक सुख भोग में आसक्त हो प्रभु प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील नहीं होता, उसका जीवन अजागल-स्तनवत् निरर्थक ही नहीं, प्रत्युत सर्वथा शुष्क और नीरस है। यह सर्वथा सत्य है कि भगवद्-विमुख जन न तो इस लोक में ही सुख और शान्ति का अनुभव कर सकते हैं और न ही जन्म मरण रूपी आवागमन से ही छुटकारा पा सकते हैं। इसीलिए वेद में एक सच्चा प्रभु-प्रेमी मुमुक्षु प्रभु से प्रार्थना करता है—

वेदाहमेतं पुरुषं महान्त-
मादित्यवर्णं तमसः परस्तात्।
तमेव विदित्वाऽति मृत्युमेति
नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ॥

'हे करुणामय प्रभो! आप अपनी अपार अनुकम्पा से मुझे वह आत्मिक बल प्रदान करो जिससे कि मैं अपनी विशुद्ध आत्मिक ज्योति द्वारा आपके महान् अविद्यान्धकार से रहित दिव्य दर्शनों को प्राप्त कर सकूं। भगवन्! आपके दिव्य दर्शनों को पाकर ही मैं इस जन्म मरण रूपी भव-बन्धनों तथा अविद्या आदि पंच क्लेशों से सर्वथा पृथक् और मुक्त हो सकूंगा। स्वामिन्! आपके मधुर मिलन के बिना अन्य कौन सा उपाय है, जिससे कि मैं इस भव-जाल से मुक्त हो सकूं।" कई प्रभु के अनन्य भक्त व्याकुल होकर वेद के शब्दों में प्रायः कहने लगते हैं—

उप त्वग्ने दिवे दिवे,
तत्कदा न्वन्तर्वरुणे भुवानि।
किं मे हव्यमहृणानो जुषेत,
कदा मृळीकं सुमना अभिख्यम् ॥

प्रभो! वह दिन कब आयेगा, जब मैं तेरी प्रेममयी गोदी में बैठकर तुझ से मधुर वार्तालाप करूंगा। हे अन्तर्यामिन्! कब मैं तेरे दिव्य स्वरूप में इतना लवलीन हो जाऊंगा कि अपनी सुधबुध भी भूल जाऊंगा। नाथ! कब आप मेरे हृदय मन्दिर के द्वार पर स्वयं आकर निःशंकरूप से मेरी भेंट स्वीकार करोगे। प्रभो! वह कौन-सी शुभ घड़ी होगी, जब मैं अपने शुद्ध पवित्र और निर्मल अन्तःकरण द्वारा तेरे मंगलमय परमानन्द स्वरूप के दर्शन कर कृतकृत्य हो जाऊंगा, और अपने को धन्य समझूंगा।

अब प्रश्न होता है कि वह सुधा के अनन्त भण्डार प्रभु का मधुर मिलन कैसे हो? इसके लिए महात्मा जनों ने अनेक साधन बताए हैं जिन में सबसे सरल तथा सुगम साधन है 'प्रभु भक्ति"। ईश्वर की भक्ति ही प्रभु-प्राप्ति का एकमात्र अचूक तथा सरल उपाय है। किन्तु प्रभु के प्रति पूर्ण श्रद्धा तथा भक्ति-भाव का अंकुर तब तक उत्पन्न नहीं हो सकता, जब तक कि भक्त का भगवान की सत्ता के ऊपर अटल विश्वास न हो। प्रभु-सत्ता पर अटल विश्वास होने पर ही उपासक के मनोमन्दिर में प्रभु के प्रति भक्ति भाव का अंकुर उत्पन्न होता है। जिसके हृदय में भगवान के प्रति अटल विश्वास तथा अगाध श्रद्धा नहीं, वह कभी भी 'भगवद् भक्त' के पावन पद को प्राप्त नहीं कर सकता। इसीलिए उपनिषदें कहती हैं—

अस्तीत्येवोपलब्धव्यः।

अर्थात् भगवान् हैं ऐसा अटल विश्वास रखकर ही साधक को प्रभु-पद प्राप्ति के पावन पथ पर पदार्पण करना चाहिए। सारांश यह है कि मनुष्य भगवान् पर अटल विश्वास रखने तथा उसकी प्रेमपूर्ण भक्ति द्वारा ही प्रभु को पा सकता है तथा यही मानव जीवन का चरम लक्ष्य है। इसीलिए अद्यावधि संसार में जितने भी सन्त तथा महात्मा हुए हैं वे भगवान् के अटल विश्वासी तथा उसके परम भक्त थे। प्रभु-प्राप्ति ही उनके जीवन का एकमात्र अन्तिम लक्ष्य था। सच तो यह है कि महान् आत्मा जो भगवान् उस को अपने जीवनादर्श द्वारा साक्षात् करने से ही वे सन्त, महात्मा या महापुरुष कहलाते हैं। वास्तव में देखा जाये तो सन्त और महात्मा नाम ही उनका है, जो भगवान् की सत्ता को स्वीकार कर और तदनुसार अपने जीवनादर्श को बनाकर उसका अपनी विमल तथा दिव्य दृष्टि द्वारा साक्षात् कर लेते हैं। जैसा कि उपनिषदों में कहा है—

अस्ति ब्रह्मेति चेद् वेद, सन्तमेनं ततो विदुः।

अर्थात् जिस ने 'भगवान् हैं" ऐसा पूर्ण निश्चय कर, उसको यथार्थ रूप में जान और पहचान लिया है, उसे ही 'सन्त' कहते हैं। इतना ही नहीं, उपनिषद् तो यहां तक कहती है कि जो मनुष्य परमेश्वर की सत्ता पर पूर्ण विश्वास नहीं करते, वे किसी अवस्था में भी सत या महात्मा कहलाने के अधिकारी नहीं। चाहे वे अपने को कितना भी उच्च या महान् व्यक्ति क्यों न मानते हों। जैसे कि उपनिषद् ही आगे स्वयं कहती है—

असन्नेव स भवति, असद् ब्रह्मेति वेद चेत्।

अर्थात् जो जन भगवान् की सत्ता को स्वीकार नहीं करते, वे किसी भी अवस्था में सन्त नहीं, अपितु उन्हें असन्त ही कहना चाहिए। तात्पर्य यह है कि जो महानुभाव भगवत्-सत्ता को मानकर उस के आदेशानुसार ही अपने जीवनादर्श को बनाने तथा अन्त में प्रभु की अनन्य भक्ति के पावन प्रताप से जगत् के मोह माया रूपी पाशों को तोड़, अपने निर्मल हृदय मन्दिर में प्रभु के दर्शन कर, सदा उसमें ही विचरण करते हैं, वे ही सन्त, महात्मा या भक्त आदि नामों से पुकारे जाते हैं। इसी बात को महाराष्ट्र के प्रसिद्ध सन्त तुकाराम ने अपने अभंग (मराठी कविता) में बड़ी उत्तम रीति से वर्णन किया है। वे लिखते हैं—

भक्त ऐसे जाणा जे देहीं उदास,
गेले आशापाश निवारूनी।
विषय तो त्यांचा झाला नारायण,
नावडे धन जन माता पिता ॥

अर्थात् जो जन इस नश्वर, जड़ शरीर की चिन्ता को छोड़, सदा आत्म-चिन्तन में रत हैं। जिन्होंने संसार के विषय वासना रूपी बन्धन को तोड़ दिया है तथा जो इस विनश्वर संसार के स्त्री, पुत्र, माता-पिता तथा धन-सम्पत्ति के मोह को छोड़कर केवल भगवान में ही विचरण करते हैं। जिन्होंने संसार के क्षणिक विषयों से सदा के लिए मुंह मोड़ केवल प्रभु को ही एकमात्र अपना विषय अर्थात् लक्ष्य बना लिया है। उन्हीं पुरुषों को ही भक्त या सन्त समझना चाहिए।

ऐसे संतों तथा भक्तों का सर्वस्व केवल भगवान् के लिए ही हुआ करता है। वे अपना तन, मन, धन सब कुछ भगवान् को ही अर्पण कर देते हैं। वे वेद के शब्दों में भगवान् से सदा यही प्रार्थना किया करते हैं—

वयं सोम व्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रतः।

हे भक्त वत्सल प्रभो! हम तो आप के मधुर मिलन के लिए ही इस मन को अपने तन में धारण कर रहे हैं। ऐसे सन्त ही संसार में आकर भवानल में सन्तप्त आत्माओं को शान्ति प्रदान करते हैं। अविद्या-अंधकार में ग्रसित कुमार्गगामी जीवों को सन्मार्ग पर लाने का प्रयत्न करते हैं तथा भगवद्-विमुख नास्तिक जनों में भी अपने सदुपदेशों द्वारा आस्तिक भावों का संचार करते हैं। ऐसे महापुरुष समय समय पर सब देशों में हुए हैं। इन्हीं महापुरुषों में उन्नीसवीं सदी के प्रसिद्ध महापुरुष ऋषि दयानन्द जी महाराज भी हैं जिन्होंने सौराष्ट्र प्रान्त में प्रकट हो अपने मधुर उपदेशों द्वारा सम्पूर्ण भारत को ही सुराष्ट्र बना दिया है। सदियों से अज्ञानरूपी गाढ़निद्रा में सोई हुई आर्य जाति को अपने सदुपदेश-रूपी सिंह गर्जना से पुनः जाग्रत कर उसमें नव चैतन्य का संचार किया है।

अन्य भगवद् भक्तों की भांति ऋषि दयानन्द भी भगवान् के अनन्य भक्त थे। उन्होंने एकमात्र भगवान् के मधुर-मिलन के लिए ही अपने सर्वसौख्य सम्पन्न, सम्पत्तिशाली गृह का परित्याग कर दिया था। माता, पिता तथा अन्य स्नेही सम्बन्धियों से अपने स्नेह सूत्र को सदा के लिए तोड़ दिया था। बीस-बाईस वर्ष की तरुण अवस्था में विवाह के बंधन

प्रभु-भक्त दयानन्द

प्रलोभन भी उन्हें प्रभु-प्राप्ति के पावन-पथ से परे नहीं हटा सके। उनके जीवन का एकमात्र लक्ष्य प्रभु-भक्ति तथा परमात्म-पद प्राप्ति ही था। प्रिय पाठकों को महर्षि के आध्यात्मिक उपदेशों को पढ़कर ही उन के प्रभुमय जीवन का प्रबल परिचय प्राप्त हो जायेगा।

पूर्व इसके कि हम महाराज के आध्यात्मिक उपदेशरूपी पावन-पीयूष का अपने प्रिय पाठकों को पान करायें, उनके प्रभुमय जीवन की थोड़ी-सी झांकी करा देना उचित समझते हैं। जैसा कि हम प्रथम लिख आये हैं कि भगवान् दयानन्द प्रभु के न केवल अटल विश्वासी अपितु अनन्य भक्त भी थे। इसका प्रबल परिचय उनके आध्यात्मिक उपदेशों से तो मिलता ही है, किन्तु उनका जीवन भी उनकी प्रभु परायणता का प्रबल परिचायक है। सिन्ध के प्रसिद्ध सन्त टी० एल० वास्वानी अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'पथ प्रदीप" में लिखते हैं—"महर्षि दयानन्द का ईश्वर पर अटल विश्वास था। उस सच्चिदानन्द चेतन स्वरूप परमात्मा को पूजा करना ही दयानन्द के जीवन का परमलक्ष्य था।" किंतु जहाँ वे प्रभु के अनन्य भक्त थे, वहां वे अन्ध श्रद्धालु भी नहीं थे। वे भगवान् के नाम पर किए जाने वाले मिथ्या स्वार्थ साधक आडम्बरों को पसन्द नहीं करते थे। वे केवल परमेश्वर का वाचिक नाम करना मात्र ही ईश्वर भक्ति नहीं मानते थे। भगवान् के पवित्र नाम का अर्थ विचारपूर्वक जप करना और तदनुकूल प्रभु की गुण-गरिमा को अपने जीवन में चरितार्थ करना ही प्रभु की सच्ची भक्ति बताते थे। महर्षि "स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश" में उपासना का वर्णन करते हुए लिखते हैं—

"जैसे परमेश्वर के गुण, कर्म स्वभाव पवित्र हैं, उसी प्रकार अपने भी गुण, कर्म स्वभावों को पवित्र बनाना, तथा ईश्वर को सर्वव्यापक जानकर उसकी समीपता का योगाभ्यास द्वारा साक्षात् करना ही उपासना कहलाती है।" ऋषि दयानन्द जिस वैदिक भक्ति के पोषक थे, उस का संक्षिप्त स्वरूप हम पाठकों के सम्मुख उपस्थित कर देना उचित समझते हैं। पूर्व इसके कि हम प्रभु-भक्ति का महर्षि सम्मत स्वरूप पाठकों के सम्मुख रखें, प्रभु की भक्ति क्यों की जाये इस सम्बन्ध में कुछ पंक्तियाँ लिख देना भी उचित समझते हैं।

यह जीव आत्मिक शान्ति और पूर्णानन्द को प्राप्त करने के लिए ही मानव देह में अवतरित हुआ है। यही इसके जीवन संग्राम का चरम लक्ष्य है। इसीलिए ही यह जीव सुख और शान्ति का अभिलाषी बन कर, उस की प्राप्ति के लिए दर-दर भटकता और ठोकरें खाता फिरता है। उसके जीवन का सारा क्रिया-कलाप, सारी उधेड़बुन केवल जीवन को शान्त और सुखमय बनाने के लिए ही है। किन्तु इस जीवन संग्राम में इतनी खटपट और उधेड़बुन करने पर भी यह आत्मा उस सच्चे सुख और शान्ति से वंचित ही रहती है। इतना ही नहीं, प्रत्युत कभी-कभी तो वह जीवन में सुख और शान्ति के बजाय अत्यन्त क्लेश, दुःख और अशान्ति का ही अनुभव करता है। संसार के नाना प्रकार के भोगों और वैभव का भोग करते हुए भी वह उनमें उस शांति और आनंद का अनुभव नहीं करता, जिसकी कि उसे चिर-अभिलाषा है। ऐसा क्यों? इसका एकमात्र कारण यही है कि जिन भौतिक पदार्थों में वह परमानन्द और परमशान्ति का अभिलाषी बन भटक रहा है। वे पदार्थ स्वयं सुख और शान्ति से सर्वथा परे हैं। भला जिसके पास जो वस्तु है ही नहीं वह दूसरों को क्या देगा। जो स्वयं भूख से तड़प रहा है, वह भूखों को कैसे भोजन खिला सकेगा और हमारी भूख को क्यों कर शान्त कर सकेगा। इसलिए जब आत्मा इन भौतिक पदार्थों में भटककर निराश हो जाती है। उसे अपने अभीष्ट की प्राप्ति नहीं होती। इतना ही नहीं, प्रत्युत यह विश्व के विविध विषय भोग और आमोद-प्रमोद, सुख और शान्ति के स्थान पर उल्टा उसके दुःख और अशान्ति का कारण बन जाते हैं तो वह निराश हो जाता है। उसकी आत्मा सन्तप्त हो उठती है। उसे चारों ओर विषय वासनाओं की जलती हुई प्रचण्ड ज्वालाएँ व्याकुल, सन्तप्त और अशान्त बना देती हैं। उस समय उसे सुख और शान्ति के परम धाम प्रभु का स्मरण आता है, वह पश्चात्ताप करता हुआ वेद के शब्दों में प्रभु से पुकार उठता है—

सं मा तपन्त्यभितः सपत्नीरिव पर्शवः।

हे दीनबन्धो! हे अधमोद्धारक! अब तो मुझे ये तृष्णाएँ, ये विश्व की क्षणिक कामनाएँ और विषय भोगों की विषभरी लालसाएँ सपत्नियों के समान चारों ओर से सन्तप्त कर रही हैं। भगवन्! अब मैं सब ओर से निराश होकर और तेरा भक्त बनकर तेरे द्वार पर आया हूँ। हे दीनबन्धो! क्या इस दीन की पुकार न सुनोगे? क्या अपने इस भक्त को विश्व की क्षणिक वासनाओं और तृष्णाओं से हटा कर अपनी प्रेममयी पावन गोद में नहीं बिठाओगे? उस समय ऋषि दयानन्द के शब्दों में प्रभु इस संसार के विविध तापों से सन्तप्त अनन्य भक्त की करुण पुकार को सुनते हैं, और उसे अपनी प्रेममयी गोद में ले लेते हैं। वह अशरण शरण भगवान् अपने भक्त को निज शरण में कैसे लेते हैं। इसका ऋषि दयानन्द ने 'सत्यधर्म-विचार" नामक पुस्तक में बड़े मार्मिक शब्दों में वर्णन किया है। ऋषि लिखते हैं—

"जब सच्चे मन से आत्मा, प्राण और सब सामर्थ्य से जीव भगवान् को भजता है, तो वह करुणामय परमेश्वर उसको अपने आनन्द में स्थिर कर देता है। जैसे जब कोई छोटा बालक घर के ऊपर से अपने माता पिता के साथ नीचे आना चाहता है या नीचे से ऊपर उनके पास जाना चाहता है। तब हजारों आवश्यक कामों को भी छोड़ कर माता पिता अपने बालक को उठाकर अपनी गोद में ले लेते हैं कि कहीं हमारा लड़का गिर पड़ेगा तो उस को चोट लगने से दुःख होगा और जैसे माता पिता अपने बच्चे को सदा सुख में रखने की इच्छा और पुरुषार्थ सदा करते रहते हैं वैसे ही परम कृपानिधि परमेश्वर की ओर जब कोई प्राणी सच्चे आत्म-भाव से चलता है। तब वह प्रभु अनन्त शक्ति रूपी हाथों से उस जीव को उठाकर अपनी गोद में सदा के लिए ले लेते हैं। फिर उसको किसी प्रकार का दुःख नहीं होने देते।"

वास्तव में भगवान् पतञ्जलि के शब्दों में हम अविद्या आदि पंच क्लेशों से सन्तप्त, और परिणाम, ताप, संस्कार आदि दुःखों से दुःखित जीव के लिए एकमात्र वह सच्चिदानन्द प्रभु ही सच्ची शान्ति परम सुख का सहारा है। इसलिए वेद कहता है—

न स्वदते अमृता मादयन्ते।

हे आनन्द कन्द, सच्चिदानन्द प्रभो! तेरी शरणागति के बिना तेरे ये अमृत पुत्र पूर्णानन्द-प्राप्ति का लाभ नहीं कर सकते।

वास्तव में जो मनुष्य अपने जीवन को सदाचारों और कुत्सित संस्कारों से परे हटाकर उस प्रभु की शरण में आ जाता है। दूसरे शब्दों में वह अपनी अधमावस्था पर पश्चात्ताप करता हुआ, उस से ऊपर उठ कर सन्मार्गगामी बन जाता है। भगवान् अवश्य उसके ऊपर सब प्रकार के सुखों की वर्षा करते हैं। चारों ओर से "गयो अभि स्रवन्तु नः" उस पर आनन्द की वृष्टियाँ होने लगती हैं। इसलिए वेद कहता है—

त्वमग्ने! इन्द्रो वृषभ सतामसि।

हे परम ज्योतिर्मय प्रभो! तुम ही तो सत्पुरुषों के लिए, अपने अनन्य भक्तों के लिए इन्द्र और वृषभ बनकर उनके ऊपर समग्र ऐश्वर्यों और सरल सुखों की वर्षा करने वाले हो।

मा ते भय जरितारम्।

तेरे भक्त को भय, चिन्ता और दुःख कहाँ? वेद के उपर्युक्त वचनों से सिद्ध होता है कि एकमात्र प्रभुभक्ति ही इस भव-बन्धन में पड़े जीव को बन्धन से छुड़ाने वाली तथा सुख, शान्ति और आनन्द को प्रदान करने वाली है। बिना ईश्वर-आराधना के आत्मा को परम शान्ति और परमानन्द की उपलब्धि होना कठिन ही नहीं प्रत्युत नितान्त असम्भव है।

पुरोहित की आवश्यकता

सूचित किया जाता है कि आर्यसमाज खण्डवा को एक पुरोहित की आवश्यकता है, जो समाज में सभी संस्कार सम्पन्न करा सके साथ ही मधुर संगीत के साथ उपदेश भी दे सके।

मकान किराये सहित दक्षिणा कितनी देय होगी सहित सभी विवरणों के शीघ्र आवेदन करें।

लक्ष्मी नारायण भार्गव
मन्त्री
आर्यसमाज शिवाजी चौक
खण्डवा-४५०००१

(पृष्ठ ३ का शेष)

आर्यसमाज और राजनीति

का अन्धानुकरण करना शुरू कर दिया। दुर्भाग्य से राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के श्री गोलवरकर की मृत्यु के बाद और नये नेतृत्व ने भी संघ की मूल विचारधारा से वैसे ही मुह मोडना शुरू कर दिया था जैसे जनसंघ के नये नेतृत्व ने जनसंघ की विचारधारा से मुह मोड़ा था। इस नये नेतृत्व [illegible] संघ का पूर्ण समर्थन भाजपा को देना शुरू दिया।

भारतीय जनता पार्टी की नयी विचारधारा की हिन्दुत्ववादी, राष्ट्रवादी लोगों के लिए कोई अपील नहीं। मगर संघ के समर्थन के कारण यह जनसंघ के नाम की कमाई पर अपनी रोटी सेंक रही है। परन्तु इसकी अवसरवादिता और हिन्दू हितों की उपेक्षा के कारण संघ और जनसंघ के बहुत से पुराने कार्यकर्ता इस में घुटन महसूस करने लगे हैं। संघ के नेतृत्व के बावजूद भाजपा से इनका मोह भंग हो रहा है। कोई विचारवान और सिद्धांतवादी आर्यसमाजी तो भाजपा का समर्थन कर ही नहीं सकता।

दूसरी ओर देश की परिस्थितियां जो मोड ले रही हैं उस के कारण जनसंघ या जनसंघ जैसे हिन्दुत्ववादी-राष्ट्रवादी विकल्प की आवश्यकता और प्रासंगिता १९५१ से भी अधिक महसूस होने लगी है। मुसलमानों का बढता हुआ आक्रांता रुख, ईसाइयों पर सोनिया गांधी का वरद हस्त, अकाली उग्रवादियो को पाकिस्तान की शह और राजीव गांधी की चहुमुखी विफलता और उसकी गिरती हुई साख ऐसी कटु वास्तविकताएँ हैं जिन से कोई विचारवान व्यक्ति आंखें नहीं मूंद सकता।

भारत की राजनीति का भारतीयकरण करना और इस की नीतियों को राष्ट्रवादी हिन्दुत्ववादी दिशा देना अब हिन्दुओं और हिंदुस्तान के अस्तित्व का प्रश्न बन चुका है। आर्यसमाज हिन्दू समाज का हरावल दस्ता है। हिन्दुस्तान की हिन्दू पहचान के साथ ही आर्यसमाजों का अस्तित्व भी जुडा हुआ है। इसलिये विचारवान आर्यसमाजों का इस स्थिति से चिन्तित होना और आर्यसमाज की विचारधारा से प्रभावित राजनैतिक संगठन की आवश्यकता महसूस करना स्वाभाविक है।

आर्यसमाज एक शक्ति है। इसकी विचार स्वतन्त्रता और उत्कृष्ट विचारधारा इसका सम्बल है। इसके वयस्क सदस्य राजनीति से अलिप्त नहीं रह सकते। देश की राजनीति को वैदिक हिन्दू सिद्धांतों के अनुरूप प्रभावित करना भी आर्यसमाज का लक्ष्य है। जिस रास्ते पर कांग्रेस और भाजपा समेत देश की अन्य राजनैतिक पार्टियाँ चल रही हैं और उनका जो मूल चिन्तन है, वह राष्ट्रहित और हिन्दू हित के लिए घातक सिद्ध हो रहा है। उनको अन्दर से प्रभावित करने की बात मृगमरीचिका मात्र है। आवश्यकता उनका विकल्प तैयार करने की है। यदि कोई राष्ट्रवादी विचारधारा वाला दल उभरेगा तब शायद उनको भी अपनी नीति-रीति पर पुनर्विचार करने पर बाध्य होना पडगा।

यह एक व्यावहारिक सुझाव मात्र है। इससे आर्यसमाज के वर्तमान स्वरूप में कोई बदल नहीं आएगा। परन्तु इसका प्रभाव बढ़ेगा और यह देश की बडी आवश्यकता को पूरी करने में सहायक होगा। मैं चाहूंगा कि इस सुझाव पर सार्वजनिक चर्चा और विवाद हो ताकि सार्थक विचार मंथन के बाद आर्यसमाज ठीक निष्कर्ष पर पहुंच सके।

○

आर्यसन्देश साप्ताहिक की घोषणा

१. प्रकाशन स्थान	—	१५ हनुमान रोड, नई दिल्ली
२ प्रकाशन अवधि	—	साप्ताहिक
३. मुद्रक का नाम	—	सूर्यदेव
(क्या भारत का नागरिक है ?)		भारतीय
(यदि विदेशी है तो मूल देश)		नहीं
पता		१५, हनुमान रोड, नई दिल्ली
४. प्रकाशक का नाम	—	सूर्यदेव
(क्या भारत का नागरिक है ?)		भारतीय
(यदि विदेशी है तो मूल देश)		नहीं
पता :		१५, हनुमान रोड, नई दिल्ली
५ सम्पादक का नाम	—	पं० यशपाल सुधांशु
(क्या भारत का नागरिक है ?)		भारतीय
(यदि विदेशी है तो मूल देश)		नहीं
पता		दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा
		१५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१
६. उन व्यक्तियों के नाम पते जो समाचार-पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों।	—	,, ,,

मैं, सूर्यदेव एतद्द्वारा घोषित करता हूं कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गये विवरण सत्य हैं।

सूर्यदेव
प्रकाशक के हस्ताक्षर

विश्वयुद्ध की विभीषिका

जय पराजय की भावना लेकर मानव ने मानव का संहार किया।
बना-बनाकर अणु अस्त्रों को मानव ने मानवता का संहार किया।
हुए दो विश्वयुद्ध जिनमें मानव ने मानवता का संहार किया।
हिरोशिमा पर गेर अणुबम मानव ने मानवता का संहार किया।
लाखो बेघरबार हुए तब मानव ने मानवता का संहार किया।
लगडे लूले हुए लाखों जब मानव ने मानवता का संहार किया।
होगा तृतीय विश्वयुद्ध तब मानव मानवता का संहार करेगा।
सन् १९९० के जून मास की तारीख बीस को मध्याह्न के दो बजे।
अणु अस्त्रों का खुलकर प्रयोग होगा दो अरब मानव तृषित होंगे।
तब विजित पराजित होकर मानव मानवता का संहार करेगा।
धरा में कंपन होगा अरबों नर-नारी अनेक रोगों से तृषित होंगे।

—पं० धर्मेन्द्रनाथ शर्मा शास्त्री आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि

संकल्प

मेरे भारत के होनहार युवको!

भारत का भविष्य ही तुम्हारा भविष्य है और इसके निर्माण का दायित्व तुम्हारे कन्धों पर है।

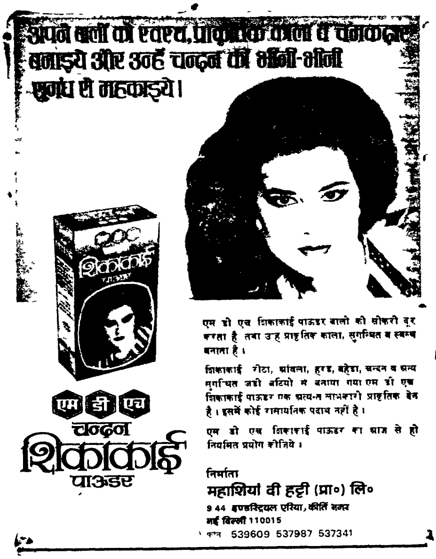
उठो! जागो!! अपने देशवासियों को जगाओ। सूर्योदय से पूर्व ही अपने कर्तव्य का निर्धारण कर लो और अपने कर्मपथ पर अग्रसर हो जाओ। एक क्षण भी वृथा मत गवाओ। यदि तुम आलस्य या प्रमाद में डूबे रहे तो सूर्य पश्चिम को जायेगा। तब तुम्हारे किये कुछ भी न हो सकेगा।

उठो! अतीत को वर्तमान की आवश्यकताओं के अनुरूप ढालो और साहसपूर्वक अपने पवित्र संकल्प से कल्पितवाली वर्तमान को उज्ज्वल भविष्य की दौड में नियोजित करो।

मेरे देश के भावी कर्णधारो! आगे बढ़ो!! पुरानी अकर्मण्यता पर विजय प्राप्त करो। जहां परिवर्तन की आवश्यकता है वहां परिवर्तन करो और जहां गति की आवश्यकता है वहां गति लाओ। निर्बाध गति से लक्ष्य की ओर बढ़ते जाओ, बढ़ते जाओ, जब तक सफलता तुम्हारे चरण न चूम ले।

—स्वामी [illegible]


लाखों लोगों की पसंद
एम डी एच दंत मंजन
23 जडी बूटियो से निर्मित
आयुर्वेदिक औषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दंत सुरक्षा
दातों का दर्द, मुह की दुर्गन्ध
मसूडो की सूजन, ठडा गर्म
पानी लगना, मुह मे छाले होना तथा
दातो की अन्य बीमारियो का घरेलू इलाज
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
प्रतिदिन प्रयोग करे
दंत मंजन
लौंग युक्त
9/44, इण्डस्ट्रियल एरिया
537987, 537341


अपने बालों को स्वस्थ, प्राकृतिक काला व चमकदार बनाइये और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी सुगंध से महकाइये।
शिकाकाई
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर
एम डी एच शिकाकाई पाऊडर बालो की सीकरी दूर करता है तथा उन्हे प्राकृतिक काला, सुगन्धित व स्वस्थ बनाता है।
शिकाकाई रीठा, आंवला, हरड, बहेडा, चन्दन व अन्य सुगन्धित जडी बूटियो से बनाया गया एम डी एच शिकाकाई पाऊडर एक अत्यन्त लाभकारी प्राकृतिक देन है। इसमें कोई रासायनिक पदार्थ नहीं है।
एम डी एच शिकाकाई पाऊडर का आज से ही नियमित प्रयोग कीजिये।
निर्माता
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9 44 इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर
नई दिल्ली 110015
फोन 539609 537987 537341


आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
अजमल खान रोड
करोल बाग,
नइ दिल्ली-110005
फोन 582036 5715878
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
alignpoint

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N. No. 32387/77 Post in N.D.P.S.O on 17, 18-3-88 Licenced to post without prepayment, Licence No U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० नं० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९
८ साप्ताहिक 'आर्यसन्देश' २० मार्च १९८८

आर्यसमाज दीवानहाल का १०३वां वार्षिकोत्सव

२५ मार्च से २७ मार्च तक लाल किला मैदान में

आर्यसमाज दीवान हाल का १०३वा वार्षिकोत्सव लालकिला मैदान मे २५ मार्च से २७ मार्च तक होने जा रहा है। इस अवसर पर २१ मार्च से २४ मार्च तक रात्रि ८ बजे से प० शिवाकान्त उपाध्याय की कथा होगी। उत्सव पर विशेष यज्ञ का आयोजन किया गया है जिसके ब्रह्मा होगे प० राजगुरु शर्मा। यज्ञ पर प्रथम दिन आहुति प्रदान करने दिल्ली के उपराज्यपाल पधार रहे हैं।

२५ मार्च को ध्वजारोहण स्वा दीक्षानन्द करगे।

भाषण प्रतियोगिता

विषय—भारतीय संस्कृति से राष्ट्र रक्षा, पर उच्चतर माध्यमिक विद्यालय के छात्र छात्राओ के लिए भाषण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया है। प्रथम ३०० रुपये, द्वितीय २०० रुपये, तृतीय १०० रुपये तथा विशेष दो ५० रुपये के पुरस्कार रखे गये हैं तथा विशेष शील्ड भी प्रदान की जायेगी।

आधुनिक सदर्भ मे नारी प्रतिष्ठा के प्रति युवा पीढी का दायित्व

कालेज स्तर के विद्यार्थियो के लिए यह विषय रखा गया है जिस के पुरस्कार हैं प्रथम ५०० रुपये, द्वितीय ३०० रुपये, तृतीय २०० रुपये विशेष दो १०० रुपये के पुरस्कार दिये जायेंगे। एक विशेष शील्ड भी प्रथम आने वाले विद्यालय को दी जायेगी।

२५ मार्च रात्रि—वेद सम्मेलन

इस सम्मेलन के अध्यक्ष हैं प० शिवकुमार शास्त्री। वक्तागण डा० वाचस्पति उपाध्याय, श्री पृथ्वीराज शास्त्री, प० सच्चिदानन्द शास्त्री।

२६ मार्च—आर्य मर्यादा सम्मेलन

रामनवमी के उपलक्ष्य मे प्रात १० ३० बजे यह सम्मेलन आयोजित किया गया है। वक्ता—श्री राजगुरु शर्मा, श्री प्रेमचन्द गुप्ता, महात्मा रामकिशोर, प० यशपाल सुधांशु श्री चिन्तामणि।

मध्याह्न—आर्य महिला सम्मेलन

अध्यक्षा श्रीमती सरला मेहता, श्रीमती उषा शास्त्री, श्रीमती प्रकाश आर्या, श्रीमती प्रेमशील महेन्द्र, श्रीमती शकुन्तला आर्या आदि।

२६ मार्च रात्रि—कवि सम्मेलन

अध्यक्ष श्री क्षेमचन्द्र सुमन, उद्घाटन प्रो० उत्तमचन्द शरर, मुख्य कविगण—श्री निर्भय हाथरसी, श्री मनोज अबोध, प्रो० राजेन्द्र क्रांतिकारी, श्री प्रकाशवीर व्याकुल, संयोजक होंगे—श्री जयनारायण अरुण।

२७ मार्च—यज्ञ की पूर्णाहुति एव प्रवचन

स्वामी दीक्षानन्द का विशेष प्रवचन होगा।

१० ३० बजे राष्ट्र रक्षा सम्मेलन

जिस मे प्रो० शेरसिंह अध्यक्ष होंगे वक्ता गण—स्वामी आनन्द बोध श्री राजगुरु शर्मा, श्री सूर्यदेव, श्री रामचन्द्र विकल। इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्री के० सी० पन्त होगे

मध्याह्न—आर्य सम्मेलन

स्वामी आनन्द बोध की अध्यक्षता मे आर्य सम्मेलन होगा, जिस का उद्घाटन श्री बलराम जाखड़ अध्यक्ष लोकसभा करेंगे। इस के मुख्य वक्ता—श्री सीताराम केसरी, डा० वाचस्पति उपाध्याय प० जय प्रकाश आर्य, डा० वेदप्रताप वैदिक, प० शिवकुमार शास्त्री आदि होगे।

समस्त कार्यक्रमों मे आप सादर आमन्त्रित हैं।

निवेदक
मूलचन्द गुप्त
मत्री, आर्यसमाज दीवान हाल

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष ११ : अंक २३ | रविवार २७ मार्च १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८९ | चैत्र २०४५ | दयानन्दाब्द—१६४
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डॉलर, ३० पौंड

आर्यसमाज स्थापना दिवस सम्पन्न

आर्यसमाज नवचेतना का प्रणेता है—आर्य नेताओं का उद्बोधन

नई दिल्ली। आर्यसमाज कोई मत, मजहब या सम्प्रदाय नहीं है बल्कि यह एक सत्य सनातन वैदिक धर्म है जिस ने न केवल देश की स्वतन्त्रता प्राप्ति में महत्वपूर्ण योगदान दिया है अपितु राष्ट्रीय एकता व अखण्डता को सुदृढ करने के लिए भी सदैव बढ़कर आवाहन किया है। यह उद्गार सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली द्वारा मावलंकर हाल, नई दिल्ली में १९ मार्च को आयोजित ११३वें आर्यसमाज स्थापना दिवस के अवसर पर व्यक्त किये। स्वामी आनन्द बोध ने पंजाब व देश की स्थिति का जिक्र करते हुए आर्यसमाज को चौकन्ना रहने की सलाह दी और वेदप्रचार पर बल दिया।

इस अवसर पर समारोह के मुख्य अतिथि दिल्ली के महापौर श्री महेन्द्रसिंह साथी ने कहा कि आज हम आर्यसमाज के झण्डे के नीचे आकर ही विदेशी शक्तियों के इशारे पर देश को तोड़ने वाली ताकतों से मोहा ले सकते हैं क्योंकि यह केवल आर्यसमाज ही है जो देश की एकता व अखण्डता को बचा सकता है। श्री साथी ने आगे कहा कि आर्यसमाज ने स्वाधीनता आन्दोलन को भी नई दिशा प्रदान की थी।

सांसद श्री रामचन्द्र विकल ने कहा कि विश्व इतिहास में महर्षि दयानन्द सरस्वती एक ऐसे महामानव हुए हैं जिन्होंने मानवमात्र के कल्याण एवं मनुष्य के सर्वांगीण विकास के लिए आज से ११२ वर्ष पहले चैत्र शुक्ला प्रतिपदा सन् १८७५ को आर्यसमाज की स्थापना की थी। उन्होंने आगे कहा कि आज सारी दुनिया बारूद के ढेर पर खड़ी है और वैदिक मार्ग पर चल कर सच्ची शांति स्थापित की जा सकती है।

पूर्व केन्द्रीय मन्त्री एवम् आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा के प्रधान प्रो० शेरसिंह ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि आज खालिस्तान की मांग के पीछे विदेशी शक्तियाँ काम कर रही हैं और आर्य जनों को सजग रहकर कार्य करना है। उन्होंने आगे कहा कि स्वामी दयानन्द ने पूरे विश्व के मानव समाज की समस्याओं के हल के लिए आर्यसमाज बनाया था और वह सभी मनुष्यों को आर्यसमाज के माध्यम से एक मंच पर लाना चाहते थे। संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य लक्ष्य है यह उन्होंने आर्यसमाज के नियमों में प्रतिपादित किया। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का स्वप्न पूरा करने के लिए हमें दयानन्द के मार्ग पर ही चलना होगा।

समारोह की अध्यक्षता पूर्व सांसद एवं गुरुकुल घरौंडा के आचार्य स्वामी रमेश्वरानन्द जी ने की। उन्होंने आर्यसमाज के गौरवशाली इतिहास एवं गतिविधियों पर प्रकाश डाला। इस अवसर पर मिलाप सन्देश के सम्पादक श्री नवीन सूरी तथा स्वामी अग्निवेश, डा० महावीर स्नातक, डा० प्रशांत वेदालंकार, पूर्व महानगर पार्षद, श्रीमती शकुन्तला आर्य आदि ने भी आर्यसमाज के उज्ज्वल अतीत एवं भावी योजना पर प्रकाश डाला। सभा महामन्त्री डा० शिव कुमार शास्त्री ने कुशलता से मंच संचालन किया।

—विमलकान्त शर्मा

चुनाव के कारण घर को आग न लगाओ

—आनन्द बोध सरस्वती

कुछ दिनों से दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के चुनाव के अवसर पर कतिपय लोगों ने आर्यसमाज की धवल कीर्ति को धूमिल करने के लिए झूठी पर्चेबाजी करके आर्यसमाज के नि:स्वार्थ कार्यकर्ताओं को बदनाम करने का जो अभियान छेड़ रखा है, वह सर्वथा निन्दनीय है। मुझे अपने सम्बन्ध में कुछ कहने की आवश्यकता नहीं। अपनी १२ वर्ष की आयु से मैंने एक-एक क्षण आर्यसमाज की प्रेरणा से जन सेवा में लगाया है। इसे मैं ही जानता हूं या सर्वान्तर्यामी परमपिता परमात्मा। मुझे उस का कोई पुरस्कार नहीं चाहिए।

इस अभियान में जो धन खर्च किया गया है, यदि उसे आर्यसमाज के प्रचार प्रसार में किया जाता तो कितना अच्छा होता।

कुछ बेनाम लोगों ने हमारे परम स्नेही मित्र श्री बाबू सोमनाथ मरवाह जी एडवोकेट के सम्बन्ध में भी अमर्यादित आक्षेप करके प्राय अनेक आर्य बन्धुओं के चरित्र पर भी कीचड़ उछालने का कुप्रयास किया है। मतभेद तो होते हैं किन्तु मनभेद नहीं होने चाहिए। जो लोग स्वयं कुछ नहीं करते, वे ही आपसी मनभेदों को हवा देकर वातावरण को दूषित करते हैं।

मैं बड़ी नम्रता से निवेदन करना चाहता हूं कि आर्यजन इस प्रकार की पर्चेबाजी से विचलित न हों।

महात्मा गांधी ने कहा था कि आर्यसमाज के लोग बड़े जुझारू हैं किन्तु जब इन्हें दूसरों से लड़ाई का मैदान नहीं मिलता है तो वह आपस में लड़ते हैं। महात्मा हंसराज जी से पूछा गया कि आपके विरोधी आपके सम्बन्ध में गलत प्रचार करते हैं आप जवाब क्यों नहीं देते? महात्मा जी ने कहा कि मैं ऐसे दुष्प्रचार पर कोई ध्यान नहीं देता। मुझे काम से ही फुरसत नहीं। स्वामी श्रद्धानन्द जी के सम्बन्ध में भी दुखी दिल की दास्तां से पता चलता है कि उन्हें भी गुरुकुल कांगड़ी से निकालने के लिए इसी प्रकार के दोषारोपण किये गये किन्तु आज स्वामी श्रद्धानन्द तो अपनी निष्काम सेवा के

(शेष पृष्ठ ७ पर)

सम्पादक—डॉ० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रबन्ध सम्पादक—सूर्यदेव

कल्याण मार्ग की ओर

—महेन्द्रदेव शास्त्री, विद्याभूषण

★

प्रत्येक मनुष्य चाहता तो अपना कल्याण ही है क्योंकि उस मे ही सुखानुभूति है किन्तु जिस प्रकार से वह कल्याण प्राप्ति का इच्छुक है उसके अनेक प्रकार वह अपने दिमाग से सोचता है।

(१) कुछ लोग धन प्राप्ति को ही कल्याण का मार्ग सोचते हैं। कुछ विषय भोगो मे रत रह कर उन विषयो से ही सुखानुभूति प्राप्त कर उसे ही कल्याण का मार्ग समझते हैं।

(२) कुछ कहते हैं मनुष्य जन्म बडा दुर्लभ है सब प्रकार के आनंद के साधन और भोग इस जीवन में ही मिले हैं अत सभी विषयो को इस जीवन मे ही भोग ल फिर यह शरीर मिले या न मिले।

(३) कुछ का विचार है किसने देखा है दूसरा जन्म। इस मे ही सारे आनन्द भोग लो चाहे अनेक प्रकार के कर्ज लेकर ही वे भोगने पड।

(४) कई कहते हैं कि अधिक हड्ड पेलने से कोई लाभ नही आलसी बन कर आलस्य का ही आनन्द लो। जिसने जीवन दिया है, यदि उसे मान भी लिया जाय तो फलो को भोगाने के लिए हम को जीवित भी रखेगा और खाना-पीना भी देगा, फिर निश्चिन्तता को ही कल्याण का मार्ग क्यो न समझे। सन्त कह चुके हैं— 'अजगर करे न चाकरी पक्षी करे न काम, दास मलूका कह गए सब के दाता राम

(५) किन्ही का विचार है— "अनहोनी होनी नही होनी होय सो होय फिर तू चिन्ता क्यों करे चादर तान के सोय।' वे चिन्ता राहित्य को ही कल्याण का मार्ग समझते हैं।

(६) कई कहते हैं – सभी अपना राग अलापते हैं सैकडों रास्ते दुनिया मे कल्याण के बताते हैं, हम किसे-किसे सत्य मान। 'मुण्ड मुण्ड मतिर्भिन्ना" हर खोपडी मे अलहदा-अलहदा बुद्धिया हैं। उनकी खोज करता-करता ही आदमी पागल हो जाता है। अत: इस झगड में पडना ही वृथा है।

(७) कोई नशो से ही परम सिद्धि मानते हैं। उनका विचार है चिन्तन ही सब से बुरी बात है, नशों से चिन्तन का मार्ग ही समाप्त हो जाता है, फिर दुःख कैसा ? उनकी दृष्टि में चिन्तन की समाप्ति ही कल्याण का मार्ग है।

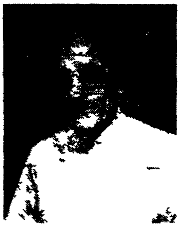
(८) कई कहते हैं दुनिया ऐसी ही खिसकती चली जा रही है। इसे कौन चलाता है और यह कैसे चलती है हमे इस से क्या ? आदमी कैसे बन गया, और नर पशु पक्षी, कीट पतग, कैसे बन गए हमें इस से क्या ? जो इस उधड बुन मे फसे वे अपने को २ रोटी सुबह २ शाम को चाहिए सो किसी न किसी प्रकार मिल ही जाती हैं। इस स्वाभाविकता को ही कल्याण का मार्ग समझते हैं।

(९) बहुत सो का ऐसा विचार है कि जिनके रहने-सहने खाने-पीने ओढने पहनने का प्रबन्ध राज्य सरकार करती हो उनके कल्याण का मार्ग यही है कि वे वही कारागार मे ही निवास करते रहे। यदि वहा से निकलने का अवसर आ भी जावे तो फिर ऐसा कोई शुभ कर्म किया जावे जिस से फिर उसी शुभ स्थान में जाना पडे। भारत के ये साधारण वैयक्तिक जीवन की अपेक्षा कारागारो में अधिक आनन्द है फिर इसे ही कल्याण का मार्ग क्यो न समझ लिया जाये इसमे कैसी बेफिक्री है। इस प्रकार मनुष्य भ्रांत दशा में जीवन बिता रहा है। समस्त मानव जाति के इस विषय पर न तो विचार एक हैं और न सब की गति ही एक है। इस ही लिए समस्त प्राणी दुःख-सागर में डूब रहे हैं। गलत दिशा को अपनाने वाला चलता हुआ भी व्यक्ति कभी अपने प्राप्तव्य स्थान को नही प्राप्त कर सकता। कलकत्ता पहुचने की इच्छा रखने वाला व्यक्ति यदि गति पेशावर की तरफ करता रहेगा तो कलकत्ता उससे और दूर ही होता जायेगा। अपनी आवश्यकताओं को बढ़ा कर ऐश परस्ती करते हुए जब हम सुख लूटना चाहते हैं तो दुःख की कीचड़ में और भी फस जाते हैं। सारा यूरोप, अमरीका और एशिया इसी दलदल में फस गया है। मनुष्यों को स्वाभाविक पशु पक्षियों के समान भी सुख प्राप्त नहीं होता। अमरीकन लोग रात्रि के प्रारम्भ मे प्रथम सिनेमा देखते हैं, फिर थियेटर हालों में जाकर थियेटर देखते हैं, फिर नाचघरों में जाकर नाच देखते हैं, इसके अनन्तर रेस्टोरेन्टो में जाकर रात्रि के दो बजे अण्डे मास अखाद्य पदार्थों को खा कर और अनेक प्रकार की अपेय शराबो को पीकर अन्त मे निद्रा [illegible] को खाकर सो जाते हैं। भला सोचिये यह भी कोई जीवन है। पशु पक्षी भी प्राकृतिक नियमो के अनुसार आहार विहार कर के यथासमय आनन्दमयी निद्रा का आनन्द लेते हैं, किन्तु मनुष्य सभी प्राकृतिक नियमों को तोड कर अपनी इच्छानुसार ऊटपटांग कामो को करता हुआ उस से ही सुख निचोडने की कोशिश करता है, यह कैसे सम्भव है ? इन बेसमझी के कामों से तो हमे सुखो के स्थान पर अनेक प्रकार की बीमारिया मिलगी, उनके द्वारा अनेक प्रकार के कष्टो में ही पडना होगा। ससार के भिन्न भिन्न देशों से आए हिप्पी लोग सुख प्राप्ति की अभिलाषा लेकर भारत में आए हुए हैं। वे पूर्ण सम्पन्न होते हुए भी दुःख उठा रहे हैं अपने अपने देशो को छोड कर विदेशों मे घूमते-फिरते हैं। उनके विचार मे भारत आध्यात्मिक शान्ति देने वाला देश है, ऐसी कल्पना थी, किन्तु यहा वाले उन्हें आध्यात्मिक शान्ति कहा से देते ये तो स्वयं अशान्ति के गढ़ में गिरे हुए हैं। जिस अशांति से ऊबकर ये हिप्पी इस देश में आए हैं यहां वाले उन्हीं को गुरु मान बैठे हैं और अब उनकी ही अनुकृति कर रहे हैं। भारत मे जो सिलसिले कहलाते थे वही रूप इनका है। इन्होंने सैकडों प्रकार की तो बाल बनाने की शिक्षा यहां के लोगों को अनायास दे डाली। यहा के नकलची सैकडों प्रकार की तो दाढिया रखने लगे। [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] गई है। लोग तथा [illegible] मार्ग की शिक्षा [illegible] संसार का कुछ [illegible] इनके मार्ग पर चलना ही कल्याण का मार्ग समझता है। जो [illegible] अत्यन्त शक्तिहीन होते हैं, वे दूसरों की नकल करने ही में अपनी शान समझते हैं। हमने उन कल्याण मार्गों को भुला दिया, जिन्हें हमारे परम श्रद्धेय ऋषियों ने अपनी विवेक बुद्धि, तपस्या, अनुभव तथा ज्ञान के द्वारा निर्धारित किया था। वे ही परम पुनीत सिद्धांत आज भी ससार के सामने ज्योतिर्मय होकर अब भी स्थित हैं जिनका खण्डन [illegible] सभी द्वारा मसार मिलकर भी न कर सकता किन्तु सारा दोष हमारा है, हम आखों पर काली पट्टी बाध हुए हैं फिर हमें उन सिद्धांतो का प्रकाश कैसे नजर आवे। उन सिद्धांतों के मूल में ईश्वरीय प्रकाश काम कर रहा है तप तथा योग के द्वारा उन्हें पुष्ट किया गया है। ससार चाहे आज समझे या हजार वर्ष बाद किन्तु सुख और कल्याण का मार्ग वही है, जिसे वे हमारे सामने अपने जीवन की आहुतिया देकर उपस्थित कर गए हैं। ससार में जब कभी भी पवित्र मेघा बुद्धि का उदय होगा और लोग सुख तथा कल्याण मार्ग की महत्ता समझ पायेंगे तब उन्हीं सिद्धातो के झण्डे के नीचे उन्हें नतमस्तक होकर खडा होना होगा। सार रूप में यह कहा जा सकता है कि बिना सत्य का आश्रय लिये हम कभी अपने जीवन को और राष्ट्र को ऊंचा नही बना सकते। बिना ब्रह्मचर्य व्रत के पालन किये हम कभी शारीरिक, मानसिक बौद्धिक तथा आत्मिक उन्नति नहीं कर सकते। अण्डे, मछली मास खाकर तथा किसी भी प्रकार के नशों के अभ्यासी बन कर हम कभी न तो नीरोग रह सकते हैं। और न किसी पवित्र शक्ति को ही प्राप्त कर सकते हैं। शराब पीकर और उसके नशे से बुद्धि विहीन होकर, हम सुख प्राप्ति की अभिलाषा करें, ये विवेकहीनो की बातें हैं। कोई भी राज्य हमें अनुचित शिक्षा दे, और कुमार्ग पर चलावे, किन्तु हमें अपनी पवित्र बुद्धि से उसे सोचना चाहिए। राज्य के बड़े-बड़े लोग इसका प्रचार करते हैं, इससे विष कभी अमृत नहीं बन सकता। मैं तो कहता हूं—चाय, कॉफी, कोका-कोला आदि भी शारीरिक तथा अन्य दृष्टियों से बिल्कुल त्याज्य हैं। इस से तो मादक, बटर, टमाटर खा [illegible] [illegible]

(शेष पृष्ठ ८ पर)

जन्म दिवस पर हार्दिक बधाई—

दानवीर महाशय धर्मपाल—एक भक्त, एक सेवक



महाशय धर्मपाल जन्मदिवस-स्वागत समारोह

म० धर्मपाल के ६५वें जन्मदिवस पर २७ मार्च सायं ६ बजे माता चन्ननदेवी आर्य धर्मार्थ चिकित्सालय, सी-१ जनकपुरी, नई दिल्ली में स्वागत समारोह का आयोजन किया गया है।

आशीर्वाद—स्वामी आनन्दबोध सरस्वती
मुख्य अतिथि—श्री रामचन्द्र विकल, श्री धर्मदास शास्त्री
श्री हरदयाल देवगण।

समस्त कार्यक्रम पर आप सादर आमन्त्रित हैं।

निवेदक ओमप्रकाश आर्य

सरल सहज स्वभाव, हंसता मुस्कराता चेहरा, साधारण परिधान, बनावट आडम्बर से दूर, नम्रता, सज्जनता, उदारता से सजा व्यवहार, सन्त, विद्वान्, सन्यासियों, वृद्धों के चरणों में झुका विनत मस्तक, प्रभु भक्ति के रस में सजल नेत्रों से माता, पुकारता जन्म जन्मान्तर की टेर सुनाता हृदय, कर्मठ, धुन का धनी, अथक परिश्रमी जीवन, अनाथ दीन, हीन जनों के कल्याण में लगा निष्कामी सेवक, द्वार पर आये याचक की अञ्जलि को भरता दाता इन सभी गुणों को संयुक्त कर जो व्यक्तित्व उभरता है, वह हैं महाशय धर्मपाल। महाशय धर्मपाल का जन्म ६५ वर्ष पूर्व स्यालकोट (पाकिस्तान में २७ मार्च को हुआ था। बचपन में ही पूज्यवर पिता जी की उंगली पकड़ कर वे आर्यसमाज मन्दिर जाते थे। आर्यसमाज के संस्कार उन्हें घुट्टी में मिले, इसलिए वे महर्षि दयानन्द को ही अपना प्रेरक और गुरु मानते हैं। अपने माता-पिता को वे अत्यधिक श्रद्धा, सम्मान से याद करते हैं। इनके पूज्य पिता श्री महाशय चुन्नीलाल स्यालकोट में हल्दी के व्यापारी थे। महाशय धर्मपाल के शब्दों में पिता जी को स्वदेशी वेष पहने देख लोग उन्हें महाशय जी कह कर पुकारते थे। अपने जीवन में अमीर बनने की तीव्र इच्छा से उन्होंने दूसरे व्यापारियों को देख हल्दी में २५ प्रतिशत मिलावट आरम्भ कर दी। दूसरे व्यापारी ५० प्रतिशत मिलावट कर रहे थे। हमारी बिक्री दूसरों की अपेक्षा अधिक थी। एक दिन पिता जी को किसी ने महाशय जी कह कर नमस्ते की। वे बोले लगे भाई, हम खत्री अरोड़े हैं, हमें महाशय (पंजाब में आर्यसमाज ने हरिजनों को सम्मान देकर महाशय कहना आरम्भ किया था) क्यों कहते हो। आर्यसमाज में जाकर उन्होंने महाशय का अर्थ पूछा तो उनको बताया गया—जिसके विचार और कार्य महान् हैं वह महाशय है। बस यह सुनते ही वे दुकान पर आये और मिलावट वाली हल्दी की बोरियों को नाली में बिखेरने लगे। लोगों ने पूछा नाली में क्यों गिरा रहे हो। बोले अब झूठ का व्यापार नहीं करना। उनको सच्चाई का व्यापार पर बुरा असर नहीं पड़ा। उस से हमारा कारोबार और भी अधिक चलने लगा। पिता जी आर्यसमाज के सत्संगों में जाने लगे और हमें भी आर्य विचार बचपन में ही मिलने लगे। स्यालकोट में महाशय जी का परिवार मध्यम समृद्ध परिवार था, परन्तु जैसे ही पाकिस्तान का बटवारा हुआ उनके परिवार को भी काफी क्षति पहुंची। अमृतसर होते हुए दिल्ली पहुंच कर उन्होंने पुनः भाग्य आजमाइश आरम्भ की। सबसे सा रोड करोलबाग में महाशय धर्मपाल ने अपने पिता जी के साथ एक खोखा लेकर कार्य आरम्भ किया। म० धर्मपाल जी स्वयम् चक्की चला कर हल्दी पीसते और बेचते। उन के परिश्रम और भाग्य ने ऐसा पलटा खाया कि वे निरन्तर समृद्धि की ऊंचाइयां छूते चले गए। प्रभु कृपा से आज उनके पास जो है उस में से वे अब तक डेढ़ करोड़ रुपये दान कर चुके हैं। उनका एक नेत्र अस्पताल जो साढ़े तीन करोड़ रुपये की लागत से जनकपुरी नई दिल्ली में बन रहा है, उनकी उदारता एवम् दानी स्वभाव का ज्वलन्त उदाहरण है। इस समय माता चन्नन देवी आर्य नेत्र चिकित्सालय जनकपुरी और सुभाषनगर आर्यसमाज में कार्यरत हैं। एक चलता फिरता अस्पताल स्कूल के छात्रों और ग्रामीण जनों की सेवा के लिए कार्य कर रहा है। उनके द्वारा इस समय पांच स्कूल दिल्ली के विभिन्न स्थानों पर चल रहे हैं। जो उनके तथा उनकी माता चन्नन देवी एवं पिता श्री महाशय चुन्नीलाल जी के नाम और महाशय धर्मपाल जी की धर्मपत्नी श्रीमती लीलावती के नाम पर चल रहे हैं। उनका कारोबार देश विदेश में फैला हुआ है।

महाशय धर्मपाल अपने नाम के अनुसार धार्मिक जीवन व्यतीत करते हैं। वे शाकाहारी, नित्यप्रति यज्ञ हवन करने वाले, नित्यप्रति सत्संग का आनन्द लेने वाले, नित्य-प्रति दान और सेवा, नित्य ईश्वर भक्ति करने वाले ईश्वर भक्त हैं। उनके जीवन की एक विशेषता है प्रभु भक्ति में मस्त हो कर भजन गाने की। सन्ध्या, यज्ञ के पश्चात वे सुध बुध बिसार कर प्रभु गीत गा गाकर आनन्द मगन हो जाते हैं। अपनी कम्पनी के कर्मचारियों को नित्य प्रति सुबह शाम सत्संग में बैठने के पैसे भी देते हैं। एक दिवस जब वे हवन सामग्री निर्माणशाला में प्रविष्ट हुए तो उन्होंने निर्मित हवन सामग्री में बीड़ी का टुकड़ा देखा। देखते ही उन्होंने सब कर्मचारी इकट्ठे किये और बोले—जिस किसी ने भी यह टुकड़ा डाला है वह स्वयं आकर अपना दोष स्वीकार करे। मैं सत्य कहने का दण्ड नहीं दूंगा। दोषी व्यक्ति हाथ जोड़ कर बाहर आकर बोला, महाशय जी मुझ से यह पाप हुआ है महाशय बोले—भाई तू घबरा मत तूने सच कहा है मैं तुम्हारी वेतन में वृद्धि करूंगा। यदि तू बीड़ी पीना छोड़ दे तो मुझे और भी ज्यादा खुशी होगी। उस व्यक्ति ने बीड़ी पीना छोड़ दी। महाशय जी ने उसके वेतन में और भी वृद्धि कर दी।

वैदिक धर्म के प्रचार के लिए उन्होंने एक वेद प्रचार मण्डल की भी स्थापना की है। जिस में २० उपदेशक प्रचार कार्य कर रहे हैं महाशय जी का पूर्ण परिवार धार्मिक एवम् याज्ञिक है यह और भी हर्ष की बात है। आर्यसन्देश परिवार की ओर से हम उन्हें हार्दिक बधाई देते हैं। प्रभु से उनके शतायु होने की मंगल कामना करते हैं।

मानवता अपनाओ देश बचाओ

ले०—चमनलाल, अशोक विहार

★

यूनान उन पाँच महान् प्रसिद्ध देशों मे से (यूनान, मिस्र, रोम, चीन और भारत) है जो पाच प्रसिद्ध बडी सभ्यताओं का उद्गम स्थान रहे हैं, जो वर्षों वर्षों तक मानव जीवन को प्रभावित करती रही, यद्यपि यह एक अलग बात है कि आज वे सभी सभ्यताएं सिवाए भारतीय सभ्यता के लोपप्राय सी हो गई हैं हेतु यह है कि इन सभी सभ्यताओ के पीछे कोई आधार नही था अत वे आईं, चमकीं और लोप हो गईं, परन्तु भारत ही एक ऐसा देश है, जिसकी सभ्यता के दो बडे आधार—दो प्रसिद्ध महाकाव्य रामायण और महाभारत और उन के दिव्यगुण युक्त पात्र थे। जिस कारण आज भी हमारी प्राचीन सभ्यता के चिह्न शेष हैं। इसीलिए एक समय के राष्ट्रकवि (शायर) डा० इकबाल (जो बाद में मुस्लिम लीगी बने) ने यह सत्य ही तो कहा था—

यूनान मिस्र रोमा
मिट गये जहा से,
बाकी है फिर भी
नामो निशां हमारा।
कुछ बात है कि
हस्ती मिटती नहीं हमारी
वर्षों रहा है दुश्मन
दौरे जहाँ हमारा॥

इसी प्रसिद्ध देश यूनान के सम्राट सिकन्दर महान हुए जिन्होंने जर्मनी के हिटलर की तरह विश्व-विजय का स्वप्न भी देखा था, परन्तु साकार न हो पाया। यही देश महात्मा सुकरात, प्लेटो (अफलातून) जैसे तत्त्वज्ञानी, महान् चिन्तकों की जन्मभूमि भी है। लगभग साढे तेईस सौ वर्ष हुए कि इसी देश के महान् दार्शनिक सुकरात के सुयोग्य शिष्य प्लेटो (अफलातून) के महान् शिष्य महात्मा अरस्तु भी हुए जो सिकन्दर महान् के गुरु भी थे। वैज्ञानिक चिन्तन के क्षेत्र में महात्मा अरस्तु की एक महान् देन यह है वह वस्तुओं का निरीक्षण करके उन की अलग-अलग श्रेणियां निश्चित करना था। उनके गुणों को ही उनका असली तत्त्व समझता था। उसका कहना था कि इस दुनिया में ऐसी कोई चीज नहीं है जिसका कोई न कोई तुक या सार्थकता न हो।

एक बार जब वह महात्मा अरस्तु अपने अध्ययन कक्ष में कुछ चिन्तन अवस्था में थे कि अचानक उठे और एक छोटा सा दीपक या साधारण सी मोमबत्ती लेकर एथेन्स के चौराहे पर जा बैठे और उस छोटी सी टिमटिमाती रोशनी में हाथ से कुछ खोजने का स्वांग करने लगे। सचमुच यह स्वांग तो था ही क्योंकि वह शिखर दोपहरी का समय था जब सूर्य भगवान् अपनी पूरी ज्योति के साथ प्रखर किरणों से भूमि को प्रकाशित कर रहे थे और चौराहा बडा साफ सुथरा था, किसी प्रकार की मिट्टी आदि कुछ भी वहाँ नही थी। ऐसी साफ सुथरी जगह में यदि सुई जैसी तुच्छ छोटी वस्तु भी गिर जाये तो वह भी बिना किसी असुविधा के उठाई जा सकती थी। इस घटना को घटे लगभग साढे सौ तेईसौं वर्ष हो चुके हैं। बाजार मे आते जाते लोग उस महात्मा को जब ऐसा नाटक सा व्यवहार करते देखते, तो कुछ तो उदासीन होकर और कुछ महात्मा को पागल कहकर अपना रास्ता लेते। परन्तु कुछ ऐसे भी मनचले नौजवान वहाँ खडे होकर महात्मा का उपहास करने लगे। उनमें से किसी ने पूछ ही लिया—बाबा यह क्या कर रहे हो। ऐसी कौन सी नायाब बारीक वस्तु खो गई है जिसकी तुम खोज में लगे हो और इसमें उपहास की बात यह कि तुम इस तुच्छ सी टिमटिमाती बत्ती को लिये हो जबकि सूर्य भगवान् पूरे यौवन से धरती को प्रकाशित कर रहा है और उस प्रकाश में बारीक से बारीक छोटी से छोटी वस्तु भी आसानी से पडी मिल सकती है। महात्मा सुकरात ने नीचे सिर करे हुए ही बडी गम्भीर आवाज में कहा—'मैं इन्सान की तलाश कर रहा हूँ।" इस पर वहां भीड में खडे लोग और भी कहकहा मार कर हस पड और लगे महात्मा का उपहास करने—और कहने लगे महात्मा तुम सचमुच पागल हो, क्या तुम यह भी नहीं जानते कि हम सभी तो यहां खडे आदमी इन्सान हैं। इस पर महात्मा सुकरात बडी गम्भीरता से बोले—"तुम सब में से ससार में आज बडे-बडे योग्य विद्वान हैं, डाक्टर्स हैं, इन्जीनियर्स हैं, न्यायाधीश हैं, बडे-बडे पराक्रमी वीर भी हैं, बडे-बडे व्यापारी और वकील, प्रोफेसर्स और वैज्ञानिक भी हैं, परन्तु याद रहे कि मुझे इन करोडों के समूह में कोई आदमी—इन्सान दीख नहीं पडता, यही बात आज मेरी घोर पीडा का कारण बनी हुई है। ससार को जिसकी अत्यन्त आवश्यकता रही है, और रहेगी, और आज भी उससे भी कहीं अधिक आवश्यकता है। सचमुच वह तत्त्व मानव इन्सान है। पाँच सहस्र वर्ष पूर्व द्वापर के महान् नेता योगीराज श्री कृष्ण चन्द्र जी ने भी इस के अभाव को अनुभव करके तो यह कहा था कि आज पृथ्वी तल पर क्या कुछ नहीं है, खाद्य पदार्थों की कमी नहीं, हीरे जवाहारात, मोतियों, सोने, चांदी की कमी नही। हाथी, घोडों, रथों से भरपूर यह देश फिर क्यों मृत्यु के मुख में आ रहा है। बडा ह्रास हो रहा है, इसका केवल एकमात्र कारण धर्म पालक मानवता के धारण करने वाले व्यक्तियों का अभाव है।

"पर्यस्तां पृथिवीं सर्वां साश्वां रथकुञ्जराम। यो मोचयेत् मृत्युपाशात् प्राप्नुयाद् धर्ममुत्तमम्।"

—महाभारत

आज पाच सहस्र वर्षों के बीत जाने पर भी इस तत्त्व की कहीं अधिक आवश्यकता है। विश्व के निर्माण की बडी बडी बातें आज के विद्वान्, वैज्ञानिक, नेतागण करते हैं, विश्व की अशान्ति को दूर करने के उपायों की खोज की जाती है परन्तु दुख है कि आदमी को 'मानव' 'इन्सान' बनाने की कोई भी छोटी बडी योजना दिखाई नहीं देती। इस पांच सहस्र वर्षों के अन्तराल में इस में सन्देह नहीं कि विज्ञान ने बडी भारी उन्नति की है। भूगोल खगोल की अन्तिम लकीर सीमा तक पहुंच गये हैं। समुद्रों में बीस-बीस सहस्र फीट तक गहराई में जाकर तेल-गैस खोज मारी है। दक्षिण ध्रुव जहां सारा वर्ष बर्फ ही बर्फ के ढेर पडे रहते हैं और जहां आदमी तो क्या किसी पक्षी तक की पहुंच नहीं, परन्तु विज्ञान का चमत्कार देखो कि उन्नत देशों ने वहा अपने अड्डे बना लिये हैं। इसी प्रकार विज्ञान के चमत्कार जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में दिखाई दे रहे हैं। परन्तु आश्चर्य है कि विज्ञान के इस युग में भी आदमी, "इन्सान मानव" न बन पाया। कविवर खुमार बाराबंकवी ने ठीक ही तो कहा है—

सभी कुछ हो रहा है,
इस तरक्की के जमाने में।
मगर यह क्या गजब है,
आदमी 'इन्सान' नही बनता।

कहने को तो आज विश्व की जनसंख्या पाच सौ करोड से भी अधिक कही जाती है, परन्तु वास्तव में वे पशुओं से भी घृणित व्यवहार करते हुए दीख पडते हैं अत वे सब 'मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति" कहने का तात्पर्य यह है कि केवल मानव आकृति धारण करने से मानव नही बनता, जब तक कि उसमें मनुष्यता नहीं आती। किसी शायर ने ठीक ही लिखा है—

इन्सा ने मेहरो माह की
राह तो देख लीं।
खुद उसकी अंजुमन में
चिरागां न हो सका॥

निस्सन्देह मनुष्यत्व प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है। शङ्कराचार्य महाराज ने कहा—"जन्तूना नरजन्म दुर्लभम्" सचमुच नर-तन पाना दुस्साध्य तो है किन्तु असाध्य नहीं। अत वेद भगवान् तो हमें 'मनुष्यत्व' प्राप्त करने का आदेश देते हुए कहते हैं कि मनुष्य जन्म नर तन तो तूने प्राप्त कर लिया है। मनुष्य भी बन केवल नर तनधारी न रहकर मनुष्यत्व धारी भी बन। इसी वास्ते वेद ने कहा—'मनुर्भव' मनुष्य शब्द का अर्थ करते हुए महामुनि यास्काचार्य ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ निरुक्त में लिखा है 'मत्वा कर्माणि सीव्यति' अर्थात् जो विचार कर काम करे। यह विचार कर काम करने की बुद्धि क्षमता केवल मनुष्यों को दी गई है पशुओं को नहीं। किसी भी काम को करने से पूर्व जो भली भांति विचार करे कि मेरे इस कर्म का फल क्या होगा। किस पर इसका क्या-क्या प्रभाव होगा। यह कर्म बूढों के दुख, प्राणियों की पीडा, राष्ट्र-देश का अनहित कारण होगा या कुछ हित अपेक्षा और जनता की भलाई करने वाला न होगा। सचमुच वही लोग "मत्वाकर्माणि सीव्यति" कह-

जाते हैं जो बिना विचारे आत्मा की आवाज के विरुद्ध कार्य करते हैं। महात्मा विदुर ने महाभारत में बड़ा ही सुन्दर कहा है—

"यत्रात्मना पत्रपते भृश नरः।
स सर्वलोकस्य गुरुर्भवत्युत ।।"

अर्थात् कोई भी व्यक्ति कर्म करने से पूर्व यह देख लेता है कि कहीं ऐसा काम न हो जाय। जो कि मेरा आत्मा ही मुझे लज्जित करने लगे। वह समस्त संसार का गुरु होने योग्य है। किसी उर्दू शायर ने ठीक ही तो कहा है—

बजाहिर सब हैं इन्सां,
लेकिन बातिन की खुदा जाने।
कि हैं इन्सां इनमें कितने,
और हैवान कितने हैं ।।

वास्तव में यह मानव जीवन विचारपूर्वक अपनी पाशवी प्रवृत्तियों को निर्मूल करने के लिए ही मिला है।

ऋग्वेद १।७०।२ के अनुसार नर तनधारी आदमी तभी वास्तव में मनुष्य बनता है जब वह संसार के व्यवस्थापक प्रभु के दिव्य गुणों को समझे, और फिर उन गुणों को भली भांति जीवन में धारण कर तदनुसार व्यवहार करे। तभी इस शरीर में मनुष्यता का जन्म होता है केवल मानव आकृति धारण करने से नहीं।

आर्यसमाज के प्रवर्तक, संस्थापक, युग पुरुष महर्षि दयानन्द सरस्वती ने बहुत ही महत्वपूर्ण विचार मनुष्य के विषय में इस प्रकार व्यक्त किये हैं—"मनुष्य उसी को कहना कि मनन शील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुख, हानि-लाभों को समझे, अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व-सामर्थ्यों से धर्मात्माओं की चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुणहीन क्यों न हों, उनकी रक्षा, उन्नति प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती, सनाथ, महाबलवान् और गुणवान भी हो तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे। अर्थात् जहां तक हो सके, अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वथा किया करे। इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी भले ही जावें, परन्तु इस मनुष्यपन रूप धर्म से पृथक् कभी न होवे वास्तव में इन मानवता के गुणों को धारण करने वाला ही व्यक्ति आर्य कहलाने का अधिकारी है और वही सदाचारी भी है महर्षि वेद व्यास ने ज्ञानी, सदा सन्तुष्ट रहने वाला, जितेन्द्रिय, दयालु, दानी, सत्यवादी को ही आर्य मनुष्य कहा है। इसी प्रकार महाभारत के अनुसार जो बैर को बढ़ावा न दे, न अभिमान करे, न कभी निराश हो, दुर्गति प्राप्त होने पर भी जो पापाचरण नहीं करता, दूसरों के दुख में कभी प्रसन्नता नहीं दिखाता, इत्यादि। वह ही आर्य मनुष्य है। कुछ आचार्य का कहना है कि वेदोक्त शास्त्र सम्मत जिन आचरणों के करने पर आत्मा, मन, वाणी तथा शरीर को सुसंस्कृत कर सत्-चित्-आनन्द रूप परमपिता परमात्मा की उपलब्धि की ओर उन्मुख कर जगत् के रागद्वेष कलह आदि असुर भावों से विरक्त होकर प्राणिमात्र का अभ्युदय तथा शान्तिमय वातावरण का निर्माण करता है। कर सकता है। उन सब कर्मों, आचरणों और व्यापार धारण करने वाला मनुष्य ही वास्तव में सदाचारी कहलाने का अधिकारी है।

मानवता के इतने विस्तारपूर्वक विवेचन के पश्चात् जब हम अपने चहुँ ओर दृष्टिपात करते हैं तो मानवता का ह्रास ही पाते हैं और इसके परिणामस्वरूप देश को विषम परिस्थितियों में उलझा हुआ देखते हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के गत चालीस वर्षों के बाद देश जो साम्प्रदायिकता का शिकार बना है, वह केवल मानवता के ह्रास के कारण ही है। कहीं खालिस्तान की मांग है तो कहीं गोरखालैण्ड की, कहीं झारखण्ड की तो कहीं भाषा के आधार पर छोटे-छोटे इलाकों की मांग के कारण देश की अखण्डता खतरे में पड़ गई है। तस्करी, चोर बाजारी, रिश्वतखोरी, भ्रष्टाचार, राष्ट्रीय ध्वज का अपमान करना और उसको जलाना, संविधान की प्रतियों को किन्हीं राष्ट्र विरोधी सारहीन मुद्दों को लेकर होली करना, देश का रुपया कुछ धनी प्रभावशाली सत्ताधारी पार्टी से मिलकर विदेशी बैंकों में जमा कराकर देश को निर्धन करना और इस के परिणाम स्वरूप यहां की अर्थव्यवस्था को अस्त-व्यस्त करना एक साधारण लघु सी बात हो गई है। हड़तालें, तालाबन्दी, भिन्न-भिन्न प्रकार के प्रदर्शन, जातिवाद, धन वितरणवाद, प्रदेशों के आपसी वाद-विवाद, बे-गुनाह, मासूम लोगों, बच्चों, स्त्रियों की हत्या, आतंकवाद, पंजाब, श्रीलंका, आसाम, नागालैण्ड के व्यर्थ के झगड़े। लोकसभा में वाकआउट के नजारों ने देश की स्वतन्त्रता को खतरे में डाल दिया है। कितनी ही सामाजिक कुरीतियां जो स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व लोप प्राय: सी हो गई थीं, अब फिर से सैकड़ों वर्षों के बाद सिर उठाकर उभर कर आ रही हैं। राजस्थान के एक दिवराला नामक गांव में हाल ही में एक अठारह वर्षीय नवयुवती को उसके मृत पति के शव के साथ जबरदस्ती जला दिया गया। न जाने कितनी नवविवाहित युवतियों को उसके सुसराल वाले या तो दहेज के लालच वश उनको बड़ी-बड़ी यातनाएं देकर आग की भेंट कर देते हैं या उन को स्वयं ऐसा करने पर बाधित कर देते हैं। युवा पीढ़ी को स्वर्गीय राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन् के शब्दों में ठीक सही दिशा न मिलने के कारण युवक बेमुहार की तरह इधर-उधर भटकना फिरना पड़ रहा है। कितने ही नवयुवक हीरोइन आदि तामसिक पदार्थों के सेवन के कारण न केवल अपना जीवन बरबाद कर रहे हैं अपितु अपने परिवार तथा देश की चिन्ता का कारण बने हुए हैं। ऐसा कोई भी क्षेत्र जीवन का शेष नहीं रहा जहाँ भ्रष्टाचार का बोलबाला न हो। यह सब मानवता के ह्रास की उपज (off shoots) हैं जो अराजकता के द्योतक हैं और इसी कारण देश का पतन हो रहा है, मृत्यु के मुंह में जा रहा है। यही बात पांच हजार वर्ष पूर्व महाभारत में एक प्रसङ्ग में यक्ष धर्मराज युधिष्ठिर के संवाद में आता है। यक्ष के धर्मराज युधिष्ठिर से पूछने पर कि—

"कथ राष्ट्र मृतं भवेत्।"

अर्थात् राष्ट्र, कोई भी देश कब मरता है। तो धर्मराज ने कहा था—"मृतं राष्ट्रम् अराजकम्" अर्थात् वह राष्ट्र मरा जानिये जहाँ अराजकता फैली हो। प्राचीन मूल्यों की अवहेलना करना, नैतिक मूल्यों में जीवन व्यवहार में स्थान न देना ही मानवता का ह्रास है जब तक इन की ओर ध्यान न दिया जायेगा, देश के पतन को संसार की कोई शक्ति रोक नहीं सकती। अतः देश की वर्तमान की विकट परिस्थितियों में विचारपूर्वक ध्यान करके अपना स्वार्थ, पार्टी का हित और अन्य लघु तुच्छ बातों को छोड़ देश की गिरती हुई हालत को देखकर गम्भीरता पूर्व विचार के देशहित में इन मानव, नैतिक मूल्यों का प्रचार-प्रसार करना चाहिये। हाल ही में एक समारोह में उपराष्ट्रपति डा० शंकरदयाल शर्मा ने इस सम्बन्ध में बहुत ही महत्वपूर्ण विचार इस प्रकार व्यक्त किये थे—

He called upon educational institutions to give greater enphairs to pronoting moral and ethical values and character building in the youth The gradual erosion in there values in society today was the stimulating block to economic development of the country and needed to be corrected urgently He further said that there was no meaning to economic developement if there was no corresponding progress in moral and ethical values He singled out corruption as one major factor standing in the way of development and which was an off shoot of the degrationin values He said Jawaharlal Nehru had put the greatest stress are moral and ethical values being integral to economic developement and it was in the economic resolution of the A I C C session at Bhubneshwar then He also wanted educationists to exercise the greatest caution in furthernig the cause of education and ensure that in the process we were not for removed from our roots which lay in the Vedas and scriptures.

आज के जीवन में फैले भ्रष्टाचार को दूर करने का बड़ा ही सुन्दर उपाय उपराष्ट्रपति महोदय ने ऊपर महत्वपूर्ण शब्दों में व्यक्त किया है। अतः तथाकथित नेताओं और सभी देश निवासियों का यह कर्त्तव्य है कि देश की अखण्डता, राष्ट्र की एकता और सहस्रों वर्षों के संघर्ष के पश्चात् अपनी मूल्यवान् स्वतन्त्रता की रक्षा के लिये यह नितान्त आवश्यक है कि सभी मानवता के नैतिक मूल्यों को जीवन में धारण करके आने वाली पीढ़ी के लिए उदाहरण उपस्थित करें, ताकि यह ऋषि मुनियों का देश मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी व योगीराज कृष्ण महाराज की जन्मभूमि फिर से संसार में अपना गौरवमय स्थान प्राप्त कर सके, और विश्व का सिरमौर बन सके।

कहेगा जगत् फिर से
एक स्वर में सारा।
यही वृद्ध भारत
गुरु है हमारा ।।

बन्धुओ! जागो। मानवता को अपनाओ और देश को बचाओ। यही समय की पुकार है।

ओम् प्रतिष्ठ

– ब्र० आर्य नरेश

सृष्टिकर्ता परमपिता परमात्मा ने अपने पुत्रों को वेद में यह सन्देश दिया है कि हे पुत्रो ! तुम मेरे ओम् नाम की प्रतिष्ठा करो। आनन्द को चाहने वाले प्रिय हो।

जगद्जननी भारत माता के सभी ऋषियों मुनियों और देवी देवताओं ने सदा ओम् के जप से ही उस ईश्वर का साक्षात्कार किया है। इसलिए ईश्वरीय वाणी वेद के साथ साथ अन्य सभी आर्ष ग्रन्थों तथा ब्राह्मण (पुराण) उपनिषद् दर्शन, रामायण तथा महाभारत में भी ओम के ही जप करने का विधान आया है—तस्य वाचक प्रणव। (योग) ओम् प्रतिष्ठ (वेद), ओमित्येतदक्षरम् (गीता) ओमित्येतत् (उपनिषद) इतना ही नहीं अपितु पारसियों, बुद्धों जैनियों के ग्रन्थों तथा गुरुओं के ग्रन्थ साहब में भी ओम् को मुख्य स्थान दिया गया है। बाईबल का आमिन तथा कुरान का अलिफ-लाम-मीम भी ओम् का ही अपभ्रंश बताया जाता है।

ओम के संसार में सबसे अधिक प्रसिद्ध होने का कारण इसके विशेष गुण हैं। प्रत्येक व्यक्ति चाहे वो बालक हो वृद्ध हो, गूंगा हो, बहरा हो बिना दांत का हो या तुतला हो अथवा दुनिया की किसी भी देश की भाषा को बोलने वाला हो वह जितनी अधिक सरलता से 'ओम्' का उच्चारण कर सकता है। उतनी सरलता से ईश्वर के किसी भी अन्य नाम उच्चारण करके पूर्ण लाभ नहीं उठा सकता।

ओम् का नाम सहज स्वभाव से भी निकलता है। जब बच्चा पैदा होता है तो ओह ओह ओम्ऽ ओम्ऽ ओ३म् कहता हो रोता है। जब कोई व्यक्ति स्नान करने के लिए ठण्डा ठण्डा पानी अपने सिर डालता है। तो ओ ओ ······ओम् निकलता है। भोजन करने के पश्चात् भी जब डकार आती है तो स्वत ही ओ३म् निकलता है। कोई भी व्यक्ति जब अन्दर सांस लेता है या किसी वस्तु को तेजी से एक स्वर में चलाता है तो ओम् ही निकलता है।

सरलता के साथ-साथ जितना इस ईश्वर के मुख्य नाम ओम् जपने का लाभ है उतना ईश्वर के किसी भी गौण नाम के जपने में नहीं है। जितने ईश्वर के गुण एक साथ ओम् नाम में आ जाते हैं। उतने गुण ईश्वर के अन्य अनेक गुण नामों को मिलाकर भी नहीं आते। अ+उ+म् को मिलाकर ओम् बनता है। अ—आप्ति, उ—उत्कर्ष तथा म्—मिति वाले जितने भी प्रभु के नाम हैं, वे सब इसमें आ जाते हैं। एक ओम् का उच्चारण या गायन करने से प्रभु नामों का स्वत उच्चारण या गायन हो जाता है। परन्तु अन्य इन्द्र, शिव, गणेश या रुद्र आदि एक एक नाम का उच्चारण करने से सब नामों का गायन नहीं होता।

उदाहरण के लिए देखिये जैसे संसार में एक व्यक्ति का नाम ओम् प्रकाश है पर उसे कोई पिता, कोई पति, कोई गुरु और कोई मित्र आदि के नाम से पुकारते हैं। पर ध्यान रहे कि जिस नाम से उसको मिला जा सकता है वह नाम ओमप्रकाश ही है। वे गौण नाम ही हैं। यदि पुत्र पिता जी के कार्यालय में जाकर वहां के चपड़ासी को कहे कि पिता जी से मिलना है, पत्नी कहे पति से मिलना है, और उसका साथी कहे कि मित्र से मिलना है तो वे सब सिर पटककर रह जायेंगे पर उस व्यक्ति को कभी नहीं मिल सकेंगे जब तक कि उसका मुख्य नाम नहीं बतायेंगे, ठीक यही बात ईश्वर का मुख्य नाम ओम् छोड़ कर शेष गौण नाम शिव, शंकर, गणेश, रुद्र चाहे गुरु या राम आदि कहने वालों के साथ होगी। देखिये जिस प्रकार ओम् प्रकाश के नाम पैसा जमा करवाने के लिए उनके सम्बन्धियों के द्वारा पिता, पति, गुरु या मित्र का नाम लेने से उस व्यक्ति के नाम पैसा नहीं जुड़ता, ठीक वैसे ही ईश्वर के पास आपका वही नाम जप जुड़ता है जो उसके मुख्य नाम ओम् को लेकर अर्थ सहित जपा जाता है।

एक विशेष बात और ध्यान देने की है और वह यह है कि ईश्वर एक है और उसका अपना स्वरूप यथा वेदों में बताया और ऋषियों तथा योगियों द्वारा जाना गया है। वह निराकार, न्यायकारी, सर्वशक्तिमान आदि भी एक ही है। जिस प्रकार से संसार में एक ओमप्रकाश व्यक्ति के अनेक नाम, पिता, पति, गुरु, मित्र होने पर और उन के सम्बन्धियों के द्वारा इन भिन्न-भिन्न नामों के द्वारा बुलाने से जैसे ओम प्रकाश के अनेक स्वरूप नहीं बनते वैसे ही ओम परमात्मा भी अनेक नाम से बुलाये जाने पर अनेक रूप वाला नहीं होता।

जप करने वालों को सदा ध्यान में रखना चाहिए कि जिस प्रकार से ओमप्रकाश कागज पर लिखा हुआ वह ओमप्रकाश व्यक्ति नहीं है। अपितु वह नामी वस्तु तत्व जिसका कि नाम ओमप्रकाश है। ठीक वैसे ही ओम लिखकर देखते रहना ओम भगवान् का दर्शन नहीं है और न ही ओम की ध्वनि ही ओम् भगवान् है। वास्तव में ओम् भगवान् तो वह सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सृष्टि-कर्ता, न्यायकारी तथा आनन्दस्वरूप वस्तु है। जिसको कि ओम् लिपि तथा भाषा के द्वारा कहा जा रहा है। ओम् भगवान का दर्शन तथा अनुभव शुद्ध सात्त्विक भोजन करने वाले, सदाचारी, सेवाभावी, ज्ञानी तथा वेदविश्वासी ही प्राप्त कर सकते हैं। जिनको संसार के लालमिर्ची, चाय, काफी, लहसुन, प्याज, अण्डा, मांस, शराब, तम्बाकू, भांग, चरस, अश्लील नावल, सिनेमा तथा मनमाने ढंग से गृहस्थ को भोग-विलास समझ कर भोगने और ५५-६० वर्ष की अवस्था के होकर भी घर में रहने का मजा आ रहा है, उन को ओम् के जप के द्वारा ईश्वर के दर्शन करके क्या लेना है।

ओम् प्रभु उसे ही दर्शन देते हैं जिसे वे योग्य, शुद्ध, आज्ञाकारी पात्र समझकर चुनते हैं। संसार का कोई भी व्यक्ति ओम् प्रभु की वेदाज्ञा को छोड़कर और मनमाने ढंग से संसार में चलकर उसे कभी नहीं प्राप्त कर सकता।

अन्त में एक और आवश्यक बात आपको जान लेनी चाहिए कि प्रभु दर्शन के लिए माला साधक नहीं अपितु बाधक है। प्रभु सूक्ष्म है और अपने आत्मा के पास अन्दर मिलता है। ईश्वर को प्राप्त करने के लिए आपको इस सारे स्थूल संसार (जिस में आपका शरीर भी सम्मिलित है जो आत्मा और परमात्मा के बीच में बाधक बन रहे हैं) की गतिविधि से मन को हटा कर उसे अपने ही सूक्ष्मता की ओर लाना पड़ेगा तथा सारे संसार को भूलना होगा। परन्तु ईश्वर के ध्यान में साधक समझे जाने वाली यह माला एक तो मन को सांसारिक मनकों के चक्कर में डालकर चंचल कर देती है। दूसरे उसकी बाह्यवृत्ति बनाकर आत्मा को परमात्मा से कहीं दूर करके बीच में एक नई बाधा खड़ी कर देती है। आप यदि जप से शीघ्र ही कल्याण चाहते हैं तो माला के झमेले में न पड़ कर समय को घड़ी आदि के अलार्म द्वारा निश्चित करके अर्थ-पूर्वक ओम् का सार्थक जप करके जीवन को सफल बनाय।

परमपिता परमात्मा के ओम् नाम की ध्वनि सूक्ष्म रूप में सारे संसार में व्याप्त है। अतः जब आप वैदिक रीति से एकान्त, शुद्ध तथा शान्त शान्त स्थिति में ओम् का जप करेंगे तो इन दोनों ध्वनियों के एक हो जाने से आपका मन अत्यन्त शीघ्र एकाग्रता को प्राप्त होकर उसके आनन्द में झूमने लगेगा।

इस लघु लेख के प्रकाशन का हमारा यही अभिप्राय है कि प्रभु-भक्त अज्ञान से बचकर ईश्वर के मुख्य नाम ओम् का कीर्तन, गुण-गान करके जीवन का मुख्योद्देश्य ईश्वर के साक्षात्कार को शीघ्र सिद्ध कर सकें।

●

राष्ट्र के प्रहरी

—नीरज ठाकुर

राष्ट्र एक देवता है
और हम सब इस के पत्र-पुष्प
हमें राष्ट्र देवता की
अर्चना करनी है
पूजा करनी है
वन्दना करनी है
इसके निमित्त
हमें राष्ट्र-देवता के चरणों में
अर्घ्य बन कर
सर्वस्व समर्पित कर
उसकी कीर्तिमय छवि को
द्योतभासित होते देखना है।

वीर ध्वनि

धर्म मार्ग पर चलने से तुम कभी नहीं इनकार करो।
आयें लाखों संकट, पर उनको सहर्ष ही पार करो॥
ईंटें खाईं, पत्थर खाए, विष भी चौदह बार पिया।
लेकिन देश-जाति का सबसे आगे बढ़ उद्धार किया॥
नहीं डिगा निज सिद्धान्तों से मरना भी स्वीकार किया।
कांच मिला विष दूध पिया, पर अमृत का उपहार दिया॥
देव दयानन्द के दैवी जीवन पर तनिक विचार करो।
धर्म मार्ग पर ... ॥

× × ×

यही चांदनी चौक जहाँ पर घण्टाघर दरशाता है।
निर्भय संन्यासी निज तेजस्वी स्वरूप दिखलाता है॥
किरचें ताने नौकरशाही का दानव था अड़ा हुआ।
लेकिन श्रद्धानन्द निडर हो सीना खोलें खड़ा हुआ॥
छेदो छाती वीर धीर नर नाहर की ललकार सुनो।
धर्म मार्ग पर ... ॥

× × ×

केवल चौदह वर्ष आयु थी नव दुल्हिन की मांग भरी।
नया हर्ष था, नव उमंग थी, नई जिन्दगी झांक रही॥
नहीं धर्म छोड़ूंगा अपना चाहे प्राण चले जावें।
सोना चांदी धन-दौलत कैसे मुझको छलने पावें॥
अमर आत्मा काट न सकते बाल हकीकत ललकारा।
हुआ जुदा धड़ से सिर, इस विध अपना शीश कटा डाला॥
जब जब अम्बर में [illegible] सुनो।
धर्म मार्ग पर ... ॥

रूपकुंवर ने दिवराला में चिता में तन को झोंक दिया।
धू धू कर जल उठी चिता बलपूर्वक निज को फूंक दिया॥
धर्मान्धों की हठधर्मी से प्राणों को था सौंप दिया।
सती की गई वह बलात् किस विध मरकर उद्बोध किया॥
नारी की उस त्राहि त्राहि का ज्वालाओं में गान सुनो।
धर्म मार्ग पर ॥

× × ×

उठा उच्च स्वर नारी त्राण का धरती भी जिससे डोली।
तभी आर्य सन्यासी निकले दल-बल ने अद्भुत टोली।
दिवराला तक पहुंच न पाए, शासन-सत्ता ने रोका।
कैसी है विडम्बना खाया अपनों से हम ने धोखा॥
अबला ने सबला पद पाया यह अनुपम अभियान सुनो।
धर्म मार्ग पर ... ॥

× × ×

फैलाया आतंक जिन्होंने आततायी कहलाते हैं।
आर्य वीर ही आगे बढ़ प्राणों की बलि चढ़ाते हैं॥
देश जाति की रक्षा करने जो भी आगे आएगा।
बलिदानी वीरों से शिक्षा लेकर बढ़ता जाएगा॥
शत शत नमन "शान्त" उनको,
जगती में जय जयकार सुनो।
धर्म मार्ग पर ... ॥

ले०—सत्यभूषण 'शान्त' वेदालंकार एम०ए०
[illegible], ग्रीन पार्क, नई दिल्ली-१६

आर्यसमाज दीवान हाल का १०३वां वार्षिकोत्सव

स्थान . लाल किला मैदान

तिथि—शुक्र, शनि, रविवार . २५, २६, २७ मार्च १९८८

आर्यसमाज दीवानहाल का अपना शानदार इतिहास है। यह अपने अतीत में अनेक राष्ट्रीय आन्दोलनों का सूत्रधार एवम् वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार में अग्रणी रहा है। इस आर्यसमाज ने अपने यहाँ अनेक विद्वानों, सन्तों, महात्माओं एवम् विद्यार्थियों को शरण दी है। यह अपने जीवन के शतवर्ष पूर्ण कर दूसरी सदी में प्रवेश कर चुका है।

मेरा सभी आर्यसमाजों से निवेदन है आर्यसमाज दीवानहाल दिल्ली के वार्षिकोत्सव पर अवश्य पधारें।

निवेदक डा० शिवकुमार शास्त्री

कल्याण का मार्ग

(पृष्ठ का शेष)

उत्तम हैं। हमारे आयुर्वेदाचार्यों, धर्मशास्त्र निर्माताओं तथा समाज सुधारक संसार के परम हितैषी विद्वानों एवम् ऋषि दयानन्द ने अपनी पवित्र खोज के द्वारा जो अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में लिखा है उसका बार-बार अध्ययन कर कल्याण का मार्ग निश्चित करना चाहिए, वही हमारे सच्चे कल्याण का मार्ग होगा। ●

प्रसिद्ध समाजसेवी वैद्य प्रह्लाददत्त नहीं रहे

प्रसिद्ध समाज सेवी, कर्मठ आर्य नेता, स्वाधीनता सेनानी वैद्य प्रह्लाद दत्त जी का ९३व वर्ष की आयु में १९ मार्च ८८ को निधन हो गया।

मान्य वैद्य जी आर्यसमाज की गतिविधियों के चलते-फिरते इतिहास थे। गो रक्षा सत्याग्रह के समय उनके द्वारा की गई सेवाएं सदा याद रखी जाएंगी। विभाजन-काल में असमाजिक तत्वों से बेबस लोगों की रक्षा आदि के कार्य में उन्होंने भरपूर योगदान दिया। वेद प्रचार तथा शुद्धि काल में उनकी सेवा उल्लेखनीय रही।

वैद्य जी की स्मृति में श्रद्धाञ्जलि सभा का आयोजन उनके निवास स्थान ४६०२ डिप्टीगंज सदर बाजार में ३० मार्च को सायं ४ बजे किया गया है।

घर को आग न…

(पृष्ठ १ का शेष)

कारण अमर हो गए, उन्हें संसार हमेशा याद रखेगा, परन्तु उन का विरोध करने वालों का कोई नाम भी नहीं लेता है।

महर्षि दयानन्द को जनता की निगाहों में गिराने के लिए आर्य-समाज से निष्कासित पं० अखिलानन्द कविरत्न ने रमा-महर्षि संवाद छपवाया। जैनी जियालाल ने दयानन्द छलकपट दर्पण लिखा। स्वामी करपात्री ने वेदार्थ पारिजात में महर्षि के सत्य सिद्धान्तों की खिल्ली उड़ाई तो आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान् आचार्य विशुद्धानन्द शास्त्री ने दयानन्द कल्पद्रुम लिखकर करपात्री के अनर्गल प्रलाप को तार-तार करके तोड़ दिया। इस संसार में अनादि काल से आर्य और दस्यु का युद्ध होता रहा है, इससे घबराने की कोई बात नहीं।

अतः आर्य जनता से मेरा निवेदन है कि मिलजुल कर काम करें।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (डी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक २५ | रविवार १० अप्रैल १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८९ | चैत्र २०४५ | दयानन्दाब्द—१६४

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ३० डालर, १० पौंड

शंकराचार्य पाखण्डाचार्य नहीं

जैसी आशा की जाती थी वैसे ही हुआ। उत्तर प्रदेश की सरकार ने पाखण्डी शंकराचार्य को जनता के अपमान से बचा लिया। हम ने घोषणा की थी कि वह स्वामी अग्निवेश से वेदों में सती प्रथा के समर्थन के प्रश्न पर शास्त्रार्थ करने को तैयार हैं किन्तु जब स्वामी अग्निवेश और आपके साथी पुरी महादेव की ओर जा रहे थे तो इन्हें मार्ग में बालेनी के स्थान पर गिरफ्तार कर लिया गया जिसका परिणाम यह हुआ कि यह शास्त्रार्थ न हो सका। पुलिस ने इन लोगों की गिरफ्तारी का यह तर्क पेश किया है कि अगर शास्त्रार्थ होता तो शंकराचार्य सती के पक्ष में बोलता और इस प्रकार सती के विरुद्ध कानून का अपमान होता। पुलिस की बात पर लोग तब विश्वास करते अगर वह इस निरंजन देव तीर्थ को भी इस अपराध में गिरफ्तार करते क्योंकि वह तो दिन रात सती का पक्ष लेता है और यह भी कहता है कि हिन्दू शास्त्रों में सती को आशीर्वाद मिला हुआ है। क्या इस से बढ़कर सती के विरुद्ध कानून या सुप्रीम कोर्ट के आदेश का अपमान हो सकता है लेकिन सरकार कुछ नहीं कर रही। ऐसी स्थिति में कौन न स्वामी अग्निवेश के आरोप ठीक मानेगा कि उत्तर प्रदेश की कांग्रेसी सरकार इस पाखण्डी निरंजन देव का पक्ष ले रही है।

मुझे दुःख है कि मैं श्री निरंजन देव तीर्थ को एक पाखण्डी कहने पर विवश हूं इसलिए कि जो बातें वह कर रहा है इसके बाद इसे ईमानदार वे अकेले ही मानेंगे जिन्होंने अपनी बुद्धि इन्हें समर्पित कर रखी है। अपने एक वक्तव्य में इसने कहा कि सती के विरुद्ध हाल ही में पास किया हुआ कानून हिन्दू शास्त्रों के विरुद्ध है। इसके अलावा यह है कि हिन्दू शास्त्र हरिजनों को मन्दिरों में प्रवेश करने की आज्ञा के विरुद्ध हैं। यह ही नहीं इस ने यह भी कहा है कि हिन्दू शास्त्र महिलाओं को और हरिजनों को शास्त्र पढ़ने की आज्ञा नहीं देते। इसी पर बस नहीं। इस ने यह भी कहा है कि हिन्दू शास्त्र विधवाओं के विवाह के भी विरुद्ध हैं।

इस शंकराचार्य की बातें सुनकर प्रश्न किया जाएगा कि क्या इस व्यक्ति का दिमाग तो खराब नहीं हो गया। कोई अत्यन्त मूर्ख ही ऐसी मूर्खतापूर्ण बात करेगा। अनपढ़ लोगों में तो अन्धविश्वास है। किन्तु अपने आप को शंकराचार्य का उत्तराधिकारी कहने वाला व्यक्ति अगर इस मूर्खता का प्रदर्शन करे तो कौन न यह कहने पर विवश होगा कि इस व्यक्ति का स्थान पागलखाने में होना चाहिए। जिन शास्त्रों का हवाला यह देता है वह निश्चित रूप में किसी हिन्दू समाज के शत्रु ने लिखे होंगे। अंग्रेजों के जमाने में ये सारी बातें सुनने में आई थीं जो निरंजनदेव तीर्थ कह रहे हैं किन्तु स्वतन्त्रता के बाद तो सारे संसार पर प्रकट हो गया है कि अंग्रेजों ने वेदों की यह व्याख्या हिन्दुओं को दिमागी तौर पर गुलाम बनाए रखने और इनमें आत्मसम्मान को कम करने के लिए की थी। महर्षि दयानन्द ने सबसे पहले अंग्रेजों की यह पोल खोली। कोई चाहे तो कह सकता है कि यह सब कुछ अंग्रेजों के जमाने से पहले से हो रहा है। ठीक है लेकिन अंग्रेजों ने इस भ्रम को सम्मान दिया। जिन लोगों को अंग्रेज साम्राज्यियों की चालों और षड्यन्त्रों का पता है वे जानते हैं कि इन्होंने किस प्रकार से खरीदे हुए लोगों से यह प्रचार कराया कि वैदिक शास्त्रों में इन बातों का प्रोत्साहन है। वेद मन्त्रों की गलत और अनुचित व्याख्या कराकर वे सारी बातें कही गयीं जिन्हें आज श्री निरंजनदेव कह रहे हैं। प्रत्येक यह समझ रहा था कि अब जब यह बात सिद्ध हो गई है कि जानबूझ कर वेद मन्त्रों को गलत रूप में पेश किया जा रहा है तो क्या कोई पढ़ा लिखा हिन्दू अपने आप को हिन्दुओं का गुरु कहने वाला यह व्यक्ति ऐसी लज्जाजनक बातों को दोहराएगा। क्या इस पर कभी निरंजनदेव ने सोचा है कि वह जो कुछ कह रहा है इसका व्यावहारिक परिणाम क्या होगा। अगर किसी हरिजन को मन्दिर में प्रवेश करने की या वेद पढ़ने की आज्ञा नहीं तो क्या वह ईश्वर की पूजा करने या मानसिक शान्ति प्राप्त करने किसी मस्जिद या गिरजाघर में जाकर कुरान या इञ्जील पढ़ेगा। सच्चाई तो यह है कि यह बात इतनी झूठी और बेहूदा है कि इस पर टिप्पणी करना भी अपनी बुद्धि का अपमान करना है। गांधी जी और स्वर्गीय पंडित मदन मोहन मालवीय ने हरिजनों पर मन्दिरों के दरवाजे बन्द करने के विनाशकारी परिणामों को देखते हुए यह प्रचार किया कि हरिजनों को मन्दिरों में प्रवेश के प्रतिबन्ध का वास्तव में परिणाम यह होगा कि ये लोग हिन्दू धर्म को एक लानत समझ कर इसे तिलांजलि दे देंगे। अगर नवयुवती विधवाओं को दोबारा शादी की आज्ञा नहीं तो इस मूर्ख निरंजन से कोई पूछे कि क्या इस प्रकार व्यभिचार का विस्तार न होगा। कौन सा धर्म शास्त्र जो यह कहता है कि विधवाओं को इस प्रकार पथभ्रष्ट होने दिया जाए। सच तो यह है कि इन की रीतियों ने हिन्दू समाज की यह दुर्दशा करके रख दी है कि इसे सन्मार्ग पर लाना ही कठिन हो रहा है। श्री निरंजन देव जैसे व्यक्ति अपने वक्तव्यों के राजनीतिक परिणामों से लापरवाह होकर जो मुंह में आता है कह रहे हैं और जो लोग हिन्दू धर्म और हिन्दू समाज के शत्रु

(शेष पृष्ठ २ पर)

स्वामी सर्वानन्द जी के चरणों में।

आजकल श्री वीरेन्द्र जी और उनके साथी, श्री स्वामी आनन्दबोध जी द्वारा अपने गुरु स्वामी सर्वानन्द जी दयानन्द मठ दीनानगर वालों के आदेश पर, उन्हें अपना त्यागपत्र भेंट कर देने से बहुत प्रसन्न हैं। उन का ख्याल है शायद इस प्रकार जो हम ने पाप किए हैं, (सार्वदेशिक सभा के प्रधान, मन्त्री के विरुद्ध मुकद्दमा चला के आर्डर लेना तथा आदेश की अवहेलना करना) यति-मण्डल की छत्रछाया में उनके वह पाप छिप जायेंगे। शायद कोई ऐसा नियम हो, मैं नहीं कह सकता, मेरे ज्ञान से बाहर है।

स्वामी सर्वानन्द जी, स्वामी ओमानन्द जी स्वामी दीक्षानन्द जी, स्वामी सुमेधानन्द जी तथा अन्य यतिमण्डल के सदस्य, यह सब हमारी परम पूज्य, परम आदरणीय आर्यसमाज की विभूतियां हैं जिनको मैं सर्वप्रथम प्रणाम करता हूं। वीरेन्द्र जी के साथ मेरा कोई व्यक्तिगत विरोध नहीं है। मैंने वरिष्ठ उप-प्रधान पद से त्यागपत्र उन की नीति के विरुद्ध दिया था क्योंकि मैं उन्हें कहता था कि आप ने पंजाब के विभाजन को माना हुआ है उस को लागू करना दोनों प्रान्तों की सम्पत्ति

(शेष पृष्ठ ७ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रबन्ध सम्पादक—सूर्यदेव

महात्मा हंसराज : एक पुण्य स्मरण

—डा० भवानीलाल भारतीय

आर्यसमाज के महान् त्यागी, तपस्वी तथा शिक्षा हेतु सम्पूर्ण जीवन समर्पित करने वाले महात्मा हंसराज जी का जन्म १९ अप्रैल १८६४ ई० को होशियारपुर जिलान्तर्गत बजवाड़ा ग्राम में हुआ था। उनके पिता का नाम श्री चुन्नीलाल तथा माता का नाम गणेश देवी था। आर्यसमाज लाहौर के प्रथम मन्त्री साईंदास जी की प्रेरणा से जो नवयुवक आर्यसमाज में प्रविष्ट हुए उनमें हंसराज जी सब से योग्य एवम् समर्पित व्यक्तित्वधारी थे। १८८५ ई० में उन्होंने पंजाब विश्वविद्यालय से बी० ए० की परीक्षा द्वितीय स्थान प्राप्त कर उत्तीर्ण की। इतिहास तथा संस्कृत में उन्हें विशेष योग्यता प्राप्त हुई।

जब १८८३ में स्वामी दयानन्द का निधन हुआ तो उनकी स्मृति को चिरस्थायी बनाने की दृष्टि से उनके स्मारक के रूप में दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज स्थापित करने का निश्चय किया गया। उस समय हंसराज ने अपने को इस महाविद्यालय के हेतु समर्पित कर दिया। उन्होंने यह घोषणा की कि वे कालेज के आचार्य पद पर अवैतनिक रूप से कार्य करेंगे।

परन्तु उनकी गृहस्थी का सम्यक् रूप से निर्वाह होता रहे, इस दृष्टि से उनके बड़े भाई लाला मुल्कराज ने उन्हें ४० रु० मासिक नियमित रूप से सहायता देने का निश्चय किया। महात्मा जी का अपने बड़े भाई के प्रति सम्मान जीवन पर्यन्त बना रहा। जब लाला मुल्कराज लाहौर रहने लगे तो महात्मा जी अपने बड़े भाई तथा भावज से भेंट करने हेतु प्रायः नित्य ही उनके निवास स्थान पर जाते थे।

डी० ए० वी० संस्था सर्वप्रथम एक स्कूल के रूप में स्थापित हुई, किन्तु बहुत शीघ्र ही उसने एक विशाल महाविद्यालय का रूप धारण कर लिया। पंजाब की एक राष्ट्रीय शिक्षा संस्था के रूप में इस कालेज को विकसित करने में महात्मा जी का अपूर्व योगदान था। उनके आचार्य काल में उस कालेज ने अपूर्व उन्नति की। बिना कोई सरकारी सहायता प्राप्त किये, उस युग में किसी महाविद्यालय का सर्वोच्च स्थिति पर पहुँचना वस्तुतः एक आश्चर्य ही था। कला, विज्ञान, वेद, संस्कृत के अतिरिक्त आयुर्वेद, कला-कौशल उद्योग आदि की लोकोपयोगी शिक्षा का प्रबन्ध भी महात्मा जी के निर्देशन में किया गया था। वे स्वयं महाविद्यालय के छात्रों को धर्म शिक्षा पढ़ाया करते थे।

महात्मा जी त्याग और तपस्या की साक्षात् प्रतिमा थे। डाक्टर गोकुलचन्द नारंग ने एक सभा में महात्मा जी के सम्बन्ध में निम्न उद्‌गार व्यक्त किये थे—"कुछ लोग महात्मा हंसराज की प्रशंसा में कहते हैं कि वह आर्यसमाज के महात्मा गांधी थे, त्याग के दृष्टिकोण से देखें तो यह कहना अधिक उचित है कि महात्मा गांधी राजनीति के हंसराज हैं।" महात्मा जी का त्याग और तपस्या अनुपम था। वे कालेज से डेढ़ मील पर रहते थे। पैदल कालिज आते। उनकी बैठक में एक सादी दरी तथा चौकी बिछी होती।

१९२० में जब असहयोग आंदोलन की धूमधाम थी और अनेक शिक्षण संस्थाएं छात्रों के असहयोग के कारण बन्द हो रही थीं, उस समय भी महात्मा जी ने अपनी दूरदर्शिता दिखाई तथा डी० ए० वी० संस्थाओं को यथावत् जारी रखा। महात्मा जी सच्चे ईश्वर भक्त, वैदिक धर्म के अनन्य अनुयायी तथा महर्षि के प्रति अत्यन्त श्रद्धालु थे। उनकी पावन स्मृति में मेरा विनम्र प्रणाम।

आर्यसमाज बांकनेर, दिल्ली का ३६वां वार्षिकोत्सव हर्षोल्लास के साथ सम्पन्न

आर्यसमाज बांकनेर का ३६वां वार्षिकोत्सव २७, २८ फरवरी १९८८ को बड़ी धूमधाम से मनाया गया। दोनों दिन प्रातः यज्ञोपदेश का कार्यक्रम हुआ। इस अवसर पर स्वामी धर्मदेव जी, आचार्य कर्णसिंह, गुरुकुल टटेसर, पं० देवेन्द्रनाथ शास्त्री, पं० चिन्तामणि जी के आध्यात्मिक उपदेश हुए।

२७ फरवरी, शनिवार को पं० आशानन्द जी ने खेल-प्रतियोगिताओं के उद्‌घाटन के अवसर पर युवकों से मार्मिक अपील करते हुए कहा कि बलिष्ठ युवक ही देश को आज के हिंसात्मक तथा अन्यायपूर्ण एवं भ्रष्टाचार, अन्धविश्वास, गुरुडम के वातावरण से उबार सकता है। डा० धर्मपाल, प्रधान, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा ने कुश्ती-दंगल का उद्‌घाटन किया। उन्होंने युवकों के इतनी भारी संख्या में उत्सव में सम्मिलित होने पर आर्यसमाज बांकनेर को बधाई दी और आशा व्यक्त की कि युवक चरित्रवान् तथा बलवान बन आर्यसमाज का गौरव बढ़ाएंगे। इस अवसर पर स्वामी स्वरूपानन्द जी, अधिष्ठाता वेद प्रचार ने युवकों को व्यायाम प्रेमी होने पर बधाई दी।

२८ कि० से ८२ कि० तक वजन की कुश्तियों में सुरेन्द्र, संजय, सुरेन्द्र, विजयपाल, जयप्रकाश, जयकरण (डीटीसी), पवन, सतीश, पवन, मुकेश, रणबीर और विनोद ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। सोमदत्त, पवन, रणबीर, वीरेन्द्र, राजेश, राजेन्द्र यादव, वीरेन्द्र, विजेन्द्र कपूर, विजेन्द्र, सुरेन्द्र और धर्मेन्द्र खत्री दूसरे स्थान पर रहे। बालीबाल (शूटिंग) की विजेता मितराऊ क्लब तथा नवयुवक स्पोर्ट्स क्लब द्वितीय स्थान पर रही। कबड्डी (वरिष्ठ) प्रतियोगिता में दादाबाई वाला क्लब प्रथम तथा खत्री स्पोर्ट्स क्लब द्वितीय, कबड्डी (कनिष्ठ) में खत्री क्लब बांकनेर प्रथम तथा शक्ति स्पोर्ट्स क्लब द्वितीय, कबड्डी (उपकनिष्ठ) में केहरी वाला क्लब प्रथम तथा सतीश स्पोर्ट्स क्लब द्वितीय स्थान पर रहीं।

भाषण प्रतियोगिता में कुलदीपसिंह प्रथम, राजेन्द्र सिंह द्वितीय, ज्ञान प्रकाश तृतीय तथा निबन्ध प्रतियोगिता में कुमारी ओम प्रभा प्रथम, हीरालाल खत्री द्वितीय व कुलदीप खत्री तृतीय स्थान पर रहे। दौड़-प्रतियोगिता में अशोक पाराशर प्रथम, अनिलकुमार द्वितीय तथा मोहन लाल ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। इस अवसर पर ग्राम बांकनेर के वरिष्ठ पहलवान छोटूराम, स्वरूप सिंह, शीशराम रिसाल सिंह, बदलेराम व सजान सिंह को पगड़ी भेंट कर सम्मानित किया गया। गांव के सात उदीयमान राष्ट्रीय खिलाड़ी सुरेन्द्र, अशोक, अजय (कबड्डी), विजेन्द्र, सुरेन्द्र खत्री, आनन्द प्रकाश (कुश्ती) तथा अशोक पाराशर (दौड़) का स्वागत किया गया।

आर्यसमाज बांकनेर ने स्वतन्त्रता सेनानी मा० प्रभुदयाल को अभिनन्दन पत्र भेंट कर सम्मानित किया। इस अवसर पर मा० प्रभुदयाल जी ने देशवासियों को ईमानदार और परिश्रमी बनने की अपील की और आर्यसमाज के हर कार्य में सहयोग देने को प्रेरित किया। डा० महावीर, दिल्ली विश्वविद्यालय, प्रियतमदास रसवंत, अधिष्ठाता आर्य वीर दल, दिल्ली तथा कुन्दन लाल हमदर्द हरयाणवी कवि ने आर्य जनता को ऋषि दयानन्द के बताए मार्ग पर चलने के लिए उद्‌बोधन किया। युवकों को विशेषकर आर्यसमाज की गतिविधियों में सक्रिय भाग लेने का आह्वान किया। मुख्य अतिथि दानवीर विद्याप्रकाश सेठी ने विजेताओं को पुरस्कार बांटे। इस अवसर पर उन्होंने सच्चे आर्य बनने की अपील की तथा ऋषि दयानन्द के सपनों का भारत निर्मित करने का संकल्प लेने को कहा।

इस अवसर पर सेठी जी ने २२००) रु० का पुनीत दान किया। आर्यसमाज मन्दिर बांकनेर में प्याऊ के निर्माण हेतु ऋषि प्रकाश पहलवान सुपुत्र श्री मांगेराम आर्य ने ११ हजार रुपये का पवित्र दान किया। उत्सव में ग्रामवासियों ने भारी संख्या में भाग लिया। प्रधान श्री मांगेराम आर्य ने भरपूर सहयोग के लिए सभी को हार्दिक धन्यवाद दिया।

मेहरचन्द पंवार
मन्त्री

(पृष्ठ १ का शेष)

शंकराचार्य पाखण्डाचार्य…

हैं वे ऐसे ही लोगों की बातें पकड़कर हिन्दू धर्म के विरुद्ध प्रचार प्रारम्भ कर देते हैं। स्वामी दयानन्द और दूसरे कई सुधारकों ने हिन्दू समाज को विनाश से बचाने के लिए इन सब बातों का विरोध किया जो आज पाखण्डी निरंजनदेव दोहरा रहा है।

—नरेन्द्र
(दैनिक वीर अर्जुन से साभार)

वैज्ञानिक मनोधर्म के पुरोधा महर्षि दयानन्द

ले०—ज्येष्ठ वर्मन, बम्बई

★

आजकल दुनिया में वैज्ञानिक मनोधर्म की बड़ी चर्चा हो रही है। दुनिया के कुछ उच्चकोटि के विद्वानों के अनुसार, विनाशोन्मुख इस मानव संस्कृति का यही एक तारक मन्त्र है। धार्मिक मतांधता के शिकार, और अपने-अपने संकीर्ण आदर्शों के कारावास में बंद लोगों को यही मुक्ति दिलाने वाला है। अपने-अपने मूढ़ता के मूल के कारण आपस में शत्रुवत् लड़ने वाले भाई-भाई को स्नेह के बन्धन में बाँधने वाला भी वैज्ञानिक मनोधर्म है। भौतिक ऐश्वर्य का हेतु भी यही है और मोक्ष का साधन भी यही है। भारतीय संविधान की धारा भी कहती है कि वैज्ञानिक मनोधर्म का विकास करना देश के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है। लेकिन इस बात को जानने वाले विद्वान् आज बहुत कम होंगे कि भारत के आर्य लोग सृष्टि के प्रारम्भ काल से ही वैज्ञानिक मनोधर्म के पुजारी रहे हैं और आधुनिक युग में भी वैज्ञानिक मनोधर्म के झंडे को हाथों में लेकर दुनिया के लोगों को उस झंडे के नीचे आने के लिए आह्वान करने वाला भी एक भारतीय ऋषि था। उसी का नाम था स्वामी दयानन्द सरस्वती।

सत्य की खोज की मानसिक प्रवृत्ति (स्पिरिट आफ इन्क्वायरी) को ही वैज्ञानिक मनोधर्म कहते हैं। यह मनोधर्म सांसारिक सीमाओं के सामने आत्म समर्पण नहीं करता है। आध्यात्मिक जगत् में भी उसकी गति देखी जाती है। सच्चाई की खोज का क्षेत्र केवल पाश्चात्य पद्धति से, कुछ आधुनिक ढंग से निर्मित प्रयोगशालाओं तक ही सीमित नहीं है। तर्क भी विद्वानों को सच्चाई तक पहुंचाता है। अतः तर्क को भी हमारे यहां ऋषि कहा गया है। वैज्ञानिक परीक्षण भी तर्क के आधार पर ही चलते हैं। शुद्ध और सहज विचार (प्योर थाट) तथा अन्तर्ज्ञान (इन्ट्यूशन) भी विज्ञान का अंग माना गया है। प्रायः लगभग सभी वैज्ञानिक आविष्कार पहले शुद्ध और सहज चिन्तन या अन्तर्ज्ञान के ही परिणाम थे जिन्हें बाद में प्रयोगशालाओं में वैज्ञानिक परीक्षणों के द्वारा सत्य सिद्ध करके दिखाया गया था। प्राचीन भारतीय परम्परा के अनुसार, इसे साधना या तप कहते हैं। इस साधना या तप की सिद्धि या उसके फल को 'दर्शन' या 'आप्ति' कहने वाले महापुरुषों को ऋषि या आप्त पुरुष कहते हैं। महर्षि यास्क के अनुसार—'साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवुः' (निरुक्त १।२०।३) अर्थात् इस सृष्टि और इसके अन्तर्गत जीवन को धारण करने वाले नियम एवं उन नियमों के नियन्ता के बारे में यथार्थ ज्ञान प्राप्त किये हुए लोगों को ऋषि कहते हैं। 'ऋषिर्वेद. । तदर्थतदनुष्ठानात् पुरुषोऽपि ऋषिः ॥' (मेधातिथि)। अर्थात् विशुद्ध ज्ञान के भण्डार वेद को भी ऋषि कहते हैं और उस ज्ञान को साक्षात्कार या उसका अनुष्ठान करने वाले मनुष्य भी ऋषि हैं। जो साक्षात् सब पदार्थ विद्याओं का जानने वाला, कपट आदि दोषों से रहित धर्मात्मा है, कि जो सदा सत्यवादी, सत्यमानी और सत्यकारी है, जिसको पूर्ण विद्या से आत्मा में जिस प्रकार का ज्ञान है उसके कहने की इच्छा की प्रेरणा से सब मनुष्यों पर कृपा दृष्टि से सब सुख होने के लिए जो सत्य उपदेश का करने वाला है और जो पृथिवी से लेके परमेश्वर पर्यन्त सब पदार्थों को यथावत् साक्षात् करना और उसी के अनुसार वर्तना, इसी का नाम आप्ति है, इस आप्ति से जो युक्त हो उसको 'आप्त' कहते हैं। (आप्त. खलु साक्षात्कृतधर्मा यथादृष्टस्यार्थस्य चिख्यापयिषया प्रयुक्त उपदेष्टा साक्षात्करणमर्थस्याप्तिस्तया प्रवर्तत इत्याप्तः।' वात्स्यायन भाष्य न्यायदर्शन १।१।७)

इसका अभिप्राय यह है कि केवल जानकारी (इन्फोरमेशन) रखने वाला व्यक्ति न ऋषि है न आप्त पुरुष है। ऋषि या आप्त कहलाने के लिए सत्य का ज्ञान, उसका साक्षात् अनुभव (एक्सपीरियेन्स), अनुष्ठान (प्रेक्टिकल एप्लीकेशन) और उसके पीछे मानव जाति के कल्याण (ह्यू मन वेलफेयर) अथवा परोपकार की भावना आवश्यक है। अतः वेद मन्त्र का पाठ करने वाला तोता, किसी आध्यात्मिक सत्य का रट लगाते हुए फिरने वाले पाखण्डी या भिखारी अथवा केवल प्रवचन या लेखनमात्र करके जीविका कमाने वाला पण्डित ऋषि या आप्त नहीं माना जाता है। इसी प्रकार जिसके जीवन में पवित्रता न हो, और जिसके प्रयासों के पीछे मानव समाज के कल्याण की भावना न हो, अथवा जिसके आविष्कारों के पीछे क्षुद्र स्वार्थ छुपा हो, उस वैज्ञानिक को भी ऋषि या आप्त नहीं कहा जाता।

एक ऋषि अवश्यमेव एक वैज्ञानिक (सायंटिस्ट) भी होता है। क्योंकि वैज्ञानिक मनोधर्म के बिना वह ऋषि नहीं बन सकता। लेकिन यह कोई आवश्यक नहीं है कि किसी वैज्ञानिक को भी ऋषि माना जाय। उन्नीसवीं सदी से जो वैज्ञानिक युग प्रारम्भ हुआ, उसके परिशीलन से पता चलता है कि इन वैज्ञानिकों का ज्ञान अल्प ज्ञान पक्षपातादि दोषों से युक्त है और उससे मानव जाति को लाभ की अपेक्षा हानि अधिक हुई हैं। एक वैज्ञानिक के पास तर्क अवश्य है, लेकिन यह जरूरी नहीं कि वह सत्यवादी या सत्यमानी या सत्यकारी हो। अत. उसका वैज्ञानिक मनोधर्म भी दोषपूर्ण हो सकता है। प्राचीन भारत की सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक परम्परा ऋषियों की देन है और आधुनिक पाश्चात्य संस्कृति और सभ्यता वैज्ञानिकों की देन है। ऋषियों की देन से मानव जाति का कल्याण हुआ है और वैज्ञानिकों की देन आज भस्मासुर के रूप में दुनिया के सामने खड़ी है।

—

सृष्टि के प्रारम्भ काल से, महर्षि ब्रह्मा से लेकर, महाभारत काल के महर्षि जैमिनि तक हमारे देश में ज्ञान विज्ञान और धर्म के क्षेत्र में आर्ष परम्परा का आधिपत्य था। अच्छे विद्वानों के अभाव, आलस्य, प्रमाद आदि के कारण यह परम्परा क्षीण होने लगी लगी। धीरे-धीरे, उसके स्थान पर अज्ञान, अविद्या, पाखण्ड, अन्धविश्वास रूढ़िवाद आदि फैल गये। इसके फलस्वरूप, लोगों में अनैक्यता, लड़ाई-झगड़े, पुरुषार्थहीनता, स्वार्थ, भोगवाद, दु.ख, दारिद्र्य आदि का प्राबल्य हुआ। इससे आर्य जाति का पतन हुआ। इसके बाद इस आर्य जाति को क्या क्या कष्ट नाश और दुःख उठाना पड़ा, यह इतिहास प्रसिद्ध बात है।

लेकिन ईश्वर को शिव अर्थात् कल्याणकारी कहते हैं। वह एक पिता के समान सदा अपनी मानव प्रजा का कल्याण ही चाहता है। अत वह इस आर्य जाति को इस प्रकार नष्ट होते कैसे देख सकता है? किसी न किसी निमित्त के माध्यम से आर्य जाति का उद्धार और मानव जाति की रक्षा उसे करनी ही थी। तो महाशिवरात्रि के दिन बालक मूलशंकर के अन्दर वैज्ञानिक मनोधर्म जागृत हुआ। वह सत्य की खोज में निकला और उसने आर्य जाति के उद्धार के लिये, मानव जाति की उन्नति के लिये घोर तप किया, परिश्रम किया और गुरु विरजानन्द की कृपा से नष्टप्राय आर्ष परम्परा को पुनर्जीवित किया। आज संसार में वह महर्षि दयानन्द सरस्वती के नाम से अमर है।

यों तो, दयानन्द के जीवनकाल में और उससे पूर्व भी, न केवल भारत में अपितु अन्य देशों में भी वैज्ञानिक मनोधर्म या तर्क को आगे रखकर अपने समाज की सेवा करने के लिए कई लोग आगे आये थे। कई अन्य लोगों ने अन्धविश्वास, रूढ़िवाद और शोषण के विरुद्ध संघर्ष किया था। महात्मा सोक्रेटीस, मार्टिन लूथर, थोमस पायने आदि लोगों ने भारत के बाहर और अनेक सन्त महात्माओं ने भारत के अन्दर अपने जीवन काल में अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार मानव समाज को उन बुराइयों से बचाने की योजना बनाई। लेकिन दयानन्द का नाम आज सबसे ऊपर इसलिये है कि विद्या बल, शारीरिक बल, आत्मबल, चरित्र बल और तपोबल की दृष्टि से वे सबसे बड़े थे। उन्होंने न केवल लोगों के धार्मिक जीवन में अपितु सामाजिक जीवन में भी वैज्ञानिक मनोधर्म का प्रतिपादन किया। वह एक सत्यद्रष्टा, सत्यवादी और सत्यकारी थे। संसार का उपकार करना उनके जीवन का मुख्य लक्ष्य था। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिये ही उन्होंने आर्यसमाज की स्थापना की थी। वैज्ञानिक मनोधर्म के बिना यह कार्य ठीक तरह से नहीं हो सकता। इसलिये उन्होंने आर्यसमाज के नियमों में इस बात को भी जोड़ दिया। आर्यसमाज का नियम (४) कहता है कि सत्य को ग्रहण करने असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए। नियम

(शेष पृष्ठ ८ पर)

मानव निर्माण

लेखक—सत्यार्थ भास्कर आर्यबन्धु, मुरादाबाद

★

मानव का दानव बन जाना उसकी पराजय है। मानव का महामानव होना उसका चमत्कार है। मानव का मानव होना उसकी विजय है।

—डा० राधाकृष्णन

मानव निर्माण क्यों ?

मानवीय सद्‌गुणों से सर्वथा शून्य संसार आज सन्तापों एवं पीडाओं की ज्वाला में जला जा रहा है। सर्वत्र अशान्ति, निराशा, भय तथा दुःख का साम्राज्य है। वैज्ञानिक आइन्स्टीन से जब संसार में व्याप्त दुःख एवं अशान्ति को दूर करने का उपाय पूछा गया तो वैज्ञानिक ने उत्तर दिया—"श्रेष्ठ मनुष्यों का निर्माण करो।" आइन्स्टीन ने जो बात कही थी आर्यसमाज ने वही बात सौ वर्ष पूर्व वेद के 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' के उद्‌घोष द्वारा घोषित की थी। पर आर्यसमाज की सुनता ही कौन है। दुःख है आज संसार में सब कुछ हो रहा है किन्तु यदि नहीं हो रहा तो बस मानव का निर्माण नहीं हो रहा। पशुओं की नसल सुधारने तथा उन्हें सिखाने की योजनायें तो प्रायः बनती रहती हैं परन्तु मनुष्य को सुधारने की कोई योजना आर्यसमाज को छोड़ कर किसी के मन नहीं है। खुमार बाराबंकवी ने ठीक ही कहा है—

सभी कुछ हो रहा है
इस तरक्की के जमाने में।
मगर यह क्या गजब है
आदमी इन्सान नहीं होता।

भारत के प्रथम प्रधानमन्त्री पं० जवाहरलाल नेहरू ने १९५८ में दिल्ली में आयोजित एक प्रेस कान्फ्रेंस में इस बात का महत्व निम्न शब्दों में व्यक्त किया था—"भारत में तथा अन्यत्र वास्तविक समस्या उत्तम मनुष्यों की उत्पत्ति की है। यदि मनुष्य ठीक न हों तो हमारी आधारशिला सशक्त नहीं हो सकती। कृषि और उद्योग धन्धों में सम्पत्ति का लगाया जाना महत्वपूर्ण है परन्तु मनुष्य बनाने के लिए योजना का बनाया जाना उससे भी अधिक महत्वपूर्ण है।"

यूनान के एक दार्शनिक के बारे में प्रसिद्ध है कि एक दिन वह चमकते सूर्य के प्रकाश में लालटेन लिए घर से बाहर निकल पड़ा और आंखें फाड़-फाड़कर ऐसे देखने लगा मानो उसकी कोई वस्तु खो गई हो। लोग इतने बड़े विद्वान् को दिन के प्रकाश में इस तरह लालटेन लिये घूमते देख कर आश्चर्य करने लगे। कुछ यह समझने लगे कि दार्शनिक लोग तो आधे पागल होते ही हैं, यह भी कोई वैसा ही अर्ध पागल है। कुछेक ने आगे बढ़कर उससे पूछ ही तो लिया कि आप इतने बड़े विद्वान् हैं फिर सूर्य के प्रकाश में इस तरह लालटेन लिये क्यों घूम रहे हैं और किस कोई वस्तु की तलाश में मग्न हैं? दार्शनिक प्रथम तो मुस्कुराया फिर गम्भीरतापूर्वक उत्तर दिया—"मैं मानव को ढूंढ रहा हूं।" इस पर नागरिकों ने तुनककर पूछा—"तो क्या हम मानव नहीं हैं?" दार्शनिक बोला—"नहीं तुम में से कोई दुकानदार है, कोई ग्राहक, कोई किसान है, कोई मजदूर, पर शोक तुम में से मनुष्य कोई नहीं।"

वस्तुतः हम व्यापारी हैं, अफसर हैं, प्रोफेसर हैं, सब कुछ हैं, बस नहीं तो एक मनुष्य नहीं। सत्य है—

अब कहां इन्सान जिन्हें इन्सान कहें, चलती फिरती देख लो परछाइयां।"

मनुष्य या पशु ?

मनुष्य की योनि में जन्म लेने मात्र से ही हम मनुष्य कहलाने के अधिकारी नहीं हो जाते। वेद 'मनुर्भव' का उपदेश देकर हमें मनुष्य बनने की सद्‌प्रेरणा देता है। वेद का यह उपदेश पशुओं के लिए तो है नहीं, फिर मनुष्य को मनुष्य बनने का उपदेश कैसा? क्या मनुष्य का चोला पाकर भी हम मनुष्य नहीं? बात तो कुछ ऐसी ही है।

'भरा मरदुम से गो सरजमी है 'तले' देखने को पर इन्सान नहीं है।"

अपनी इस विस्तृत वसुन्धरा पर मनुष्य के कोष्ठक में लिखे जाने वाले जनगणना की पुस्तिका में लगभग चार अरब प्राणी होंगे, पर सारे के सारे मानव ही हों, ऐसी बात नहीं क्यों? इसका उत्तर जिगर मुरादाबादी इस प्रकार देते हैं—

इस जमाने का इन्कलाब न पूछ,
रूह शैतान की शक्ल आदम की।

"आकृतिग्रहणा जातिः" (व्याकरणमहाभाष्य) के अनुसार जाति आकृति से जानी जाती है। दो हाथ, दो पैर, विकसित मस्तिष्क एवं सीधा खडे हो सकने की क्षमता आदि गुणों से युक्त शरीरधारी को भले ही मनुष्य की संज्ञा दे दी गई हो, परन्तु शास्त्र इसे वास्तविक मानव नहीं मानता। शारीरिक दृष्टि से वह तब तक मनुष्य कहलाने का वास्तविक अधिकारी नहीं जब तक कि उसमें मानवता सम्बन्धी सद्‌गुणों का विकास नहीं हो जाता। इन्हीं असाधारण गुणों के कारण कि जो मानवेतर प्राणियों में नहीं पाये जाते हम मनुष्य कहलाने के वास्तविक अधिकारी हो सकते हैं। भर्तृहरि के अनुसार—

येषां न विद्या न तपो न दानं,
ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः।
ते मर्त्यलोके भुविभारभूता
मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति॥

क्योंकि—

आहारनिद्राभयमैथुनं च
सामान्यमेतत् पशुभिः नराणाम्।
धर्मो हि तेषाम् अधिको विशेषो
धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः॥

और—

खादते मोदते नित्यं
शुनकः शूकरः खरः।
तेषामेषां को विशेषो
वृत्तिर्येषां च तादृशी॥

महर्षि दयानन्द सरस्वती का कथन है—जैसे पशु बलवान होकर निर्बलों को दुःख देते और मार भी डालते हैं, जब मनुष्य शरीर पाकर वैसा ही कर्म करते हैं तो मनुष्य स्वभावयुक्त नहीं किन्तु पशुवत् हैं। और जो बलवान होकर निर्बलों की रक्षा करता है, वही मनुष्य कहलाता है और जो स्वार्थवश होकर परहानि मात्र करता है, वह जानो पशुओं का भी बड़ा भाई है।

मनुष्य के लिए उसकी सृजनात्मक शक्ति विधाता की सम्भवतः सर्वोत्तम देन है परन्तु आज का सभ्य कहा जाने वाला प्राकृतिक मानव जिसको डा० बंग आधुनिक विज्ञान द्वारा प्रवर्तित प्रगति की प्रकाश[illegible] कहते हैं, अपने विध्वंसकारी वैज्ञानिक आविष्कारों से मानवता का मूल ही नष्ट करने पर उतारू है। तभी तो चक्रवर्ती डॉ० राजगोपालाचार्य ने इसे एक मशालधारी बन्दर कहा था जो अपनी मशाल लिये एक झोंपडी से दूसरी पर कूद रहा है परिणामस्वरूप झोंपडियां जल उठती हैं और वह बन्दर भी उन्हीं में जलकर भस्म हो जाता है और आज यह दशा है कि "शैतान पर विश्राम भले ही कर लूं, आदमी देखकर डर जाता हूं।"

यह सब देखकर Issac Watts का कोमल हृदय चीत्कार कर उठता है कि "Your little hands were never made to tear each other's eyes." अर्थात् तुम्हारे यह छोटे-छोटे हाथ इसलिए नहीं बनाए गए थे कि तुम एक दूसरे की आंखें नोच लो।

और Wordsworth दुःख भरे शब्दों में कहता है—Much it grieved my heart to think what Man has made of Man. अर्थात् यह सोचकर मुझे बहुत दुःख होता है कि मनुष्य ने मनुष्य का क्या बना डाला है।

कवि सम्राट टैगोर का कथन है कि मनुष्य जब पशु बन जाता है तो उस समय वह पशु से भी बदतर हो जाता है। इसीलिए शास्त्र चेतावनी देता है कि हम नित्यप्रति देखें कि हम मनुष्य ही तो हैं, कहीं पशु तो नहीं बनते जा रहे।—"प्रत्यह प्रत्यवेक्षेत नरश्चरितमात्मनः। किन्नु मे पशुभिस्तुल्य किन्नु सत्पुरुषैरिति।"

आज मानव चन्द्रमा पर पहुंच चुका है और मंगल पर पहुंचने की तैयारी में है। यह सब होते हुए भी डॉ० राधाकृष्णन का यथार्थ कथन है कि चिड़ियों की तरह हवा में उड़ना और मछलियों की तरह पानी में तैरना सीख लेने के पश्चात् अब हमें इन्सानों की तरह जमीन पर चलना सीखना है।

मनुष्य कौन ?

वैसे तो "मनोरपत्य मानवः" के अनुसार मनु की सन्तान मानव कहलाती है पर यह तो 'आकृतिग्रहणा जाति' वाली बात हो जाएगी न कि गुण कर्मानुसार। अतः मानव की परिभाषा हमें आर्य ग्रन्थों में ही देखनी होगी। निरुक्तकार 'मानव' की परिभाषा निम्न शब्दों में करते हैं—"मत्वा कर्माणि सीव्यति" इति

मानव निर्माण

मनुष्य" अर्थात् जो विचारपूर्वक कर्म करता है वही मनुष्य है। 'मत्वा कर्माणि सीव्यति' – मनन करने वाला होने से ही वह मनुष्य है। वस्तुत नियन्त्रित एवं मर्यादित जीवन व्यतीत करने वाले किसी विचारशील व्यक्ति को ही मनुष्य अथवा मानव जीवन कहा जा सकता है। वेद ऐसे मनुष्य को आर्य संज्ञा देता है आर्य व्रतशील एवं मर्यादित जीवन बिताने वाले को कहते हैं। डा० रामचरण महेन्द्र के मतानुसार 'सद्गुणों सद्भावनाओं, सदाचरणों तथा सद्व्यवहारों से युक्त पुरुषत्व का नाम ही मानवता है।" कविवर 'चकबस्त' ने भी ऐसा ही कहा है—

दर्दे दिल पासे वफा
लजबए ईमां होना।
आदमीयत है यही और
यही इन्सान होना॥

तात्पर्य यह है कि जिसमें संवेदनशील हृदय कृतज्ञतादि सद्भावनाएँ, सत्पात्रता, विचारशीलता, कर्तव्यपरायणता और ईमानदारी आदि सद्गुण हैं वही मनुष्य कहलाने का अधिकारी है। महर्षि दयानन्द के शब्दों में—"मनुष्य उसी को कहना कि मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे।" सच है—

दिल में उल्फत नहीं
तो कुछ भी नहीं।
गुल में नकहत नहीं
तो कुछ भी नहीं॥
आदमी में लाख
गोहर हों।
आदमियत नहीं
तो कुछ भी नहीं॥

मानव निर्माण में आर्यसमाज का योगदान—

आर्यसमाज की स्थापना से पूर्व मानव का सर्वथा अभाव हो और मानव निर्माण आर्यसमाज ने ही किया हो ऐसी बात नहीं। पर यह सत्य है कि महाभारत के पश्चात् आर्यसमाज की स्थापना तक मानव निर्माण की कोई योजना किसी के पास नहीं थी। साथ ही आर्यसमाज की स्थापना से पूर्व जो परिस्थितियाँ उपस्थित थीं, उनमें मानव का निर्माण हो पाना भी सम्भव न था। कारण कि भौतिक विकास के बढ़ते कदमों से, आध्यात्मिकता को उठा कर [illegible] रख दिया था। [illegible]-

कता सर्वत्र उभर रही थी और आस्तिकता अथवा नैतिकता जो कि मानवता का आदर्श है, को सदा के लिए दफना दिये जाने की योजनायें बनने लगीं। उस समय की परिस्थितियों का विश्लेषण करते हुए किसी कवि ने ठीक ही लिखा है—

कभी था मानवता का विकास
पर वे विचार अब ध्वस्त हुए।
आध्यात्मिकता को भुला आज
नर भौतिकता में मस्त हुए॥

और डा० हरिशंकर शर्मा के शब्दों में—

नैतिकता नाता तोड
भगी है न जाने कहां।
मानवता हाय आज
तो फूट-फूट रोती है॥

सत्य तो यह है कि मानव निर्माण भी कोई समस्या है, संसार इसे सर्वथा भूले हुआ था। आर्यसमाज ने ही संसार का ध्यान इस समस्या की ओर दिलाया। अन्यथा अपना तो कुछ ऐसा हाल था कि—

अपनी हालत का तो कुछ
अहसास नहीं है मुझको।
मैंने औरों से सुना है
कि परेशान हूं मैं॥

आर्यसमाज ने ही सर्वप्रथम मानव निर्माण की शतवर्षीय योजना प्रस्तुत की। मानव जीवन की कोई भी अवस्था संस्कार शून्य नहीं है। गर्भ से ही मनुष्य संस्कारों में पलता है, शैशव से यौवन तक संस्कारों से ही पनपता है और प्रौढ़ावस्था से अन्तिमावस्था तक इन्हीं में अन्तर्हित होता है। महर्षि का कथन है—जैसे सब पदार्थों को उत्कृष्ट करने की विद्या है, वैसे सन्तान को उत्कृष्ट करने की यही विद्या है। वस्तुत. मानवता सम्बन्धी सर्वोच्च गुणों को धारण करने के लिए हृदय में जिन प्रेरणाओं, सद्भावनाओं तथा सत्संकल्पों की आवश्यकता पड़ती है, उन्हीं को मानवहृदय में वपन करने का नाम ही संस्कार है। 'संस्कार' शब्द स्वतः ही किसी कृत्य को परिष्कृत एवं सुव्यवस्थित रूप से सम्पादित होने का द्योतक है। सोलह संस्कारों को निम्न भागों में विभक्त किया जा सकता है—

प्राग्जन्म, बाल्यावस्था, शैक्षणिक संस्कार, गृहस्थ प्रवेश संस्कार तथा [illegible] संस्कार। संस्कारों का [illegible] है कि [illegible]

संस्कार जन्म के पूर्व से मृत्यु पर्यन्त किये जाते हैं साथ ही इस बात का भी बोध होता है कि अधिकांश संस्कार मानवजीवन की प्रारम्भिक अवस्था ही मानवनिर्माण की वास्तविक अवस्था है। पाश्चात्य मनीषी टी कोगन का कथन है—

मानव-मस्तिष्क की शिक्षा शैशव के पालन से ही प्रारम्भ हो जाती है। शैशवकाल की प्रत्येक घटना एवं शिशु से कहा गया प्रत्येक शब्द उस के चरित्र का निर्माण करता है।

कच्ची मिट्टी से घडा बनता है पक्की से नहीं इसी प्रकार शैशवकाल में ही संस्कार डाले जा सकते हैं यौवन में नहीं। संस्कारों के द्वारा मानवजीवन के विकास की प्रत्येक महत्वपूर्ण अवस्था और जीवन का प्रत्येक मोड बालक के लिए दिशा सूचक बन जाता है।

यह श्रेय आर्यसमाज को ही है कि उसने लुप्तप्राय संस्कारों को पुनः प्रचलित कर मानव निर्माण की एक अनुपम योजना प्रस्तुत की।

ऐ विश्व-निर्माण की योजनायें बनाने वालो याद रखो! मानव-निर्माण के बिना विश्व के निर्माण की योजनायें बनाने की अपेक्षा मानव निर्माण की योजना बना पाते। सत्य माने जिस दिन मानव मानव बन जाएगा, संसार को बनाने की कोई आवश्यकता नहीं रह जाएगी। अत. आर्यसमाज के मानव निर्माण आंदोलन को सफल बनाने के लिए तन, मन, धन से जुट जावें, नहीं तो

डूबेगी किश्ती तो डूबोगे सारे।
न तुम ही रहोगे न साथी तुम्हारे॥

आज का विद्वान्

सत्य अर्थ के प्रकाश मे जिन दीखत नाहि वे दो आखो वाले भी अन्धे हैं।
भारतीय सम्कृति के आधारभूत वेद को जो पढ़ते नही वे दो आखो वाले भी अन्धे हैं।
सैकडों साधु सन्त रात दिन ब्रह्म का बखान करें अक्षर एक उनको आता नही।
निरक्षर भट्टाचार्य, अज्ञानी, लम्पट, ढोगी वे दो आखो वाले भी अन्धे है।
सिर पर चोटी नहीं शरीर पर न यज्ञोपवीत है, वेद का न अक्षर एक आता है।
कहता अपने को आर्य, निरा अज्ञानी लम्पट दो आखो वाला भी अन्धा है।
दूसरों को उपदेश देता फिरे, न सत् शास्त्रो का ज्ञान जिसे उपदेशक बना फिरे।
ऐसा लम्पट अज्ञानी निरक्षर भट्टाचार्य आर्य दो आखो वाला भी अन्धा है।
ऋषि मुनियों को बतावे अज्ञानी स्वय को बतावे ज्ञानी वे दो आखो वाले भी अन्धे हैं।
व्याकरण, न्याय, योग, सांख्य कछु पढा नही अज्ञानी वे दो आखो वाले भी अन्धे हैं।
निरुक्त जिन पढ़ा नही करत वेदभाष्य अज्ञानी वे दो आखो वाले भी अन्धे है।
चण्डूखाने की बखानें अपने को आर्य बतावें अनार्य वह, दो आखो वाला भी अन्धा है।
ज्ञान का न अर्थ जाने अज्ञान को ज्ञान माने ऐसा अज्ञानी, दो आखो वाला भी अधा है।
आज अपने को कहते जो आर्य हैं ऐसे अनार्य अज्ञानी, दो आखो वाले भी अन्धे हैं।
पढ़ा जिन वेद एक नही वे द्विवेदी और चतुर्वेदी अपने को कहत हैं।
प्याऊ पर पिलावें पानी अपने को कहत वे द्विवेदी और चतुर्वेदी हैं।

—प० धर्मेन्द्रनाथ शर्मा शास्त्री आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि

वेदभिक्षु का ६१वां जयन्ती समारोह सम्पन्न

आर्यसमाज मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली महात्मा वेदभिक्षु जी की ६१वीं जयन्ती समारोह का आयोजन किया गया। समारोह की अध्यक्षता आर्य विद्वान स्वामी सत्यप्रकाश जी ने की।

सभा का प्रारम्भ करते हुए पूर्व संसद सदस्य आचार्य भगवानदेव जी ने कहा, महात्मा वेदभिक्षु जी ने बिना साधनों के कार्य प्रारम्भ कर के समाज में अपूर्व कार्य कर दिखाया। महात्मा जी के पास साधनों का कितना भी अभाव रहा हो लेकिन उनकी साधना में बल था। इसी कारण वे कठिन से कठिन कार्यों को भी सफल कर दिखाते थे।

मिर्जापुर से पधारी सुश्री सतोष प्रधानाचार्या ने कहा, बन्धुवर महात्मा वेदभिक्षु जी में अद्भुत कार्य क्षमता उर्वरा कल्पना शक्ति का अनुपम संगम था। उन्होंने आर्य समाज के प्रचार प्रसार के क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का पूरा पूरा उपयोग किया। न केवल उन्होंने स्वयं कार्य किया अपितु अपने परिवार को भी इसी कार्य में दीक्षित किया, यह उनकी निष्ठा का उदाहरण है। अपनी श्रद्धांजलि समर्पित करते हुए हिन्दू महासभा के अध्यक्ष श्री बालाराव सावरकर ने कहा महात्मा जी की कर्मठता सराहनीय है। आज जब एक काम को व्यक्ति पूरा नहीं कर पाता तब महात्मा जी ने स्वयं लेखन किया प्रकाशन किया और उसका प्रचार भी स्वयं किया उनके लेखन व भाषण ओजस्वी होते थे वे संस्थाओं से अधिक कार्य कर गये। उनकी कार्यनिष्ठा आदर्श थी और उनकी प्रतिभा बहुमुखी थी।

गुजरात उच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश एवम् तंजानिया के सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश न्यायमूर्ति जयन्ति पटेल ने अपने विचार व्यक्त करते हुए उनके कार्य को महत्त्वपूर्ण बताया। उन्होंने जनता से आग्रह किया, पं० राकेश रानी पर जो अभियोग लगाये गए हैं, उन्हें उन से मुक्त कराने का दायित्व समस्त हिन्दु समाज का है। उनके कार्य को पूरा सहयोग मिलना चाहिए।

आर्य विद्वान् विचारक डा० प्रशान्त वेदालंकार ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा—महात्मा जी के सारे लेखों एवम् कविताओं का संग्रह कर के उन्हें प्रकाशित करना चाहिए। यह कार्य जितना शीघ्र किया जावे उतना अच्छा होगा। उन्होंने आगे कहा—महात्मा वेदभिक्षु आज होते तो संस्कृत के साथ इस देश में जो व्यवहार किया जा रहा है उसके लिए वे आंदोलन करते। उन्होंने अपने जीवन में सिद्धांतों के लिए कभी समझौता नहीं किया। यूनीवार्ता समाचार सेवा के सम्पादक तथा महात्मा जी के निकट सहयोगी श्री बनारसी सिंह ने कहा महात्मा जी के कार्य की सफलता साधना में उनकी निष्ठा में निहित थी। उदाहरण देते हुए उन्होंने बताया, जब हम दैनिक पत्र निकालने के लिए उन्हें दस करोड रुपयों की आवश्यकता बताते थे तब महात्मा जी का कहना था वे केवल दस निष्ठावान कार्यकर्ताओं की आवश्यकता समझते हैं धन तो गौण है।

यशस्वी पत्रकार आर्य जगत् के सम्पादक एवम् महात्मा जी के मित्र श्री क्षितीश वेदालंकार ने कहा महात्मा जी कठिन कार्य को प्रारम्भ करने का साहस रखते थे। वे कार्य को एक आन्दोलन का रूप देते थे। उन्होंने बताया पोपपाल के आगमन पर उन्होंने किस प्रकार पूरे देश में हलचल मचा दी थी। इसी प्रकार हिन्दी रक्षा आन्दोलन में उनके योगदान का स्मरण करते हुए कहा—आज प्रकाशन के क्षेत्र में उनका अभाव सदा खटकता रहेगा। पुस्तक प्रकाशित करना, आधुनिक तकनीक का पूरा लाभ उठाना और उसे जनता तक पहुंचाना उस एक ही व्यक्ति का काम था जिसको हम आज याद कर रहे हैं।

भाषा के सम्पादक एवम् प्रख्यात पत्रकार वेद प्रताप वैदिक ने अपने जीवन के प्रसंगों से उनकी निष्ठा के उदाहरण देते हुए कहा जब मैं विदेश में एक विदेशी के घर गया और वहां पर महात्मा जी द्वारा प्रकाशित वेद ग्रन्थ देखा तो मैं उनके प्रति श्रद्धान्वित हो गया। उन्होंने बताया महात्मा जी ने आर्यसमाज में ही नहीं देश के कोने-कोने में और विदेश तक आर्य साहित्य और संस्कृति का सन्देश पहुंचाया है। उन में अनजान लोगों को भी अपना बना लेने की यह अद्भुत क्षमता थी। उन्होंने अपने आदर्श को केवल अपने तक ही सीमित नहीं रखा अपने परिवार के सदस्यों को भी उस आदर्श का अनुयायी बनाया, यह उनके जीवन की बहुत बड़ी सफलता है।

भू०पू० राज्य मन्त्री प्रो० शेरसिंह ने श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उन्हें कुशल सम्पादक व कर्मठ कार्यकर्ता बताया। महात्मा जी के अनन्य मित्र एवम् सहयोगी प्रो० रत्न सिंह आचार्य नैतिक शिक्षा ने, अपने अनुभव सुनाते हुए कहा, पं० भारतेन्द्रनाथ जी में दो दोष बड़े भारी थे जिनको उर्दू के शब्दों में ही प्रकट किया जा सकता है। प्रथम वे बड़े जिद्दी स्वभाव के थे तथा दूसरा वे कभी किसी का लिहाज नहीं करते थे। महात्मा जी के जीवन में सारी सफलता और असफलता इन्हीं दो बातों पर निर्भर है। उन्होंने जो करने की ठानी उसे किया परिणाम कुछ भी रहा हो। सिद्धांत के लिए कभी किसी से समझौता नहीं किया तब चाहे सार्वदेशिक सभा ही क्यों न हो उन्होंने बतलाया सार्वदेशिक सभा ने जब सायण और दयानन्द पुस्तक छापी उसके विरुद्ध अन्त तक अकेले ही संघर्ष करते रहे। अपनी जिद के कारण ही उन्होंने आर्य मित्र को दैनिक निकाला और ग्यारह मास तक चलाया। वेद भाष्य का प्रकाशन किया और पचास हजार सैट संसार भर में स्वल्प मूल्य में वितरित कर दिये। इन्हीं बातों के कारण पं० भारतेन्द्र नाथ जनता के लोकप्रिय थे तो संगठन और नेताओं में आलोचना के विषय।

अध्यक्ष स्वामी सत्यप्रकाश जी ने उनके क्रिया कलापों की चर्चा करते हुए उनकी गतिशीलता को कारण बताया और अपने स्नेह सद्भाव को संस्थान के प्रति बनाये रखने का विश्वास जताया।

सभा का संयोजन आर्य प्रादेशिक सभा के मंत्री श्री रामनाथ सहगल ने किया। समारोह के समायोजन की व्यवस्था आर्यसमाज मन्दिर ने की।

प्रो० धर्मवीर
मंत्री, दयानन्द संस्थान

हि०प्र० शिवसेना द्वारा इण्डो-पाक मुशायरे का विरोध

हिमाचल प्रदेशीय शिवसेना अम्बाला तथा शिमला में आयोजित इन्डो पाक मुशायरे का बड़ा विरोध करती है।

इन मुशायरों से न केवल राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रचार प्रसार को हानि होती है, अपितु भारत में पाकिस्तानी हावी को भी बढ़ावा मिलता है। पहले ही हिमाचल के विद्यार्थियों पर उर्दू जबरन थोपी हुई है। जो कि हिन्दुओं पर अन्याय है।

१ इन मुशायरों से भारत का पैसा पाकिस्तानियों की जेब में चला जाता है।

२ इन आयोजनों के बहाने प्रच्छन्न पाकिस्तानी गुप्तचरों को भारत में प्रवेश करने का अवसर मिल जाता है। पहले भी ऐसी घटना घटित हुई थी कि इस प्रकार भारत में आकर पाकिस्तानी गुप्तचर गुम होता था।

३ इन्डोपाक मुशायरा पान इस्लाम सभा का रूप लेता है।

४ पाकिस्तान द्वारा भारत के देशद्रोही पृथकतावादी तत्वों को धन हथियार प्रशिक्षण दिया जा रहा है। संसार भर में पाकिस्तान भारत विरोधी प्रचार करता है। पिछले वर्ष अमरीकी विमान का अपहरण कर के कराची ले जाया गया था। कराची में पाकिस्तानियों की शरारत से चुन-चुन कर हिंदुओं को गोली से मारा गया। ऐसी स्थिति में पाकिस्तानियों का स्वागत करना उनकी राष्ट्र भाषा उर्दू को अपने राष्ट्र का धन स्वरूप कर के बढ़ावा देना राष्ट्र का अपमान है। सारे देश के लिए लज्जा की बात है। समस्त देशबन्धुओं को ऐसी अपमानजनक कार्यवाही का विरोध करना चाहिए। देश में मुसीबत है। अकाल पड़ा है। और ऐसे निकृष्ट कार्य में धन का अपव्यय किया जा रहा है। जनता ध्यान दे।

डा० कैलाशचन्द्र
अध्यक्ष, शिवसेना हि० प्र०

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार का ८८वाँ वार्षिकोत्सव एवं दीक्षांत समारोह

१० अप्रैल से १६ अप्रैल १९८८ तक

ओमम्, आपको सूचित करते हुए प्रसन्नता है कि अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द जी द्वारा पुण्य सलिला पावनी भागीरथी के पुण्य तट पर संस्थापित एवम् राष्ट्रीय महत्व की संस्था गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार का वार्षिकोत्सव प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी उपर्युक्त तिथियों में हो रहा है। इसमें यजुर्वेद पारायण यज्ञ, संस्कृत एवम् संस्कृति रक्षा सम्मेलन, वेद-सम्मेलन, कवि-सम्मेलन, गुरुकुल एवम् नई शिक्षा नीति तथा व्यायाम सम्मेलन आदि का आयोजन किया गया है।

आप इस वार्षिकोत्सव पर सादर सप्रेम आमन्त्रित हैं।

(पृष्ठ १ का शेष)

स्वामी सर्वानन्द जी…

का भाग उन को देना तुम्हारी नैतिकता है, विधान में जो नियम लिखे हैं, उन नियमों के आधार पर मध्यस्थ ने नई विधा सभा बनानी है यह उसका धर्म है क्योंकि दिल्ली और हरियाणा की सभाएं अपने भाग के लिए मध्यस्थ के पास बार-बार शिकायतें करती हैं। तुम पूरे पंजाब सभा के प्रधान नहीं हो विभक्त पंजाब सभा के प्रधान हो। परन्तु वीरेन्द्र जी अपने पद लोभ में "पंजाब" शब्द का लाभ आज तक उठा रहे हैं इसी आधार पर उन्होंने नई विधा सभा के अधिकारियों के विरुद्ध मुकदमा किया था जिस के आधार पर सार्वदेशिक सभा ने २२।६।८६ का प्रस्ताव पास करके पंजाब सभा को तथा प्रधान समेत अन्तरंग सभा को भंग कर दिया था। तब यह आदरणीय स्वामी सर्वानन्द को लेकर दिल्ली सार्वदेशिक सभा के प्रधान के पास आये थे। स्वामी जी ने इस क्लेश को समाप्त करने के लिए माननीय राम चन्द्र राव वन्देमातरम् को श्री वीरेन्द्र की इच्छानुसार मध्यस्थ बना दिया। मध्यस्थ ने अपना निर्णय (एवार्ड) दे दिया। अब इस निर्णय की पुष्टि जालन्धर न्यायालय के द्वारा होनी थी। मध्यस्थ ने इन पर विश्वास किया और अपने निर्णय की कापी अपने वकील को सीधे भेजने की बजाए इनको ही दे दी। उस निर्णय की कापी पर जालन्धर कोर्ट में पहुंचने से पूर्व उसमें ४-५ लाइनें और बढ़ा दी गयीं। दोनों वकीलों ने उस (बढ़ाए हुए) पत्र के आधार पर कोर्ट से समझौते की पुष्टि करा ली परन्तु जब इस बात का पता मध्यस्थ श्री वन्देमातरम् को चला तो वह बहुत दुःखी हुए और उन्हें उस निर्णय के विरुद्ध पुनः अपील करनी पड़ी।

स्वामी जी आप भोले साधु हैं, हमें गत दस वर्ष का इसके साथ रहने का अनुभव है कि यह पद का कितना लोभी है। इस ने अपने प्रधान पद को कायम रखने के लिए विधान में दो बार परिवर्तन किया। आर्यसमाज का एक सौ वर्ष पुराना नियम है कि कोई व्यक्ति ३ वर्ष तक तभी एक पद पर रह सकता है जबकि वह सर्वसम्मति से निर्वाचित हो। इसने इस नियम में परिवर्तन करके प्रथम ७५% मत किये, फिर ४/५ १% मत कर दिए। इसी कारण इसके विरुद्ध कोर्ट में आज तक केस चल रहा है, इन के एक मित्र श्री पृथ्वीसिंह आजाद के सहयोग से श्री बालमुकन्द जी केस लड रहे हैं।

स्वामी जी यह कितना पदलोलुप है कि इसने कभी गत दस वर्ष में प्रजातान्त्रिक नियमों का पालन ही नही किया। निर्वाचन से पूर्व कभी आय व्यय की बैलेंस शीट पेश नहीं की, कभी प्रतिनिधियों की सूची नहीं दी, तीन-चार बार कुछ लोगों ने इस के विरुद्ध खड़े होने की भूल की, परन्तु अगले वर्ष इस ने उस जिले की ही आर्यसमाजों को मान्यता नहीं दी। प्रमाण के रूप में आचार्य पृथ्वी सिंह जी आजाद से इनका विरोध हुआ, वह रोपड जिले के थे, उस जिले की २० आर्यसमाजें थीं परन्तु इसने उनकी १७ समाजों को मान्यता देनी ही बन्द कर दी। जिला गुरदासपुर के एक विधायक इस के विरुद्ध निर्वाचन में खड़े हुए थे। जिला गुरदासपुर की २२ आर्यसमाजें सूची में छपी हुई थीं परन्तु अगले वर्ष केवल ६७ रह गयीं। इसी प्रकार पटियाला का हाल हुआ। कुछ आर्यसमाजों में इन्होंने अपने सहयोगियों के सहयोग से ८-१० आर्यसमाजों में झूठे सदस्य बनाकर प्रत्येक आर्यसमाज के ८-८ प्रतिनिधि बना लिये।

स्वामी जी आप को तो आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के इतिहास का पूरा ज्ञान है। १९५५ से १९७५ तक यह किसी भी पंजाब सभा की अन्तरंग का सदस्य भी नहीं था परन्तु इसने उस समय के सभा अधिकारियों को चैन से नहीं बैठने दिया था। उनके विरुद्ध यह अपने साथियों के सहयोग से कितनी बार कोर्ट से स्टे आर्डर लाया। यह हरियाणा वाले अच्छी प्रकार से जानते हैं। सिद्धान्ती जी चौ० रघुबीर सिंह शास्त्री अपने लेक्चर में कहा करते थे कि हरियाणा वाले तो पंजाबी हिन्दुओं से अलग न होते परन्तु वीरेन्द्र के लेखों ने हरियाणवी हिन्दू और पंजाबी हिन्दू में एक दरार पैदा कर दी है।

अत. स्वामी जी मुझे दुःख है कि आप केवल एक पक्ष की बात सुन कर ही वीरेन्द्र की सिफारिश के लिए दिल्ली पहुंचे। सार्वदेशिक सभा को अन्तरंग सभा की गत तीन वर्ष की कार्यवाही पढ़ते तथा पत्र व्यवहार पढ़ें तो आप इसकी हिमायत करने कभी भी दिल्ली न जाते।

—योगेन्द्र

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R N No 32387/77 Post in N)P S O on 7, 8 4 88 Licenced to post without prepayment, Licence No U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डो० (सा०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस न० यू १३९

समग्र क्रान्ति सर्वकल्याण का प्रणेता है आर्यसमाज—उद्बोधन करते हुए स्वामी आनन्द बोध



आर्यसमाज दीवान हाल के १०३वें वार्षिकोत्सव पर मंच पर बीच में बैठे हैं श्री बलराम जाखड लोकसभा अध्यक्ष एवं अन्य विद्वान व नेतागण।

"आर्य व्रत" गुजराती मासिक

आर्य जगत् को सूचित करते हर्ष हो रहा है कि आर्यसमाज, सैजपुर बोघा अहमदाबाद जो इस समय तक गुजराती व सिंधी भाषा में सैकड़ों नमूने के ट्रैक्ट व पुस्तकें लाखों की संख्या में प्रकाशित कर चुका है अब गुजराती मासिक पत्रिका 'आर्य व्रत" का प्रकाशन आरम्भ कर रहा है। प्रथम अंक 'आर्यसमाज स्थापना दिवस' पर प्रकाशित हो चुका है। गुजराती भाषा में आर्यसमाज के प्रचार प्रसार में यह पत्रिका अत्यन्त महत्व का कार्य करेगी। पत्र का सम्पादन व प्रबन्ध सर्व श्री कमलेश कुमार शास्त्री, प० महेन्द्रनाथ वेदालंकार हरीलाल गुरुदासमल व गोविंदराम सदोरोमल जी कर रहे हैं। पत्र लिख कर पत्रिका के नमूने की प्रति नि:शुल्क मंगाई जा सकती है। वार्षिक शुल्क प्रचारार्थ केवल दस रु० रखा गया है।

(पृष्ठ ३ का शेष)

वैज्ञानिक मनोधर्म

(५) कहता है कि सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिये। वैज्ञानिक मनोधर्म की बातें बहुत सारे लोग करते हैं। भारत का संविधान भी कहता है कि वैज्ञानिक मनोधर्म का विकास करना चाहिए। लेकिन आर्यसमाज को छोड़कर, न भारत सरकार के पास न संसार की अन्य किसी संस्था के पास उसे कार्य रूप देने की कोई योजना है। अत आर्यसमाज के सदस्य कार्यकर्ता, प्रचारक एवं दयानन्द के भक्तों को चाहिए कि ऋषि बोधोत्सव के अवसर पर, इस अवसर का लाभ उठाकर, संसार में वैज्ञानिक मनोधर्म के प्रचार के लिए पुरुषार्थ करें। प्रति वर्ष मूषक और शिवलिंग की कहानी सुनाकर ऋषि बोधोत्सव मनाने की रूढ़िमात्र का पालन करने से यह कार्य पूरा नहीं होगा।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१ के लिए ... द्वारा ... प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ : अंक २६ | रविवार १७ अप्रैल १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८९ | दयानन्दाब्द—१६४
मूल्य : एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, २० पौंड

पंजाब में आतंकवादियों की संख्या दस हजार ?

नई दिल्ली, १० अप्रैल। गुप्तचर सूचनाओं के अनुसार पंजाब में इस समय करीब दस हजार आतंकवादी हैं। इनमें से दो हजार ऐसे हैं जो अत्याधुनिक हथियारों से लैस होकर हत्याएं और लूटमार करने में लगे हैं। दो हजार अन्य इनकी 'सप्लाई लाइन' के तौर पर काम कर रहे हैं। एक हजार के करीब आतंकवादी पाकिस्तान में हैं। इन का बडा भाग वहां प्रशिक्षण ले रहा है। शेष पांच हजार के करीब जेलों में बन्द हैं।

इन्हीं सूचनाओं में कहा गया है कि अफगानिस्तान से रूसी सेनाओं की अगले मास वापसी के बाद पाकिस्तान अफगान संकट से फारिग हो जाएगा और उस हालत में उस की सारी ताकत पंजाब में दबाव बढ़ाने में लगेगी। अफगान विद्रोहियों के पास इस समय जो अमरीकी हथियार हैं वे भी पाकिस्तान मुफ्त या नाममात्र मूल्य पर पंजाब के आतंकवादियों को पहले से ही कहीं ज्यादा मात्रा में दिलाने के लिए काम करेगा। पाकिस्तान के वे अधिकारी, जिन्होंने अफगान विद्रोहियों का संचालन किया, अब पंजाब की तरफ मुंह कर लेंगे।

ऐसी गम्भीर स्थिति की आशंकाओं के बावजूद भारत सरकार द्वारा पंजाब में सुरक्षा बलों को 'धीरे चलो' का कथित आदेश जारी किये जाने से वे बड़े-बड़े पुलिस अफसर घबरा गये हैं जो अपनी जान हथेली पर रखकर आतंकवाद से टक्कर ले रहे हैं। ऐसे ही एक पुलिस अधिकारी ने पिछले दिनों राज्य सरकार को एक विनम्र प्रोटेस्ट पत्र भेजा, बताया जाता है। जानकार सूत्रों के अनुसार इस अधिकारी ने अपने पत्र में लिखा कि अकाल तख्त के जत्थेदार भाई जसबीर सिंह रोडे और पंथक कमेटी के कुछ सदस्यों को रिहा किये जाने से आतंकवादियों के हौंसले बुलन्द हुए हैं और सुरक्षाबलों का मनोबल गिरा है। 'धीरे चलो' के आदेश का ही परिणाम है कि आज पंजाब में आतंकवादी पूरी तरह हावी हैं। पत्र में यह चेतावनी दी गई बताई जाती है कि यदि १३ अप्रैल तक यही स्थिति रही तो हिंसक घटनाओं में भारी वृद्धि हो सकती है।

उच्च राजनीतिक क्षेत्रों का कहना है कि भाई जसबीर सिंह रोडे द्वारा बैसाखी पर सरबत खालसा न बुलाना इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि वह इस समय अपने विरोधी आतंकवादी गिरोहों के भारी दबाव में हैं। यह उम्मीद की जा रही थी कि भाई जसबीर सिंह सरबत खालसा बुला कर पिछले सरबत खालसा में लिये गये खालिस्तान सम्बन्धी निर्णयों को पलट देंगे लेकिन अब यूं लगता है कि प्रतिकूल परिस्थितियों के समक्ष उन्होंने 'घुटने टेक' दिये हैं। इन क्षेत्रों के अनुसार इस स्थिति के बावजूद केन्द्र सरकार के एक वर्ग ने अकाल तख्त के मुख्य-ग्रन्थी से अपनी उम्मीदों को अभी पूरी तरह समाप्त नहीं किया।

इस बीच आतंकवादी गिरोहों ने जहां अपनी अस्त्र-शस्त्र शक्ति काफी बढ़ा ली है वहां उनके सरगना अपने आकाओं की, जो विदेशों में बैठे हैं, मदद से अपने खूनी आंदोलन को अन्तर्राष्ट्रीय रूप देने को सक्रिय हो गए हैं। बताया जाता है कि ब्रिटेन, अमरीका और कनाडा में बैठे सिखों के नेताओं ने पंजाब में आतंकवादी हिंसा पर पर्दा पोशी के लिए प्रचार के नये हथकण्डे अपनाते हुए मानवीय अधिकारों को मुद्दा बनाने का कार्यक्रम बनाया है। ऐसा करके वे जहां आतंकवादी हिंसा पर पर्दा डाल सके हैं वहां अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर उन्हें भारत सरकार को बदनाम करने का मौका मिलेगा। इस कार्यक्रम में उन्हें अमरीकी सत्तारूढ़ दल में बैठे 'भारत-शत्रुओं' की पूरी-पूरी मदद रहेगी।

(पंजाब केसरी से साभार)

दिल्ली में दो नवीन आर्यसमाजों की स्थापना

निष्ठा व लगन से हम और आगे बढ़ें

आर्य नेताओं का आह्वान

दिल्ली में आर्यसमाज का वर्चस्व दिनोंदिन बढ़ रहा है। साथ ही आर्यसमाजों की संख्या में भी निरंतर वृद्धि हो रही है। १० अप्रैल को आर्यसमाज किरण गार्डन, नई दिल्ली की स्थापना की गयी। इस अवसर पर वहां एक सम्मेलन आयोजित किया गया। सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष स्वामी आनन्द बोध ने बोलते हुए कहा—आर्यसमाज को न केवल बाल सती व दहेज प्रथा जैसी कुरीतियों के लिए आगे बढ़कर काम करना है बल्कि राष्ट्रीय एकता व अखण्डता को भी सुदृढ़ करने के लिए तत्पर रहना है। उन्होंने कहा—आर्यसमाज देश की एकता के लिए तथा कुरीति उन्मूलन के लिए सदैव तत्पर रहा है। हमें अपने बीच में बैठे गलत लोगों से भी सावधान रहना चाहिए जो आर्यसमाज की शक्ति को तोडने के लिए लगे हैं। हमें अपने व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर उठकर समाज के हित को सर्वोपरि रखना चाहिए। उन्होंने आर्यों से और अधिक बढ़-चढ़कर कार्य करने का आह्वान किया।

इस अवसर पर पं० सच्चिदानन्द शास्त्री ने अपने भाषण में कहा—महर्षि के सच्चे अनुयायी निरन्तर समाज सेवा में लगे हैं लेकिन निहित स्वार्थी लोग मिशन को चोट पहुंचाने में भी पीछे नहीं हैं। ऐसे लोग धर्म और समाज के शत्रु हैं जिन से सतर्क रहना चाहिए। डा० धर्मपाल सभा प्रधान ने कहा—आर्यसमाज के मन्तव्यों को मानने वाले सभी जनों को याद रखना चाहिए कि देव दयानन्द का हमारे ऊपर कितना ऋण है हमें उस से उऋण होने के लिए धर्म की तन मन धन से सेवा करनी चाहिए। श्री सूर्यदेव सभा के महामन्त्री ने कहा—ऋषि दयानन्द को वैदिक धर्म के लिए गरल के घूंट पीने पड़े, अनेकों अपमान और यातनाओं को सहना पड़ा, लेकिन वे कभी विचलित नहीं हुए। आर्य सेवकों को भी यह याद रखनी चाहिए। आज हमें अनेक बार अपनों को गलतफहमियों का तथा कुछ मतलब परस्त वंचक जनों द्वारा किए अपमान को भी सहना पड रहा है लेकिन हमें विचलित नहीं होना है मिशन का काम करते रहना है। जो रोडे बन कर काम में बाधा डालते हैं उनका भी सामना करना पडेगा, अपमान भी सहना पडेगा तभी आदर्श उपस्थित हो सकेगा। इस अवसर पर डा०

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

योग क्या है ?

डा० नरेन्द्रकुमार ब्रह्मचारी, महानिदेशक योग
६८, अशोक रोड, नई दिल्ली-११०००१

★

महर्षि पतंजलि ने चित्त की वृत्तियों के निरोध को योग कहा है बशर्ते कि उस निरोध में द्रष्टा पुरुष की स्थिति अपने स्वरूप में हो जाए। वृत्ति नाम चित्त के व्यापारों का है। वृत्तिया पाच हैं। प्रमाण; विपर्य्यय, विकल्प, निद्रा और स्मृति। शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध आदि विषयों का सुनने, छूने, देखने, चखने, सूघने आदि द्वारा, अनुमान, द्वारा या सत्योपदेश द्वारा सही-सही ज्ञान कराने वाली वृत्ति का नाम प्रमाण, पदार्थों के असली रूप से हट कर उल्टा ज्ञान कराने वाली वृत्ति का नाम विपर्यय, अनहोनी कल्पना करने वाली वृत्ति का नाम विकल्प, समस्त जानकारी को ढक लेने वाली गहरी नींद का नाम निद्रा और पहले प्राप्त की जानकारी को याद करने का नाम स्मृति है। चित्त की इन वृत्तियों का निरोध हर हालत में किसी न किसी अश में बना ही रहता है। जागते हुए निद्रा वृत्ति निरुद्ध (रुकी) रहती है। स्वप्न देखते हुए प्रमाण, विपर्य्यय आदि वृत्तियां रुक जाती हैं तथा सुषुप्ति अर्थात् गहरी नींद में प्रमाण, विपर्य्यय, विकल्प और स्मृति ये चारों वृत्तियां रुक जाती हैं अर्थात् बेहोशी या गहरी नींद में सोये व्यक्ति को न तो कोई नया, सही या गलत ज्ञान होता है, न ही वह कुछ कल्पनाए करता है, न ही किसी पहली जानकारी को याद ही करता है। फिर भी निद्रा या मूर्छा से उत्पन्न चित्त की वृत्तियो के इस निरोध को योग नहीं कह सकते क्योंकि यह द्रष्टा पुरुष को अपने स्वरूप का ज्ञान कराने वाला नही है। कारण कि मूर्छा और निद्रा में तमोगुण की अधिकता से अज्ञान का अन्धेरा चित्त को पूरे तौर पर ढक लेता है। जब कि ध्यान या समाधि मे होने वाले निरोध में चित्त सत्वगुण की बढती से पैदा होने वाले प्रकाश से भर कर प्रकाशित हो उठता है। अत. चित्त का हर निरोध योग नहीं है। केवल वही निरोध योग कहा जा सकता है जिस में चित्त सत्वगुण से भर के अपने तथा अपने द्रष्टा जीवात्मा के स्वरूप को सही-सही ज्ञान से जगमग कर दे।

योग के स्वरूप को दूसरे शब्दों में यों कह सकते हैं चित्त प्रकृति का पहला परिणाम होने के कारण सत्व, रज, तम इन तीन गुणों वाला है। इसी कारण चित्त सत्वगुण के प्रमुख धर्म सुख और प्रकाश, रजोगुण के धर्म-चचलता और दुःख तथा तमोगुण के धर्म मोह और अन्धकार से किसी न किसी अंश में जुडा रहता है। चित्त की चचलता का बोध तम और सत्व दोनों ही से होता है किन्तु निद्रा, मूर्छा आदि तम से उत्पन्न निरोध की हालतों में चित्त द्रष्टा पुरुष को उसका ज्ञान नहीं करा सकता। अत ये अवस्थाएँ रज, तम आदि के दुःख, मोह, आसक्ति, अज्ञान आदि विकारों से अछूती नहीं हो सकती। सत्वगुण की अधिकता से उत्पन्न होने वाला निरोध ही दुःख मोह अज्ञान आदि दोषों से अछूता होने के कारण योग कहलाता है।

सत्वगुण की बढोतरी से निर्मल, एकाग्र और प्रकाशित हुए चित्त को ध्यान द्वारा शरीर के भीतर या बाहर जिस भी पदार्थ के साथ जोडा जाता है, वही पदार्थ हथेली पर रखे आवले की तरह प्रत्यक्ष हो जाता है। भाव यह है कि आमतौर पर किसी भी पदार्थ का ज्ञान प्राप्त करने के लिए चित्त आंख, कान आदि इन्द्रियों के रास्ते से ही वस्तु या विषय से जुडता है सीधा बिना इन्द्रियों का सहारा लिए उन शब्द रूप आदि विषयों की जानकारी प्राप्त नहीं कर सकता किन्तु योग से पवित्र, एकाग्र और प्रकाशित हुए चित्त के साथ यह रुकावट नहीं आती। वह सीधा ही विषय या पदार्थों से जुड कर उसको जान लेता है। इन्द्रियों के सहारे की जरूरत उसे नही पडती। तथा कान, नाक आंखादि की शक्तियों की तरह चित्त की शक्ति सीमित न होने के कारण वह ज्ञान अधिक व्यापक अधिक बारीक दूर का और सही-सही होता है। इसी का नाम योगज प्रत्यक्ष है।

रज, तम से ऊपर उठकर सत्वगुण में स्थित हुए चित्त में धर्म (पवित्रता) ज्ञान, वैराग्य अनासक्ति और ऐश्वर्य (अलौकिक सामर्थ्य) की बढ़ती होती चली जाती है। अन्त में, पवित्रता, ज्ञान और वैराग्य से प्रकाशित उस चित्त में तीनों गुणों से अपनी पृथकता को जान कर आत्म गुणों से भी विरक्त हो जाता है। इसे पर वैराग्य कहते हैं जो आत्मा को गुणों के ज्ञान, धर्म, विलक्षण सामर्थ्यादि धर्मों से भी उपराम कर अपने आप में स्थित कर कैवलता या मोक्ष का हकदार बना देता है। यही स्थिति असंप्रज्ञात योग या निर्बीज समाधि भी कही जाती है।

भाष्यकार व्यास ने चित्त की वृत्तियों की व्याख्या करते हुए विपर्य्यय वृत्ति या मिथ्या ज्ञान को ही अविद्या, अस्मिता, राग द्वेष, अभिनिवेश (मरने का डर)—इन पांच रूपों वाली स्वीकार किया है। क्योंकि योग सूत्रों में भी अविद्या की निवृत्ति से मोक्ष होना माना गया है। अतः आत्म ज्ञान या कैवल्य की प्राप्ति में मुख्य हेतु विपर्य्यय वृत्ति का निरोध ही है। अन्य वृत्तियों के निरोध की जरूरत नहीं दीख पडती। जिस प्रकार तमोगुण की प्रधानता वाली यह विपर्य्यय वृत्ति मिथ्या ज्ञान या बंधन का हेतु है उसी प्रकार सत्वगुण की प्रधानता के कारण पदार्थों का सही-सही ज्ञान कराने वाली प्रमाण वृत्ति मोक्ष या कैवल्य का हेतु है। संप्रज्ञात समाधि में उत्पन्न होने वाला योगराज या मानस प्रत्यक्ष भी प्रमाण वृत्ति का ही एक सूक्ष्म व्यापार है। इसी प्रकार यथार्थ ज्ञान या प्रमाण से उत्पन्न सत्या स्मृति (आत्मतत्व की स्मृति) ही सप्रज्ञात ध्यान की उच्चतम अवस्थाओं तक योगियों को प्राप्त होने वाले ज्ञान विज्ञान का हेतु बना करती है। प्रमाण और स्मृति वृत्ति का निरोध हो जाये तो योगज प्रत्यक्ष भी सम्भव नहीं हो सकता। भाव यह है कि सत्वगुण प्रधान प्रमाण वृत्ति तथा तम प्रधान विपर्य्यय वृत्ति कमजोर पडती जाती है तथा स्मृति आदि वृत्तियां भी सत्वगुण से प्रभावित हो कर सत्य सत्व के ध्यान में निमग्न रहने लगती हैं जो धारणा ध्यान और समाधि का हेतु बनती है। विकल्प वृत्ति का व्यापार भी घट कर शून्य प्रायः हो जाता है तथा निद्रा भी बेसुधी, भारीपन और चंचलता के नष्ट हो जाने से स्वल्प और आनन्दमयी हो जाती है। ऐसे साधक का जीवन धर्म, ज्ञान, वैराग्य और ऐश्वर्य की ओर मुड़ जाता है तथा जीवन में यम, नियम, सत्याचरण के लक्षण दीख पडते हैं। इसके विपरीत अन्तःकरण में सत्वगुण के रज तम आदि से दब जाने पर अज्ञान, मोह, आलस्य चचलतादि की प्रधानता हो जाने से प्रमाण वृत्ति कमजोर पड जाती है। स्मृति सत्यतत्व को छोड कर सांसारिक उधेड बुनों में उलझी रहती है तथा निद्रा, विकल्प आदि वृत्तियां भी अज्ञान, काम, अधर्म, मोह, ईर्ष्या, अहंकार, रोग, द्वेषादि की बढ़ती के कारण ध्यान साधना की विरोधी हो जाती हैं। अत अन्त.करण का सत्वगुण प्रधान हो जाना ही योग है तथा रज तमादि से दब जाना ही अयोग है।

श्रीमद्भगवत्गीता में जो चित्त के समत्व भाव या कर्मों में कुशलता को योग कहा है वह भी पातंजल योग की परिभाषा के अनुकूल ही है। ध्यानपूर्वक देखने पर पहले तो ये उपर्युक्त दो परिभाषाएँ दो न होकर एक ही निकलती हैं क्यों कि दोनों में मूल बात अनासक्त भाव से आत्मस्थ होकर कर्म करने का उपदेश दिया गया है। कर्म के अच्छे बुरे फल में अनासक्त रहना ही समत्व भाव है तथा समत्व बुद्धि के कारण जो सुख दुःख मोहादि फलों से अछूता रहता है वही कर्म करने में कुशलता या कर्म बन्धन से छूटने का उपाय है। उसी को गीता में योग नाम से कहा गया है। योग सूत्रों में ईश्वर को अविद्या, अस्मिता, राग द्वेषादि क्लेशों, कर्मों के सुख दुःखादि कर्म फलों तथा वासनाओं से अछूता स्वीकार किया है। ईश्वर प्रणिधान की साधना, में जितना-जितना उपासक योगी उपास्य ईश्वर के गुणो को धारण करता है उतना-उतना ही वह राग, द्वेष, सुख दुःखादि द्वन्द्वों से अछूता होता चला जाता है तथा अन्त में जब कर्म फलों में पूर्णत अनासक्त हो जाता है तो वह योगस्थ होकर ही कर्म करता है। दूसरी दृष्टि से इस बात को यों समझा जा सकता है कि सत्वगुण के चार प्रधान धर्मों में अन्यतम धर्म वैराग्य है। वैराग्य अनासक्ति का ही नाम है जो सत्व गुण के बढ़ जाने पर विरक्त योगियों के जीवन-व्यवहार में स्वयं ही अनिवार्य रूप से उतर आती है।

महर्षि याज्ञवल्क्य जी ने आत्मा और परमात्मा के संयोग को योग कहा है। यह भी योगसूत्रों के मत से अभिन्न ही है क्यों कि रज तम

(शेष पृष्ठ ६ पर)

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है उसमें शून्य भी है और रेखागणित भी।

ले०—हरिदत्त विद्यालकार

★

नवभारत टाइम्स के २६ और २७ फरवरी १९८८ के अंकों में एक कार्टी के साथ गणित की कुछ विधाओं के बारे में श्री गुणाकर जी मुले ने वेद के पढ़ने वालों और मानने वालों को अंध श्रद्धावान् कहा है। जब कि स्वयं पश्चिमी लोगों के अंधानुयायी होने का प्रमाण दिया है। सबसे पहले आर्यों के मूल स्थान के बारे में लिखा है कि कोई स्पष्ट सूचना नहीं मिलती। दुःख इस बात का है कि उन्होंने महर्षि दयानन्द लिखित सत्यार्थप्रकाश नहीं पढ़ा जिस में स्पष्ट लिखा है कि मनुष्यों की उत्पत्ति सर्वप्रथम त्रिविष्टप (तिब्बत) में हुई और वहीं आर्य थे तथा वहीं सब से पहले आर्यावर्त (जिस में तिब्बत भी सम्मिलित था) में आ कर बसे। वेदों में छह ऋतुओं का विशद वर्णन है। उसी के अनुसार आर्य आर्यावर्त में छह ऋतुएं पाकर यहीं बस गये और यहां पर बहने वाली नदियों के नाम वेद शब्दों के आधार पर "इम मे गंगे यमुने·" आदि मन्त्र से लेकर, गंगा, यमुना, सरस्वती, शतद्रु, विपाशा एवम् सिन्धु आदि रखे। इसी प्रकार भारत का इतिहास भी साक्षी है कि सर्वप्रथम आर्य यहीं पर आ कर बसे जिसका विशद वर्णन अमर शहीद पण्डित लेखराम जो आर्य मुसाफिर के ग्रन्थ "कुल्लियात आर्य मुसाफिर" में मिलता है। इतना सब प्रमाणित होने पर भी दुराग्रही पश्चिम के अन्धानुयायी भ्रान्त धारणाएं समाचार पत्रों के माध्यम से समय-समय पर फैलाते रहते हैं कि आर्य मध्य एशिया से आ कर यहां बसे और यहां पर रहने वाले आदिम जाति के लोगों को भगा दिया, जिसका कोई प्रमाण इन के पास नहीं है। जिन पश्चिमी लोगों की बात मान कर ये लोग ऐसा कहते हैं, उन को तो अपने देशों का पांच हजार वर्ष पूर्व का इतिहास भी मालूम नहीं है। जिन के पूर्वज महाभारत के युद्ध में भाग लेने के लिए कौरवों और पाण्डवों की सेनाओं में सम्मिलित हुए थे। हरिवर्ष (यूरोप) से बिडालाक्ष, पाताल (अमेरिका) से बभ्रुवाहन, चीन से भगदत्त आदि ने युद्ध में भाग लिया था। महाराजा युधिष्ठिर से लेकर महाराजा अनंगपाल तक के आर्य राजाओं की वंशावलि सत्यार्थप्रकाश में छपी है जिन्होंने लगभग पांच हजार वर्ष तक भारत में राज्य किया। रामायण का काल कम से कम नौ लाख वर्ष काल गणना के अनुसार, (द्वापर युग का समय आठ लाख चौंसठ हजार वर्ष) त्रेता और कलियुग के मध्य होता है और अब २८वें कलियुग के पांच हजार ८७ वर्ष बीत चुके हैं) प्रमाणित हो चुका है, जब कि गुणाकर मुले सरीखे लोग सृष्टि की उत्पत्ति केवल दस हजार वर्ष पूर्व ही मानते हैं। वास्तव में भारतीय इतिहास के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति को एक अरब ९७ करोड़ २९ लाख ४९ हजार ८७ वर्ष बीत बीत चुके हैं। इस प्रकार आर्यों की जन्म भूमि के बारे में कोई सन्देह नहीं रह जाता है।

मुले जी ने दूसरी बात वेदों के रचना काल के सम्बन्ध में वेद को अन्तःसाक्षी के बारे में लिखी है कि उसका कोई उल्लेख वेद में नहीं है। यह ठीक है क्योंकि यह विषय वेद का नहीं, अपितु इतिहास का है। इतिहास साक्षी है कि वेदोत्पत्ति मनुष्य की उत्पत्ति के साथ हो हुई जिसे अब तक एक अरब ९६ करोड़ ८५ लाख वर्ष से अधिक समय हो चुका है, जिसका विस्तृत वर्णन महर्षि दयानन्द ने "ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका" में किया है। फिर भी मुले जी यही रट लगाते रहे कि "वेदों के रचनाकाल का निश्चित प्रमाण नहीं है," तो इसका कोई इलाज नहीं है। क्योंकि उन के पश्चिमी गुरु उन्हें यही बताते हैं। भारतीय ऋषियों, मुनियों और मनीषियों की बात को वे मानने को तैयार नहीं। अस्तु।

मुले जी अपने लेख में कहते हैं कि—"वेदों में न शून्य है, न रेखा-गणित है, न "कैलकुलस।" गनीमत है कि उन्होंने 'जीरो' न कह-कर शून्य ही कहा है। शून्य वह है जो परिपूर्ण हो। गुणा, भाग, योग और घटा में उसी रूप में रहे। वेद का मन्त्र है—"पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।" इस मन्त्र में पूर्ण शब्द 'शून्य' का वाचक है जिसे संख्याओं में प्रयुक्त किया जाता है जिस के बिना १ से अधिक संख्या नहीं बन सकती। परन्तु वेदों में अरबों खरबों तथा उनसे आगे भी संख्याओं का वर्णन है, न कि हजार-दस हजार तक। यजुर्वेद में सूत्र रूप में "एका च मे एका च मे तिस्रश्च मे तिस्रश्च मे· ·" "अयुत च मे नियुत च मेऽर्बुद च मे न्यर्बुद च मे ··" आदि मन्त्रों में परार्ध तक की संख्याओं का वर्णन है, जिनके आधार पर ऋषियों ने परान्त काल तक के वर्षों की गणना की है इस पर भी यह कहना कि वेद में शून्य नहीं है, हास्यास्पद है। मुले जी शायद यजुर्वेद को (अपने पश्चिमी गुरुओं की तरह) ऋग्वेद के बाद बना मानते हैं, जब कि भारतीय ऋषि चारों वेदों की उत्पत्ति एक ही समय मानते हैं जो सही भी है। मनु जी कहते हैं—अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रय ब्रह्म सनातनम्। दुदोह यज्ञसिध्यर्थ-मृग्यजु सामलक्षणम्। वेद अपौरुषेय हैं और ज्ञान का अक्षय भण्डार भी 'पश्यदेवस्य काव्यं ममार न जीर्यति' वेद लौकिक और पारलौकिक ज्ञान है, जो मनुष्यों के लिए पर्याप्त है। अनन्ता वै वेदा। विद्यां चाविद्यां च यस्तद् वेदोभय७ सह। अविद्यया मृत्यु तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते॥ कहिये है न पारलौकिक ज्ञान।

रेखागणित—वेद में रेखागणित और बीजगणित हैं इसे जानने के लिए महर्षि दयानन्द कृत "ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका" नामक ग्रन्थ पढ़ना चाहिए। फिर भी कुछ संकेत यहां देना आवश्यक है। वेद के मन्त्रों पर उदात्त, अनुदात्त आदि के चिह्न लगे मिलते हैं, जो स्वयं मे रेखा-विज्ञान के द्योतक हैं। वेद में मन्त्र आता है—"अष्टाचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या··"। ये आठ चक्र और नवद्वार बिना रेखागणित के कैसे बन सकते हैं? 'रथनाभा-विवारा' रथ के पहिये की नाभि में आरों की तरह कह कर वेद रेखागणित का ज्ञान दे रहा है। बिना रेखागणित के ज्ञान के रथ के पहिये की नाभि में आरे कैसे लगाये जा सकते हैं? "चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा. द्वे शीर्षे सप्त हस्तासोऽस्य। त्रिधाबद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्यामाविवेश" मंत्र का विनियोग केवल व्याकरण में ही नहीं, अपितु विज्ञान एवम् रेखा-गणित आदि में किया जाता है तभी तो स्वामी दयानन्द जी ने लिखा था कि मैं वेद के आधार पर विमान का निर्माण कर सकता हूं, परन्तु यह मेरा कार्यक्षेत्र नहीं है। इसी के आधार पर देवों तथा रावण के समय में पुष्पक आदि विमानों का निर्माण किया गया था। तुलसी-दास की बात मानें तो उस समय में वनों में रहने वाले वानर और रीछ (भालू) भी रेखागणित के विशेषज्ञ थे, जिन्होंने रामेश्वरम् से लंका तक सेतु का निर्माण बहुत कम समय में कर दिया था जिस के ऊपर से राम की सेना लंका में गयी थी और जिस के अवशेष आज भी रामेश्वरम् में प्रत्यक्ष देखने को मिलते हैं। पाण्डवों का किला, जो पुराने किले के नाम से प्रसिद्ध है, आज भी दिल्ली के प्रगति मैदान के पास खड़ा अपनी गौरव गाथा गा रहा है, जो रेखागणित के विशेषज्ञों की ही देन है। अयोध्या नगरी का निर्माण भी वेद के आधार पर किया गया था, जिसका वर्णन वाल्मीकीय रामायण में विस्तार से किया गया है। रेखागणित सबको अथर्ववेद के मन्त्रों के आधार पर ही स्वामी दयानन्द ने 'संस्कार-विधि.' के गृहाश्रम प्रकरण में शाला निर्माण का विधान किया है, जिस में २ कमरे, ४ कमरे, ६ कमरे और ८ कमरों के भवन बनाने का वर्णन है। उपमिता, प्रतिमिता, परिमिता, विश्ववारा आदि विविध विधियां दी गयी हैं। फिर भी यह कहना कि वेद में भवन निर्माण का विधान नहीं है, केवल बचकाना है। रेखागणित का विस्तृत ज्ञान सारी सृष्टि में सब पदार्थों के माध्यम से परमात्मा ने मनुष्यों को दिया है, उसका विस्तार और विकास करना मनुष्यों का कर्त्तव्य है। वेद में एक मन्त्र है—द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते। तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्त्यनश्न-न्नन्योऽभिचाकशीति॥ इसका सामान्य अर्थ बता कर धरती के किसी कोने में रहने वाले व्यक्तियों से चित्र के द्वारा भाव प्रकट करने के लिए कहने पर प्रायः सभी का एक समान ही उत्तर आयेगा क्योंकि सब को सृष्टि रचना से प्राप्त रेखा विज्ञान एक समान होगा। विज्ञान

(शेष पृष्ठ ६ पर)

मृत्यु स्वरूप विवेचन

ले०—यशपाल आर्य बन्धु, आर्य निवास, चन्द्रनगर, मुरादाबाद

अपने पूर्व लेख में हमने जीवन और मृत्यु की पहेली की चर्चा की थी और यह बताया था कि अनादि काल से मानव इस विचित्र पहेली को ढूढने में लगा है और फिर भी वह सदैव मृत्यु से भयभीत रहता है। उसे सदैव यही आशका रहती है कि न जाने किस समय मृत्यु आ दबोचे। वह भयातिरेक के कारण ढग से कुछ भी नहीं पाता। और स्थिति यह है कि—

'उनका जीना भी कोई जीना है, हविसे जिन्दगी ने जिनको मारा है।' तात्पर्य यह है कि हम जिन्दगी की हवस में मरे जाते हैं। पर ऐसा क्यों ? इसीलिए कि हमने जिन्दगी और मौत के स्वरूप को ठीक से समझा ही नहीं। अत आवश्यकता इस बात की है कि हम इनके स्वरूप को समझें। जीवन तो हमें दिखाई दे रहा है क्योंकि हम स्वय जीवित हैं किन्तु मृत्यु हमें दिखाई नहीं देती, क्योंकि मरने के उपरान्त कोई तो उस स्थिति के बारे में कुछ बताने नहीं आता। हम दूसरों को मरता देखकर यह सोच लिया करते हैं किन्तु कोई अत्यन्त पीडादायक स्थिति होगी। पर वस्तुस्थिति क्या है आइए थोडा इस पर विचार करें।

वह मृत्यु कि जिसका नाम सुनते ही प्राणी काप उठता है, सिहर उठता है, भयभीत हो जाता है, अन्तत. है क्या ? तो आइए। प्रथम भौतिकवादी दृष्टिकोण से भी इसकी विवेचना करें। पश्चात् आध्यात्मिक दृष्टिकोण से भी इसकी विवेचना करेंगे। भौतिकवादी मृत्यु की खोज उसके भौतिक कारणों मे ही किया करते हैं। कुछ समय पूर्व तक यह लोग सास के रुक जाने अथवा हृदयगति बन्द हो जाने को ही मृत्यु कहा करते थे पर आज स्थिति इस से भिन्न है। भौतिकवादी हृदयगति को रुकना मृत्यु का लक्षण नहीं मानते, इसे 'कार्डियक ऐरेस्ट' कहते हैं और मानते हैं कि मालिश या बिजली के झटक से रुका हुआ हृदय फिर से चलाया जा सकता है और इस प्रकार मृत्यु से बचा जा सकता है। इसी प्रकार सास का न चलना भी उन के लिए मृत्यु का द्योतक नहीं रहा। कृत्रिम श्वास यन्त्र से श्वसन क्रिया को फिर से चलाया जा सकता है। सम्प्रति डाक्टर मस्तिष्क की विद्युत् तरगों के रुक जाने को मृत्यु का लक्षण मान रहे हैं। किंतु बाद में यह भी कह रहे हैं कि निकट भविष्य में रुके मस्तिष्क को फिर से चलाया जाना सम्भव हो सकता है। तात्पर्य यह कि भौतिकवादी लोग शरीर की ही किसी गड़बडी या अक्रियाशीलता को ही मृत्यु समझते हैं। वे जिन्दगी और मौत की कुछ निम्न सी परिभाषा देते हैं। यथा—

जिन्दगी क्या है ? अनासर की,
मुनासिब तरतीब।
मौत क्या है ?
इन्हीं अजज़ा का बिखर जाना।

पर वे यह भूल जाते हैं कि परमाणु की मुनासिब तरतीब (व्यवस्थित क्रम) स्वत तो हो नहीं जाता और न ही यह स्वत ही बिखर जाता है। जब वे इसे व्यवस्थित क्रम मानते हैं तो ऐसे व्यवस्थित क्रम देने वाला भी तो कोई होना चाहिए। कोई भी व्यवस्थित क्रम अपने आप नहीं हो जाया करता। अत. यह दृष्टिकोण मान्य नहीं हो सकता।

आध्यात्मवादी मान्यता के अनुसार जीवन के सभी लक्षणों की परिसमाप्ति का नाम मृत्यु है। अर्थात् मृत्यु जीवन के विपरीत अवस्था का नाम है। अब यहां प्रश्न उठ सकता है कि यदि मृत्यु जीवन के विपरीत अवस्था का नाम है तो फिर जीवन क्या है ? यह प्रारम्भ क्यों हुआ था और फिर समाप्त क्यों हो गया ? फिर समाप्त हो जाने पर कहां विलीन हो गया, यह जीवन के उदय और विलय का क्रम कब से चल रहा है और कब तक चलता रहेगा ? यह जीवन और मृत्यु की विचित्र पहेली जिसे हल करने में मानव अनादि काल से एडी-चोटी का जोर लगा रहा है।

जब मृत्यु जीवन के सभी लक्षणों की परिसमाप्ति का नाम है तो फिर जीवन क्या है ?

मृत्यु ही की भान्ति जीवन के लिए भी अध्यात्मवादी दृष्टिकोण भौतिकवादी दृष्टिकोण से सर्वथा भिन्न है। भौतिकवादी कतिपय भौतिक सम्मिश्रणों से जीवन की उत्पत्ति मानते हैं। पर अध्यात्मवादी इस से सन्तुष्ट नहीं होते। क्योंकि निरुद्देश्य सम्मिश्रणों का क्या प्रयोजन ? आध्यात्मवादी जड़, शरीर और चेतन आत्मा का ईश्वर की व्यवस्था से संयोग का नाम जीवन मानते और इन दोनों के ईश्वरीय व्यवस्था से वियोग को मृत्यु मानते हैं। तात्पर्य यह कि चेतन आत्मा का जड़, शरीर के साथ संयोग होता है तो उस में जीवन के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं और जब वियोग हो जाता है तो जीवन के सभी लक्षण समाप्त हो जाते हैं और इस अवस्था का नाम मृत्यु है। यह है आध्यात्मवादी दृष्टिकोण मृत्यु और जीवन के सम्बन्ध में। तात्पर्य यह है कि जीवन और मृत्यु की पहेली सुलझाने के लिए हमें तीन सत्ताओं, ईश्वर, जीव और प्रकृति को स्वीकार करना ही पडेगा। यह तीनों तत्व अनादि हैं।

यह तो आप जान ही चुके हैं कि जड़, शरीर के साथ चेतन आत्मा के संयोग का नाम जीवन है और वियोग का नाम मृत्यु है पर यह संयोग वियोग स्वतः अपने आप तो नहीं हो जाता। कोई तीसरी शक्ति ही जो इन से अधिक शक्तिशाली समर्थ तथा सर्वज्ञ है, वही इसकी व्यवस्था करती है। उसी की व्यवस्था से न चाहते हुए भी जीव को हम शरीर छोड़ने और फिर दूसरा शरीर धारण करने को बाध्य होना पड़ता है। जब जीव का ईश्वर की व्यवस्था से प्रकृति जन्य शरीर से संयोग होता है, तो जड़-शरीर में भी चेतना आ जाती है ? यही जीवन के लक्षण हैं और जब शरीर से चेतन आत्मा ईश्वरीय व्यवस्था से निकल जाता है, तो शरीर अचेतन अवस्था में आ जाता है। इसी का नाम मृत्यु है। स्पष्ट है कि जीवन और मृत्यु आत्मा और शरीर के संयोग और वियोग का ही सारा खेल है पर यह खेल कोई स्वेच्छा से नहीं खेला जाता तो फिर वियोग होता ही नहीं। पर हम देखते हैं कि बरबस कोई शक्ति इनका वियोग भी करा देती है। उसी नियन्ता की व्यवस्था से जीव शरीर के सभी छिद्र खुले होने पर भी कहीं निकल कर भाग नहीं सकता और वियोग होने पर लाख उपाय करने पर भी इस में एक क्षण को रुक नहीं सकता। वह उसी नियामक प्रभु की व्यवस्था एवम् प्रबल शक्ति रूपी पाश है जिन से बंधा जीव निकल कर भाग नहीं सकता।

अब हम पुनः मूल विषय पर आते हैं कि जिन्दगी क्या है और मृत्यु क्या है ? सीधे-सादे शब्दों में कहना हो तो यही कहा जाएगा कि—

> जिन्दगी जन्म और मृत्यु के बीच की दूरी है,
> जन्म लाचारी है, मौत मजबूरी है।

जिसे हम जन्म कहते हैं वह वस्तुतः मृत्यु की ओर यात्रा की शुरूआत है। तनिक विचारें तो सही कि बालक के उत्पन्न होने के तुरन्त पश्चात् उसकी भोलीभाली ममतामयी मा पौराणिक मान्यतानुसार ज्योतिषी से बालक की जन्म-पत्री बनवाती है और उस से पूछती है कि बालक कितना जीएगा। ऐसा पूछ कर क्या वस्तुत वह ज्योतिषी से यह नहीं कह रही होती कि बालक कब मरेगा ? जन्मते ही मृत्यु की आशका। इसीलिए न कि जन्म मृत्यु की ओर यात्रा का प्रारंभ है यहां यह प्रश्न उठ सकता है कि यदि जन्म मृत्यु की ओर यात्रा की शुरुआत है तो फिर मृत्यु क्या है ? निश्चय ही वह आगामी जीवन के लिए एक पासपत्र है। यदि जन्म के साथ मृत्यु जुडी है तो मृत्यु के साथ भी तो जन्म जुडा है। वस्तुत यह जन्म और मृत्यु एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। कोल्टन के शब्दों में—

What we call life is journey to death and what we call death is pasport to life.

अर्थात् जिसे हम जीवन कहते हैं वह मृत्यु की ओर यात्रा है और जिसे हम मृत्यु कहते हैं वह जीवन का पासपत्र है। इसी प्रकार डा० यग का भी कथन है कि—अर्थात् हमारा जन्म मृत्यु को शुरूआत के सिवा और कुछ भी नहीं जब कि डा० स्वामी सत्यप्रकाश का कथन है कि—अर्थात् मृत्यु दो जीवनों के बीच का द्वार है यानी वर्तमान और भावी जीवन के बीच का द्वार, कविवर दिनकर के शब्दों में कहना हो तो यही कहा जाएगा कि—

> कफन और पोशाक छूटी की दोनों एक वसन हैं।
> पता नहीं हम मरते हैं या जन्म नया लेते हैं।

तात्पर्य यह है कि जैसे व्याधि सदा जन्म से जुड़ा होता है। इसी

(शेष पृष्ठ ८ पर)

महर्षि महिमा

—उत्तमचन्द्र शरर

पं० गुरुदत्त जी ने अपने समय में सत्य ही कहा था कि महर्षि दयानन्द जी को समझने के लिए अभी एक सौ वर्ष और लगेंगे। स्वामी दयानन्द अपने समय से एक सौ वर्ष आगे थे। हम देखते हैं कि जिन सुधारों का ऋषि के युग में विरोध किया गया, आज उन्हें जनता ने प्रसन्नतापूर्वक अपना लिया है। यह तो रही ऋषि द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों की बात, परन्तु आज हम ऋषि के उन गुणों की चर्चा करने लगे हैं जिन को तुलनात्मक दृष्टि से स्पष्ट नहीं देखा गया, अत जिन के महत्त्व को आंकने में कमी रही है। इस लेख से हमारा लक्ष्य किसी महापुरुष के महत्व को कम दिखाना नहीं, हां स्वामी दयानंद जी को पक्षपात रहित हो कर देखना है। आइये हम उनके कुछ गुणों का मूल्यांकन करें। साधारणतया कहा जाता है, ऋषि का ब्रह्मचर्य भीष्म तथा हनुमान के ब्रह्मचर्य तुल्य था, परन्तु हमारा नम्र निवेदन है कि इस तुलना में ऋषि के साथ न्याय नहीं किया गया। भीष्म बाल ब्रह्मचारी थे, इस में कोई सन्देह नहीं, परन्तु यह भी सत्य है कि उन्होंने यह कठोर व्रत, ब्रह्मचर्य की महिमा से प्रेरित हो कर नहीं लिया, अपितु अपने पिता शान्तनु की मनोकामना की पूर्ति के लिए लिया। यह भी सत्य है कि इस ब्रह्मचर्य काल में ही वे काशी नरेश की कन्याओं के स्वयंवर में सम्मिलित हुए, स्वयंवर को जीत गये, अम्बिका, अम्बालिका को अपने साथ जीत कर लाये, और घर आकर उन्हें अपने भाइयों से विवाह सम्बन्ध में जोड दिया। दूसरी ओर महर्षि तो आयु भर स्त्री दर्शन से भी सतर्क रहते हैं। एक बार विद्यार्थी काल मे एक स्त्री के दर्शन पर तीन दिन तक शिवालय में तप करते रहे, उपदेश में आने वाली स्त्रियों को वापस भेजते रहे और ब्रह्मचर्य व्रत का सुन्दर आदर्श हमारे सम्मुख रखा। कुछ ऐसी अवस्था हनुमान् जी की है। वे भी ब्रह्मचर्य श्री राम की सेवा के लिए अपनाते हैं। ऋषि का लक्ष्य महान् है। हनुमान जी भी स्त्रियों में रह सकते हैं, पर ऋषि की सतर्कता, व्रत की कठोरता तथा लक्ष्य की उच्चता, उसे सितारों में चन्द्रमा के तुल्य विशिष्ट शोभा प्रदान करती है।

अब स्वामी जी के शास्त्र ज्ञान को स्वामी शंकराचार्य के शास्त्र ज्ञान की तुलना में रखा जाता है। परन्तु विज्ञ पाठक इस सत्य से अपरिचित नहीं कि शंकर का ज्ञान वेदान्त उपनिषद् तथा गीता से आगे नहीं, वे उपनिषद् को भी वेद मान कर चले। यही कारण था कि वे स्त्री तथा शूद्र के प्रति अन्याय कर गये। ब्रह्मसूत्र भाष्य में वेद के "यथेमां वाचं कल्याणीं" से अपरिचित होकर लिखते हैं—

"वेदप्रतिषेधो वेदाध्ययनप्रतिषेधस्तदर्थज्ञानानुष्ठानयोश्च प्रतिषेध शूद्रस्य स्मर्यते। वेदोच्चारणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीरभ्रष्ट," इति यदि वे वेद ज्ञान से परिचित होते, तो इस प्रकार की संकीर्णता का शिकार न बनते। यह भी ज्ञातव्य है कि वेद ज्ञान के इस अभाव से वे अद्वैतवाद की स्थापना कर पाये यदि उनकी दृष्टि में "द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया" इत्यादि-मन्त्र आ पाते तो शंकर सरीखा विद्वान् अद्वैतवाद जैसी दुर्बल दार्शनिक विचारधारा में न बहता। पाठक क्षमा करेंगे यदि हम यह कहने की धृष्टता भी करें कि स्वामी शंकराचार्य का पूरा सम्मान करते हुए भी हमें यह मानना पडता है कि उनकी तर्क शक्ति से दयानन्द की तर्क शक्ति काफी प्रबल है। अद्वैतवाद सम्बन्धी उन के तर्कों को जिस योग्यता से आचार्य दयानन्द खण्डन कर पाये हैं, वह 'न भूतो न भविष्यति' की उक्ति हमारी वाणी पर ला देता है। स्वाध्यायशील पाठक उस का आनन्द सत्यार्थप्रकाश के अध्ययन से उठा सकते हैं।

ऋषि की तीसरी विशेषता एक ईश्वर का पूजन तथा मूर्ति पूजा का खण्डन माना जाता है, और इसे मुहम्मद साहब की तौहीद से समता दी जाती है। परन्तु मुहम्मद साहब की तौहीदी की यह अवस्था है कि उनकी दृष्टि में केवल ईश्वर की पूजा पर्याप्त नहीं जब तक उसके प्यारे रसूल पर ईमान न लाया जावे। रसूल पर ईमान न लाकर केवल ईश्वर की पूजा करने वाला नेक और परहेजगार भी नर्क की अग्नि से नहीं बच सकता जब कि गुनाहगार से गुनाहगार भी महशर के दिन मुहम्मद साहब की सिफारिश से स्वर्ग में जा सकता है। ऋषि दयानन्द न तो ईश्वर के अधिकार को छीनता है, और न उसके न्याय तथा सत्य में कोई अंतर मानता है। वह स्वय को ईश्वर का शरीक बनाता ही नहीं, अत ऋषि का एकेश्वरवाद मुहम्मद साहिब की कृत्रिम तौहीद से जुदा है।

रही मूर्ति पूजा की बात, स्वामी दयानन्द ईश्वर के स्थान पर किसी अन्य की पूजा के घोर विरोधी हैं। मुहम्मद साहिब मूर्ति पूजा के घोर विरोधी हैं, परन्तु काबा में रखे "संगे अस्वद" का चुम्बन ईमान करार देते हैं, और सच्चाई यही है कि:

बुतों को समझा खुदा किसी ने
तो संगे अस्वद किसी ने चूमा जुबां
पे तौहीद के हैं दावे, अमल मगर
सब के काफिराना।

ऋषि मुसलमानों की मूर्ति पूजा का वर्णन सत्यार्थप्रकाश के १४वें समुल्लास में भी करते हैं और अब तो मुसलमानों की तौहीद पर एक कवि मौ० हाली ने व्यंग्य से लिख दिया।

"नबी को जो चाहें खुदा कर दिखाएं
इमामों का रुतबा नबी से बढाए
मजारों पे दिन रात मांगें दुआएं
सदा खानकाहों पर सिजदे चढ़ाए
न ईमान में कुछ खलल इससे आये,
न तौहीद बिगडे न इस्लाम जाये।"

लेख लम्बा हो रहा है, नहीं तो ईसा तथा बुद्ध की अहिंसा तथा दयानन्द की अहिंसा में भी जो धरती आकाश का अन्तर है हम उसे स्पष्ट करते। वस्तुत ऋषि को समझने के लिए अभी और समय चाहिए। आज का विज्ञ मनुष्य भी ऋषि दयानन्द के पूरे महत्व को बहुत कुछ जान कर भी कम जान पाया है, इस में कोई सन्देह नहीं।

बोतल

बोतल कहती तू तले देख ऊँची दृष्टि नहीं कर सकता।
बो-सदा विषैले बीज भरे ! पर आकृष्टि नहीं कर सकता ॥
तल का अभिप्राय रसातल है, गिर जाओ धरातल से नीचे।
बोतल पी-पी कर गिरे तले न उठे जमाने ने खींचे ॥
ना काम हुए सत्कर्म, शर्म से दया धर्म ने दृग मीचे।
गए सूख बगीचे सिंचे सिंचाए, आगे से हो गए पीछे ॥
फस गया कालिमा कीच में जो उज्ज्वल सृष्टि नही कर सकता।
बोतल के पानी में घुल-घुल कर कितने कुल के कुल बह गए।
बोतल से कन्व ऋषि मुनि सन्त सद् ग्रंथ सभी बचना कह गए ॥
हर ठौर दौर अब शराब का बे नकाब से नेता रह गए।
परमारथ की ले ओट, चोट बन गारत भारत को दह गए।
इस तरह का नेता, जनता में सुख की वृष्टि नहीं कर सकता ॥२॥
बोतल देवी की चढे भेंट, फिर देवीलाल करे तो क्या ?
हरियाणा मालामाल हुआ, उसको कंगाल करें तो क्या ?
भरमार से ठेकेदारों को ही, सुरा निहाल करे तो क्या ?
खादी में प्रतिवादी बन कर, नहीं इसकी पुष्टि कर सकता ॥३॥
स्मैक-अफीम-हीरोइन-सुल्फा, सब से खतरनाक-बोतल !
सरकार का अत्याचार, कार में फिरती भरे पाक बोतल।
ये शर्मनाक कैसा विधान ? बलिदान भी किए खाक-बोतल।
जनता के साथ मजाक कवि "व्याकुल" क्या इत्तफाक-बोतल !
विकराल व्याल विषधर कराल, नेता नहीं तुष्टि कर सकता ॥४॥
बोतल-कहती तू तले देख ऊँची दृष्टि नहीं कर सकता ॥

रचयिता—प्रकाशवीर व्याकुल

(पृष्ठ ३ का शेष)

वेद सब सत्यविद्याओं…

की उन्नति के विषय में भी मुले जो का कथन भ्रामक है। बृहद् विमान शास्त्र में कितने ही ऐसे यन्त्रों के निर्माण का उल्लेख है जिन के बारे में आधुनिक विज्ञान अभी तक अछूता है। वेदों की ११२७ शाखाओं में से कितनी ही अप्राप्य हैं, जिन को मुसलमानों ने जला कर नहाने के लिए पानी गरम किया था। महाभारत का युद्ध कुरुक्षेत्र के मैदान में हुआ और उसका वृत्तांत हस्तिनापुर में बैठे धृतराष्ट्र को सञ्जय द्वारा बताना क्या बिना वैज्ञानिक यन्त्रों के सम्भव हो सकता था? दोनों ओर की सेनाएँ यमुना आदि नदियों को कैसे पार कर गयी थीं, विचारणीय है।

रही स्वामी शकराचार्य लिखित "वैदिक गणित" की बात और अथर्ववेद के सोलह सूत्रों की। क्योंकि स्वामी जी जीवित नहीं हैं, इसलिए विवाद में पड़ने से कोई लाभ नहीं। इस पर विद्वानों को और अधिक खोज करनी चाहिये। कैलकुलस भी गणित की एक विधा है, जिसका अभी कोई अन्त नहीं है और विकास का कार्य जारी रहेगा, क्यों कि ज्ञान की कोई इति नही है। वेद तो सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। यह पढने वालों पर निर्भर करता है कि वे उसमे कितना और क्या ग्रहण कर पाते हैं। यदि कोई उस मे से कुछ भी ग्रहण नहीं कर पाता है तो उस में वेद का क्या दोष है? नोलूकोप्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य कि दूषणम् की कहावत भी चरितार्थ होती है। इसलिए मुले जी से निवेदन है कि वे भारतीय दृष्टिकोण से ही वेद पढें, न कि पश्चिमी दृष्टिकोण से। पश्चिम वालो ने जो भी भौतिक उन्नति की है उसका मूलाधार वेद ही है, भले ही वे इसका जिक्र न करें। क्योंकि ये सारी विद्याए किसी अन्य ग्रन्थ—कुरान, बाइबिल, जेन्दावस्ता मे नहीं हैं। ये ग्रन्थ सम्प्रदाय विशेष के हैं, सब के नही। वेद मानव मात्र के हैं। इस बात की पुष्टि काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में पढ़ने वाली एक मुसलमान कन्या के उत्तर से, जो उसने श्री आर्यभिक्षु जी को दिया था, पुष्टि होती है। घटनाक्रम इस प्रकार है—एक बार श्री आर्यभिक्षु जी वाराणसी गये और काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में वेद के प्राध्यापक श्री दयाशंकर मिश्र (१) के घर पर ठहरे। उन्होंने देखा कि कुछ कन्याए पण्डित जी के घर आ गयीं। आर्यभिक्षु जी ने पूछा—"पण्डित जी ये कन्याएं और वेद की कक्षा में! क्या बात है?" पडित जी बोले—"क्या करें दयानन्द ने आकर सब कबाड़ा कर दिया।" एक लडकी, जिसका नाम कात्यायनी था, को वेद की कक्षा में प्रवेश देने से मना कर दिया गया था। तब आर्यसमाज ने तीव्र आन्दोलन छेडा, जिस के परिणामस्वरूप उसको वेद की कक्षा में प्रवेश देना पडा और अन्य कन्याओं के लिए भी रास्ता खुल गया। तब पण्डित जी ने कहा कि यह सब कबाडा दयानन्द कर गया।' आर्यभिक्षु जी ने पूछा कि वेद पढ़ने वाली लडकियो में यह बुरका पहने कौन है? क्या यह भी वेद पढ़ती है? आर्यभिक्षु जी ने उस लडकी को पास बुला कर पूछा—'बेटी! तू यह बता कि तू तुम्हारा वेद क्यों पढ़ती है? उस मुस्लिम लडकी ने कहा—"देख पण्डित बात सुन। कुरान है मुसलमानों का, बाइबिल है ईसाईयों की और पुराण हिन्दुओं के, वेद किसी का नहीं। वेद तो सब का है। तो मुझे वह क्यों नहीं पढ़ना चाहिए?" जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है कि 'वेद देश कालातीत है। यह बात संसार को केवल महर्षि दयानन्द ने ही "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद को पढ़ने पढ़ाने और सुनने-सुनाने का मानवमात्र को अधिकार है" बताई है। वेद तो ज्ञान का अथाह सागर है, जो गोता लगायेगा, वही अनमोल मोती पायेगा। केवल किनारे पर बैठने मात्र से नहीं। मुले जी को दिल छोटा करने की आवश्यकता नहीं। चरैवेति-चरैवेति।

(पृष्ठ २ का शेष)

योग…

आदि गुणों की बढ़ती होने पर आत्मा बहिर्मुख होकर बाहरी जगत के शब्द, स्पर्श, रूपादि विषयों में फँसा रहता है अतः आत्मा अपने अन्दर प्रेरक रूप से स्थित अतीव सूक्ष्म परमात्मा के ज्ञान से वंचित रहता है। पुनः सत्वगुण की बढ़ती होने पर जब उसके चित्त की वृत्तियाँ अन्दर को लौटती हैं और वह अन्तःप्रेरक परमात्मा की प्रेरणाओं का अनुभव कर उसके चिन्तन ध्यानादि द्वारा उससे प्रेम और प्रीति का सम्बन्ध जोड लेता है तब ही उसके योग को प्राप्त होता है।

महर्षि चरक योग से सुख दुःखादि द्वन्द्वों की निवृत्ति का वर्णन करते हुए लिखते हैं। आत्मा का मन से, मन का इन्द्रियों से तथा इन्द्रियों का अपने विषयों से सयोग होने से सुख-दुःखादि की प्रवृत्ति होती है किन्तु मन के स्थिर हो जाने पर जब आत्मा अपने स्वरूप में स्थित हो कर इन्द्रियों के विषयों से उपराम हो जाता है तो दुःख-सुखादि निवृत्त हो जाते हैं तथा देह के रहते ही अलौकिक ऐश्वर्यों की प्राप्ति होती है—ऐसे योग को ऋषि लोग जानते हैं। भाव यह है कि चित्त जब तक बाहरी विषयों में आसक्त रहता है तब तक राग, द्वेष, मोहादि क्लेशों में फँसा रहता है। पुन जब सत्वगुण की वृद्धि से रज तम आदि गुणों के विकारों से ऊपर उठ कर अन्तर्मुख होता है तब सच्चे सुख, ज्ञान और ऐश्वर्य को पाकर निहाल हो जाता है। उपनिषदों में भी जहा तहां योग की चर्चा मिलती है। उन सभी चर्चाओं में पातंजल योग का यही सिद्धान्त ओत-प्रोत मिलता है कि जब मनुष्य बुरे कर्मों को छोड़ कर यमनियमों के पालन से अपने सामाजिक तथा व्यक्तिगत जीवन को पवित्र बना लेता है तो क्रमश सत्वगुण के बढ़ जाने से उसका चित्त राग, द्वेषादि क्लेशों तथा इन्द्रियों के बाहरी भागों से उपराम होकर अधिक से अधिक निर्मल, एकाग्र और प्रकाशित होता चला जाता है। अभ्यास, वैराग्य और ध्यान साधनाओं के अभ्यास से ऐसे चित्त में मानस प्रत्यक्ष की योग्यता भी आ जाती है। अन्त में क्लेशों की निवृत्ति से आनन्दित हुआ वह योगी सत्वगुण से उत्पन्न विलक्षण ज्ञान और सामर्थ्य आदि से भी विरक्त होकर, आसक्ति की अत्यन्त निवृत्ति और ईश्वर भक्ति की अत्यन्त वृद्धि से गुणों के सभी परिणामों से छूट कर [illegible] हो जाता है इसी को योग की [illegible] स्थिति कहते हैं। □

आर्यसमाज अशोक नगर में युवा चेतना सम्मेलन

आर्यसमाज अशोक नगर दिल्ली में वार्षिकोत्सव के अवसर पर युवा चेतना सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसकी अध्यक्षता श्री रामनाथ सहगल ने की। इस अवसर पर प० सच्चिदानन्द शास्त्री, डा० धर्मपाल, श्री सूर्यदेव, डा० शिवकुमार, प० यशपाल सुधांशु व श्री ओमप्रकाश आर्य ने उद्बोधन दिया। डा० धर्मपाल ने सन्तानों में उत्तम सस्कार भरने के लिए माता-पिता व आचार्य के कर्त्तव्य की ओर ध्यान आकृष्ट किया। उन्होंने आर्यसमाज के सत्सगों में अपने बच्चों को लाने का भी आह्वान किया। डा० शिवकुमार ने युवकों को आदर्श स्थापित करने के लिए क्या करना चाहिए, विषय पर उद्बोधन दिया। श्री सूर्यदेव ने आर्यसमाज अशोक नगर के द्वारा की गयी सेवाओं की सराहना की। उन्होंने बताया—आर्यसमाज अशोक नगर के अधिकारियों ने पजाब पीडितों की सहायता के लिए उल्लेखनीय कार्य किया है। प० सच्चिदानन्द शास्त्री ने आर्यसमाज की आवश्यकता व कार्य विषय लेकर प्रशसनीय उद्बोधन दिया, यह भी बताया कि आर्य युवकों ने हर चुनौती का सदैव जवाब दिया है। पं० यशपाल सुधांशु ने कहा—देश और धर्म व सस्कृति तीनों को युवकों की आवश्यकता है। यदि युवक नहीं संभला तो हमारा भविष्य उज्ज्वल नहीं। हमें अपने इतिहास को जानना चाहिए, अपने किशोरों और युवकों को भी जनाना चाहिए जिससे वे देश की चेतना को बल दे सकें। श्री राम नाथ सहगल ने डी०ए०वी० के द्वारा किये जा रहे सेवा कार्य का विवरण जनसाधारण के सामने प्रस्तुत किया।

इस अवसर पर प्रीतिभोज का भी आयोजन किया गया। इस वर्ष का कार्यक्रम बडा प्रभावशाली रहा। जनता का उत्साह भी दर्शनीय था।

आर्यसमाज सीताराम बाजार का वार्षिकोत्सव

आर्यसमाज सीताराम बाजार का वार्षिकोत्सव धूमधाम से सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर प० यशपाल सुधांशु द्वारा वेद कथा की गयी। कथा का कार्यक्रम बडा उत्साहजनक रहा। समाज के प्रधान श्री न्यादर मल के अनुसार इस वर्ष की उपस्थिति प्रशसनीय थी जो एक दशक से पहली बार देखने में आई। प० सुधांशु ने वेद के गूढ़ अर्थों को मधुर एव सरल शैली में मनोरजक प्रकार से प्रस्तुत किया जिसको धार्मिक जनता ने बढ़-चढ़कर सराहा। इस अवसर पर श्री गुलाबसिंह राघव के मधुर भजन हुए।

१० अप्रैल को विशेष सम्मेलन का आयोजन किया गया जिस में राष्ट्र रक्षा विषय पर विभिन्न वक्ताओं ने विचार व्यक्त किये। जिसमें स्वामी आनन्द बोध, स्वामी [illegible], डॉ० [illegible] आदि प्रमुख थे।


लाखों लोगों की पसंद
एम डी एच दंत मंजन
23 जडी बूटियो से निर्मित
आयुर्वैदिक औषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दंत सुरक्षा
दातो का दद, मुह की दुर्गन्ध
मसूड़ो की सूजन, ठडा गम
पानी लगना, मुह मे छाले होना तथा
दातो की अन्य बीमारियो का घरेलू इलाज
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
प्रतिदिन प्रयोग करें
अपने निकटतम
दुकानदार से खरीद
सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9/44, इण्डस्ट्रियल ऐरिया, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-110015 फोन 537987, 537341


अपने बालों को स्वस्थ, प्राकृतिक काला व चमकदार बनाइये और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी सुगंध से महकाइये।
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर
एम डी एच शिकाकाई पाउडर बालों की सीकरी दूर करता है तथा उन्हें प्राकृतिक काला, सुगन्धित व स्वस्थ बनाता है।
शिकाकाई रीठा, आंवला, हरड, बहेड़ा, चन्दन व अन्य सुगन्धित जडी बूटियो से बनाया गया एम डी एच शिकाकाई पाउडर एक अत्यन्त लाभकारी प्राकृतिक देन है। इसमे कोई रासायनिक पदार्थ नहीं है।
एम डी एच शिकाकाई पाउडर का आज से ही नियमित प्रयोग कीजिये।
निर्माता
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9/44 इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर
नई दिल्ली 110015
फोन 539609 537987 537341


आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
अजमल खान रोड
करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
फोन 582036 5715878
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
alignpoint

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१

R N No. 32387/77 Post in N D P S O on 14, 15-4-88 Licenced to post without prepayment, Licence No U 139

दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस न० यू १३६

मड़पा में इमाम हिन्दू बने ग्यारह मुसलमानों की शुद्धि

आर्यसमाज मडपा भागलपुर मे वार्षिकोत्सव के शुभ अवसर पर १८ फरवरी १९८८ को हजरत मौलाना करीमुद्दीन इमाम (मडपा) भागलपुर ने अपनी स्वेच्छा से अपने परिवार के ११ व्यक्तियो सहित सनातन वैदिक धर्म को स्वीकार किया। शुद्धि के पश्चात् मौलाना करीमुद्दीन का नाम प० कर्मवीर, रईस अहमद का नाम प० राजेन्द्र, नूरुन्नेसा का नाम निर्मला, जैबुनन्निसा का नाम जयदेवी। इसी तरह बच्चो का नाम भी वैदिक धर्म के अनुसार रखा गया। शुद्धि के उपरात प० कर्मवीर जी (पूर्व इमाम मडपा) ने अपने एक घण्टे के ओजस्वी भाषण मे बताया कि प० जयप्रकाश पूर्व इमाम की शुद्धि के बाद मैंने विरोध प्रकट करने के लिए सत्यार्थप्रकाश को पढना शुरू किया और जयप्रकाश जी से कई पत्र व्यवहार भी किये। परन्तु सत्यार्थप्रकाश ने मेरी आँखें खोल दी और मैंने महसूस किया, मुझे अपने आप को कीचड और दलदल से निकालकर एव कुरान के अन्ध-कार वाले अन्धविश्वास से निकाल कर सत्यार्थप्रकाश के प्रकाश में डालना चाहिए। मेरा विश्वास है कि सत्यार्थप्रकाश की तुलना मे किसी मजहबी ग्रन्थ को महत्व नही दिया जा सकता। सत्यार्थप्रकाश से हर मजहब के बारे मे जानकारी प्राप्त हो चुकी है। अब पूरा जीवन आर्यसमाज एव वैदिक धर्म की सेवा करूंगा। मुझे उम्मीद है कि आज मेरे दो सम्बन्धी जो किसी कारण से अपना शुद्धि सस्कार नहीं करा सके, वो भी जल्दी ही वैदिक धर्म के प्रकाश में आ जायगे।

देवेन्द्रसिंह आर्य
मन्त्री
आर्यसमाज मडपा
भागलपुर (बिहार)

(पृष्ठ १ का शेष)

निष्ठा व लगन

शिवकुमार ने आर्यसमाज के द्वारा की जा रही गतिविधियो का वर्णन किया। श्री ओमप्रकाश आर्य ने भी अपने विचार व्यक्त किए।

आर्यसमाज विशाखा इन्क्लेव में भी नवीन आर्यसमाज की स्थापना की गयी है। स्थापना के पश्चात् एक विशेष समारोह आयोजित किया गया जिसके अन्तगत श्री पृथ्वीराज शास्त्री की कथा आयोजित की गई। १० अप्रैल को विशेष समारोह में श्री सत्यदेव स्नातक एव ज्योतिप्रसाद के भजन हुए। श्री आचार्य हरिदेव ने प्रवचन किया।

डा० धर्मपाल, श्री सूर्यदेव एव प० सच्चिदानन्द शास्त्री भी इस अवसर पर पधारे। श्री सूर्यदेव ने समाज के प्रधान श्री यज्ञदत्त आर्य तथा मन्त्री श्री सत्यप्रकाश के उत्साह जनक कार्यों की प्रशसा की। श्री सूर्यदेव ने बताया कि आर्यसमाज विशाखा इन्क्लेव के अधिकारीगण बडी निष्ठा से इस नवीन कालोनी में आर्यसमाज के मन्तव्यों का प्रसार करने में तत्पर हैं।

दिल्ली में ये दो आर्यसमाज अभी हाल मे स्थापित हुई हैं और उत्साह से प्रचार कार्य करने में तत्पर हैं। सभा मन्त्री के अनुसार अभी कुछ और नवीन आर्यसमाजों की स्थापना सम्भावित है।

(पृष्ठ ४ का शेष)

मृत्यु स्वरूप...

प्रकार जन्म सदा मृत्यु से जुडी है। गीता में कहा है कि—जातस्य ध्रुवो मृत्यु ध्रुव जन्म मृतस्य च। अर्थात् जो उत्पन्न हुआ है उसकी मृत्यु निश्चित है और जो मृत्यु को प्राप्त हुआ है, उसका जन्म निश्चित है। वस्तुत जन्म होता है जिन्दगी का सफर, मौत बस रास्ता बदलती है।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिये श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक
ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
आर्य सन्देश
वर्ष १२ अंक २७ | रविवार २४ अप्रैल १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८९ | चैत्र २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर; १० पौंड

आठ हजार लोग गांव से भागकर बटाला पहुंचे

पंजाब से हिन्दुओं का पलायन फिर तेज

१४ परिवार आर्यसमाज दीवान हाल में आकर ठहरे

आतंकवाद के कारण अमृतसर एवं गुरदासपुर जिलों के ग्रामीण क्षेत्रों से लोगों का विशेषकर अल्पसंख्यक हिन्दुओं का पलायन नये सिरे से फिर तेज हो चुका है। यह पलायन १९४७ के देश-विभाजन के समय की याद ताजा करा रहा है। इन दोनों जिलों में प्रशासन का नाममात्र का दखल भले ही दिन में रहता हो परन्तु रात के अन्धेरे में यहां आतंकवादियों का साम्राज्य हो जाता है। उनके हुक्म के बिना पत्ता भी नहीं हिलता। पंजाब से आने वाली सूचनाओं से जो तस्वीर उभरती है वह भयावह है। पंजाब से आए लोगों के अनुसार हत्या की जितनी भी वारदातें होती हैं उनमें सुरक्षा बल तथा पुलिस तब घटना स्थल पर पहुंचते हैं जब उग्रवादी अपना काम करके फरार हो चुके होते हैं। हाल ही में केन्द्रीय रिजर्व पुलिस और सीमा सुरक्षा बल का और कुछ पंजाब में लायी गयी हैं। कच्ची बेस वाली बैंक शाखाओं पर भारत-तिब्बत सीमा सुरक्षा बल के जवानों का पहरा बैठाया जा चुका है अन्य नई व्यवस्था भी नई योजना के आधार पर भी की गई है। इसके बाद भी नित्य दस बीस और किसी दिन इससे भी अधिक लोगों की हत्या कर दी जाती है। अमृतसर और गुरदासपुर जिलों के संवेदनशील इलाकों से जो लोग अपना घर-बार छोड़कर आ रहे हैं उनका सरकार नाम के तन्त्र में से विश्वास उठ गया है। वह कहते हैं कि जब उनकी जानमाल की सुरक्षा प्रदान करने की शक्ति कहीं नजर नहीं आ रही तो वह सरकार कहें तो किसे कहें। राजनैतिक क्षेत्रों में अनुमान लगाया जा रहा है यदि सरकार ने इस संवेदनशील क्षेत्र में शीघ्र ही कुछ ठोस कदम नहीं उठाए तो भयंकर परिणाम हो सकते हैं जिसका परिणाम सारे देश को भुगतना पड़ सकता है।

इस माह के मध्य तक बटाला में ११०० से अधिक परिवार आ चुके हैं जिनकी सदस्य संख्या आठ हजार के करीब है। पठानकोट में ५०० से अधिक परिवार आए हैं। फतेहगढ़ चुड़िया में १००, कादिया में १३० परिवार आ चुके हैं। इसी प्रकार अमृतसर, तरनतारन और राधा स्वामी सत्संग ब्यास में भारी संख्या में ग्रामीण परिवार आ चुके हैं। अमृतसर और गुरदासपुर जिलों से दूसरे राज्यों को भी पलायन फिर से शुरू हुआ है। इस सम्बन्ध में अधिकृत आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। दिल्ली से प्राप्त सूचनाओं के अनुसार इस महीने दिल्ली प्रशासन से पंजाब से यहां आए ४०० परिवारों ने अपना पंजीकरण कराकर राहत की मांग की है।

आर्यसमाज दीवान हाल में इस माह १४ परिवार पंजाब से आकर ठहरे। इन परिवारों में छोटे बच्चों से लेकर वृद्ध व्यक्ति तक हैं। उनकी आंखों में भय और विषाद को गहराई तक देखा जा सकता है। ये पंजाब से बचते बचाते दिल्ली पहुंचे हैं। आर्यसमाज के अधिकारी उनके खाने और रहने की व्यवस्था कर रहे हैं। कुछ परिवारों को दिल्ली में व्यवस्थित किया जा चुका है। तीन परिवार इस लेख के लिखने से कुछ घण्टे पूर्व ही दीवान हाल पहुंचे हैं।

पंजाब से पलायन करने वाले जो लोग दूसरे राज्यों में पहुंच गए हैं उन के पूर्ण आंकड़े अभी प्राप्त नहीं हुए। यदि सबको मिलाकर देखा जाये तो आश्चर्य की सीमा न रहे। सरकार को तुरन्त भारी कारवाई कर इस समस्या का सामना करना चाहिए तथा आये हुए शरणार्थियों की उचित सहायता की जानी चाहिए। ●

पाक की कुटिल भूमिका दुर्भाग्यपूर्ण : बूटा सिंह

नई दिल्ली, १८ अप्रैल। भारत की एकता और अखण्डता को तोड़ने के लिए पंजाब में आतंकवादियों को सहायता व संरक्षण देने की पाकिस्तान की घातक भूमिका पर केन्द्रीय गृहमन्त्री श्री बूटा सिंह ने आज यहां गम्भीर चिन्ता व्यक्त की।

केन्द्र व राज्यों के पुलिस बलों तथा गुप्तचर एजेन्सियों के प्रमुखों के सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए उन्होंने कहा कि भारत का शान्ति व सेवी का प्रयास पाकिस्तान ने ठुकरा दिया और वैसी कोशिशें कभी जम्मू व कश्मीर में हुआ करती थीं वैसी ही अब पंजाब में भी करने की कोशिश हो रही है। हमारी उत्तरी सीमा पर पाकिस्तान की कुटिल भूमिका दिन ब दिन उजागर हो रही है।

गृहमन्त्री ने देश के विभिन्न भागों में दृष्टिगोचर हिंसा की राजनीति की सख्त शब्दों में आलोचना करते हुए कहा कि भारत की लोकतान्त्रिक प्रगति में बाधा पहुंचाने का सुनियोजित व आक्रामक प्रयास कुछ विघटनकारी शक्तियों से हो रहा है। विदेश में योजना बनाई जाती है और सुनियोजित प्रचार किया जाता है तथा घातक हथियारों की सप्लाई की जाती है।

उन्होंने आशंका व्यक्त की कि जिनीवा समझौते के फलस्वरूप अफगानिस्तान से रूसी सैनिकों की वापसी के बाद भारत की पश्चिमी सीमा पर तोड़ फोड़ की कार्रवाई और बढ़ सकती है।

श्री सिंह ने कहा कि अनेकता में एकता भारत की ताकत है लेकिन उसका दुरुपयोग लोगों को आपस में विभाजित करने के लिए किया जा रहा है।

इस गम्भीर समस्या से निबटने की खातिर सरकार द्वारा उठाये गये कदमों की विस्तार से चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि राजनीतिक स्तर पर की जा रही कार्रवाई के अलावा प्रशासनिक और पुलिस बल के स्तर पर भी काफी कुछ किये जाने की जरूरत है। जिला स्तर से लेकर ऊपर तक

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—डा० धर्मपाल 'सुमेरु' एम० ए०
प्रबंध सम्पादक—सूर्यदेव

अग्नि होत्र विधि का मूलाधार मन्त्र

लेखक—श्री प० वीरसेन जी वेदश्रमी वेदविज्ञानाचार्य
वेदसदन, महारानीपथ इन्दौर ४५२००१ (म०प्र०)

★

यजुर्वेद का तीसरा अध्याय अग्निहोत्र प्रकरण का है। उसका प्रथम मन्त्र अग्निहोत्र विधि का प्रदर्शक है। मन्त्र निम्न प्रकार से है—

समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम्। आस्मिन्हव्या जुहोतन॥
(यजुर्वेद अ० ३। म० १)

इस मन्त्र में तीन प्रमुख कर्मों का यज्ञ के लिए कथन किया गया है।

(१) समिधाओं से अग्नि को प्रदीप्त करो।

(२) उस प्रदीप्त अग्नि का घृत की आहुति प्रदान करते हुए सेवन करो।

(३) पुन उसमें विविध प्रकार की हविया अच्छी प्रकार से प्रदान करो।

क्रमश इन तीन प्रकार के कार्यों से यज्ञ पूर्ण हो जाता है। प्रथम कार्य के लिए समिधा की आवश्यकता है। अब यज्ञ के लिए कितनी समिधा होनी चाहिये इसका उत्तर मन्त्र में विद्यमान है। मन्त्र गायत्री छन्द में है। गायत्री छन्द त्रिपदा है। अत ज्ञात होता है कि तीन प्रकार की समिधाएँ होती हैं। १ सामिधनी २ इध्म ३ परिधि।

इन तीन प्रकार की समिधाओं की कुल सख्या का भी मन्त्र में समाधान है। गायत्री छन्द के इस मन्त्र में २४ अक्षर हैं अत तीनो प्रकार की उक्त समिधाए २४ ही होनी चाहिए। महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने सस्कारविधि मे तीनो प्रकार की समिधाओं की पृथक् पृथक् सख्या का निम्न प्रकार निदश किया है —(१) सामिधनी-तीन (२) इध्म काष्ठ १८ तथा (३) परिधि की ३, इस प्रकार +१८+३=२४ समिधा यज्ञ की होनी चाहिये।

सामिधनी समिधा की सख्या एवम लम्बाई के बारे में भी मन्त्र में समाधान है। गायत्री त्रिपदा होने से सामिधनी समिधा तीन ही हैं। गायत्री का प्रत्येक पाद या चरण ८।८ अक्षर का है अत सामिधनी समिधाय अष्टागुल प्रमाण की होनी चाहिए। यह मन्त्र में ज्ञात होता है। महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने सस्कारविधि मे सामिधनी समिधाओं की लम्बाई अष्टागुल प्रमाण की बताई हैं जो वेदसम्मत हैं। आठ-आठ अगुल की तीन समिधाओं की लम्बाई २४ अगुल हो गई जो गायत्री की कुल अक्षर सख्या है।

घृताहुति यज्ञ में प्रारम्भ से अन्त तक दी जाती हैं। यज्ञ में कितनी घृताहुति हो इसका ज्ञान भी मन्त्र में है। मन्त्र में २४ अक्षर हैं अत २४ घृताहुतियों के द्वारा यज्ञाग्नि का सेवन करना चाहिये। महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने अग्निहोत्र के लिए निम्न प्रकार की आहुति का विधान किया है—(१) अयन्त इध्म आत्मा० मन्त्रों से ५ घृताहुति (२) आघारावाज्यभागाहुति मन्त्रों से ४ घृताहुति (३) प्रात कालीन या सायकालीन मन्त्रो से ४ घृताहुति (४) व्याहृति सहित उभयकालीन ४ मन्त्रों से ४ घृताहुति (५) आपो ज्योती० मन्त्र से १ घृताहुति (६) यां मेधां देव० विश्वानि देव०, अग्ने नय० —इन तीन मन्त्रो से ३ घृताहुति (७) पूर्णाहुति मन्त्र से ३ घृताहुति —इस प्रकार ५+४+४+४+१+३+३+=२४ घृताहुति से अग्नि क्षेत्र सम्पन्न होता है।

मन्त्र का तीसरा पद तीसरे कार्य अर्थात हवि प्रदान करने का है। घृतातिरिक्त हवि प्रारम्भ से नहीं दी जा सकती है अत घृताहुति के समान सख्या में उसकी आहुति सम्भव नही है। पूर्णाहुति में भी घृतातिरिक्त हवि नहीं दी जाती है जैसा कि यज्ञ तत्त्व प्रकाश में तत पूर्णाहुतिहोम स चाज्यद्रव्येणैव के द्वारा केवलमात्र घृत से ही होम का विधान बनाया है। अर्थात् यज्ञ के प्रारम्भ में और अन्त में घृत की ही आहुतियां होती हैं शाकल्य की नहीं। महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने सस्कारविधि में सर्वं वै पूर्ण७ स्वाहा से जो तीन आहुतिया देने को लिखा है उस के लिए स्रुवा को घृत से भर कर देने को लिखा है। अत यज्ञ के प्रारम्भ और अन्त की जो केवल घृताहुतियाँ हैं उनके अतिरिक्त यज्ञ के मध्य भाग में १२ आहुतियां ऐसी हैं जिनमें घृत के साथ शाकल्य (हव्य सामग्री) की भी आहुतियां दी जाती हैं जो कि निम्न हैं :—

(१) प्रातःकालीन या सायकालीन अग्निहोत्र के चार मन्त्र सूर्योज्योति० आदि या अग्निर्ज्योति० आदि से
—४ आहुतियां

(२) व्याहृति सहित उभयकालीन चार मन्त्रों से —४ आहुतियां

(३) आपो ज्योती० या मेधां विश्वानि देव० अग्ने नय० आदि चार मन्त्रों से
— ४ आहुतिया

घृत एवम् सामग्री दोनो के साथ
१२ आहुतिया

इन्हीं १२ आहुतियो से अग्निहोत्र का प्रधान होम है। प्रधान होम म ही घृत के साथ शाकल्य की आहुति होती है। प्रधान होम के अतिरिक्त सामान्य होम के मन्त्रो में केवल घृत की ही आहुतिया होती हैं। परन्तु प्रधान होम प्रारम्भ करने के लिए उस से पूर्व चार आहुतिया आघारावाज्यभागाहुति की देना आवश्यक हैं। अतः उनको समाविष्ट कर लेने पर १६ आहुतियों से अग्नि होत्र की प्रधान विधि पूर्ण हो जाती है। ये आघारावाज्यभागाहुतियां केवल घृत की ही होती हैं जो कि अग्नये स्वाहा आदि ४ मन्त्रो से दी जाती हैं।

इस प्रकार निम्न १२ मन्त्रों से कुल १२ आहुतियां ऐसी हैं जिन में हव्य शाकल्य (सामग्री) का प्रयोग नहीं होगा एवम केवल घृत का ही प्रयोग होगा —

(१) अयन्त इध्म आत्मा से
—५ घृताहुति

(२) अग्नये स्वाहा० आदि मन्त्रों से
—४ घृताहुति

(३) सर्वं वै पूर्ण७ स्वाहा से
—३ घृताहुति

शाकल्य रहित —१२ घृताहुति

समिधाग्निं० इस मन्त्र में दुवस्यत पद का अर्थ है सेवन करो। किस का सेवन करो—अर्थात् अग्नि का जो मन्त्र का देवता है या यज्ञस्य देवम् मन्त्र पद से ऋग्वेद के प्रथम मन्त्र म कहा गया है। इसका सेवन, सेवा कैसे करो तो मन्त्र में पद है—अतिथिम्—अर्थात् अतिथिवत् इसकी सेवा करते हुए सेवन करो। अतिथि की सेवा कैसे करते हैं? उसकी एक विधि है जो विवाह सस्कार में वर के लिए की जाती है। उसी प्रकार से अग्नि रूपी अतिथि के प्रति भी करनी चाहिए। वह विधि मधुपर्क विधि है। उस के प्रथम आसन बैठने के लिए दिया जाता है। अग्नि के लिए आसन देना, उसको कुण्ड में स्थापित करना, उस में समिधा चयनादि तथा घृताहुतियों आदि से उसको प्रदीप्त करना आदि तक अग्निरूपी अतिथि का आसन दान करना मात्र ही है।

मधुपर्क विधि में दूसरी क्रिया अर्घ पाद्य एवम आचमन की है। यज्ञ में अतिथि रूप से आगत अग्नि के प्रति भी यह क्रिया— अदितेऽनुमन्यस्व आदि तीन मन्त्रों से तीन दिशाओं में जल सिञ्चन की क्रिया है। यह अर्घ पाद्य एवम आचमन के अनुरूप है। मधुपर्क विधि मे इस के पश्चात मधुपर्क को चारों दिशाओं में छिटकने का कार्य है। उसी के सदृश अग्निहोत्र में देव सवित प्रसुव यज्ञ० मन्त्र से अग्नि के चारों सुब ओर जल सिञ्चन या छिटकने की विधि है।

इसके पश्चात गोदान विधि है। यज्ञ में इस क्रिया के पश्चात गौ से निष्पन्न उत्पन्न घृत रूपी गोधन अग्नि को आहुति रूप में प्रदान किया जाता है। एवम अन्य, प्रकार की हविया प्रदान की जाती है।

महर्षि स्वामी दयानन्द जी वेदभाष्य में निम्न प्रकार लिखते हैं— जैसे गृहस्थ मनुष्य आसन, अन्न जल, वस्त्र और प्रिय वचनादि से उत्तम गुण वाले सन्यासी आदि का सेवन करते हैं, वैसे ही विद्वान लोगों को यज्ञ करना चाहिए। इस वाक्य में प्रियवचनादि का भी उल्लेख है। अर्थात यज्ञादि का सेवन करने के लिए हमें मन्त्रादि का उच्चारण करना भी आवश्यक है।

इस प्रकार उपरोक्त मन्त्र अग्निहोत्र की विधि का सम्यक रूप से प्रतिपादन कर रहा है।

भजनोपदेशक ने दान दिया

आर्यसमाज नया बास के उत्सव की समाप्ति पर श्री प्रकाशानन्द जी भजनीक ने अपनी पवित्र कमाई से ५१०००/- इक्यावन हजार की राशि नकद दान दी। इस धन से एक नेत्र हस्पताल उनके नाम से आर्यसमाज शिवाजी पार्क शाहदरा देहली में खोला जाएगा। पिछले वर्ष भी आपने २००००/- बीस हजार रुपये पुराने भजनीकों को मन्दिर मार्ग नई देहली में दिये थे।

ओमप्रकाश
मंत्री
आर्यसमाज नया बांस, दिल्ली-६

हिन्दू संगठन एक : पहलू अनेक

—प्रो० धर्मचन्द्र विद्यालंकार 'समन्वित'

आज जिस प्रकार से साम्प्रदायिक शक्तियां भारत में सबल होकर अपना प्रचण्ड रूप दिखा रही हैं इसको देखते हुए अब सभी हिन्दू संगठनों की एकता की आवश्यकता अनुभव करने लगे हैं। कुछ ऐसे मुद्दे हैं जिन पर बिना विचार किये आर्यसमाज एकाएक कहीं भी नहीं जुड़ सकता क्योंकि वह एक प्रबुद्ध चिन्तनशील धार्मिक सांस्कृतिक संगठन है। अतएव आज जब चारों ओर से एकता की बात चल ही रही है, तो हमें निम्नोक्त कुछ प्रश्नों को सामने रख कर उनका उत्तर खोज कर ही इस विषय में कदम बढ़ाना पड़ेगा। यहां ये प्रश्न क्या हो सकते हैं, हमें इन्हीं पर यहां विचारना है।

जब आज हिन्दू-संगठन की बात की जाती है, तो सर्वप्रथम तो हमें यह विचारना होगा कि क्या आज इसकी आवश्यकता भी है कि नहीं। दूसरे यह कि यदि हिन्दू-संगठन की नितान्त आवश्यकता है तो इसका स्वरूप और दिशा दृष्टि क्या हो? इन्हीं तथ्यों को आगे रख कर हमें सोचना पड़ेगा। पहले हम यह देख सकते हैं कि आज हिन्दू-संगठन की आवश्यकता किस प्रकार से है? वह इस प्रकार से है कि एक तो अल्पसंख्यकों के नाम पर भारत की सारी की सारी साम्प्रदायिक शक्तियां हिन्दुओं के विरुद्ध एक जुट हो रही हैं। अल्पसंख्यक आयोग नाम का ऐसा विष वृक्ष संवैधानिक रूप में यहां रोप दिया गया है जिसकी छाया आड़ में ये साम्प्रदायिकता के पैरोकार खुल कर अपनी राष्ट्र-द्रोहिता को अभिव्यक्त कर सकते हैं। सन् १९८० से पहले केवल ईसाइयों, मुसलमानों को ही अल्पसंख्यकों में गिना जाता था, लेकिन अब हमारे कुछ सिख भाई भी अपने आपको बाकायदा अल्पसंख्यक मानने और कहने लगे हैं। और इतना ही नहीं अल्पसंख्यकों वाली मानसिकता के अनुरूप हिन्दुओं के विरुद्ध विष वमन और राष्ट्रद्रोह की खुली बातें भी करने लगे हैं।

अल्पसंख्यकों के ऊपर भेदभाव (तिरस्कार) बतला कर ये लोग हिन्दुओं के विरुद्ध उन तथाकथित अल्पसंख्यकों को उकसा रहे हैं। विडम्बना तो यह है कि सिख गुरुओं ने जिन लोगों के विरुद्ध लड़ाइयां लड़ी थीं, आज हमारे सिख बन्धु उन्हीं को अपना परम-सहयोगी मान रहे हैं और अपने [illegible] हिन्दू भाइयों को बेगाने समझ रहे हैं। दूसरे सिख तो धार्मिक आधार पर अल्पसंख्यक हो भी नहीं सकते। इस सन्दर्भ में १९७८ का वह प्रसंग स्मरणीय है है। जब केन्द्र में जनता पार्टी की सरकार थी और अल्पसंख्यक आयोग के गठन की बात उस समय चली ही चली थी। स्वर्गीय चौधरी चरणसिंह जी उस सरकार में गृह-मन्त्री थे। वे कट्टर आर्यसमाजी विचारों के थे। तब एक सिख शिष्ट मण्डल उन से इस विषय में मिला। सिखों ने बात कुछ इस तरह से शुरू की थी कि चौ० साहब हम भी आपके जाट भाई हैं हमें भी अल्पसंख्यक आयोग में सम्मिलित कर लिया जाये। तो चौ० साहब ने दो अकाट्य तर्क उनके सामने प्रश्नों के रूप में रखे थे। उन्होंने कहा कि यदि आप मेरे इन प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर दे सकें तो आपको अल्पसंख्यक आयोग में सम्मिलित करने पर विचार किया जा सकता है। उन्होंने पहला प्रश्न यह रखा कि यदि तुम स्वयं को जाट कहते हो और मुझे भी वही मानते हो, तो जब जाट (वैदिक-धर्मी) इस देश में अल्पसंख्यक नहीं हैं तो आप कैसे हो गये? दूसरा प्रश्न था कि पुनर्जन्म का सिद्धान्त और कर्मफल का सिद्धान्त, ये दो वैदिक धर्म के मूलभूत सिद्धान्त हैं इनको हिन्दुओं के सभी मत-सम्प्रदाय मानते हैं। यदि आपके गुरु साहबान ने इन सिद्धांतों का कहीं खण्डन किया हो तो आप मुझे लाकर दिखायें या बताएं। यदि ऐसा नहीं है तो आपको किसी आधार पर अल्पसंख्यक नहीं माना जा सकता। सिखों के पास इन प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं था, वे अपना-सा मुंह लेकर वापस लौटे थे।

लेकिन कैसी विडम्बना है इस देश की कि उसी जनता सरकार में 'अल्पसंख्यक-आयोग' की रूपरेखा बनी और अब दोबारा कांग्रेस सरकार का गठन केन्द्र में १९८० में हुआ तो उसने विधिवत् रूप से इस अल्पसंख्यक आयोग को मान्यता देकर क्रियान्वित कर दिया। इस में सिखों को केवल सम्मलित ही नहीं किया गया, अपितु इसका अध्यक्ष भी एक साम्प्रदायिक सिख लेखक डा० गोपालसिंह को बनाया गया। आनन्दपुर साहब का प्रस्ताव खालसा तरुन और पथक कमेटी खड़कू जमात, मरजीवड़े और खालिस्तान की मांग तथा हिन्दुओं का खुला नरसंहार यह सब इस अल्पसंख्यक आयोग रूपी विष वृक्ष की ही डार-पात हैं। अस्तु।

आज अल्पसंख्यक आयोग की छत्र छाया में प्रकाश सिंह बादल और अब्दुल्ला बुखारी इकट्ठे बैठ कर अल्पसंख्यकों की हित-चिन्ता के नाम पर हिन्दुओं के विरुद्ध षड्यन्त्र रचते हैं। हमारे सिख भाई शायद गुरु गोविन्द सिंह के नौनिहालों के खून का सौदा कर रहे हैं। वे गुरुओं के बलिदानों को दफन कफन कर रहे हैं। १९४७ की लाहौर की इन घटनाओं को भी वे भूल जाते हैं, जब उन के इन्हीं तथाकथित हम-दर्दों और हमराहियों ने सिखों को गाजर मूली की तरह काटा था, और आज जिन हिन्दुओं को वे अपना दुश्मन समझ रहे हैं उन्होंने ही सिखों के नरसंहार का बदला ब्याज समेत चुकाया था।

दूसरा षड्यन्त्र अब हिन्दुओं के विरुद्ध यह रचा जा रहा है कि इन हिन्दुओं को भी आपस में तोड़ा जाये। यह षड्यन्त्र कोई आज नया नहीं है बहुत पुराना है। १९२३ में कांग्रेस का अधिवेशन आसाम के कोकनाडा नामक स्थान पर हुआ था। उस समय इस षड्यन्त्र की कलई खुली थी। कांग्रेस के मन्च से तब अली बन्धुओं ने यह प्रस्ताव रखा था कि सवर्ण हिन्दू हरिजनों के साथ अच्छा व्यवहार नहीं करते, इन्हें हिन्दू नहीं समझते, अतः हरि-जनों को मुसलमानों और ईसाइयों को आधा-आधा बांट कर लेने की अनुमति मिलनी चाहिए, तभी हम हिन्दुओं के साथ मिल कर आजादी की लड़ाई लड़ सकते हैं। तब लाला लाजपतराय और स्वामी श्रद्धानन्द जी ने प्रस्ताव का डट कर विरोध किया था। तभी उन्होंने दिल्ली में दलितोद्धार शुद्धि सभा की स्थापना की थी। महात्मा गांधी ने भी तभी से हरिजन बस्तियों में जाकर उन के साथ सम्पर्क बिठाना शुरू किया था क्योंकि अन्तरङ्ग रूप से वे भी इस प्रस्ताव के प्रबल विरोधी थे, लेकिन उन्होंने इसका विरोध हरिजनों को उचित सम्मान देकर व्यावहारिक रूप से किया। आज वही षड्यन्त्र फिर रचा जा रहा है। इतिहास अपने आपको दोहरा रहा है। तब जो यह काम शौकत अली कर रहे थे आज अब वही कार्य अब्दुल्ला बुखारी करने जा रहा है। इसका जीता जागता सबूत अभी अभी हुआ एक सम्मेलन है, जिस में अब्दुल्ला बुखारी प्रकाश सिंह बादल और बहुजन समाजवादी पार्टी के अध्यक्ष काशीराम साथ-साथ थे। और उन्होंने अब हरि-जनों को भी अल्पसंख्यक घोषित कराने की मुहिम चलाने का मूड बनाया है।

इस देश का साम्प्रदायिक मुसलमान समझता है कि हरिजनों को हिन्दुओं से कटते ही हिन्दुओं की वोट शक्ति आधी रह जायेगी और तब भारत में हमारी सरकार बनेगी। ऐसी विषम परिस्थितियों में आर्यसमाज जैसा राष्ट्रवादी सांस्कृतिक संगठन हिन्दू संगठनों की एकता से कैसे मुंह मोड़ सकता है। इस के लिए सर्वप्रथम तो मिल कर अल्पसंख्यक आयोग का विरोध करना होगा। दूसरे हमें अपनी सामाजिक संरचना की विसंगतियों को दूर करना होगा। महाराष्ट्र में आज अम्बेडकर की पुस्तक को लेकर वहां पर भी हिन्दुओं में दरार डाली जा रही है। हमें सर्वप्रथम ऊँच-नीच भेद-भाव के इरादों को पाटना होगा। यह कार्य आर्य-समाज ही सुचारु रूप से कर सकता है और उसने कुछ हद तक किया भी है। इस के लिए रोटी बेटी का व्यवहार अन्तर्जातीय बनाना पड़ेगा। हमें संगठन के साथ साथ ही अपने समाज-सुधार के कार्यक्रमों को भी जारी रखना है। अपने मूलभूत वैदिक सिद्धांतों की भी बलि नहीं देनी है। लेकिन आज संगठित हो कर इन चुनौतियों को भी ललकारना ही होगा। तभी आर्यसमाज का क्रांतिकारी स्वरूप उभर कर आ सकेगा। ●

महर्षि दयानन्द की स्पष्टवादिता

★

महर्षि दयानन्द से एक बार उन के एक भक्त ने प्रश्न किया—"महाराज! आप दलितों की सामाजिक स्थिति में सुधार क्यों चाहते हैं?" महर्षि ने उत्तर दिया—"क्योंकि इस के बिना समाज में वह चेतना न आ सकेगी, जिससे समाज के अङ्गभूत हर एक व्यक्ति के हृदय में स्वाभिमान और स्वदेशाभिमान की उत्पत्ति हो सकती है। इसके साथ ही समाज के निम्नवर्गीय लोगों के बिना जातीय और सामाजिक उत्थान होना भी असम्भव है। उधर स्वाभिमान और स्वदेशाभिमान के बिना देश का कल्याण भी नहीं हो सकता।"

कर्णवास में हिन्दुओं की धार्मिक व्यवस्था पर चोट करते हुए महर्षि ने स्पष्ट शब्दों में कहा—"गंगा-स्नान से शरीर तो शुद्ध हो सकता है, पर आत्मा निर्मल नहीं हो सकता। ईश्वर का अवतार नहीं हो सकता, क्योंकि वह सर्वत्र सदा ही विद्यमान है। मनुष्य द्वारा तराशी गई पत्थर की मूर्ति की पूजा करना निष्फल है। मरे हुओं का श्राद्ध करना व्यर्थ है मुक्ति अपने कृत शुभ कर्मों से ही मिल सकती है।"

एक दिन जब महर्षि सोये हुए थे, तो उनका एक नासमझ शिष्य उनके सिर की ओर पैर कर के सो गया। जागने पर महर्षि ने यह दृश्य देखा तो बाद में उस शिष्य को समझाया कि—"तुम आर्य हो, और प्रत्येक आर्य को वैदिक मर्यादा का पालन करना चाहिए, बिना बुलाये बोलना, बड़ों या गुरुजनों के बातों के बीच बोलना, अपने पूज्य और माननीय व्यक्तियों की ओर पीठ करना या पांव रख कर सो जाना, आर्य और वैदिक दोनों मर्यादाओं के प्रतिकूल है।

—एक दिन महर्षि गंगा के तट पर लेटे हुए थे, तो अचानक उनकी बगल से एक बड़ा सा मगरमच्छ निकल आया। संकट समीप देख महर्षि के एक भक्त प्यारेलाल दौड़े हुए आए और सावधान करते हुए बोले, "स्वामी जी! झटपट उठिए, एक बड़ा भारी मगरमच्छ आप के पास निकल आया है।" बिना हिले-डुले महर्षि ने कहा—"जब मैं इसका कोई अनिष्ट नहीं कर रहा, तो यह मेरा अनिष्ट भला क्यों करेगा?"

—हरिद्वार में महर्षि के एक भक्त ने एक दिन उन से कहा—"यदि आप अपनी पुस्तकों का अनुवाद करा कर फारसी में छपवा देवें, तो पंजाबादि प्रान्तों में जो लोग नागरी भाषा नहीं जानते, उन्हें आर्य-धर्म को जानने में बड़ी सुविधा हो जावे।" महर्षि ने उत्तर दिया—"अनुवाद तो विदेशियों के लिए हुआ करता है। नागरी के अक्षर थोड़े ही दिनों में सीखे जा सकते हैं। आर्य भाषा का सिखाना भी कोई कठिन काम है। फारसी और अरबी शब्दों को छोड़ कर ब्रह्मावर्त की सभ्य भाषा ही आर्य-भाषा है। यह अति कोमल और सुगम है। जो इस देश में उत्पन्न होकर अपनी भाषा को सीखने में कुछ भी परिश्रम नहीं करता, उस से और क्या आशा की जा सकती है? उस में धर्म की लगन है इसका भी क्या प्रमाण है? आप तो अनुवाद की सम्मति देते हैं, परन्तु दयानन्द के नेत्र तो वह दिन देखना चाहते हैं, जब कश्मीर से कन्याकुमारी तक, और अटक से कटक तक नागरी भाषा का प्रचार होगा। मैंने आर्यावर्त्त भर में भाषा का ऐक्य सम्पादन करने के लिए ही अपने समस्त ग्रन्थ आर्य भाषा में ही लिखे और प्रकाशित किये हैं।"

●

मधु-संचय

—साध्वी [illegible]

आत्म-निरीक्षण

रूस का पीटर महान् क्रोध बहुत करता था। क्रोध की स्थिति में वह हिता-हित को भूल जाता था। कहा भी है कि—

गुस्से से बढ़ कर कौन है
इन्सान का दुश्मन।
ईमान का रुतबे का,
वह ईमान का दुश्मन॥

पीटर का गुस्सा वास्तव में उसके सद्गुणों पर नकाब डाल देता था। एक बार वह साधारण बात पर क्रोधित हो उठा। उसकी महारानी तथा मन्त्रीगण, बड़ी कठिनाई से उसे शांत कर पाये। लेकिन कुछ समय बाद वह एकांत में जोर से रोने लगा। कारण पूछने पर उसने कहा कि—मुझे इस बात का अफसोस है कि मैं अपनी प्रजा को सुधार सकता हूं, किन्तु स्वयं को नहीं सुधार सकता। सचमुच पीटर का आत्मनिरीक्षण निम्नोक्त स्वर्णसूत्रों की प्रेरणा देता है।

वाच युवर स्पीच, वाच युवर एक्शन, वाच युवर थॉट्स, वाच युवर कैरेक्टर, वाच युवर हैबिट्स

अपने भाषण पर चौकसी रखो अपने कार्यों पर ध्यान रखो, अपने विचारों का निरीक्षण करो, अपने चरित्र पर निगरानी रखो, अपनी आदतों पर पहरेदारी रखो।

दादूदयाल

दादूदयाल सन्त नहीं बने थे, तब की बात है। एक बार वे अपनी दुकान पर बैठे हिसाब करने में तल्लीन थे कि द्वार पर आये अपने गुरु जी को भी निहारने की फुरसत उनको नहीं थी। बाहर मूसलधार पानी पड़ रहा था। अचानक दादूदयाल की दृष्टि बाहर की ओर गयी। वे तुरन्त दौड़े और गुरुजी को छाती से लगा लिया। उनकी आंखों में आंसू आ गये। कहने लगे, 'क्षमा कीजिए, गुरुदेव अपने सांसारिक कार्यों में इतना अधिक डूब गया था कि आपको निहार नहीं पाया।

गुरु ने स्नेह से कहा, मैं थोड़े समय से ही यहां खड़ा हूं, परन्तु प्रभु तो अनंतकाल से तेरे दरवाजे पर खड़े परीक्षा कर रहे हैं कि तू उन्हें कब बुलाता है!' उस दिन से दादू के मन में बड़ा परिवर्तन आ गया। उन्होंने दुनियादारी त्याग दी।

● एक दिन ●

एक दिन तेरा जन्म लख, खुशी हुआ परिवार।
एक दिन तेरा कराया, नामकरण संस्कार॥
एक दिन पढ़ने के लिए, शाला दिया पठाय।
एक दिन जाकर के वेरा, दिया नाम लिखवाय॥
एक दिन दुलहा बनाया, एक दिन चली बारात।
एक दिन इस तन पर हुई, नोटों की बरसात॥
पाकर के धन सम्पदा, फूला नहीं समाय।
एक दिन पत्नी आ गई, फंसा गृहस्थ में जाय॥
एक दिन काले बाल थे, गई सफेदी आय।
विदा जवानी हो गई, रहा बुढ़ापा छाय॥
एक दिन मन मस्त हो गई, हुआ काल विकराल।
छूट गई धन सम्पदा, ले गया प्राण निकाल॥
जिस काया को रखा था, नहाय धो खूब सजाय।
एक दिन यह काया तेरी, मिट्टी में मिल जाय॥
एक दिन तन मुर्दा तेरा, एक दिन छोड़ शरीर।
एक दिन अर्थी धर पड़ा, देखा मृतक शरीर॥
एक दिन यहां से जायेंगे, सब को जा [illegible]।
[illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible], [illegible]॥
एक दिन [illegible] होगा, [illegible] के दरबार।
एक दिन सब छूट जायेंगे, नाते रिश्तेदार॥
एक दिन [illegible] [illegible], [illegible] जायेगी [illegible]।
एक दिन [illegible] [illegible] है, [illegible] [illegible]॥

रचयिता—[illegible]

महर्षि दयानन्द और शारीरिक उन्नति

—कृष्णपाल शिक्षक आर्य वीर दल दिल्ली प्रदेश

"समय और समुद्र की लहरें किसी का इन्तजार नहीं करती हैं।"

ऐसा आज हम सब "आर्यजनों" के साथ हो रहा है। क्योंकि एक समय था जब कि आर्य लोगों की गवाही में अदालत को बड़ी आस्था थी। वे लोग सत्य का आचरण करते थे। उन्होंने पतञ्जलि द्वारा बताये योग का अभ्यास कर के अपनी आत्मिक बल को बढ़ाया था।

अब कि आर्यसमाज का नियम है ससार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

इस नियम को सभी जानते हैं परन्तु हमने दो कार्य छोड़ दिये, जो कि महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने बताये, और सभी एक कार्य के लिए (सामाजिक) जुट गये। जिस कारण से इस समय बड़ी भारी समस्या है।

पतञ्जलि जी कहते हैं

तप स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि क्रियायोग।

जो सर्दी-गर्मी, भूख-प्यास तथा सुख-दुःख की तपस्या नहीं करता तथा स्वाध्याय नहीं करता। वह कार्यों में उन्नति नहीं पा सकता। इसलिए आज समय है कि पहले अपनी शारीरिक उन्नति करें जब तक शारीरिक उन्नति नहीं तो आत्मिक उन्नति नहीं जब आत्मिक नहीं तो सामाजिक उन्नति नहीं हो सकती।

जिस प्रकार से यम नियम का पालन न करने पर आसन प्राणायाम नहीं कर सकते हैं ध्यान समाधि की तो बात बहुत दूर की है।

जैसा कि स्वामी दयानन्द जी ने किया था। पहले शारीरिक व आत्मिक उन्नति की फिर सामाजिक उन्नति की। इसलिए स्वामी जी को जिसने देखा व सुना वह उनकी बातों व कार्यों को करने का दीवाना हो जाता है और कार्यक्षेत्र में सब कुछ छोड़ कूद पड़ता था।

लेकिन आज शारीरिक व आत्मिक उन्नति न करने से सामाजिक उन्नति का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। जब कि वे अकेले वे समाज का सुधार किया अब हम करोड़ों व्यक्ति कार्यक्षेत्र में है। फिर भी स्वामी जी जितना कार्य हम नहीं कर रहे।

स्वामी जी ने कहा कि परोपकार और परहित करते समय मान अपमान और पराई निन्दा का परित्याग करना पड़ता है। क्योंकि इसके बिना सुधार नहीं हो सकता।

लेकिन आज निन्दा करते व सुनते थकते नहीं, क्योंकि शारीरिक आत्मिक उन्नति नहीं की है। योग साधना के द्वारा शारीरिक, आत्मिक उन्नति करो, फिर मान अपमान सहने की शक्ति आयेगी तभी समाज का सुधार किया जा सकेगा। ●

ओ आर्य जवानों ! भारत का रचना है नव इतिहास तुम्हें !

प्रज्ञावाद की आंधी का करना है सत्यानाश तुम्हें।
ओ आर्य जवानो ! भारत का रचना है नव इतिहास तुम्हें ॥
तुम कोटि [illegible], तुम कोटि चरण, तुम कोटि [illegible] तुम कोटि कर्ण,
तुम कोटि [illegible], तुम कोटि [illegible], तुम कोटि [illegible], तुम कोटि पर्ण,
तुम क्यों [illegible] हो फंसे, तुम बार पार उघड़े [illegible],
तुम [illegible],
[illegible] के बोल-चाल, [illegible],
[illegible] पर, विवादों के, [illegible],

त्रिपुरा का बंटाढार हुआ, पंजाब झुलसता जाता है,
दहका है दार्जिलिंग दुखिया, कश्मीर सहमता जाता है,
कुछ देर बुद्ध, बापू तज कर, बनना है जयी सुभाष तुम्हें !
ओ आर्य जवानो ! भारत का रचना है नव इतिहास तुम्हें !!

देवराला की रूप कुंवर-सी, विधवाएँ फूंकी जाती हैं,
भूखी नववधुएँ बालाएँ बेची औ लूटी जाती हैं,
शिव, राम, कृष्ण परदेशों में अब भीख मांगते फिरते हैं,
'चक्मा' बेचारे फुकते हैं, हिन्दू निज धर्म बदलते हैं,
अरबों के पेट्रो-डालर से, इस्लाम पनपता-पलता है,
मिशनरियों की शह पा कर के, ईसाईस्तान सँभलता है,
हिन्दी बेचारी वनवासिन, संस्कृत को गया निकाला है,
दूसरी राजभाषा कह कर, उर्दू को गया उछाला है,
अब शुद्धि सञ्जीवन बूटी का भरना है ओज-प्रकाश तुम्हें !
ओ आर्य जवानो ! भारत का रचना है नव इतिहास तुम्हें !!

या तो खुद को मत आर्य कहो, जय दयानन्द को मत बोलो,
लेखराम की जयकारों से, गुरुदत्तों का दाम न तोलो,
वेदों की बातें बन्द करो, मत धर्म-कर्म की कथा कहो,
गायें कटती हैं, कटने दो, मत देश राष्ट्र की व्यथा कहो,
भा०ज०पा० गहो, मा०क०पा० गहो, भा०लो०द० नीति अपनाओ,
या तुम बंधुआ मजदूरों के, फिर नये मसीहा बन जाओ,
धर्मार्य सभा, राजार्य सभा की चर्चा बेकार हो गयी,
'हंसराज' अब कहां रह गये ? 'लाजपतो'-ललकार खो गई,
श्रद्धानन्द सरीखों का क्या करना है फिर उपहास तुम्हें ?
ओ आर्य जवानो ! भारत का रचना है नव इतिहास तुम्हें ?

यदि आर्य स्वय हो तो जागो, 'सगच्छध्वं' को याद करो,
आतंकवाद की जड़ काटो, अन्यायी दल बरबाद करो,
अशफाकुल्ला को इज्जत दे अब्दुल हमीद को प्यार करो,
रसखान रहीमा के स्वर में, कविता का खूब दुलार करो,
चाणक्य-नीति का आश्रय ले, तुम कृष्ण भावना पर बल दो,
राघव की मर्यादा गह कर, भार्गवी नामना पर बल दो,
तुष्टिकरण फाड़ कर फेंको, मत वोट-बैंक की ओर तको,
तज भाट चारणों की लीला, शिवसाम्य-साधना में न थको,
टिक धरती पर निज हाथों में गहना है सब आकाश तुम्हें !
ओ आर्य जवानो ! भारत का रचना है नव इतिहास तुम्हें !!

तज भूमि, मन्दिरों के झगड़ों, आपस के वाद-विवादों को,
हो सके अगर तो पौरुष से, भ्रष्टाचारी कल्मष रोको,
सरकारों का मुंह अब न तको, निज अर्थ तन्त्र-योजना गढ़ो,
सामाजिक क्रांति-मशाल थाम, उद्देश्य-हिमालय ओर बढ़ो,
व्यायाम-योग के परिसर में, अब स्वास्थ्य-साधना करनी है,
कर के जन-जन का उर प्रवाह, बांहों में क्षमता भरनी है,
गलियों-कूचों की देख-भाल, खुद लेनी अपने हाथों में,
हर कुटी-भवन की रक्षा कर, कालिख न लगानी माथों में,
निस्सबल को सबल बनाकर, रखना है दृढ़ विश्वास तुम्हें !
ओ आर्य-जवानो ! भारत का रचना है नव इतिहास तुम्हे !!

अब मद्य-निषेध सफल होगा, सत्याग्रह-शांति-प्रसारण से,
हर कार्य जोड़ने का अवसर, उपकरणों से पालित कारण से,
योग्य रहे बेकार भार तो शिक्षा-दीक्षा की क्या महिमा ?
भूखों मरते विवश लोग, तो अर्थ सम्पदा की क्या गरिमा ?
गुरुकुल, डी०ए०वी० कालेज से, परिसर न अगर कुछ भी बदला,
समझना यही होगा तब तो, अवशिष्ट अभी दूषण गँदला,
यदि दूषण बना प्रदूषण तो, संस्कृति का प्रासाद ढहेगा,
शिव न रहेगा, सत्य न होगा, सुन्दर बन बकवाद रहेगा,
सारी बातों पर चिंतन कर, पलना है हो युग श्वास तुम्हें !
ओ आर्य-जवानो ! भारत का रचना है नव इतिहास तुम्हें !!

—धीरेन्द्रदत्त शुक्ल
महाराणा प्रताप [illegible] विद्यालय
पो० तिकुनिया-२६२९०६
जि० खीरी (उ० प्र०)

यज्ञशाला का उद्घाटन

दिनांक ३।४।८८ को वेद मंदिर आर्यसमाज ब्रह्मपुरी, भगत सिंह मोहल्ला, न्यु उस्मानपुर, दिल्ली ५३ की नवनिर्मित यज्ञशाला का उद्घाटन आदरणीय स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने किया। यज्ञशाला का निर्माण दानवीर महाशय कल्याण दास जी ने अपनी शुभ कमाई से कराया। शाहदरा क्षत्रीय आर्य प्रतिनिधि उपसभा द्वारा यहा पर आर्यसमाज स्थापना दिवस भी मनाया गया। जिस मे सभी क्षत्रीय आर्यसमाज उपस्थित थी।

इस अवसर पर स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने महाशय कल्याणदास का फूल माला से स्वागत किया तथा यज्ञशाला की महत्ता पर प्रकाश डाला। स्वामी जी ने योग की परिभाषा को बडे ही सरल ढग से समझाया तथा योग द्वारा मुक्ति पर प्रकाश डाला। उन्होंने हिन्दू धर्म मे उत्पन्न हुई कुरीतियो की भी चर्चा की। उन्होने अपनी नेपाल यात्रा पर भी प्रकाश डाला तथा बताया कि नेपाल मे आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार बढता जा रहा है। इस अवसर पर आदरणीय श्री सच्चिदानद शास्त्री श्री सत्यप्रिय आदि विद्वानो ने भी वेद की महत्ता पर प्रकाश डाला। श्री वेद व्यास जी के मधुर भजन हुए। आर्यसमाज की ओर से ऋषि लगर का आयोजन किया गया। उत्सव की सफलता पर आर्यसमाज के मन्त्री श्री किशन आर्य ने सभी विद्वानो तथा श्रोताओ का आभार प्रकट किया।

श्रीकिशन आर्य
मंत्री

वेद गोष्ठी सन्पन्न

नई दिल्ली विगत ३ अप्रेल को स्वामी विद्यानन्द सरस्वती जी की अध्यक्षता मे वेद-संस्थान नई दिल्ली द्वारा 'रुद्र' तत्व पर आयोजित 'वेद संगोष्ठी' का समापन हुआ। आपने अपने अध्यक्षीय भाषण में वेदो पर प्राचीन काल से लेकर अब तक के हुए कार्य पर विहगम दृष्टिपात करते हुए वेदो के महत्व पर प्रकाश डाला।

विषय प्रवतन करते हुए शोध निदेशक डॉ० फतहसिंह ने अथर्ववेद के व्रात्यकाण्ड के प्रतीकवाद को स्पष्ट करते हुए बताया कि किस प्रकार इस काण्ड मे निहित जीवन दर्शन हमारे गणराज्य को वास्तविकता प्रदान कर सकता है।

यह संगोष्ठी २ अप्रेल को प्रारभ हुई थी, जिसका उद्घाटन राज्य सभा सदस्य माननीय धर्मचन्द्र प्रशान्त ने किया। उन्होने वेद और संस्कृत को भारतीय संस्कृति का मूलाधार बताया। संस्कृत को सभी भाषाओ की जननी बताते हुए उन्होने शिक्षा में उसे समुचित स्थान देने पर बल दिया।

संगोष्ठी की समापन वेला मे डा० सत्यकाम वर्मा ने कहा कि वेद सार्वभौम मानवजाति की अमूल्य सम्पदा है।

देश के विभिन्न भागो से आए हुए लगभग ६० वैदिक विद्वानो ने इस संगोष्ठी में भाग लिया। शोध-पत्र पढने वालो में महिलाओ की अच्छी सख्या थी।

योगेन्द्र वधवा
जन प्रचारमन्त्री

आर्यसमाज जंगपुरा विस्तार में वर-वधू खोज सुविधा केन्द्र

पिछले कुछ महीनो से सुयोग्य एवम कुशल कार्यकर्त्ताओ द्वारा वर-वधू खोज केन्द्र के माध्यम से इस समाज ने एक वैज्ञानिक ढग से सामाजिक सहायता करने का बीडा उठाया हुआ है और यह सामाजिक गतिविधि समय की माग भी है। प्रतिदिन साय ६-०० से ७ ०० बजे (सिवाय रविवार) तथा रविवार दोपहर २ ०० से ४-०० बजे इच्छुक भाई बहन सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं। यह सेवा पूर्णतया नि शुल्क है।

आर्य मित्र बजाज
मन्त्री

पता परिवर्तन

श्री सत्यपाल मधुर, आर्य भजनोपदेशक, पुरोहित आर्यसमाज पजाबी बाग, ने अपना निवास बदल लिया है। अब उनके मकान का पत्र-व्यवहार का पता निम्न प्रकार है—

श्री सत्यपाल मधुर
सी-१८७, अवन्तिका, सक्टर-१
दिल्ली-११००८३

बजट

कीमते पहिले बढा कर
पेश होता है बजट।
शान से काजल लगा कर,
पेश होता है बजट ॥
खोजते से भी गरीबो,
को मिलेगा कुछ नहीं।
अब रहीसी हाथ से ही,
पेश होता है बजट ॥
अब तो कम्प्यूटर लगा कर,
पेश होता है बजट ॥
'भी' बहुत घाटा दिखा कर,
पेश होता है बजट।
आज भी सब को बराबर,
मानती सरकार है।
पर किसानो के लिए ही,
पेश होता है बजट ॥
साल में एक बार केवल,
पेश होता है बजट ॥
पर हमारा साल भर का,
'फेल' होता है बजट ॥
पायकर, बोनस, बचत की,
है नहीं सीमा अभी।
इसलिए अब [illegible]
फेल होता है बजट ॥

—[illegible]

महात्मा हंसराज जी

महामनस्वी तप पूत और हंस समान धवल उज्ज्वल ।
हंसराज जी का चरित्र है अनुपमेय प्रेरक पलपल ।।
आदर्शों से ओतप्रोत है धन्य हुआ जिस से भूतल ।
मात-पिता भी धन्य और है धन्य आज वह जन्मस्थल ।।
नैतिक शिक्षा का विकास विद्यालय में कर दिखलाया ।
दयानन्द एंग्लो वैदिक विद्यालय लवपुर खुलवाया ।।
किया समर्पित तन, मन, धन सर्वस्व इसी के कारण था ।
नवयौवन में किया पदार्पण तभी किया भीष्म प्रण था ।।
सादा वेश, फकीरी बाना ही उनका आभूषण था ।
अपरिग्रह अपनाया सचमुच तोड़ा भव का बन्धन था ।।

× × ×

जल में सरसिजसम विचरे, निष्काम कर्म वह करते थे ।
हंसराज जी परदुखकातर, जन जन का दुख हरते थे ।।
अति विनम्र और सरल प्रकृतिधर कुछ अभिमान न करते थे ।
न जाने अरमान कि कितने उनके उर में पलते थे ।।
अद्भुत तेज अनुपम प्रतिभा सेवाव्रती अनन्य हुए ।
सरल सुमन अति सौम्य यशस्वी त्यागी वीर प्रणम्य हुए ।।
महापुरुष उनके से तो जगती में लखो नगण्य हुए ।
सच्चे संत तपस्वी वैरागी बन जग में धन्य हुए ।।

× × ×

जहां जहां दुर्भिक्ष काल की करुण छाया मंडराई ।
वहां वहां ऋषि दयानन्द की सेना लेकर पहुंचाई ।।
देश-जाति को संकट से थी मुक्ति उन्होंने दिलवाई ।
राम और लक्ष्मण सम सेवा की सुवृत्ति थी अपनाई ।।
ज्योति जगाई ऐसी जन जन को था विमल प्रकाश मिला ।
दूर हुआ अज्ञान तिमिर आलोक पुंज आभास हुआ ।।
पर-सेवा सत्संग सरलता शुचिता का आवास हुआ ।
हमें स्वसंस्कृति गौरव पर उनको लखकर विश्वास हुआ ।।

× × ×

डी० ए० वी० संस्था संचालक बिना शुल्क आचार्य बने ।
ऋषिवर के सच्चे अनुगामी अति विशुद्ध आचार्य बने ।।
लाखों ही शिशु उनके साये में पलकर विद्वान् बने ।
उच्च पदों पर हुए प्रतिष्ठित जग में विद्यावान बने ।।

× × ×

इसी हेतु प्रतिवर्ष शुभ दिवस उनका आर्य मनाते हैं ।
शिक्षा लें उनके जीवन से सबको पाठ पढ़ाते हैं ।।
यश से सुरभित वसुधा आमिण उनका था अनुपम व्यक्तित्व ।
ऐसी देन वे गये हमको पाकर नहीं अघाते हैं ।।
"शान्त" आर्यो ! भूल न जाना उनकी दी यह अद्भुत देन ।
आर्यसमाज फले फूले अब तुम्हीं निभाओ निज व्रत नेम ।।
देश जाति पर संकट छाया क्या न करोगे उसका क्षेम ।
क्या प्रमाद आलस्य त्यागकर पथ न अपनाओगे प्रेम ।।

—सत्यभूषण "शान्त" वेदालंकार, एम० ए०
एफ-२९, ग्रीन पार्क, नई दिल्ली-१६

R. N. No. 32387/77 Post in N.D P.S.O. on 21, 22-4-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० नं० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

पाक का कुटिल भूमिका…

(पृष्ठ १ का शेष)

अधिकारियों के बीच बढ़िया तालमेल की आवश्यकता पर उन्होंने विशेष जोर दिया। उन्होंने कहा कि पंजाब में हाल में जिला मजिस्ट्रेटों और पुलिस अधिकारियों के साथ हुई बैठक के अच्छे नतीजे निकले हैं।

हर प्रकार की यथासंभव केंद्रीय सहायता का आश्वासन देते हुए गृह मन्त्री ने कहा कि विभिन्न राज्यों की पुलिस में बेहतर तालमेल होना चाहिए ताकि राज्यों में उग्रवादी गतिविधियो का प्रभावी ढग से सामना किया जा सके। साथ ही सामाजिक व आर्थिक उत्थान के कार्यक्रमों पर भी कारगर ढग से अमल होना चाहिए। उन्होंने पुलिस व गुप्तचर प्रमुखो से कहा कि ऐसी हिंसात्मक कार्रवाई को जो सविधान के लिए खतरा उत्पन्न करे राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए न कि क्षेत्रीय समस्या के रूप में। पुलिस को प्रभावशाली होना चाहिए और उसे अधिकतम जन सहयोग प्राप्त करने में सक्षम भी होना चाहिए।

श्री एम०एल० लाहोटी

कलकत्ता आर्यसमाज के प्रसिद्ध कार्यकर्ता एवं समाजसेवी श्री एम० एल० लाहोटी इण्डियन प्लास्टिक फेडरेशन कलकत्ता के अध्यक्ष मनोनीत किये गये हैं।

श्री लाहोटी उच्च शिक्षित हैं तथा उद्योग क्षेत्र में आप ने अनेक उपलब्धियां अर्जित की हैं। आर्यसन्देश परिवार की ओर से बधाई।

प्रह्लाददत्त जी वैद्य गये

एक आह्लादित परिवार छोड़, बुन बुन कर तावे नये नये।
एक कथा व्यथा भव अनुभव की, नित नव वेना में बना बता।
रास्ता दिखा उत्कर्षण का, संघर्षण के नित पन्थ गहे ॥१॥

सूर्य सदृश वेदवादी ऋषि दयानन्द के हामी बन।
स्वामी बनकर सन्तति गति के, यति पथ पर चलते सतत रहे ॥२॥

तन का निदान, मन का निदान, धन का निदान करना होगा।
धन की धुन के दुर्योधन से बचना बस ये ही वचन कहे ॥३॥

बलिदानों का विकसित बसन्त सन्तों की विमल अमर गाथा।
वो क्या था कैसा था, सवाल की सरगम के प्रतीक बने ॥४॥

अधिकारों को धिक्कार न हो, परिवार न हो पथ से विचलित।
झंकार आत्मा की उनकी सुन व्याकुल "व्याकुल" कवि कहे ॥५॥

रचयिता—प्रकाशवीर व्याकुल
२५/१ रेलवे कालोनी, किशनगज, दिल्ली-७

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली नं० १०, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ : अक २८ | रविवार १ मई १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८९ | चैत्र २०४५ | दयानन्दाब्द—१६१
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक १५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश मे ५० डालर ३० पौंड

स्वामी आनन्दबोध सरस्वती का त्यागपत्र

सर्वसम्मति से अस्वीकार

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग सभा का निर्णय

गुरु शिष्य की परम्परा के आदर्शों के पालन पर स्वामी सर्वानन्द जी महाराज और आनन्दबोध सरस्वती को बधाई

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री स्वामी आनन्द बोध सरस्वती द्वारा अपने गुरु स्वामी सर्वानन्द जी महाराज को दिए गए त्यागपत्र पर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की १७ अप्रल की अन्तरंग सभा की बैठक में गम्भीरता-पूर्वक विचार किया गया। इस बैठक की अध्यक्षता सार्वदेशिक सभा के वरिष्ठ उप प्रधान प० रामचन्द्रराव वन्देमातरम् ने की। स्वामी आनन्द बोध सरस्वती सीनेट की बैठक में भाग लेने गुरुकुल कांगडी गए हुए थे।

अन्तरंग सभा ने स्वामी आनन्द-बोध सरस्वती के त्यागपत्र और उस पर विभिन्न आर्य नेताओ द्वारा स्वामी आनन्द बोध सरस्वती के प्रति निष्ठा, और आर्यसमाज के लिए उनकी अपरिहार्य आवश्यकता सम्बन्धी पत्रो तथा स्वामी सर्वानन्द जी महाराज द्वारा स्वामी आनन्द बोध सरस्वती को लिखे गए २३।३।८८ के पत्रो को भी ध्यान से सुना।

अन्त में लगभग ४ घण्टे के विचार विमर्श के पश्चात् अन्तरग सभा ने सर्वसम्मति से निम्न निर्णय लिया

निश्चय स० ११ स्वामी आनन्द-बोध सरस्वती ने अपने गुरु श्री स्वामी सर्वानन्द जी महाराज के केवल एक सकेत मात्र से कि व सभा के प्रधान पद से त्यागपत्र दे द, गुरु शिष्य परम्परा को ध्यान मे रखते हुए उनके आदेश का पालन किया। स्वामी आनन्द बोध जी का यह कार्य एक ऐतिहासिक घटना है, जिस से यह विदित होता है कि उन मे प्राचीन परम्पराओ के प्रति कितनी अगाध श्रद्धा है। इस के लिए स्वामी सर्वानन्द जी महाराज और स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती दोनो ही बधाई और धन्यवाद के पात्र हैं।

परन्तु प्रधान जी का यह कार्य—

(१) न वैधानिक है और न ही आर्यसमाज के लिए हितकर है।

(२) न ही सभा संस्थाओ के विधान के अनुकूल है।

क्योंकि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा वैधानिक रीति और सर्वानुमति से निर्वाचित प्रधान जी को अपने मतदाताओं की सहमति के बिना ऐसा कोई कार्य नही करना चाहिए था।

स्वामी जी ने सिर्फ त्यागपत्र दिया है। पद त्याग नही किया है। अपने गुरु के आदेशानुसार अन्तरग सभा के निर्णय तक अध्यक्ष के नाते कार्यरत रहने का सिर्फ वायदा ही नही किया अपितु उस नाते प्रधान पद पर कार्य भी करते रहे हैं।

प्रधान जी के त्यागपत्र देने के पश्चात् लोगो में जो प्रतिक्रिया हुई है, सम्भवत उसी कारण स्वामी सर्वानन्द जी सरस्वती ने दिनाक २३।३।८८ को प्रधान जी के नाम एक पत्र भेजा है, जिस से यह स्पष्ट होता है कि प्रधान जो सभा के हित मे जो उचित है उस प्रकार ही निर्णय ले।

अत अन्तरग सभा की यह बैठक निर्णय करती है कि स्वामी आनन्द बोध सरस्वती यथावत सभा प्रधान के नाते कार्यरत रहें। उनका त्यागपत्र अवध है और सभा की दृष्टि मे उसका कोई औचित्य नहीं है। प्रधान जी के नेतृत्व मे हमें पूर्ण विश्वास है और आज की परिस्थिति में उनका प्रधान पद पर स्थिर रहना अनिवार्य है।

इन कारणो से प्रधान जी से अनुरोध किया जाता है कि वह अपना त्यागपत्र जिसकी कोई उपयोगिता नही है वापस ले।

सच्चिदानन्द शास्त्री
मन्त्री

स्वामी सर्वानन्द जी महाराज का स्वामी आनन्दबोध सरस्वती के नाम पत्र

दयानन्द संस्कृत विद्यालय, दयानन्द मठ दीनानगर

सेवा मे | दिनाक २३।३।८८

श्री स्वामी आनन्द बोध सरस्वती जी महाराज
सादर नमस्ते

आर्य सार्वदेशिक प्रतिनिधि सभा के प्रधान पद से त्यागपत्र देने के लिए एकान्त में प्रेम से मैंने कहा था जिसे प्रेम से आपने तुरन्त स्वीकार किया। अब आप आर्यसमाज के हित को दृष्टि में रख जैसा आपका आत्मा स्वीकार करे, कीजिए।

भवदीय,
ह० सर्वानन्द सरस्वती

आर्यसमाज साकेत नई दिल्ली मे

धर्मार्थ औषधालय का उद्घाटन

आर्यसमाज साकेत नई दिल्ली द्वारा एक धर्मार्थ एलोपैथिक औषधालय का निर्माण किया गया है। २४ अप्रैल को इस औषधालय का उद्घाटन स्वामी आनन्द बोध प्रधान सार्वदेशिक सभा ने किया। यह औषधालय तीन लाख रुपये की लागत से तैयार किया गया है जिस में डा० बलदेव कौशल लन्दन निवासी ने यह धन खर्च किया है। इस धन के माध्यम श्री के० एल० 'वाही" ग्रटर कैलाशवासी रहे है। उनका यह योगदान सराहनीय है। इस अवसर पर तीन लाख और संग्रह हो जाने की घोषणा की गयी जिसका सभी जनो ने करतल ध्वनि से स्वागत किया।

समारोह से पूर्व प्रो० शेरसिंह ने ध्वजारोहण किया। समारोह की अध्यक्षता दिल्ली सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने की। स्वामी आनद

(शेष पृष्ठ ६ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०   प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

संयम

नागेन्द्रसिंह ठाकुर, बारग (किन्नौर) १७२१०७

यत् स-यमो न वि-यमः। वि-यमो यत् न स-यम ।

सयम क्या है ? इसका महत्व आप जानते हैं क्या ?

पानी का बहाव सदा नीचे की ओर होता है। इस में एक शक्तिशाली मोटर लगाएँ तो उस से पानी को ऊपर चढाया जा सकता है। मोटर जितनी अश्व शक्ति की होगी, पानी उतना ही ऊपर चढाया जा सकेगा। नदी के बहाव में चोटी से हाथी तक, सब प्राणी बहते हैं पर मछली नदी की धारा को चीर कर विपरीत दिशा मे बढ़ती है। इसी प्रकार, परमात्मा का परिचय पाना हो तो शरीर की सारी शक्तियों को एकाग्र कर के ऊर्ध्वमुखी बनाना होगा और समाज में फैली कुरीति, भ्रष्टाचार, अनीति से लोहा लेते हुए विपरीत दिशा में जाना होगा। ऐसा सयम द्वारा ही सम्भव है। सयम चार बातो का होता है (१) (इन्द्रिय), (२) अर्थ, (३) विचार, (४) समय।

१ इन्द्रिय-सयम इन्द्रियों को उनके विषयो से हटाना इन्द्रिय-सयम है। आप कहेंगे, यह क्या बात हुई, यह कैसे सम्भव है ? चलिए, इसी बात पर विचार करें।

कानो से आप क्या सुनते हैं ? किसी की निन्दा, चुगली, रेडियो, सिनेमा, टेलीविजन से गन्दे गाने ? या जीवन को ऊँचा उठाने वाले विचार, महापुरुषो की जीवन गाथाएँ ? वेदमाता कहती है, भद्र कर्णेभि शृणुयाम, कानो से भद्र को हमें सुनना चाहिए।

त्वचा का विषय है स्पर्श। त्वचा को सहनशील बनाइए, शीत और उष्ण के प्रति। इसे कृत्रिम ससाधनो से सजाइए नहीं। क्रीम, पाउडर, लिपस्टिक, सुगन्धित तैलो का प्रयोग न करे। साबुन के स्थान पर उबटन लगाए जो भारतीय परम्परा मे मगलमय माना गया है। त्वचा को हल्दी, बेसन तेल, दही, आदि से स्वच्छ करें। इस से मैल दूर होगा, शरीर के रोम कूप खुल जाएगे, कान्ति बिखरेगी, आप रोगो का घर बनने से बच जाएँगे, ढीले-सादे वस्त्र पहनिए। इस से आपके विचार ऊचे होगे। सादा जीवन, उच्च विचार,' इस महामत्र को अपने हृदय मे स्थान दीजिए।

नेत्रो से आप सिनेमा टेलीविजन के मोहक चित्र देखते हैं, न ? तभी तो आप अभिनेता, अभिनेत्री बनना चाहते हैं। विचारों को पवित्र, निश्छल बनाना है तो सृष्टि के कण-कण मे व्याप्त ब्रह्म को अनुभव कीजिए। पर नारी में माता के दर्शन कीजिए। वेद के उस वाक्य को स्मरण कीजिए भद्र पश्येमाक्षभि, आंखों से भद्र को हमें देखना चाहिए।

जिह्वा से आप बोलते हैं और रस का आस्वादन भी करते हैं। मुख से मधुर बोलिए। वेदमाता कहती है, जिह्वा से मधुमत्तमा, मेरी जिह्वा सब से मधुर हो। किसी को अपशब्द मत कहिए। प्रकृति, इन्द्रियां, सब मधुर हैं। आपने सुना नहीं, किसी कवि ने क्या खूब कहा है,

वाणी ऐसी बोलिए,
मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे,
आप भी शीतल होय॥

रसास्वादन का तो कहना ही क्या है ? सारा ससार लोभवश खट्टी-मीठी, बासी, दुर्गन्धित वस्तुओं पर टूट पड रहा है। तभी तो आज कैंसर, मधुमेह, हृदयाघात जैसी बीमारियों की बाढ आ गई है। जिह्वा की लपलपाहट को रोकिए अन्यथा यह आप के स्वास्थ्य और घर को चौपट कर देगी।

नाक से शुद्ध प्राकृतिक सुगन्ध लीजिए। दीर्घ श्वास ल, ताकि आपके रोम-रोम मे स्फूर्ति-उत्साह की आभा भर जाए।

हाथो का उपयोग आप सत्कर्मो मे कीजिए। आपके ऊपर समाज का ऋण है, उसे चुकाइए। आपने कहावत सुनी होगी कि दाएँ हाथ से इस प्रकार से दीजिए कि बाएँ को भी खबर न लगे, विज्ञापनबाजी से बचिए।

किसी को आपकी सहायता की जरूरत हो, आपके पाँव तेजी से वहां पहुचें। सत्संग के लिए पैरों का उपयोग कीजिए। मदिरालय, सिनेमा, थियेटरों की ओर आपके पैर न उठें।

वीर्य-सयम द्वारा अपना श्रेष्ठ प्रतिनिधि-रूप नागरिक समाज को दीजिए। सीमित और गुणी सतान प्रथम आवश्यकता है। अधिक सतान माता के स्वास्थ्य को बिगाड़ कर रख देगी। आपका जो धन सेवा के कार्यों मे लग सकता था अधिक सन्तान के भरण-पोषण में चुक जायेगा।

इन्द्रिय-सयम करेगे तो मन स्वय नियन्त्रित हो जायेगा।

२ अर्थ-सयम ईमानदारी और परिश्रम की कमाई कीजिए। धन कमाने पर कोई रोक नहीं है। रोक है उस के अपव्यय पर। धन का सयम कीजिए। उसे वासना, तृष्णा अहता की पूर्ति में मत लुटाइए। अपने धन का अश नियमित रूप से श्रेष्ठ कार्यों में लगाइए। वही आप की सचित पूजी है जो आपके काम आएगी।

३ विचार-सयम मन में कुविचारों को स्थान मत दीजिए। जीवन को उठाने वाले पवित्र विचार मन मे लाइए। इन पर चिन्तन और मनन भी कीजिए। इस के लिए उचित होगा कि आप नियमित रूप से स्वाध्याय की आदत डालें। इस से आप अपने मे परिवर्तन अनुभव करेंगे। आप की काया पलट जाएगी।

४ समय-संयम अपने समय को व्यर्थ की चुहलबाजियो, गपशप, शतरज, ताश, क्लबो मे गवाइए नहीं। अपनी दिनचर्या को निश्चित करें और उसका दृढता से पालन करे। याद रखें, आप के जीवन का एक एक क्षण बडा महत्त्वपूर्ण है, इसका सदुपयोग कीजिए।

तभी आप वेदमाता के वरद पुत्र कहलाने के अधिकारी होगे।

भजन

टेक—मेरे दाता के दरबार में सब लोगों का खाता
जैसा कोई कर्म करेगा, वैसा ही फल पाता।

१ क्या साधु क्या सन्त गृहस्थी क्या राजा क्या रानी
प्रभु की पुस्तक में लिखी है सब की प्रेम कहानी
बड़े-बड़े की जमा खर्च का सही हिसाब लगाता

२ नहीं चले उसके घर रिश्वत, नहीं चले चालाकी
उसके अपने लेन देन की रीति बडी है बाकी
पुण्य का बेडा पार करे और पाप की नाव डुबाता

३ बडा-बडा कानून प्रभु का बडी कडी मर्यादा।
किसी को कौडी कम नहीं देना किसी को दे न ज्यादा
इसीलिए तो इस जग का वो जगत् सेठ कहलाता

४ करता वही हिसाब सभी का एक आसन पे डटके
उसका फैसला कभी न पलटे लाख कोई सर पटके
समझदार तो खुश रहता और मूर्ख शोर मचाता।

५ अच्छी करनी करियो रे लाला कर्म न करियो काला
लाख आंख से देख रहा है तुझे देखने वाला
अच्छी करनी करे चतुर नर समय गुजरता जाता
मेरे दाता के दरबार में सब कर्मों का खाता।

—अमरसिंह आर्य
सांगानेरी गेट, जयपुर-३

यज्ञ की वैदिक पद्धति

लेख०—रमेश मुनि वानप्रस्थ

★

इस लेख में हम वैदिक पद्धति के अनुसार यज्ञ में डाली जाने वाली आहुति का परिमाण कितना होना चाहिए इस पर प्रकाश डालेंगे।

महर्षि दयानन्द ने सबसे पहले संस्कारविधि जो लिखी थी वह सम्वत् १९३२ कार्तिक कृष्ण पक्ष तीस शनिवार के दिन प्रारम्भ की थी। यह सर्वप्रथम मेरठ में १००० की सख्या में छपी थी। यह सस्कार विधि सौ वर्ष से भी अधिक पुरानी हो चुकी है जो या तो उपलब्ध नहीं है और जहां उपलब्ध है वहां जीर्ण शीर्ण अवस्था मे है। हमने इसे मगाने का बहुत प्रयत्न किया लेकिन हमे यह पुस्तक सस्कारविधि उपलब्ध नही हुई। हमको इस सस्कार विधि को देखने के लिए मेरठ जाना पडा और उसको देखा वह सस्कार विधि लगभग निगुणे परिमाण में थी जिसको महर्षि ने सक्षिप्त कर के सशोधित किया और यह सशोधित प्रति सम्वत् १९४० में आषाढ़ बदि १३ रविवार के दिन पूर्ण हुई जो बाद में कई स्थानों से प्रकाशित हुई। दूसरा सस्करण वैदिक यन्त्रालय अजमेर से प्रकाशित हुआ जिसकी २५वीं आवृत्ति में १६००० प्रतियां छपा। यह सस्कारविधि जिस पर महर्षि के हस्ताक्षर प्रिण्ट हैं वह प्रमाणित सस्कारविधि है। और इस लेख में व अन्य लेखों में जो प्रमाण अंकित हैं या किये जावेंगे उनका सन्दर्भ इसी २५वीं आवृत्ति की पुस्तक से दिया जावेगा। आज अनेकों सस्कारविधि अन्यान्य स्थानों से विभिन्न साइजों में प्रकाशित हुई हैं। उन में इन के सन्दर्भ उसी हिसाब से देखे।

महर्षि दयानन्द ने यज्ञ की विधि सस्कारविधि मे सामान्य प्रकरण में दी है और पन्ना ४६ पर ८-८ अगुल की तीन समिधा घृत में डुबा कर समिधाधान के बाद जो निर्देश हिन्दी में लिखा है। वह नीचे उद्धृत किया जाता है। "इन मन्त्रों से समिधाधान कर के होम का शाकल्य जो कि यथावत् विधि से बनाया हो, सुवर्ण, चांदी, कांसा, आदि धातु के पात्र अथवा काष्ठ-पात्र में वेदी के पास सुरक्षित धरें। पश्चात् उपर लिखित घृतादि जो कि उष्ण कर छान पूर्वोक्त सुगन्धि-आदि पदार्थ मिला कर पात्रों में रखा हो, उस में से कम से कम ६ मासा भर घृत वा अन्य मोहन भोगादि जो कुछ सामग्री हो अधिक से अधिक छटांक भर की आहुति देवें। यही आहुति का परिमाण है।"

"ओ३म् अयन्त इध्म आत्मा" की ५ आहुति देने से पहले महर्षि ने ऐसा निर्देशित किया है कि ऐसा चमसा बनाया जाना चाहिए जिसमें ६ मासा ही घृत आवे। इस से न्यून नहीं। इस सम्बन्ध में सस्कारविधि के सामान्य प्रकरण के पन्ना ४७ पर महर्षि का स्वय का विधि निर्देश उद्धृत किया जाता है। "उस घृत में से चमसा जिस में ६ मासा ही घृत आवे ऐसा बनाया हो, भर के नीचे लिखे मन्त्र से पांच आहुति देनी।"

अब यह प्रमाणित हुआ कि छ. मासे से कम आहुति नहीं होनी चाहिए हालांकि मोहन भोग, खीर, मोदक, चावल, भात इत्यादि की आहुति का परिमाण अधिक से अधिक महर्षि ने पाच तोला निर्धारित किया है लेकिन इस में हम कम से कम मानें तो भी इनकी आहुति घृत के परिमाण से कम नहीं होनी चाहिए। इस में आहुति का न्यूनतम परिमाण ६ मासा दिया है। जो आठ आने भर या आधा तोला होता है। इसलिए मोहनभोगादि की आहुति भी न्यून से न्यून छः मासा आठ आना भर या आधा तोला होनी चाहिए। इसी प्रकार से आहुति का परिमाण होगा तो यज्ञ से कामनाओं की सिद्धि अवश्य होगी। दो चार-बूद घी की आहुति एवम् कुटी हुई लकडी जिसे आजकल हवन सामग्री कहा जाता है उसकी आहुति देने से कामनाओं की पूर्ति सम्भव नहीं है और यज्ञ का यह वैदिक विधि विधान है।

हमने अन्य ग्रन्थों में आहुति का परिमाण देखा है। जो दो टक से कम नहीं होना चाहिए। दो टक आठ आने भर के बराबर होता है एक टक का परिमाण चार आने भर का है जो आयुर्वेद की पुस्तक नूतनामृत सागर के अनुसार चार आने भर होता है। आयुर्वेद के अन्य कई आचार्यों ने एक टक का परिमाण पांच आने भर दिया है। जो न्यूनाधिक महर्षि दयानन्द जी की मात्रा के ही बराबर माना जा सकता है। अगर हम एक टंक के पांच आने भर मानें तो आहुति का परिमाण साढे सात मासा होता है। इसमें अगर यजमान और सशोधन करना चाहें, तो वे साढे सात मासे घृत का चमचा बनवा ले। मोहन भोग, भात, मीठी खिचडी मोदक एवम् अन्य मधुर वस्तुओ का परिमाण स्वय निर्धारित कर लें और उसके लिए स्वर्णकारों वाले कांटे में वह वस्तु तोल कर यज्ञ से पहले परिमाण या मात्रा निर्धारित कर लें। हविष् की आहुति चाहे चमचे से दें या हाथ से। लकडी का चमचा भी बनवाया जा सकता है। 'हविष्' के अनुसार छोटी बडी चम्मच काम मे लायें। खीर के लिए जो चम्मच होगी उस में हलवा अधिक भी आ सकता है अत यज्ञ करने से पहले यजमान व पुरोहित इसे पूर्ण रूप से निश्चित कर लें कि आहुति छ मासा से कम नहीं होनी चाहिए। अन्यथा इस प्रकार के यज्ञ से जिस में आहुति का परिमाण कम होगा। उस से यजमान की कामना की पूर्ति सन्देहास्पद रहेगी। इसीलिए निश्चित सफलता के लिए आहुति की मात्रा में कमी नही करनी चाहिए। आहुतियों की सख्या भले ही कम कर दी जाए।

एक स्थान का हम उद्धरण देते हैं, जो महर्षि दयानन्द का पावन तीर्थ है। उसका नाम यहां उद्धृत करना ठीक नहीं होगा लेकिन उसकी आहुति की मात्रा उदाहरण के लिए बतलाना आवश्यक हो गया है। हम करीब दस दिन वहा रहे। वहा पहल भी दैनिक यज्ञ होता था और आज भी दैनिक यज्ञ होता है हम जिन दस दिन रहे हमने भी दैनिक यज्ञों में भाग लिया। वहा पर आर्यसमाजियों ने इस प्रकार का तांबे का चमचा बनवाया हुआ था जो एक हाथ के करीब लम्बा था लेकिन उसमें चार या पांच बूंद से अधिक नहीं आ सकता था। वह चार या पाच बून्द भी पात्र को टेढ़ा करके ही आता था। इस प्रकार की घृत की आहुति से क्या लाभ हो सकता है? यह भी ध्यान में लाना आवश्यक है कि वह सस्था करोडों की सस्था है यानी उसकी सम्पत्ति करोडों रुपये की है। जिस की लाखों रुपयों की सालाना आय है। यदि महर्षि आज होते तो वे जब अपने निर्देशों की अवहेलना देखते, तो उन्हें कितना दुःख होता।

यहां पर इस लेख में हमें यह सब विवादित नहीं करना है। बल्कि हम यज्ञ की सही विधि बताना चाहते हैं जिस विधि से करने पर यज्ञ के द्वारा यजमान की विभिन्न कामनाओं की पूर्ति होती है या हो सकती है। अब हम 'हविष्' के बारे में लिखेंगे कि आज कल की हवन सामग्री अवैदिकी है, और कुटी हुई सामग्री जो कि ५ या छ रुपये किलो वाली बाजार में या आर्यसमाजों में मिलती है। इस से यज्ञ सफल नही होता है। इस कुटी हुई लकडी का विधान न तो वेदो में है और न अन्य ग्रन्थों में। महर्षि दयानन्द की सस्कारविधि मे कहीं किसी भी स्थल पर किसी भी संस्कार में आज कल की हवन सामग्री की आहुति देने का विधान नहीं है। आज हम महाराजा दशरथ के पुत्रेष्टि यज्ञ के बारे मे सोचते हैं तो क्या उस युग में इस प्रकार की कुटी हुई सामग्री से हवन होते थे। और इस कुटी हुई लकडी के यज्ञ से श्रीराम का जन्म हुआ था। क्या विश्वामित्र ऋषि, वशिष्ठ ऋषि इसी कुटी हुई लकडी से यज्ञ करते थे जो यज्ञ की रक्षा के लिए श्री राम लक्ष्मण को मांग कर अपने आश्रम में ले गए थे

आज भी उस युग में जो राक्षस रहते थे और यज्ञो में विघ्न पैदा करते थे उनके कोई सीग नही थे। उन व्यक्तियो के वही दो हाथ थे। जो ऋषि विश्वामित्र के थे जो आज भी हमारे हैं। उन मे केवल यही भेद था कि वे दुष्टि प्रकृति के व्यक्ति थे। यज्ञो मे विघ्न पैदा करते थे। हम मे भी आज उस दुष्ट प्रकृति के लोग मौजूद हैं जिनको तलाशने में ज्यादा परिश्रम भी नहीं है। आज अनेकों पत्र पत्रिकाओं मे वे व्यक्ति प्रकाशित करते हैं—जैसे यज्ञ करना अधर्म है, अग्नि में अनेक जीव कीडे मच्छर आदि मरते हैं। इतने रुपये का घी और इतने रुपये की सामग्री अग्नि में भस्म कर दी गई। अगर वह आदमियों को खिलाने के काम आता तो अनेक व्यक्तियों का पेट भरता जैसे 'सरिता' पत्रिका के लेख। ऐसे भी व्यक्ति हैं जो हजारों

(शेष पृष्ठ ६ पर)

आर्यसमाज की दृष्टि में—

मर्यादा पुरुषोत्तम—भगवान् श्रीराम

लेखक—प० दिवेशचन्द्र पाराशर, दिल्ली

★

ओ३म् यतो यतः समीहसे ततो नोऽभयं कुरु।
शन्न कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः॥

यजु० ३६। म० २२।

अर्थ—हे परमात्मन्! जिस-जिस स्थान से तू सृष्टिक्रियार्थ सम्यक् चेष्टा करता है, वहां से हमारे लिए अभय कर तथा हमारे लिए कल्याण कर, हमारे सन्तानों, प्रजाओं और गौ आदि पशुओं के लिए भी उसी रचना स्थान से 'सर्वेषु देशेषु सर्वेभ्य. निर्भयान् करोतु' सब देशों में सभी प्राणियों से हमें निर्भय करो अभय करो।

———

वाल्मीकि रामायण में श्रीराम प्रमुख सत्पात्र, आदर्श पुरुष कहे हैं। श्रीराम का जीवन अत्यन्त आदर्श था। श्रीराम के जीवन से बहुत शिक्षा मिलती है। वस्तुत श्रीराम का आदर्श जीवन सर्व मर्यादाओं का ऐसा श्रेष्ठ उदाहरण है कि मर्यादा पुरुषोत्तम की उपाधि केवल उनके लिए ही रूढ हो गई। जब किसी को सुराज का उदाहरण देना होता है तो "रामराज्य" का प्रयोग किया जाता है। वैदिक धर्म के सिद्धान्त का भली भाति पूर्णरूपेण पालन करके प्रात स्मरणीय श्रीरामचन्द्र जी ने ही दिखला दिया था। यदि पूर्ण परिश्रम से ससार के समस्त जनों की जीवनियां एकत्रित की जाये, तो हमको उन में से किसी एक जीवनी मे वह सर्व गुणराशि एकत्र न मिल सकेगी, जिस से सर्वगुणागार श्रीराम का जीवन भरपूर है। आज हमारे पास भगवान् रामचन्द्र का ही एक ऐसा आदर्श चरित्र उपस्थित है जो अन्य महात्माओं के बचे बचाये उपलब्ध चरित्रों से सर्वश्रेष्ठ और सब से बढ़ कर शिक्षाप्रद है। आर्यों की पर्व पद्धति को विचारें और भगवान् राम के जीवन चरित्र को देखें तो एक ऐसा महान् सत्पात्र दिखाई देता है जो कि ससार में गुणों का सागर दिखाई देता है। महर्षि वाल्मीकि रामायण सस्कृत महाकाव्य में श्रीराम के सम्बन्ध में इस प्रकार लिखते हैं—

आहूतस्याभिषेकाय विसृष्टस्य वनाय च। न मया लक्षितस्तस्य स्वल्पोऽप्याकारविभ्रम॥

अर्थ—"राज्याभिषेकार्थ बुलाए हुए तथा वन के लिए विदा किए रामचन्द्र के मुख के आकार में मैंने कुछ भी अन्तर नहीं देखा।" आदि कवि श्री वाल्मीकि का यह शब्द-चित्र निष्काम कर्म वीर श्रीरामचन्द्र जी का ही यथार्थ चित्र था। श्री रामचन्द्र जी महाराज 'स्वकुल के दीपक थे, मातृमोद के वर्धक थे, पितृ निर्देश के पालन करने में पुत्र थे, ससार में एक पत्नीव्रत पालक थे, प्राणप्रिया भार्या-स्त्री के सखा-मित्र थे, सुहृद् दुख विमोचक मित्र थे, लोक सग्राहक थे, प्रजा के न्याय पालक सच्चे नरेश थे, सन्तान वत्सल पिता थे तथा ससार में वेद धर्म मर्यादा की व्यवस्था करने वाले थे अर्थात् सच्चे व्यवस्थापक थे, महान् परोपकारक थे, कौशल्योल्लासकारक थे, सूर्यवश प्रभाकर थे, पुरुष रत्न का एकत्र एकीकृत सन्निवेश थे, दशरथानन्दवर्धन थे, जानकी के जीवन थे, सुग्रीव सुहृद् अखिल-आर्य-निषेवित-पाद पद्म थे, साकेताधीश्वर थे और महाराजाधिराज थे।

भगवान् श्री रामचन्द्र जी में ही ये विशेषता पाई जाती हैं जो कि (त्रेता युग का) लाखों वर्ष पूर्व का इतिहास बता रहा है। श्री रामचन्द्र ने पितृ आज्ञा को शिर धर कर अयोध्या के महा साम्राज्य को त्याग कर और इसी महाकान्तार के दण्डकारण्य में निर्वासित होकर अपने प्रेम और सदुपदेशों से वानर जाति को अपना मित्र बनाया। ध्यान रहे हनुमान, सुग्रीव आदि बन्दर नहीं थे मनुष्य विशेष महान् पुरुष थे। सुग्रीव से सौहार्द की स्थापना करके उसके धन कलत्रापहारी भ्राता बाली को मारकर उसका राज्य सुग्रीव को दिया तथा अत्याचारी राक्षसों के दमनार्थ महावीर हनुमान के सेनापतित्व में उन्हीं वानरों की अपनी सगठन शक्ति से प्रबल और सुशिक्षित सेना सन्नद्ध की थी। उसी सेना की सहायता से लका द्वीप के अतुल बलशाली तथा महापराक्रमी राक्षस जाति के साम्राज्य का उसके अधीश्वर प्रबल प्रतापी अनाचारी रावण सहित विध्वंस किया था। किन्तु श्री रामचन्द्र सदृश आर्य दिग्विजेता का विजय साम्राज्य विस्तार व सम्पत्ति सञ्चयार्थ नहीं था। उन्होंने विजित प्रदेश में धर्म की विजय वैजयन्ती उडा कर भूतपूर्व लंकेश्वर रावण के अनुज धर्म परायण विभीषण को ही प्रजापालनार्थ अभिषिक्त कर दिया था। आर्य सभ्यता का प्रचार-प्रसार करके अपनी वनवास यात्रा की चौदह वर्षों की अवधि पूर्ण करके श्री रामचन्द्र जी स्वपैतृक राजधानी अयोध्या में लौट आये तथा स्वपितृ परम्परागत साकेत राज्य के सिंहासन पर अभिषिक्त होकर यावज्जीवन, जब तक जीवित रहे नृपति धर्म का पालन करते रहे। हम ऐसे मर्यादा पुरुषोत्तम आदर्श चरित्र की सन्तान हैं। इससे अधिक सौभाग्य और क्या हो सकता है।

वैसे तो वेदादि सत्य शास्त्रों का व वाल्मीकि रामायण एवं भगवान् कृष्ण के चरित्र प्रतिदिन कुछ समय निकालकर अध्ययन-मनन करना चाहिए। यज्ञ और दान का शुभानुष्ठान करना चाहिए तथा स्वपूर्व पुरुषों के पदचिह्नों पर चलते हुए धर्म के तीनों स्कन्ध—यज्ञ, अध्ययन और दान के विशेष आचरण में ही ऐसे शुभ दिनों को बिताना चाहिए, जिससे अपनी उन्नति करते हुए दूसरो की उन्नति भी कर सकें।

शिक्षा से आलोकित हृदय सुधारको और वैदिक धर्मावलम्बी आर्य महाशयों का कर्तव्य है कि लुप्तप्राय विशुद्ध वीर पूजा की प्रथा का पुनरुद्धार करें और आदर्श महापुरुषों की जन्मतिथियों और स्मारकों को शिक्षाप्रद प्रकारों से मनायें तथा सर्वसाधारण के लिए पथ-प्रदर्शक बनें। भगवान् राम का आदर्श जीवन पराक्रमी, शूरवीर, आदर्श शिक्षक बनने का सन्देश है। यदि आर्य जन कहलाने वाला राजा प्रजानर्मिणी भगवान् राम के राज्य शासन का, सुनीति का, सुशिक्षा का, वैदिक संस्कृति, सभ्यता का विचार कर, सदाचार, चरित्र को, महाराजाधिराज, न्यायप्रिय आदर्श राज्यप्रिय भगवान् राम के आदर्शों को अपनायें तो राजा की सन्तानवत् प्रजा सुख शान्ति प्रसन्नता का अनुभव कर सकती है। कहीं भी यह होने वाला आतंक हिंसक लोग नहीं रह सकें। रामराज्य के स्वरूप (वाल्मीकि रामायण युद्ध० १२८ में) का इस प्रकार वर्णन मिलता है—

न पर्यदेवन् विधवा
　　न च व्यालकृत भयम्।
न व्याधिजं भयं चासीद्
　　रामे राज्य प्रशासति॥
निर्दस्युरभवल्लोको
　　नानर्थं कञ्चिदस्पृशत्।
न च स्म वृद्धा बालानां
　　प्रेतकार्याणि कुर्वते॥
सर्वमुदितमेवासीत्
　　सर्वो धर्मपरोऽभवत्।
राममेवानुपश्यन्तो
　　नाभ्यहिंसन् परस्परम्॥
आसन् वर्षसहस्राणि
　　तथा पुत्रसहस्रिणः।
निरामया विशोकाश्च
　　रामे राज्य प्रशासति॥

अर्थात् राम के प्रशासन में विधवाएँ न रोती थीं, हिंस्र प्राणी का भी भय न था, व्याधि से उत्पन्न भय भी न था अर्थात् रोग भी अधिक नहीं सताते थे, प्रजाजन चोर डाकुओं से रहित था, कोई किसी के प्रति अनर्थ या पाप नहीं करता था। बूढे बडों के सम्मुख बालकों का देहान्त नहीं होता था, सब प्रसन्न थे, सब धर्मपरायण थे, राम के देखते हुए परस्पर हिंसा नहीं करते थे, अनेक पुत्र-पौत्रों से युक्त वश सहस्रों वर्षों तक चलते थे अर्थात् किसी का भी वंशच्छेदन न होता था, प्रजाजन रोग और शोक से अलग थे। राष्ट्र में विधवाओं की वृद्धि, सिंह आदि का भय, चोर डाकुओं का होना, व्यावहारिक अनर्थ, बाल मृत्यु परस्पर मारकाट, वंशच्छेदन आदि का कारण नेता राजा का अनुचित शासन होता है जो कि बालविवाह, वृद्धविवाह, जगलों का अनियन्त्रण, प्रजा की अरक्षा, चिकित्सा के लिए चिकित्सालयों और खानपान आदि की कमी दुर्व्यवस्थाओं के रूप में है। राजा को धार्मिक विद्वान्, सदाचारी, सुनीतिज्ञ स्वदेशीय विचारयुक्त भारतीय

(शेष पृष्ठ ६ पर)



गौरव स्तंभ

प्रेरक प्रसंग

प्रस्तोता—सत्यानन्द आर्य

पत्थर के बदले फूल

अमृतसर में एक बाल-पाठशाला के अध्यापक ने एक दिन अपने छात्रों से कहा कि आज स्वामी दयानन्द जी की कथा में चलेंगे। तुम अपनी झोलियों में ईंट, रोडे और कंकर भरकर मेरे साथ चलना और जब मैं संकेत करूं तो तुम कथा कहने वाले पर ईंट, रोडे और कंकर फेंक देना मैं तुम्हें लड्डू दूंगा। अबोध बालकों ने अपनी झोलियां भर ली और अध्यापक के साथ चल पड़े। व्याख्यान रात्रि के ८ बजे समाप्त हुआ करता था, जब कुछ-कुछ अन्धेरा हो गया तो अध्यापक का संकेत पाकर बालक महाराज पर ईंट, रोडे, कंकर फेंकने लगे। सभा में हलचल मच गई, किन्तु महाराज ने सबको शान्त कर दिया। पुलिस कुछ बालकों को पकड कर उन के सामने लाई तो बालक फूट-फूटकर रोने लगे। महाराज ने उन्हें ढांढस बंधाकर उन से ऐसा काम करने का कारण पूछा, तो उन्होंने सारा वृत्तान्त सच-सच कह दिया। तब महाराज ने बाजार से लड्डू मंगाकर बालकों को दिये और कहा कि तुम्हारा अध्यापक शायद तुम्हें लड्डू न दे, इसलिए मैं ही दिये देता हूं।

दयालु हृदय

स्वामी दयानन्द के हृदय में भारत के निर्धनों के लिए अपार दया निवास करती थी। एक दिन वे व्याख्यान दे रहे थे। उसी समय समाचार मिला कि भरतपुरिये चमारों के गंज मे आग लग गई है और उनके घास फूस के मकान जल कर राख का ढेर हो गये हैं। यह सुनते ही उनके हृदय में दया उमड आई। उनके त्राण तथा सहायता के लिए उन्होंने अपने पास से कुछ द्रव्य दिया और दूसरे लोगों को भी इसके लिए सबल प्रेरणा दी। उनके उपदेशों से तत्काल पर्याप्त रुपया एकत्र हो गया।

समय का मूल्य

महाराज के वेदभाष्य में कुछ कार्य करने वाले कर्मचारी थे। एक दिन वह समय से आधा घण्टा पीछे काम पर आये। महाराज ने उन्हें उपदेश दिया कि हमारे देश के निवासी समय का मूल्य नहीं जानते। उसे व्यर्थ खोते हैं, यही उनकी दुरवस्था का कारण है। समय का मूल्य उस समय ज्ञात होता है जब एक मरणासन्न रोगी को देखकर वैद्य कहता है कि यदि मुझे पांच मिनट पहले बुलाते तो यह न मरता। अब सहस्र रुपये भी व्यय करके नहीं बच सकता।

मेरा काम मन्दिरो को तोडना नही

जिन दिनों फर्रुखाबाद के बाजार को ठीक किया जा रहा था तब महाराज वहीं थे। उस बाजार के बीच में एक मढ़िया (मन्दिर) थी, जहां लोग धूप-दीप दिया करते थे। बाबू मदनमोहन लाल ने स्वामी दयानन्द से कहा कि स्काट साहब आपकी बहुत मानते हैं, उन से कह कर मढ़िया को हटवा दीजिए। स्वामी जी ने उत्तर दिया कि मेरा काम लोगों के मनो-मन्दिर से मूर्तियों को निकलवाना है, ईंट पत्थरो को तोडना नहीं है।

परमेश्वर से बड़ा कोई नही

एक दिन महाराज आर्यसमाज लाहौर के साप्ताहिक सत्संग में पधारे। उस समय उपासना हो रही थी। महाराज को आता देख सब लोग प्रदर्शनार्थ खडे हो गए। उपासना की समाप्ति पर महाराज ने उपदेश दिया कि उपासना काल में उपासक ईश्वर के सत्संग में मगन होते हैं। ऐसे समय में कोई कितना ही बडा मनुष्य आये, उपासकों को खड़े न होना चाहिए, क्योंकि परमेश्वर से बडा कोई नहीं है। अत ऐसा करने से उपासना धर्म का निरादर होता है।

फल परमात्मा पर

पण्डित लेखराम स्वामी दयानन्द का परम भक्त था। उन्होंने एक दिन हाथ जोड़कर विनय की, "भगवन्! आर्यसमाज में केवल थोड़े से मनुष्य ही सम्मिलित हुए हैं। इतनी तुच्छ संख्या कोई महान् कार्य तो क्या हो कर सकेगी।" स्वामी जी ने उत्तर दिया—"आप तो बहुत हैं, सहस्रों मनुष्यों को अपना सगो बना सकते हैं, परन्तु तनिक मेरी ओर तो देखिए! जब मैंने कार्य का प्रारम्भ किया तो एकाकी और निसहाय था। आज परमात्मा की यह कृपा है कि आप जैसे सहस्रों सज्जन सच्चे हृदय से मेरे साथी हैं और आर्य धर्म पर न्यौछावर होने को समुद्यत हैं। लेखराम, शुभ सब का चाहो और परिणाम परमात्मा पर छोड दो, निश्चय सफल हो जाओगे।"

आइन्स्टीन का धैर्य

विश्व के महान् वैज्ञानिक अलबर्ट आइन्स्टीन से किसी ने उनके महान् बनने का कारण पूछा। आइन्स्टीन ने बताया—"मैं स्कूल में पढते समय इतना बुद्धू था कि सब विद्यार्थी मुझे चिढाया करते थे। कई बच्चे तो मेरी कमीज के पीछे बुद्धू लिख दिया करते थे। अध्यापकों ने कभी मेरा उत्साह नहीं बढाया, बल्कि व्यंग्य में और रोष में बोलते तू सात जन्म में भी गणित नहीं सीख सकता।"

किन्तु मैंने कभी अपने को हीन नहीं समझा। रात-दिन प्रयत्न करता रहा। शरीर थक जाता परन्तु मेरा संकल्प कमजोर न पडता। विपरीत स्थिति में धैर्य धारण कर चलता रहा और उसी के कारण मैं अपने लक्ष्य तक पहुंच पाया।

यह मेरा घोर अपमान है

दिसम्बर १९२१ का दिन। ब्रिटिश सत्ता का विरोध करने के आरोप में एक चौबीस वर्षीय भारतीय युवक पर मुकदमा चल रहा था। इस युवक ने आठ महीने पहले ही आई० सी० एस० की महत्वपूर्ण प्रशासनिक नौकरी को विदेशियों की गुलामी कहकर त्याग दिया था। फिर १७ नवम्बर, १९२१ को इस युवक ने वेल्स के राजकुमार के बहिष्कार में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

अदालत में युवक पर तरह-तरह के आरोपों की बौछार हो रही थी और युवक शान्त खड़ा था। अन्त में न्यायाधीश ने सरकार का विरोध करने के आरोप में युवक को छ माह के कारावास की सजा सुना दी। अभी तक खामोशी से खडे युवक ने आश्चर्य से पूछा—"बस, केवल छ महीने?"

"हां" न्यायाधीश ने जवाब दिया और युवक गुस्से से चीख पड़ा—"क्या मैंने किसी की मुर्गी चुराई है जो मुझे केवल छ महीने के कारावास की सजा सुनाई है? यह मेरा घोर अपमान है।"

जानते हो, छ महीने के कारावास को अपना अपमान कहने वाला यह साहसी युवक कौन था? ये थे नेता जी सुभाषचन्द्र बोस और छ महीने की यह सजा उनकी पहली जेल यात्रा थी।

उसके बाद जीवन भर सुभाष चन्द्र बोस अपने देश की आजादी के लिए लडते रहे। ब्रिटिश सरकार की आंखों में धूल झोंककर भारत से बाहर निकल जाने से पहले वे कुल ग्यारह बार जेल गये।

तांगे वाले की याद

स्वतन्त्रता आन्दोलन के दिनो में बनारस स्टेशन पर एक दिन शास्त्री जी उतरे। एक तांगे पर बैठ कर अपने गन्तव्य स्थान पर गये। जब वे पैसे देने लगे तो तांगे वाले ने पैसे नहीं लिये तथा कहा—'बाबू जी मेरा यह तांगा कौम के खिदमतगारों के लिए ही है। मैंने यह सोच रखा है कि आप जैसे देश के लिए काम करने वालों से कोई पैसा नहीं लूंगा। मुल्क आजाद हो जाये यही मेरी इच्छा है।"

देश आजाद हो गया। शास्त्री जी जब पहली बार बनारस आये तो स्टेशन से बाहर निकलकर उस तांगे वाले को खोजने लगे तथा सब से पीछे खडे तांगे के पास जाकर उसमें बैठकर उसका सम्मान किया तथा आजादी के दिनों में उस के योगदान की सराहना की।

भगवान् श्रीराम...

(पृष्ठ ४ का शेष)

संस्कृति, सभ्यता से युक्त अवश्य होना चाहिए तभी उत्तम शासन प्रजा पर हो सकता है। भगवान् राम का जीवन हम को महान् श्रेष्ठ पथ की ओर ले जाने वाला चरित है। हमारे राम का आदर्श कैसा ऊँचा था। हनुमान जी सीता से कहते हैं—

न राघवो मांसं भुङ्क्ते न चैव मधु सेवते।

वा० रा० सुन्दर० ३६।

अर्थात् राम न मांस खाता है और न मद्य पीता है।

भगवान् राम की विद्वत्ता भी देखिए, लिखा है—

वेदवेदाङ्ग तत्त्वज्ञ।

वा० रा० बाल० १।

अर्थात् राम वेदवेदाङ्ग के तत्त्व-वेत्ता थे।

सर्वविद्याव्रतस्नातो यथावत्साङ्ग-वेदवित्। वा० रा० अयो० १।

अर्थात् राम सर्व विद्याव्रत स्नातक और यथावत् अङ्गों सहित वेद का जानने वाला था।

राम महान् आस्तिक, धार्मिक और निश्चयात्मक थे। राम आर्य मर्यादावान् पुरुष थे। राम लोक के और चातुर्वर्ण्य के रक्षक थे तथा लोक की मर्यादाओं का स्वयं आचरण करने वाले और दूसरों से कराने वाले थे।

यो ब्राह्ममस्त्र वेद वेदान् वेद विदांवर। वा० रा० युद्ध० २८

जो राम ब्रह्म-अस्त्र जानने वाला और वेदवेत्ताओं में श्रेष्ठ था।

राम ईश्वर के अवतार भी नहीं थे। यदि राम ईश्वर का अवतार होते भी तो ऐसे दुखी न होते और सुग्रीव जसे को सान्त्वना देने का अवसर न आता। श्री रामचन्द्र महाराज एक महान् आदर्श पुरुष थे।

औषधालय का उद्घाटन...

(पृष्ठ १ का शेष)

बोध ने साकेत आर्यसमाज के अधिकारियों को उत्साहपूर्वक प्रचार के, धर्म के रचनात्मक कार्यों के लिए उन्हें हार्दिक बधाई दी। उन्होंने कहा—थोड़े से समय में इतनी कीर्ति अर्जित कर लेना तथा इस क्षेत्र के लोगों का दिल जीत लेना इस आर्यसमाज के कार्यकर्ताओं की लगन, निष्ठा और श्रद्धा का परिचायक है।

डा० धर्मपाल ने कहा—नि शुल्क रूप से चिकित्सा की सुविधा देना, बदले में कुछ न चाहना, यही धर्म की सच्ची भावना है। इस औषधालय के डाक्टर लोगों का दो-दो घण्टे नि शुल्क सेवा करना एक उच्च आदर्श है। ऐसे परोपकारी जनसेवी डाक्टर जनों को शत-शत बधाई देता हूं। प० शिवकुमार शास्त्री ने भी इस अवसर पर अपना आशीर्वाद प्रदान किया। प० अधिविनय भारती का उद्बोधन भी इस समय उत्साहजनक रहा। इसी समय आर्य समाज की ओर से सभी डाक्टरों को सत्यार्थप्रकाश का इगलिश सस्करण दिया गया।

इस आर्यसमाज के प्रधान श्री लखीराम कटारिया तथा श्री राजेन्द्र पाल गुप्ता प्रबन्धक, श्री एस० पी० सूद और निष्ठावान कार्यकर्ता श्री सक्सेना एवं श्री भाटिया जी आदि अनेक सज्जनों के उत्तम सयुक्त दल का परस्पर सद्भाव और कार्य अत्यन्त प्रशसनीय हैं।

श्री एल० आर० दुर्गा का निधन

आर्यसमाज के कर्मठ सेवी श्री राजेन्द्र दुर्गा के पूज्य पिता जी श्री एल० आर० दुर्गा का आकस्मिक निधन हो गया। वे ७२ वर्ष के थे। श्री एल० आर० दुर्गा अपने रिश्तेदार के विवाह समारोह में सम्मिलित होने गये थे जहाँ उन्हें हृदय आघात हुआ। दुर्गा जी का परिवार पूर्णत आर्य विचारों का है। उनके ५ बेटे तथा ३ बेटियाँ हैं। २३ अप्रैल को निगम बोध घाट पर उन की अन्त्येष्टि हुई। जिसमें आर्यसमाज के वरिष्ठ लोग उपस्थित हुए।

२५ अप्रैल को श्रद्धाजलि सभा हुई जिसमें स्वामी विद्यानन्द, डा० धर्मपाल, डा० शिवकुमार, म० धर्मपाल, चौ० सूरतसिंह, डा० प्रशान्त कुमार आदि जनों ने श्रद्धांजलि अर्पित की। इस अवसर पर भारी सख्या में लोग उपस्थित थे। आर्यसन्देश परिवार की ओर से हम श्री एल० आर० दुर्गा के प्रति हार्दिक सवेदना व्यक्त करते हैं।

जाति-जागरण

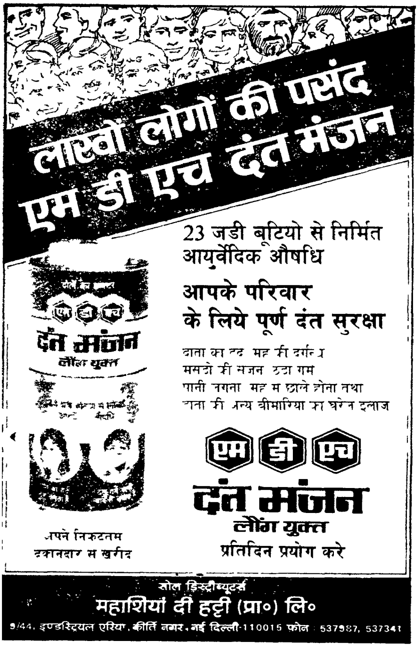
उठ जाग आज फिर हिन्दु जाति,
तू क्यों गफलत में सोयी है।
सदियों का ले इतिहास उठा,
किस गहन नींद में सोयी है॥
मडराते आज मेघ काले,
जो प्रलय जलद बन छाये हैं।
यवन और मलेच्छ आज,
तव घर में घात लगाये हैं॥
मत कहो किसी को ऊंच-नीच,
सब एक पिता के बेटे हैं।
दो जन्म जात तुम जाति छोड़,
कर्मों से सब ही होते हैं॥
है आर्यवश में जन्म लिया
भारत भू का जो वासी है।
देता है मां का मान उसे,
उससे क्यों तुम्हें उदासी है॥
जो राम कृष्ण का वशज है,
उनका जो परम पुजारी है।
तब काहे उसको पतित कहो,
जो वेद मार्ग आचारी है॥
भूलि भटके जो कभी पन्थ,
उनको फिर गले लगाओ तुम।
अब कर दो मुक्त सभी बधन,
शुद्धि का चक्र चलाओ तुम॥
बस एक प्रेम का बन्धन हो,
उस में ही सब का अयन हो।
इस भारत मा की पुण्य धूल,
सब के माथे का चन्दन हो॥
जो माने इसको जन्म भूमि,
कर्त्तव्य भूमि व पुण्य धरा।
मानो उसको तुम हिन्दू ही,
चाहे जो उसका जन्म धरा॥
जो इस भूमि में जन्मा है,
जो इस भूमि में खेला है।
जिसने भी यहाँ खाया-पीया,
उसका सब इसने झेला है॥
सब भाई सगे सहोदर हैं,
यहा एक रक्त का नाता है।
धर्म और विश्वास जो हो,
सब की यह भारत माता है॥
जो भी इसको निज देश कहे।
इसको ही शेष, महेश कहे।
इस के सुख में जो हो प्रसन्न,
इस के दुख में जो क्लेश गहे॥
ऐसा हर कोई हिन्दु है,
चाहे नाम अन्त में बिन्दु है।
घुल मिल जाओ इस में सारे,
यह भारत तो जन सिंधु है॥
जो मिले न राष्ट्र की धारा मे,
वह केश बन बह जायेगा॥
जो द्वीप-सीप बनना चाहे,
वह कट-छंट कर रह जायेगा॥
जाग उठा आज यह जन-ज्वार,
कर कर हर का महोच्चार।
गूंजा समता का शखनाद,
बह चली एकता की सुधार।
जो भी इस में मिल जायेगा।
हा, कमल सा वह खिल जायेगा।
जो भी इस से टकरायेगा,
वह चूर चूर हो जायेगा॥

—प्रो० धर्मचन्द्र विद्यालकार 'समन्वित'

यज्ञ की वैदिक पद्धति

(पृष्ठ ३ का शेष)

लाखों रुपये यज्ञों के नाम पर सग्रह करते हैं और थोड़ा बहुत यज्ञ करके बाकी पैसे को स्वयं डकार जाते हैं। ऐसे भी व्यक्ति हैं जो स्विष्टकृति की आहुति मोहन भोग, भात, हलवा, मिष्टान्न इत्यादि से दी जाती है और यज्ञ में उपस्थित लगभग सभी व्यक्ति इस आहुति को देते हैं, उसे अग्नि मे न डाल कर वे स्वयं खा जाते हैं। ऐसे भी व्यक्ति हैं जो अग्नि में देशी घी के बने हुए हलवा को केवल स्विष्टकृति की आहुति में दो चार आने भर आहुति में डाल देते हैं। लेकिन दोने भर-भर के स्वय खा जाते हैं। ये सभी व्यक्ति यातुधान की परिभाषा में आते हैं। यातुधान पिछले जमाने में ही नहीं थे आज के युग में भी बहुतायत से मौजूद हैं जिनको हम बड़े नजदीक से रोजाना देखते हैं। अस्तु यह तथ्य एक ऐसा तथ्य है जो सत्य है एवम् कामनाओं की पूर्ति में बाधक है। यजमान धनी भी होते हैं और निर्धन भी। जब धनी व्यक्ति ही यज्ञ में दी जाने वाली आहुतियों में कमी करते हैं तो बड़ा हास्यास्पद लगता है। तथाकथित ब्राह्मणों ने यज्ञ को विकृत कर दिया और उसका परिणाम यह हुआ कि हिन्दूराष्ट्र खत्म हो गया। महर्षि दयानन्द ने इस आर्य-समाज की नींव रखी और यज्ञों को प्रतिष्ठापित किया। स्वतन्त्रता के पहले आर्यसमाज की चतुर्मुखी उन्नति हुई। अनेकों स्थानों पर आर्यसमाज की स्थापना हुई। उसके बाद शिथिलता आने लगी लेकिन आज हजारों लाखों लोग विधर्मी बन रहे हैं। आज भी अगर हम चेतें और वेदोक्त विधि विधान से यज्ञ करें तथा प्रचार करें तो आज भी लक्ष्य की पूर्ति होगी जब कामनाओं की पूर्ति होगी तब इस देश के ही नहीं विदेशी भी इस यज्ञ की ओर प्रेरित होंगे और "कृण्वन्तो विश्व-मार्यम्" का हमारा ध्येय पूरा होगा।


लाखों लोगों की पसंद
एम डी एच दंत मंजन
23 जडी बूटियो से निर्मित
आयुर्वेदिक औषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दंत सुरक्षा
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
प्रतिदिन प्रयोग करे
सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9/44, इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-110015 फोन 537987, 537341


अपने बालों को स्वस्थ, प्राकृतिक काला व चमकदार बनाइये और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी सुगंध से महकाइये।
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर
निर्माता
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9 44 इण्डस्ट्रियल एरिया कीर्ति नगर
नई दिल्ली 110015
539609 537987


आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
alignpoint

R N No. 32387/77 Post in N.D.P.S.O on 28, 29-4-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना प्रेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

आर्यसमाज करौल बाग द्वारा नशाबन्दी अभियान प्रारम्भ शोभायात्रा द्वारा जनजागरण

२३ अप्रैल, नई दिल्ली। आर्यसमाज करौलबाग के ५६वें वार्षिकोत्सव के उपलक्ष्य मे नशे के बढते प्रकोप के विरुद्ध जन जागरण करने के उद्देश्य से एक शोभा यात्रा का आयोजन किया गया। यह जलूस आर्यसमाज मन्दिर से उत्साहपूर्वक प्रारम्भ हुआ। करौल बाग के मुख्य बाजारों मे होता हुआ आर्यसमाज मे विसर्जित हुआ।

इस का नेतृत्व सार्वदेशिक के प्रधान स्वामी आनन्द बोध, प० वन्देमातरम् जी, डा० धर्मपाल, श्री ब्रजराज चन्ना श्री रामनाथ सहगल तथा श्री रामलाल मलिक आदि आर्य नेता कर रहे थे। इस जलूस में प्रायः नर-नारियों का तथा विद्यालय के छात्र-छात्राओं का उत्साह दर्शनीय था।

आर्यसमाज करौलबाग का वार्षिकोत्सव ६ मई से ८ मई तक सम्पन्न होगा। इससे पूर्व अजमल खाँ पार्क में वेदकथा का आयोजन किया गया है। कार्यक्रम मे ध्यान, योग का शिविर रखा गया जो १७ अप्रैल से २४ अप्रैल तक चला। श्री रामलिक के अनुसार वार्षिकोत्सव के उपलक्ष्य मे विभिन्न सम्मेलनों का आयोजन किया गया है जिसमें महिला सम्मेलन, राष्ट्ररक्षा सम्मेलन, विचार गोष्ठी (आर्य सेमिनार) का भी आयोजन किया गया है। इन सम्मेलनो मे प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् तथा समाजसेवी जन सम्बोधन करेंगे।

आर्यसमाज नरेला में आर्य सम्मेलन

आर्यसमाज नरेला का वार्षिकोत्सव उत्साहपूर्वक सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर तीन दिवसीय कार्यक्रम आयोजित किया गया जिस में २३ अप्रैल को आर्य सम्मेलन का कार्यक्रम हुआ। जिसमें स्वामी ओमानन्द, सभा प्रधान डा० धर्मपाल, डा० शिवकुमार, प्रि० होश्यार सिंह आदि वक्ताओं ने अपने विचार व्यक्त किये। डा० धर्मपाल ने कहा—आर्यसमाज अपने जन्मकाल से ही संघर्षों की छांव में पलता बढ़ता चला आ रहा है। हमारा यह संघर्ष कभी समाप्त नहीं हुआ। अब भी नयी चुनौतियां हमारे सामने हैं। धर्मान्तरण की लहर विधर्मियों द्वारा चलाई जा रही है। पेट्रोडालर के द्वारा हमारे हरिजन भाइयों को ललचाया जाता है। हमें योजनाबद्ध उपायों से अपने पिछड़े भाइयों को, धर्मान्तरित हुए जनों को पुन अपने धर्म में प्रविष्ट करना चाहिए।

श्री प्रधान जी ने आज के युवा समाज में फैल रहे नशे के दुर्व्यसन को रोकने के लिए अभियान चलाने का भी सुझाव दिया। उन्होंने कहा—आर्यसमाज के सैनिक ही यह कार्य कर सकते हैं। डा० शिवकुमार ने आर्यों को वैदिक धर्म के लिए तन, मन, धन वारने का आह्वान किया।

आर० के० पुरम में वार्षिकोत्सव

आर्यसमाज रामकृष्ण पुरम सेक्टर-५ का वार्षिकोत्सव धूमधाम से सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर स्वामी आत्मानन्द, महाशय धर्मपाल, डा० धर्मपाल आदि जनों ने उद्बोधन दिया। दिल्ली आर्य केंद्रीय सभा के प्रधान महाशय धर्मपाल ने इस अवसर पर पुरस्कार वितरण किया।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ : अंक २६ | रविवार ८ मई १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८९ | चैत्र २०४५ | दयानन्दाब्द—१६४

मूल्य : एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में २० डालर, १० पौंड

पंजाब में मार्शल ला लागू किया जाये

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती, सनातन धर्म के नेता गोस्वामी गिरधारी लाल जी तथा पू० सांसद श्री हरदयाल देवगुप्त का संयुक्त वक्तव्य

पंजाब को विशेष दर्जा देने की केन्द्रीय सरकार द्वारा चर्चा से देश की अखण्डता, सुरक्षा और धर्म निरपेक्षता पर भीषण कुठाराघात होगा और इसे कदापि सहन नहीं किया जाएगा। श्री नेहरू ने कश्मीर को विशेष दर्जा देकर जो भयंकर भूल की थी, उसका परिणाम पूरा देश आज तक भुगत रहा है। उसकी पुनरावृत्ति किसी कीमत पर सहन नहीं करेंगे। पंजाब की स्थिति में तो विशेष दर्जा देने का अर्थ होगा खालिस्तान की नींव रखना। इस प्रकार के समाचारों के प्रकाशित होने मात्र से पंजाब में व्यापक रूप से पलायन शुरू हो गया है।

पंजाब में इस समय केन्द्र के विरुद्ध खुली बगावत चल रही है। केन्द्रीय सरकार ने पहले ही उग्रवादियों को जेल से मुक्त कर के देशद्रोही शक्तियों को निर्दोष हिन्दू-सिक्खों की हत्या करने, लोगों को धमकियां देकर रुपये ऐंठने, देश के विभाजन का प्रचार करने और कट्टरपंथी भावनाएं फैलाने की खुली छूट दे दी है। व्यास नदी से उत्तर में अमृतसर और गुरुदासपुर जिले के सभी सीमावर्ती गांव हिन्दुओं से खाली हो चुके हैं और उन में केवल उग्रवादियों का ही सिक्का चल रहा है।

वस्तुत. पंजाब में कतिपय गद्दारों, पथभ्रष्ट कट्टरपंथियों की सहायता से खालिस्तान की आड़ लेकर पाकिस्तान ने भारत पर अघोषित आक्रमण कर रखा है, जिसका प्रतिरोध तुष्टीकरण से नहीं अपितु केवल सैनिक कार्रवाई से ही किया जा सकता है। सरकार ने अभी तक तुष्टीकरण के लिए जितने भी पग उठाए हैं, उनका परिणाम उल्टा ही निकला है।

हमारे मत में पंजाब की स्थिति का एक ही हल है कि पंजाब के तीन सीमावर्ती जिलों में मार्शल ला लगा दिया जाए और पूरे पंजाब को सेना के सुपुर्द कर दिया जाय और जैसलमेर से लेकर कश्मीर तक सीमा के साथ सुरक्षा पट्टी लागू कर भूतपूर्व सैनिक परिवारों को उस पट्टी में बसाया जाए और पंजाब में कम से कम पांच वर्ष तक हर प्रकार की राजनीतिक गतिविधि और चुनाव इत्यादि स्थगित रखे जायें।

इसके अतिरिक्त स्वर्ण मन्दिर को उग्रवादियों, हत्यारों और समाज विरोधी तत्वों से मुक्त कर के इसकी पवित्रता को पुनः स्थापित किया जाए और उग्रवादियों के ग्रन्थियों को खालिस्तान और पूर्ण आजादी से प्रचार की खुली छूट बन्द कर दी जाए।

हम देश की समस्त देशभक्त जनता और विशेष रूप से आर्य-समाजों, सनातन धर्म सभा और हिन्दू संस्थाओं से अनुरोध करते हैं कि वह ८ मई, १९८८ को विशेष रूप से पंजाब रक्षा दिवस मनाये और उस में पंजाब को विशेष दर्जा देने का विरोध, मार्शल-ला लगाने तथा अन्य मांगों के समर्थन में प्रस्ताव पारित कर के प्रधान मन्त्री और गृह मन्त्री को भेजें और जन-जागरण और संगठन के अन्य उपाय भी करें।

पंजाब विस्थापितों को सहायता दें

पंजाब में बढ़ते खून खराबे से पंजाब के हिन्दू निरन्तर यन्त्रणा झेल रहे हैं। अनेक परिवार भयभीत होकर दिल्ली आये हैं। आर्यसमाज दीवानहाल में भी कुछ परिवार आकर ठहरे हैं। मानवता के नाते सभी आर्य जनों का कर्तव्य है कि अपने पीड़ित भाइयों की सेवा करें। इस सम्बन्ध में आटा, चीनी, चावल, दाल तथा वस्त्र और नकद राशि आदि आर्यसमाज दीवानहाल या दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, के पते पर भिजवायें। यदि सामान अधिक हो या भारी हो तो सभा की गाड़ी भी उपयोग में लायी जा सकती है।

निवेदक
सूर्यदेव (महामन्त्री)
दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा

निन्दा प्रस्ताव

शिरोमणि सभा के अधिकारियों को षड्यन्त्र रचकर लांछित करने वालों की घोर निन्दा

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग बैठक में ३० अप्रैल को एक निन्दा प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित हुआ। इस प्रस्ताव में कहा गया कि सम्पूर्ण आर्य जगत् की शिरोमणि सभा सार्वदेशिक के विरुद्ध तथा सभा प्रधान स्वामी आनन्दबोध सरस्वती के विरुद्ध कुछ अवसरवादी पद लोलुप, कायर लोगों ने लांछित करने का अभियान चला रखा है। सभा प्रधान स्वामी आनन्दबोध जी का सम्पूर्ण जीवन आर्य समाजों की सेवा के कार्यों में बीता है। वे त्यागी, साधुमना और तपस्वी, महापुरुष हैं। किसी भी प्रकार के स्वार्थ से ऊपर हैं उन्होंने चुनौती भरे अवसरों में आर्यसमाज का सफल नेतृत्व किया है। आर्यसमाज ने व्यक्तिगत चरित्र हनन को सदैव पाप की दृष्टि से देखा है। जिन लोगों ने अपनी कुत्सित मनोवृत्ति के वशीभूत होकर पूज्य स्वामी जी तथा अन्य पदाधिकारियों के विरुद्ध यह दूषित अभियान चलाया है, वे आर्यसमाज के कार्य को एक बहुत बड़ा धक्का पहुंचा रहे हैं।

यह सभा ऐसे विकृत मनोवृत्ति के लोगों की घोर निन्दा करती है जो संगठन के अनुशासन को भंग कर रहे हैं तथा आर्यसमाज के यश को कलंकित कर रहे हैं। सर्वसम्मति से सभी जनों ने ऐसे कुकृत्य करने वाले जनों की घोर निन्दा की तथा निन्दा प्रस्ताव पारित किया गया।

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव



गौरव स्तम्भ

प्रेरक प्रसंग

प्रस्तोता—सत्यानन्द आर्य

हृदय की भावना

कांग्रेस के श्री महावीर त्यागी बहुत खरे और निर्भीक व्यक्ति थे। जिन्ना साहब की जिद पर जब देश के बटवारे के प्रश्न को कांग्रेस ने स्वीकार कर दिया तो आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी से उसकी स्वीकृति लेने के लिए नेहरू जी ने मीटिंग बुलाई। उसमें कांग्रेस के गण्यमान्य नेता भी आमन्त्रित किये गये।

नेहरू साहब के आगे भला किसकी हिम्मत थी कि उनके विरोध में कुछ कहे। सब ने उनके प्रस्ताव पर "हां हां कर" दी।

त्यागी जी कमरे में चुपचाप बैठे रहे। न हां कही, न नहीं। नेहरू साहब ने यह देख कर उनसे कहा—"क्यों त्यागी तुम क्यों नहीं बोलते ? अपनी राय बताओ।" लेकिन त्यागी जी ने चुप रहना ही ठीक समझा।

जब नेहरू जी राय जानने के लिए पीछे पड गए, तो उन्होंने बडी दर्दभरी आवाज में कहा—"जवाहर भाई मुझ से कुछ न कहलाइये। बस, मेरे इस शेर से मेरे हृदय की भावनाओं को समझ लीजिए और उन्होंने रुंधे कण्ठ से यह शेर सुनाया—

क्या इसीलिए चुनवाये थे
तकदीर ने तिनके।
बन जाये नशेमन
तो कोई आग लगा दे।

सब लोग सन्न हो गए और नेहरू जी भी कुछ देर तक चुपचाप खडे रहे।

कुली का कार्य

ट्रेन से उतर कर एक सज्जन अपनी पोटली उठवाने के लिए किसी कुली की प्रतीक्षा करने लगे। लेकिन कोई कुली न आया। उनकी परेशानी देख, पास खडे एक व्यक्ति ने उनकी पोटली उठा ली और उन से चलने को कहा।

बाहर आ कर जब वह उसे पैसे देने लगे, तो उन्होंने कहा—"इसकी कोई आवश्यकता नहीं है। मैं कुली नहीं हूं, मेरा नाम ईश्वरचन्द्र विद्यासागर है। आपकी पोटली में कुछ ज्यादा बोझ नही था।

इतना कह कर वे चले गये ईश्वरचन्द्र विद्यासागर का नाम उस समय भला किसने नहीं सुना था। वह महाशय उनकी ऐसी सज्जनता देख आनन्दविभोर हो गये।

सच्चा अभिनय

यूरोप के जन-जन को अपने हास्य से गुदगुदाने वाला और अपनी मोहक आवाज से जादू कर देने वाला लु कास्टेलो यूरोप का प्रसिद्ध हास्य अभिनेता हुआ। रेडियो स्टेशन पर अपने सहायकों के साथ हास्य का अभ्यास करते समय उसे टेलीफोन की सूचना मिली; टेलीफोन सुनकर जब वह वापस आया तो उसके पांव लडखडा रहे थे, सदमे से उसके सिर की नसें फटी जा रही थीं। उसका मासूम नन्हा बच्चा मर गया था, जिसे सुनकर उसका हृदय विदीर्ण हो चुका था, जैसे तैसे घर पहुंचा। पत्नी ने बताया किस प्रकार हौज में खेलते खेलते बच्चा गिर गया और समाप्त हो गया। एक घंटा पहले बच्चे को वह खेलता हुआ घर छोड गया था उसका खिलखिलाता चेहरा अब भी उसकी आंखो में तैर रहा था, लेकिन इतने ही क्षण में यह सब कैसे समाप्त हो गया वह सोच नहीं पा रहा था, बच्चे के शव को देखकर वह सिर पकडकर बैठ गया। दीवार की घडी की टन टन से उसका ध्यान समय पर गया। उसके प्रोग्राम का समय होने वाला था। लु कास्टेलो ने लिखा है—"मुझे अपने प्रोग्राम को पूरा करना ही था मैं शीघ्रता से समय पर रेडियो स्टेशन पहुंचा। अपने प्रोग्राम से मैंने लोगों को हंसाना था और मेरा मन रो रहा था। मैंने किस प्रकार अपना प्रोग्राम पूरा किया मैं नहीं जानता, परन्तु उसके बाद मैंने यह सोचना छोड दिया मेरे साथ क्या बीता। मैं किस प्रकार सौभाग्य का अधिकारी हूं, मेरे पास क्या क्या होना चाहिए। मैंने सोच लिया जो मैं अपने इकलौते बेटे के लिये करना चाहता था, उसकी आवश्यकता दुनिया के और बच्चों को भी हो सकती है। बस मैंने दुनिया भर के बच्चों को हंसाने का जिम्मा ले लिया और मुझे हर बच्चे में अपने बच्चे की शक्ल दिखाई देने लगी, मुझे अनेक बच्चे मिल गये जो मेरे अपने नजर आते थे।

विद्वत् सम्मान समारोह

आर्यसमाज कलकत्ता के वयोवृद्ध बंगभाषी विद्वान् प० प्रियदर्शन भूषण को दिनांक ३।४ ८८ को एक समारोह में आर्यसमाज कलकत्ता द्वारा ३१००० रु० की राशि भेंट कर सम्मानित किया गया। प० प्रियदर्शन सिद्धांतभूषण ने यजुर्वेद के महर्षि दयानन्द कृत भाष्य का बंगला अनुवाद किया है। अभी तक बंगला भाषा में दयानन्द भाष्य उपलब्ध नहीं था। प० प्रियदर्शन जी अब तक सत्यार्थप्रकाशन एवम् पूना प्रवचन का बंगला अनुवाद कर चुके हैं। इस अवसर पर कार्यक्रम का संचालन करते हुए प्रो० उमाकान्त उपाध्याय ने इसे एक सराहनीय कदम बताया तथा प० प्रियदर्शन जी के इस कार्य को बंगाली भाषा में एक महान् कार्य बताया। अब तक हर प्रकाशनी द्वारा प्रकाशित सायण भाष्य ही बंगला भाषा में उपलब्ध है। अध्यक्ष पद से बोलते हुए श्री सीताराम आर्य ने बताया कि आर्यसमाज कलकत्ता द्वारा स्थिर निधियों से मिलने वाले ब्याज से प्रतिवर्ष विद्वत् सम्मान का यह कार्यक्रम अबाध रूप से चलता रहेगा और यह हमारा सौभाग्य है कि बंग प्रदेशीय विद्वान् को सम्मानित करने का अवसर हमें आरम्भ में मिला।

इस अवसर पर प० शांतिप्रकाश शास्त्रार्थ महारथी एवम् प० रुद्रदत्त शास्त्री (देहरादून) को उनके वैदिक धर्म के प्रचार एवम् प्रसार के लिए प्रत्येक को पांच-पांच हजार रुपये की राशि भेंट करने की घोषणा की गई।

मनसाराम वर्मा
सचिव
आर्यसमाज कलकत्ता

श्री न्यादरमल गुप्त सम्मानित

आपने दिल्ली के प्रसिद्ध लोहा व्यापारी स्वर्गीय लाला रामरिछपालमल जी के यहां सन् १९०७ में जन्म लेकर उच्च शिक्षा प्राप्त की। सन् १९२९ में बी०ए० तथा १९३३ में वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण की पर वकालत के कार्य को न अपनाकर अपने पैतृक कार्य लोहा व्यापार को ही अपनाया। सन् १९४५ में अपनी विशेष प्रतिभा के कारण म्यूनिसिपल कमिश्नर का पद ग्रहण किया तथा अपनी न्यायप्रियता एवम् प्रबन्ध कौशल से १९४७ में आनरेरी मैजिस्ट्रेट के पद पर नियुक्त हुए।

वैदिक धर्मानुरागी श्री गुप्त जी ने आर्यसमाज की अनवरत सेवा की है। यह सेवा भाव उन्हें अपने ज्येष्ठ भ्राता स्व० ला० घासीराम जी लोहिए से विरासत में मिला है जो जीवन पर्यन्त दलितों के उद्धार, समाज एव लोक कल्याण के लिए प्रयत्नशील रहे तथा इस समाज की तन, मन व धन से सेवा की है। न्यादरमल जी भी सेवा के इस व्रत का पालन करते रहे हैं। वे समाज के वर्षों तक प्रधान, उपप्रधान, मंत्री पदों पर रह कर सेवा करते चले आ रहे हैं। वर्तमान में भी आप इस समाज के प्रधान रह कर सेवा करते आ रहे हैं।

श्री न्यादरमल जी की सेवाओं से प्रसन्न होकर आर्यसमाज सीताराम बाजार के सदस्यों ने वार्षिकोत्सव के अवसर पर उनका अभिनंदन एवम् स्वागत किया।

यज्ञ द्वारा वृष्टि—वैज्ञानिक दृष्टिकोण की आवश्यकता

ले०—यशपाल आर्य बन्धु, आर्य निवास, चन्द्रनगर, मुरादाबाद

आर्यसमाज के विद्वानों में यज्ञ द्वारा वृष्टि पर कुछ विवाद चल रहा है। कुछ विद्वान् यह मानने को तैयार नहीं कि यज्ञ का वृष्टि से कोई सम्बन्ध है। कुछ ऐसे भी हैं जो यज्ञ द्वारा वृष्टि की बात को प्राचीन शास्त्र परम्परा और महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा अनुमोदित मानते हुए भी उसके व्यावहारिक पक्ष पर उन्हें शका है। कुछ ऐसे भी हैं जिन्हें इस सिद्धान्त पर अन्धश्रद्धा है। और वे यज्ञ द्वारा वृष्टि होने की बात को सम्भावना की कोटि मे न रखकर सर्वदा सुनिश्चित ही मानते हैं।

हमे यज्ञ द्वारा वृष्टि के सिद्धान्त को व्यक्तिगत रूप से न सोच कर आयसमाज के सामूहिक दृष्टिकोण से सोचना होगा। आर्यसमाज के सस्थापक की यह सुस्पष्ट मान्यता है कि यज्ञ द्वारा सुवृष्टि हो सकती है। ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के वेद विषय मे महर्षि ने इसका स्पष्ट उल्लेख किया है। शतपथ का प्रमाण देकर महर्षि लिखते हैं कि—"जो होम करने के द्रव्य अग्नि मे डाले जाते हैं, उनसे धूआं और भाप उत्पन्न होते हैं, क्योंकि अग्नि का यही स्वभाव है कि पदार्थों में प्रवेश करके उनको छिन्न-भिन्न कर देता है। फिर वे हलके होके वायु के साथ ऊपर आकाश में चढ जाते हैं, उनमें जितना जल का अंश है वह भाप कहाता है, और जो शुष्क हैं, वह पृथ्वी का भाग है, इन दोनो के योग का नाम धूम है। जब वे परमाणु मेघमण्डल में वायु के आधार से रहते हैं फिर वे परस्पर मिल के बादल होके उनसे वृष्टि, वृष्टि से औषधि, औषधियों से अन्न, अन्न से धातु, धातुओं से शरीर और शरीर से कर्म बनता है।"

इस शका के उत्तर में कि जब धूए से वर्षा होती है तो धुआ तो अन्य प्रकार से भी उत्पन्न होता रहता है, फिर यज्ञ की क्या आवश्यकता है ? महर्षि कहते हैं कि—"दूसरी शका यह करते हैं कि जब आग-गाडी में (रेल इजन मे) और रसोई घर में तो धुंआ बहुत उत्पन्न होता है फिर वृष्टि भी बहुत होना ही चाहिए, तो फिर होम किस वास्ते करना चाहिए ? इस पर हमारा यह कहना है कि यह धूम्र दुर्गन्ध और दूषित रहता है, इससे वायु शुद्ध नही होती।" (पूना प्रवचन, यज्ञ और संस्कार विषयक) स्पष्ट है कि महर्षि केवल अग्नि द्वारा वायु के गरम होवे अथवा भाप बनने से वर्षा होने की बात नही मानते, अग्निहोत्र द्वारा वायु की शुद्धि और शुद्ध भाप से वर्षा होवे की बात स्वीकारते हैं। अन्यथा रेल के इजन से उठने वाले धुए से भी वर्षा होनी चाहिए।

अत सैद्धान्तिक दृष्टि से आर्यसमाज का यही पक्ष होना चाहिए कि यज्ञ द्वारा सुवृष्टि सम्भव है। व्यवहारिक पक्ष पर शका करने वाले विद्वान् बहुत अश तक सही हैं। क्योंकि आर्यसमाज में इस विषय पर जो अनुसधान होना चाहिए था, वह नहीं हुआ। और सत्य तो यह है कि आर्यसमाज ने वैज्ञानिक दृष्टिकोण से इस विषय पर कभी सोचा ही नहीं। हां ! यदा-कदा वृष्टि यज्ञो से वर्षा के प्रयोग अवश्य हुए हैं किन्तु इन्हें तीर-तुक्का ही कहा जा सकता है। क्योंकि न तो कोई सुनिश्चित सर्वमान्य पद्धति है और न वर्षा यज्ञ की सुनिश्चित हव्य सामग्री। अपनी अपनी डफली अपना-अपना राग वाली बात चरितार्थ होती प्रतीत होती है। ऐसे भी कई आयोजन देखें हैं जहा बडे अधिकार के साथ यज्ञ से वर्षा की बात कही गई और फिर यज्ञ का आयोजन भी बडे पैमाने और आडम्बर के साथ किया गया, पर वर्षा नही हुई और इस प्रकार आर्यसमाज के इस दावे का खोखलापन ही प्राय सिद्ध हुआ। इसे हम सिद्धान्त का दोष नही मानते, प्रयोगात्मक दोष मानते हैं। हमारा विश्वास है कि कही न कही कोई त्रुटि अथवा न्यूनता अवश्य रह गई जिससे वर्षा नही हुई।

जहां तक उन विद्वानो की मान्यता है कि जो यज्ञ द्वारा शत-प्रतिशत वर्षा होने की बात स्वीकार करते हैं, तो उन्हें इस से बढकर प्रयोगात्मक सुअवसर और कब मिलेगा ? उन्हें चाहिए कि वे सुसगठित होकर अथवा किसी सभा या समाज के माध्यम से यज्ञ द्वारा वर्षा के चुनौती पूर्ण प्रयोग करें। एक बार सफलता पा लेने पर तो भारत का किसान स्वय उन्हें अपना लेगा और उन्हें मालामाल कर देगा। साथ मे आर्यसमाज के सिद्धान्त की सत्यता भी सिद्ध हो जायेगी। पर यह कार्य वैज्ञानिक दृष्टिकोण से किया जाना चाहिए। अन्धश्रद्धा से नही। दुख इस बात का है कि आर्यसमाज का इस विषय पर कोई प्रयोगात्मक अनुसधान केन्द्र है ही नही। साहित्यिक शोध सस्थान तो बहुत हैं प्रयोगात्मक शोध सस्थान कोई नही। अब मातृमन्दिर कन्या गुरुकुल वाराणसी से कुछ आशाए बधी है कि वहा यज्ञ पर कोई ठोस वैज्ञानिक अनुसधान हो सकेगा।

अन्त में हम यही कहेंगे कि यज्ञ की कोई भी पद्धति बने अथवा सामग्री आदि हो, विद्वानो द्वारा परीक्षित होनी चाहिए। यदि यह कार्य धर्मार्य सभा द्वारा सम्पन्न हो तो बहुत ही अच्छा है, अथवा उसके द्वारा अनुमोदित तो होना ही चाहिए। और ऐसा होना चाहिए जो आर्यसमाज के गौरव के अनुरूप हो। मिथ्या आडम्बर अथवा पाखण्ड का पुलन्दा न हो।

भूत और प्रेत

सत्यार्थप्रकाश से-

—पुष्करलाल आर्य

गुरो प्रेतस्य शिष्यस्तु
पितृमेध समाचरन्।
प्रेतहारैः सम तत्र
दशरात्रेण शुद्धयति ॥
मनु० (अ० ५। श्लो० ७५)

अर्थ :—जब गुरु का प्राणान्त हो तब मृतक शरीर जिसका नाम प्रेत है उसका दाह करने हारा शिष्य प्रेतहार अर्थात् मृतक को उठाने वालों के साथ दशवें दिन शुद्ध होता है। और जब उस शरीर का दाह हो चुका तब उसका नाम 'भूत' होता है अर्थात् वह अमुकनामा पुरुष था। जितने उत्पन्न हो वर्तमान में आके न रहें, वे भूतस्थ होवे से उसका नाम भूत है। ऐसा ब्रह्मा से लेके आज पर्यन्त के विद्वानों का सिद्धान्त है। परन्तु जिसको शका, कुसंग, कुसस्कार होता है, उसको भय और शकारूप भूत, प्रेत, शाकिनी, डाकिनी आदि अनेक भ्रमजाल दुःखदायक होते हैं।

देखो ! जब कोई प्राणी मरता है तब उसका जीव पाप-पुण्य के वश होकर परमेश्वर की व्यवस्था से सुख-दुख के फल भोगने के अर्थ जन्मान्तर धारण करता है। क्या इस अविनाशी परमेश्वर की व्यवस्था का कोई भी नाश कर सकता है ? अज्ञानी लोग वैद्यक शास्त्र वा पदार्थ विद्या के पढने, सुनने और विचार से रहित होकर सन्निपात ज्वरादि शारीरिक और उन्मादादि मानस रोगो का नाम भूत प्रेतादि रखते हैं। उनका औषध सेवन और पथ्यादि उचित व्यवहार न करके उन धूर्त, पाखण्डी, महामूर्ख, अनाचारी, स्वार्थी, भगी, चमार, शूद्र, म्लेच्छादि पर भी विश्वासी होकर अनेक प्रकार के ढोंग, छल-कपट और उच्छिष्ट भोजन, डोरा, धागा आदि मिथ्या मत्र, यत्र बांधते बधवाते फिरते हैं। अपने धन का नाश, सन्तान आदि की दुर्दशा और रोगों को बढ़ाकर दुःख देते फिरते हैं।

जब आंख के अधे और गांठ के पूरे उन दुर्बुद्धि पापी स्वार्थियो के पास जाकर पूछते हैं कि महाराज ! इस लडका, लडकी, स्त्री और पुरुष को न जाने क्या हो गया है ? तब वे बोलते हैं कि इसके शरीर में बडा भूत, प्रेत, भैरव, शीतला आदि देवी आ गई हैं, जब तक तुम इसका उपाय न करोगे तब तक ये न छूटगे और प्राण भी ले लेगे। जो तुम मलीदा या इतनी भेंट दो तो हम मत्र जप पुरश्चरण से झाड के इनको निकाल द। तब वे अधे और उनके सम्बन्धी बोलते हैं कि महाराज ! चाहे हमारा सर्वस्व ले जाओ परन्तु इनको अच्छा कर दीजिये।" तब तो उनकी बन पडती है। वे धूर्त कहते हैं अच्छा लाओ इतनी सामग्री इतनी दक्षिणा देवता को भेंट और ग्रहदान कराओ। झाझ, मृदग, ढोल, थाली लेके उसके सामने बजाते,

(शेष पृष्ठ ६ पर)

वेदामृत का पान करो और जीवन को सफल बनाओ

ले०—श्री चमनलाल आर्य

प्राचीनतम वैदिक धर्म ही हमारा सब का धर्म है, जिसका धारण करना मानव मात्र के लिए कल्याण का हेतु है। इसको धारण और मनन कर के हमें अपने सब व्यवहार तदनुकूल करने चाहिये।

ताम्यामुद्धृत्य वेदमथ कर्माणि कृण्महे
अथर्ववेद १९।६८।१

यह ज्ञान ऐसा वरद है कि सभी भौतिक मङ्गलों का ही देवे वाला नहीं है अपितु मनुष्य का परम पुरुषार्थ, लक्ष्य, मोक्ष को भी देवे वाला है।

आयु प्राण प्रजां पशु
कीर्ति द्रविण ब्रह्मवर्चसम्।
मह्यं दत्त्वा
व्रजत ब्रह्मलोकम्।
अथर्व० १९।७१।१

अर्थात् वेद के विधिपूर्वक स्वाध्याय से ससार के सभी भौतिक मङ्गल जैसे दीर्घ आयु, जीवन शक्ति, सुन्दर योग्य सन्तान, पशु, कीर्ति-यश, और धन-धान्य तो प्राप्त होंगे ही, उसके साथ-साथ मोक्ष-ब्रह्मलोक की भी प्राप्ति हो सकती है। याद रहे कि ससार के सब मङ्गल इन सातो मङ्गलो में समाविष्ट हो जाते हैं। आठवां मङ्गल ब्रह्मलोक की प्राप्ति परमात्मा का साक्षात्कार अर्थात् मोक्षपद की प्राप्ति ही सभव है, यह निश्चय ही है।

आर्यसमाज के प्रवर्तक सस्थापक, युग पुरुष प्रात स्मरणीय महर्षि देव दयानन्द जी ने वेद का पढना पढाना, सुनना सुनाना आर्यों का धर्म ही नही, किन्तु परम धर्म माना है। आर्यसमाज का तीसरा नियम यही तो है—वेद सब सत्य विद्याओ का पुस्तक है, इसका पढना-पढाना, सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।" और व्याकरण के प्रथम आचार्य महर्षि पतञ्जलि ने इस वेद की महत्ता को दर्शाते हुए अपने सुप्रसिद्ध ग्रथ महाभाष्य में एक स्थान पर वेदो के सम्बन्ध मे लिखते हुए कहा है कि—एक शब्द सम्यग् ज्ञात सुप्रयुक्त स्वर्ग लोके कामधुग् भवति।'

अर्थात् यदि वेद के एक शब्द को भी भलीभाति समझ लिया जाये, और समझ कर तदनुसार आचरण किया जाये तो वह हमारे इस ससार को स्वर्ग बनाने की शक्ति रखता है तथा हमारे लिए कामधेनु बन जाता है। वेद के एक-एक शब्द में हमारे जीवन को सुन्दर और सफल बनाने की इतनी अपार शक्ति है। यदि वेद के किसी एक मन्त्र, पूरे सूक्त, पूरे मण्डल, काण्ड या अध्याय और अन्त में पूरे वेद को ही कोई भलीभाति समझ ले और उसके अनुसार अपना आचरण भी बना ले तो उसे जो सुख मङ्गल प्राप्त होगा, उसकी तो कल्पना भी सुगमता से नही की जा सकती। परन्तु वेद सब को सुलभ नही है और न ही सब इन को पढ़ने और मनन करने की क्षमता ही रखते हैं। अत भिन्न-भिन्न विषयो से सम्बन्ध रखने वाले कुछ महत्वपूर्ण वेद मन्त्रों के मन्त्रांश यहा देने का प्रयास किया गया है। आशा है पाठकगण विशेषकर नवयुवक इन मन्त्राशो का गम्भीरता से स्वाध्याय कर के मनन करेंगे, तो निश्चय ही इस भ्रष्टाचार से प्रभावित मनुष्य समाज में आदमी को कुछ-कुछ शान्ति मिलेगी और जीवन का आनन्द प्राप्त कर सकेंगे।

ताम्यामुद्धृत्य वेदमथ कर्माणि कृण्महे
अथर्व १९।६८।१

भावार्थ—वेदों को पढकर इनसे ज्ञान प्राप्त कर के मनुष्य को कर्म करने चाहिये, इसमें ही कल्याण निहित है।

उतो त्वस्मै तन्व विसस्रे जायेव पत्य उशती सुवासा।
ऋग्० १०।७१।४

भावार्थ—सच्चे अर्थों मे वेदवाणी का अध्ययन करने वाला व्यक्ति ही इस के असली स्वरूप-रहस्य को समझ पाता है।

यो जागार तमयं सोम आह तवाहमस्मि सख्ये न्योका।
ऋग् ५।४४।१४

भावार्थ—सावधान होकर काम करने वालों को ही उस आनन्द स्वरूप प्रभु के दर्शन होते हैं।

तमेव विद्वान् न बिभाय मृत्योः।
अथर्व १०।८।४४

भावार्थ—उस आनन्दकन्द भगवान् को जान कर ही मनुष्य मृत्यु के डर से कदाचित् भयभीत नहीं होता।

तेनौदनेनातितराणि मृत्युम्।
अथर्व ४।३५

भावार्थ—उस मोक्षप्रदाता प्रभु की सहायता से मनुष्य मृत्यु को तर जाता है।

यो जात एव प्रथम।
ऋग्० २।१२।१

भावार्थ—वह भगवान् प्रादुर्भूत होते ही सब से मुख्य हो जाता है।

आदर्य पुष्टानि।
ऋग्० २।१२।४

भावार्थ—परमात्मा धर्माचरण के शत्रु व्यक्ति की पुष्टियों को हर लेता है।

वेनस्तत् पश्यत्, इद पृश्निरदुहत्।
अथर्व० २।१।१

भावार्थ—तत्वदर्शी विद्वान् ही उसका साक्षात् कर सकते हैं। उस परब्रह्म को अनेक वर्णों वाली यह प्रकृति प्रकट कर रही है।

यो देवानां नामध एक एव?
अथर्व० २।१।३

भावार्थ—जो एक ही (परमपिता परमात्मा) सब देवो के नामों का धारण करने वाला है—अर्थात् उस एक के ही अनेक नाम हैं।

तं सप्रश्नं भुवना यन्ति सर्वा।
अथर्व० २।१।३

भावार्थ—सब का गन्तव्य, ज्ञातव्य और प्राप्तव्य वही एक परमात्मा ही है—अन्य और कोई नहीं।

स न पर्षदति द्विषः
ऋग्० १०।१८७।१

भावार्थ—प्रभु हम को द्वेषों से, अप्रीति-कारक बातों से पृथक् रखे।

पश्यन्ति सर्वे चक्षुषा न सर्वे मनसा विदु।
अथर्व० १०।८।१४

भावार्थ—साधारणत मनुष्य उस महान् प्रभु को इन चर्म चक्षुओं से देखना चाहते हैं। मन से तो कोई भी नहीं जानता।

इद पृश्निरदुहत्।
अथर्व० २।१।१

भावार्थ—उस ब्रह्म को अनेक गुणों वाली प्रकृति सब ओर से प्रकट कर रही है।

यस्य छायाऽमृत यस्य मृत्यु।
ऋग्० १०।१२१।२

भावार्थ—जिस प्रभु का आश्रय अमृत है और जिस से विमुख होना मृत्यु समान है।

यो देवेष्वधि देव एक आसीत्।
ऋग्० १०।१२१।८

भावार्थ—जो देवों में एक ही देव है अर्थात् देवो का भी देव महादेव है।

वय स्याम पतयो रयीणाम्।
ऋग्० १०।१२१।१०

भावार्थ—हम सब ही भौतिक तथा आत्मिक धन ऐश्वर्यों के स्वामी बने।

धियो यो न. प्रचोदयात्।
यजु० ३६।३

भावार्थ—यह तेजस्वी प्रभु हमारी बुद्धियों और कर्मों को सन्मार्ग में प्रेरित करे।

(पृष्ठ ३ का शेष)

यज्ञ द्वारा वृष्टि…

गाते और उनमें एक पाखण्डी उन्मत्त होके नाच कूद के कहता है 'मैं' इसका प्राण ही ले लूगा। तब वे अंधे उस भंगी चमार आदि नीच के पगों में पड के कहते हैं आप चाहैं सो लीजिये, इसको बचाइये। तब वह धूर्त बोलता है; मैं हनुमान हू, लाओ पक्की मिठाई, तेल, सिन्दूर, सवा मन रोट और लाल लंगोट। मैं देवी या भैरव हूं, लाओ पांच बोतल मद्य, बीस मुर्गे, पांच बकरे, मिठाई और वस्त्र। जब वह कहते हैं कि जो चाहो सो लो तब तो वह पागल बहुत नाचने कूदने लगता है। परन्तु जो कोई बुद्धिमान उनकी भेंट पांच जूता, डंडा या चपेटा, लातें मारे तो उसके हनुमान्, देवी और भैरव झट प्रसन्न होकर भाग जाते हैं, क्योंकि वह उनका केवल धनादि हरण करने का प्रयोजनार्थ ढोंग है।

आर्यसमाज से

एक पल के भी लिए यदि सूर्य की नभ से सुलह हो,
कौन जाने, फिर न आगे और कोई भी सुबह हो,

याद कर इतिहास अपना तू अंधेरे से लड़ा था,
पांच भी क्यों, एक ही कुरुवंशियों से तू अड़ा था,

धाक तेरी हर तरफ थी हर तरफ डंका बजा था,
दुश्मनों के दिल दिमागों पर अनोखा दबदबा था,

तत्व चिन्तक को दिया था सत्य का आधार तूने,
नाव जो डूबी हुई थी, दी लगा उस पर पार तूने।

सौ बरस से भी अधिक से तू तपी तप कर रहा है,
जाति को जीवन्त करने के लिए तू मर रहा है।

दुःख यह तेरा कठिन तप भी न कुछ परिणाम लाया,
आर्य अब हिन्दू प्रणव के स्थान पर भी राम आया,

आर्य जगती को बनाना स्वप्न की सी बात है अब,
सोचने की भी इसे क्या रह गई औकात है अब।

था जगाना दूसरों को और तू खुद सो गया है,
है गजब कितना कि अन्वेषक स्वयं ही खो गया है।

राह भूला रहनुमा तू खो चला पहचान अपनी,
खो चला सम्मान पहला वह चमक वह शान अपनी।

देश के स्वाधीनता-संघर्ष का आरम्भ है तू,
नींव तू ही इस भवन की और इसका स्तम्भ है तू।

शंख तेरे ही प्रवर्तक ने गुंजाया क्रान्ति का था,
दुर्ग उसने ही गिराया दम्भ का चिर भ्रान्ति का था।

जो मिला उसकी जलाई आग से पहला उजाला,
देश ने उसमें पढ़ी स्वाधीनता की वर्णमाला,

और तब बलिवेदिका पर प्राण-पुष्पों को सजाते,
हर मुहिम पर पुत्र तेरे ही बढ़े बाल-गीत गाते।

मातृ-भू-पर्याय तू था हर समर तूने लड़ा था,
शौर्य का इतिहास अपने रक्त से तूने घड़ा था।

देश के ही साथ तुझको धर्म भी तो था बचाना,
गोलियों के साथ यों था, तू छुरों का भी निशाना।

देश जिन्दा आज तुझ से धर्म भी जीवन्त तुझ से,
वेद का साहित्य संस्कृत फिर हुए श्रीमन्त तुझ से।

दुःख यह तेरी तुझे ही हो चली विस्मृत कहानी,
जो दिलाये याद बाकी अब न कोई भी निशानी।

भूल जो जाये स्वयं को कौन उसको याद रखता,
शीर्ण होते वृक्ष को फिर कौन कर आबाद सकता।

और इस पर बदनसीबी यह कि जो नेता कहाते,
और ही तस्वीर तेरी आज वे जग को दिखाते।

दिव्य मुख तेरा 'तमस' से ये बराबर पोतते हैं,
तप-तितिक्षा भूल मिथ्या दोष तुझ पर थोपते हैं।

और तू निश्शक्त इतना शब्द दो कहने न पाया,
आह! क्या तू सौ बरस की उम्र में इतना बुढ़ाया,

संगठन तुझ से पुराने आज भी हैं दनदनाते,
पर इधर, तू प्राण जिनका आंख वे तुझ से चुराते।

आज 'सागर' की तरंगें कर रहीं आघात तुझ पर,
कौन जाने, मूक नभ भी कर पड़े पवि-पात तुझ पर

मोहरा तेरा बना कर घुस गये कितने सयाने,
इस तरह निज सद्म में ही हो चला तू बेठिकाने।

यह दशा अवलोक तेरी टीस उठती है हृदय में,
उस समय की वह प्रतिष्ठा वह उपेक्षा इस समय में।

कौन कहता है कि अब तू बात कल की हो गया है,
सत्य तो यह आज तू कल से जरूरी हो गया है।

वे पुराने लक्ष्य तेरे आज भी तो अनछुए हैं,
उस समय से सौ गुने अब जब कि विघ्नों के कुएं हैं,

न्याय सामाजिक न निचले वर्ग को अब तक मिला है,
वर्णगत अभिमान का कायम अभी तक सिलसिला है।

रूढ़ियां कुछ थीं, नई कुछ जन्म लेती जा रही हैं,
नारियां दायाद्य-पीड़ित अग्नि पथ अपना रही हैं

व्यक्ति और समाज दोनों मूल से च्युत हो चुके हैं,
नाश के हम बीज संस्कृति छोड़ अपनी बो चुके हैं।

सौ गुना पाखण्ड फैला, बन रहे अवतार सौ सौ
नष्ट सुचरित चिर पतन के खुल रहे नित द्वार सौ-सौ।

कौन है तेरे बिना जो इस तरफ कुछ ध्यान देगा,
देश के हित, धर्म के हित कौन अपने प्राण देगा।

तू संभल सिरमौर जग का देश बन जिस में सुहाये,
तू संभल तो धर्म वैदिक विश्व में चिर व्याप्ति पाये।

तू संभल सर्वस्व अपना आज खतरे में पड़ा फिर,
बन प्रभंजन तू उड़ा षड्यन्त्र-बदली जो रही घिर।

देह कब तू, प्रेरणा है भले ही हम हैं पर अमर तू,
मन्त्र है, संकल्प है तू, सब डरें पर रह निडर तू।

धर्मवीर शास्त्री
बी १/५१, पश्चिम विहार नई दिल्ली ६३

सम्पादक के नाम पत्र

यज्ञ के सम्बन्ध में एक निवेदन

१ मई के अंक में लेख पढ़ा जो श्री रमेश मुनि जी वानप्रस्थ ने लिखा है (यज्ञ का वैदिक विधि) जिसमें उन्होंने विधि तो कोई नहीं बनाई यहां तक कि तांबे के चमस का नाम लिया जरूर मगर इसके हानि लाभ से परिचित नहीं किया जब कि वैज्ञानिक रीति से भी यह बात रोज हम देखते हैं कि दूध दही घृत इत्यादि दुग्ध से निर्मित वस्तुएं तांबे के या पीतल के पात्र में विष युक्त हो जाती हैं। क्या हमें यज्ञ में विष युक्त वस्तुएं डालनी चाहिए। इन वस्तुओं से वायुमण्डल में विष का प्रभाव बढ़ेगा और दूसरी बात जो (स्विष्टकृत्) की आहुति के बारे में (जो स्विष्टकृत की आहुति मोहन भोग हलवा मिष्टान्न इत्यादि से दी जाती है) कहने का तात्पर्य यह है कि भगवान दयानन्द ने जहां स्विष्टकृत् आहुति लिखी वह केवल भात या भात के अभाव में घृत पूर्ण चमस का विधान दिया है। भात का अर्थ है केवल पानी में उबले हुए चावल उनके अन्दर कुछ डाल देंगे तो वे और नाम से पुकारे जायेंगे, केवल भात नहीं। मिष्टान्न या मीठे का तो कोई मतलब ही नहीं। आज कल कुछ इस प्रकार की प्रथा चल पड़ी है। बड़े-बड़े आर्य समाज के अधिकारी, वयोवृद्ध आर्यसमाजी (ज्ञान वृद्ध का प्रयोग जान बूझ कर नहीं कर रहा हूं) क्योंकि स्वाध्याय तो लगभग आर्यसमाजियों ने अलमारियों में बन्द करके रख दिया है। सन्ध्या हवन के कुछ उल्टे सीधे मन्त्र याद हुए नहीं कि वो अपने को कट्टर आर्यसमाजी कहने लगता है। ना सिद्धान्तों का पता, ना वेद मन्त्र अशुद्ध बोलने में क्या दोष है इस बात का। वरेण्य को वरेणियं और भुवः स्वः को भव-सव बोलते हुए देखकर बड़ा खेद होता है और बड़ा कष्ट लगता है। क्या आश्चर्य की बात है कि बड़े शीर्षस्थ नेता भी जिनके ऊपर आर्यसमाज जैसी पवित्र संस्था का भार है। वो जब किसी यज्ञ में सम्मिलित होते हैं तो कहते हैं स्वस्तिवाचन, और शान्तिकरण के ५-५ मन्त्र आगे पीछे के बोल लो पूर्ण स्वस्तिवाचन शान्ति करण की क्या आवश्यकता है। क्या कहीं ऋषि ने इस प्रकार की छूट दी है, अगर वो स्थल लिखकर भेजने की कृपा करें तो महती कृपा होगी। समयाभाव का बहाना बनाकर मूर्ख जनता को धोखे में डालते हैं। इसी से आर्यसमाज रूपी सुन्दर उपवन जो त्यागी तपस्वी वीतराग महात्माओं

(शेष पृष्ठ ७ पर)

कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय में दयानन्द पीठ बंद करने का संकेत

आर्य जगत् में व्यापक प्रतिक्रिया

नई दिल्ली, २८ अप्रेल।

कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के अन्तर्गत विगत १२ वर्षों से चलते आ रहे दयानन्द शोध पीठ और उस पर नियुक्त दयानन्द प्रोफेसर के पद को समाप्त किया जा रहा है। इस पद पर कार्य करते हुए डा० श्री निवास शास्त्री और डा० कपिलदेव शास्त्री जैसे विद्वानों ने वैदिक साहित्य और ऋषि दयानन्द के वेद विषयक दृष्टिकोण पर अनेक ग्रंथों की रचना की थी, और यह ग्रन्थ विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित भी किए गए थे। साथ ही अनेक शोध-छात्रों ने भी यहां शोध कार्य को सम्पन्न किया।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्दबोध सरस्वती ने बताया कि डा० कपिलदेव शास्त्री के अवकाश ग्रहण करने के बाद इस पद पर किसी नए विद्वान् की नियुक्ति करने पर आनाकानी की जा रही है।

स्वामी जी ने कहा कि इस समाचार से समूचे आर्य जगत् में उत्तेजना फैलना स्वाभाविक है। उन्होंने कहा कि यह हरियाणा प्रान्त आर्यसमाज के कार्य कलापों का गढ माना जाता है। यदि कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय के सचालकों ने इस प्रकार की गलती की तो देश भर में इसकी जोरदार प्रतिक्रिया होगी।

स्वामी आनन्दबोध सरस्वती ने हरियाणा के मुख्य मन्त्री चौधरी देवीलाल जो विश्वविद्यालय के कुलपति भी हैं तथा हरियाणा के शिक्षा मन्त्री को पत्र लिख कर अवगत कराया है कि एक ओर तो भारत सरकार देश के सभी विश्वविद्यालयों में शकर विद्यापीठ स्थापित करने की घोषणा कर रही है और दूसरी ओर हरियाणा सरकार द्वारा महर्षि दयानन्द विद्यापीठ को समाप्त करने का दुष्प्रयास हो रहा है। उन्होंने कहा कि आर्यसमाज के जागरूक प्रहरी देवीलाल सरकार की इस मूर्खतापूर्ण गलती का देशव्यापी विरोध करेंगे।

इस विषय में आर्यसमाज का एक शिष्टमण्डल जल्दी ही चौधरी देवीलाल से मिलेगा उसके पश्चात् अन्तिम निर्णय करेगा।

सच्चिदानन्द शास्त्री
महामन्त्री

तन रत्न

मानव तन पाना मुश्किल ना मानवता पाना मुश्किल है
सब नाम धर्म का लेते हैं, पर दिल से निभाना मुश्किल है
जो नाम धर्म का लेते हैं, और बीज पाप का बोते हैं
है पाप कमाना बहुत सरल, पर फल पाने पर रोते हैं
माना जीवन में आती हैं, उत्थान पतन की घड़ियां भी
आराम में तो सब हंसते हैं दुःख में मुस्काना मुश्किल है
वो मानव भी क्या मानव है, जो काम किसी के ना आये
अपयश का पाना मुश्किल ना, पर यश का पाना मुश्किल है
नभ को प्यारे देख जरा, वो साफ शून्य और निर्मल है
मन मलीन करना बहुत सरल, मन साफ बनाना मुश्किल है
तन से परोपकार करें, और मन से शुद्ध विचार करें
गलती करना तो बहुत सरल, सीधे राह आना मुश्किल है
नहीं कथनी करनी में भेद करे,
चाहे विष भी घोल के पीना पड़े।
मानव तन रतन 'अमर' जग में,
फिर मोल कराना मुश्किल है।

—अमरनाथ आर्य
सांगानेरी गेट, जयपुर-३

आर्यसमाज के अधिकारियों की सेवा में नम्र निवेदन

आर्यसमाजों का वित्तीय वर्ष ३१ मार्च १९८८ को समाप्त हो गया है। आप आगामी वर्ष की वार्षिक साधारण सभा बैठक विधानानुसार १५ जून १९८८ तक अवश्य आयोजित कर लें। तथा आगामी वर्ष के लिए अधिकारियों, आर्य वीर दल के लिए अधिष्ठाता का नाम, आगामी तीन वर्ष के लिए दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के लिए प्रतिनिधियों का निर्वाचन कर लें। आपको समाज की ओर से प्रथम दस सभासदों पर एक और प्रत्येक अतिरिक्त बीस सभासदों पर एक प्रतिनिधि निर्वाचित किया जा सकता है, जिसकी आयु पच्चीस वर्ष से कम न हो और जो पिछले दो वर्षों से समाज का सभासद रहा हो।

आप १५ मई १९८८ तक निम्नलिखित विवरण तथा धनराशि सभा कार्यालय में भिजवाने की कृपा करें—

१ १ अप्रेल १९८७ से ३१ मार्च १९८८ तक का वार्षिक विवरण—

(अ) यज्ञ, संस्कार, शुद्धियां, अन्तर्जातीय विवाह, दिन के समय साधारण रीति एवम् बिना दहेज कराये गये विवाहों का तथा समारोहों का विवरण।

(आ) समाज के आधीन चल रही संस्थाओं, विद्यालयो, चिकित्सालय, पुस्तकालय सेवा समिति, आर्य वीर दल आदि का विवरण।

२. १ अप्रैल १९८७ से ३१ मार्च १९८८ तक का आय-व्यय विवरण।

३ सदस्य सूची निम्नलिखित फार्म के अनुसार स्वयं बना लें—
क्रम संख्या (सदस्य का नाम) (पिता का नाम) (वर्ष भर में प्राप्त सदस्यता शुल्क)

४. सदस्यता शुल्क का दशांश, वेद प्रचार राशि और आर्य सन्देश का वार्षिक शुल्क २५ रुपये।

आशा है कि आप समयानुसार कार्यवाही कर के सक्रिय सहयोग प्रदान करेंगे।

सूर्यदेव
महामन्त्री

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय नरेला में उपराज्यपाल महोदय का शुभागमन

कन्या गुरुकुल की कार्यकारिणी समिति के निमन्त्रण पर महामहिम उपराज्यपाल श्री हरिकिशन लाल कपूर महोदय गुरुकुल के निरीक्षण हेतु दिनांक २१।४।८८ को कुलभूमि में अपने विभागीय अधिकारियों सहित प्रातःकाल पधारे। मुख्य द्वार पर गुरुकुल की ब्रह्मचारिणियों ने मस्तक पर तिलक एवम् पुष्पवर्षा से आपका स्वागत मंगल अभिनंदन किया। कार्यकारिणी के सदस्यों की अगवानी में कन्याओं द्वारा वेदमन्त्र गायन एवम् बैण्ड वादन के साथ यज्ञशाला में पधारे तथा गायत्री मन्त्र द्वारा आहुति देकर पुण्य लाभ किया। सभा आरम्भ होने पर कन्याओं ने नवीन शैली से वेदमन्त्र गायन, संस्कृत के स्वागत गीत एवम् संस्कृत भाषण द्वारा माननीय अतिथि महोदय का अभिनन्दन किया। पश्चात् गुरुकुल के अधिकारीगण आर्यसमाज के सदस्यगण नरेला एवम् देहात के प्रतिनिधिगण ने माल्यार्पण द्वारा श्री उपराज्यपाल का स्वागत किया। पश्चात् श्री महामन्त्री जी, चौ० हीरासिंह जी अध्यक्ष महोदय एवम् पूज्य कुलपति श्री स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती ने संस्था का परिचय, विद्यालय, छात्रावास, गोशाला, प्रथम कक्षा से लेकर आचार्य एम०ए० पर्यन्त उच्च शिक्षा के विकास में उत्पन्न समस्याओं की ओर उपराज्यपाल महोदय का ध्यान आकृष्ट किया।

उत्तर में माननीय कपूर साहब ने अपने सारगर्भित भाषण में संस्कृत साहित्य के विशाल ग्रन्थों, वेदों, उपनिषद, रामायण, महाभारत, गीता में निहित उच्च कोटि के ज्ञान की प्रशंसा करते हुए संस्कृत को विश्व भाषाओं की जननी कहा, कन्याओं की शिक्षा की प्रशंसा की, भूमि सम्बन्धी व अन्य कठिनाइयों को दूर करवाने का वचन दिया। कन्याओं के कार्यक्रम, दिनचर्या एवम् शिक्षा प्रणाली से प्रसन्न होकर आर्थिक सहायता के रूप में १०००००/-(एक लाख रुपये) का अनुदान देने की घोषणा की।

कर्मवीर आर्य
महामन्त्री

आर्यसमाज मन्दिर समुदाय भवन पुष्पांजलि इन्कलेव का वार्षिकोत्सव धूमधाम के साथ सम्पन्न

आर्यसमाज पुष्पांजलि एन्क्लेव का वार्षिकोत्सव ११ से १७ अप्रेल १९८८ तक बडी धूमधाम के साथ सम्पन्न हो गया। वार्षिकोत्सव के उपलक्ष्य में प्रतिदिन प्रात. यज्ञ तथा रात्रि में दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के सुप्रसिद्ध भजनोपदेशक पं० वेदव्यास जी के मधुर भजन हुए तथा आर्यसमाज के उच्चकोटि के वैदिक विद्वान् पं० सत्यपाल बेदार जी द्वारा श्रीमद् भगवद्गीता पर कथा का आयोजन किया गया।

शनिवार और रविवार को विशेष आयोजन रखे गये। जिसमें आर्य महिला सम्मेलन, कवि सम्मेलन तथा वेद सम्मेलनों का आयोजन किया गया।

उपर्युक्त सम्मेलनों में श्रीमती डा० शारदा वर्मा, श्रीमती देववाणी, शान्ता भारद्व, सुरेश भार्गव, सार्वदेशिक सभा के महामन्त्री डा० शिव कुमार शास्त्री, श्री सत्यपाल जी मधुर, डा० रघुवीर वेदालंकार, डा० कृष्ण लाल जी, डा० धर्मपाल प्रधान दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, डा० सत्यकाम वर्मा, आचार्य पृथ्वीराज शास्त्री ने भी वेदों के आधार पर उपदेश तथा भजनोपदेश से आर्य जनता का मार्गदर्शन किया। कार्यक्रम की समाप्ति पर ऋषि लगर का भी आयोजन किया गया। सभी कार्यक्रम पूर्ण रूप से सफल रहे।

विद्याधर वर्मा, मन्त्री

रसीदें गुम हो गयीं

आर्यसमाज मन्दिर जनकपुरी सी ब्लाक नई दिल्ली की रसीद न० ९०१ से १०००=१०० रसीदें ८५७० से ८५७५= रसीदें गुम हो गई हैं जिसे मिलें वह आर्यसमाज के पते पर भिजवा दें। इन रसीदों की वैधानिकता समाप्त कर दी गई है। सर्वसाधारण को सूचित किया जाता है कि कोई इनका दुरुपयोग न करें वे वैध नहीं हैं।

(पृष्ठ ५ का शेष)

यज्ञ के सम्बन्ध में…

ने अपने बलिदानों और पसीने से सींचा था, उसकी यह हालत हो गई है कि जितने भी विद्वान् चले जाते हैं उनका स्थान नहीं भर पाता है। वेदों में तो विद्वानों के सत्कार की बात कही गई है। राजा और विद्वान् की तुलना करते हुए लिखा है कि—

विद्वत्वञ्च नृपत्वञ्च नैव तुल्य कदाचन। स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान् सर्वत्र पूज्यते।

और इन्होंने लिखा है कि लकडियां कूट पीस कर सामग्री बना लेते हैं। इससे क्या तात्पर्य है। लकडियों के रूप में भगवान् ने अमूल्य औषधियां जो आयुवर्धक, रोगनाशक, सुगन्धिकारक वायु, वृष्टि की शुद्धि करने वाली हैं, दी हैं। उनका प्रयोग ही सामग्री में करने का विधान है। यहां तक कि समिधा भी अमुक-अमुक वृक्ष की लेनी चाहिए इसका भी विधान है। अभाव में किस प्रकार की समिधा प्रयोग में ला सकते हैं। मगर अन्याय नहीं होना चाहिए। अतएव रमेश मुनि जी अपनी बात को स्पष्ट रूप से प्रकाशित करवाये जिससे आम जनता में भ्रम न फैले।

आर्य वीर दल दिल्ली प्रदेश का प्रशिक्षण शिविर

१ जून से १२ जून तक

दिल्ली प्रदेश में आर्य वीर दल बडे जोर शोर से कार्य कर रहा है। इस समय दिल्ली में अनेक स्थानों पर निरन्तर आर्य वीर दल की शाखायें नित्य चलती हैं। आर्य वीर दल को और अधिक सक्षम बनाने के लिए निर्धारित योजनाओं को क्रियान्वित किया जा रहा है। इस समय १ जून से १२ जून तक प्रशिक्षण शिविर दयानन्द माडल स्कूल, विवेक विहार दिल्ली में लगाया जा रहा है।

आर्य जनों से निवेदन है इस रचनात्मक कार्य में हमें धन का सहयोग अवश्य प्रदान करें।

निवेदक
प्रियतम दास रसवन्त
श्याम सुन्दर विरमानी
आर्य वीर दल दिल्ली प्रदेश
१५, हनुमान रोड, नई दिल्ली।

आर्यसमाज नारायण विहार मे औषधालय का प्रारम्भ

१ मई आर्यसमाज नारायण विहार नई दिल्ली मे एक एलोपैथिक औषधालय का शुभारम्भ किया गया है। इसका उदघाटन समारोह १ मई को सम्पन्न हुआ। उदघाटन सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आनन्दबोध ने किया। इस अवसर पर डा० धर्मपाल एवम् श्री सूर्यदेव जी ने भी अपने विचार व्यक्त किए। डा० धर्मपाल ने कहा, पीडितो की सेवा करना, दुखियो को और दीनो के काम आना ही धर्म है। पशु पक्षी भी हमारी तरह आहार निद्रा और प्रजनन काय करते हैं। वे भी अपने घर (घोंसले) बनाते हैं, उन मे और हम मे धर्म ही एक विशेष है। बुद्धिपूर्वक अपने साथ सभी की उन्नति और कल्याण की कामना करना। महाभारत मे महर्षि की निज कामना भी यही थी। नत्वह कामये राज्य कामये दु ख तप्ताना प्राणिनामार्तिनाशनम्। प्राणियो के दु ख दर्द दूर करने मे मेरा जीवन व्यतीत हो ये व्यास जी की कामना और प्रार्थना थी यही मनुष्यता का चरम लक्ष्य है। डा० धर्मपाल ने आर्यसमाज नारायण विहार के अधिकारियों को धन्यवाद और शुभकामना दी।

श्री सूर्यदेव ने कहा, आर्यसमाज ने प्राणीमात्र की पीडा को समझा और सदैव सेवा और चिकित्सा के लिए कृतसकल्प रहा। आर्यसमाज नारायण विहार ने यह डिस्पेन्सनरी खोल कर गरीबो के नि शुल्क चिकित्सा की व्यवस्था की इसके लिए यह आर्यसमाज साधुवाद की पात्र है।

श्री सूर्यदेव ने आगे बोलते हुए कहा—इस समय पजाब मे आतकवाद से पीडित हिन्दू भाई भी बहुत अधिक दु खी हैं। वे भाग-भाग कर अन्य प्रदेशो मे आ रहे हैं। दिल्ली में भी अनेक परिवार भाग कर आये हैं। मै सभी आर्यसमाजो के अधिकारियों से प्रार्थना करता हू अपने मन्दिर पीडितो के सहायता के लिए खालें। सेवा और सहायता के लिए धन भेजे। आर्यसमाज दीवान हाल मे पजाब से आये। विस्थापितो के लिए व्यवस्था भी की गई है। अधिक से अधिक सहायता भिजवाये।

इस अवसर पर स्वामी आनन्दबोध तथा समारोह के अध्यक्ष पूर्व न्यायमूर्ति ने भी अपना सम्बोधन दिया।

ग्रामीण वेद प्रचार

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा ग्राम प्रचार के लिये ठोस कदम उठा रही है। इस सम्बन्ध में ग्रामो के लिए भजनोपदेशको की नियुक्ति भी की गई है। २९ अप्रैल से ३० तक सभा के प्रचारको द्वारा रघुबीर नगर जे० जे० कालोनी मे धर्म प्रचार किया गया। इस अवसर पर स्वामी स्वरूपानन्द, श्री सत्यदेव स्नातक, प० चुन्नीलाल, श्री वेदव्यास, ज्योतिप्रसाद एव जगदीश प्रसाद ने वैदिक धर्म का प्रचार किया। झुग्गी झोपडी कालोनी मे कुव्यसनो से बचने, धर्म पूर्वक जीवन उत्थान करने तथा नशे आदि से कैसे दूर हो इस पर भजनोपदेशको ने मधुर शैली में उपदेश किया, जो वहा के वासियों ने बडी श्रद्धापूर्वक सुना। सभा प्रधान भी इस अवसर पर पहुचे। उन्होंने उस क्षेत्र मे धर्म प्रचार की सभावना का भी जायजा लिया। डा० धर्मपाल ने बताया इन गरीब वर्ग मे गरीबी के साथ नशे आदि का प्रचलन भी अभिशाप है। हम नशे, स्मैक के विरुद्ध अभियान छेडते हुए इस प्रचार कार्य मे लगे हैं और हमें इसमें सफलता भी मिली है।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ३० | रविवार १५ मई १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८९ | ज्येष्ठ २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपय | विदेश मे ५० डालर, ३० पौंड

एक और जघन्य नरसंहार

पानीपत में तीन नकाबपोश आतंकवादियों ने जघन्य कांड में विवाह मण्डप मे बारातियों पर अन्धाधुन्ध गोलियां बरसाकर सैंत्रह व्यक्तियों की हत्या कर डाली। जहां कुछ बाराती वीडियो फिल्म देख रहे थे, औरतें विवाह के मंगल गीत गा रही थीं और कुछ लोग खाना खा रहे थे, वहां देखते ही देखते हृदय विदारक हाहाकार मच गया। आतंकवादियों के लिए कोई कृत्य वर्ज्य नहीं है। इन सिरफिरे बर्बर लोगों के पास आधुनिक हथियार हैं और दिमाग में एक ही सोच-विचार है—हत्या करनी है। पंजाब में अनेक ग्रामीणों की हत्याएं इसलिए की गई बताई गयी कि उन्होंने मुखबरी की अथवा उन पर मुखबरी का सन्देह हुआ। हरियाणा के विवाह मण्डप में जिनको निशाना बनाया गया उनकी किसी आतंकवादी से क्या तकरार हो सकती है। वे लोग तो खानाबदोश गाड़िया लोहार लोग थे। बारात दिल्ली के नांगलोई क्षेत्र से गई थी।

हरियाणा में आतंकवादियों ने इस वर्ष यह तीसरी वारदात की है। पिछले वर्ष जून में आतंकवादियों ने हिसार के निकट बस रोककर ३६ यात्रियों को गोलियों से भून दिया था। पानीपत हत्याकाण्ड के सिलसिले में अब तक जो सूचनाएं मिली हैं उन से सतर्कता और चौकसी बरतने में पुलिस और सुरक्षाबलों की कुछ लापरवाही लगती है। बताया जाता है कि पानीपत,पुलिस को एक दिन पूर्व सतर्क कर दिया गया था कि आतंकवादी शहर में घुस चुके हैं। पुलिस ने कुछ किया था तो बस यही कि निरंकारी भवन पर पहरेदारी बढ़ा दी लेकिन राष्ट्रीय राज मार्ग, जी० टी० को खुला छोड़ दिया अथवा घटना के समय रात १०.३०-११ बजे गश्ती दल ऊंघ गया। पुलिस पर अंगुली उठाने वाली बात यह भी है कि जी० टी० रोड के निकट जिस शामियाने के नीचे लाशों का ढेर लगा उस जगह से तहसीलदार का घर दो सौ गज से अधिक दूर नहीं है। तहसीलदार के यहा भी उस वक्त चौकीदार नहीं था। और अफसोस की बात यह है कि पुलिस चौकी उस घटना स्थल से आधा किलोमीटर के अन्दर है। पुलिस वहां लगभग एक घण्टे बाद पहुंची।

हिन्दू भारत आना चाहते हैं

विभाजन के समय पाकिस्तान में हिन्दुओं की संख्या ८ करोड थी जो इन ४० सालों में बढने के बजाय सिर्फ २४ लाख रह गई है। पाकिस्तान से भारत आये हिन्दू तीर्थयात्रियों ने उक्त जानकारी देते हुए बताया कि वे शेष बचे २४ लाख हिन्दू भी भारत आना चाहते हैं।

यदि वास्तव में स्थानीय पुलिस को चेतावनी मिलने के बाद भीषण हत्याकाण्ड हुआ है तो अवश्य सुरक्षा व्यवस्था और आतंकवादियों से मोर्चा लेने के प्रयासों के बारे मे नये सिरे से कार्रवाई करनी होगी। ऐसी घटना की जितनी निन्दा की जाए कम है। लेकिन मात्र निन्दा करने से आतंकवादी अपनी अमानुषिक करतूतों से बाज नहीं आने वाले हैं। सरकार की तरफ से आतंकवाद के विरुद्ध दृढसंकल्प व्यक्त करने और सुरक्षाबलों को चौकस करने के बावजूद ऐसे सामूहिक नरसंहार होते रहते हैं, यह अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है। सिरफिरे आतंकवादियों की इन्सान विरोधी, समाज विरोधी गतिविधियों को लेकर किसी वर्ग विशेष में प्रतिक्रिया नहीं हो रही है, यह बड़ी गनीमत है। देश के लोग भाईचारे में विश्वास रखते हैं, विद्वेष में नहीं। आतंकवाद के विरुद्ध मोर्चा लेने के प्रभावी प्रयासों के अन्तर्गत लगता है कि कालान्तर में आम नागरिकों को विशेष रूप से प्रशिक्षित करके हथियार देने पड़ेंगे। निहत्थे कैसे मोर्चा ले सकते हैं। अब तो किसी भी कीमत पर आतंकवादियों को ठिकाने लगाना ही है। आतंकवाद के सामने घुटने टेकने का मतलब राष्ट्र की एकता और अखण्डता का सौदा करना होगा।

आर्यसमाज हनुमान रोड का निर्वाचन स्थगित

८ मई, नई दिल्ली। आर्यसमाज हनुमान रोड का वार्षिक अधिवेशन एवं निर्वाचन दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा नियुक्त पर्यवेक्षक द्वारा स्थगित किया गया।

आर्यसमाज हनुमान रोड नई दिल्ली के कुछ कर्मठ सदस्यों ने सभा प्रधान डा० धर्मपाल से लिखित रूप से आर्यसमाज हनुमान रोड में की जा रही अनियमितताओं तथा निर्वाचन के सम्बन्ध में घोषित सभासदों की घोषणा को अवधानिक ढंग से करने के विषय में शिकायत की। इन पत्रों में यह भी मांग की गई कि निर्वाचन दिल्ली सभा के पर्यवेक्षक की देखरेख में सम्पन्न होना चाहिए। इस सम्बन्ध में कुछ लोग सभा प्रधान से आकर भी मिले। डा० धर्मपाल सभा प्रधान ने सभा के मन्त्री मूलचन्द गुप्त को पर्यवेक्षक बना कर निर्वाचन सम्पन्न कराने भेजा।

आर्यसमाज हनुमान रोड के वार्षिक अधिवेशन में ७२ सभासद घोषित किए गए। सदन में कुल ४० सदस्य उपस्थित थे। उपस्थित सदस्यों में से श्री हंसराज चोपडा, राजीव भाटिया, श्री तिलक राज मल्होत्रा, श्रीयुत सूरी आदि ने वर्तमान अधिकारियों की अनियमितताओं की ओर पर्यवेक्षक श्री गुप्त का ध्यान आकृष्ट किया। इस सबध में सार्वदेशिक सभा के अध्यक्ष को भी कुछ महानुभावों ने पत्र लिखकर शिकायत की थी। इन सदस्यों ने अधिवेशन के स्थगन की मांग की। इसके साथ सदन में भारी शोरगुल मचा, एक दूसरे पर भारी आक्षेप किए गए। सदस्यों ने कहा, आज लेखानिरीक्षक की रिपोर्ट पेश नहीं की जा रही है क्योंकि इसमें भारी घपला है तथा सभासदों को घोषित किए जाने में भी गडबडी की गई है। जो लोग कभी आर्यसमाज मन्दिर मे आते ही नहीं हैं उन लोगों को भी सभासद घोषित कर दिया गया है।

सदन में किए गए घोर आक्षेपों को सुनकर तथा लिखित पत्रों द्वारा की गई आपत्तियों को विचार कर एवं विवाद और संघर्ष की स्थिति को भयानक रूप धारण करती देख कर पर्यवेक्षक श्री मूलचन्द गुप्त ने घोषणा की कि वस्तुस्थिति को देखते हुए मैं संस्था के हित में इस वार्षिक अधिवेशन को स्थगित करता हूं। उन्होंने कहा कि मैं इस आर्यसमाज के सदस्यों से आग्रह करता हूं कि वे आपस में मिल बैठ कर इन सारी अनियमितताओं को एक माह के अन्दर दूर करा लें और फिर वार्षिक अधिवेशन एवं निर्वाचन सम्पन्न करा लेवें। उन्होंने सभा के पूर्ण सहयोग का भी आश्वासन दिया।

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

मृत्यु : जीवन की अनिवार्यता

लेखक—डा० ओमप्रकाश वेदालंकार

★

अन्तकाय मृत्यवे नमः ।—अथर्व० ८।१।१

मृत्युरीशे द्विपदां मृत्युरीशे चतुष्पदाम् ।
तस्मात् त्वां मृत्योर्गोपतेरुद्भरामि स मा बिभे ।।
—अथर्व० ८।२।२३

सर्वान्तक मृत्यु को नमन करते हुए अथर्ववेद के उपर्युक्त मन्त्र में मृत्युपीडा से सन्तप्त अपने अमृतपुत्र मानव को आश्वस्त करते हुए परमकारुणिक प्रभु कहते हैं—हे मृत्युपीडा से उत्पीडित एवम् सन्तप्त मानव ! मत डर, मत डर इन्द्रियों की वास्तविक स्वामिनी गोपति इस मृत्यु से । संसार में दो पाए (मनुष्य) हों या चौपाए, किस पर इसका शासन नहीं है ? किसे यह अपना ग्रास नहीं बनाती ? देख, तू मेरे पास आ ! मैं निश्चय ही इस मृत्यु से तुझे छुड़ाता हूं । मत घबरा, मेरे वत्स ! मत डर !!

वेदमाता के इन वचनों में कैसा अमोघ आश्वासन है ! कितनी शांति है ! कितनी सान्त्वना और प्रेरणा है ! कवि-हृदय के ये स्वर कितने सत्य हैं—

सुख के साथी बहुत हैं,
दुःख का मीत न कोय ।
दुःख का साथी साइयां,
काहि न सुमिरे सोय ।।
जो चाहे कल्यान,
दो बातन को भूल मत ।
'नारायण' इक मौत को,
दूजे श्रीभगवान् ।।

मृत्यु जीवन की अनिवार्यता है । यह प्रतिपल जीवन का पीछा कर रही है, परन्तु फिर भी आश्चर्य यह है कि मानव 'मृत्यु' शब्द को ही सहन नहीं कर पाता । इस शब्द का सुनना भी अशुभ समझा जाता है । किन्तु चाहे ये शब्द कितना ही असह्य क्यों न हो, प्रत्येक जीवधारी प्रतिपल इसी ओर दौड रहा है । एक 'यात्रा' पर जाने का संकल्प कर के 'टिकट' खरीद जेब में रख जब तुम 'रेलगाडी' में बैठ गये हो तो वह यात्रा तो होगी ही । चाहे तुम रेलगाडी में खडे रहो या बैठ जाओ या लेट सको तो लेट जाओ, पढ़ो या चुपचाप ध्यान करते रहो, रेलगाडी तुम्हें गन्तव्य स्थान की ओर ले जा रही है । इसी प्रकार प्रत्येक जीवधारी को जन्म के समय ही मृत्यु का टिकट दे दिया जाता है । वह 'यात्रा' पर चल देता है । तुम भी चाहे जितना प्रतिरोध करो, सुरक्षा के साधन बढ़ा लो, सावधानी बरतो, तुम्हें उस स्थान पर किसी न किसी दिन अवश्य पहुंचना ही पड़ेगा । चाहे और सब कुछ संदिग्ध हो, किन्तु मृत्यु तो असंदिग्ध है ही । इस कानून में परिवर्तन असम्भव है ।

जीवन और मरण संसार की शाश्वत घटनाएं हैं, चिरन्तन सत्य हैं । विश्व की प्रत्येक उत्पन्न वस्तु—चर अचर=प्राणी-अप्राणी, सभी तो जाने-अनजाने इसी ओर बढ़ रहे हैं । क्या आप नहीं देख रहे—फूल विकसित होते ही कुम्हलाने लगता है, चांद उदय होते ही अस्ताचल की ओर बढने लगता है, वस्त्र स्वच्छ होते ही गन्दा होने लगता है, इसी प्रकार प्राणी जन्म लेते ही मृत्यु की तरफ बढ़ने लगता है । सन्त कबीर शब्दों में—

जो ऊग्या सो आथिवे,
फूल्या सो कुमिलाइ ।
जो चिनिया सो ढहि पडे,
जो आया सो जाई ।।

संसार में स्थिरता है कहां ? नदी प्रतिक्षण प्रवाहित हो रही है । शरीर प्रतिक्षण बदल रहा है । शरीर-शास्त्रियों का मत है कि प्रतिक्षण परिवर्तित यह शरीर सात वर्षों में पूरी तरह बदल जाता है । जिस शरीर को लेकर हम यहां आए थे, शायद हम सोचते हों उसी को लेकर हम वापस जाएंगे । यह समझना एक भूल है । शरीर के कितने ही सैल (घटक) इन क्षणों में बदल चुके होंगे ।

श्रीमद्वाल्मीकिरामायण (अयोध्याकाण्ड सर्ग १०५) में राजा दशरथ की मृत्यु के पश्चात् सम्पूर्ण राजपरिवार शोकसन्तप्त है और वन में श्रीराम की सेवा में उपस्थित हो उन से अयोध्या लौटने की प्रार्थना करता है । ऐसे दुःखद अवसर पर मर्यादा पुरुषोत्तम राम समस्त परिजनों, विशेष रूप से भरत को समझाते हुए जिन शब्दों में संसार की निःसारता तथा मृत्यु की अनिवार्यता और वास्तविकता का वर्णन करते हैं, वह इस प्रसंग में विशेष विचारणीय और बोधप्रद है—

सर्वे क्षयान्ता निचयाः
पतनान्ताः समुच्छ्रयाः ।
संयोगा विप्रयोगान्ता
मरणान्तं च जीवितम् ।।१६।।
यथा फलानां पक्वानां
नान्यत्र पतनाद् भयम् ।
एवं नरस्य जातस्य
नान्यत्र मरणाद् भयम् ।।१७।।
यथागारं दृढस्थूणं
जीर्णं भूत्वोपसीदति ।
तथावसीदन्ति नरा
जरामृत्युवशं गताः ।।१८।।
अत्येति रजनी या तु
सा न प्रतिनिवर्तते ।
यात्येव यमुना
पूर्णं समुद्रमुदकार्णवम् ।।१९।।
अहोरात्राणि गच्छन्ति
सर्वेषां प्राणिनामिह ।
आयूंषि क्षपयन्त्याशु
ग्रीष्मे जलमिवांशवः ।।२०।।
सहैव मृत्युर्व्रजति
सह मृत्युर्निषीदति ।
गत्वा सुदीर्घमध्वानं
सह मृत्युर्निवर्तते ।।२१।।

हे भरत ! सभी संग्रहों का अन्त विनाश है, उन्नतियों का अन्त पतन है, संयोगों का अन्त वियोग है और जीवन का अन्त मरण है । जैसे पके फल का गिरना निश्चित है, वैसे ही उत्पन्न हुए मनुष्य का मरना भी निश्चित है । जैसे सुदृढ़ भवन भी पुराना होकर एक दिन धराशायी हो जाता है, वैसे ही बुढ़ापे और मृत्यु के वश में होकर मनुष्य भी एक दिन नष्ट हो जाता है । जो रात्रि एक बार व्यतीत हो जाती है वह दुबारा नहीं लौटती, यमुना भी जलपूर्ण समुद्र में जाकर सदा के लिए विलीन हो जाती है । सब प्राणियों के दिन-रात एक-एक कर बीतते जाते हैं और इस प्रकार ग्रीष्म ऋतु में जलबिन्दुओं की भांति शीघ्र उनकी आयु क्षीण होती जाती है । मृत्यु हमारे साथ-साथ चलती फिरती है, उठती-बैठती है और दीर्घ मार्ग तक चल कर हमारे साथ ही लौट आती है ।

वस्तुतः जरा विचारिए, हमारा यह जीवन क्या है ? जल से भरा एक कुम्भ जो क्षण-क्षण में रीता होता जाता है और हम इसे जान भी नहीं पाते । वेद के शब्दों में—

पूर्णः कुम्भोऽधि काल आहितस्तं वै पश्यामो बहुधा नु सन्तः ।
—अथर्व० १९।५३।३

सन्त (बुद्धिमान्) मनुष्य भरे घड़े के समान काल के स्वरूप का सदा अनुभव करते हैं ।

किन्तु यह भोला मानव काल की ओर निरन्तर बढ़ता हुआ भी प्रसन्न होता है । कितनी-कितनी खुशियां मनाता है एक-एक वर्षगांठ पर ! किसी उर्दू कवि ने ऐसे ही मनुष्य को चेतावनी देते हुए कितना सुन्दर कहा है—

अरे-गर्दू उम्र अपनी
दिन-ब-दिन घटती गई ।
जिस कदर बढ़ते गए
हम जिन्दगी घटती गई ।।
गाफिल तुझे घड़ियाल
यह देता है मुनादी ।
गर्दू ने घड़ी उम्र की
इक और घटा दी ।।

शोकसन्तप्त अर्जुन को गीता (२।२७) में भगवान् कृष्ण ने इसी सत्य पर मोहर लगाते हुए आश्वासन दिया था—

जातस्य हि ध्रुवो
मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे
न त्वं शोचितुमर्हसि ।।

उत्पन्न वस्तु की मृत्यु निश्चित है । मृत वस्तु का जन्म भी उतना ही निश्चित है । इस अनिवार्य सत्य का अनुभव करते हुए हे अर्जुन ! तू क्यों शोक कर रहा है ? जो वस्तु नष्ट होनी ही थी, जिसका अन्तिम परिणाम था ही मृत्यु, उसके लिए कैसा शोक ! कैसा सन्ताप !!

महात्मा कबीर के शब्दों में—

और मुये क्या रोइये,
जो आपा थिर न रहाइ ।
जो उपजे सो बिनसिहै,
दुःख करि रोय बलाइ ।।

महाकवि कालिदास के प्रसिद्ध काव्य 'रघुवंश' के अमर पात्र सम्राट् अज अपनी पत्नी इन्दुमती के निधन पर अपने व्यथित मानस को स्वयं

(शेष पृष्ठ ६ पर)

क्या संसार दुःखरूप है ?

ले०—यशपाल आर्य बन्धु, आर्य निवास, चन्द्रनगर, मुरादाबाद

★

नकारात्मक चिन्तन होने के कारण प्रायः लोग यही कहते हैं कि संसार दुःखरूप है। इसमें सुख कहां है ? जो कहीं थोड़ा-बहुत सुख है भी, तो वह भी दुःखसमन्वित ही है। इसलिए विवेकी जन दुःख की ही विवेचना किया करते हैं। योगदर्शन में आया है कि—"दुःखमेव सर्वं विवेकिनः" अर्थात् विवेकी जनों को सब दुःख ही दुःख दिखाई देता है। तात्पर्य यह है कि विवेकी जन उसे भी दुःख ही मानते हैं, अविवेकी जिसे सुख समझते हैं। सांख्य दर्शन में आता है कि—"न कुत्रापि कोऽपि सुखीति" अर्थात् कहीं-कहीं ही कोई सुखी देखने में आता है, अन्यथा सब ओर दुःख ही दुःख है। महात्मा बुद्ध संसार को दुःखों का घर अर्थात् "दुःखमायतन" कहते हैं और नानक जी "दुःखिया सब संसार" की गुहार लगाते हैं।

भर्तृहरि कहते हैं कि—"संसारे रे मनुष्याः वदत यदि सुखं स्वल्पमप्यस्ति किंचित्।" अर्थात् हे मनुष्यो! इस संसार में तनिक सा भी सुख हो तो हमें बताओ और आगे कहा कि—"सौख्यं कुतः प्राणिनाम्" अर्थात् प्राणियों में सुख कहां है ? संस्कृत के ही एक अन्य कवि का कहना है कि—

दिनमेकं शशि. पूर्णः
क्षीणस्तु बहुवासरान्।
सुखाद् दुःखं सुराणाम-
प्यधिकं का कथा नृणाम् ॥

अर्थात् चन्द्रमा केवल एक ही दिन पूरा होता है, शेष अनेक दिन वह क्षीण ही रहता है। जब देवताओं को भी सुख से अधिक दुःख प्राप्त होता है, तो मनुष्यों की तो बात ही क्या ?

हिन्दी काव्य में भी दुःख का ही रोना रोया गया है। निराला "दुःख ही जीवन की कथा रही" कह कर जीवन को दुःखमय बताते हैं तो महादेवी अपना परिचय ही—"नीर भरी दुःख की बदली" के रूप में देती हैं। ऐसे ही भाव प्रायः अन्य अनेक कवियों ने भी व्यक्त किए हैं। उर्दू भाषा के शायरों ने भी "जिंदगी की राहों में रंजो ग़म के मेलों" का प्रायः वर्णन किया है। विश्वकवि रवीन्द्र नाथ ठाकुर अपनी एक कविता के माध्यम से कहते हैं कि नदी का यह किनारा कहता है कि सब सुख परले पार है। मेरे पास क्या रखा है ? और परला किनारा एक लम्बी सांस लेकर कहता है कि सब कुछ तो उस पार है, मेरे पास तो दुःख ही दुःख है। तात्पर्य यह है कि सुख न इस पार है, न उस पार, सर्वत्र दुःख ही दुःख है।

हमारे सन्तों ने भी संसार को प्रायः दुःखरूप ही माना है। वर्तमान युग के प्रतिनिधि सन्त विनोबा भावे तो उन सब से एक कदम आगे बढ़ कर कहते हैं कि—"वह मूर्खों में भी भारी मूर्ख है जो मानता है कि संसार में सुख है। मुझे जो भी मिला दुःख की कहानी सुनाता मिला।"

अब देखना यह है कि क्या वस्तुतः संसार दुःखरूप ही है और यदि यह वस्तुतः दुःखरूप है, तो ईश्वर ने ऐसा दुःखभरा संसार क्यों बनाया ? हम दुःख के अस्तित्व से तो इन्कार नहीं कर सकते क्योंकि यह प्रत्यक्ष है। और प्रत्येक प्राणी की यही कामना रहती है कि जैसे भी हो दुःखों से छुटकारा मिले। यदि दुःख का अस्तित्व ही न होता, तो फिर यह प्रवृत्ति प्राणीमात्र में क्यों पाई जाती ? अतः यह तो स्पष्ट है कि संसार में दुःख की विद्यमानता अवश्य है। किन्तु संसार में सर्वत्र दुःख ही दुःख है, सुख लेशमात्र भी नहीं, ऐसा कहना भी यथार्थ नहीं। संसार में दुःख भी है और सुख भी। अपितु हमें तो यह परस्पर गुंथे हुए से दृष्टिगोचर होते हैं। यथा—

सुखमध्ये स्थितं दुःखं,
दुःखमध्ये स्थितं सुखम्।
द्वयमन्योन्यसंयुक्तं,
प्रोच्यते जलपङ्कवत् ॥

अर्थात् सुख के मध्य में दुःख स्थित है और दुःख के मध्य में सुख। यह एक दूसरे से ऐसे मिले हुए हैं, जैसे जल और कीचड़। वस्तुतः सुख और दुःख दोनों सापेक्ष हैं। सुख की अपेक्षा से दुःख और दुःख की अपेक्षा से सुख। एक के बिना दूसरे की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इस सम्बन्ध में महर्षि का कथन है कि—"जो सब दुःख ही हो सुख कुछ भी न हो; तो सुख की अपेक्षा के बिना दुःख सिद्ध नहीं हो सकता। जैसे रात्रि की अपेक्षा से दिन और दिन की अपेक्षा से रात्रि होती है। इसलिए सब दुःख मानना ठीक नहीं।"

(सत्यार्थप्रकाश द्वादश समुल्लास)

स्पष्ट है कि संसार न केवल दुःखरूप है न केवल सुखरूप। इसमें सुख भी है और दुःख भी। और सत्य तो यह है कि—

सुखस्यानन्तरं दुःखं
दुःखस्यानन्तरं सुखम्।
द्वयमेतद्धि जन्तूनाम-
लंघ्यं दिनरात्रिवत् ॥

अर्थात् सुख के पीछे दुःख और दुःख के बाद सुख अवश्य आता है। प्राणियों के लिए ये दोनों दशाएँ उसी प्रकार अवश्यम्भावी हैं, जिस प्रकार दिन के बाद रात और रात के बाद दिन।

आर्यसमाज के यशस्वी संस्थापक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती एक नवीन स्थापना एवं उद्भावना दी। उनकी मान्यता है कि संसार दुःखरूप नहीं। अपनी इस स्थापना के समर्थन में महर्षि अकाट्य तर्क प्रस्तुत करते हैं। वे लिखते हैं कि—

जो सब संसार दुःखरूप होता तो किसी जीव की प्रवृत्ति न होनी चाहिए। संसार में जीवों की प्रवृत्ति प्रत्यक्ष दीखती है, इसलिए सब संसार दुःखरूप नहीं हो सकता।"

(सत्यार्थप्रकाश द्वादश समुल्लास)

संसार में जीवों की प्रवृत्ति से कोई इन्कार नहीं कर सकता। अतः महर्षि का यह प्रश्न बड़ा जोरदार है कि यदि संसार दुःखरूप ही है, तो फिर जीवों की इसमें प्रवृत्ति क्यों है ? हम देखते हैं कि हमारी प्रवृत्ति इतनी अधिक है कि हम संसार को छोड़ना ही नहीं चाहते और यदि कोई इसे हम से बलात् छुड़ाता है तो हम रोते हैं, चिल्लाते हैं। संसार में यह देखा गया है कि कोई मरना नहीं चाहता। मृत्यु चूंकि संसार को छुड़ाती है, इसीलिए वह किसी को प्रिय नहीं। उर्दू के शायर 'दाग' ने ठीक ही कहा है कि—

जीस्त अच्छी नहीं
तो "दाग" जीते क्यों हो ?
जान प्यारी भी नहीं,
जान से जाते भी नहीं ॥

एक अन्य शायर ने भी कुछ ऐसा ही कहा है। यथा—

सब जिन्दगी को कहते
हैं दर्दे-सर मगर।
मरने के वास्ते कोई
तैयार भी नहीं ॥

जहां तक महर्षि की मान्यता है, उन्होंने न केवल इस बात का खण्डन किया है कि संसार दुःखरूप है, अपितु वे इस बात पर बल देते हैं कि संसार में दुःख की तुलना में सुख कहीं अधिक है। महर्षि लिखते हैं कि—

"जो सृष्टि में सुख दुःख की तुलना की जाए तो सुख कई गुना अधिक होता है और बहुत से पवित्रात्मा जीव मुक्ति के साधन कर मोक्ष के आनन्द को भी प्राप्त होते हैं।"

(सत्यार्थप्रकाश, अष्टम समुल्लास)

हर्ष का विषय है कि महर्षि की इस उद्भावना ने विद्वानों को प्रभावित किया है और वे भी इस विषय में अपनी विचारधारा बदलने पर बाध्य हुए हैं। हिन्दी के सुप्रसिद्ध निबन्धकार बाबू गुलाब राय पर इस प्रभाव को स्पष्ट देखा जा सकता है। "हारिये न हिम्मत बिसारिये न राम" नामक अपने निबन्ध में वे लिखते हैं कि—"दुनिया में दुःख और संघर्ष अधिक है, किन्तु उन के पास सुख और शान्ति का अभाव नहीं।" बाबू जी अपने इस कथन की पुष्टि में कुछ तर्क उपस्थित करते हुए लिखते हैं कि—"अस्पतालों की अपेक्षा होटलों की संख्या अधिक है। जेलों की अपेक्षा क्लब और सिनेमाघरों की बहुतायत है।"

अतः स्पष्ट है कि दुःख की तुलना में सुख अधिक है। वैसे भी आप देखें तो मनोरंजन सदन, नाच घर, बारात घर आदि तो सर्वत्र मिल जायेंगे किन्तु मातमघर या शोक सदन कहीं पर दृष्टिगोचर नहीं होता। आश्चर्य है फिर भी लोग संसार को दुःखरूप कहने में संकोच नहीं करते। महर्षि वशिष्ठ का कथन है कि -

अज्ञस्य दुःखमोघमयं
ज्ञस्यानन्दमयं जगत्।
अन्धं भुवनमन्धस्य
प्रकाशं तु सचक्षुषः ॥

अर्थात् जिस प्रकार यह संसार अन्धे को अन्धकारमय और चक्षुवाले को प्रकाशमय देख पड़ता है, उसी प्रकार विद्या से हीन अज्ञानी को संसार दुःख का समूह और विद्यावान ज्ञानी को आनन्दमय दीख पड़ता है। स्पष्ट है कि यह दृष्टि का

(शेष पृष्ठ ८ पर)

कुछ दार्शनिक गुत्थियां और महर्षियों का परिप्रेक्षण

—आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री

महर्षियों की बात को महर्षि ही समझता है। महर्षियों द्वारा लिखे गए ग्रन्थों में ऐसी गुत्थियां हैं जो साधारणतया समझी नहीं जा सकती हैं। महर्षि दयानन्द ने दर्शनों में आये बहुत से विषयों को उसी प्रकार समझा है जिस प्रकार दर्शनकारो ने लिखा था। छ. दर्शनों की रचना के प्रारम्भ को ही लिया जा सकता है। दर्शनों का प्रमुख विषय सत्ता विचार शास्त्र और ज्ञान विचारशास्त्र माना जाता है। अन्य प्रक्रियाएँ और विषय मनोविज्ञान और कर्त्तव्य मीमासा आदि इनके प्रसग से ही वर्णित किए गए हैं।

परन्तु थोडे से विकल्पों को छोड कर सत्ता विचार को प्रासगिक रूप में लाकर वर्णन किया गया है। प्रारम्भ उस से भिन्न विषयों से किया गया है। ऐसा देखने को मिलता है। सांख्य सभी दर्शनो में प्राचीन है। सांख्य का विषय सत्ता की दृष्टि से प्रकृति पुरुष और पुरुष विशेष परमेश्वर है। जो लोग केवल प्रकृति और जीव को ही वर्णित मानते हैं वे गलती पर हैं। परन्तु सांख्य का प्रारम्भ का सूत्र वर्णन करता है, तीन दु खों के निवृत्ति रूप पुरुषार्थ से। यहा पर प्रकृति का वर्णन नहीं प्रारम्भ किया। किया है मोक्ष का वर्णन जो जीव का परम उद्देश्य है।

योग दर्शन का विषय द्रष्टा और दृश्य के स्वरूप को निखार कर योग का वर्णन करना है। परन्तु वह पहले ही योग के अनुशासन और लक्षण से प्रारम्भ करता है।

न्याय और वैशेषिक भी प्रारम्भ करते हैं इसी दृष्टिकोण से मिलते-जुलते प्रकार से। न्याय प्रमाण का वर्णन करता है और प्रमेय का परन्तु इनका तत्वज्ञान नि श्रेयस के लिए है इस दृष्टि से वैशेषिक छ पदार्थों का वर्णन करता है, परन्तु प्रारम्भ करता है धर्म की व्य.ख्या से। और छ पदार्थों का तत्वज्ञान निःश्रेयस का कारण है, इस भावना से।

जैमिनीयमीमासा भी धर्म की जिज्ञासा से शास्त्र का प्रारम्भ करता है। यज्ञ आदि धर्मों का परीक्षण करता है। वेदान्त दर्शन में व्यास ने ब्रह्म जिज्ञासा से शास्त्र का प्रारम्भ किया है। जो सुतराम् ठीक है। वेदान्त शब्द का अर्थ है वेद का अन्त अर्थात् सिद्धान्त जो ब्रह्म के बिना जाने भली प्रकार जाना नहीं जा सकता है। वर्णन के प्रकार में व्यास ने सत्ता विचार के प्रधान विषय को ही प्रथम ले लिया जो अन्य दर्शनों से भिन्न था। कारण यह है कि ब्रह्म वह महती सत्ता है जिस से ही मोक्ष की सिद्धि, धर्म की सिद्धि और वेदान्तों की सिद्धि होती है और वह ऐसी सत्ता है कि जिस के जान लेने पर सब कुछ जाना जा सकता है।

फिर अन्य दर्शनकारों ने सत्ता विचार को लेकर क्यों दर्शन का प्रारम्भ नहीं किया—इसका कारण यह है कि सत्ता ज्ञान का विषय और प्रमाण का मेय अर्थात् प्रमेय हुआ करता है। ज्ञान का विषय और प्रमेय अनन्त हैं। सबका वर्णन किया ही नहीं जा सकता है। उतने का ही वर्णन किया जा सकता है, जिनके तत्वज्ञान से मोक्ष होता है। अत प्रमेय का अर्थ प्रमाणो का अर्थमात्र नहीं है बल्कि प्रकृष्टमेय है। अर्थात् जिन प्रमेयों में हुआ मिथ्याज्ञान ससार वा बन्ध का बीज बनता है और जिन में हुआ तत्व-ज्ञान अपवर्ग का देने वाला होता है उन्ही का वर्णन किया गया है। समस्त प्रमेयों का वर्णन नहीं किया जा सकता है। यही बात ज्ञान के विषय की भी है।

मोक्ष वा अपवर्ग में दु:खों से छुटकारा होता है, परन्तु संसार का सम्बन्ध तो मुक्त जीवों के साथ बना रहता है। ऐसा कोई स्थान नहीं बना है जहां पर ये सभी मुक्त जीव एकत्र रहें और उस स्थान का प्रकृति और जगत् से कोई सम्बन्ध न हो। ऐसा स्थान बन भी नहीं सकता है। कुछ लोगों ने आकाश के बीच में मैगवेट लाइन बनाने की चेष्टा की है, परन्तु ठीक नहीं जची और खण्डनीय है प्रकृति प्रवृत्ति मुक्तों के लिए तो बन्द हो जाती है, परन्तु जो मुक्त नहीं हैं उन के लिए चालू रहती है। प्रकृति विषमावस्था में ससार के रूप में रहती है और कभी साम्यावस्था में प्रलय के रूप में रहती है। इन दोनों ही अवस्था में मुक्तों का सम्बन्ध भी प्रकृति परमाणु आदि से रहता है।

फिर मुक्ति क्या है? परमात्मा के आनन्द में मुक्त जीव का सर्वत्र विचरण होता है और वह आनन्दित रहता है। प्रकृति का सम्बन्ध उसे सता नहीं सकता है। वह परमेश्वर में ही आनन्द भोगता है। अत यह समझना चाहिए कि बन्धन विपर्यय या मिथ्या ज्ञान से होता है और मोक्ष वा अपवर्ग ज्ञान अर्थात् तत्व ज्ञान से होता है। तात्पर्य यह है कि प्रकृति वा उसके जगत् का सम्बन्ध बन्धन का कारण नहीं बल्कि मिथ्या ज्ञान निमित्तक सबध बन्ध का कारण है। इसी प्रकार तत्वज्ञान निमित्तिक सम्बन्ध अपवर्ग का कारण है और बन्धन उससे नहीं हो सकता है। मोक्ष में जीव को तत्वज्ञान है और विपर्यय का सर्वथा अभाव है। अत प्रकृति का सम्बन्ध बन्धन नहीं पैदा कर सकता है। प्रश्न यह है कि विषय रूप ससार का सम्बन्ध तो मोक्ष में रहता है फिर वह कौन-सा ससार है जिसे मुक्त जीव छोडता है। जिस ससार को मुक्त जीव छोडता है वह है—"दु ख, जन्म, प्रवृत्ति, दोष और मिथ्या ज्ञान का निरन्तर प्रवाह (ससार) है। इसे मुक्त जीव छोडता है। मिथ्या ज्ञान से दोष पैदा होते हैं, इन से फिर प्रवृत्ति पैदा होती है। प्रवृत्ति से जन्म और जन्म से दु ख होता है। यह चक्र चलता ही रहता है बद्ध जीव के लिए। तत्वज्ञान से मिथ्या ज्ञान की निवृत्ति हो जाने से यह चक्र निश्चित समय के लिए बन्द हो जाता है।

इसी प्रकार अविद्या और अज्ञान शब्द के विषय में भी कई बातें समझ आती हैं। अविद्या का विद्या का अभाव और अज्ञान पद का अर्थ ज्ञान का अभाव नहीं है। इनका अर्थ विद्या और ज्ञान से विपरीत उल्टा ज्ञान है। नहीं तो ये बन्धन के कारण नहीं बन सकते हैं। अभाव उपादान कारण आदि नहीं बन सकता है।

अणु परिमाण को लेकर कई अपनी विद्या की डींग मारते हैं कि जीव जीव अणु है। महर्षि दयानन्द ने जीव को परिछिन्न एकदेशी, चेतन नित्य माना है। यह नित्यता कूटस्थ नित्यता है। परन्तु लोग समझते हैं कि जीव को परिच्छिन्न कहना ठीक नहीं, यह गलत धारणा है शास्त्र में वहां पर परिच्छिन्नता का खण्डन नहीं किया गया है। यदि कुछ लिखा गया है तो यह कि परिच्छिन्न वस्तु सब का उपादान कारण नहीं हो सकती है। जीव कूटस्थ नित्य चेतन होने से तो किसी वस्तु का उपादान नही है। फिर उसकी परिच्छिन्नता में क्या दोष हो सकता है। यहा पर केवल दिग्दर्शन मात्र किया गया है। अन्य अनेकों बातें हैं।

मेरी पुस्तक दर्शनतत्वविवेक में ऐसी अनेक गुत्थियों को सुलझाने का प्रयत्न किया गया है।

शमीम अहमद शैलेन्द्रसिंह बने

देहरादून ७-५-८८ को आर्य-समाज विकास नगर में अम्बाडी कालेज के अंग्रेजी व्याख्याता प्रो० शमीम अहमद ने डा० आनन्द सुमन (वैदिक प्रवक्ता) से वैदिक धर्म की दीक्षा ग्रहण की। श्री शमीम अहमद विगत दो माह से डा० आनन्द सुमन से अपनी अनेक शंकाओं का समाधान करते रहे हैं तथा उन की पुस्तकों पर अपनी समीक्षा करते रहे हैं।

प्रो० शमीम अहमद का नया नाम शैलेन्द्र सिंह रखा गया।

श्री शैलेन्द्र सिंह को नवीन वस्त्रों एव सत्यार्थप्रकाश सहित अन्य साहित्य भी भेंट किया गया। देहरादून के आर्य नेता श्री रामपाल सिंह रोहिला व अनेक सस्थाओं के सज्जनों ने श्री शैलेन्द्रसिंह को आशीर्वाद दिया।

आत्मदर्शन के साधन (योगदर्शन एवं उपनिषदों के संदर्भ में)

—डा० रघुवीर वेदालकार

卐

मानव जीवन का चरम लक्ष्य 'आत्म साक्षात्कार परमात्मसाक्षात्कार माना गया है। कदाचित् इसी लिए याज्ञवल्क्य कहते हैं—'इह चेद-वेदीत् अथ सत्यमस्ति नो चेदवेदी-न्महती विनष्टि'। यदि इसी जन्म में आत्मा-परमात्मा को जान लिया तो ठीक है अन्यथा महान् अनर्थ हो जावेगा। आत्मदर्शन का सर्वाधिक प्रतिष्ठित एवम् प्रामाणिक मार्ग महर्षि पतञ्जलि प्रणीत योग मार्ग है। उपनिषदों में भी विस्तार से आत्म साक्षात्कार की बात कही गई है। किन्तु वहां पर अष्टाङ्ग योग का नाम नहीं लिया गया। तथापि यह आश्चर्यजनक तथ्य है कि योग दर्शन के अष्टाग योग से उपनिषदों में वर्णित आत्मदर्शन के मार्ग की बिल्कुल समानता है। उपनिषदों में चर्चित ब्रह्म ही योग-दर्शन में पुरुषविशेष' ईश्वर कहा गया है। उपनिषदों के अनुसार ब्रह्मदर्शन से पूर्व आत्म साक्षात्कार होना अनिवार्य है। इसी प्रकार योगदर्शन के अनुसार ईश्वर प्रणिधान से प्रत्यक् चेतनाधिगम अर्थात् आत्म स्वरूप दर्शन होता है। योग-दर्शन में ईश्वर का वाचक (मुख्य नाम) ओ३म् माना गया है तथा ओ३म् के जप से आत्मदर्शन की बात कही है। इसी प्रकार उपनिषदों मे 'ओ३म् ख ब्रह्म, ओमिति ब्रह्म' आदि के द्वारा यही भाव व्यक्त कर के कहा गया है कि प्रणव को धनुष बना कर ब्रह्म की प्राप्ति करनी चाहिए।

ब्रह्म प्राप्ति के साधन—ब्रह्म अथवा ईश्वर किस प्रकार प्राप्त होता है, इस विषय में उपनिषदों तथा योगदर्शन में पर्याप्त समानता है। उपनिषदों में ब्रह्मप्राप्ति के जो साधन बतलाए गए हैं उनका ही उल्लेख क्रमबद्ध पद्धति के रूप से योगदर्शन में उपलब्ध होता है। उपनिषदों में इस प्रकार की सुसयमित पद्धति दृष्टिगोचर नहीं होती। इन शास्त्रों में ब्रह्म प्राप्ति के साधन इस प्रकार वर्णित हैं—

(१) सत्य, तपस्या ज्ञान तथा ब्रह्मचर्य—श्वेताश्वतरोपनिषद् तथा मुण्डकोपनिषद् में कहा गया है कि आत्मा सत्य, तप, ज्ञान तथा ब्रह्मचर्य से प्राप्त होता है।' इसी प्रकार कठोपनिषद् में यो 'यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति' आदि के द्वारा ब्रह्मचर्य को ब्रह्म प्राप्ति का उपाय बतलाया गया है। योग-दर्शन में सत्य, तप, ब्रह्मचर्य आदि का वर्णन अष्टागयोग के अन्तर्गत किया गया है। तपस्या पर जोर देते हुए योगदर्शन के भाष्यकार व्यास जी कहते हैं—"नातपस्विनो योग' सिद्धयति'। अर्थात् तपरहित पुरुष का योग सिद्ध नहीं हो सकता क्योंकि कर्म-क्लेश तथा वासना से दूषित चित्त तपस्या के बिना शुद्ध नही हो सकता। उपनिषदों मे भी इसी प्रकार तपस्या पर बहुत अधिक बल दिया गया है। आधुनिक काल में विलासिता के साथ साथ योग=साधना का ढोंग करने वालों के लिए यह एक चेतावनी है कि तपस्या के बिना योग सिद्ध नहीं हो सकता।

(२) सम्यक् ज्ञान—मुण्डकोपनिषद् में सम्यक् ज्ञान को भी ब्रह्म-दर्शन का साधन माना गया है। इसका उल्टा असम्यक् ज्ञान है। इसी को योगदर्शन मे अविद्या कहा गया है। पतञ्जलि के अनुसार अनित्य, अशुचि, दु:ख तथा अनात्मा में क्रमश नित्य, शुचि, सुख तथा आत्म बुद्धि रखना अविद्या कहलाती है। योगदर्शन मे समाधि की सिद्धि के लिए चित्त की एकाग्रता आवश्यक मानी गयी है। चित्त की एकाग्रता के विभिन्न साधन योग-दर्शन में गिनाए गए हैं। इन साधनो में से ही एक साधन है—प्रणव का जप। व्यास जी ने इस सूत्र के भाष्य में लिखा है कि प्रणव का जप करते हुए तथा प्रणवाभिधेय ईश्वर का ध्यान करते हुए योगी का चित्त एकाग्र हो जाता है। उपनिषदों में भी इसी प्रकार प्रणव जप पर बहुत बल दिया गया है। योगदर्शन तथा उपनिषदों के अनुसार प्रणव का जप चित्त की एकाग्रता को उत्पन्न कर के समाधि लाभ कराता है।

(३) ईश्वर-प्रणिधान—योग-दर्शन में समाधि के उपायों में ईश्वर प्रणिधान भी प्रधान उपाय है। प्रणिधान का फल बतलाते हुए योग भाष्यकार कहते हैं कि प्रणिधान अर्थात् भक्ति विशेष से प्रसन्न होकर ईश्वर योगी को अभिध्यान मात्र से अनुगृहीत करता है। यही भावना कठोपनिषद् तथा मुण्डकोपनिषद् में व्यक्त की गई है कि परमात्मा जिस को स्वीकार कर लेता है उसके द्वारा ही प्रापणीय होता है। यह एक प्रकार का भक्तियोग है। गीता में इसका वर्णन इस प्रकार किया गया है—

अनन्याश्चिन्तयन्तो मा
ये जना पर्युपासते।
तेषा नित्याभियुक्ताना
योगक्षेम वहाम्यहम्॥

८२२ पतञ्जलि ने तप-स्वाध्याय तथा ईश्वर प्रणिधान के रूप में इस क्रियायोग का वर्णन किया है। ईश्वर प्रणिधान को उपनिषदों में 'धातुप्रसाद' अर्थात् परमात्मा की कृपा के रूप में भी कहा गया है। श्वेताश्वतर तथा कठोपनिषद् में समान रूप से एक श्लोक प्राप्त होता है। 'तमक्रतु पश्यति वीतशोको धातुप्रसादान्महिमानमात्मन।'

अर्थात् परमात्मा की कृपा से शोक रहित व्यक्ति उसके दर्शन कर सकता है।

(४) कठोपनिषद् में कहा गया है कि आत्मा को समाहित चित्त होकर प्रज्ञान के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। इसी उपनिषद् में अन्यत्र अग्रा सूक्ष्मा प्रज्ञा के द्वारा ब्रह्मप्राप्ति की बात कही गई है। यह प्रज्ञा तथा प्रज्ञान एक ही चीजें हैं। व्यास भाष्य के अनुसार यह प्रज्ञा समाहित चित्त वालों को ही प्राप्त होती है। कठोपनिषद् तथा मुण्डकोपनिषद् में अन्यत्र इस बुद्धि को मनीषा कहा गया है। इसके द्वारा परमात्मा का साक्षात्कार होता है—हृदा मनीषा मनसाऽभिक्लृप्तो य एतद्विदुरमृतास्ते भवन्ति।

यह अवस्था ज्ञान की पराकाष्ठा है। यह परम वैराग्य से प्राप्त होती है। योगदर्शन के भाष्य में इसे ज्ञानप्रसाद नाम दिया गया है। इसके तुरन्त पश्चात् कैवल्य हो जाता है। उपनिषदो में 'ऋते ज्ञानान्न मुक्ति' कह कर इसी ओर सकेत किया गया है। योगदर्शन एवम् उपनिषदो के अनुसार इस अवस्था मे आत्मा के स्वरूपदर्शन के साथ साथ परमात्मा का साक्षात्कार भी हो जाता है।

ये वैदिक धर्म है मेरा

मानव मात्र को ज्ञान पुंज दे करता दूर अंधेरा।
ये वैदिक धर्म है मेरा॥
सृष्टि के आदि में प्रभु ने विश्व को ज्ञान दिया था।
जिस से हो उत्थान विश्व का यो विज्ञान दिया था॥
सूर्य आदि लोक रचे फिर रच दिया शाम सवेरा
ये वैदिक धर्म है मेरा॥१॥
यह जगत् तुम्हारे लिए प्रभु ने ये आदेश दिये हैं।
त्याग सहित उपभोग करो ये उपदेश दिये हैं॥
सर्वथा लिप्त न हो इस में ये तेरा है न मेरा।
ये वैदिक धर्म है मेरा॥२॥
खाना पीना सोना मैथुन पशु में भी होता है।
इससे ज्यादा मानव पक्ष में एक धर्म होता है॥
बिना धर्म का मानव भी जा पशु कोटि में गेरा।
ये वैदिक धर्म है मेरा॥३॥
जग में रह कर मृत्यु तज कर अमृत पद को पायें।
हे परमेश्वर छोड असत्य सदा सत्य अपनायें॥
'निरंजन सिंह' चित ज्योति पायें तज कर घोर अंधेरा।
ये वैदिक धर्म है मेरा॥४॥

आचार्य चौ० चरणसिंह शिक्षा एवं तकनीकी संस्थान
बघडोला (गाजियाबाद)

(पृष्ठ २ का शेष)

मृत्यु : जीवन...

समझाते हुए कहते हैं—

मरणं प्रकृतिः शरीरिणां
विकृतिर्जीवितमुच्यते बुधैः ।
क्षणमप्यवतिष्ठते श्वसन्यदि
जन्तुर्ननु लाभवानसौ ॥

देहधारियों के लिए मरना तो स्वाभाविक है और जीवन को ज्ञानी पुरुष विकार मानते हैं। यदि क्षण भर भी जीवित रह सके तो उसे सन्तोष करना चाहिए।

मृत्यु के सम्बन्ध में ज्ञानी बनकर दूसरे को उपदेश देना जितना सरल है उतना ही कठिन है। मृत्यु-क्षणों का अनुभव। मृत्यु क्या है, कितनी कष्टप्रद है, यह यदि कोई जानना चाहता है तो पूछे उस अबला से जिसका सुहाग मिट चुका है, पूछे उस मां के दुःखी हृदय से जिसका लाल उसकी गोदी को सूना कर सदा के लिए चला गया है। वह बहिन बताएगी मृत्यु दुःख जिसका भाई सदा-सदा के लिए उस से नाता तोड चुका है। वह बेटा कहेगा मृत्यु पीडा जिसके माता-पिता उसे अनाथ, निराश्रित बनाकर हमेशा के लिए चले गए हैं। इनके दुःख पारावार का कहीं कोई अन्त नहीं, कहीं कोई ओर छोर नहीं। कहां जाएं वे ? किससे कहें ? कौन सहारा देगा ? किस को दुःखड़ा सुनाएं ?

श्रावस्ती की जन-सभा में महात्मा बुद्ध संसार की असारता, वस्तुओं की क्षणिकता एवं प्राणियों की पीडा का बखान करते हुए कह रहे थे—

सर्वं क्षणिकं क्षणिकं
सर्वं दुःखं दुःखम् ।

तभी सभा के एक कोने से एक आर्तनाद सुनाई पडा। लोगों की दृष्टि उधर गई। देखा—एक क्षीणकाया, दुःखी ब्राह्मणी एक बच्चे को गोद में उठाए पागल-सी महात्मा बुद्ध की तरफ बढ़ रही है। सभा में आगे आकर अपने प्राणशून्य लाल को उसने बुद्ध के चरणों में रख कर कहा—"महात्मन् ! मुझ विधवा ब्राह्मणी के हृदय से पूछो कि दुःख (मृत्युदुःख) क्या होता है जिसका बडे-बडे यत्नों से पालित एकमात्र यह शिशु आज काल कवलित हो गया है।" महात्मा बुद्ध की आंखें अश्रुपूरित हो गईं। बहुत धीरे से वे अपने स्थान से उठे और उस बच्चे को अपनी गोद में उठाकर स्नेहसिक्त नयनों से निहारने लगे। बोले—

"कितना सुन्दर है यह बालक ! कितना प्यारा ! ! उस से भी सुन्दर हृदय है वह मां जिसने इसे जन्म दिया है। किन्तु मां ! यदि मैं तुम्हारे इस पुत्र को जीवित कर दूं तो ?"

पुत्र के जीवन के शब्द कानों में पडने थे कि कृशा गौतमी ब्राह्मणी ने महात्मा बुद्ध के चरण पकड लिये और कहा—

'मैं अपना सर्वस्व न्योछावर कर सकती हूं महात्मन् ! यदि मेरे लाल को जीवित कर आप मुझे लौटा सकें।

महात्मा बुद्ध ने उसी धीर गम्भीर शान्त वाणी में उत्तर दिया—

"मां मत घबरा। मैं असत्य भाषण कभी नहीं करता। जो कुछ मैंने कहा है वह अवश्य पूरा करूंगा, किंतु तुम्हें एक काम करना होगा।"

ब्राह्मणी ने कहा—

"पूज्यवर ! शीघ्र आज्ञा दीजिए। मुझे पलों का विलम्ब भी बहुत अधिक मालूम हो रहा है।"

महात्मा बुद्ध ने कहा—

"बात बहुत बडी नहीं है। केवल मुट्ठी भर पीली सरसों के दाने चाहिए जो तुम किसी भी घर से मांग कर ला सकती हो। कौन तुम्हारी इस याचना को अस्वीकार करेगा ?"

ब्राह्मणी सरसों के दाने शीघ्र लाने के लिए चलने लगी तो बुद्ध ने कहा—

"देखना मां ! दाने ऐसे घर से लाना जिस में कभी किसी की मृत्यु न हुई हो।"

बात की गहराई को ठीक-ठीक न समझती हुई ब्राह्मणी ने नगर के एक दरवाजे पर आवाज लगाई—

"मुझ दुखिया विधवा ब्राह्मणी को क्या भीख मिलेगी ?"

गृहपति ने बडी विनम्रता से अन्दर से बाहर आकर पूछा—

"क्या चाहिए मातृवर ?"

"केवल मुट्ठी भर पीली सरसों के दानों का सवाल है। घर में हों तो उत्तर दो।"

गृहपति ने उत्तर दिया—

"अभी उपस्थित करता हूं मातुश्री !"

उसके भीतर जाने के लिए समुद्यत होते ही कृशा गौतमी को महात्मा बुद्ध की वह चेतावनी याद आ गई जिस में उन्होंने ऐसे घर से सरसों के दाने लाने के लिए कहा था जिस में कभी किसी की मृत्यु न हुई हो। अतः गृहस्वामी को रोक कर ब्राह्मणी ने पूछा—

'आर्य ! सरसों के दाने लाने से पूर्व यह बताएं कि आज या आज से वर्षों पूर्व कभी किसी की मृत्यु तो आपके परिवार में नहीं हुई ?"

गृहपति ने कहा—

"देवी ! यह क्या पूछती हो ? यह सत्य है कि मेरे पिता तथा पितामह अभी जीवित हैं, किन्तु उनके पिता तथा उनके भी पिता अब कहां हैं ? कौन-सा ऐसा घर तुम्हें मिलेगा जिस में मृत्यु का कभी प्रवेश न हुआ हो ?"

ब्राह्मणी की आंखें खुल चुकी थीं। सत्य उसके सामने प्रकट था। जब सब को काल का ग्रास बनना है तो क्या हुआ यदि कोई आज भगवान को प्यारा हुआ और कोई कुछ वर्ष बाद ! मृत्यु सर्वत्र है, सर्वव्यापक है, शाश्वत है, चिरन्तन और अनिवार्य है। बडे-बडे ऋषि, महात्मा, ज्ञानी, सम्राट् भी इस से नहीं बच सके हैं ! महर्षि वाल्मीकि लिखते हैं—

नास्ति सर्वामरत्वं हि कस्यचित्
प्राणिनो भुवि ।

पृथ्वी पर किसी भी प्राणी को कभी अमरता नहीं मिली।

जगन्नियन्ता के इस विधान को परमेश प्रभु की इस इच्छा को उन्मुक्त हृदय से हम स्वीकारें तथा संकट के समय धैर्य और शान्ति धारण करें, इसी में हमारा कल्याण है। मृत्यु की अनिवार्यता अनुभव करना ही ज्ञानमार्ग की पहली सीढ़ी है।

सभा द्वारा ग्राम प्रचार

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के सुयोग्य प्रचारक, पण्डित सत्यदेव स्नातक, श्री ज्योती प्रसाद ढोलक वादक, प० वेदव्यास का मधुर संगीत, प० चुन्नीलाल के जोशीले गीत, स्वामी स्वरूपानन्द का प्रवचन हास्य कवितायें, श्रोतागणों के मोती से दांत चमकायें। सभी सुन कर हरषायें। हंसते मुस्कराते जायें। जेजे कालोनियों में प्रचार की धूम मचाते हैं, प्रचार वाहन में ओ३म्-ध्वज लहराते हैं। सभी संगीत कलाकार गाते-बजाते हैं ये दयानंद ऋषि के बताये मार्ग दरसाते हैं। सत्य असत्य का ज्ञान कराते हैं कुरीति व पाखण्ड मिटाते हैं। दिल्ली सभा का अनोखा तरीका चुकाते हैं ऋण अपने प्यारे ऋषि का। कभी पूर्व दिशा में। कभी उत्तर दिशा में कभी दक्षिण दिशा में। दिल्ली में चहुं तरफ प्रचार हो रहा है। अंधेरे दिलों में प्रकाश हो रहा है। जहां भी सुनाते हैं ये अपना गाना, सुशोभित समय वहीं बनता सुहाना। सभी नर व नारी मनाते हैं खुशियां, जाग जाती हैं ज्ञानेन्द्रियां। सप्ताह में दो दिन यह प्रचार होता। शुक्रवार को या शनिवार को होता देते हैं धन्यवाद सभी श्रोता। उठो आर्यवीरों सभी को जगा दो। वेदों की वीणा जहां में बजा दो। घृणा, द्वेष सब के दिलों से मिटा दो। ऋषि का सन्देश घर-घर सुना दो। दिल्ली सभा का सराहनीय कार्य है, दुर्गुण मिटाये वही आर्य है इसी धुन में ये मस्त होते रहेंगे। जो बिखरे हैं मोती पिरोते रहेंगे। ये चलता रहेगा निरन्तर कार्य हमारा बहाते रहेंगे ये अमृत की धारा।

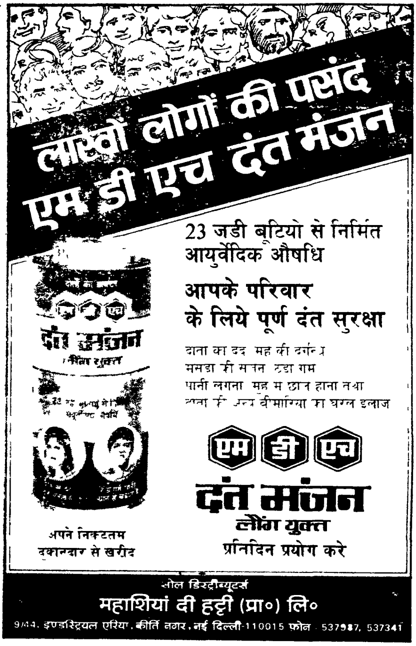
सभी आर्य जन अपना सहयोग देना—न पता था हमें बात ऐसी न कहना। जहां भी कराना हो प्रचार तुमको। कहा दो तिथीवार निश्चित हम को। सभी का पूर्ण सहयोग होगा। शुद्ध पवित्र वातावरण बनेगा। आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार मिल कर कराओ। बनो आर्य स्वयं औरों को बनाओ। दयानन्द का स्वप्न साकार कर दो भव्य भावना जन-जन में भर दो। ये फुलवारी वैदिक धर्म की है प्यारी। ये लहराती रहे केशर की क्यारी। कभी भूल न जाये हमें ध्यान होगा। मधुर गीत होंगे व व्याख्यान होगा। तो निश्चय ही जन जन का कल्याण होगा।

करो आप भी प्रचार की तैयारी।
ये चलती रहेगी निरन्तर कलम
हमारी।

—स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती
वैदिक धर्म प्रचारक
दि० आ० प्र० सभा

आकाशवाणी रोहतक से सुनिये

२३ मई १९८८ को प्रातः ७.३० बजे आकाशवाणी रोहतक से आचार्य दयानन्द जी शास्त्री, एम० ए०, प्राध्यापक दयानन्द ब्राह्म महाविद्यालय, हिसार की हिन्दी वार्ता "क्षमा बड़न को चाहिए" प्रसारित होगी।


लाखों लोगों की पसंद
एम डी एच दंत मंजन
23 जडी बूटियो से निर्मित
आयुर्वेदिक औषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दंत सुरक्षा
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
प्रतिदिन प्रयोग करे
अपने निकटतम
दुकानदार से खरीद
सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9/44, इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-110015 फोन


अपने बालों को स्वस्थ, प्राकृतिक काला व चमकदार
बनाइये और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी
सुगंध से महकाइये।
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर
नियमित प्रयोग कीजिए।
निर्माता
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9 44 इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर
नई दिल्ली 110015


आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
alignpoint

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N. No. 32387/77 Post in N.D.P.S.O. on 12, 13-5-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

संसार दुःखरूप...

(पृष्ठ ३ का शेष)

ही दोष है जो हमें संसार दुःखमय लगता है जबकि वस्तुत वह दुःखरूप है नहीं।

संसार हमें दुःखरूप इसलिए लगता है कि दुःख से द्वेष का हमारा एक स्वभाव सा बन गया है। जरा सा भी दुःख आने पर हम उसे इतना बड़ा समझने लगते हैं कि मानो विपत्तियों का पहाड़ ही टूट कर आन पड़ा हो। विपरीत इसके सुख की प्राप्ति में ऐसी प्रतिक्रिया नहीं होती। दुःख को न स्वीकारने और सुख को सहज रूप मे स्वीकारने के कारण ही हमें संसार दुःखमय लगता है। हम दुःख की अभिव्यक्ति बड़ी तीव्रता से करते हैं, इसीलिए संसार भी हमें दुःखरूप लगने लगता है। हम सुख मे ऐसे मगन हो जाते हैं कि समय बीतने पता ही नहीं चलता किन्तु दुःख में स्थिति इसके सर्वथा विपरीत है। उसमें तो समय बीतता ही नहीं। इसीलिए हम समझते हैं कि दुःख अधिक है।

मनुष्य को दुःखों से घबराना नहीं चाहिए। क्योंकि सुख-दुःख तो चक्र के पहिए की भांति सदा घूमते रहते हैं, उन में से कोई भी स्थिर रहने वाला नहीं। अतः चाहे सुख हो चाहे दुःख, चाहे प्रिय हो चाहे अप्रिय, जो भी मिल जाये, उसे सदा हृदय से अपराजित रह कर ग्रहण करना चाहिए। ध्यान रहे कि—

सुख भी नश्वर दुःख भी नश्वर,
यद्यपि सुख-दुःख सबके साथी।
कौन घुले फिर सोच फिकर में,
आज घड़ी क्या है, कल क्या थी॥

निर्वाचन स्थगित

(पृष्ठ १ का शेष)

श्री गुप्त ने श्री सरदारी लाल वर्मा को बधाई देते हुए कहा कि मैं इन के कार्यों से बहुत प्रसन्न हूं क्योंकि इन्होंने अपने परिवार के उन सदस्यों को भी इस आर्यसमाज का सदस्य बनाया हुआ है जो दिल्ली के दूर-दूर के कोने-कोने में रहते हैं। यदि बाकी सदस्य भी अपने पारिवारिक जनों को, बेटों और बहुओं को इसी प्रकार आर्यसमाज का सदस्य बनाये तो निश्चय आर्यसमाज प्रभावित होगा।

श्री गुप्त के सम्बोधन के समय सभी सदस्य शान्त रहे और उन का धन्यवाद ज्ञापन भी किया गया। शांतिपाठ के बाद कार्यवाही समाप्त हुई।

पंजाब को सेना के हवाले करो

पंजाब को विशेष दर्जा देना, खालिस्तान को स्वीकार कर लेना है

आर्यसमाज द्वारा विरोध प्रदर्शन

१५ मई रविवार ११ बजे तीन मूर्ति चौक पर आर्य जन एकत्रित होवें

पाकिस्तान का भारत के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप, कदापि सहन नहीं होगा।

आर्य नर-नारी पाकिस्तानी एम्बेसी पर १५ मई १९८८ को प्रदर्शन करेंगे। सभी आर्यसमाजों से निवेदन है कि बसों द्वारा तीन मूर्ति चौक पर ११ बजे तक पहुंच जायं।

निवेदक
डा० धर्मपाल (प्रधान)
डा० शिवकुमार, ओमप्रकाश आर्य
सूर्यदेव (महामन्त्री)

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ३१ | रविवार २२ मई १९८८ | सृष्टि सम्वत् १९७२९४९०८८ | ज्येष्ठ २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर २० पौंड

पाकिस्तान उग्रवादियों को प्रशिक्षण देना बन्द करे

पाक दूतावास पर आर्यसमाज द्वारा विराट् प्रदर्शन

दिल्ली की ३०० आर्यसमाज व शिक्षण संस्थाओं का प्रतिनिधित्व करने वाली सभा दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में स्वामी आनन्द बोध के नेतृत्व में पाक दूतावास पर हजारों आर्य नर-नारियों ने प्रदर्शन किया। इस अवसर पर आर्य जनों का जोश देखने योग्य था। ऐसा जन नारे लगा रहे थे— पंजाब बचाओ, देश बचाओ, एक धक्का और दो, पाकिस्तान तोड दो, भारत से टकराएगा, पाक मुंह की खाएगा। आवाज दो, हम सब एक हैं।

यह विरोध प्रदर्शन पाकिस्तान द्वारा पंजाब के उग्रवादियों को पाकिस्तान में प्रशिक्षण देने तथा भारत के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करने के विरोध में किया गया। पिछले दिनों गृहमन्त्री बूटासिंह ने लोकसभा में पाकिस्तान द्वारा उग्रवादियों को दी जा रही सहायता और प्रशिक्षण के विषय में बयान दिया था। खबरें थी कि दिसम्बर १९८७ में लाहौर के निकट डेरा बाबा नानक में एक बैठक हुई जिस में पाकिस्तानी खुफिया अधिकारियों तथा अमेरिका और इंग्लैण्ड के सिखों ने भाग लिया। इन खबरों की पुष्टि उन घातक हथियारों से हो जाती है जो इस समय पंजाब के आतंकवादियों के पास देखे जा सक रहे हैं। ए० के० ४७ चीनी राइफलें, ए० आर० १५५ अमेरिकी बन्दूकें और आर० पी० जी० राकेट जैसे हथियारों के सहसा दिखाई देने और जबरदस्त हत्याओं की बाढ़ से किसी का शक नहीं होना चाहिए कि पाकिस्तान ने आतंकवादियों को नया गुरुमन्त्र दिया है। पाकिस्तान के लिए दिसम्बर की बैठक इसलिए जरूरी हो गई थी क्योंकि उस समय आतंकवादियों पर सुरक्षाकर्मियों का भारी दबाव होने के कारण उन को मांड जैसे ठिकानों पर भी छिपने की जगह नहीं मिल रही थी। हताश होते आतंकवादियों की फिर से हौसला अफजाई करने और उन्हें नयी रणनीति बताने के लिए पाकिस्तान ने यह बैठक करना आवश्यक समझा था। खालिस्तान के नवोदित झंडा बरदार अमेरिकी सिख औलख ने इस बैठक में भारी मात्रा में ए० आर० १५५ बन्दूकें उपलब्ध कराने के वायदे के साथ कहा था कि पैसे की कोई चिन्ता नहीं। सुखा सिपाही जैसे अनेक आतंकवादी पाकिस्तान बैठे वहीं से कारवाई चला रहे हैं।

पकड़ गये आतंकवादियों से यह स्पष्ट जानकारी मिली है कि पाकिस्तान ज्योग्राफिकल सोसायटी के नाम से सीमा के निकट कार्यरत एक एजेंसी के माध्यम से आतंकवादियों की भरती होती है। इनको पाकिस्तान स्थित विभिन्न शिविरों में हत्या व तोड़फोड का प्रशिक्षण देकर वापस भेजा जाता है। पाकिस्तान में कुछ मुख्य प्रशिक्षण शिविर डक्का, सधू, नरोवल और रणपुरा में है। प्रशिक्षकों में कर्नल मुनीर, कर्नल राजा और कर्नल चौधरी का नाम भी शामिल है। हो सकता है ये नाम फर्जी रखे गये हों, लेकिन इसमें कोई शक नहीं पाकिस्तान सुनियोजित ढंग से आतंकवादियों को तैयार करने में लगा है। चाहे प्रमाणित करना आसान न हो लेकिन इसमें कोई शक नहीं स्टिंगर मिसाइल और राकेट जैसे हथियार बिना पाकिस्तान की शह के और जानकारी के भारत में नहीं आ सकते। दो हजार के लगभग ए० के० ४७ राइफल ५०० राकेट तथा भारी मात्रा में गोला बारूद क्या बिना पाकिस्तान की जानकारी के भारत की सीमा में ठूंसा जा सकता है? इस समय पाकिस्तान में मुजाहिदीनों के पास असंख्य हथियार हैं और वे इनको बेचते हैं एक अत्याधुनिक राइफल जिसकी कीमत ४५००० है वह थोक में खरीदने पर ८००० से १०००० तक में मिल जाती है, पाकिस्तान में बैठे आतंकवादियों के पास देश विदेश के सिखों द्वारा पैसा पहुंचता है जिस से हथियार खरीद कर ८०० कि०मी० लम्बी फैली सीमा को विभिन्न जगहों से पार करके भारत में पहुंचाए जाते हैं। पाकिस्तान सीमा पार करने से लेकर उन्हें प्रशिक्षण देने तक भय और लालच देने तक के सभी हथकण्डे अपना रहा है।

१५ मई को आर्यसमाज ने इसी कारण पाक दूतावास पर विरोध प्रदर्शन किया। प्रदर्शन का नेतृत्व सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल हरियाणा सभा के प्रधान प्रो० शेरसिंह तथा दिल्ली सभा के महामन्त्री सूर्य देव तथा मन्त्री श्री मूलचन्द गुप्त एवं ओमप्रकाश आर्य प्रान्तीय महिला सभा की प्रधाना सरला मेहता और हिन्दू महासभा के नेता विश्वनाथ खन्ना ने किया।

प्रदर्शनकारियों के प्रतिनिधि मण्डल ने इस सम्बन्ध में पाकिस्तानी दूतावास के एक वरिष्ठ अधिकारी को ज्ञापन भी दिया। ज्ञापन इस प्रकार था—

महामहिम राजदूत
पाकिस्तान दूतावास
चाणक्यपुरी,
नई दिल्ली

महोदय

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा जो दिल्ली की ३०० आर्यसमाजों तथा शिक्षण संस्थाओं का प्रतिनिधित्व करती है और दिल्ली की अन्य हिन्दू संस्थाओं के प्रतिनिधि आज आपके दूतावास पर पाकिस्तान की सरकार के उन कृत्यों के विरुद्ध अपना रोष प्रकट करने आए हैं। जिन से वह कतिपय सिख युवकों को भ्रमित करके अपने प्रशिक्षण शिविरों में ले जाकर भारत के विरुद्ध विद्रोह करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं और भारत में अराजकता फैलाने के लिए और हिन्दुओं का कत्ल करने के लिए हथियारों का प्रशिक्षण और गोरीला युद्ध का प्रशिक्षण देते हैं और उन्हे आधुनिकतम हथियार व धन देकर भारत में तोडफोड करने के लिए भेजते हैं। यह प्रदर्शन पाकिस्तान रेडियो एवं टेलीविजन के द्वारा भारत के विरुद्ध और खालिस्तान के समर्थन में प्रचार करता है। इसका विरोध करते हुए उसको बन्द करने की मांग करता है।

हमें ज्ञात हुआ है कि पाकिस्तान के कुछ केन्द्रों में इस प्रकार का प्रशिक्षण दिया जाता है। हम यह

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए० | प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव



गौरव स्तंभ

प्रेरक प्रसंग

प्रस्तोता—सत्यानन्द आर्य

चन्दन का बलिदान

सन् १५३६ का प्रसग है उस समय स्व० महाराणा सागा का सब से छोटा बेटा कुवर उदयसिह राज्य का उत्तराधिकारी था, जिसकी आयु मात्र १४ वर्ष थी। कुवर के सबसे बडे भाई रतनसिह पहले ही दिवगत हो चुके थे। दूसरा विक्रमादित्य बलवीर की कूटनीति के जाल में आ चुका था। कुवर उदयसिह के सरक्षण की जिम्मेदारी धाय पन्ना पर थी।

उस दिन चित्तौड मे चारो ओर उत्सव मनाये जा रहे थे। नाच रग में नगरवासी मदहोश थे। ढाल और चग की ताल अन्त पुर मे भी रह-रहकर आ रही थी। कुवर ने धाय से उत्सव के नाच रग मे जाने की बडी जिद की पर धाय पन्ना ने मना कर दिया। रूठ कर कुवर फर्श पर ही सो गया। दुष्ट मन्त्री बलवीर ने षडयन्त्र रच कर विक्रमादित्य की हत्या कर दी। यह समाचार अन्त पुर की दासी सामली ने पन्ना धाय को आकर सुनाया। पन्ना धाय सुन कर सन्न रह गई। अब उस शका थी कुवर को भी कहीं दासी पुत्र बलवीर न मार दे। निष्कटक राज्य पाने की लालसा में सिहासन के एकमात्र वारिस उदयसिह को भी वह रास्ते से हटा सकता है। दासी इतना सोच ही पायी थी कि बलवीर के सनिको ने महल को चारो तरफ से घर लिया। जूठी पत्तल उठाने वाला कीरत भी उसी समय महल मे आया कुवर की रक्षा के लिए धाय पन्ना ने पत्तलो की टोकरी में कुवर को सुला कर ऊपर से पत्तो से ढक दिया उसे सैनिको से बचाते हुए दूर नदी किनारे मिलने के लिए कहा। कुवर की रक्षा तो हो गई। सामली ने पूछा बलवीर कुवर न पाने पर तुम्हें भी मार डालगा और सम्भवत कुवर को बचाने का भेद भी खुल जायेगा। यह सुन पन्ना ने अपने दिल पर पत्थर रख अपने बेटे १३ वर्षीय चन्दन को कुवर की शय्या पर सुला दिया। विक्रम के खून से सनी तलवार लेकर मदिरा के नशे में चूर मत्री बलवीर ने कुवर को धाय से मागा और बदले में जागीर देने का प्रलोभन भी दिया। परन्तु स्वामी भक्त पन्ना ने उसे ठुकरा दिया। तब पन्ना को धक्का देकर बलवीर कुंवर की शय्या के पास पहुचा, बेसुध अबोध चन्दन के सीने में उसने कटार घोप दी। बच्चे की चीख सुन कर भी पन्ना धाय हिली नही, उसने अपने होठ सी लिये। उसने अपने दीपक को बुझाकर भी राणा-सागा के कुल दीपक को बुझने नही दिया। ससार के इतिहास में ऐसा उदाहरण किसी मा का नहीं मिलता।

जब जूता दान मे मिला

दीनता दरिद्रता के थपेडो को खा कर ससार के कानन में अपना पथ खोजने वाले महापुरुषों में मदन-मोहन मालवीय भी रहे। उन्होने विपरीत परिस्थितियो मे निरन्तर साहस और धैर्य बनाये रखा। इन सब गुणो के साथ वे सकल्प के भी महाधनी थे।

भारतीय सस्कृति के अनुकूल शिक्षा केन्द्र बनाने का एक बार उन्होने सकल्प किया। जिसके लिए उन्होने दिन रात एक कर दिया। यह शिक्षा केन्द्र हिन्दू विश्वविद्यालय के नाम से बनाने के लिए उन्होंने एक इंट जुटाई तथा उसके लिए पैसा इकटठा किया। पैसा इकटठा करने के लिए वे राजा, रक, अमीर गरीब सभी के पास गये।

एक बार हैदराबाद के नवाब जिन्हें निजाम हैदराबाद कहा जाता था उनके पास वे दान मागने गये। साम्प्रदायिकता के ओछेपन से नवाब ने उन्हें मिलने का समय ही नहीं दिया। मालवीय जी बाहर खडे रहे किन्तु निजाम भी बाहर नही निकला। तग आकर उसने उनको बुलाया और पूछा, क्या चाहते हो? मालवीय जी ने कहा, मैं विश्वविद्यालय के लिए आप से दान चाहता हू। बार बार मागने पर भी नवाब का दिल नहीं पसीजा वह अपनी कट्टरता लिये मालवीय जी का निरादर करता हुआ बोला, मैं इस काम के लिए अपना जूता ही दे सकता हूं। यह कह कर उसने जूता फेंक दिया। पण्डित जी ने वह जूता उठा लिया और बनारस आकर समाचारपत्रो में दे दिया, उसकी नीलामी दिनाक को इतने बजे होगी। नीलामी से जो आय होगी वह विश्वविद्यालय के निर्माण में व्यय की जायेगी।

इस सूचना को पढकर नवाब के होश ठिकाने आ गये। अपनी झेंप मिटाने के लिए उन्होंने शीघ्र अपना विशेष व्यक्ति भेज कर मोटी धनराशि दान में भिजवाई जिस से उनकी गिरती साख को निश्चित बल मिला।

इस प्रकार उस सकल्प के धनी महामना ने बालू से भी तेल निकाल-कर जग को आश्चर्य में डाल दिया।

अनोखे कुली की सीख

कलकत्ता की सुनसान गली में तारों की छांव मे एक किशोर नगर निगम की जलती बत्ती के नीचे पढा करता। दिन में कडी मेहनत, रात्रि म गली में खडे-खडे अध्ययन करता। यह बालक हर वर्ष परीक्षा में प्रथम आया करता। बडे होकर इसे विद्यासागर की उपाधि मिली। सस्कृत के इस उदभट विद्वान को दुनिया ईश्वरचन्द विद्यासागर के नाम से जानती है। कलकत्ता मदरसे मे शिक्षक का कार्य करते हुए वे गरीब विद्यार्थियो को अपने पास रख कर पढाते थे और उनका खर्च भी सम्भालते। गरीबो की भरपूर मदद करते। रहने से सादा जीवन और उच्च विचार के कारण वे जनप्रिय बन गये।

बर्दवान रेलवे स्टेशन पर एक सज्जन जो अग्रेजी सभ्यता से ओत-प्रोत थे, कुली-कुली की आवाज लगा रहे थे। उस बाबू साहब को कोई कुली नहीं मिल रहा था उसकी परेशानी चेहरे से झलक रही थी। झूठी शान से परेशान उस युवक को देखकर विद्यासागर जी ने अपनी चादर लपेटी और उसकी अटैची उठा कर चल पडे। प्लेट-फार्म से बाहर होने पर उस बाबू ने विद्यासागर को कुली समझ पैसे देने चाहे परन्तु उन्होने लेने से मना कर दिया। वह व्यक्ति ईश्वरचन्द विद्यासागर से ही मिलने आया था परन्तु उन्हें पहचानता नहीं था। जब वह ईश्वरचन्द जी के घर आकर उन से मिला तो पहचान-कर बडा दुखी हुआ। वह पडित जी से बोला आपने मेरा सामान उठाया और मैंने आपको कुली समझा और इतने भारी गुणी विद्वान्, मैं बहुत शर्मिन्दा हू। विद्यासागर जी ने उसे समझाया! देखो मुझे अगर प्रसन्न करना चाहते हो तो भविष्य मे अपना सामान उठाने मे कभी झिझक और हिचक अनुभव मत करना। सदा परिश्रमी और कर्मठ बन कर ससार मे अपना स्थान बनाना।

राष्ट्र के प्रहरी

और इन सुगन्धित
धूम-रश्मियो का
यह प्रसरण ग्रसित करेगा
उन कृत्रिम मुखौटो को
जो तामसिकता का आवरण लपेट
सात्त्विकता का हरण करते हैं
जन मानस की
कोमल भावनाओं की
अवहेलना कर
(तथाकथित) लोकप्रियता का वरण
करते हैं।

जैसे को तैसा
हम भी कर सकते हैं
इंट का जवाब
पत्थर से दे सकते हैं
किन्तु प्रश्न
गर्व-हरण का नहीं
जीवन-मरण का है
एकता-अखण्डता का है
स्वतन्त्रता की समग्रता का है

—गौरव ठाकुर

आर्यसमाज के साहित्यकार

पं० गुरुदत्त विद्यार्थी

लेखक—डा० भवानीलाल भारतीय, चण्डीगढ

★

प्रखर मेधा के धनी तथा अंग्रेजी भाषा में मौलिक विवेचन प्रधान साहित्य का प्रणयन करने वाले मुनिवर गुरुदत्त आर्यसमाज की दिव्य विभूति थे। २६ वर्ष के अल्पकालीन जीवन में उन्होंने अपने महान् पाण्डित्य तथा अशेष प्रतिभा के बल पर जो गौरवशाली साहित्य आर्यसमाज को प्रदान किया, वह अकल्पनीय है। अपने युग के प्राच्य विद्या विशारदों में वे सुपरिचित थे तथा उनके विचारों एवम् लेखन की छाप उनके जीवन काल में ही समुद्रपारीय देशों तक पहुच चुकी थी। पं० गुरुदत्त का जन्म २६ अप्रेल १८६४ को मुलतान नगर में लाला रामकृष्ण के घर हुआ। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा घर पर ही हुई जहा उन्होंने उर्दू फारसी का ज्ञान प्राप्त किया। पुन उन्होने अंग्रेजी सीखी। आठ वर्ष की आयु में झग के जिला स्कूल में प्रविष्ट हुए जहा उनके पिता अध्यापक थे। इसी बीच उन्होने फारसी के कवि मौलाना रूमी तथा हाफिज के काव्य का गम्भीर अध्ययन किया। मिडिल की परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् वे मुलतान के हाई स्कूल मे पढने लगे। यहा चार्ल्स ब्रेडला, जॉन स्टुअर्ट मिल तथा बेन्थम जैसे पश्चिमी तत्वचिन्तको का उन्होंने विधिवत् अनुशीलन किया। डार्विन, हर्बर्ट स्पेन्सर तथा काम्टे जैसे वैज्ञानिकों तथा दार्शनिकों के विचारों का अध्ययन करने के कारण उन में सशयात्मकता तथा अनीश्वरवाद के तत्व पनपने लगे। परन्तु सौभाग्य से वे पं० रैमलदास तथा लाला चेतनानन्द जैसे मित्रों के सम्पर्क में आकर आर्यसमाज की ओर आकृष्ट हुए। इसी बीच उन्होंने सत्यार्थप्रकाश का प्रथम सस्करण पढ़ा और २० जून १८८० को विधिवत् आर्यसमाज लाहौर के सभासद बन बन गए। अब उन्होंने अष्टाध्यायी पढ़ना आरम्भ किया तथा अन्य शास्त्र ग्रन्थो एवम् स्वामी दयानन्द के ग्रन्थों का अध्ययन भी जारी रखा।

वस्तुत गुरुदत्त को अध्ययन का ही व्यसन था। अल्प वय में जब कि उस आयु के बालक खेलने कूदने से ही अवकाश नहीं पाते, गुरुदत्त ने मिल्टन कूपर तथा शेक्सपियर जैसे कवियों को पढ़ डाला था। किशोरावस्था में उनका अध्ययन विज्ञान के अतिरिक्त तर्कशास्त्र, मनोविज्ञान तथा दर्शनशास्त्र जैसे क्लिष्ट विषयों को अपनी परिधि में सन्निविष्ट कर चुका था। १८८० के नवम्बर मास में ऐन्ट्रेन्स परीक्षा पास कर वे गवर्नमेंट कालेज लाहौर में उच्च शिक्षा हेतु प्रविष्ट हुए। यहा पाठ्य पुस्तकों का अध्ययन करने के साथ-साथ उन्होंने पश्चिमी तत्ववेत्ताओं के विचारों का अध्ययन किया। इससे उनके विश्वासो को तो धक्का लगा किन्तु उनका अध्ययन अधिक विशद तथा सूक्ष्म होने लगा। मई १९८३ में उन्होंने इण्टरमीडियेट की परीक्षा उत्तीर्ण की। लाला लाजपतराय उनके सहपाठी थे। १८८२ में उन्होंने अपने मित्रों के सहयोग से एक क्लब स्थापित किया। स्वतन्त्र और निरपेक्ष भाव से विभिन्न प्रश्नों एव समस्याओं पर खुले मस्तिष्क से विचारों का आदान प्रदान ही इस क्लब का उद्देश्य था। पं० गुरुदत्त क्लब के मन्त्री थे।

१८८३ तक आते-आते गुरुदत्त के विचारों में नास्तिकता के भाव प्रबलता से व्याप्त हो गये और इसी वर्ष उनके जीवन में वह परिवर्तनकारी महान् घटना घटित हुई जिसके परिणामस्वरूप नास्तिकता के अभिशाप से मुक्त होकर वे वैदिक धर्म के सच्चे भक्त बन गए। स्वामी दयानन्द के रुग्ण होने का समाचार पाकर लाहौर आर्यसमाज ने उन्हें लाला जीवनदास के साथ अजमेर भेजा। यहां मृत्यु शय्या पर लेटे मृत्युञ्जय दयानन्द की अन्तिम छवि देखकर गुरुदत्त के नास्तिकता के भाव विलुप्त हो गये। वे दृढ आस्तिक बन गए। स्वामी दयानद रचित सत्यार्थप्रकाश का उन्होंने १८ बार अध्ययन किया था और प्रत्येक बार के अध्ययन में उन्हें नवीन भाव एव विचार मिले।

८ नवम्बर १८८३ को स्वामी दयानन्द को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करने हेतु आयोजित सभा में यह निश्चय किया गया कि दिवगत महापुरुष की स्मृति को चिर स्थायी बनाने हेतु एक महाविद्यालय की स्थापना की जाये। फलत. दयानन्द ऐंग्लो वैदिक कालेज स्थापित किये जाने का प्रस्ताव स्वीकार किया गया। अब पं० गुरुदत्त सर्वात्मना कालेज की स्थापना के प्रयत्नों में लग गए। १८८५ में बी०ए० पास करने के पश्चात् वे समग्र पजाब प्रान्त में भ्रमण कर कालेज के पक्ष में वातावरण बनाने तथा धनसग्रह के कार्य में लग गए। उनके प्रभावशाली भाषणो का व्यापक प्रभाव पडा और स्वल्प काल में ही कालेज के लिए पर्याप्त धन एकत्रित हो गया। १८८६ में भौतिकशास्त्र मे एम०ए० परीक्षा सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर उत्तीर्ण की तथा गवर्नमेंट कालेज लाहौर मे विज्ञान के सहायक प्रोफेसर नियुक्त हुए। अब उन्होंने सामाजिक कार्यों के लिये अधिकाधिक समय देना आरम्भ कर दिया। डा० ओनम के अवकाश पर जाने की अवधि मे वे विज्ञान के प्रोफेसर पद पर भी कार्य करते रहे। १८८७ में वे उस शिष्ट मण्डल में सम्मिलित हुए जिसने डी ए वी कालेज की सहायता हेतु चन्दा एकत्रित करने के लिए पजाब का व्यापक दौरा किया था। शिष्टमण्डल में पं० गुरुदत्त के अतिरिक्त लाला लाजपतराय तथा लाला ज्वाला सहाय थे। १८९० मे उनका प्रसिद्ध ट्रैक्ट प्रकाशित हुआ।

उनकी प्रवृत्तियां अधिक व्यापक तथा जीवन अधिक व्यस्त होने लगा। लोग उनके पास शका समाधान, विचार विमर्श तथा ज्ञान वृद्धि के लिए आते। आश्चर्य की बात है कि पं० गुरुदत्त सस्कृत, अरबी, भौतिक विज्ञान, रसायन, भूगर्भ शास्त्र, शरीर विज्ञान, ज्योतिष, गणित, दर्शन और भाषा विज्ञान जैसे विभिन्न शास्त्रो पर एक सा अधिकार रखते हुए जिज्ञासुओ से वार्तालाप करते थे। उनके विशाल और गम्भीर अध्ययन पर श्रोताओं का चकित रह जाना स्वाभाविक ही था। मोनियर विलियम्स की इण्डियन विजडम की आलोचना में उन्होंने १८८८ में व्याख्यान दिये। अधिकाधिक कार्य लिप्त रहने के कारण उनका स्वास्थ्य जवाब देने लगा। यह जान कर आश्चर्य होता है कि अपने से कम आयु के मुनिवर गुरुदत्त के पास बैठ कर स्वामी अच्युतानन्द, स्वामी प्रकाशानन्द, स्वामी स्वात्मानन्द तथा स्वामी महानन्द नामक चार सन्यासी घण्टो शास्त्रीय चर्चा करते थे। ये सन्यासी शाङ्कर वेदान्त के अनुयायी थे, परन्तु रात-दिन अपने घर पर इन सन्यासियों से शास्त्र चर्चा और धर्मालाप कर पं० गुरुदत्त उन्हें वेद प्रतिपादित त्रैतवाद पर विश्वास दिलाने में सफल हो जाते थे और तब ये चारों सन्यासी वैदिक धर्मानुयायी बन कर आर्यसमाज के प्रचार में सलग्न होने का व्रत लेते हैं। इस समय उनका घर आश्रम तुल्य बन गया था जहा आठो पहर शास्त्रालोचन चलता रहता था।

१८८९ ई० में गुरुदत्त ने उपदेशक कक्षा प्रारम्भ की। इसमें वयोवृद्ध और ज्ञानवृद्ध लोग उनके निकट आकर अष्टाध्यायी और अन्य आर्ष ग्रन्थों का अध्ययन करते। लाला नारायणदास एम०ए० जो उस समय अतिरिक्त सहायक आयुक्त के महत्वपूर्ण पद पर आसीन थे, अपने कार्य से तीन मास का अवकाश लेकर पं० गुरुदत्त से अष्टाध्यायी और महाभाष्य सीखने आये। गुरुमुख से सस्कृत न सीख पाने पर भी पं० गुरुदत्त ने दयानन्द कृत वेदाग प्रकाश की सहायता से ही सस्कृत भाषा पर इतना अधिकार प्राप्त कर लिया था जिससे कि वे धारावाही रूप से सस्कृत बोल सकते थे। आर्यसमाज मन्दिर में नवोदित भारत धम महामण्डल के तथाकथित सनातन धर्म आन्दोलन की आलोचना मे वे धारावाही सस्कृत में भाषण देते थे।

जुलाई १८८९ से मुनिवर गुरुदत्त ने वैदिक मैगजीन नामक पत्रिका निकालनी आरम्भ की जिसमें वैदिक विषयो पर उच्चकोटि के लेख होते थे। अत्यधिक परिश्रम ने पण्डित जी के स्वास्थ्य को जर्जर बना दिया। वे यक्ष्मा के शिकार हो गए। चिकित्सा कराने पर भी रोग से मुक्ति नही मिली किन्तु जीवन से मुक्ति मिल गई। १९ मार्च १८९० को जब वे अपनी आयु के २६ वर्ष भी पूरे नहीं कर पाये थे, गुरुदत्त का निधन हो गया। मुनिवर गुरुदत्त का सम्पूर्ण साहित्य अंग्रेजी में लिखा गया है। उन्होने कतिपय वैदिक विषयों पर व्याख्यात्मक टिप्पणियां लिखी हैं। कुछ उपनिषदों को मौलिक टीकायें

(शेष पृष्ठ ६ पर)

यज्ञ की वैदिक पद्धति

卐

विद्वान् लेखक श्री रमेश वानप्रस्थ का उक्त शीर्षक के अन्तर्गत लख 'साप्ताहिक आर्यसन्देश' के १ मई १९८८ के अक में पढने को मिला। विद्वान् लेखक ने नि सन्देह इस लेख मे अमूल्य सामग्री दी है परन्तु साथ ही कुछ अनुत्तरित प्रश्न भी खडे कर दिए हैं।

पूरे लेख को पढ कर भी यह स्पष्ट नहीं हो पाया कि हवन किस-किस वस्तु से किया जाए और प्रत्येक वस्तु की मात्रा कितनी हो। आहुतियों की मात्रा की न्यूनता के कारण कहा गया है कि "उस की आहुति देने से कामनाओं की पूर्ति सम्भव नहीं है"। साथ ही यह भी लिखा गया है कि "निश्चित सफलता के लिए आहुति की मात्रा में कमी नहीं करनी चाहिए।" 'आहुतियों की सख्या भले ही कम कर दी जाए।"-

यह बातें कुछ भ्रम पैदा करती है। महर्षि दयानन्द ने यज्ञ पद्धति को वैज्ञानिक पद्धति के रूप में पुन उद्धरित किया है। जब उनसे किसी ने प्रश्न किया कि घृत आदि किसी को खाने को देवें और चन्दन आदि का लेप किया जाए तो उपकार हो, परन्तु इनको अग्नि मे डाल कर नष्ट क्यों किया जाए तो स्वामी जी का उत्तर था "यदि तुम पदार्थ विद्या जानते तो ऐसा न कहते।" यज्ञ मे 'पदार्थ विद्या" के प्रसग को लाना महर्षि दयानन्द की विज्ञान निष्ठा को प्रमाणित करता है। हमें हवन द्वारा अग्नि की "भेदक" शक्ति का लाभ उठा कर 'सुगन्ध', 'पुष्टि' और 'रोगनिवारक' वस्तुओ को 'हव्य वाहक' अग्नि के द्वारा वातावरण में दूर तक भेजना है जिस से वह वृष्टि जलो को पवित्र और इन्ही गुणो से भरपूर कर के उस सूक्ष्म रूप मे धरती को लौटा सके। जिसका स्थूल रूप विभिन्न प्रकार की वनस्पतिया, वृक्ष लताए, फल फूल आदि हैं। कौन नही जानता कि आज कल के फलो, अन्न, औषधियो आदि का गुणवत्ता वातावरण के प्रदूषण के कारण बहुत अधिक गिर गई है।

यदि हवन मे उपरोक्त उपकार लेने हैं तो आहुतियो की सख्या और मात्रा के झमेले मे न उलझा जाए। आजकल के अशुद्ध वातावरण मे तो जितनी भी आहुतिया जिस भी मात्रा की डाली जाए सभी कम रहेंगी क्योंकि वातावरण प्रदूषित ही नहीं अपितु विषैला भी हो चुका है। हां, विभिन्न वस्तुओं के अनुपात का अवश्य ध्यान रखा जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त यजमान की कोई और इच्छा हवन से पूरी होती हो मैं ऐसा मानने को तैयार नही हू।

यदि आज बाजार मे कुटी लकडी हवन सामग्री के नाम पर बिक रही है तो सही सामग्री को तैयार करने और बेचने की जिम्मेवारी भी किसी को लेनी ही चाहिए। आर्यसमाजी हवन की परम्परा को यथाशक्ति जीवित रख रहे हैं और फैला भी रहे हैं परन्तु हम 'पुरोहित' वर्ग से इस बात की आशा रखते हैं कि वे 'सही मात्रा', 'आहुतियों की सख्या' 'मन्त्र पाठ के क्रम' आदि पर मतैक्य बना कर 'सही सामग्री' से और एक 'सर्वमान्य पद्धति' से सभी आर्यसमाजों मे यज्ञ हवन करवाए। अभी तो स्थिति यह है कि आर्यसमाज के विद्वान् अपने-अपने ढग से हवन करा जाते हैं और यदि कहा जाए कि अमुक पण्डित जी ने इस ढग से हवन कराया था तो एक प्रश्नों की तालिका छोड जाते हैं कि उन पण्डित जी को यह प्रमाण दिखाओ और उन से यह प्रमाण मांगो। इस अलग-अलग ढग से हवन से सभी आर्यसमाजों के अधिकारी परेशान और भ्रमित हैं और किसी विद्वान् को कुछ कह भी नहीं सकते। कोई प्रत्येक मत्र के साथ 'ओ३म्' बुलवाता है और कोई किसी-किसी मन्त्र के साथ। कोई 'भावनाए पूर्ण होव यज्ञ से नर नार की' तो कोई 'कामनाए पूर्ण होवें यज्ञ से नर-नार को' कहलवाता है। प्रमाण सब महर्षि दयानन्द का देते हैं। भगवान के लिए आर्यसमाजियो को भ्रमित करना भी बन्द करिए और लाछित करना भी। विद्वानो मे मतैक्य न हो तो किसी भी पद्धति को ठीक या गलत कैसे ठहराया जाए।

ऋषि भृङ्ग, ऋषि विश्वामित्र ऋषि वशिष्ठ किस सामग्री से यज्ञ करते थे इसकी खोज भी विद्वानो को ही करनी है। और यह खोज न पाने का ही परिणाम है कि 'सरिता' जैसी पत्रिकाओ को अनर्गल लेख लिखने का अवसर मिलता है। पिछले वर्ष 'सूखा' से पीडित व्यक्तियों ने कुछ स्थानों पर यज्ञ कराए और कहीं-कहीं कुछ बदलियां या छींटे भी 'पूर्णाहुति' के बाद देखने में आए यद्यपि सभी जगह नहीं। क्या किसी ने गम्भीरतापूर्वक यज्ञ से पूर्व और पश्चात् वातावरण की स्थिति का अध्ययन किया और यह मूल्यांकन किया कि 'पूर्व और पश्चात्' में जो परिवर्तन आया उस में से कितना स्वाभाविक (जो यज्ञ के बिना भी होता) और कितना यज्ञ के कारण हुआ? साथ ही क्या यह भी देखा गया कि किस स्थान पर यज्ञ में कौन-सी आहुति 'मात्रा' और 'सख्या' के आधार पर अधिक कारगर रही। आर्यसमाज का विशाल संगठन यदि चाहे तो इस प्रकार के अध्ययन दल स्थापित कर सकता है। उसे पुरोहित तो मिलेंगे, वैज्ञानिक भी मिलेंगे यजमान भी मिलेंगे। धन भी मिलेगा! जन भी मिलेंगे। केवल इरादा करने की देर है। और यदि आर्यसमाज नही तो कोई और इस कार्य को करेगा भी नहीं।

—राजेन्द्र पाल गुप्त
मन्त्री, आर्यसमाज साकेत
११०/१२ पुष्प विहार
सेक्टर-६, साकेत,
नई दिल्ली-१७

वरदान

'प्रभो! विपत्तियों से रक्षा करो'
यह प्रार्थना लेकर मैं तेरे द्वार पर नहीं आया।
'विपत्तियों से भयभीत न होऊं', यही वरदान दो।
अपने दु:ख से व्यथित चित्त को
सान्त्वना देने की भिक्षा नहीं मांगता,
'दु:खों पर विजय पाऊं'
यही आशीर्वाद दो, यही प्रार्थना है।
तेरी सहायता मुझे न मिल सके तो भी, यह वर दो कि
'मैं दीनता स्वीकार करके अवश न बनूं।'
प्रभो! ससार के अनिष्ट, अनर्थ और छलकपट भले ही
मेरे भाग्य में आयें
तो भी मेरा अन्तर् इन प्रताडणाओ से क्षीण न हो।
'मुझे बचा लो' यह प्रार्थना लेकर
मैं तेरे दर पर नहीं आया
केवल सकट-सागर में तैरते रहने की
शक्ति मांगता हूं नाथ!
'मेरा भार हल्का कर दो' यह याचना
पूर्ण होने की सान्त्वना नहीं चाहता,
यह भार वहन करके चलता रहूं--यही प्रार्थना है।
सुखभरे क्षणों में नतमस्तक हो तेरे दर्शन कर सकू
किन्तु दु खभरी रातो मे जब
सारी दुनिया मेरा उपहास करेगी
तब मैं शकित न होऊँ
यही वरदान चाहता हू प्रभो!

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

विद्या, अविद्या, बन्धन एवं मोक्ष

—पुष्करलाल आर्य

★

विद्यां चाऽविद्यां च
यस्तद्वेदोभयꣳ सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा
विद्ययाऽमृतमश्नुते॥
यजु० अ० ४०१, मन्त्र ४।

भावार्थ—इसी प्रकार परमेश्वर की उपासना कर के, अविद्या आदि क्लेश तथा अधर्माचरण आदि दुष्ट गुणों के निवारण कर के, शुद्ध विज्ञान और धर्मादि शुभ गुणों के आचरण से आत्मा की उन्नति कर के जीव मुक्ति को प्राप्त हो जाता है। अब इस विषय में प्रथम योगशास्त्र का प्रमाण लिखते हैं। पूर्व लिखी हुई चित्त की पांच वृत्तियों को यथावत् रूप में और मोक्ष के साधन में सब दिन प्रवृत्त रहने से, नीचे लिखे हुए पाच क्लेश नष्ट हो जाते हैं। ये क्लेश ये हैं—

एक अविद्या, दूसरा अस्मिता, तीसरा राग, चौथा द्वेष और पांचवा अभिनिवेश।

उन में से अस्मितादि चार क्लेशों और मिथ्याभाषणादि दोषों की माता अविद्या है, जो मूढ़ जीवों को अन्धकार में फसा कर जन्म-मरणादि दुःख सागर में सदा डुबाती है। परन्तु जब विद्वान् और धर्मात्मा उपासकों की सत्यविद्या से अविद्या विच्छिन्न अर्थात् छिन्न-भिन्न होके प्रसुप्ततनु=नष्ट हो जाती है, वे जीव मुक्ति को प्राप्त हो जाते हैं।

अविद्या के लक्षण ये हैं अनित्य अर्थात् कार्य (जो शरीर आदि स्थूल पदार्थ लोकलोकान्तर) में नित्य बुद्धि, तथा जो नित्य अर्थात् ईश्वर, जीव, जगत् का कारण, क्रिया क्रियावान् गुण गुणी और धर्म धर्मी हैं, इन नित्य पदार्थों का परस्पर सबंध है। इन में अनित्य बुद्धि का होना, यह अविद्या का प्रथम भाग है।

तथा अशुचि मल मूत्र आदि के समुदाय दुर्गन्धरूप मल से परिपूर्ण शरीर में पवित्र बुद्धि का करना, तथा तालाब, बावरी, कुण्ड, कुआ और नदी आदि में तीर्थ और पाप छुड़ाने की बुद्धि करना, और उनका चरणामृत पीना, एकादशी आदि मिथ्या व्रतों में भूख प्यास आदि दुःखों का सहना, स्पर्श इन्द्रिय के भोग में अत्यन्त प्रीति करना इत्यादि अशुद्ध पदार्थों का शुद्ध मानना और सत्यविद्या, सत्यभाषण, धर्म, सत्सग, परमेश्वर की उपासना, जितेन्द्रियता, सर्वोपकार करना, सब से प्रेम भाव से वर्तना आदि शुद्ध व्यवहार और पदार्थों में अपवित्र बुद्धि रखना यह अविद्या का दूसरा भाग है। तथा दुःख में सुख बुद्धि अर्थात् विषय-तृष्णा, काम, क्रोध, लोभ, मोह, शोक, ईर्ष्या आदि दुःख रूप व्यवहारों में सुख मिलने की आशा करना, जितेन्द्रियता, निष्काम, शम, सन्तोष, विवेक, प्रसन्नता, प्रेम, मित्रता आदि सुखरूप व्यवहारों में दुःख बुद्धि का करना, अविद्या का तीसरा भाग है।

इसी प्रकार अनात्मा में आत्म-बुद्धि अर्थात् जड में चेतन भाव और चेतन में जड भावना करना, अविद्या का चतुर्थ भाग है। यह चार प्रकार की अविद्या ससार के अज्ञानी जीव को बन्धन का हेतु हो के उनको सदा नचाती रहती है। परन्तु विद्या अर्थात् पूर्वोक्त अनित्य अशुचि, दुःख और अनात्मा में अनित्य, पवित्रता, दुःख और अनात्म बुद्धि का होना तथा नित्य, शुचि, सुख और आत्मा में नित्य, पवित्रता, सुख और आत्मबुद्धि करना यह चार प्रकार की विद्या है। जब विद्या से अविद्या की निवृत्ति होती है तब बन्धन से छूट के जीव मुक्ति को प्राप्त होता है।

दूसरा क्लेश अस्मिता कहाता है, अर्थात् जीव और बुद्धि को मिले के समान देखना, अभिमान और अहकार से अपने को बडा समझना इत्यादि व्यवहार को अस्मिता जानना, जब सम्यक् विज्ञान से अभिमान आदि के नाश होने से निवृत्ति हो जाती है तब गुणों के ग्रहण में रुचि होती है।

तीसरा राग, अर्थात् जो-जो सुख ससार में साक्षात् भोगने में आते हैं, उनके सस्कार की स्मृति से जो तृष्णा के लोभ सागर मे बहता है इसका नाम राग है। जब ऐसा ज्ञान मनुष्य को होता है कि सब सयोग वियोग, सयोगवियोगान्त हैं। अर्थात् वियोग के अन्त में सयोग, सयोग के अन्त में वियोग तथा वृद्धि के अन्त में क्षय, क्षय के अन्त मे वृद्धि होती है, तब इसकी निवृत्ति हो जाती है।

पांचवा अभिनिवेश क्लेश है, जो सब प्राणियों को नित्य आशा होती है कि हम सदैव शरीर के साथ बने रहें, अर्थात् कभी मर नहीं, सो पूर्वजन्म के अनुभव से होती है। और इसे पूर्वजन्म भी सिद्ध होता है। क्योंकि छोटे छोटे कृमि, चींटी आदि जीवों को भी मरण का भय बराबर बना रहता है। इसी से इस क्लेश को अभिनिवेश कहते हैं। जो कि विद्वान् मूर्ख तथा क्षुद्रजन्तुओं मे भी बराबर दीख पडता है। इस क्लेश की निवृत्ति उस समय होगी जब जीव, परमेश्वर और प्रकृति अर्थात् जगत् के कारण को नित्य और कार्यद्रव्य के सयोग वियोग को अनित्य जान लेना। इन क्लेशों की शान्ति से जीवों को मोक्ष की प्राप्ति होती है। ●

(पृष्ठ ३ का शेष)

पं० गुरुदत्त विद्यार्थी

उनकी लेखनी से प्रसूत हुई तथा यूरोपीय विद्वानों के वेदविषयक भ्रमात्मक विचारों का उन्होंने लेखबद्ध खण्डन किया। उनकी रचनाओ का विवरण इस प्रकार है—

१ वैदिक सज्ञा विज्ञान (The Terminology of the Vedas) यह उनकी प्रतिनिधि रचना है जो १ जून १९८८ को प्रकाशित हुई। वस्तुत यह निबन्ध रूप मे लिखा गया गन्थ है जो आर्य पत्रिका के ११ जुलाई, ९ अगस्त, १९ सितम्बर तथा १० अक्टूबर १८८५ के अकों मे क्रमश प्रकाशित हुआ था। लेखक ने इस ग्रन्थ को अपने गुरु तथा युग के अद्वितीय वैदिक विद्वान् स्वामी दयानन्द की पुण्य स्मृति मे समर्पित किया है। आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के सस्कृत पाठ्यक्रम मे इस पुस्तक को रखा गया था।

२ इसी वष (१८८८) मे उनका एक अन्य निबन्ध The terminology of the Vedas and the European Scholars प्रकाशित हुआ। यह उनके प्रथम निबन्ध का परिशिष्ट ही है जिसमें वेदार्थ विषयक महर्षि यास्क प्रतिपादित निरुक्त पद्धति का समर्थन करते हुए प्राध्यापक मोनियर विलियम्स की धारणाओ की समीक्षा की गई है। इन दोनों कृतियो ने प० गुरुदत्त को अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति तक पहुचा दिया था।

३ उपनिषदों की व्याख्या पं० गुरुदत्त कृत वाजसनेयोपनिषद् की टीका १८८८ के जून मास मे प्रकाशित हुई। मूल टीका अग्रेजी मे लिखी गई थी जो Ishopnishad with Sanskrit Text and English Translation शीर्षक से विरजानन्द प्रेस लाहौर से १८८८ में मे छपी। इसका हिन्दी अनुवाद प० आत्माराम अमृतसरी ने किया जो ऐंग्लो सस्कृत यन्त्रालय लाहौर से छपा।

मुण्डकोपनिषद् का अग्रेजी अनुवाद। हिन्दी अनुवाद प० आत्माराम अमृतसरी द्वारा ५ पौष १९४८ वि० को प्रकाशित।

माण्डूक्योपनिषद् की अग्रेजी टीका। इसका एक सस्करण बलाईचन्द्र मलिक आर्य ने १९२४ ई० में कलकत्ता से प्रकाशित किया। प० गुरुदत्त के निधन के पश्चात् जब अखिल विश्व धर्म सम्मेलन के शिकागो अधिवेशन में उनके द्वारा रचित उपनिषदों की ये व्याख्याए १८९६ ई० मे भेजी गयी तो एक अमेरिकी प्रकाशक ने उसे प्रकाशित किया। यह उपनिषद् टीका का शिकागो सस्करण था।

४ उपर्युक्त ग्रन्थों के अतिरिक्त Vedic texts के नाम से उनके तीन अन्य लेख भी प्रकाशित हुए। प्रथम लेख का शीर्षक था–Atmosphere (वायुमण्डल) जिसमें ऋग्वेद के प्रथम मण्डल के द्वितीय सूक्त के प्रथम मत्र "वायवा याहि दर्शतेमे सोमा अरकृता। तेषा पाहि श्रुधि-हवम्" की व्याख्या लिखी गई है। द्वितीय लेख The Composition of Water (जल की रचना) है जो १३ जुलाई १८८६ को लिखा गया था। इस मे ऋग्वेद के मन्त्र 'मित्र हुवे पूतदक्ष वरुण च रिशादसम्। धिय घृताची साधन्ता (मण्डल १, सूक्त २, मन्त्र ७) की वैज्ञानिक रहस्ययुक्त व्याख्या की गई है। गुरुदत्त के अनुसार इस मन्त्र मे वर्णित 'मित्र' और 'वरुण' क्रमश उद्जन और ओषजन के प्रतीक है जिनके एक विशिष्ट मात्रा (H_2O) मे मिलने से जल की उत्पत्ति होती है। गुरुदत्त कृत इस मन्त्रार्थ ने एक मनोरजक विवाद को जन्म दिया। गुरुकुल कांगडी की मुख्य पत्रिका वैदिक मैगजीन में जब एक महानुभाव ने इण्डियन नेशलिस्ट के नाम से अपने एक लेख मे–The Advent of the Redeemer में प० गुरुदत्त कृत उपर्युक्त मन्त्रार्थ का समर्थन किया तो सत्येन्द्र एन० राय नाम के किसी अन्य व्यक्ति ने The Veda and the composition of water शीर्षक सम्पादक के नाम लिखे गये अपने पत्र में उक्त मन्त्रार्थ पर आपत्ति की। राय महाशय का यह पत्र वैदिक मैगजीन के आषाढ १९६८ वि० के अक में छपा। इस पत्र का उत्तर श्रावण १९६८ वि० के अक मे A student of the Veda के छद्म नाम से किसी सज्जन ने Physical science in the Veda शीर्षक से दिया। पुनः इसी वर्ष के भाद्रपद मास के अक ५५ मे उपर्युक्त शीर्षक से ही An Indian Nationalist के नाम से लिखने वाले व्यक्ति ने प० गुरुदत्त कृत मन्त्रार्थ के औचित्य को सिद्ध कर इस विवाद का उपसहार किया।

Vedic Texts का तृतीय भाग 'गृहस्थ' शीर्षक से प्रकाशित हुआ। इस में ऋग्वेद मण्डल १, सूक्त ५० मन्त्र १३ के आधार पर गृहस्थ धर्म का विवेचन किया गया है। ये सभी ग्रन्थ मास्टर दुर्गाप्रसाद के विरजानन्द यन्त्रालय लाहौर से छपे थे। Vedic Texts का तृतीय भाग 'गृहस्थ' स्वामी ब्रह्मानन्द सरस्वती द्वारा १८९४ ई० मे जी०पी० वर्मा एण्ड ब्रदर्स प्रेस लखनऊ से मुद्रित होकर प्रकाशित हुआ था।

उपर्युक्त ग्रन्थों के अतिरिक्त प० गुरुदत्त ने वेद विषयक विभिन्न प्रश्नो और अन्य समस्याओ पर समाधानात्मक आलोचनात्मक तथा प्रत्यालोचनापूर्ण कतिपय अन्य निबध भी लिखे जिनका सक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

1 A Reply to some criticism of Swami Veda Bhashya.

2 A Reply to Mr T Williams' letter on Idolatory in the Vedas

पादरी टी० विलियम्स ने वेदों में मूर्ति पूजा शीर्षक एक पत्र आर्य-पत्रिका के सम्पादक के नाम लिखा था। पादरी द्वारा उठाई गई शंकाओं का समाधान प० गुरुदत्त ने उक्त निबन्ध के रूप में किया जो पादरी के मूल पत्र के साथ पाद टिप्पणियों के रूप में आर्य पत्रिका में छपा।

3 A Reply to Mr T Williams' criticism on Niyoga

पादरी टी० विलियम्स ने ऋग्वेद के मन्त्र—आघाता गच्छानुत्तरा युगानि यत्र जामय· कृणवन्नजामि। उप बर्बृहि वृषभाय बाहुमन्यमिच्छस्व सुभगे पतिम्" १०।१०।१० के आधार पर स्वामी दयानन्द द्वारा नियोग की प्रथा को सिद्ध किये जाने का खण्डन किया था। पं० गुरुदत्त ने यमयमी सम्वाद सूक्त में आये इस मन्त्र का वास्तविक अर्थ करते हुए स्वामी दयानन्द कृत अर्थ को पुष्ट किया। आर्य ट्रैक्ट सोसाइटी लाहौर से यह पुस्तिका १८९० ई० में प्रकाशित हुई।

4 Mr T. Williams on Vedic Text No 1—The Atmosphere

टी० विलियम्स का एक लेख प० गुरुदत्त के The Atmosphere निबन्ध के खण्डन में दि आर्य' पत्र में छपा था। पण्डित जी ने आक्षेपकर्ता की आपत्तियों का जो उत्तर दिया वह मूल निबन्ध के साथ पाद टिप्पणियों के रूप में प्रकाशित हुआ।

5 Mr Pincot on the Vedas

प्रसिद्ध हिन्दी प्रेमी अग्रेज विद्वान् फ्रडरिक पिंकाट के वेद विषयक विचारो की समीक्षा मे यह लेख लिखा गया था।

प० गुरुदत्त के उपर्युक्त ग्रन्थ निम्न शीर्षकों से पृथकश भी छपे थे—

1 Evidence of the Human Spirit
2 The Terminology or the Vedas.
   (i) Composition of water
   (ii) Criticism of M Williams' Indian Wisdom
3 Upanishads with Commentary
4. Wisdom Divine
5 Vedic Philosophy Edited by Durga Prasad, Lahore 1900
6 Realities or Inner Life

कविताएँ

हम ऐसा भारत चाहते हैं

हो सभी में समता
न हो आर्थिक विपन्नता
परिलक्षित हो मानवता
हो भावों मे एकता
विचारों में हो उदारता
अन्याय के विरुद्ध हो शूरता
दीनों के समक्ष हो विनम्रता
लक्ष्य में हो समानता
हम ऐसा समाज चाहते हैं
हम ऐसा भारत चाहते हैं।

दुश्मनों को दहलायें

पाकिस्तान बना रहा परमाणु बम
हम मिटा न पा रहे भ्रम
क्या हम हार का इतिहास दोहरायेंगे
पुन मिट्टी में मिल जायेंगे
सिर न उठा पायेंगे
अन्ततोगत्वा विनष्ट हो जायेंगे
आओ हम सावधान हो जायें
हाइड्रोजन बम बना दुश्मनों को
दहलायें।

रचयिता—
शकुनचन्द गुप्त विद्यावाचस्पति
लालगंज, जि० रायबरेली

ग्राम प्रचार की धूम

ला० अविनाशचन्द्र गुप्त (ए० आई० स्टील इलैक्ट्रोप्लेटिंग बी-६५ मेन मार्कीट शकरपुर, दिल्ली-९२ में दो दिवस शुक्र एव शनिवार ६ व ७ मई १९८८ को दिल्ली आ० प्र० सभा के प्रचार वाहन के माध्यम से ग्राम प्रचार रखा गया। जिस में वेद प्रचार विभाग के कार्यकर्ता स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती, प० सत्यदेव स्नातक रेडियो कलाकार, प०चुन्नीलाल सगीतज्ञ, प० वेदव्यास भजनोपदेशक और श्री जगदीशलाल तथा अन्य महानुभाव उपस्थित रहे।

श्री अविनाशचन्द्र गुप्ता ने प्रचार स्थल को सुन्दर ढंग से सजावट कर सुशोभित बनाया। यज्ञ के ब्रह्मा पं० वेदव्यास जी रहे जिसमें श्री अविनाशचन्द्र गुप्ता परिवार सहित यजमान रहे। यज्ञ के पश्चात् परिवार के सभी सदस्यों को पुष्प वर्षा द्वारा आशीर्वाद दिया गया। यह परिवार यज्ञ प्रेमी एवं धर्मार्थ कार्यों में अटूट श्रद्धा रखता है।

पं० सत्यदेव जी स्नातक ने मधुर गीत सगीत द्वारा श्री रामचन्द्र जी के जीवन पर प्रकाश डाला तथा रामायण की कथा का कार्यक्रम प्रस्तुत किया। प० चुन्नीलाल के जोशीले गीत, प० वेदव्यास जी के मनोहर भजनों से जनता ने धर्म लाभ उठाया। आर्यसमाज लक्ष्मी नगर, आर्यसमाज शकरपुर के सभी आर्यबन्धु उपस्थित रहे। श्री वेद प्रकाश गुप्ता, बनवारीलाल गुप्ता, रामनिवास गुप्ता, श्री खन्ना जी, श्री त्यागी जी, प० पुरुषोत्तम शर्मा, सुनीलकुमार सेठी, सुभाषचन्द्र, श्री गोपाल जी इत्यादि महानुभावों ने प्रचार कार्य में सहयोग दिया। यह कार्यक्रम रात्रि १०.३० बजे तक चलाया गया। अन्त में स्वामी जी की हास्य कविताएँ श्रोता गणों के दिल की मुरझाई कली खिलाती रहीं और हँसते मुस्कराते हुए इस प्रशंसनीय कार्य की सराहना करते हुए भविष्य की आशा लिए वैदिक धर्म की जय का नारा गुंजाया और सत्संग से धर्म लाभ उठाया। श्री अविनाशचन्द्र गुप्ता ने सभी कार्यकर्ताओं के लिए भोजन का प्रबन्ध किया। माता-बहिनों ने यथाशक्ति दान भी दिया, सत्सग का आनन्द लिया। जिस के फलस्वरूप अन्य स्थानों पर इसी प्रकार का सत्सग लगाने की इच्छा प्रकट की। यह हर्षोल्लास के साथ दो दिन का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

भवदीय
स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती
अधिष्ठाता, वेद प्रचार

कौन कौन से गीत सुनाऊँ

कौन कौन से गीत सुनाऊ, सभी सुनाए से लगते हैं।
सुनने वाले पीर न जानें सब उकताए से लगते हैं॥

एक गीत है सत्य ब्रह्म का जिस को वेद ज्ञान कहते हैं।
जिसने गाया जगती में उसको विद्वान् कहते हैं॥
अब स्वतन्त्र भारत मे पर वो मन्त्र भुलाए से लगते हैं॥१॥

एक गीत होता वीरों का, तलवारों के झनझन स्वर मे।
असुर आततायी अरि दल का, नाम मिटा देता पल भर में॥
आज शिखण्डी के शासन में दुर्दिन आये से लगते हैं॥२॥

ऋषि मुनि योगी सन्तों ने, गा गाकर नित गीत जगाए।
पर कर्मों को रोने वाले सोने वाले जाग न पाए॥
जिनको हम अपना समझे वे वही पराए से लगते हैं॥३॥

कब से नित बर्बाद वतन और यत्न मिटाने का जारी है।
रूह आफजा का लेबिल और बोतल में पानी खारी है॥
"व्याकुल" कवि आज सब नेता गोली खाए से लगते हैं॥४॥

रचयिता—प्रकाशवीर व्याकुल कवि

R N No. 32387/77 Post in N D P S O on 19, 20-5-88 Licenced to post without prepayment, Licence No U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५९ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस न० यू १३९

धर्म के दस लक्षण

१ धृति—विपत्ति काल में भी न घबराना।

२ क्षमा—धन बल विद्या पाकर किसी से गलती होने पर भी क्षमा भाव रखना।

३ दम—मन को विषय वासनाओं से रोकना।

४ अस्तेय—प्रत्येक प्रकार की चोरी का त्याग।

५ शौच—शरीर आत्मा, मन की पवित्रता।

६ इन्द्रिय निग्रह—इन्द्रियरूपी घोड़ों को काबू रखना।

७ धी—प्रत्येक काय बुद्धि पूवक करना।

८ विद्या पढना, पढाना ज्ञान प्राप्त करना।

९ सत्य—सदैव मन कर्म-वचन से सत्य का धारण करना।

१० अक्रोध—क्रोध न करना।

—अमरनाथ आर्य
सागानेरी गेट जयपुर ३

(पृष्ठ १ का शेष)

पाक दूतावास पर…

स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि पाकिस्तान द्वारा प्रशिक्षित आतकवादियों के हाथों किसी भी हिन्दू अथवा सिख की हत्या के लिए हम पाकिस्तान को ही उत्तरदायी मानते हैं। यदि पाकिस्तान ने इस काम को बन्द न किया तो हम अपनी सरकार को पाकिस्तान के विरुद्ध कडी कार्रवाही करने के लिए विवश करेगे और इस के गम्भीर परिणाम होंगे और इसकी सारी जिम्मेदारी पाकिस्तान सरकार की होगी।

आशा है कि आप अपनी सरकार तक हमारी भावनाओं को पहुचा देंगे।

डा० धर्मपाल सूर्यदेव
(प्रधान) (महामन्त्री)
आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली

भवदीय
ओमप्रकाश आर्य
मन्त्री

आया था कभी योगी

आया था कभी योगी यहां एक निराला।
आंधी थी भवरा था पता तट का नहीं था
मांझी के बिना बेडा पडा भटका कहीं था
सकट के समय आ के उसी ने था सभाला।
वेदों पे अकीदत का नशा ऐसा चढाया
चढ जिस पे गया उसने कहीं सिर न झुकाया
विद्या का दिशाओं में दसों फैला उजाला।
जब देश सिहरता था गुलामी की घडी में
बाधा था उसी ने तो हमें एक कडी में
आजादी का उसी ने मन्त्र कान में डाला।
जितने धुरीण धर्म के इतिहास में हुए
ऋषिवर समान सिन्धु के तो शेष हैं कुए
उसने ही पूर्ण क्रान्ति का उदघोष उछाला।
हठ के हठात् ढह गये पाखण्ड के किले
जादू से उसी के पुहुप ऊसर में भी खिले
उसने ही कर्म की जला सर्वत्र दी ज्वाला।
तप, त्याग में वैदुष्य में बल में अनन्य था
अपने समान आप दयानन्द धन्य था
घातक को भी जिसने स्वयं खतरे से निकाला।

—धर्मवीर शास्त्री
B I/५१ पश्चिम विहार, नई दिल्ली-६३

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५९

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ३२ | रविवार २९ मई १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | ज्येष्ठ २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

स्वर्ण मन्दिर से आतंकवादियों का सफाया

ब्लू स्टार के सामने ब्लैक थंडर कुछ नहीं था

अमृतसर, २२ मई। आपरेशन ब्लैक थंडर और आपरेशन ब्लू स्टार का मकसद स्वर्ण मंदिर को उग्रवादियों से मुक्त करना था पर इसके अलावा दोनों अभियानों में कोई समानता नहीं है।

आपरेशन ब्लू स्टार में सेना के तीनों अंग इस्तेमाल किए गए थे। कई सैनिक शहीद हुए थे जबकि ब्लैक थंडर के दौरान सिर्फ सी० आर० पी० एफ० और राष्ट्रीय सुरक्षा गार्ड ने आसानी से पूरा काम कर लिया। पूरे आपरेशन में सिर्फ तीन सुरक्षा वाले ही जख्मी हुए। यह बात अलग है कि अभियान में समय बहुत लगा।

ब्लू स्टार आपरेशन में सेना को पहले ही दिन स्वर्ण मंदिर परिसर में घुसना पड़ा था, पर आपरेशन थंडर में ब्लैक कैट्स कमांडो और सी० आर० पी० के जवान आखिर तक परिक्रमा में नहीं गए। आपरेशन ब्लू स्टार का प्रभाव पूरे पंजाब पर पड़ा था पर आपरेशन ब्लैक थंडर का असर केवल स्वर्ण मंदिर के बाहर केवल दो सौ गज के घेरे में था। अमृतसर के बाकी हिस्सों में जनजीवन वैसा ही चलता रहा।

ब्लू स्टार के दौरान पंजाब में अखबारों पर सेंसर था जब कि आपरेशन थंडर को एक युद्ध की तरह देश विदेश के संवाददाताओं और फोटोग्राफरों को दो सौ गज दूर से दिखाया गया। ब्लू स्टार में चंडीगढ़ में सेना बुला ली गई था और रात नौ बजे पंजाब और चंडीगढ़ में कर्फ्यू लगा दिया गया था। वायु सेना और जल सेना ने थल सेना की सहायता की थी। दूसरे प्रांतों से थल सेना ने भी काम किया था। जल सेना के गोताखोरों ने अमृत सरोवर और दरबार साहिब से हथियार निकाले थे।

दूसरी ओर ब्लैक थंडर में राष्ट्रीय सुरक्षा गार्ड भी चौथे ही दिन सक्रिय हुए। अमृतसर की चारदिवारी में बसे शहर में दिन से कर्फ्यू रहा और बाद में सिर्फ परिसर के दो सौ गज के इलाके में ही कर्फ्यू लगाने की जरूरत पड़ी दूसरी ओर आपरेशन ब्लैक थंडर में चार दीवारी में बसे शहर में सिर्फ रात का कर्फ्यू लगा था। ब्लू स्टार के दौरान सेना के चार अधिकारी, ४४ अफसर और चार जवान मारे गए थे। ब्लैक थंडर के दौरान ३३ लोग मारे गए जिन में चार नागरिक थे। बाकी परिसर में मारे जाने वाले उग्रवादी, उनके सहयोगी या सेवादार थे। सुरक्षा बलों का कोई जान का नुकसान नहीं हुआ। सिर्फ तीन घायल हुए जिनमें सी० आर० पी० के उपमहानिरीक्षक सर्वदीप सिंह विर्क भी हैं।

ब्लैक थंडर पर सिख संगठनों में कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई। शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी अकाली दल और अकाली दल (लोंगोवाल) ने स्वर्ण मंदिर की घेराबंदी के खिलाफ पूरे पंजाब में जनमत तैयार करने की कोशिश की पर इसके खिलाफ गिरफ्तारी देने वालों की संख्या तीन अंकों से आगे बढ़ नहीं पाई। ब्लू स्टार के दौरान पूरे पंजाब के गुरुद्वारों पर भी एक साथ कारवाई करनी पड़ी थी। पर इस बार किसी और गुरुद्वारे में कोई प्रतिरोध नहीं हुआ। ब्लू स्टार आपरेशन के दौरान पंजाब में पूरी तरह सेंसर था। सभी विदेशी पत्रकारों को पंजाब से बाहर कर दिया गया था। पंजाब में यहां तक दिल्ली में छपने वाले अखबार भी नहीं आए थे। पंजाब के सभी टेलेक्स और टेलीफोन काट दिए गए थे। पंजाब से बाहर पंजाब की कोई खबर नहीं जा पा रही थी। सिर्फ दूरदर्शन और रेडियो से ही पंजाब के बारे में जानकारी मिल रही थी ब्लैक थंडर में प्रेस पर कोई पाबंदी नहीं लगाई गई।

आपरेशन ब्लू स्टार के बाद दरबार साहिब परिसर में मिले हथियारों और आपरेशन ब्लैक थंडर के बाद मिले हथियारों का मुकाबला करने पर पता लगता है कि इस बार उग्रवादियों के पास बहुत कम हथियार थे। ब्लू स्टार के बाद परिसर से ४१ लाइट मशीन गनें, ५७ स्टेट गनें, ३७७, ३०३ बोर की राइफल, एम० एम० सेल्फ लोडिंग राइफलें मिली थीं। इसकी तुलना में आपरेशन ब्लैक थंडर के दौरान १९ एके ४७, एक मशीन गन, एक लाइट मशीन गन, तीन ३०३ की बोर राइफल, १० और किस्म की राइफलें, १४ पिस्तौल और रिवाल्वर, ७ कारबाइन मशीन गनें और एक हथगोला मिला है। दोनों आपरेशनों के बाद एक बात साफ उभर कर आ रही है कि इनके बावजूद पंजाब में आतंकवाद जारी है।

ब्लू स्टार आपरेशन में योजनाबद्ध तरीके से सरकार ने सेना भेजी थी जबकि आपरेशन थंडर अकस्मात शुरू हुआ। न तो सुरक्षा बल निर्णायक लड़ाई लड़ने के लिए तैयार थे और न ही उग्रवादी। १९८४ में हालत बिलकुल अलग थी। उग्रवादियों ने परिसर के बाहर १७ नागरिक आवासों पर चौकियां बना रखी थीं। ताकि स्वर्ण मन्दिर के भीतर रहने वालों को वक्त पर आगाह किया जा सके। इन चौकियों पर दस लोग तैनात थे। जिनके पास एल० एम० जी० और आधुनिक हथियार थे। हर तरफ से उग्रवादियों ने मोर्चा लगा रखा था। अकाल तख्त और दर्शन ड्योढी के बीच की जगह मुख्य जगह थी। जहां पर अकाल तख्त तोशा खाना और दूसरी इमारतों पर सीधी गोलीबारी हो सकती थी।

पर आपरेशन थंडर का मुकाबला करने की उग्रवादियों की कोई तैयारी नहीं थी। सिर्फ घंटाघर और दो मीनारों के ऊपर कुछ दिन पहले मोर्चे बनाए गए थे। अकाल तख्त तो पूरी तरह सुरक्षित था। सिर्फ प्रसाद भवन, कुछ परिक्रमा के कमरे और घंटाघर और बुर्गों की दो मीनारों से ही आतंकवादी गोलाबारी कर सकते थे। जबकि सुरक्षा बलों ने इस बार पहले ही स्वर्ण मंदिर परिसर और बाहर कई घरों पर मोर्चे बना रखे थे।

आपरेशन ब्लू स्टार में उग्रवादियों के हौंसले बुलंद थे और पूरे परिसर में संत जरनैल सिंह भिंडरांवाले, भाई अमरीक सिंह और मेजर जनरल सुबेग सिंह की अगुवाई में उग्रवादी एक जुट होकर लड़ते रहे। इधर आपरेशन ब्लैक थंडर में उग्रवादियों की आपस में पहले से ही खींचातानी चल रही थी। उग्रवादियों की कोई सांझी कमांड नहीं थी। क्योंकि इस बार परिसर में उनका मार्ग दर्शन करने के लिए सुबेग सिंह जैसा अनुभवी कोई नहीं था।

ब्लू स्टार आपरेशन में ५ जून १९८४ को शाम सात बजे के बाद कार्यवाही शुरू हुई और साढ़े दस बजे सेना परिसर में घुस गई थी। सात जून को सुबह तक काम लगभग पूरा हो चुका था। दूसरी ओर आपरेशन ब्लैक थंडर में ९ मई को दोपहर कार्यवाही शुरू हुई और १८ मई को शाम पौने बजे खत्म हुई। जब परिसर में बचे हुए ४६ उग्रवादियों ने आत्म समर्पण कर दिया।

(शेष पृष्ठ ५ पर)

सम्पादक—प० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०
प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

ब्रह्मचर्य के पोषक

महर्षि दयानन्द

लेखक—आचार्य दिनेशचन्द्र शर्मा पाराशर

★

भगवान् वेद ने एवम् ऋषि-महर्षि योगी लोगों ने महान् पुरुषों ने अपने धर्म ग्रन्थों में तथा स्वजीवन में ब्रह्मचर्य का बड़ी महिमा गायी है। अथर्ववेद में ब्रह्मचर्य सूक्त है ग्यारहवें काण्ड में ब्रह्मचर्य का महान् वर्णन है। यहां तक वर्णन मिलता है—

ब्रह्मचर्येण तपसा
देवा मृत्युमपाघ्नत।
इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण
देवेभ्य स्वराभरत् ॥
अथर्व० ११।५।१९

अर्थात्—ब्रह्मचर्य रूपी तप से दिव्य पुरुषों ने, विद्वानों ने मृत्यु को दूर भगा दिया, पछाड़ डाला, मार डाला, इन्द्र =भगवान् ने, राजा ने, पिता ने जीवात्मा ने, वेदाध्ययन और धर्माचरण के द्वारा आस्तिक पुरुषों के लिए अधिकारी जनों के लिए, इन्द्रियों के लिए बहुत उज्ज्वल सुख, प्रकाश, ज्ञान आनन्द, सौन्दर्य बल प्रदान किया है। ब्रह्मचर्य का पालन करने वाला दीर्घ आयु को प्राप्त करता है। वे मृत्यु को भी जीत लेते हैं। जब राजा ब्रह्मचारी, सदाचारी होता है, तभी वह प्रजा को सुखी कर सकता है, अन्यथा नहीं। ब्रह्मचर्य श्रेष्ठ जीवन की आधारशिला है। ब्रह्मचारी विद्वानों का सुयश तो अमर होता है। सदाचारी विद्वान् लोग विधिपूर्वक ब्रह्मचर्य व्रत का अनुष्ठान करते हैं। साधारण लोग मृत्यु से डरा करते हैं। तत्त्ववेत्ताओं को मौत का क्या डर? जब मृत्यु की घड़ी आती है, प्रभु प्रेम के उल्लास से अनुप्राणित होकर वे तत्क्षण ही घोषणा किया करते हैं—

"जिस मरने से जग डरे,
मेरे मन आनन्द।
मरने ही से पाइये,
पूरण परमानन्द ॥
मौत यह मेरी नहीं,
मेरी कजा की मौत है।
क्यों डरूं? जब मर के
दोबारा नहीं मरना मुझे ॥

ब्रह्मचारियों पर ईश्वर की विशेष कृपा रहती है। ये वे ही पवित्र आत्मा हैं, जो दिलों की दुनिया पर राज्य करते हैं।

'ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां
वीर्य लाभो भवत्यपि।
सुरत्व मानवो याति
चान्ते याति परां गतिम् ॥

ब्रह्मचर्य के पालन से बल की प्राप्ति होती है, मनुष्य देव बन जाता है और मरने पर मोक्ष को प्राप्त करता है। ब्रह्मचर्य के पालन से बुद्धि बल, शरीरबल, आत्मबल, अत्यन्त बढ़ते हैं जिस से वह अत्यन्त शान्ति आनन्द मुक्ति को प्राप्त करता है। (शतपथ० ११।३।६।२) में कहा है 'ब्रह्मचारी न कांचनार्तिमार्च्छति' अर्थात् ब्रह्मचर्य के धारण करने से किसी प्रकार का दुःख प्राप्त नहीं होता। वीर्यमेव बलं बलमेव वीर्यम् अर्थात् वीर्य ही बल है और बल ही वीर्य है। अतः जीवन में जितेन्द्रिय, संयमी, सदाचारी होना चाहिए। 'मरणं बिन्दुपातेन जीवनं बिन्दुधारणात्।' अर्थात् वीर्य की एक बूंद भी नष्ट करना मृत्यु का कारण है और वीर्य की रक्षा करना जीवन का हेतु है। वीर्य शक्ति का अथाह स्रोत एवम् भण्डार है। वीर्य एक अनमोल रत्न है जिस के धारण से धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष स्वयमेव सिद्ध हो जाते हैं। यह रोग और व्याधियों को दूर भगाने वाला है। एक आदर्श ब्रह्मचारी इस युग में हुए, आदित्य ब्रह्मचारी महर्षि दयानन्द, स्वर्गीय बाबू देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय जी महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन-चरित्र लिखते हुए कहते हैं जिस प्रकार दयानन्द एक अत्यावश्यक हितकर और महान् विषय के श्रेष्ठत्व का कीर्तन कर गये हैं, वैसा अन्य किसी ने नहीं किया। शङ्कराचार्य, रामानुज, मध्वाचार्य, कबीर, गोरख आदि महापुरुष वृन्द ने ब्रह्मचर्य के श्रेष्ठत्व और महत्त्व को परोक्ष भाव और साधारण भाव से प्रतिष्ठित नहीं किया, परन्तु इतना अवश्य कहते हैं कि जिस असाधारण और अपरिहार्य भाव से ब्रह्मचर्य की आवश्यकता और गौरव का ऋषि दयानन्द प्रचार कर गए हैं, वैसा अन्य किसी आचार्य को करते हुए हमने नहीं देखा। मुरादाबाद के स्व० राजा जयकिशनदास ने कहा था जिस जोर, जिस आग्रह और उत्साह के साथ स्वामी जी ब्रह्मचर्य की आवश्यकता प्रतिपादित करते थे उस प्रकार से इस विषय पर बोलते हुए हमने किसी को नहीं सुना। "वह सब से अधिक बल ब्रह्मचर्य पर दिया करते थे।" ऋषि-दयानन्द का निश्चल विश्वास था कि ब्रह्मचर्य के बिना मनुष्य का किसी प्रकार का कल्याण साधित नहीं हो सकता। चाहे वह शारीरिक हो वा मानसिक, आर्थिक हो, आध्यात्मिक हो जैसे ब्रह्मचर्य के बिना राजा के लिए सुप्रणाली के अनुसार राज्य शासन करना असम्भव है और शरीर के लिए सुसन्तान करना असम्भव है। वैसे ही ब्रह्मचर्य के बिना जाति विशेष का उन्नयन और अभ्युत्थान भी असम्भव है। वह बार-बार कहा करते थे कि यदि इस मृत प्राय मनुष्य जाति को पुनर्जीवित करना है, इस हृत सर्वस्व आर्यावर्त्त के सिर को एक बार फिर गौरवमुकुट से मण्डित करना है तो इसका उपाय ब्रह्मचर्य की रक्षा करने के सिवाय अन्य कुछ नहीं है। इसीलिए उन्होंने प्राचीन ब्रह्मचर्याश्रम के पुनरुद्धार के लिए विशेष यत्न किया था और इसीलिए उन्होंने (महर्षि दयानन्द ने) गुरुकुल के स्थापना की व्यवस्था की थी। महर्षि दयानन्द जैसे स्वयं निष्कलंक ब्रह्मचारी थे और जैसा लाभ ब्रह्मचर्य द्वारा उन्होंने स्वयं उपलब्ध किया था, वैसे ही निष्कलंक ब्रह्मचारी वह अन्य साधारण मनुष्यों को बना, वैसा ही लाभ उन्हें उपलब्ध कराना चाहते थे। इसी हेतु से वह ऋषि दयानन्द अपने देशवासियों से ब्रह्मचर्य धारण करने का बारम्बार साग्रह अनुरोध करते थे। ऋषि दयानन्द भारतवासियों से सदा ही बलपूर्वक कहा करते थे कि तुम बच्चों के बच्चे और लड़कों के लड़के हो। यदि कोई उन से पूछता कि आप ऐसा क्यों कहते हैं तो वह यही उत्तर दिया करते थे कि भारतवर्ष में आजकल माता-पिता ब्रह्मचर्य की रक्षा नहीं करते और इसीलिए भारत भूमि में बच्चों के बच्चे ही जन्म ग्रहण करते हैं। यह देश सर्वथा मनुष्य विहीन और मनुष्य शून्य हो चला है। भारत की महिमा का मूल क्या था? ब्रह्मचर्य? आर्यों की जिस गरीयसी प्रतिभा को देखकर प्राचीन यूनान और रोम आश्चर्यान्वित हो गये थे उसका हेतु क्या था? ब्रह्मचर्य! जो उपनिषदादि अनुपम और उपादेय ग्रन्थमाला के रचयिता थे, वह कौन थे? ब्रह्मचारी? रामायण और महाभारत के जिस अलौकिक सौन्दर्य को देख कर मनुष्य मण्डली अवाक् रह जाती है, उसके सृष्टि-कर्त्ता कौन थे? ब्रह्मचारी! गम्भीर विचारशीलता और तत्त्वानुसन्धान के अद्भुत क्षेत्र स्वरूप सांख्य-मीमांसा की रचना किन्होंने की? ब्रह्मचारियों ने! अर्थनीति, युद्ध-नीति व्यवहार नीति और धर्म-नीति के प्रवर्त्तक कौन थे? ब्रह्मचारी? पाणिनि का पुनरुद्धार साधनपूर्वक भाषानुवादक साहित्य विज्ञान के पथ का प्रचारक कौन था? एक ब्रह्मचारी! भारत भूमि का जो कुछ सबल, जो कुछ गौरव, जो कुछ प्रतिष्ठा थी उस सब के मूल में ब्रह्मचर्य ही विद्यमान था। अतः जब तक ब्रह्मचर्य का अनुष्ठान होता रहेगा, तब तक भारत के विलय होने की सम्भावना नहीं हो सकती। जब तक ब्रह्मचारी का उदय होता रहेगा तब तक मनुष्य जाति के लिए निराश होने का कोई कारण नहीं है। यह निश्चय है कि यदि आर्यावर्त्त फिर जागेगा तो ब्रह्मचर्य के ही प्रभाव से जागेगा, यदि इन पर दलित परानुग्रह जीवी मनुष्यों का पुनरुत्थान होगा तो ब्रह्मचारियों के द्वारा ही होगा। यदि आर्यों का प्रनष्ट गौरव फिर कभी वापस आकर चमकेगा तो ब्रह्मचर्य की ही महिमा से चमकेगा। क्योंकि बल, बुद्धि, वीर्य, मेधा, धारणाशक्ति, नीरोगता और शारीरिक पराक्रम जिस प्रकार ब्रह्मचर्य पर निर्भर है, मनुष्य की आशा, उत्साह अध्यवसाय, कष्ट सहिष्णुता, श्रमशीलता, तितिक्षा, और अटल प्रतिज्ञता आदि का सञ्चार और परिपुष्टि भी उसी प्रकार ब्रह्मचर्य पर निर्भर है। जैसे अपने जीवन में महर्षि दयानन्द निष्कलंक ब्रह्मचर्य का परिचय देकर अपनी विद्या पाण्डित्य और प्रतिभा आदि के विषय में असाधारणता को प्रतिष्ठित कर गये हैं, वैसे ही महर्षि दयानन्द अपने जीवन में ब्रह्मचर्य को सर्वोच्च आसन पर स्थापित कर के इस देश का महान् उपकार कर गये हैं।

❀ बात ❀

—जगदीशचन्द्र शर्मा 'शैलेन्द्र'
अनुविभागीय अधिकारी, जौरा (मुरैना)



वाचा वदामि मधुमद्, भूयासं मधु-सदृशः ।
अथर्ववेद १।३४।३

वाणी से मीठा (ही) मैं बोलूं (और) मधु की तरह मधुर हो जाऊं।

यह अथर्ववेद की शिक्षा है। बात में मिठास हो तो बात ही और हो जाती है। मीठी बात मोहक लगती है, मन में मधुरता भर देती है तथा सुरभि, सौम्यता एवम् स्निग्धता से सराबोर कर देती है। मधु मक्खियां जिसे चूसती हैं वह मकरन्द कितना मधुर, मादक और मोदक होता है! क्या शहद जैसा स्वभाव कोरी कपोल-कल्पना है? ऐसा हो ही नहीं सकता, अन्यथा अथर्ववेद के अन्तर्गत, ऐसी कमनीय कामना की ही कैसे जा सकती थी? स्वामी विद्यानन्द 'विदेह' ने कहा है, 'मधु-सेवी बनिए, मधुरता को अपनी प्रकृति बना लीजिए।'

बात को बातचीत, वार्ता या कथन भी कह सकते हैं। बात करना एक कला है जिसका अभ्यास न न हो तो बात बिगड भी सकती है। वाणी द्वारा स्पष्ट और सार्थक भावव्यञ्जना आवश्यक है, नहीं तो बात का बतगड भी बन सकता है। आप बातों में लग जायें तो बातों-बातों में बहुत सा समय भी बीत सकता है। बात का धनी अपनी बात रखने के लिए बात की बात मे कुछ भी कर सकता है। बात उडाने वाला इस बात की कोशिश करता है कि उसकी बात कभी खाली न जाने पाए। किसी की बात काट-कर देखिए—आप पाएँगे कि उसके बाद वह आपकी बात तक नहीं पूछेगा। बात टालने से कोई भी आपकी बात पर नहीं जाएगा। बात पक्की हो जाए तो आप बात को खोना नहीं चाहेंगे और यही प्रयास करेंगे कि आपको बात आने न पाए। बात उड जाए तो कोई आप से बात नहीं करेगा। बांढया बातों से आप किसी को भी वश में कर सकते हैं। महाकवि तुलसीदास ने मधुर भाषण को वशीकरण का मन्त्र बतलाया है—

तुलसी मीठे वचन ते,
सुख उपजत चहुं ओर।
वशीकरण इक मन्त्र है,
तज दे वचन कठोर।

आपके व्यक्तित्व की पहचान आपकी वाणी से होती है। आपकी बातों से ही दूसरों को पता लगता है कि आपका मस्तिष्क परिपक्व है अथवा नहीं। आपका स्वर उन वायुतरंगों को आन्दोलित करता है जो आपके शरीर को नहीं अपितु अन्तस्तल को भी छूती है। स्वर में शक्ति है। स्वर के साथ जब सार्थक वाणी का सायुज्य हो जाता है तो भाव चेतन हो जाते हैं। मौलिकता और नई सूझ का भी सम्मान करते हैं। किन्तु सामयिकता का भी ध्यान रखना आवश्यक है। बिना अवसर की बात नीकी होते हुए भी फीकी लगती है,

नीकी पै फीकी लगे,
बिन अवसर की बात।
जैसे बरनत युद्ध मे,
रस सिंगार न सुहात॥ वृन्द

२ वाणी बुद्धि का एक अवयव है। विचारों के अनुरूप ही उसका रूप बनता है। संस्कारमयी, संयत और सरल बात ही सार्थक होती है। आपको अपने दैनिक जीवन में ही इसका प्रमाण मिल सकता है। आदर-सत्कार के कुछ आत्मीयतापूर्ण शब्द सुनकर लोग पिघलने लगते हैं। अच्छे वक्ता श्रोताओं को मन्त्रमुग्ध कर देते हैं। हास्य-विनोद के कुछ ही वाक्य मन में उमंग भर देते हैं। मीठे वचनों से आप किसी को भी सम्मोहित कर सकते हैं। संत कबीर ने कहा है—

ऐसी बानी बोलिये
मन का आपा खोय।
औरन को सीतल करे
आपु सीतल होय॥

तो फिर आप भी ऐसी ही वाणी क्यों नहीं बोलते जो शीतलता प्रदान करे? स्वर के मीठेपन या कड़वेपन से ही आपकी असली पहचान होती है और उसी से आप औरों के प्रिय अप्रिय बनते हैं। हमेशा काटने ही क्यों दौडते हैं? बक्की, झक्की और सनकी ही क्यों बने रहते हैं? दूसरों की नाक में दम क्यों करते हैं? दूसरों की मान-मर्यादा का ध्यान क्यों नहीं रखते हैं? जानते हैं, गन्दे शब्दों से, पहले तो, आपका ही मुंह गन्दा होता है? परछिद्रान्वेषण औरसंकीर्ण विचार भी आपको ही हानि पहुंचाते हैं। बात को अतिरंजित करने अथवा तिल का ताड बनाने से भी आपकी ही क्षति होती है। अत. वचनवक्रता त्याज्य है। कर्कश शब्द कलह का विधाता है। डाट-डपट से कभी बडे-बड अनर्थ हो जाते हैं। कई भावुक व्यक्ति तो इसके परिणामस्वरूप आत्महत्या तक कर लेते हैं। अत अनावश्यक आक्रोश का प्रदर्शन मत कीजिए। वस्तुत आपकी वाणी से ही तो आप के भले या बुरे होने का आभास होता है,

भले बुरे सब एक से
जब लौ बोलत नाहि।
जान परत हैं काक पिक
ऋतु बसन्त के माहि॥

कौवा और कोयल, दोनों एक से दीखते हैं। किन्तु कौए का स्वर कर्कश होता है, कोयल का मधुर। जब तक वे चुप रहते हैं, आप उनकी पहचान आसानी से नही कर सकते। और वे जैसे ही बोलते हैं आप उन्हें पहचान लेते हैं। यही स्थिति आपकी भी है। आपके स्वर से ही आपकी वास्तविकता की पहचान होती है। अत. अपने स्वर की साधना पर ध्यान दीजिए। स्वर से ही वाणी ओजस्विनी, हृदयहारिणी एवम् मधुर बनती है। उस से ही आपकी आत्मशक्ति का अभिज्ञान होता है। गला फाड कर चिल्लाना शक्ति का प्रतीक नहीं है। स्वर की स्वाभाविकता, स्पष्टता तथा कर्णप्रियता ही प्रभावित करती है। भारवि के अनुसार, विद्वानों मे वे ही सर्वोत्तम हैं जो अपने मन के भावों को वाणी द्वारा प्रकाशित करते हैं तथा उन में उनका स्थान और भी ऊंचा है जो मनोगत भावों को चतुरतापूर्ण शब्दों द्वारा व्यक्त करते हैं,

भवन्ति ते सभ्यतमा विपश्चिता,
मनोगत वाचि निवेशयन्ति ये।
नयन्ति तेष्व् अप्य् उपपन्ननिपुणा
गम्भीरम् अर्थं कति
चित् प्रकाशताम्॥

अधिक बोलना हर हालत में अहितकर है। आपने बातूनी कछुवे की कहानी तो सुनी ही होगी। दो सारस और एक कछुवा अनन्य मित्र थे। जिस तालाब के किनारे वे रहते थे, अवर्षा के कारण उनका जल सूख गया। अत उन्होंने अन्यत्र जाने का निश्चय किया। सारसों ने एक लकडी को दोनो ओर से चोंच में दबा लिया और कछुवे ने उसे बीच से अपने मुंह में दबा लिया। उन्होंने कछुवे से कहा कि मुंह मत खोलना। और उडना आरम्भ कर दिया। जब वे आकाशमार्ग से एक गांव के ऊपर से होकर जा रहे थे तो कुछ लोगों ने उन्हें देख कर शोर मचाया, 'देखो, कछुआ आकाश में उडा जा रहा है।' कछुवे ने सुना तो मित्रों के परामर्श के विपरीत अपने बातूनी स्वभाव के वशीभूत होकर कहने लगा, 'अरे, हम तो अपने दोस्तों के साथ उडे जा रहे हैं, तुम्हें क्या?' बस, फिर क्या था? मुंह खोलते ही, कछुवा धडाम से नीचे गिरा और मर गया। ऐसा अंजाम होता है अनावश्यक बक-बक का।

३ बातचीत के द्वारा कठिन से कठिन समस्याएँ भी आसानी से सुलझायी जा सकती हैं। तीन साल पहले की बात है। तब मैं नगर-निगम, रतलाम का प्रशासक था। तभी एक दिन पानी की कमी के कारण कुछ महिलाएँ अपनी नाराजगी जाहिर करने नगर-निगम कार्यालय में आई। वे काफी उत्तेजित थीं। निगम-आयुक्त के मना करने के बावजूद मैं उन से मिला। 'आपको यहां तक आने मे जो तकलीफ हुई है उसका मुझे दुःख है। आपकी कठिनाइयां जानने की मुझे उत्सुकता है। मैंने अभिवादन करते हुए कहा। उन्होंने बोलना शुरू किया। पूरे एक घण्टे तक मैं उनकी बातें सुनता रहा। इस बीच मैंने 'हां-हूं' के अलावा और कुछ नहीं कहा। मुझे यह जानकर बहुत आश्चर्य हुआ कि उनकी बातों मे कहीं भी जल-संकट का कोई उल्लेख नहीं था तथा केवल पारिवारिक परेशानियों का ही उन्होंने जिक्र किया, मैंने उसे ध्यान से सुना, बिना व्यवधान के उन्हें बातें करने का

(शेष पृष्ठ ६ पर)

धनुर्वेद का एक पर्यालोचन

लेखक—देवव्रत आचार्य व्यायाम पारगत

卐

अनादि काल से ही प्राणियों में लड़ने की प्रकृति बीज रूप से चली आ रही है। मानवेतर प्राणियों में यह नख, दांत, हाथ, पैर इत्यादि द्वारा आत्मरक्षण तक ही सीमित है। इन साधनों से रहित होने के कारण मानव ने अपनी बुद्धि द्वारा अनेक शस्त्र-अस्त्रों का आविष्कार कर के न केवल हिंसक प्राणी अपितु समस्त संसार को संत्रस्त कर दिया है। शस्त्र अस्त्र सम्बन्धी समस्त ज्ञान-विज्ञान को प्राचीन काल में धनुर्वेद के नाम से जाना जाता था। वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। यह डिण्डिम घोष कर के महर्षि दयानन्द ने वेदों की महिमा को चौगुना किया है। मनु महाराज ने सभी व्यवहार नाम कर्म का प्रवर्तक वेद को माना है। इसलिए अस्त्र-शस्त्र का बीज वेदों में विद्यमान है उसकी ओर कुछ दृष्टिपात करना है। चारों वेदों के चार उपवेद हैं। ऋग्वेद का आयुर्वेद, यजुर्वेद का धनुर्वेद, सामवेद का गान्धर्ववेद एवं अथर्ववेद का उपवेद अर्थवेद या शिल्पशास्त्र माना गया है। शस्त्र-अस्त्र सम्बन्धी समस्त ज्ञान-विज्ञान को प्राचीन काल में धनुर्वेद के नाम से जाना जाता था। कुछ ग्रन्थकारों ने धनुर्वेद को यजुर्वेद एवं अथर्ववेद का उपवेद माना है।

आयुर्वेद के ग्रन्थ चरक, सुश्रुत वाग्भट इत्यादि आज भी उपलब्ध हैं। गान्धर्ववेद के नारद संहिता भरतनाट्यम् आदि सुविदित हैं। इसी प्रकार अर्थवेद (शिल्पशास्त्र) के ग्रन्थमय आदि विरचित नीति शास्त्र, अश्व शास्त्र, सूपशास्त्र एवं सोलह विद्या तथा चौंसठ कलाओं के द्योतक विद्यमान हैं परन्तु दुर्भाग्य से धनुर्वेद के मूलग्रन्थ विद्यमान नहीं हैं। विश्वामित्र, वशिष्ठ, शिव, भरद्वाज आदि ऋषि महर्षियों के नाम से कुछ पुस्तकाकार संग्रह अभी भी उपलब्ध हैं परन्तु उन्हें वास्तविक स्वीकार नहीं किया जा सकता। द्रोणाचार्यप्रणीत "धनुष्प्रदीप" नामक सात सहस्र श्लोक से युक्त ग्रन्थ सुना जाता है। उसी प्रकार "धनुश्चन्द्रोदय" नामक ग्रन्थ सात हजार श्लोकों से युक्त परशुराम ने बनाया था।

परन्तु आजकल दोनों में से कोई भी विद्यमान नहीं है। नीतिप्रकाशिका के अनुसार धनुर्वेद का आदि प्रवक्ता ब्रह्मा कहा गया है जिसने वेन के पुत्र पृथु को धनुर्वेद का उपदेश किया। ब्रह्मा ने एक लाख अध्यायों से युक्त राजशास्त्र का प्रणयन किया है। उसको संक्षिप्त कर के रुद्र ने पचास सहस्र, वसव ने बारह सहस्र, प्राचेतस मुनि ने छः सहस्र, बृहस्पति ने तीन सहस्र, शुक्राचार्य ने उसे भी संक्षिप्त कर के एक सहस्र अध्यायों से युक्त करके नीतिशास्त्र बनाया। भारद्वाज ने उसे भी संक्षिप्त कर के सात सौ अध्यायों से युक्त किया। गौरशिरा ने पांच सौ अध्याय, पुनः भगवान् वेदव्यास ने तीन सौ अध्यायों से युक्त संहिता बनाई। उसे भी वैशम्पायन ने अत्यन्त संक्षिप्त रूप से आठ अध्याय से युक्त नीतिशास्त्र बनाया तथा उसका उपदेश महाराजा जनमेजय को दिया। पाञ्चरात्र ग्रन्थों के अनुसार भगवान् हरि ने ही सभी शस्त्र-अस्त्रों का निर्माण कर के देवताओं को दिया। भगवान् हरि ने ही ब्रह्मा को धनुर्वेद पढ़ाया, उन से क्रमशः शिव, बृहस्पति, इन्द्र, यम, वरुण, कुबेर, ऋषि, देवता, किन्नर, राक्षस आदि परम्परा से पढ़ा। वीर चिन्तामणि के अनुसार ब्रह्मा, रुद्र, प्रजापति, विश्वामित्र प्रणीत धनुर्वेद शास्त्र परशुराम द्रोण, भीष्म आदि ने क्रमशः पढ़ा। शिव धनुर्वेद के अनुसार शिव जी महाराज ने परशुराम को धनुर्विद्या सिखलाई। उसके पश्चात् परम्परा से यह विद्या लोक में प्रचलित हुई। यही मत वाशिष्ठ धनुर्वेद का है। प्राचीन काल में धनुर्वेद की छः सात परम्पराएं प्रचलित थीं। उन में हाथ, पैर से किया हुआ युद्ध वशिष्ठ धनुर्वेद में कहा गया है। इसी प्रकार गदा, मल्ल आदि युद्ध की विधियों का वर्णन विश्वामित्र धनुर्वेद में किया है। अस्त्र विद्या का जामदग्न्य धनुर्वेद में, विद्युत् का संजीवनी विद्या शुक्राचार्य ने औशनस-धनुर्वेद में विद्युत् शास्त्र (आग्नेयास्त्रादि) का वर्णन भारद्वाज ने तथा विविध शस्त्र-अस्त्रों का वर्णन महर्षि वैशम्पायन ने किया, यह मत प्राचीन युद्ध विद्या के लेखक का है।

शुक्रनीति में भी युद्ध, शस्त्रास्त्र एवं व्यूह रचना का विज्ञापक-धनुर्वेद को कहा है। स्वामी दयानन्द ने राजा प्रजा सम्बन्धी सभी कार्य धनुर्वेद के अन्तर्गत माने हैं। उसी प्रकार शुक्रनीति में अन्यत्र शस्त्रों का विक्षेप, मल्लयुद्ध, अभीष्ट देश में यन्त्रादि से अस्त्रसम्पात, व्यूह रचना एवं बाण अश्व रथादि से युद्ध करना ये पांच कलाएँ धनुर्वेद के अन्तर्गत मानी हैं।

इस धनुर्वेद के चार पाद दस अंग हैं एवम् तेरह उपांग हैं। चारों पादों के विषय में विभिन्न मत हैं। वशिष्ठ धनुर्वेद में दीक्षा, संग्रह, सिद्ध-प्रयोग एवम् प्रयोग विधियां ये चार पाद कहे हैं। नीलकण्ठ शास्त्री ने मन्त्र मुक्त, पाणी मुक्त, मुक्तामुक्त, और अमुक्त चार पादों से युक्त धनुर्वेद माना है। आगे चल कर सूत्र, शिक्षा, प्रयोग, रहस्य ये चार पाद स्वीकार किये जाते हैं। अग्नि पुराण में रथ, नाग, अश्व, पत्ति इनको आश्रित कर के चार पैर से युक्त धनुर्वेद कहा है। नीतिप्रकाशिका में धनुर्वेद के दश अंग चार उपांग हैं। मुक्त, अमुक्त, मुक्तामुक्त एवम् मन्त्रमुक्त ये पाद धनुर्वेद के हैं। मुक्त जो अस्त्र छोड़ा जाय जैसे बाण, गोली, पाश आदि। अमुक्त जिसे हाथ में लेकर युद्ध किया जाये, जैसे खड्ग छुरी आदि। मुक्तामुक्त जिसको वापिस लौटाना हो। उस कोटि में दिव्यास्त्र आते हैं। मन्त्रमुक्त जिनका उपसंहार (वापिस लौटाना) न हो। इन्हीं को क्रमशः अस्त्र-शस्त्र, प्रत्यस्त्र, परमास्त्र कहते हैं।

आदान, सन्धान, मोक्षण, विनिवर्तन, स्थान, मुष्टि, प्रयोग, प्रायश्चित्त, मण्डल और रहस्य ये दश अंग नीलकंठ शास्त्री ने धनुर्वेद के कहे हैं। तरकस से बाण को निकालना आदान कहलाता है। उसे धनुष की प्रत्यञ्चा पर चढाना 'सन्धान' है। लक्ष्य पर बाण का फेंकना मोक्षण कहा गया है। अल्प बलवाले लक्ष्य पर छोड़े गए अस्त्र को वापस लौटाना विनिवर्तन कहलाता है। विभिन्न स्थितियों में खड़ा होकर धनुष चलाना 'स्थान' होता है। प्रत्यञ्चा को पृथक् विधियों से पकड़ना 'मुष्टि' है। तर्जनी और मध्यमा अंगुली अथवा मध्यमा और अंगुष्ठ के मध्य बाण का सन्धान करना 'प्रयोग' कहलाता है। स्वतः या दूसरे से प्राप्त होने वाले डोरी के आघात (रगड़-चोट) एवम् अपने दूसरों के बाणों का आघात रोकने के लिए जो दस्तानों एवम् कवच आदि का प्रयोग अथवा शत्रु द्वारा फेंके गए बाण को मार्ग में ही काट देना प्रायश्चित्त कहा गया है। घूमते हुए वाहन रथ आदि में बैठ कर दौड़ते हुए लक्ष्य का वेधन मण्डल कहलाता है। चित्रभेद शब्द को आधार मान कर लक्ष्यादि सन्धान करना ये रहस्य' के अन्तर्गत है। धनुर्वेद के तेरह उपांग भी नीतिप्रकाशिका के टीकाकार ने गिनाये हैं। शब्दवेध, शब्द के आधार पर बाण मारना, स्पर्शवेध, छूकर ही लक्ष्य का अनुमान कर के लक्ष्य मारना, जैसे कि द्रोणाचार्य को ग्राह द्वारा पकड़ने पर अर्जुन ने उसे जल में ही मार गिराया था। गन्ध का ज्ञान कर के लक्ष्य सन्धान उसका ज्ञान करके निशाना बनाना, उसी प्रकार दूर, चल, अदर्शन पृष्ठ, स्थित, स्थिर, भ्रमण, प्रतिबिम्ब (दर्पण या जल में) लक्ष्य को देखकर वेधना और उद्देश्य ये तेरह धनुर्वेद के उपांग कहे गए हैं।

वाशिष्ठ-धनुर्वेद में सात विभाग युद्ध के कहे हैं– धनुष, चक्र, कुन्त, खड्ग, छुरिका, गदा एवम् बाहुयुद्ध। धनुष बाण द्वारा किया हुआ युद्ध श्रेष्ठ, पाश द्वारा मध्यम, खड्ग, ढाल, द्वारा अधम एवम् बाहुयुद्ध अधमाधम युद्ध कहलाता है। शुक्रनीति में युद्ध के तीन भाग किये हैं—मन्त्रास्त्र, मन्त्र-विचार, शक्ति या बुद्धि द्वारा (यथा आजकल के गाइडेड मिसाइल) किया गया युद्ध 'दैविक', तोप बन्दूक इत्यादि आग्नेयास्त्रों से होने वाला 'आसुर' एवं हाथ में शस्त्र लेकर किया जाने वाला 'मानव' युद्ध कहलाता है।

उपरोक्त सात युद्धों का ज्ञाता 'आचार्य', चार का ज्ञाता 'भार्गव', दो को जानने वाला योद्धा कहलाता है। एक युद्ध करने वाला गणक नाम से जाना जाता है। धनुर्विद्या सिखलाते समय आचार्य को शिष्य की भली प्रकार परीक्षा करनी चाहिए। तीव्रबुद्धियुक्त या ब्राह्मण वृत्ति वाले शिष्य को ही धनुर्विद्या सिखलावें। लोभी, धूर्त, कृतघ्न वृत्ति वाले एवम् मन्दबुद्धि को इस विद्या की शिक्षा न दें। क्षत्रिय वृत्ति वाले को खड्ग चालन, वैश्यवृत्ति (शरीर

(शेष ८ पृष्ठ पर)

पावमानी गीत माला

(१)

ओ३म् भूर्भुव स्व । अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च न ।
आरे बाधस्व दुच्छुनां स्वाहा ।। इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम ।।१।।

ओ३म् प्राण प्रिय दु:ख विमोचक, हे सुखदायक उत्थान करो ।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो ।।

आयुष्य पुनीत देव करते,
वे शुद्ध जगत् जीवन करते,
बल भली भांति हम को दो,
प्रभु यही प्रार्थना हम करते ।

देकर अन्नादि भोग्य वैभव, हे देव हमें बलवान् करो ।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो ।।

बाहर आयें जो बाधायें
उन पर भारी ही चल जाये
बढ़ गये द्वेष कुविचारों को
अन्तर्मन से नाथ हटायें ।

इसीलिए यह आहुति अर्पण, यह जीवन स्वच्छ महान् करो ।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो ।।

हव्य तुम्हारा नहीं हमारा
तुम्हें समर्पित हव्य तुम्हारा
तुम्हें पता हर आवश्यकता
वही हमें दो भोग्य हमारा ।

छूटे बुराई अच्छाई हो, प्रभु यथायोग्य अनुदान करो ।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो ।।

(२)

ओ३म् भूर्भुव स्व । अग्निर्ऋषिः पवमान पाञ्चजन्य: पुरोहित ।
तमीमहे महागयं स्वाहा ।। इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम ।।२।।

ओ३म् प्राण प्रिय दु:ख विमोचक, हे सुखदायक उत्थान करो ।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो ।।

जैसे अग्नि प्रकाशन करता
पलपल पन्थ प्रदर्शन करता
अपने तेज ताप के द्वारा
तीक्ष्ण वस्तु तक पावन करता

वैसे ही प्रभु प्रभा ज्ञान दो, जीवन पवित्र पवमान करो ।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो ।।

नहीं अकेले पंच जनों का
चार वर्ण के आर्य जनों का
उनका भी हो जीवन पावन
बचे पांचवें म्लेच्छ जनों का

एक अकेले से क्या होगा, प्रभु सब को ही सुखदान करो ।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो ।।

सृष्टि पूर्व से तुम्हीं पुरोहित
ले चले आ रहे सब का हित
यह गायक मिल गया आज जो
लेकर आहुति दो सुभग सुहित ।

महा गान यह हम ने गाया, प्रभु सफल सकल गुणगान करो ।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो ।।

—देवनारायण भारद्वाज

आर्य वीर दल दिल्ली प्रदेश का शिविर

आर्य वीर दल दिल्ली प्रदेश की ओर से आर्यसमाजों, आर्य संस्थाओं में युवकों के चरित्र विकास तथा राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना जाग्रत करने हेतु दिल्ली में निम्न प्रकार शिविर का आयोजन किया गया है ।

दिनांक	बुधवार, १ जून ८८ से १२ जून ८८ रविवार तक
शिविर स्थल	दयानन्द माडल स्कूल, विवेक विहार, दिल्ली-३२
संयोजक	डा० ज्ञान प्रकाश शर्मा (संचालक)
	श्री खुशी राम शर्मा (सहसंचालक)

आपको विदित है कि शिविर के आयोजन पर कितना धन व्यय होता है । आर्य वीरों की गणवेश, प्रशिक्षण का सामान तथा ऋषि लंगर आदि के प्रबन्ध का सारा व्यय करना पड़ता है ।

आर्यसमाजों के अधिकारियों से प्रार्थना है कि वह इस शिविर के लिए अपनी ओर, अपनी समाज की ओर से, अधिक से अधिक सहयोग धनराशि चैक या ड्राफ्ट द्वारा "आर्य वीर दल दिल्ली" अथवा दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के नाम १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१, के पते पर भेजें । उपर्युक्त सभी कार्यक्रमों में आपकी उपस्थिति भी सादर प्रार्थित है ।

आपका सहयोग और सद्भाव ही हमारा सम्बल है ।

भवदीय

डा० धर्मपाल — प्रधान एवं शिविराध्यक्ष
सूर्यदेव — महामन्त्री
दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा

डा० शिवकुमार शास्त्री — बौद्धिक अध्यक्ष
ईश कुमार नारंग — संयोजक व्यवस्थाध्यक्ष

प्रियतमदास रसवन्त — अधिष्ठाता
श्यामसुन्दर विरमानी — महामन्त्री
सुदर्शन कुमार — मन्त्री
आर्य वीर दल दिल्ली प्रदेश

(पृष्ठ १ का शेष)

ब्लू स्टार...

ब्लू स्टार में अकाल तख्त पूरी तरह ढह गया था । लाइब्रेरी जल गई थी । पर आपरेशन ब्लेक थंडर में ज्यादातर गोलाबारी बुर्जों के ऊपर हुई और दूसरी इमारतों और परिक्रमा को १९८४ के मुकाबले बहुत कम नुकसान हुआ ।

आपरेशन ब्लू स्टार में जून ५ को १२९ श्रद्धालुओं ने और जून ५-६ की रात को एक बजे संत हरचंद सिंह लोंगोवाल और जी० एस० टोहरा ने गुरु नानक निवास के बाहर ३५० लोगों के साथ आत्म-समर्पण किया था । उग्रवादियों ने इन पर भी गोलाबारी की थी । नतीजन ३० औरतें और ५ बच्चों सहित ७० लोग मारे गए थे । पर आपरेशन ब्लेक थंडर के दो घंटे बाद ही बूटघर में ५० श्रद्धालु बाहर आ गए थे । शाम को परिसर में फंसे सातों पत्रकार भी बाहर आए । अगले दिन आठ सौ श्रद्धालु बाहर आए और उन्हें उग्रवादियों ने कुछ नहीं कहा ।

आपरेशन ब्लू स्टार की सिख संगठनों में बहुत प्रतिक्रिया हुई थी । स्वर्ण मन्दिर पर हमले की खबर सुनकर हजारों की तादाद में लोग स्वर्ण मंदिर की ओर चल पड़े थे । जब सेना ने उन्हें रोका तो वह खेतों से होकर आने लगे थे ।

(दै० जनसत्ता से साभार)

शिमला में प्रांतीय आर्य-महासम्मेलन

आर्य प्रतिनिधि सभा हिमाचल-प्रदेश की ओर से आर्यसमाज लोअर बाजार शिमला में दिनांक १० से १२ जून तक "आर्यसम्मेलन" का आयोजन किया जा रहा है, जिस में अनेक गण्यमान्य नेता, महात्मा और संगीतज्ञ पधार रहे हैं । इस अवसर पर कार्यकर्त्ता सम्मेलन, महिला सम्मेलन, संगीत सम्मेलन, शिक्षा सम्मेलन, वेद सम्मेलन तथा राष्ट्रीय एकता सम्मेलन आदि का आयोजन किया गया है । इसके अतिरिक्त ११.६.८८ को एक भव्य शोभायात्रा भी निकलेगी । बाहर से आने वाले यात्रियों के ठहरने व भोजन आदि की नि:शुल्क व्यवस्था आर्यसमाज लोअर बाजार शिमला की ओर से की गई है ।

—भगवानदेव 'चैतन्य'

(पृष्ठ ३ का शेष)

बात

अवसर दिया तथा कोई तर्क नहीं किया । सम्भवत इसी से उन्हें सन्तोष मिला होगा । अगर आप दूसरों को रिझाना चाहते हैं तो उन्हें सहानुभूतिपूर्वक सुनिए।

लगभग एक वर्ष पहले की बात है । तब मैं मुरैना में उप-जिलाधीश के रूप मे पदस्थ था । उसी दौरान मैं जब एक प्रकरण की सुनवाई कर रहा था तो एक पत्रकार ने जोर-जोर से चिल्लाना शुरू कर दिया । भृत्य ने उसे समझाया, लेकिन वह नही माना । तब मैंने उस व्यक्ति से पूरी बात बतलाने के लिए कहा। वह बतलाने लगा और मैं पूरे १५ मिनट तक मौन रह कर, ध्यान से, बिना कोई तर्क किए, उसकी बात सुनता रहा। अपनी बात समाप्त कर के उसने मुझे धन्यवाद दिया और पेशी लेकर चुपचाप चला गया । मैंने मौन रह कर ध्यान से उसको बात सुनो और उसे अभिव्यक्ति का अवसर दिया। सम्भवत इसी से वह सतुष्ट हो गया।

लगभग तीन महीने पहले की एक और घटना का उल्लेख करना चाहूगा । मैंने जौरा से चण्डीगढ़ के लिए ट्रक-काल बुक किया । मैं अपनी पुत्री के स्वास्थ्य के सम्बन्ध में चिंतित था तथा जानकारी चाहता था । पूरे १२ घण्टे प्रतीक्षा करता रहा, किन्तु चण्डीगढ से सम्पर्क स्थापित नही हो सका । तब मैंने ट्रक-सुपरवाईजर से इसका कारण पूछा । वह भडक उठा और बतलाने लगा कि वह कितना व्यस्त है तथा उसे कितने तरह के कर्त्तव्यों का निर्वाह करना होता है। पूरे १२ मिनट तक वह अपनो परेशानियो का बखान करता रहा और मैं शान्तिपूर्वक सुनता रहा । मैंने सहानुभूति दिखाते हुए सहयोग का आश्वासन दिया । वह एकदम पिघल गया तथा उसने मेरी सहृदयता की प्रशसा की और लाइन पर ही रहने के लिए कहा। कुछ ही देर मे, मैं अपनी पुत्री से बातें करने में सफल हो गया । मैंने दूरभाष-पर्यवेक्षक को विनम्रतापूर्वक धन्यवाद दिया। उसके बाद वह मेरा मित्र बन गया और व्यस्त होते हुए भी कई बार मेरे पास आया । यह शायद इसी-लिए सम्भव हुआ कि मैंने शांति-पूर्वक उसकी समस्याओं को सुना था, उसे सहयोग का आश्वासन दिया था तथा उसकी भावनाओ को तुष्ट किया था।

आप की दूसरो को उनकी उप-लब्धियों के बारे में बातें करने की प्रेरणा दीजिए और उन्हें ध्यान से सुनिए। उनकी बात मत काटिए और उन्हें आत्मीयता, सहानुभूति और भावाभिव्यक्ति का अवसर दीजिए । प्रतिकूल बात, सुनने वालों को अच्छी लगती है। अत. ऐसी बात कहिए जिस से दूसरों को ठेस न पहुचे । आपकी बातें आपके लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं, किन्तु दूसरों की दृष्टि में उनका उतना मूल्य नही है। अत उन्हें अपनी ओर आक-र्षित करने के लिए अधिक बातें उन्हीं को करने दीजिए । नीरस बातों से बचिए । विनम्रता मत छोडिए और गुणग्राहक बनिए । कोई आपका उपकार करे तो उसे तत्काल धन्यवाद दीजिए। हितकर वाणी ही बोलिए, तभी आप अन्त-र्वेदी बन सकेंगे । निंदक का कहीं सम्मान नहीं होता । मक्खिवृत्ति से आप केवल गन्दगी ही पा सकेंगे। अत भ्रमरवृत्तिधारी बनिए—तभी आप मधु का सचय कर सकेंगे।

राष्ट्र के प्रहरी

इस राष्ट्र-यज्ञ के
पावन-पवित्र धूम से
उत्थित रश्मियां
विकीर्ण होकर
विश्व के पीडित परिवेशों को
स्वातन्त्र्य सुख से आप्यायित कर
सव भद्राणि पश्यन्तु
मा कश्चित् दुखभाग्भवेत् का
अजर-अमर सदेश प्रदान कर
समक्ष्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्रा
का पाठ पढाएगी
रग भेद नीति का
अनुसरण करने वालों को
स गच्छध्व सवदध्वम्
का शिवकारी मार्ग दिखाएगी।

निश्चय ही
हमारे मन मे भी
उद्दाम जिजीविषा है
किन्तु, हमारे लिए
राष्ट्र के सम्मान के प्रश्न पर
मृत्यु का वरण भी
उतना ही प्रिय है।
कदाचित आप जानना चाहेंगे
हम कौन हैं ?
उत्तर केवल इतना है
हम अपने राष्ट्र के सजग प्रहरी हैं।

—नीरज ठाकुर

सम्पादक के नाम पत्र

अपना जन्म चरित्र पर गोष्ठी बुलाना व्यर्थ है

आर्यजगत् के विगत अक में अज्ञात जीवनी के नये व्याख्याकार श्री आदित्यपाल सिंह की एक अपील प्रकाशित हुई है जिस में उन्होंने मेरे प्रतिष्ठित मीमांसक जी, श्री जिज्ञासु जी, प० राजवीर जी तथा श्री दयाल जी भाई को आमन्त्रित किया है कि हम भोपाल जाकर उन से उपर्युक्त विषय पर वार्ता-लाप एवम् शका समाधान कर । मेरा दृष्टिकोण इससे भिन्न है। मैं और दयाल जी भाई अब जो आलोचना लिख रहे हैं वह श्री आदित्यपाल के लिए नहीं अपितु ऋषि जीवन के प्रबुद्ध पाठकों और उस पर विचार करने वाले मनी-षियों के लिए है। अब उन्हें ही इस बारे में फैसला करना है । श्री आदित्यपाल का एतद् विषयक हठ और दुराग्रह तो पं० युधिष्ठिर जी द्वारा वेदवाणी में प्रकाशित अपना चरित्र की आलोचना पर श्री सिंह द्वारा प्रदत्त टिप्पणी से ही स्पष्ट है। स्वामी दयानन्द की आत्मकथायें तो दो ही हैं (१) थियोसोफिस्ट में प्रकाशित और (२) पूना प्रवचनों में कथित इन प्रामाणिक आत्म-कथाओं में विवादास्पद और कल्पना प्रसूत कलकत्ता कथ्य को मिला कर सगति लगाना तो साहस मात्र ही है। जब श्री आदित्यपाल हमारी समालोचनाओं को ही पूर्वाग्रहग्रस्त मानते हैं तो उनके साथ वार्तालाप करने का प्रश्न हो पैदा नही होता। अब सारा मामला आर्य जनता की अदालत में लाया जा रहा है।

—डा० भवानीलाल भारतीय

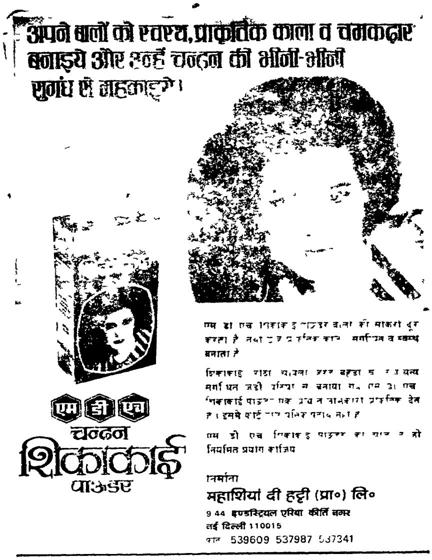
डा० भवानीलाल भारतीय का दयानन्द शोध पीठ के अध्यक्ष एवं प्रोफेसर पद से औपचारिक रूप से अवकाश ग्रहण

तीन वर्ष के लिए पुनः नियुक्ति

चण्डीगढ़ ४ अप्रैल विगत साढ सात वर्षों से पजाब विश्वविद्यालय की दयानन्द शोध पीठ के प्रोफेसर एव अध्यक्ष पद पर कार्यरत आर्यसमाज के यशस्वी विद्वान् डा० भवानीलाल भारतीय अपने जीवन के ६०वर्ष तथा एक आदर्श शिक्षक की ३० वर्षीय कार्यावधि को पूरा कर औपचारिक रूप से ३० अप्रैल को अवकाश ग्रहण कर चुके हैं। किन्तु उनकी योग्यता एव शोध प्रवृत्ति को ध्यान में रख-कर विश्वविद्यालय ने आगामी तीन वर्षों के लिए उनके कार्यकाल मे वृद्धि कर प्रोफेसर पद पर ही उनकी पुनः नियुक्ति की है। इस प्रकार वे १९९१ पर्यन्त दयानन्द शोध पीठ, के अन्तर्गत कार्य कर सकेंगे।

साथ ही पजाब विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो० आर०पी० बाम्बा ने उन्हें होशियारपुर स्थित विश्वेश्वरा-नन्द विश्वबन्धु संस्कृत तथा प्राच्य-विद्या संस्थान का आनरेरी निदेशक भी नियुक्त किया है जिसका कार्य-भार उन्होने गत, १७ मार्च को सम्भाल लिया । स्मरण रहे कि उपर्युक्त शोध संस्थान प्राच्य विद्या विषयक अध्ययन एवम् शोध का एक विश्वविख्यात केन्द्र है जहा विश्वविद्यालय की एम०ए०, पी०-एच०डी० आदि उपाधियों के पठन-पाठन के अतिरिक्त उच्चतर वैदिक शोध की व्यवस्था है तथा इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु सहस्रों पाण्डु-लिपियों तथा महत्वपूर्ण ग्रन्थों से सुसज्जित विश्वेश्वरानद पुस्तकालय भी विद्यमान है।


लाखों लोगों की पसंद
एम डी एच दंत मंजन
23 जडी बूटियो से निर्मित
आयुर्वेदिक औषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दंत सुरक्षा
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
प्रतिदिन प्रयोग करे
अपने निकटतम
दुकानदार से खरीदे
सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9/44, इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-110015 फोन : 537987, 537341


अपने बालों को स्वस्थ, प्राकृतिक काला व चमकदार बनाइये और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी सुगंध से महकाइये।
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाऊडर
नियमित प्रयोग कीजिए
निर्माता
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9 44 इण्डस्ट्रियल एरिया कीर्ति नगर
नई दिल्ली 110015
फोन 539609 537987 537341


आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
alignpoint

S. N No. 32387/77 Post in N.D P.S O. on 26, 27-5-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३६
८ साप्ताहिक 'आर्यसन्देश' २९ मई १९८८

(पृष्ठ ४ का शेष)

धनुर्वेद...

मे कुछ शिथिल) को कुन्त एवम् शूद्र मन्द बुद्धि वाले को गदा युद्ध का अभ्यास करवावे। जब सभी शस्त्रास्त्र समाप्त हो जाते हैं तब एक दूसरे को पकड कर किया जाने वाला युद्ध, नियुद्ध, मल्ल युद्ध या बाहुयुद्ध कहलाता है। इसके लिए शरीर का बलवान होना आवश्यक है। नियमित व्यायाम भार-कर्षण इत्यादि का अभ्यास करना भी अनिवार्य है। दुष्टजन, दस्यु (डाकू) चोर इत्यादि से साधुजनों की रक्षा करना एवम् धर्मपूर्वक प्रजा का पालन करना ही धनुर्वेद का प्रयोजन है। इसके लिए धनुर्विद्या के साथ-साथ नीतिशास्त्र का ज्ञान भी अत्यावश्यक है। अत कहीं-कहीं धनुर्वेद को नीतिशास्त्र या राजशास्त्र भी कहा है। जिस नगर या ग्राम में एक भी अच्छा धनुर्धर हो वहा से शत्रु इस प्रकार दूर रहते हैं जसे सिंह से मृगादि पशु।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हमारा प्राचीन धनुर्वेद सम्बन्धी ज्ञान कितना उच्च था। इसी आधार पर देश देशान्तर एवम् भूमि पर आर्यों का चक्रवर्ती साम्राज्य रहा है। आज देश को आवश्यकता है अहिंसा का बेसुरा राग छोड कर सुदृढ शरीर एवम् चरित्रवान् युवकों की, शस्त्रास्त्र सम्बन्धी उच्चतम ज्ञान की एवम् राष्ट्र प्रेम की।

मुक्ति साधन सूक्त

१ अग्निमीडे पुरोहितम्।
हम ज्ञानवान् प्रकाशवान् परमे- की स्तुति करें।

२ अग्ने नये सुपथा।
हम अग्नि देव स्वरूप परमात्मा के रास्ते पर चलें।

३ पवित्राद् यज्ञ पुनीत वेद।
यज्ञ (हवन) को पवित्रता से करो।

४ जुहोत प्रचतिष्ठत।
यज्ञ (हवन) कर्ता प्रतिष्ठा पाते हैं।

५. युवाकु सुमनीनाम्।
हम विद्वानों का संग करें।

७ शतहस्त समाहर सहस्रहस्त संकिर।
तू सौ हाथों से कमा और हजार हाथों से दान कर।

७ अप्रजा सन्त्वत्रिण.।
प्रजा को लूट-खसोट कर खाने वाले सन्तान रहित हो जाते हैं।

८. मा गृध. कस्यस्विद्धनम्।
यह धन किसी का नहीं, लालच मत कर।

९. एक एव नमस्य।
एक ही ईश्वर नमस्करणीय और उपासना योग्य है।

१० रसेन सगमेमहि।
हम परस्पर प्रेम पूर्वक मिलें।

—अमरनाथ आर्य
सागानेरी गेट, जयपुर-३

स्वार्थपरता का राज्य हो गया है

मेरे गांव का विकास हो गया है
जीवन स्तर उठ गया है
जहां कूड़ों का ढेर था
वहां विद्यालय खुल गया है
जहां शौचस्थल था
वहां पचायतघर बन गया है
रामदीन हरिजन का बेटा एस पी
बन गया है
महगूं तेली का बेटा जिलाधीश हो
गया है
पर अफसोस अधिकाश का ईमान
मिट गया है
चरित्र का स्थान चलचित्र पा गया है
मानवता का विनाश हो गया है
स्वार्थपरता का राज्य हो गया है।

रचयिता—
शकुनचन्द गुप्त विद्यावाचस्पति
लालगज, जि० रायबरेली

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५१

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ३३ | रविवार ५ जून १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | ज्येष्ठ २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

वर्चस्विनी आर्य महिला श्रीमती सत्यवती शालवाले का निधन

आर्यसमाज के मन्तव्यों के प्रति गहरी निष्ठा, यज्ञयाग में अगाध श्रद्धा धर्म के लिए कुर्बानी देने का साहसी जीवट, सेवा और दानशीलता की धनी श्रीमती सत्यवती शालवाले का रविवार २९ मई को निधन हो गया। वे ७० वर्ष की थीं, कुछ समय से अस्वस्थ चल रही थीं। रुग्णावस्था में कुछ काल तक अचेत रहीं।

श्रीमती सत्यवती एक आर्य महिला थीं। उन का जीवन गृहणी से समाज सेवा तक विस्तृत रहा। जीवन के अनेक संघर्षों को उन्होंने आंधी-तूफान की तरह झेला परन्तु चट्टान बनकर अपने कर्तव्य में स्थिर रहीं। उन के पति श्री रामगोपाल शालवाले को २२ बार जेल जाना पड़ा। ऐसी अवस्था भी आई जब आर्थिक विषमता का भी सामना करना पड़ा और बन्धु जनों ने साथ छोड़ दिया या मुंह फेर लिया। लेकिन अपने गृहस्थ चलाने, बच्चों को पोषित करने में बिना भयभीत हुए वे लगी रहीं। देश, धर्म, समाज के लिए पति ने जेलें काटीं परन्तु इस देवी ने कभी उनकी हिम्मत को तोड़ा नहीं, न कभी निराश हुई और न ही अपने पति को खतरों से खेलने से रोका।

श्रीमती सत्यवती ने स्वयं भी जेलयात्रा की। अमृतसर से आर्य महिलाओं का नेतृत्व करते हुए हिन्दी सत्याग्रह में उन्होंने गिरफ्तारी दी। वे लुधियाना में भी गिरफ्तार हुई। गोरक्षा आन्दोलन में भी उन्होंने बढ़-चढ़कर भाग लिया। आर्यसमाज दीवान हाल से माता ब्रह्मशक्ति के साथ उन्होंने महिलाओं के जत्थे लेकर गिरफ्तारी दी। श्री मूलचन्द गुप्त के अनुसार कई बार ऐसा भी घटा कि लाला जी की जेल से रिहाई हुई तो माता सत्यवती उन्हें लेने पहुंचीं। कई बार माता जी की रिहाई हुई तो लाला जी उन्हें लेने पहुंच रहे हैं। ऐसी दशा में परिवार को व्यवस्थित चला पाना कितना कठिन था साथ ही समाज सेवा भी। माता जी को सेवा करने में विशेष रुचि थी। भारत पाक विघटन के कराल काल में उजड़े-लुटे विस्थापित दिल्ली में आ रहे थे उनके कैम्प जगह जगह लगे थे। माता जी अपनी स्त्री समाज की सदस्याओं के साथ उन की सेवा के लिए निकल पड़तीं। बाढ़ पीड़ितों के लिए भोजन पकाने खुद बैठ जातीं, काम खत्म हो जाता पर वे थकती नहीं थीं।

वेद एवं यज्ञ के प्रति उनकी गहरी श्रद्धा थी। उन्होंने अपने जीवन में सैकड़ों यज्ञ किए थे। चारों वेदों का पारायण उन्होंने कई बार स्वयं किया। किसी भी आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव का निमन्त्रण आता तो वे यज्ञ में सम्मिलित होने अवश्य जातीं। अपने साथ घृत सामग्री लेकर जातीं। यज्ञ के शाकल्य का ही दान करना उन्हें अच्छा लगता था। प्रभु भक्ति के भजन वे झूम-झूमकर गाती थीं, इसीलिए महिलाएँ उन से भजन सुनना नहीं भूलती थीं। आर्य स्त्री समाज कृष्णनगर की वे प्रधाना रहीं। आर्य स्त्री समाज दीवान हाल एवं प्रान्तीय आर्य महिला सभा की कर्मठ कार्यकर्त्री रहीं।

उन के पति ने वानप्रस्थ के बाद सन्यास लिया तो रोड़ा बनकर नहीं खड़ी हुई। उन्होंने कहा सारा जीवन तो मेरे पति ने सन्यासी जैसा जीवन बिताया, अब अगर सचमुच सन्यासी हो रहे हैं तो मुझे क्या आपत्ति हो सकती है। सन्यास के समय वे काफी रुग्ण चल रही थीं परन्तु एकाकी जीवन की भयावह अवस्था का अनुमान करके भी निश्चल रहीं। सन्यास के बाद उनके पति स्वामी आनन्द बोध सामाजिकीय एवं राष्ट्रीय विषमताओं से संघर्ष करते रहे और माता जी अपने रोग से। अपनी रुग्णावस्था से दुखी होकर वे कहतीं दुःख है बस इस बात का मेरा यज्ञ और सत्संग छूट गया। साधु, सन्यासी, विद्वान् या कोई भी अतिथि उन के घर आता आतिथ्य करने में वे बड़ी तत्पर रहतीं।

श्रीमती सत्यवती की अन्त्येष्टि रविवार की शाम को ६ बजे निगम बोध घाट पर अनेक विद्वान् एवं मन्त्रपाठी जनों द्वारा सम्पन्न हुई। इस अवसर पर उनके रिश्तेदारों के साथ दिल्ली की अनेक आर्य संस्थाओं के सैकड़ो नर-नारी उपस्थित थे। मन्त्रोच्चारण एवं स्वाहाकार से दिशाएँ गूंज रही थी। पूर्ण वैदिक रीति से व्यवस्थित रूप से संस्कार सम्पन्न हुआ।

आर्यसन्देश परिवार की ओर से हम दिवंगत आत्मा के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं।

—सम्पादक

आर्यसमाज पर सुधार की जिम्मेदारी : जाखड़

सीकर, ७ मई। लोकसभा अध्यक्ष बलराम जाखड़ ने कहा कि जो लोग अपने देश के प्राचीन गौरव तथा अपनी संस्कृति को भुला देते हैं उनका भविष्य कभी भी गौरवशाली नहीं हो सकता। वे आज यहां रामलीला मैदान में आयोजित आर्य महासम्मेलन का उद्घाटन कर रहे थे।

श्री जाखड़ ने कहा कि आर्य समाज के प्रणेता व संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती ने राष्ट्र की परिस्थितियों को देखते हुए हमारी प्राचीन गौरवमयी वेद संस्कृति को नए सिरे से समाज के सामने आदर्श के रूप में प्रस्तुत किया। स्वामी दयानन्द ने राष्ट्र में नई चेतना स्वभाषा व स्वराज का मन्त्र फूककर राष्ट्रीय जागृति की नई ज्योति प्रज्ज्वलित की थी।

स्वामी दयानन्द ने हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में उस समय मान्यता देकर इस देश को भाषाई माध्यम से जोड़ने का एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया था।

श्री जाखड़ ने कहा कि किसी युग में इस देश में गंगा के किनारे वेदों की अमृत वाणी गूंजा करती थी, विदेशों से लोग आकर इस देश की पवित्र भूमि से प्रेरणा व ज्ञान की अमृत धारा लेकर विश्व के हर भाग में पहुंचाया करते थे, तब हमारा देश जगद्गुरु का वास्तविक अधिकारी था। उन्होंने कहा कि आज इसी देश में मानव के अधि-

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव



गौरव स्तंभ

प्रेरक प्रसंग

प्रस्तोता—सत्यानन्द आर्य

अन्धविश्वास एवं स्वामी जी के उत्तर

एक व्यक्ति ने स्वामी जी को अपना हाथ दिखाया। स्वामी जी ने कहा इसमें हाड है, चाम है, और रुधिर है और कुछ नहीं।

× × ×

किशनसिंह ने पूछा कि आप शिवलिंग पूजा का निषेध करते हैं, किन्तु इसका तो शास्त्रों में वर्णन है। स्वामी जी ने कहा कैसी लज्जा की बात है कि तुम लिंग की पूजा करते हो और फिर जब लिंग पृथक् होकर यहां आ गया तो क्या कैलाश का शिव हिजड़ा नहीं रह गया होगा।

× × ×

स्वामी जी भस्म लगाने वाले साधुओं को कहते थे, यदि मोक्ष होती है तो गधा दिन-रात भस्म में लोटता है, उसकी भी मोक्ष हो गई!

× × ×

कानपुर में स्वामी जी जिस गंगा के घाट पर ठहरे हुए थे, वहां स्वामी कैलाश पर्वत को अपनी शंका निवृत्ति के लिए आमन्त्रित किया। स्वामी कैलाश पर्वत ने उत्तर में कहला भेजा कि हम शूद्र के स्थान पर नहीं आते। यह घाट एक कायस्थ का था। स्वामी जी ने कहा कि म्लेच्छ के राज्य में क्यों रहते हो?

× × ×

अलीगढ़ में एक पण्डित ऊँचे चबूतरे पर बैठकर स्वामी जी से शास्त्रार्थ करने लगा। उपस्थित व्यक्तियों ने कहा कि आप नीचे आकर सभ्यतापूर्वक वार्तालाप कीजिये। स्वामी जी बोले पंडित जी को वहां बैठा रहने दीजिए। ऊपर नीचे बैठने से किसी की प्रतिष्ठा-अप्रतिष्ठा नहीं होती। देखो यह कौवा ऊपर वृक्ष पर बैठा हुआ है, वह पण्डित जी से ऊँचा है। तब क्या वह पण्डित जी से अधिक प्रतिष्ठित है।

× × ×

पण्डित गौरी शंकर महाराज के पास आये और निवेदन किया कि मैं ज्योतिषी हूँ, कुछ प्राप्ति की लालसा से आया हूं। महाराज ने कहा कि यदि आपके ज्योतिष ने बतलाया कि आपको मुझ से कुछ प्राप्ति होगी तो मिथ्या है, क्योंकि मैं आपको कुछ न दूंगा और यदि बतलाया है कि प्राप्ति न होगी तो आपने व्यर्थ कष्ट किया।

योग और मोक्ष की खोज

सच्चे महादेव के दर्शन पाने के लिए और वास्तविक योगियों की खोज में स्वामी दयानन्द उत्तराखंड में जा पहुंचे। ऋषिकेश, टिहरी, केदारनाथ, तुंगनाथ इत्यादि में घूमते और अनेक कष्ट सहन करते "ओखी मठ" में पहुंच गए। वहां का महन्त स्वामी जी के ज्ञान और गुणों को देखकर कहने लगा, "यदि हमारे शिष्य बन जाओ तो गद्दी के स्वामी बन सकोगे। लाखों रुपयों की सम्पत्ति तुम्हारे हाथ में होगी और तुम महन्त कहलाओगे।" यह प्रलोभन सामने देख कर स्वामी जी ने कहा—"तुम्हारा कथन सब व्यर्थ है, मेरे पिता की सम्पत्ति तुम्हारे पूजा-पाठ के पाखण्ड द्वारा एकत्रित की पूंजी से कई गुणा अधिक है, जब मैं उसे त्याग आया हूं तो आप की सम्पत्ति पर क्या ध्यान दे सकता हूं, जिस ध्येय से प्रेरित होकर मैंने सकल सांसारिक सुखों से मुंह मोड़ा है, उस ध्येय की पूर्ति यहां नहीं हो सकती।"

महन्त ने पूछा—'आप का वह ध्येय क्या है? किस वस्तु की जिज्ञासा में मग्न आप इतने कष्ट उठा रहे हो?" स्वामी जी ने उत्तर दिया—"सत्य, योग विद्या और मोक्ष चाहता हूं। जब तक यह प्रयोजन सिद्ध न होगा तब तक तपश्चर्या करता हुआ मनुष्यमात्र के कर्त्तव्य और स्वदेशोपकार निरन्तर करता रहूंगा।"

●

पावमानी गीत माला

(१)

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम्।
दधद्रयिं, मयि पोष स्वाहा। इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम ॥३॥

ओ३म् प्राणप्रिय दुःखविमोचक, हे सुखदायक उत्थान करो।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो॥

वह पुत्र वही होगा पवित्र
जिसका उत्तम आचरण मित्र
वर्चस्व वीर्य दो तेज उसे
हो जाय प्रजा सब सच्चरित्र।

ऐश्वर्य विपुल देकर पवित्र, हे देव हमें धनवान् करो।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो॥

इस ओर कृपा की दृष्टि करो
प्रभु धन वैभव की वृष्टि करो
यह जाये मत ऐश्वर्य व्यर्थ
इस से ही मेरी पुष्टि करो।

सन्तोष कोष दो कोष हमें, जीवन परिपुष्ट महान् करो।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो॥

अपना उत्तम यह सदाचरण
करे सुपावन जीवन क्षण-क्षण
जन तेज पराक्रम बन आये
हो ओज जागरण से पोषण।

इसलिए समर्पित यह आहुति, इस जीवन को गतिमान करो।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो॥

(२)

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परि ता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणां स्वाहा॥
इदं प्रजापतये—इदन्न मम ॥४॥

ओ३म् प्राण प्रिय दुःख विमोचक, हे सुखदायक उत्थान करो।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो॥

उत्पन्न जगत् उत्थामी हो
सम्पूर्ण प्रजा के स्वामी हो
जो जगत् सम्पदा ठुकरावे
वह अन्य कौन उपनामी हो।

सब बसा अंक जो जड़ चेतन्न, कुछ वही हमें अनुदान करो।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो॥

जब तक कामना हमारी है
जग वस्तु वांछित सारी है
प्रभु पूर्ण करें वे अभिलाषा
जिन में सुख स्वस्ति हमारी है।

पद प्रगति प्रतिष्ठा मिल जावे, शुभ अलंकरण परिधान करो।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो॥

यह सिद्ध साधना हो जावे
ऐश्वर्य हमारा हो जावे
तुम अखिल विश्व के स्वामी हो
सेवक गृह स्वामी हो जावे।

शुभ सम्पत्ति विपुल बल आवे, प्रभु हम को आहुतिवान करो।
करो हमारा जीवन पावन, हे ओ३म् सदा कल्याण करो॥

—देवनारायण भारद्वाज

तीन पाश और उन से मुक्ति

शिवकुमार शास्त्री, काव्य-व्याकरण तीर्थ

उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय।
अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम ॥

ऋक्० म० १। सू० २४। म० १५

आजीगर्ति शुनःशेप आदि ऋषिः, वरुण देवता, गायत्री छन्द। अन्वय—हे आदित्य वरुण उत्तम पाश, उत् श्रथाय, अधम पाशम्, अव-श्रथाय, मध्यम पाश विश्रथाय। अथ तव व्रते अनागस अदितये स्याम ॥

शब्दार्थ—हे आदित्य, प्रकाशस्वरूप मर्यादापालक प्रभो (वरुण) स्वीकार करने योग्य, चुनाव करने योग्य, हम सांसारिकजन तीन स्थानों पर पाशों से जकड़े पड़े हैं। अत तुझ से विनय है कि "उत्तम पाश" उत्तम पाश को "उत् श्रथाय" ऊपर से ढीला करके खोल दे, "अधम पाश" बीच के पाश को "अव श्रथाय" नीचे से खोल दे, "मध्यम पाश" बीच के पाश को "विश्रथाय" विशेष रूप से ढीला करके खोल दे, "अथ" इसके अनन्तर अर्थात् पाशों से छूटकर "तव व्रते" तेरे व्रत में बधकर, आरूढ होकर "अनागसः" दोषरहित होकर, शुद्ध होकर "अदितये" विनाशरहित सुख के अर्थात् मोक्ष के अधिकारी "स्याम" होवें।

———

व्याख्या—वेद के वरुण शब्द को कथाए ऐतरेय ब्राह्मण से लेकर महाभारत पर्यन्त साहित्य में उलझी हुई और बिखरी पड़ी हैं। उन सब गुत्थियों को सुलझा कर वेद के आशय तक पहुचना अत्यन्त दुरूह कार्य था। पाश्चात्य विद्वानों ने तो यह नारा ही लगा दिया है कि वैदिक काल के लोग नर बलि दिया करते थे। इस सूक्त तक इतना सुधार हो गया था कि अजीगर्त के शुनःशेप को तीन स्थानों से बांध-कर फिर प्रार्थना करके पाश-मुक्त कर के एक नाटक का रूप दे दिया।

किन्तु मेरे पास उस सब का सविस्तार विवेचन करने के लिए न समय है और न स्थान। मैं तो ऋषि दयानन्द द्वारा प्रदर्शित मार्ग का सहारा लेकर अपने पाठकों को सार तक पहुचाना उचित समझता हू। ऋषि ने सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास मे वरुण शब्द की व्युत्पत्ति "वृणोति भक्तान् व्रियते वा भक्तैः" कर के सब झझट काट दिये। अर्थात् उस प्रभु को वरुण इसलिए कहा जाता है कि भक्त उसके स्वरूप को समझ कर ससार के समस्त प्रलो-भनों को तृणवत् त्याग कर उसे वरण करता है। उसे चुनता है। उदाहरण के लिए नचिकेता का यमाचार्य को यह उत्तर कि "तवैव वाहा तव नृत्यगीते" कि संसार के ठाठ बाट, घोड़े और नाच-गीत तुझे मुबारक रहें। मुझे तो उसे बताये जिसे जान कर मृत्यु से निर्भय हो जाऊं। यहा यह स्पष्ट है कि एक भक्त प्रभु का वरण करता है। इसी प्रकार भगवान् भी भक्त के शुद्ध आचार-विचार को देखकर भक्त को चुनता है। "यमेवैष वृणुते तेन लभ्य" अर्थात् प्रभु जिसका स्वय वरण करते हैं वही उसे प्राप्त कर सकता है। हे प्रभो मैं आपसे प्रार्थना करता हू कि मैं उत्तम, मध्यम और अधम पाशों से बधा पड़ा हूं। कृपा कर मुझे इन से छुड़ा। प्रश्न होता है पाश तो पाश ही है, उसमें उत्तम मध्यम और अधम का विभाग करने की क्या आवश्यकता है? इसका उत्तर यह है कि यहां शरीर की ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों के अशुभ मार्ग में प्रवृत्त होने के परिणाम-स्वरूप जो बाधना उत्पन्न होती है उसे ही शरीर से उपमित कर के उत्तम, मध्यम और अधम नाम दे दिये गये हैं। हमारे शरीर का शिरोभाग उत्तमाग कहलाता है। इसका उत्तमांग नाम इसलिए है क्योंकि यह ज्ञानेन्द्रियों का केन्द्र है। पाच मे से चार ज्ञानेन्द्रिया, कान, आंख, नाक और रसना ये स्थायी रूप से यहां रहती हैं। पाचवी ज्ञानेन्द्रिय त्वचा सारे शरीर पर है और यहां भी है। अत ज्ञानेन्द्रियों की अशुभ प्रेरणा के परिणामस्वरूप आचरित निषिद्ध कर्म उत्तम पाश कहलायेंगे। उत्तम पाश से छूटने की प्रार्थना का आशय हुआ "भद्रं कर्णेभि शृणुयाम देवा भद्रं पश्ये-माक्षभिर्यजत्रा" अर्थात् मेरे कान, नाक, जीभ और त्वचा इन्द्रियां ऐसे मार्ग पर चलें, जिस पर चलकर मैं अपना और दूसरों का कल्याण कर सकू। मैं पशुता का मार्ग छोड़ कर विवेक से काम लू। क्योंकि पशुता के रहते हुए तो पाश से कोई छूटा हो नही सकता। अत. पहली प्रार्थना हुई कि मैं उत्तम पाश अर्थात् ज्ञाने-न्द्रियों की दुष्प्रवृत्तियों से छूटू।

अब आया मध्यम पाश। मानव शरीर के मध्य भाग में पेट और जननेन्द्रियां हैं। पेट-प्रतिनिधित्व करता है अर्थ का, जननेन्द्रिय प्रति-निधित्व करती हैं काम का। इस आधार पर दूसरी प्रार्थना का आशय हुआ कि मैं धर्मानुसार ही अर्थ सचय करूं और मर्यादा मे रह कर ही ससार के भोगों को भोगू। ये दोनों ही बन्धन बहुत जटिल और भयकर हैं। ससार के सौ में से ७५ मनुष्य इन्हीं बन्धनों में जकड़े पड़े हैं। इस-लिए बन्धन से छूटने की प्रार्थना "विश्रथाय" में "वि" उपसर्ग का विशेष महत्व है। अर्थात् कमर में बधी हुई रस्सी जब तक पर्याप्त ढीली नही होगी, तब तक न वह ऊपर की ओर आ सकेगी और न नीचे की ओर खिसक सकेगी। मनु ने भी कहा है कि 'अर्थकामेष्वसक्तानां धर्मज्ञान विधीयते।' धर्मज्ञान के अधिकारी हो वे हैं जो अर्थ और काम के अर्थात् मध्यम पाश से मुक्त हैं।

इनके बाद तीसरा नम्बर अधम पाश का है। हमारे शरीर में अधम भाग पैर कहलाते हैं। ये अधम इसलिए हैं कि इन मे ज्ञान की मात्रा बहुत न्यून है। यहां ज्ञान का साधन केवल त्वचा है। जितने भाग पर केवल चमड़ा लिपटा हुआ है उतनी शैत्य, उष्णता की जानकारी दे देता है। इस प्रकार अधम पाश का आशय यह हुआ कि बिना जाने भी जो पाप कर्म किये जाते हैं फल तो उनका भी दुःख ही होता है। एक बालक बिना जाने अगारे को हाथ पर रख ले तो क्या अग्नि यह समझ-कर कि यह बालक है बिना जाने मुझे उठा रहा है, उसे क्षमा कर देगा? नहीं। ठीक उसी प्रकार अधम पाश से भी छूटना आवश्यक है। विद्या प्राप्त करना मानव जीवन का लक्ष्य है। "विद्ययाऽमृतमश्नुते" अमृत प्राप्ति तो विद्या से ही होगी। हां एक बात अवश्य है कि पहले के दो पाशों की अपेक्षा इस अधम पाश से छूटना सरल है। क्योंकि ये उल्टे काम तभी तक हो रहे हैं जब तक जानकारी नहीं मिली। ज्ञान होते ही उनके छोड़ने में कोई कठिनाई नहीं है। क्योंकि यहा आसक्ति नहीं है। दूसरे पाशों मे बुराई की आसक्ति कठिनाई पैदा करती है। यह आधा मन्त्र हो गया।

अब मन्त्र के उत्तरार्ध में पाश से छूट कर क्या करना है? इसका निर्देश है तो भक्त कहता है पाशों से छूटकर मैं व्रत में बधू ताकि अनागस पाप का एक-एक धब्बा धुल जाय और जब मैं निष्पाप हो जाऊँगा तभी तेरे आनन्द का अधि-कारी बनूगा।

यहां भी एक छोटी सी विचार-णीय गुत्थी है। पाश भी बन्धन है और व्रत भी बन्धन है। फिर यहा पाश से छूटने की प्रार्थना की गयी है—यह क्यों? इसका रहस्य यह है कि पशुता और अज्ञान मे आकर जो काम किये गए हैं उनका दुःख-स्वरूप फल अवश्य भोक्तव्य है। कष्टनिवृत्ति के लिए उन्हें छोड़ना अनिवार्य है। किन्तु व्रत वे उत्तम कर्तव्य बन्धन हैं। जो विचारपूर्वक मैंने अपनी और समाज की उन्नति के लिए स्वय अपने ऊपर लिये हैं। पाश में सर्वथा पराधीनता है और व्रत मे पराधीनता मे भी स्वाधीनता सुरक्षित है। मैं जब तक उचित समझता हू तब तक व्रत को रखता हू और जब आवश्यकता नहीं सम-झता छोड़ देता हू। इसलिए दुष्-संस्कारों से छुट्टी पाने के लिए व्रत धारण आवश्यक है। इस प्रकार सार यह निकला कि प्रत्येक इन्द्रिय का वासना से प्रेरित प्रयोग पाश है और उसका परिणाम दुःख है। इसी प्रकार दूसरी दिशा मे प्रत्येक इन्द्रिय का विवेकपूर्वक प्रयोग व्रत है जो जीवन को उच्चतम धरातल पर स्थापित कर के मोक्षपद का अधिकारी बनाता है।

कल्याण प्राप्ति हेतु

ले०—दीवानचन्द गुप्ता, कृष्ण नगर

★

यह ध्रुव सत्य है कि, एक झण्डे के नीचे इकट्ठा होने में ही देश वासियों का सुख, समृद्धि तथा कल्याण निहित है। इसके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहीं। अब देखना यह है कि कौन सा झण्डा ऐसा है जो हर प्रकार से हर प्रकार की ऐसी दिशा देने वाला है जो सब विश्व को माननीय हो और जिस पर किसी प्रकार की उस पर आपत्ति करने की हिम्मत न हो। जो अपने में हर प्रकार से पूर्ण हो।

विश्व में बहुत से मत मतान्तर हैं जिन में विशेष (ईसा) ईसाई (मूसा) मुसलमान, (पुराणी) हिन्दू वैदिक धर्मी, पौराणिक हैं। इन सब में आपस मे ही बहुत विरोध है।

ईसाई मत—ईश्वर जो सब सृष्टि का रचने, पालन पोषण करने तथा सहार करने वाला सर्व शक्तिमान है, को चौथे आसमान पर ह० ईसा ईसाई मत के कर्ता बताते हैं। ह० ईसा को ईश्वर का इकलौता बेटा, जिसको ईश्वर ने सभी अधिकार दे रखे हैं बताते हैं। पत्थर की मूर्ति पूजा में विश्वास रखते हैं। हिंसक हैं। अधिकतर मांस, मच्छी और शराब का प्रयोग करते हैं। बाईबिल में ऐसा लिखा है कि ह० ईसा ने कहा मैं सुलह कराने नही आया, मैं तो बेटे का बाप से, भाई को बहन से लडाने आया हू आदि आदि ह० ईसा मर कर जिन्दा हो गया। बाईबल को ईश्वरीय पुस्तक मानते हैं। ईसाई मत मे कई शाखाए हैं। जैसे कैथोलिक, प्रोटैस्टैन्ट आदि। ये केवल १९८८ वर्ष पुराना है।

मुसलमान मत—ईश्वर को सातवें आसमान पर विराजमान मानते हैं। ईश्वर के साथ ह० मुहम्मद को रसूल (सदेश वाहक) मानते हैं। हिंसक हैं। हत्या करना सवाब (धर्म) मानते हैं। जो मुसलमान नहीं उन को काफिर (दैत्य) मानते और उसे कत्ल करने तक को कौम सेवा मानते हैं। गाजी की उसे पदवी देते हैं। कुरान को ईश्वरीय पुस्तक मानते हैं, दूसरे मत वालों से घृणा का व्यवहार करते और अत्यन्त साम्प्रदायिक भाव रखते हैं। मांस, मच्छी खूब खाते है। मूर्ति पूजा तो नहीं करते परन्तु कबरों की पूजा करते हैं। उन पर चादरें आदि चढ़ाना पुण्य मानते हैं। कब्रों में पड़े मुर्दे कयामत के दिन उठेंगे और तभी इन का न्याय होगा। ऐसा इन का विश्वास है। केवल १५३० वर्ष पुराना है।

पुराणी—(सनातन धर्मी) वेदों को ईश्वरीय ज्ञान जो परमात्मा ने सृष्टि के आदि में चार ऋषियों द्वारा मनुष्यों के लिए दिया गया वैसे ही मानते जैसे वैदिक धर्मी मानते हैं। १८ पुराणों को भी मानते और उनमें विश्वास करते हैं। महाभारत के सग्राम से देश को बहुत हानि हुई। विद्वानों, विज्ञान-वेत्ताओं, शूरवीरों के मारे जाने के कारण अज्ञान, अन्धकार ने उन की जगह ले ली भिन्न-भिन्न सम्प्रदाय ससार में फैलते चले गए। मूल इनका वैदिक सिद्धान्त ही है। किन्तु समय, परिस्थिति, वातावरण, सघर्ष और अवैज्ञानिक आचार्यों की भिन्न-भिन्न विचार धाराए ले कर पनपता गया जिसका स्वरूप आज हमारे सामने है। अनेक मत आज विद्यमान हैं, और इसी के कारण हमें दूसरों की दासता भुगतनी पडी।

सनातन (पुराणी) धर्म के उद्गम—

१ वेदो के ३३ जड देवताओ को ३३ कोटि (श्रेणी) के स्थान पर ३३ करोड देवी देवताओं को शक्तिशाली मानना और उनकी पूजा करना।

२ वाम मार्ग · अनेको देवी देवताओ जैसे महादेव, पार्वती, गणेश, दुर्गा, काली, चण्डी, शीतला, भूतनाथ, भैरवनाथ, भूत, प्रेत, चुडैल, जादू, मन्त्र, तन्त्र, करामात, चमत्कार आदि मे विश्वास कर उनकी उपासना, जप आदि।

३ बौद्ध और जैन मत—वैदिक सत्य शास्त्रों से मुह मोड कर "अहिंसा परमो धर्म" के पाठ से जाति में शूरवीरों में दुर्बलता आई, मूर्ति पूजा का युग आरम्भ हुआ, प्रकाश ज्ञान का स्थान अन्धकार, ने लेना आरम्भ किया।

४ शकराचार्य--ब्रह्म सत्य जगत मिथ्या के पाठ से भी जाति में दुर्बलता आई।

५ कुछ आचार्यों श्री रामानुज श्री माध्वाचार्य, श्री वल्लभाचार्य, श्री निम्बरकाचार्य आदि की शिक्षा से गुरु भक्ति और अन्ध विश्वास में अधिक वृद्धि हुई। हमारे पूज्य महान पुरुषों के स्वरूप को बिगाडा गया। उनको बहुरूपिया बनाकर नचाया गया। अब भी कर रहे हैं मूर्ति पूजा में घोर विश्वास और मूर्तियों को भोग आदि लगाकर देवी देवताओं को प्रसन्न होना मानते हैं। तीर्थ स्थानों पर स्नान आदि से पापों को निवृत्ति मानते हैं।

६ किसी प्राणी को कष्ट देना पाप मानते हैं। ईश्वर, जीव और प्रकृति तीन को ही अनादि मानते हैं। ज्ञान, कर्म, उपासना ही मुक्ति का मार्ग मानते हैं। सदाचारी जीवन में ही विश्वास रखते हैं।

और भी बहुत से मत हैं परन्तु सब के सब इसी सनातन धर्म (पौराणिक) की ही उपज हैं। इसी से ही कुछ-कुछ अदला-बदली करके सम्प्रदाय बनते चले गए और आज भी इन पर रोक नहीं, अब भी बनते चले जा रहे हैं। इन की आयु भी ३००० वर्ष से अधिक नहीं।

अब यहा थोडा सा सकेत देना आवश्यक समझता हू कि यह मत कैसे बनते और फैलते हैं।

१ सत्य शास्त्रों को पढने पढाने लिखने लिखाने से सत्य विद्याओं के जानने और मनन करने का उत्साह समाप्त हो जाना।

२ विद्वान और आचार्यों का उपदेश देने मे आलसी हो जाना।

३ योग्य विद्वानों और आचार्यों की कमी होना।

४ आचार्य और विद्वानों में स्वार्थ लोभ और अपनी सेवा कराने की प्रवृत्ति आ जाना।

५. जब शासक सद् विद्याओं, सत् शास्त्रो और सद् उपदेशों से विमुख हो जाता है।

६ जब शासक बुद्धिहीन अथवा स्वार्थवश न्याय, अन्याय, धर्म, अधर्म का कुछ भी ध्यान नहीं करता और स्वार्थी मूर्ख पण्डितों के चगुल में फस जाता है।

७ जब धार्मिक नियम और कर्मकाण्ड आदि इतने कडे बना दिए जाते हैं उस समय किसी मनुष्य द्वारा आसान नियमों और कर्मकाण्ड को चलाने से बिना सोचे समझे चल पडते हैं।

८ किन्हीं दो विद्वानों अथवा आचार्यों में किसी विषय पर मतभेद होना और हठ भाव अपनाना।

ऊपर दिए तथ्यों से सिद्ध होता है कि किसी मत के झण्डे तले एकत्र होने की सम्भावना नहीं तो फिर कोई ऐसा झण्डा है कि जिस के तले सब एकत्र हो सकें। हां! है, और वह है वैदिक धर्म। सब ससार का शिरोमणि और प्रत्येक प्राणी के लिए हित चाहने वाला और सब से सरल मार्ग प्रदर्शक। आदि सृष्टि से चलता आ रहा है। वैदिक धर्म सृष्टि के आदि में परम पूज्य पिता परमात्मा ने एक विधान चार ऋषियों द्वारा संसार के उपयोग और उपभोग के लिए जो हम मनुष्यों को दिया उसे वेद ज्ञान कहते हैं और वही वैदिक धर्म है। यदि परमात्मा यह ज्ञान न देता तो कोई भी कुछ करने को समर्थ न होता। यह तीन प्रकार की विद्या ज्ञान, कर्म, उपासना उसी पूज्य देव की देन है कि किस प्रकार हम ने ससार में रहना है, हमारे क्या कर्तव्य हैं और हमें किस प्रकार इस ससार का उपयोग और उपभोग करते हुए इस भव सागर रूपी ससार को पार करना है।

वैदिक धर्म की शिक्षाएं—

१ वेद ईश्वरीय ज्ञान है वेद का पढना-पढाना, सुनना-सुनाना और वैसा ही आचरण करना सब आर्यों (श्रेष्ठ पुरुषों) का परम धर्म है।

२ ईश्वर एक ही है जो जगत् की रचना करने वाला है और जिस का वेद ज्ञान है उपासना योग्य है। उस से भिन्न और कोई उपास्य नहीं उपयोग योग्य हैं।

३ ईश्वर हर प्रकार से पूर्ण है सब शक्तियों का स्वामी है। उसके अन्दर कोई कमी नहीं वह सदा भूत, भविष्यत, वर्तमान में एक रस और अपरिवर्तनशील है।

४ जगत् की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय उस का स्वभाव है। जीवों के कर्मों का फलदाता है। जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है। फल ईश्वर की न्यायव्यवस्था के अन्तर्गत भोगता है।

५ ईश्वर, जीव और प्रकृति अनादि हैं।

६ ईश्वर सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ है। जीव अल्पशक्ति और अल्पज्ञ है। ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप है, जीव सत्‌चित् कारण है और प्रकृति केवल सत् है।

७ सभी प्राणी ईश्वर के पुत्र हैं। वही सभी जीवों को उन के कर्म का फल देता है। हमें कोई अधिकार नहीं कि किसी जीव को कष्ट दें अथवा उसके गले पर छुरी चलायें। सभी प्राणी अपने-अपने भोग, आयु और योनि ईश्वर के न्याय से लेकर आते हैं। उन्हें अपनी आयु आदि भोगने चाहिए।

(शेष ६ पृष्ठ पर)

अनन्ता वै वेदाः

—विजय बिहारी लाल

卐

एक कथानक है कि महर्षि भारद्वाज ने सम्पूर्ण जीवन अखण्ड ब्रह्मचर्य धारण कर ४०० वर्ष की आयु पायी तथा सम्पूर्ण आयु पर्यन्त वेदाध्ययन करते रहे। अन्तिम समय उन्हें इन्द्र ने मुंहमांगा वर मांगने को कहा। उन्होंने वर मांगा कि आगामी जीवन में भी मनुष्य योनि प्राप्त हो तथा इस जीवन में प्राप्त ज्ञान स्मरण रहे। द्वितीय जीवन में भी ब्रह्मचर्यपूर्वक ४०० वर्ष वेदाध्ययन कर अन्तकाल में पुन यही वर मांगा। इस प्रकार चार बार मनुष्य जीवन पाकर ४०० की आयु प्रत्येक जीवन में प्राप्त की, पिछले जीवनों का ज्ञान स्मरण रहा तथा चतुर्थ जीवन की समाप्ति के समय उनके शिष्यों ने कहा, 'ऋषिवर! आप को तो वेदज्ञान सम्पूर्ण उपस्थित हो गया होगा? महर्षि भारद्वाज ने एक मुट्ठी में मिट्टी लेकर आलंकारिक रूप में शिष्यों से कहा—"वत्स मेरी मुट्ठी में जितनी मिट्टी है उतना वेदज्ञान मुझे प्राप्त हुआ है तथा वास्तविक वेदज्ञान सम्पूर्ण हिमालय पर्वत ऋङ्खला तुल्य है।" इस दृष्टान्त का दार्ष्टान्त है कि वेद ज्ञान अनन्त है।

ऋग्वेद के १०५८९, यजुर्वेद के १९७५, सामवेद के १८७३ तथा अथर्ववेद के ५९७७। कुल चारों वेदों के २०४१४ मन्त्र तथा शतपथ ब्राह्मण १०।४।२।२३।२५ के अनुसार ८६४००० अक्षरों का जब वेद संहिता का परिमाण है तो स्वाभाविक प्रश्न उपस्थित होता है कि ऋचाओं तथा अक्षरों की इस संख्या की सीमा से बधा ज्ञान अनन्त क्यों कर हो सकता है।

साहित्य की, विशेष कर वैदिक साहित्य की यह विशेषता है कि जहा एक ही पदार्थ के सूचक अनेक शब्द हैं, वहीं एक ही शब्द के अनेक अर्थ भी होते हैं। इस दृष्टि से वेदमन्त्रों का जितना गहन स्वाध्याय विद्वानों द्वारा किया जायेगा उतने ही ज्ञान के नये-नये क्षेत्र प्रस्तुत होंगे। एक एक मन्त्र वास्तव में सागर के तुल्य है कि "जिन खोजा तिन पाइया, गहरे पानी पैठ।" वैदिक कालीन महात्माओं ने स्वविवेक, अध्ययन, मनन, चिन्तन, पारस्परिक, विचारविमर्श एवम् योगविद्या से प्राप्त उच्चस्तरीय एकाग्रता व समाधि से मन्त्रों के अर्थों का दर्शन सर्वप्रथम कर के 'ऋषयो मन्त्र द्रष्टारः' के अनुसार ऋषि की पदवी पायी एवम् आज तक उनके सम्मानार्थ मन्त्र के साथ उनका नाम जुड़ा हुआ है। परन्तु जो अर्थ ऋषियों ने प्रकाशित किये वे ही एकमात्र अर्थ नहीं हैं। बाद के भाष्यकारों ने अन्य अर्थ उन्हीं मन्त्रों से प्रस्तुत किये तथा भिन्न भिन्न भाष्यकार विद्वानों के भाष्यों में जो अर्थ भेद दृष्टिगत होता है वह भी स्पष्ट करता है कि एक ही मन्त्र के अनेक अर्थ हैं व हो सकते हैं। जितने भाष्य अब तक पाश्चात्य एवम् भारतीय विद्वानों द्वारा किये गए हैं, उनसे मन्त्रों के अर्थ की विभिन्नता का क्षेत्र समाप्त नहीं हो गया है। और भी नवीन अर्थों के द्वारा ज्ञान विज्ञान के असीम नवीन क्षेत्र सतत प्रयत्न की अपेक्षा रखते हैं।

वेदों में मुख्य रूप से परमेश्वर, मोक्ष, आध्यात्मिक ज्ञान, कर्मकाण्ड विषयक मन्त्रों की प्रचुरता है, परन्तु सारे ही मन्त्र इन्हीं तक सीमित न होकर ज्ञानविज्ञान, पदार्थ विद्या तृण से ब्रह्माण्ड पर्यन्त विषयों को अपने में बीज रूप में समेटे हुए हैं। पूरा विशाल वट वृक्ष जिस प्रकार छोटे से बीज में समाया रहता है तथा उचित प्रयत्नों से बीज को बोकर खाद सिंचाई सूर्य के प्रकाश एवम् पौधे के सुरक्षित रखे जाने पर वह विशाल वट वृक्ष का रूप लेता है ठीक उसी प्रकार विभिन्न ज्ञान-विज्ञान को बीज रूप में वेद मन्त्रों में परम पिता परमेश्वर ने मानव के कल्याण हेतु प्रकाशित किया। अब यह मानव पर निर्भर करता है कि बीज को वट वृक्ष में परिणत करे।

युग प्रवर्तक वेदोद्धारक महर्षि दयानन्द ने वेद मन्त्रों के अर्थ कर के विभिन्न वैज्ञानिक विषयों पर उस समय प्रकाश डाला जब कि महर्षि द्वारा वर्णित वैज्ञानिक तथ्यों पर वैज्ञानिकों के अनुसन्धान प्रगति की प्रतीक्षा में ही थे। महर्षि ने अपने ग्रन्थ ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका में जिन विषयों पर प्रकाश डाला है, उन में से कुछ निम्नलिखित हैं—

अध्याय ५. विज्ञान काण्ड विषय

अध्याय १४ पृथिव्यादिलोक भ्रमण विषय

अध्याय १५ धारण आकर्षण विषय।

अध्याय १६ प्रकाश्य प्रकाशक विषय।

अध्याय १७. गणित विद्या विषय।

अध्याय २१ नौविमानादि विद्या विषय।

अध्याय २२ तार विद्या विषय।

अध्याय २७ राजा प्रजा धर्म विषय।

अध्याय ४८ पठन पाठन विषय।

अध्याय ५६ अलंकार भेद विषय।

उपरोक्त केवल उदाहरण स्वरूप हैं। स्थानाभाव से ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका पुस्तक में से उपरोक्त अध्यायों को सार रूप से भी प्रस्तुत करना सम्भव नहीं है। परन्तु ज्ञानपिपासु पाठकों से आग्रहपूर्वक यह निवेदन अवश्य है कि ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका (महर्षि दयानन्द कृत) का स्वाध्याय निष्पक्ष एवं पूर्वाग्रह से मुक्त होकर करने का श्रम करें तो वेदमन्त्रों के विषय में ज्ञान की नवीन किरण प्राप्त होगी।

अधिकांश वेदमन्त्रों के अनेकार्थं होने का एक अन्य कारण यह भी है कि अनेक वेदमन्त्रों में आलंकारिक रूप से संक्षिप्त विवरण है तथा उनकी व्याख्या विद्वानों ने भिन्न-भिन्न रूप से की है। एक मन्त्र के द्वारा इसको स्पष्ट करना पर्याप्त होगा—

चत्वारि शृङ्गा त्रयो अस्य पादा,
द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य।
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति,
महो देवो मर्त्यां आविवेश॥
यजु० १७।९१

मन्त्र का शब्दार्थ है कि एक बैल है जिसके चार सींग हैं, तीन पैर हैं, दो सिर हैं, सात हाथ हैं। वह बैल तीन जगह बधा हुआ चिल्लाता हैं, महोदेव मरने वालों में घुसा है। स्पष्ट है कि इस वेद मन्त्र में आलंकारिक रूप में गूढ़ तत्व छिपा है। जिस बैल का वर्णन है उसे विभिन्न भाष्यकारों ने भिन्न-भिन्न भाव से वर्णित किया है।

निरुक्तकार ने इस बैल को यज्ञ प्रतिपादित किया है, चार वेद इसके चार सींग हैं, तीन स्वर उच्च, मध्य व नीच इसके तीन पैर हैं, प्रायणीय और उदयनीय दो सिर हैं, सात गायत्र आदि छन्द इसके हाथ हैं। यह मन्त्र, ब्राह्मण एव कल्प से बधा है। यज्ञ के साथ का मन्त्र पाठ इसका शब्द है व तेज का देवता मनुष्यों में इनके कल्याण के हेतु प्रवेश करता है।

महाभाष्यकार ने वृषभ शब्द को बताया है जिस के चार सींग, संज्ञा, क्रिया, उपसर्ग व निपात हैं। भूत, भविष्यत्, वर्तमान तीन काल इसके तीन पैर हैं, नित्य व कार्य इसके दो सिर हैं, सात विभक्तिया सात हाथ हैं, यह हृदय कण्ठ और सिर तीन स्थानों मे बधा है, शब्द करने वाला महान् देव (शब्द रूप) मरण धर्म वाले मनुष्यों में प्रविष्ट होता है। श्री रामानुचार्य जी ने वृषभ को ईश्वर के वर्णन में लिया है। चारों वेद चार सींग हैं। नित्य, बद्ध व मुक्त तीन प्रकार के जीव तीन पाद हैं, शुद्ध सत्त्व व गुणात्मक सत्त्व इसके दो सिर हैं, महत्तत्त्वादि सात प्रकृति व विकृति इसके सात हाथ हैं। ऐसा महादेव श्रेष्ठ वृषभ वासुदेव अपने संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध तीन रूपों में मनुष्यों में प्रकट होता हुआ सब वस्तुओं को नाम रूपवत् करता है और चेतन अचेतन पदार्थों को अन्तरात्मा होकर प्रवेश करता है।

श्री विद्यारण्यजी ने वृषभ को प्रणव पर लिया है। अकार, उकार, मकार व नाद इसके चार सींग हैं। अध्यात्म विश्व व तैजस तीन पाद हैं। चित व अचित् दो शक्तिया सिर स्थान मे हैं। भूरादि सात लोक सात हाथ हैं। विराट्, हिरण्यगर्भ और व्याकृत तीन प्रकारों में बधा हुआ वृषभ प्रणव तेजोमयतत्त्व का प्रतिपादन करता है।

श्री वल्लभाचार्य जी के मतानुसार यह श्रुति साकारोपासना की ओर इंगित करती हुई श्री पुष्टि लीलास्थ पूर्ण पुरुषोत्तम के चार नित्य सिद्धादि यूथशृंग अर्थात् उत्तम स्थान में हैं, उनके तीन पाद उनके प्राप्त होने के साधन हैं। तनुजा वित्तजा और मानसा तीन प्रकार की सेवा है, सख्य और आत्मनिवेदन दो भक्तियां सिर अर्थात सिद्ध स्थान मे हैं श्रवणादि सात भक्तिया हाथ अर्थात् साधन स्थान मे हैं। श्री पुरुषोत्तम की पूर्वोक्त नौ प्रकार की भक्ति से युक्त जीव अलौकिक सामर्थ्य सायुज्य और सेवा में उपयोग देह धारण इन तीन प्रकार से बधा है। नवरणधर्मा जीव अर्थात् सेवा मार्गी जीव, जब अधिकारी होते हैं तब महोदेव लीलास्थ पूर्ण पुरुषोत्तम उन मे प्रवेश कर के लीला का अनुभव कराते हैं।

संगीत तथा साहित्य पर भी इस श्रुति को प्रतिपादित किया है

(शेष पृष्ठ ६ पर)

स्त्री अधिकार और वेद

विवेकानन्द सरस्वती प्रभात आश्रम मेरठ

वर्तमान युग को यदि "समस्या युग" की संज्ञा दी जाय तो यह अतिशयोक्ति नहीं किन्तु वास्तविकता है, क्योंकि इस समय सृष्टि में जिधर भी दृष्टिपात करते हैं समस्या वही अपने पूर्ण विकसित रूप में खड़ी दिखाई देती है। धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक कोई भी क्षेत्र समस्या से रहित नहीं, अब तो इसका इतना प्रसार एवम् प्रचार हो चुका है कि पारिवारिक क्षेत्र भी इससे अछूता नहीं, यहां तक कि पिता पुत्र, भाई बहन, पति पत्नी, गुरु शिष्य, स्वामी सेवक जैसे पवित्र सम्बन्ध भी इसके विकराल बाहु के चपेट से न बच सके। समस्याओं का कारण क्या है? जब हम इसके मूल में प्रवेश करते हैं तो हमें पता लगता है कि सभी समस्याओं का जन्मदाता है 'अधिकारवाद'। वह इस अधिकारवाद का भाव ऐसा भ्रामक है कि इसने सभी स्थानों पर समस्याओं को पैदा कर दिया है। पति पत्नी जैसा सुदृढ़ एवं पवित्रतम सम्बन्ध भी इस अधिकारवाद की कृपा से रस्साकस्सी का मैदान बना हुआ है। ऐसी घनघोर परिस्थिति से घिरे होने पर प्रकाश का क्या मार्ग है? हमारे ऋषियों ने हमें बताया कि जब कोई समस्या तुम्हारे सामने आये और तुम्हें उसका कोई समाधान न सूझे तो उसका समाधान वेद से पूछना क्योंकि वेद में सभी समस्याओं का समाधान है, सभी समस्याओं का समाधान करने के कारण ही वेद का वेदत्व है।

प्रत्यक्षेण अनुमित्या वा
यस्तूपायैर्न बुध्यते।
एन विदन्ति वेदेन
तस्माद् वेदस्य वेदता॥

स्त्री पुरुष के समान अधिकार का नारा लगाते हुए भारत के ही नहीं किन्तु विश्व के वर्तमान नेता अपना गला फाड़ रहे हैं और स्थिति इतनी भयावह हो चुकी है कि दाम्पत्य जीवन अशान्ति का केन्द्र बन चुका है। वेद इस प्रकार के समानाधिकार का समर्थक नहीं। अथर्ववेद के चौदहवें काण्ड में स्त्री के अधिकार तथा कर्त्तव्य का जितना स्पष्ट और विशद वर्णन है उतना अन्यत्र दुर्लभ है, स्थाली पुलाक न्याय से उदाहरणस्वरूप एक मन्त्र देखें—

सम्राज्ञी श्वशुरे भव
सम्राज्ञी श्वश्र्वां भव।
ननान्दरि सम्राज्ञी भव
सम्राज्ञी अधिदेवृषु॥

इस मन्त्र में आये हुए सम्राज्ञी शब्द का अर्थ लोक में इतना विश्रुत है कि इसके अर्थ के निर्णय के लिए किसी शब्दकोष या सर्वमान्य विद्वान् के प्रमाण की आवश्यकता नहीं। मन्त्र का आशय यह है कि नव-पति अपनी नव वधू से कहता है कि हे वधू! तुम हमारे माता पिता भाई-बहन में सम्राज्ञी होओ, तुम्हारे व्यवहार एवं चरित्र का प्रभाव इतना अधिक मेरे माता पिता, भाई बहन पर पड़े कि जिस प्रकार समस्त प्रजा एवम् राजा सम्राट् का आदर करते हैं और उसके शासन का पालन करते हैं उसी प्रकार मेरे घर के सभी सदस्य तुम्हारा आदर करें क्योंकि तुम मेरे घर की सम्राज्ञी हो, घर तुम्हारा है।

अथर्ववेद के अन्दर आये हुए इस छोटे से मन्त्र ने वर्तमान युग की सब से बड़ी समस्या "स्त्री पुरुष समानाधिकारवाद का समाधान कर दिया। क्योंकि वेद तो स्पष्ट कहता है कि स्त्री घर की सम्राज्ञी है, रानी है। फिर जो लोग रानी को भी, जो कि गृह की सर्वस्व स्वामिनी है, उसे पुरुष के बराबर अधिकार दिलाने की मांग करते हैं वे मानो उसका आधा अधिकार छीन रहे हैं, सर्वस्व के स्वामी को आधे का स्वामी बना रहे हैं। गृह में नारी की विशेष महत्ता को समझ कर ही मनु ने लिखा—

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते
रमन्ते तत्र देवता।"

वास्तव में स्त्री गृहस्थ जीवन की आधारशिला ही नहीं किन्तु सर्वस्व है। उसका अपमान मानवता का अपमान है। पति का कर्त्तव्य उसकी रक्षा करना है। स्त्री जिस भी अवस्था में हो उसकी उस समय के रक्षकों द्वारा रक्षा होनी ही चाहिए। वह स्वयं अपनी रक्षा के लिए चिन्तित न हो। इस विषय में भी मनु महाराज ने स्पष्ट शब्दों में कहा—

पिता रक्षति कौमारे
भर्त्ता रक्षति यौवने।
पुत्रो रक्षति वार्द्धक्ये न
स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति॥

स्त्री जब कुमार अवस्था में हो तो पिता का कर्त्तव्य है कि उसका भोजन वस्त्र निवासादि से पालन करे। लड़की से नौकरी न करावे। युवा अवस्था में पति कमाकर तथा वृद्ध अवस्था में पुत्र कमाकर उसका पालन करे। विवश होकर यदि स्त्री कौमार यौवन अथवा वार्द्धक्य के समय अपनी जीविका के लिए नौकरी करे तो उस पिता, पति, पुत्र को धिक्कार है। क्योंकि स्त्री अपनी पालना करने के लिए स्वच्छन्द नहीं छोड़नी चाहिए। पुरुष बाहर का कार्य करे स्त्री भीतर का। स्त्री पर गृह का कार्य भार ही इतना बड़ा है कि इस सब को करते हुए पुत्रादि की देखभाल करना, पुरुष के किसी भी कार्य से कम नहीं।

विश्व की अन्य संस्कृतियां अधिकारवाद से प्रारम्भ होती हैं किन्तु वैदिक संस्कृति कर्त्तव्यवाद से प्रारम्भ होती है। स्त्री-पुरुष अपने-अपने कर्त्तव्य को समझें। वर्तमान युग की समस्या का समाधान स्त्री पुरुष को समान अधिकार देने से नहीं किन्तु वेद के अनुसार स्त्री को घर की रानी बनाने में है। देवियां भी अपने उत्तरदायित्व को जिस दिन समझ जायेंगी, उस दिन यह अधिकारवाद की घुड़दौड़ समाप्त हो जायेगी और समस्त समस्यायें ऐसे विलीन हो जायेंगी जैसे प्रकाश को देखकर अन्धकार। दयामय प्रभु की दया हो कि वर्तमान युग के नेता वेद की छत्रछाया में बैठ कर प्रत्येक समस्या का समाधान ढूंढने का यत्न करें। इसी में मानव समाज का कल्याण है।

नान्य पन्था विद्यतेऽयनाय।

(पृष्ठ ५ का शेष)

अनन्ता वै वेदाः

संगीत को वृषभ मानने पर इसके तत वितत, घन और घमन चार सींग हैं, तीन ग्राम तीन पाद हैं, लय और स्वर दो सिर हैं, सात स्वर सात हाथ हैं, कण्ठ नाभि और मुख इन तीन स्थलों से बंधा हुआ संगीत रूपी वृषभ ब्रह्मगान मनुष्यों को तन्मय करता है। साहित्य के प्रतिपादन में वृषभ के चार सींग और भट्यादि कथन है। लक्षण, व्यंजना और ध्वनि तीन पाद हैं, दृश्य और श्रव्य दो सिर हैं, चित्रादि सात हाथ हैं, गद्य, पद्य व गीत तीन रीति से बंधा हुआ साहित्य रूपी वृषभ मनुष्यों को चित्त में उल्लास कर आनंद देता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने यजुर्वेद भाषा भाष्य में इस मन्त्र का प्रतिपादन निरुक्तकार के तीन पैर प्रातः सवन, मध्यन्दिन सवन और सायं सवन हैं। प्राप्ति के साधन चार वेद चार सींग हैं, अस्तकाल व उदयकाल दो सिर हैं गायत्री आदि छन्द सात हाथ हैं, मन्त्र ब्राह्मण व कल्प इन तीन प्रकारों से बंधा हुआ, बड़ा प्राप्त करने योग्य सुखों को सब ओर से वर्षाने वाला यज्ञ, प्रातः मध्य और सायं सवन क्रम से शब्द करता हुआ मनुष्यों को अच्छे प्रकार प्रवेश करता है। उसका अनुष्ठान कर के सुखी होओ।

उपरोक्त आलंकारिक रूप में प्रकाशित एक मन्त्र के इतने प्रकार के अर्थों से स्पष्ट है कि वेद मन्त्रों के इतने अर्थ किये गए एवम् किये जा सकते हैं कि वेद मन्त्रों से प्राप्त ज्ञान अनन्त है। आवश्यकता सतत प्रयत्नपूर्वक अनुसन्धान की है, जिससे कि सब सत्य विद्याओं का वेदमन्त्रों में बीज रूप से प्रकाश हो सके। □

(पृष्ठ ४ का शेष)

कल्याण प्राप्ति हेतु

८ ईश्वर इन भौतिक नेत्रों से देखने योग्य नहीं क्योंकि उसका कोई आकार, लम्बाई, चौड़ाई, परिमाण नहीं, वह पवित्र हृदय में योग समाधि द्वारा अनुभव किया जाता है। उसकी मूर्ति नहीं।

९ ईश्वर का न्याय अटल है जो जैसा करता है उस का फल भोगता है वह पक्षपात नहीं करता केवल न्याय करता है।

१० ईश्वर को किसी रसूल, पैगम्बर की आवश्यकता नहीं क्योंकि वह सब कुछ करने की स्वयं सामर्थ्य रखता है।

११ स्वर्ग-नरक (बहिश्त दोजख) कोई विशेष स्थान नहीं। अति विशेष सुख का नाम स्वर्ग (बहिश्त) और अति विशेष दुःख का नाम नरक (दोजख) है। यह कर्मानुसार ही मिलते हैं।

१२. ईश्वर का निज नाम ओ३म् है शेष गौणिक हैं।

१३ जन्म मरण बार-बार होता है। मरण के पश्चात् पुनर्जन्म अवश्य है और जन्म के बाद मृत्यु।

ईश्वर का निज नाम ओ३म् और उस का हम मनुष्यों के लिए उपदेश "वेद ज्ञान" है। यही झण्डा सबके लिए माननीय है। इस में न किसी का पक्षपात है, प्राणी मात्र के कल्याण के लिए है और इसी के तले इकट्ठे होने में सब का हित है। सब से पुराना आज एक अरब सत्तानवे करोड़ उनतीस लाख उन्चास हजार सत्तासी (१९७२९४९०८७) चल रहा है। □

टंकारा वही गांव है

★

होली माई रे कन्हाई

जहां महा ऋषि दयानन्द जनमे। टंकारा वही गांव है।
जिस की गलियों में खेले बचपन में। टंकारा वही गांव है।

कर्षण तिवारी एक ब्राह्मण थे गामों में।
रहते थे सारे जिन की पलकों की छाओं में।
श्रद्धा रखते शिव की भक्ति व भजन में। टंकारा वही गांव है।...

इनकी परमात्मा ने दुविधा हरी थी।
माता पिता की गोद सुख से भरी थी।
गूंजी खुशियों की शहनाई थी आंगन में। टंकारा वही गांव है।

डेमी नदी का पानी हर्षित हुआ था।
मूलशङ्कर ने आ के जिस दिन छुआ था।
मीठी यादें हैं समाई कण कण में। टंकारा वही गांव है।...

अब तक है याद शिवरात्रि यहां की।
बिगड़ी बना दी जिसने सारे जहां की।
फिर से लाया था बहारें जो चमन में। टंकारा वही गांव है।...

मन्दिर में एक ऐसी घटना घटी थी।
सच्चे प्रभु की पूजा मन में उठी थी।
योगी बनने को निकल गया बन में। टंकारा वही गांव है।

जब तक आकाश में यह धरती रहेगी।
मस्ती में आ के सारी दुनिया कहेगी।
जिस की ख्याति है "पथिक" जन जन में। टंकारा वही गांव है।

रचयिता—पं० सत्यपाल 'पथिक'

धार्मिक स्थानों में राजनीतिक गतिविधियों की पाबन्दी के अध्यादेश का स्वागत

नई दिल्ली, २८ मई १९८८।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री ओमप्रकाश आर्य ने आज एक प्रेस वक्तव्य में सरकार द्वारा धार्मिक स्थानों में राजनीतिक गतिविधियों की पाबन्दी के अध्यादेश का स्वागत करते हुए इसे जम्मू कश्मीर पर भी तुरन्त लागू करने की मांग की है।

श्री आर्य ने कहा कि यदि यह कानून २० वर्ष पूर्व लागू कर दिया जाता तो आज यह नौबत आती ही नहीं। जितनी साम्प्रदायिकता अलगाववाद इन धार्मिक स्थानों से फैली है, उतनी अन्य किसी से नहीं। श्री आर्य ने यह भी मांग की है कि इसमें जो सजा का प्रावधान किया गया है, वह बहुत कम है। उसका उल्लंघन करने वाले व्यक्तियों के खिलाफ उनकी भारतीय नागरिकता समाप्त कर देनी चाहिए और भविष्य में उसे भारत भर में किसी भी चुनाव में खड़े होने के लिए अयोग्य घोषित कर दिया जाये। श्री आर्य ने कहा कि कोई भी राष्ट्रवादी व्यक्ति देश की एकता व अखण्डता बनाए रखने वाला व्यक्ति इस अध्यादेश का विरोध नहीं कर सकता। अपने स्वार्थ के लिए इस अध्यादेश के विरुद्ध आवाज उठाने वाले व्यक्ति देशभक्त नहीं हो सकते।

—डा० धर्मपाल
(प्रधान)

आर्यसन्देश पढ़ें, पढ़ायें

आर्य जगत् के समाचारों व उपयोगी लेखों, अध्यात्म विवेचनों से युक्त, सामयिक चेतावनियों से जूझने की योजना देने वाले साप्ताहिक पत्र आर्यसन्देश के ग्राहक बनिए और बनाइए। साथ ही वर्ष में चार भव्य विशेषांक प्राप्त कीजिए। वार्षिक शुल्क केवल २५ रुपये। आजीवन २५० रुपये मात्र।

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N. No. 32387/77 Post in N.D.P.S.O. on 2, 3-6-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३६

पंजाब को सेना के हवाले करो

आर्यसमाज हनुमान रोड की यह सभा पंजाब में दिनोंदिन बढ़ रहे कत्लेआम तथा सरकार द्वारा आतंकवादियों पर काबू न पा सकने पर घोर चिन्ता प्रकट करती है। यह सभा सरकार द्वारा आतंकवादियों के साथ किसी प्रकार की बातचीत को भारत की जनता के साथ विश्वासघात समझती है। सभा के मत में भारत सरकार द्वारा पंजाब को संविधान की धारा ३७० के अन्तर्गत विशेष दर्जा देने के विचार को खालिस्तान की नींव रखने जैसा मानती है। सभा इस विचार का कड़ा विरोध करती है और सरकार को चेतावनी देती है कि सारा हिन्दू जगत राष्ट्रवादी जनता उसका कड़ा विरोध करेगी।

सभा सरकार से बल पूर्वक मांग करती है कि सारे पंजाब को तुरन्त सेना के हवाले किया जाये और आतंकवादियों और उनके नेताओं के साथ कड़ाई से निपटा जाये।

—मन्त्री
आर्यसमाज हनुमान रोड

(पृष्ठ १ का शेष)

आर्यसमाज पर सुधार...

कारों का हनन मानव द्वारा किया जाने लगा है समाज में जागृति के नाम पर पुरानी पोंगापंथी तथा विकृतियां फिर से पनपने लगी हैं। ऐसे समय में आर्यसमाज पर देश के निर्माण व समाज सुधार की विशेष जिम्मेदारी आती है। उन्होंने कहा कि मनुष्य के कामों का प्रतिबिम्ब समाज व राष्ट्र पर पड़ता है, अत हमें धर्मान्धता, अन्धविश्वास व शोषण के सिद्धान्तों को तिलांजलि देनी होगी।

सत्यार्थ प्रकाश

अमर कीर्ति ऋषि दयानन्द की, अमर रहे सत्यार्थप्रकाश।
सब शंकाओं का उन्मूलन, करता यह सत्यार्थप्रकाश॥
वेद शास्त्र का मथन कर यह, लिखा गया सत्यार्थप्रकाश।
नहीं विश्व में कोई पुस्तक, जैसा यह सत्यार्थप्रकाश॥१॥ अमर...
समुल्लास हैं रत्न चतुर्दश, जिसमें यह सत्यार्थप्रकाश।
कथन सत्य का शेष न कोई, ऐसा यह सत्यार्थप्रकाश॥
अज्ञान तिमिर को दूर भगाता, सूरज सम सत्यार्थप्रकाश।
सब धर्मों के गुण अवगुण को, दिखलाता सत्यार्थप्रकाश॥२॥ अमर..
पाखण्डों के दुर्ग तोड़ता, तर्कों से सत्यार्थप्रकाश।
सत्य असत्य कहां कितना है, बतलाता सत्यार्थप्रकाश॥
बनें सभी वैदिक पथगामी, सिखलाता सत्यार्थप्रकाश।
स्वर्ग नरक की उत्तम व्याख्या, करता है सत्यार्थप्रकाश॥३॥ अमर...
विद्या और अविद्या क्या है, समझाता सत्यार्थप्रकाश।
ईश्वर जीव प्रकृति तत्वों का, विश्लेषक सत्यार्थप्रकाश॥
पत्थर पूजा श्राद्ध अवैदिक, बतलाता सत्यार्थप्रकाश।
अपने अध्येता को देता, परम शान्ति सत्यार्थप्रकाश॥४॥ अमर...
वर्ण व्यवस्था बनी कर्मणा, कहता है सत्यार्थप्रकाश।
पक्ष ग्रस्त मानव को बाहर, करता है सत्यार्थप्रकाश॥
बन्ध मुक्ति का स्पष्ट विवेचन, करता है सत्यार्थप्रकाश।
खतरे की घण्टी है मानो, प्यारा यह सत्यार्थप्रकाश॥५॥ अमर...

—शिवपूजन शास्त्री, गुरुकुल गाजियाबाद

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५१

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ · अंक ३४ रविवार १२ जून १९८८ सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ ज्येष्ठ २०४५ दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य एक प्रति ५० पैसे वार्षिक २५ रुपये आजीवन २५० रुपये विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

रूस में विस्फोट

चेरनोबिल विस्फोट के बाद सोवियत संघ की दूसरी बड़ी दुर्घटना में विस्फोटक माल में आग लगने से ६८ व्यक्तियों की मौत और २३० लोगों का घायल होना सोवियत व्यवस्था की कुशलता और अनुशासन पर सवालिया निशान लगाते हैं। यह दुर्घटना गोर्की नगर के पास अर्जमास रेलवे स्टेशन में दाखिल होती हुई एक रेलगाड़ी में हुई। विस्फोट की भयंकरता का अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि गाड़ी के गुजरने का इंतजार कर रही मोटर गाड़ियां धमाके से खिलौनों की तरह उछल कर दूर जा गिरीं। आसपास के सैकड़ों मकान मलबे में बदल गए और छह सौ परिवार बेघर हो गए। घटना स्थल से दो किलोमीटर दूर तक के घरों के शीशे टूट गए और मरने वालों में बड़ी संख्या में छोटे बच्चे थे। अगर किसी गैर साम्यवादी देश में यह दुर्घटना होती तो इस बात की गहरी आशंका पैदा हो सकती थी कि शायद यह दुर्घटना नहीं, किसी आतंकवादी गुट की करामात होगी। लेकिन सोवियत संघ की मौजूदा व्यवस्था में असंतोष सक्रिय विद्रोह या आतंकवाद की सीमा तक नहीं पहुंचा है। इस तरह के षड्यन्त्रों की वहां फिलहाल ज्यादा गुंजाइश नहीं है। कम से कम रूसी शासक तो यही दावा करते हैं। इसलिए यह और भी गम्भीर सवाल है कि सोवियत अनुशासन और बहु प्रचारित कुशलता के बावजूद इस तरह की दुर्घटनाएं क्यों होती हैं।

दरअसल जब कोई व्यवस्था नियमों-कायदों और ऊपर से थोपे गए शासन के डर के बल पर ही चलती है तो वह आदमी की सामान्य जिम्मेदारी की भावना को भी मिटा देती है। अतिकेन्द्रीकृत व्यवस्था में निचले स्तर पर विवेक का इस्तेमाल और निजी पहल का इरादा ही समाप्त हो जाता है। ऐसी व्यवस्था सामान्य परिस्थितियों में तो एक मशीन की तरह ठीक-ठाक चलती रहती है, लेकिन इस मशीन में खराबी आने पर लड़खड़ा जाती है। चेरनोबिल में परमाणु संयंत्र की दुर्घटना में मानवीय भूल को जिम्मेदार ठहराया गया था और ताजा विस्फोट में भी इसी की ओर इशारा किया जा रहा है। यह सही है कि दुर्घटनाएं और देशों में भी होती रहती हैं। पश्चिम के कुछ देशों में जहरीले पदार्थ बनाने वाले कारखानों में दुर्घटनाओं की वजह से आए दिन लोग मौत के घाट उतरते रहते हैं। लेकिन सवाल यह है कि जो व्यवस्था समाज और शासन को नियम और अनुशासन के बल पर चलाने का दावा करती हो वहां ऐसी दुर्घटनाएं क्यों होती रहती हैं, जिन को काबू करने में कथित कुशल तन्त्र भी बेबस साबित हो जाता है। पश्चिम की दबावों और तनावों वाली व्यवस्था और विकासशील देशों की ढीली-ढाली व्यवस्था में आम आदमी जितना असुरक्षित है उतना ही सोवियत संघ में भी है तो दोनों में फर्क क्या है ?

इस दुर्घटना ने एक और सवाल पैदा किया है, जिसका सम्बन्ध सिर्फ सोवियत संघ से ही नहीं है। ऐसा लगता है कि खतरनाक विस्फोटकों के भण्डारण और उनकी देख-रेख के बारे में दुनिया के सभी देश लापरवाह होते जा रहे हैं। भारत में जबलपुर के केन्द्रीय विस्फोटक भंडार और पाकिस्तान के शस्त्रागार में भयंकर लगी आग इसी ओर इशारा करते हैं। ऐसी लापरवाही में अधिक खतरनाक परमाणु संयन्त्रों और अस्त्र भण्डारों की सही देख-भाल और आम आदमी की सुरक्षा के बारे में मौजूदा सरकारों की कुशलता में शक पैदा होना अस्वाभाविक नहीं है। जहरीले रसायन, अस्त्र शस्त्र और विस्फोटकों के जखीरे बनाने की होड़ में आज की भौतिक सभ्यता बिना युद्ध के ही हजारों निर्दोष लोगों को मौत के घाट उतारने की स्थितियां पैदा कर रही है। फिर भी दावा यह किया जाता है कि यह सब कुछ आदमी के अधिक विकास और उसे भौतिक सुख प्रदान करने के लिए किया जा रहा है।

मन्दिर की मुक्ति के लिए

देश की एकता और अखण्डता को चुनौती देने वाले आतंकवादियों को अब सिक्खों के पवित्रतम धर्मस्थल अमृतसर स्वर्ण मन्दिर को आपराधिक दुष्कर्मों का सुरक्षित अड्डा बनाने का तीसरा अवसर नहीं मिलेगा। कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए जिम्मेदार सरकार की ढुलमुल नीति, गुरुद्वारा प्रबन्धक समिति के सदस्यों की परस्पर प्रतिस्पर्धा और अविश्वास तथा बंदूकधारियों के सामने समर्पण करने की मानसिकता के कारण कभी सर्व-धर्म-समभाव का प्रतीक हरमंदर साहब दो बार जहांगियों की बर्बर बादशाही का किला बन चुका है। आखिरकार वहां नापाक लोग, दुष्ट लुटेरे और दहशत का राज्य चलाने वाले कैसे दो बार इतनी मजबूत किलेबंदी करने में कामयाब हुए! तरह-तरह के अवर्णनीय दुष्कृत्य करने वालों को कहां तक छूट दी जा सकती है! सरकार ने देर से सही कार्रवाई की। पहले सेना को और चार साल बाद सशस्त्र बलों की तोपों को सिक्खों के पवित्रतम धर्मस्थल की ओर अभिमुख होना पड़ा। बहुत भारी कीमत चुकाने के मूल्य पर स्वर्ण मन्दिर की मर्यादा बहाल हुई है। सिख धर्म के नेता भले ही अपने आपको 'गुमराह' करें और सिख जनमानस को गुमराह करें कि सरकार ने उनके धार्मिक स्थलों में हस्तक्षेप किया है और कर रही है, लेकिन सच्चाई यही है कि सरकारी कार्रवाई की बदौलत ही उनके धर्मस्थल को पूजा, आस्था और अरदास करने के मन्दिर के रूप में बचाया जा सका है।

देश की जनता को इस बात से राहत मिली है कि सरकार पिछले अनुभवों को देखते हुए ऐसी व्यवस्था करने जा रही है ताकि स्वर्ण मन्दिर में काले कारनामों की पुनरावृत्ति फिर नहीं हो। विशाल मन्दिर परिसर के चारों तरफ निर्माण और आबादी धीरे-धीरे इतनी घनी हो चली थी कि मन्दिर का इलाका और रिहायशी मकान कई स्थलों पर जुड़ गए। इन मकानों और सटी हुई संकरी गलियों का लाभ उठा कर ही आतंकवादी स्वर्ण मन्दिर को आपरेशन ब्लू स्टार के बाद पुनः छावनी का रूप दे सके। वास्तव में सरकार ने मन्दिर को चारों तरफ से खूबसूरत पेड़ों, फूलों और बगीचों से घेरने की योजना पर चार साल पहले ही अमल कर दिया होता तो आपरेशन ब्लैक थंडर की जरूरत ही नहीं पड़ती। अब मन्दिर के चारों तरफ गलियारा बनाने का काम शुरू हो रहा है। फिलहाल तीस मीटर की परिधि में आने वाले केवल रिहायशी मकान गिराए जाएंगे। बाद में परिसर के तीन सौ मीटर की परिधि में सारे

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

श्रीमती सत्यवती शालवाले की स्मृति में श्रद्धांजलि सभा सम्पन्न

श्रीमती सत्यवती शालवाले की स्मृति में एक श्रद्धांजलि सभा १ जून को आर्यसमाज दीवान हाल में सम्पन्न हुई। इस अवसर पर एक विराट् यज्ञ हुआ। यज्ञ के पश्चात् सार्वजनिक सभा हुई। जिसमें आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के प्रधान श्री प्रो० शेरसिंह, दिल्ली सभा के प्रधान डा० धर्मपाल, राजस्थान सभा के प्रधान श्री छोटूसिंह विख्यात सन्यासी स्वामी दीक्षानन्द, पं० शिवकुमार शास्त्री पूर्व सांसद, म० धर्मपाल आर्य केन्द्रीय सभा के प्रधान, डा० शिवकुमार, सार्वदेशिक सभा के महामन्त्री श्री सच्चिदानन्द शास्त्री आदि अनेक गण्यमान्य जनों ने अपने श्रद्धासुमन अर्पित किये। वक्ताओं ने कहा—श्री सत्यवती यज्ञशील समाजसेवी तपस्विनी महिला थीं। अपने पति श्री रामगोपाल शालवाले की प्रेरणा व शक्ति बन कर उनका साथ निभाती रहीं, देश, धर्म के लिए स्वयं भी कई बार जेल गयीं। दिल्ली प्रान्तीय महिला सभा की प्रधाना सरला मेहता एवं मन्त्रिणी श्रीमती प्रकाश आर्या ने भी अपने श्रद्धा वचन कहे।

इस अवसर पर परिवार की ओर से सार्वदेशिक सभा में श्रीमती सत्यवती शालवाले के नाम से ५००० हजार रुपये की स्थिर निधि की घोषणा की। अन्य संस्थाओं के लिए भी दान की घोषणा की गयी।

समापन समारोह

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के अन्तर्गत चल रहे आर्य वीर दल ग्रीष्म कालीन प्रशिक्षण शिविर का समापन समारोह १२ जून ८८ को प्रातः ११ बजे दयानन्द माडल स्कूल बी ब्लाक विवेक विहार में होगा। यह शिविर दिल्ली के आर्य वीरो को प्रशिक्षण देने हेतु पिछले दस दिनों से चल रहा है। शिविर के माध्यम से बच्चो को लाठी, भाले, तलवार चलाने के साथ-साथ उनके आत्मिक विकास हेतु बौद्धिक प्रशिक्षण भी दिया गया है। समापन समारोह प्रातः ११ बजे बच्चों द्वारा प्रदर्शन एवम् आर्यसमाज के गण्यमान्य नेताओं द्वारा मार्गदर्शन के पश्चात् ऋषि लगर के साथ समाप्त होगा।

दिल्ली की समस्त आर्यसमाजों, शिक्षण संस्थाओं से निवेदन है कि बच्चों को आशीर्वाद प्रदान करने एवम् उनका उत्साह बढ़ाने हेतु अधिक से अधिक सख्या मे पहुचें।

डा० धर्मपाल (प्रधान) सूर्यदेव (महामंत्री) प्रियतमदास रसवन्त (अधिष्ठाता)

प्रशिक्षण समारोह

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के अन्तर्गत चल रहे आर्य वीर दल दिल्ली प्रदेश के प्रशिक्षण समारोह का उद्घाटन श्री जयप्रकाश जी आर्य प्रसिद्ध उद्योगपति के कर कमलों द्वारा २ जून ८८ को प्रात ८ बजे किया गया। यह शिविर बच्चों को प्रशिक्षण देने हेतु हर वर्ष लगाया जाता है। इस अवसर पर बच्चो को सम्बोधित करते हुए श्री जयप्रकाश जी आर्य ने बच्चों का आह्वान किया कि उन्हें इस प्रकार का प्रशिक्षण लेकर अपने धर्म जाति व देश की रक्षा के लिए तत्पर रहना चाहिये। श्री सूर्यदेव जी ने वेदों से मन्त्र का उच्चारण करते हुए कहा कि इस धरती पर वीर पुरुष ही सुख भोग कर सकते हैं। कठोर परिश्रम नहीं करेंगे तो कमाई नहीं होगी। रसवन्त जी ने कितनी भी कठिनाइयां क्यों न आयें, अनुशासन में रहने पर बल दिया। आर्यसमाज विवेक विहार के प्रधान श्री जगदीशचन्द्र जी एवं मन्त्राणी श्रीमती उषा आर्या जी ने शिविर को अपना भरपूर सहयोग देने का आश्वासन दिया। इस अवसर पर श्री जयप्रकाश जी आर्य ने शिविर हेतु ११००/ रुपये के सात्त्विक दान की घोषणा की जिसका करतल ध्वनि से स्वागत किया गया। स्वामी स्वरूपानन्द जी ने बच्चों को आशीर्वाद प्रदान किया।

श्यामसुन्दर बिरमानी (महामंत्री)

सुहागिन की अर्थी

प्राण दर्शनों के लिए अटके हुए थे। उनके दर्शन हुए और दस मिनट बाद उन्होंने आंखें हमेशा के लिए मूद लीं।

परलोक सिधारने वाली महिला थीं आर्यसमाज के विख्यात नेता लाला रामगोपाल शालवाले की पत्नी, श्रीमती सत्यवती। श्री शालवाले गृहस्थाश्रम पूरा करके सन्यासी हो चुके हैं। आर्य-जगत् अब उन्हें स्वामी आनन्दबोध सरस्वती के नाम से जानता है।

गत गुरुवार को हालत बिगड़ने पर श्रीमती सत्यवती शालवाले को लोकनायक जयप्रकाश अस्पताल में दाखिल करा कर स्वामी जी को तार से होशगाबाद खबर दी गई थी। स्वामी जी अपने कार्यक्रम पूरे कर के शुक्रवार को लौटे और फिर अगले कार्यक्रम पर रवाना हो गए। मानो कुछ हुआ ही नहीं। परिवार का कहीं मोह नहीं था। उसे त्यागा तो एकदम त्याग दिया—मन से, शरीर से।

शुभचिन्तकों ने बहुत समझाया। स्वामी जी का सिद्धांत आड़े आ गया। बड़ी मुश्किल से यह बात उनको समझाई जा सकी कि लोग स्वामी के दर्शन करने जाते हैं। स्वामी लोगों को दर्शन देते हैं। जो दर्शनाभिलाषी दर्शन करने आने में अपरिहार्य कारणों से असमर्थ हो, स्वामी खुद दर्शन देने चले जाते हैं।

काफी बहस के बाद रविवार को सुबह स्वामी जी अस्पताल जाने को राजी हुए। अग्नि के सामने जीवन पर्यन्त पतिव्रत निभाने का संकल्प लेने वाली श्रीमती सत्यवती ने आंखें खोलीं, अपने स्वामी के दर्शन किये और चुपचाप दस मिनट बाद दूसरे लोक में पहुच गई।

लोगों के समझाने-बुझाने पर स्वामी अत्येष्टि में शामिल होने पहुंचे, लेकिन अन्य लोगों की तरह परिवार या पति की हैसियत से नहीं। चिता को अग्नि भी बेटे ने दी और स्वामी जी निर्निमेष भाव से देखते रहे। सुहागिन की अर्थी पति के रहते, बेटों और अन्य के कधों पर श्मशान पहुंची थी।

(नवभारत से साभार)

पंजाब को विशेष दर्जा देना राष्ट्र हित में नहीं

आर्यसमाज चूना मण्डी, पहाड़ गज नई दिल्ली-५५ की यह सभा पंजाब में दिनोंदिन बढ़ रहे कत्ले-आम तथा सरकार द्वारा आतकवादियों पर काबू न पा सकने पर घोर चिन्ता प्रकट करती है। यह सभा सरकार द्वारा आतकवादियों के साथ किसी प्रकार की बातचीत को भारत की जनता के साथ विश्वासघात समझती है। सभा के मत में सरकार द्वारा "पंजाब को सविधान की धारा-३७० के अन्तर्गत विशेष दर्जा देने के विचार को खालिस्तान की नींव रखने जैसा मानती है। सभा इस विचार का कड़ा विरोध करती है और सरकार को चेतावनी देती है कि सारा हिन्दू जगत्, राष्ट्रवादी जगत्, इसका कड़ा विरोध करेगा।

सभा सरकार से बलपूर्वक माग करती है कि सारे पजाब को तुरन्त सेना के हवाले किया जाये और उनके नेताओं के साथ कड़ाई से निपटा जाये।

मन्त्री
आर्यसमाज चूनामण्डी
पहाड़गज

व्रत से सत्य

—रामदयाल आर्य, जोधपुर (राज०)

★

व्रताचरण करना चाहिए। अत वेद ने कहा—

व्रतं कृणुत-व्रतं कृणुत।

यजु० अ० ४ मं० ११

व्रत करो, निश्चय से व्रत करो क्योंकि व्रत का लाभ—

व्रतेन दीक्षामाप्नोति।

यजु० अ० १९ म० ३०

व्रत से दीक्षा की प्राप्ति होती है अर्थात् आध्यात्मिक क्षेत्र में प्रवेश करने का अधिकारी बन जाता है इस प्रकार व्रतानुष्ठान करने से दीक्षा प्राप्त होने पर दक्षिणा-वृद्धि उन्नति समृद्धि का साधन प्राप्त होता है, और उस समृद्धि से श्रद्धा की जागृति होती है तथा श्रद्धा से सत्य को प्राप्ति हो जाती है।

जीवन में सत्य को उपलब्धि सत्य का दर्शन ही वास्तविकता है। सत्य से विपरीत अवास्तविक है अत सत्य का अनुष्ठानकर्ता सत्य स्वरूप ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है।

श्रद्धा से सत्य की प्राप्ति करो—

व्रतेन दीक्षामाप्नोति
दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति
श्रद्धया सत्यमाप्यते॥

यजु० १९।३०

(व्रतेन दीक्षाम् आप्नोति) व्रत से दीक्षा को प्राप्त होता है और (दीक्षया दक्षिणाम् आप्नोति) दीक्षा से दक्षिणा को प्राप्त करता है (दक्षिणा श्रद्धाम् आप्नोति।) दक्षिणा से श्रद्धा को प्राप्त होता है और (श्रद्धया सत्यमाप्यते) श्रद्धा से सत्य को प्राप्ति होती है।

मन्त्र में बतलाया गया है कि मनुष्य व्रत के द्वारा दीक्षा अर्थात् उत्तम अधिकार को प्राप्त होता है और अधिकारी होकर दक्षिणा अर्थात् फल को प्राप्त करता है तथा फलवान होकर श्रद्धावान होता है और श्रद्धालु होकर सत्य को प्राप्त कर लिया करता है सच्चाई तक पहुचने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य उसके लिए सर्वप्रथम व्रत ले अर्थात् प्रतिज्ञा करे कि मुझे सत्य को प्राप्त करना है और मैं उसे ही प्राप्त करूगा। इस प्रकार व्रत को ग्रहण कर तदनुसार आचरण करता है वह दीक्षित अर्थात् सत्य प्राप्ति का उत्तराधिकारी बनता है। जब सारी विघ्न बाधाओं को दूर करता हुआ सत्य पथ पर आगे बढ़ता ही चला जाता है तो उसे उसकी दक्षिणा फल सुयश के रूप में प्राप्त होने लगता है जो कि उसमें सच्चाई के लिए दृढ़ विश्वास श्रद्धा को उत्पन्न कर देते और अन्त में वह इसी श्रद्धा से सत्य को प्राप्त करता है श्रद्धा का अर्थ है कि (श्रत् सत्यम् आदधाति इति श्रद्धा) जो सत्य को प्राप्त करावे वह श्रद्धा है सत्य की महिमा का वर्णन करते हुए शास्त्रों में कहा गया है—(मन. सत्येन शुद्धयति) मन सत्य से पवित्र होता है नहि सत्यात् परो धर्म.। सत्य से बढ़कर और कोई धर्म नहीं; सत्य हि परम बलम् सत्य ही परम बल है।

मौनात् सत्य विशिष्यते।

मौन की अपेक्षा सत्य श्रेष्ठ है।

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा। सत्यरूपी तप से यह आत्मा परमात्मा को प्राप्त होता है। तत्सत्ये प्रतिष्ठितम् वह ब्रह्म सत्य से प्रतिष्ठित है। इसलिए सत्य को प्राप्त करने और सत्याचरण करने हो से ब्रह्म को प्राप्त कर सकते हैं। और इसका परिणाम यह हुआ कि सत्य से विमुख होना ईश्वर से विमुख होना है इसलिए सत्य की इतनी महिमा वैदिक साहित्य में गाई गई है। यजुर्वेद में आता है—

अश्रद्धामनृते अदधाच्छ्रद्धां सत्ये प्रजापति। प्रजापति ने सत्य में श्रद्धा और अनृत में अश्रद्धा को रक्खा अर्थात् मनुष्य को चाहिए कि सत्य श्रद्धा रखे और झूठ मे अश्रद्धा करे इस प्रकार जो सत्य में श्रद्धा करता है और व्यवहार में उसका ही प्रयोग करता है उसमें अपूर्व शक्ति आ जाती है और वह जीवन के सन्मार्ग पर बढ़ता हुआ सत्य के निधान ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है। अन्त में हमें वेद के आदेशानुसार सत्य के लिए व्रत लेना चाहिए।

अग्ने व्रतपते व्रत चरिष्यामि तच्छकेय तन्मे राध्यताम्। इदमहम-नृतात् सत्यम् उपैमि॥ यजु० १०।४

व्रत के पालक स्वामी मैं व्रत का आचरण करने लगा हूं। मुझे शक्ति दो कि मैं अपने व्रत का पालन कर सकूं। मेरा व्रत यह है कि मैं असत्य आचरण को छोडकर सत्य को ग्रहण करता हू। हे ईश्वर मैं व्रत करता हू कि झूठ को छोड़कर सच की खोज करूंगा। प्रभु मेरी सहायता कीजिये। संसार में अनेक प्रकार के व्रत पाये जाते हैं, कोई एक दिन उपवास करता है, कोई एक मास का, कोई इससे भी अधिक। परन्तु यह व्रत नहीं है। खाना न खाने का नाम व्रत नहीं। व्रत एक मानसिक सकल्प है। ऐसा सकल्प कि असत्य का त्याग करने और सत्य को ग्रहण करने में सर्वदा उद्यत रहे। वेद की यह आज्ञा है और आर्यसमाज के ४ नियम में इसी व्रत को दुहराया गया है। इस एक व्रत के प्रयास मे अन्य सब छोटे बडे व्रत अच्छे काम आ जाते हैं और सत्य की प्राप्ति हो जाने पर मनुष्य के सब अन्धकार अन्धविश्वास कुसस्कार सब नष्ट हो जाते हैं। छल, छिद्र, कपट, लोभ, मोह, द्वेष, सारे ही दुर्गुण दूर भाग जाते हैं। न सत्यात् परो धर्म. अर्थात् सच से बढ़कर कोई पुण्य नहीं और यह बात ठीक है जो झूठ से बढ़कर कोई बुरी चीज नहीं। इसलिए वेद मत्र का मुख्य उपदेश यह है कि सत्य-को खोजो सत्य को बोलो और सत्य निष्ठ होकर जीवन व्यतीत करें। यह नियम आर्यसमाज की शोभा है, जो बात सत्य प्रत्यक्षादि प्रमाणों से सिद्ध युक्ति युक्त सृष्टिक्रम से अवि-रुद्ध और शुद्ध आत्मानुकूल हो उसे ग्रहण करने के लिए और इससे विपरीत को छोडने के लिए सदा तैयार रहना चाहिए। आर्य को सत्य का अन्वेषक होना चाहिये। और जब उसे पता लग जाए कि कोई बात असत्य है तो उसे उसी समय छोड देना चाहिए, क्योंकि आचरण के बिना ज्ञान किसी काम का नही किसी वस्तु का ज्ञान मात्र चरित्र में सहायक नहीं हो सकता। रावण वेदों का बहुत बडा विद्वान् था, पर-न्तु आचरण न करने के कारण वह राक्षस कहलाया। अत प्रत्येक आर्य का यह कर्तव्य है कि वह सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोडने में तत्पर रहे। सत्य जहा से प्राप्त हो वहीं से ले लेना चाहिए। मनु महाराज का आदेश है।

विषादप्यमृत ग्राह्य
बालादपि सुभाषितम्।
अमित्रादपि सद्वृत्तम्
अमेध्यादपि काञ्चनम्॥

२।२३९

विष से अमृत और बालक से भी उत्तम वचन ले लेना चाहिए, शत्रु से भी सदाचार सीखना और अपवित्र स्थान से भी स्वर्ण ले लेना चाहिए कहने का तात्पर्य यह है कि सत्य के ग्रहण करने में हठ और दुराग्रह कदापि न करना चाहिए। ऋषि दयानन्द सत्य के अनन्य प्रेमी थे। वे अपने समस्त जीवन में सत्य अन्वेषण करते रहे। आर्यसमाज में प्रविष्ट होने वाले प्रत्येक नर-नारी को सत्य अपनाने की शिक्षा दी। क्योंकि सत्यमेव परम बलम। सत्य सबसे बडा बल है। वेदों और उप-निषदो में ईश्वर को सत्य कहा गया है। (सत्यम्) सत् और यम् तीन अक्षरों के योग से बना है। स जीव को कहते हैं। त ब्रह्माण्ड को और यम शासक का नाम है इस प्रकार सत्यम् ईश्वर का नाम है क्योंकि वह जीव और जगत् दोनों को शासन में रखता है फिर ऐसे प्रभु को किस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं। इसका उत्तर है—तत् सत्ये प्रतिष्ठितम्। वह ब्रह्म सत्य में प्रतिष्ठित है। संत तुलसी दास ने भी कहा है।

सांच बराबर तप नही,
झूठ बराबर पाप।
जाके हृदय साच है,
वाके हृदय प्रभु आप॥

अश्वमेधसहस्र च
सत्य च तुलया धृतम्।
अश्वमेधसहस्राद्धि
सत्यमेव विशिष्यते॥

सत्य रखा सहस्रों अश्वमेध रखा सत्य तुला लिया। होता है भार अधिक सत्य का यह मर्म शास्त्र ने खोल दिया।

सत्यप्रतिष्ठायां क्रियाफलाश्रय-त्वम्॥

योगदर्शन साधनपाद सूत्र ३६

सत धर्म में दृढ हो
निर्भय निशक रहो सदा।
सब कर्म हो जाये सफल
पाओ सकल सुख सम्पदा।
दृढ सत्य सम ससार मे
कोई न उत्तम कर्म है।
जो सत्य को धारण करे
वह पूर्ण पाता मर्म है॥

हिरण्मयेन पात्रेण
सत्यस्यापिहित मुखम्।
तत्त्व पूषन्नपावृणु
सत्यधर्माय दृष्टये। १५॥

ईशोपनिषद्

सत्य का मुख स्वर्ण के पात्र से ढका हुआ है। पूषन् उस सत्य धर्म के दिखाई देने के लिए तू उस आव-रण को हटा दे।

ममता ने सत्य छिपाया।
अब मम मन पात्र हटाये।
सत्य यथार्थ प्रकाश दिखाये।

(शेष पृष्ठ ६ पर)

धनुर्धारी भगवान् राम हमारे आदर्श नेता

लेο—श्री चमनलाल आर्य

卐

किसी देश का साहित्य उस देश, राष्ट्र, समाज और वहा के निवासियों के उन्नति व पतन की कहानी होती है। जितना समृद्ध साहित्य किसी देश-राष्ट्र का होगा, उतना ही देश-राष्ट्र समृद्ध होता है अर्थात् यहसमृद्ध साहित्य उसकी समृद्धि का द्योतक होता है।

हमारे देश (आर्यावर्त) भारत का साहित्य ससार के समस्त देशो के साहित्य से प्राचीनतम और समृद्ध है, इसमे लेश मात्र भी सदेह नहीं है। इसी कारण यह देश बडे लम्बे काल तक सारे ससार का गुरु बना रहा—जैसा कि मनु महाराज ने अपने ग्रथ मनुस्मृति मे लिखा—

एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजमन ।
स्व स्व चरित्र शिक्षेरन्
पृथिव्या सर्वमानवा ॥

इस साहित्य में वेद, ब्राह्मण ग्रन्थों आदि को छोड कर दो बडे ग्रन्थ वाल्मीकि रामायण और महाभारत सम्मिलित हैं। यदि इन दोनों महाकाव्यों को हमारे साहित्य से अलग कर दिया जाता है तो इतना पुराना और समृद्ध साहित्य का भव्य भवन पलभर में धराशायी हो जाये, इस में लेशमात्र भी सदेह नहीं है। ये दोनों महाकाव्य हमारे जीवन के अङ्ग हैं और भावनाओं से पूर्ण हैं। समस्त आर्य हिन्दु जाति की ये नींव हैं। परन्तु दुःख है कि कुछ पुरातत्ववेत्ता न जाने किन आधारों पर इन दोनों ग्रथों की घटनाओं को काल्पनिक कहते है और इनकी सत्ता से इन्कार करते हैं इस दुष्कृत्य से वे लोग करोडों लोगों की भावनाओं को महान् आघात पहुचाते हैं और सारी हिन्दु जाति की जडों को खोखला करने में लगे हैं, ऐसे लोगों से हमें सदा ही सावधान रहने की अत्यन्त आवश्यकता है।

इन दोनों महाकाव्यों में कतिपय सामान बातें घटनाएँ मिलती हैं। यद्यपि प्रस्तुत लेख (रामनौमी) में इन समानताओं का कोई सम्बन्ध तो नही, परन्तु इनका कुछ यहा दिग्दर्शन कराना अनुचित भी न होगा। जो कुछ इस प्रकार हैं—

(१) दोनो महाकाव्य हैं, दोनों ही दो ऋषियों ने लिखे हैं। तत्कालीन घटनाओ के आधार पर एक वाल्मीकि रामायण महर्षि वाल्मीकि ने लिखा; तो दूसरा महाभारत महर्षि वेदव्यास जी ने।

(२) दोनों ही महाकाव्य सस्कृत भाषा में हैं जो उस समय की कार्य-व्यवहार की भाषा थी।

(३) दोनों के मुख्य प्रसिद्ध पात्र हमारे पूज्य देव हैं। जिनको करोडों लोग ईश्वर अवतार ही नहीं अपितु स्वय ईश्वर के रूप में पूजा करते हैं मर्यादा पुरुषोत्तम राम तथा योगीराज कृष्णचन्द्र जी।

(४) दोनों में युद्ध की घटनाएँ वर्णित हैं, रामायण में राम-रावण का युद्ध और महाभारत में कौरवों पाण्डवों का युद्ध।

(५) दोनों सत्य, न्याय, सदाचार की विजय असत्य, अन्याय, और दुराचार पर होने के प्रतीक हैं।

(६) दोनों की युद्ध-घटनाएँ रामायण की अयोध्या नरेश महाराजा दशरथ की छोटी रानी केकैयी का हठ कि राम को १४ वर्ष बनवास दिया जावे और भरत को अयोध्या का राज्य। महाभारत में द्रोपदी के दुर्योधन आदि के प्रति अपमानजनक अपशब्द जैसे अन्धों के अन्धे ही होते हैं के कारण दुर्योधन के बदला लेने की भावना से हुई हैं।

(७) दोनों में युद्ध के पश्चात् अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न हुए।

(८) दोनों मे ही, राम जी विभीषण को लका का राजा बना कर, और महाभारत में महात्मा युधिष्ठिर को चक्रवर्ती राज्य का अभिषेक कर के, एक राम अयोध्या को और कृष्ण जी द्वारका जी को चले गये।

(९) दोनों के मुख्य पात्र युग पुरुष रामचन्द्र जी और योगीराज कृष्णचन्द्र जी, नित्य कार्य हवन यज्ञ आदि करने वाले, गुरुजनों का अभिनन्दन करने वाले आर्य मर्यादा के पोषक आर्य जीवन के द्योतक।

(१०) दोनों ही कुशल राजनीतिज्ञ हैं। महान् योद्धा राम धनुषधारी और कृष्ण सुदर्शन चक्रधारी अद्वितीय अद्भुत शक्ति के प्रभावशाली महापुरुष थे।

(११) दोनों ही हमारी प्राचीन संस्कृति और सभ्यता के आधार हैं और दोनों महापुरुषों के जन्म-दिन योगीराज कृष्ण जी का भाद्रमास की कृष्ण पक्ष की अष्टमी को (जो कृष्ण जन्माष्टमी के नाम से प्रसिद्ध है) और मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र जी का चैत्रशुक्ला नवमी (रामनवमी) को भारत में ही नहीं अपितु विदेशों में भी प्रति वर्ष बडे उल्लास और समारोहपूर्वक मनाया जाता है।

इसी युग पुरुष मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र जी का जन्म दिवस इस शनिवार दिनांक २६ मार्च को मनाया गया है। जैसा कि ऊपर संकेत किया गया है, आर्यपुत्र, महात्मा राम आर्य जीवन के प्रतीक हैं। इनके जीवन की छाप हमारे जीवनों पर लाखों वर्ष व्यतीत होने पर भी आज भी वैसी ही बनी हुई है। प्रातःकाल से लेकर शयन पर्यन्त न जाने कितने बार हम राम का नाम लेकर अपनी जिह्वा को पवित्र करते हैं। हर्ष-विषाद, खुशी, गमी कैसा भी अवसर क्यों न हो हम 'राम' शब्द का उच्चारण कर के खुशी, प्रसन्नता को प्रकट करते हैं। अथवा गमी दुःख में सान्त्वना भी इसी नाम से लेते हैं। प्रातःकाल एक दूसरे का अभिनन्दन इसी नाम से 'राम-राम' कह कर करते हैं और एक दूसरे की विदाई के अवसर पर भी 'राम-राम' कहकर ही अलग होते हैं। यही नहीं हमारे नाम इसी शब्द राम से आरम्भ होते हैं और यही 'राम' शब्द अन्त में भी आता है—जैसे रामप्रसाद या राजाराम आदि।

ऐसे हमारे हृदयों के सम्राट् रामचन्द्र जी अनेक लौकिक पारलौकिक गुणों के धनी थे। महान् वाल्मीकि जी ने अपने ग्रन्थ में उनके अनेकों गुणों का वर्णन बडे सुन्दर ढग से किया है। रामचन्द्र जी एक आदर्श पुरुष थे। उन्होंने पुत्र, भाई, मित्र, पति, प्रजा, राजा, और आगन्तुकों तथा उपकार करने वालों आदि के सम्बन्धों को आदर्श रूप में उपस्थित किया। जिससे विषम से विषम परिस्थितियों में भी वह इनका दृढतापूर्वक पालन करते रहे, जिस कारण वह मर्यादा पुरुषोत्तम कहलाये। वह जितने महान् थे, उतने विनम्र भी थे। समय-समय पर जब लक्ष्मण को किसी के द्वारा राम के प्रति कुछ अनिष्ट होने का सन्देह होता, तो लक्ष्मण बडे आवेश में आकर उसकी ओर बडी क्रूरता से पेश आना चाहते तो शीतल स्वभावी राम अपनी दूरदर्शिता और मीठे बचनों से उसके क्रोध को शांत कर दिया करते थे। ऐसे राम जी को वन जाने की पिता की आज्ञा के समय, धनुष टूटने के समय परशुराम के आवेश में आने के समय और राम लक्ष्मण माता सीता को वापस लाने के लिए जब महात्मा भरत कुछ सेना सहित वन पहुँचे, उस समय के कुछ उदाहरण हैं, जब श्री राम जी ने लक्ष्मण के क्रोध को शान्त किया। राम की कुछ बोलचाल का वर्णन वाल्मीकि जी ने कुछ स्थलों पर इस प्रकार किया—

स च नित्य प्रशान्तात्मा
मृदुपूर्णं च भाषते।
उच्यमानोऽपि परुष
नोत्तरं प्रतिपद्यते ॥

राम सदा शान्त रहते थे, बहुत मीठी भाषा बोलते थे। यदि कोई कटु भाषण करता था तो उस कडवी बात का उत्तर ही नहीं देते थे।

कदाचिदुपकारेण
कृतेनैकेन तुष्यति।
न स्मरत्यपकाराणा
शतमप्यात्मवत्तया ॥

यदि कोई राम के साथ एक भी उपकार का काम कर देता तो वे इतने से सन्तुष्ट हो जाते थे। उनको हानि पहुचाने के लिए कोई शतशः विपरीत काम करता था, तो भी वे अपने आत्मिक बल के कारण उसकी जरा भी परवाह नहीं करते थे।

वह शान्ति प्रिय थे। माता सीता को भी रावण की कैद से छुडाने के हेतु वह युद्ध का आश्रय लेने के विरुद्ध थे। युद्ध की सारी तैयारी होने पर भी उन्होंने बाली पुत्र, अगद को अपना दूत बना कर रावण के पास भेजा यह सन्देश देकर कि अच्छा हो बिना युद्ध के रावण माता सीता को आदरपूर्वक लौटा दे, परन्तु रावण ने इस शांति सन्देश का मजाक उडाया, तो विवश होकर राम को युद्ध करना पडा। ठीक इसी प्रकार महाभारत में श्रीकृष्ण युद्ध नहीं चाहते थे और इसी कारण पाण्डवों की ओर से स्वयं योगिराज कृष्ण जी केवल पांच

गांवों का प्रस्ताव लेकर दुर्योधन के पास गए थे, परन्तु जब उसने कृष्ण को सूई की नोक के बराबर की भूमि देने से इन्कार किया तो विवश हो युद्ध करना पड़ा।

कुछ वैदिक शब्द राम के जीवन में पूरी तरह से लागू होते हैं। उन में से एक शब्द सामवेद मन्त्र १८५ में आया मित्र है। मित्र का अर्थ है जिनका स्नेह प्रत्येक प्रकार से त्राण करने वाला होता है। ऐसे महापुरुष अपने सम्पर्क में आने वालों को बुराई से बचाते हैं और उनके सद्गुणों की प्रशंसा करते हैं। सकट आने पर इसके प्रत्युपकारों में प्राणमात्र से सहायता करते हैं और आवश्यकता पड़ने पर तो सब कुछ दे देते हैं। राम की इस प्रकार की मित्रता का उदाहरण सुग्रीव के साथ मिलता है। महात्मा राम सुग्रीव को कितना प्यार करते और उसकी सुरक्षा का उनको कितना ध्यान रहता था। यह लका में युद्ध की तैयारी के समय की एक छोटी सी घटना से स्पष्ट हो जाता है। समुद्र पार कर के वानर सेना जब लका में पहुची तो जैसे राम सुग्रीव के साथ सुमेरु पर्वत पर खड़े कुछ निरीक्षण कर रहे थे, कि पल भर में देखते ही देखते सुग्रीव पहाड़ से छलांग मार कर रावण के पास जा पहुंचा और कुछ खरी-खोटी सुना कर रावण के साथ तीन पांच कर रहा था तो आर्य पुत्र राम को बड़ी घबराहट हो रही थी और नाना प्रकार के विचार उनके मन को चिन्तित कर रहे थे। परन्तु ज्यों ही सुग्रीव वापस सुमेरु पर्वत पर राम के पास आया, तो राम ने कहा—

असम्मन्त्र्य मया सार्धं
यदिदं साहसं कृतम्।
एवं साहसकर्माणि
न कुर्वन्ति जनेश्वराः॥

प्यारे सुग्रीव मेरे साथ परामर्श किये बिना तुमने जो यह साहसिक कार्य किया इस प्रकार का साहस राजा लोगों को करना उचित नहीं है।

इदानीं मा कृथा वीर
एवं विधमचिन्तितम्।
त्वयि किञ्चित् समापन्ने
किं कार्यं सीतया मम॥

हे वीर! अब बिना विचारे इस प्रकार के काम मत करना। यदि तुम्हें कुछ हो जाता (कुछ क्षति हो जाती) तो मुझे सीता को प्राप्त करने का फिर क्या प्रयोजन था।

भरतेन महाबाहो
लक्ष्मणेन यवीयसा।
शत्रुघ्नेन च शत्रुघ्न
स्वशरीरेण वा पुन॥

हे महाबाहो! भरत, लक्ष्मण को पुत्र और छोटे भाई शत्रुघ्न से और यहां तक कि अपने जीवन से फिर मुझे क्या मतलब रहता।

त्वयि चानागते पूर्वमिति
मे निश्चिता मतिः।
जानतश्चापि ते कार्यं
महेन्द्रवरुणोपमम्॥
हत्वाहं रावणं सख्ये
सपुत्रं बलवाहनम्।
अभिषिच्य च लङ्कायां
विभीषणमथापि च।
भरते राज्यमावेश्य
त्यक्ष्ये देहं महाबल॥

यदि किन्हीं कारणों से तुम वापस आने में असमर्थ होते, तो मैंने निश्चय कर लिया था कि युद्ध में रावण को परिवार और सेना सहित मार कर विभीषण को लका में राजतिलक कर के और अयोध्या का राज्य भरत को सौंप कर मैं अपना शरीर त्याग देता।

इसी प्रकार विभीषण के साथ भी मर्यादा पुरुषोत्तम की आत्मीयता थी। लका के युद्ध में मेघनाद के द्वारा वीर लक्ष्मण के आहत और मूर्च्छित होने पर राम ने जहां और अधूरे काम को देख कर खिन्नता प्रकट की तो वहां विभीषण को दिये वचन का पूर्ण न होना उन्हें (राम को) सब से अधिक खटक रहा था। विभीषण का ध्यान कर उन्होंने कहा—

यन्मया न कृतो राजा लङ्कायां हि विभीषणः।

अर्थात् मैं लका का राज्य विभीषण को न दे सका, इसका मुझे बहुत खेद है। ऐसे मित्र भला आज कहां मिलेंगे। आज तो पेट में छुरा घोंपने वाले मित्र रूप में शत्रु बहु ओर विचरण करते दीख पड़ते हैं।

आर्य पुत्र राम बड़े नीतिमान्, पारखी और अपनी दूरदर्शिता से चुटकियों में विषम परिस्थितियों को सुलझाने में बड़े कुशल थे। लका में रावण के मरने पर, राम की सेना में जब विजय के बाजे बजने लगे, तो अकस्मात् ही बालि पुत्र योद्धा अंगद आवेश में भरा हुआ राम को आकर बोला—"कि यह विजय के बाजे बन्द कर दिये जायें, यह विजय आपकी न होकर मेरी अपनी विजय है। आवेश में आये अंगद ने आगे कहा कि मेरे पिता के दो शत्रु थे—एक लंकापति रावण, दूसरे उनकी हत्या करने वाले आप। आप (राम) मैंने आपको पूर्ण सहयोग देकर एक योग्य पुत्र के नाते अपने पिता के एक शत्रु रावण को समाप्त कर दिया। इस प्रकार पिता का आधा ऋण तो मैंने चुका दिया, शेष आधा आपको युद्ध मे पराजित कर के चुकाना है। अत अब मेरा आपका युद्ध होगा। राम ने बड़ी दूरदर्शिता से इस विकट परिस्थिति को चुटकियो मे इस प्रकार सुलझा दिया। उन्होंने अगद की पीठ थपथपाते हुए कहा कि निश्चय ही तुम वीर पिता के अनुव्रत पुत्र हो और सचमुच मैं इस विजय को तुम्हारी ही विजय स्वीकारता हूँ, परन्तु मैं भी अपने को इस विजय का भागीदार समझता हू। राम ने कहा—अगद तुम्हें स्मरण हो कि जीवन के अन्तिम क्षणों मे तुम्हारे पिता ने तुम को मुझे सौंपते हुए मुझसे यह वचन लिया था कि मैं तुम्हें अपने पुत्र की तरह सरक्षण दू। इस प्रकार तुम मेरे पुत्र हो और शास्त्रों का यह कहना है कि—

सर्वत्र जयमिच्छेत् पुत्रादिच्छेत् पराजयम्।

इस रूप में तुम जीते और मैं हारा। तुम्हारी इस जीत में मैं भी सम्मिलित होता हू। मुझे दूसरी प्रसन्नता यह है कि मैं तुम्हारे पिता को दिये गए वचन का पालन कर सका।

रामचन्द्र जी बड़े पारखी भी थे और शरणागत को निर्भयता भी प्रदान कर दिया करते थे। जब रावण ने अपने भाई महात्मा विभीषण की बात सीता जी को आदरपूर्वक लौटाने की बात न मानी तो रावण से अपमानित होकर जब विभीषण राम के दल में राम से मिलने आया तो केवल रामचन्द्र जी को छोड़ कर शेष सब का यही मत था कि यह शत्रु का भाई है। अत इसका कुछ भी विश्वास न करना चाहिए। बड़ी तर्क वितर्क के बाद राम ने विभीषण के अभिवादन करने के बारे में कहा—

आकारश्छाद्यमानोऽपि
न शक्यो विनिगूहितुम्।
बलाद्धि विवृणोत्येव
भावमन्तर्गतं नृणाम्॥

अर्थात् मनुष्य अपने आकार को छिपाने की कोशिश करने पर भी नहीं छिपा सकता क्योंकि अन्दर के विचार बलपूर्वक आकार आकृति पर प्रकट होते रहते हैं। अतः राम ने विभीषण का स्वागत कर के उसको लकेश कह कर, उसके भावों का जाना और आगे चल कर इसी शत्रु के भाई ने राम की पूरी सहायता की।

गीता के शब्दों मे "समत्वं योग उच्यते।" रामचन्द्र जी पूरे योगी थे। हर्ष-विषाद में वह एक समान रहते थे। राज्याभिषेक का समाचार पाकर वह फूल कर कुप्पा नहीं हुए और वन जाने की आज्ञा पाकर किसी तरह के विषाद के कारण उनकी आकृति पर कोई विकार नहीं आया।

न वनं गन्तुकामस्य
त्यजतश्च वसुन्धराम्।
सर्वलोकातिगस्येव
लक्ष्यते चित्तविक्रिया॥
सर्वो ह्यभिजनः श्रीमान्
श्रीमतः सत्यवादिनः।
नालक्षयत रामस्य
किञ्चिदाकारमानने॥

यह तो सर्वविदित है कि वह कितने महान् आज्ञाकारी पुत्र थे और भाई भरत से और माता केकैयी से भी कितना प्रेम करते थे। एक प्रसग मे राम ने कहा कि मैं अपने भाई भरत के लिए हर्षपूर्वक सीता, राज्य, प्राण, इष्ट पदार्थ एवं धन सब कुछ स्वय ही दे सकता हू।" फिर राजा के कहने पर और तुम्हारा (केकैयी) प्रिय करने के लिए तो क्यों नहीं दूगा। यही नहीं केकैयी को राम ने यह भी कहा "मैं पिता जी की आज्ञा से अग्नि में भी प्रवेश कर सकता हू। हलाहल विष का पान कर सकता हूं, और समुद्र में कूद सकता हूँ। राम एक बात कह कर दूसरी बात कभी नहीं कहा करता।

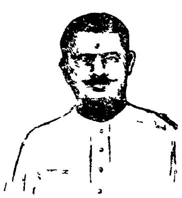
अहं सीतां हि राज्यं च
प्राणानिष्टान् धनानि च।
हृष्टो भ्रात्रे स्वयं दद्याम्
भरतायाप्रचोदित॥
किं पुनर्मनुजेन्द्रेण
स्वयं पित्रा प्रचोदितः।
तव च प्रियकार्यार्थं
प्रतिज्ञामनुपालयन्॥
अहो धिङ्नार्हसे देवि
वक्तुं मामीदृशं वचः।
अहं हि वचनाद्राज्ञः
पतेयमपि पावके॥
भक्षयेयं विषं तीक्ष्णं
मज्जेयमपि चार्णवे।
तद् ब्रूहि वचनं देवि
राज्ञो यदभिकाङ्क्षितम्।
करिष्ये प्रतिजाने च
रामो द्विर्नाभिभाषते॥

श्री राम जी प्रजा को पुत्र समान प्यार करते थे, और प्रजा जन भी उनको पिता से भी अधिक पालन पोषण करने वाले मानते थे। उनके राज्य की विशेषताएं महर्षि वाल्मीकि तथा सन्त तुलसीदास जी ने बड़े

(शेष ६ पृष्ठ पर)

महान् शहीद बिस्मिल

—प्रेमकृष्ण खन्ना



अमर शहीद प० रामप्रसाद 'बिस्मिल' भारतीय सशस्त्र क्रान्तिकारी प्रयास के इतिहास के 'काकोरी काल' में दल के सर्वप्रमुख सैनिक नेता थे और 'काकोरी केस' में उन्हे सशस्त्र क्रांतिकारी देशभक्ति का सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार 'प्राणदड' मिला था।

उनके पूर्वज मध्य प्रदेश के तोमरघार के निवासी थे और दिनों के फेर से ग्रस्त होकर चरम सीमा की निर्धनता में उत्तर प्रदेश के नगर शाहजहांपुर में आ बसे थे। उनके पिता का नाम प० मुरलीधर जी था। रामप्रसाद जी का जन्म ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष की एकादशी सम्वत् १९५४ विक्रमी मे हुआ था। उन्होने बचपन मे ही आर्यसमाजी शिक्षा पाई थी। उस समय की आर्यसमाजी शिक्षा न केवल सामाजिक रूप में अपितु राजनीतिक रूप में भी क्रांति की शिक्षा थी। अतः युवा होने के पूर्व ही उनका सम्पर्क तत्कालीन सशस्त्र क्रांतिकारियों से हो गया था।

प० गेदालाल दीक्षित के नेतृत्व में क्रान्ति प्रयास के परिणामतः जो 'मैनपुरी षड्यन्त्र केस' चला उस मे रामप्रसाद जी फरार हो गए थे और अन्त तक पुलिस को पकड में नहीं आये। जब सरकार ने उक्त षड्यन्त्र केस के सम्बन्ध में माफी की घोषणा कर दी तभी वे प्रकट हुए और पुन सशस्त्र क्रान्ति के प्रयास में लग गए। काकोरी षड्यन्त्र केस में अग्रेज सरकार ने उन्हे फासी की सजा दी। १९ दिसम्बर सन् १९२७ को उन्हें गोरखपुर जेल में फांसी दे दी गयी।

प० रामप्रसाद एक अच्छे लेखक भी थे और शायरी भी करते थे। देश के नौजवानों को क्रांति प्रयास में भाग लेने को प्रेरित करने के लिए उन्होंने कई बहुत अच्छी किताबें लिखीं और बडा आर्थिक कष्ट उठाकर उन्हें प्रकाशित कराया तथा वितरित किया और बडी आर्थिक हानि उठायी। ये पुस्तकें थीं

(१) बोलशेविकों की करतूतें, (२) मन की लहर, (३) कैथेराइन, (४) स्वदेशी रग, (५) क्रान्तिकारी जीवन (जो प्रकाशित न हो सकी)। कई अग्रेजी और बगला की पुस्तकों का अनुवाद भी किया (वे भी प्रकाशित न हो सकीं)। 'राम' तथा 'अज्ञात' नाम से कई मासिक पत्रिकाओं में उन्होंने लेख भी लिखे जो बडे चाव से पढ़े गये।

लेखक के रूप में रामप्रसाद जी की सर्वोत्कृष्ट कृति 'आत्मकथा' है। इसे उन्होंने फांसी की कोठरी मे फासी पर झूलने के तीन दिन पहले तक अधिकारियों की नजर बचा कर लिखा था और उसे तीन खेपों में, एक सहानुभूति रखने वाले जेल वार्डर के हाथ, गोरखपुर से प्रकाशित होने वाले सुप्रसिद्ध कांग्रेसी पत्र 'स्वदेश' के सम्पादक श्री दशरथ प्रसाद द्विवेदी के पास भेजा था। अन्तत. इस जीवनी की यह पाण्डुलिपि अमर शहीद गणेशशकर विद्यार्थी ('प्रताप' कानपुर के यशस्वी सम्पादक) के पास पहुची, जिन्होंने समयानुरूप सुसम्पादित कर के उसे 'काकोरी के शहीद' नामक पुस्तक में छाप कर प्रकाशित किया। वह पुस्तक सरकार द्वारा जब्त कर ली गई।

जब रामप्रसाद जी फासी देने के लिए ले जाये जा रहे थे तो 'वन्देमातरम्' 'भारत माता की जय' कहते हुए वह बड़े उत्साह से उठ खडे हुए और गा उठे।

मालिक तेरी रजा रहे
और तू ही तू रहे।
बाकी न मैं रहू,
न मेरी आरजू रहे।
जब तक कि तन में जान
जिगर में लहू रहे।
तेरा ही जिक्र या
तेरी ही जुस्तजू रहे॥

फासी घर के दरवाजे पर उन्होंने नारा लगाया था : 'आइ विश दि डाउनफाल आफ दि ब्रिटिश एम्पायर।' (मैं ब्रिटिश साम्राज्य का विनाश चाहता हूं!)

अमर शहीद रामप्रसाद जी की यह इच्छा तो भारत में २० वर्ष के अन्दर ही पूरी हो गई और १५ अगस्त १९४७ को स्वराज्य की घोषणा हो गई। उनकी शहादत के दिन उनको श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए हमें याद रखना है कि उनके सपने का ऐसा जनतन्त्रीय शासन अभी तक यहा नहीं स्थापित हो पाया जिसमें मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण सम्भव न हो।'

●

(पृष्ठ ३ का शेष)

व्रत से सत्य

सत्य का आस्वादन

१ मिथ्या और अनित्य पदार्थों को सत्य समझने के भ्रम से ही मनुष्य को दुःखमय जीवन भोगना पडता है।

२ देखो जो मनुष्य भ्रमात्मक भावों से मुक्त है और जिसकी दृष्टि स्वच्छ है उसके लिये दु ख और अन्धकार का अन्त हो जाता है और आनन्द उसे प्राप्त होता है।

३ जिसने अविच्छिन्न बातों से अपने को मुक्त कर लिया है और जिसने सत्य को पा लिया है उसके लिए स्वर्ग पृथ्वी से भी अधिक समीप है।

४ मनुष्य जैसी उच्च योनि को प्राप्त कर लेने से भी कोई लाभ नही अगर आत्मा ने सत्य का आस्वादन नही किया।

५ कोई भी बात हो उसमें सत्य को झूठ से पृथक् कर देना चाहिए।

६ मेधावी का कर्तव्य है, वह पुरुष धन्य है जिसने गम्भीरता पूर्वक स्वाध्याय किया है और सत्य को पा लिया है, वह ऐसे रास्ते से चलेगा जिससे फिर उसे दुनिया में आना न पडे।

७ नि सदेह जिन लोगों ने ध्यान और धारणा के द्वारा सत्य को पा लिया उन्हें और भावी जन्मों का ख्याल करने की जरूरत नही है।

८ जन्मों की जननी अविद्या से छुटकारा पाना और सच्चिदानन्द को प्राप्त करने की चेष्टा करना ही बुद्धिमानी है अथवा जिन्होने विमर्षण और मनन के द्वारा सत्य को पा लिया है उनके लिये पुन: जन्म नहीं है।

देखो जो पुरुष मुक्ति को जानता है और वह मोह को जीतने का प्रयत्न करता है भविष्य में आने वाले सब दुख उससे दूर हो जाते हैं।

१० काम क्रोध और मोह ज्यो ज्यों मनुष्य को छोडते जाते हैं, दु ख भी उनका अनुसरण करके धीरे-धीरे नष्ट हो जाते हैं। सत्य ही सर्वोपरि है, सत्य ही जीवन की सफलता का आधार है।

सच्चाई ही हर मनुष्य का धर्म है।

सच्चाई कभी भी खत्म नही हो सकती है।

(सत्य प्र०) तथा सत्याचरण का ठीक ठीक फल यह है कि जब मनुष्य निश्चय करके केवल सत्य ही मानता बोलता और करता है तब वह जो जो योग्य काम करता और करना चाहता है वे सब सफल हो जाते हैं।

(पृष्ठ ५ का शेष)

भगवान् राम...

मनोहर भाव भरे शब्दों में वर्णन किये हैं। यही कारण था कि राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में भी रामराज्य सा राज्य स्थापित करने के स्वप्न लिया करते थे, परन्तु दु ख है कि कालान्तर में कुछ लोगों की स्वार्थपरता के कारण वह स्वप्नमात्र ही बन कर रह गये।

आज देश विघटन और अराजकता, नेताओं की स्वार्थपरता और भ्रष्टाचार के गहरे खड्ड में आ पड़ा है। मानवता दानवता में बदल गई है। सब रावण, हिरण्यकश्यप, और अराष्ट्रीयवादी बने हुए हैं। कोई भी देश हितैषी, प्रजाजनों को हित चिन्तक दिखाई नहीं देता, कहने को तो सत्ताधारी महान् देश हितैषी अपने आपको कहते हैं।

ऐसे विकट समय में मातृभूमि और जनता की भलाई व रक्षा के लिए राम जैसे योद्धा बली और नीतिनिपुण शासक नेता की नितात आवश्यकता है।

अत इस वर्ष रामनवमी राम जन्म दिवस के अवसर पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए कि हम अपने ध्येय से कितने नीचे चले गए हैं और अभी भी जा रहे हैं। हमें राम के जीवन का विधिवत् निष्ठापूर्वक अध्ययन कर के उसके अनुकूल अपना आचरण बनाना चाहिए केवल जलूसों, कीर्तनो और जलसे और भाव भरे भाषणों से अब काम चलने वाला नहीं है। ठोस कदम उठाकर, सक्रिय होकर हम देश के नैतिक मूल्यों की रक्षा कर पायेंगे। समय रहते हमें चूकना नहीं चाहिए। यही समय जागरूक होकर अराष्ट्रीय दूषित वृत्तियों का साहसपूर्वक सामना कर के उनको और उभरने से रोकना होगा।

□



लाखों लोगों की पसंद
एम डी एच दंत मंजन
23 जडी बूटियो से निर्मित
आयुर्वेदिक औषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दंत सुरक्षा
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
प्रतिदिन प्रयोग करे
सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9/44. इण्डस्ट्रियल एरिया. कीर्ति नगर. नई दिल्ली-110015 फोन : 537987, 537341



अपने बालों को स्वस्थ, प्राकृतिक काला व चमकदार
बनाइये और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी
सुगंध से महकाइये।
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9 44 इण्डस्ट्रियल एरिया कीर्ति नगर
नई दिल्ली 110015
539609 537987



आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
नई दिल्ली-110005
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
align point

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N. No. 32387/77 Post in N.D.P.S.O. on 9, 10-6-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० नं० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

(पृष्ठ १ का शेष)

मन्दिर की मुक्ति…

निर्माण हटाए जाएंगे। लाखों की आबादी का स्थानान्तरण होगा। इसके भारी पैमाने पर पुनर्निर्माण के लिए सरकार को अरबों खर्च करने होंगे।

इस बीच गृहमन्त्री सरदार बूटासिंह ने उचित ही घोषणा की है कि जब तक गुरुद्वारा को गुरुद्वारा बनाए रखने के लिए शिरोमणि प्रबन्धक समिति सरकार को आश्वासन नहीं देती, तब तक मन्दिर परिसर का नियन्त्रण उसे नहीं सौंपा जाएगा। आखिर प्रबन्धक समिति के सदस्यों के बीच आपसी खींचतान और पैंतरेबाजी के कारण ही तो पिछले छह-सात वर्षों से स्वर्ण मन्दिर धर्म के बदले कुटिल राजनीति के चोले में समाज विरोधी तत्वों का सदर मुकाम बनता गया। धर्म को गन्दा करने का स्थल तो बाहरी चौकसी से बना रह सकता है लेकिन पंजाब प्रदेश की धरती को लहूलुहान करने वाले आतकवादियों और उनके विदेशी संरक्षकों के खिलाफ मोर्चा तो लम्बा चलेगा। ●

जम्मू कश्मीर आर्य प्र० नि० सभा का निर्वाचन

आर्य प्रतिनिधि सभा जम्मू काश्मीर का वार्षिक चुनाव २९ मई को सम्पन्न हुआ। सर्वसम्मति से डॉ० योगेन्द्र कुमार शास्त्री जी सभा प्रधान चुने गये। शेष कार्यकारिणी चुनने का अधिकार भी सर्वसम्मति से शास्त्री जी को दिया गया। उन्होंने श्री चन्द्रप्रकाश जी को मन्त्री तथा श्री देवराज सेठी जी को कोषाध्यक्ष चुना।

योगेन्द्र कुमार
(प्रधान)
आर्य प्रतिनिधि सभा जम्मू काश्मीर

● मेरी इच्छा ●

मेरी इच्छा मेरा भारत फिर महान् बन जाए।
इसकी कीर्ति पताका चहुं दिशि फहराए ॥

धनधान्य से परिपूजित होकर स्वावलम्बी बन जाए।
सारी दुनिया की नजरों में दाता कहलाए ॥

सब का जीवन सुखमय हो निर्धनता भग जाए।
दीनों के प्रति दयावान हों दुष्टों से भिड़ जाए ॥

ऊँच नीच का भेद मिटे विषमता न रह जाए।
विश्व गुरु फिर से कहला कर सब को मानवता का पाठ पढ़ाए ॥

रचयिता—शकुनचन्द गुप्त विद्यावाचस्पति
लालगंज, जि० रायबरेली

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ३५ | रविवार १९ जून १९८८ | सृष्टि संवत १९७२९४९०८८ | ज्येष्ठ २०४५ | दयानन्दाब्द—१६४
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर ३० पौंड

प्रशिक्षित आर्य वीर ही देश, जाति और धर्म की रक्षा कर सकते हैं

—स्वामी आनन्द बोध सरस्वती

'आज देश के ऊपर विपत्ति के बादल मंडरा रहे हैं धर्म के ऊपर मुसीबत आई है अनेक स्थानों पर धर्मान्तरण हो रहा है भाई भाई को जान का दुश्मन बना है। मुझे विश्वास है कि इस मुसीबत से पार पाने में आर्यसमाज द्वारा प्रशिक्षित युवक ही सफल हो सकेंगे।' ये उद्‌गार सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने १ जून १९८८ से १२ जून १९८८ तक दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के अन्तर्गत लगाए गए आर्य वीर दल प्रशिक्षण शिविर के रविवार १२ जून को दयानन्द मॉडल स्कूल विवेक विहार में आयोजित समापन समारोह में व्यक्त किए। श्रद्धेय स्वामी जी महाराज ने आशा व्यक्त की कि ये प्रशिक्षित युवक राष्ट्र को नई दिशा प्रदान करेंगे। आर्यसमाज के कार्य को आगे बढ़ायेंगे तथा मानवमात्र के कल्याण के लिए कार्य करेंगे।

इस समारोह के प्रारम्भ में दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डॉ० धर्मपाल ने माननीय स्वामी आनन्द बोध सरस्वती का स्वागत करते हुए बताया कि दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा गत पांच वर्षों से आर्य युवाओं के संगठन एवं प्रशिक्षण के लिए प्रयत्नशील है। हम ने इस दौरान ६ वार्षिक दस दिवसीय प्रशिक्षण शिविर आयोजित किए हैं तथा कई छोटे छोटे शिविर लगाए हैं। गत वर्षों में विभिन्न विद्यालयों में तथा नेशनल स्टेडियम व तालकटोरा स्टेडियम में आर्य युवा महासम्मेलनों का आयोजन भी इसी दिशा में विनम्र प्रयास है। हमें विश्वास है कि स्वामी जी महाराज के नेतृत्व में हम सब मिलकर वैदिक सिद्धान्तों के अनुरूप कार्य करेंगे तथा आर्यसमाज के कार्य को आगे बढ़ायेंगे। हमारे सामने धर्मान्तरण की समस्या एक चुनौती है जिस का सामना आगे चलकर ये आर्य वीर करेंगे।

माननीय स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती का डा० धर्मपाल श्री सूर्यदेव श्री बालदिवाकर हंस श्री प्रियव्रतदास रसवन्त, डा० ज्ञान प्रकाश श्री श्यामसुन्दर विरमानी, श्री जयप्रकाश आर्य तथा श्री विश्वम्भर नाथ भाटिया ने पुष्पमालाओं से स्वागत किया। इस समारोह में दिल्ली के सभी कोनों से ५०० से अधिक आर्य जन पधारे थे।

तदोपरान्त श्री बालदिवाकर हंस प्रधान संचालक सार्वदेशिक आर्य वीर दल ने सभी आर्य वीरों को प्रतिज्ञा दिलाकर दीक्षित किया। तत्पश्चात विद्यालय के विशाल प्रांगण में आर्य वीरों की सज्जित टुकड़ियों का स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने निरीक्षण किया। पथ प्रयाण करते हुए सभी आर्य वीरों तथा वीरांगनाओं ने स्वामी जी का सैनिक नमस्ते द्वारा अभिवादन तथा सम्मान किया। आर्य वीरों तथा वीरांगनाओं ने मार्च पास्ट व्यायाम योग लाठी भाला तलवार, बरछी चाकू आदि का प्रदर्शन किया।

इस शिविर का उद्‌घाटन २ जून १९८८ को प्रातः सभा के महामन्त्री श्री सूर्यदेव की अध्यक्षता में आयोजित समारोह में श्री जयप्रकाश आर्य ने किया था। इस में ६५ आर्य वीरों तथा १५ आर्य वीरांगनाओं ने भाग लिया। श्री हरिसिंह श्री विनोद आर्य श्री कृष्णपाल श्री रणधीर श्री अतुल कुमार श्री सुरेन्द्र कुमार ने प्रशिक्षण दिया।

समापन समारोह में स्वामी आनन्द बोध सरस्वती के अतिरिक्त डा० धर्मपाल श्री सूर्यदेव डा० महेश विद्यालंकार श्री शिवकुमार शास्त्री श्री ओ३म्वीर शास्त्री श्री बाल दिवाकर हंस, श्री जयप्रकाश आर्य, श्री विश्वम्भर नाथ भाटिया श्री प्रियव्रतदास रसवन्त आदि महानुभावों ने भी आर्य वीरों के सुष्ठु कार्य की सराहना की तथा भविष्य के लिए शुभकामनाएं व्यक्त की।

श्री हरि शंकर श्री नरेन्द्रसिंह श्री मुकुट कुमार को क्रमशः प्रथम द्वितीय, तृतीय पुरस्कार दिये गये। श्री सत्यपाल श्री अश्विनी कुमार श्री ओमप्रकाश, श्री पीताम्बर श्री सत्य शर्मा श्री विजय सिंह को शाखानायक बनाया गया। सभा के वेदप्रचार विभाग की ओर से शुक्रवार व शनिवार को वेद प्रचार किया गया। बौद्धिक ज्ञान में श्री ओ३मवीर शास्त्री श्री ओमप्रकाश आर्य श्री ओमवीर शास्त्री, श्री अशोक विद्यालंकार श्री रामलाल शास्त्री डा० मुकन्दयाल भूटानी श्री महावीर बत्रा श्री यशपाल शास्त्री और डा० सत्यकाम वेदालंकार ने सहयोग दिया।

सभा महामन्त्री श्री सूर्यदेव ने सभा में आगत महानुभावों तथा कार्यक्रम में सहयोग देने वाले सभी आर्य जनों का धन्यवाद किया।

श्यामसुन्दर विरमानी
(मन्त्री)

आर्यसमाज दीवान हाल का वार्षिक अधिवेशन सम्पन्न

आर्यसमाज की भावी योजनाओं के लिए साढ़े तीन लाख रुपये खर्च किये जायेंगे

दिल्ली, १२ जून, रविवार।

आर्यसमाज दीवान हाल का वार्षिक अधिवेशन एवं निर्वाचन सम्पन्न हुआ। सद्‌भावना एवं शांतिमय वातावरण में सम्पन्न हुए इस निर्वाचन में श्री सूर्यदेव को प्रधान एवं श्री मूलचन्द गुप्त को मन्त्री सर्व सम्मति से निर्वाचित किया गया।

इस अवसर पर स्वामी आनन्द बोध ने कहा—आर्यसमाज के कार्यों कार्यों को और अधिक गति देने के लिए हमें योजनाबद्ध तरीके से कार्य करना चाहिए। इस समय सभी अन्तरंग सदस्यों को नवीन सदस्य बनाओ अभियान चलाना चाहिए साथ ही सभी सदस्य अपने परिवार को भी लेकर साप्ताहिक सत्संग में उपस्थित होने चाहिए। उन्होंने नव-निर्वाचित अधिकारियों से आग्रह पूर्वक कहा—ग्रामीण क्षेत्रों में आर्य समाज के प्रचार को बढ़ाय। समाज

(शेष पृष्ठ ६ पर)

सम्पादक—प० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

गायत्री की गौरव महिमा

महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज

卐

चारों वेदों के २० हजार ३०० मन्त्र बतलाए जाते हैं। इन में से हमारे पूर्वजों ने केवल एक मन्त्र ऐसा चुना है जिसे गुरु मन्त्र कहा जाता है। इसी मन्त्र को यह विशेषता क्यों दी गई, कुछ तो इस में बात होगी? बात यह है कि परमात्मा की उपासना के जो ३ अंग हैं—(१) स्तुति, (२) प्रार्थना, और (३) उपासना, ये तीनों गायत्री मन्त्र या गुरु मन्त्र में पाए जाते हैं। गायत्री द्वारा उपासना के पांच अंग हैं—प्रणव, व्याहृति, मन्त्र, यज्ञाहुति, और प्राणायाम।

प्रणव—ओ३म् को कहते हैं। ओ३म् की उपासना के भी तीन प्रकार हैं—एक मात्रा का, दो मात्रा का और तीन मात्रा का। एक मात्रा का प्रयोजन यह है कि अपने शरीर द्वारा ऊँचे स्वर से 'ओ३म्' का उच्चारण करना और तब सारे संसार को परमात्मा का विराट रूप समझ कर यह अनुभव करना कि सारी दुनिया के लोग मेरे साथ मिल कर ओ३म्' का उच्चारण कर रहे हैं। प्रश्नोपनिषद् में पिप्पलाद ऋषि कहते हैं कि 'ओ३म्' की एक मात्रा से उपासना करने वाले को वैभव, सांसारिक विभूति और भौतिक पदार्थ मिलते हैं। धन-दौलत, मकान सारे वैभव मिलते हैं। पढ़ने वाले लोगों में तो कुछ लोग इतना ही कहेंगे कि बस इतना पर्याप्त है। परन्तु पिप्पलाद ऋषि कहते हैं कि एक मात्रा द्वारा उपासना करने वाले को मानसिक शान्ति नहीं मिलेगी। मानसिक शान्ति प्राप्त करने के लिए दो मात्राओं से उपासना करनी होगी और उस का ढंग यह है कि स्थूल शरीर को भूल जाओ, सूक्ष्म शरीर में प्रवेश करो और ध्यान चन्द्रमा का करो तब अन्दर ही अन्दर मानसिक जप करो इस से मानसिक शान्ति भी मिल जाएगी? परन्तु आत्मिक आनंद नहीं मिलेगा। आत्मिक आनन्द के लिए स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर दोनों को भूल जाना होगा और अन्दर एक विस्तृत ज्योति समुद्र अनुभव करना होगा। अब ध्यान से उसमें प्रवेश करो। तब कुछ ही काल के अन्दर ऐसा प्रतीत होगा कि उस समय समुद्र में से 'ओ३म्' की ध्वनि सुनाई दे रही है।

पिप्पलाद ऋषि ने इसके लिए यह बतलाया है कि यह साधना, तप ब्रह्मचर्य और श्रद्धा से होती है। 'तप' कहते हैं शरीर साधना को, 'ब्रह्मचर्य' कहते हैं मानसिक साधना को और 'श्रद्धा' कहते हैं आत्मिक साधना को। यह 'ओ३म्' की उपासना का संक्षिप्त विवरण हो गया।

भूर्भुवः स्वः के अनेक अर्थ हैं। जप करने के लिए भूः-प्राण, प्यारा भुवः-दुःखों से दूर करने वाला, स्वः-सुखों को देने वाला, ये अर्थ समक्ष रखने चाहिएं।

गायत्री मन्त्र का जप करते समय किस का ध्यान करो इस का उत्तर गायत्री मन्त्र के अन्दर ही विद्यमान है।

'भर्गो देवस्य धीमहि' ध्यान रखते हैं तो निरन्तर अभ्यास करते-करते दिव्य ज्योति अनुभव होने लगेगी। ये सारी साधना करते हुए साधक और साधिका ने अपने आप को 'वरेण्यम्' प्रभु के अर्पित कर देना है। इसी को 'आत्मसमर्पण' कहते हैं।

गायत्री मन्त्र आत्मिक समर्पण का मन्त्र है। जब तक साधक और साधिका अपने आप को अपने प्रियतम के समक्ष अर्पण नहीं कर देते तब तक इस का पूर्ण फल नहीं मिलता

सारी दुनिया से हाथ धोकर देखो,
जो कुछ रहा सहा है खोकर देखो,
क्या अर्ज करूं इसमें क्या लज्जत है,
तुम एक मरतबा किसी के होकर देखो।

बुद्धि निर्मल होने लगेगी। जो ऋतम्भरा बुद्धि तक जा पहुंचेगी।

महर्षि स्वामी दयानन्द जी ने १८७५ में पूना के अन्दर जो व्याख्यान दिए थे उन्होंने उन में गायत्री मन्त्र के सम्बन्ध में यह आदेश दिया था।

गायत्री महिमा

गायत्री महामन्त्र के अर्थ पर विचार करना चाहिए। इस मन्त्र द्वारा सारे विश्व को उत्पन्न करने वाले परमात्मा का जो उत्तम तेज है, उसका ध्यान करने से बुद्धि की मलीनता दूर हो जाती है और धर्माचरण में श्रद्धा और योग्यता उत्पन्न होती है। दूसरे किसी मत में प्रार्थना के मन्त्रों की ऐसी गहराई और सच्चाई नहीं है।

—महर्षि दयानन्द

संसार में बुद्धि ही ऐसा पदार्थ है जो मनुष्यों को पशुओं से तमीज करता है। मानव जीवन की श्रेष्ठ बुद्धि है। बुद्धि ठीक हो गई तो लोक परलोक दोनों ही सुधर जायेंगे। हमारे पूर्वजों ने महादेव शिव से लेकर और अपने काल के बड़े-बड़े नेताओं तक इसी मन्त्र के द्वारा सफलता प्राप्त की है। आज भी श्रद्धा भक्ति से जो इस औषध का प्रयोग करेंगे और गायत्री मन्त्र के अर्थ को अपने जीवन में ढालेंगे निश्चित रूपेण उनका लोक-परलोक सुधर जाएगा।

गायत्री मन्त्र के द्वारा महर्षि स्वामी दयानन्द जी और गुरु विरजानन्द जी ने अपने जीवन को चमकाया। इसी प्रकार भगवान् राम, भगवान् कृष्ण, ऋषि विश्वामित्र, राजा जनक, डा० राधाकृष्णन्, डा० राजेन्द्र प्रसाद, हृदय सम्राट् मदन मोहन मालवीय, महात्मा गांधी और दूसरे महानुभावों ने गायत्री मन्त्र की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। इन बड़े-बड़े महानुभावों ने ही नहीं बल्कि मेरे जैसे साधारण व्यक्ति ने भी इस गायत्री मन्त्र के द्वारा अकथनीय लाभ उठाया है। अपनी कथा सुना देना अनुचित नहीं होगा।

मैं था नन्हा सा बालक सात-आठ वर्ष का। स्कूल में पढ़ता तो था परन्तु आता-जाता कुछ नहीं था। स्कूल के समय में सारी घंटियां बेंच पर खड़े-खड़े बीत जाती थीं। अब तो स्कूलों में मार नहीं पड़ती, परन्तु पहले बहुत पड़ती थी। घर आता तो पिता जी के चपत लगते कि रिपोर्ट ठीक नहीं आती। मैं रोता हुआ माता जी के पास जाता तो वह भी कहतीं कि तू पढ़ता है नहीं, मैं क्या करूं? मैं कहता कि पढ़ता तो हूं परन्तु मुझे याद नहीं रहता। इस प्रकार सब ओर से अपमानित होने लगा। उस नन्हीं सी आयु में मुझे विचार आया कि इस जीने से क्या लाभ। हमारे नगर के बाहर एक बरसाती नाला है जिस पर पुल बना हुआ है। वर्षा ऋतु में बहुत पानी उसमें आया हुआ था। स्कूल से छुट्टी हुई तो मैं उस नाले के पुल पर चढ़ा और डूबने के लिए छलांग लगा दी। परन्तु बहता-बहता किनारे पर आ लगा। लोगों ने पहचान लिया कि यह तो मुन्शी गणेश दास जी का पुत्र है। वह मुझे लेकर घर छोड़ आए, ऐसी मेरी बुरी अवस्था थी।

परन्तु जब मेरे भाग्य के उदय होने की घड़ी आई तो हमारे नगर में स्वामी नित्यानन्द जी पधारे और हमारी वाटिका में ठहरे। मैं प्रतिदिन उनके लिए भोजन ले जाता। एक दिन स्कूल में बहुत चपत लगे थे। रो-रोकर आंखें सूज गईं थीं। घर आया तो पिता जी ने कहा कि स्वामी जी के लिए भोजन ले जाओ। भोजन लेकर वाटिका में पहुंचा और थाली स्वामी जी के आगे रख दी और स्वयं दीवार के साथ उदास खड़ा हो गया। स्वामी जी भोजन भी करते जाएँ और मेरी ओर देखते भी जाएँ। भोजन कर चुके तो स्वामी जी ने पूछा "खुशहालचन्द क्या बात है?" मैंने कहा "कुछ नहीं।" कहने लगे "आज तो कुछ रोये प्रतीत होते हो, तेरी आंखें सूजी हुई हैं।" जब कोई सहानुभूति की बात करे तो रुदन आ ही जाता है, मैं रो पड़ा। स्वामी जी ने मुझे गोदी में लेकर पूछा—"क्यों दुःखी हो बच्चा?" तो मैंने गोदी में रोते-रोते निवेदन किया कि स्वामी जी मुझे मरने का कोई सरल, सीधा साधन बताओ। जब मैंने अपनी कहानी सुनाई कि मेरी स्मृति बहुत बिगड़ी हुई है तो उन्होंने कहा कि तू इतनी सी बात से अधीर हो गया। तेरे रोग का औषध हमारे पास है। मुझे जैसे आशा का बिन्दु मिल गया हो, मैंने आंसू पोंछ कर कहा कि महाराज वह औषध बताओ। स्वामी जी ने एक कागज के लिए पूछा तो मैंने अपनी जेब से एक कागज निकाल कर उनके समक्ष रख दिया और स्वामी जी ने उस पर 'गायत्री मन्त्र' लिख दिया। मुझे कहा कि ये है तेरे रोग का औषध। प्रातः तीन बजे उठ कर मुंह-हाथ धो कर इसका जाप किया करो। रोगी को औषध मिल जाए तो उसे और क्या चाहिए? मैंने गायत्री मन्त्र का जाप प्रारम्भ किया। परन्तु मैं नन्हा सा बालक ही तो था नींद आ घेरती

(शेष पृष्ठ ३ पर)

श्री वीरेन्द्र का सिर दर्द

पंजाब में आये दिन हो रहे कत्ले आम को देखते हुए, उग्रवादियों को पाकिस्तान में दी जा रही ट्रेनिंग और सहायता के समाचारों से खिन्न होकर दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में दिल्ली के हजारों आर्य नर-नारियों ने १५ मई को पाकिस्तान दूतावास पर विशेष प्रदर्शन किया था। इस समाचार को दिल्ली दूरदर्शन ने राष्ट्रीय समाचारों में प्रसारित किया, समस्त उत्तर भारत के समाचार पत्रों में इस समाचार को महत्व देते हुए प्रकाशित किया। कुछ अखबारों में चित्र भी प्रकाशित हुए।

इस राष्ट्रीय प्रेम के कार्य शैली की आर्यसमाज के ही पत्रकार श्री वीरेन्द्र ने अपने स्वभाव अनुसार भारी आलोचना की। उनके मतानुसार तो ऐसा लगता है आर्यसमाज को राष्ट्रीय हित में कुछ नहीं करना चाहिए। पंजाब के अनेक आर्य पुरुषों ने अनेक बार शिकायत की और सीधे आरोप लगाये हैं कि पंजाब जो कि आर्यसमाज का प्रमुख गढ़ था उसी में आर्यसमाज सोया पड़ा है जबकि पंजाब के हिन्दुओं को वहां आर्यसमाज की सहायता और प्रेरणा की ... आवश्यकता है। पंजा... आर्यसमाज के उत्सव शिथिल हो गए हैं। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के उपदेशकों को लम्बी छुट्टी पर भेज दिया गया है। इस प्रकार के अनेक आरोप पंजाब के आर्य पुरुषों ने लिखित और मौखिक रूप से श्री वीरेन्द्र पर लगाए हैं। इन आरोपों के घेरे में पंजाब प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री वीरेन्द्र हैं। वे निष्क्रिय होकर अपने घर में बैठे आलोचना करते रहते हैं। कहीं भी कोई आर्यसमाज का संगठन कुछ रचनात्मक कार्य कर रहा हो श्री वीरेन्द्र अपनी परम्परा का निर्वाह किए बिना नहीं रहते। स्वामी श्रद्धानन्द के निष्कलंक चरित्र पर कुठाराघात आर्य जगत् नहीं भुला पाया और अब उसी परम्परा को वे निरन्तर निबाह रहे हैं।

पाक दूतावास पर प्रदर्शन का और किसी पर असर हुआ या नहीं पर इन पर जरूर हुआ। इन्हें बहुत बुरा लगा यह प्रदर्शन, न जाने इन की हमदर्दी पाक के साथ है या केवल अपनी आलोचना के खुजलाहट पूरा करने के लिए ऐसा करते हैं।

श्री वीरेन्द्र ने आर्यसमाज के उत्सवों में श्री बलराम जाखड़, श्री सीताराम केसरी, श्री के० सी० पन्त आदि राष्ट्रीय नेताओं के आने की भी आलोचना की और अन्य नेताओं का न आना आर्यसमाज को न पूछना है। जबकि वस्तुस्थिति यह है जो भी राष्ट्रीय नेता आर्यसमाज के कार्यों को अच्छी तरह जानते हैं और मन्तव्यों पर ठीक से बोल सकते हैं उन्हीं को समारोहों में आमन्त्रित किया जाता है अन्य को नहीं।

स्वामी दयानन्द निर्वाण शताब्दी पर तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी श्री भगवान देव के प्रयास से अजमेर आयी थीं, ऐसा उन्होंने लिखा जबकि श्री भगवान देव ने उनके आने का विरोध किया था। श्रीमती गांधी स्वामी ओमानन्द स्वामी सत्यप्रकाश, प्रो० शेरसिंह के प्रयास से अजमेर आयी थी।

श्री वीरेन्द्र को चाहिए सभा प्रधान के नाते पंजाब की निष्क्रिय आर्यसमाजों को सक्रिय करें, थोड़ा घर से बाहर भी निकलें, केवल घर बैठे आलोचना करना ही अपनी कुल परम्परा न बनायें। ●

(पृष्ठ २ का शेष)

गायत्री महिमा...

तो पानी के छींटे नेत्रों में देता। फिर भी ऊंघने लग जाता तब मुझे एक तरकीब सूझी। जिस कमरे में मैं जप करता था उसकी छत में एक कुण्डा लगा था। एक लम्बी सी रस्सी लेकर उसका एक सिरा कुण्डे में बांध दिया और दूसरा सिरा अपनी चोटी के साथ बांध लिया। जप करने लगा। जप करते-करते ऊंघ आती तो रस्सी से चोटी खिंच जाती और ऊंघ खुल जाती। इसी प्रकार साधना करते-करते कई महीने बीत गये और मेरी अणी को परीक्षा आ गई। पहले तो मैं हर परीक्षा में असफल होता था परन्तु अब की बार परीक्षा में सफल हो गया। जब सफल होने वाले छात्रों की सूची हैड मास्टर के पास पहुंची, जिसमें मेरा भी नाम था तो कहने लगे कि इसको तो कुछ आता जाता नहीं था, यह पास कैसे हो गया? इसको बुलाओ। हैड-मास्टर के कमरे में मेरी पेशी हुई। "तुम ने नकल लगाई होगी," हैड-मास्टर ने पूछा। मैंने कहा—"नहीं साहब।" उन्होंने कहा कि "तुम्हें आता जाता तो कुछ नहीं फिर पास कैसे हो गये?" मैंने कहा कि सब भगवान् की कृपा है। इसके बाद जो भी परीक्षा मैंने दी उसमें प्रथम या द्वितीय निकला। पढ़ चुका तो सब से पहले एक साप्ताहिक उर्दू समाचार-पत्र का छोटा सम्पादक बना, फिर बड़ा सम्पादक बना और धीरे-धीरे मैंने अपने दैनिक पत्र निकाले और मेरे पास हर प्रकार का वैभव आने लगा क्योंकि अथर्ववेद में स्पष्ट कहा है—स्तुता मया-वरदा...इसका प्रयोजन यह है कि गायत्री मन्त्र के द्वारा उपासना करने वाले को आयु, स्वास्थ्य, धन-धान्य पशु, प्राण, कीर्ति और ब्रह्मवर्चस् प्राप्त होता है और फिर वह वेद माता प्रभु के चरणों में भी पहुंचा देती है।

सब कुछ प्राप्त कर लेने के पश्चात् एक दिन अन्दर से स्वय ध्वनि उठी कि तूने यह सब देख लिया अब छोड़ इस माया को और मैं भरा-भराया घर छोड़ कर अपने गुरु श्री स्वामी आत्मानन्द जी महाराज के चरणों में पहुंचा और उन्होंने मुझे सन्यास की दीक्षा दे दी। इस व्यक्तिगत कथा को सुनाने का प्रयोजन यह है कि आप देखें कि साधारण व्यक्ति भी इस गायत्री मंत्र से कहां से कहां पहुंच सकता है। मैं जो कुछ बना रहा हूं यह इसी मां की कृपा से बना हूं। हां इतना ध्यान रखना चाहिए कि जप तो आवश्यक है परन्तु मन्त्र की भावनाओं के रंग से अपने मन, जीवन के कर्म-वस्त्रों को रंगना पड़ेगा। इस तरह गायत्री मंत्र का जाप करने से लोक-परलोक सुधर जायेंगे।

एक शंका का उत्तर देना आवश्यक है। वह यह कि गायत्री मन्त्र के द्वारा बुद्धि कैसे ठीक बन सकती है? उत्तर यह है कि जब गायत्री मन्त्र का उच्चारण हृदय के अन्दर होता है जैसे सितार का एक तार छेड़ने से सारा सितार बज उठता है इसी तरह जब गायत्री मन्त्र का उच्चारण हृदय में होता है तो गायत्री मन्त्र के २४ अक्षरों की ध्वनि से हृदय की तन्त्रियाँ बज उठती हैं। यह सारा कार्य अन्दर ही अन्दर एक वैज्ञानिक रीति से होता है जिससे बुद्धि खिल उठती है। जो मन मण्डल पर बुद्धि और चित्त मण्डल और नीचे कुण्डली मण्डल पर चोट लगती है। पहले-पहले अनुभव होता है परन्तु जब पर्याप्त समय जप करते-करते हो जाता है तो बुद्धि सुबुद्ध बनने लगती है। मेधा सुमेधा बनने लगती है। सुमेधा प्रज्ञा बनती और प्रज्ञा प्रतिभा बुद्धि बनती है और प्रतिभा से ऋतम्भरा बुद्धि बन जाती है। ●

राष्ट्र के प्रहरी

राष्ट्र एक देवता है
और हम सब इस के पत्र-पुष्प
हमें राष्ट्र देवता की
अर्चना करनी है
पूजा करनी है
वन्दना करनी है
इसके निमित्त
हमें राष्ट्र देवता के चरणों में
अर्घ्य बन कर
सर्वस्व समर्पित कर
उसकी शाश्वत शक्ति को
प्रोद्‌भासित होते देखना है।

———

क्योंकि राष्ट्र एक चेतन यज्ञ है
क्योंकि राष्ट्र एक देवता है
क्योंकि राष्ट्र एक इतिहास पुरुष है
इसीलिए—
यज्ञ में आत्माहुति देनी है
देवता की पूजा करनी है
इतिहास पुरुष को
अखण्ड रखना है।
तभी राष्ट्र-यज्ञ सफल होगा
राष्ट्र-देवता प्रसन्न होगा
राष्ट्र-पुरुष अविभाजित रहेगा।

—नीरज ठाकुर
८७, ग्रीन पार्क
पानीपत (हरियाणा)

भारतीय पुनर्जागरण और आर्यसमाज आन्दोलन

ले०—यशपाल आर्य बन्धु, आर्य निवास, चन्द्रनगर, मुरादाबाद

★

उन्नीसवीं शताब्दी भारतीय पुनर्जागरण के काल से सुविख्यात है। भारत में धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, बौद्धिक, राजनीतिक एवम् राष्ट्रीय नवचेतना का उदय इसी काल में हुआ था। विश्व-विख्यात बुद्धिवादी आन्दोलन आर्य-समाज की स्थापना भी इसी काल में हुई थी। ब्रह्मसमाज, प्रार्थना समाज, थियोसोफिकल सोसायटी एवं रामकृष्ण मिशन भी इसी काल की देन हैं। यद्यपि यह सभी आंदोलन नवजागरण का शंख फूंक रहे थे किन्तु इस अवधि में देश के क्षितिज पर बहुमुखी क्रांति का प्रबलतम जयघोष यदि किसी का सुनाई देता था तो वह आर्यसमाज आंदोलन का ही था। अपनी विशिष्ट स्वरूप एवं सर्वतोमुखी भूमिका के कारण आर्यसमाज का इन आंदोलनों में अपना विशिष्ट स्थान है। इस पर भी दुःख के साथ कहना पड़ता है कि आर्यसमाज की जितनी महत्त्वपूर्ण गौरवशालिनी भूमिका रही है, तदनुरूप उसका आकलन नहीं किया गया। इस विषय में डा० विजेन्द्रपाल सिंह का यथार्थ कथन है कि—"उन्नीसवीं सदी में भारतीय पुनर्जागरण के अध्ययन के सन्दर्भ में आर्यसमाज आन्दोलन जितना महत्त्वपूर्ण है, उसकी तुलना में विद्वज्जनों द्वारा उस पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। विशेषकर आर्यसमाज आन्दोलन के राष्ट्रीय राजनीतिक पहलू पर कोई वस्तुनिष्ठ और वैज्ञानिक शोधकार्य नहीं हुआ है। आर्यसमाज एक साथ ही धार्मिक, सामाजिक और राष्ट्रीय आन्दोलन था। स्वराज्य के विभिन्न साधनों का क्रियान्वयन आर्यसमाज की राष्ट्रवादिता की सच्ची अभिव्यक्ति है। स्वदेशी प्रचार, बहिष्कार आन्दोलन, राष्ट्रीय-शिक्षण परंपरा, गुरुकुल प्रणाली, वर्ण-व्यवस्था एवं जाति प्रथा निषेध आदि को आर्य-समाज ने ऐसे ठोस रचनात्मक कार्यक्रम का रूप प्रदान किया, जिससे राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रसार जनसाधारण तक सम्भव हो सका।"

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने जिस समय आर्यसमाज की स्थापना की थी, उस समय देश में सर्वत्र घोर निराशा के अत्यन्त घने बादल मंडरा रहे थे। शताब्दियों की विदेशी दासता के कारण देशवासी अपना जातीय स्वाभिमान एवम् गौरव को ही नहीं अपने पौरुष और पराक्रम तक को भी सर्वथा भूल चुके थे। सन् १८५७ की क्रान्ति की विफलता के पश्चात् तो राष्ट्रीय स्वाभिमान जैसी कोई वस्तु भारत-वर्ष में कहीं शेष नहीं रह गई थी। उधर अंग्रेजी शासन का फौलादी पंजा और भी अधिक मजबूत होता चला जा रहा था। अंग्रेजी शासन को एक सुदृढ़ आधार प्रदान करने के लिए लार्ड मैकाले ने एक कूट-नीतिपूर्ण योजना बनाई थी, जिसके परिणामस्वरूप भारतवासी अंग्रेजी शिक्षा पाकर शारीरिक रूप से भार-तीय रहते हुए भी मन और मस्तिष्क से पूर्ण अंग्रेज बन रहे थे। ईसाई पादरी इस कार्य में शासन को पूर्ण सहयोग दे रहे थे। अंग्रेजी शिक्षा और ईसाई पादरियों के कुचक्र में फंस कर भारतवासी स्वदेशी गौरव एवं स्वजातीय स्वाभिमान को भूल रहे थे। पाश्चात्य ज्ञान-विज्ञान प्रदत्त नूतन आविष्कारों के देश में आगमन से रूढ़िवादिता पर एक और चोट लगी, परिणामस्वरूप भारतवासी द्रुतगति से स्वधर्म, स्वसभ्यता स्वसंस्कृति तथा स्वभाषा आदि से विमुख होते चले जा रहे थे।

भारतवासियों को यह पढ़ाया जाता था कि उनके पूर्वज सदा से मूर्ख तथा असभ्य रहे हैं। अंग्रेजी शिक्षा से ही वे सभ्य और विद्वान् बन सकते हैं। ऐसी भयावह स्थिति में भारतवासियों के सौभाग्य से महर्षि दयानन्द का आगमन हुआ। उन्होंने इस सारी स्थिति का अति सूक्ष्मता से अध्ययन किया और देश एवम् जाति को उबारने के लिए आर्यसमाज रूपी एक प्रगतिशील बौद्धिक एवं क्रान्तिकारी आन्दोलन की स्थापना की। यद्यपि ब्रह्मसमाज पुनर्जागरण का पहला आन्दोलन था तथापि हमें यह लिखने में कोई संकोच नहीं कि वह ईसाईयत के प्रवाह के विरुद्ध बांध न बन कर उसी के प्रवाह में बह गया। यह ठीक है कि कतिपय रूढ़िवादी परम्पराओं को दूर करने में ब्रह्म-समाज ने स्तुत्य कार्य किया है, किन्तु पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति की ओर अधिक झुकाव होने के कारण वे उसी के गीत गाने लग पड़े। प्रार्थना समाज की भी कुछ ऐसी ही स्थिति रही। दूसरी ओर थियोसोफिकल सोसायटी तथा राम-कृष्ण मिशन वाले भारतीय संस्कृति के नाम पर उन समस्त घिसी-पिटी रूढ़िवादी परम्पराओं की वैज्ञानिक व्याख्या कर उनका औचित्य सिद्ध करने में जुट गये, जिनका विरोध ब्रह्मसमाज और प्रार्थना समाज कर रहा था। किन्तु आर्यसमाज की स्थिति इन दोनों से भिन्न थी। आर्यसमाज ने न तो ब्रह्मसमाज की भांति हर भारतीय वस्तु को हेय एवं हीन माना और न ही थियोसो-फिकल सोसायटी आदि की भांति निरर्थक भारतीय रूढ़ियों की वैज्ञा-निक व्याख्याएँ ही कीं। अपितु आर्यसमाज ने यह किया कि मध्य-कालीन भारत की रूढ़ियों को हटा-कर प्राचीन भारत की सांस्कृतिक समृद्धि के दर्शन कराये। और इस मिथ्या धारणा को जड़ से उखाड़ फेंका कि भारतवासियों के पूर्वज सदा से मूर्ख और असभ्य रहे हैं। भारत के गौरवपूर्ण अतीत की याद दिलाते हुए आर्यसमाज के यशस्वी संस्थापक ने लिखा था कि—"यह आर्यावर्त्त देश ऐसा है जिसके सदृश भूगोल में दूसरा कोई देश नहीं है। इसलिए इस भूमि का नाम स्वर्ण भूमि है क्योंकि यही सुवर्णादि रत्नों को उत्पन्न करती है।" इतना ही नहीं वे आगे लिखते हैं कि—जितने भूगोल में देश हैं वे इसी देश की प्रशंसा करते और आशा रखते हैं। पारसमणि पत्थर सुना जाता है वह बात तो झूठी है परन्तु आर्या-वर्त्त देश ही सच्चा पारसमणि है कि जिसको लोहेरूप दरिद्र विदेशी छूते के साथ ही स्वर्ण धनाढ्य हो जाते हैं।"

उस समय जब शताब्दियों से विदेशी शासन के अधीन रहने से भारत को पददलित देश के रूप में चित्रित किया करते थे, महर्षि ने अपने देश की प्रशंसा में उक्त शब्द लिखे थे। और फिर इन शब्दों से देशवासियों का स्वाभिमान जगाया था कि—"सृष्टि से ले के पाँच सहस्र वर्षों से पूर्व समय पर्यन्त आर्यों का सार्वभौम चक्रवर्ती अर्थात् भूगोल में सर्वोपरि एकछत्र राज्य था।" महर्षि ने जब इस प्रकार के विचार फूंके तो देश अंगड़ाई लेकर उठ खड़ा हुआ। "आर्यसमाज ने भारत के अधःपतन पर गम्भीरता से विचार किया तो देखा कि उसकी मानसिक दासता ही राष्ट्र की राज-नैतिक तथा आर्थिक दासता का मूल कारण है। उसने जहां भार-तीयों को स्वदेश भक्ति का अमृत पिलाया, वहां साथ ही वैचारिक दासता की शृंखलाओं को काट कर राष्ट्र को स्वाधीनता के मार्ग पर डाल दिया। भारतीय समाज को झकझोर कर उसे आक्रामक-प्रगति-शील बनाने का सारा श्रेय आर्य-आर्यसमाज को ही है। महर्षि दया-नन्द ने सत्यार्थप्रकाश के त्रयोदश-समुल्लास में ईसाई मत की और चतुर्दशसमुल्लास में इस्लाम की जो खण्डनात्मक समीक्षा की, उसने देशवासियों के हाथ में जो अब तक केवल ढाल लिये हुए थे अब तल-वार भी थमा दी। पण्डित चमूपति जी इस सम्बन्ध में बड़ी ही मार्मिक बात लिखते हैं। यथा—"आर्य-समाज के जन्म के समय हिन्दू कोरा फुसफुसिया जीव था। उसके मेरु-दण्ड की हड्डी थी ही नहीं। चाहे कोई उसे गाली दे, उसकी हंसी उड़ाये, उसके देवताओं की भर्त्सना करे या उसके धर्म पर कीचड़ उछाले, जिसे वह सदियों से मानता आ रहा है, फिर भी इन सारे अप-मानों के सामने वह दांत निपोर कर रह जाता था। लोगों को यह शंका उचित हो सकती थी कि यह आदमी भी है या नहीं, उसे आवेश भी चढ़ता है या नहीं अथवा यह गुस्से में आकर प्रतिपक्षी की ओर घूर भी सकता है या नहीं। किन्तु, आर्यसमाज के उदय के बाद अवि-चल उदासीनता की यह मनोवृत्ति विदा हो गई। हिन्दुओं का धर्म एक बार फिर जगमगा उठा। आज का हिन्दू अपने धर्म की निन्दा सुन-कर चुप नहीं रह सकता। जरूरत हुई तो धर्म रक्षार्थ वह अपने प्राण भी दे सकता है।" यह सब आर्य-समाज के कारण ही सम्भव हो सका।

कतिपय बुद्धिजीवी लोग जिन्हें आर्यसमाज फूटी आंख भी नहीं भाता, इस दिशा में आर्यसमाज के

(शेष ७ पृष्ठ पर)

❀ गायत्री ❀

—स्व० स्वामी समर्पणानन्द जी

कर्मयोगी कहते हैं कि कर्म करो। भगवान् है या नहीं इस झगडे में क्या मिलेगा ? भक्तियोगी कहते हैं कि नाम भजते रहो। यही सब से बडा कर्म है।

परन्तु निरा नाम-भजन तो आलस्य और अकर्मण्यता का ही प्रच्छन्न और इसीलिए अति भयकर रूप है।

दूसरी ओर भक्तिहीन कर्म चाबीहीन घडी के समान है। एक बार घडी खडी हो गई तो दुबारा कौन चलाए ? भक्तिहीन कर्मयोग भारी मूर्खता है। शक्ति का भण्डार तो है पर हम उस से लाभ नही उठाते।

भगवान् भक्तो की बुद्धि को प्रेरणा देता है परन्तु भक्त नाम आलसी और अकर्मण्य का तो नहीं।

"धियो यो न प्रचोदयात्।" हम उसका ध्यान करें जो हमारी बुद्धियों और कर्मों को प्रेरणा दे। यह भक्तियोग है।

परन्तु यह प्रेरणा किस को मिलती है, क्या कर्महीन आलमियों को ? कदापि नही। प्रेरणा उन्हें मिलती है जो निरन्तर उसे अपने अन्दर धारण करते हैं। यह कर्मयोग है। यह कर्मयोग कैसे है—

प्रश्न उठता है कि प्रभु क्या कोई कुर्त्ता, धोती, पगडी एवम् अगरखा है जो धारण किया जाता है। इसका उत्तर वेद इन शब्दों मे देता है।

"स्वस्ति पन्थामनुचरेम
सूर्याचन्द्रमसाविव।"
ऋ० ५।५१।१५

हम सूर्य और चन्द्र के समान स्वस्ति मार्ग पर चलें।

इस भाव को ऋ० १०।२।३ मन्त्र में इस प्रकार स्पष्ट किया गया है।

"आ देवानामपि पन्थामगन्म,
यच्छक्नवाम तदनुप्रवोढुम्।"

हम जिस सुन्दर शासन व्यवस्था, में सूर्य चन्द्रादि देव, उस प्रभु की आज्ञानुसार चलते हैं उसकी आज्ञा के अनुसार अपने जीवन-रथ का वहन करने मे समर्थ हुए हैं। उतने अंश तक ही हमने देव-मार्ग का अनुसरण किया है।

बस यह अनुसरण कर्म ही मनुष्य को प्रभु से प्रेरणा लेने का अधिकारी बनाता है।

इस प्रकार 'धीमहि' में कर्मयोग और "धियो यो न प्रचोदयात्" में समर्पणात्मक भक्ति-योग का अद्भुत समन्वय है।

यह देवों का अनुसरण ज्ञान, प्रयत्न और सुख अथवा सच्चिदानन्द इन तीनों अगों में बटा हुआ है। प्रभु के जितने गुण वेद मे वर्णित हैं, वे ज्ञान, प्रयत्न और सुख इन तीनों अगो में हैं। हमें सुख-स्वरूप बनना है। इसलिए आवश्यक है कि हम सम्यग् ज्ञान प्राप्त करें और तदनुकूल प्रयत्न अथवा आचरण करें।

हमने ठीक ज्ञान और ठीक प्रयत्न किया है या नही, इसका प्रमाण है कि हमने पूर्ण सुख प्राप्त किया है या नहीं ? बस यह ज्ञान 'भू' है प्रयत्न 'भुव' है और सुख 'स्व' है।

यन्न दु खेन साभिन्नम्,
न च ग्रस्तमनन्तरम्।
अभिलाषोपनीतम् च तत्
सुख स्व पदास्पदम्॥

बस इस 'भू, भुव, स्व' का ही सक्षिप्त रूप 'ओ३म्' है। ध्वनि मात्र का आदि मूल अ और स्थान कण्ठ है।

मध्य उ और स्थान मुख का मध्य है। म् सब सगीतमय ध्वनियो का अन्त है और सच पूछिये तो ध्वनि मात्र का अन्त है क्योंकि यही एक अक्षर है जो मुख बन्द करने पर भी बोला जा सकता है। इसका स्थान ओष्ठ है।

मकार ही एक ऐसा अक्षर है जो मुख बन्द करने पर भी बोला जा सकता है। इसीलिए यह समाप्ति का सूचक है और मधुर होने के कारण सगीतमयता का सूचक है। इसीलिए यह 'स्व' का अर्थात् परम सुख का प्रतीक है।

यदि इनमें से एक एक अग का ही अभ्यास करें तो मनुष्य का पूर्ण परिपाक न होगा। पूर्ण परिपाक करने वाला तो 'भूर्भुव स्व' का समन्वय है इसीलिए उस समन्वय को 'भर्ग' ठीक परिपाक करने वाला कहा गया है।

परन्तु यह रूप पूर्ण रूप से धारण किया गया तब समझना चाहिए जब वह स्वादुतम अन्न के समान आग्रहपूर्वक वरण कर के खाया जाय। जो अन्न खिन्न मन से जैसे-तैसे गले से नीचे उतार लिया जाता है वह 'अकेलेन्यम्' भले ही हो 'वरेण्यम्' नहीं कहला सकता।

वह स्वाद भी साधारण नहीं अलौकिक हो जिसे तत् कह कर अनिर्वचनीयता का रूप दे दिया जाय।

अब इस मन्त्र मे परमात्मा को सविता के नाम से कहा गया है इसलिए इस गायत्री का (गेय गीत को) सावित्री कहा गया है।

सविता का अर्थ है शासन का स्रोत 'सू' का अर्थ है शासन करना। सविता का अर्थ हुआ शासन करने वाला। राष्ट्र मे जब राजा राज्य के नियमो का निर्माण करता है तब सविता, जब दण्ड देता है तब यम जब अधिकारों का निर्णय करता है तो 'अर्यमा', जब शक्ति दिखाता है तो इन्द्र कहलाता है परन्तु इन्द्र को भी शासन सत्ता सविता से प्राप्त होती है। ऋग्वेद मे स्पष्ट शब्दों मे कहा है—

सवितायन्त्रै पृथिवीमरम्णात्
ऋ० १०।१४९।१

सविता ने राज्य को नियन्त्रित करने वाले नियमो से धरती को रमणीय बना दिया। बस यह नियम बनाने वाला (विधान निर्मात्री सभा का रूप) रूप ही सविता रूप है।

हम 'भूर्भुव स्व स्वरूप ओ३म् के उस परिपाक प्रगल्भ सविता रूप को जो अति वरेण्य है सदा धारण कर जिससे समर्पण की भावना पूरी हो और वह हमारी बुद्धियो को मुक्ति मार्ग पर चलावे।

इस प्रकार—

१ ओ३म्—सच्चिदानन्द का विकसित रूप।

२ भू—ज्ञान।

३ भुव—कर्म।

४ स्व—सुख है।

५ तत्—उस अनिर्वचनीय।

६ देवस्य-दिव्य शक्ति सम्पन्न।

७. सवितु—नियम निर्माण के अधिष्ठाता के।

८ भर्ग—परिपाक प्रगल्भ।

९ वरेण्यम्—वरणीयतम रूप को।

१० धीमहि-हम (केवल अकेला मैं नही) सब धारण करें। अनुचरण द्वारा आत्मसात् करें।

११ य—जो।

१२ न—(हमारी (बहुवचन सर्वभूत हित का सूचक)।

१३ धिय—कर्म और प्रज्ञा को।

१४. प्रचोदयात्—सन्मार्ग पर चलावे।

इस प्रकार इन १४ अंगो से युक्त गायत्री को श्वास-प्रश्वास के सगीत में मिला कर मनुष्य अपने जीवन में उस स्थान पर जा पहुंचे जहा हमारे जीवन का नेता यह गायत्री मन्त्र हमें पहुचाना चाहता है, सो इसके पीछे पीछे (अनु) चलते-चलते वही हम स्थित हो जावे जहा इसका ठहरने का स्थान है तो हम कह सकेंगे कि हमने गायत्री का अनु+स्थान+अनुष्ठान कर लिया। यह है गायत्री का अनुष्ठान।

इस लघु लेख की समाप्ति से पूर्व एक बात की ओर विशेष ध्यान दिलाना आवश्यक है इसलिए उसको विशेष रूप से पृथक् कर के वर्णन करते हैं। वह है सविता देवता का स्वरूप। परन्तु इसका निरूपण करने मे पूर्व हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि यह शब्द किस धातु मे बना है। यह शब्द 'सू प्रेरणे' इस तुदादिगण की धातु से बना है। उसके लिए दो हो प्रमाण पर्याप्त हैं।

अहिना नो विश्वानि 'देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्र तन्न आसुव। यह प्रसिद्ध मन्त्र है। इसमे, परासुव और आसुव पद स्पष्ट रूप से तुदादिगण की सूचना दे रहे हैं।

ऋग्वेद ४ ५३ ३ मन्त्र मे सविता के साथ पडा हुआ प्रसुवन् शब्द स्पष्टतया तुदादिगण की 'सू प्रेरणे' इस धातु की ओर निर्देश कर रहे है।

इसी प्रकार ऋग्वेद ३,३३,६ में कवियो की वाग्धारा कहती है— 'तस्य वयम् प्रसवे याम उर्वी' उस इन्द्र के शासन मे हम दूर तक चल रही हैं यहा प्रसव शब्द का अर्थ बच्चा जनना नही, किन्तु शासन है। इसी प्रकार वेद में 'सवितु प्रसवे-ऽश्विनोर्बाहुभ्या पूष्णो हस्ताभ्याम्' यह तीनो एक साथ आते हैं जिसका क्रम अर्थ है कि यह सविता के शासन मे अश्वियो के साधन से पूषा के हाथो से हो रहा है, सो सविता देवता वही है जब किसी राष्ट्र के प्रताप का उदय होता है। उस से पूर्व राष्ट्र के उत्साहमय अभ्युत्थान को उषा आती है, फिर राज्य का नियम निर्माण होना है, फिर शासन। यही बात ऋग्वेद ५,८२,२ इस मन्त्र के 'अनुप्रयाण-मुषसो विराजति' इन शब्दों मे कही है। सविता देव उषा के प्रयाण के

(शेष पृष्ठ ८ पर)

(पृष्ठ १ का शेष)

दीवान हाल का अधिवेशन…

के कार्यक्रमों में क्रान्तिकारी परिवर्तन करने चाहिए जिस से सत्संग के प्रति श्रद्धा एवं आकर्षण बढ़े।

आर्यसमाज दीवान हाल के मन्त्री श्री मूलचन्द गुप्त ने बताया, पिछले वर्ष एक लाख रुपया ग्राम प्रचार, वेद प्रचार, गुरुकुल एवं स्कूल सहायता पर खर्च किया गया। ११ शुद्धि संस्कार हुए ४१ अन्तर्जातीय विवाह हुए तथा असामाजिक तत्वों के चंगुल से ८ कन्याओं को मुक्त कराकर संरक्षण दिया गया। इस कार्य में श्री ऊधौदास आर्य का उल्लेखनीय योगदान रहा। श्री गुप्त ने बताया भावी योजनाओं में ग्राम वेद प्रचार, राहत एवं सहायता कार्य, वेदप्रचार, आर्यसमाज मोर सराय का नवभवन निर्माण आदि के लिए साढ़े ३ लाख रुपये खर्च करने का प्रावधान है। पंजाब के आतंकवाद से पीड़ित जनों के लिए भी २५ हजार रुपये की राशि निश्चित की गई है जिसे आवश्यकता अनुसार बढ़ाया भी जा सकता है।

उल्लेखनीय है पंजाब से आये १४ परिवारों को अभी हाल में दिल्ली में पुनर्स्थापित किया गया है कुछ परिवार अभी भी दीवान हाल में ठहरे हैं।

वार्षिक अधिवेशन के अवसर पर कर्मठ एवं श्रद्धावान आर्य, आर्यसमाज दीवान हाल के उपप्रधान श्री वटेश्वर दयाल जी ने २० हजार रुपये स्थिर निधि के रूप में यज्ञार्थ खर्च करने के लिए दिये। इससे पूर्व भी उन्होंने ५ हजार रुपये की राशि दी थी जो १९९० तक ४० हजार रुपये होकर मिलेंगे। दूसरी राशि भी जब ४० हजार हो जाएगी, कुल मिलाकर ८० हजार रुपये की स्थिर निधि से यज्ञ के निमित्त व्यय करने का प्रावधान रखा गया है। इस अवसर पर श्री वटेश्वर दयाल ने स्वामी आनन्द बोध को चेक भेंट किया। सभी सदस्यों ने श्री वटेश्वर दयाल के सात्विक दान की भूरि-भूरि प्रशंसा की। श्री वटेश्वर दयाल ने अपनी साधारण आजीविका से यह राशि दान देकर आदर्श उपस्थित किया है।

□



• अमर पुष्प •

१ ईश्वर एक है, उसकी भक्ति बिन, जीवन शून्य हैं।

२. दान बिन धन और हाथों की शोभा नहीं होती।

३. ओ३म् नाम स्मरण के लिए सर्वश्रेष्ठ है।

४. वचन देकर पूरा कर, नहीं अगले जन्म जीभ न मिलेगी।

५ आलस्य मौत है कर्म ही जीवन है।

६ मेहनत की कमाई में बरकत है, बेईमानी मे नहीं।

७. मौत से भले ना डरो, पर उधार से डरो।

८ जैसे किया कर्म बिना भोगे नही छूटता तैसे ही लिया कर्जा जन्म-जन्म तक पीछा नहीं छोड़ता

९ पाप की कमाई से सन्तान बिगड़ती है।

१० आहार (खान पान) व्यवहार (लेन-देन) विचार (धार्मिक चिंतन) आचरण वाला ही मनुष्य देव है इसके विपरीत राक्षस हैं।

११. चाय, बीड़ी, सिगरेट, भांग, तम्बाकू, गांजा, सिनेमा, शराब, मांस, अण्डे, धन, बल, बुद्धि धर्म का नाश करते हैं इन्हें सर्वथा त्याग देना चाहिए।

—अमरनाथ आर्य
सागानेरी गेट, जयपुर-३

आर्य विद्वान् का निधन

आर्यसमाज के प्रख्यात विद्वान् वक्ता तथा विचारक आचार्य प० रामानन्द शास्त्री (७४ वर्ष) का हृदय गति रुक जाने के कारण २ जून, ८८ को उनके घर पर देहांत हो गया। कई सामाजिक तथा शैक्षिक संस्थाओं के संचालन तथा मार्गदर्शन में उनका प्रमुख सहयोग प्राप्त होता रहा। व बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा के भूतपूर्व मन्त्री तथा उपप्रधान रहे तथा सम्प्रति संरक्षक थे। सार्वदेशिक आर्य सभा के कई वर्षों तक मन्त्री रहकर उन्होंने विवादास्पद विषयों पर महत्वपूर्ण निर्णय भी दिया था। कई बार विख्यात विरोधी विद्वानों को शास्त्रार्थ में पराजित किया था। उनके द्वारा लिखित कई सैद्धान्तिक पुस्तकें लोकप्रिय बनी हुई हैं।

श्री सत्यानन्द आर्य की दादी
श्रीमती मनभरी देवी को

भावाञ्जलि

आर्यसमाज के दानवीर कर्मठ समाज सेवी श्री सत्यानन्द आर्य की दादी श्रीमती मनभरी देवी का ९५ की अवस्था में निधन हो गया। १२ जून को श्री आर्य के निवास स्थान पर श्रद्धांजलि सभा हुई। इस अवसर पर सात दिवस से चल रहे यज्ञ की पूर्णाहुति हुई जिसके ब्रह्मा प० यशपाल सुधांशु थे। इस अवसर पर स्वामी दीक्षानन्द, स्वामी सत्यप्रकाश, महात्मा प्रेम भिक्षु, डा० वाचस्पति उपाध्याय, गुरुकुल गौतम नगर के आचार्य श्री हरिदेव, श्री शिवाकान्त उपाध्याय, प्रो० धर्मवीर आदि विद्वान तथा दिल्ली और दिल्ली बाहर से पधारे अनेक आर्य विद्वान और आर्य नेताओं ने अपनी तथा संस्थाओं की ओर से श्रद्धांजलि अर्पित की।

कविता

मन में भरे उत्पात प्रभु देख लीजिए।
इस स्वार्थी की बात प्रभु देख लीजिए॥
मैं तो हूं निर्विकार निरा देह से परा।
है आपकी सौगात प्रभु देख लीजिए॥
बचना अति दुरूह है मैं किस तरह बचूं।
रचना की करामात प्रभु देख लीजिए॥
खपता है पनपता नहीं प्रसून प्रेम का।
जपता न दिनो रात प्रभु देख लीजिए॥
पाता है कहां चैन मिलाता है कहीं नैन।
खाता गदहों की लात प्रभु देख लीजिए॥
मद काम क्रोध लोभ मोह, वासना भरी।
फिरता लिए बरात प्रभु देख लीजिए॥
"व्याकुल" कवि का और कौन आप के बिना।
है तात मात भ्रात प्रभु देख लीजिए॥

रचयिता—प्रकाशवीर 'व्याकुल'

(पृष्ठ ४ का शेष)

भारतीय पुनर्जागरण…

प्रयत्नो और भूमिका को कम आकते हुए कह दिया करते हैं कि पुनर्जागरण तो भारत मे अंग्रेजी शिक्षा के कारण हुआ है। किन्तु वे भूल जाते हैं कि राजनीतिक चेतना अंग्रेजी शिक्षा की देन कदापि नही हो सकती। अंग्रेज कब चाहता था कि भारतवासी राजनीतिक दृष्टि से उद्बुद्ध हो जावे। वह तो उन्हें दबा कर रखने में ही विश्वास करता था, फिर राजनीतिक चेतना का अंग्रेजी से क्या वास्ता। सत्य तो यह है कि—'पुनर्जागरण के लिए न अंग्रेजो राज की अपेक्षा थी और न अंग्रेजी शिक्षा की। उसके लिए नायक की आवश्यकता थी जो अपनी अन्तर्दृष्टि से अपने देश, समाज जाति तथा राष्ट्र के व्यापक और सामूहिक जीवन की जड़ता विडम्बना, गतिरुद्धता, उसके अन्याय और शोषण को गहराई से देख सके। उनके कारणो की ऐतिहासिक, यथार्थ तथा सांस्कृतिक खोज करने में समर्थ हो और अतत अपनी विवेक दृष्टि से गतिरोध को दूर कर के समाज को मौलिक सर्जनशीलता से सचालित प्रेरित करने में समर्थ हो सके।' और देश को वह नायक महर्षि स्वामी दयानद सरस्वती के रूप मे मिला। वस्तुत पुनर्जागरण के नेताओं में दयानद का स्थान अप्रतिम है।"

जैसा कि पूर्व लिख आये है कि ब्रह्मसमाज और प्रार्थना समाज हीनभावना से ग्रसित होने के कारण ईसाइयत की ओर अधिक झुक रहे थे किन्तु आर्यसमाज "अपने से पूर्ववर्ती ब्रह्मसमाज की भाति न तो ईसाइयत के प्रति अत्यधिक आग्रह और आस्था ही दिखला सका और न थियोसोफी की भाति उसने विभिन्न पन्थो, मतों की सतात्विक, वायवी एकता पर ही जोर दिया। रामकृष्ण, विवेकानन्द की भाति धर्म के क्षेत्र में अत्यधिक सहिष्णुतावादी दृष्टि अपनाने-की अपेक्षा आर्यसमाज ने यथार्थवादी दृष्टि ही स्वीकार की, जिसके परिणामस्वरूप राष्ट्रीय गौरव का वहन करने वाला उसका पुनरुत्थानवादी आन्दोलन उत्तर भारत के सामान्य शिक्षित जनसमाज में अत्यधिक लोकप्रियता प्राप्त कर सका।" डा० गोविन्दराम शर्मा का यथार्थ कथन है कि "आर्यसमाज के प्रशसनीय प्रयत्न के फलस्वरूप जनता की हीनता की भावना दूर होने लगी, उसका आत्म सम्मान फिर से जाग उठा और वह अपनी सर्वोच्च सस्कृति के समक्ष पाश्चात्य सभ्यता को तुच्छ समझने लगे।" इस प्रकार 'आर्यसमाज का धार्मिक, सामाजिक आन्दोलन इतने प्रबल रूप से चला कि भारतवासियों में प्राचीन धर्म-सस्कृति के प्रति अगाध श्रद्धा उत्पन्न हो गई और वे पश्चिम की अहितकर विचारधारा का प्रतिकार करने के लिए बद्ध-परिकर हो गए।"

अन्त मे निष्कर्ष रूप से हम यही कहेंगे कि—'नवोदय का जयघोष करने वाले सास्कृतिक आन्दोलनो में सर्वाधिक सशक्त, सर्वजनव्यापी तथा प्रभविष्णु था आर्यसमाज, जिसने कई दशाब्दियो तक जन-मानस का नेतृत्व किया। और जैसा कि श्रीयुत प्रियव्रत दास का कथन है आर्यसमाज आदोलन अन्य आधुनिक धार्मिक और सामाजिक आन्दोलनो की अपेक्षा भारतवासियो को कई पीढियो को प्रभावित करने वाला अत्यधिक शक्तिशाली तीव्रतर आन्दोलन सिद्ध हुआ'। वस्तुत पुनर्जागरण के समस्त आन्दोलनो में अपनी विशिष्ट ज्ञान-निष्ठा, कर्मनिष्ठा आदि के कारण आर्यसमाज अन्य सभी आन्दोलनो को पीछे छोड़ता चला गया। अन्य समसामयिक आन्दोलनो की तुलना मे इस क्षेत्र मे उसकी उपलब्धिया भी अधिक रही हैं। देश की राष्ट्रीय भावधारा को अपनाने तथा स्वदेशवासियों मे लुप्त अथवा सुप्त गौरव और आत्मबोध को यदि कोई पुन जागृत करने मे सफल हो सका तो निश्चय ही वह आर्यसमाज आन्दोलन ही है।

(पृष्ठ ५ का शेष)

गायत्री

पीछे विराजमान होता है।

यही बात सायणाचार्य ने ऋग्वेद १०।१३६।१ मन्त्र की व्याख्या में इन शब्दो मे स्पष्ट कही है। उषस प्रादुर्भावादनन्तर सूर्यस्योदयात पूर्वंम य कालस्याभिमानी देव सविनोच्यते। अर्थात् उषा के प्रादुर्भाव के पश्चात सूर्योदय से जो काल है उस समय का सूर्य सविता कहलाता है। बस, स्पष्ट है कि व्यक्ति के जीवन से लेकर मानव राष्ट्र के जीवन तक कर्मयोग के उत्साह के जन्म के पश्चात कम में लगने से पूर्व भावी कार्यक्रम के सम्पूर्ण नियम बना लेना चाहिए कर्म योग मे हाथ पैर चलगे किन्तु उस से पूव हमारी बुद्धियो को नियम बनाने के निमित्त ठीक प्रेरणा मिलनी चाहिए यही सविता देवता का काम है सो इसी समय 'धियो यो न प्रचोदयात' यह प्रार्थना कितनी ठीक बैठती है। यह सहृदयो के रसास्वादन का विषय है, वाग्विलास का नहीं बस-इसको जान कर सावित्री का मर्म समझ में आता है। प्रभु को कृपा हो कि हम इसे समझ कर गायत्री का ठीक अनुष्ठान करने में मे समर्थ हों।

●

श्रीमती चित्रा रानी का निधन

दिल्ली के विख्यात समाज सेवी श्री लाला इन्द्र नारायण हाथीदात वालों के अनुज की धर्म पत्नी श्रीमती चित्रा रानी का देहावसान हो जाने पर १० जून को उनके निवास स्थान पर शोक सभा हुई। जिस मे आर्य जगत के अनेक विद्वान एव आर्य नेताओ ने शोकांजलि प्रकट की। उल्लेखनीय है श्रीमती चित्रा का देहान्त युवावस्था मे ही आकस्मिक हो गया।

●

शोक समाचार

एक सौ एक वर्षीय साहित्यकार नहीं रहे

पिछले दिनो आर्य जगत में अनेक शोक जन्य घटनाएं घटित हुई। आर्यसमाज के महान् साहित्यकार श्री सन्तराम बी० ए० का निधन हो गया। वे एक सौ वर्ष की आयु भोग कर गये। श्री सन्तराम बी ए ने सैकडो पुस्तकें अनुवाद की और लिखी। वे आर्यसमाज की पुरानी पीढी के वरिष्ठ साहित्य लेखक वैदिक मिशनरी, हिन्दी भाषा के महान सेवी, उद्देश्यपूर्ण रचनाकार थे। उन्होने बी० ए० फारसी मे किया था। स्वामी दयानन्द और आर्यसमाज से प्रभावित होकर उन्होने अपना समस्त साहित्य हिन्दी मे लिखना प्रारम्भ किया। अपने समय में उनकी पुस्तक पाठ्यक्रमों में भी लगी थी।

उन्होंने जात पात तोडक मडल की स्थापना की थी। उसी सम्बन्ध में उन्होने अनेक लेख लिखे। वे आदर्शों के लिए जीते थे स्वय उत्तर भारतीय होते हुए भी उन्होंने दक्षिण भारतीय विधवा महिला से विवाह किया था। श्रद्धांजलि सभा में अनेक समाज सेवी एव साहित्यकार उपस्थित थे। श्रद्धांजलि प्रकट करने वाले थे श्री क्षितीश वेदालकार, श्री विष्णु प्रभाकर, प्रो० वेद व्यास, प्रो० डा० धर्मपाल एव श्री दरबारीलाल।

□

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एव प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् [illegible] विश्वविद्यालय कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ३६ | रविवार २६ जून १९८८ | सृष्टि सवत् १९७२९४९०८८ | आषाढ २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य . एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश मे ५० डालर, ३० पौंड

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का त्रैवार्षिक अधिवेशन दिल्ली में सम्पन्न

स्वा० आनन्द बोध सर्वसम्मत प्रधान निर्वाचित

श्री भगवान देव शर्मा ने अपने किए पर खेद व्यक्त किया

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा की आम सभा की मीटिंग, आर्य-समाज दीवान हाल, दिल्ली में १८-१९ जून, १९८८ को सम्पन्न हुई। इस में देश के विभिन्न भागों से आए हुए लगभग १५० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। एक प्रतिनिधि श्री राम बाबू पाण्डे नेपाल से भी आए थे।

सर्वप्रथम सभा के महामन्त्री श्री सच्चिदानन्द शास्त्री ने सभा के विगत तीन वर्षों की कार्यवाही पर रिपोर्ट प्रस्तुत की। इसके बाद श्री भगवानदेव शर्मा के उस पत्र को पढ़ कर सुनाया गया, जिस में उन्होंने सार्वदेशिक सभा के प्रधान तथा अन्य पदाधिकारियों के ऊपर लगाए गए अपने अनर्गल आरोपों के लिए खेद व्यक्त किया था। अपने इस पत्र में श्री शर्मा ने स्वीकार किया कि जो आरोप उन्होंने सभा प्रधान आदि के विरुद्ध लगाए थे, वे जांच करने पर निराधार पाए गए। शर्मा जी ने यह भी सूचित किया कि उन्होंने जो कुछ किया वह कुछ असन्तुष्ट व्यक्तियों द्वारा रचे गए एक षड्यन्त्र के अन्त-र्गत किया था। इस सूचना के आधार पर सभा ने एक जांच समिति का गठन किया जो यह पता लगाए कि इस षड्यन्त्र के पीछे कौन कौन से व्यक्ति हैं। सभा ने एक प्रस्ताव द्वारा श्री भगवानदेव शर्मा के आर्य-समाज से निष्कासन की अवधि आजीवन निष्कासन से घटाकर केवल चार वर्ष के लिए निष्कासन तक सीमित कर दी।

इसके पश्चात् सार्वदेशिक सभा के लिए चुनाव हुए जिस में स्वामी आनन्दबोध सरस्वती को सर्वसम्मति से अगले सत्र के लिए सभा प्रधान घोषित किया गया और साथ-साथ उन्हें अन्तरंग सभा के गठन का भी पूर्ण अधिकार दिया गया।

तद् अनुसार स्वामी जी ने पं० सच्चिदानन्द शास्त्री को महामन्त्री तथा श्री ओमप्रकाश गोयल को कोषाध्यक्ष नामांकित किया। इसके साथ समितियां तथा उपसमितियों का भी गठन किया गया। जिसमें धर्मार्य सभा, गौरक्षा समिति, विद्यार्य सभा, विदेश प्रचार समिति, देशान्तर प्रचार समिति, दयानन्द सेवा सदन, जनसम्पर्क एवं प्रचार समिति, सार्वदेशिक आर्य वीर दल व आर्य नगर गाजियाबाद समिति। इन समिति के सदस्य और अधि-कारियों की भी घोषणा की गई।

आर्य नगर गाजियाबाद समिति में सर्वश्री स्वामी आनन्द बोध, श्री ओमप्रकाश गोयल, कै० देवरत्न आर्य, श्री इन्द्रराज, पं० सच्चिदानन्द शास्त्री, म० धर्मपाल, पृथ्वीराज शास्त्री, डा० धर्मपाल, श्री बाल दिवाकर हंस, श्री राजगुरु शर्मा, श्री वेदप्रताप वैदिक, चौ० लक्ष्मीचन्द।

इस अवसर पर निम्न प्रस्ताव पारित किए गए—

प्रस्ताव स० १—धर्मनिरपेक्ष भारत मुस्लिम देशों के घेरे में—

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी की इस आशंका से सहमत है कि यदि अफगानिस्तान एक कट्टरतावादी इस्लामी राज्य बन जाता है तो यह भारत के लिए एक बहुत बड़ा खतरा बन जाएगा। इस समय की स्थिति के अनुसार भारत एक धर्मनिरपेक्ष राज्य है जो दो कट्टरवादी मुस्लिम देश पाकिस्तान और बंगलादेश से घिरा हुआ है। दोनों ही देशों के राष्ट्रपति फौजी शासक हैं। देश की सीमाओं के अन्दर भी मुस्लिम और सिख कट्टरतावादियों के रूप में विघटनवादी तत्व इतने बढ चुके हैं कि अब उन से देश की एकता और अखण्डता को खतरा पैदा हो गया है। सार्वदेशिक सभा का मत है कि इस समय देश में एक गम्भीर स्थिति पैदा हो गई है जिस पर यदि समय रहते काबू नहीं पाया गया तो वह देश के लिए घातक सिद्ध होगी। इसके निराकरण के लिए इस समय केवल दो ही विकल्प हैं—

१ धर्मनिरपेक्षता को समाप्त कर देश को हिन्दू राज्य घोषित किया जाए, अथवा

२. देश के अन्दर और बाहर धार्मिक कट्टरतावाद के खिलाफ लड़ाई लड़ी जाए।

दूसरा विकल्प स्पष्टत हमारी ताकत के बाहर है। अत सब स्थिति को ध्यान में रखते हुए यही उचित है कि हम अपने आपको हिन्दू राज्य घोषित करें और उसे मुस्लिम कट्टरतावाद में बह जाने से रोकें।

प्रस्ताव स० २—एक दूसरे प्रस्ताव के द्वारा यह निर्णय लिया गया कि प्रत्येक राज्य में सभाएँ आयोजित की जाये और निम्न कार्यवाही हेतु प्रस्ताव पारित किये जाये—

१ अंग्रेजी हटाओ,
२ गोवंश की रक्षा करो,
३ दहेज विरोधी अभियान शुरू किया जाये।

यह भी निर्णय लिया गया कि राज्यों के सम्मेलनों के बाद सब समस्याओं पर विचार करने के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन दिल्ली में आयोजित किया जाये।

●

कब तक बहेगा, निर्दोषों का खून

१९ जून को हरियाणा के कुरु-क्षेत्र में और पंजाब के फगवाड़ा में फिर से आतंकवादियों ने निर्मम हत्याएं कीं जबकि २० जून को दिल्ली में तिलक नगर में बम फेंक कर कुछ लोग मार दिये और बहुत सारे घायल कर दिये। ये घटनाएं अत्यन्त ही दुर्भाग्यपूर्ण और और पूरे देश के लिए चिन्ता का विषय हैं।

आपरेशन ब्लैक थंडर के बाद यह महसूस किया गया था कि आतंक-वादी या तो तितर-बितर हो जायेंगे या आत्मसमर्पण कर अपने आप को सुधारने का प्रयास करेंगे या उनका सफाया कर दिया जाएगा।

वैसे तो यह सब हुआ भी लेकिन इन घटनाओं से ऐसा लगता है कि अभी तक आतंकवादियों के दिमाग ठिकाने नहीं आए। जहां तक अधि-कारियों का सवाल है, ऐसा महसूस होता है कि वे इन सब घटनाओं के अभ्यस्त हो गए हैं। जिस तरह वर्षा आने पर बाढ राहत कार्यों की जो सूची पहले से तैयार होती है, वह प्रसारित कर दी जाती है। इसी तरह सूखा या अकाल होने पर निश्चित परिपाटी के अनुसार कुछ काम घोषित कर दिये जाते हैं, उसी तरह इस तरह की घटना होने पर रेड अलर्ट की घोषणा कर दी जाती है और शायद यह समझ लिया जाता है कि नागरिकों की रक्षा का दायित्व पूरा हो गया।

विभिन्न तरह के अपराध तो हमेशा होते रहे हैं, हमेशा होते रहेंगे। छोटे तबके के या कमजोर वर्ग के या महिलाओं को जिन्दा जलाए जाने की निंदनीय घटनाएँ भी पूरी कोशिश के बावजूद रुक नहीं पाती। लेकिन इस तरह के नरसंहार होते रहना उन अधिकारियों के लिए और उन सरकारों के लिए निश्चित ही लज्जाजनक है, जिन का दायित्व

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

प्रभु-स्तवन

—स्वामी वेदमुनि परिव्राजक
अध्यक्ष—वैदिक संस्थान नजीबाबाद (उ० प्र०)

★

अग्निमीळे पुरोहितम् यज्ञस्य देवं ऋत्विजम् ।
होतारं रत्नधातमम् ॥ ऋ० १।१।१ ॥

(अग्निमीळे) अग्निम् ईडे, अग्निम्=अग्नि को, ईडे=स्तुतता हू। अग्नि की स्तुति करता हू। 'अग्नि. कस्मात् ?' कस्मात् कारणात् अग्नि ? किस कारण से अग्नि कहलाता है। अग्रणीर्भवति, अग्रणी भवति, अग्रणी होता है। अग्रणी होने से, अग्रणी होने के कारण से, आगे रहने वाला, आगे चलने वाला होने से, मार्गदर्शक होने से, अग्नि कहलाता है। जो आगे रहे, आगे-आगे चले, अन्यों का मार्गदर्शन करे, अन्यों को मार्ग दिखाए, उसे अग्नि कहते हैं।

वेद कहता है, अथवा यह कहिये कि वेद के शब्दों में वैदिक साधक कहता है (अग्निम् ईडे) अग्नि की स्तुति करता हूं। सचमुच वही स्तुत्य है, स्तुति करने, प्रशसा करने योग्य होता है, जो अग्रणी होता है, आगे-आगे रहता तथा मार्ग दर्शन करता है। जो अग्रणी न हो, आगे-आगे न रहे, जिसमें आगे चलने की योग्यता न हो, जो अनुकरणीय न हो अपितु केवल अनुकरण करना ही जानता हो। जो मार्ग दर्शक न हो, अन्यों का मार्ग दर्शन न कर सके, वह स्तुत्य प्रशसनीय नहीं हो सकता, उसकी प्रशसा नहीं की जाती। समस्त ससार उन्ही के गुण-गान करता है, जो पिछडे नहीं, अन्यों का आश्रय न चाहें अपितु आगे बढे तथा ससार का मार्ग-दर्शन करें।

परमपिता परमात्मा एक ऐसी ही शक्ति है जो सदा अग्रणी ही रहता है—कभी पीछे नही। वह कभी किसी का अनुकरण नहीं करता बल्कि सदैव अनुकरणीय ही रहता है। आप जहा जाइये, वह आपसे पहले वहा उपस्थित है। उसे किसी से कुछ सीखने की आवश्यकता नहीं अपितु वह सारे ससार को सिखाने वाला है। आदि सृष्टि मे ही उसने सारे ससार को ज्ञान दिया। जब मानव प्रथम बार उत्पन्न हुआ, उस समय उसे अन्य कोई ज्ञान देने वाला भी नही था उस परम पिता परमात्मा के अति-रिक्त। वही तो है सारे ससार का एक मात्र "सर्वेषामपि गुरु कालेनान-वच्छेदात्" जो काल अर्थात् मृत्यु से भी नहीं छेदा जाता अथवा जो काल अर्थात् समय से भी नही छेदा, काटा (बाटा) जाता, समय भी जिसका बटवारा नहीं कर पाता, वही तो है पूर्वकालिक अर्थात् आदि सृष्टि के मानवो का भी गुरु। अत वही स्तुत्य है, उसी की स्तुति करनी चाहिए। वेद का यह वाक्य कितना सार्थक है ? प्रत्येक को उसी प्रभु की स्तुति करनी चाहिए।

(यज्ञस्य) वह यज्ञ का 'यज्ञो वै श्रेष्ठतमम् कर्म' समस्त श्रेष्ठतम कर्मों का, उत्तम कर्मों का (पुरो-हितम्) पुरोहित है, उत्तम कर्मों का कराने वाला है। उस परमपिता पर-मात्मा से सदैव सत्कर्मों की प्रेरणा मिलती है—दुष्कर्मों को नहीं। जब मानव किसी दुष्कर्म को करने के लिए उद्यत होता है, तब वह परमात्मा उसे हतोत्साहित करता है। मन के अन्दर से ही उसे भयभीत किया करता है, मन में भय, शका तथा लज्जा का संचार करता है। जब मानव शुभ कर्म करने के लिए समुद्यत होता है, तब उसके मन में प्रसन्नता तथा उत्साह का सचार होता है। यह प्रसन्नता तथा उत्साह का सचार परमात्मा की प्रेरणा से होता है। सत्य तो यह है कि यह प्रसन्नता तथा उत्साह ही प्रभु की प्रेरणा है। वह प्रभु मार्ग दर्शन कर रहा होता है, वह कह रहा होता है कि इस कार्य को कर डालो। यह देरी करने का कार्य नहीं है, शुभस्य शीघ्रम्, शुभ कार्य में देरी न करो, इसे शीघ्र कर डालो। इस प्रकार की प्रेरणा देने वाला होने से वह 'यज्ञस्य पुरोहितं' यज्ञ का पुरोहित है, शुभ कर्मों का कराने वाला है।

पुरोहित का एक अर्थ है परहित साधक। जिस से पर हित सिद्ध न हो, वह पुरोहित ही क्या ? किसी से शुभ कार्य कराना उसका हित ही तो करना है। दुष्कर्म कराना तो अहित करना है अतः दुष्कर्मों की ओर प्रवृत्त करने वाला कभी पुरो-हित नहीं हो सकता। शुभ कर्मों की ओर प्रेरित करने वाले की ही पुरो-हित सज्ञा होती है।

(देवं) वह भगवान् देव है। 'यो दीव्यति क्रीडति स देवः" जो अपने स्वरूप में आनन्द से आप ही क्रीडा करे, वह देव है। (महर्षि दयानन्द)। भगवान् अपने स्वरूप में आप ही क्रीड़ा करते हैं। उन्हें कभी दुःख नहीं व्यापता, वह हैं ही आनन्दमय, अत आनन्द से क्रीडा करते हैं एतदर्थ उनका नाम देव है।

(ऋत्विजम्) वह ऋत्विज है, उसमें ऋषित्व है। वह मन्त्रद्रष्टा है, वह समस्त विचारों का जानने वाला है, ससार का कोई भी मन्त्र कोई भी विचार, कोई भी रहस्य उस से छिपा नहीं है। वह साक्षात्कृतधर्मा है, उसने धर्म का साक्षात् किया हुआ है। वह धर्म अधर्म के विषय में अन्धकार में नहीं है, वह जानता है धर्म क्या है और अधर्म क्या ? जाने भी क्यों नहीं ? सर्वज्ञ जो ठहरा। सर्वज्ञ से कोई रहस्य छिपा रह ही नहीं सकता। वह तो (सर्व) सभी कुछ (ज्ञ) जानने वाला है। रहस्य तो जीव से ही छिपे रह सकते हैं कारण कि यह ठहरा अल्पज्ञ (अल्प) थोडे (ज्ञ) ज्ञान वाला। यह सत्य है कि जीव भी मनुष्य शरीर में आकर ऋषित्व प्राप्त कर लेता है, किन्तु उसका ऋषित्व सीमित ही होता है क्योंकि इसकी शक्ति ही सीमित है, अल्प है। असीम शक्ति वाला तो वह प्रभु ही है अतः वही सर्वांग पूर्ण रूपेण ऋषि है।

(होतारं) आहुति दाता, आहुति देने वाला है। उसकी आहुतियां निरन्तर लग रही हैं। इस ससार यज्ञ का संचालक, परिचालक है वह। उसी की कृपा की आहुतियों से यह ससार यज्ञ चल रहा है। यज्ञ में आहुतियां न लगें तो यज्ञ समाप्त हो जावे। यह यज्ञ निरन्तर चलता रहे इसके लिए आवश्यक है कि निरन्तर आहुतियां लगती रहें। निरन्तर आहुतियां नहीं लगेंगी तो निरन्तर यज्ञ चल नहीं सकता। संसार यज्ञ निरन्तर चल रहा है तो केवल इसीलिए कि वह प्रभु इस यज्ञ में निरन्तर आहुतियां डाल रहा है।

आहुतियों का क्रम लगा हुआ है, अत्यन्त सुन्दर क्रम। दिन के पश्चात् रात्रि आती है तो रात्रि के पश्चात् दिन। वर्षा होती है तो भूमि शस्यश्यामला हो जाती है। भूमि शुष्क हो जाती है तो पुन. वर्षा होती है। वनस्पतियां फल-फूल रही हैं। पतझड होता है, वनस्पतियों के पत्ते झड जाते हैं, नव पल्लव आने लगते हैं तथा वह निरन्तर वृद्धि को प्राप्त होते रहते हैं। एक सीमा पर पहुच कर पुन. पतझड को प्राप्त होते हैं तथा पुन. नवपल्लव निकल आते हैं।

असंख्यों प्राणी इस ससार में प्रतिक्षण जन्मते और मरते रहते हैं। इधर मृत्यु होती तो उधर जन्म होता है। "बाप मरा घर बेटा हुआ, इसका घाटा उस में गया" वाली लोकोक्ति चरितार्थ हो रही है। जब तक यह क्रम इस ससार का चल रहा है, तभी तक यह यज्ञ चल रहा है, जिस दिन यह क्रम अवरुद्ध हुआ, उसी दिन यह यज्ञ समाप्त हो जायेगा। यह क्रम सचालित उसी प्रभु के द्वारा हो रहा है, वही इस यज्ञ में निरन्तर आहुतिया डाल रहा है। इसीलिये वेद उसे होता कहता है।

(रत्नधातमम्) रत्नों का धारण करने वाला है। ससार में जितने भी रत्न (बहुमूल्य पदार्थ) हैं, वह सब उसी प्रभु ने धारण किए हुए हैं। अब भी धारण कर रहा है, सृष्टि से पहले भी धारण कर रहा था। समस्त बहुमूल्य पदार्थ उसी के उदरस्थ तो थे, उसी के गर्भ में तो थे। वह हिरण्यगर्भ ही इन हिरण्य पदार्थों को धारण किए था। भौतिक पदार्थ ही नहीं समस्त पदार्थ विद्या भी, सारा ज्ञान-विज्ञान भी, उसी प्रभु से तो ससार को यह ज्ञान-विज्ञान मिला है। अत वह प्रभु समस्त ज्ञान-विज्ञान आदि तथा मूल्यवान् हिरण्यमय पदार्थ रूपी रत्नों को धारण करने वाला 'रत्न-धातमम्' है।

आत्मकल्याण चाहने वाले सभी जनों को चाहिए कि वह [illegible] प्रकाश स्वरूप तथा ज्ञानस्वरूप [illegible] की स्तुति करें, वही दिव्यस्वरूप इस ससार यज्ञ का पुरोहित है, वह ऋषित्व धारण किये हुए है, ऋषि है। होता, आहुति प्रदाता और रत्नों को धारण करने वाला है।

आधुनिक युग में वानप्रस्थ आश्रम की उपयोगिता

—डा० प्रशान्त वेदालंकार

卐

वानप्रस्थ के प्रसग में धर्म के तीन स्कन्धों—(१) विद्या का अध्ययन (२) वैदिक साहित्य में यज्ञ अर्थात् उत्तम क्रियाओं का करना तथा (३) दान अर्थात् विद्यादि उत्तम गुणों का देना—आदि का वर्णन किया गया है। इसी प्रकार (१) तप अर्थात् वेदोक्त धर्म के अनुष्ठानपूर्वक विद्या पढ़ाना (२) आचार्य कुल में वस के विद्या पढ़ना और (३) परमेश्वर का चिन्तन कर के सब विद्याओं को जान लेना—इन सब बातों में वानप्रस्थ में सब प्रकार का उन्नति करना मनुष्य का धर्म है। यहां यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि वैदिक सस्कृति के अनुसार व्यक्ति ने अपने गृहस्थ जीवन में जो अनुभव प्राप्त किए हैं, वानप्रस्थ में उनका अध्यापन तथा अध्यात्म विद्याओं का स्वय ही अभ्यास करना उसका कर्तव्य है। वानप्रस्थ व्यक्ति स्वाध्याय अर्थात् पढ़ने-पढ़ाने में नियुक्त रहे।

वानप्रस्थ में व्यक्ति प्राणायाम, योगानुष्ठान व ईश्वर भक्ति आदि में भी लीन रहते हैं। जो विद्वान् लोग शान्त चित्त होकर वन में तप, धर्मानुष्ठान और सत्य का श्रद्धापूर्वक ग्रहण कर भिक्षाचरण करते हुए जगल में बसते हैं, वे परमात्मा को प्राप्त हो के आनन्द प्राप्त करते हैं।

वानप्रस्थ की निम्नलिखित उपयोगिता व आवश्यकता है—

१ वृद्धावस्था में आकर व्यक्ति की शक्तियां सीमित हो जाती हैं। उसकी शक्तियों को बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि उसे पारिवारिक व अन्य सासारिक चिंताओं से मुक्त रखा जाए। घर से दूर किसी तपोवन में पहुचकर ही वह पारिवारिक व सासारिक चिन्ताओं से मुक्त रह सकता है।

२ वृद्धावस्था में सांसारिक उत्तेजक वातावरण को न छोड़ने पर वह अपनी लालच अथवा कामवृत्ति पर नियन्त्रण नहीं कर पाता। वह लम्बे समय तक भोग में प्रवृत्त रहता है। जिससे न केवल अस्वस्थ होता है, वरन् अनेक रोगों से भी वह आक्रान्त होने लगता है। अपने शरीर को स्वस्थ रखने व दीर्घायु के लिए भी उसको गृहस्थ का त्याग कर देना चाहिए।

३ परिवार में रह कर वृद्ध माता-पिता पुत्र और पुत्रवधू के कार्य में अपने बड़प्पन के कारण अनावश्यक रूप से हस्तक्षेप कर के पारिवारिक सुख-शान्ति को विनष्ट करते हैं। पारिवारिक सुख-शान्ति के लिए उनके पुत्र को स्वतन्त्र आजीविका व विवाहोपरान्त स्वतन्त्रतापूर्वक रहने का प्रावधान अनिवार्य है।

४ वानप्रस्थ ग्रहण करने पर भी उनका अपने परिवार से सर्वथा विच्छेद नहीं हो जाता। मा को तो यह विकल्प भी दे दिया जाता है कि यदि वह वानप्रस्थ न लेना चाहे तो अपने पुत्रों के साथ रह जाए। पुत्रों का कर्त्तव्य है कि वे अपने वानप्रस्थी माता-पिता के भरण-पोषण का ध्यान रखें, तथा समय-समय पर अपने वानप्रस्थी पिता के पास जाकर सासारिक समस्याओं पर उनसे विचार विमर्श करें।

५. सामाजिक व राष्ट्रीय दृष्टि से भी यह आवश्यक है कि वृद्ध लोग कुछ निश्चित समय के उपरान्त आजीविका के साधनों व उच्च पदों पर अपना अधिकार छोड़ दें। वह ठीक समय पर आजीविका के साधनों व उच्च पदों पर अपना अधिकार छोड़ दे। वह ठीक समय पर आजीविका के उच्च साधनों व उच्च पदों (सरकारी गैर सरकारी नौकरियों) व्यापार, राजनीति आदि से विरत नहीं होता तो नवयुवकों को कार्य प्रारम्भ करने में कठिनाई अनुभव होती है और पूरे राष्ट्र को बेकारी के भयकर रोग का सामना करना पड़ता है।

६ वानप्रस्थाश्रम की पद्धति से राष्ट्र में नि शुल्क अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था हो जाती है और उससे सम्पूर्ण राष्ट्र शिक्षित हो जाता है। प्रत्येक नगर और ग्राम के चारों ओर वानप्रस्थी अपनी कुटिया बनाकर रहने लगते हैं, और वहां छात्र आ-आकर अध्ययन करते हैं। इस प्रकार वानप्रस्थी व्यक्ति भी देश पर भार नहीं बनता। वह शिक्षा के प्रसार का महत्वपूर्ण कार्य सम्पन्न करता है। जो लोग शिक्षा के प्रसार का कार्य नहीं कर सकते वे भी समाज सेवा के अनेक कार्यक्रमों में अपना समय लगा सकते हैं।

वानप्रस्थाश्रम . असीमित उपभोग पर प्रतिबन्ध व उपाय

वानप्रस्थाश्रम के उपयोग के सन्दर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि गरीबी और बेकारी का एक बड़ा कारण असीमित उपयोग है। आज समाज में कुछ लोग अत्यन्त ऐश्वर्यपूर्ण साधनों का उपभोग कर रहे हैं किन्तु अन्य गरीबी के कारण मृतक का सा जीवन बिता रहे हैं। वैदिक विचारधारा का मूलाधार 'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा' त्यागपूर्वक उपभोग और अपरिग्रह था। उन्होंने प्राचीन वर्ण और आश्रम व्यवस्था की स्थापना द्वारा इसी असीमित उपभोग पर रोक लगाने का प्रयत्न किया। वर्णव्यवस्था के अनुसार उत्पादन की क्षमता वैश्य वर्ण में होती है। ऋग्वेद में वैश्य की उपमा पेट से दी गई है। जिस प्रकार व्यक्ति का खाया सम्पूर्ण भोजन पेट स्वय अपने पास नहीं रख लेता, वरन् उसका रक्त बना कर सारे शरीर को दे देता है, उसी प्रकार जिनके पास उत्पादन की क्षमता है, वे उसके उत्पादन को अपने पास में न रख कर ससार के प्रत्येक वर्ग को दें। किन्तु आज तो उस उत्पादन में सहायक बन कर भी किसान अपने उत्पादन का थोड़ा भी उपयोग नहीं कर पा रहे। यह विचित्र विडम्बना है राजा को ओर से इस प्रकार की व्यवस्था होनी आवश्यक है कि सम्पत्ति किन्हीं विशिष्ट हाथों में केन्द्रित न हो जाए। यदि पेट सारा भोजन अपने पास ही रख ले, उसका रक्त बना कर सम्पूर्ण शरीर को न दे तो पेट खराब हो जाता है। यही स्थिति समाज की है। यदि सम्पूर्ण सम्पत्ति कुछ हाथों में ही सीमित हो जाये तो इससे सम्पूर्ण राष्ट्र ही रुग्ण हो जाता है। आज हमारे देश की यही स्थिति है। इसे दूर करने के लिए क्रान्तिकारी कदम उठाने होंगे।

बेकारी और असीमित उपभोग के उन्मूलन के लिए जो एक अन्य क्रान्तिकारी कदम उठाना अनिवार्य है वह है धन कमाने की अवधि को कम करना। प्राचीन काल में आश्रम व्यवस्था के अनुसार व्यक्ति केवल गृहस्थाश्रम में २५ से ५० वर्ष की आयु के मध्य ही धनार्जन किया करता था इसी आयु के मध्य ही बलार्जन किया करता था इसी आयु के मध्य ही व्यक्ति अनेक एषणाओं—वित्तैषणा, पुत्रैषणा एव लोकैषणा की जीवन में पूर्ति करने के लिए लालायित होता है। वह इसी काल में विविध ऐश्वर्यों व भोगों की कामना करता है। किन्तु आज का व्यक्ति अपनी इस सुवर्ण आयु में बेकार रह कर अपनी एषणाओं को दग्ध कर डालता है। इस प्रसग में कुछ वर्ष पूर्व प्रकाशित "दता वाला समिति" की रिपोर्ट पर विचार करना आवश्यक है। उसके अनुसार १५ से २५ वर्ष की आयु तक के बेरोजगारों के कारण देश को विस्फोटक स्थिति का सामना करना पड़ रहा है। पर प्रश्न है कि यह समय तो उनकी शिक्षा प्राप्त करने का समय है। शिक्षा की पूर्ण सुविधाएं न होने के कारण उन्हें बेकारी का अनुभव हो रहा है। उन्हें शिक्षा की सुविधाएँ जुटा देने से देश को विस्फोटक स्थिति से बचाया जा सकता है।

मेरा विचार है कि शिक्षा क्षेत्र को छोड़ कर शेष सभी क्षेत्रों में सेवा काल २५ वर्ष से ५०-५५ अथवा ६० वर्ष की आयु तक ही होना चाहिये। इस समय छात्र प्राय २२ वर्ष की अवस्था में एम०ए० उपाधि प्राप्त करते हैं। यदि तीन वर्ष सैनिक शिक्षा, राष्ट्र सेवा अथवा किसी उत्पादक कार्य के लिए लगा दिये जाय (इन वर्षों में होने वाला व्यय सरकार स्वय वहन करे) तो उनकी अवस्था २५ वर्ष हो जायगी। उधर ५०, ५५ अथवा ६० की अवस्था के उपरान्त अथवा घर में किसी एक कमाऊ सदस्य के आ जाने के उपरान्त व्यक्ति को अपनी नौकरी छोड़ कर शिक्षा के क्षेत्र में आ जाना चाहिए। शिक्षा के क्षेत्र में वेतन केवल इतना हो जितना जीवन निर्वाह के लिए उचित हो। ५०-५५ वर्ष की आयु के उपरान्त व्यक्ति को किसी उच्च पद पर नहीं रहना चाहिए, शिक्षा क्षेत्र में रह कर ही वे राजनीति अथवा व्यापार का मार्ग-दर्शन अथवा निर्देशन करते रहें ऐसा मेरा विचार है। यदि हम केवल २५-३० वर्ष तक सेवाकाल निश्चित कर दें तो बेकारी की समस्या का उन्मूलन हो सकेगा।

इस प्रसग में यह बात स्पष्ट करना भी अनिवार्य है कि व्यापार, राजनीति एव आई०ए०एम० आदि राजकीय नौकरियों में आर्थिक आकर्षण होने के कारण अनेक

(शेष ६ पृष्ठ पर)

दुखों से घबरायें नहीं

ले०—यशपाल आर्य बन्धु, आर्य निवास, चन्द्रनगर, मुरादाबाद

★

पूर्व लेख में कह चुके हैं कि दुःख की कामना कोई नहीं करता और सुख सब कोई चाहता है। किन्तु न चाहने मात्र से दुःख निवारण नहीं होता और चाहने मात्र से सुख की प्राप्ति नहीं होती। इसलिए प्रायः लोग दुःख आने पर अधीर हो उठते हैं। यह भी कहा जाता है कि दुःख की घड़ियां बीतने में नहीं आतीं और सुख की घड़ियां बीतते पता भी नहीं चलता। यह इसलिए नहीं कि दुःख में घड़ी की सुइयां कोई धीरे चलती हों और सुख के समय में तेजी से। अपितु इन्तजार की घड़ियां जल्दी नहीं कटतीं। हम दुःख की समाप्ति की प्रतीक्षा करते रहते हैं इसलिए समय नहीं कटता। विपरीत इसके हम सुख में ऐसे तल्लीन हो जाते हैं कि समय बीतते पता ही नहीं चलता।

हमें ऐसे प्रयत्न करने चाहिए जिन से दुःखों से हम छूट सकें और सुख की प्राप्ति कर सकें। फिर भी हमें चाहिए कि सम्मुख आए दुःख से घबरायें नहीं। क्योंकि जैसा कि पंचतन्त्र में आया है—

व्यसनं प्राप्य यो मोहात्

केवलं परिदेवयेत्।

क्रन्दनं वर्धयत्येव

तस्यान्तं नाधिगच्छति ॥

अर्थात् दुःख को प्राप्त कर जो मनुष्य केवल मोहवश विलाप ही करता है, वह रोना ही बढ़ाता है, दुःख का पार नहीं पाता। अपितु—

व्यसनेष्वेव सर्वेषु

यस्य बुद्धिर्न हीयते।

स तेषां पारमभ्येति

तत्प्रभावादसंशयम् ॥

अर्थात् सब प्रकार के दुःखों में भी जिस की बुद्धि क्षीण नहीं होती, वह उसके प्रभाव से निःसन्देह उन दुःखों को पार कर जाता है। इसलिए—

केवलं व्यसनस्योक्तं

भेषजं नयपण्डितैः।

तस्योच्छेदसमारम्भो

विषादपरिवर्जनम् ॥

अर्थात् नीतिज्ञ विद्वानों ने विपत्ति नाश की केवल यह औषधि बतलाई है कि उस दुःख के नाश का उपाय करना तथा विषाद का परित्याग कर देना। तात्पर्य यह है कि विषाद का परित्याग एवं दुःख के नाश करने का उपाय करना ही विपत्ति-नाश की औषधि है। दुःख को धैर्यपूर्वक सह लेना दुःख के नाश का कारगर उपाय है। कहा भी है कि—

दुःख में सुख में जो अन्तर होता है।

दुःख का क्षण-क्षण मन्वन्तर होता है ॥

कह देने से दुःख थोड़ा सा घटता है।

सह लेने से छूमन्तर होता है ॥

यदि दुःख के बादल छाए हैं, तो घबरायें नहीं, वह अधिक दिनों तक रहने वाले नहीं। जब सुख नहीं रहा तो दुःख भी नहीं रहेगा। इसलिए—

सुखमापतितं सेव्यं

दुःखमापतितं तथा।

चक्रवत् परिवर्तन्ते

दुःखानि च सुखानि च ॥

सुखं वा यदि वा दुःखं

प्रियं वा यदि वाप्रियं।

प्राप्तम् प्राप्तमुपासीत

हृदयेनापराजितः ॥

अर्थात् सुख आ जाए तो उसे सह लें, दुःख आ जाए तो उसे भी उसी सहज भाव से सह लो, क्योंकि सुख या दुःख चक्र के पहिए की भांति सदा घूमते रहते हैं, उन में से कोई भी स्थिर नहीं रहता। अतः चाहे सुख हो, चाहे दुःख, चाहे प्रिय हो, चाहे अप्रिय जो भी मिल जाए, उसे सदा हृदय से अपराजित रहकर ग्रहण करे।

जिगर मुरादाबादी ने कहा है कि—

तूने गमे हयात से

घबरा न ऐ "जिगर"।

ऐसी भी कोई रात है

जिसका सिहर न हो ॥

अर्थात् गम की लम्बी रात से घबराना नहीं चाहिए क्योंकि ऐसी कोई भी रात नहीं होती, जिस का अन्त सुनहरे प्रभात में न हो। सुख और दुःख, जीवन में उतार-चढ़ाव की भांति आते ही रहते हैं। मनुष्य को चाहिए कि दुःख में हार न माने और सुख में इतराए नहीं। क्योंकि—

सुख भी नश्वर, दुःख भी नश्वर,

यद्यपि सुख-दुःख सब के साथी।

कौन भूले फिर सोच फिकर में,

आज घड़ी क्या है, कल क्या थी ॥

वस्तुतः क्षण भर के सुख में इतराना किस लिए और क्षण भर के दुःख से घबराना किस लिए? हमारी तो यह भावना होनी चाहिए कि—

दुःख में न हार मानूं,

सुख में तुझे न भूलूं।

ऐसा प्रभाव भर दे,

मेरे अधीर मन में ॥

मनुष्य वही है कि जो सुख और दुःख इन दोनों परिस्थितियों में सदा एक रस ही रहता है। क्योंकि 'मनस्वी कार्यार्थी न गणयति दुःखं न च सुखम्।' अर्थात् मननशील और कर्मशील व्यक्ति दुःख और सुख की परवाह नहीं करते। इसी को गीता की भाषा में स्थितप्रज्ञ कहते हैं, जिस के लिए श्रीयुत लालबहादुर शास्त्री ने लिखा था कि—"सुख दुःख में, लाभ-हानि में, मान-अपमान में, निन्दा-स्तुति में समभाव रहना, किसी भावावेश में उद्वेलित न होना, अपने को सन्तुलित रखना" गीता की यह ऐसी सीख है जो जीवन की पगडण्डियों में भटकते मानव को जीवन के राजपथ पर डाल देती है। दुःख को भी सुख की कोटि में, हानि को भी लाभ की कोटि में, अपमान को भी मान की कोटि में, निन्दा को भी स्तुति की कोटि में ला बिठलाना इन विरोधी तत्वों को एक स्तर पर ले आना, इन में से किसी से भी उद्विग्न न होना, यह एक ऐसा अद्भुत विचार है जो विश्व की विचारधारा को गीता की अपूर्व देन कहा जा सकता है।

(द्रष्टव्य—डा० सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार कृत गीता भाष्य की भूमिका)

स्वेट मार्डन ने एक स्थान पर लिखा है कि—"वह व्यक्ति जो सदा प्रसन्न रहता है और बड़ी से बड़ी विपत्ति आ जाने पर भी जिस के मुखमण्डल पर बराबर प्रसन्नता बनी रहती है, जो कभी भी और कैसे भी वातावरण में दुःखी अथवा निराश नहीं होता, वह अपनी इस आनन्दमयी प्रकृति से केवल खुद को ही लाभ नहीं पहुंचाता, बल्कि उन व्यक्तियों को भी प्रेरणा देता है जो अपना धैर्य खो चुके होते हैं, जिन की आशा निराशा में बदल चुकी होती है और जो अपने को बेसहारा समझने लगते हैं। ऐसे व्यक्ति के चेहरे पर सदैव मुस्कान बनी रहती है, चाहे उस के जीवन का हर पासा उलट जाए, चाहे हर बात उस के प्रतिकूल होने लगे। ऐसा व्यक्ति असाधारण होता है।"

(आप क्या नहीं कर सकते, पृष्ठ ६३)

[illegible] की [illegible] बात को दूसरे ढंग से [illegible] गया है। उस के अनुसार—

सम्पत्तौ च विपत्तौ

च महतामेकरूपता।

उदये सविता रक्तो

रक्तश्चास्तमये तथा ॥

अर्थात् सम्पत्ति और विपत्ति में महापुरुषों की एकरूपता बनी रहती है, जैसे सूर्य उदय काल और अस्त काल दोनों में ही लाल रहता है। और सत्य बात तो यह है कि महापुरुषों की शक्ति ही प्रायः विपत्ति में ही प्रकट हुआ करती है। जिस प्रकार चन्दन अग्नि में पड़ने अथवा घिसे जाने से सुगन्धि देता है, वैसी पहले नहीं देता, उसी प्रकार विपत्ति में महापुरुष भी सुगन्धि सी देने लगते हैं। महापुरुषों में उत्तम-उत्तम गुण प्रायः विपत्ति में ही प्रकट होते देखे गए हैं। विशेषतया धैर्य, सहनशीलता आदि कुछ गुण तो ऐसे हैं जिन की परख विपत्ति में ही होती है। जो कार्य प्रायः दुस्साध्य होता है, वह दुःख में सरलता से हो जाया करता है। कारण कि दुःख में मनुष्य का अन्तःकरण स्वभावतः ईश्वर की ओर उन्मुख रहता है, जिससे आत्मा का बल भी आश्चर्यजनक रूप से बढ़ जाया करता है। कविवर जयशंकर प्रसाद का यथार्थ कथन है कि—

दुःख की काली रजनी बीच

विकसता सुख का नवल प्रभात।

एक उल्का सा झीना नील

छिपाए है जिसमें सुख गात ॥

दुःख में सुख तो छिपा ही रहता है साथ में दुःख के बाद जो सुख मिलता है उसकी बात ही कुछ और होती है। क्योंकि—

सुखं हि दुःखान्यनुभूय शोभते

घनान्धकारेष्विव दीपदर्शनम् ॥

सुखात्तु यो याति नरो दरिद्रतां

धृतः शरीरेण मृतः स जीवति ॥

अर्थात् सुख निश्चय ही दुःखों को अनुभव करके ही सुशोभित होता है, जैसे घने अन्धकार में दीपक के दर्शन। सुख से जो मनुष्य दरिद्रता को प्राप्त होता है, वह शरीर धारण किये हुए भी मृतक के समान जीता है। वस्तुतः दुःख न हो तो सुख का महत्व ही क्या हुआ। फिर भी यह कहना पड़ेगा कि—

रखो गम में भी

खुश रहो ऐ "ओम"।

जीस्त इनाम है,

सजा तो नहीं ॥

लार्ड मैकाले की घातक शिक्षा पद्धति

—दिनेश विद्यावाचस्पति

सारे संसार को ईसाई बनाने की धुन वाला मैकाले नाम का एक अंग्रेज था। लार्ड मैकाले के नाम से इतिहास विख्यात १८३४ में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शिक्षा सलाहकार के रूप में भारत आया। इसने यहां रहते हुए निश्चय किया कि जब तक हिन्दुओं की शिक्षा को एकदम बदल न दिया जायेगा तब तक ईसाइयत का प्रचार नहीं हो सकता। सन् १८३६ अक्टूबर १२ को कलकत्ता से उसने अपने पिता के नाम जो पत्र लिखा उस में वह कहता है—हमारे अंग्रेजी स्कूल आश्चर्य रूप से बढ रहे हैं, और हिन्दुओं पर इसका गहरा प्रभाव पड रहा है। कोई हिन्दू जो इस अंग्रेजी शिक्षा को प्राप्त कर लेगा कभी भी वह सच्चा हिन्दू बन कर नहीं रह सकता। कुछ अभी तक नीति के रूप में अपने को हिन्दू कहते हैं और कुछ ने ईसाइयत स्वीकार कर ली है। मेरा यह विश्वास है कि यदि हमारी शिक्षा योजनाओं का पालन किया गया तो आज से ३० वर्ष बाद भारत की उच्च जातियों में एक भी मूर्ति पूजक नहीं रहेगा। और यह काम बिना मत परिवर्तन की घोषणा किये बिना धार्मिक स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप किये इस शिक्षा और चिन्तन से स्वतः होता जायेगा। मैं इस भविष्य का ध्यान कर हृदय से प्रसन्न होता हूं। मैकाले और मैक्समूलर का यह षड्यन्त्र यहीं समाप्त नहीं हुआ। जब वह इग्लैण्ड वापस गया तब मैकाले की प्रेरणा और ब्रिटिश सरकार की सहायता से इसे अधिक स्थायी दूरगामी और ठोस रूप दिया गया। ब्रिटेन के एक लखपति कर्नल बोडेन को एक प्रेरणा दी गई कि वह अपने धन का ट्रस्ट बना आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में एक संस्कृत पीठिका (संस्कृत चेयर) स्थापित कर के जिसका एक मात्र उद्देश्य हिंदुओं को ईसाई बनाना हो। मोनियर विलियम्स ने संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी की भूमिका में कर्नल बोडेन की वसीयत के शब्दों को उद्धृत करते हुए कहा है कि इस उदार दान का उद्देश्य संस्कृत के धर्म ग्रंथों के अनुवाद द्वारा अपने देश के लोगों को यह प्रेरणा देना है कि वे भारत के निवासियों को ईसाई धर्म में लायें। इस प्रकार आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय को हिन्दू धर्म के नाश का गढ़ बनाया। जर्मन देशोत्पन्न मैक्समूलर को इस पीठिका का हेड बनाया गया। उस समय लार्ड मैकाले ब्रिटिश सरकार का उच्च अधिकारी और इस बोडेन ट्रस्ट से सम्बद्ध था। २८ दिसम्बर १८५५ को वह मैकसमूलर से मिला और कुछ भय और अधिकांश प्रलोभन से उसे इस बात के लिए राजी कर लिया—बताया जाता है कि वह वेदों का भाष्य ईसाइयत के प्रचार की दृष्टि से ही करेगा धन का प्रलोभन एक विद्वान् को भी कितना पतित कर सकता है। यह मैक्समूलर के उदाहरण से सहज ही जाना जा सकता है। मैकसमूलर ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि कुछ भय पर धन और यश के लोभ से मैंने लाड मैकाले की बात को स्वीकार किया और १८६६ में मैकसमूलर ने अपनी पत्नी को एक पत्र में लिखा मेरा यह वेद का अनुवाद और मेरा यह संस्करण भारत के भाग्य पर अब से गहरा प्रभाव डालेगा। मेरा विश्वास है पिछले ३००० वर्ष में इन वेदों से जो कुछ प्रादुर्भाव हुआ है और जो उनके धर्म का मूल है। उसे निर्मूल करने का यही एक मात्र उपाय है। १६ दिसम्बर १८६८ को ब्रिटेन में भारत सचिव ड्यूक आफ अर्जियल को मैक्समूलर ने लिखा भारत का प्राचीन धर्म विनाशोन्मुख है। और यदि अब ईसाइयत इसका स्थान नहीं लेती तब यह किस का दोष होगा? मैक्समूलर के दिमाग पर भारतीयों को ईसाई बनाने की धुन कितनी जोर से सवार थी इसका प्रमाण उस पत्र से मिलता है जो उसने सन् १८९९ में भारत स्थित ब्रह्मसमाजी नेता श्री एन० के० मजूमदार को लिखा था। आपको और आपके देशवासियों को खुले तौर पर ईसा की शरण में आने में जो कठिनाइयां हैं उन्हें मुझे बताइये और मैं अपना उत्तर उनके विषय में लिख दूंगा। मेरे दृष्टिकोण से तो भारत कम से कम उसका सर्वोत्तम भाग ईसाइयत में पहले ही आ चुका है आपको अब ईसाई बनाने की प्रेरणा की भी आवश्यकता नहीं है। ब्रिटेन भारत के समस्त हिन्दूवासियों को ईसाई बनाने के लिए कितना उत्सुक था। और उसके लिए व्यापक प्रयत्न चल रहे थे। मैक्समूलर के एक घनिष्ठ मित्र ई० बी पुसे ने इस के वेद भाष्यों को देख कर जो पत्र लिखा वह उल्लेखनीय है, आपका कार्य भारत के ईसाई बनाने के यत्न में नवयुग लाने वाला होगा। और आक्सफोर्ड विश्वविद्यालय अपने को इसके लिए धन्य समझेगा। एक ओर संस्कृत ग्रंथों के अनुवाद द्वारा हिन्दू धर्म की निन्दा और दूसरी ओर सरकारी गैर-सरकारी दोनों उपायों से वेदों के अन्य सब अनुवादों और भाष्य को अशुद्ध और पक्षपातपूर्ण बताते हुए अपने भाष्य को ही सर्वश्रेष्ठ और प्रमाणित घोषित करना भारत को ईसाई बनाने के लिए ही था। लेकिन जिस समय महर्षि स्वामी स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का वेद भाष्य प्रकाशित हुआ और मैक्समूलर के हाथ आया तो वह एकदम आग बबूला हो गया। वह समझता था कि वेदभाष्य केवल मैंने ही लिखे हैं इस प्रकार स्वामी दयानन्द के भाष्य को देखते हुए कहा था कि अगर स्वामी दयानन्द मेरे वेद भाष्य करने से पहले मिलते तो वेद भाष्य करने का अधिकार और भारतवासियों को धन का लालच दिखा कर ईसाई बनाने के षड्यन्त्र से मैं मन्त्र मुग्ध होता। इसी विषय को लेकर किसी ने कहा था कि सच अगर स्वामी दयानन्द नहीं होते तो आज हम अंग्रेजीयत के जितने गुलाम हैं उस से कहीं अधिक। होते हम आज स्वतन्त्र देश मे होते हुए भी शिक्षा के स्तर में ईसाइयत के जाल में फसे हुए हैं। आज बढती हुई ईसाइयों की सख्या से यह साबित होता है कि कुछ वर्षों के बाद पूर्ण भारत ईसाई बन जाएगा। इसीलिए हमें आगे आकर नई शिक्षा नीति को लागू कर के ईसाई धर्म की शिक्षा पद्धति का बहिष्कार करने के लिए एक जुट हो जाना चाहिए।

आर्य वीर दल का शिविर

आर्यसमाज खण्डवा के प्रधान श्री भावजी भाई भानुसाली, उपप्रधान श्री कृष्णलाल आर्य एवं मन्त्री जी लक्ष्मीनारायण भार्गव ने एक संयुक्त बयान मे बताया कि जून माह की २१ से ३० जून १९८८ तक आर्यसमाज खण्डवा के तत्वावधान मे "आर्य वीर दल" का एक शिविर लगाया जा रहा है। जिस में नवयुवकों में राष्ट्रीयता एवं सांस्कृतिक चेतना जाग्रत करने हेतु प्रयास किया जाएगा। इस शिविर में मध्य प्रदेश एवम् महाराष्ट्र के करीब १०० विद्यार्थियों के भाग लेने की सम्भावना है। शिविर में भाग लेने वाले नवयुवकों के लिए भोजनादि की व्यवस्था नि:शुल्क आर्य समाज खण्डवा के द्वारा की गई है।

भावजीभाई भानुसाली
प्रधान, आर्यसमाज खण्डवा

छात्रों को पुरस्कार

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री ओमप्रकाश आर्य जी के ५४वें जन्मदिवस के उपलक्ष्य में महाशय धर्मपाल विद्या मन्दिर, बेरी वाला बाग, सुभाष नगर, नई दिल्ली में छात्र/छात्राओं की धर्मज्ञान की परीक्षाएँ आयोजित की गयीं जिस में क्षेत्र के हजारों बच्चों ने भाग लिया। इस परीक्षा में उत्तीर्ण हुए बच्चों को ट्राफी, शील्ड, कप तथा वैदिक साहित्य के पुरस्कार तथा प्रमाणपत्र देकर १४ मई १९८८ को सम्मानित किया गया।

ए० सी० भटनागर
संयोजक

ओजस्वी वक्ता, महान् आर्य संन्यासी, शास्त्रार्थ महारथी

महात्मा दर्शनानन्द संन्यासी

लेखक—कविरत्न जगदीशप्रसाद एरन नीमच

नयसीद्वति द्विष. कृणोष्युक्थशमिन। । नृभिः सुवीर उच्यसे ।ऋ०

जो मनुष्य अपने द्वेषी को भी वेदभक्त बना कर सुपथ का अनुगामी बना लेता है वह मनुष्यों में वीर पुरुष है।

वेदों के प्रकाण्ड पण्डित, शास्त्रार्थ समर के अमर सेनानी व विजेता दर्शनानन्द जी महाराज ऐसे ही वीरों की श्रेणी में अपना प्रमुख स्थान रखते हैं। आपके छोटे-छोटे ट्रैक्टों को पढ़ कर अनेकों अज्ञानान्धकार के गहरे गर्त में गिरने से बचे। आपकी शास्त्र[illegible] उक्तियों के [illegible] की मार से [illegible] विपक्षी कोने में जा बैठे।

महात्मा दर्शनानन्द जी का [illegible] पन का नाम श्री [illegible] किन्तु बाद में [illegible] का न [illegible] कृपाराम [illegible] का जन्म माघ कृ[illegible] १८६१ को पं० रामप्रता[illegible] के घर जिला लुधियाना के [illegible]रावा गांव में हुआ था। आपने छोटी आयु में ही संस्कृत व [illegible] पुस्तक गुलिस्तां [illegible] व अमरकोष के कई सौ श्लोक [illegible] कर लिए थे। [illegible] वर्ष की आयु में ही आप का विवाह अमृतसर के प० सुन्दरलाल जी की सुपुत्री पार्वती देवी के साथ हो गया था। कुछ बड़े होने पर आप ने एक छोटी सी दुकान गांव में ही खोल ली।

एक बार आपको महर्षि दयानद का अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश पढ़ने को मिला। विद्वान् तो थे ही। एक दिन घर से चुपचाप निकल पड़े तथा नित्यानन्द सन्यासी बन गये। महर्षि दयानन्द के जीवन जैसी घटना आपके साथ भी हुई। पंजाब के दीनानगर में जब आप एक पादरी से बात कर रहे थे इनके चाचा श्री जयराम जी शर्मा द्वारा पकड़े गये। आपने घर आने से पहले तीन [illegible] की (१) भगवा वस्त्र नहीं [illegible] (२) घर में न जाकर बैठक में रहेंगे (३) महर्षि दयानन्द द्वारा [illegible] पुस्तकें मंगा कर देनी [illegible]। आपने घर आकर मस्कुन [illegible] खोल ली।

पर [illegible] जिसके हृदय में वैदिक [illegible] की ज्योति जल उठी हो [illegible] कर बैठ सकते थे। [illegible] १८८८ में आपने काशी में [illegible] तथा बांकीपुरी से एक [illegible] "तिमिर नाशक साप्ताहिक" समाचार पत्र व कई आर्ष ग्रन्थों का प्रकाशन किया। यहीं "देव" शब्द पर आपका शास्त्रार्थ पं० शिवकुमार शास्त्री से हुआ। इस शास्त्रार्थ में आपकी पूर्ण विजय हुई। सन् १८९८ में आपने मुरादाबाद में वैदिक धर्म प्रेस स्थापित किया तथा यहां से भी "वैदिक धर्म" नामक साप्ताहिक निकाला। सन् १८९८ में आपका प० रामचंद्र वेदान्ती से दिल्ली में ऐतिहासिक शास्त्रार्थ हुआ। उससे आपकी कीर्ति सब ओर छाने लगी। यहां भी चावड़ी बाजार में आपने प्रेस स्थापित किया।

सन् १९०१ में वसन्त के दिन राजघाट पर श्री स्वामी अनुभवानन्द जी महाराज के चरणों में मस्तक रख कर आपने विधिवत् सन्यास की दीक्षा ली तथा उसी समय से आप स्वामी दर्शनानन्द सन्यासी के रूप में हमारे सामने आये। आपने अनेकों शास्त्रार्थ किये। आपको प्रत्येक मत का पूर्ण अनुभव व अध्ययन था। देवरिया नामक स्थान पर ५० मौलवियों से आपका 'पुनर्जन्म" के सिद्धान्त पर शास्त्रार्थ हुआ। आशातीत सफलता के कारण वहां आर्यसमाज की धाक जम गई आपने रावल पिण्डी में भी एक प्रेस खोला तथा समाचार पत्र प्रकाशित किये।

आप गुरुकुलों के शिल्पी के नाम से जाने जाते हैं। सर्व प्रथम आपने सिकन्दराबाद में गुरुकुल की स्थापना की। इसके बाद बदायूं, बनारसी, ज्वालापुर व पोठोहार में गुरुकुलों की स्थापना की। इन गुरुकुलों ने राष्ट्र को कई देशभक्त व विद्वान् दिये। स्वामी जी महाराज का इतना गहन अध्ययन था कि मृत्यु से दो वर्ष पूर्व आपने संसार के समस्त विद्वानों को चुनौती दी कि मैं वैदिक सिद्धान्तों के किसी भी विषय पर शास्त्रार्थ करने को तैयार हूं।

स्वामी जी महाराज का व्यक्तित्व बड़ा आकर्षक व तेजस्वी था आपने अनेकों ग्रंथ व सैकड़ों ट्रैक्ट लिखे तथा प्रकाशित करवाये। किन्तु तीव्र गति से प्रचार कार्य करते रहने के कारण आपका शरीर अस्वस्थ हो गया। सन् १९१३ में आप अत्यन्त अशक्त व रोगी हो गए थे। आप कुछ समय अजमेर में आनासागर के तट पर साधु आश्रम में रहे, किन्तु कोई लाभ न हुआ। इसके बाद भक्त पंडित मुरारी लाल जी आपको सिकन्दराबाद गुरुकुल में ले गये। यहां भी आपका बहुत इलाज हुआ, किन्तु प्रभु की इच्छा कुछ और ही थी।

७ अप्रेल सन् १९१३ की रात्रि बड़ी अशोभनीय घड़ी थी। इस रात्रि को यह अमर ज्योति 'ओ३म्' का जप करती हुई अपने पंचतत्व के इस चोले को त्याग कर "ओ३म्" में विलीन हो गई।

(पृष्ठ [illegible] का शेष)

"आधुनिक युग में वानप्रस्थ"

[illegible] शिक्षा के क्षेत्र [illegible] हैं। [illegible] प्रशिक्षित [illegible] का शिक्षा के क्षेत्र में [illegible] सकेगा। एम० ए० के [illegible] युवक को [illegible] अध्यापक अथवा [illegible] है [illegible] केवल पुस्तकीय ज्ञान [illegible] कुछ [illegible] [illegible] की [illegible] भी [illegible] शिक्षा के [illegible] परिवर्तन किया [illegible]।

वृद्धावस्था में जो लोग अतुल धन राशि [illegible] में लगे हुए हैं तथा राजनीति के क्षेत्र में जो उच्च पदों पर आसीन हैं हमारे इस सुझाव से निराश होंगे और वे राष्ट्रीय हितों की उपेक्षा कर के इस सुझाव के विरोध में कुछ तर्क प्रस्तुत करेंगे। उनकी सबसे प्रमुख आपत्ति यह हो सकती है कि व्यक्ति ५०-५५ वर्ष की आयु [illegible] परिपक्व होता है। उसके बाद उनके हट जाने पर जिन लोगों के हाथों में काम आयेगा वे अनुभव शून्यता के कारण सफलतापूर्वक काम नहीं कर पायेंगे। दूसरे शब्दों में वे युवा वर्ग की शक्ति, कार्य क्षमता एवं निष्ठा पर अविश्वास प्रकट करेंगे। किन्तु हमारी सम्मति में उनकी यह आपत्ति निर्मूल है। एक तो युवा व्यक्ति भावुक होने के कारण (कभी-कभी अनुभव शून्यता के कारण भी) वृद्ध व्यक्तियों की तुलना में कम बेईमानी करते हैं, दूसरे उनकी कार्य करने की शक्ति अधिक होती है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि हम ५५-६० वर्ष की आयु के उपरान्त व्यक्ति को धन कमाने से वंचित करना चाहते हैं, न कि उसके अनुभवों से लाभ उठाने के विरोध में हैं। प्रत्येक कार्य का मूल्यांकन धन से ही करने वाले लोगों को "मेरे इस सुझाव पर शंका हो सकती है। किन्तु व्यक्ति प्रतिष्ठा अथवा सम्मान का धन से भी अधिक मूल्यांकन समझता है। प्राचीन काल में पद और ऐश्वर्य की दृष्टि से राजा का अधिक महत्व था किन्तु अनुभव एवं आयु में वृद्ध मन्त्रियों की अथवा कुल गुरुओं तथा कुल पुरोहितों की प्रतिष्ठा उन से भी अधिक थी। राजा उनकी कोई भी बात टाल नहीं पाता था। ऐश्वर्य के मद में कोई राजा यदि उनकी अवहेलना करता था तो प्रजा उस राजा के ही विरुद्ध हो जाती थी। आज भी अवकाश प्राप्त व्यक्ति एक ओर शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करे तथा साथ ही वह जिस-जिस क्षेत्र में विशेषज्ञ हो, उस-उस क्षेत्र में सलाहकार के रूप में उनकी नियुक्ति हो। उसकी सलाह का वह क्षेत्र पूरी तत्परता से पालन करे। अधिकार की दृष्टि से वे उच्च वेतन प्राप्त करने वाले लोगों से अधिक मान्य हों। वृद्ध व्यक्तियों का ज्ञान एवम् युवा व्यक्तियों की क्रिया राष्ट्रीय कार्यों को अधिक सुचारु रूप से सम्पन्न कर सकेगी, ऐसा हमारा विश्वास है।

बेकारी के उन्मूलन के लिए एक अन्य बात पर भी विचार किया जा सकता है। जिन व्यक्तियों की आय ५००० रु० से ऊपर है उनकी पत्नियों अथवा उनके पतियों का अथवा अविवाहित सन्तानों का, जो कि उनके अधीन हों, नौकरी न दी जायें और यदि योग्यता के आधार पर देनी आवश्यक समझी जाए तो उन पर आयकर काफी लगा दिया जाए। प्रायः यह देखा गया है कि उच्च वेतन प्राप्त अधिकारी अपने अधिकार के बल पर अपने परिवार के प्रत्येक सदस्य को नौकरी दिला देता है। इस वृत्ति पर किसी सीमा तक नियन्त्रण करना आवश्यक है। इस से घरेलू वातावरण में सुधार होगा, तथा साथ ही देश की बेकारी समस्या पर भी विजय प्राप्त की जा सकेगी।

निष्कर्षत बेकारी का उन्मूलन अथवा राष्ट्रीय सम्पत्ति का समान वितरण हमारी सभी घरेलू समस्याओं में सब से प्राथमिक समस्या होनी चाहिए। इस समस्या का समाधान राष्ट्रीय दृष्टिकोण से करना चाहिये, न कि किसी विशेष व्यक्ति अथवा वर्ग के हितों को ध्यान में रखते हुए। वैदिक वानप्रस्थ व्यवस्था में आधुनिक युगानुरूप कुछ परिवर्तन कर के समाज अथवा राष्ट्र अनेक प्रकार से लाभान्वित हो सकता है।

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N. No. 32387/77 Post in N.D P.S O. on 23, 24-6-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस न० यू १३९

(पृष्ठ १ का शेष)

नागरिको की रक्षा करना है।

सभी राजनतिक दल विधान-सभा या लोकसभा के उपचुनाव मे लाभ ले रहे हैं, किसी का भी ध्यान इन समस्याओं की ओर नही है। अधिक से अधिक प्रस्ताव पास कर देने या वक्तव्य प्रसारित कर देना अपना धर्म मान बैठे हैं।

अब इस दावे की भी कोई अह-मियत नहीं रही कि आतंकवाद धार्मिक समस्या है या सामाजिक या आर्थिक समस्या है। शुद्ध रूप से यह शान्ति और कानून की समस्या है। हत्यारो को चाहे वे किसी भी वर्ग और धर्म के हो। सवाल यह नहीं है कि किस ने बम फेंके और कौन मरे? सवाल यह है कि बडी संख्या मे निर्दोष नागरिको की निर्मम हत्याएँ की गयी। यह भी विवाद का विषय हो सकता है कि अमुक घटनाओं के लिए अमुक सगठन दोषी है या अमुक राजनीतिक दल का समर्थन प्राप्त है। इस तरह के आरोप लगाना भी नाइन्साफी है कि किसी खास राज-नतिक नेता का बदनाम करने के लिए उक्त नेता के विरो ... की घृणित घटनाएँ ... हैं हत्याएँ हो जाने के ब ... व्यक्तियों को मुआवजा ... या दिला देना कागजी खानापूर्ति हो सकती है लेकिन मुआवजो से भी परिवारो का कोई भला नही होता।

यह बहाना भी बेमानी है कि अमुक सगठन को दूरदर्शन के अमुक धारावाहिक से चिढ है। कोई धारा-वाहिक किसी को अच्छा लगता है या नही, यह व्यक्तिगत मामला है। यदि किसी को कोई धारावाहिक पसन्द नही है तो अपनी नापसन्दी का इजहार सम्बन्धित अधिकारियो को लिखकर या अखबारो के माध्यम से व्यक्त कर सकता है लेकिन निर्दोष नागरिको की हत्या करके किसी धारावाहिक के प्रति असंतोष जाहिर करना नाइन्साफी है।

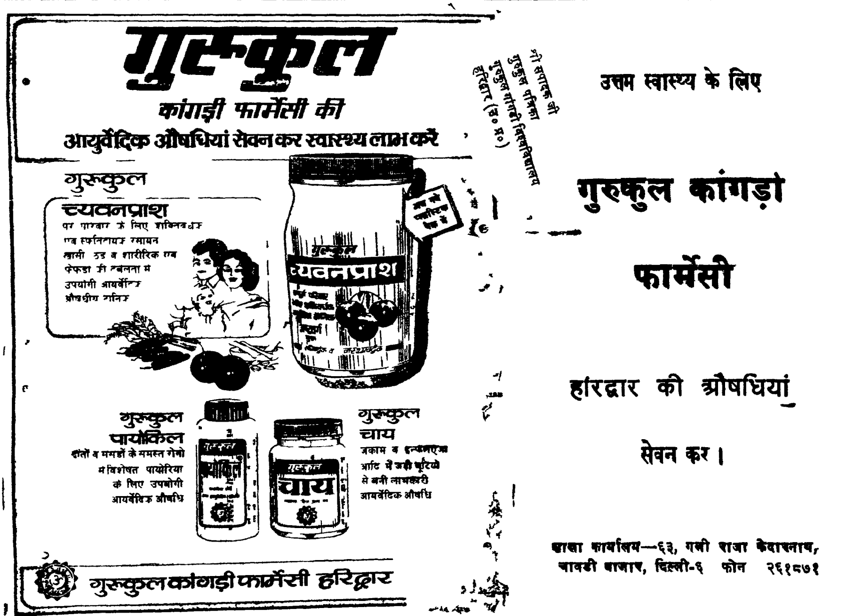
हम पहले भी कई बार कह चुके हैं कि आम नागरिको को अपनी रक्षा का दायित्व केवल सरकार पर नही छोड देना चाहिए। इसके लिए अब जरूरी हो गया है कि नागरिको के स्तर पर कुछ कदम उठाए जाय। सरकार को भी मजबूर किया जाये कि वह हत्यारों के तुष्टीकरण से बाज आए।

कितनी हैरानी की बात है कि जिस सगठन का उद्भव हिन्दुओ की रक्षा के लिए किया गया था, उस सगठन के चंद सिरफिरे हिन्दुओं की जान के दुश्मन बन बैठे हैं। सगठन के बाकी अधिकांश लोग अभी तक मूक दर्शक बने हुए हैं। लेकिन जब से इन हत्यारो ने हत्या करते समय हिन्दू और सिखों का भेद समाप्त कर दिया, तब से अनेकों वरिष्ठ सिख सगठनों ने इन हत्यारो के खिलाफ खुलकर बोलना तो शुरू किया है, लेकिन अकाल तख्त के मुख्य ग्रन्थी और जो लोग हुक्मनामा जारी करते हैं या कराते हैं, वे क्योंकि चुप हैं। उन्हें यह हुक्मनामा जारी करने में क्या तकलीफ है कि निर्दोषों की हत्या करना सिखो के खिलाफ है, और जो इस तरह की हत्याएं करेंगे उसे तनखइया घोषित किया जाएगा। यह तो समझ में आ सकता है कि विदेशी शक्तियां खासतौर से पाकि-स्तान इन आतंकवादियो की मदद करे, लेकिन धार्मिक नेताओ को अपने धर्म और देश के प्रति गद्दारी करने के लिए यदि उसे प्रोत्साहित करता है, तो वह धर्म और देश की क्या सेवा हुई। सामान्य प्राणियो और इन धर्म नेताओ के बीच में क्या अन्तर हुआ।

निर्मम हत्याओ के लिए धार्मिक नेताओं की दया पर कानून और शान्ति व्यवस्था नही छोडी जा सकती। इन सबका चुनावो पर क्या असर होगा। सवाल यह नही है कोई हारे, कोई जीते, वह अलग बात है, लेकिन इस तरह के घिनौने हत्याकाण्ड को हर हालत में रोका जाना चाहिए।

क्या इस तरह की घटनाओं से जो लोग पीडित हैं और जो समुदाय दुखी हैं उन्हें प्रतिक्रिया में या जल्द-बाजी मे ऐसा कोई काम नही करना चाहिए जिस से यह आगे बढे। धीरज और शान्ति के साथ इस दुख को सहन किया जाए और ऐसे प्रयास किये जायें कि समाज के सभी वर्ग मिलकर इस तरह की हत्याओ को दोबारा मौका न दें।

—जगन्नाथ शास्त्री



दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
आर्य सन्देश

वर्ष १२ : अंक ३७ | रविवार ३ जुलाई १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | आषाढ़ २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य : एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

पागल गुरु

ले०—के० नरेन्द्र

कोई यह न समझे कि केवल गैर हिन्दुओं में ही जनूनी और अन्धविश्वासी नेता हैं। हिन्दुओं का एक गुरु निरञ्जनदेव तीर्थ सम्पूर्ण मुल्लाओं और ग्रन्थियों को चैलेंज करता है कि इसका मुकाबला करके देखो कि इन में से बड़ा और अधिक पागल कौन है। मुझ से अगर कोई पूछे तो मैं तो यह ही कहूंगा कि निरजन देव भी किसी से कम नहीं है। हम रोते हैं कि मुसलमानों और सिखों के अनपढ़ ग्रन्थी और मुल्ला इन्हें गुमराह करते रहे हैं। लेकिन आप इस निरजन देव के बारे में क्या कहेंगे जो पढ़ा लिखा है, लेकिन आज के युग में बातें ऐसी करता है कि स्कूल का एक छोटा बच्चा भी इन्हें सुन कर लज्जित हो जाए। आज से कुछ दिन पहले इस ने कहा था कि सती हिन्दुओं के धार्मिक शास्त्रों के अनुसार जायज प्रथा है। इस पर स्वामी अग्निवेश ने इसे चैलेंज किया कि शास्त्रार्थ करके अपना दावा सिद्ध करो।

उत्तर प्रदेश की सरकार ने हस्तक्षेप करके उस समय एक पब्लिक अपमान से बचा लिया। अब इसने एक और बहकी बात कर दी है वह यह कि मन्दिरों में हरिजनों को प्रवेश की अनुमति न होनी चाहिए क्योंकि हिन्दू शास्त्रों में ऐसा लिखा है। इस पर केवल यह ही कहा जाएगा कि जो शास्त्र अपने आप को हिन्दू कहने वाले किसी व्यक्ति पर मन्दिर में प्रवेश करने के प्रतिबन्ध की आज्ञा देता है वह पूजा के योग्य नहीं बल्कि चौराहे पर आग लगाने के योग्य है। सच्चाई यह है कि सारा वैदिक दृष्टिकोण छुआछूत हरिजन-सवर्ण आदि बेहूदगियों के विरुद्ध है। कुछ ऐतिहासिक परिस्थितियों ने हिन्दू समाज में कुछ विकार उत्पन्न कर दिए हैं। वर्षों से ये चल रहे हैं और अनपढ़ लोगों ने यह समझना प्रारम्भ कर दिया है कि इन्हें शास्त्रों का आशीर्वाद है। संस्कृत का अधूरा ज्ञान रखने वाले कुछ लोगों ने ऐसे विचारों को बल दिया है। सच्चाई यह है कि वेदों के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति ईश्वर पुत्र है। प्रत्येक का इतना ही सम्मान होना चाहिए जितना किसी का होता है। गुण, कर्म और स्वभाव थ्योरी की जब भी आप ठीक से व्याख्या करेंगे आप को दिखाई दे जाएगा कि हिन्दू धर्म में और हिन्दू शास्त्रों में कहीं भी इस बात की आज्ञा नहीं दी गई कि किसी ईश्वर पुत्र को किसी पूजा स्थान से दूर रखा जा सकता है। यह सब तो धार्मिक दृष्टिकोण है लेकिन कोई इस निरजन देव तीर्थ से पूछे कि अगर ये हरिजन इनके मन्दिरों में प्रवेश पर प्रतिबन्ध से बेज़ार होकर किसी दूसरे धर्म में चले जायं तो इस की आत्मा को शान्ति प्राप्त होगी। आज तक लाखों हरिजन इसीलिए हिन्दू धर्म का त्याग कर चुके हैं कि हिन्दू समाज में इनका जानबूझ कर अपमान किया जाता है।

(वीर अर्जुन से साभार)

शंकराचार्य स्वामी निरंजनदेव तीर्थ के वक्तव्य का कड़ा विरोध

दिल्ली २४ जून।

पिछले दिनों जयपुर में पुरी के शंकराचार्य निरंजनदेव तीर्थ द्वारा हरिजनों के मन्दिर प्रवेश पर कड़ी आपत्ति उठाई गई थी। इस पर स्वामी आनन्दबोध सरस्वती ने कहा—शंकराचार्य का वक्तव्य जन्मगत वर्णव्यवस्था के रूढ़िवादी कुप्रथाओं का परिणाम है, जिस के कारण भारत को हजारों वर्षों तक गुलाम रहना पड़ा। उनका वक्तव्य भारत के संविधान की भी अवमानना करता है, अतः भारत सरकार को उनके विरुद्ध कड़ी कार्रवाई करनी चाहिए।

स्वामी आनन्दबोध जी ने कहा—महर्षि दयानन्द सरस्वती ने जन्मगत वर्णव्यवस्था के कुपरिणामों से बचने के लिए ही आज से सवा सौ साल पहले गुण, कर्म और स्वभाव के आधार पर वर्णव्यवस्था के सिद्धांत का उद्घोष किया था जिसके परिणामस्वरूप आर्यसमाज ने हजारों हरिजनों को गुरुकुलों में वेद व वैदिक ग्रन्थों का अध्ययन कराकर आर्यसमाज मन्दिरों में पुरोहित का पद देकर सम्मानित किया। आज पूरे आर्य जगत् में हजारों आर्यसमाजी पुरोहित हरिजन भी हैं।

स्वामी आनन्दबोध सरस्वती ने कहा कि शूद्र शब्द अस्पृश्यता का नहीं अपितु सेवा धर्म का द्योतक है। आर्यसमाज शंकराचार्य की हिन्दू जाति को विघटित और कमजोर करने की कार्रवाई का कड़ा विरोध करता है। उन्होंने हिन्दू समुदाय के समस्त मण्डलेश्वरों, सनातन धर्म सभाओं और आर्यसमाज तथा अन्य संस्थाओं से अपील की है कि सब मिलकर शंकराचार्य के उक्त वक्तव्य का कड़ा विरोध करें और हिन्दू जाति को छुआछूत के भेदभाव की खाई में पुन गिरने से बचायें।

अस्पृश्यता निवारण सम्मेलन

३ जौलाई, रविवार—२ बजे से

स्थान—सप्रू हाउस, बारहखम्भा रोड, नई दिल्ली

पुरी के शंकराचार्य स्वामी निरंजनदेव तीर्थ द्वारा सती प्रथा के समर्थन और हरिजनों के मन्दिर में प्रवेश पर उठाई आपत्तियों को दैनिक पत्रों में आप ने पढ़ा होगा। शंकराचार्य का यह वक्तव्य जन्मगत वर्णव्यवस्था एव रूढ़िवादी कुप्रथाओं का परिणाम है।

इस वक्तव्य के विरोध में दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से ३ जौलाई १९८८ को अपराह्न २ बजे से सप्रू हाउस, बारहखम्भा रोड, नई दिल्ली में सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया है।

अध्यक्ष—स्वामी आनन्दबोध सरस्वती

वक्तागण—श्री सीताराम केसरी
श्री प्रेमचन्द गुप्ता
श्री रमाकान्त गोस्वामी
श्री चिन्तामणि
डा० वाचस्पति उपाध्याय
डा० धर्मपाल
श्री सूर्यदेव

आप से विनम्र अनुरोध है कि आप अपनी आर्यसमाजों व संस्थाओं की ओर से अधिक से अधिक संख्या में बस आदि के द्वारा पहुंचें।

निवेदक मूलचन्द गुप्त
मन्त्री—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

आर्यसमाज का प्रथम नियम

सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

लेखक—स्वामी सत्यानन्द जी महाराज

सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।

यह प्रथम नियम इस भाव को प्रकाशित करता है कि सारी सत्य विद्याओं का और विद्या द्वारा जानने योग्य पदार्थों का मूल परमेश्वर है। इस में आदि मूल का अर्थ मुख्य आश्रय, आधार और पहला निमित्त अथवा प्रेरक कारण समझना चाहिए। सत्य का अर्थ निर्भ्रान्त है, यथार्थ है। यह 'सत्य' शब्द अपूर्ण विद्या और इन्द्रजाल आदि का निराकरण करता है। इस नियम के पहले भाग में ईश्वर को सब सत्यविद्याओं का आदि मूल माना गया है। तीसरे नियम में बताया है कि 'वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है।' दूसरे शब्दों में सब सत्यविद्याओं का बोधक वेद है। मनु महाराज के वचनों में 'सब कुछ वेद से ही प्रकट होता है और वेद ज्ञानमय है।" ब्राह्मण ग्रन्थों के पाठ से, उपनिषदों के अध्ययन से, स्मृतियों के स्वाध्याय से, सूत्र-श्रौत पुस्तकों के विचार तथा पुराणों तक के पढने से इस बात का पूर्ण बोध हो जाता है कि ऋषि-मुनि लोग सदा वेद को ही ज्ञान का स्रोत और विद्याओं का भण्डार मानते रहे हैं। उन के मत में वेद-रूपी सूर्य से ही अपरा और परा आदि विद्याओं की ज्योति का विस्तार हुआ है।

"तस्माद्यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे"—उसी सर्वपूज्य, यज्ञस्वरूप परमेश्वर से ऋग्वेद, यजुर्वेद और सामवेद का प्रकाश हुआ। जो वेद सब सत्यविद्याओं का भंडार है, वह परमात्मा का ज्ञान है और परमात्मा में आश्रित है। उपनिषद् वचन में कहा है कि 'जैसे मनुष्य के मुख से श्वास का निःसरण होता है, उसी प्रकार ईश्वर से वेद का प्रकाश हुआ है।" इस कथन का तात्पर्य यह है कि गणित आदि सत्य—पूर्ण—विद्याओं का और सम्पूर्ण यथार्थ ज्ञान का कोश वेद है और वेद का आश्रय—आदिमूल—परमेश्वर है। इस कारण धार्मिक दृष्टि से ईश्वर सब सत्यविद्याओं का आदि मूल है।

लौकिक बुद्धि से यदि विचारा जाए तो भी यही सिद्ध होता है कि सब सत्यविद्याओं का आदिमूल परमात्मा ही है—ज्ञान भीतर से ही खिलता है। बाहर की वस्तुएं तो केवल निमित्त-मात्र हुआ करती हैं। जिस जन की विवेक-बुद्धि नष्ट हो गई हो, ऊहापोह भ्रष्ट हो गई हो, जिसके मस्तक में विकास न हो, जिसमें नई उपज का नाम भी न पाया जाये, वह बाहर के निमित्तों से किसी विद्या का प्रकाश नहीं कर सकता। नये-नये आविष्कार वही जन करते हैं जिनके भीतर प्रतिभा का प्रदीप देदीप्यमान हुआ करता है। आज तक जितनी भी विद्याओं का विकास हुआ है, सब मननशील, विवेकी और प्रतिभाशाली मनुष्यों द्वारा ही हुआ है। ये सब अन्तरङ्ग शक्तियां हैं। इन का आधार—प्रेरक—परमात्मा है।

"एकेनैव विज्ञातेन सर्वमिदं विज्ञातं भवति" उस एक के ही जानने से यह सब दृश्यमान जगत् जाना जाता है, फिर कुछ भी जानने योग्य शेष नहीं रह जाता क्योंकि अनन्त में ही ज्ञान की पूर्णता होती है। वही जीवात्मा का परम धाम है। जिसके जानने से सब कुछ जाना जाता है और जिसमें ज्ञान पूर्णता को प्राप्त करता है, वही हमारे ज्ञानों का आदिम मूल है, पहला प्रेरक है और मुख्य आधार है। पहले नियम के दूसरे भाग में यह बताया गया है कि "जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।" सूर्य से लेकर पृथ्वी पर्यन्त जितने सूक्ष्म और स्थूल पदार्थ अथवा परमात्मा से भिन्न जितने द्रव्य हैं, उन सब का आधार परमेश्वर है। सोई हुई निश्चेष्ट प्रकृति की साम्यावस्था को विषमावस्था में बदलने वाला ईश्वर है। कारण-कार्यक्रम का प्रथम सञ्चालक परमात्मा है।

लौकिक विद्या से प्रायः वही पदार्थ जाने जाते हैं जो कार्यावस्था में हैं। इन को कारणावस्था तो अलक्ष्य और अगम्य है। इस कार्य-रूप प्राकृत पेड़ का मूल उपनिषत्कार ने इन शब्दों में वर्णन किया है—'ऊर्ध्वमूलोऽर्वाक्शाख एषोऽश्वत्थः सनातनः।"—इस प्रकृति—कार्य रूप—पीपल के पेड़ का मूल ऊपर है और शाखाएं नीचे को फली हुई हैं। दूसरे शब्दों में इस सारे ब्रह्माण्ड का मूल आधार ब्रह्म है। इसकी कारणावस्था ब्रह्म में है और कार्यावस्था देश-काल में।

कार्य रूप जितने भी पदार्थ दिखाई देते हैं, उन सब की यह अवस्था विकृतिरूपा है विनाशिनी है, सत्—वास्तविक नहीं है। कहा भी है—

सन्मूलाः सोम्येमाः सर्वाः प्रजाः सदायतनाः सत्प्रतिष्ठाः।

इन सब प्रजाओं—पदार्थों—का मूल सत् में ब्रह्म में है। वही सत् ब्रह्म इनका आधार है, उसी में ये प्रतिष्ठित हैं। वेद में भी "सत्येनोत्तभिता भूमिः" इत्यादि वाक्यों में यही वर्णन किया है कि पृथिवी आदि सारे पदार्थ परमेश्वर ही के आश्रय में हैं। वही इनका आदि मूल है। सारांश यह है कि सम्पूर्ण ज्ञानों और सारे ज्ञान से जानने योग्य—ज्ञेय—पदार्थों का आदि मूल परब्रह्म है, और उसी के आदिम ईक्षण से—प्रेरणा से—यह सारा आध्यात्मिक और प्राकृत विकास हुआ है।

अनुशीलन

इस पहले नियम का पालन करने के विश्वासी जनों को कारण-कार्य भाव का चिन्तन करना चाहिए और विचारना चाहिए कि इस जगत् का आदि मूल ब्रह्म है। उस ब्रह्म का कोई भी कारण नहीं है, क्योंकि मूल का मूल नहीं हुआ करता। जैसे वृक्ष मूल के आधार पर होता है, उसी प्रकार यह ब्रह्माण्ड वृक्ष परमात्मा के आश्रित है। लयावस्था में जगत् उस में उसी प्रकार रहता है जैसे कि बीज में वृक्ष। सृष्टि-काल में उसी ब्रह्म में से जगत् का उसी प्रकार विकास होता है जैसे मकड़ी में से तन्तुओं का।

प्रत्येक मनुष्य में खाने-पीने की वृत्ति की भांति ज्ञान, जीवन और आनन्द की भी वृत्तियां हैं। ये तीनों वृत्तियां अनन्तता की ओर उसी तरह दौड़ रही हैं जैसे समुद्र की ओर नदियां। कोई भी प्राणी अल्प ज्ञान, अल्प जीवन और अल्पानन्द को नहीं चाहता। कोई भी मनुष्य पसन्द नहीं करता कि उसका ज्ञान, उसका जीवन और उसका आनन्द किसी देश में, किसी काल में—कहीं कभी—नष्ट हो जाए। सभी जीव देशकाल से निर्बाधित ज्ञान, जीवन और आनन्द चाहते हैं। प्राणियों की यह कामना नैसर्गिक, स्वाभाविक है। इन नैसर्गिक वृत्तियों की परितृप्ति अनन्त—परब्रह्म—के अतिरिक्त दूसरे किसी भी पदार्थ लाभ से नहीं हो सकती। कहा भी है—"नाल्पे सुखमस्ति" अल्प में, परिच्छिन्न में, सुख नहीं है। सुख तो महान् और अनन्त में है। महान् और अनन्त परमेश्वर है। वही जिज्ञासा करने और जानने योग्य है। उसी की कामना और प्रेरणा से यह ब्रह्म-चक्र चल रहा है।

शिमला में आर्य महासम्मेलन सम्पन्न

शिमला में आर्य प्रतिनिधि सभा हिमाचल प्रदेश की ओर से आयोजित आर्य महासम्मेलन दिनांक १० से १२ जून तक बड़ी धूमधाम से सम्पन्न हो गया। इस अवसर पर कार्यकर्ता सम्मेलन, महिला सम्मेलन, युवा सम्मेलन, शिक्षा सम्मेलन, कवि/संगीत सम्मेलन, वेद सम्मेलन तथा राष्ट्रीय एकता सम्मेलन आयोजित किए गए। इस अवसर पर अन्य वक्ताओं के अतिरिक्त सर्वश्री स्वामी विद्यानन्द सरस्वती, डा० भवानीलाल भारतीय, प्रो० शेरसिंह, आदि अनेक नेताओं एवं विद्वानों ने भाग लिया। महिला सम्मेलन की मुख्य अतिथि हिमाचल प्रदेश की विधान सभा अध्यक्षा श्रीमती विद्या स्टोक्स थीं तथा राष्ट्रीय एकता सम्मेलन के मुख्य अतिथि समाज एवं कल्याण मन्त्री श्री चौधरी पीरू राम जी थे। कवि सम्मेलन में श्री सारस्वत मोहन "मनीषी" जी अध्यक्ष थे।

गीता और ऋषि दयानन्द

लेखक—श्री अमर स्वामी जी सरस्वती, कवि नगर गाजियाबाद

卐

आर्यसमाज के प्रायः सभी विद्वान् गीता का सम्मान करते और गीता को मानते रहे हैं और मानते हैं। अब आर्यसमाज के दो तीन सज्जन गीता के घोर विरोधी हैं। उन की दृष्टि में गीता से अधिक हानिकारक और बुरा ग्रन्थ दूसरा कोई भी नहीं है। वह दो तीन सज्जन गीता को न मानें, सब से बुरा ग्रन्थ कहें उस को मीठा विष बतायें, ऐसा मानने और कहने में वह स्वतन्त्र हैं, पर ऋषि दयानन्द जी गीता को त्रिदोष का सन्निपात या छल का ग्रन्थ कहते हैं, ऐसा लिखना और कहना उचित नहीं है क्योंकि महर्षि दयानन्द जी ने अपने ग्रन्थों में गीता के प्रमाण लिये हैं। वह अपने व्याख्यानों में गीता के श्लोकों का प्रयोग करते रहे। उन के जीवन चरित्र के पढ़ने से पता लगता है कि वह गीता की कथा भी करते थे और सारी आयु भर गीता के श्लोकों पर उठने वाली शंकाओं का समाधान भी करते रहे। ऋषि के पत्र व्यवहार के पढ़ने से भी पता लगता है कि ऋषि ने अपनी मृत्यु के कुछ मास पूर्व तक अपने पत्रों में गीता के श्लोकों का प्रयोग किया है।

महर्षि दयानन्द जी महाराज ने गीता के श्लोकों का प्रयोग कहाँ-कहाँ किस प्रकार किया है यह बताने के लिए ही यह निबन्ध लिखा गया है। इस में दिए गए प्रमाणों को पढ़ें और विचार करें।

१ श्री देवेन्द्र जी मुखोपाध्याय के बनाये और सार्वदेशिक सभा द्वारा प्रकाशित—महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र "प्रथम भाग पृष्ठ ६९ पर लिखा है कि—(आगरा) में सुन्दरलाल जी ने दयानन्द से अष्टाध्यायी और गीता पढ़नी आरम्भ की।

२. इसी ग्रन्थ के पृष्ठ ७० पर लिखा है कि "कभी कभी स्वामी जी भगवद् गीता की व्याख्या करने लगते। उन की व्याख्या ऐसी मधुर और सरल होती थी कि उच्च पंडित से लेकर साधारण मजदूर तक सभी समझ जाते थे।

इसी ग्रन्थ में पृष्ठ ७० के नीचे टिप्पणी में लिखा है कि दयानन्द ने भगवद् गीता की कथा भी की थी। जिस में एक मास से अधिक लगा था।

४ स्वामी सत्यानन्द जी कृत "दयानन्द प्रकाश" के पृष्ठ ७१ पर भी वृत्त लिखा हुआ है।

५. "ऋषि दयानन्द का जीवन चरित्र" पृष्ठ ७१ की टिप्पणी में लिखा है कि—

एक दिन स्वामी कैलाश पर्वत ने गीता के श्लोक—

'सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।" की व्याख्या की परन्तु उन के अर्थों से श्रोताओं की तृप्ति नहीं हुई तो लोगों ने स्वामी जी से प्रार्थना की कि आप भी इस श्लोक का अर्थ समझाने की कृपा करें। इस पर उन्होंने ऐसे सुन्दर अर्थ किए कि सब लोग चकित हो गये और कैलाश पर्वत जी ने कहा कि इन (दयानन्द जी) की विद्या बहुत है। उसी समय स्वामी जी भागवत का खण्डन करते थे और महाभारत विचारा करते थे।

६. इसी जीवन चरित्र के पृष्ठ ७२ की टिप्पणी में लिखा है कि—

"एक दिन कुछ लोगों ने स्वामी जी से प्रार्थना की कि आप कोई ग्रन्थ बांच जी कथा करते हो और हम लोगों को भी लाभ हो। उन्होंने विद्यारण्य स्वामी कृत पंचदशी बांचने को कहा, महाराज ने इसे स्वीकार कर लिया। बांचते-बांचते उस में ऐसा आया कि कभी-कभी ईश्वर को भी भ्रम हो जाया करता है। इस पर स्वामी जी ने कहा कि—यह मनुष्यकृत ग्रन्थ है, फिर उसे नहीं बांचा। हां गीता की कथा करते रहे, यह कथा आश्विन मास से दिवाली के एक मास पश्चात् तक हुई, लगभग दो मास तक। यह वृत्त श्री महाराज जी के आगरा निवास का है। जो वैशाख सम्वत् १९२० विक्रमी से आश्विन सम्वत् १९२१ वि० सन् तक लगभग १९ मास का हुआ।

७. महर्षि दयानन्द का जीवन चरित्र भाग १ पृष्ठ ७९ में जयपुर वास सं० १९२३ विक्रमी के वृत्त में बताया है कि—

"अचरोल के ठाकुर रणजीत सिंह जी के बड़े पुत्र लक्ष्मणसिंह जी को स्वामी जी ने भगवद् गीता पढ़ाई थी।"

इस जीवन चरित्र के भाग १, पृष्ठ ८३ पर लिखा है कि स्वामी जी ने अचरोल के ठाकुर को गायत्री का उपदेश दिया, उन के लिए दशोपनिषद् बम्बई से मंगवाये गये थे। ठाकुर साहब ने उनके उपदेश से मूर्ति पूजा छोड दी थी।

जयपुर के ही प्रसंग में पृष्ठ ८४ पर लिखा है कि इस समय भी निर्भर उनका केवल वेद पर था और लोगों को सन्ध्या गायत्री ही का उपदेश देते थे।

यह सब यहां इसलिए बताया है कि एक गीता विरोधी सज्जन ने यहां तक के गीता सम्बन्धी प्रसंगों पर यह कह दिया था कि स्वामी जी उस समय पौराणिक ही थे। मूर्ति पूजा आदि मानते और विष्णु सहस्र नाम आदि को भी पढ़ते थे। आप ने देखा कि ऊपर के उदाहरणों से उन के पौराणिक होने और मूर्ति पूजा आदि मानने का खण्डन हो गया है।

८ चांदोख जिला बुलन्दशहर (उत्तरप्रदेश) में ऋषि दयानन्द ने सं० १९२४ विक्रमी में निवास किया इस प्रसंग में इसी जीवन चरित्र के भाग १ पृष्ठ १६८ पर लिखा है कि—

"चांदोख जिला बुलन्दशहर निवासी ठाकुर महावीर सिंह जी श्री दर्शनों को आया करते थे और महाराज से धर्म विषय पर बातचीत किया करते थे।

यहीं लिखा है कि स्वामी जी ने ठाकुर महावीर सिंह जी को 'भगवद् गीता का पाठ करने को कहा था।" इस समय स्वामी जी जीव और ब्रह्म का पृथक्त्व मानते थे। पुराणों की जगह ब्राह्मण ग्रन्थ पढ़ने को कहते थे।

"मेरे ऊपर छल प्रयोग का आरोप"—एक सज्जन ने मेरे विषय में यह लिखा है कि गीता के पक्ष पोषण में अचरोल के ठाकुर रणजीत सिंह और चांदोख के ठाकुर महावीर सिंह के उद्धरणों के कुछ भाग छपवा कर छल प्रयोग कर बैठे हैं।

इस विषय में वास्तविकता यह है कि—मेरे उद्धरण देने के ढंग में छल का नामोनिशान भी नहीं है। प्रमाण देने का ढंग ठीक यही है कि प्रमाण का जितना भाग प्रस्तुत विषय से सम्बन्ध रखता है उतना ही उद्धृत किया जाए। अनावश्यक को भी लिख कर लेख का कलेवर व्यर्थ न बढ़ाया जाए। ऐसा जो भी करते हैं वह ठीक ही करते हैं ऐसा ही मैंने भी किया है। जिस सज्जन ने मुझ पर छल प्रयोग का मिथ्या दोषारोपण किया था, उन्होंने ऋषि दयानन्द का जीवन चरित्र भाग १ के पृष्ठ २०४ से यह उद्धरण अपने लेखों में बार-बार दिया। वह इस प्रकार है—

"स्वामी जी भगवद् गीता को त्रिदोष का सन्निपात बतलाते थे और कहते थे कि—उस में कहीं तो जीव ब्रह्म का एकत्व प्रतिपादित किया गया है और कहीं उन का पृथक्त्व देखने में आता है और कहीं प्रकृति और पुरुष का पृथक्त्व माना गया है। (यह भाषा भी) अद्भुत ही है—

इस के नीचे ही एक पंक्ति मनुस्मृति के विषय में भी है। उस को श्रीमान् जी ने नहीं लिखा। वह इस प्रकार है—

"प्रचलित मनुस्मृति को वह (स्वामी जी) मनु संहिता नहीं मानते थे और उसे भृगु संहिता कहते थे।"

इस को उन्होंने छोड दिया तो मैं उन पर छल प्रयोग का दोष नहीं लगाता हूं।

उन श्रीमान् जी का कहना यह है कि यहां तक जो ऋषि के गीता सम्बन्धी प्रमाण दिये हैं उनके साथ यह भी तो लिखा है कि पंचदशी आदि भी उस समय पढ़ते थे। ठीक है पढ़ते थे पर पंचदशी उसी समय छोड दी और गीता अन्त तक नहीं छोडी। इस के प्रमाण आगे-आगे आते जायेंगे।

९ महर्षि दयानन्द का जीवन चरित भाग १ पृष्ठ १०९ में लिखा है कि—

"रामघाट में स्वामी कृष्णानन्द के साथ महाराज का शास्त्रार्थ हुआ स्वामी कृष्णानन्द ने ईश्वरावतार सिद्ध करने के लिए—

यदा यदा हि धर्मस्य
ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य
तदात्मानं सृजाम्यहम्॥
गीता ४।८।

यह गीता का श्लोक बोला। श्री महाराज ने उत्तर में कहा—

ईश्वर निराकार है, वह देह धारण नहीं करता है। यह (देह धारण करना) तो जीव का धर्म है।

१० इसी ग्रन्थ के पृष्ठ १२८ पर लिखा है—

कर्णवास में शरत् पूर्णिमा के अवसर पर राव कर्णसिंह के भेजे हुए तीन गुण्डों ने स्वामी जी पर रात्रि के दो बजे घातक आक्रमण करना चाहा। स्वामी जी जाग पड़े और (स्वामी जी ने) हुंकार मारी। सारे गुण्डे भाग गए। ऋषि के पास

(शेष पृष्ठ ७ पर)

गाण्डीव भी था और पिनाक भी

—स्वामी वेदमुनि परिव्राजक
अध्यक्ष—वैदिक संस्थान नजीबाबाद (उ० प्र०)

★

गत १९७५ ईसवी में कुछ लोगों ने इस प्रकार के भ्रामक वक्तव्य प्रसारित किये कि जिन से भारतीय जनमानस अपने प्राचीन इतिहास के विषय में भ्रान्ति में जा पड़े। यह लोग कभी कहते हैं, महाभारत नहीं हुआ। कभी कहते हैं, महाभारत हुआ है, मगर रामायण से पहले। कभी कहते हैं लंका मध्य-प्रदेश में थी तो कभी कहते हैं, रामायण को वाल्मीकि ने बौद्ध-साहित्य के दशरथ-जातक' के आधार पर ईसा से लगभग पांच सौ वर्ष पूर्व लिखा।"

इन लोगों के उक्त वक्तव्य न केवल निराधार ही हैं अपितु यह लोग भारतीय इतिहास से सर्वथा अनभिज्ञ भी हैं यदि अनभिज्ञ नहीं हैं, और जानबूझ कर ऐसा कर रहे हैं तो विदेशियों की शीतयुद्ध की राजनीति के चंगुल में फंसे हैं।

समाचार-पत्रों में श्री डा० एच० डी० सांकलिया का एक और वक्तव्य पढने को मिला। पहले आपने कहा था, लंका मध्य प्रदेश में थी। अब आप उसे ढूंढते फिर रहे हैं। कुछ समय पश्चात् आप भुवनेश्वर गये और वहां भाषण करते हुए आपने कहा कि लंका उडीसा में थी और राम महानदी पार करके लंका पहुंचे थे. अपनी लंका खोजने की पहली यात्रा में मध्य-प्रदेश की राजधानी भोपाल नगर में एक सभा को सम्बोधित करते हुए आप यह कह बैठे कि "भारत अतीत में शस्त्र निर्माण के क्षेत्र में पिछड़ा हुआ था। रामायण और महाभारत के युद्धों में रथों, चक्रों, भांति-भांति के धनुष-बाणों तथा तलवारों का जो वर्णन किया गया है, वह मात्र कवि-कल्पना है।" आपने यह भी कहा कि "रामायण और महाभारत काव्यों में जैसे हथियारों का वर्णन मिलता है, वैसे हथियार मानव-सभ्यता के सन्दर्भ से हट कर विकसित नहीं किये जा सकते।" आपने कहा, "उक्त महाकाव्यों में वर्णित युद्धोपयोगी शस्त्रों की कल्पना अति-विकसित सभ्यता की पूर्व कल्पना है। पश्चिम एशिया और अफ्रीका की सभ्यता की तुलना में भारत शस्त्र-निर्माण की दशा में पिछड़ा हुआ रहा है। यह कहना किम्वदन्ती है अर्जुन ने गाण्डीव का प्रयोग किया, राम ने शिव-धनुष तोड़ा और रावण रथ में बिठा कर सीता को ले भागा था।" आपने कहा, "उक्त हथियारों का विकास बहुत बाद में किया गया है।"

गाण्डीव भी था और पिनाक भी—किन्तु जब अभागे भारतीय पश्चिम की ऐनक लगा कर ही भारतीय इतिहास को पढ़ेंगे, तब उन्हें भारत में कुछ भी क्यों दिखाई देने लगा? यह नितान्त लज्जा की बात है कि आदि सृष्टि से ही समस्त संसार को सर्व विद्या में सिखाने वाले देश के वासी अपने गौरवपूर्ण इतिहास के विरुद्ध इस प्रकार की मिथ्या धारणायें व्यक्त करने और फैलाने में लगे हैं। विश्व का यह सब से बड़ा आश्चर्य कहा जाना चाहिए कि लोग अपने पिता आदि पूर्व पुरुषाओं के विषय में विदेशियों को प्रमाण मानें—अपने घर के इतिवृत्त को नहीं। अपने पिता का नाम आदि परिचय देने के लिए व्यक्ति स्वयं प्रमाण होता है किन्तु भारत को मानव-सभ्यता के इतिहास में पिछड़ा बताने वाले भारतीय अपने आपको सभ्य और विकसित समझ रहे हैं और यह उनके विकसित मस्तिष्क की पहचान है कि भारतीय के लिए भारतीय इतिहास को नहीं अपितु विदेशियों के पक्षपात-पूर्ण अनर्गल लेखों को प्रमाण मान रहे हैं।

सिद्धान्त-विवेचन की दृष्टि से हम यह कहना चाहते हैं कि श्री सांकलिया जी के नाम के साथ जो 'सांकलिया' शब्द लगा है इसका क्या महत्व और क्या इतिहास है? हमारा अभिप्राय यह है कि श्री सांकलिया जी तो अविकसित सभ्यता के युग में रह रहे हैं। इतिहास पर शोध कर रहे हैं लंका को ढूंढते फिर रहे हैं, कभी उन्होंने इस सांकलिया शब्द के विषय में भी सोचा? उर्दू में जिसे 'जंजीर' कहते हैं, उसे हिन्दी में सांकल कहते हैं। 'सांकलिया' पशुओं में तो कुत्ता, गाय, भैंस आदि को कहा जा सकता है, जो 'सांकल' बनाने का कार्य करें अथवा जिनके वंश में 'सांकल' बनाने का कार्य होता रहा हो। सभ्यता के विकास की बातें करने वाले और भारत के रामायण-महाभारत कालों को सभ्यता के विकास में पिछड़ा हुआ बताने वाले विद्वान् को यह तो सूझना चाहिये कि यह शब्द विकसित सभ्यता का नहीं अपितु पिछड़ेपन का परिचायक है। रामायण-महाभारत के लेखकों को तो श्री सांकलिया जी के ही शब्दों में "उक्त महाकाव्यों में वर्णित युद्धोपयोगी शस्त्रों की कल्पना अति विकसित सभ्यता की पूर्व-कल्पना" करने की योग्यता और बुद्धि तभी प्राप्त हो गयी थी, जब सभ्यता सांकलिया जी के विचार से विकसित भी नहीं हो पायी थी। परन्तु सांकलिया जी को अब तक भी यह बुद्धि न प्राप्त हो सकी—जो इस विकसित सभ्यता के युग में रह रहे हैं—जिससे वह यह जान लेते कि सांकलिया शब्द सभ्यता का नहीं अपितु अत्यन्त असभ्य युग में रहने तथा अयोग्यता का परिचायक है।

इस विषय में हमारा निवेदन यह है कि रामायण और महाभारत विश्व के महानतम सभ्यता के युगों के परिचायक इतिहास हैं। उस समय के लोग आज से अधिक उच्च सभ्यता के वातावरण में पल और पनप रहे थे। उस समय की सभ्यता मानवीय इतिहास की महानतम सभ्यता थी और उसका बुद्धि-कौशल भी उसी के अनुरूप था। सत्य तो यह है कि वर्तमान सभ्यता और बुद्धि-कौशल मानव-विनाश की ओर उन्मुख है और मानव-विनाश ही इनका आधार है किन्तु उस समय की भारतीय सभ्यता और बुद्धि-कौशल न केवल मनुष्य-मात्र अपितु प्राणि-मात्र के हित-चिन्तन में संलग्न थे। इस बर्बर-युग की उस दिव्य युग से क्या तुलना?

इस से भी बढ कर यह आश्चर्य कि और तो और सांकलिया जी रामायण और महाभारत को कल्पनाओं के ग्रन्थ बताकर उनकी ऐतिहासिकता से ही नकार कर रहे हैं तथा दूसरी ओर लंका की खोज करते फिर रहे हैं। लंका का कहीं वर्णन है तो रामायण में, किसी अन्य ग्रन्थ में नहीं।

किसी अन्य ग्रन्थ में है भी तो रामायण के आधार पर ही। अन्य ग्रन्थ—जिन में लंका का वर्णन है—रामायण के पश्चात् के हैं। रामायण इन सब से प्राचीन १,८१,४९,०८७ वर्ष पुराना ग्रन्थ है। सांकलिया जी की दृष्टि में जब रामायण केवल काव्य है और उसके वर्णन केवल पूर्व कल्पना है अर्थात वह ऐतिहासिक ग्रन्थ है ही नहीं तो रामायण की लंका भी काल्पनिक ही हुई। उसकी खोज के लिए किसी बुद्धिमान इतिहासज्ञ अनुसन्धानकर्ता के द्वारा समय अधिक और धन विनष्ट करने फिरना सर्वथा अनुपयुक्त, अनुचित और नासमझी है। भूगोल अवस्थित लंका को आप वह लंका नहीं मानते और रामायण को इतिहास नहीं मानते तो फिर आप के इस प्रकार मारे-मारे फिरने का क्या औचित्य? इसी ओर आपके द्वारा लंका की खोज यह सिद्ध करती है कि आप सम्पूर्ण रूप से न सही—कम से कम लंका के विषय में तो अवश्य रामायण को प्रमाण मानते हैं। इस स्थिति में आपको लंका को मध्य-प्रदेश और उडीसा में नहीं अपितु समुद्र में ढूंढना चाहिए। कारण कि रामायण के अनुसार राम लंका को जाते समय सह्य मलय और महेन्द्र पर्वतों पर होते हुए गए थे और यह पर्वत मध्य प्रदेश से दक्षिण में कुमारी अन्तरीप तक फैले हुए नीलगिरी आदि हैं। जब रामायण लंका का मार्ग इस प्रकार समुद्र तट की ओर भारत के दक्षिणी किनारे तक बताये तब मध्य प्रदेश उडीसा आदि में उसकी खोज निरर्थक है। इसके अतिरिक्त रामायण में लंका की अवस्थिति का स्पष्ट वर्णन समुद्र में है। यह सीता की खोज करने वाले दल सदस्य अंगद को सम्पाती ने इस प्रकार बताया है—

इतो द्वीपे समुद्रस्य
सम्पूर्णे शतयोजने।
तस्मिंल्लङ्कापुरी रम्या
निर्मिता विश्वकर्मणा॥

अर्थात् समुद्रस्थ इस द्वीप में—जो यहां से पूरे सौ योजन दूर है—विश्वकर्मा द्वारा निर्मित सुन्दर लंकापुरी है। इस वर्णन के होते हुए लंका को भारत के मध्य में ढूंढने की क्या तुक है? संक्षेप में हमारा अभिप्राय यह है कि लंका की खोज करना रामायण को इतिहास सिद्ध करना है और रामायण को इतिहास मान लेने पर लंका को समुद्र में खोजना चाहिए तथा रामायण को इतिहास न मानने वालों को लंका की खोज नहीं करनी चाहिए।

(शेष ६ पृष्ठ पर)

दुःखों से छुटकारा कैसे मिले ?

ले०—यशपाल आर्य बन्धु, आर्य निवास, चन्द्रनगर, मुरादाबाद

★

दुखों से छूट कर सुखों को प्राप्त करना प्रत्येक जीव की स्वाभाविक कामना रहती है। किन्तु ऐसा देखा गया है कि कभी तो न चाहते हुए भी वह दुख भोगता है और चाहने पर भी सुख की उपलब्धि नहीं कर पाता। ऐसा क्यो ? इसका उत्तर महर्षि दयानन्द इन शब्दों में देते हैं —"सब जीव स्वभाव से सुख प्राप्ति की इच्छा और दुख का वियोगी होना चाहते हैं, परन्तु जब तक धर्म नही करते और पाप नहीं छोड़ते तब तक उनको सुख का मिलना और दुख का छूटना न होगा। क्योंकि जिस का कारण अर्थात् मूल होता है, वह नष्ट कभी नहीं होता। जैसे —छिन्ने मूले वृक्षो नश्यति तथा पापे क्षीणे दुखं नश्यति। जैसे मूल कट जाने से वृक्ष नष्ट होता है, वैसे पाप के छोड़ने से दुःख नष्ट होता है।"

(सत्यार्थप्रकाश, नवम समुल्लास)

स्पष्ट है कि दुखों से बचने के लिए पापों से बचना आवश्यक है। किन्तु प्राय होता यह है कि लोग पाप के फल से तो बचना चाहते हैं किन्तु पाप-कर्म से नहीं। विपरीत इसके लोग पुण्य के फल को तो चाहते हैं पर पुण्य करते नहीं। यथा—

पुण्यस्य फलमिच्छन्ति
पुण्यं नेच्छन्ति मानवा ।
न पापफलमिच्छन्ति
पापं कुर्वन्ति यत्नत. ॥

अर्थात् मनुष्य पुण्य के फल की तो इच्छा करते हैं किन्तु पुण्य अर्जित नहीं करते और पाप के फल की इच्छा वे नहीं करते फिर भी यत्नपूर्वक नित्य पाप करते रहते हैं। ऐसी स्थिति में दुःख से छुटकारा कैसे मिल सकता है ? अत दुखों से बचने के लिए यह आवश्यक है कि हम पाप-कर्म करने छोड़ देवें। और केवल पाप कर्म करने छोड़ें ही नही, पुण्य कर्म भी प्रयत्न के साथ करते रहें। क्योंकि सुख की उपलब्धि तो पुण्य कर्म करने से ही होगी।

जीवों को सुख-दुख की प्राप्ति का एक अन्य कारण भी है। और वह है हमारा शरीरधारी होना। यद्यपि सुख दुख का भोक्ता शरीर नही आत्मा ही है, तथापि वह शरीर के द्वारा ही सुख-दुख को भोगा करता है। इसीलिए शरीर को भोगायतन भी कहा गया है। सुख-दुःख शरीर का धर्म है। शरीर के रहते सुख-दुख से बचा नहीं जा सकता। क्योंकि सर्दी, गर्मी क्षुधा, प्यास आदि के लगने से सुख-दुःख की अनुभूति तो होगी ही। अतः शरीर के रहते दुखों से छुटकारा और सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती। इस में महर्षि का कथन प्रमाण है।

महर्षि लिखते हैं कि—

'मुक्ति के बिना दुख का नाश नही होता क्योंकि जो देहधारी है, वह सुख-दुख की प्राप्ति से पृथक् नहीं रह सकता।"

(सत्यार्थप्रकाश, पचम समुल्लास)

वैसे भी शरीर को व्याधिमन्दिरम् कहा है। स्पष्ट है कि भोगायतन है तो भोग भी रहेगा। इसलिए भोगों से छुटकारा पाने के लिए भोगायतन से छुटकारा पाना आवश्यक है और यह बिना मुक्ति के सम्भव नहीं। यदि जन्म का कारण समाप्त हो जाए तो दुख का कारण भी नहीं रहेगा। अत जैसे भी हो मनुष्य को मोक्ष मार्ग का पथिक बनना ही चाहिए।

दुख के सम्बन्ध में श्वेताश्वतरोपनिषद् में आया है कि—

यदा चर्मवदाकाश
वेष्टयिष्यन्ति मानवा ।
तदा देवमविज्ञाय
दुखस्यान्तो भविष्यति ॥
(६।२०)

अर्थात् जब लोग चमड़े के समान आकाश को लपेटने में समर्थ हो जायेंगे, तब सम्भवत प्रभु को जाने बिना दुखों से छूट सकेंगे। तात्पर्य यह है कि जैसे आकाश का चमड़े के समान लपेटना असम्भव है, वैसे ही प्रभु को जाने बिना दुखों से छूटना भी सम्भव नहीं। अत दुखों से छूटने की इच्छा रखने वालों को जहां दुष्कर्मों से बच कर शुभकर्मों में प्रवृत्त होना चाहिए, वहां उस दुखविनाशक परब्रह्म को भी जानने का उद्योग अवश्य करना चाहिए। और फिर केवल जानना ही पर्याप्त नही, जान कर, उसे पाने का भी प्रयत्न अवश्य करना चाहिए। इसके लिए साधक को उपासना योग का मार्ग पकड़ना चाहिए।

मनुष्य उन पदार्थों में सुख की खोज करता है, जिन में वह होता नहीं। तभी वह दुःखी भी होता है। पंचतन्त्र में कहा है कि—

धनादिकेषु विद्यते
येऽत्र मूर्खाः सुखाशया ।
तप्तग्रीष्मेण सेवन्ते
शैत्यार्थं ते हुताशनम् ॥
(२ १५५)

अर्थात् जो मूर्ख धन आदि भोग्य वस्तुओं में सुख की आशा करते हैं, वे धूप से सन्तप्त होकर शीतलता के लिए अग्नि का सेवन करते हैं। वस्तुत जिस के अन्त में दुख हो, वह सुख नहीं, दुख है और जिस के अन्त में सुख हो, वह दुख न होकर वस्तुत सुख ही होता है। अत दुखों से छूटने के लिए क्षणिक सुख देने वाले भोगों के पीछे नहीं भागना चाहिए। यह भी ध्यान रहे कि भोगों को भोगने से तृष्णाएँ शान्त नहीं होतीं, अपितु भड़क उठती हैं। फिर भोगे रोगभयम् के अनुसार भोगों में रोग का भी भय रहता है। भोगों और विषयों का दास बनना भी दुख का कारण बनता है। क्योंकि सर्वं परवश दुःखम् सर्वमात्मवश सुखम्।

अर्थात् जितना परवश होना है वह सब दुख और जितना आत्मवश होना है वह सुख है। जब हम विषयों के वश में हो जाते हैं, तो दुख उठाते हैं किन्तु जब हमारी इन्द्रियां और मन आदि विषयों के दास नहीं होते तब सुख की प्राप्ति होती है। फिर विषय तो विष से भी अधिक घातक हुआ करते हैं। क्योंकि विष तो खाने से घातक बनता है जबकि विषय स्मरणमात्र से घातक बन जाते हैं। इसीलिए भर्तृहरि ने कहा था कि—

भोगा न भुक्ता वयमेव भुक्ता-
स्तपो न तप्त वयमेव तप्ता ।
कालो न यातो वयमेव याता-
स्तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णा ॥

अर्थात्—

भोगों को क्या भोगा हम ने,
भोग हमे भुगताय गये।
तपते रहे तपों को हम क्या,
तप ही हम को ताप गये ॥
रहे सोचते काल काट लें,
काल हमें ही काट गया।
तृष्णा तू तो हुई न बूढ़ी
हमे बुढ़ापा चाट गया ॥

यदि दुखों से बचना है तो फिर भोगों के पीछे भागना छोड़ना पड़ेगा। फिर तो हमारी वासना पर विवेक का आधिपत्य होना ही चाहिए। क्योंकि—

विवेकभ्रष्टाना भवति विनिपात शतमुख ।

अर्थात् विवेकभ्रष्ट लोगों का पतन अनेक प्रकार से होता है। इतना ही नही —

येषां चित्ते नैव विवेकस्ते पच्यन्ते नरकमनेकम्।

अर्थात् जिनके चित्त में विवेक नहीं रहता, वे नाना दुख उठाते हैं। अत दुखों से बचने के लिए विवेकशील होना अत्यन्त आवश्यक है। विवेकशील व्यक्ति ही संसार में सुख पाता है। प्रभु करे हमारे अन्दर विवेक उत्पन्न हो और हम खोटे कर्मों से बच कर निष्पाप जीवन व्यतीत करे। □

(पृष्ठ ४ का शेष)

गाण्डीव भी था और पिनाक भी

सांकलिया जी ने यह भी कहा है कि रामायण और महाभारत महाकाव्यों में जसे हथियारों का वर्णन मिलता है, वसे हथियार मानव-सभ्यता के विकास के सन्दर्भ से हट कर विकसित नहीं किये जा सकते। जैसा कि ऊपर भी हम लिख आये हैं, हमारा यह कहना है कि विनाश को आधार मान कर शस्त्रास्त्र के निर्माण की होड़ में नित नये-नये अस्त्रों का आविष्कार मानव-सभ्यता का विकास कभी नहीं कहला सकता। इसे तो बर्बर, जगली, राक्षसी, दानवी और पिशाच सभ्यता का विकास तथा मानवता और मानव-सभ्यता का ह्रास कहना ही उपयुक्त होगा। मानव सभ्यता का विकास तो आत्म-विज्ञान-विवेचन द्वारा मानव को मानव जीवन के वास्तविक तथा परम और चरम उद्देश्य मोक्ष की ओर ले जाना ही है।

फिर भी हम इतनी चर्चा अवश्य-कर देना चाहते हैं कि रामायण और महाभारत काल के भयकर आयुधों के समान आयुध वतमान तथाकथित मानव-सभ्यता के विकास का विज्ञान अभी तक निर्माण ही नहीं कर सका। इस विषय को जानकारी के लिए महर्षि भारद्वाज कृत 'यन्त्र-सर्वस्व' नामक ग्रथ उल्लेखनीय है। बड़ौदा के 'राजकीय सस्कृत पुस्तक भवन' में इस ग्रन्थ का 'वमानिक प्रकरण' उपलब्ध है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दयानन्द भवन, आसफ अली मार्ग, नई दिल्ली द्वारा इस वैमानिक प्रकरण' की हिन्दी टीका श्री स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक कृत 'बृहद् विमान-शास्त्र' के नाम से प्रकाशित हुई है। इस में 'रक्षा-विधान' के अन्तर्गत भारतीय अस्त्र-विद्या का वर्णन है। न केवल अस्त्रों का अपितु शस्त्र-विद्या का।

यह भी तथ्य है कि यह ग्रथ भी रामायण-काल का ही है। राम वन जाते समय प्रयागराज में इस ग्रथ के प्रणेता महर्षि भारद्वाज के ही आश्रम में ठहरे थे। इस प्रकार यह ग्रन्थ भी रामायण कालीन अर्थात् भारत की लगभग दो करोड वर्ष पुरानी सभ्यता और बुद्धि-कौशल के विकसित स्वरूप का दिग्दर्शन करा कर वर्तमान सभ्यताभिमानियों की एतद्विषयक भ्रान्ति को दूर कर देता है।

इस ग्रन्थ में एक 'गुहागर्भादर्श-यन्त्र' का वर्णन है। इस यन्त्र के विषय में कहा गया है कि विमान के तोड़ने के अर्थ शत्रुओं ने भूमि के अन्दर महागोल सब ओर मुखवाला अग्निगर्भादि अद्भुत पचक यन्त्र (विमान-भेदक) जहां गुप्त रूप से स्थापित किया है, उसके स्वरूप की वास्तविकता की ठीक ठीक जानकारी के लिए शास्त्र-क्रम से विमान में 'गुहागर्भादर्शयन्त्र' स्थापित करे।

इस से यह स्पष्ट सिद्ध है कि इस ग्रथ के निर्माण के समय अर्थात् रामायण काल में ऐसे भयकर गोले थे कि जिन में सब ओर को छेद रखे गए थे तथा जिन के अन्दर आग्नेय पदार्थ अर्थात् विस्फोटक सामग्री भरी रहती था, जो भूमि में दबा कर शत्रु के आकाशयानों को मार कर गिरा देने के लिए रखे जाते थे और जो उपयुक्त समय पर स्वय ही फट जाते थे। इनकी भूगर्भ अवस्थिति का ठोक पता लगाने के लिए—जिस से शत्रु की चोट से बचा जा सके 'गुहागर्भादर्श' नामक यन्त्र को स्व-विमान में लगाने का विधान किया गया है। इसके आगे इस यन्त्र की निर्माण-विधि और उस में प्रयुक्त होने वाले पदार्थों का वर्णन है।

इसी ग्रन्थ में एक 'अपस्मार धूम्रप्रसारण' यन्त्र का वर्णन है। जब स्व-विमान को चारों ओर से शत्रु के विमान घेर लें, तब इस यंत्र के द्वारा शत्रु के विमानों पर धूम्र-प्रसारण करें अर्थात् धुआं फकें। यह धुआं शत्रु-विमान-चालकों तथा उन विमानों में से आयुध प्रहार करने वाले सभी व्यक्तियों को अचेत करने वाला है। इसके विषलेपन के प्रभाव से शत्रु विमान चालकों आदि के अचेत होने के परिणाम-स्वरूप भूमि पर गिर जायेंगे। इस यन्त्र के निर्माण की भी पूरी विधि इस ग्रन्थ में दी है। यहां तक की यन्त्र निर्माण की प्रक्रिया में भट्टी के अन्दर जलने वाली अग्नि के तापमान के अशों (डिग्रियों) का भी विधान किया गया है।

यह सब विज्ञान इस ग्रन्थ के निर्माण-काल में प्रकट हुआ किन्तु इसके मूल सिद्धान्त आदि सृष्टि से उपस्थित हैं। इन सिद्धांतों के मूल का वर्णन भी इसी विमान शास्त्र' के प्रारम्भ में बोधानन्द कृत टीका के मगलाचरण में इस प्रकार है—

निर्मथ्य तद्वेदाम्बुधिं
भारद्वाजो महामुनि.।
नवनीत समुद्धृत्य
यन्त्रसर्वस्वरूपकम्॥

अर्थात वेदरूपी समुद्र को मथ-कर भारद्वाज महामुनि ने उस में से 'यन्त्रसर्वस्व' रूप में नवनीत को वास्तविक रूपेण उद्धृत किया है। इस से यह स्पष्ट सिद्ध है कि यन्त्र आदि समस्त विद्याओं का मूल वेद में है इसीलिए महर्षि दयानन्द ने घोषणा की कि "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है।" उन्होंने 'ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका' नामक अपने ग्रन्थ में वेदमन्त्रों की व्याख्या कर के इस विषय का रहस्योद्घाटन भी कर दिया है। उसके पश्चात् श्री अरविन्द घोष ने भी लिखा है कि "वेदों में विज्ञान बता कर महर्षि दयानन्द ने अतिशयोक्ति नहीं की अपितु कुछ न्यूनोक्ति से ही काम लिया है क्योंकि वेद-वर्णित विज्ञानों के अनेक रहस्य तो अभी तक छिपे हुए ही हैं।"

वेद रामायण के बहुत पहले के आदि सृष्टि के हैं। इस प्रकार भारतीय-सभ्यता और बुद्धि-कौशल मानव-सभ्यता के इतिहास में सर्व-प्रथम और सर्वोच्च है। बुद्धिमानी इसी में है कि इसकी वास्तविक जानकारी प्राप्त की जाये और तथ्यों को स्वीकार किया जाय, न कि विदेशियों की भ्रान्त स्थापनाओं के चक्र में फंस कर अपने अत्यन्त गौरवपूर्ण इतिहास को झुठलाने का प्रयत्न किया जाय और स्वय को पतित समझा व सिद्ध किया जाये।

●

एक सस्मरण

इन्सान की खुशबू रहती है

आर्य जगत् की विभिन्न पत्रिकाओं से ममतामयी आदरणीय माता सत्यवती शालवाले के स्वर्गवास का समाचार जानकर दु ख हुआ। थोड़े ही दिनों के सम्पक से मुझे लगा कि उन का सारा जीवन केवल अपने या अपने परिजनों के लिए ही न होकर पूरे आर्य जगत् के लिए था। उस पारस के सम्पर्क में जो भी आया कुन्दन का ही रूप पाकर लौटा। उन्होंने अपने जीवन में आर्य विद्वानों, ब्रह्मचारियों और प्रचारकों तथा सन्यासियों का हमेशा अनुकरणीय आदर किया। जो भी उनके सम्पर्क में आया वह उन्हें कभी भी भुला न सका।

मेरे जीवन में भी एक ऐसा प्रसग आया जो आज भी याद आने पर माता शालवाले के मुस्काते हुए शान्त चेहरे के चित्र को आंखों के सामने खींच देता है।

बात उस समय की है जब मैं लगभग १९८३ में आर्यसमाज कृष्ण नगर दिल्ली में पुरोहित था। उस की स्त्री समाज के सत्सग में माता जी का अत्यन्त आह्लाददायक भजन सुना परन्तु जब मैंने उन्हें धन्यवाद दिया तो उन्होंने कहा कि बेटा! यह सब तो उस ईश्वर की कृपा का फल है और तभी से जब तक मैं वहां रहा तब तक मेरे दूध का पूरा खर्च उन्होंने ही दिया। उनका ऋण तो मैं कभी भी नहीं उतार सकता। फिर वहां से जब मैं टंकारा अध्यापन के लिए जाने लगा तो उनके दर्शन करने उनके निवास स्थान पर गया और सारी स्थिति बताई तो उन्होंने प्रसन्न होकर कहा कि बेटा! दयानन्द का कार्य तो इतना विस्तृत है कि असख्य उपदेशक एक साथ काम करें तो कुछ फल निकल सकता है। मैं तो भगवान् से प्रार्थना करती हू कि मुझे बार-बार किसी आर्य परिवार में ही जन्म मिले और मैं बार-बार ऋषि का काम करूं। बेटा! अपने जैसे अनेकों उपदेशक बनाओ और खूब ऋषि का कार्य करो ईश्वर तुम्हें शक्ति दे। तभी ऋषि का कार्य पूरा होगा। ऐसी ऋषि के प्रति समर्पित महिला थी माता सत्यवती जी। ईश्वर उनकी आत्मा को सद्गति दे।

●

हरिओ३म् सिद्धान्ताचार्य

(पृष्ठ ३ का शेष)

सोने वाले प्रबन्धक ने कहा कि आप कहीं दूसरी जगह चले जाइए। ऋषि ने उत्तर में गीता का श्लोक पढ़ा—

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि
नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो,
न शोषयति मारुतः॥

और कहा कि मुझ को कोई नहीं मार सकता है।

११. इसी ग्रन्थ के पृष्ठ १३३ पर लिखा है कि—

गंगाराम शास्त्री बरतिया वाले डींगें हांका करते थे कि हम स्वामी जी से शास्त्रार्थ करेंगे। स्वामी जी ने उन्हें कहला भेजा कि वह गीता के इस श्लोक का अर्थ हमारे सम्मुख करदें तो हम परास्त हो जायेंगे।

क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि
सर्वक्षेत्रेषु भारत॥
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं
यत्तज्ज्ञानं मतिर्मम॥
गीता १३।२८

शास्त्री जी ने इसका कुछ अर्थ किया, परन्तु स्वामी जी ने उस अर्थ पर कटाक्ष किए कि उन्हें उत्तर न आया।

गीता के अर्थों को समझने वाले समझ सकते हैं कि ऋषि दयानन्द जी ने यहां उभयपाशारज्जु का प्रयोग किया था। उन का अभिप्राय यह था कि यदि गंगाराम शास्त्री इस श्लोक का सत्य अर्थ करेंगे तो श्रीकृष्ण जी जीव सिद्ध हो जायेंगे क्योंकि क्षेत्रज्ञ का अर्थ जीवात्मा है और श्री कृष्ण जी ने अपने आप को जीव मान कर ही स्वयं को क्षेत्रज्ञ कहा है।

यदि वह क्षेत्रज्ञ का अर्थ ईश्वर करेंगे (जैसा कि श्रीकृष्ण को मानने वाले कहते हैं) तो गीता से ही उस का खण्डन कर दिया जाएगा क्योंकि इससे पहले ही श्लोक में कहा जा चुका है कि—

इदं शरीरं कौन्तेय,
क्षेत्रमित्यभिधीयते।
एतद् यो वेत्ति तं प्राहुः
क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः॥
गीता १३।१।

हे अर्जुन इस शरीर को क्षेत्र कहा गया है; इस को जो जानता है उस को उस के जानने वाले लोग क्षेत्रज्ञ कहते हैं। यहां ब्रह्माण्डों या ब्रह्माण्ड को क्षेत्र नहीं कहा गया है। शरीर के जानने वाले को क्षेत्रज्ञ कहा गया है, ब्रह्माण्डों या ब्रह्माण्ड के जानने वाले को क्षेत्रज्ञ नहीं कहा है। गंगाराम शास्त्री ने अवतार मानने वालों का श्रीकृष्ण जी को ईश्वर बनाने वाला अर्थ किया होगा और ऋषि ने इसी श्लोक से उस अर्थ की धज्जियां उड़ा दीं।

१२ इसी ग्रन्थ के इसी भाग में पृष्ठ १६१ पर स० १ से २७ पर मिर्जापुर की एक घटना लिखी है कि—

एक दिन एक सज्जन जो गीता का बड़ा प्रेमी था स्वामी जी के पास आकर बोला कि महाराज मैंने गीता की अनेक टीकायें देखी हैं परन्तु इस श्लोक का अर्थ समझ में नहीं आया आप अनुग्रह करके समझा दें।

सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।

स्वामी जी ने इसका अर्थ किया कि 'धर्मान्' शब्द को यहां अधर्मान्' समझना चाहिए। शकन्ध्वादिषु पर-रूप वाच्यम्। इस व्याकरण नियम के अनुसार 'सर्व' के वकार में जो आकार है वह सर्व अधर्मान् था सो 'सर्वधर्मान्' हो गया। इस प्रकार यद्यपि अधर्मान् शब्द ने धर्मान् का रूप धारण कर लिया परन्तु वास्तव में वह अधर्मान ही रहा। यह अर्थ सुन कर वह मनुष्य बहुत खुश हुआ और स्वामी जी से उसने इस अर्थ की पुष्टि में जब प्रमाण मांगे तो उन्होंने वेद के दो तीन मन्त्रों का प्रमाण देकर उस का सन्तोष कर दिया।

यहां स्वामी जी गीता को त्रिदोष का सन्निपात बता देते या यह कह देते कि गीता कल की 'राण्ड' है, इसके विषय में हम से कुछ न पूछो। यदि गीता को नहीं मानते थे तो वे इतने समाधानों के झगड़े में क्यों पड़ते और क्यों उसके अर्थ समझाने में इतना परिश्रम करते रहे? यह बात गीता विरोधियों की समझ में नहीं आ सकती।

१३ इसी ग्रन्थ के भाग २ पृष्ठ २३१ पर है संवत् १९३७ विक्रमी में महाराज काशी में विराजमान थे। उस प्रसंग में लिखा है कि एक दिन एक नवीन वेदान्ती पण्डित का महाराज से वार्तालाप हो रहा था। उस उस में गीता के निम्न श्लोक का प्रमाण देकर समाधान किया।

ईश्वरः सर्वभूतानां
हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन् सर्वभूतानि
यन्त्रारूढानि मायया॥
गीता १८।६१।

अतः स्वामी जी गीता को मानते थे। □

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N. No. 32387/77 Post in N.D.P.S.O. on 30, 1-7-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५१ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

डा० सविता के प्रलाप के सन्दर्भ में

चोर के साथ चोर की माँ भी पकड़ो !

आचार्य प्रेमभिक्षु (सम्पादक 'तपोभूमि' मासिक, वेद मन्दिर मथुरा)

डा० सविता जी ने अपने पति स्व० डा० अम्बेदकर के अनुसरण में महान् भारतीय (आर्य) संस्कृति के आधार स्तंभ मर्यादा पुरुषोत्तम राम और खण्ड-खण्ड भारत के स्थान पर महाभारत के निर्माता युग पुरुष (महर्षि दयानन्द के शब्दों में आप्त पुरुष) योगेश्वर श्रीकृष्ण के लोक मंगलकारी सुपावन आर्षचरित पर कीचड़ उछालने का जो दुष्ट प्रयास किया है वह प्रत्येक दृष्टि से निन्द-है। यह और भी अधिक दण्डनीय और अशोभनीय बन जाता है, जब वे भारतीय समाज में उत्पन्न की गई विकृति को दूर करने के स्थान पर समाज में फूट और घृणा उत्पन्न करके, राजनैतिक लाभ प्राप्त करने गर्हित उद्देश्य से कहती हैं।

हाँ, तो डा० सविता जी का कथन निश्चय ही दुर्भाग्यपूर्ण है, असद् भावनायुक्त और दुराग्रहपूर्ण है पर प्रश्न यह है कि उसका आधार क्या है? निश्चय ही महाभारत के पश्चात् पतन के दौर के क्रम में 'वाम मार्ग काल' में वेदों के अतिरिक्त रामायण, महाभारत, गीता, मनुस्मृति आदि प्राय हमारे सभी ग्रन्थों में किए गए, मनमाने प्रक्षेप ही इस का आधार हैं। तो क्या यह उचित नहीं होगा कि जहाँ हम डा० सविता जी के इस प्रकार के विषाक्त वक्तव्य का प्रतिवाद करें, वहीं उसके आधार-भूत इन प्रक्षेपों को जानें और जान कर उन्हें साहसपूर्वक अपने ग्रन्थों से दूर करें।

श्री डा० भीमराव जी अम्बेदकर ने Riddles of Rama & Krishna में जो आरोप श्रीराम के चरित्र पर लगाए हैं उनका अधिकांश रामायण में मिलाए गए, उत्तर काण्ड पर आधृत है। वस्तुतः उत्तरकाण्ड सम्पूर्ण ही प्रक्षिप्त है, यह तथ्य वा० रामायण के प्रथम सर्ग में ही महर्षि वाल्मीकि और महर्षि नारद के बीच हुए संवाद से उजागर हो जाता है। (गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित वा० रामायण के इस प्रथम सर्ग में १०० श्लोक हैं। यद्यपि इन में भी अनेकों प्रक्षिप्त हैं फिर भी इन १०० श्लोकों में भी सीता वनवास, शम्बूकवध, लव-कुश प्रकरण का संकेत भी नहीं है। वरन् इसे देखने से सुस्पष्ट है कि रामायण का प्रतिपाद्य विषय युद्ध काण्ड तक ही सम्पूर्ण हो जाता है। अब तनिक युद्ध काण्ड के अन्तिम सर्ग को देखिए। इसमें भी राम के राज्याभिषेक के पश्चात् रामायण माहात्म्य प्रकरण से भी उक्त तथ्य की ही सम्पुष्टि होती है।

अतः डा० सविता अम्बेदकर की दुर्भावना की कठोर समीक्षा के साथ ही आवश्यक है कि हम वाल्मीकि रामायण के सम्पूर्ण उत्तर काण्ड को ही प्रक्षिप्त स्वीकार कर, इसे पृथक् कर देवें तथा इसी प्रकार अन्य अनैतिहासिक प्रकरणों को भी हटा देवें। यही बात श्री कृष्ण चरित्र के सम्बन्ध में है। राधा जो श्री कृष्ण की मामी थी उसे कृष्ण की प्रेयसी बताना पुराणकारों का जघन्य अपराध है। यों यह आवश्यक है कि चोर के साथ ही हम उस से भी पूर्व उसकी जन्मदात्री माँ अर्थात् इस प्रकार के प्रक्षेपों को पकड़ें और उन्हें हटा देवें। तभी हम अपने महान् राम और महान् कृष्ण के गौरवमय इतिहास से प्रेरणा और प्रकाश लेकर नव्य-भव्य भारत का निर्माण कर सकेंगे।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५१

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ३८ | रविवार १० जुलाई १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | आषाढ २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

निरंजन देव तीर्थ का वक्तव्य हिन्दू समाज को तोड़ने का षड्यन्त्र

हरिजनों को धार्मिक स्थानों पर जाने से कोई नहीं रोक सकता

नई दिल्ली, ३ जुलाई। केन्द्रीय गृह राज्यमन्त्री सन्तोष मोहन देव, कांग्रेस (इ) कोषाध्यक्ष सीताराम केसरी और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने आज पुरी के शंकराचार्य स्वामी निरंजन देव के हरिजन एवं महिला विरोधी बयानों की कड़ी निन्दा की।

श्री देव ने दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा यहां आयोजित एक सभा में कहा कि हरिजन पूरे समाज के भाई हैं और बराबर का अधिकार रखते हैं। उन को कोई धार्मिक अथवा सामाजिक महत्त्व के स्थानों पर जाने से नहीं रोक सकता। महिलाओं को भी संविधान में बराबर का दर्जा प्राप्त है और विधवा-दाह एक अपराध है।

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने कहा कि पिछले दिनों पुरी के शंकराचार्य स्वामी निरंजन देव तीर्थ को सती प्रथा के समर्थन में वक्तव्य देने पर पूरी हिन्दू जाति का कोपभाजन बनना पड़ा था। आशा थी कि वह राष्ट्रीय एकता व अखण्डता का ध्यान रखते हुए भविष्य में अपने वक्तव्यों पर ध्यान रखेंगे, किन्तु आश्चर्य है कि उन्होंने जयपुर में हरिजनों के मन्दिर में प्रवेश करने का कड़ा विरोध करके पुनः एक नया विवाद खड़ा कर दिया है। जो व्यक्ति देश, काल और परिस्थितियों का ध्यान न रखकर घिसी-पिटी रूढ़िवादिता के शिकार हैं, उन को ऐसे उच्च धार्मिक पदों पर आसीन नहीं होना चाहिए। स्वामी निरंजन देव का वक्तव्य समूचे हिन्दू जाति को विघटित करके इस देश को पुनः गुलामी की ओर धकेलने का एक भयंकर षड्यन्त्र है, जिस के दूरगामी परिणाम समूची हिन्दू जाति तथा राष्ट्र के लिए अहितकारी सिद्ध होंगे।

स्वामी आनन्द बोध ने कहा कि छुआछूत, ऊंच-नीच और सामाजिक अव्यवस्थाओं के इन्हीं कारणों से भारत दशाब्दियों तक गुलाम रहा। इस देश को बहुत बड़े संघर्षों, बलिदानों और त्याग से आजादी मिली है, जिसमें हम ने ऊंच-नीच विहीन सामाजिक व्यवस्था और एकता के स्वरूप की कल्पना की थी, किन्तु शंकराचार्य जैसे धर्मान्ध लोगों ने हिन्दू जाति को अमृत देने की बजाए विष ही दिया है, जो इस समाज को भस्मसात् करके तोड़ सकता है।

श्री सीताराम केसरी ने कहा कि निरंजन देव जैसे वक्तव्यों से ही धर्म परिवर्तन को बढ़ावा मिलता है। उन्होंने इस प्रकार के लोगों को निकृष्ट कहा जो मानव-मानव में अन्तर करते हैं। श्री केसरी ने यहां तक कहा कि यदि किसी धर्म ग्रन्थ में मानव मात्र में भेद करना लिखा भी है तो उसका जलना ही बेहतर है। आज तक भारत के ऋषि, सन्त और आध्यात्मिक गुरु सामाजिक एवं धार्मिक क्रांति के प्रतीक रहे हैं, उसके विरोधी नहीं।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा इस अवसर पर पारित प्रस्ताव में कहा गया है कि निरंजन देव का यह कथन राष्ट्रघाती है। शंकराचार्य किसी विदेशी षड्यन्त्र का अंग लगते हैं।

दिल्ली विश्वविद्यालय के रीडर डा० वाचस्पति उपाध्याय ने कहा कि शंकराचार्य निरंजन देव तीर्थ का नाम ही बदल देना चाहिए। उनको अपने धाम का अर्थ तक नहीं पता है वरना वह ऐसी बातें नहीं कहते।

भूतपूर्व संसद सदस्य पिपल जी ने कहा कि हरिजनों को अपमानित करना बीस करोड़ जनता को अपमानित करना है। उन्होंने मांग की कि चारों धाम के शंकराचार्य चार वर्गों के होने चाहिए जिस से सभी को प्रतिनिधित्व प्राप्त हो।

इस अवसर पर श्री राजेश्वर जी, प्रो० शेरसिंह आदि वक्ताओं ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

यह अस्पृश्यता निवारण सम्मेलन दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्त्वावधान में आयोजित किया गया था। इस अवसर पर दिल्ली सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया जो सर्वसम्मति से पारित हुआ। प्रस्ताव इस प्रकार था—

जगन्नाथ पुरी के शंकराचार्य स्वामी निरंजन देव तीर्थ ने पिछले दिनों एक प्रेस गोष्ठी में हरिजन भाइयों के विरुद्ध टिप्पणी देकर समस्त हिन्दू-आर्य जनता को एक प्रबल मानसिक आघात पहुंचाया है। वे हिन्दू जाति के और राष्ट्र के एक मुख्य आधार हरिजनों के मंदिर प्रवेश को शास्त्रों के अनुसार वर्जित मानते हैं और उन्हें पवित्र धार्मिक स्थलों पर प्रवेश और वैदिक पूजा पाठ की अनुमति नहीं देना चाहते। श्री निरंजन देव तीर्थ का यह अनर्गल प्रलाप राष्ट्रघाती तथा हिन्दू जाति में विघटन पैदा करने वाला है। शंकराचार्य किसी एक षड्यन्त्र के अंग हैं, जो इस देश को स्वतन्त्र नहीं देखना चाहते और दुबारा दासता की उन शृङ्खलाओं में जकड़ देना चाहते हैं, जिन से बड़े बलिदानों के बाद भारत छुटकारा पा सका था। यदि भारत के सभी हरिजन भाई शंकराचार्य जैसे धर्माचार्यों की विकृत मनोवृत्ति के कारण धर्मान्तरण कर लेते हैं तो इसके लिए उत्तरदायी कौन होगा और इस देश का क्या होगा?

शंकराचार्य वैदिक ज्ञान का दावा करते हैं तथा आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती के ऊपर भी टीका टिप्पणी करने में नहीं हिचकते, जबकि उस युगपुरुष का नाम सदा सदा स्वर्ण अक्षरों में अंकित रहेगा, क्योंकि उन्होंने मानव मात्र के कल्याण के लिए, दलितोद्धार के लिए, गुण कर्म स्वभाव के अनुसार वर्ण व्यवस्था के प्रतिपादन के लिए, शूद्रों को मानवोचित सम्मान दिलवाने के लिए, स्त्री जाति के सम्मान के लिए, सामाजिक कुरीतियों को दूर करने के लिए भारत की स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए, दुर्द्धर्ष संघर्ष किया था। ऐसे महामानव के विरोध में बोलना शंकराचार्य की गरिमा के अनुरूप नहीं है। वे भारत के संविधान के अनुरूप भी कार्य नहीं करते। संविधान में सती प्रथा का विरोध तथा हरिजनों को समानता का अधिकार दिया गया है, जो सर्वथा वेदानुकूल है। पिछले दिनों जब उन्हें शास्त्रार्थ की चुनौती दी गई तब भी वे कतरा गये।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

आर्यसमाज का दूसरा नियम

ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है। उसी की उपासना करना योग्य है।

लेखक—स्वामी सत्यानन्द जी महाराज

पहले नियम में ईश्वर को ज्ञान और ज्ञेय का आदि मूल कहा है। इस नियम में उसका स्वरूप वर्णन किया है।

ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करना योग्य है।

वह सबका आदिमूल ईश्वर सत् अस्ति, जीवन है, चित्—ज्ञान है और आनन्द—सुख है। ईश्वर में सत्ता, चित्ता और आनन्दता पात्र में पानी और तिलों में तेल की भांति नहीं, किन्तु यही उसका स्वरूप है। दूसरे शब्दों में ईश्वर अस्ति, भाति और प्रिय स्वरूप है।

ईश्वर निराकार है। आकार संयोग-जन्य, कार्य और स्थूल वस्तु का हुआ करता है। इसी कारण निराकार विशेषण दिया है।

ईश्वर सर्वशक्तिमान् है। सर्वशक्तिमान् शब्द का अर्थ यदि यह किया जाए कि वह चाहे जो कर सकता है, तो यह भाव सुन्दर और युक्तिसगत प्रतीत नहीं होता। इस सर्वशक्तिमान् शब्द का अर्थ यही समझना चाहिए कि सब शक्तिया उसमें हैं।

ईश्वर न्यायकारी है, इस वाक्य से वह कर्म-फलप्रदाता सिद्ध किया गया है। न्याय शब्द इस भाव को प्रकट करता है कि जीव को जन्म-धारण आदि जितने भी कर्म-फल भोगने पड़ते हैं, वे सब उसके अपने ही किए कर्मों के परिणाम हैं। ईश्वर की न्याय-व्यवस्था में अकर्त्ता को भोक्ता नहीं बनाया जाता। जो जैसा बीज बोता है, वह वैसा ही फल काटता है।

ईश्वर दयालु है। उसकी दया के पात्र ,सभी प्राणी हैं। एक बीज बोकर सहस्रो बीज मिलते हैं। अत्यन्त अपराधी और पापी भी उस के राज्य मे तिरस्कृत नहीं किए जाते। नीचतम और महाधम मनुष्य को भी सुधार का अवसर प्राप्त है। धर्म कर्म का ज्ञान प्रत्येक जन को है। समय समय पर अन्त:करण में अन्तरात्मा का उपदेश हुआ करता है कि कुकर्म के कीचड मे न कूदो और धर्म-पथ पर सदा चलते चलो। काल-काल में सन्त, सज्जन और ऋषिजन आकर जन-समुदाय का सुधार और आत्म-कल्याण का उपदेश किया करते हैं। आलस्य, प्रमाद और दासता के सागर में डूबती हुई जातियों के बेडे को बचाने वाले और उसे उद्देश्य-सिद्धि के किनारे पर लगाने वाले नेता लोग भी, आवश्यकतानुसार, जातियों को मिलते रहते हैं। ये सब परम प्रभु की अपार कृपा के प्रबल प्रमाण हैं।

दया का अर्थ यदि यह माना जाए कि प्राणी को उसका पाप-कर्म क्षमा कर दिया जाता है तो परमेश्वर के निर्मल न्याय में दोष आ जाता है। वैसे भी विचारा जाए तो प्रत्येक जन का मन अन्याय को अच्छा नही मानता। सभी देशों में, सभी जातियों मे और सभी धर्मों में लोग अन्याय कर्म को अच्छा नहीं समझते।

ईश्वर सृष्टिकर्ता है—यह वाक्य जगत् से ईश्वर का सम्बन्ध प्रकट करता है और इस आशय को प्रकाशित करता है कि जगत् की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय परमात्मा के अधीन है।

इस दूसरे नियम के दो भाग हैं। पहले में ईश्वर का स्वरूप वर्णन किया गया है, और दूसरे में उसकी उपासना को एक कर्तव्य बताया गया है। पहले भाग का मनन करते समय आर्य जन को प्रभु के अस्तित्व का विचार करना चाहिए और विवेक बुद्धि से चिंतन करना चाहिए कि सृष्टि के समय से पूर्व प्रकृति—जगत् का कारण—तीनों गुणों की साम्यावस्था में थी। वह क्रिया-रहित थी। उस मे क्रिया किसी निमित्त से ही आ सकती थी। साम्य जड वस्तु में अपने आप गति तथा क्रिया का उत्पन्न होना नितान्त असम्भव है। प्रकृति का वह प्रथम प्रेरक और गति का आदिम उत्पादक परमात्मा ही है।

प्रत्येक मनुष्य आत्मविचारक है। हम यह भी जानते हैं कि प्रत्येक विचारक के विचार दूसरे से भिन्न होते हैं। यही वैयक्तिक भाव हमें एक दूसरे से पृथक् व्यक्ति बनाता है। हम व्यक्ति के विचारों को एक दूसरे से अधिकाधिक पाते हैं, यहां तक कि विचारों की सीमा सहज में बांधी नहीं जा सकती। हमें यह बोध है कि अधिक विचारवान् व्यक्ति अधिक ज्ञानी होता है। हम अपने विचारों की मर्यादा-माला बना कर उन को काम में भी ला सकते हैं। जब हम अपने कर्मों की और दूसरो के कर्मों की तुलना करते हैं, तब हमें कई एक व्यक्तियों के कर्म बहुत ही ऊँचे दिखाई देते हैं। इससे हम अनुमान किया करते हैं कि अत्यन्त ऊँचे और पूर्ण कर्म करने वाला है तो हमारे ही सदृश चेतन व्यक्ति, परतु है बहुत ही बडा ज्ञानी।

कृति को—रचना को—देखकर कर्ता की सिद्धि होती है। जैसे हमारे छोटे-छोटे काम हमारी कृति हैं, वैसे ही ब्रह्माण्ड बडे-बडे लोक-लोकान्तर भी किसी की कृति हैं। उनका कर्ता भी बडा विचारक और ऊँचा ज्ञानी होना चाहिए।

हमारा यह प्रतिदिन का अनुभव है कि रचना में सुनियमता चेतन-कृत होती है। रचना में जितना अधिक नियम होगा, रचयिता उतना ही अधिक ज्ञानी माना जाता है। पुष्प-वाटिका में बेल-बूटे आदि यथाविधि लगे देखकर मन में माली की बुद्धिमत्ता का विचार तुरन्त उत्पन्न हो जाता है। गृह की सुन्दर रचना देखकर राज की चतुराई का प्रमाण मिलता है। किसी चित्र की सुचारुता को निहारने से चित्त चित्रकार के चातुर्य की प्रशंसा करने लग जाता है। सारांश यह कि किसी रचना मे सुनियमता के देखने से उसके कर्ता और कर्ता के ज्ञान, दोनों का बोध होता है।

जैसे सुनियमता मनुष्य की कृति में है, वैसे ही अपितु उससे भी पूर्ण सुनियमता सृष्टि में भी पाई जाती है। सब जानते हैं कि सूर्य हमारी भूमि से लगभग आठ लाख मील बडा है, अथवा अनुमान से सौ गुना बडा है। उसके चारो ओर ग्रहो का परिवार परिक्रमा कर रहा है। उन ग्रहों में कोई तो हमारी पृथ्वी से भी बडा है और कोई छोटा। वे ग्रह एक ही ओर से सूर्य की प्रदक्षिणा करते हैं। हमारी पृथ्वी सूर्यदेव की परिक्रमा-यात्रा को लगभग ३६५ दिन में समाप्त करती है। यह अपने आराध्य देव—सूर्य—से नौ करोड तीस लाख मील दूर देश में वास करती है। प्रत्येक ग्रह का सूर्य से जितना भी अन्तर है, ज्योतिषियों ने उसे मापकर सुनिश्चित कर लिया है। यह नियम आकस्मिक नहीं हो सकता। सौर जगत् की रचना को देखकर यह मानना पडेगा कि जिस विधि से ग्रह सूर्य से अन्तर पर रखे गए हैं, उससे चेतनकृत सुनियम की सत्यता का प्रकाश हो रहा है।

ग्रहगण की गति की भी यही दशा है। उसे भी खगोलविद्याविशारदों ने गणितशास्त्र से जान लिया है। किसी ग्रह-विशेष के किसी कक्षा विशेष में किसी सुनिश्चित समय पर आने की बात वे बरसों पहले बता देते हैं। ग्रहण लगने के सम्बन्ध में उनकी भविष्यवाणी सदा सच्ची ही हो जाया करती है। वे अपनी पृथ्वी पर ही पद्मासन लगाए बैठे, विशाल आकाश में बडे वेग से दौडने वाली लाखों मीलों की लम्बी चौडी गाडियों का समय-विभाग ऐसी निपुणता से बनाते हैं कि उसमें भूल नही होने पाती। विधिपूर्वक बीस-पच्चीस बहलियों, इक्कों और रेलगाडियों को चलते देख कर हम नियन्ता की कल्पना करने लगते हैं। तब क्या लोक-लोकान्तरों को सहस्रों गाडियों की सुनियमबद्ध गति हमें उन के नियन्ता का निश्चय नही करा रही है? वस्तुगत्या खगोल की इस नियमता से उस के नियामक की महती चैतन्य-शक्ति का पूरा प्रकाश हो रहा है।

ग्रहों का परस्पर सापेक्ष अन्तर भी अङ्कगणित ही की भांति है। ज्योतिषीजन केवल गणित से यह बता देते हैं कि अमुक ग्रह से अमुक ग्रह का इतना अन्तर है। वे कहते हैं कि ३०,६०,१२०,२४०,४८० आदि अकों की गणना ही की भांति ग्रहों की परस्पर दूरी नियत है। वे इसी

(शेष पृष्ठ ४ पर)

प्रभु की प्राप्ति किसे और कैसे

क्या नहुष की पालकी सप्तर्षियों ने उठाई थी ?
क्या नहुष जैसे तपस्वी धर्मात्मा शची पर आसक्त हुए थे ?

नहीं ।

—विश्वदेव शास्त्री, कैलाशनगर, दिल्ली-३१

卐

पवित्र ते विततं-ब्रह्मणस्पते प्रभुर्गात्राणि पर्येषि विश्वत ।
अतप्ततनूर्न तदामोऽश्नुते शृतास इद्वहन्तस्तत्समाशत ॥
तपोष्पवित्र विततं दिवस्पदे ॥ ऋग्वेद ९।८३।१, २ ॥

ब्रह्मणस्पते=सकल ब्रह्माण्ड के स्वामी हे प्रभो !, ते=आपका, पवित्र=पवित्र रक्षण, वितत=सब ओर फैला हुआ है, व्याप्त है, प्रभु = जगत्स्रष्टा वह स्वयम्भु प्रभु, गात्राणि=शरीर, संसार के सभी भागों में, विश्वतः=सब ओर से, पर्येषि=अपने रक्षण से व्याप्त है, अतप्ततनू = तप से जिस ने शरीर को नहीं तपाया है वह, तद् आमः=उस सुखस्वरूप प्रभु को न, अश्नुते=नहीं प्राप्त करता, शृतास इद् वहन्त.=तप से परिपक्व शरीर वाले ही, तत्=उस प्रभु को, समाशत=प्राप्त करते हैं ।

भावार्थ—हे ब्रह्माण्ड और वेदों के पालन करने वाले प्रभो सर्वशक्तिमन् आप ने अपनी व्याप्ति से संसार के सब अवयवों को व्याप्त कर रखा है। आप का जो व्यापक पवित्र स्वरूप है उस को ब्रह्मचर्य, सत्यभाषण, शम, दम, योगाभ्यास, जितेन्द्रिय, सत्संगादि तपश्चर्या से रहित अपरिपक्व आत्मा अन्तःकरण युक्त है, वह तेरे उस स्वरूप को प्राप्त नहीं होता और जो पूर्वोक्त तप से शुद्ध हैं वे ही इस तप का आचरण करते हुए उस तेरे शुद्ध स्वरूप को प्राप्त होते हैं ॥

जो प्रकाशरूप प्रभु की सृष्टि में विस्तृत पवित्राचरण रूप तप करते हैं वे ही परमात्मा को प्राप्त करने में समर्थ होते हैं ।

मन्त्र में तप के लिए विशेष रूप से प्रभु का आदेश है ।

तप के लक्षण—

ऋतं तपः सत्यं तपः श्रुतं तपः शान्तं तपो दमस्तपः शमस्तपो । दानं तपो यज्ञस्तपो भूर्भुवः सुवर्ब्रह्मैतदुपास्वैतत्तपः ॥

तैत्ति० आर० प्रपा० १०।८

ऋत=यथार्थ शुद्ध भाव, सत्य=सत्य मानना, बोलना, करना, श्रुत=वेद ज्ञान का श्रवण, शान्त=मन को अधर्म में न जाने देना, दम = इन्द्रियों को अन्यायाचरण में जाने से रोकना अर्थात् शरीर इन्द्रिय और मन से शुभ कर्मों का आचरण करना, स्वाध्याय =वेदादि सत्य विद्याओं का पढ़ना-पढ़ाना तदनुसार आचरण करना, यज्ञ आदि उत्तम धर्मयुक्त कर्म का नाम तप है ।

उपर्युक्त तपों में स्वाध्याय की महिमा तो शतपथ ब्राह्मण में अपरिहार्य रूप में कही गई है। उसमें कहा है—आ हैव नखाग्रेभ्यस्तप्यते य एवं स्वाध्यायमधीते । प्राचीन समय के दीक्षान्त भाषण में—ऋतं च स्वाध्यायप्रवचने च । आदि सभी तपों के साथ स्वाध्याय तप को अनिवार्य कहा गया था । इसी तप से ही मानव तपस्वी दिव्य भाव को प्राप्त होता है। दिवमारुहत्तपसा तपस्वी । अथर्व० १३।२।२५। महर्षि व्यास ने तो योगदर्शन में स्वाध्याय और योग से परमात्मा की प्राप्ति कही है।

स्वाध्यायाद् योगमासीत
योगात् स्वाध्यायमासते ।
स्वाध्याययोगसम्पत्त्या
परमात्मा प्रकाशते ॥

स्वाध्याय की महिमा इस प्रकार भी आवश्यक है कि वह शुद्ध बुद्ध मुक्त स्वभाव प्रभु शुद्ध पवित्र अन्तःकरण को ही तो मिल सकेगा । वह शुद्धि—

अद्‌भिर्गात्राणि शुध्यन्ति
मनः सत्येन शुध्यति ।
विद्यातपोभ्यां भूतात्मा
बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति ॥

जल से शरीर शुद्ध होते हैं सत्य से मन शुद्ध होता है, विद्या और तप से आत्मा पवित्र होता है और ज्ञान से बुद्धि । महर्षि मनु के अनुसार तप एवं ज्ञान से आत्मा पवित्र होता है। ज्ञान के सदृश पवित्र संसार में अन्य पदार्थ नहीं है ।

नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते । —गीता ।

वैसे भी ज्ञान के बिना मुक्ति नहीं होती । ऋते ज्ञानान्न मुक्ति । अतएव सभी दृष्टि से स्वाध्याय तप अत्यावश्यक है। भारतवर्ष के प्राचीन काल में जितने भी ऋषि मुनि व महान् राजागण हुए सभी ने बड़े तप किए। तभी वे सफल ऋषि एवं महान् चक्रवर्ती राजा हुए।

इसी के परिप्रेक्ष्य में मैं पुराणों एवम् इतिहास का एक विख्यात आख्यान प्रस्तुत करता हूं। उस आख्यान के ऐतिहासिक पक्ष को छोड़कर आध्यात्मिक लक्ष्यबिन्दु ही मेरा लक्ष्य है। आख्यान इस प्रकार है—

सम्राट् नहुष प्राचीन काल मे विख्यात पराक्रमी, धर्मात्मा, तपस्वी सम्राट् थे। नहुष ने बड़े-बड़े शतश यज्ञादि (यज्ञस्तप) तप का अनुष्ठान किया। ऋषि, मुनियों, विद्वानों का सत्संग लाभ किया। (स्वाध्यायस्तप) स्वाध्याय आदि तप के द्वारा अपने शरीर को सदाचरण से साधा। नाना व्रत (सत्य तप, श्रुत तप) सत्याचरण आदि किये। अन्तत उन्हें सभी ऋषि महर्षियों की सम्मति से इन्द्र का पद प्राप्त हुआ। इन्द्र पद प्राप्त कर वे सुख से समय यापन करने लगे। कालान्तर में ऐश्वर्य प्राप्त कर उन्हें अहंकारवश कामादि आक्रान्त करने लगे। अन्तत एक समय ऐसा भी आया कि नहुष इन्द्र की पत्नी शची को अपनी सेवा में आने की मांग करने लगे। इस पर शची इन्द्राणी अति व्याकुल हुई और मानसरोवर में छिपे इन्द्र के पास जा अपनी व्यथा कही। इस पर इन्द्र ने कुछ विचार कर शची को विमुक्ति का उपाय बताया कि वह नहुष को कहे कि यदि वह (नहुष) सप्तर्षियों से पालकी उठवाकर शची के अन्त पुर में आयें तो शची उनकी सेवा में आ सकती है। शची ने इस पर शंका की कि ऐसा होने पर उस का पतिव्रता धर्म भंग हो जाएगा। तब इन्द्र ने नहुष के कामासक्त होने और उस अवस्था में नहुष द्वारा ऋषियों का अपमान सम्भव होना अवश्यम्भावी बता शची को शान्त किया।

अब शची ने आकर नहुष को सप्तर्षियों द्वारा पालकी उठवाकर शची के अन्तःपुर में आने की शर्त नहुष को सूचित करवा दी।

इस पर नहुष ने सप्तर्षियों से प्रार्थना की कि वे पालकी पर उसे उठाकर शची के अन्तःपुर में पहुंचाने की कृपा करें। ऋषि दयालु होते हैं अतएव वे नहुष के अनुनय-विनय करने पर नहुष की प्रार्थना को मान गए। अन्तत सप्तर्षिगण नहुष को पालकी पर लेकर शची के अन्त पुर की ओर चल पड़े। मध्य मार्ग में ही नहुष ने कामासक्त हो ऋषियों से तीव्र गति से चलने की प्रार्थना की और अधीर हो सर्प सर्प कहते हुए एक ऋषि के पाद प्रहार कर दिया। फलत ऋषि ने कुपित होकर पालकी पटक दी और नहुष को सर्प होने का शाप दे दिया। अत नहुष को पतित हो सर्प योनि में जाना पड़ा।

अब यहां विचारणीय बात यह है कि नहुष जैसा धर्मात्मा चक्रवर्ती सम्राट् भला शची पर ही आसक्त हुआ। इतने बड़े सम्राट् को विश्व के राज्य के कार्यों से एवम् अपने अनुष्ठानों से क्या अवकाश मिल सका होगा। फिर क्या वे लब्ध-प्रतिष्ठ जगद्विख्यात सप्तर्षिगण किसी भी राजा की सेवा में प्रस्तुत हो सकते थे। जबकि सारे भारतीय इतिहास में किसी भी राजा ने ऋषिगण से ऐसे कार्य कराने का साहस नहीं किया और न ही करना सम्भव था। जो कि ऋषियों से पालकी उठवाने जैसा निम्नतम कार्य लेने का साहस करे। सोचिए किसी ऋषि की बात को टालने का भी साहस किसी राजा को कभी किसी काल में भी हुआ। सम्भवतः कभी नहीं। रामायण काल के ऋषि विश्वामित्र वसिष्ठ से लेकर महाभारत काल तक भी राजागण ऋषियों के आगे नतमस्तक थे।

यद्यपि पाठकगण अनेक ऐसी घटनाएँ जिन में ऋषि मुनिगण

(शेष पृष्ठ ५ पर)

(पृष्ठ २ का शेष)

आर्यसमाज का दूसरा नियम

नियम से एक दूसरे से दूर रखे गए हैं। इस प्रकार जहां तहां प्रकृति में गणना का सुनियम दिखाई दे रहा है और वह उसके नियन्ता की सर्वज्ञता प्रमाणित करता है।

कार्यों में दृढ़ता और स्थिरता उन के कर्ता की चेतनता का परिचायक चिह्न है। जो झोंपड़ी आंधी के पहले ही झोंके में उड़ जाती है, उसके निर्माण में बहुत विचार नहीं लगाना पड़ता। उस मन्दिर को, दुर्ग को, पुल को और जहाज को बनाने के लिए बड़ा भारी पुरुषार्थ और अत्यन्त कड़ा परिश्रम करना पड़ता है जो वर्षों पर्यन्त दृढ़ बना रहता है, आंधियों और वर्षाओं का सामना करता है। उसको चिरस्थायी बनाने के लिए बुद्धि-बल भी बहुत लगाया जाता है।

हम उस विमान में यात्रा कर रहे हैं जो विस्तीर्ण आकाश में उड़ रहा है। उसका नाम पृथ्वी है। यह विमान सवा अरब के लगभग सवारियां लिये निर्दिष्ट दिशा को जा रहा है। इसकी गति का वेग एकरस है, सुनिश्चित है और एक सेकण्ड में २० मील है। उसे सूर्य आकर्षित कर रहा है और ग्रह खींच रहे हैं। यह विमान उसी वायुयान के सदृश है जिसे आंधियां और तूफान बार-बार टक्कर मार कर पटक देना चाहते हैं, वर्षाएँ इसकी अग्रगति में बाधा डाल रही हैं। दूसरे विमान भी कभी-कभी उसके मार्ग में आ पड़ते हैं। क्या आकाश में होने वाली विघ्न-बाधाएँ हमारे विमान के सुनियम-सूत्र को कभी तोड़ सकती हैं? क्या यह अकुशलता से बनाए तथा चलाए हुए विमान के सदृश कभी टकराया है, रुका है अथवा बिगड़ा है? क्या इस की सुदृढ़ता और सुनियमता से हमें इसके कर्ता की निपुणता का बोध नहीं होता?

जो जन जिस देश में रखा जाए उसे उसी देश की जलवायु के अनुसार खानपान और रहन-सहन की सामग्री दी जाए, शीतोष्ण के अनुसार वस्त्र मिलें तो समझा जाता है कि उस को वहां रखने वाला कोई बुद्धिमान् व्यक्ति है। जब हम जलचर, स्थलचर और खेचर जीव-जन्तुओं का अवलोकन करते हैं, तब उनमें उपर्युक्त—अनुकूलता का—नियम बड़े आश्चर्य के साथ दिखाई देता है। यदि मनुष्य, गाय, भैंस और घोड़ा आदि प्राणी पानी में डुबकी लगावें तो वे न तो वहां देख सकते हैं और न उन में सांस लेने की ही शक्ति रहती है। परन्तु मछलियों को वहां देखने और सांस लेने में कुछ भी कठिनाई नहीं होती। ठण्डे देश के पशुओं के तन पर इतने घने बाल होते हैं कि वे हिम में भी सुख से रह सकते हैं। उष्ण देश के उसी जाति के पशुओं के तन पर यदि वैसी ही रोम-राजिका गरम पहनाव हो तो वे तड़प-तड़पकर मर जायें। परन्तु वहां उनके तन पर वैसे केश नहीं होते। लम्बी-लम्बी झड़ियां लगी हैं, मूसलाधार पानी बरसता है, बर्फ के तूफान आते हैं, परन्तु पक्षियों के पंखों की ऐसी रचना है कि वे कभी नहीं भागते। पक्षियों का परित्राण उन्हीं से होता है। इस जगम जगत् की रचना में ऐसे और अगणित भेद हैं जिन से जगदीश्वर की बुद्धिपूर्वक कृति का बोध होता है।

जगत्-रचना में अपवाद का नियम भी पाया जाता है। एक इंजीनियर सीधी सड़क बनाता हुआ यदि ऐसे स्थान पर पहुंचता है जहां कोई पुरातन स्मारक-भवन अथवा कोई धर्म मन्दिर हो तो वह अपने मानचित्र में अपवाद करके सड़क को टेढ़ी बनाकर स्मारक स्थान को बचा देता है। नगरों को बचाने के लिए नहरों के निर्माण में भी ऐसे अपवाद किए जाते हैं। निपुण रसोइया बहुत जनों के लिए नियत भोजन बनाते समय रोगी के लिए अपवाद रूप से उसके अनुकूल वस्तु बना देता है। वैद्य भी रोगी के अनुसार औषधोपचार में अपवाद करते रहते हैं। व्याकरण में भी जब सैकड़ों शब्दों को सिद्ध करने वाले एक नियम से किसी एक शब्द की सिद्धि नहीं होती तब वहां उसका अपवाद हो जाता है। इसी प्रकार देश और धर्म के शासन-शास्त्रों में भी देश, काल और अवस्था के भेद से नियमों में उत्सर्ग और अपवाद हुआ करते हैं। प्राकृत वस्तुओं में यह एक साधारण नियम है कि ठण्डी होने से वे सिकुड़ जाती हैं। परन्तु जब समुद्रों, सरोवरों और सरिताओं का जल ठण्डा होने लगता है, तब वह बर्फ बनकर सिकुड़ने के स्थान में फैल जाता है। इसी कारण बर्फ के मोलों लम्बे और सहस्रों मन भारी तोदे पानी पर तैरते रहते हैं। विधाता ने यहां यह अपवाद इसलिए किया है कि यदि जल जमने पर सिकुड़कर भारी बन जाता तो वह जलाशय के नीचे डूब कर असंख्य जलचर-सृष्टि का सर्वनाश कर देता। सृष्टि में स्रष्टा की चेतन सत्ता के ऐसे अनेकों प्रमाण मिलते हैं।

अनेक तत्त्वों के यथाविधि संयोग से जल, वनस्पति आदि वस्तुएँ उसी प्रकार बनी हैं जैसे मुद्रक सीसे के अक्षरों को जोड़कर शब्द बनाता है, शब्दों से वाक्य और वाक्यों से पुस्तक तैयार करता है। जैसे भिन्न-भिन्न अक्षरों के जोड़ने में—यथाक्रम रखने में—विचार, ज्ञान और कर्म-कौशल की आवश्यकता है, वैसे ही अनेक तत्त्वों के मिश्रण से वृक्षादि जगत् की रचना में भी ज्ञान और कौशल की आवश्यकता है।

तक्षशिला और सारनाथ आदि स्थानों के खोदने से पुराने लिखे हुए ताम्रपत्र और शिला-लेख निकले हैं। कई स्थानों में प्राचीन स्तूप और अशोक के स्तम्भ भी मिले हैं। पुरातत्त्ववेत्ताओं ने बड़े-बड़े अनुमान लगाकर अन्त में उन लेखों को पढ़ ही लिया है। वे पुराने शिला-लेख इसीलिए तो पढ़े गए हैं कि वे विचारवानों के लिखे हुए हैं, उन में कोई क्रम है, विधि और नियम है। इसी प्रकार ग्रह, नक्षत्र, तारागण, वृक्ष, वनस्पति आदि की भी बड़ी-बड़ी पुस्तकें हैं। यदि इनकी स्थिति को, गति को, आकार-प्रकार को और रचनादि को तत्त्वदर्शी जन जान लेते हैं तो इसका कारण यही है कि उनकी रचना बुद्धिपूर्वक हुई है, उनकी योजना में नियम और क्रम है।

किसी भी सुन्दर चित्र को देख कर हम जान जाते हैं कि इस का रचयिता कोई बड़ा चतुर चित्रकार है। वह भाव दिखाने में बड़ा दक्ष है। ऐसा सुन्दर चित्र बिना चातुर्य, ज्ञान और भाव के नहीं बनाया जा सकता। इस सृष्टि में भी कुछ कम सौन्दर्य नहीं है। वास्तव में सृष्टि तो सारे सौन्दर्य का स्रोत है। इस विकारमय कार्य-जगत् में सौन्दर्य भरने वाले भगवान् कितने चतुर, कितने ज्ञानी और कैसे बढ़िया चित्रकार हैं, यह बात सुगमता से समझ में आ सकती है। भगवद् भक्त को ऐसे विचारों से ईश्वर के अस्तित्व का दृढ़ निश्चय करना चाहिए।

"उसी ईश्वर को उपासना करनी योग्य है।" यह दूसरे नियम का दूसरा भाग है। इसमें बताया गया है कि उपर्युक्त गुणों वाले ईश्वर में उपास्य-बुद्धि होनी चाहिए, उसी की आराधना करना कर्त्तव्य है।

इस नियम के इस अंग का पालन करने के लिए आर्य जनों को चाहिए कि प्रतिदिन दोनों समय सन्ध्या किया करें। उपासनादि सन्ध्या के उपकरण शुद्ध रखें। स्वस्थ और शुद्ध होकर, कोई भी सुखासन लगा सीधे बैठें और ध्यानपूर्वक मन्त्रों का पाठ करें। कम से कम तीन और यथावकाश और यथाशक्ति अधिक प्राणायामपूर्वक, मनोमन्दिर में, परमात्मदेव की पूजा करें। इस ब्रह्मयज्ञ का करना आर्यधर्मी के लिए अतीव आवश्यक है।

उपासना के भाव को जगाने के लिए, भक्ति-धर्म को बढ़ाने के लिए ब्रह्मयज्ञ के यजमान को उचित है कि ईश्वर की प्रीति सम्पादन करे। वह पतित-पावनी प्रीति स्तुति और प्रार्थना से ही उत्पन्न होती है। इस कारण आर्य-दीक्षित का कर्तव्य है कि वेद के पवित्र मन्त्रों द्वारा, प्रभु-कीर्तन के भजनों से और अपने भावों के अनुसार अपने शब्दों में जगद्गुरु जगदीश्वर का गुणानुवाद किया करे, और सन्ध्या के पूर्व भजन अवश्य गाने और प्रार्थना द्वारा परमात्मा की कृपा मांगे। जो भक्ति भावना को अधिक बढ़ाना चाहे वह जब अवकाश पावे, तभी स्तुति-कीर्तन में लग जाए। अवसर मिलने पर प्रणव का चिन्तन तथा ध्यान किया करे। इन साधनों से भक्तिभाव को इतना बढ़ा ले कि परमात्मा की स्तुति-प्रार्थना करते अथवा सुनते समय तन में प्रेम की तरंग-सी उठ आवे, रोमांच हो आवे, नयनों से नीर-सा बरसने लगे और हृदय गद्-गद हो जाए।

आर्य-दीक्षित को रात को सोते समय "यज्जाग्रतो दूरम्" स्तोत्र का पुण्य पाठ करके सोना चाहिए। जब वह जागे तब उसी समय 'प्रातरग्निम्" इत्यादि मन्त्रों का पाठ करे। प्रत्येक मंगलकार्य में 'विश्वानि देव' इत्यादि आठ मन्त्रों से स्तुति करे। और किसी भी भले कार्य को आरम्भ करते समय, चलते समय "विश्वानि देव" इस मन्त्र का पाठ कर ले तो बहुत ही अच्छा है। इस प्रकार प्रत्येक अवसर पर स्तुति-प्रार्थना करने से बुद्धि ईश्वर में स्थिर हो जाती है।

पारिवारिक उपासना करना भी उपासक का कर्तव्य है। अपने बच्चों और बन्धुओं को संग लेकर कीर्तन करना, सन्ध्या-आराधन करना, भजन-कीर्तन का सत्संग लगाना—ये सब दूसरे नियम के सुगम परन्तु अत्यन्त शुद्ध साधन हैं। □

महाभारत इतिहास है काल्पनिक ग्रन्थ नहीं

—स्वामी वेदमुनि परिव्राजक
अध्यक्ष—वैदिक संस्थान नजीबाबाद (उ० प्र०)

★

सन् १९७५ ई० में डॉ० डी० सी० सरकार ने घोषणा की थी कि महाभारत हुआ ही नहीं। विचित्र बात यह है कि आप ने अपने जिस वक्तव्य में यह घोषणा की और महाभारत को काल्पनिक ग्रन्थ बताया, उसी वक्तव्य में यह भी कहा कि यह साधारण पारिवारिक झगड़ा था।

एक ओर तो किसी घटना के होने से इन्कार करना, उस घटना से सम्बन्धित ग्रन्थ को काल्पनिक बताना तथा दूसरी ओर गृह कलह या साधारण सा पारिवारिक झगड़ा बताकर उसके अस्तित्व को स्वीकार कर लेना न तो बुद्धिमानी है और न इतिहासवेत्ता होने का प्रमाण है। हाँ, इससे एक लाभ अवश्य हुआ है कि डॉ० सरकार चर्चा का विषय बन गए। जो उन्हें नहीं जानता था, वह भी कम से कम उनका नाम तो जान ही गया। फिर चाहे आलोचनात्मक और भर्त्सनात्मक भाषा में ही उन्हें स्मरण किया जाये। "बद् नाम अगर होंगे तो क्या नाम न होगा" यदि इस विचार से कोई अपने आप को सन्तुष्ट करना चाहे तो उसे कोई रोक नहीं सकता।

इतिहास विषय पर लेखनी उठाने, मुख खोलने और खोज करने से पहले—इतिहास ग्रन्थ कौन हो सकता है? यह जान लेना आवश्यक है। जिसे इतिहास के लक्षण ज्ञात न हों, वह इतिहास के ग्रन्थों को समझने की योग्यता भी नहीं रखता, इतिहासवेत्ता होना तो दूर की बात है।

जिस ग्रन्थ में वंशावली दी हो, वह काल्पनिक कदापि नहीं हो सकता, वह इतिहास है। काल्पनिक ग्रन्थों उपन्यासों आदि में वंशावलियाँ नहीं होतीं तथा जिस ग्रन्थ का उसके पश्चात् लिखे गए ग्रन्थों में इतिहास के रूप में वर्णन हो और जिस के उदाहरण दे देकर ऐतिहासिक दृष्टि से ही उसे अन्य ग्रन्थों में चित्रित किया गया हो, वह काल्पनिक नहीं हो सकता। महाभारत के विषय में यह दोनों बातें शतप्रतिशत ठीक हैं। महाभारत में वंशावली वर्णित है और महाभारत काल के पश्चात् के भारतीय साहित्य के सहस्रशः ग्रन्थों में—चाहे वह ऐतिहासिक ग्रन्थ पुराणादि हों अथवा इतिहासातिरिक्त साहित्य—महाभारत को इतिहास के रूप में ही उद्धृत व वर्णित किया गया है। लेख का कलेवर अधिक न बढ़ जाए, इस कारण हम उन सब प्रमाणों को यहाँ प्रस्तुत नहीं कर रहे। जिन्हें हमारी उक्त बातों की सत्यता प्रमाणित करनी हो, वह इन दोनों आधारों को महाभारत और उसके पाँच सहस्र वर्ष तक लिखे गए भारतीय साहित्य में देख लें।

इसके अतिरिक्त इतिहास की सत्यता स्थानों से प्रमाणित हुआ करती है। महाभारत से सम्बन्धित समस्त स्थान आज भी भारत-भू पर विद्यमान हैं।

दिल्ली स्थित पाण्डवों का दुर्ग आज भी पाण्डवों द्वारा इन्द्रप्रस्थ बसाये जाने का परिचय अपने नग्न अस्तित्व के द्वारा दे रहा है। कुरु वंश की पुरानी राजधानी हस्तिनापुर उत्तर प्रदेश के मेरठ जनपद में और उसके निकट ही गङ्गा के दूसरे तट पर बिजनौर जनपद स्थित विदुर कुटी है ही। अभिमन्यु पुत्र परीक्षित द्वारा बसाया हुआ परीक्षित गढ़ और कौरवों द्वारा पाण्डवों को लाक्षागृह में जलाये जाने का स्थान बरनावा मेरठ जनपद में अवस्थित हैं तो काशीपुर (जनपद नैनीताल) में द्रोण सागर भी है और बिजनौर जनपद के नगर नजीबाबाद से उत्तर "मयुरा मोर हाल्ट" स्टेशन के निकट महाभारत कालीन मयूरध्वज राजा के दुर्ग के अवशेष अब भी हैं। और तो और स्वयं महाभारत युद्ध का मैदान कुरुक्षेत्र भी हरियाणा प्रदेश में दिल्ली-अमृतसर रेलवे लाइन पर करनाल और अम्बाला के मध्य मीलों तक विस्तृत रूप में आज भी अपनी उपस्थिति का परिचय दे रहा है। जहाँ प्रसिद्ध कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय और कुरुक्षेत्र रेलवे जक्शन बने हुए हैं।

आधुनिक युग के महान् सुधारक महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपने महान् ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के ग्यारहवें समुल्लास के अन्त में आर्य राजाओं की एक लम्बी सूची दी है। इस सूची का प्रारम्भ उन्होंने महाराजा युधिष्ठिर के नाम से किया है। सत्यार्थप्रकाश को स्वनामधन्य महर्षि ने डा० सरकार के जन्म से बहुत पहले लिखा है। सन् १८७५ ई० में इस ग्रन्थ का प्रथम संस्करण प्रकाशित हुआ था। डा० सरकार और उनके समर्थक ध्यान से इस ग्रन्थ के उक्त स्थल को पढ़ें। अब सन् १९८७ ई० में इस ग्रन्थ को ११२ वर्ष हो गए हैं। इस सूची में महर्षि ने महाराजा युधिष्ठिर की तीस पीढ़ियों का राज दर्शाया है। युधिष्ठिर से लेकर क्षेमक पर्यन्त तीस राजाओं के नाम तो दिये ही हैं, साथ ही उन में से प्रत्येक का राज्यकाल भी वर्ष, मास, दिन सहित प्रत्येक के नाम के साथ दिया है। इन सब का राज्यकाल १७७० वर्ष ११ मास १० दिन का है। इन में से अन्तिम तीसवें राजा क्षेमक को मार कर उस का प्रधान राज्याधिकारी विश्रवा राजा बन बैठा था।

इस सूची से महाभारत का काल निर्णय करने में भी बड़ी सहायता मिलती है। यह सम्पूर्ण सूची महाराज युधिष्ठिर से महाराज यशपाल पर्यन्त ४१५७ वर्ष ९ मास १४ दिन के दीर्घकाल की है। यह यशपाल पृथ्वीराज चौहान की पाचवीं पीढ़ी में वर्णित है। यदि यशपाल के राज्यकाल को बीते हुए एक सहस्र वर्ष भी मान लिए जायें तो भी महाभारत से वर्तमान काल पर्यन्त ५१६० वर्ष के लगभग महाभारत का युद्ध हुए बीत चुके हैं।

हम समझते हैं कि डा० सरकार के वक्तव्य से प्रसारित भ्रांति निवारण के लिए यह इतनी पंक्तियाँ ही पर्याप्त हैं। विचारक महानुभाव इतने से ही यह समझ लेंगे कि अब से लगभग ५२०० वर्ष पूर्व कौरव-पाण्डवों में युद्ध हुआ था और महाभारत नाम के ग्रन्थ में उसी सत्य का वर्णन है तथा महाभारत आर्य जाति का महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक ग्रन्थ है। हमारी ये पंक्तियाँ यदि ऐतिहासिक रुचि रखने वालों की कुछ भी सहायक बनीं तो हम अपने को कृतकृत्य समझेंगे। ●

(पृष्ठ ३ का शेष)

क्या नहुष...

अप्सराओं पर आसक्त हुए, प्रस्तुत करेंगे। ये सभी घटनाएं तपस्या के मध्य काल की रही हैं। नहुष तो सभी तपस्याओं की घाटियों को पार कर चुके थे। क्या नहुष ने ऐसा किया? मेरा अभिमत है ऐसा कदापि नहीं हुआ। न ही सप्तर्षियों ने नहुष की पालकी ही उठाई। तब क्या यह घटना असत्य है। यदि असत्य है तो इस रूप में कैसे प्रचलित हुई।

अतः इसका वास्तविक स्वरूप जानने के लिए इस आख्यान में आये शब्दों पर विचार करना आवश्यक है। अतः इन पर विचार करते हैं—शब्द हैं—१ नहुष, २. सप्तर्षि, ३. शची, ४. सर्प, ५. पालकी।

१. नहुष—इति मनुष्य नाम।
—निघण्टु

नहुष, यह मनुष्य का नाम है अर्थात् नहुष का अर्थ मनुष्य है।

२. सप्तर्षि—ऋषयं क्रान्तदर्शिनः, दूरद्रष्टारः। —निघण्टु

ऋषि क्रान्तदर्शी और दूरद्रष्टा होते हैं अर्थात् स्वस्थान में विराजमान वस्तुओं को लांघकर दूरस्थित पदार्थों के तत्त्व को बताते हैं। सुदूर भविष्य के बताने वाले भी ऋषि होते हैं।

इसी अर्थ के आधार पर पांच ज्ञानेन्द्रियों, मन, बुद्धि आदि सात ज्ञानेन्द्रियों को भी सप्तर्षि कहते हैं। प्रमाण के लिए देखिये—'सप्तर्षय प्रतिहिता शरीरे। यजुर्वेद ३४।५५।

३. शची—शचीति विद्या नाम।
—निघण्टु

शची विद्या का नाम है।

४. सर्प—सर्प शब्द का अर्थ चलना है। यह शब्द सृप्लृ गतौ धातु से बनता है। गति से ज्ञान, गमन, प्राप्ति अर्थ भी साथ ही सम्बद्ध हैं।

५. पालकी—पालने वाली, यहां आत्मा शरीर में निवास करता है, अतः शरीर उसका रक्षक है, अत देहयष्टि ही नहुष की पालकी है।

६. पत्नी इन्द्राणी से यहां तात्पर्य है। यथा पत्नी गिरते मनुष्य को उठाती है, आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है। दुःख सुख में सहभागिनी होती है। वैसे ही इन्द्र आत्मा की पत्नी बुद्धि है। आत्मा अपने सभी कार्य बुद्धि की प्रेरणा से कराती है। वही आत्मा को ज्ञान से शुद्ध कर पतन से बचाती है। अत विद्या की साधिका बुद्धि विद्या आत्मा (इन्द्र की पत्नी) शची इन्द्राणी है।

अब देखिये, नहुष अर्थात् मनुष्य जब यज्ञ स्वाध्याय आदि तपों को करके अपनी इन्द्रियों को सुमार्ग पर चलाता है तो वे तप से सुतप्त इन्द्रिया (ऋषिगण) मानव शरीर रूप पालकी को उठा मनुष्य के आत्मा को श्रेष्ठ बनाकर इन्द्रासन की ओर ले चलती हैं। यही सप्तर्षियों का नहुष को पालकी पर उठाना हुआ। सदा-

(शेष ६ पृष्ठ पर)

आनन्दबोधो जयतान्महात्मा

(१)

य आर्य-नेतु पदमाप्तुकामा आह्या गुणास्ते प्रथम सुनेतु ।
वाग्मी विवेकी विषमेऽतिधीरो नेतास्त्यसौ य कुशलश्च कार्ये ॥

(२)

सभा-प्रधानस्य पद तरोर्यं लोष्ठाभिघातैरिव शोर्षलग्नम् ।
विहाय नीति फलमीप्सित ते कश्चिद् गुण किं दधतीह नेतु. ॥

(३)

आनन्दबोधेन सनाथितां तां विधित्सवो न सुसभामनाथाम् ।
विनाशकाले विपरीतबुद्धिरित्यस्य जाता न निदर्शन किम् ॥

(४)

नि-दामगुस्ते सुजनाभिनन्द्य हेतु विना त यमिन विनिन्द्य ।
उच्चैरुदात्तो व्रजतीह बोध्य नीचै सदाऽऽस्ते ह्यनुदात्तचित्त ॥

(५)

जनो यदर्हो भवतात्सदुत्क: क्षमो न यो यस्य न तस्य सोऽर्ह: ।
अवेक्ष्य सामर्थ्यमत स्वकीय पद निदध्याद् भुवि बन्धुरायाम् ॥

(६)

ईर्ष्या तमोऽनच्छदृश परेषा द्रष्टु क्षमन्ते न गुण-प्रकर्षम् ।
नुवन्ति घूका शशिन सुधां किं या ख समन्ताद् धवलीकरोति ॥

(७)

न कालविन्नावसर विदन् यो नार्हं स्वयं नार्हकृते प्रयस्यन् ।
स्वसद्मशूरस्तरुणश्च खट्वा श्रितो यतिर्नेतृपदस्य नार्हा ॥

(८)

तन्वा तनुर्यस्तु हृदा बलीयान् वाचि स्फुटश्चेतसि निर्मलोऽस्ति ।
सुदक्षिण कर्मसु योऽभय स आनन्दबोधो जयतान्महात्मा ॥

(९)

काले भृश कष्ट-कषायितेऽस्मिन् प्राप्ते च नाशावसरे स्व जाते. ।
आनन्दबोधात् सुमहात्मनोऽन्य को नस्तरेश्चालनपेशलोऽस्ति ॥

(१०)

सर्वेरतो निर्मल शेमुषोकैरार्यैर्दशामद्यतनी विभाव्य ।
तदायुषो वर्धनपुण्यकामैर्भाव्य परित्यज्य मिथो विवादान् ॥

<u>हिन्दी अनुवाद—</u>

महात्मा आनन्दबोध (सरस्वती) की जय हो

(१)

जो आर्यों के नेता बनने के अभिलाषी हों उन्हें चाहिए कि पहले एक अच्छे नेता के गुणों से सम्पन्न हों। नेता वह है जो वाग्मी, विवेक सम्पन्न, आपत्ति में धैर्य रखने वाला तथा कार्य-कुशल हो।

(२)

सभा (सार्वदेशिक) के प्रधान-पद को जिन्होंने नैतिकता छोड कर ठीक वैसे ही प्राप्त करना चाहा जैसे कोई पेड की चोटी पर लगे फल को ढेले मार कर पाना चाहे, क्या उनमें नेता बनने का एक भी गुण विद्यमान है ?

(३)

(स्वामी) आनन्दबोध द्वारा भली प्रकार पोषित सुगठित सभा को अनाथ बना देने की इच्छा वाले क्या 'विनाशकाले विपरीत बुद्धि' के उदाहरण नही बने ?

(४)

सत्पुरुषों से अभिनन्दन के पात्र स्वामी आनन्दबोध की अकारण निन्दा करने वाले अन्तत: स्वय निन्दा के पात्र बने। यह जानना चाहिए कि उदात्त व्यक्ति ऊंचाई की ओर जाता है तथा अनुदात्त हृदय वाला सदा नीचे रहता है।

(५)

जो व्यक्ति जिस योग्य हो उसे उसी की कामना करनी चाहिए क्योंकि जो जिस काम को करने मे समर्थ न हो वह उस काम के योग्य नही होता। इसलिए अपनी सामर्थ्य का विचार करके ही व्यक्ति को ऊंची नीची धर्म न पर पर रखना चाहिए।

(६)

ईर्ष्या के तिमिर से धूमिल दृष्टि वाले लोग दूसरों के उत्कर्ष को मूल्यांकित करने मे असमर्थ रहते हैं। क्या सम्पूर्ण आकाश को शुभ्र बना देने वाली चन्द्रमा की चांदनी की उलूक प्रशसा कर पाते हैं ?

(७)

जो समय को न जानता हो, जिसे अवसर की पहचान न हो, स्वय योग्य न हो, जो किसी योग्य के लिए प्रयास न कर रहा हो, या ऐसा शरीर से सक्षम व्यक्ति जिसकी वीरता की सीमा घर तक ही हो या फिर ऐसा साधु-सन्यासी जिस ने खाट पकड ली हो, नेता पद के योग्य नहीं हो सकते।

(८)

देह से यद्यपि कृश किन्तु मन से बलवान्, स्पष्ट वक्ता, निर्मल चित्त कार्यों में कुशल तथा जो निर्भय है, उस महात्मा आनन्दबोध की जय हो।

(९)

इस कष्टपूर्ण वेला में जब कि जाति-नाश का ही अवसर उपस्थित हो गया है, स्वामी आनन्दबोध से भिन्न कौन दूसरा व्यक्ति है जो हमारी नाव को खेने में चतुर हो।

(१०)

इसलिए वर्तमान कालीन परिस्थितियों पर सम्यक् विचार करके शुद्ध बुद्धि वाले आर्यों को पारस्परिक विवादों को भुलाकर स्वामी आनन्द बोध सरस्वती के दीर्घायुष्य की कामना करनी चाहिए।

—धर्मवीर शास्त्री, पश्चिम विहार, नई दिल्ली

(पृष्ठ ५ का शेष)

चार, विद्या विनय से सम्पन्न मनुष्य शीघ्र ही ऐश्वर्य सम्पन्न इन्द्र हो जाता है। इस के विपरीत नहुष (मनुष्य) जब ज्ञानादि के अहकार में होकर अकेले विद्या में ही आसक्त हो जाता है तो यही शची पर आसक्त होना है।

सदाचार सत्याचरण आदि को छोड़कर केवल विद्या में जो मनुष्य आसक्त होता है उसका पतन निश्चित है जैसा कि आप लोक में देखते हैं कुछ व्यक्ति विद्या में आसक्त हो जाते हैं जैसे केवल व्याकरण, दर्शन, साहित्य, इञ्जीनियरिंग आदि में तो वे केवल वैयाकरण, दार्शनिक, इञ्जीनियर आदि ही बनकर रह जाते हैं। जीवन भर उसी में हो पड रहते हैं, यही हुआ नहुष (मनुष्य) का पतन। सर्प अर्थात् सारी गतिविधियां उसी एक विषय पर हो रह जाती हैं। इन्द्र अर्थात् ऐश्वर्य अवश्य विद्याओं के अनुपात से प्राप्त कर लेते हैं। जैसा कि वेद में कहा है—

अन्धन्तम प्रविशन्ति —
ऐऽविद्यामुपासते।
ततो भूय इव ते तमो
य उ विद्यायां रताः ॥

इस प्रकार मनुष्य का उद्देश्य प्रभु-प्राप्ति धरा रह जाता है। वह विनाश के गर्त में पड जाता है। जैसा कि उपनिषदों में कहा है—

इह चेदवेदीत् अथ सत्यमस्ति।
इह चेन्नावेदीत् महती विनष्टि ॥

जब मनुष्य अपने को विद्या में लगा देता है तो वह अनन्त काल उनके उपार्जन में ही लगा रह जाता है। क्योंकि विद्याएँ तो अनन्त हैं—अनन्तपार किल शब्दशास्त्रम्। उन विद्याओं से भले ही वह इन्द्र नाम ऐश्वर्य सम्पन्न हो जाए। ऐश्वर्य सम्पन्न होने पर विद्या भी उन से दूर भागती है। अपने स्वरूप को दर्शा पत्नी रूप से उनकी नहीं होती। मनुष्य ज्ञान प्राप्त कर भी तदनुसार सत्याचरण और सदाचार नहीं करता तो उसका पतन निश्चित है। वह सांसारिक माया मोह में ही पड़ा रह जाता है। उस पतन से बचने के लिए ही गृहस्थाश्रम प्रवेश समय विवाह संस्कार में भी ध्रुवदर्शन के साथ ही सप्तर्षि दर्शन कराए जाते हैं। वहां भी तो यही भाव है कि हे पत्नी इन सप्तर्षि तारों के समीप स्थित ध्रुव को देख। स्वय भी अपने धर्म पर स्थिर रहते हुए अरुन्धती-वसिष्ठ पत्नी के समान पतिव्रता हो मेरे और अपने प्राणों के मर्मों की रक्षिका हो। सप्तर्षि जो ५ ज्ञानेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि हैं उन को श्रेष्ठ मार्ग पर चलाने में सहायिका हो।

सप्तर्षियो की जो उत्पत्ति पुराणों में वर्णित है वहां भी लगभग यही वैज्ञानिक रूप लक्षित होता है। सप्तर्षियों की उत्पत्ति वसिष्ठ की ब्रह्मा के प्राण से, पुलस्त्य की कानों से, मरीचि की मन से, अंगिरा की मुख से इत्यादि बताई गई है। अतः स्पष्ट है कि ५ ज्ञानेन्द्रियाँ, मन, बुद्धि, सभी सप्तर्षि मनुष्य की पालकी देहयष्टि को सदाचार पर चलाकर नही उठायेंगे तो इन्द्रासन= आत्मा और परमात्मा की प्राप्ति सम्भव नहीं है। सा विद्या या विमुक्तये। विद्या वही है जो विमुक्ति कराये। विद्या तभी नहुष की पत्नी तभी बनेगी अर्थात् पतन से बचाएगी और विद्या प्राप्ति से मोक्ष को दिलायेगी जब वह वेद के इस आदेश—

य उ विद्यायां रताः।

तथा विद्ययाऽमृतमश्नुते की शिक्षा पर चलेगा। वैसे तो—यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः। जिसे प्रभु स्वीकार करते हैं उसे ही प्रभु-पद की प्राप्ति होती है। किसे प्रभु स्वीकार करेंगे, यह प्रथम ही वेद के मन्त्र में बताया है।

मनुष्य जीवन तभी सार्थक होगा जब वह वेद मन्त्र में बताये तप के मार्ग पर चलकर तप परिपक्व और परिपूत पवित्र होकर प्रभु को प्राप्त कर जीवन का कल्याण करेंगे।

आशा है पाठक पक्ष-विपक्षादि से अवगत करायेंगे, जिस से आगे भी ऐसे विषय प्रस्तुत किये जा सकें।

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
S. N No. 32387/77 Post in N.D P.S O on 7, 8-7-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान विना भेजने का लाइसेंस न० यू १३९

पंजाब पीड़ित सहायता

आर्यसमाज ने पंजाब के विस्थापित हिन्दू परिवारों की निरन्तर सहायता की है। इस समय भी दिल्ली की सभी आर्यसमाजो, स्त्री आर्यसमाजों, दानी महानुभावो के सहयोग से बोट क्लब पर १४ जून १९८८ से बैठे हुए ७६० विस्थापित परिवारों के लिए आटा, दालें, घी, चावल, कपड़े, चीनी, तेल, साबुन, लकड़ी, दूध आदि की पूरी सहायता दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से निरन्तर भेजी जा रही है। इस कार्य में सहयोग के लिए पहल सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने की थी, उसके पश्चात् दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, प्रान्तीय आर्य महिला सभा, दिल्ली की समस्त आर्यसमाजो, स्त्री आर्यसमाजों एव पंजाब पीडित सहायता समिति द्वारा निरन्तर सहायता भेजी जा रही है।

स्वामी आनन्द बोध सरस्वती, प० सच्चिदानन्द शास्त्री, डा० धर्मपाल, श्री सूर्यदेव, महाशय धर्मपाल, डा० शिव कुमार शास्त्री, श्रीमती सरला महता, श्रीमती प्रकाश आर्या, सभी दानदाताओ का धन्यवाद करते हैं तथा आशा करते हैं कि इसी प्रकार पंजाब विस्थापितों के लिए निरन्तर सहयोग मिलता रहेगा।

धन्यवाद।

निवेदक
ओमप्रकाश आर्य
(मन्त्री)

(पृष्ठ १ का शेष)

हरिजनों को धार्मिक…

तथा उससे सम्बन्धित सभी आर्यसमाजो तथा शिक्षण संस्थाओं की यह सम्मिलित महती सभा शंकराचार्य के वक्तव्य का प्रबल विरोध करती है तथा सती प्रथा के समर्थन में और हरिजनों के मन्दिर प्रवेश के विरोध में भारतीय संविधान विरोधी वक्तव्य देने के लिए सरकार से अनुरोध करती है कि शंकराचार्य के विरुद्ध सख्त कार्यवाही की जाए तथा समस्त भारतीय जनता से भी सम्मानपूर्वक अनुरोध करती है कि शंकराचार्य के मानवता विरोधी वक्तव्यों के विरुद्ध एकजुट होकर शंकराचार्य से मानवमात्र के कल्याण के लिए राष्ट्रीय धारा के अनुरूप अपने आचरण में परिवर्तन करने के लिए बाध्य करें।

सभा के महामन्त्री श्री सूर्यदेव ने वक्ताओं और श्रोताओं का धन्यवाद ज्ञापन किया और कहा—भगवान् श्री निरंजन देव तीर्थ को सद्बुद्धि प्रदान करे। □

धन्यवाद ज्ञापन

अस्पृश्यता-निवारण सम्मेलन

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्त्वावधान में रविवार ३ जुलाई १९८८ को सप्रू हाउस, बाराखम्भा रोड, नई दिल्ली में श्री स्वामी आनन्द बोध सरस्वती की अध्यक्षता में "अस्पृश्यता-निवारण सम्मेलन" सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में दिल्ली की सभी आर्यसमाजों, स्त्री आर्यसमाजों एव आर्य शिक्षण संस्थाओं ने यथाशक्ति सहयोग दिया। हम सभी महानुभावों के प्रति हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं। आशा करते हैं कि भविष्य में भी सभी का सक्रिय सहयोग इसी प्रकार मिलता रहेगा। धन्यवाद।

डा० धर्मपाल
(प्रधान)

सूर्यदेव
(महामन्त्री)

सेवा में—

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ३९ | रविवार १७ जुलाई १९८८ | सृष्टि संवत १९७२९४९०८८ | आषाढ २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर ३० पौंड

गोरखा पहाड़ों में लौटती शांति

दो वर्ष तक हड़ताल, बंद और मारकाट भोगने के बाद दार्जीलिंग और उसके आसपास की घाटियों में फिर से शांति का माहौल बनेगा, यह उम्मीद करने के प्रबल कारण हैं। २९ जून की त्रिपक्षीय बातचीत से केन्द्र, पश्चिम बंगाल सरकार और गोरखा मोर्चा के बीच जो सार्थक समझदारी पैदा हो चुकी थी, उसकी पुष्टि परसों गोरखा मोर्चा की बैठक से हुई है। सुभाष घीसिंग ने इस बैठक में गोरखा राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा के सभी संगठनों के प्रतिनिधियों को त्रिपक्षीय बातचीत के परिणामों पर दो टूक फैसला लेने के लिए बुलाया था। सभी प्रतिनिधि आए। उनमें वे सभी नेता भी शामिल थे जो उग्रवाद का सहारा लेकर दार्जीलिंग को रक्तरंजित करने पर आमादा थे। घीसिंग ने सिर्फ दो विकल्प पेश किए। या तो उन्हें शांतिपूर्ण समझौता करने का एकाधिकार दिया जाए या फिर सरकार से मरणान्त वैर मोल लेकर हिंसा को ही अपना लिया जाए। बैठक में उपस्थित सभी १४८ प्रतिनिधियों ने शांति के पक्ष में निर्द्वन्द्व और तत्काल मतदान किया। इससे कई बातें मानो एक साथ तय हो गयीं। कुछ महीनों से घीसिंग का रुतबा उग्रवादियों के आगे कमजोर पड़ता नजर आ रहा था। इस फैसले से वे सभी गुटों के एकछत्र नेता बनकर उभरे हैं। खुकरीधारी वालंटियरों के सुरक्षा साए में बैठक में प्रवेश कर घीसिंग ने युवा तबको पर अपनी पकड़ साबित की है। शांति के पक्ष में मतदान सिद्ध कर रहा है कि आतंकवाद का सहारा लेने वाले अपने तरीके की असफलता से वाकिफ हो चुके हैं। इसी का परिणाम है कि बैठक के बाद घीसिंग पूरे विश्वास से घोषणा कर पाए कि समाधान होने तक आंदोलन स्थगित रहेगा।

समाधान के रास्ते में तीन रुकावट आ सकती हैं। प्रस्तावित पर्वतीय परिषद् में गोरखा शब्द को शामिल करवाए बिना शायद घीसिंग न मानें। दूसरे, इस परिषद् के अधिकार क्षेत्र में वे सिलिगुड़ी और दुआर इलाकों को भी शामिल करवाना चाहेंगे। तीसरी और सबसे महत्वपूर्ण बात यह कि इस परिषद् को स्वायत्तशासी बनाने से कम कोई चीज घीसिंग को स्वीकार्य नहीं होगी।

केन्द्र सरकार के सख्त और बेलाग रुख से जहाँ पश्चिम बंगाल सरकार को भरोसा हो चुका है कि वह प्रदेश का विभाजन न करने के प्रति शुरू से गंभीर है, वहीं घीसिंग और उनके सिपहसालारों को अपनी मांग की व्यर्थता का ज्ञान हो चुका होगा। लेकिन परिषद् को पहले स्वीकार और फिर नकारने वाले घीसिंग इसे अब तभी स्वीकार करेंगे, जब उसके साथ कुछ नया जुड़ा होगा। अतः अब खुद ज्योति बसु को भी राजनीतिक कृपणता का परित्याग करना चाहिए। पश्चिम बंगाल का विभाजन नहीं हो रहा है। इसलिए बंगाली और नेपाली भाषी गांवों के आधार पर परिषद् के कार्यक्षेत्र का सीमांकन करने में अगर कुछ ज्यादा इलाका देने से गोरखा अहं की तुष्टि होती है तो कोई हर्ज नहीं। परिषद् के नामकरण में गोरखा शब्द का प्रयोग निश्चित ही इस आंदोलन से उपजी गोरखा पहचान को एक रचनात्मक दिशा दे सकता है। स्वयं ज्योति बसु भी इस बात से सहमत होंगे कि बिना परिषद् को स्वायत्तता दिए वे अलग प्रदेश की मांग का स्वस्थ विकल्प नहीं दे पाएंगे।

(शेष पृष्ठ ९ पर)

कुवैत में अन्तिम संस्कार पर प्रतिबन्ध

सभा-प्रधान ने विदेशमन्त्री को पत्र लिखा

सम्माननीय श्री पी० वी० नरसिंहराव,
केन्द्रीय विदेश मन्त्री,
भारत सरकार,
९, मोतीलाल नेहरू मार्ग,
नई दिल्ली-११०००१

माननीय महोदय,

सादर नमस्ते।

प्रभु कृपा से आप स्वस्थ एवं सानन्द होंगे।

कुवैत म्यूनिसिपल बोर्ड के क्षेत्र में किसी भी व्यक्ति का दाह संस्कार नहीं किया जाता, क्योंकि यह इस्लामी कानून के विरुद्ध है। कुवैत की सरकार ने सन् १९७८ तक दाह संस्कार की अनुमति दी हुई थी, इसके पश्चात् १९८६ तक भी मानवीय आधारों पर तदर्थ रूप से दाह संस्कार करने की अनुमति दी जाती रही है। भारतीय मूल के व्यक्तियों द्वारा भारतीय दूतावास के माध्यम से इस प्रश्न को कई बार उठाया गया कि पूर्ववत् दाह संस्कार की अनुमति वहां पर दी जावे। परन्तु पिछले दिनों दाह संस्कार प्रबन्ध विभाग के अधीक्षक यूसुफ रशीद अमदा ने स्पष्ट किया कि हमने १९८६ से दाह संस्कार की अनुमति देना बिल्कुल बन्द कर दिया है और उन्होंने यह भी बताया कि सुलईबख्त श्मशान स्थल को विकास की दृष्टि से दूसरे स्थान पर ले जाया जा रहा है।

श्री अमदा ने यह भी कहा कि उन भारतीयों के लिए जो मृत शरीरों को अपने देश में ले जाने की सामर्थ्य नहीं रखते उन के लिए नि:शुल्क दफनाने की व्यवस्था कर दी गयी है।

उपर्युक्त आदेश कुवैत में रहने वाले भारतीयों की धार्मिक-भावनाओं के साथ खिलवाड़ है। हिन्दू अपने मृतकों का दाह संस्कार करते हैं, उनको दफनाने के लिए बाध्य नहीं किया जाना चाहिए।

आप से विनम्र निवेदन है कि आप कुवैत सरकार से इस सम्बन्ध में बातचीत करें तथा वहां की सरकार को भारतीयों को अपने धार्मिक रीति रिवाजों के अनुसार सब प्रकार की सुविधाएं देने के लिए बाध्य करें। आप इस विषय को, यदि आवश्यक समझें तो, अन्तर्राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग में भी उठाने की कृपा करें।

कृपया की गयी कार्यवाही से सभा को भी सूचित करें।

धन्यवाद।

भवदीय
डा० धर्मपाल
सभा-प्रधान

सम्पादक—य० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०
प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

आर्यसमाज का तीसरा नियम

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

लेखक—स्वामी सत्यानन्द जी महाराज

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

"वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है।" इस वाक्य में यह उपदेश दिया गया है कि वेद नियत शब्दों, वाक्यों, पदों और मन्त्रों का समूह रूप एक पुस्तक है। उसमें जो कुछ वर्णन किया गया है वह सच्चा ज्ञान है। पहले नियम में कहा है कि "सब सत्यविद्याओं का आदिमूल परमेश्वर है।" इस तीसरे नियम में बताया है कि "वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है।" पहले नियम के वाक्य की अनुवृत्ति करने से तीसरे नियम का उपर्युक्त वाक्य यह सिद्ध करता है कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है और वेद का प्रकाश परमात्मा से हुआ है।

कई कर्म गौण धर्म होते हैं और वे धर्म का एक अंग कहलाते हैं, परन्तु मुख्य धर्म का अथवा धर्म का मुख्य अंग एक ही हुआ करता है। इस दृष्टि से दीक्षित आर्यों का मुख्य धर्म वेद का पढ़ना-पढ़ाना ही है। नियम में "परम" शब्द सर्वोत्कृष्ट का बोधक है। आर्यों का परम धर्म जिसके समान दूसरा धर्म नहीं है—वेद का पढ़ना-पढ़ाना ही है। धर्म के शेष सारे अंग तथा साधन गौण और साधारण हैं। दया भी धर्म का अंग है। क्षमा, सन्तोष, तप, दान और परोपकारादि सभी शुभ कर्म साधन माने जाते हैं। एक धार्मिक व्यक्ति में इन गुणों का होना आवश्यक है। परन्तु ये गुण किसी न किसी अंश में सब धर्मों में पाये जाते हैं, आर्य-अनार्य सब में दीख पड़ा करते हैं। कभी-कभी तो इन का उत्कृष्ट विकास नास्तिक व्यक्तियों तक में भी देखा गया है। इस कारण ये गुण आर्य धर्म का पूर्ण बोध नहीं कराते, उसको दूसरे धर्मों से पृथक्त्व नहीं देते। जैसे जल में जड़त्व है और अग्नि में भी, परन्तु अग्नि को जल से पृथक् जानने के लिए अथवा अग्नि का अपना गुण और स्वभाव समझने के लिए जड़ता नहीं किन्तु उष्णता साधन समझी जाती है, वैसे ही आर्यों के धर्म के अन्य अनेक अंग दूसरे धर्मों के समान हो हैं, परन्तु उनका परम धर्म केवल मात्र वेद है। दस नियमों में यदि वेद के अध्ययन और अध्यापन को धर्म न कहा होता तो न तो इन नियमों के संगठन की, और न आर्यसमाज की स्थापना की ही कोई आवश्यकता होती। आर्यसमाज की विशेषता और आवश्यकता को यही एक वाक्य सिद्ध करता है। यही परम धर्म आर्यसमाज की जीवन-जड़ और इस की स्थापना के महत्त्व का मूल है।

यदि वेद के पढ़ने-पढ़ाने के इस परम धर्म का आर्यसमाजों में पालन न हो तो इसका सारा कार्यकलाप और संगठन-प्रबन्ध ऐसा ही है जैसे दीप्ति के बिना दीपक और जीवन के बिना देह हुआ करती है। फिर तो इस का होना और न होना बराबर हो जाए।

महर्षि दयानन्द ने अपनी महामति से आर्यसमाज की स्थापना में यदि कोई अमूल्य मौलिक नियम रखा है तो वह यह तीसरा नियम है। उनका अपना उद्योग, अपना पुरुषार्थ और अपना जीवन इसी परम धर्म का दृढ़ता से पालन करते हुए समाप्त हुआ। उन्होंने अनेक गौण कर्म—पाठशालादि—आरम्भ किए, परन्तु विशेष सफलता होती न देख बन्द कर दिए। उनका यही एक धर्म था जिसका पालन करते हुए उन्होंने सुख-दुःख, निन्दा-स्तुति और मानापमान कुछ नहीं गिना—मरण-जीवन एक समान समझा। बीसियों योरुपीय शिष्यों का सम्बन्ध-सूत्र तोड़ते समय वे किंचिन्मात्र भी तो नहीं हिचकिचाए। ऐसे परम धर्म का पालन करने के लिए जो आस्तिक भाव और साधन उपयोगी हैं, वे आगे लिखे जाते हैं।

दीक्षित आर्य को तीसरे नियम के पहले भाग का पालन करने के लिए इस आस्तिक भाव को दृढ़ करना चाहिए कि "वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है", यह यथार्थ है। मनुष्य का अधिकांश ज्ञान निमित्त से बढ़ता है। आज तक का यही अनुभव है कि मनुष्य सिखाने से ही सीखता है। यदि उसे कुछ भी न सिखाया जावे तो उस का स्वाभाविक ज्ञान बहुत ही स्वल्प दिखाई दे। पशुओं में जैसी स्वाभाविक चेतना है, वैसा मनुष्य का ज्ञान स्वाभाविक नहीं है। उसकी इतनी उन्नति का कोई प्रबल साधन अवश्य होना चाहिए। वह साधन कोई ज्ञानमयी आदिम प्रेरणा हो हो सकती है।

सब धर्मों का पहला स्रोत, सब विचार-तरंगों का प्रथम स्पन्दन, सब ज्ञानों का आदि आश्रय, सब नियम-मन्दिरों की आधारशिला, मानव-जीवन का मान-चित्र और साहित्य-संसार में सबसे प्रथम पुस्तक वेद है। मनुष्य की उन्नति का साधन भी यही है। मानव-संसार की मति को अग्रगति देने का यही निमित्त कारण है। इसी ने मानव-मस्तिष्क को पहले पहल प्रकाश प्रदान किया है।

प्रमाण आदि वृत्तियों की भांति मनुष्य में श्रद्धा की भी एक वृत्ति है। इसका अनादर कदापि नहीं किया जा सकता। जिन वस्तुओं का ज्ञान हम प्रमाणों द्वारा प्राप्त करते हैं, उन में भी हमारी श्रद्धा विद्यमान होती है। यदि कोई जन प्रत्यक्ष-प्रमाणवादी ही बन जाए तो आगामी दिनों और मासों के आने के लिए उसके पास कोई प्रमाण नहीं रहता। कोई कह सकता है कि पीछे दिन और मास बदलते आए हैं, इसलिए भविष्य में भी उनके बदलते रहने का अनुमान हम करते हैं। परन्तु यह अनुमान भी तो एक प्रकार की श्रद्धा नहीं तो और क्या है?

समुद्र का दूसरा किनारा हमें दिखाई नहीं देता, और न हम दूसरे देशों के नगरों को ही इस समय देखते हैं, परन्तु फिर भी उनके अस्तित्व में विश्वास करते हैं। यह इसीलिए कि हमें आप्तोपदेश में श्रद्धा है।

प्रत्येक मनुष्य रासायनिक प्रयोग नहीं करता, दूरबीनों से मंगल आदि ग्रहों की सृष्टि को सिद्ध करने वाले चिह्नों को नहीं देखता, परन्तु जिन तत्त्ववेत्ताओं ने इन वस्तुओं का साक्षात्कार किया है, उनकी पुस्तकें पढ़कर उन वस्तुओं के अस्तित्व का विश्वास किया जाता है। यह सब श्रद्धा का ही प्रभाव है।

श्रद्धा के बिना तो सांसारिक सम्बन्ध भी नहीं निभ सकते। यदि केवल कोरे तर्क से माता को देखने लगें तो उसमें स्त्रीत्व के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं रहता। उसकी देह में अस्थिपंजर आदि से भिन्न मातृत्व कुछ भी दिखाई नहीं देता। पर यदि माता को श्रद्धा की दृष्टि से देखें तो उसमें कितनी पूज्य भावना, कितना गौरव, कितना आदर और कितना महत्त्व है, यह बात सहज में जानी जा सकती है। जब ईश्वर को चेतन वस्तु मान लिया, जीवित जाग्रत सत्ता स्वीकार कर लिया और स्तुति प्रार्थनादि द्वारा उसके अनुपम प्रसाद में भी विश्वास हो गया, तब फिर मनुष्य के विमल चिदाकाश में उसके प्रकाश का होना न मानना सर्वथा असंगत है। सूर्य के होने पर उस की किरण भूमि पर अवश्य पड़ेगी। इसी प्रकार, ईश्वर के अस्तित्व से ही मनुष्य के अन्तःकरण में उसकी ज्योति का अवतरण सिद्ध है।

ज्ञान भीतर से ही होता है। इस ज्ञान को पण्डित लोग अनुभव कहते हैं। इस ज्ञान में प्रभु की प्रेरणा भी हुआ करती है। इसी का नाम देव-वाणी—दिव्य-वाणी—रखा गया है। परमेश्वर सर्वव्यापक है। उसे बाहर से ज्ञानमयी प्रेरणा करने की आवश्यकता नहीं। किन्तु जैसे हम अपनी भीतर की शक्ति से—सत्ता से—अपने हाथ, मस्तकादि अंगों का संचालन करते हैं, उसी प्रकार वह भी भीतर से ही ज्ञान की प्रेरणा करता है। स्वप्न के शब्दों और मानस विचारों के सदृश ही मनुष्य को उसकी प्रेरणा का ज्ञान होता है।

"वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।", इस दूसरे भाग के पालन की विधि आगे दी जाती है। तीसरे नियम के श्रद्धालु को चाहिए कि वह सांगोपांग वेद को एक व्यक्ति के समान समझे। यद्यपि अंग अंगी से पृथक् होकर किसी काम का नहीं रहता, परन्तु अंगी के साथ मिला हुआ तो वह अत्यन्त सुन्दर और उपयोगी हुआ करता है। इसी प्रकार आर्य जन यदि वेद का विशेष

(शेष पृष्ठ ४ पर)

दूरदर्शन और सरकारी अमीर खुसरो

ले०—डा० धर्मपाल

★

आकाशवाणी और दूरदर्शन जनसम्पर्क के सशक्त माध्यम हैं। ये सरकारी संस्थाएं हैं। हमारी सरकार का प्रयास रहा है कि पूरे देश में भावात्मक एकता स्थापित हो और साम्प्रदायिक एकता हो तथा इन्हीं आधारों पर राष्ट्र सशक्त हो। यह प्रयास सराहनीय है। इन भावनाओं को सम्प्रेषित करने के लिए कुछ प्रतीकों की खोज की जाती है। यह प्रतीक निश्चय ही इतिहास के युगपुरुष माने जा सकते हैं। पिछले दिनों अमीर खुसरो को साम्प्रदायिक एकता का प्रतीक बनाया गया, पर ऐसा लगा इस प्रतीक के बारे में अच्छी तरह अध्ययन नहीं किया गया और यह मात्र भावुक प्रतीक हो रहा, जिसको लोग न जानते हों, उसके माध्यम से ऐसी बात कही जा सकती है जो सब के लिए रुचिकर हों, परन्तु जिसे सब लोग जानते हैं, उसके माध्यम से कोई बात कही जाए तो उसे प्रस्तुत करने वाले का कांईयापन ही कहा जायेगा और इससे अच्छे परिणाम निकलने की बजाय गलत परिणाम ही निकलेंगे। भोजन परोसने वाला यदि कहे कि यह मिर्च बड़ी मीठी है, तो बताइए इसका क्या अर्थ होगा।

२५ मई, १९८८ को अमीर खुसरो का जो प्रकरण दिखाया गया था, उसमें दर्शकों के गले में यह उतारने की कोशिश की गई है कि महमूद गजनवी ने सोमनाथ का मन्दिर पैसे के लालच से लूटा था और इस लूट में किसी तरह का धार्मिक उन्माद नहीं था। प्रस्तुतकर्ता यह भूल गए कि महमूद गजनवी ने मन्दिर को केवल लूटा नहीं था बल्कि तोड़ा भी था और सोमनाथ के प्रसिद्ध शिवलिंग को चार टुकडे करके जामा मस्जिद की सीढ़ियों में चिनवाया था। क्या यह धार्मिक उन्माद नहीं था। दूरदर्शन वालों को चाहिए गलत बयानी करने के बजाय, ऐसे प्रकरणों को दिखाना बन्द करें अथवा केवल ऐसे प्रसंग ढूंढ़ लायें, जो वास्तव में साम्प्रदायिक सद्भाव को बढ़ा सकें। परन्तु दूरदर्शन वालों ने तो आंखों पर पट्टी बांधी हुई है और रही बात एन०सी०ई०आर०टी० के इतिहास विशेषज्ञों के बारे में है। इसी सीरियल में शिवाजी की जीवनाहुति को जर-जमीन की लड़ाई दिखाया गया है। यदि यही कलर ब्लाइण्ड दृष्टि दूसरे महापुरुषों पर भी डाली जाए तो पुरु, पृथ्वीराज चौहान, महाराणा प्रताप, गुरु गोविन्द सिंह, झांसी की रानी सबके सब जर-जमीन की लड़ाई लड़ने वाले ही दिखाई देंगे। अनेक हिन्दू राजाओं ने मुसलमानों का साथ दिया था, उस समय शिवाजी की लड़ाई को स्वार्थी, आकांक्षा से प्रेरित लड़ाई प्रदर्शित किया गया है। यदि इस बात को आधार मान लें तो अनेक हिन्दू राजाओं ने अंग्रेजों का साथ दिया था तब गांधी जी की आजादी की लड़ाई को हम क्या कहेंगे।

अमीर खुसरो का ही एक एपिसोड १९ जून को दिखाया गया। इस सीरियल में कालेज के विद्यार्थियों को; उनके द्वारा ऐतिहासिक तथ्यों को बताए जाने पर भी; कक्षा में उपस्थित प्रोफेसर द्वारा ऐतिहासिक तथ्यों को जानबूझकर झुठलाया गया। उक्त प्रकरण में प्रोफेसर महोदय उपस्थित विद्यार्थियों के मस्तिष्क में यह झूठे तथ्य ठूंस रहे थे कि आर्य लोग भी भारतवर्ष में उसी प्रकार आये जिस प्रकार अंग्रेज आये, परन्तु आर्य लोग यहां की संस्कृति से प्रभावित होकर, इस प्रकार विलीन हो गए कि उन्हें हम विदेशी नहीं समझते। इसी प्रकार मुसलमान आक्रान्ता के रूप में नहीं आये, बल्कि आर्यों तथा अंग्रेजों की तरह आये और भारतीय संस्कृति से प्रभावित होकर यहीं रम गए। बदकिस्मती यह है कि हमारे टेलीविजन वाले पाश्चात्य इतिहासकारों के इतिहास को ही सही मानते हैं, जबकि पश्चिमी इतिहास वालों ने विशेष रूप से यूनानियों ने सिकन्दर से पहले कुछ लिखा ही नहीं और अब उल्टे सीधे तथ्यों को तोड़-मरोड़ कर कुछ ऐसा सिद्ध करना चाहते हैं कि भारत में कोई सभ्य जाति थी ही नहीं और थी भी तो वह आर्यों से पहले थी, आर्यों को उन्होंने आक्रमणकारी दिखाया तो उन्हें जंगली बर्बर दिखाना अनिवार्य हो गया। अब इन से कोई पूछे कि मैक्समूलर जिन आर्यों को ईसा से १५०० साल पहले भारत आने वाला मानते हैं और वेदों की रचना ईसा से १२०० साल पहले मानते हैं तो क्या इतने थोड़े समय में कोई जाति भाषा और दर्शन की दृष्टि से इतनी उत्कृष्ट हो सकती है जिस में वेदों जैसे ग्रन्थ उपलब्ध हों, जो समाज और प्रकृति पर आत्मा और अध्यात्म पर बात कर सके। मैक्समूलर ने यह भी बताया है कि वे भवन निर्माण या खेती के उपकरण और जीवन की अन्य सुविधाओं के बारे में नहीं जानते थे लेकिन ऋषि सूक्तों में तो ऐसे भवनों का वर्णन है जो सात-सात मंजिल के थे और जिन में १००-१०० स्तम्भ थे। जब हड़प्पा के अवशेष सामने आये और वे अवशेष वैदिक सभ्यता से मेल खाते थे तो इन्होंने यह कहना प्रारम्भ कर दिया कि यह सभ्यता तो आर्यों से पहली सभ्यता थी।

दरअसल यह इतिहासकार कम्पनी बहादुर के मुलाजिम थे या ईसाई धर्म प्रचारक इसका बड़ा स्पष्ट प्रमाण है मैक्समूलर का वह खत जो उन्होंने १८८६ में अपनी पत्नी को लिखा था—मुझे उम्मीद है कि वेदों का यह मेरा अनुवाद भारत के भविष्य और उसमें रहने वाले करोड़ों लोगों के भविष्य पर असर डालेगा। मुझे विश्वास है कि यह उनके धर्म का मूल है और उन्हें अपने मूल्य दिखाने से ही पिछले तीन हजार साल से जमी हुई गहरी जड़ें उखाड़ी जा सकेंगी। दो साल बाद उन्होंने ड्यू आफ आरगाईल को लिखा था, भारत का प्राचीन धर्म विनाशोन्मुख है और अगर इसकी जगह ईसाइयत नहीं लेती तो इसमें किसका दोष है।

बदकिस्मती यह है कि पश्चिमी इतिहासकार तो आर्यों को विदेशी सिद्ध नहीं कर पाए पर हमारे प्रगतिशील इतिहासकार और सरकारी प्रचार माध्यम यह सिद्ध करने में एड़ी चोटी का जोर लगा रहे हैं। विश्वविद्यालयों में अभी भी विद्यार्थी को यही पढ़ाया जाता है कि हम किसी विदेशी बर्बर जाति की सन्तान हैं। डा० वाकणकर के शब्दों में—आज से २५ साल पहले हमारे देश में सभी प्रमाण उपलब्ध हो जाने के बाद भी शिक्षा की पुस्तकों में इन प्रमाणों को टालने का प्रयास भारतीय अस्मिता के प्रति आघात करने का कौन-सा षड्यन्त्र है, इस पर भी विचार करना होगा। हम कब तक विदेशी बर्बर जाति की सन्तान कहलायेंगे। कुछ बात और अमीर खुसरो के बारे में जान लें। अमीर खुसरो का पिता तुर्क था और मां हिन्दू। उनके नाना रावत थे और धर्म परिवर्तन के बाद उन्हें दिल्ली दरबार में जगह मिली थी। अपने नाना की दानशीलता का बखान करते हुए अमीर खुसरो ने लिखा है कि वे हिन्दू और मुसलमान दोनों पर समान रूप से मेहरबान थे। मुसलमानों पर वे अशर्फियां बरसाया करते थे और हिन्दू काफिरों पर तलवार। इस टिप्पणी के बाद भी अमीर खुसरो को साम्प्रदायिक एकता का वाहक दिखाया गया है—किमाश्चर्यमतः परम्। दरअसल हमारे प्रगतिशील लोग हर उस आदमी को साम्प्रदायिक एकता का वाहक मानते हैं जिसके मां बाप में से एक हिन्दू हो और दूसरा मुसलमान।

अमीर खुसरो के बारे में कुछ बातें अच्छी भी हैं, जैसे कोऊ नृप होई, हमें का हानि अमीर खुसरो कैकुबाद के समर्थक थे, जलालुद्दीन खिलजी के समर्थक थे। अलाउद्दीन के सम्मान में भी उन्होंने कसीदे लिखे। अलाउद्दीन के बेटे उमर खां को गद्दी पर बिठाकर खुद वलीद बनने वाले मलिक काफूर की भी उन्होंने प्रशंसा की है। जब कुतुबुद्दीन ने मलिक काफूर का कतल कर दिया तो वे उसके भी राजकवि बन गए। यह गिनती बहुत लम्बी है। खुसरू खां, गाजीमलिक, गयासुद्दीन तुगलक और मुहम्मद तुगलक—इन सब बादशाहों को अपनी तारीफ से अमीर खुसरो ने मोह लिया था। अमीर खुसरो की विशेषता थी कि वे बिना किसी लिहाज संकोच के अपनी निष्ठा बदल लेते थे।

अमीर खुसरो एक प्रतिभाशाली कवि भी थे। हिन्दू संगीत, हिन्दू काव्यशास्त्र और हिन्दू छन्द के बड़े भगत थे। वे ब्राह्मणों को आदर देते थे और हिन्दू धर्म में बड़ा श्रद्धाभाव रखते थे। इन सब अतिरंजित बातों की जांच पड़ताल होनी चाहिए। लगता है इतिहास को बहुत सारी बातें गलत जानकारियों पर आधारित हैं। जिस अमीर खुसरो ने

(शेष पृष्ठ ६ पर)

(पृष्ठ २ का शेष)

आर्यसमाज का तीसरा नियम

करें तो वे प्रमाण कोटि में नहीं रहते। यदि वे वेद-विरोधी न हों तो प्रमाण रूप हैं और वेदरूपी अङ्गी के सुन्दर अङ्गोपाङ्ग हैं। वेद से लेकर स्मृतियों तक, शाखा प्रतिशाखा युक्त, एक वैदिक कल्पतरु ही कहा जाता है। इनका प्रतिदिन स्वाध्याय करना चाहिए। यदि संस्कृत भाषा में गति न हो तो अनुवादित पुस्तकों का स्वाध्याय भी बहुत अच्छा है।

स्वाध्याय का सर्वोत्तम समय नहाने-धोने और सन्ध्योपासना से निवृत्त होने के पश्चात् है। स्वाध्याय को चाहे कोई थोड़ा ही समय दे, पर उतनी देर तक दत्तचित्त अवश्य होना चाहिए। धर्म-ग्रन्थ आदरपूर्वक रखकर पढ़ना उचित है। सन्ध्या के आसन ही पर बैठ कर पढ़ना और भी अच्छा है। एक ग्रन्थ को आदि से आरम्भ करके जब तक वह समाप्त न हो जाए, तब तक दूसरे को आरम्भ करना अच्छा नहीं।

जितनी पंक्तियां पढ़ी जायें उन के भावों को समझने का यत्न अवश्य किया जाये। आंखें बन्द करके उन के आशय का मनन किया जाये। पदार्थ को समझकर स्मृति-कोष में स्थिर किया जाये। जो प्रकरण अथवा पद समझ में न आवे, उन पर सांकेतिक चिह्न लगाया जाये। जब कभी ज्ञानी सज्जनों का सत्संग प्राप्त हो, तब उन से पूछ कर शंकाएँ निवृत्त करा ली जायें। पण्डितों के पास जाकर धर्मशास्त्रों, श्रुतियों, और दार्शनिक ग्रन्थों को पढ़ना, सीखना और समझना, ज्ञान वृद्धि का एक श्रेष्ठ साधन है। जिज्ञासु को जो बात न आती हो उसे किसी का शिष्य बनकर सीखने में संकोच कभी नहीं करना चाहिए।

जो कुछ स्वाध्याय में समझा हो, पुस्तकों में पढ़ा हो और सार जाना हो, तीसरे नियम का अभ्यासी वह अपने पुत्र पुत्रियों को, भार्या और बन्धुओं को भी पढ़ाये। अपने पड़ोसी-पड़ोसियों को पढ़ने के लिए प्रोत्साहन और सहायता दे। नौकर-चाकर को भी लिखना-पढ़ना सिखाए। यदि पण्डित हो तो लोगों को वैदिक विद्या का दान दे। धनी मनुष्य को चाहिए कि वेद-प्रचार में, वेद-विद्यालय में धन प्रदान करे। सेवक जनों से वेद-विद्यालय की जो भी सेवा बन सके, करते रहें।

तीसरे नियम के अभ्यासी को चाहिए कि जहां भी वेद-चर्चा हो वहां जाकर सुने, वेदों के व्याख्यान और आर्ष ग्रन्थों की व्याख्या श्रद्धापूर्वक श्रवण करे। सन्तों के सत्संग में आदर और श्रद्धापूर्वक बैठे। उन के विचारों से लाभ उठाये। वैदिक तत्त्व को जानने की इच्छा रखे और प्रश्नोत्तर करके अपने सन्देह निवारण कराए। वैदिक वचनों को सुन कर अत्यन्त प्रसन्न हो।

जिस सत्संग में, धर्म-मन्दिर में और वैदिक व्याख्यान में जाए, बड़ी सभ्यता से जाए। सत्संग में विनय, आदर और भक्ति का होना आवश्यक है। सुशीलता से बैठना, विनीतता से पूछना और ध्यानपूर्वक सुनना सत्संगी की योग्यता को प्रकट करने वाले गुण हैं। जिज्ञासा करने पर जिस प्रश्न का उत्तर मिल जाए, उसके लिए धन्यवाद देना—आभार मानना—उचित हुआ करता है। वेद-धर्म के अधिकारी को चाहिए कि प्रश्नोत्तर में जो बात समझ में न आवे, उस पर व्यर्थ विवाद न बढ़ाए। एक विषय में दो तीन बार पूछकर निवृत्त हो जाए। किसी पक्ष को खींचे चले जाना, उस पर हठ कर लेना, उत्तम अधिकारी का चिह्न नहीं।

आर्य जन को चाहिए कि ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना, वेद-व्याख्यान और शास्त्रोपदेश सुनने के लिए आर्यसमाज के साप्ताहिक सत्संग में अवश्यमेव जाया करे। अपनी व्यस्तता से कभी भी अन्तर न डाले। धर्म मन्दिर में बड़ी शिष्टता और सभ्यता से प्रवेश करे। जैसे कोई सभ्य जन किसी पूज्य और महामान्य व्यक्ति के पास जाते समय गम्भीर बन जाया करता है, उसी प्रकार मन्दिर के द्वार में प्रवेश करते ही गम्भीर रूप धारण कर ले। इस प्रकार धीरे-धीरे आगे बढ़े कि उसके पांव की आहट से भी किसी को विक्षेप न हो। आगे बढ़ते समय किसी की अवज्ञा न होने पाए। किसी के साथ स्पर्श करके आना, किसी को लांघना, ठोकर लगाना, ढकेलना, पीछे आकर आगे को बढ़ना, ये चंचलता और असभ्यता के चिह्न हैं। आर्य सत्संग में ये नहीं होने चाहिए। सत्संग में बच्चों को साथ ले आना, बातें करने लग जाना, इधर-उधर ताकते रहना, टिककर न बैठना और बीच में उठ कर चल पड़ना, ये सब सभ्यता के सुन्दर ललाट पर बड़े भद्दे लांछन हैं। सत्संग में ध्यानपूर्वक, एकाग्रता और आदर-बुद्धि से श्रवण करना चाहिए।

साप्ताहिक सत्संग में, वैदिक व्याख्यानों और शास्त्रोपदेशों में जो कुछ श्रवण किया हो, घर आकर उसका प्रसाद अपने पुत्र पुत्रियों में बांटना चाहिए। उसका सार या मर्म बन्धुओं को सुनाना चाहिए। माता-पिता, पड़ोसी-पड़ोसी, तथा इष्ट मित्रों के सामने दुहराना चाहिए। हाट, बाट आदि स्थानों में जहां भी उठने-बैठने और मिलने-जुलने का अवसर मिले, वहीं उस सुने हुए शास्त्र-सार को सुनाने लग जाना चाहिए। धर्म-चर्चा चलाने में कभी भी हिचकिचाना न चाहिए। सत्संग और व्याख्यान में आते समय अपने बन्धु जनों को साथ ले आना, इष्ट मित्रों को चलने की प्रेरणा करना, मिलने-जुलने वालों को बुला-बुला और उठा-उठाकर साथ लिए चलना, ये सब वेद सुनाने के साधन हैं। आर्य जनों को चाहिए कि अपने घरों और मकानों पर कथाएं बैठा कर भी लोगों को वैदिक ज्ञान सुनायें।

जहां दो तीन भी आर्य जन हों, वहां भी वे वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना सुनाना न छोड़ें। सप्ताह में तो अवश्य ही, परन्तु हो सके तो प्रतिदिन भी एक समय अवश्य मिलकर बैठा करें। उसी को सत्संग समझें। उस समय अपढ़ों को सन्ध्या सिखावें और आर्य ग्रन्थ पढ़ायें। उनमें से कोई विशेष जानने वाला सज्जन किसी आर्य ग्रन्थ को सुनाए और शेष ध्यान से सुनें। कहीं भी कोई हो और कैसी भी अवस्था में हो, पर परम धर्म का पालन करने में त्रुटि न करे। इससे पतित होना पाप-कर्म समझे।

आर्यसमाजियों का यह कर्तव्य कर्म है कि इस सर्वोत्तम धर्म की सिद्धि के लिए साधन-सभाएँ स्थापित करें, धर्म-पुरोहित रखें, और ऐसी रात्रि-पाठशालाओं की रीति चलायें जिनमें आर्य जनों को आर्य ग्रन्थों के पढ़ने-पढ़ाने और सुनने-सुनाने का अवसर मिले। इस परम धर्म का पालन न करने वाला, आर्यसमाज के नियमों की दृष्टि से, आर्यसमाजी नाम का भी अधिकारी नहीं है।

जो नर-नारी वैदिक उपदेश सुनाने का सामर्थ्य रखते हैं, वे अपने आप को भाग्यशाली समझकर इस अमृत को अपनी बहनों और भाइयों में भी बांटें, और जनता को वेदों का सुसमाचार सुनावें। वैदिक धर्म के उपदेशक का वेश-परिष्कार स्वच्छ, सभ्य और सादा होना चाहिए। उसका आकार-प्रकार गम्भीर और सुजनता का हो। उसके उठने-बैठने, लेन-देन, मेल-जोल, कथन-श्रवण और रहन-सहन के व्यवहारों में सुशीलता, सभ्यता, विनय और धर्म-भाव दीख पड़े। वह सुनाते समय शान्ति और धैर्य से बोले। उस के शब्द कोमल, वाणी मधुर और भाषा सुन्दर तथा प्रेमपूर्ण हो। उस की वर्णन-शैली मनोरंजक, क्रमबद्ध, प्रामाणिक और यौक्तिक हो। वार्तालाप में उपदेशक मन्द मुस्कान सहित मधुर वचन बोले। युक्ति, प्रमाण और उदाहरण में पूर्णता दिखा दे। उसके अवलोकन में हित और स्नेह हो और कथन में कोमलता जान पड़े।

प्रश्नोत्तर में उपदेशक को धैर्य, शान्ति, गम्भीरता और कोमलता से काम लेना चाहिए। वह युक्तियुक्त उत्तर दे। ऐसे स्पष्ट और गम्भीर स्वर में बोले जिसे सब सुन सकें। प्रश्नकर्ता का आदर करे। उस की योग्यता की प्रशंसा करे। उसके प्रश्न का गौरव और महत्त्व बताए। उत्तर में उसे उत्तेजित नहीं वरन् अनुकूल बनाए। उसके विचारों के साथ अपने मिलते हुए विचारों को मिलाकर उत्तर दे। यदि प्रश्नकर्ता की सन्तुष्टि न हो तो उसे मनन करने को कहे। इस रीति से व्याख्यान और प्रश्नोत्तर का प्रभाव बहुत ही अच्छा होता है। तीसरे नियम का पालन करने के लिए यदि इन साधनों को सावधानीपूर्वक काम में लाया जाए तो अधिक लाभ होगा। □

प्रान्तीय महिला सभा की अपील

दिल्ली प्रान्तीय महिला सभा की प्रधाना श्रीमती सरला मेहता ने अपील की है कि पंजाब में उग्रवाद से पीड़ित भाई बहिन जो दिल्ली में डेरा जमाये हैं उनकी दिल खोलकर सहायता करें।

श्रीमती मेहता ने महिला सभा की सभी सदस्याओं से अनुरोध किया है १८ जुलाई की साधारण सभा में पंजाब के विस्थापितों के लिए कुछ न कुछ सहायता लेकर अवश्य आयें।

राष्ट्रोन्नति के मूल तत्त्व

—स्वामी वेदमुनि परिव्राजक
अध्यक्ष—वैदिक सस्थान नजीबाबाद (उ० प्र०)

★

सत्य बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति।
सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं लोकं पृथिवी न कृणोतु॥
—अथर्व० १२।१।१।

राष्ट्र की उन्नति के लिए मूलभूत रूप से जिन तत्त्वों की आवश्यकता है उन को वेद ने संक्षिप्त रूपेण उपर्युक्त मन्त्र में प्रस्तुत किया है। विवेचन पाठकगण निम्न शब्दों में देखें।

वेद का निर्देश है—'सत्यं बृहद् ऋतम् उग्र दीक्षा तपः ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति।' अर्थात् बृहत् सत्य, ऋत, उग्र, दीक्षा, तप, ब्रह्म तथा यज्ञ पृथिवी को धारण करते हैं। यह मन्त्र का प्रथम पाद है तथा इस पाद के दो वाक्य हैं जिन में पहला वाक्य है 'सत्यं बृहद् ऋतं उग्र दीक्षा।' इस वाक्य में पहला शब्द है 'सत्य बृहद्' बृहत् सत्य, महान् सत्य, अटल सत्यनिष्ठा की आवश्यकता है राष्ट्रोन्नति के लिए। सत्य में अटल, अचल, अमिट तथा दृढ़ विश्वास। बिना सत्य में दृढ़ विश्वास किए राष्ट्र का कार्य नहीं चल सकता। कम से कम यह तो निश्चय ही है कि जिस राष्ट्र के नागरिकों का सत्य में विश्वास न हो वह राष्ट्र अधिक समय तक सिर ऊंचा करके अर्थात् गौरव के साथ जीवित नहीं रह सकता। यदि ऐसा राष्ट्र जियेगा तो पराधीनता की बेडियों में जकडकर, अन्य राष्ट्रों के द्वारा पददलित तथा पादाक्रान्त होकर—और इस प्रकार का जीवन कोई जीवन नहीं होता। इस प्रकार का जीवन तो मृत्यु ही है—मृत्यु भी इस प्रकार के जीवन से श्रेयस्कर है।

अभी अधिक दिन नहीं बीते भारत को स्वाधीनता प्राप्त किये, कि हमारे देखते ही देखते विश्व-राष्ट्रों में उसे सम्मान प्राप्त हुआ अन्यथा इस से पूर्व जब भारत पराधीनता के पाश में बधा हुआ था तब अमेरिका में घास के मैदानों तक के द्वारों पर—जो सार्वजनिक स्थान होते हैं—सूचनापट लगे होते थे (Indians and dogs are not allowed) अर्थात् भारतीयों और कुत्तों को आने की आज्ञा नहीं है। विदेशों की तो बात ही क्या भारत में भी न्यायालयो मे भारतीयों को जूते तथा टोपी तक ले जाने की आज्ञा नहीं थी।

उपर्युक्त प्रकार का जीवन कोई भी बुद्धिमान् व्यक्ति पसन्द नहीं करता, अतः बुद्धिमानी यही है कि स्वराष्ट्र की स्वतन्त्रता को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिए राष्ट्रवासी सत्य में दृढ विश्वास रखें। सत्य में दृढ़ विश्वास न होने पर जब प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक नागरिक असत्य ग्रहण करने पर उतारू हो जाता है तो उसके मन में यह धारणा घर कर जाती है कि मेरी ही भांति अन्य भी असत्य आचरण करते होंगे। जिस से आप का साम्मुख्य होना है, आप को जिस व्यक्ति से कार्य लेना लेना है आप उस का विश्वास नहीं कर सकते—यदि आप स्वय असत्यवादी हैं—फिर चाहे वह व्यक्ति कितना भी सत्यवादी क्यों न हो? उदाहरण के लिए आप किसी दुकान से कोई वस्तु क्रय करते हैं—जब तक आपको यह ठीक ज्ञात न हो कि यह दुकानदार सत्यवादी है तथा कदापि भी असत्य का व्यवहार नहीं करता तब तक आप बराबर यही विचारते रहेंगे—पता नही यह इस वस्तु का मूल्य कितना अधिक मांग रहा है? आप के मन में बार-बार यह प्रश्न उठता ही रहेगा कि कहीं दोगुना-तिगुना मूल्य प्राप्त न कर ले, कहीं जेब ही न काट ले। विचार कीजिए जिस राष्ट्र के नागरिको की पारस्परिक व्यवहार में यह स्थिति हो क्या वह नाश की ओर नहीं जा रहा? पाठकगण! ऐसा राष्ट्र तो आज न डूबा, कल डूबेगा। वास्तविकता यह है कि जब तक सत्य में अटल निष्ठा न होगी—सत्य का आचरण होगा ही नहीं। जब तक लोग यह समझते रहेंगे कि सत्य बोलने से और सत्य का आचरण करने से रोटी नहीं मिलती, निर्वाह नहीं होता, तब तक उन से सत्य बोलने और सत्य व्यवहार की आशा करना सर्वथा निरर्थक है। जिस राष्ट्र के लोगों में सत्य के प्रति निष्ठा ही नहीं वह सत्य व्यवहार कदापि नही कर सकते। जो सत्य का व्यवहार नहीं कर सकते उन पर विदेशी साम्राज्यवादी कभी भी आक्रमण कर सकते हैं और वह लोग पारस्परिक अविश्वास के कारण न परस्पर संगठित हो सकेंगे न आक्रमण का सामुख्य कर सकेंगे।

जिस राष्ट्र के नागरिकों की सत्य के प्रति अटल निष्ठा होती है उस राष्ट्र में सत्य का आचरण होता है, सत्य व्यवहार होता है तथा सत्य व्यवहार के परिणामस्वरूप पारस्परिक विश्वास और सौहार्द पनपता है। पारस्परिक विश्वास तथा सौहार्द आत्मीयता तथा सगठन के जनक हैं। सगठित जातियों का शत्रु कुछ नहीं बिगाड सकता। एतदर्थमेव वेद ने अटल सत्य की बात कही है।

मन्त्र के प्रथम वाक्य का दूसरा शब्द 'ऋत' है। ऋत—सत्यं विज्ञानम्, सत्य कारणम् (दयानन्द ऋग्वेद भाष्ये) अर्थात् सत्य कारणों का, वास्तविकताओं का यथार्थ ज्ञान। यथार्थ ज्ञान के बिना राष्ट्रोन्नति कदापि सम्भव नहीं। उन्नति करने के लिए तो वास्तविक ज्ञान का, परिस्थितियों के ज्ञान का होना परम आवश्यक है। वस्तु स्थिति क्या है, इस बात को समझे बिना उन्नति का अर्थ ही कुछ नही होता। यदि किसी देश के नेता अपने देश की उन्नति के लिए कोई योजना बनाना चाहें तो उस के लिए केवल साधन जुटा लेना मात्र ही पर्याप्त नहीं अपितु यह देखना भी आवश्यक है कि जिन परिस्थितियों में यह योजना लागू की जा रही है वह परिस्थितियां उसे लागू करने की आज्ञा भी देती हैं या नहीं। अर्थात् उस योजना को लागू करने के लिए क्षेत्र भी है या नही। राष्ट्र की जनता उस योजना को समझती भी है या नहीं तथा राष्ट्र का सामाजिक ढांचा उस के अनुकूल भी है या नहीं, अर्थात् राष्ट्रीय समाज का वातावरण उस योजना को लागू करने के योग्य भी है अथवा नहीं। यदि राष्ट्र की जनता उसे समझ भी ले, स्वीकार भी कर ले अर्थात् सामाजिक वातावरण अनुकूल भी हो, किन्तु योजना पर होने वाले व्यय भार को सहन करने की शक्ति राष्ट्र में न हो—तो भी योजना का लागू करना लाभदायक सिद्ध नहीं हो सकता। व्यय भार की अधिकता के कारण अन्य राष्ट्रों से ऋण लेना पडता है तथा परिणामस्वरूप कई बार ऋण भार में दबे हुए राष्ट्र को ऋणदाता राष्ट्र के समक्ष अनुचित रूप से दबना पडता है। अत किसी योजना को लागू करने से पहले प्रत्येक परिस्थिति को समझना परमावश्यक है।

यही बात जनता पर भी लागू होती है। जिस प्रकार नेताओं को चाहिए कि प्रत्येक कार्य करने से पहले परिस्थितियों का वास्तविक ज्ञान प्राप्त करें—उसी प्रकार जनता का भी कर्तव्य है कि किसी पग को उठाने से पहले स्थिति की यथार्थता को जान ले। यह बुद्धिमानी की बात नहीं कि बात-बात पर आन्दोलन खडे कर दिये जायें। चाहे राष्ट्र किसी भी परिस्थिति से घिरा हो, चाहे राष्ट्र पर विदेशियों का आक्रमण हो रहा हो अथवा राष्ट्र आर्थिक सकट में हो—किन्तु जब देखो तब आन्दोलन, जब देखो तब हडतालें, जब देखो तब प्रदर्शन और जब देखो तब सत्याग्रह। यह भी क्या बात हुई? क्या राष्ट्र केवल नेताओं का ही है, जनता का नहीं? राष्ट्रीय समृद्धि तथा सुरक्षा का जितना उत्तरदायित्व नेताओं पर है उतना ही जनता पर है। सत्य तो यह है कि राष्ट्र की समृद्धि जनता की ही समृद्धि है तथा राष्ट्र को सुरक्षा जनता की अपनी सुरक्षा है—जनता की मान्यताओं तथा परम्पराओं की सुरक्षा है, जनता के धर्म तथा सस्कृति की सुरक्षा है। कहने और सुनने को ही यह दो शब्द हैं किन्तु वास्तविकता यह है कि जनता और राष्ट्र पृथक्-पृथक् नहीं हैं। राष्ट्र जनता ही है—अपनी समस्त मान्यताओं, परम्पराओं, सभ्यता, सस्कृति तथा धर्म के साथ जनता राष्ट्र है। नेताओं का भी यह कर्तव्य है और अनिवार्य कर्तव्य है कि वह प्रत्येक समय जनता की भावनाओं से न खेलें तथा बात-बात पर जनता को आन्दोलन करने का अवसर न दे। जनता के द्वारा हो या नेताओं के—बिना यथार्थ ज्ञान जब कोई पग उठाया जायेगा, कोई भी कार्य किया जाएगा तो समस्याएँ ही खडी कर ली जायेंगी। अत प्रत्येक परिस्थिति से लडने के लिए तथा प्रत्येक कार्य करने के लिए तत्-तत् विषयक यथार्थ ज्ञान सम्पादन कर लेना चाहिए अर्थात् परिस्थिति तथा परिणाम दोनों के ही विषय में भली भांति जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए।

(क्रमशः…)

आर्यसमाज जंगपुरा (विस्तार) में वेद सप्ताह सम्पन्न

आर्यसमाज जंगपुरा (विस्तार) के उत्साही अधिकारियों ने वेद-सप्ताह का आयोजन सोमवार ४ से १० जुलाई १९८८ तक किया। प० रविदत्त गौतम जी ने सातों दिन वेदकथा करके आर्य जनता का ज्ञानवर्धन किया तथा सद्मार्ग पर चल कर मानवीय गुणों को ग्रहण करने की प्रेरणा दी। सभा की ओर से प० वेदव्यास जी आर्य ने मनोहारी भजनों द्वारा आर्य जनता को मन्त्र-मुग्ध किया। प० ज्योतिप्रसाद आर्य ने ढोलक पर इनका साथ दिया।

पूर्णाहुति के दिन सभा प्रधान डा० धर्मपाल आर्य ने कार्यकर्ताओं का वहां पहुंचकर उत्साहवर्धन किया और इस आयोजन के लिए सभा की ओर से उन्हें साधुवाद दिया। कार्यक्रम पूर्ण रूप से सफल रहा।

(पृष्ठ ३ का शेष)

दूरदर्शन और…

वेहलरोजा, तह्फतुस्सग और प्राजाईनुल फनहय। सिफतोतुलफतह जैसे ग्रन्थ लिखे हैं वह दरबारी मुसाहिब था और इस्लाम का कट्टर प्रचारक। हो सकता है वह निजामुद्दीन चिश्ती के यहां आता जाता रहा हो और उसने कुछ अच्छे मानवीय कार्य भी किए हों। अमीर खुसरो के सम्बन्ध में काफी काम हुआ है, पर विद्वान् लोग मानते हैं कि यह सब किम्वदन्तियां हैं और इनके कोई ऐतिहासिक प्रमाण नहीं मिलते। इन सारे विवादों को भूल कर अमीर खुसरो को जनता के सामने पेश करने से साम्प्रदायिक एकता तो क्या पैदा होगी, बेकार का भ्रम ही फैलेगा और जो लोग इन विभिन्न रूपों को एक व्यक्ति के साथ पेश करना चाहते हैं, उन की स्थिति भी हास्यास्पद हो जाएगी।

यह सम्भव नहीं है कि एक ही आदमी दयावान भी हो, जालिम भी हो, कवि साहित्यकार होते हुए हिन्दुओं का निन्दक भी हो और प्रशंसक भी हो। एक ही आदमी में दोस्ती, दुश्मनी, प्रशंसा और निन्दा एक साथ नहीं हो सकती।

हमारे सरकारी तन्त्र को चाहिए किसी बात को पेश करने से पहले अच्छी तरह छानबीन कर ले और इतिहास के साथ अनावश्यक खिलवाड़ न करे।

दक्षिण दिल्ली वेदप्रचार मंडल का निर्वाचन

दक्षिण दिल्ली वेदप्रचार मण्डल का निर्वाचन १० जुलाई को सम्पन्न हुआ। श्री लखीराम कटारिया सर्वसम्मति से प्रधान चुने गए। श्री रामशरण दास मन्त्री निर्वाचित हुए। कोषाध्यक्ष श्री गंगाशरण जी बने।

आर्यकुमार सभा (रजि०) किंग्जवे, दिल्ली

प्रधान श्री गुलशन मलिक
मन्त्री · श्री गिरीशचन्द
कोषाध्यक्ष : श्री देवेन्द्र गुप्ता

आर्यसमाज, छतरपुर, नई दिल्ली-३०

प्रधान श्री रघुवीरसिंह यादव
मन्त्री श्री मार्गसिंह आर्य
कोषाध्यक्ष · श्री चमनलाल गुप्त

आर्यसमाज, बाजार सीताराम, दिल्ली-६

प्रधान . श्री न्यादरमल गुप्त
मन्त्री श्री बाबूराम आर्य
कोषाध्यक्ष श्री अरुण कुमार गुप्त

आर्यसमाज, निजामुद्दीन (पू.), नई दिल्ली-१४

प्रधान श्री ए० आर० तलवार
मन्त्री श्री प्यारेलाल मेहरा
कोषाध्यक्ष नीतव नगलानी

आर्यसमाज, लल्लापुरा, वाराणसी

प्रधान : श्री कमलाकान्त
मन्त्री · श्री रामगोपाल आर्य
कोषाध्यक्ष . श्री बुद्धदेव आर्य

आर्यसमाज, राजौरी गार्डन

प्रधान श्री देशराज सेठी
मन्त्री श्री नन्दकिशोर भाटिया
कोषाध्यक्ष . श्री कर्मवीर भण्डारी

(पृष्ठ १ का शेष)

गोरखा पहाड़ों…

घीसिंग ने धमकी दी है कि यदि इन तीनों बातों पर उन के मन मुताबिक फैसला न हुआ तो वे फिर से पुरानी राह पर लौट जायेंगे। पर ज्योति बसु ने जिस उत्साह से गोरखा मोर्चे की बैठक के फैसलों का स्वागत किया है और जिस विश्वास से मोर्चे की अतिरिक्त मांगों की ओर इशारा किया है, उससे घीसिंग के फिर से कुपथगामी होने की सम्भावनाएं क्षीण लगती हैं। पर दो वर्षों में एकाधिक बार ऐसा हुआ है कि दार्जिलिंग की ओर आ रही शान्ति रास्ते में ही कहीं भटक गई है। आशा करें कि इस बार वैसा भटकाव नहीं होगा और घीसिंग तथा ज्योति बसु अपने अनुभवों से लाभ उठायेंगे।

पावमानी गीत माला

(१)

ओ३म् त्व नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेळोऽव यासिसीष्ठा ।
यजिष्ठो वह्नितम. शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्र मुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा ॥
इदमग्नीवरुणाभ्याम्, इदन्न मम ॥५॥

प्रिय दिव्य गुणों के उत्तम जन, अप्रसन्न न हम से हो जायें ।
प्रभु जिन को हम ने वरण किया, हम उनका प्रेम सदा पायें ॥

वरणीय ओ३म् अनुपम अनूप
वर परम प्रकाशक ज्ञान रूप
कौन अधम है कौन श्रेष्ठ है
सब प्रकट तुम्हें प्रच्छन्न रूप
क्यों सुजन श्रेष्ठ हो गये रुष्ट, हम उनको पुन मना लायें ।
प्रभु जिनको हम ने वरण किया, हम उनका प्रेम सदा पायें ॥

हों उनके मन अब नहीं घृणा
हमें श्रेष्ठ दें कर्म प्रेरणा
शुभ कार्य भार हम वहन करें
फिर से उनकी मिले मन्त्रणा ।
हम यज्ञनिष्ठ हों श्रेष्ठ शिष्ट, सब सत्पुरुषों के मन भायें ।
प्रभु जिनको हम ने वरण किया, हम उनका प्रेम सदा पायें ॥

मलिन देह मन मलिन वसन को
सब दुर्गुण दोष दुर्व्यसन को
प्रभु हम से परे हटाओ जो
दो पुण्य जनों की विहसन को ।
यह आहुति प्रभु स्वीकार करो, प्रिय वरणीय हमें मिल जायें ।
प्रभु जिनको हम ने वरण किया, हम उनका प्रेम सदा पायें ॥

(२)

ओ३म् स त्व नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ ।
अव यक्ष्व नो वरुण रराणो वीहि मृडीक सुहवो न एधि स्वाहा ॥
इदमग्नीवरुणाभ्याम्, इद न मम ॥६॥

आओ आओ प्यारे आओ, अब तीर हमारे बस जाओ ।
परमेश ! पडोसी बन जाओ, जो शीघ्र टेर सुनकर आओ ॥

अति सूक्ष्म और हम से विराट
यह अकथ तुम्हारा ठाट बाट
हम कैसे पास पहुच पायें
तुम सहज पधारो परिभ्राट ।
निज ज्योति ज्ञान लेते आओ, बनकर शक्ति सुरक्षक आओ ।
परमेश ! पडोसी बन जाओ, जो शीघ्र टेर सुनकर आओ ॥

सुन्दर प्रभात की बेला में
रवि ज्योति उदय अलबेला मे
सब कष्ट हमारे नष्ट करो
प्रभु जीवन के इस मेला मे ।
प्रात प्रार्थना सुनकर आओ, सताप मिटाते अब आओ ।
परमेश ! पडोसी बन जाओ, जो शीघ्र टेर सुनकर आओ ॥

हो जाये श्रवण मम यह पुकार
मिट जाये पीर बढ जाये प्यार
आनन्द शान्ति सब मिल जाये
यह जीवन हो अनुपम अपार ।
अपना हाथ बढाते आओ, प्रभु रक्षा का ढाढस लाओ ।
परमेश ! पडोसी बन जाओ, जो शीघ्र टेर सुनकर आओ ॥

—देवनारायण भारद्वाज

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N. No. 32387/77 Post in N.D P.S O on 14, 15 7-88 Licenced to post without prepayment, Licence No U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डो० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

आर्य वीर दल प्रशिक्षण शिविर

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में १ जून से १२ जून १९८८ तक दयानन्द माडल स्कूल, विवेक विहार, दिल्ली में आर्य वीर दल प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया गया था। इस शिविर के आयोजन मे श्री प्रियतम दास रसवन्त, डा० ज्ञान प्रकाश, श्री विशम्भर नाथ भाटिया, श्री श्याम सुन्दर बिरमानी, श्री सोमवीर शास्त्री, डा० शिवकुमार शास्त्री, श्री कृष्णपाल का सहयोग सराहनीय रहा। इन के अतिरिक्त स्वामी स्वरूपानन्द जी महाराज ने खाद्य सामग्री तथा धनराशि एकत्रित करने में विशेष सहयोग दिया। धनराशि देने वालो में आर्यसमाज चूना मण्डी (पहाडगज), स्त्री आर्यसमाज चूना मण्डी (पहाडगज), नवीन आर्यसमाज कृष्णा नगर, आर्यसमाज साकेत, आर्यसमाज करौल बाग, आर्यसमाज तिलक नगर, आर्यसमाज बिरला लाइन्स, आर्यसमाज शालीमार बाग, आर्यसमाज सफदरजंग एनक्लेव, आर्यसमाज दीवान हाल, आर्यसमाज गाधीनगर, आर्यसमाज विवेक विहार, आर्यसमाज अनाज मण्डी शाहदरा, आर्यसमाज हनुमान रोड, आर्यसमाज पालम कालोनी, आर्यसमाज लाजपत नगर, आर्यसमाज कीर्ति नगर, आर्यसमाज ग्रेटर कैलाश-१, आर्यसमाज सरोजनी नगर् प्रमुख रहीं। धनराशि देने वालों में दिल्ली के आर्यजनों का भी विशेष सहयोग प्राप्त हुआ।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, सभी आर्यसमाजों, दानियों तथा कार्यकर्ताओं का हार्दिक धन्यवाद करती है, तथा भविष्य में और अधिक सहयोग की अपेक्षा करती है।

सूर्यदेव
(महामन्त्री)

वैदिक मिशनरी गुरुकुल, वेद मन्दिर वृन्दावन मार्ग, मथुरा में नवीन प्रवेश आरम्भ

२१ जुलाई गुरु पूर्णिमा को प्रवेश दीक्षा

१ १४ जून से उपदेश आरम्भ हो चुका है। परीक्षणोपरान्त २१ जुलाई गुरु पूर्णिमा को प्रवेश दीक्षा दी जायेगी।

२ गुरुकुल का उद्देश्य ऐसे जीवनदानी एवं समयदानी (शिक्षणोपरान्त कम से कम ५ वर्ष का समय देने वाले) युवा और प्रौढ़ व्यक्तियों का निर्माण करना है, जिनके अन्तर्हृदय में स्वदेश एवं स्वधर्म के प्रति सच्ची निष्ठा तथा तप-त्याग एवं बलिदान की भावना हो।

३. गुरुकुल का पाठ्यक्रम प्रौढ़ों के लिए ३ मास से एक वर्ष तक तथा युवकों के लिए एक वर्ष से चार वर्ष तक का है। इस काल में संस्कृत और वैदिक सिद्धान्तों के शिक्षण के साथ ही विभिन्न मतों का तुलनात्मक अध्ययन तथा कार्यक्षेत्र में कार्य करने का क्रियात्मक प्रशिक्षण भी दिया जायेगा।

४. प्रवेश के लिए १०वीं कक्षा (संस्कृत सहित) उत्तीर्ण होना आवश्यक है। इन शिक्षार्थियों के आवास, भोजन, शिक्षा, वस्त्र एवं चिकित्सादि की व्यवस्था गुरुकुल की ओर से रहेगी।

५. एक वर्ग बाल छात्रों का भी परीक्षण हेतु रहेगा, जिस में आठवीं कक्षा से छात्र लिये जायेंगे। इनके अभिभावकों को मात्र १५०/- रु० मासिक देना होगा।

—आचार्य प्रेम भिक्षु

सेवा में—

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५१

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ४० | रविवार २४ जुलाई १९८८ | सृष्टि सम्वत् १९७२९४९०८८ | श्रावण २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश मे ५० डालर, ३० पौंड

भारत की एकता और अखण्डता के लिए

नई दिल्ली, १७ जुलाई १९८८

दिल्ली की २५० आर्यसमाजों एव शिक्षण संस्थाओं के प्रतिनिधियों की एक विशाल बैठक, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के तत्वावधान में आयोजित की गई। इस अवसर पर बोलते हुए सभा प्रधान डा० धर्मपाल ने भारत की एकता एवं अखण्डता को बनाये रखने के लिए आर्यसमाज के निश्चय को दोहराया। इस सभा में अनेक प्रस्ताव पारित किये गये, जिनमें मांग की गयी कि पंजाब से आतंकवाद को समाप्त करने के लिए वहां पर तुरन्त सैनिक शासन लागू किया जाये तथा पाकिस्तान सीमा के साथ साथ सुरक्षा पट्टी की व्यवस्था की जाये। प्रस्ताव में यह भी मांग की गयी कि पंजाब से आतंकवाद के डर से पलायन कर आये हिन्दू परिवारों की तुरन्त रोटी, रोजी और आवास का प्रबन्ध किया जाये अथवा उन्हें अन्तरिम राहत के रूप में १,०००/- रुपये प्रति परिवार प्रतिमाह दिया जाये।

हरिजनों तथा सती प्रथा के सम्बन्ध में पुरी के शंकराचार्य स्वामी निरजन देव तीर्थ द्वारा दिये गये असंवैधानिक वक्तव्य के लिए सरकार से मांग की गयी कि शंकराचार्य के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही की जाये।

दूरदर्शन पर प्रसारित किये जा रहे अमीर खुसरो जैसे सीरियल जिसमें भारतीय इतिहास को तोड मरोड कर प्रस्तुत किया जा रहा है, उस से भारत की हिन्दू जनता में काफी रोष उत्पन्न हो रहा है। सभा में सरकार से पुरजोर मांग की गयी कि वो ऐसे सीरियलों को दिखाना तुरन्त बन्द करे। बैठक में अनेक वक्ताओं ने अपने विचार रखे।

इस अवसर पर ये प्रस्ताव रखे गये—

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा की १७।७।८८ की बैठक में सर्वसम्मति से पारित प्रस्ताव—

प्रस्ताव १—

पंजाब की समस्या केवल आंतरिक कानून और व्यवस्था की समस्या नहीं है। यह विदेशी शक्तियों द्वारा भारत की परम्परागत अखण्डता और एकता को नष्ट करने का षड्यन्त्र है। अत आतंकवाद को समाप्त करने के लिए वहां पर तुरत सैनिक शासन लागू किया जाये और सीमावर्ती जिलों में पाकिस्तान की सीमा के साथ-साथ एक सुरक्षा पट्टी की व्यवस्था की जाये। सभी पकड़े गये आतंकवादियों को कड़े से कड़े दण्ड दिये जायें।

प्रस्ताव २—

पंजाब में व्याप्त आतंकवाद के कारण वहां से भाग कर आए हुए हिन्दुओं को बसाने के लिए दिल्ली में तथा अन्य प्रान्तों में तुरन्त व्यवस्था की जाए। बोट क्लब पर पिछले एक मास से अधिक समय से धरना दे रहे पंजाब के विस्थापितों को तुरन्त बसाया जाना चाहिए। दिल्ली प्रशासन और भारत सरकार इस दिशा में अभी तक सन्तोषजनक कार्य नहीं कर पाई है। सभा का आग्रह अनुरोध है कि उनके पुन.स्थापन के लिए रोजी, रोटी, मकान की तुरन्त व्यवस्था की जाए और जब तक यह व्यवस्था न हो, उन्हे अन्तरिम राहत १,००० रुपये प्रति परिवार एकदम दिया जाये।

प्रस्ताव ३—

हरिजनों के मन्दिर प्रवेश, सती प्रथा तथा आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती के सम्बन्ध में पुरी के शंकराचार्य स्वामी निरंजन देव तीर्थ के वक्तव्य की दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा घोर निन्दा एवं भर्त्सना करती है। उनका वक्तव्य राष्ट्रघाती एवं असंवैधानिक है। हरिजनों को मन्दिर प्रवेश की अनुमति न देना देश को तोडने का एक षड्यन्त्र है। शंकराचार्य के विरुद्ध शीघ्र एव कठोर कार्यवाही किए जाने के लिए यह सभा भारत सरकार से आग्रह अनुरोध करती है।

प्रस्ताव ४—

दिल्ली प्रशासन ने तम्बाकू उत्पादनों के विज्ञापन पर रोक लगा दी। सिगरेट को प्रोत्साहन देने वाले विज्ञापनों के सम्बन्ध में दिल्ली प्रशासन ने नयी दिल्ली नगर पालिका, दिल्ली नगर निगम और दिल्ली विकास प्राधिकरण को आदेश दिये हैं कि वे विभिन्न संस्थानों को विज्ञापन स्थल इस शर्त पर आवंटित करे कि वे वहां पर तम्बाकू

(शेष पृष्ठ ८ पर)

३ सितम्बर, १९८८ को देश भर में श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर आर्य मंदिरों में हरिजनों के साथ यज्ञ तथा यज्ञोपवीत

मुख्य समारोह आर्यसमाज दीवान हाल दिल्ली में

लोकसभा अध्यक्ष बलराम जाखड़ मुख्य अतिथि होंगे

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने देश भर की आर्यसमाजों को आदेश दिया है कि आगामी ३ सितम्बर १९८८ को श्रीकृष्ण जन्माष्टमी के पर्व पर देश के प्रत्येक नगर, कस्बों और गांवों में आर्यसमाज मन्दिरों में बृहद् यज्ञों का आयोजन किया जाए। इस अवसर पर विशेष रूप से हरिजन भाइयों को भारी संख्या में आमन्त्रित कर उन्हें यज्ञ वेदी पर यजमान बनाकर आहुतियां देने की प्रेरणा की जाये और सामूहिक यज्ञोपवीत दिये जाये, देश में चल रहे मन्दिर प्रवेश के विवाद का यही असली समाधान है।

स्वामी जी ने कहा आर्यसमाज ने ही सर्वप्रथम ऊंच-नीच के भेद-भाव और जन्मगत जात-पात तथा वर्ण व्यवस्था को गुण, कर्म और स्वभाव के आधार पर मानकर छूत-छात की दीवारों को तोडने का प्रयत्न किया था। आर्यसमाज को ही यह गौरव प्राप्त है कि हिन्दू समाज में एकता और समता स्थापित करने के लिए अनेक हरिजन युवकों को अपने गुरुकुलों में पढाकर वेद-शास्त्रों का विद्वान् बनाया और आर्यसमाजों में पुरोहित पद पर सुशोभित किया।

स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने देश भर की सभी आर्य प्रतिनिधि सभाओं, आर्यसमाजों तथा हिन्दू संगठनों को विशेष परिपत्र भेजकर अपील की है कि हरिजन भाइयों को समाज में बराबरी का दर्जा देने के लिए धार्मिक आंदोलन का सूत्रपात करे और श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर्व को समान अधिकार दिवस के रूप में सोत्साह मनाये।

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

आर्यसमाज का चौथा नियम

सत्य के ग्रहण करने और असत्य के त्यागने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

लेखक—स्वामी सत्यानन्द जी महाराज

"सत्य के ग्रहण करने और असत्य के त्यागने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।"

जो बात अथवा पक्ष सत्य हो, प्रमाण-सिद्ध हो, युक्तियुक्त और अन्तःकरणानुकूल हो, और जिसकी साक्षी अपनी आत्मा भी दे, उसे मानने के लिए और इससे विपरीत पक्ष वा बात को छोड़ने के लिए सदा तैयार रहना चाहिए। आर्यजन सत्य के ग्रहण करने में सदा उदार हों। सत्य के प्रवेश के लिए उसका हृदय द्वार सदा खुला रहे।

यह चौथा नियम पहले तीन नियमों का अपवाद नहीं करता। उनको स्वीकार कर लेने पर ही इस का प्रेरण किया जाता है। जिस जन को जगत् के आदि मूल में, ईश्वर के स्वरूप में, और वेद की सत्यता में ही सन्देह हो उस के लिए चौथा नियम नहीं है। यह पहले तीन नियमों के विश्वासी के लिए ही नियत किया गया है। पहले तीनों की सत्यता सुनिश्चित हो जाने पर इसकी प्रवृत्ति होती है। इस कारण इस चौथे नियम की व्याप्ति पहले नियमों में न समझकर अन्य वार्तालाप में, वाद में, पक्ष-प्रतिपक्ष में, शास्त्र और समाज-चर्चा में, ग्रन्थों के अर्थ में तथा वर्णन-व्याख्यान आदि विषयों में माननी चाहिए।

चौथे नियम का पालन करने वाला धर्म में पक्का अवश्य हो, पर हठी न हो। वह यह समझे कि सत्य सनातन है। वह किसी देश या जाति की क्रीत वस्तु नहीं। उस पर सर्वसाधारण का समान अधिकार है। सत्य किसी युग में और किसी स्थान में किसी मनुष्य ने उत्पन्न नहीं किया। जैसे दो और दो चार, यह सत्य तीनों कालों में, दसों दिशाओं में, सभी जातियों में बराबर बना रहता है, ठीक इसी प्रकार दूसरे सत्य भी सर्वत्र एकरस बने रहते हैं। इस कारण; चाहे कहीं से मिले, पर सत्य है अपना, पराया नहीं। उस पर मेरे तेरे की मुहर लगाना महामूर्खता की मिथ्या ममता है।

मनु महाराज ने कहा है कि "शुभ विद्या और सदाचार अधम मनुष्य से भी ले लेना चाहिए। विचारवान् जन सुन्दर बात एक बालक से भी सीख ले।" इसका भाव यही है कि सत्य के ग्रहण करने में कभी संकोच न करे, ऊँच-नीच को न विचारे। केवल सत्य से ही स्नेह रखे। प्राचीन काल के आर्यजन सत्य के सीखने में सदा उत्सुकता प्रकट किया करते थे। कई ब्राह्मण मिथिला के अश्वपति राजा के पास केवल ब्रह्म-विद्या सीखने के प्रयोजन से ही गये थे। व्यासदेव ने अपने सुयोग्य पुत्र शुकदेव को ब्रह्मविद्या सीखने के लिए दूर देश से राजा जनक के पास भेजा था। जाजली नाम के तपस्वी ने तुलाधार नामक एक वैश्य से धर्मोपदेश लिया था। महाभारत में लिखा है कि एक तपस्वी ब्राह्मण ने अपनी तपोभूमि त्याग कर वाराणसी के वासी सुप्रसिद्ध वृद्ध व्याध से व्याधगीता का उपदेश श्रवण किया था। स्वामी श्री दयानन्द जी अनेक सन्तों-सज्जनों के सत्संग से सुलाभ लेते हुए, अध्यात्म-योग की कई भूमियों को लांघ जाने पर भी, वैदिक व्याकरण का अध्ययन करने के भाव से श्री विरजानन्द जी के चरण-शरण में जाकर बड़ी विनीतता से झुके थे। सत्य का संचय करने वाले को अन्त समय पर्यन्त सत्य-संग्रह में संलग्न रहना चाहिए। वह सीखने के संसार में सदा बालक ही बना रहे—विद्यार्थीपन ही प्रदर्शित करता रहे। कभी भी अपने को बड़ा और ज्ञानी मानकर सन्तुष्ट न हो जाये।

एक बार भरद्वाज से इन्द्र ने कहा कि यदि आप की सौ वर्ष की और आयु-वृद्धि हो जाए तो आप क्या काम करेंगे? इस पर उन्होंने उत्तर दिया—और क्या करूंगा, वेद पाठ ही में समय बिताऊँगा। इन्द्र ने दूसरी बार कहा कि यदि उस के अनन्तर फिर एक सौ वर्ष की और आयु बढ़ जाए तब क्या कीजिएगा? भरद्वाज ने कहा, तब भी मैं वेद-अध्ययन ही में काल-यापन करूंगा। इन्द्र ने तीसरी बार फिर कहा कि दूसरे शतक की समाप्ति पर पुनरपि आप की शतायु हो जाए तो बताइए तब आप का क्या काम होगा? तीसरी बार भी उत्तर में उन्होंने यही कहा कि मेरा कार्य तब भी वेद का स्वाध्याय ही होगा। वेद अनन्त है, असीम है। उसका ज्ञान अथाह है। उसके पारायण के लिए कितनी भी आयु हो, थोड़ी है। इस आख्यायिका से हमको यह शिक्षा लेनी चाहिए कि सत्य की सम्पत्ति का संग्रह करते हुए, ज्ञान का भण्डार भरते हुए, और सेवा-जीवन का गुण ग्रहण करने में मन में संकोच और सन्तोष को कभी कोई न आने दे। अपना लक्ष्य ऊँचा रखे। जीवन के सच्चे आदर्श को क्षणिक सन्तोष की सीमा में न बांधे। अनन्त सत्य के स्रोत का मुख हठधर्मी की शिला से सन्निरुद्ध न करे।

चौथे नियम के पालन करने वाले को वाद में हठ और दुराग्रह करना उचित नहीं। वह अपने पक्ष का पोषण तो युक्ति-प्रमाणों से करे परन्तु यदि जान जाये कि प्रतिवादी—प्रतिपक्षी—का पक्ष सत्य है तो तुरन्त उसे स्वीकार कर ले। झूठी बात पर न डटा रहे। सत्य के मानने के लिए अन्तःकरण के किवाड़ खुले रखे। इस बात को कभी न भूले कि सत्य के साक्षी आत्मा और परमात्मा दोनों हैं। जो जन जान-बूझकर हठ करता है, झूठ को खींचे लिये चला जाता है, सनातन और परम सत्य आत्मारूप साक्षी के सामने सत्य का तिरस्कार कर देता है, उसके स्वरूप को स्वीकार करने में नकार करता है, वह नास्तिक-सा ही है। जिस मनुष्य ने आत्मा रूप साक्षी के ज्ञान के विरुद्ध वचन बोल दिया, उस के ज्ञान की चोरी की, अपने अन्तरात्मा का हनन किया, उस आत्म-अपहरण करने वाले के लिए किसी भी पाप का करना कठिन नहीं है। ऐसे जन ने मानो सभी अपराध कर लिये।

इस नियम के पालक को सामाजिक कार्यों में मतप्रत प्रकट करते समय शान्ति, धैर्य और कोमलता से काम लेना चाहिए। वह स्वपक्ष की सिद्धि में अपने सारे बौद्धिक बल को लगावे, पुष्ट प्रमाण भी दे, परन्तु अधिक खींचातानी न करे। खेल में रस्से को तभी तक खींचना चाहिए जब तक दोनों दल व्यायाम वृद्धि और परीक्षा के भाव से खींच रहे हों। रस्से को ऐसा खींचना कि वह टूट ही जाए और परस्पर सिर फूट जायें तो वह व्यवहार अच्छे खिलाड़ियों के कर्म-क्षेत्र से बाहर है। सभासदों को वहीं तक मतामत के प्रकट करने में बल लगाना उचित है, जहाँ तक सभी के मेल की माला बनी रहे—गुंथी रहे और कभी टूटने न पाए। किसी बिगड़े हुए काम की ऐसी सुधारना कि वह मिट ही जाए अथवा रोगी को ऐसी औषधि देना कि उसका प्राणान्त ही हो जाये, यह काम किसी अच्छे सुधारक का चिकित्सक का नहीं। अकाड़ीपन से किया हुआ कोई भी काम हानिकारक है।

सभासद जन जब कभी परामर्श करने के लिए सभा में एकत्र हों, तब प्रस्तावित विषय पर गम्भीर भाव से विचार करें। जो पक्ष अनुचित और हानिकारक जान पड़े, उस पर आलोचना और प्रत्यालोचना करना उनका कर्तव्य कर्म है। परन्तु ऐसा करते समय उन के मन में सभा-समाज की हित-बुद्धि अवश्य हो। उत्तर-प्रत्युत्तर में, वचनों में परुषता, कटुता, आक्षेप और आवेश न दीख पड़े। पक्षी और प्रतिपक्षी एक-दूसरे को आदर और सम्मान-सूचक शब्दों से सम्बोधित करें। परस्पर ताने देना और व्यक्तिगत आक्षेप करना सभा के नियम के विरुद्ध है। सब सभासदों को सभा में सुन्दर और सभ्य भाषा बोलनी चाहिए। उनके मझे और तुले हुए हों। उन सबकी लक्ष्य सत्य और हित हो।

संवाद में समालोचना चाहे कितनी हो कभी विरक्तिपन नहीं आता। परन्तु जब भाषा और भाव में दोष आता है तब सभा या सारा रंग भंग हो जाता है। यदि सभा में संवाद करते समय किसी से कोई भूल हो जाये या कोई अवज्ञा हो जाए तो उसे चाहिए कि इस पर अनुताप करे—उस का सुधार कर ले।

अपने मत को एक मत ही समझना उचित है। यदि बहुपक्ष से वह गिर जाए, तो कुलकलाता बोध।

(शेष पृष्ठ ४ पर)

धर्म का मर्म समझें

ले०—डा० महेश विद्यालंकार

★

"सर्वे भवन्तु सुखिनः"—वैदिक प्रार्थना का मूलाधार है। मानवतावाद का प्रचार-प्रसार वैदिक विचारधारा का मुख्य उद्देश्य रहा है। प्राणीमात्र का उत्थान, कल्याण एव सुख-शान्ति की कामना वेद का अमर सन्देश है। आरम्भ से आर्यसमाज राष्ट्र-समाज और परिवार में व्याप्त कुरीतियों, अन्धविश्वास, रूढ़ियो तथा कुप्रथाओं को हटाने व मिटाने में अग्रणी रहा है। इसीलिए इसका चिन्तन, मनन और दर्शन सुबोध, सार्वभौमिक, सार्वकालिक व सार्वजनिक है। जब भी देश, धर्म, जाति एव सस्कृति पर सकट आया, आर्यसमाज सजग प्रहरी बन कर आगे आया।

आज वेद और धर्मशास्त्र की ओट में कतिपय धर्माचार्य, धार्मिक व सामाजिक कुरीतियों एव तथ्यहीन बातों को महिमा मण्डित करना चाह रहे हैं। गडे मुर्दे उखाड कर लोगों की आस्तिक भावना को भड़का रहे हैं। मानव मानव के बीच दीवार खडी करवा रहे हैं। देव स्थानो पर शूद्रो का प्रवेश निषेध कहना मानवता पर कलक लगाना है। यह पाप और अपराध है। परमात्मा की नियम-व्यवस्था का उल्लघन है। समूची मानव जाति का घोर अपमान है। यह धारणा अवदिक, अधार्मिक एव अव्यावहारिक है। प्रभु की दृष्टि और सृष्टि में सभी प्राणी समान हैं। ईश्वर की नियम व्यवस्था तथा न्याय में कहीं भेदभाव नहीं है। उस प्रभु देव का मन्दिर सबके लिए सदा खुला रहता है। कहीं भी वेद शास्त्रों में शूद्रो के लिए मन्दिर में प्रवेश निषेध नहीं है। धर्म के ठेकेदारों ने अपना एकाधिकार बनाये रखने के लिए इस प्रकार की मनगढ़न्त बातें प्रचलित कर दीं जिनका आज के ससार में कोई औचित्य नहीं है। कभी मदिर की मूर्ति दूषित व अपवित्र नहीं होती अपितु दूषित व्यक्ति मन्दिर में जाने पर पवित्र हो जाता है। पतितपावन सीताराम के पास जो भी जायेगा शुद्ध-बुद्ध हो जायेगा। कबीर, रैदास और दादू आदि सभी शूद्र कुल मे उत्पन्न हुए, किंतु सभी सन्त-महात्मा कहलाए। आज भी इनके भजनों से भगवान की स्तुति-प्रार्थना की जाती है।

आर्यसमाज वेदोक्त वर्ण-व्यवस्था को मानता है जिसका आधार गुण, कर्म और स्वभाव है। आज यह वर्ण-व्यवस्था गुण, कर्म, स्वभाव की बजाय जन्म पर आश्रित हो गई जिसके कारण ही अधिक बुराइयां व कुरीतियां बढ़ रही हैं।

वैदिक चिन्तन कहता है कि कर्म से मानव संसार में सब कुछ प्राप्त कर सकता है। कर्म से ही देवता बनता है। कर्म से ही मानव राक्षस बन जाता है। कर्म से मानव नर से नारायण बन सकता है। कर्म के आधार से सबको ऊपर उठने, आगे बढने और उन्नति करने का समान अधिकार व अवसर मिलता है। आर्यसमाज इसका जीवन्त प्रमाण है। आर्यसमाज में अनेक विद्वान्, पण्डित, पुरोहित एव उपदेशक, जिनका जन्म शूद्र कुल में हुआ, किंतु गुण, कर्म, स्वभाव से ब्राह्मण वृत्ति के बनकर आज उच्च सम्मानित एव पण्डित पद से सुशोभित हैं। वेद तो शूद्र वर्ग को समाज की एक मुख्य इकाई मानता है। उन के बिना समाज चल ही नही सकता है। चारों वर्ण एक ही पिता के पुत्र हैं। अत सब पुत्र एक ही जाति के हैं।

हम सभी प्रार्थना करते हैं—"त्वमेव माता च पिता" वह जगदीश्वर हमारा माता-पिता है। फिर माता पिता के पास बैठने व जाने का हमारा जो अधिकार है उसे क्यो छीना जा रहा है? तब फिर भेद-भाव कैसा? अछूत कौन रहा? मन्दिर में प्रवेश का निषेध क्यों? यह सब हमारी अज्ञानता और सकीर्णता का परिणाम है। शूद्रों को हम ने हेय समझकर दुत्कारा, उनके साथ अभद्र व्यवहार किया। उनको धर्म-स्थानों से वंचित रखा, उनकी सन्तान को निकृष्ट समझा, वे हम से दूर होते गए और विधर्मियों के चगुल में फसते गए। इस तरह की घोषणाएँ, मान्यताए नितांत भ्रामक, अर्थहीन, सिद्धान्तहीन व अप्रासगिक हैं। इससे राष्ट्र कमजोर होता है। मानवता खडित होती है। यह धर्म नहीं है अपितु अधर्म, अन्याय और पाप है आस्तिक, मूल्यों का अपमान है। सर्वशक्तिमान सत्ता का विद्रोह है। मन्दिर सबके हैं, सबके लिये हैं और सबके लिये खुले होने चाहिए। इस प्रकार के भ्रामक, वेद विरुद्ध, असगत व अप्रामाणिक प्रचार का हमें विरोध करना चाहिए।

विगत दिनों धर्म का नाम लेकर सती प्रथा को महिमा मडित करने का प्रयास किया गया। किंतु जब प्रमाण और शास्त्रार्थ की बात की गई तो वाग्जाल से बात इधर-उधर कर दी गई। इस तरह से ये धर्म के ठेकेदार लोगों की धार्मिक भावनाओं से खिलवाड कर रहे हैं। उन्हें गुमराह करके धर्म और शास्त्र के प्रति अरुचि, अश्रद्धा व अनास्था उत्पन्न कर रहे हैं।

आर्यसमाज ने नारी-जागरण में अहं भूमिका निभाई है। उसने स्त्री शिक्षा, बाल विवाह, सती प्रथा, अनमेल विवाह, विधवा विवाह तथा वेश्या उद्धार आदि अनेक ज्वलन्त समस्याओं को उठाया और समाधान प्रस्तुत किये हैं। आज भी नारी का सामाजिक और धार्मिक शोषण हो रहा है। कैसी विचित्र विडम्बना है कि एक जीवित नारी को जलती चिता में जोर, जबर्दस्ती धर्म की दुहाई देकर जलने को मजबूर किया जाता है। इससे बढ कर पाप, अनर्थ, अत्याचार, नृशसता एव अधर्म क्या हो सकता है? बीभत्स एव क्रूर कृत्य को हमारे धर्माचार्य शास्त्रसम्मत बता रहे है। कितनी विचित्र, असंगत एव लोक विरुद्ध बात है। करोडो की सख्या मे सनातनधर्मी हिन्दू कलियुग की पाराशर स्मृति को परम प्रमाण मानते हैं। उसमें भी स्पष्ट है—

नष्टे मृते प्रव्रजिते
क्लीबे च पतिते पतौ।
पचसु नारीणा
परित्यो विधीयते॥

अर्थात् पति की मृत्यु के पश्चात् नारी को दूसरा विवाह कर लेना चाहिए। विधवा-विवाह की घोषणा के रहते हुए स्त्री के सती होने की बात कहना भ्रामक एव धर्मशास्त्र के विपरीत है। राम मर्यादापुरुषोत्तम थे। उन की माताओं ने भी मर्यादा का निश्चय ही पालन किया होगा। किन्तु रामायण साक्षी है कि राजा दशरथ की मृत्यु के पश्चात् एक भी सती नही हुई। ऐसे अनेक उदाहरण मिलेगे। रावण के मरने पर मदोदरी सती नही हुई। वेद में पति की मृत्यु के पश्चात् जीवित रहने के अनेक प्रमाण हैं। सती होने का एक भी प्रमाण नही है। सती होने पर छोटे बच्चो का क्या बनेगा? उनका पालन-पोषण कौन करेगा? क्या एक वर्ष का बालक सौतेली मा के हाथ पलेगा? उसकी दुर्गति होगी, दर दर की ठोकरें खाता फिरेगा। अनेक तर्क, प्रमाण और साक्ष्य ऐसे हैं जिनके आधार पर यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि सती-प्रथा वेद, धर्म, शास्त्र, लोक व्यवहार, मानवीय धरातल आदि के आधार पर असगत और अव्यावहारिक है। भारतीय चिन्तन और दर्शन को विकृत, नष्ट एव भ्रष्ट करने के लिए इस प्रकार मनगढ़न्त बातें पुराणो में जोड दी गई हैं जिससे लोगो में अपने वेदशास्त्र धर्म, सस्कृति और महापुरुषों के प्रति अश्रद्धा व घृणा उत्पन्न हो जाए।

सती-प्रथा आत्महत्या के समान है। यह महापाप है। प्रभु की आज्ञा का निरादर है। इतना अमूल्य जीवन नष्ट करना अक्षम्य अपराध है। जो लोग धर्म की ओट लेकर इस प्रकार की कुरीतियों, अन्धविश्वास, अविद्या और अर्थहीन बातो का प्रचार करते हैं। उन्हें स्वय कभी आने पर घटाकर देखना चाहिए कि जब एक छोटी चिंगारी हमारे शरीर को लगती है तो पूरा शरीर बेचैन, तडपने, पीटने लगता है। जब जीवित पूरा शरीर आग में डाल दिया जाता है तो कितनी असह्य पीडा, कष्ट एव वेदना होती होगी। क्या यही धर्म है? क्या यही मानवता है? क्या यही ईश्वर की आज्ञा है? ये सब बातें धर्म और शास्त्र विरुद्ध हैं। धर्म तो हमें जीना सिखाता है। परस्पर प्रेम करो, मिल कर चलो। प्रभु ने सबको जीने का समान अधिकार दिया है। इस प्रकार के धर्म विरुद्ध, मानवता विरोधी, वेदशास्त्र, विपरीत विचारों का हमें विरोध करना चाहिए।

आज नारी के साथ एक और भयकर, दुखदायी विडम्बना जुडती जा रही है। यह बात समूची मानव जाति के लिए चिन्तनीय एव घातक है। गर्भस्थ शिशु का परीक्षण करा कर बालिकाओं का जन्म लेने से

(शेष पृष्ठ ६ पर)

विपत्ति में प्रभु का एकमात्र सहारा

ले०—यशपाल आर्य बन्धु, आर्य निवास, चन्द्रनगर, मुरादाबाद

卐

मनुष्य के ऊपर दुःख भी आते हैं और सुख भी। सुख में साथ देने वाले बहुत होते हैं किन्तु दुःख में कोई-कोई ही साथ दे पाता है। कहा भी है कि—

धीरज, धर्म, मित्र अरु नारि,
आपत्काल परखिये चारि।

वस्तुत धीरज, धर्म, मित्र और नारी की परख आपत्काल में ही होती है। क्योंकि आपत्काल में कोई कोई ही साथ देता है, अन्यथा यही कहा जाता है कि—'तारीकी में साया भी जुदा रहता है, इन्सां से।'' फिर भी एक सहारा ऐसा भी है जो सदा-सर्वदा साथ निभाता है। वह सहारा है दुःखविनाशक प्यारा प्रभु। जब सब सहारे जवाब दे जाते हैं, तब वही सहारा हमारा साथ देता है। इसीलिए उसे बेसहारो का सहारा कहा गया है।

मनुष्य का यह स्वभाव है कि वह सुख में इस सहारे को प्राय भुला देता है और जब दुःख और विपत्ति आती है, तभी इस सहारे की याद आती है। किन्तु सन्त कबीर का कहना कुछ और है। वे कहते हैं कि—

दुःख में सुमिरन सब कर,
सुख मे करे न कोय।
जो सुख में सुमिरन कर,
तो दुःख काहे को होय॥

एक अन्य विद्वान् का कथन है कि सम्पत्ति में लोग सुनार के पास जाते हैं और विपत्ति में करतार के पास। तात्पर्य यह कि सुख में हम ईश्वर को सर्वथा भुला देते हैं और जब दुःख या विपत्ति आ पड़ती है, तब उस की याद आने लगती है। अत यदि हम दुःखों और विपत्तियों से बचना चाहते हैं तो हमें सुख में भी उसका स्मरण करना ही चाहिए तथापि यह सोचना भी यथार्थ नहीं कि चूंकि हम ने सुख मे उस का स्मरण नहीं किया तो अब दुःख मे कैसे करे? हमें सुख में प्रभु का स्मरण अवश्य ही करना चाहिए था किन्तु यदि आलस्य और प्रमाद के वशीभूत होकर ऐसा नहीं किया गया तो इसका यह अर्थ तो नहीं कि अब भी उसी भूल को दोहराया जाये? दुःख में यदि दुःखों के नाश करने वाले प्रभु की शरण में नहीं आयेगे तो फिर किस की शरण में जाया जायेगा? दुःख में प्रभु का स्मरण दुःख को सहन करने की अद्भुत शक्ति प्रदान करता है। महर्षि ईश्वर की स्तुति प्रार्थनोपासना के जहां अनेक लाभ बतलाते हैं, वहां यह भी लिखते हैं कि—''इस से आत्मा का बल इतना बढेगा कि वह पर्वत के समान दुःख होने पर भी न घबरावेगा और सबको सहन कर सकेगा। क्या यह छोटी बात है?''
(सत्यार्थप्रकाश सप्तम समु०)

दूसरे जैसे शीत से आतुर पुरुष यदि अग्नि के पास जाता है तो उस के शीत की निवृत्ति हो जाती है, वैसे ही दुःख-विनाशक प्रभु के समीप जाने से दुःखों की निवृत्ति होती है।

यह भी कहा जाता है कि दुःख में ईश्वर बहुत समीप अर्थात् अति निकट होता है और वह शीघ्र सुनता भी है। ऐसा इसलिए कि दुःख में व्यक्ति आतुर होकर उसे पुकारता है। यही आतुरता, व्यग्रता अथवा व्याकुलता हमें परमात्मा के निकट पहुंचा देती है। वैसे भी प्रार्थना शब्द मे जो 'प्र' उपसर्ग लगा है, वह प्रकर्षता का ही परिचायक है। जिस प्रार्थना में प्रकर्षता नही। वह प्रर्थना तो हो सकती है, प्रार्थना नहीं। प्रार्थना के लिए तो प्रकर्षता अर्थात् व्यग्रता, व्याकुलता और आतुरता की आवश्यकता है। कतिपय भक्त-जन तो दुःख की केवल इसीलिए कामना करते हैं कि दुःख में पर-मात्मा का सामीप्य प्राप्त होता है और प्रभु का स्मरण तो हो ही जाता है। सन्त कबीर ने कहा है कि—

सुख के माथे सिल पडे
जो नाम हृदय से जाये।
बलिहारी वा दुःख के
पल-पल नाम रटाये॥

सत्य है—
दुःख दर्द मिटाने को
अजब राज तेरा नाम।
मालिक को सुनाने को
है आवाज तेरा नाम॥

गुरु नानक देव जी का कथन है कि—
'दुःख दारु सुख रोग भया।'

अर्थात् सुख रोग है एव दुःख औषधि। जिस से ईश्वर से मनुष्य विमुख हो जाये, वह रोग के समान नहीं तो और क्या है? और जिस से व्यक्ति ईश्वर के निकट हो जाए, तो वह औषधि समान नहीं तो और क्या है? वस्तुतः वह बेसहारों का सहारा है, वह ऐसा दर है जहां आदमी की आबरू नहीं जाती। अन्यथा अन्य जिस किसी के आगे अपना दुःख कहें, वही सुन कर इठ-लाने लगता है। इसलिए हर एक के आगे अपना दुःखड़ा नहीं रोना चाहिए। यह ठीक है कि कह देने से दुःख हल्का होता है। किन्तु यह भी ध्यान रहे कि—
सुख में दुःख में जो अन्तर है।
दुःख का इक-इक पल मन्वन्तर
होता है।
कह लेने से दुःख हल्का होता है।
सह लेने से छूमन्तर होता है॥

कविवर रहीम ने कहा है कि—
रहिमन निज मन की व्यथा
मन में राखो गोय।
सुन इठलहियें लोग सब
बांट सके न कोय॥

उर्दू के एक शायर ने भी क्या सुन्दर कहा है—
आपीके दर्द बनाने चले
हो ''शाद'' किसे?
अपीके दर्द यह
दुनिया कभी नहीं होती॥

सत्य है कि—
सुख के साथी बहुत हैं,
दुःख का साथी न कोय।
दुःख का साथी साईयां,
काहे न सुमिरे सोय॥

वस्तुत प्रभु का ही एकमात्र ऐसा दर है, जहां दुःखी की पुकार अवश्यमेव सुनी जाती है। साथ में वहां इठलाने वाला भी कोई नहीं होता, इसीलिए वहां आबरू भी नहीं जाती। इसलिए अपना दुःख यदि सुना कर ही हल्का करना है तो वह भी सांसारिक लोगों की अपेक्षा अपने प्यारे प्रभु को सुनाओ। वह दुःखहर्ता और दुःखों का नाश करने वाला है। वही सुखस्वरूप और सुखों का दाता भी है। अतः यदि दुःखों से छुटकारा पाना है, तो प्रभु भक्ति का सहारा लेना आवश्यक है। दुःख की घड़ियों में हृदय से निकली प्रार्थना अमृतधारा का काम करती है। कष्ट के क्षणों में जब हम अपनी समस्याएँ लेकर प्रभु के निकट जाते हैं, तब प्रार्थना के द्वारा हमारी आत्मा में उत्साह, समस्याओं को सुलझाने की अनोखी सूझ, कष्टों को सहन करने की अपार शक्ति और प्रभु को महती अनुकम्पा प्राप्त होने से दुःखों से भी शीघ्र छुटकारा मिल जाता है। ●

आर्यसमाज का नियम...

(पृष्ठ २ का शेष)

शोक न करे। उसके गिर जाने से अपने को गिराया हुआ न माने। जीत में भी हर्ष से ऊपर रहे। पर जीता हुआ जाने। सारांश यह कि मत को एकमत-मात्र मानने उसके स्वीकार अथवा अस्वीकार पर मत-प्रदाता को हर्ष-शोक नही होता। परन्तु जो मनुष्य अपने मत को अपने आप बना बैठते हैं, वे मन की हार-जीत को अपने ऊपर आरोपित करके सभा में नाना प्रकार के झगड़े बखेड़ो का विष-बीज बोने लग जाते हैं। उनको कलह का केन्द्र बना लेते हैं। वे कभी शान्ति स्थापित होने ही नही देते। इस कारण चौथे नियम के पालक जन को सत्य पर आरूढ़ रहने के लिए अधिक विवेकी, अधिक विचारवान्, अधिक शान्त, अधिक मर्यादावान् और अधिक सभ्य हो जाना चाहिए। □

राष्ट्रोन्नति के मूल तत्त्व

—स्वामी वेदमुनि परिव्राजक
अध्यक्ष—वैदिक संस्थान नजीबाबाद (उ० प्र०)

★

सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः पृथिवीं धारयन्ति।
सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं लोकं पृथिवी नः कृणोतु ॥
—अथर्व० १२।१।१।

(गतांक से आगे)

वाक्य में तीसरी बात कही गई है 'उग्र' की। उग्र—उग्रता अर्थात् क्षात्रत्व उग्रता है तेज का, क्षात्र शक्ति का नाम। यह तो सर्वविदित है कि बिना क्षात्र शक्ति के राष्ट्र-रक्षा सर्वथा असम्भव है, भले ही कुछ सिरफिरे लोग सेना समाप्त कर देने तथा आक्रमणकारी के सम्मुख शस्त्र डाल देने की बातें कहते फिरें ऐसे लोग सम्पूर्ण रूपेण नहीं तो कम से कम अर्धविक्षिप्त (आधे पागल) तो हैं ही। प्रायः ऐसी बातें वही करते हैं जिन्हें राजनीति का अक्षर भी नहीं आता—भले ही येन केन प्रकारेण राजनीति के क्षेत्र में उनका नाम आ गया हो।

'शस्त्रेण रक्षिते राष्ट्रे शास्त्र-चिन्ता प्रवर्तते।'

शस्त्र से रक्षा किए हुए राष्ट्र में ही शास्त्रों पर विचार किया जाना सम्भव है। इसी कारण आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्य को शिक्षा, शास्त्र अध्ययन व शास्त्र अनुसंधान कार्य का त्याग कर राजनीति को संभालना पड़ा था। इसी कारण समर्थ गुरु रामदास ने छत्रपति शिवाजी को राज्य कार्य में लगे रहने का आदेश दिया था तथा स्वयं उसके संरक्षक बन कर उसके अंग संग रहे थे। यही कारण था कि वीर बन्दा बैरागी जैसे आध्यात्मिक व्यक्ति को बार-बार हिमालय की हिमाच्छादित चोटियों से उतर कर शस्त्र संभालना पड़ा तथा यही कारण था कि महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज ने अपने समाधि तथा मोक्ष के आनन्द को त्याग कर दर-दर की खाक छानी, ईंट और पत्थर खाए, दर्जनों बार विष के प्याले पिये तथा अन्ततोगत्वा राजस्थानी राजपूतों को जगाने के कार्य में स्व-प्राणों की आहुति दे दी।

'एकै साधे सब सधे, सब साधे सब जाये।'

अकेले राष्ट्र रक्षा का कार्य सम्पन्न हो जाए तो सब सिद्धियां, समस्त सफलताएं चरण चूमने लगती हैं।

क्षात्र शक्ति केवल बाहर से हो, सीमाओं पर होने वाले आक्रमणों से ही रक्षा के काम आती हो, सो बात भी नहीं। देश के भीतर भी पदे-पदे क्षात्र शक्ति की आवश्यकता पड़ती है। देश में कार्य करने वाले विदेशी गुप्तचरों तथा देश में रहने वाले उन व्यक्तियों से, जो किन्हीं अन्य देशों से किन्हीं कारणोंवश सम्बद्ध हो जाते हैं फिर चाहे वह कारण धार्मिक हो अथवा राजनीतिक या चाहे साम्प्रदायिक—राष्ट्र रक्षा के लिए दृढ़ तथा सुसगठित क्षात्र शक्ति चाहिए। यद्यपि इन से किसी राष्ट्र को सर्वथा छुटकारा मिल जाये, यह सम्भव नहीं किन्तु यदि ये समस्याएं न हों, तो भी राष्ट्र में पनपने वाले डाकू-लुटेरों, दुष्ट-दुराचारियों तथा अन्य अनैतिक कार्य करने वाले तत्वों से राष्ट्रीय प्रजा की रक्षार्थ भी क्षात्र शक्ति की प्रबल आवश्यकता है। पाठकगण! चाहे बाह्य हो या आन्तरिक प्रत्येक आपत्ति से राष्ट्र रक्षा करने व राष्ट्र-जनता को त्राण देने के लिए क्षात्र शक्ति की महती आवश्यकता है, अतः वेद ने उग्रत्व की, क्षात्र शक्ति की बात कही है।

वाक्य में चौथा शब्द है 'दीक्षा' जिस का अर्थ होता है दक्षता। जिस देश के नागरिकों में दक्षता न हो, जिस देश के वासी कार्यकुशल न हों, जिस देश के लोग सुस्त हों, आलसी तथा प्रमादी हों, वह राष्ट्र कदापि उन्नति नहीं कर सकता। आलसियों और प्रमादियों को सफलता प्राप्ति और उन के द्वारा उन्नति कभी भी सम्भव नहीं। उन्नति के लिए तो आवश्यक है कार्यकुशलता का होना, कार्य दक्षता का होना और कार्य करने में स्फूर्ति का होना। लोकोक्ति है 'आषाढ़ मास में पगड़ी बांधता किसान पिछड़ जाता है।' पाठक विचार करें—यदि केवल पगड़ी बांधने में देरी लगने से किसान पिछड़ जाए—तो जीवन में आया हुआ प्रमाद क्या हानि नहीं पहुंचा सकता? आषाढ़ मास में धान-सस्य (फसल) की बुवाई होती है और धान बोया जाता है अधिकतर खेत में पानी भर जाने पर। वर्षा हो रही है, खेत में इधर-उधर से बह-बहकर पानी आ रहा है अथवा वर्षा से खेत लबालब भर चुका है किन्तु खेत का स्वामी पगड़ी बांध रहा है इतनी देर में पानी के प्रवाह से मेंड टूट जाती है परिणामस्वरूप पानी बहकर निकल जाता है, तब उसे दूसरी वर्षा की प्रतीक्षा करनी पड़ती है इसीलिए उपर्युक्त लोकोक्ति प्रचलित हुई। जब कारखानों में कार्य दक्षता के साथ न हो, तो उत्पादन वृद्धि किस प्रकार हो सकती है? जब खेत पर कार्य करने वाले प्रमादी हों तो अनाज की बुवाई के समय तक भूमि ठीक से तैयार नहीं की जा सकती परिणामस्वरूप या तो देर से खेत में बीज बोना होगा या फिर शीघ्रता में बिना तैयार भूमि में ही बीज बो देना होगा। परिणाम उत्पादन की कमी के रूप में सामने आएगा और ऐसी दशा में देश को चाहे कारखानों के उत्पादन की बात हो या अन्न की प्रत्येक के लिए अन्य देशों पर आधारित रहना पड़ेगा, जिस से देश का धन विदेशों में जाएगा, विदेशी मुद्रा के लिए प्रत्येक समय परेशान रहना पड़ेगा और इस प्रकार देश सदा-सर्वदा परमुखापेक्षी तथा निर्धन बना रहेगा।

कारखानों और खेतों की बात छोड़िए—कार्यालयों में भी यदि कार्य में प्रमाद रहा और समय पर कार्य नहीं हुआ—यदि फाइलें एक मेज से दूसरी मेज तक सप्ताहों नहीं सरकीं, यदि आज का कार्य कल पर छोड़ा गया, तो सारी योजनाएं—चाहे पंचवर्षीय हों या सप्तवर्षीय—मेजों पर ही पड़ी रहेंगी और देश उन्नति की अपेक्षा अवनति के गर्त में जाता रहेगा तथा एक दिन उसे परतन्त्रता की बेड़ियां पहननी ही पड़ेंगी। अतएव यह आवश्यक है कि प्रत्येक क्षेत्र में दक्षतापूर्वक कार्य किया जावे।

दीक्षा का एक अर्थ दृढ़तापूर्वक संकल्प धारण करना भी है बिना संकल्प के कभी भी किसी भी कार्य में सफलता प्राप्त नहीं होती। किसी कार्य में सफलता के लिए संकल्प धारण करना आवश्यक है तथा साथ ही आवश्यक है संकल्प में दृढ़ता। यदि संकल्प धारण भी कर लिया जाये, किन्तु ढिलमिल स्थिति हो तो भी सफलता की आशा न्यून ही करनी चाहिए अत्यन्त न्यून। संकल्प की दृढ़ता सफलता की जनक है, सफलता की कुञ्जी है और है सफलता का बीमा। अतः प्रत्येक नागरिक को यह दृढ़ संकल्प करके सर्वात्मना कार्य में जुट जाना चाहिए कि 'कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः' मेरे दायें हाथ में कर्म और बायें में विजय अर्थात् सफलता है।

दीक्षा का एक अर्थ और भी होता है जिसे अंग्रेजी भाषा में ट्रेनिंग कहते हैं। ट्रेनिंग का अर्थ है कार्य सम्पादन की विधि का अभ्यासपूर्वक यथावत् ज्ञान प्राप्त करना, कार्य विधि का अनुभव प्राप्त करना। किसी भी कार्य को ले लीजिये, जब तक उस का ज्ञान तथा अनुभव न हो तब तक उसमें सफलता असम्भव नहीं तो कम से कम कठिन तो अवश्य है। अतः प्रत्येक कार्य को करने से पहले उसकी दीक्षा प्राप्त कर लेनी चाहिए।

मन्त्र का द्वितीय वाक्य है 'तपो ब्रह्म यज्ञ पृथिवीं धारयन्ति' अर्थात् तप, ब्रह्म और यज्ञ पृथिवी को धारण करते हैं। तप के अर्थ हैं कष्ट सहने की सामर्थ्य तथा पुरुषार्थ। राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक तथा प्रत्येक नागरिका में कष्ट सहने की सामर्थ्य होनी चाहिए। उनमें इतनी सहनशीलता होनी चाहिए कि आने वाले कष्टों से घबरा न जायें, एकदम भयभीत तथा हत-बुद्धि न हो जायें। थोड़ी सी ही देर में बिलबिला न उठें, त्वरन्त आश्रय के लिए विह्वल न हो जायें अपितु अपने सम्पूर्ण सामर्थ्य तथा साहस के साथ दृढ़तापूर्वक डट जायें तथा पुरुषार्थ करें—समस्या हल होकर रहेगी। पुरुषार्थहीन राष्ट्र कभी किसी समस्या को हल नहीं कर सकते। शरीर में शक्ति भी हो, किन्तु पुरुषार्थी जीवन न हो तब भी सफलता नहीं मिलेगी। सफलता की प्राप्ति तो तभी होगी तभी उन्नति प्राप्त की जा सकेगी जब गर्मी, सर्दी तथा वर्षा आदि को सहते हुए—जब भूख और प्यास को सह कर भी अपने पूर्ण साहस तथा

राष्ट्रोन्नति के मूल तत्व

सामर्थ्य से पुरुषार्थ किया जायेगा तथा राष्ट्र का जन-जन—सम्पूर्ण राष्ट्र—कार्य क्षेत्र में उपर्युक्त प्रकार से तपस्वी बनकर जुट जायेगा।

द्वितीय वाक्य में दूसरा शब्द 'ब्रह्म' आया है। ब्रह्म शब्द के अनेक अर्थ होते हैं किन्तु हम यहाँ केवल दो ही अर्थ लेंगे और वह हैं ज्ञान और ब्राह्मण। जिस देश में ज्ञान न हो, जो देश ज्ञानहीन हो, जिस देश में मूर्खों का वास हो—उस की उन्नति के स्वप्न देखना क्या अर्थ रखता है? मूर्खों द्वारा राष्ट्रोन्नति की कल्पना सर्वथा व्यर्थ है। राष्ट्रोन्नति के लिए तो ज्ञान, महान् ज्ञान चाहिए, ऐसा ज्ञान चाहिए जिस के द्वारा राष्ट्र को प्रत्येक क्षेत्र में विकसित किया जा सके। विचारिये तो—बिना ज्ञान के कौन कार्य सम्पन्न हो सकता है—अतिरिक्त सर्वनाश के। चाहे कार्य सडक और बांध बनाने का हो या विद्युत उत्पादन व विद्युत निर्माण का, चाहे मोटर-इंजिन बनाने का हो अथवा वायुयान बनाने का। चाहे वस्त्रोत्पादन की बात लीजिए अथवा यन्त्र निर्माण की—प्रत्येक कार्य के लिए ज्ञान की आवश्यकता है। खेती का कार्य—जिस के विषय में आज यह समझ लिया गया है कि इसके लिए पढ़ने की आवश्यकता नहीं, वह भी मूर्खों द्वारा उतने अच्छे प्रकार से सम्पादन नहीं किया जा सकता, जितने अच्छे प्रकार से विद्वान् उसे सम्पादन कर सकते हैं। भारत में तीस-पच्चीस वर्ष पूर्व खेती की जो दशा थी, उसे कौन नहीं जानता। वर्तमान में जब से पढ़े-लिखे लोगों ने इस ओर ध्यान देना प्रारम्भ किया है, तो प्रत्येक प्रकार में जो तीस-पच्चीस वर्ष पहले कार्य में लाया जाता था परिवर्तन हो रहे हैं तथा परिणामस्वरूप उत्पादन भी अपेक्षाकृत बढ़ रहा है। सिंचाई के नये-नये प्रकार, जुताई के नये-नये प्रकार प्रत्येक शस्य के लिए परिस्थितियों के अनुसार अपनाये जा रहे हैं परिणामस्वरूप अधिक पैदावार भी ली जा रही है।

जहां शिल्प आदि की उन्नति के लिए नये-नये आविष्कारों की आवश्यकता है वहां वर्तमान भोगवादी युग में भोग के भूखे साम्राज्यवादी भेड़ियों से राष्ट्र-रक्षा के लिए भी नये साधनों की आवश्यकता है। एक ओर नवीन प्रकार के अस्त्र-शस्त्र चाहिए तो दूसरी ओर नवीन प्रकार के आधुनिकतम यान चाहिए वर्तमान युद्धों में प्रयुक्त होने वाले आणविक अस्त्रों के भयकर धूम्र (गैस) से रक्षा के लिए प्राणियों के शरीरों पर होने वाले तथा अन्न, जल; फल फूल आदि पर पडने वाले विषैले प्रभावों से रक्षा के साधन चाहिए। ये समस्त साधन बिना ज्ञान के, ब्रह्म के अभाव में नहीं जुटाए जा सकते। यही क्या—कार्य-व्यवस्था तक—चाहे वह किसी भी प्रकार के कार्य की हो—ज्ञानरहित, ब्रह्मरहित, लोगों के द्वारा सम्भव नहीं।

ब्रह्म का दूसरा अर्थ है ब्राह्मण। ब्राह्मण उसे कहते हैं जो ब्रह्म को जानता हो।

'ब्रह्म जानाति ब्राह्मण।'

जो ब्रह्म विद्या अर्थात् निर्माण विद्या को जानता हो, जो देशवासियों में सद्ज्ञान और सत्शिक्षाओं के द्वारा तथा विद्यालयों में छात्र व छात्राओं को शिक्षा देकर समाज और राष्ट्र को अच्छे सदाचारी तथा विवेकी, समाज और राष्ट्रोत्थान के कार्यों में जुटने वाले नागरिक और नागरिकता दे सके। मानव को भोग-लिप्सा में फंस कर मानव के रक्त का प्यासा बनने से रोककर अध्यात्म शृङ्खला द्वारा सब को परस्पर आबद्ध कर सके। मानवी वृत्तियों को आसुरी वृत्ति न बनने देकर—उन्हें दैवी वृत्ति बनाने के लिए प्रयत्नशील हो—जिस से कोई किसी के भोग को न भोगे—अपितु स्वभोग में से भी अन्यों को बांटकर खाये तथा इस प्रकार स्वराष्ट्र और मानवता के सुख का साधन बन जाए।

इस वाक्य में एक शब्द है 'यज्ञ' जिसका अर्थ होता है उत्तम कर्म। शतपथ ब्राह्मण में कहा भी है—

'यज्ञो वै श्रेष्ठतम कर्म।'

श्रेष्ठतम कर्म का नाम यज्ञ है। राष्ट्रोन्नति के लिए यह भी आवश्यक है कि राष्ट्रवासियों के द्वारा श्रेष्ठ कर्म किये जायें। निकृष्ट कर्म राष्ट्र की उन्नति के नहीं—सर्वनाश के कारण बनते हैं। यदि किसी राष्ट्र में नहरें और बांध पर्याप्त संख्या में हों, सडकें तथा विद्युत-गृह भी हों, सुन्दर-सुन्दर मैदान तथा भव्य भवन भी हों और देशवासियों को खाद्य-पदार्थ व पेय पदार्थ भी उत्तम मिलते हों, लोगों को पहनने के लिए उत्तमोत्तम वस्त्र भी ऋत्वनुकूल उपलब्ध हों—किन्तु लोगों के जीवन में उत्तमता न हो, राष्ट्रवासी उत्तम कर्मों में प्रवृत्त न हों अपितु प्रत्येक क्षेत्र में अनाचार और कदाचार का बोलबाला हो, भ्रष्टाचार का विष देश के प्रत्येक क्षेत्र, राष्ट्र के सम्पूर्ण समाज में व्याप गया हो, जन-जीवन अत्यन्त अपवित्रताओं से ओत-प्रोत हो गया हो—तब क्या राष्ट्र उन्नति कर सकेगा? तब तब तो उन्नति का अर्थ ही कुछ नहीं होता। राष्ट्र को उन्नत करने के लिए तो आवश्यक ही नहीं अपितु परम आवश्यक है कि राष्ट्र का प्रत्येक नागरिक सत्कर्मों, यज्ञ कर्मों में प्रवृत्त हो।

द्वितीय वाक्य की समाप्ति पर कहा गया है 'पृथिवी धारयन्ति' अर्थात् बृहद् सत्य, उग्रत्व, दीक्षा, तप, ब्रह्म और यज्ञ पृथिवी को, भूमि को, राष्ट्र-भूमि को, मातृ-भूमि को धारण करते हैं। राष्ट्र का धारण, राष्ट्र को सभालना है। उस की समस्याओं को हल करना और समस्याएँ हल होना ही राष्ट्र की उन्नति है तथा समस्याएं तभी हल हो सकती हैं जब राष्ट्र में—राष्ट्र के नागरिकों में—उपर्युक्त योग्यताएँ हों।

मन्त्र का द्वितीय पाद है 'सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरु लोक पृथिवी न कृणोतु' अर्थात् 'न भूतस्य भव्यस्य पत्नी सा पृथिवी उरु लोक नः कृणोतु' हमारे भूत और भविष्य काल की पालन करने वाली वह पृथिवी, वह मातृ-भूमि हमारे लिए विस्तृत क्षेत्र और विस्तृत,—फैला हुआ विशाल प्रकाश—महान् कीर्ति प्रदान करे। जिस मातृ भूमि के द्वारा तथा जिस राष्ट्र व्यवस्था के द्वारा हमारे भूतकाल का पालन होता रहा है और जिस के द्वारा हमारे भविष्य का पालन भी होना है उस मातृ-भूमि से तथा उस राष्ट्र-व्यवस्था से हमें हमारी आवश्यकताओं के अनुसार निवास करने तथा खेती-बाडी व कल-कारखाने लगाने के लिए विस्तृत, विशाल क्षेत्र उपलब्ध होना चाहिए। मातृ-भूमि पर निवास स्थान करते हुए हमें विस्तृत ज्ञान भी चाहिए। बिना विशाल-ज्ञान के असंख्य राष्ट्रीय समस्याओं का हल सम्भव नहीं हो सकता। हम अपने राष्ट्र में, अपनी राष्ट्रीय व्यवस्थाओं से जहां विस्तृत क्षेत्र और विशाल ज्ञान प्राप्त करें, वहाँ महान् कीर्ति भी प्राप्त करें। किसी राष्ट्र के नागरिकों के द्वारा कीर्ति प्राप्त करना, अपने ज्ञानपूर्वक कर्मों के द्वारा स्व-राष्ट्र को यशस्वी बनाना तथा उस यशोगाथा को संसार में फैलाना उन्नति की पराकाष्ठा है। अतः वेद ने जहां राष्ट्रोन्नति के लिए अन्य अनेक बातें बतायीं, वहीं 'उरुलोक' की बात कह कर उन्नति की चरम सीमा के तत्व का निर्देशन भी कर दिया। मन्त्र का सरल भाषानुवाद नीचे पढ़िए—

अटल सत्य निष्ठा
यथार्थता, दीक्षा, क्षातृत्व
और तप (के साथ)
ब्रह्म और यज्ञ
धारण करते—
हैं मातृ भू को।

हमारे—
भूत-भविष्य की पालक
वह पृथिवी (मातृ भू)
ज्ञान-कीर्ति
विशाल क्षेत्र
हम को करे प्रदान॥ ●

धर्म का मर्म…

(पृष्ठ ३ का शेष)

पहले ही हत्या की जा रही है। यह संक्रामक रोग बडी तेजी से फैल रहा है। यह बात नारी जाति के लिए अत्यन्त लज्जा, शर्म, अपमानजनक है। जन्म लेने के अधिकार को छीनना मानवता का गला घोंटना है। यह दैवीय व्यवस्था का उपहास है शास्त्रों का कथन है कि संसार में सबको जीने का अधिकार है। जिसे हम ने बनाया नहीं उसे मारने का हमारा अधिकार नहीं है। भ्रूण-हत्या शास्त्र की दृष्टि में महापाप है। व्यावहारिक दृष्टि से नर और नारी के संयोग से ही सृष्टि चलती है। भ्रूण परीक्षण में प्रायः संभावित लडकियों की ही हत्या की जाती है। यदि यह देर तक क्रम चलता रहा तो पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या बहुत कम हो जाएगी तो सृष्टि क्रम कैसे चलेगा? यह इस तरह के परीक्षण धर्म, शास्त्र, मर्यादा, लोक व्यवहार आदि सभी दृष्टि से हेय, निन्दनीय एवं दण्डनीय हैं।

इस प्रकार समाज में व्याप्त हो रही कुरीतियों, कुप्रथाओं एवं भ्रामक प्रचार से हमें सावधान रहना है। जो धर्म को मात्र चौका चूल्हे तक सीमित रखकर लोगों की भावना, आस्था व श्रद्धा को तोडना चाहते हैं उनका सामाजिक स्तर पर बहिष्कार करना होगा। तभी हम धर्म के विराट् रूप का दर्शन कर सकेंगे। ●


लाखों लोगों की पसंद
एम डी एच दंत मंजन
23 जड़ी बूटियों से निर्मित आयुर्वेदिक औषधि
आपके परिवार के लिये पूर्ण दंत सुरक्षा
दांतो का दर्द, मुंह की दुर्गन्ध
मसूड़ों की सूजन, ठंडा गर्म
पानी लगना, मुंह में छाले होना तथा
दांतों की अन्य बीमारियों का घरेलू इलाज
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
अपने निकटतम दुकानदार से खरीदें
प्रतिदिन प्रयोग करें
सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०


बनाइये और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी
सुगंध से महकाइये।
निर्माता -
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
फ़ोन : 539609 537987, 537341
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर


आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
अजमल खान रोड
करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
फोन 582036, 5715878
ग्रोवर सन्स
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
align point

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N. No 32337/77 Post in N.D P S O on 21, 22 7-88 Licenced to post without prepayment, Licence No U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान विना भेजने का लाइसेंस न० यू १३६

(पृष्ठ १ का शेष)

भारत की एकता और...

उत्पादकों को प्रोत्साहित करने वाला विज्ञापन नहीं लगायेंगे। इस सुन्दर कार्य के लिए यह सभा उपराज्यपाल श्री हरकृष्णलाल कपूर और कार्यकारी पार्षद श्री कसीलाल चौहान का धन्यवाद करती है। यह सभा सशक्त स्वर में प्रशासन से यह भी माग करती है कि इसी तरह का प्रतिबन्ध उन विज्ञापनों तथा दूरदर्शन पर प्रदर्शित किये जाने वाले विज्ञापनों पर भी लगाया जाना चाहिए जो अण्डे खाने के सम्बन्ध में भोली जनता को गुमराह करते हैं।

प्रस्ताव ५—

यह सभा सूचना एव प्रसारण मन्त्री श्री हरकृष्ण लाल भगत से अनुरोध करती है कि वे दूरदर्शन एव आकाशवाणी पर [illegible] जैसे सीरियल दिखाना बन्द करें क्योंकि इन से साम्प्रदायिक सद्भाव बढ़ता नहीं है, बल्कि इतिहास को तोड़ मरोड़कर पेश करने से जनता में रोष फैलता है। आर्यों को विदेशी और बर्बर तथा महमूद गजनवी को जाति विदेशी आक्रान्ता बताने की यह सभा घोर भर्त्सना करती है।

प्रस्तावक : [illegible] गुप्त
(मन्त्री)

सेवा में—



दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एव प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली न० १७ कैलाशनगर दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ : अंक ४१ | रविवार ३१ जुलाई १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | श्रावण २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य : एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

पुलिस की बगावत

गुजरात में पुलिस की बगावत वहां की पुलिस की अराजकता का नमूना उतना नहीं है जितनी हमारी राजनैतिक व्यवस्था की अराजकता का नमूना है। मुख्यमंत्री अमरसिंह चौधरी ने राज्य की सातों पुलिस यूनियनों को भंग करने और उनकी समन्वय समिति के नेताओं को गिरफ्तार करने के बाद दूरदर्शन के जरिए पुलिस यूनियन के नेताओं पर जो भी आरोप लगाए हैं वे सबके सब सही हो सकते हैं। लेकिन इन आरोपों में से कोई भी किसी तात्कालिक घटना से संबंधित नहीं है। पुलिस के नेताओं ने राष्ट्रपति की आलोचना की होगी, राजीव गांधी के दांडी मार्च में बाधा डालने की भी कोशिश की होगी और राष्ट्रीय दिवसों पर समानांतर झंडा फहराने की योजना भी बनाई होगी—जो पुलिस पिछले नौ साल में सात बार विद्रोह पर उतारू दिखाई दे चुकी हो उसके यह सब करने की बात अविश्वसनीय नहीं लग सकती—लेकिन अमरसिंह चौधरी ने अशोक भट्ट या दूसरे किसी पुलिस नेता की अनुशासन हीनता के फौरन बाद तो कोई कार्रवाई की नहीं। अगर उन्हें पुलिस के नेताओं के ये सब काम राज्य और संविधान से विद्रोह लगते हैं तो उन्हें उसी समय कदम उठाना चाहिए था मगर ऐसा कुछ नहीं किया गया।

पुलिस के नेताओं पर कार्रवाई तब की गई जब अमरसिंह चौधरी को मुख्यमंत्री के पद से हटाने का बहाना ढूंढ रहे दिल्ली के नेताओं ने बताया कि पुलिस तक उनके काबू में नहीं है। राज्य में राष्ट्रीय नेताओं और राष्ट्रीय प्रतीकों के खिलाफ खुले आम पुलिस के नेता व्यवहार करते रहे हैं और सरकार हाथ बांधे देखती रही है। दिल्ली के नेताओं को ये सब तथ्य भी राज्य में अमरसिंह चौधरी को हटाने में लगे हुए विरोधी कैंप ने मुहैया किए थे। माधवसिंह सोलंकी को तीन साल पहले खुद पुलिस विद्रोह के कारण ही हटना पड़ा था और उन्हें व गुजरात के दूसरे असंतुष्ट नेताओं झीनाभाई दर्जी या राज्य कांग्रेस के अध्यक्ष अहमद पटेल को पुलिस की अनुशासन हीनता दिखा कर अमरसिंह चौधरी का निकम्मापन साबित करना आसानी से ही समझ में आ गया होगा। केन्द्रीय नेताओं ने इन सब आरोपों के आधार पर अमरसिंह चौधरी से जवाब-तलब किया और अपनी कुर्सी बचाने की कोशिश में चौधरी ने पुलिस यूनियनों पर हमला बोल दिया। गुजरात में पड़ी इस चिंगारी का कारण कांग्रेस की आंतरिक कलह, राज्य का कमजोर नेतृत्व और कांग्रेस के केन्द्रीय नेताओं की धींगामुश्ती है न कि पुलिस यूनियन नेताओं का तथाकथित व्यवहार।

बहरहाल पुलिस की यह बगावत पुलिस की भूमिका और पुलिस के व्यवहार के बारे में कई तरह के सवाल उठाती है। दिल्ली पुलिस के विद्रोह और उत्तर प्रदेश में पीएसी की बगावत के बाद जगह जगह पुलिस वालों की सामान्य हालत में सुधार के लिए यूनियनें या परिषदें बनाने का सिलसिला शुरू हुआ था। पुलिस वालों के वेतन में मामूली सुधार के अलावा इन यूनियनों की कोई खास भूमिका नहीं रही। उसकी वजह शायद यह है कि आमतौर पर पुलिस को सत्ता तंत्र का हिस्सेदार होने के इतने फायदे मिलते रहते हैं कि वे अपनी काम की परिस्थितियों और व्यक्तिगत गरिमा को भूले रहे। हमारे नेता और हमारी सरकार पुलिस को अपने सत्ता-भोग का औजार बनाए रहते हैं। पुलिस के दुरुपयोग से ताकत के बेजा इस्तेमाल की संस्कृति पनपती है और पुलिस के लोग भी इसका भरपूर इस्तेमाल करते हैं। इसकी छूट उसे बाकायदा संवैधानिक रूप से मिली हुई है। आप पुलिस की किसी नियमावली को उठा कर देख लीजिए उसकी भूमिका देश के लोगों के न्याय-अन्याय को देखने और उनके हितों या उनकी गरिमा की रक्षा करने वाली एजेंसी के तौर पर नहीं देखी गई। उसकी भूमिका केवल राज्य-तंत्र को संरक्षण प्रदान करने और देश में कानून व व्यवस्था बनाए रखने वाली एजेंसी के रूप में देखी गई है।

यह हाल पुलिस का ही नहीं हमारी सभी राजनैतिक और प्रशासनिक संस्थाओं का है। वह सभी लोगों से बगावत करती रहती हैं मगर जब कोई एजेंसी राज्य से बगावत करने लगती है तो वह खतरनाक नजर आने लगती है। पुलिस को लोगों पर बड़े से बड़ा अन्याय करते हुए या लोगों के खिलाफ क्रूर से क्रूर अपराध करते हुए, कभी कठघरे में नहीं खड़ा होना पड़ता। बगावत कांड के अपवाद को छोड़ कर कभी आपने अपराधी पुलिस वालों के खिलाफ कार्रवाई नहीं सुनी होगी। उनका अपराध लोगों पर ज्यादती करते समय नहीं होता। केवल राज्य को अंगूठा दिखाते समय होता है। लेकिन पुलिस या सेना जैसे सशस्त्र बलों का राजनैतिक दुरुपयोग होता रहे तो उन्हें विद्रोही होने से कब तक रोका जा सकता है। लोगों पर जबर्दस्ती शासन करने का औजार बनते-बनते उनमें खुद अपनी सत्ता का निरंकुश उपयोग करने की महत्वाकांक्षा पैदा हो जाती है। यही महत्वाकांक्षा उन्हें सरकार से विद्रोह के रास्ते पर ले आती है। गुजरात के १९७९ से लगा कर अब तक के सातों पुलिस विद्रोह तो इसका सबूत हैं ही, कुछ दिन पहले पूर्वोत्तर में असम राइफल्स का विद्रोह भी दिल्ली पुलिस या उत्तर प्रदेश के पीएसी विद्रोह की पुरानी कड़ी में ही रख कर देखा जा सकता है। सेना भी कब तक अनुशासित रह पाएगी कहा नहीं जा सकता।

लेखक—प्रभाष जोशी

●

इस अंक में

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

आर्यसमाज का पांचवाँ नियम

"सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहियें।"

लेखक—स्वामी सत्यानन्द जी महाराज

"सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहियें।"

सब काम धर्मानुसार करने चाहियें, अर्थात् सत्यासत्य का विचार कर करने चाहियें। यहां 'धर्मानुसार' वाक्य के आगे 'अर्थात्' शब्द रखकर सत्य और असत्य के विचार से उसकी व्याख्या की गई है। इसका भाव यह है कि सत्यासत्य के विचार से—विवेक-पूर्वक—सब काम करना धर्मानुसार कर्म करना है। जो मनुष्य सत्यासत्य की विवेक-बुद्धि से कर्म करेगा, वह निश्चित रूप से सत्य कर्म ही करेगा। सत्य कर्म ही धर्मानुसार कर्म है। धर्मानुसार कर्म करने के साथ सत्यासत्य के विचार-रूप पद को इसलिए लगाया है कि धर्म जानने के लिए विवेक-बुद्धि का होना आवश्यक प्रतीत हो, भेड़ियाधसान के ही काम को धर्मानुसार काम न समझा जावे। आर्य जन अन्ध परम्परा पर न चलें—लकीर के फकीर न बनें।

जब धर्मानुसार कर्म करने का आदेश है, तब धर्म के स्वरूप को जानना भी आवश्यक है।

आर्य जन आदि काल से यही मानते चले आये हैं कि "वेद का आदेश ही धर्म है।" भगवान् मनु ने भी कहा है—'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्,' समग्र वेद धर्म का मूल है। तीसरे नियम में भी वेदज्ञान को ही परम धर्म कहा है। इन वाक्यों का यही तात्पर्य है कि जिन कर्मों के करने का वेद में विधान है, जो कर्म वेदानुकूल हैं, जो यज्ञ वेद-विहीन हैं, और जो संस्कार वैदिक हैं, उन सब का पालन करना वैदिक धर्म का पालन करना है। स्मृतियों और अन्य अनेक आर्ष ग्रन्थों के जितने भी कर्म वेद से अविरुद्ध हैं, उनका पालन करना भी धर्म है। "सब काम धर्मानुसार करने चाहियें" इस वाक्य का संकेत ऐसे ही कर्मों की ओर है।

इस पांचवें व्रत के व्रती जन को शास्त्र का समादर करना चाहिये। वह शास्त्र के वचनों का अपमान न करे। उसका आदेश शिरोधार्य समझे। उसमें शुद्ध प्रीति कम न होने दे। परन्तु अपने विवेक-विचार से भी पूरा काम ले। जो जन अपने विचार का तिरस्कार करते हैं, और अपने अन्तःकरण में विवेक-बुद्धि का प्रदीप उद्दीप्त नहीं करते, वे कभी न कभी सन्मार्ग से भ्रष्ट हो ही जाते हैं।

अपने हृदय-मन्दिर में विवेक-विचार की ज्वलन्त ज्योत जगाने की यही विधि है कि जब कभी किसी कार्य को करने का प्रश्न सम्मुख आवे, तब उस कार्य को आरम्भ करने के पूर्व सोच लिया जावे कि यह वेद-विरोधी कर्म तो नहीं, इसके विषय में आर्ष ग्रन्थ क्या कहते हैं, स्मृतियों ने क्या व्यवस्था दी है, सत्पुरुषों और सज्जनों का आचार—इतिहास—क्या बताता है, मेरा अपना आत्मा क्या साक्षी देता है, इसके करने से मेरे मन पर, तन पर, जीवनचर्या पर, बन्धु वर्ग पर क्या प्रभाव पड़ेगा, और इससे मुझे हानि होगी या लाभ। व्यक्तियों के कामों का समाज के साथ भी सम्बन्ध होता है, इसलिए यह भी विचारना चाहिये कि इस काम से समाज को तो कोई हानि न होगी—सार्वजनिक हित की हत्या तो न हो जायेगी। इत्यादि बातों को सोच विचार कर सत्यमय और हितमय कार्यों के करने में आर्य जनों को बड़ी भारी सुगमता हो सकती है। वे धर्म-मर्यादा का कभी लोप नहीं कर सकते।

सत्यासत्य का विचार किये बिना जो काम किये जाते हैं, उनमें उतावली हुआ करती है, सदा अन्धाधुन्धपन रहा करता है, प्राय भूलें हो जाती हैं, और कई बार तो अनेक ऐसे कटु परिणाम निकल आते हैं जिनसे चिरकाल तक पछताना पड़ता है, बहुत दिनों तक चित्त को चिन्ता चूर करती रहती है। मन में मोद प्रमोद का मानो नाम तक नहीं रहता। परन्तु सत्यासत्य के विवेक विचार पूर्वक किये कार्यों के फल सदा शुभ, स्वादु, मधुर और मनोरम हुआ करते हैं। इससे कर्त्ता का उत्साह और साहस उत्तरोत्तर बढ़ता ही चला जाता है। उसके मन की उमंगों की तरंगें और भी ऊंची उठने लगती हैं। उसका पांव कभी भी पीछे नहीं पड़ता। वह सदा अग्रसर ही रहता है।

पांचवें नियम के पालन करनेवाले को समझना चाहिए कि कर्म मन, वचन और काया से किये जाते हैं। ये तीनों प्रकार के कर्म धर्मानुसार होने उचित हैं। मन के कर्मों को धर्मानुसार करने के साधन ये हैं कि आर्यजन सदा सब का हित ही चिन्तन करें। किसी की अनिष्ट-चिन्ता मन में न लावें। दुष्ट संकल्पों, दुर्भावनाओं और व्यर्थ विकल्पों को रोकें। उन्हीं विचारों को हृदय में स्थान दें जिनको निकट भविष्य में कार्य रूप में परिणत करना हो—क्रियात्मक कलेवर देना हो। जो जन अपने संकल्पों और विकल्पों का ताना-बाना तो बहुतेरा तनते रहते हैं, परन्तु कर्म में लाकर उनका वस्त्र नहीं बुनते—उनको क्रियात्मक साकार स्वरूप नहीं देते—उन विचार माला को गूंथने वालों का मस्तिष्क निर्बल हो जाता है। कोरे चिन्तनशील की स्मरण-शक्ति शिथिल पड़ जाती है। [विच]ार के ही संसार में रहने वाले [क]ा शरीर संस्थान बिगड़ जाया करता है। उसकी पाचन-शक्ति नष्ट हो जाती है। अन्त में जाकर कर्म करने की सामर्थ्य भी उसमें नहीं रहती।

वाणी और काया में मनुष्य का मन ही आकर प्रकट होता है। जिस प्रकार कूए के भीतर का ही अच्छा या बुरा जल रहट की हांडियों में बाहर आता है, वैसे मानव-तन का ही प्रकाश उसके कर्मों में दीख पड़ा करता है। आकृति का प्रतिबिम्ब ही प्रत्याकृति होती है। मनुष्य का मन ही उसके वचन और कायिक कर्म बन जाता है। जो विचार, जो भाव, और जो संकल्प भीतर सूक्ष्म रूप से हैं, वे ही वाणी और कर्मों में आकर स्थूल और स्थूलतम बन जाते हैं। सारांश यह कि मनुष्य का जैसा और जो भाव भीतर होता है; ठीक वही ज्यों का त्यों उसके वाक्यों और कर्मों में आ जाता है, इस कारण बाहर की अपेक्षा भीतर को भद्रता से भरने का विशेष यत्न करना अधिक उपयोगी है। यह मार्ग अधिक सुगम है।

वाणी के कर्मों को धर्मानुसार बनाने के लिए उसमें सत्य और हित दो गुण होने अत्यावश्यक हैं। जिन शब्दों में सत्य और परहित, ये दोनों नहीं, वे अरण्य-रोदनवत् निःसार हैं। ऐसे शब्द बोलना वाणी का दुरुपयोग करना है। मनु महाराज ने कहा है—"सारे प्रयोजन वाणी में पिरोये हुए हैं, वाणी ही उनका मूल है, वाणी ही से वे प्रकट हुए हैं। ऐसी वाणी को जो चुराता है वह सब वस्तुओं को चुराने वाला चोर बन जाता है। ठीक भी है कि संसार के सारे व्यवहार वचन द्वारा ही होते हैं। सारा व्यापार, लेन-देन और सन्धि सम्बन्ध वचन-रज्जु से बंधा हुआ है। ऐसे वचनों को जिस मन ने बदल डाला, मिथ्या कर दिया, उसके समान संसार के प्रबन्ध को अस्तव्यस्त करनेवाला और दूसरा नहीं है।

वचन के कर्मों में कोमलता और माधुर्य का होना एक उत्तम गुण समझा जाता है। वचनों में प्रेम-प्रीति का प्रकट करना एक आकर्षणकारी कर्म है। बच्चे मार-पीटकर नहीं प्रत्युत लाड प्यार से पालने से ही बड़े होते हैं। वे कोसने और डांटने से उतने अच्छी तरह नहीं बढ़ते जितने कि पितावत् प्रेम प्रदर्शित करने से। रोगी को भर्त्सना करने के अनन्तर औषध देना उसके रोग को चौगुना बढ़ाना है। उसके साथ तो गहरी सहानुभूति दिखाने और आशा बंधाने से ही उसका रोग दूर किया जा सकता है। इसी प्रकार यदि किसी जन को समझाना अभीष्ट हो, सन्मार्ग पर लाना कर्तव्य कर्म हो तो उसे मीठे, मृदु, हित भरे और प्रेम में पगे हुए शब्दों से समझाने बुझाने पर अधिक उत्तम और अधिक शीघ्र सिद्धि हुआ करती है।

वाणी के दोषों को दूर करने के लिए मोटे-मोटे दोषों को दूर करना चाहिये। इन दोषों में आगे लिखे चार दोष अत्यन्त हानि कारक हैं। वे ये हैं—निन्दा, पैशुन्य, दोषारोपण और समालोचना। ये चारों दोष मनुष्य को समाज में कांटा-सा बना देते हैं।

निन्दा करनेवाला प्रायः कायर

(शेष पृष्ठ ७ पर)

सत्य नारायण व्रत

लेखक—रामदयाल आर्य

कष्ट और क्लेश से कराहते मानव को सुख शान्ति का एक ही मार्ग है दूसरा नहीं जिसे भारत सरकार ने आज अपना आदर्श बनाया है और जिसका वर्णन वेद उपनिषद् तथा ब्राह्मण ग्रंथ एक स्वर में करते हैं, वह आदेश है :—

सत्यमेव जयति नानृतं
सत्येन पन्था विततो देवयानः ।
येनाक्रमन्त्यृषयो यत्र
तत् सत्यस्य परमं निधानम् ॥
(मुण्डक उपनिषद् ३-१-६)

सत्य की विजय होती है झूठ की नहीं। परमात्मा सत्य स्वरूप है अतः उसकी प्राप्ति के लिए मनुष्य में सत्य की प्रतिष्ठा होनी चाहिए। परमात्मा प्राप्ति के लिए मनुष्य में सत्य की प्रतिष्ठा अनिवार्य साधना तो है ही जगत् में दूसरे सब कार्यों में भी अन्ततः सत्य की विजय होती है झूठ की नहीं। जो लोग मिथ्या दम्भ और कपट से उन्नति की आशा रखते हैं वे अन्त में बुरी तरह निराश हो जाते हैं। मिथ्या भाषण और मिथ्या आचरणों में भी सत्य का आभास है। जिसके कारण दूसरे लोग उसे किसी अंश में सत्य मान लेते हैं उसी से कुछ क्षणिक लाभ सा हो जाता है परन्तु उनका परिणाम अच्छा नहीं होता। अन्त में सत्य सत्य ही रहता है और झूठ झूठ ही। इसी से बुद्धिमान मनुष्य सत्य आचरण और सदाचार को ही अपनाते हैं। झूठ को नहीं क्यों कि जिनकी भोग वासना नष्ट हो गई है ऐसे पूर्णकाम ऋषि लोग जिस मार्ग से वहां पहुंचते हैं वह देवयान मार्ग अर्थात् उन परम देव परमात्मा को प्राप्त करने का साधन रूप मार्ग सत्य से ही परिपूर्ण है। उसमें असत्य भाषण और दम्भ कपट आदि असत्य आचरणों के लिए स्थान नहीं है।

सत्येन लभ्यस्तपसा ह्येष आत्मा
सम्यग्ज्ञानेन ब्रह्मचर्येण नित्यम् ।
अन्तःशरीरे ज्योतिर्मयो हि शुभ्रो
यं पश्यन्ति यतयः क्षीणदोषाः ॥
मुण्डक उपनिषद्

सब के शरीर के भीतर हृदय में विराजमान परम विशुद्ध, निरंजन प्रकाशमय ज्ञान स्वरूप परमात्मा जिसको सब प्रकार के दोषों से दूर हुए प्रयत्नशील साधक ही जान सकते हैं। वे परमात्मा सदैव सत्य भाषण, तपश्चर्या, संयम और स्वार्थ त्याग तथा ब्रह्मचर्य के पालन से उत्पन्न यथार्थ ज्ञान द्वारा ही प्राप्त हो सकते हैं, इनसे उत्पन्न ज्ञानरहित होकर जो भोगों में आसक्त हैं भोगों की प्राप्ति के लिए नाना प्रकार के मिथ्या भाषण करते हैं और आसक्ति वश नियमपूर्वक अपने वीर्य की रक्षा नहीं कर सकते वे स्वार्थ परायण अविवेकी मनुष्य परमात्मा का अनुभव नहीं कर सकते क्यों कि वे उनको चाहते ही नहीं। शतपथ ब्राह्मण में कहा है :—(असतो मा ज्योतिर्गमय) अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चल (मृत्योर्माऽमृत गमयेति) मृत्यु को न देकर हमें अमृत दे।

परन्तु जातस्य हि ध्रुवो मृत्यु ।

प्रत्येक वस्तु जो उत्पन्न होती है वह अवश्य नष्ट हो जाती है। मृत्यु और अमृत क्या है। मृत्यु का अर्थ है—दुःख कष्ट, कलेश, बीमारी, भूख, व्यभिचार, दुराचार-परतन्त्रता भीरुता कमजोरी, हार, घूस, ब्लेक आदि सभी दुर्गुण। अमृत का अर्थ है.—कल्याणकारी और सद् गुण, धर्म, सत्य संग, ब्रह्मचर्य, परमेश्वर की उपासना जितेन्द्रियता सर्वोपकार करना। झूठ अन्धकार भी है मृत्यु भी, सत्य से रोशनी भी है जीवन भी। प्राप्ति में ही प्रकाश और अमृत निहित है—

एके साधे सब सधे सब साधे सब जाई।
जो तू सींचे मूल को फूले फले अघाई।

सत्यमिच्छेद्वदेच्चापि
सत्यमेव विचारयेत् ।
कुर्यादाचरणात्सत्य
व्रतं सत्यस्य धारयेत् ॥

सत्य की ही भावना करनी चाहिए सत्य का ही विचार करना चाहिए और आचरण में भी सत्य को धारण करना चाहिए।

विचारतु: सत्यपूर्णं च
होतव्य चास्ति व्रतं खलु ।
कर्तव्याः सन्तु कर्माणि
सर्वैरेव नरैः सदा ॥

वही सत्य से पूर्ण श्रेष्ठ व्रत है जिससे सम्पूर्ण जीवन सत्यमय बन जाता है। इसका श्रद्धापूर्वक पालन करना मनुष्य का एकमात्र कर्तव्य है।

प्रयच्छातिसुखं शांतिः सत्यं परत्र च ।
आत्मीयत्वेन सत्यस्य प्रसीदति ॥

सत्य के प्रभाव से ही इस लोक में सुख और परलोक में शान्ति प्राप्त हो सकती है और भगवान की कृपा का लाभ भी प्राप्त हो सकता है।

नारायणस्वरूपो हि सत्यमस्ति
यो नरः व्रतं गृह्णाति सत्यस्य
भवति तस्यानुकम्पित ॥

सत्य ही एक भगवान नारायण रूप है इसलिए जो उसका व्रत ग्रहण करता है उस पर भगवान की कृपा-दृष्टि अवश्य होती है।

आपो नारा इति प्रोक्ता
आपो वै नरसूनवः ।
ता यदस्यायन प्रोक्त
स हि नारायणः स्मृत ॥
(मनु० १-१०)

जल और जीवों का नाम नारा है वह अयन, अर्थ निवास स्थान है जिसका इसलिए सब जीवों में व्यापक परमात्मा का नाम नारायण कहा है।

सत्य को ही नारायण मानकर जीवन में सत्याचरण के व्रत सनिष्ठ अनुष्ठान भी सत्य नारायण व्रत का अभिप्राय है। एक सच्चे भक्त और साधक की अभिलाषा ऋग्वेद में इस प्रकार है।

ओ३म् उत स्वया तन्वा सवदे
तत्कदान्वन्तर्वरुणे भुवानि ।
किं मे हव्यमहृणानो जुषेत कदा
मृळीकं सुमना अभिख्यम् ॥
(ऋग्वेद म. ७ सूक्त ८६ मं० २)

हे सर्वश्रेष्ठ मनमोहक प्यारे वह दिन कब आयेगा जब मैं आत्मा से तेरे साथ बातचीत करूंगा। कब मैं तेरा अन्तरंग बनूंगा। वह शुभ घड़ी कौन सी होगी जब तू प्रसन्न होगा, जब तू प्रसन्न होकर मेरी भेंट स्वीकार करेगा और हे प्रभु कब मैं अपने पवित्र विशुद्ध मन में तेरा दर्शन पाऊंगा।

ओ३म् स हि सत्यो य पूर्वे चिद्
देवासश्चिद्यमीधिरे ।
होतारं मन्द्रजिह्वमित्
सुदीतिभिर्विभावसु ॥
ऋग्वेद (५-२४-२)

सचमुच वह नारायण ही सत्य है, "जिस महादानी वाणी की मस्ती प्रदान करने वाले प्रकाश पुञ्ज को ही पूर्ववर्ती विद्वान् सत्यमय दिव्य आचरणों द्वारा प्रकाशित करते हैं और जिसको निष्काम विद्वान् भी अपनी जीवन साधना से ज्योतित करते हैं वही एकमात्र सत्यनारायण है।

सत्य ज्ञानमनन्त ब्रह्म सन्तो हि सतः
तेषु सत्सु साधु तत्सत्यम् ।

सत्ता वाले पदार्थ को सत् कहते हैं उनमें साधु(सर्वश्रेष्ठ) होने से परमेश्वर का नाम सत्य है।

—

पाखण्डाचार्य

ये कौन शकराचार्य है :—

पाखण्डों में सना हुआ है, जगद् गुरु क्यों बना हुआ है।
जगद् गुरु है ईश्वर सब का, ये तो धूर्त अनार्य है।
ये कौन शंकराचार्य है ॥१॥

मानव जाति एक कहावे, ये क्यों ऊंच नीच फैलावें।
बिना बात क्यों गाल बजावें, कहां का द्रोणाचार्य है।
ये कौन शंकराचार्य है ॥२॥

कान पकड़कर बाहर लाओ, पागलखाने में बन्द कराओ।
शास्त्रार्थ को बाहर लाओ, दण्ड यही अनिवार्य है।
ये कौन शकराचार्य है ॥३।

या तो क्षमा याचना कर ले, निज गलती को हामी भर ले।
हठ धर्मी देश द्रोही ढोंगी, ये पाखण्डाचार्य है ॥
ये कौन शकराचार्य है ॥४॥

क्यों इतनी धारे बेशर्मी, अब भी बन जा वैदिक धर्मी।
सत्य मार्ग अपनाले कर कुछ जीवन में शुभ काय है ॥
ये कौन शकराचार्य है ॥५॥

लेखक—स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती

आर्य समाज के भजनोपदेशक एवम् उनकी काव्य रचनाएं

लेखक—डा० भवानीलाल भारतीय

कु० सुखलाल आर्य मुसाफिर आर्यसमाज के विख्यात गायक, कवि तथा प्रभावशाली उपदेशक थे। उनका जन्म बुलन्दशहर जिले के बरनियौ ग्राम में १८८१ ई० में ठाकुर भीमसिंह नामक एक चौहान वंशीय क्षत्रिय के घर हुआ। प्रारम्भ में इन्होंने गुरुकुल सिकन्दराबाद में रह कर प० मुरारीलाल शर्मा के सान्निध्य में विद्याभ्यास किया। तत्पश्चात् ये प० भोजदत्त शर्मा द्वारा संचालित, आगरा स्थित आर्य मुसाफिर विद्यालय में उपदेशक का प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिये चले गये। यहा वे निरन्तर बारह वर्ष तक रहे और विधिवत् व्याख्यान कला का अभ्यास किया। उनका उपदेशक जीवन भी बहुत कम आयु में ही आरम्भ हुआ और वे मृत्यु पर्यन्त आर्यसमाज के सिद्धान्तों का प्रचार करते रहे। कुं सुखलाल के व्याख्यानों में जहा रोचकता, प्रभावोत्पादकता, व्यग्य-विनोद आदि के तत्त्व रहते थे वहा उनके द्वारा निर्मित गजल और भजन भी काव्य के विभिन्न तत्त्वों से परिपूर्ण हैं। उनके काव्य की भाषा में उर्दू शब्दों का प्राधान्य रहता था तथापि वह सर्व साधारण के लिए कठिन नहीं होती थी। उनकी इन काव्य कृतियों से धर्म के प्रति निष्ठा राष्ट्र के प्रति बलिदान भावना तथा देश एव समाज के हित के लिये सर्वस्व त्याग करने की प्रेरणा प्राप्त होती है। कु० सुखलाल के भजन और उनकी अन्य काव्य कृतिया मुसाफिर का खजाना, मुसाफिर गीताजलि, जज्बाते मुसाफिर, मुसाफिर की तडप, नग्म ए मुसाफिर आदि संग्रहों में प्रकाशित हो चुकी हैं। ये सभी उर्दू लिपि में छपे सग्रह हैं। मुसाफिर भजनावली, मुसाफिर पुष्पावली तथा मुसाफिर की तडप नागरी लिपि में प्रकाशित भजन संग्रह हैं। २ जनवरी १९८१ को ९२ वर्ष की आयु में उनका निधन हुआ। मुसाफिर की तडप का एक 'श्रद्धांजलि सस्करण'' प्रेमपुस्तक भण्डार बरेली ने २०३८ वि० में प्रकाशित किया, जिस के आरम्भ में इन पक्तियों के लेखक ने कुं० सुखलाल के व्यक्तित्व तथा उन के काव्य का विस्तृत समालोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया था।

आर्यसमाज के सगीत विद्या निपुण, साथ ही काव्य कला सम्पन्न उपदेशकों में प० प्रकाशचन्द्र कविरत्न का नाम उल्लेखनीय है। (उनका प्रसिद्ध गीत "वेदों का डंका आलम में बजवा दिया देव दयानन्द ने' प्रथम बार स्वामी दयानन्द की जन्म शताब्दी के अवसर पर मथुरा में गाया गया था। तब से वह आर्यसमाज के क्षेत्र में लोकप्रियता के सभी कीर्ति-मानों को तोड चुका है।) प० प्रकाशचन्द्र का जन्म आश्विन शुक्ला नवमी १९६० वि० को अजमेर में एक पौराणिक ब्राह्मण प० बिहारीलाल के यहाँ हुआ। कविता लिखने और गाने में उनकी रुचि प्रारम्भ से ही थी। आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान के महोपदेशक प० रामसहाय शर्मा की प्रेरणा से वे आर्यसमाज के सम्पर्क में आये। वे हिन्दी के विख्यात कवि प० नाथूराम शकर शर्मा को अपना काव्य गुरु मानते थे। प्रकाशजी ने १९३० के राष्ट्रीय आन्दोलन में भी भाग लिया और कारागार का दण्ड झेला। दिसम्बर १९७७ को उनका निधन हुआ।

प्रकाश जी का काव्य अनेक साहित्यिक गुणों से भरपूर है। उन की कविता विभिन्न शैलियों, रसों, अलकारों तथा छन्दो में लिखी गई है। प्रकाश भजनावली के पांच खण्डों में उन की सभी पुरानी कृतियां सगृहीत हैं। उन के अन्य काव्य ग्रन्थ हैं। प्रकाश तरगिणी, प्रकाश भजन सत्सग, प्रकाश गीत, कहावत कवितावली आदि। उन्होंने महाभारत के कथानकों को लेकर अनेक खण्डकाव्य लिखे थे। उनकी रचनाओं का सम्पादन व प्रकाशन उन्हीं के शिष्य श्री पन्नालाल पीयूष ने परिश्रम पूर्वक किया है।

ब्रजप्रान्त वासी कु० जोरावरसिंह तथा उनकी विदुषी पत्नी श्रीमती प्रभावती आर्यसमाज के वरिष्ठ कवि दम्पती तथा भजनोपदेशक हैं। पाकिस्तान के निर्माण के विरोध में इस कवि ने 'पाकिस्तान पच्चीसी' लिखी थी जो अत्यन्त लोकप्रिय हुई। उसके गुजराती, मराठी तथा उर्दू सस्करण भी छपे। (जब पाकिस्तान का निर्माण हो गया तो कवि ने "अखण्ड भारत पच्चीसी" लिख कर यह भविष्यवाणी की—"फिर अखण्ड होगा भारत, रह सकता पाकिस्तान नहीं। उनके अन्य ग्रन्थों में भी, सिंहनाद (४भाग), प्रणय बन्धन, प्रवासी गीतांजलि, रणभेरी सत्यार्थप्रकाश गान, देशभक्त प्रताप आदि उल्लेखनीय हैं। श्रीमती प्रभावती रचित गीत "नारी जागृति गान" में संगृहीत हैं। श्री त्रिलोकचन्द राघव वर्तमान में स्वामी स्वरूपानन्द ने टंकारा पुष्पाजलि उस समय लिखी जब वे महर्षि दयानन्द स्मारक ट्रस्ट टंकारा के अन्तर्गत कार्य करते थे। उन के भजनों का एक अन्य सकलन राघव पुष्पांजलि (२भाग) शीर्षक से प्रकाशित हो चुका है। प्राध्यापक राजेन्द्र जिज्ञासु आर्यसमाज के इतिहास के कुशल अन्वेषक प्रखर-वक्ता तो हैं ही, उन्होंने कवि हृदय भी पाया है। उनकी काव्य-कृति हृदयतन्त्री (२भाग) आर्ययुवक समाज अबोहर से प्रकाशित हो चुकी है। उनके इन गीतों में सरसता, भावों का तीव्र प्रवाह तथा ओजस्विता है।

(वस्तुत आर्यसमाज के भजनोपदेशक कवियों तथा भजन रचयिताओं की सख्या इतनी अधिक है कि उनका समग्र एव व्यापक आधार पर सर्वेक्षण तथा विवेचन शोध का एक पृथक् आयाम ही प्रस्तुत करता है। ऊपर की पक्तियों में हम ने इनका घुणाक्षर न्याय से ही परिचय दिया है।) आर्यसमाज देश का एक ऐसा आन्दोलन था जो व्यापक जनाधार को लेकर चला तथा जिस से भारत के विभिन्न भाषा - भाषी प्रान्तों के लोगों ने प्रेरणा प्राप्त की। यहाँ हम यह भी दिखाने का प्रयत्न करेंगे कि हिन्दी से भिन्न किन भाषाओं, उपभाषाओं अथवा बोलियों में आर्य समाजी भजनीकों ने भजन लिखे हैं। ऊपर प्रासगिक रूप में हमने सकेत दिया है कि प० बस्तीराम तथा स्वामी भीष्म जैसे हरयाणा के निवासी उपदेशकों की भजन रचनाओं में बागडी अथवा हरयाणवी बोली के शब्दों का भूरिश प्रयोग मिलता है। ऐसा होना स्वाभाविक ही था। इन भजनों की भाषा का यह सर्वसाधारण के समझ में आने वाला रूप ही उन्हें लोकप्रियता प्रदान करता तथा जनता तक पहुचाता था।

राजस्थान के भजनोपदेशकों ने जहाँ हिन्दी खडी बोली में काव्य रचना की वहाँ भजनों में अपने प्रान्त की राजस्थानी (मारवाडी) भाषा को भी प्रयुक्त किया। स्वामी दयानन्द के समकालीन अजमेर के जेठमल सोढा के काव्य में राजस्थानी का निर्बाध प्रयोग हुआ है। उनकी 'युगराज विजय' शीर्षक कविताएं उन के पुत्र स्व० ब्रह्मदत्त सोढा द्वारा प्रकाशित हुई थी। महात्मा कालूराम के भजनों में राजस्थानी का वह रूप प्रयुक्त हुआ है जो शेखावाटी (सीकर, झुमनू जिले) प्रदेश में बोला जाता है। शुद्ध मारवाडी की रचनाए नागौर निवासी प० भगवती प्रसाद अभय ने लिखी हैं। उनके भजन सग्रह होली रो हेलो, अभय भजनावली तथा काव्य कथा प्रकाशित हो चुके हैं। कथा कुज में कृष्ण सुदामा के उपाख्यान को मारवाडी गायन की तर्जों में प्रस्तुत किया गया है। जोधपुर के च्यवन आर्य ने होली के गीतों की तर्ज पर सुधारवादी स्वर में आर्य फाग प्रस्तुत किया था।

राजस्थान के निकटवर्ती गुजरात प्रान्त की गुजराती भाषा में भी भजनों की रचना हुई है। गुजराती भजन सग्रहों में आर्यसंगीत भजन (१९५५ वि० में जमियतराम ज० भट्ट द्वारा अहमदाबाद से प्रकाशित आर्य भजनावली रतिलाल मूल जी भाई आर्य द्वारा सगृहीत तथा १९८४ वि० बम्बई से प्रकाशित भजनावली कहान जी आनन्द जी आर्य द्वारा सम्पादित तथा जोधव जी कालिदास प्रमुख द्वारा १९८५ वि० में प्रकाशित रत्नाजलि प० ज्ञानेन्द्र सिद्धान्तभूषण द्वारा सम्पादित तथा श्रीमती अनिलादेवी द्वारा प्रकाशित आदि का उल्लेख मिलता है। लातूर जिले के मोगरगा को आर्यसमाज के मन्त्री श्री इन्द्रजीत गिरि ने मराठी में वैदिक अभग लिखे हैं। महाराष्ट्र के तुकाराम आदि सन्त कवियों द्वारा रचित अभगों की लोकप्रियता सर्वविदित है। उसी अभग शैली का अनुकरण कवि इन्द्रजीत गिरि ने वैदिक अभगो की रचना में किया। पजाबी में जो भजनों साहित्य का लिखा गया वह भी गुण एव परिमाण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। भारत के अन्य प्रान्तों की भाषाओं में रचित आर्यसमाज के भजन साहित्य का समग्र विवरण एकत्रित करना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है।

उत्तर भारत के सभी प्रान्तों में

आर्यसमाज के भजनोपदेशक एवं उनकी काव्य रचनाएं

हिन्दी का प्रचलन शताब्दियों से रहा है। हिन्दी को इस प्रदेश की सामान्य काव्य भाषा का स्थान भी अनेक शतियों पूर्व ही मिल गया था। आर्यसमाज के भजन लेखकों ने हिन्दी के खडी बोली रूप को ही अधिकांश में अपनाया है, परन्तु इसी खडी बोली की ही एक अन्य शैली उर्दू को भी उन्होंने आवश्यकता पडने पर अपने भजनों और गीतों में प्रयुक्त किया है। पंजाब और उत्तर प्रदेश में उर्दू का पर्याप्त प्रचलन रहा है, यही कारण है कि इन प्रदेशों के आर्यसमाजी गायकों और भजन लेखकों की रचनाओं में उर्दू शब्दों का विशेष प्रयोग हुआ है। यह भजन फारसी लिपि में तो छपते ही थे, इन्हें नागरी में भी छापा जाता था ताकि नागरी से परिचित सर्व सामान्य भी इन से लाभ उठा सकें।

उर्दू में भजनों के अनेक संग्रह छपे हैं। इन में से कुछ का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है—आर्य संगीत पुष्पावली यानी मजमूआ भजनावली। उर्दू भजनों के इस संग्रह को १८८२ ई० में आर्यसमाज लाहौर ने प्रकाशित किया था। इस में अमीचन्द, मुन्शी केवल कृष्ण, बाबा अर्जुनसिंह तथा लाभचन्द के भजन संगृहीत हुए थे। महाशय राजपाल ने लाहौर से उर्दू भजन संग्रह प्रकाशित किये। उन में कुछ के नाम हैं—भजन अमृत १९२० ई०। आर्य गायक या भजन अमृत १९२० ई० बजोनाए भजन ६७० भजनों का यह विशाल-काव्य संग्रह ५१२ पृष्ठों में छपा था। नया चिमटा भजन उर्दू व पंजाबी गीतों का यह सम्मिलित संग्रह है। पुष्पांजलि, प्रेम गीतांजलि प्रेम पुष्पावली, मंडगज भजन— ग्रामीण क्षेत्रों में उपयोग में आने वाले भजनों का संग्रह है।

भूतपूर्व पटियाला राज्य के बदौड ग्राम के निवासी श्री रोनक राम शाद के भजनों का संग्रह भजन रत्नावली १९७० वि० में संगीत रत्न प्रकाश—५ भाग। इस में आर्यसमाज के १९११ ई० पूर्व के भजन संगृहीत हैं। पाँचों भागों में ६८२ भजन संगृहीत है। इस विशाल संग्रह को लाला द्वारकाप्रसाद अत्तार शाहजहां पुर ने प्रकाशित किया था। प० मुरारिलाल शर्मा के २५ भजनों का संग्रह भजन पचीसी प० कृपाराम स्वामी दर्शनानन्द ने १८९८ ई० में छापी। प० आत्माराम अमृतसरी के भजनों का लघु संग्रह रतन सघाट शीर्षक से छपा था।

हिन्दी में भजनों के संग्रह इतने अधिक हैं कि उन सबका संक्षिप्त उल्लेख करना भी असम्भव है। ब्रिटिश म्यूजियम पुस्तकालय लंदन में आर्यमान पुस्तक विद्यमान हैं जो १९०५ ई में लाहौर से छपी थी। ऊपर उर्दू भजन संग्रहों में उल्लिखित आर्य पुष्पावली हिन्दी में भी छपी थी। उसका सम्पादन रामदित्तमल एवं नन्दकिशोर महता ने किया था। लाहौर से इसके विभिन्न संस्करण १८९३, १८९५, १८९९, १९०२ तथा १९०७ में प्रकाशित हुए। रामदित्तमल एण्ड संस लाहौर ने नवीन आर्य गायन का प्रकाशन किया। मास्टर वजीरचन्द सम्पादित भजनसंग्रह, श्री श्यामसुन्दर लाल वकील मैनपुरी द्वारा सम्पादित भजन चालीसी, प० हरिशंकर शर्मा द्वारा सम्पादित भजन भास्कर तथा श्री ईश्वरीप्रसाद प्रेम द्वारा सम्पादित संगीत रत्नाकर सत्य प्रकाशन, मथुरा स २०३० वि० में प्रकाशित हिन्दी भजनों के उत्कृष्ट संग्रह हैं। संगीत रत्न प्रकाश के पाँचों भाग हिन्दी में भी निकले थे।

वस्तुत आर्यसमाज का भजन साहित्य विविध विषयों पर विविध शैलियों, विविध छन्दों और राग रागिनियों तथा विविध भाषा रूपों में लिखे गये-सहस्रों पद्यात्मक कृतियों का एक ऐसा महासागर है जिसका तलस्पर्शी अध्ययन करना प्रचुर परिश्रम अध्यवसाय तथा शोध के द्वारा ही सम्भव है। इन भजनों में धर्म अध्यात्म, समाज राजनीति, राष्ट्रीयता, दुर्व्यसन खण्डन, गोरक्षा, शुद्धि एवं संगठन, नारी जागरण जैसे बीसियों विषय वर्णित हुए हैं। रसों की दृष्टि से विचार करें तो आर्यसमाजी भजनों में शान्त, वीर, करुण, हास्य आदि विविध रसों का निर्वाह दृग्गोचर होता है। परन्तु शृंगार का एकान्त अभाव ही मिलेगा। वस्तुत. इन भजनों ने लाखों श्रोताओं को प्रभावित किया है, उन्हें सात्विक जीवन व्यतीत करने की प्रेरणा दी है उन्हें दुर्व्यसनों से मुक्त होने और सदाचारी बनने का उत्साह प्रदान किया है। इन भजनों में भारत के गौरवशाली अतीत तथा स्वर्णिम और महाभारत की कथाओं से लेकर राजपूतों का शौर्य और पराक्रम, पतिव्रता सती स्त्रियों का पातिव्रत धर्म, राजपूतनियों के जौहर, महाराणा प्रताप, शिवाजी वीर दुर्गादास, गुरुगोविन्दसिंह तथा उनके बलिदानी पुत्र, हकीकतराय और बंदा वैरागी, झांसी की रानी और नेता जी सुभाष आदि की वीरता, त्याग और बलिदान की कथाएँ इन भजनों में मूर्तिमान होकर आई हैं। ●



श्री रामसरण महामन्त्री



श्री लखीराम कटारिया प्रधान

दक्षिण दिल्ली वेदप्रचार मण्डल के नव निर्वाचित अधिकारी

दक्षिण दिल्ली वेदप्रचार मंडल का वार्षिक चुनाव १०।७।८८ को सम्पन्न हुआ जिस में निम्नलिखित पदाधिकारी चुने गए।

प्रधान श्री लखीराम कटारिया	महामन्त्री-श्री रामसरनदास आर्य
उपप्रधान ,, हरबंस लाल कोहली	मन्त्री-श्री गणेशदास ग्रोवर
उपप्रधान- ,, विद्या रतन जी,	मन्त्री-श्री सुरेन्द्रकुमार शास्त्री
उपप्रधान-श्रीमती सरला पाल	कोषाध्यक्ष-श्री भगवसरण

लेखा निरीक्षक-श्री देसराज जुनेजा

चेतावनी

ओ ! धर्म के ठकेदार निरंजन सोच समझकर बोला कर।
पता नही तो क्यो बकते हो, रस मे विष मत घोला कर।।

भरा नही है हृदय कोष, ये है विद्या बिन खाली।
जगत् गुरु का दम भरता है, चलता चाल कुचाली।।
भ्रष्ट, सृष्ट, बक, धृष्ट, लण्ठ, बदनाम न मानव चोला कर।
पता नहीं तो क्यों बकते हो, रस मे विष मत घोला कर।।१।।

मानव जाति एक बताई, वेदो को देखो पढकर।
कीचड मे क्यो पडे हुए उन्नति शिखर देखो चढ कर।।
ईश अजन्मा निराकार है, जगह जगह मत डोला कर।
पता नहीं तो क्यो बकते हो, रस में विष मत घोला कर।।२।।

बिना वेद के भेद मिले ना, पग पग खाओ गोता है।
है चरितार्थ कहावत एक पापी ही नाव डुबोता है।।
शुभ कर्म करो, और शर्म करो, निज हृदय स्वयं टटोला कर।
पता नहीं तो क्यो बकते हो रस में विष मत घोला कर। ..।।

ओ ! तीर्थ निरंजन भ्रम में अजन डाल मे क्यो भरमाया है।
मानव जाति भाई भाई कोई नही पराया है।।
बेईमानी नहीं चलेगी पूरा पूरा तोला कर।
पता नहीं तो क्यो बकते हो रस में विष मत घोला कर।।४।।
ओ ! धर्म के ठकेदार निरंजन, सोच समझकर बोला कर।

लेखक—स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती

आर्यसमाज का प्रथम नियम

लेखक—रामसुमेर मिश्र

卐

आर्यसंदेश के ३ जुलाई के अंक में स्वामी सत्यानन्द जी का लेख पहले नियम पर पढ़ा। स्वामी जी महाराज का यह कथन कि प्रलयावस्था में वह संसार उस परमात्मा में वैसे ही रहता है जैसे बीज में वृक्ष, जैसे मकड़ी में जाला। आर्यसमाज के सिद्धांत और दृष्टिकोण से भिन्न अभिन्न निमित्तोपादान कारण ईश्वर को बताना है। महर्षि प्रकृति को सृष्टि के पदार्थों का मूल उपादान कारण मानते हैं। निमित्त कारण मूल नहीं कहा जाता है।

वास्तविकता तो यह प्रकट करती है कि आर्यसमाज के विद्वानों में प्रथम-नियम को समझने समझाने में बड़े भेद उत्पन्न हो रहे हैं और शंका का समाधान पाने में असमर्थ हैं।

इस लेख के द्वारा मेरा प्रयत्न है कि मैं विद्वानों के समक्ष इस प्रथम-नियम की वह विवेचना रक्खूं जो महर्षि के दार्शनिक दृष्टिकोण को प्रकट कर दे।

महर्षि ने अपने ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में दो विद्याओं का खुलासा वर्णन किया है। सत्य विद्या और पदार्थ विद्या। ज्ञान-प्राप्ति करने के दो ढंग हैं। एक समाधि में ईश्वर से उपासना करके उसके उच्चारण द्वारा ज्ञान प्राप्त करना, आज का एक ऋषि कहता है। जिज्ञासा की असह्य वेदना से अधीर होने पर उस अव्यक्त आदि गुरु का स्पर्श ज्ञान से तृप्त कर देता है। दूसरा ढंग विज्ञान का (पदार्थ-विद्या) का है। इस विद्या द्वारा मनुष्य पदार्थों का उसके नाना व्यवहारों में अवलोकन व परीक्षण करके नियम को जानता और प्रयोग में लाता है।

आर्यसमाज के प्रथम नियम मे महर्षि ने आर्यसमाज का समस्त दर्शन सूत्र रूप में पिरो दिया है। यह नियम बतलाता है कि ईश्वर सब सत्य-विद्याओं का आदि-मूल है किन्तु पदार्थ-विद्या मनुष्य की निकाली हुई है और इस पदार्थ विद्या से जो कुछ भी जाना जाता है उन सबका आदि मूल परमेश्वर है। सब सत्य-विद्या, और जो, पदार्थ विद्या से जाना जाता है उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।

पदार्थ-विद्या की सीमा है जब तक पदार्थ-का नाम पदार्थ का रूप और पदार्थ का व्यवहार पकड़ में आता है तब तक पदार्थ-विद्या द्वारा ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। विज्ञान द्वारा नाम, रूप और व्यवहार को जाना जाता है। पदार्थ का मूल, (प्रकृति) नाम रूप और व्यवहार में नहीं है। महर्षि ऋग्वेद भाष्यभूमिका में नासदीय सूक्त का अर्थ करते हुए लिखते हैं कि आकाश नहीं था आकाश का व्यवहार नहीं था, और नाश प्रकरण में लिखते हैं कि परमाणु का अर्थ परम अणु है किन्तु यह एक देशीय परिभाषा है। ज्ञान में जिसकी परिधि और व्यास बन जायेंगे उसके टुकड़े हो जाएंगे और तब तक होते जायेंगे जब तक प्रकृति एक और एक सघात नहीं हो जाती। स्पष्ट है कि मूल प्रकृति में नाम, रूप और व्यवहार नहीं था। इस मूल प्रकृति को पदार्थ-विद्या (विज्ञान) नहीं जान सकता। विज्ञान के द्वारा जिस नाम, रूप व्यवहार को जाना जाता है उसका सृजन प्रकृति में ईश्वर करता है। प्रकृति के इन नाम, रूप और व्यवहारों का आदि मूल परमेश्वर है। महर्षि कपिल ने भी सांख्यदर्शन में प्रकृति को सत् रज तम की साम्यावस्था वाली अव्यक्त कहा है और उसमें पुरुष (ईश्वर) के ईक्षण से ही अव्यक्त और व्यक्त नाम रूप व्यवहारों का सृजन माना है।

अब सत्य-विद्या पर भी थोड़ा विचार कर ले। मनुष्य ज्ञान अर्जित करता है। ज्ञान मनुष्य का जातीय गुण नहीं है। मनुष्य के पास एक सामर्थ्य जातीय है, वह है मन्त्र, सलाह (Suggestion) को पकड़ लेना। मनोविज्ञान कहता है कि मनुष्य से दूसरा व्यक्ति जब Rapport (निकटत्व) स्थापित कर लेता है तो वह व्यक्ति अपने भाव मनुष्य के मन में ज्यों के त्यों उतार देता है। मनुष्य माता वाला, पिता वाला और आचार्य वाला प्राणी है। यदि मनुष्य समाज से संस्कार न पाये तो वह असमर्थ होकर धराशायी हो जावे। खाना, पीना, और व्यवहार करना सब संस्कार पर ही निर्भर है। यह संस्कार अंग्रेजी में concept (कन्सेप्ट) कहलाते हैं। इनको दर्शन की भाषा में दृष्टि कहते हैं। मनुष्य जो कुछ इंद्रियों से ग्रहण करता है, उनको दृष्टि के प्रकाश में ही पहचानता है। कन्सेप्ट के प्रकाश में ही मनुष्य परसेप्ट को देखता है। इस रहस्य को जानने के बाद यह पहेली हल हो जाती है। कि रस्सी का सांप क्यों भास होता है। महर्षि कहते हैं कि इंद्रियां गुणों को ग्रहण करती हैं, गुणी का अनुमान होता है। अनुमान संस्कार के प्रकाश में होता है। रस्सी के वक्राकार गुणों को देखने के बाद संस्कार के सांप का प्रकाश दृष्टि देता है और सांप की संज्ञा में व्यक्ति रस्सी को पहचानता है और सांप समझ लेता है। गलती का निराकरण परीक्षण (Verificaton) द्वारा ही सम्भव है। परीक्षण करने पर समानता के स्थान पर भेद का भी दर्शन होता है और तब संस्कार की रस्सी से पदार्थ की रस्सी का मेल बैठ जाता है और सत्य A is A का बोध हो जाता है।

इस प्रक्रिया से यह सत्य प्रकट है कि संस्कार के अभाव में मनुष्य ज्ञान और कर्म दोनों में असमर्थ है और वह संस्कार को मन्त्र (Suggestion) द्वारा मनुष्य पकड़ लेता है, अनुभूतियां इन संस्कारों में सुधार करती हैं। ये मन्त्र Rapport स्थापित करके कोई अन्य ही मनुष्य पर उतारता है। मनुष्य का उद्भव इस पृथ्वी पर सम्भव हो तब है जब उसके पूर्व उसका कोई पिता, माता व आचार्य बनकर उसमें संस्कार उतारे। मनुष्य जिस विद्या द्वारा यह संस्कार आदि में लेता है उसे सत्य-विद्या कहते हैं। यह विद्या उपासन (Rapport) स्थापित करने की कला है और इस विद्या का आदि मूल परमेश्वर है। ईश्वर ने ही आदि सृष्टि में मनुष्य का माता पिता आचार्य बनकर उसको उत्पन्न किया और उसमें मन्त्रों द्वारा वेदों का संस्कारभरा और उन ऋषियों ने इस सत्य-विद्या की पद्धति द्वारा सारे समाज को तथा आगे वाली भावी पीढ़ियों को कृतकृत्य किया।

इस प्रकार हम जानते हैं कि ज्ञान पाने की दो विधियां हैं। एक सत्य-विद्या और दूसरी पदार्थ विद्या इनको हम Concept और Percept की विधियां भी कह सकते हैं। Concept का आदि मूल ईश्वर है और Percept से जो कुछ अर्थात् नाम रूप व्यवहार जाना जाता है उनका भी आदि मूल परमेश्वर है। ●

प्रवेश सूचना

महर्षि दयानन्द निर्दिष्ट पाठविधि पर आधारित तथा महर्षि दयानन्द विश्व विद्यालय रोहतक से सम्बद्ध एक मात्र आदर्श वैदिक शिक्षण संस्था आर्य गुरुकुल ऐरवा कटरा में नवीन ब्रह्मचारियों का प्रवेश प्रारम्भ हो रहा है। प्रवेशार्थ छात्र की न्यूनतम योग्यता कक्षा ६ उत्तीर्ण तथा आयु १२ वर्ष होना अनिवार्य है। भोजन शुल्क मात्र १०० रुपया है। इच्छुक अभ्यर्थी सम्पर्क करें।

आचार्य राजदेव शर्मा, व्याकरणाचार्य

प्रधानाचार्य

आर्य गुरुकुल ऐरवा कटरा

(इटावा) (२०६२५२)

स्वामी मिथिलेश के हत्यारों का आजीवन कारावास की सजा

एटा चतुर्थ सत्र न्यायाधीश श्री धनीराम ने गुरुकुल प्रह्लादपुर के संस्थापक श्री स्व० स्वामी जी के हत्यारों को आजीवन कारावास की सजा दी है। अशोक कुमार और दीनानाथ ने स्वामी जी की गुरुकुल में सोते समय गोली मार कर हत्या कर दी थी।

प्रेषक—

ब्रह्मानन्द चतुर्वेदी

देवरी, प्रह्लाद पुर एटा

उ०प्र०

(पृष्ठ २ का शेष)

आर्यसमाज का पांचवाँ नियम

होता है। वह सामने तो चिकनी चुपड़ी बातें किया करता है और पीठ पीछे अपवाद फैलाता फिरता है। निन्दक का मन सदा मैला रहता है। उसके हृदय में इस बात की चिन्ता बनी रहती है कि कहीं मेरे निन्दा रूप पाप-कर्म का भण्डा-फोड़ न हो जावे, मेरी करतूत का लोगों को पता न लगे। रात-दिन पराये दोष ही देखते रहने की प्रकृति हो जाने से वह छिद्रान्वेषी हो जाता है। गुण-ग्राहकता का उसमें लेश भी नहीं रहता। निन्दा सदा दूसरे की अनुपस्थिति में ही की जाती है। इसलिए उस कर्म से उसका सुधार कदापि नहीं हो सकता। सुधार तो हित-बुद्धि से, प्रेम-भाव से और सहानुभूति-पूर्वक समझाने से हुआ करता है। अमुक मनुष्य आपके विरुद्ध षड्यन्त्र रच रहा है, आपको गिराना चाहता है, वह अमुक दल के विरुद्ध यह बात सोचता है; उसने वह करना निश्चय किया है, इत्यादि, एक की बातें दूसरे को जा बताना, विश्वासघात करना और मित्रद्रोह में प्रवृत्त होना पैशुन्य—चुगली है और बड़ा भारी पातक है। यह दोष कायर, भीरु, कपटी और स्वार्थी जनों में प्राय: होता है। आर्य धर्मी जन नीचता के इस कीचड़ में कभी न कूदें।

दोषारोपण—लाञ्छन लगाना—भी वाणी का दुष्कर्म है। सुधार-बुद्धिवाले जन को किसी पर आक्षेप करने से झिझकना चाहिये, और यह समझना चाहिये कि दोषारोपण कर देने मात्र से किसी का सुधार नहीं होता, किसी का उत्थान नहीं हो सकता। किसी के दुर्गुणों को उसमें से निकाल देने के लिए हितेच्छुक भाव उत्तम साधन है। पितृ, मातृ, भ्रातृ और मित्र भाव से समझाना उचित है। केवल दोषा-रोपण कर देना तो ऐसा ही है जैसे नगर की गन्दी गली का कीचड़ निकाल कर सड़क पर इकट्ठा कर देना।

किसी कार्यकर्त्ता के काम पर टीका-टिप्पणी करना, उसकी त्रुटियां बताना, भूलें प्रकट करना समालोचना है। यद्यपि संसार को इस कर्म की आवश्यकता तो है, परन्तु यह काम अति कोमल है। प्रत्येक के करने का नहीं। सभाओं में कभी-कभी तो यह कर्म कलह की सी आग लगा देता है। उन्हीं सज्जनों को समालोचक बनना चाहिये जिनके कन्धों पर कोई उत्तरदायित्व का भार है, जो क्रिया-त्मक जीवन व्यतीत करते हैं, अनु-भवी हैं और क्रियात्मक कार्य की कठिनाइयों को जानते हैं। जो जन खुले घुड़सवार हैं, जिन पर उत्तर-दायित्व का भार राई के बराबर भी नहीं है, जो कार्य-क्षेत्र में कूदकर अपनी कोमल काया को कष्ट देना कदापि नहीं चाहते, केवल दूर खड़े तमाशा देखने वाले हैं, बातों के वीर हैं, ऐसे जनों को कोई अधिकार नहीं कि समालोचना का धनुष तान कर सदा वचनों के बाण ही बरसाया करें। आर्य जनों को चाहिए कि वे वाणी को इस कर्म से पवित्र रक्खें।

वाचिक कर्मों में अहङ्कारयुक्त वचन बोलना भी एक दोष है। अभिमानी मनुष्य सदा अपनी विशेषता के ही गीत गाया करता है। दूसरों को तो वह तृण-तुल्य समझता है। समाज में, सभा में, जाति बिरादरी में अपने मान-मद के मस्तक को वह किंचित् भी नहीं झुकाता। अहङ्कार भरे वाक्यों से अभिमानी जन अपने मित्रों के अन्दर भी मनोमालिन्य उत्पन्न कर देता है। अन्त में वह सब को मार्ग के नीचे कांटे और ऐंठे हुए खूंटे की भांति, खटकने लगता है, जिससे पद-पद पर उसका अपमान होने लगता है। अभिमानी को अपमान का दुःख मृत्यु से भी अधिक क्लेश-कारी हुआ करता है। आर्य-धर्मी जनों को, जहां तक बन पड़े, विनीत, नम्र और निरभिमान होना चाहिए।

काया के कर्मों में दान देना, स्वच्छ और शुद्ध रहना तथा सारे सांसारिक व्यवहारों को धर्मपूर्वक निभाना आदि ये सब पुण्य-कर्म हैं। इनका प्रतिदिन अनुशीलन करना आर्य सामाजिक जन का कर्तव्य है। आर्यों को लेनदेन में, बर्ताव-व्यवहार में ऐसे सच्चे और पक्के होना चाहिए कि उनके सत्य की सब में साख हो, उनकी धर्म-धारणा की सर्वत्र धाक हो।

कायिक पाप कर्म और दोष कर्म प्राणियों को पीड़ा देना है, हिंसा करना है, निर्बलों को सताना है, अनर्थ और अन्याय में लिप्त होना है। किसी की वस्तु चुराना और किसी के अधिकार छीनना है। आर्य जनों को इन दुष्कर्मों से बचने के लिए सदा सावधान रहना चाहिये।

आर्य सामाजिक सज्जन को उचित है कि कायिक कर्म को कर्मा-नुसार बनाने के लिए वह वीर, धीर, निर्भय और निडर हो। वह सर्व-धर्म कार्यों में उत्साह दिखलाये। कठिन से भी कठिन काम में कूद पड़ने का साहस करे। अपने जीवन को जोखिम में भी डाल-कर धर्म-मान मर्यादा को न मिटाने दे। कर्त्तव्य-पालन में शीतोष्ण, सुख-दुःख, भूख-प्यास और रात, दिन सब एक ही समान समझे। कायर भाव से अपने धर्म को बट्टा न लगाये, अपने कुल को न लजाये, अपनी जाति को नीचा न दिखाये। सदैव पुरुषार्थी और उद्योगी बना रहे। आलस्य और प्रमाद में कभी न पड़े।

आर्य जनों का कर्त्तव्य है कि वे वर्णाश्रम के कर्मों को, सोलह संस्कारों को, मातृ-कर्तव्य को और पितृ-कर्त्तव्य को पालें, पुत्रपन के धर्म को पूर्ण रीति से निभायें, पति पत्नी के कर्तव्यों को पवित्रता से पालें। बन्धु भावना मे मैत्री कर्म में और जातीय जीवन में दोष और न आने दें पारि-वारिक जीवन उच्च हो, आदर्श हो, और सर्वाङ्ग सुन्दर हो, जिससे अन्य धर्मावलम्बी भी आप ही आप आर्य धर्म में खिंचे चले आयें।

पांचवें व्रतियों को उचित है कि अपने व्यापार में, अपनी जमींदारी में और नौकरी चाकरी में सच्चे रहें और किसी पर अन्याय न करें, किसी के साथ पक्षपात से न वर्तें। चापलूसी में न फँसें। न किसी को घूस दें और न किसी से लें। आर्य जनों का आचार ऐसा हो कि लोग उसका प्रमाण दिया करें। वे ऐसे सत्यवादी और विश्वासपात्र हों कि अन्य जन उनको मध्यस्थ मानने में अपना मान मानें। आर्यव्रती स्पष्ट वक्ता, प्रण का पूरा और यथानियम-कारी अवश्य हो। वह दया, करुणा और सहानुभूति प्रदर्शित करे। अति-थियों और आगन्तुकों का आदरा-तिथ्य करे, अधिकारियों को दान, मान और दक्षिणा आदि से पूजे।

❀ गायत्री - मन्त्र ❀

ले०—स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती

सर्ववेदसारभूताः गायत्र्यास्तु समर्चनम्।

(बृज बहार)

चारों वेदों का सार गायत्री मन्त्र जपा कर।

योगी जन ध्यान लगाते, वह मेधा बुद्धि पाते।
वह प्रभु बुद्धि का भण्डार, गायत्री मन्त्र जपाकर ॥१॥
सुरदुर्लभ मानव चोला, पाया तू ने अनमोल।
इसको मत खोना बेकार, गायत्री मन्त्र जपा कर ॥२॥
वह सारे जग का स्वामी, घट घट में अन्तर्यामी।
उसकी माया अपरम्पार, गायत्री मन्त्र जपाकर ॥३॥
जो जन गायत्री ध्यावे, वह मन इच्छा फल पावे।
उसका हो जाय बेड़ा पार, गायत्री मन्त्र जपा कर ॥४॥
प्रिय जन सज्जन पिता माता, इस जग का रिश्ता नाता।
झूठा इस जग का व्यवहार, गायत्री मन्त्र जपाकर ॥५॥

वेद प्रचार सप्ताह के अन्तर्गत हरिजनो का सम्मान करे

मान्यवर

विनम्र निवेदन है कि सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती जी ने भारत भर की सभी आर्य समाजो के अधिकारियों से अपील की है कि इस वर्ष वेदप्रचार सप्ताह के अन्तर्गत सभी आर्यसमाजो में हरिजनो के सम्मान मे आयोजन किए जाय। इस अवसर पर भारत वर्ष की सामयिक समस्याओ—पजाब के विस्थापितो की समस्या, सती प्रथा, धर्मान्तरण आदि के सबध में भी जन जागरण के कार्य हाथ मे लिये जाय।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा आपको वेदप्रचार सप्ताह के आयोजन के लिए हर प्रकार का सहयोग देने के लिए प्रस्तुत है। सामान्यत वेदप्रचार सप्ताह श्रावणी से जन्माष्टमी तक मनाया जाता है। आप इन तिथियो के अतिरिक्त पहले अथवा बाद में भी वेद सप्ताह का आयोजन कर सकते हैं। सभा के अन्तगत निम्नलिखित महानुभाव वेदप्रचार विभाग मे कार्यरत हैं।—

स्वामी स्वरूपानद जी सरस्वती
महात्मा रामकिशोर जी वैद्य
आचाय हरिदेव जी सि० भूषण
श्री प० सत्यदेव जी स्नातक
श्री प० वेदव्यास जी आय
श्री प० चन्नीलाल जी आय
श्री प० ज्योतिप्रसाद जी आर्य
श्री प० विष्णु दत्त ढोलकवादक
श्री रामशरण दास आय

(वेदप्रचार मन्त्री)

आप सभा कार्यालय मे बुधवार अथवा शनिवार को पधारकर श्री जगदीशलाल जी से मिलकर तिथिया निश्चित कर ल।

इस अवसर पर सभा द्वारा प्रकाशित साहित्य भी अपने सदस्यों में तथा आस पडोस की जे० जे० कालोनियो पुनर्वास कालोनियो पिछडी बस्तियो अथवा देहातो में सभा कार्यालय से केवल लागत मूल्य पर क्रय करके नि शुल्क वितरित कर। सभा की ओर से छोटे छोट टैक्ट तथा सस्ती पुस्तक सुन्दर आवरण में, पर्याप्त मात्रा में प्रकाशित कराई हुई हैं। आप धन दानी महानुभावो के पास धन सग्रह हेतु जाय तो उन्ह इस प्रकार की छोटी पुस्तक अवश्य भट कर। इससे आपको धन सग्रह मे सहयोग मिलेगा तथा सभा को इस तरह से जो धनराशि प्राप्त होगी, उससे और नयी नयी पुस्तक प्रकाशित की जा सकेंगी

मुझे आशा है कि आपका वेदप्रचार कार्य में सभा को सक्रिय सहयोग प्राप्त होगा।

(सूर्यदेव) महामन्त्री

आज का समाज

लेखक—कृष्णपाल शिक्षक आर्य वीरदल दिल्ली

आज सर्वत्र अशान्ति है। ससार के देश आपस में झगड रहे हैं। देश में अशान्ति है। परिवार में अशान्ति है। मनुष्य पथ भ्रष्ट हो रहा है, पिता पुत्र की नहीं बनती है, सास बहू के झगडे हैं, राजनीति का बिगाड है, कगाली के कारण कुछ सतप्त हैं तो कुछ खुशहाली के कारण दुर्व्यसनो के ग्रास बने हुए हैं, घूसखोरी भ्रष्टाचार-पापाचार से सारा समाज दूषित है आचार, विचार सस्कार सब दूषित हो चके हैं।

आज विज्ञान का युग है और सभी कुछ मिल सकता है तो अमरीका रूस इगलैड आदि देशों के समान कोई नहीं। परन्तु वहा के नौजवान (युवक-युवतियां भारत के वनो व आश्रमों व साधु महात्माओं के पास आकर शान्ति की भिक्षा के लिए घम रहे हैं। अन्य आज का नौजवान नींद की लाने की गोलिया खा रहा है हमें सोचना चाहिए कि इस प्रकार के दूषित वातावरण में क्या कर। मानवता की छाती पर दानवता दनदना रही है।

इसी कारण दिन प्रतिदिन मदिरों व समाजो में प्रधान-मन्त्री के झगडे व पुरोहित के साथ रगडे झगडे हैं और इन्ही बातों के मन्दिर मे अन्य व्यक्ति कार्य कर रहे हैं।

आज का मानव अपने आपको अभिमानी घमण्डी अहकारी समझता है इसी कारण ईश्वर को भूल बैठा। परन्तु पहले ऋषि, महर्षि व राजर्षि अपने आपको तप में डालकर त्यागी बन जाते थे तो साधुओं की कुटी व वेश या योगसाधना में लिप्त रहकर ईश्वर का ध्यान करते थे।

परन्तु आज का मानव जब यह कहता है कि विज्ञान का युग है और यह सब सुख प्राप्त कर सकता है। फिर भी दु खी है। वे सतप्त क्यों हैं। पहले दो कार्य थे। १-तप २-त्याग।

अब चार कार्य हैं— १ स्वार्थ, २ लालच, ३-रसना, ४ कामवासना

आज का मानव लोकैषणा, पुत्रषणा वित्तैषणा आदि मे फस रहा है। जबकि स्वामी जी आदेश करते हैं कि तालाब में कमल के समान रहो। नही तो ये मन की चेष्टाएँ आपको समाप्त कर दगी। परन्तु इन्ही लोकैषणा आदि में चाहे आज नौजवान हो चाहे वानप्रस्थी या सन्यासी सभी इन्हीं पाशो में बध गए हैं।

इन सब पाशों को समाप्त करने के लिए आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। इसके लिए योग के आठो अगों का पालन करना चाहिए तभी शारीरिक सुख व आत्मिक शान्ति प्राप्त हो सकती है।

दिल्ली की आर्यसमाजों के अधिकारियों की सेवा में नम्र निवेदन।

मान्यवर,

विनम्र निवेदन है कि आय समाजो का वित्तीय वर्ष ३१ मार्च १९८८ को समाप्त हो गया है। इस सबध में आपको एक परिपत्र दिनाक १९ अप्रैल १९८८ को भेजा गया था परन्तु अभी तक काफी आर्यसमाजों की ओर से इस सबध में कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई है। मुझे विश्वास है कि आपने विधानानुसार आगामी वर्ष के लिए साधारण सभा की बैठक मे अधिकारि आय वीर दल अधिष्ठाता तथा आगामी तीन वर्ष के लए दिल्ली आय प्रतिनिधि सभा के लिए प्रतिनिधियो का निर्वाचन कर लिया होगा। आर्यसमाज की ओर से प्रथम दस सभासदों पर एक और प्रत्येक २० सभासदो पर एक प्रतिनिधि निर्वाचित किया जा सकता है। जिसकी आयु २५ वर्ष से कम न हो और जो पिछले दो वर्षों से आर्य समाज का सभासद रहा हो। आप अविलम्ब निम्नलिखित विवरण तथा देय धनराशि दशाश वेदप्रचार और आर्यसन्देश का वार्षिक शुल्क २५ रुपये सभा कार्यालय में भिजवाने की कृपा करें।

१—एक अप्रैल १९८७ से ३१ मार्च १९८८ तक का वार्षिक विवरण—

(अ) यज्ञ सस्कार, शुद्धियां। अन्तर्जातीय विवाह, दिन के समय साधारण रीति से बिना दहेज कराए गए विवाहों का तथा अन्य समारोहों का विवरण।

(आ) समाज के अधीन चल रही सस्थाओं, विद्यालयो, चिकित्सालय पुस्तकालय, सेवा समिति, आय वीर दल आदि का विवरण।

२—१ अप्रैल १९८७ से ३१ मार्च १९८८ तक का आय-व्यय विवरण।

३—सदस्य सूची निम्नलिखित फार्म के अनुसार स्वय बना लें।—क्रम सख्या, सदस्य का नाम पिता का नाम, पता, वर्ष भर में प्राप्त सदस्यता शुल्क।

४—सदस्यता शुल्क का दशांश, वेदप्रचार राशि और आर्यसन्देश का वार्षिक शुल्क २५/-रुपये अथवा आजीवन सदस्यता शुल्क २५०/-रुपये।

आशा है कि आप समय अनुसार कार्यवाही करके सक्रिय सहयोग प्रदान करेंगे। हमारी हार्दिक इच्छा है कि आपकी आर्यसमाज का विवरण भी सभा की वार्षिक रिपोर्ट में प्रकाशित हो। अत आपसे पुन अनुरोध है कि आप शीघ्र कार्यवाही करें।

(सूर्यदेव) महामन्त्री

यज्ञोपवीत

लेखक—पं० देवव्रत शास्त्री

आर्य-संस्कृति का एक प्रधान चिह्न यज्ञोपवीत अथवा जनेऊ है। आज हिन्दू जाति अपने इस परम पवित्र चिह्न (प्रतीक) को भूल गई है और इसके स्थान पर अधिकतर कण्ठपुच्छ (नैकटाई) का प्रयोग होने लगा है, जो पश्चिमी सभ्यता के प्रभाव से गले में लटकाई जाती है।

वैसे तो चोटी भी आर्य जाति का प्रमुख अंग है, पर यज्ञोपवीत का महत्त्व उससे किसी भी प्रकार कम नहीं कहा जा सकता। इसके दो कारण हैं। पहला यह है कि इसे एक खास दिन पहना जाता है। इसलिए इसका सम्बन्ध समय से है। दूसरा कारण यह है कि इसे पहन लेने के बाद वेद पढ़ने का अधिकार मिल जाता है।

यज्ञोपवीत का अर्थ है यज्ञ के लिए, वेद में बताये हुए कर्म में अधिकारी बनने के लिए जो कन्धे के ऊपर डाला जाये। इसे ब्रह्मसूत्र भी कहते हैं। ब्रह्म का अर्थ है वेद, ज्ञान अथवा ईश्वर। ईश्वर या ज्ञान को पाने के लिए यह सूत्र, डोरा या तागा धारण किया जाता है। इसलिए यह आर्यों का परम-पवित्र चिह्न है। यह शब्द यज् धातु से बना है, जिसके अर्थ हैं देवपूजा, दान और संगतिकरण (मिलाप)। विद्वानों को देव कहते हैं, "विद्वांसो वै देवा" उनका उचित आदर-सत्कार करना। पृथिवी, आकाश, वायु, आग, जल, इन पाँच महाभूतों का सदुपयोग और सब से बड़े महादेव, भगवान् की पूजा देवपूजा कहाती है। निर्धनों को धन-दान, अनपढ़ों को विद्या-दान असली दान है। आपस में ऊँच-नीच का भाव न रखकर मिलाप या एकता रखना संगतिकरण है। समाज, यज्ञ के इन तीन अंगों को अपनाये बिना सुचारु रूप से कभी चल नहीं सकता। यज्ञ की इस महान् भावना को पूरा करने की परम आवश्यकता है जो यज्ञोपवीत पहने बिना पूर्ण नहीं हो सकती। यज्ञ के इन तीनों अंगों की सूचना यज्ञोपवीत के तीन तार दे रहे हैं, अर्थात् मनुष्य के पैदा होते ही उस पर तीन ऋणों का भार पड़ जाता है, जिन्हें चुकाना उसका कर्त्तव्य है। ये तीन ऋण हैं—ऋषि-ऋण, देव-ऋण, पितृ-ऋण। विद्या पढ़ने से ऋषि-ऋण चुकता है और माता-पिता या बड़ों की सेवा से देव-ऋण चुकता है। इसके साथ ही यदि विज्ञानकाण्ड को ज्ञानकाण्ड के भीतर मान लें तो वेद के तीन काण्ड हो जाते हैं—ज्ञान, कर्म और उपासना। यज्ञोपवीत के ये तीन तार इन तीनों काण्डों को मानव-जीवन में धारण करने का संकेत देते हैं। ज्ञान और कर्म में संतुलन किये बिना मनुष्य का जीवन सर्वांगपूर्ण नहीं होता।

यज्ञोपवीत की बनावट—यहां यज्ञोपवीत की बनावट पर भी विचार कर लेना चाहिए, क्योंकि इसके बिना हमारा यह विषय अधूरा रह जाएगा। जनेऊ ९६ चौओं का बनाया जाता है।

केवल ९६ चौए ही क्यों? इस-पर विद्वानों के विचार इस प्रकार हैं—८ पहर, ३ काल, २ दिन-रात, ७ वार, १५ तिथियां, १२ मास, २७ नक्षत्र, १२ राशियां, ६ ऋतुएं, ४ युग, कुल मिलाकर ९६ हुए। शास्त्रीय विचार इस प्रकार है—

४ वेद—ऋग्, यजु, साम, अथर्व।

४ उपवेद—आयुर्वेद, गान्धर्ववेद, शिल्पवेद।

६ अंग—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द, ज्योतिष।

६ दर्शन—न्याय, योग, सांख्य, वैशेषिक, पूर्वमीमांसा, उत्तरमीमांसा (वेदान्त)।

३ सूत्र—गृह्यसूत्र, श्रौतसूत्र, धर्म-सूत्र।

९ आरण्यक—ब्राह्मण, उपनिषद्, वेदान्त, पुराण, परिशिष्ट, प्रयोग, पद्धति, अनुक्रमणी, पद-पाठ।

६४ कलाएँ—कुल ९६ हुए।

इसके अतिरिक्त शारीरिक दृष्टि से विचार करने पर मालूम होता है कि प्रत्येक व्यक्ति के शरीर का परिमाण ९६ अंगुल का होता है।

जनेऊ को तिगुना करके ऊपर को बटा जाता है। कपास के सूत्र का ब्राह्मण, सन के सूत का क्षत्रिय, भेड़ की ऊन के सूत का वैश्य का जनेऊ होता है। पर आजकल सब कपास का ही पहनते हैं। इसके तीन सूत्रों को तिगुना करके बटते हैं। वैसे इसमें नौ तार होते हैं। ये मामूली तार न होकर नौ देवताओं के नौ स्थान हैं—१ ओंकार, २ अग्नि, ३ अनन्त, ४ चन्द्रमा, ५ पितृगण, ६. प्रजापति, ७ वायु, ८ सूर्य, ९. सर्व देवता।

हमारे शरीर में भी ९ द्वार हैं। "अष्टाचक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या" वेद में भी इसे ९ द्वारों वाली नगरी कहा गया है—२ आंखें, २ कान, २ नाक, १ मुख, २, पायु और उपस्थ (मल-मूत्र के स्थान)।

ब्रह्म ग्रन्थि (ब्रह्म-गांठ)—ब्रह्म-ग्रन्थि का अर्थ है, ज्ञान का बोध कराने वाली गांठ। ब्रह्म का अर्थ ईश्वर भी है जो मानव-मात्र का चरम लक्ष्य है। उसी परब्रह्म को याद कराने के लिए यह गांठ बाँधी जाती है। ब्रह्मसूत्र (जनेऊ) के दोनों तारों से एक में दो और दूसरे में एक गांठ लगाई जाती है। फिर इन दोनों को मिलाकर एक तार बनाकर ऊपर ड्योढ़ी गांठ दी जाती है, जिसे प्रणव कहते हैं। "तस्य वाचक प्रणव।" (योगदर्शन)—ओ३म् को ही प्रणव, जिससे भगवान् की भली-भांति स्तुति की जाए, कहते हैं। अतः प्रणव ओ३म् के जप द्वारा ईश्वर, ब्रह्म को प्राप्त कराने का इस गांठ द्वारा कैसा सुन्दर उपदेश या संदेश दिया गया है। जनेऊ के धागे ब्रह्म-ग्रन्थि द्वारा आपस में जुड़े हुए होते हैं, जो यह शिक्षा देते हैं कि "ज्ञान, कर्म और उपासना तीनों को साथ-साथ जीवन में अपनाओ।"

स्त्रियां भी यज्ञोपवीत पहनें—

प्रायः लोगों के मन में यह विचार घर किए हुए हैं कि स्त्रियां यज्ञोपवीत धारण करने का अधिकार नहीं रखतीं। पर यह वैदिक मर्यादा नहीं है। 'प्रावृतां यज्ञोपवीतिनीम्' (गो० गृ० २।१) विवाह के समय कन्या को वस्त्र से ढककर यज्ञोपवीत पहनाए। यमसंहिता में लिखा है, "पुराकल्पे तु नारीणां मौञ्जी बन्धनमिष्यते। अध्यापन च वेदानां सावित्रीवाचनं तथा।।"

प्राचीन काल में स्त्रियां, यज्ञोपवीत, वेदपठन और गायत्री का जाप किया करती थीं। बाणभट्ट द्वारा लिखित ग्रन्थ 'कादम्बरी' में भी महाश्वेता का वर्णन करते हुए उसे यज्ञोपवीत धारण करने वाली बताया है।

वैदिक काल में आर्य-जाति में स्त्रियों का दर्जा पुरुषों से कम किसी प्रकार भी नहीं माना जाता था। "स्त्रीशूद्रौ नाधीयाताम्" स्त्री और शूद्र वेद न पढ़ें अथवा "ढोल गवार शूद्र पशु, नारी। ये सब ताड़न के अधिकारी" आदि समाज को अध-पतन के गड्ढे में ले जाने वाली उक्तियां बाद में बनीं। उपनिषद् में जनक की सभा में गार्गी का याज्ञ-वल्क्य से शास्त्रार्थ, गार्गी का ब्रह्म-वादिनी होना, महाभाष्य में 'आपि-शलम् अधीते' आपिशला ब्राह्मणी, 'काशकृत्स्नम् अधीते' काशकृत्स्ना ब्राह्मणी, आपिशल-व्याकरण और काशकृत्स्न-मीमांसा की विदुषियों का वर्णन और वेद में श्रद्धा, कामायनी, लोपा, घोषा आदि सूक्त ऋषिकाओं का उल्लेख इस सत्य को सिद्ध करता है कि स्त्रियों को पुरुषों के समान वेद पढ़ने-पढ़ाने का अधिकार सहज में प्राप्त था। इसलिए "समान ब्रह्मचर्यम्" (आश्वलायन श्रौतसूत्र) यह वचन मान्य है। अत इन सब प्रमाणों से यह स्पष्ट है कि स्त्रियों को उपनयन, यज्ञोपवीत का पुरुषों के समान ही अधिकार प्राप्त है।

उपनयन-संस्कार—

उप का अर्थ है समीप। नयन का अर्थ है, ले जाना। प्राचीन काल में जब माता-पिता अपने पुत्र-पुत्रियों को गुरुकुल में प्रविष्ट कराते थे, आचार्य के पास ले जाते थे तो आचार्य उनका पहले उपनयन-संस्कार करता था। जो अभिप्राय आज स्कूल जाने से समझा जाता है, प्राचीन समय में वही उपनयन से माना जाता था। आचार्य शिष्य को अपने मन में स्थान देकर उसे विद्या पढ़ाना शुरू करता था। विद्या, बल और सदाचार, जनेऊ के ये तीन तार इन तीन गुणों की ओर संकेत करते हैं।

क्या पापी सुखी और धर्मात्मा दुखी हैं

लेखक—स्वामी यज्ञपाल आर्यबन्धु,
आर्य निवास, चन्द्र नगर, मुरादाबाद—२४४०३२

★

प्राय. लोग यह कहा करते हैं कि जब सुख-दुःख हमें अपने कर्मों के फलस्वरूप ही मिलते हैं, तो फिर पापी सुखी और धर्मात्मा जन दु.खी क्यों रहते हैं ? पापी फलते-फूलते और साधन-सम्पन्न दिखाई देते हैं विपरीत इसके धर्मात्मा जन दु.खी अभावग्रस्त दिखाई देते हैं। ऐसा क्यों है ? प्रश्न अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है और सरल भी नहीं प्रतीत होता। किन्तु यदि थोड़ी गहराई में उतर कर सोचें तो प्रश्न इतना जटिल नहीं लगेगा।

हमारी तुच्छ मति में यह धारणा ही भ्रान्त है कि पापी जन सुखी और धर्मात्मा दुःखी हैं। क्योंकि सुख-दुःख तो मन के ही विकल्प हैं। हमारा विश्वास है कि धर्मात्मा दुःख को दुःख मानता ही नहीं। वह सुख और दुःख में सदा एकरस रहता है। दूसरे यदि कोई व्यक्ति धर्मात्मा है, तो निश्चय ही वह सतोषी भी होगा और विवेकी भी। ऐसे सतोषी और विवेकी व्यक्ति से यह आशा की ही नहीं जा सकती कि वह किसी भी परिस्थिति में स्वय को दुःखी महसूस करे। यदि उसे दुःखों और कष्टों का सामना करना भी पड़ता है तो भी वह उन्हें अपने किन्हीं पूर्व कर्मों का फल समझ कर धैर्य पूर्वक सहन कर लेता है। वह कष्टों एव अभावों में भी दुःख नहीं मानता। विपरीत इसके पापी व्यक्ति को यदि ससार भर के समस्त सुख-साधन उपलब्ध करा भी दिये जावें तो भी उसे सतोष नहीं होगा। उसकी तृष्णा कभी शान्त नहीं हो सकती। और यदि उसकी तृष्णा शान्त नहीं, तो वह सुखी कैसे माना जा सकता है ? 'तृष्णारतिर्भवं दुःखम्' के अनुसार तृष्णा में रत रहना दु.खी रहना है। जबकि 'तृष्णाक्षय. स्वर्गपदम्' के अनुसार तृष्णा के क्षय होने से स्वर्गपद की प्राप्ति होती है। ऐसी स्थिति में यह कैसे मान लिया जाये कि तृष्णा में रत रहने वाला पापी व्यक्ति सुखी हो सकता है।

यहा यह भी जान लेना आवश्यक है कि जिसके अन्त में दुःख है, वह वस्तुत सुख नहीं, दुःख ही है और जिसके अन्त में सुख है, वह दुःख भी दुःख न होकर सुख ही है। पापी जो कर्म करता है, वे ऐसे होते हैं कि जिन का अन्त दुःखदायी होता है। विपरीत इसके पुण्यात्मा जो पुण्य कमाता है, वे प्रारम्भ में दुःखदायी अवश्य लगते हैं, किन्तु उसका अन्त सदैव सुखमय होता है। इसलिए यह कहना कि पापी सुखी और पुण्यात्मा दुःखी रहते हैं, यथार्थ नहीं। एक भौतिक सुख-साधनों के रहते हुए भी अपनी मन स्थिति के कारण दुःखी रहता है और दूसरा है जो अभावों में भी सुख की अनुभूति कर रहा है।

पापी जो फलता-फूलता और सुखी दिखाई देता है, वह अपने उन पाप कर्मों के फल से नहीं, क्योंकि उन कर्मों का फल मिलना तो अभी शेष है। अत दिखने वाला सुख उसके कर्मफल में नहीं कर्ममात्र से प्राप्त हो रहा है। पाप की कमाई इस समय तो सुखकारक प्रतीत होती है, किन्तु उसका अन्त सदैव दुःखदायी होता है। कहा गया है कि पाप की कमाई दस दिन से अधिक नहीं चलती अर्थात् वह थोड़े दिन तक ही रह पाती है, अधिक दिनों तक नहीं। निम्न श्लोक इसमें प्रमाण है—

अन्यायेनागता लक्ष्मी
खद्योत इव दीप्यते।
क्षण प्रकाश्य वस्तूनि
निर्वाणे केवल तम.॥

अर्थात् अन्याय से उपार्जित धन जुगनू की भांति थोड़ी देर तक ही चमकता है परन्तु थोड़ी देर प्रकाश कर फिर अन्धेरा हो जाता है। पापी के फलने-फूलने और सुखी रहने और फिर अन्त में समूल नष्ट हो जाने का अति सुन्दर वर्णन मनु जी के निम्न श्लोक में मिलता है—

"अधर्मेणैधते तावत्
ततो भद्राणि पश्यति।
ततः सपत्नान् जयति
समूलस्तु विनश्यति॥" (४।१४)

अर्थात् पाप-अधर्म से पहले फलता-फूलता है, फिर सब ओर कल्याण देखता है, फिर शत्रुओं पर विजय प्राप्त कर लेता है और अन्त में समूल नष्ट हो जाता है। फिर इतना ही नहीं मनु जी तो यहां तक कहते हैं कि—

'नाधर्मश्चरितः लोके
सद्य फलति गौरिव।
शनैरावर्तमानस्तु
कर्तुर्मूलानि कृन्तति॥'

अर्थात् मनुष्य निश्चय करके जाने कि इस ससार में जैसे गाय की सेवा का फल दूध आदि शीघ्र नहीं होता वैसे ही किए हुए अधर्म का फल भी शीघ्र नहीं होता किन्तु धीरे-धीरे अधर्मकर्ता के सुखों को रोकता हुआ सुख के मूलों को काट देता है, पश्चात् अधर्मी दु.ख ही दुःख भोगता है।

देखें—सस्कारविधि गृहाश्रम प्रकरण

इस विषय में आचार्य दीनानाथ जी सिद्धान्तालंकार यथार्थ निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए लिखत हैं कि—'पापी के सुख-ऐश्वर्य और धर्मात्मा के दुःख-कष्ट को देख तात्कालिक परिणाम नहीं निकालना चाहिए, किन्तु दूरदृष्टि से देखना चाहिए। इन बाह्य सुखी व्यक्तियों के जीवन की अन्तरग पड़ताल से पता चलता है कि उनके हृदय में दुःख, चिन्ता, क्लेश, उधेड़-बुन की कितनी प्रसुप्त और गुह्य ज्वालाएं जल रही हैं। इसके विपरीत बाहर से दु.खी दीखने वाले धर्मात्माओं के अन्त-हृदय में कितना आत्म-सतोष, धैर्य, और सर्वाधिक अविचल ईश्वरार्पण स्रोत बह रहे हैं।'

(द्रष्टव्य—अध्यात्म योग, जप-ज्ञान दिसम्बर, ७३ पृष्ठ ३६)

धर्मात्मा जनों को धर्मार्जन की ही अधिक चिन्ता होती है। भले ही धर्म के मार्ग में कितने ही कष्ट और दु.ख क्यों न आयें। भौतिक सुख साधन तो क्षणिक सुख देते हैं। पारलौकिक सुखों की उपलब्धि उनसे कदापि नहीं हो सकती है। किन्तु धार्मिक जन तो इस लोक की अपेक्षा परलोक की अधिक चिन्ता करते हैं। परलोक संवारने के लिए धर्म संग्रह अत्यन्त आवश्यक है और धर्मसंग्रह के मार्ग में जो कष्ट आते हैं, धार्मिक जन उनको कष्ट समझते ही नहीं, क्योंकि उन्हें तो वे स्वेच्छा से आमन्त्रित करते हैं, और स्वयम् आमंत्रित किये गये कष्टों को कोई भी कष्ट नहीं मानता। कल्पना करें कि एक व्यक्ति अभावग्रस्त रहने से भूखा रहता है और दूसरा स्वेच्छा से उपवास की दृष्टि से भूखा रह रहा है। एक भूखा रहने में कष्ट अनुभव कर रहा है किन्तु दूसरा नहीं। ऐसा क्यों है, निश्चय ही मनः स्थिति के कारण। हम देखते हैं कि एक श्रमिक भी श्रम करता है और एक कसरत करने वाला पहलवान भी। किन्तु उस श्रम का दोनों पर भिन्न-भिन्न प्रभाव पड़ा करता है। श्रमिक क्लाति और थकान अनुभव करता है जबकि कसरत करने वाला पहलवान स्फूर्ति और उत्साह की अनुभूति करता है। ऐसा क्यों ? इसलिए न कि एक स्वेच्छा से श्रम कर रहा है और दूसरा मजबूरी से। इसी कारण दोनों की मानसिक स्थिति भी भिन्न-भिन्न है। यही अन्तर एक धर्मात्मा और दुराचारी की अनुभूति में भी समझना चाहिए धर्मात्मा कष्ट और दुःख उठाते हुए भी दु.खी नहीं होता जबकि पापी सुख-सम्पत्ति में भी चैन नहीं पाता। अत यह कहना यथार्थ नहीं कि धर्मात्मा जन दु.खी और पापी सुखी हैं। महामुनि चाणक्य सुख का मूल ही धर्म बताते हैं।

यथा—सुखस्य मूलं धर्म.।
अर्थात् सुख का मूल धर्म है। जब सुख का मूल ही धर्म है तो फिर यह कैसे हो सकता है कि धर्मात्मा दुःखी रहे और अधर्मी सुखी ? महर्षि दयानन्द की सुस्पष्ट मान्यता है कि—'धर्म करने वालों को सुख और अधर्मी दुष्टों को दुःख सदा प्राप्त होते हैं।' इसलिए जो कोई दुःख को छोड़ना और सुख को प्राप्त करना चाहे, वह अधर्म को छोड़ धर्म का सेवन करे। फिर चाहे धर्म के मार्ग में चलने से कितने ही कष्टों और दुःखों का सामना भी क्यों न करना पड़े।

यह भी ध्यान रहे कि

'अनित्यानि शरीराणि
विभवो नैव शाश्वत।
नित्य सन्निहितो मृत्युः
कर्तव्यो धर्मसंग्रहः॥'

अर्थात् शरीर अनित्य है, वैभव भी शाश्वत नहीं, मृत्यु नित सिरहाने

(शेष पृष्ठ ११ पर)

(पृष्ठ १० का शेष)

क्या पापी सुखी और धर्मात्मा दुखी हैं।

खडी रहती है, इस लिए धर्म संग्रह ही कर्त्तव्य है। क्योंकि—

नामुत्र हि सहायार्थं
पिता माता च तिष्ठत.।
न पुत्रदारा न ज्ञातिः
धर्मस्तिष्ठति केवल ॥

अर्थात् परलोक मे माता, पिता, पुत्र, स्त्री तथा जाति कोई भी सहायी नहीं होते, किन्तु एक धर्म ही सहायक होता है। और

मृत शरीरमुत्सृज्य
काष्ठलोष्ठसम क्षितौ।
विमुखा बान्धवा
यान्ति धर्मस्तमनुगच्छति॥

अर्थात् मृत शरीर को मिट्टी के ढेले के समान फेंक कर एव पीठ फेर कर बन्धुजन विमुख होकर चले जाते हैं, कोई उसके साथ जाने वाला नहीं होता, किन्तु एक धर्म ही उसका संगी होता है। इस लिए—

तस्माद् धर्मं सहायार्थं
नित्य सञ्चिनुयाच्छनै।
धर्मेण हि सहायेन
तमस्तरति दुस्तरम् ॥

अर्थात् परलोक में सुख और जन्म के सहायार्थ नित्य धर्म का संचय धीरे-धीरे करता जाये क्योंकि धर्म ही के सहाय से बडे-बडे दु.खसागर को जीव तर सकता है। फिर ऐसे धर्म के मार्ग में कोई कष्ट, क्लेश अभाव अथवा दु.ख भी आ जाये तो उसकी क्या चिन्ता करनी?

आज संसार दुखों का घर बना हुआ है, इसका मुख्य कारण है, धर्म का परित्याग। यदि दु.खों से बचना है तो कष्टों-क्लेशों की चिन्ता किये बिना धर्म के मार्ग पर निष्ठा और दृढ़ता के साथ आरूढ़ होना होगा तभी कल्याण है, अन्यथा नहीं। ●

कानपुर में युवतियां वेश्यालय में बरामद

कानपुर, नारी सेवा संस्थान व केन्द्रीय आर्य सभा के प्रधान श्री देवीदास आर्य ने यहां मूल वेश्यालय से दो अपहृत युवतियों को बरामद कर उनके संरक्षकों को दे दिया। इनमें एक लडकी १७ वर्षीया कु० सोता नेपाली है। दूसरी कु० साजदा (१५ वर्षीय) चौबीस परगना (प० बंगाल) की है। इन दोनों को बुर्दा-फरोश धोखा देकर अपहृत कर वेश्यालय में बेच गये थे जहां इनसे अवैध धधा कराकर हजारों रुपये पैदा किए गए। इन युवतियों ने बताया उनसे मशीन की भांति प्रतिदिन पेशा कराया जाता था।

श्री आर्य ने बेबा झाबर मुहल्ले की एक १७ वर्षीय युवती कु० सध्या को कर्नलगंज पुलिस की सहायता से शरीफ उलादीन के कब्जे से बरामद किया। मगर अपराधी भागने में सफल हो गया। अपराधी ने सध्या के भाई को मित्र बनाया हुआ था।

मंत्री नारी सेवा संस्थान
कानपुर

आर्यसन्देश पढ़ें, पढ़ायें

आर्य जगत के समाचारों व उपयोगी लेखों अध्यात्म विवेचनो से युक्त, सामयिक चेतावनियों से जूझने की योजना देने वाले साप्ताहिक पत्र आर्यसन्देश के ग्राहक बनिए और बनाइए। साथ ही वर्ष में चार भव्य विशेषांक प्राप्त कीजिए। वार्षिक शुल्क केवल २५ रुपये। आजीवन २५० रुपये मात्र।

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R N No. 32387/77 Post in N.D P.S O on 27, 28-7-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 132
दिल्ली पोस्टल रजि० नं० डी० (सी०) ७५१ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३२

पावमानी गीत माला

(१)

ओ३म् इम मे वरुणा श्रुधी हवमद्या च मृळय ।
त्वामवस्युरा चके स्वाहा ॥ इद वरुणाय—इद न मम ॥७॥

हे नाथ दौड कर आ जाओ, अरियों से हमें बचा जाओ ।
प्रभु आज सुनो तुम सुनो अभो, सुनकर पुकार तुम आ जाओ ॥

हे वरुण तुम्हें हमने वरण किया
यह जग तुमने आवरण किया
प्रभु तुम्हें प्रसन्न बनाने को
हम ने सद्गुण आचरण किया ।

आचरण देख कर दया करो, दुख दैन्य दूर करते आओ ।
प्रभु आज सुनो तुम सुनो अभी, सुनकर पुकार तुम आ जाओ ॥

दुःख दूर तुम्हीं कर सकते हो
सुख पूर्ण तुम्हीं कर सकते हो
निज कृपा करों के करतब से
तुम नाथ त्राण कर सकते हो ।

कर वरण किया शुभगुण धारण, व्यापक चरण बढाते आओ ।
प्रभु आज सुनो तुम सुनो अभो, सुनकर पुकार तुम आ जाओ ॥

यह टेर हमारी सुन लोगे
तो पूर्ण आश भो कर दोगे
हम इसीलिये आहुति देते
होकर प्रसन्न यह ले लोगे ।

शिव सुनो सुनो हे नाथ सुनो, सरक्षण किये चले आओ ।
प्रभु आज सुनो तुम सुनो अभी, सुन कर पुकार तुम आ जाओ ॥

(२)

ओ३म् तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदा शास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेळमानो वरुणेह बोध्युरुशंस मा न आयुः प्रमोषी स्वाहा ॥
इद वरुणाय इदन्न मम ॥८॥

वन्दना जहाँ यजमान करें, वे सदन सदा द्युतिमान बनें ।
वे विनय शील शुभ कर्म करें, तो यज्ञनिष्ठ यजमान बनें ॥

ले कर शुभ कर्म सत्य वाणी
आये है शरण विनत प्राणी
निज यज्ञ आचरण के द्वारा
कर रहे कामना कल्याणी ।

सत्कर्म प्रणाली आ जाये, हम कर्म वीर विद्वान् बनें ।
वे विनय शील शुभ कर्म करें, तो यज्ञनिष्ठ यजमान बन ॥

अनसुना नहीं हो माँग यही
बन जाय न जीवन स्वांग कहीं
आओ प्रभु सन्मार्ग दिखाओ
आ जाय दुरित की आग नहीं ।

दे बोध हमें सम्बोध करें, यह दास सदा गतिमान बनें ।
वे विनय शील शुभ कर्म करें, तो यज्ञनिष्ठ यजमान बनें ॥

सर्वत्र व्याप्त हे वरुणोदय
हो हमें प्राप्त प्रभु सदा सदय
हम असमय नष्ट न हो जायें
सम्पूर्ण मिले जय और विजय

आचरण शुभ्र की आहुति लो, ये जीवन विमल विहान बनें ।
वे विनय शील शुभ कर्म करें, तो यज्ञनिष्ठ यजमान बनें ॥

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली नं० १७ कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित । रजि० नं० डी० (सी०) ७५१

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ४२ | रविवार ७ अगस्त १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | श्रावण २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

आर्यसमाज शालीमार बाग मे

राष्ट्रभृत महायज्ञ एवं वेदकथा सम्पन्न

शूद्र राष्ट्र को गति प्रदान करते हैं-स्वामी दीक्षानन्द

राष्ट्र के मूलाधार है——भूभाग, जन और संस्कृति——डा० धर्मपाल

३१ जुलाई १९८८, दिल्ली। 'वर्णाश्रम व्यवस्था राष्ट्र को सुदृढ़ आधार प्रदान करती है। ब्राह्मण ज्ञान, विवेक, शिक्षा, धर्माचरण प्रदान करता है, वह शर्मा है। क्षत्रिय राष्ट्र की रक्षा करता है। वह वर्मा है। वह वर्म है। वह राष्ट्र के लिए ढाल है। वह राष्ट्र के लिए कवच है। वैश्य मर्मा है। वह सम्पदा और समृद्धि का स्वामी है। उसका राष्ट्र के संरक्षण में महत्त्व-पूर्ण योगदान है। वह राष्ट्र को 'स्थिति' प्रदान करता है। राष्ट्र को सुदृढ आधार भित्ति प्रदान करता है। शूद्र साक्षात् धर्मा है। वह धर्म है। वह कर्त्तव्य है। वह गति है। शूद्र चलता है, राष्ट्र चलता है। शूद्र ठहरता है, राष्ट्र ठहरता है। शूद्र सोता है, राष्ट्र सोता है। शूद्र राष्ट्र को गति प्रदान करता है। शूद्र चरण है। गति के लिए चरण परमावश्यक है। चरण है, गति है। चरण नहीं है, गति नहीं है। ये चारों वर्ण राष्ट्र के मूलाधार हैं। कोई भी एक अपना कार्य न करे राष्ट्र खण्डित हो जाएगा। चारों वर्णों को अपना अपना कार्य करना चाहिए। ब्राह्मण मुख है, क्षत्रिय कर हैं, वैश्य पेट है और शूद्र चरण है। सभी का अपना अपना महत्त्व है। कोई बडा-छोटा नहीं है। सभी समान हैं। एक मशीनरी में सभी का समान महत्त्व है। सभी अपना अपना काम करते हैं, तो काम सही होता है। एक रूठ कर बैठ जाए तो कार्य नही होगा। मनुष्य परमात्मा की श्रेष्ठतम कृति है। मनुष्यों का चार वर्णों में विभाजन जन्म के आधार पर नहीं है, बल्कि गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार है। 'चतुर्वर्णा मया सृष्टा. गुणकर्म-विभागश.।' भगवान कृष्ण ने गीता में बहुत ही सुन्दर कहा है। वर्णों को बडा-छोटा, सम्मान्य-त्याज्य, पूज्य-अस्पृश्य कहना मूर्खता है। अपने कर्मों के आधार पर वर्ण को ग्रहण किया जाता है। राष्ट्र के लिए सभी वर्णों के लोगों के लिए अनिवार्य है कि वे अपनी वृत्ति का निष्ठा पूर्वक पालन करें।

ये विचार स्वामी दीक्षानन्द जी सरस्वती ने आर्यसमाज बी-एन-पूर्वी, शालीमार बाग द्वारा आयोजित राष्ट्रभृत् महायज्ञ की पूर्णाहुति के अवसर पर कहे। राष्ट्रभृत् महायज्ञ का आयोजन २५ जुलाई से ३१ जुलाई १९८८ तक प्रात ६ से ८ तक किया गया था। स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती की अध्यक्षता मे दयानन्द वेद विद्यालय गौतम नगर के ब्रह्मचारियों ने वेद पाठ किया। आर्यसमाज के पुरोहित प० भोलानाथ शास्त्री ने यज्ञादि व्यवस्था तथा पौरोहित्य कार्य के सम्पादन मे सहयोग दिया। इस महायज्ञ का संयोजन डा० महेश विद्यालंकार ने किया। नागरिकों की सुविधा को देखते हुए सारी व्यवस्था शहीद ऊधमसिंह कम्बोज धर्मशाला में की गयी थी। आर्यसमाज के अधिकारियों श्री ओ३मृदत्त भारद्वाज, श्री देवराज कालरा, श्री भूदेव शर्मा श्रीमती भगवती ओबराय, श्रीमती सविता गोयल, श्रीमती मनोरमा, डा० ओमप्रकाश मान और श्रीमती सचदेवा ने इस पुनीत कार्य में निष्ठा पूर्वक सहयोग दिया। धर्मशाला के अधिकारियों—श्री हरदयालसिंह कमल, डा० जियालाल कम्बोज और श्री सेठ कर्त्ताराम ने भी सक्रिय सहयोग प्रदान किया।

राष्ट्रभृत् महायज्ञ की पूर्णाहुति के अवसर पर आर्यसंदेश के यशस्वी सम्पादक प० यशपाल सुधांशु ने अपने व्याख्यान मे गृहस्थ धर्म की महत्ता को रेखांकित किया। उन्होने बताया कि तीनों आश्रम-ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और सन्यास, गृहस्थ पर आश्रित हैं। गृहस्थ का दर्जा बहुत ऊँचा है। इसीलिए गृहस्थ की जिम्मेदारी भी बहुत बडी है। ब्रह्मचर्य भी चर्या पर आश्रित है, अत घूमता है। सन्यास भी परिव्रजन पर आश्रित है। वह परिव्राजक है। वह परिव्राट् है। वह भी घूमता है। धर्म की रक्षा घूमने से है। पृथ्वी घूमती है। नक्षत्र घूमते हैं। सब एक व्यवस्था में घूमते हैं। एक केन्द्र पर आधृत हैं। गृहस्थ केन्द्र है। ब्रह्मचारी गृहस्थ की ओर उन्मुख होता है। वानप्रस्थी और सन्यासी गृहस्थ को सन्मार्ग की ओर उन्मुख करते हैं, नियन्त्रित करते हैं, सुयन्त्रित करते हैं। अत गृहस्थ बहुत बडा आश्रम है। गृहस्थ के दो पहिए हैं—पुरुष और स्त्री, पति और पत्नी। उन दोनों का परस्पर सौमनस्य अनिवार्य है। राम और सीता—युगल को हम याद करते हैं। एक वृक्ष है, एक लता है। दोनों के मिलन से अपूर्व सौन्दर्य की सृष्टि होती है। कोप भवन घर से दूर बनाओ, घर में नहीं। विचार भिन्नता होनी चाहिए, पर एक दूसरे को संयमित, नियन्त्रित, अभियन्त्रित करने के लिए, विभाजन के लिए नहीं। सभी को मिलकर रहना चाहिए।

इस अवसर पर दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने कहा कि इस राष्ट्रभृत् महायज्ञ के माध्यम से स्वामी दीक्षानन्द जी महाराज ने राष्ट्र के उत्थान और कल्याण की बात कही है। हमें राष्ट्र रक्षा के लिए प्रेरणा दी है। हमें दया, ममता, करुणा, सेवा, बुद्धि, ज्ञान, दान, तप आदि को सुसमृद्ध, करने और व्यवहार में लाने की प्रेरणा दी है। राष्ट्र के तीन मुख्य तत्त्व हैं—भूभाग, जन और संस्कृति। भूभाग की रक्षा करना हमारा कर्त्तव्य है। बिना पृथ्वी के राष्ट्र नहीं होता। पृथ्वी ही विश्वम्भरा है। उसमें सभी कुछ है जो हमें चाहिए। पृथ्वी मा है जो हमारी आवश्यकताओं को संभरित करती है। हमारा कर्त्तव्य है कि हम उसकी रक्षा करें। हम उस पर बलिदान हो जायें। चारों वर्ण उसकी रक्षा करे। दूसरा तत्त्व 'जन' है। हमारा कर्तव्य है कि हम चरित्रवान बने। हम सभी के लिए आदर्श हों। हम ज्ञानी, दानी, तपस्वी हों। हमारे अन्दर बुद्धि, बल और तेज हो। हम लोक सेवा के लिए अपने आपको अर्पित कर दें। हम अपने तक सीमित न रहें। हम सब के लिए हों। संसार हमारा अनुसरण करें—

एतद्देशप्रसूतस्य
सकाशादग्रजन्मन,
स्वस्व चरित्र शिक्षेरन्
पृथिव्या सर्वमानवा।

राष्ट्र का तीसरा आधार संस्कृति है। हमें अपनी संस्कृति की रक्षा करनी है। हमें धर्माचरण करना है।

(शेष पृष्ठ १२ पर)

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

आर्यसमाज का छठा नियम

संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

लेखक—स्वामी सत्यानन्द जी महाराज

"संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।"

इस—आर्यसमाज का मुख्योद्देश्य—इसकी स्थापना का प्रधान—वास्तविक—प्रयोजन या लक्ष्य संसार—जनता—का उपकार करना है। और यह उपकार तीन प्रकार का है—संसार की शारीरिक उन्नति करना, आत्मिक उन्नति करना, और सामाजिक उन्नति करना। इस नियम में आत्मिक उन्नति के अनन्तर सामाजिक उन्नति इसलिए रक्खी गई है कि आत्मा की उन्नति के बिना समाज की उन्नति कदापि नहीं हो सकती।

इस छठे व्रत के दीक्षितों को मन में विचारना चाहिए कि यह जगत् परस्पर उपकार के बन्धन मे बधा हुआ है। एक लोक अपने आकर्षण से दूसरे लोक को थाम रहा है—धारण कर रहा है। प्रत्येक लोक का अस्तित्व किसी दूसरी वस्तु के लिए है। सूर्य का होना जो कुछ उसके अपने आपके लिए होगा, सो तो आज तक किसी को ज्ञात नही हुआ, परन्तु असंख्य जीव-जन्तु उसकी ज्योति से जीवन लाभ करते हैं, इसे सुजान-अजान सभी जन जानते हैं। यही अवस्था चन्द्रलोक की है। तारामण्डल मे भी परार्थ होने का नियम काम कर रहा है। हमारी अपनी पृथ्वी भी कोटि कोटि मन बफ जो अपने सिर पर उठाये रहती है, वह इसीलिए न कि नदियो और स्रोतो को जन्म देकर अन्न-जल, फल-फूल, कन्द-मूल और साग-पात आदि से जगत् का लालन-पालन करे। नाना फलो और फूलो से लदे हुए पेड और बेल-बूटे जगम जगत् के लिए एक सुन्दर रसोई-घर बने हुए हैं। इन स्वाभाविक पाकशालाओं के से स्वादु और रसयुक्त भोजन क्या कहीं अन्यत्र तैयार किये जा सकते हैं? और क्या ये भोजनागार—अन्नपूर्णा के भण्डार—परार्थता और परोपकार-कर्म का उपदेश नही दे रहे हैं? दिन के समय वनस्पति-जगत् यदि जगम-जीवों को प्राण-पवन प्रदान न करे तो इनका सर्वनाश होवे में सन्देह ही क्या है। वनस्पतियों को भी अपने प्राणों के लिए ऐसी ही पवन के अर्थ परापेक्षा करनी पडती है। यदि विवेक-बुद्धि से अवलोकन करें तो यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि एक तुच्छाति-तुच्छ जन्तु के जीवन के लिए भी सारा ब्रह्माण्ड अपना बल लगा रहा है—अपने को बलि बना रहा है। सूर्य का देदीप्यमान होना, तारागण का चमकना, चांद की चादनी, बदली की बूंदें, मेघ का बरसना, नदियों का बहना, स्रोतों का स्रवन, पवन का स्पन्दन और वनस्पति आदि का अस्तित्व एक क्षुद्र कीट के लिए भी उतना ही उपयोगी और आवश्यक है जितना कि एक मनुष्य के लिए। इस परार्थ होने के अटूट तार में अखिल लोक-लोकान्तर ओत-प्रोत हैं। और यह रचना मनुष्य को परोपकार के मूल मन्त्र का उपदेश दिन रात दे रही है।

हमारे तन-मन्दिर की रचना भी परार्थ अस्तित्ववाद का ही एक उदाहरण है। इसके सभी अवयव अन्योन्याश्रित हैं। इस पर प्रत्येक अग दूसरे के लिए ही अपनी क्रिया करता है। अपने किये कर्म के फल को दूसरे के पास भेजता है। एक मोटे से दृष्टान्त से देह-क्रिया में परार्थ अस्तित्ववाद का—परार्थ-कर्म और परोपकार का—कितना उत्तम भाव प्रकाशित किया है, यह विषय विचार के ही साथ सम्बन्ध रखता है। जब किसी स्वादु फल को, उत्तम भोजन को आंख देखती है, तब वह उसका समाचार मस्तिष्क-मन्दिर में रहनेवाले ज्ञानी प्रभु को पहुंचा देती है वहाँ से बिजली का तार तत्काल हाथ में आ जाता है कि अमुक स्वादु, अनुकूल और इष्ट पदार्थ को विधिपूर्वक तोड-मोडकर, चाट बना कर होंठों के द्वार तक पहुंचा जाओ। जब वह वस्तु ग्रास परिमाण में ओष्ठ-द्वार पर जाती है, तब वह उसे धकेलकर दांतों को दे देता है। वे इसे जीभ को सौंपते हैं। वह इष्ट और अनिष्ट का निर्णय करके उसे पीसने के लिए जबडों की चक्की में डाल देती है। पीसने की क्रिया में वह आप भी सहायता करती है यद्यपि सारे तन में एक मात्र रसना ही रस की, स्वाद की, लोलुपा—लोभिन है, तो भी परार्थ अस्तित्ववाद को वह इतना मानती है कि पीसकर मलाई समान बने हुए उस ग्रास को, उसी क्षण, गले की नाली से उदर देश मे जाने के लिए विदा कर देती है। वहाँ आमाशय उसे खट्टे मीठे रसों मे भली भांति मिलाकर उसका मिश्रण तैयार करता है। फिर उसका रस निकालने के लिए उसको अपने मन्दिर-द्वार से बाहर कर अंतडियो के कोल्हू में डाल देता है। अंतडियाँ जिस-जिस निर्मल रस को निकालती हैं, उसे अपने पास नहीं रखतीं, वरन् गाडी में सवार कर हृदय देश की ओर भेज दिया करती हैं। हृदय यन्त्र में पहुंचकर वही रस रक्त का रूप धारण कर लेता है। उस समय वह सारे अगों के लिए पोष्य पदार्थ बन जाता है। यद्यपि हृदय उसी रक्त से पोषण पाता है जिसे वह बनाता है, परन्तु उस समय वह उसकी एक बूंद भी अपने पास नहीं रख लेता। लालो लाल बनाकर, सारे रस को, नख से शिखा तक बसी हुई अपनी जाति के लिए, बटने को बाहर से भेज देता है। फिर बाहर से भागानुसार जो अंश उसके पास लौटकर आता है—उसे मिलता है—उसी पर वह सन्तोष से निर्वाह करता है। परन्तु स्वार्थ को पास तक फटकने नहीं देता। परार्थ अस्तित्व का, परार्थ क्रिया का, और परोपकार कर्म का इससे बढकर उदाहरण मिलना नितान्त दुर्लभ है।

जहाँ पीछे आर्यसमाजियों का परम धर्म वेद कहा है, तो इस नियम में उनका उद्देश्य परोपकार करना बताया है। परम धर्म का अधिक सम्बन्ध धार्मिक व्यक्ति के साथ है और संसार का उपकार रूप उद्देश्य जनता के साथ सम्बन्ध रखता है। ये दोनों नियम आर्यसमाज का जीवन और प्राण, धर्म कर्म, परलोक और इहलोक तथा मन्तव्य और कर्तव्य कहे जा सकते हैं। तीसरे नियम में जहाँ आर्यसमाज के धर्म को सुनिश्चित कर दिया है, वहाँ इस छठे नियम ने उसके उद्देश्य को, कार्य-क्षेत्र को और कर्तव्य-कर्म को अति स्पष्ट रूप से बता दिया है।

छठे नियम का पालन करने वाले आर्य को साधनशील होना चाहिए। शारीरिक उन्नति के साधनों को वह आगे लिखी विधि से उपयोग में लावे।

संसार की शारीरिक उन्नति के दो भेद हैं—एक तो अपनी शारीरिक उन्नति और दूसरी दूसरे जनों की। अपनी शारीरिक उन्नति के लिए आर्यव्रती को चाहिए कि स्वास्थ्य-संरक्षण पर विशेष ध्यान दे। प्रातःकाल ब्रह्म मुहूर्त में जग जाय, शय्या छोड दे। आवश्यक कामों से निवृत्त और शुद्ध होकर दातुन ले और दांतों का मार्जन करे। कुल्ले करके मुख को स्वच्छ बनावे। अवस्थानुसार किसी न किसी प्रकार का व्यायाम करना भी आवश्यक जाने। नियम से भ्रमण करना स्वास्थ्य बनाने का एक बडा साधन है। यदि ऐसी क्रीडाओं में भी सम्मिलित हो सके जिनमें दौडना-भागना और उछलना कूदना पडता है तो उनमें अवश्य भाग ले। व्यायाम क्रिया को अपने आजीविका के काम धन्धे और खाने पीने-सोने के समान आवश्यक जानना उचित है।

आर्यव्रती स्नान करने मे आलस्य न करे। प्रातःकाल शीतल और स्वच्छ जल से स्नान करना आदि शरीर को आरोग्य, शक्ति और स्फूर्ति प्रदान करता है। इससे अंग सुदृढ़ होते हैं और आलस्य का नाम तक नही रहता। खुले पानी में भली भांति मलकर नहाना उत्तम है। स्नानान्तर तन को तौलिये से पोंछ डालना अच्छा है। ठण्डे पानी मे नहाकर यदि हलका-सा व्यायाम कर लिया जाये तो तन मे तुरन्त ऊष्मा भर जाती है।

ब्रह्मचर्य का पालन करना, मर्यादानुसार गृहस्थ बने रहना शारीरिक उन्नति के साधन हैं। वाजीकरण औषधियों और मादक द्रव्यों का सेवन शरीर के संगठन का सत्यानाश कर देता है। इनसे स्वाभाविक पाचन-शक्ति, स्वाभाविक

(शेष पृष्ठ ८ पर)

अतिशय भोग विलास और श्रृंगार से हमारा चारित्रिक पतन हो रहा है।

लेखक—डा० महेश विद्यालकार

धर्मशास्त्र और महापुरुषों ने सुखी व शान्तिमय जीवन के कुछ सूत्र दिए हैं। जो सूत्र आज भी अपने में सार्थक, व्यावहारिक, प्रेरक एव जीवनोपयोगी हैं। आज हमारा जीवन सहज-सरल स्वाभाविक, शुद्ध, पवित्र तथा धार्मिक धारा से तेजी से दूर होता जा रहा है। भोग विलास, सुख-सुविधा, भौतिकता आदि की दृष्टि से चाहे ससार भरा-पूरा नजर आ रहा हो किन्तु अन्दर आत्मा व चरित्र से क्षीण, खोखला, अधूरा और दूषित हो रहा है। इसीलिए प्रत्येक क्षेत्र में चरित्र गिर रहा है। आडम्बर व प्रदर्शन बढ़ रहे हैं। आज ससार में अतिशय भोग-विलास श्रृगार व वासना की पूर्ति के साधन एकत्र करने की अन्धी दौड लग रही है। पागलों की तरह हम सब बिना सोचे, विचारे भौतिक साधनों के लिए भाग रहे हैं। जिसका परिणाम है कि जीवन में द्वन्द्व, सघर्ष, अशान्ति, अतृप्ति, तनाव, रोग और शोक बढ रहे हैं। कैसी विचित्र विडम्बना है कि आज हम बडा आदमी उसे मान रहे हैं जिसके पास भोग-विलास श्रृगार और वासना के अधिक साधन हैं। जो दिन रात वासनाओं की पूर्ति के साधन जुटा रहा है। जिसका दृष्टिकोण नितान्त भौतिकवादी है। कभी महत्व, सम्मान और पूजा उस महापुरुष की थी रही है जिसने सब से ऊचा और बडा त्याग किया था। मान्यताए बडी तेजी से बदलीं। अब हम ससार को भोगने की दृष्टि से देख रहे है। कभी त्यागने का विचार, भाव सकल्प ही नहीं रहा है।

जीवन मे अत्यन्त भौतिकता, विलासिता एव श्रृगारिकता से व्यक्ति मूल से छूट जाता है। बाह्य आडम्बर, प्रदर्शन और टीप-टाप की प्रवृत्ति स्वभाव बनने लगती है। आत्मिक शक्ति, धीरे-धीरे क्षीण होने लगती है। जीवन में अनेक प्रकार की विकृतियां, दुर्व्यसन तथा दुर्गुण आने लगते हैं। व्यक्ति का चिन्तन, मनन, आचरण, स्वभाव भोग-विलास और श्रृगार की बातों में फसा और रमा रहता है। जीवन से धार्मिकता, सात्त्विकता, सरलता सहजता और मधुरता लोप होने लगती है। हर समय खाने-पीने, भोगने, देखने, सुनने, पहनने आदि की अतृप्त वासना बेचैन किये रहती हैं। आज ससार के बाजारो में भोग विलास और श्रृगार के साधनों की दौड और भीड लगी हुई है। सब सामान से आन्तरिक अभाव खोखलेपन को भरना चाह रहे हैं। यही भूल और अज्ञान है। शायद हमें नहीं मालूम है कि हमारे धर्म शास्त्र, महापुरुष, विचारक और मनीषी हजारों वर्ष पूर्व अनुभव करके कह गए हैं कि—

न जातु काम कामाना
मुपभोगेन शाम्यति।

विषयों के भोग की इच्छा विषयों के भोग से कभी शान्त नही हो सकती। किन्तु और भी बढ़ती जाती है। ससार में ऐसा ही उल्टा हो रहा है। भोगों से अपने को शान्त करना चाह रहे हैं। इसीलिए मानसिक व शारीरिक रोग बढ रहे हैं। जितने अधिक साधन होगे उतने अधिक पराधीन होकर शारीरिक आलस्य प्रमाद में घिर जायेंगे। परिणाम शरीर निष्क्रिय बन जायगा।

आज चारों ओर भोग विलास एव वासना का बाजार गर्म है। सब ओर पतन के मार्ग खुले हैं। नित्य पत्र-पत्रिकाओं एव समाचारो में प्रकाशित घटनाओ से स्पष्ट होता है कि हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में बडी तेजी से चारित्रिक पतन हो रहा है। हमारा मानवीय दृष्टिकोण बदल रहा है। मानवीय सवेदना क्षीण हो रही है। हम सृष्टि के सौन्दर्य को विकृत कर रहे हैं। बढ़ती हुई भोग-विलास और फैशन की प्रवृत्ति मानव को स्वार्थी, कामी, लालची एव आत्म केन्द्रित बना रही है। युवा पीढ़ी में फैशन की प्रवृत्ति बडी तेजी से बढ रही है। आज शराब व सिगरेट आदि मादक द्रव्य फैशन का रूप लेते जा रहे हैं। यह बात बडी चिन्तनीय है। श्रृगार की प्रवृत्ति भी तेजी से बढ और फैल रही है। श्रृगार से वासना उद्दीप्त होती है। जहां श्रृगार बढेगा वहां व्यभिचार भी बढ़ेगा, इसीलिए आज व्यभिचार का बाजार गर्म है। क्योंकि नारी श्रद्धा की जगह विज्ञापन का केन्द्र बिन्दु बन रही है। हमारी पत्र-पत्रिकाए, रेडियो चलचित्र, बाजार आदि सभी वासना, श्रृगार और फैशन को उद्दीप्त करने का प्रचार कर रहे हैं। आबाल वृद्ध स्त्री-पुरुष सभी मे विलासिता की प्रवृत्ति तेजी से बढ रही है। इससे हमारे ज्ञान, विचार, विवेक, सदाचार एव नैतिक मूल्यो को आघात पहुच रहा है।

भारतीय जीवन दर्शन समत्व मूलक रहा है भोग और योग का समन्वय आदर्श जीवन पद्धति माना गया है। यूरोप का चिन्तन नितान्त भोगवादी है। वहां आध्यात्मिकता, नैतिकता एव सामाजिक मूल्यो का अभाव है। आज हमारे देश में यूरोप के उद्दाम भोगवादी विलासिता, नग्नता एव श्रृगारिकता का बडी तेजी से प्रभाव बढ़ रहा है। जिसके फलस्वरूप वातावरण वासनात्मक और रहन-सहन व चिन्तन भोगी विलासी हो रहा है। उदाहरणार्थ विद्या मन्दिर एव धर्मस्थल तक प्रेमस्थल बन रहे हैं। आज काम-वासना सभी नैतिक, मर्यादित, एव सामाजिक मूल्यो, आदर्शों को तोडकर समूचे वातावरण को दूषित, विषाक्त एव रुग्ण बना रही है। यह प्रवाह समग्र मानवता के लिए भयावह होगा। नित्य घटनाओं को सुनते पढते और देख रहे हैं कि कामान्ध युवक और युवतियां पतन की सीमा लांघ रहे हैं। जीवन में झूठ, प्रपच आडम्बर, स्वार्थ की मात्रा बढ रही है।

आज का मानव सुख-भोग-विलास के लिए अपने को पतित एव बेच रहा है। शारीरिक सुख, आराम, ऐश के लिए मनुष्य निकृष्ट तथा राक्षस कर्म के लिए उद्यत हो जाता है। पद पाने के लिए झूठी चापलूसी करता है। युवक और युवतिया शारीरिक खान-पान, रहन-सहन, भोग-विलास के लिए सत्य-पथ से गिरने लगते हैं। ऐसी स्थिति प्रत्येक क्षेत्र मे हो रही है। यही हमारे चारित्रिक पतन की पराकाष्ठा है। इसके मूल में वही भोग-विलास श्रृंगार एव वासना की अतृप्त इच्छाए हैं। हम जीवित शरीर के लिए हैं। आत्मा के लिए नही। यदि आत्मा के लिए सोचें तो हमारा निश्चय ही कल्याण हो सकता है। हम इन व्यर्थ की बातों और आडम्बरों से बच सकते हैं।

आज दुर्भाग्य और पीडा तो यह है कि मानव को मानव बनाने की शिक्षा, दीक्षा, सकल्प एव व्रत नहीं दिया जा रहा है। यदि मानव-चेतना मे मानवीय, मूल्यों, आदर्शों के सस्कार आध्यात्म कर दिए जायें तो वह विषय-भोग वासना व श्रृगार से धीरे-धीरे स्वत ऊपर उठ जायगा। वह अपने चरित्र, गुण, कर्म-स्वभाव एव नैतिक मूल्यों की अवश्य छाप छोडेगा। वह दिन,रात विलासिता के साधन एकत्र करने की पागल दौड में पीछे हटने लगेगा। वह क्षणिक, नश्वर, भोग-पदार्थों के लिए आत्मा को नही पतित करेगा। उसके पास बाहर की दृष्टि से चाहे मकान, रहन-सहन सुख-सुविधाओं का अभाव हो किन्तु अन्दर आत्मिक बल की दृष्टि से वह मजबूत और खुशहाल होगा। उसके पास एक ऐसी मस्ती, शान्ति व उमग होगी जो कि अपने में अद्वितीय और अनिर्वचनीय है। यही भारतीय चिन्तन की महत्वपूर्ण खोज और उपलब्धि है। इसीलिए हमें प्रयत्न और व्रत लेना चाहिए।

अभिवादन का प्रभाव

लेखक—ओमप्रकाश "आर्य" विद्यावाचस्पति, रावतभाटा

★

अभिवादन के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए भगवान् मनु ने अपनी मनुस्मृति मे लिखा है—

अभिवादनशीलस्य
नित्य वृद्धोपसेविन ।
चत्वारि तस्य वर्धन्ते
आयुर्विद्यायशोबलम् ॥

अर्थात् "अभिवादन करने वाले तथा वृद्धो की सेवा करने वाले व्यक्ति की चार चीजे बढती हैं—आयु, विद्या, यश और बल । "अभिवादन करना और वृद्धों की सेवा करना शास्त्रों के अनुसार बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। इसके द्वारा नैतिक बल मिलता है और नैतिक बल मिलने से आयु, विद्या, यश और बल इन चारों की प्राप्ति होती है। आयु, विद्या, यश और बल इन चारों की प्राप्ति चरित्रवान व्यक्ति ही कर सकता है। नैतिकता के अभाव मे इन चारों का सर्वनाश हो जाता है। नैतिकता के अभाव में मनुष्य अपना सब कुछ खो बैठता है। इसके बारे में भगवान् मनु ने लिखा है—

दुराचारी हि पुरुषो
लोके भवति निन्दित ।
दु खभागी च सतत
व्याधितोऽल्पायुरेव च ॥

अर्थात् "नतिकहीन व्यक्ति की इस ससार में निन्दा होती है, वह दु ख भोगता है, हमेशा रोगी रहता है तथा कम आयु वाला होता है।" जहाँ पर अभिवादन करने से आयु, विद्यादि की प्राप्ति होती थी, वहीं पर उसके अभाव में चारों चीजें नष्ट हो जाती हैं। इस लेख मे हम अभिवादन के प्रभाव पर प्रकाश डाल रहे हैं।

अभिवादन का साधारण अर्थ दूसरों के सामने अपने हार्दिक स्नेह को प्रकट करना है। इसका सम्बन्ध हृदय और मस्तिष्क से है। जब हृदय और बुद्धि दोनो मिलकर किसी के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करते हैं तो वह अभिवादन की श्रेणी में आता है। अभिवादन का अर्थ प्रणाम करना, नमस्कार करना, चरणस्पर्श करना आदि भी होता है। इसका दूसरो पर इतना प्रभाव पडता है कि आदमी अपने वैर-भाव को भी भुला देता है। अभिवादन मानवता का एक सुन्दर चिह्न है। अभिवादन सुन्दर चरित्र की निशानी है। अभिवादन प्रेम का सूचक है। अभिवादन एक जादू है जो किसी को भी क्षण भर में विस्मित कर सकता है। अभिवादन दूसरों के ऊपर छाप डालने का एक सुन्दर तरीका है। अभिवादन परिचयात्मक तथा प्रथम मिलन का एक सूत्र है। अभिवादन प्रसन्नता और प्रेम का द्योतक है। अभिवादन मनुष्य क्या ईश्वर को भी सर्वप्रिय चीज है। इसीलिए वेदों में शतश ईश्वर को नमस्कार किया गया है, उसके चरणों में मस्तक झुकाया जाता है। अभिवादन से पशु-पक्षियों के ऊपर भी प्रभाव पडता है तथा इससे प्रभावित होकर अत्यन्त प्रसन्न हो जाते हैं। किसी अनजान व्यक्ति से परिचय प्राप्त करने के लिए अभिवादन प्रथम साधन है। अपने से बडों का सम्मान और श्रद्धा प्रकट करने के लिए अभिवादन का आश्रय लिया जाता है। माता-पिता-गुरु-पूज्य व्यक्ति और ईश्वर सब को अभिवादन के द्वारा सहज ही प्रसन्न किया जा सकता है। अत अभिवादन हृदय और मस्तिष्क से उद्भूत एक सलोना मन्त्र है। जो सब को प्रसन्न कर देता है। अभिवादन के द्वारा भगवान् राम को यश, बल और विद्यादि की प्राप्ति हुई थी। वे विद्यार्थी जीवन से ही माता-पिता और गुरु का अभिवादन करते थे। इसका वर्णन करते हुए तुलसीदास ने लिखा है—

प्रातकाल उठि के रघुनाथा।
मात-पिता गुरु नावहिं माथा॥

भगवान् राम प्रात काल उठकर माता-पिता और गुरु का अभिवादन करते थे। हमारे देश में अभिवादन का इतना महत्त्व था कि अपने गुरु के आने पर राजा भी सिंहासन को छोडकर गुरु को सादर प्रणाम करते थे। विद्या तो बिना श्रद्धा के आती ही नहीं है, श्रद्धा अभिवादन से प्रकट होती है। अभिवादन का इतना असर पडता है कि अभिवादन से शत्रु का भी हृदय द्रवित हो जाता है।

यदि समुचित ढग से और मर्यादापूर्ण ढग से अभिवादन किया जाय, तो दूसरों पर बहुत ही अच्छा प्रभाव पडता है। अभिवादन करने का ढग यह है कि अपने दोनों हाथों को जोडकर और उसे हृदय से लगाकर तथा गर्दन सहित मस्तक को झुकाकर अभिवादन करने से दूसरे के प्रति अपार स्नेह प्रकट करके दिल को जीता जा सकता है। यदि आपने कभी किसी को इस ढग से अभिवादन न किया हो, तो उपर्युक्त ढग से एक बार अभिवादन करके देखिए कि जिससे आप अभिवादन करते हैं वह कितना प्रसन्न होता है, उसका हृदय खिलकर बाग-बाग हो जाएगा। आजकल तो अभिवादन का तरीका ही गलत हो गया है। लोग श्रद्धापूर्ण अभिवादन को असभ्यता का प्रतीक मानते हैं। अब तो हाथ मिलाना और दूर से एक झटका देकर फर्ज अदा कर देना अभिवादन मान लेते हैं। बहुत से तो अरे भाई राम-राम, सलाम, बन्दगी, दण्डवत, जै राम जी की, वालेकुम आदि शब्दों से अभिवादन करते हैं जो कि सर्वथा गलत है। इन शब्दों से कोई तात्पर्य या श्रद्धा नहीं प्रकट होती है। न तो इन शब्दों से हृदय पर कोई प्रभाव ही पडता है। अभिवादन करने का अपना प्राचीन वैदिक ढग बहुत ही अच्छा है और इसे ही करना चाहिए।

अपने दोनों हाथों को जोडकर, उसे हृदय से लगाकर तथा गर्दन और मस्तक को झुकाकर नमस्कार करना अपना प्राचीन वैदिक अभिवादन सर्वोत्तम है। वेदों में ईश्वर को नमस्कार किया गया है। नमस्कार के अतिरिक्त अन्य कोई अभिवादन ईश्वर को नहीं किया गया है। सन्ध्या के मन्त्रों में हम अन्त में ईश्वर को नमस्कार करते हैं और अपनी श्रद्धा-भक्ति प्रकट करते हैं—

नमः शम्भवाय च मयोभवाय च
नम: शङ्कराय च मयस्कराय च
नम: शिवाय च शिवतराय च ॥

इस मन्त्र में ईश्वर को बार-बार नमस्कार किया गया है। नमस्कार शब्द से हृदय का स्नेह प्रकट होता है। अपने से बडों को अभिवादन करना कभी नहीं भूलना चाहिए। यदि आप दूसरों का स्नेह लूटना चाहते हैं, दूसरों में प्रीति का पात्र बनना चाहते हैं तो शुद्ध अभिवादन करना चाहिए।

जब हम किसी स्थान पर जाते हैं तो वहाँ के गण्यमान्य बन्धुओं का प्रथम अभिवादन द्वारा परिचय प्राप्त करते हैं। रिश्तेदारो [illegible] अभिवादन का बहुत मह[illegible] किसी महापुरुष, पूज्य व्यक्ति, पद [illegible] बडों से, अधिकारी आदि सब के पास जाते समय दृष्टि पडते ही उसे अभिवादन करते हैं। अपना काम निकालने के लिए हम अमुक व्यक्ति से अभिवादन का ही सहारा लेते हैं। इस अभिवादन में प्रेम का अपार समुद्र भरा हुआ है। हाथ जोडने का मतलब है कि आप यश, कीर्ति, पुण्य, सुकार्य आदि से मिश्रित नदी के दोनों किनारों को एक करके, हृदय में निहित प्रेम रूपी धारा को किसी के प्रति समर्पित कर रहे हैं। इस अभिवादन के द्वारा आप सहस्रो व्यक्तियों को एक साथ अभिवादन करके अपने स्नेह को प्रकट कर सकते हैं, जबकि दूसरे प्रचलित अभिवादन द्वारा ऐसा सम्भव नहीं है। हजारों व्यक्तियों से हाथ नहीं मिला सकते हैं, हृदय से हृदय नहीं लगा सकते हैं, जबकि नमस्कार अभिवादन के द्वारा बहुत ही उच्चकोटि का अभिवादन हो जाता है। स्वामी विवेकानन्द जब अमेरिका गए, तब उन्होंने जनता के समक्ष हाथ जोडकर अभिवादन किया, इस अभिवादन का वहां की जनता पर बहुत गहरा असर पडा, उनके विचारो से लोग बहुत ही प्रभावित हुए। आप अपने जीवन में उचित ढग से किसी भी व्यक्ति को अभिवादन करके देखिए, आपसे वह व्यक्ति बहुत प्रभावित होगा। हमारी सस्कृति में बिना अभिवादन के किसी से बात करना भी मना है। प्रत्येक दिन अभिवादन करने का विधान है। एक व्यक्ति जब दूसरे व्यक्ति को हृदय से आशीर्वाद दे[illegible] है तो उसकी आत्मा उसे प्रसन्न होकर ग्रहण करती है। आशीर्वाद का भी बहुत प्रभाव पडता है। बडे-बुजुर्गों का आशीर्वाद जीवन में प्रसन्नता और आनन्द देता है और यह आशीर्वाद अभिवादन द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। बिना अभिवादन के कोई किसी को आशीर्वाद नहीं देता। आपने ऐसा कोई

(शेष पृष्ठ १० पर)

वर्ण-व्यवस्था और उस पर आक्षेप

लेखक—बुद्धदेव विद्यालंकार

मनुष्य कठिन कार्य करने से कितना डरते हैं, इसका बडा सुन्दर उदाहरण उस आन्दोलन में मिलता है, जो आजकल वर्ण-व्यवस्था के विरुद्ध उठाया जाता है। विरोधियों की बात तो जाने दीजिए स्वयं आर्य-समाज में एक जन-समुदाय ऐसा उत्पन्न हो गया है, जो इसका विरोध करना अपना धर्म समझता है। इस लेख में उन प्रश्नो का संक्षेप से उत्तर दिया गया है जो वर्ण-व्यवस्था के विषय में लोगों की ओर से किए जाते हैं।

सब से पहिली बात जो इसके विरुद्ध कही जाती है वह यह है कि वर्ण व्यवस्था स्वयम्भू है, खुद रौ है, इसके प्रचार की क्या आवश्यकता? अध्यापक, सिपाही, व्यापारी, मजदूर यह लोग तो स्वयमेव हर एक देश में होते हैं। इनके सम्बन्ध मे किसी प्रकार के प्रचार की क्या आवश्यकता है? ऐसा कहने वाले न तो वर्ण का अर्थ समझते हैं, न व्यवस्था का। उनका कहना ऐसा ही है क्योंकि हाथ, पैर, नाक, कान आदि तो सब के स्वय होते हैं, फिर व्यायाम तथा उत्तम भोजन द्वारा इनको सुडौल और सुपुष्ट बनाने की क्या आवश्यकता? मकान ससार में बनते ही हैं फिर वास्तु-विद्या (Engineering) की क्या आवश्यकता? बीज धरती में पड कर अनाज पैदा होता ही है फिर कृषि-शास्त्र की क्या आवश्यकता? यह लोग यह भूल जाते हैं कि हर एक अध्यापक ब्राह्मण नही, हर एक सिपाही क्षत्रिय नही, हर एक व्यापारी वैश्य नही। ब्राह्मण केवल उन अध्यापको का नाम है जो जीविका के लिए अध्यापक नही किन्तु अध्यापन के लिए अध्यापक हैं। सत्य का प्रचार जिनके जीवन का ध्येय है जिन्होंने अध्यापन कार्य को व्रत मान कर ग्रहण किया है और यश अथवा धन का बडे से बडा प्रलोभन आने पर भी इस कार्य को छोडने के लिए तैयार नहीं।

हर एक सिपाही का नाम क्षत्रिय नहीं, किन्तु क्षत्रिय नाम उन लोगो का है जिन्होने ससार से अन्याय को मिटाने का व्रत धारण किया है और ससार के बडे प्रलोभन के आने पर भी इस व्रत को छोडने के लिए तैयार नही।

हर एक व्यापारी का नाम वैश्य नहीं किन्तु वैश्य वह व्यापारी है जो प्रजा की दरिद्रता मिटाने के लिए धन कमाते हैं और ब्राह्मणो और क्षत्रियों का यश होते देखकर अपने व्रत को छोडने के लिये तैयार नहीं।

इस प्रकार के अध्यापक, सिपाही अथवा व्यापारी खुद रौ नही, किन्तु बचपन से व्रत धारण करके उसी के अनुसार तैयार करने पर बडी कठिनता से प्राप्त होते हैं।

यह तो हुई वर्ण की बात, अब व्यवस्था को लीजिए। आवश्यकता इस बात की है कि समाज में सब से ऊँचा स्थान सत्य के प्रचारकों को दिया जाय फिर क्षत्रियों और फिर वैश्यो को। किन्तु इस समय सब से ऊंचा स्थान स्वार्थी व्यापारियों अर्थात् असुरो को प्राप्त है। इस अवस्था को बदलने के लिये घोर संग्राम करना पडेगा और सम्भव है इसमें लाखों जीवनो का बलिदान हो। इसलिए न वर्ण खुद रौ है, न व्यवस्था। वर्ण नाम उस व्रत का है जो अभाव, और अविद्या को मिटाने की तैयारी करने के लिए धारण किया जाता है। यह व्रत वर्ण और उसका फिर पालन, घोर तप और निरन्तर अभ्यास मांगता है। इसलिए वर्ण व्यवस्था को खुद रौ कहना भूल है।

वर्ण व्यवस्था के विरुद्ध तीसरा आक्षेप यह किया जाता है कि इन नामों को यदि स्थिर रहने दिया जाय तो थोड़े दिनों मे फिर वही पुरानी जन्म की वर्ण-व्यवस्था नये रूप में सामने आकर स्वयमेव खडी हो जायेगी। किन्तु यह लोगो की भूल है। पुरानी जन्म के आधार पर खड़ी होने वाली वर्ण-व्यवस्था के प्रति सभी लोगों के हृदय में घृणा उत्पन्न करने का सब से अच्छा साधन, सच्ची वर्ण व्यवस्था को स्थापित करना है। यदि जात पात तोड कर भी लोग वहां के वहीं रहे जहाँ जात-पांत तोडने से पहिले रहते थे तो जात-पात तोडने का लाभ क्या हुआ। भंगी अथवा चमारों के कुल में पैदा होने वाला एक सच्चा ब्राह्मण अथवा क्षत्रिय जितना लोगों के हृदय में जन्म की जात-पांत के अन्याय के विरुद्ध भावना उत्पन्न कर सकता है, उतना हजारों व्याख्यान नही कर सकते। फिर जब लोगो ने जन्म की जात-पात की हानिया इतनी अच्छी प्रकार देख ली हैं तो वे इस गढे में कभी नही गिरगे। सच तो यह है कि यह पुरानी जात-पांत की रूढ़ियां इसीलिए नही छूटती क्योंकि पुराने ब्राह्मणों और क्षत्रियो के स्थान में नये नही बनाये गये। कल्पना कीजिए कि आपके सामने दो कुल हैं। एक में वही पुराने ढर्रे का अनपढ पुरोहित अन्ध-विश्वासो की रखवाली कर रहा है। दूसरी ओर एक सच्चा त्यागी तपस्वी विद्वान् पुरोहित (चाहे वह ब्राह्मण कुलोत्पन्न न हो) अपनी सङ्गति के प्रभाव से अपने यजमानो की दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करे तो जन्म की झूटी जात-पांत से लोगो को स्वभाव से ही घृणा होगी। जाली सिक्के का जालीपन पूरी तरह तब ही स्पष्ट होता है जब असली सिक्का सामने रख दिया जाय। इसलिए सच्ची वर्ण-व्यवस्था का बनना तो, उलटा झूटी जात पांत से और भी घृणा दिलाने वाला होगा। इसलिए यह आक्षेप भी निर्मूल है कि इससे फिर पुरानी जन्म मूलक वर्ण व्यवस्था हम को आ घेरेगी।

वर्ण व्यवस्था पर चौथा आक्षेप यह है कि इसका निश्चय किस प्रकार हो। एक मनुष्य प्रातःकाल से सायकाल तक बारी-बारी से ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सभी के कर्म करता है। फिर वह ब्राह्मण आदि में से क्या कहलायेगा। यह आक्षेप भी सार हीन है। इसका उत्तर भी पहिले दिया जा चुका है। वर्ण का निर्णय व्रत से होता है। अविद्या, अन्याय, अभाव में से जिस किसी एक के विरुद्ध लडाई करने में विशेष कौशल किसी ने प्राप्त किया हो तथा युद्ध करने का व्रत धारण किया हो उसी से उसके वर्ण का निश्चय होता है। यहां यह ध्यान रखना चाहिए कि विशेष अभ्यास का यह अर्थ कदापि नहीं कि वह दूसरे कर्मों का अभ्यास बिलकुल न करे। आपत्काल में राष्ट्र विप्लव होने पर सब को क्षत्रिय। वानप्रस्थाश्रम में सब को ब्राह्मण और दुर्भिक्षादि के समय मे सबको वैश्य कर्म भी करना पडे, तो करना चाहिए किन्तु विशेष अभ्यास मनुष्य एक ही कर्म का कर सकता है वही उसका वर्ण है।

वर्ण व्यवस्था के सम्बन्ध में दूसरा प्रश्न यह किया जाता है कि डाक्टर इञ्जीनियर, कलाकार वकील आदि सैकडो पेशे ससार मे हैं उन्हें चार मे क्यो बांटा जाय? यह लोग यह भूल जाते हैं कि पेशा और वस्तु है और वर्ण और वस्तु। चरक संहिता में लिखा है कि एक वैद्य ब्राह्मण भी हो सकता है, क्षत्रिय भी और वैश्य भी यदि वह आयुर्वेद विद्या की उन्नति मे लगा है और प्रजा का उपकार मात्र उसका ध्येय है तो वह ब्राह्मण है। यदि वह रणक्षेत्र में युद्ध करने जाता है, और अपने घायल साथियो को फिर युद्ध के लिए तैयार करने मे इस विद्या का प्रयोग करता है, और उसका व्रत अन्याय से युद्ध करना है तो वह वैद्य क्षत्रिय है यदि वह अपनी विद्या से धन कमाकर प्रजा के कल्याण के लिए दान करता है तो वह वैद्य वैश्य है। इसलिए ब्राह्मणत्व, क्षत्रियत्व, वैश्यत्व का निर्णय व्रत से होता है पेशे से नही। हां यह व्रत तीन ही प्रकार के हो सकते हैं और जो इन तीनो व्रतो के अयोग्य हो तो वह इतना ही व्रत धारण करे कि समाज की शरीर मे ही सेवा करूगा। आलसी और ईर्ष्यालु होकर नही रहूंगा। इस प्रकार व्रत चार ही हो सकते है। व्रतों के साधन अनेक हो सकते हैं। पेशो का सम्बन्ध मस्तिष्क से है, व्रतों का चरित्र से। यही मर्म न समझ कर लोग प्रश्न करते हैं कि चार ही वर्ण क्यो

तीसरा प्रश्न वर्ण व्यवस्था के विरोधियो की ओर से यह किया जाता है कि यह किसी समय अच्छी रही होगी परन्तु अब यह बिल्कुल निकम्मी सिद्ध हो चुकी है। सो यह भी ठीक नही। वर्ण व्यवस्था को भूल कर लोगो ने उसके स्थान पर जो अन्यायपूर्ण दुर्व्यवस्था प्रचलित कर दी है उसे वर्ण व्यवस्था के विरुद्ध युक्ति के रूप में उपस्थित करना अन्याय है। इस प्रकार तो जीवनमात्र ही असफल सिद्ध हो चुका है क्योंकि सृष्टि के आदि से आज तक कोई भी अमर होने में

(शेष पृष्ठ ६ पर)

भारत के आदरणीय हिन्दू जन

आखिर क्या बात है अथवा यह कौन सा रहस्य है कि भारत और और पाकिस्तान को स्वतन्त्र हुए चालीस वर्ष बीत गये किन्तु स्वाधीन और सैक्युलर Secular कहे जाने वाले भारत में (यद्यपि कि यह Sceular शब्द भारत के मूल संविधान में नहीं था तथा इसे भी भारत के प्रधान मन्त्री द्वारा षड्यन्त्रकारी group ब्रिटेन-रूस संविधान में समाविष्ट कराने में सफल हो गया था।) हमारे ही भूभाग के दो टुकड़े पाकिस्तान और बंगला देश का संविधान हमारे देश के विश्वविद्यालयों में नहीं पढ़ाया जाता।

बराबर से ये कौन लोग हैं जो हमें भयंकर धोखे और अन्धकार में रखे हुए हैं और हमें यह नहीं समझने देना चाहते कि पाकिस्तान और बंगला देश में किस प्रकार के शासन तन्त्र हैं। और वे अपना शासन किस प्रकार चला रहे हैं ? वे सही रूप में हमारे पड़ोसी हैं अथवा उनका आचरण एक शत्रु का है ?

अगर वे हमारे मित्र और हितैषी हैं तब तो सोचने की कोई बात नहीं है। अन्यथा उन्हें अपने हित के अनुसार बनाने के लिए और उनकी शत्रुता के भाव एवं दुष्टाचरण को ठीक करने के लिए कुछ विशेष नीति बनानी होगी।

हमारे देश भारत में रूस का संविधान, अमेरिका का संविधान, फ्रांस का संविधान और ब्रिटेन का संविधान तो पढ़ाया जाता है किन्तु ईरान, पाकिस्तान और बंगला देश का संविधान नहीं पढ़ाया जाता।

सारे भारत के विश्वविद्यालयों में ईरान का जनतांत्रिक इस्लामिक संविधान, पाकिस्तान का इस्लामिक संविधान, बंगला देश का इस्लामिक संविधान Coures of Study में आनी चाहिए, अन्यथा हमारे देश के युवक और विद्यार्थी इन देशों के संविधान के विषय में पूर्णतः अनभिज्ञ और अन्धकारमय वातावरण में पढ़ रहे हैं। इसके साथ ही उन मुल्कों में पढ़ाई जा रही उन मुल्कों की तवारीखों को भी भारत के विश्वविद्यालयों में पढ़ाया जाना चाहिए।

अपने देश भारत में अपने देश का संविधान भी सम्पूर्ण नहीं पढ़ाया जाता, जिसे भारत का संविधान कहा जाता है। वे भारत के संविधान के अन्तर्गत ही एक Article है ३७० जिसके भीतर जम्मू-कश्मीर राज्य को एक विशेष अलगाववादी दर्जा प्राप्त कर दिया गया है। भारत के मूल संविधान में इस प्रकार की व्यवस्था नहीं थी। यह सारा काम नेहरू और षड्यन्त्रकारी group (ब्रिटेन और रुस) का कराया हुआ है। इस Article के भीतर जम्मू-कश्मीर राज्य के लिए एक अलग संविधान बना दिया गया है, जिसे जम्मू-कश्मीर का संविधान कहा जाता है। इसके अनन्तर भी भारतीय विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों को इसे नहीं पढ़ाया जाता। बौद्ध लद्दाख के विषय में तो कहीं कुछ चर्चा ही नहीं है। उसे तो कश्मीर के अधीन 'इस्लामाईजेशन' के लिए 'सुरगाह' भूमि के रूप में छोड़ दिया गया है। लद्दाख के बौद्ध-भिक्षुओं को मुसलमान स्त्रियों से शादी करा कराकर मुसलमान बनाने में शेख अब्दुल्ला सफल हो ही गया था, किन्तु अब प्रतिकार की आवश्यकता है।

भारत के संविधान के साथ ही जम्मू-कश्मीर का संविधान भी भारत के विश्वविद्यालयों में पढ़ाया जाना चाहिए। ताकि विश्वविद्यालय स्तर के विद्यार्थी उसके भीतर लिखी बातों से भिज्ञ हो सकें और यदि कुछ भारत के हित के विपरीत बातें लिखी हों तो वे उसका प्रतिकार कर सकने में समर्थ हो सकें।

कुमार स्कन्द गुप्त नारायण
हिन्दू अवतार

(पृष्ठ ५ का शेष)

वर्ण-व्यवस्था और उस पर आक्षेप

सफल नहीं हुआ इसलिए सब लोग जन्म से ही संखिया खाकर मर जावें। सच तो यह है कि यद्यपि ऐश्वर्य के अत्यन्त बढ़ जाने से वर्णाश्रम व्यवस्था में कुछ ढीलापन आ गया है, किन्तु जितने समय तक इस व्यवस्था ने संसार का कल्याण किया है अन्य किसी व्यवस्था ने नहीं किया। और अब भी थोड़े ही उद्योग से फिर वैसे ही संसार की कल्याण करने वाली हो सकती है। किसी व्यवस्था का भ्रष्ट रूप उसके असली रूप के विरुद्ध युक्ति रूप मे उपस्थित नहीं किया जा सकता। और अब ऋषि दयानन्द जैसे महापुरुष की सञ्जीवनी बूटी पाकर वर्णाश्रम-व्यवस्था फिर जीवित हो उठी है और वह संसार को अपना चमत्कार दिखा कर रहेगी।

पाँचवां आक्षेप वर्ण व्यवस्था पर यह किया जाता है कि यह अव्यवहार्य्य (Impracticable) है। इस आक्षेप के उपस्थित करने के समय स्वार्थी लोग जो लम्बा-सा मुँह बनाते हैं वह दर्शनीय होता है।

भला विचारिये तो सही कि सोशलिस्ट लोगों का छोटे से लेकर बड़े तक सारे पूंजीपतियों की पूंजी छीन, कर राष्ट्र की सम्पत्ति बना देना तो व्यवहार्य (Practicabl) है, किन्तु सम्पत्ति का दुरुपयोग करने वाले थोड़े से पूंजीपतियों की सम्पत्ति छीन कर शेष को भय द्वारा सीधे रास्ते लाना अव्यवहार्य है। यह कहां की तर्क बुद्धि है। सबकी अपेक्षा कुछ की संख्या छोटी है यह तो साधारण गणितशास्त्र की बात है। व्यवहार्यता की दृष्टि से देखें तो कुछ बुरे पूंजीतियों की सम्पत्ति छीनने तथा शेष के ऊपर भारी कर लगाने के नियम तो वर्तमान अवस्था में भी पेश किये जा सकते हैं और पास भी हो सकते हैं। किन्तु सम्पूर्ण सम्पत्ति छीनने के कार्य में जो घोर संग्राम करना होगा वह तो और भी कठिन कार्य है। किन्तु मेरे लिए तो कठिनता और व्यवहार्यता का प्रश्न ही नहीं। जिन्होंने अपराध नहीं किया, जो सम्पत्ति का सदुपयोग कर रहे हैं उनकी सम्पत्ति छीनना व्यवहार्य (Practieable) हो तो भी नहीं छीननी चाहिए क्योंकि यह अन्याय है। सच बात तो यह है कि यह (Practicable और Impracticable) की समस्या है ही रोगियों और नपुंसकों के लिए। नौजवानो ! उठो और अपना रास्ता काटो। जब रास्ता तैयार हो जायेगा तो यह लम्बे मुंह लटकाने वाले भी पीछे-पीछे चले आवेंगे !

छठा प्रश्न यह उठाया जाता है कि अब हम क्या करें ? सो इसका उत्तर यह है कि जहां कहीं भी किसी नौजवान को यह समझ में आ जाये कि वर्ण-व्यवस्था के अनुसार मनुष्य जाति का संगठन आवश्यक है वहीं —

(१) नौजवान लोग यह विचारना आरम्भ कर दें कि वह ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य इनमें से किस श्रेणी में आना चाहते हैं। ऐसे लोग दीक्षार्थी कहावेंगे।

(२) जो नौजवान इस निश्चय पर पहुंच जावें कि वह क्या बनना चाहते हैं वह वर्णाश्रम संघ से अपने स्थानीय आर्यसमाज से यज्ञोपवीत पूर्वक अपने वर्ण की दीक्षा ले लें। यदि उनकी संस्कारविधि में दी हुई विधि के अनुसार दीक्षा लेना किसी कारण अभीष्ट न हो तो जो उनकी दृष्टि में व्रत धारण का सब से पवित्र मार्ग हो उसके अनुसार व्रत धारण कर लें और इसकी सूचना वर्णाश्रम संघ को दे दें।

(३) अपने नगर में वर्णाश्रम में विश्वास रखने वालों का एक गढ़ बना लें।

(४) वर्णाश्रम संघ से नियमावली मंगा कर उसके विधि पूर्वक सभासद् बन जावें।

(५) बूढ़े लोग नौजवानों को इस रास्ते पर चलने को प्रेरणा करें।

(६) वर्णाश्रम संघ के सम्बन्ध में बड़ा ग्रंथ कायाकल्प है। उसमें इस विषय पर और भी विस्तार से विचार किया गया है।

चुनाव समाचार आर्यसमाज, अनाज मंडी, शाहदरा, दिल्ली

प्रधान—श्री आनन्द प्रकाश आर्य
मन्त्री— „ सत्य प्रकाश "निर्मोही"
कोषाध्यक्ष—श्री हरपाल सिंह

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार-२४९४०४
(डीम्ड यूनिवर्सिटी)

प्रवेश सूचना

सत्र १९८८-८९

निम्नांकित पाठ्यक्रमों में प्रवेश हेतु निर्धारित प्रवेश फार्म पर आवेदन पत्र आमंत्रित किये जाते हैं।

क्र. स.	पाठ्यक्रम	अवधि	प्रवेश योग्यता
१	विद्याविनोद (इण्टर)	२ वर्ष	संस्कृत तथा अंग्रेजी सहित मैट्रिक के समकक्ष, अंग्रेजी सहित पूर्व मध्यमा, विद्याधिकारी (गु का वि वि.) विशारद (पंजाब) विद्यारत्न प्राज्ञ महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक)।
२	अलंकार (वेदालंकार/ विद्यालंकार) (बी. ए.)	३ वर्ष	संस्कृत तथा अंग्रेजी सहित इण्टर या समकक्ष अंग्रेजी सहित उत्तर मध्यमा, विद्याविनोद, (गु. का वि. वि.) विशारद (पंजाब एवं रोहतक)।
३.	बी एस सी (गणित बायोग्रुप तथा कम्प्यूटर ग्रुप)	३ वर्ष	इण्टरमीडिएट विज्ञान सहित अथवा उसके समकक्ष परीक्षा। गणित तथा बायोग्रुप के लिए द्वितीय श्रेणी तथा कम्प्यूटर ग्रुप के लिए प्रथम श्रेणी।
४	एम. एस सी. (माइक्रो-बायोलोजी गणित तथा मनोविज्ञान)	२ वर्ष	बी. एस. सी. (बायोग्रुप) न्यूनतम ५०% प्राप्तांक बी एस-सी (गणित ग्रुप) द्वितीय श्रेणी बी. एस-सी (मनोविज्ञान के लिए)।
५	एम ए वेद, संस्कृत, दर्शन, प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्त्व, हिन्दी, अंग्रेजी, मनोविज्ञान, गणित।	२ वर्ष	बी. एस-सी, बी ए, बी काम अलंकार, विद्याभास्कर, शास्त्री, आचार्य, साहित्य रत्न (इलाहाबाद)।
६.	पी एच डी. वेद, संस्कृत, हिन्दी, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व, अंग्रेजी, मनोविज्ञान, गणित, वनस्पति विज्ञान तथा जीव विज्ञान, दर्शन शास्त्र।	४ वर्ष	सम्बन्धित विषय में स्नातकोत्तर उपाधि में ५५% अंक तथा बी ए ५०% अंक अथवा समकक्ष परीक्षा। संस्कृत एवं अंग्रेजी का सामान्य ज्ञान आवश्यक।
	स्नातकोत्तर डिप्लोमा (कमर्शियल मेथड्स आफ केमिकल पाथोजिन्स)	१ वर्ष	बी०एस०सी० (रसायन) ५०% प्राप्तांक
८.	स्नातकोत्तर डिप्लोमा हिन्दी पत्रकारिता	१ वर्ष	बी. ए. / अलंकार अथवा समकक्ष परीक्षा द्वितीय श्रेणी, स्नातक स्तर पर मुख्य विषय के रूप में हिन्दी का अध्ययन किया हो।
९	योग प्रमाण-पत्र	१ वर्ष	इण्टरमीडियेट विद्याविनोद या समकक्ष।
१०.	अंग्रेजी में दक्षता प्रमाण पत्र पाठ्यक्रम	३ मास	इण्टरमीडिएट अंग्रेजी सहित प्रवेश लिखित परीक्षा के आधार पर।
११.	संस्कृत 'प्रवेश' प्रमाण पत्र पाठ्यक्रम	१ वर्ष	हाई स्कूल अथवा समकक्ष परीक्षा।
१२	संस्कृत 'प्रवीण' प्रमाण पत्र पाठ्यक्रम	१ वर्ष	हाई स्कूल (संस्कृत) अथवा समकक्ष परीक्षा।

सामान्य सूचनाए —

१ जूनियर रिसर्च फैलो के लिए जिन्होंने विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा आयोजित परीक्षा उत्तीर्ण की है, उन्हें अध्येतावृत्ति अनुदान आयोग के नियमानुसार दी जाएगी।

२ विद्या विनोद तथा अलंकार पाठ्यक्रमों में निःशुल्क शिक्षा।

३ अलंकार पाठ्यक्रम में प्रवेशार्थी छात्राएँ प्रिंसिपल कन्या गुरुकुल ६० राजपुर रोड देहरादून द्वितीय परिसर गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय से सम्पर्क करें।

४ महिलाए, सैनिक, गुरुकुल विश्वविद्यालय कर्मचारी तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब द्वारा संचालित स्थानीय शिक्षा संस्थाओं के शिक्षक व्यक्तिगत रूप से एम.ए. तथा एम.एस सी (गणित तथा मनोविज्ञान) परीक्षा में बैठ सकते हैं।

५ वनस्पति तथा जीवविज्ञान में पी एच डी के लिए महिला उम्मीदवार आवेदन न करें।

६ एम ए में प्रवेशार्थी उन छात्र/छात्राओं को जिन्होंने स्नातक स्तर पर अंग्रेजी का अध्ययन नहीं किया उन्हें अंग्रेजी प्रमाण पत्र पाठ्यक्रम उत्तीर्ण करना आवश्यक होगा।

१ प्रवेश प्रक्रिया

पाठ्यक्रम क्रम संख्या ३ तथा ७ में प्रवेश योग्यता क्रम से किये जाएगे पाठ्यक्रम क्रम संख्या ८ मे प्रवेश योग्यता क्रम तथा प्रवेश परीक्षा के आधार पर होंगे। इन पाठ्यक्रमों तथा हिन्दी पत्रकारिता पाठ्यक्रमों में इच्छुक प्रवेशार्थियों का साक्षात्कार भी लिया जाएगा।

३ प्रवेश फार्म का मूल्य तथा प्राप्ति :

पी एच डी के अतिरिक्त अन्य पाठ्यक्रमों में प्रवेश हेतु फार्म ५/-रु. देकर आचार्य वेद/कला महाविद्यालय (कला विषयों के लिए) तथा आचार्य विज्ञान, महाविद्यालय (विज्ञान विषयों के लिये) प्राप्त किये जा सकते हैं। प्रवेश फार्म ८/- मनीआर्डर अथवा कुलसचिव के पक्ष में देय रेखांकित पोस्टल आर्डर भेजकर कुलसचिव कार्यालय से भी प्राप्त किये जा सकते हैं। पी एच.डी में पंजीकरण हेतु प्रवेश फार्म तथा नियमावली १०/ रु नकद देकर या १५/- रु० मनीआर्डर अथवा पोस्टल आर्डर भेजकर कुलसचिव कार्यालय से प्राप्त को जा सकती है।

४ प्रवेश फार्म प्राप्त होने की अन्तिम तिथि

पाठ्यक्रम क्रम संख्या १, २, ५, ६, १०, ११, १२, तथा १३	७ अगस्त १९८८
पाठ्यक्रम क्रम संख्या ३, ४, तथा ७	३१ जुलाई १९८८
पाठ्यक्रम क्रम संख्या ६	३१ अगस्त १९८८

(डा० वीरेन्द्र अरोड़ा)
कुलसचिव

(पृष्ठ २ का शेष)

आर्यसमाज का छठा नियम

सामर्थ्य और स्वाभाविक प्रसन्नता का लोप हो जाता है। आर्य दीक्षित को ऐसे कुव्यसनों से बचे रहना चाहिये।

छठे नियम के पालक को स्वच्छ और शुद्ध वस्त्र धारण करना उचित है। उसका वेश विहगम न हो, वरन् सभ्य और सरल हो। बाहर का बेढगापन प्राय भीतर की विक्षिप्तता का सूचक हुआ करता है।

शरीर-सरक्षण का बडा साधन भोजन है। इसके बिना देह का देवालय देर तक स्थिर नहीं रह सकता। वेश परिच्छद मे, ब्याह-बरात में और बाहर के आडम्बर मे जितना कम व्यय हो सके, करे। पर आर्यजन भोजन के व्यय मे अधिक सकोच से काम न ले। आर्यों का आहार शुद्ध और सात्त्विक हो पौष्टिक हो, रससारसहित हो। दूध, दही, घृत और मिष्ट पदार्थ उनके भोजन के मुख्य भाग हैं। जहाँ तक हो सके भोजन मे हित, मित और काल का अवश्य ध्यान रक्खे। अच्छी प्रकार पका और सिका हुआ अन्न चबाकर खाना स्वास्थ्यजनक कहा गया है। बार-बार खाना, जहा तहा, जिस समय, जो भी वस्तु मिले खाने लग जाना दूषित और हानिकारक है।

आर्यों को अपने घर-आगन स्वच्छ रखने चाहिए। गृहो को मैले कुचले रखना, आगनो मे कूडे-कर्कट के ढेर लगाये रहना रोग को निमन्त्रण देना है। आर्यजन का घर लिपा-पुता, धुला-बुहारा रहना चाहिए। कोठरियों मे पवन के गमनागमन के लिए गवाक्ष अवश्य रक्खे जाय। शयन-स्थान, स्वच्छ और पवन के आने जाने वाला नियत किया जाय।

दूसरो की शारीरिक उन्नति के लिए आर्यों को ये उपाय करने चाहिए—आय सभासद अपने बन्धुओ में, बाल-बच्चो मे सात्त्विक आहार की रीति प्रचलित करें। व्यायाम का स्वभाव डाले। बालकों को खेल-कूद मे, दौडने भागने मे, उछलने कूदने मे तथा अन्य अनेक साहस के कामो में प्रोत्साहन दे।

जनता के हितार्थ कूप, तडाग और बावडी का लगाना शारीरिक उन्नति के कारण हैं। धर्मशालाए और सराय बनवाना भी पुण्य कर्म हैं। समर्थ आर्यजन जनहित के लिए व्यायाम की सामग्री सहित व्यायामशालाओ की स्थापना कर, व्यायाम समितियों की नीव डाल, जातीय खेलो का प्रचार करे, सुगठित, परिपुष्ट, बलिष्ठ और व्यायाम में निपुणजनों को पारितोषिक देकर प्रोत्साहित करे। स्नानागार बनाना और घाटों की रचना करना भी सुधार के साधन हैं।

सामर्थ्यवान् आर्य आतुरो के लिए औषधालय खोले, दीन-दुखियों को सहायता दे, अनाथालय चलायें, सदावर्त्त—अन्न-सत्र—की स्थापना करे। असमर्थजनो में अन्न वस्त्र बांटे, विधवाओं और असहाय गृहस्थो को गुप्त सहायता भी दे।

छठे नियम का दूसरा भाग आत्मोन्नति है। इस अग को पालने वाले आर्य भक्त को प्रात साय, दोनों समय, सन्ध्या-वन्दन करना चाहिए। वह नियमपूर्वक ईश्वराधन के साधन करे। विवेक-बुद्धि से आत्मसत्ता को समझे और विचारे प्रतिदिन आत्म-भावनाओ का चिन्तन किया करें। वे आत्मभावनाएँ, ज्ञान भावना, अमर भावना और आनन्द भावना के भेद से, तीन होती हैं।

आर्यभक्त को ज्ञानात्म-भावना का चिन्तन करते समय इन भावों को विचारना चाहिए कि मैं रगो का, रूपों का, आकारो का साक्षी हूं। मैं छओं ऋतुओं के आने-जाने को देखता हू। मैं रात दिन के बढने घटने और ज्योतिष चक्र की चाल का द्रष्टा हू। मेरे सामने अनेक रूप-रग, आकार-प्रकार परिवर्तित हुए, अनेक बार सूर्यदेव उदय होकर अस्त हो गये, ऋतुराज बसन्त अनेक बार आया और चला गया, परन्तु मेरा ज्ञान एकरस बना हुआ है। मैं आज से अनेक वर्ष पहले भी इन वस्तुओं का ऐसा ही साक्षी था जैसा आज हूं। दिन नहीं रहे, रातें चली गयी, रूप बदल गये, आकार दिखाई नहीं देते, परन्तु उनका ज्ञान मेरे भीतर विद्यमान है। जिस प्रकार एक दर्शक के सामने से लाखों सैनिक निकल जाते हैं, पर उसका दर्शन जो पहले पहल आगे से निकलने वाले सैनिक के ज्ञान को अन्तिम सैनिक के ज्ञान के साथ मिलाता है, एक बना रहता है, ठीक उसी प्रकार मेरे सम्मुख लाखो परिवर्तन आकर चले गए, पर मैं उनके ज्ञान की लडी पिरोनेवाला द्रष्टा स्थिर हू। विकारों के नाश के साथ मेरा ज्ञान नष्ट नहीं होता। इसी कारण मैं ज्ञानस्वरूप हूं।

मैं गणना-शास्त्र द्वारा लाखों वर्षों की गिनती करता हू। बीते हुए बहुत वर्षों की बात की कडी आज के काल के साथ मिलाता हू। सैकडो वस्तुओ की सख्या करके उनकी एक क्रमयुक्त माला बना देता हू। भूतकाल के ज्ञान को वर्तमान काल के ज्ञान के साथ जोडकर उनको एक एक लम्बी लडी में ले आता हू। इसलिए अविकों का जाननेवाला एक पूर्वापर का सयोजक, भूतकाल के भावों का वर्तमान मे ज्ञाता, दोनों कालों का साक्षी, मैं आत्मा हूं और ज्ञानरूप हू।

बाल्य काल में मैं जिस स्थान मे बैठकर पढ़ा करता था, उसे आज भी देख रहा हूं। मेरा तन बदल गया, मन बदल गया, मस्तिष्क बदल गया, पर ज्ञान नही बदला। वह अब भी वही का वही है।

मेरे बाल्यकाल के दिन युवाकाल में लय हो गए। मेरी उस समय की कोमलता मेरा उस समय का भोलापन आज नहीं है। वह मिट गया। परन्तु ज्ञान नहीं मिटा। इन दिनों भी वे दिन मुझे रह रहकर स्मरण हो आते हैं। मेरी अवस्थाएँ नही रहीं, उस समय के सारे खेल मिट गए, पर मैं हू ज्ञानस्वरूप, जो उनके होने की आज साक्षी दे रहा हू। दस वर्ष पहले जिस सज्जन को मैंने यहां पर देखा था, आज इतने काल के अनन्तर भी उसे यहीं देख रहा हू। यह ज्ञान का अटूट तार मेरे ज्ञानमय होने का प्रबल प्रमाण है।

कल जो मित्र मुझे मिले थे, वे आज यहां नही हैं। परन्तु उनका ज्ञान मुझ मे विद्यमान है। मेरी जाग्रत अवस्था स्वप्न में नहीं रहती। इसके सारे ठाठ-बाट वहां नहीं दिखाई देते। स्वप्न के रागरग और दर्शन-स्पर्शन गाढ निद्रा में मिट जाते हैं। उस समय जाग्रत और स्वप्न दोनो का दृश्य अदृश्य हो जाता है। जागने पर स्वप्न और निद्रा के पदार्थ तो नहीं रहते, पर स्मृति—ज्ञान—ज्यों का त्यों बना रहता है। एक अवस्था में दूसरी दो नहीं रहतीं—मिट जाती हैं—परन्तु मुझे ज्ञानी का ज्ञान नहीं मिटता। वह तद्वत् एकसा बना रहता है। इसी कारण अवस्थाओं का साक्षी, उनके साथ न मिटनेवाला मैं, आत्मा, ज्ञानस्वरूप हूं। क्योंकि वस्तुओं अवस्थाओं के भेद के साथ मेरे ज्ञान में भेद नहीं आता। उसकी एकरूपता, काल, अवस्था, वस्तु और देश के भेद से बाधित नहीं हो सकती।

दूसरी अमर भावना है। इसके अभ्यासी को विचारना चाहिए कि जब तीनों कालो में, तीनों अवस्थाओं में मेरा ज्ञान एकरस बना रहता है, उसका नाश नहीं होता, तो ज्ञानस्वरूप तो मैं ही हू, इस कारण मैं अमर हू। मैं ज्ञानी किसी काल में, किसी देश में और किसी अवस्था में नहीं मर सकता। मेरी सत्ता कदापि कहीं भी नष्ट नही हो सकती।

यह अटल नियम है कि नास्ति से कभी अस्ति नहीं होती। कभी भाव से अभाव और अभाव से भाव नहीं होता। यदि कोई अभाव से भाव को मान भी ले तो ऐसी कोई युक्ति नहीं है जिससे वह यह सिद्ध कर सके कि जिसका कारण अभाव है, नास्ति है, वह अभाव और नास्ति से भिन्न भी कुछ है। इस नियम से मैं अपने होने का साक्षी हू। लाखों मनुष्यों के मेले में अपने आपको मैं नहीं भूलता। मुझे अपने व्यक्तित्व और पृथक्त्व का पूरा ज्ञान है। "मैं हू" इस बिन्दु को मान और स्थिर करके ही मेरे ज्ञान की रेखा लम्बी होती है, कार्य का चित्र खिचता है, क्रियाकलाप का मार्ग निश्चित किया जाता है। इस कारण मैं वस्तु हू। वस्तु का कभी नाश नहीं होता। अतएव मैं अविनाशी हू।

मैं अपनी पृथ्वी से सूर्य पर्यन्त और तारामण्डल को भी प्रकाशित करता हू। मैं ही इनकी लम्बाई-चौडाई को मापता हू। मैं सारे सौर लोक का उदयास्त बना रहा हू। मैं अङ्क हूं और ये सम्पूर्ण प्राकृत पदार्थ बिन्दु हैं। मेरे होने से इनकी गिनती हो रही है। मेरे अस्तित्व के बिना ये अङ्क, बिना बिन्दु की भांति निरर्थक हो जायें। दूसरे पदार्थों का प्रकाशक मैं काल के कृपाण से ऊपर हूं। वह मुझे मार नहीं सकता।

तत्त्वों के मिश्रण से अनेक विकार उत्पन्न हो जाते हैं। उन विकारों के रूप-आकार आदि में नयापन भी आ जाता है। दूसरे जड़ विकारों की भांति हमारी देह भी,

तत्त्वों का, एक विकार ही है। जब नाना जड विकारों में जीवन और चेतना दोनों का अभाव है, तब उन्हीं के सदृश इस विकार में प्राण और ज्ञान कैसे उत्पन्न हो गये ? प्राण और ज्ञान यदि विकार-जन्य होते तो दूसरे समान विकारों में भी पाये जाते। जड विकारों में इन दोनों का अभाव है। इस कारण आत्मसत्ता जड वस्तु से भिन्न है, विकार-जन्य नहीं है, किन्तु वह एक स्वतन्त्र वस्तु है। वस्तु का कभी भी नाश नहीं हो सकता। मैं भी वस्तु हू। इसलिए मैं अमर और अवि-नाशी हू।

जितने कर्म हैं वे सब कारणों से ही उत्पन्न होते हैं। कर्म में कारण का गुण बराबर बना रहता है। कार्य उत्पन्न होता है, इसीलिए नष्ट भी हो जाता है। जो उत्पन्न नहीं होता वह कार्य नहीं हुआ करता और न नष्ट होता है। मेरा आत्मा जड तत्त्वों का कार्य नहीं है, क्योंकि यह जीवन और ज्ञान है। जीवन और ज्ञान किसी भी जड तत्त्व में नहीं ज्ञात होते। उसमें ये दो गुण नहीं दीख पडते। इस कारण आत्मा कार्य न होने से अजन्मा है—अनुत्पन्न है। जो कार्य नहीं है, कभी भी नहीं बना, वह अमर, अविनाशी कहलाता है। अतएव मेरा आत्मा अमर, अमिट और नित्य है।

तीसरी आनन्द भावना है। आत्मोन्नति के अभिलाषी को आनन्द भावना के भावों का इस प्रकार चिन्तन करना चाहिए — सब सुख भीतर है। अन्तरात्मा में ही है। बाहर तो केवल तृष्णा है, वासना है, और इच्छाओं के जटिल जाल के फैलने का क्षेत्र है। जब मनुष्य को किसी वस्तु की चाह होती है, तब उस वस्तु की प्राप्ति के लिए उसका चित्त व्याकुल बना रहता है। जब उस वस्तु की प्राप्ति हो जाती है, तब उसके चित्त में सन्तोष आ जाता है। उसे सुख प्रतीत होने लगता है। यह सुख विषयों में भटकती हुई चित्तवृत्तियों के भीतर आने—आत्मरता प्राप्त करने—के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।

जिस समय चित्त विषयाकार होता है, बाह्य जगत् में भटकता फिरता है, जिस समय मन ठिकाने नहीं रहता और चारों ओर दूर-दूर की दौड़ लगाया करता है, उस समय भोगोपभोग चाहे जितने ही प्राप्त हों, परन्तु उसे सुख नहीं होता शान्ति नहीं मिलती। सुख और शान्ति तो चित्त के प्रशान्त और मन के एकाग्र होने पर प्राप्त होते हैं। जब वे प्रशान्त और एकाग्र होते हैं, तब इनका निवास आत्मा में हुआ करता है। इसीलिए कहा जाता है कि सुख सन्तोष है, और सन्तोष मन के संयम मे है। मनोनिग्रह और इन्द्रिय-विजय ये सब अपने भावों को बाहर से भीतर लाने के भेद हैं। इनको संक्षेप से आत्मदेव का अपने आप में स्थिर होना कहा जा सकता है।

सुखानन्द आत्मा में है। सन्तों ने इस पर सुषुप्ति का उदाहरण दिया है कि सुषुप्ति में पांचों इन्द्रियों के विषय नहीं रहते, संकल्प-विकल्प का लय हो जाने के कारण मन को मनोमोदक भी नहीं मिलते, परन्तु सुख असीम होता है। सुषुप्ति का वह सुख निर्विषय होता है, उसमें मनोराज्य का लेश भी नहीं दिखाई पडता। उस समय सारी इन्द्रियों की सब शक्तिया, मन का सारा सामर्थ्य और बुद्धि का सम्पूर्ण बल, बाहर से लौटकर, आत्मा में चला जाता है। आत्मा में इनका एक प्रकार का लय हो जाता है। ऐसी अवस्था मे जो आनन्द हुआ करता है, उसका स्रोत आत्मा से भिन्न दूसरा कोई भी नहीं है। अनन्त आत्मा का निवास स्वात्म में ही है। इसीलिए सुख का सागर भी वहीं ठाठें मार रहा है।

आत्मोन्नति के अभिलाषी को उचित है कि ये साधन उपयोग में लावे .—इन्द्रिय-संयम और मनो-निग्रह में वह पूरा प्रयत्न करे। कठिन से कठिन कार्य में भी उत्साह और साहस को हाथ से न जाने दे। विपत्ति और विरोध के वज्रपात पर भी चट्टान की भांति धैर्यवान् बने रहना, प्राणों तक को जोखिम में डालकर, कार्य-क्षेत्र में निर्भयता से खड़े रहना, ये सब आत्मोन्नति के चिह्न हैं। जिसका आत्मा उन्नत है, वह कार्य करने में कुशल, पुरुषार्थी और पराक्रमी हुआ करता है। वह दान-दक्षिणा में दरियादिल और उदारचेता होता है। जनता की सेवा में तन, मन, धन देता है। दीन-दु:खी और दरिद्रों को सहायता देने मे कभी संकोच नहीं करता। पीडित प्राणी को देखकर उसके हृदय से सहानुभूति और दया की नदी बह निकलती है। वह क्षमा-शीलता और सन्तोष का धाम बन जाता है।

आत्मोन्नति का इच्छुक अपने-परायों पर प्रेम प्रदर्शित करे, आत्मा परमात्मा में, गुरुजनों में, वेद-शास्त्र में और कर्म-धर्म में श्रद्धा-भक्ति और विश्वास बनाये रखे, सत्संग में बड़े भक्तिभाव से जाए, भजन कीर्त्तन में भावनापूर्वक भाग ले।

आर्य दीक्षितजन को जनता की आत्मोन्नति के लिए जो साधन उपयोग में लाने चाहिए, वे ये हैं —, सामर्थ्यवान् जन मनोरम धर्म मन्दिर निर्माण करायें, धर्म-पुस्तकें बांटे, सन्तजनों के सत्संगों का प्रबंध करे, कथा-कीर्त्तन बैठायें, भजन-संगीत सुनने के साधन और अवसर उप-स्थित करे। इन शुभ कर्मों में प्रत्येक आर्य सामाजिक सज्जन को यथा-शक्ति भाग लेना उचित है।

आर्यदीक्षित जन ऐसे साधन अवश्यमेव उपस्थित करें जिनसे जनता में सुशिक्षा फैले, लोगों को आत्मज्ञान का दान मिले, सदाचार की शिक्षा उपलब्ध हो महापुरुषों के पवित्र जीवनों को जानने, पढ़ने और सुनने का सुअवसर हाथ लगे, कुव्यसनों का निवारण हो और लोग निर्भय, साहसिक, पराक्रमी, धीर और वीर बनें।

छठे नियम का तीसरा भाग सामाजिक उन्नति है। उसका अनु-शीलन इस प्रकार करना चाहिए — व्रती आर्यजन अपने गृह में संस्कारों चलावे, जहां तक हो सके भ्रम को न आने दे पुत्र-पुत्रियों को सुशिक्षा प्रदान करे, उन्हें गुणी, विनीत, सभ्य और सुशील बनाये, शिष्टाचार की रीति बताये, अपने पारिवारिक जीवन को पूर्णतया पाले, सम्बन्ध धर्म को दूषित न होने दे। परिवार में मेल-मिलाप, प्रेम-प्रीति-रीति-भांति विनय-नियम और आदर-सम्मान आदि शुभा-चारों को प्रचारित रखे। आप भी सभ्यता और उदारता आदि गुणों को धारण करके समाज का एक उपयोगी अंग बन जाय।

दूसरों की सामाजिक उन्नति के लिए आर्य सभासद् को चाहिए कि अपने जीवन का कुछ भाग सार्व-जनिक कामों में भी लगाये। सार्व-जनिक हितकर कार्यों में, यथाशक्ति तन-मन-धन प्रदान करे, जनता की सुशिक्षा में भाग ले, जैसे भी बन पड़े, जनता का आचार-विचार सुधारे—समुन्नति करे।

जन-समाज की जड में कई ऐसी कुरीतियों का घुन लग जाया करता है कि वह घुने हुए दाने की तरह भीतर खोखली हो जाती है। जाति के महावृक्ष पर कभी-कभी कृपणता और कायरता की ऐसी आकाश-बेल फैल जाया करती है कि उसके प्रत्येक पत्ते, पुष्प और शाखा को सर्वथा शुष्क बनाकर ही छोडती है। इसी कारण जनता के हितार्थ समाज-संशोधन की आवश्यकता हुआ करती है। संशोधन के बिना समाज जी ही नहीं सकता। आर्य सभासद् का यह पवित्र कर्त्तव्य है कि जन-हित से प्रेरित होकर समाज-संशोधन और समाज-सुधार के क्षेत्र में जितना बन सके, काम करे। इसमें पीछे न हटे। समाज मे विवाह की रीतियों का सुधार करना, जाति बिरादरी के व्यय मे कमी करना, अपने कार्य क्षेत्र का काम समझे, मादक वस्तुओं का सेवन बन्द करावें और लोगों को खोटे व्यसनों से बचाने के लिए बल लगाये।

दीन-दलितजनों का उद्धार भी आर्यजनों का करणीय कर्म है। इस काम में जितना सामर्थ्य लगाया जाय, थोडा है। आर्यसमाज की आधारशिला रखते समय ही दलित-जनों के उद्धार का गुरुतर भार आर्यजनों ने अपने कन्धों पर लिया था। गिरे हुए भाइयों को उठाना, बिगड़ों को फिर बनाना, भूलों-भटकों को सन्मार्ग पर ले आना, दीन-दलितों को सुधारना और निर्बलों का पक्ष अवलम्बन करना आर्य-समाज की जीवन-जड है—आर्य-कर्तव्य की माला जपने का मूल मंत्र है। इस कर्तव्य-कर्म को करने के लिए जो भी साधन प्राप्त हो, उन्हें पूर्ण रीति से उपयोग में लाना, जनता की आर्थिक दशा को सुधारना भी सामाजिक उन्नति का एक भाग है। इस कर्तव्य का पालन करने के लिए आर्य स्त्री-पुरुषों को अर्थशास्त्र के मौलिक सिद्धान्त पहले आप समझकर फिर दूसरों को समझाने चाहिये। वे जिस देश और जाति मे हों उसका हित करें, वहीं की बनी वस्तुओं का उपयोग करें और कला-कौशल को बढ़ायें।

समाज के सुधार और उत्थान के लिए सभाएं लगाना, सामाजिक पत्रिकाएं निकालना, सामाजिक महोत्सव मनाना समाजोन्नति के समुज्ज्वल अंग हैं। इनसे जनता में ज्ञान, एकता, कर्मण्यता, उत्साह, साहस और आवेश आदि गुण दुगुने चौगुने बढ जाते हैं। उपर्युक्त कार्यों में आर्यजनों को अवश्य योग देना

(शेष पृष्ठ १० पर)

प्रान्तीय आर्य महिला सभा का वार्षिक साधारण अधिवेशन संपन्न

प्रान्तीय आर्य महिला सभा का साधारण सभा अधिवेशन आर्यसमाज मन्दिर दीवान हाल में सम्पन्न हुआ, जिसमें सर्वसम्मति से निम्न प्रस्ताव पारित किये गये —

१ हरिजनों तथा सतीप्रथा के सम्बन्ध में पुरी के शंकराचार्य स्वामी निरंजन देव तीर्थ द्वारा दिये गये असवैधानिक वक्तव्य के लिए सरकार से मांग की गयी कि शंकराचार्य के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही की जाये। हरिजनों के मन्दिर प्रवेश, सतीप्रथा तथा आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती के सम्बन्ध में पुरी के शंकराचार्य स्वामी निरंजन देव तीर्थ के वक्तव्य की प्रान्तीय आर्य महिला सभा घोर निन्दा एवं भर्त्सना करती है। उनका वक्तव्य राष्ट्रघाती एवं असवैधानिक है। हरिजनों के मन्दिर प्रवेश की अनुमति न देना देश को तोडने का एक षड्यन्त्र है। शंकराचार्य के विरुद्ध शीघ्र एवं कठोर कार्यवाही के लिए यह सभा साग्रह अनुरोध करती है।

२ यह सभा सूचना एवं प्रसारण मन्त्री श्री हरकृष्ण लाल भगत से अनुरोध करती है कि वे दूरदर्शन एवं आकाशवाणी पर अमीर खुसरो जैसे दिखाये जाने वाले सीरियल को तुरन्त बन्द करायें, क्योंकि ऐसे सीरियलों को दिखाने से साम्प्रदायिक सद्भाव बढ़ता नहीं है, बल्कि इतिहास को तोड मरोडकर पेश करने से जनता में रोष फैलता है। आर्यों को विदेशी और बर्बर तथा महमूद गजनवी की भांति विदेशी आक्रान्ता बताने की यह सभा घोर निन्दा करती है।

३ पंजाब से आतंकवाद को समाप्त करने के लिए वहां पर तुरन्त सैनिक शासन लागू किया जाये तथा पाकिस्तान सीमा के साथ साथ सुरक्षा पट्टी बनाई जाये। सभा भारत सरकार एवं दिल्ली प्रशासन से यह भी मांग करती है कि पंजाब से आतंकवाद के डर से पलायन कर आये हिन्दू परिवारों को की तुरन्त रोटी, रोजी और आवास की व्यवस्था करें या उन्हें आवास के अतिरिक्त अन्तरिम राहत के रूप में १०००—रुपये प्रति परिवार प्रतिमाह दिया जाये। दिल्ली की स्त्री आर्यसमाजों द्वारा बोट क्लब पर पंजाब विस्थापितों की लगातार सहायता किये जाने की भी प्रशंसा की गयी।

४. दिल्ली प्रशासन द्वारा तम्बाकू, सिगरेट को प्रोत्साहन देने वाले एवं नशीले पदार्थों के सम्बन्ध में दिये जाने वाले विज्ञापनों को रोक का भी सभा स्वागत करती है और इस सुन्दर कार्य के लिए उपराज्यपाल श्री हरकृष्ण लाल कपूर और कार्यकारी पार्षद श्री बंसीलाल चौहान का धन्यवाद करती है।

५ कुवैत में अन्तिम सरकार पर प्रतिबन्ध लगाये जाने के लिए केन्द्रीय विदेश मन्त्री को पत्र लिखा जाये कि वे कुवैत सरकार से बात कर इस प्रतिबन्ध को हटवायें।

प्रकाश आर्या
महामन्त्री

वार्षिक चुनाव आर्य-समाज तिलक-नगर

आर्यसमाज तिलक नगर नई-दिल्ली-११००१८ का वार्षिक चुनाव रविवार दिनांक १७ जुलाई १९८८ को कैप्टन यशपाल जी, प्रधान आर्यसमाज महावीर नगर की अध्यक्षता में निम्न प्रकार हुआ —

प्रधान—श्री वीरभान जी वीर (रिटायर्ड प्रिंसिपल)

महामन्त्री—श्री अरुण कुमार जी सभरवाल, कोषाध्यक्ष-श्री हरदेव जी ग्रोवर

अरुण सभरवाल
महामन्त्री

योग साधना शिविर

म० नारायण स्वामी आश्रम रामगढ तल्ला (जि० नैनीताल) में योग-साधना शिविर १६ सितम्बर से २५ सितम्बर तक लगेगा जो सज्जन इसमें भाग लेना चाहें वे सूचित करें। आश्रम की देखभाल स्वामी सोमानन्द अध्यक्ष 'वेद प्रचारक मण्डल, दिल्ली-५ कर रहे हैं। प्रबन्धक के रूप में स्वामी भजनानन्द काम कर रहे हैं। यह स्थान रमणीक तथा दर्शनीय है।

—सोमानन्द

(पृष्ठ ४ का शेष)

अभिवादन का प्रभाव

व्यक्ति नहीं देखा होगा, जो बिना प्रणाम किए किसी को आशीर्वाद देता रहा हो। बिना अभिवादन किए किसी पूज्य व्यक्ति से बात करना नीचता का प्रतीक माना जाता है। यहां तक कि हम पत्रों में भी अभिवादन सूचक शब्दों का प्रयोग करते और अपना स्नेह प्रकट करते हैं।

अपने देश में बड़े-बड़े राजा-महाराजा भी ऋषियों-मुनियों का अभिवादन करते थे और उनसे आशीर्वाद प्राप्त करते थे। आपने बहुत से लोगों के मुख से कथाओं में सुना होगा या पढ़ा होगा कि फलां ऋषि ने फलां व्यक्ति को आशीर्वाद दिया था और उस आशीर्वाद से उसका जीवन बहुत सुखी हुआ। वास्तव में सच्चे हृदय से दिया हुआ आशीर्वाद व्यक्ति के जीवन में फलीभूत होता है। अभिवादन अपना प्रभाव शीघ्र हृदय पर डालता है। अध्यापक और छात्र का सम्बन्ध मधुर अभिवादन पर अच्छा माना जाता है। यदि कोई छात्र अपने अध्यापक को अभिवादन नहीं करता है तो उसे नितान्त बुरा माना जाता है। इसीलिए अपने सम्बन्ध को मधुर बनाने के लिए हम प्रतिदिन अपने सम्बन्धियों से, मित्रों से, बड़ों से अभिवादन करते हैं। ईश्वर को "नम" शब्द बहुत ही प्रिय है। इसीलिए वेदों में उसे बार-बार नमस्कार किया गया है। यदि आप अपने से बड़ों को प्रसन्न करना चाहते हैं तो उनसे कायदे से अपने हाथों को जोड़कर, उसे हृदय से लगाकर तथा मस्तक को झुकाकर अभिवादन करें। ऐसा अभिवादन करने पर उनके हृदय पर जादू का सा प्रभाव पड़ेगा। इसे आप अपने जीवन में उतारकर देख सकते हैं। □

(पृष्ठ ६ का शेष)

आर्य समाज का छठा नियम

चाहिये, उनका प्रबन्ध करना चाहिए। ऐसी विधि से काम किये जायें जिनसे जनता की सभ्यता का प्रकाश हो। कोलाहल से आकुल और बच्चों के रोने भींकने से गर्जायमान सभाएं असभ्यता का शिक्षणालय बन जाया करती हैं। जिस सभा में, यात्राओं, आदि में लोग गम्भीर न हों, सातवें सुर में एक दूसरे को पुकार रहे हों, परस्पर बातें करने लग जाए, ठेलम-ठेली से आगे घसें, धक्के-धमाके से आगे बढ़ें समझो कि उस सभा में और यात्रा में असभ्यता का पूर्ण राज्य है, शिष्टाचार का नाम तक नहीं। ऐसी सभा और यात्रा का मानव जाति के काम का कोई नाम रखना मनुष्यता को अपनी पदवी से पतित करना है। इस कारण आर्यजनों को अपने मेले-महोत्सव में, सभा-सत्संग में और यात्रा आदि में गम्भीरता, सभ्यता और शिष्टता की पूर्ण रक्षा करनी चाहिए। उन्हें ऐसा प्रबन्ध करना चाहिए जिससे वे काम दूसरों के लिए आदर्श और दृष्टान्त बन जायें।

सामाजिक उन्नति के इच्छुक आर्यजनों को उचित है कि परस्पर मेल-मिलाप बढ़ावें, जनता में ऐक्य सम्पादन करें, संगठन तथा सुनियमता की उन्नति दें, अपनी न्याय-सभा नियत करके सामाजिक झगड़ों को शान्त कर लिया करें, दूसरों की भी वैर-विरोध मिटाने में सहायता दें, और जो भी बातें आर्यसमाज के लिए हितकर हों उनको क्रियात्मक रूप में लायें। ●

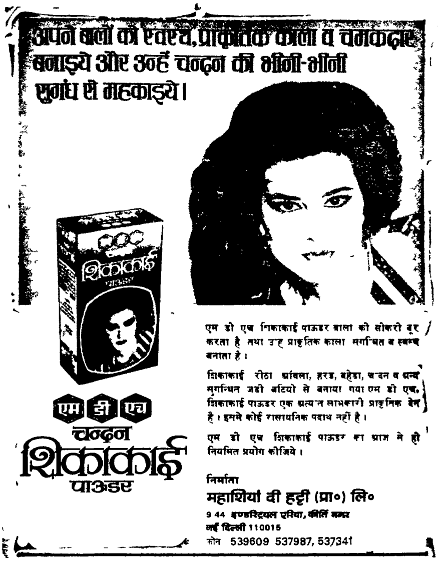
—आवश्यक सूचना—

हरितृतीया पर्व और वेदप्रचार दिवस का आयोजन

प्रान्तीय आर्य महिला सभा द्वारा हरितृतीया और वेदप्रचार दिवस समारोह का आयोजन मंगलवार ९ अगस्त १९८८ को प्रातः ११-०० बजे से सायं ५-०० बजे तक लोधी गार्डन पार्क में किया जा रहा है। दिल्ली की समस्त स्त्री आर्यसमाजों से अनुरोध है कि वे इस तिथि में अपना कोई उत्सव न रखें और अधिक से अधिक बहनों सहित विशेष बसों द्वारा पहुंचकर समारोह को सफल बनायें। वेद प्रचार दिवस और मन्त्र प्रतियोगिता का आयोजन ४ सितम्बर १९८८ को प्रातः ११-०० बजे से आर्यसमाज पंजाबी बाग नई दिल्ली में आयोजित की गयी है। मन्त्र प्रतियोगिता में यजुर्वेद ३१ वें अध्याय को कंठस्थ करना है।

प्रकाश आर्या महामंत्री


लाखों लोगों की पसंद
एम डी एच दंत मंजन
23 जडी बूटियो से निर्मित
आयुर्वेदिक औषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दंत सुरक्षा
दांतो का दर्द, मुंह की दुर्गन्ध
मसूड़ों की सूजन, ठंडा गर्म
पानी लगना मुंह में छाले होना तथा
दांतो की अन्य बीमारियों का घरेलू इलाज
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
प्रतिदिन प्रयोग करें
अपने निकटतम
दुकानदार से खरीदें
सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9/44, इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-110015 फोन 537987, 537341


अपने बालों को स्वस्थ, प्राकृतिक काला व चमकदार बनाइये और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी सुगंध से महकाइये।
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर
एम डी एच शिकाकाई पाउडर बालों की सीकरी दूर करता है तथा उन्हें प्राकृतिक काला सुगन्धित व स्वच्छ बनाता है।
शिकाकाई रीठा आंवला, हरड़, बहेड़ा, चन्दन व अन्य सुगन्धित जड़ी बूटियों से बनाया गया एम डी एच शिकाकाई पाउडर एक अत्यन्त लाभकारी प्राकृतिक देन है। इसमें कोई रासायनिक पदार्थ नहीं है।
एम डी एच शिकाकाई पाउडर का आज से ही नियमित प्रयोग कीजिये।
निर्माता
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9 44 इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर
नई दिल्ली 110015
फोन 539609 537987, 537341


आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...!
Groversons
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
अजमल खान रोड
करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
फोन 582036 5715878
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
alignpoint

R. N. No. 32387/77 Post in N.D P.S O on 4, 5-8-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० नं० डी० (सी०) ७५१ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

(पृष्ठ १ का शेष)

राष्ट्रभृत् महायज्ञ एवं वेदकथा सम्पन्न

हमें संस्कृत की रक्षा करनी है। हमें पांच महायज्ञों में स्वाध्याय को जोड लेना होगा। तभी हम संस्कृति की रक्षा कर सकेंगे। आज हमने ऋषि लंगर का आयोजन किया है। यह सब के लिए है, समता के लिए है। इसमें कोई बडा छोटा नहीं है, सभी समान हैं। हमारा कर्त्तव्य है कि जिनके मन मे बड-छोटे का विकार है, उसे समाप्त कर द। जन्म से सब बराबर हैं—कोई बडा-छोटा नहीं है। वर्णाश्रम व्यवस्था का पालन करने से ही हमारा राष्ट्र उन्नत हो सकता है।

प्रतिदिन रात्रि में वेदकथा का भी आयोजन किया गया। कथा से पूर्व प० सत्यपाल मधुर प० सत्यदेव स्नातक, पं० वेदव्यास और गुलाबसिंह राघव क भजनोपदेश हुए। स्वामी जी महाराज ने प्रश्न किया— कोऽसि, कतमोऽसि, कस्यासि, को नामासि उन्होंने स्वयं ही उत्तर दिया—वेद कहता है—'अहं इन्द्रो न पराजिग्ये।' स्वामी जी ने कहा कि मैं इन्द्र हू, मैं इन्द्रियों का स्वामी हू। मैं अपने धन को पराजित नहीं होने दू गा। उन्होंने प्रेरणा दी कि मनुष्य मात्र को चाहिए कि वे अपने धन को पहचानें, उसे समृद्ध करें। उसे श्रेष्ठतम स्थिति तक पहुचाएं। अपने धन को पराजित न होने दें। तभी वे धन्य कहलायेंगे। यह धन संस्कारों से प्राप्त होता है। वर्णाश्रम व्यवस्था के आधार पर चलने से प्राप्त होता है। पंच महायज्ञ करने से प्राप्त होता है। छठा यज्ञ-स्वाध्याय भी इसमें सहायक है। शुद्धा पूता भवत यज्ञियास'—मनुष्य यज्ञ से शुद्ध पवित्र और सात्त्विक होता है।

स्वामी जी महाराज की कथा ने शालीमार बाग के निवासियों को एक नई ऊर्जा, एक नई चेतना और एक नई अस्मिता प्रदान की। □

पावमानी गीत माला

ओ३म् ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा ॥ इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः —इदं न मम ॥१॥

ये बाधा घोर समस्यायें, हम इनसे छुटकारा पाएं।
जो जीवन में बन्धन आयें, हम इनसे पार निकल जायें ॥
एक नहीं सैकड़ों हजारों,
इस यज्ञ मार्ग के बन्धन हैं,
जो दूर दूर तक फैल रहे
दुर्धर्ष क्रूर अति क्रन्दन हैं।
शुभ कर्म करें करुणा पायें, श्रुति नियम सभी हम अपनायें।
जो जीवन में बन्धन आयें, हम इनसे पार निकल जायें ॥
यह सृष्टि नियम कितने कठोर
अनुपालन इनका भारी है।
कर सकें अनुसरण इनका यदि
तो राह बने सुखियारी है।
विद्वान् और शिल्पी आयें, हाथ पकड कर हमें उठायें।
जो जीवन में बन्धन आयें, हम इनसे पार निकल जायें ॥
'तुम घबडाओ मत, सोचो,
तेजस्वी वीर आ समझायें
तो आये मुक्ति पथ बन्धन से
हम साथ विष्णु के मुसकायें
करें सान्त्वना आहुति पायें, प्रभु प्रगति प्रेरणा दे जायें।
जो जीवन में बन्धन आयें, हम इनसे पार निकल जायें ॥

सेवा में—

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५१

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ४३ | रविवार १४ अगस्त १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | श्रावण २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर ३० पौंड

आर्यसमाज की धवल कीर्ति को धूमिल करने का षड्यन्त्र

आचार्य भगवान देव के कुकृत्य से आर्य जगत् में रोष

एक तथाकथित आचार्य भगवानदेव नामक व्यक्ति कुछ समय से "योग मन्दिर" मासिक पत्रिका के द्वारा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली तथा उसके अधिकारी प्रधान श्री आनन्दबोध सरस्वती के विपरीत अनर्गल प्रलाप करता आ रहा है, जिसे सार्वदेशिक सभा ने बड़ी गम्भीरता से लिया और अविलम्ब उचित कार्यवाही की गई। सभा ने इस व्यक्ति को आर्यसमाज से निष्कासित कर दिया है।

इस व्यक्ति ने १९७९ में भी इसी प्रकार का प्रचार कर आर्यसमाज की छवि को धूमिल किया था। सभा द्वारा सख्त कार्यवाही करने पर इस व्यक्ति ने १९७९ में क्षमा याचना की थी और क्षमादान दिया गया था। इस वर्ष १९८८ में दोबारा फिर इसी प्रकार का दुष्प्रचार किया और आर्यसमाज की छवि को धूमिल करने का प्रयत्न किया। सभा ने १८ जून ८८ को अन्तरंग में आर्यसमाज से ४ वर्ष के लिए फिर निष्कासित कर दिया।

उस समय जो कार्यवाही हुई और आचार्य भगवान देव को आर्यसमाज से चार वर्ष के लिए निकाल दिया। श्री भगवानदेव इससे घबराये भी बौखलाये भी उन्होंने अपने किये पर खेद प्रकट किया। स्वामी जी के पास जाकर हाथ भी जोड़े और टाइप किया हुआ एक पत्र सार्वदेशिक सभा में दिया जिसमें उन्होंने कहा मैंने जो आरोप लगाये थे वे जांच करने पर गलत साबित हुए। मेरे लेखों से आर्यसमाज को धक्का लगा इसके लिए मुझे हार्दिक खेद है। आप कृपया वह २४-१-८८ का प्रस्ताव वापस ले लें।

यह पत्र पाठकों के सामने ज्यों का त्यों हम प्रकाशित कर रहे हैं।

आर्य जन स्वयं पढ़ कर विचारें कि वस्तुस्थिति क्या है और ऐसे व्यक्ति का चरित्र ही क्या है? इस व्यक्ति के कुकृत्यों पर समूचे आर्य जगत् में रोष फैला हुआ है—

१९७९ में भी इन्होंने आर्यसमाज की छवि खराब करने के लिए गलत प्रचार किया था। इनके

(शेष पृष्ठ १० पर)

सेवा में,

श्री स्वामी आनन्दबोध जी सरस्वती
प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा
रामलीला मैदान, नई दिल्ली-110002

विषय: सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा-देहली की अन्तरंग सभा दिनांक 24-1-88 के प्रस्ताव सं० 8 पर पुनर्विचार एवं वापस लेने हेतु

सादर नमस्ते।

सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा ने जो प्रस्ताव दिनांक 24-1-88 को सं० 8 के अन्तर्गत मेरे सम्बन्ध में पारित किया था, उसमें उल्लिखित होकर मैंने सार्वदेशिक सभा और उसके अधिकारियों के बारे में कुछ लेख लिखे थे। बाद में मैंने उनकी छानबीन की थी जो बिल्कुल गलत साबित हुए। यह सब भ्रान्ति से हो गया। इससे आर्य समाज के कार्य को काफी धक्का लगा। आपको और आर्य समाज को इन लेखों से बड़ा कष्ट हुआ है। मुझे इसके लिए हार्दिक खेद है। मैं सार्वदेशिक सभा को मानता हूं और आगे भी उसके अनुशासन में रहकर कार्य करता रहूंगा। इसलिए प्रार्थना है कि प्रस्ताव सं० 8 दिनांक 24-1-88 को वापस लेने की कृपा करें।

दिनांक: 11-6-88

भवदीय

भगवानदेव 11/6/88

(भगवानदेव शर्मा) भू०पू० संसद सदस्य
ब्लाक 19- 1008, लोधी कालोनी
नई दिल्ली-110003

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

आर्यसमाज का सातवां नियम

सब से प्रीति-पूर्वक, धर्मानुसार यथायोग्य वर्त्तना चाहिये।

लेखक—स्वामी सत्यानन्द जी महाराज

'सब से प्रीति-पूर्वक, धर्मानुसार यथायोग्य वर्त्तना चाहिये।'

इस नियम में दूसरों से मिल वर्त्तने के लिए धर्मानुसार यथायोग्य व्यवहार करना बताया है।

मनुष्य जन्म से ही सामाजिक जीव है। यदि इसे बन्धुवर्ग की सहायता और देख-रेख प्राप्त न होती तो यह पशु के समान जीवन व्यतीत करता। उस अवस्था में न इसे मानवी भाषा आती और न वह सभ्यता की सीढ़ियों पर ही पदार्पण कर सकता। और जो मानव ज्ञान-विज्ञान का विशाल और अति सुन्दर मन्दिर दीख रहा है, उसकी एक ईंट भी दृष्टिगोचर न होती। इसकी वेष विभूषा का कोई नाम भी न जानता इसकी षट्रस की स्वादु पाकशाला की आधारशिला भी न रक्खी जाती इसके कला कौशल कहीं कल्पना में भी न आ पाते। इसके मार्ग में यदि कहीं कोई जलाशय आ पडता तो यह डूब ही जाता, क्योंकि अन्य प्राणियों की भांति यह स्वभाव से तैरने वाला नहीं है। मनुष्य का प्राय सारा ज्ञान सीखने पर निर्भर है। माता, पिता, बन्धु-बान्धवों आदि के सयोग के बिना शिक्षा का मिलना असम्भव है। मनुष्य को जन्मते ही उक्त समाज मिल जाता है। इसी से वह उत्तरोत्तर उन्नति करने लगता है। यहां तक कि अन्त में राई से पहाड और चिंगारी से सूर्य बन जाता है।

मनुष्य जब सामाजिक जीव है और इसका निर्वाह समाज के बिना नहीं हो सकता, तब समाज में रहने के लिए, व्यवहार करने के लिए, इनमें कुछ गुण होने चाहिए, मेल-जोल के कुछ नियम होने चाहिए। उन गुणों में पहला गुण, जो समाज के सम्बन्ध में परमावश्यक है, प्रेमपूर्वक व्यवहार है। पारिवारिक प्राणी में यदि प्रेम प्रीति-पूर्वक वर्तने का भाव मन्द हो जाय, उसका बन्धु-बान्धवों के सम्बन्ध का स्नेह शिथिल पड जाय तो इसके जीवन में प्रसन्नता नहीं रहती। सारे सुख नीरस हो जाते हैं। ससार की सारी सामग्री इसे दु:खदायी दीखने लगती है। इसी कारण, इस मनुष्य रूप सर्वश्रेष्ठ सृष्टि में सृजनहार ने स्नेह का स्वभाव अनिवार्य रूप से भरा है।

आर्यजनों को चाहिये कि वे अपने व्यवहारों में प्रीति-वृत्ति का प्रतिदिन अनुशीलन किया करें। सहानुभूति और स्नेह-सहित बर्ताव को सकल सफलताओं का साधन समझें। जिस जन के मेल मिलाप में कोमलता होगी, विनीतता होगी, सहानुभूति और सौहार्द-भाव होगा वह अवश्य ही प्रीति पूर्वक व्यवहार करेगा। ऐसा जन चाहे जहां जाय, जनता उसे चाहेगी। उसके विचारों का, कथनों का, आदर करेगी। लोग उसके अनुयायी बन जायेंगे।

बहुतेरे लोगों का विश्वास है कि नर-नारियों को वशीभूत कर लेने वाला कोई वशीकरण मन्त्र भी हुआ करता है। ऐसे मन्त्र की बात तो भ्रम मूलक है, परन्तु प्रेम का व्यवहार एक ऐसा मनोमोहक मन्त्र अवश्य है कि जिससे मनुष्यों के मण्डल, आप ही आप वशीभूत हो जाते हैं। श्रीराम ने इसी मोहिनी शक्ति के प्रभाव से वानर जाति के लाखों लोग अपने वश में कर लिये थे। युग-युग के जन प्रीति के पुण्य पाठ से बडे उत्तमोत्तम कार्य कर गये हैं। सच पूछो तो इस असार ससार में प्राय: सार प्रीति ही है, दु:खमय जगत् में सुख प्रीति है। आर्य धर्म के अनुयायियों को भी अपना प्रेममय बर्त्ताव ऐसा बनाना चाहिये कि लोग उनकी ओर खिचे चले आवें, आर्य-समाजी बनने में अपना सुख और सौभाग्य मानें।

प्रीति के व्यवहार के अभ्यासी को मन निर्मल रखना चाहिये। उनमें वैर-विरोध और द्वेष न हो। द्रोह और दाव-घात न हों। उसमें मनुष्य के प्रति घृणा का भाव न समाये। आर्यधर्मी वाणी को कटुता, कठोरता, अक्खडपन, पशुता, अपवाद और कुवचन आदि दोषों से बचावें। उसके कर्म कोमल विनय-युक्त हों। उनमें अवज्ञा, निरादर, अपमान, तिरस्कार और तर्जनादि लाञ्छन न लगने पावें।

आर्यों के व्यवहारों में कलह, विवाद, वितण्डा, अवज्ञा, लडाई-झगडा और खींच-तान का होना धर्म विरुद्ध है। उनकी सभाओं में तू तू, मैं मैं, न होने पावे, आपस में नोंक-झोंक न दिखाई दे। वे अपने धर्म आदि के कार्यों में और सभाओं मे प्रीति के व्यवहार-से गम्भीरता और सभ्यता को पूरा समय बनाये रक्खें। सभासद् आपस में फूट न फैलने दें। यदि दो चार में कभी मन मुटाव हो भी जाये तो पहले तो जिसमें धर्म-भाव अधिक हो, जो सच शक्ति को, मेल की मिठास को और सभासदों के भ्रातृ-भाव को अधिक अनुभव करता हो उसे अपने धर्म-भाई से क्षमा मांग लेनी चाहिए। यदि दोष दूसरे का ही हो तो भी अपने बन्धु से क्षमा याचने में लजाना अच्छा नहीं है। ऐसे कामों में क्षमा-याचक का अपना आत्मा अधिक उन्नत हो जाता है। और यदि वैमनस्य बहुत बढ़ गया हो तो आर्यों को अपनी न्याय-सभा से निर्णय करा लेना चाहिए। विरोध का काटा, बहुत दिनों तक हृदय में चुभा रहने देना बडा हानिकारक हुआ करता है। आर्यों का व्यवहार प्रीति-पूर्वक तो हो हो, परन्तु वह धर्मानुसार यथायोग्य भी होना चाहिए। "धर्मानुसार यथायोग्य" व्यवहार का तात्पर्य यह है कि जो जिस आदर-सम्मान का अधिकारी है, उसे धर्मानुसार वही आदर सम्मान दिया जाय। "धर्मानुसार" पद यह प्रकट करता है कि धर्म से गिरकर, धर्म को तिलाञ्जलि देकर किसी के साथ आदर सम्मान आदि का व्यवहार न किया जाय। उदाहरणार्थ, पुत्र का कर्तव्य है कि पिता की आज्ञा का पालन करे और सेवक का कर्त्तव्य है कि अपने स्वामी की सेवा करता रहे। परन्तु यदि पिता अपने पुत्र को मदिरापान करने की, कुव्यसन में कूदने की आज्ञा दे, या स्वामी सेवक को धर्म त्याग देने को कहे, निरपराध को दण्ड देने की प्रेरणा करे तो वे व्यवहार धर्मानुसार नहीं हैं। इस लिए इन्हें न किया जाय।

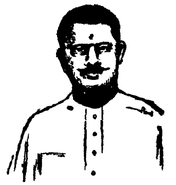
"धर्मानुसार और यथायोग्य व्यवहार के कर्त्तव्य का पालन करने के लिए आर्यों को चाहिए कि यज्ञादि कर्मों को बड़े आदर से किया करे, वेदी में शुद्ध स्वच्छ वस्त्र धारण करके बैठें, पुरोहित को आदर से बैठावें, उनसे दीक्षा लें। विधि के अनुसार कार्य करें, यज-मान के कर्मों को यथाविधि निभावें। पुत्र-पुत्री को उचित है कि अपने माता-पिता को किसी प्रकार का भी कष्ट-क्लेश न होने दें। प्रतिदिन प्रात उठकर उनको नमस्कार करें। सन्तान को यह अवश्य समझना चाहिए कि आर्य धर्म में पितृ-पूजन परमात्म-पूजन की भांति ही एक आवश्यक और उत्तम कर्म माना है। शास्त्रों में माता पिता दोनो साक्षात् देवता वर्णन किये गये हैं। पितृ व्रत का पालन करना पुत्र-पुत्रियों के लिए एक पवित्र कर्म है।

आर्यजन भ्रातृ-व्रत को भी कभी न भूलें। भ्रात भाव के प्रेमबन्धन को कदापि ढीला न होने दें। इसी प्रकार मित्र-धर्म के विमल भाव में भेद-भावना और द्रोह आदि दोषों को प्रवेश करने देना आर्य-धर्म के प्रति-कूल कर्म है। आर्य-धर्मी को सारे संबधों के धर्म यथाविधि पालने चाहियें। भार्याव्रत और पतिव्रत को पालने के लिए सरलता, सुशीलता, सदाचार और नि:स्वार्थ भाव अत्यावश्यक गुण हैं। इनको धारण करने से पति-पत्नी का प्रेम मन्द नहीं पडता। यह सम्बन्ध-सूत्र सदा अटूट बना रहता है। जहां इस सम्बन्ध में भेद-भाव आ जाये, स्वार्थ प्रवेश कर ले, सरलता न रहे, आचार-विचार में दोष दिखाई दे, वहां आपस में किरकिरापन आ जाता है, सारा सम्बन्ध-सुख फीका पड़ जाता है। आर्यजनों के गृहों में कलह का होना, वैमनस्य का बना रहना, परस्पर अवाच्य बोलना, मार-पीट तक की नौबत आना एक बडा भारी दोष है।

आर्यव्रती को अतिथि-व्रत का भी पालन करना चाहिए। जब कोई गुरुजन आंगन में प्रवेश करे, तब उसे आते देखकर प्रसन्न हो विक-सित नेत्रों से उनके दर्शन करे। गुरुजन, सम्मानित व्यक्ति और इष्टमित्रों को आते देख उत्थान-पूर्वक खड़े होकर उनका स्वागत करना उचित है। अभ्यागमन पूर्वक नम्र नमस्कार से उन्हें प्रतिग्रहण कर लिया जाना आर्य का धर्म है।

(शेष पृष्ठ ८ पर)

राष्ट्रीय एकता के हामी : 'बिस्मिल' और अशफाक



—ब्रजभूषण दूबे

देश की आजादी के लिए घर फूक तमाशा देखने वाले शाहजहांपुर उत्तरप्रदेश के क्रांतिकारी पण्डित रामप्रसाद 'बिस्मिल' तथा अशफाक उल्ला खा वारसी 'हसरत' काकोरी ट्रेन डकती केस के बन्दी थे। काकोरी केस कुल मिलाकर डेढ वर्ष से अधिक नही चला, किन्तु इस छोटी सी अवधि मे 'बिस्मिल' की प्रिय गजल—

सर फरोशी की तमन्ना अब हमारे दिल में है।
देखना है जोर कितना बाजु ए कातिल में है॥

बिना किसी बाहरी प्रयास के 'वन्दे मातरम्' के समान समस्त देश में लोकप्रिय हो गयी। काकोरी के शहीदों की शहादत के ६१ वर्षों बाद भी ये पंक्तिया आज भी लोगो को याद हैं और इन्हीं के माध्यम से काकोरी के शहीदो की याद होती रहती है।

पण्डित बिस्मिल तथा अन्य को जेल से छुडाने की योजना प० चन्द्रशेखर 'आजाद' तथा सरदार भगतसिंह ने अधिक खून-खराबे की आशंका से स्थगित कर दी थी। साथियों की ओर से कोई स्पष्ट संकेत प० 'बिस्मिल' को नहीं मिला। उस समय जेल के छूटने की कितनी छटपटाहट 'बिस्मिल' के दिल में थी यह उनकी 'वतन-अखबार' में छपी 'प्रेम-कविता' के शब्द शब्द से स्पष्ट झलकता है—

'मिट गया जब मिटने वाला, फिर सलाम आया तो क्या?
दिल की बर्बादी के बाद, उनका पयाम आया तो क्या?
काश अपनी जिन्दगी में, हम ये मंजर देखते,
यू सरे तुरबत कोई, महशर खराम आया तो क्या?
मिट गई जुमला उम्मीदे, जाता रहा सारा ख्याल,
उस घडी फिर नामावर, लेकर पयाम आया तो क्या?
ए दिले नाकाम मिट जा, अब तो कूचे यार में,
फिर मेरी नाकामियो के, बाद काम आया तो क्या?
आखिरी शब दीद के, काबिल थी 'बिस्मिल' की तडप,
सुबह दम गर कोई था, बाला ए-बाम आया तो क्या?

लगातार डेढ साल तक लखनऊ की विशेष अदालत में इन क्रांतिकारियो के विरुद्ध केस चला, जिसमे कलकत्ता के बारिस्टर बी० के० चौधरी, लखनऊ के डा० कृपाशंकर हजेला, हरकरणनाथ मिश्र, आर एफ बहादुर जी, गोविन्द वल्लभ पत, अजीत प्रसाद जैन, गोपीनाथ श्रीवास्तव, मोहन लाल सक्सेना तथा चन्द्रभान गुप्त ने पैरवी की, किन्तु ब्रिटिश हुकूमत के आगे उनकी एक न चली। अन्त में पंडित रामप्रसाद 'बिस्मिल', अशफाक उल्ला खां, ठाकुर रोशनसिंह तथा राजेन्द्र लाहिडी को फांसी तथा १४ अन्य को सजा सुनाई दी गयी। फांसी की सजा मिली 'काउन्सिल' में भी बहाल रही। फांसी के आदेश के बाद प० 'बिस्मिल' ने अभूतपूर्व मानसिक सन्तुलन, अपूर्व धैर्य, एकाग्रता एवं वचारिक स्थिरता का परिचय देते हुए अपनी आत्मकथा लिखकर जेल से बाहर 'पत्रकार' दशरथ प्रसाद 'द्विवेदी' के पास भिजवा दी। 'बिस्मिल' की आत्मकथा समस्त स्वाधीनता सेनानियों द्वारा लिखी आत्मकथाओं में अनन्यतम है और हिन्दी साहित्य की अमूल्य धरोहर भी है। इसकी तुलना नाजी अत्याचारों के शिकार क्रांतिकारी जूलियस फूचिक के 'नोट्स फ्राम दि गैलोज' से की जाती है।

फांसी का फंदा चूमने जा रहे प० 'बिस्मिल' ने अपनी कृति में साथ फांसी की सजा पाए शाहजहांपुर के साथी अशफाक उल्ला खा की दिलेरी, दोस्ती तथा देशभक्ति की दिल खोलकर प्रशंसा की है। अशफाक को योग्य मित्र तथा सच्चे और वीर के रूप में मार्गदर्शन देकर प० 'बिस्मिल' ने एक महान देशभक्त एवं कठोर क्रांतिकारी बना दिया था। अंग्रेज कूटनीतिज्ञ उस समय हिन्दू और मुसलमानों में फूट के बीज बोकर उन्हें आपस में लड़ाते और उनकी शक्ति को क्षीण करते थे। अंग्रेजों की इस कुटिल और घृणित नीति के विरुद्ध प० 'बिस्मिल' ने एक कट्टर मुसलमान को कट्टर हिन्दू के साथ फांसी चढने को तैयार करके ऐसी मिसाल कायम की जिसका जवाब उनकी शहादत के ६१ सालो बाद भी नहीं मिल सका?

क्रांतिकारी एवं कविता प्रेमी अशफाक उल्ला खा वारसी 'हसरत' का राष्ट्रीय दृष्टिकोण कितना सुलझा हुआ और विचार कितने ऊंचे थे—इसका परिचय अशफाक की निम्न कविता में खुलकर मिलता है—

"कुछ आरजू नहीं है, है आरजू तो यह है
रख दे कोई जरा सी, खाके वतन कफन में॥
ऐ पुख्तकार उल्फत, होशियार डिग न जाना
मीराज आशिका है, इस दार और रसन में।
मौत और जिन्दगी है दुनिया का सब तमाशा
फरमान कृष्ण का था, अर्जुन को बीच रन में।
सैयाद जुल्म पेशा, आया है जब से हसरत
हैं बुलबुले कफस में, जागा जगन चमन में।'

लखनऊ के तत्कालीन जेलर श्री चम्पालाल तिवारी ने प० बिस्मिल' को वहां फांसी लगाने से साफ इनकार कर दिया था। इस कारण बिस्मिल' को गोरखपुर स्थानान्तरित कर दिया गया। गोरखपुर जेल की फांसी की कोठरी से प० 'बिस्मिल' ने अपने प्रियतम मित्र अशफाक को एक पत्र लिखा था। उस पत्र की कुछ पंक्तियां को शहीद के ही शब्दों में पाठकों की जानकारी हेतु श्रद्धा सहित उद्धृत कर रहा हू—

'मुझे यदि शांति है तो यही कि तुमने संसार में मेरा मुख उज्ज्वल कर दिया। भारत के इतिहास में यह घटना उल्लेखनीय हो गई कि अशफाक उल्ला खा ने क्रांतिकारी आंदोलन में योग दिया। अपने भाई बन्धु तथा सम्बन्धियों के समझाने पर भी ध्यान नहीं दिया। गिरफ्तार हो जाने पर भी अपने विचार में दृढ रहे। जैसे तुम शारीरिक बलशाली थे, वैसे ही मानसिक वीर तथा आत्मा के उच्च सिद्ध हुए। इन सबके परिणामस्वरूप अदालत ने तुम को मेरा सहकारी ठहराया और जज ने हमारे मुकदमे का फैसला लिखते समय तुम्हारे गले में भी जयमाला पहना दी।

तुम्हें यह समझकर सतोष होगा कि जिसने अपने माता पिता की सम्पत्ति को देश सेवा में अर्पण करके उन्हें भिखारी बना दिया जिसने अपने सहोदर के भाग्य को भी देश-सेवा की भेंट कर दिया जिसने अपना तन मन धन सर्वस्व मातृ-सेवा में अर्पण करके अपना अन्तिम बलिदान भी दे दिया, उसने अपने प्रिय भाई अशफाक को भी उसी मातृ-भूमि की भेंट चढा दिया।"

फैजाबाद जेल में शहादत पाने से पहले वतन के नाम दिये अन्तिम पैगाम में, शहीद अशफाक ने बडी खूबी से कुछ कहा था जो आज के हालात में भी अपनी अहमियत रखता है

अशफाक का पैगाम

हिन्दुस्तानी भाइयो,

आप चाहे जिस मजहब या फिरके के मानने वाले हो, मुल्क के काम में एक दूसरे का साथ दीजिए। बेकार आपस में झगडा न कीजिए। रास्ते चाहे अलग अलग हों, लेकिन मकसद को हासिल करना चाहते हैं, फिर आपस में झगडे क्यों? एक होकर आप मुल्क की नौकर-शाही का मुकाबला कीजिए और अपने मुल्क को आजाद कराइये। इस मुल्क के सात करोड मुसलमानों में मैं पहला मुसलमान हू जो मुल्क की आजादी के लिए फांसी चढ रहा हू। यह ख्याल करके मुझे फख्र होता है। आखिर में मेरा सबको सलाम।

हिन्दोस्तान आजाद हो
मेरे भाई खुश रहें।

आर्यसमाज का तीसरा नियम

लेखक—रामसुमेर मिश्र, गोविन्दनगर, कानपुर

वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना, सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

महर्षि दयानन्द ने धार्मिक जगत् में और विचार के क्षेत्र में युग-परिवर्तन किया है। वेदों के विषय में भारी भ्रम लोगों में था और अब भी व्याप्त है। इस नियम द्वारा स्वामी जी वेदों के विषय में भ्रम निवारण करते हैं। उनकी घोषणा है कि वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है, पदार्थ-विद्या अर्थात् विज्ञान (साइंस) की पुस्तक नहीं है।

विज्ञान मनुष्यों द्वारा निर्मित विद्या है जो पदार्थ को जानने के के लिए इसके नाम, रूप व्यवहार का निरीक्षण परीक्षण करता है और उसके नियम को पकड़ कर प्रयोग करता है। इस प्रकार पदार्थों में व्याप्त नियम को जानकारी कर उन नियमों के अस्तित्व को देश काल कारण की कसौटी पर कसता है और तब सिद्धांत बनाता है। इस प्रकार प्राप्त ज्ञान की पुस्तक पदार्थ-विद्या की पुस्तक कहलाती है। महर्षि की घोषणा है कि वेद इस प्रकार मनुष्यों के प्रयत्नों से जाने हुए ज्ञान की पुस्तक नहीं है।

वेद सब सत्य-विद्याओं की पुस्तक है। जिज्ञासा की जागृति होने पर वेदना की असह्य स्थिति पर कहीं अज्ञात अव्यक्त से स्पर्श होता है और वह अपने को पूर्णत छिपाए रखकर जिज्ञासा की पूर्ति में सहायक होता है। मन्त्र भी कहता है—"तत् चक्षुः देवहितं पुरस्तात् शुक्रमुच्चरत्।" अर्थात् वह स्वयं किसी माध्यम से हमारे अन्दर बोलता है।

पशु भी इन्द्रियां रखते हैं, ज्ञान के बिना तो उनका भी कर्म नहीं होता, उनके पास जातीय ज्ञान है, उस जाति में जन्म लेते ही बीज में उनका ज्ञान पिरोया होता है जो आयु के साथ स्वत विकसित होता है। उन्हें यह ज्ञान बाहर से सीखना नहीं पड़ता है। बिल्ली को पेड़ पर चढ़ना जातीय ज्ञान से प्राप्त है किन्तु कुत्ता, शेर आदि पेड़ पर चढ़ नहीं सकते। मनुष्य जातीय प्राणी नहीं है, उसके बीज में कोई ज्ञान नहीं होता, वह सब कुछ सीख कर ही जानता है। सीखने से उसमें संस्कार आते हैं। यह संस्कार इसमें एक दृष्टि पैदा करते हैं। मनुष्य दृष्टि के प्रकाश में ही दृश्य को देखता है। लोगों में यह गलत धारणा है कि आंख के देखने से पदार्थ दीखता है। स्वामी जी कहते हैं कि इन्द्रियों से पदार्थ के गुण पकड़ में आते हैं, गुणों का तो मनुष्य में अनुमान होता है। गुणी का बोध ही ज्ञान है।

आदि मानव पशु से विकास कर के नहीं पैदा हो सकता क्योंकि पशु जातीय गुण वाला है और अपनी जातीय सामर्थ्य से प्रेरित होते हुए वह संस्कार पावे और उसकी दृष्टि से पदार्थ को देखने की कक्षा में आ नहीं सकता। मानव की सृष्टि ही पृथक् है, उसमें जातीय गुण कुछ भी नहीं होता। उसकी इन्द्रियां संस्कार के अभाव में गुणी का बोध नहीं करा सकती हैं। प्रयत्न और गलती (Trial and error) की प्रक्रिया का भी प्रारम्भ संस्कार के अभाव में सम्भव नहीं है क्योंकि उसके लिए भी ज्ञान की आवश्यकता है।

हम सब देखते चले आ रहे हैं कि मनुष्य का निर्माण परिवार और समाज में होता है, मनुष्य पैदा नहीं किया जा सकता क्योंकि उसमें जाति नहीं है। मनुष्य कुछ पाने के बाद ही देने योग्य होता है। मनुष्य के मन में उसका सखा सम्बन्धी अर्थात् उसका अपना बनकर स्पर्श मात्र से जब सलाह देता है तो उस सलाह को मनुष्य नि:संशय ही पकड़ उस पर चल पड़ता है। यह मन्त्र पकड़ने की सामर्थ्य मात्र ही शक्ति उसे जन्मना प्राप्त है। इस सामर्थ्य से ही वह प्रसव और प्रसव के पूर्व भी संस्कारों को पकड़ व्यवहार करने में सक्रिय हो जाता है। यह सब विद्याएं जिनसे मनुष्य सम्बन्ध स्थापित कर मंत्र प्राप्त करता और संस्कार अर्जित करता है उन्हें सत्य-विद्याएं कहते हैं। वेद इन्हीं विद्याओं की पुस्तक है जिन्होंने मनुष्य को मन्त्र दिए हैं; मनुष्य में आदि संस्कार सृजित किए हैं जिनसे मनुष्य में दृष्टियां आई हैं और इन दृष्टियों के प्रकाश में उसने दृश्य देखे हैं।

मनुष्य का क्षय न हो, इसके लिए मनुष्य का कर्तव्य है कि वह इन प्राप्त वेदों (मंत्र और संहिताओं) को भली भांति पढ़ें, समझें और अन्यों को पढ़ावें और समझावें। वेदों की रक्षा मात्र इसी पद्धति से ही सम्भव है। यह ऋण ईश्वर का है क्योंकि आदि सृष्टि में मानव का अवतार ईश्वर की कृपा से ही हुआ है और समय समय पर ईश्वर से संबंध स्थापित करने वाले उस युग के लिए संदेश भी ईश्वर से लेकर मानव समाज का उद्धार करते रहे हैं। वेद पूर्ण हैं। यदि इनको पढ़ा पढ़ाया समझा समझाया जाता रहेगा तो मानव समाज की समस्त समस्याओं के हल का ज्ञान प्रस्फुटित होता रहेगा। धर्म का बोध और उस पर चलना चलता रहेगा। इसका अभाव होते ही अधर्म, असत्य अज्ञान छाने लगेगा और मानव समाज दुःख और मृत्यु में डूबने लगेगा। अतः महर्षि ने सब आर्यों का परम धर्म यह बतलाया है।

मनुष्य जीवन और मानव समाज के लिए जहां बोध की परम आवश्यकता है वहां उसको विधि, निषेध, आदेश उपदेश की भी परम आवश्यकता है। यह सब भी सत्य विद्याओं से ही प्राप्त होते हैं इनकी

(शेष पृष्ठ ६ पर)

आर्यसमाज हडसन लाइन, किंग्जवे कैम्प :

दिल्ली, विकास प्राधिकरण द्वारा हडसन लाइन क्षेत्र को तोड़ दिये जाने पर पिछले दिनों ४० साल पुराने आर्यसमाज मन्दिर को भी तोड़ने की चेष्टा की गयी। इस संबंध में दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारी जून १९८७ में डी०डी०ए० के अधिकारियों को मिले थे तथा ५ जुलाई ८७ को एक बैठक करके निर्णय लिया गया था कि इस मन्दिर को टूटने नहीं दिया जायेगा। और यदि सरकार ने अनैतिक एवं भेदभाव पूर्ण नीति अपनाकर इसको तोड़ने की कोशिश की तो इसकी भयानक प्रतिक्रिया होगी। यह मन्दिर १९४८ से क्षेत्रीय जनता की सेवा करता आ रहा है। सन् १९५२ से इसके बैंक खाते और बिजली आदि के बिल के सबूत विद्यमान हैं। इस बैठक में सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती श्री रामचन्द्र विकल, श्री सूर्यदेव, डा० धर्मपाल, श्री वाचस्पति उपाध्याय, श्री रामनाथ सहगल, और श्री सच्चिदानंद शास्त्री उपस्थित थे। इस वर्ष २३ जून १९८८ को आर्यसमाज मन्दिर में दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल के सांनिध्य में बैठक हुई और निश्चय किया गया कि डी०डी०ए० के प्लानिंग विभाग के अनुसार मन्दिर को समुचित स्थान दिलाया जाये और यदि कोई पानी की लाइनें आदि रास्ते में आती हैं तो उनको भी सही मोड़ दिलवाया जाये। इसके अतिरिक्त मन्दिर के अधिकार में जितनी भूमि है, उसकी मजबूत चारदीवारी बनवा दी जाये। श्री ठाकुर दास सपरा, श्री गोपाल आर्य, डा० सत्यकाम वेदालंकार, श्री मालिक, श्री गेरा तथा माताओं तथा आर्य महिलाओं के सहयोग से यह कार्य २६ जून १९८८ को प्रारम्भ किया गया।

जैसा सम्भावित था, २९ जून को प्रात: डी०डी०ए० के अधिकारियों की शिकायत पर पुलिस ने हस्तक्षेप किया और हमारे मजदूरों को कार्य करने से रोक दिया। सभा प्रधान डा० धर्मपाल तुरन्त आर्यसमाज मंदिर किंग्जवे कैम्प पहुंचे और आर्यसमाज के अधिकारियों एवं कार्यकर्ताओं और स्थानीय लोगों को एकत्रित किया और प्रभावी व्यक्तियों से संपर्क कर आर्यसमाज का निर्माण कार्य पुनः प्रारम्भ कराया और इस प्रकार आर्यसमाज किंग्जवे कैम्प पुनः सशक्त स्थिति में आ गया है।

इस कार्य में महाशय हरविलास जी खुराना, डा० ओमप्रकाश मान, श्री लाजपत राय निझावन, श्री राजकुमार भाटिया, श्री अजित आर्य, श्री ठाकुरदास सपरा, श्री गेरा, श्री मलिक आदि का सराहनीय सहयोग प्राप्त हुआ है। ५ जुलाई को पुन: सभा प्रधान डा० धर्मपाल और मन्त्री श्री मूल चन्द गुप्ता ने निर्माण कार्य का, वहां पहुंचकर निरीक्षण किया। श्री ठाकुर दास सपरा बड़े मनोयोग से इस कार्य को सपन्न कराने में जुटे हुए थे। ६ जुलाई को सभा के महामन्त्री श्री सूर्य देव जी और सभा प्रधान डा० धर्मपाल पुनः वहां पहुंचे और आवश्यक निर्देश दिया।

हमें विश्वास है कि समाज का भवन और अधिक सुन्दर रूप में शीघ्र ही बनकर तैयार हो जायेगा।

पर्वों का महत्त्व और आर्यसमाज का कर्तव्य

लेखक—स्वामी वेदमुनि परिव्राजक
अध्यक्ष—वैदिक संस्थान नजीबाबाद, उ० प्र०

पर्वों की उपयोगिता जितनी वैयक्तिक जीवन में होती है, उतनी ही सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन में भी होती है। पर्वों का उद्देश्य आत्म-निरीक्षण, आत्मालोचन तथा आत्मोत्थान होता है, वैयक्तिक जीवन में भी और सामाजिक तथा राष्ट्रीय जीवन में भी। पर्व शब्द का अर्थ ही है पवित्रता और पूर्ति की ओर ले जाने वाला।

परन्तु, पता नहीं कब और किस प्रकार पर्व का उद्देश्य रह गया है कहिये या हो गया है कह लीजिये—प्रत्येक पर्व कहलाने वाले दिवस पर एक विशेष प्रकार का भोजन पूड़ी, खीर, चावल, तिल अथवा चौलाई के लड्डू आदि बनाकर खा लेना, तथा यथा शक्य बाजार से मिठाइयाँ आदि लाकर खा लेना, अपने मिलने वालों के घर भेजना, नये वस्त्र धारण करना और कुछ खेल तमाशे आदि खेलना तथा देख लेना। पर्व की वास्तविक भावना लुप्त नहीं हुई तो लुप्त प्राय तो अवश्य हो हो गयी है।

अन्य क्षेत्रों की भांति प्रारम्भ में आर्यसमाज ने पर्वों के विषय में भी कुछ सुधारात्मक पग अवश्यमेव उठाये थे किन्तु वह भी अब इस विषय में उदासीन होता जा रहा है। लगता है हिन्दु समाज के विकृत ढांचे में आर्यसमाज उसी प्रकार विलीन होता जा रहा है जिस प्रकार नदियों में नाले तथा समुद्र में नदियां विलीन हो जाती हैं। आर्यसमाजों ने अपने प्रारम्भिक जीवन में पर्वों को उपयोगी प्रकार से मनाना प्रारम्भ किया था, यद्यपि वह प्रकार भी था अधूरा ही।

आर्य पर्व-पद्धति में पर्वों के मनाने की विधि इस प्रकार लिखी है कि प्रातःकाल घर का शोधन-लेपन स्नान आदि कर शुद्ध स्वदेशी वस्त्र परिधान पूर्वक प्रथम यज्ञ करें—कुछ पर्वों पर कुछ विशेष आहुतियां भी यज्ञ में देनी लिखी हैं—तत्पश्चात् उत्तमोत्तम भोजन पक्वान्न खीर, पूड़ी आदि बनाकर खाना लिखा है। यह वर्णन गृह-कृत्य का है।

पश्चात् मध्याह्नोत्तर किसी सार्वजनिक स्थान, किसी विस्तृत मैदान आदि अथवा आर्यसमाज मन्दिर में ही सभा करें। उस सभा में पर्व से सम्बद्ध भाषण, भजन, कविता, निबन्ध आदि का पाठ किया जाना चाहिए तथा तदनन्तर प्रसाद वितरण करें। अच्छा तो यह हो कि ऐसे अवसरों पर वैदिक तथा आर्य सामाजिक दृष्टिकोण का राष्ट्रीय साहित्य वितरण का विशेष प्रबन्ध किया जावे।

इस कार्य में आर्यसमाजी बन्धुओं ने दो बड़ी भूलें की हैं। एक तो यह कि गृह-कृत्य भी आर्यसमाज मन्दिरों में ही किये, घरों में नहीं। इसके परिणामस्वरूप घरों से पौराणिक पर्व प्रथा दूर नहीं हो सकी और आर्य-पर्व प्रथा प्रारम्भ नहीं हुई। आर्य समाजी अधिकतर यह कहते हुए मिलते हैं कि इस कार्य में महिलाएँ साथ नहीं देती। यह नितान्त मिथ्या आरोप है। अपवाद तो प्रत्येक विषय और प्रत्येक क्षेत्र में मिल जाते हैं किन्तु जब घरों में कोई वैदिक कृत्य किया ही न जायेगा तो महिलाएँ उसे करना सीखेंगी किस प्रकार? और वह क्या जानगी कि कौन पर्व किस प्रकार मनाया जाना चाहिए? उन्हें जो कुछ आता है, वह तो वही करेंगी।

आप बच्चे के हाथ से चाकू लेना चाहते हैं तो उसे खिलौना दे दीजिए, नहीं तो वह बिफरेगा, रोवेगा। किसी की कोई आदत छुड़ानी हो तो उसके लिए उस आदत का विकल्प तैयार रखना चाहिए। महिलाओं से पौराणिक परम्परागत विधियां—जो उनका स्वभाव बन चुकी हैं—यदि छुड़ानी हैं तो उनके साथ भी उपर्युक्त प्रकार ही वर्तना होगा। उनसे पौराणिक परम्परा छुड़ाना चाहें किन्तु उसका विकल्प देने का प्रयत्न न करें, वह नितान्त नासमझी की अमनोवैज्ञानिक हठधर्मिता पूर्ण बात है। मनोवैज्ञानिक प्रकार यही है कि आप घर पर वैदिक पद्धति से पर्व-संस्कार आदि कराने प्रारम्भ कर दीजिए, महिलाएँ धीरे-धीरे आप ही के रंग में रंग जायेंगी। उनके आपके रंग में रंगने का एक कारण यह भी है कि पर्वों की वैदिक पद्धति पूर्णतया युक्तियुक्त है और पौराणिक पद्धति पूर्णतया अन्ध-विश्वास पर आधारित है। हां, यह भी ध्यान रखिये कि सामाजिक कृत्य में सार्वजनिक सभाओं में भी उन्हें साथ ले जाइये। वहां जाकर वह भाषणों, कविताओं आदि के द्वारा पर्वों के महत्त्व को भी सुन और समझ सकेंगी। यह भी दुर्भाग्य है कि आर्यसमाज के सार्वजनिक कार्य-क्रमों में आर्यसमाजी लोग महिलाओं को प्रायः ही साथ नहीं ले जाते।

कुछ ऐसे कठमुल्ला ढंग के आर्य समाजी हैं कि वह पर्वों के अवसर पर घरों में यज्ञ तो कर लेते हैं या करना चाहते हैं किन्तु मिष्ठान्न आदि कुछ पक्वान्न बनाने को पौराणिकता बताकर रोकना चाहते हैं। उन्हें यह समझ नहीं आती कि पौराणिकता पर्व मनाने के प्रकार में, उसकी पद्धति में होती है, उत्तमोत्तम स्वादिष्ठ भोजन बनाकर खाने में नहीं होती। व्यावहारिक धरातल पर खड़े होकर ही सफलता प्राप्त हो सकती है, हवाई बातें करने तथा कठमुल्लापन अपनाने से सम्भव नहीं।

यदि कठमुल्लापन छोड़कर पर्व पद्धति के अनुसार घरों में पर्वों के अवसर पर गृह-कृत्य होंगे तो महिलाएँ और बच्चे सभी प्रभावित होंगे और मुख्य—पारिवारिक सुधार की नींव पड़ जायेगी।

दूसरा है सामाजिक कृत्य—जो सार्वजनिक स्थानों में सभा के रूप में होना चाहिए। यह तो कुछ ही समाजों ने मनाना प्रारम्भ किया था, वह भी अब लगभग समाप्त ही है। हां, कुछ समाजों में गृह-कृत्य का केवल एक अंश, वह भी सामान्य यज्ञ—उस पर्व की पूर्ण पद्धति नहीं—करके इति श्री अर्थात् कर्तव्य की पूर्ति समझ ली जाती है। जिन समाजों ने सामाजिक कृत्यस्वरूप सभाएं करनी प्रारम्भ की थीं या अब भी जो समाजें सामाजिक कृत्य करती हैं, वह भी आर्यसमाज मन्दिरों से बाहर जाने को तैयार नहीं। संभवतः उन समाजों के अधिकारियों को यह भय रहता है कि लोग हमें मूर्ख समझ लेंगे।

जहां सार्वजनिक सभाओं के लिए स्थान उपलब्ध न हो, वहां की बात छोड़ दीजिए, जहां पार्क, नगरपालिका के सभा भवन आदि हैं, वहां तो आर्यसमाज भवन से बाहर निकल कर ही सभाएं की जानी चाहियें। लोगों को पता तो चले कि आज का पर्व क्या है और उसका क्या महत्त्व है तथा हमारे लिए उसकी क्या उपयोगिता है?

वास्तविकता यह है कि लोग पर्व का अर्थ ही नहीं समझते। उन्हें तो इतना ही पता है कि अमुक पर्व पर अमुक अमुक प्रकार का भोजन बनाना होता है और अमुक कृत्य करना होता है, फिर चाहे वह किसी मन्दिर में जाकर कोई क्रिया विशेष की जाती हो अथवा दीवार, भूमि आदि पर कुछ चित्रित करके उसके आगे सर झुकाना हो या उसे भोग कराने के लिए कोई पदार्थ उससे लगा देना हो। ध्यान देने की बात यह है कि इन प्रक्रियाओं से न तो व्यक्ति को कोई प्रेरणा मिलती है और न समाज तथा राष्ट्र के हित मे चिन्तन की ही कोई प्रेरणा प्राप्त होती है। हां, एक लकीर पीटने वाली आदत बन कर स्वभाव का रूप धारण कर लेती है। लोग पीढ़ी दर पीढ़ी वैसा ही करते रहते हैं और पूछा तो यह कह देते हैं कि हमारे यहां तो पहले से ही इसी प्रकार होता आया है।

जब आत्म-निरीक्षण तथा समाज और राष्ट्र के विषय में सुनने और समझने को कुछ नहीं मिलेगा तो पर्व की मूल भावना पवित्रता और न्यूनताओं की पूर्ति का मार्ग प्रशस्त नहीं होगा।

आवश्यकता इस प्रकार, इस पद्धति को बदलने की है। इसे तो पता नहीं आर्य जाति कितनी पीढ़ियों, कितनी शताब्दियों से मनाती आ रही है किन्तु इससे परिवार सुधार, समाज और राष्ट्र के उत्थान की कोई प्रेरणा आज तक नहीं मिली। प्रेरणा मिलने का कोई सूत्र भी इसमें नहीं है। यह आंखें बन्द करके भेड़ के पीछे भेड़ के चलने की अन्ध परम्परा मात्र है। इस अन्ध परम्परा में आंखें बन्द करके चलने के परिणामस्वरूप आर्य जाति का उत्तरोत्तर पतन ही हुआ है और अब भी स्वाधीनता

(शेष पृष्ठ ७ पर)

राष्ट्रीय एकता के सूत्र

लेखक—भगवान देव 'चैतन्य' एम. ए. साहित्यालंकार,
२८१/एस-२ सुन्दरनगर-१७४४०२ (उ० प्र०)

★

पक्षियों से भी तेज गति से आकाश में विमान द्वारा उड़ने वाला व्यक्ति इस बात पर तनिक भी विचार नहीं करता है कि वास्तव में उसे इस स्थिति तक पहुंचाने के लिए कितने लोगों ने कठिन परिश्रम किया तथा अपने बलिदान दिए। समुद्र की छाती को चीरता हुआ आज मनुष्य जब आगे बढ़ता है तब उसका चिन्तन इस ओर नहीं मुड़ता कि किन वैज्ञानिकों के तप, त्याग और, परिश्रम का यह सुफल है। ठीक इसी प्रकार आज स्त्री, शूद्र, समाज तथा राष्ट्रोद्धार के पीछे सब से प्रमुख भूमिका किस मनीषी की रही है इस ओर भी किसी की चिन्तनधारा नहीं मुड़ती है। एक समय था जब स्त्री को पैरों की जूती समझा जाता था, उसे वेदादि सत्य शास्त्र तो दूर रहे सामान्य शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार भी नहीं था। शूद्रों की स्थिति तो इससे भी निकृष्ट थी। समाज कुरीतियों एवं कुनीतियों का अखाड़ा बना हुआ था। धर्म के नाम पर शोषित और प्रताड़ित होना पड़ता था। प्यारा राष्ट्र परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़कर अपने आलसी और प्रभावी नागरिकों की देखा-देख मानो खून के आंसू बहाता था। ऐसे ही विकट समय में महर्षि दयानन्द सरस्वती का प्रादुर्भाव हुआ। उन्होंने तत्कालीन सभी समस्याओं का सूक्ष्मता से अवलोकन किया और बड़े से बड़ा संकट तथा घोर विरोध होने के बावजूद अपनी पूरी शक्ति से इन्हें दूर करने के लिए कार्य क्षेत्र में उतर पड़े। यह कैसी विडम्बना है कि सर्वप्रथम जिन सामाजिक एवं राष्ट्रीय समस्याओं को दूर करने के लिए महर्षि दयानन्द और उनके द्वारा चलाए गए आन्दोलन में आर्यसमाज ने अपना खून पसीना एक कर दिया उसका श्रेय कुछ अन्य व्यक्ति या संस्थाएं अपनी झोली में डाल रही हैं। क्या आर्यसमाज को उसके बलिदानों का यही उपहार मिलना था। आज तो स्थिति यह है —

उनकी तुरब्बत पर एक दिया नहीं,
जिनके खू से जले थे चिरागे वतन।
आज दमकते हैं उनके मकबरे
जो बेचते थे, शहीदों का कफन॥

आज सांप्रदायिकता की आड़ में सब अपना अपना उल्लू सीधा करने की ताक में हैं। इसीलिए आर्यसमाज जैसी असाम्प्रदायिक संस्था को कोई महत्त्व नहीं दिया जा रहा है। बल्कि उसके विरुद्ध बहुत सा दुष्प्रचार किया जा रहा है। विभिन्न संप्रदायों के प्रति तुष्टीकरण की नीति क्या राष्ट्रीय एकता और मानवीय मूल्यों की स्थापना की दिशा में सार्थक हो सकती है? महर्षि दयानन्द सरस्वती ने एकेश्वर, एक भाषा, एक जाति, एक राष्ट्र और एक ही मानव धर्म का जो मूलमन्त्र दिया था क्या उसे कार्यरूप दिए बिना भावात्मक एकता स्थापित हो सकती है? हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई आदि से ऊपर उठकर मानव मात्र के लिए वैदिक धर्म का उपदेश ही वास्तव में असाम्प्रदायिक है। महर्षि दयानन्द और उनके विचार सच्चे समन्वयवादी हैं। एक भाव जब तक नहीं होगा तब तक भावात्मक एकता स्थापित नहीं होगी, कैसे इस, तुष्टीकरण की नीति ने आज राष्ट्र को बिखरने की कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है। कीचड़ को कीचड़ से धोने से कोई लाभ नहीं—स्वच्छ जल ही सफाई का कार्य कर सकता है। पत्तों को पानी देने से वृक्ष को हरा भरा नहीं रखा जा सकता बल्कि इसके लिए जड़ों को सींचना पड़ेगा। महर्षि का प्रयास जड़ों को पानी देकर राष्ट्र रूपी वृक्ष को हरा भरा रखने का था। इस प्रयास की सार्थकता को समझकर कार्यरूप देने की आज परम आवश्यकता है अन्यथा राष्ट्र की स्थिति और भी अधिक विकटतर हो जाने की संभावना है। आज नारी मुक्त तो हुई मगर दिशाहीन और उच्छृंखल होकर अपनी मर्यादाओं से भटक गई है। शूद्र आज अमानवीय यातनाओं से मुक्त तो हुआ मगर राष्ट्र के लिए एक नई समस्या बनकर उभर रहा है। देश परतन्त्रता की बेड़ियों को तोड़कर स्वतन्त्र तो हुआ, मगर इस स्वतन्त्रता का आज क्या रूप बन गया है, यह विचारणीय है। यह सब इसी लिए हुआ कि जिन लोगों ने नींव के पत्थर बनकर, अपना अस्तित्व मिटाकर इन उपलब्धियों को हमारी हथेलियों पर रखा था। हम उनकी वास्तविक विचारधाराओं मन्तव्यों तथा आदर्शों को भूलकर कुछ स्वार्थी संकुचित एवं तथाकथित धर्म समाज और राष्ट्र सुधारकों के चंगुल में फंस गए हैं अपने-अपने संकुचित स्वार्थों, सम्प्रदायों, मतों एवं विचार धाराओं को जब तक हम मानवता का जामा पहना राष्ट्रीय एकता की पावनधारा में नहीं बहा जाते हैं तब तक ऊपर से भले ही लगे कि अब वातावरण सामान्य बनता जा रहा है, मगर भीतर और अधिक विस्फोटक बनता चला आएगा। प्रसिद्ध इतिहास वेत्ता श्री सीता पट्टाभि रमैया ने लिखा है कि स्वतन्त्रता संग्राम में ८५% से अधिक बलिदान आर्यसमाजियों का है। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है मगर आर्यसमाज ने कभी इस बात का ढिंढोरा न पीटा और न ही अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए आगे आया मगर इसका अर्थ यह नहीं है कि उसे बिलकुल ही नजर अन्दाज कर दिया जावे। स्वतन्त्रता और स्वराज्य का सर्वप्रथम उद्घोष करने वाले महर्षि दयानन्द जी ने आर्यसमाज के स्वर्णिम नियमों द्वारा इस समाज का उद्देश्य पहले ही सुनिश्चित कर दिया था—"संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है ·· ···।" तथा

"प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट नहीं रहना, किन्तु सब की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए। इस प्रकार समूचे राष्ट्र की व्यथा को आर्यसमाज अपनी व्यथा समझता है। कोई भी व्यक्ति संस्था, मत या मजहब राष्ट्र से बड़ा नहीं हो सकता है। राष्ट्र की सुरक्षा के लिए इन सब को ताक पर रखा जा सकता है मगर इनके लिए राष्ट्र को नहीं। मगर आज तो उल्टी ही गंगा बह रही है—

देश पड़े चूल्हे में, राष्ट्र जाए भाड़ में,
बेलते शिकार सभी कुर्सियों की आड़ में।

आज सभी अपनी-अपनी रोटियां सेंकने की ताक में बैठे हुए हैं। राष्ट्र की हृदय से किसी को भी चिन्ता नहीं है। सभी अपने-अपने दायरों को बढ़ाने में लगे हुए हैं जबकि आवश्यकता इन्हीं दायरों से बाहर निकलकर राष्ट्र की मुख्य धारा से जुड़ने की है। इसके लिए हमें निश्चित रूप से महर्षि दयानन्द की मानवतावादी विचारधारा को अपनाना पड़ेगा। जहां व्यक्ति की सच्चरित्रता पर सब से अधिक बल दिया जाता है। महर्षि का एक ही उद्घोष था "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" अर्थात् समूचे विश्व को आर्य (श्रेष्ठ) बनाया जाए, साम्प्र-दायिक या मजहबी नहीं। व्यक्ति में श्रेष्ठता आए बिना कभी उदारता और उत्कृष्टता नहीं आ सकती है। श्रेष्ठ व्यक्ति ही उदार और परोपकारी हो सकता है। वही सच्चा मानव बन सकता है। जब व्यक्ति मानव बन जाता है तो वह केवल अपने गुणों से पहचाना जाता है। किसी मजहब, संप्रदाय, जाति या विशेष चिह्न आदि के द्वारा नहीं। ऐसा व्यक्ति ही राष्ट्र या मानवता का सच्चा हितैषी बन सकता है। यही है राष्ट्रीय एकता के सन्देश में महर्षि दयानन्द की पहचान। मैं समझता हूं ऐसी कट्टर राष्ट्रीयता के पथ पर जब तक हम नहीं चलेंगे तब तक राष्ट्रीय एकता के नारे तो लगाये जा सकते हैं, भावात्मक एकता के स्वांग तो रचाए जा सकते हैं मगर पंजाब, भिवण्डी, मिनाक्षी पुरम, दिल्ली, मेरठ और फतेहाबाद आदि की शर्मनाक घटनाओं से देश को उबारा नहीं जा सकता है। लाला लाजपतराय ने ठीक कहा था कि "आर्यसमाज कट्टर राष्ट्रीयता में विश्वास रखता है।" ढुल-मुल की नीति उसे स्वीकार नहीं है। आर्यसमाज ने यदि राष्ट्र के लिए सब से अधिक बलिदान दिए हैं तो इस राष्ट्र के प्रति उसका असीम स्नेह होना स्वाभाविक ही है। हमारी तो आज भी घोषणा है।

अस्त करते हैं संस्कृति की
शाम नहीं होने देंगे;
वीर शहीदों की समाधि
बदनाम नहीं होने देंगे।
जब तक रग में एक बूंद भी
गर्म लहू की बाकी है।
भारत की आजादी को हम
नीलाम नहीं होने देंगे॥

[redacted] मुहम्मद बिन-कासिम के चरणों में श्रद्धा-सुमन

प्रधानमन्त्री का ऐतिहासिक ज्ञान

लेखक - प्रो० विजय गुप्त
एफ-३३५ मदनगीर-I नई दिल्ली-११००६२

भारत के युवा प्रधान मन्त्री श्री राजीव गांधी ने अभी हाल ही में अपनी सीरिया-यात्रा के दौरान एक विश्व विख्यात लुटेरे हत्यारे और लम्पट चरित्र के निकृष्ट राजनीतिज्ञ मुहम्मद बिन कासिम को भारत और सीरिया की मैत्री के लिए आधार और सद्भावना का प्रतीक माना ! उसके प्रति जिस प्रकार आपने श्रद्धासुमन समर्पित किए उसने राष्ट्र के जागरूक विवेक और ऐतिहासिक बोध का उद्वेलित किया है।

मोहम्मद बिन कासिम ८ वीं शताब्दी में सीरिया की धरती से उठने वाला विनाश का एक प्रचण्ड अन्धड था जिसने उत्तरी भारत की धरती को अपने विनाश की भयंकर लालसा से लीलने का कुकृत्य किया था। इसी ऐतिहासिक लुटेरे को प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी ने इस्लाम के प्रचारक और प्रसारक के रूप में प्रतिष्ठित किया है, और उसके कार्यों में वो आधार बिन्दु तलाशने का प्रयास किया जिससे सीरिया और भारत की मित्रता को एक ऐतिहासिक आधार प्राप्त हो। क्या प्रधानमन्त्री जी का यह कार्य सराहनीय माना जाएगा अथवा अधकचरे-ऐतिहासिक बोध के रूप में स्वीकारा जाए। जिसने राष्ट्र की अस्मिता और प्रबुद्ध-विवेक-शीलता को एक गहरा आघात लगाया है ?

क्या दो देशों के मध्य, मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों की पुष्टता के लिए यह अनिवार्य है कि इतिहास के पन्नों से उन पात्रों एवम् चरित्रों को उद्धृत करें जिनमें से एक राष्ट्र के किसी लुटेरे ने दूसरे राष्ट्र के किसी प्रकार लूटकर अपने देश की धन सम्पदा में श्रीवृद्धि की हो और लुटे हुए एवम् शोषित राष्ट्र का राष्ट्रनायक उसके चरणों में उनके उद्गार और श्रद्धा सुमन अर्पित करे ! निस्सन्देह प्रबुद्ध राष्ट्र चिन्तन और राष्ट्र-सम्मान की भावना इसकी अनुमति नहीं दे सकती।

मुहम्मद बिन कासिम, बसरा के शासक हज्जाज का दामाद और भतीजा था। अरब देशों की ओर से भारत की सम्पदा को लूटने वाला, यहां के भव्य मन्दिरों को तोडने वाला वह पहला मुसलमान सेनानायक था। जो आठवीं शताब्दी के प्रथम एवम् द्वितीय दशक में एक विशाल सेना लेकर, देवल, निरुन, सेहवान, रावर, ब्राह्मणाबाद मुलतान आदि प्रान्तों को रौंदता हुआ कन्नौज के सीने पे चढ़ आया था।

देवल, निरून और रावर में धर्म के नाम पे जो उसने रक्त बहाया उसमे सिन्धु नदी का सारा पानी लाल हो गया, जिन लोगों ने इस्लाम स्वीकार नहीं किया, वे उनके सैनिकों की तलवार की भेंट चढ़ गए। नर संहार का यह ताण्डव नृत्य कई दिनों तक निरन्तर चला करता था।

रावर के राजा दाहिर को युद्ध में कूटनीति से पराजित करके, उसकी दो सुन्दर राजकुमारियों सूरज देवी व परिमला देवी को खलीफा के पास उसकी विलासिता-पूर्ति के लिए उपहार स्वरूप भेज दिया। लेकिन इन दोनों राजकुमारियों ने मुहम्मद बिन कासिम के लिए मृत्यु का एक ऐसा जाल बुन दिया, जिससे वह बच नहीं सका। इन दोनों युवतियों ने अपने सतीत्व की रक्षा हेतु अपने प्राण-उत्सर्ग कर दिए और खलीफा के हाथों में लगी उनकी राख की ढेरी।

क्या हमारे देश के युवा प्रधानमन्त्री अथवा राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करने वाले कोई अन्य अधिकारी, मुस्लिम राष्ट्रों का दौरा करते समय इसी प्रकार मुहम्मद गजनवी, मोहम्मद गौरी, तैमूर लंग, नादिरशाह व अहमदशाह अब्दाली आदि जैसे लुटेरों और नरसंहारकों के प्रति अपने उद्गार और श्रद्धा सुमन चढ़ाते रहेंगे और उनके काले कारनामों में तलाशेंगे वो आधार बिन्दु जिनसे भारत और उन राष्ट्रों के के मध्य मित्रता के लिए एक गलत प्रकार के ऐतिहासिक-सम्बन्ध को उद्धृत किया जाए। राष्ट्र के जागरूक और प्रबुद्ध मानस को यह ग्राह्य नहीं हो सकता। □

(पृष्ठ ५ का शेष)

पर्वों का महत्त्व और आर्यसमाज का कर्त्तव्य

प्राप्ति के ४१ वर्ष पश्चात् भी वही अन्धविश्वासात्मक अन्ध परम्परा चल रही है, परिणाम स्वरूप व्यक्तित्व के निर्माण द्वारा परिवार समाज तथा राष्ट्र निर्माण वास्तविक रूप में नहीं हो पाया है। यदि कुछ हुआ है तो केवल चारित्रिक पतन ही हुआ है। स्मरण रखने की बात है कि यदि व्यक्ति का चरित्र नहीं बनेगा तो न परिवार में चरित्र की उज्ज्वलता पनपेगी और न समाज तथा राष्ट्र चरित्रवान बन पायेगा। यहां भी ध्यान रहे कि चाहे देश के पास असीमित सम्पत्ति हीरे-मोतियों जवाहरों, कल-कारखानों आदि के रूप में हों, चाहे उत्तमोत्तम सड़कें हो, बड़ी बड़ी सेनाए जलयानों, वायुयानों तथा आणविकास्त्रों से युक्त हों, हम भी संसार की दौड़ में हम पिछड़े ही रहेंगे और विश्व में चल रहे शीत युद्ध में हम पिट जायेंगे।

इतिहास से शिक्षा लीजिए। महाभारत काल में हमारे पास क्या नहीं था ? सेनाएँ भीषणतम आणविकास्त्र, महान् महारथी योद्धा तथा अपार सम्पदा थी। नहीं था तो चरित्र नहीं था—हमारा नैतिक पतन हो चुका था। इसी कारण महाभारत हुआ और तदुपरान्त तभी से हम उत्तरोत्तर पतन की ओर चले जाते रहे। इतने लम्बे समय—पांच सहस्र एक सौ वर्ष—की पतनोन्मुख आर्य जाति को यदि इस समय के शीतयुद्ध की विभीषिका पूर्ण परिस्थितियों से बचाना है तो आर्यसमाज को आगे आना होगा। आर्यसमाज ने यदि पर्वों को ठीक रूप में मनाना प्रारम्भ किया। अपने सदस्यों को अपने अपने घर पर्वों के अवसर पर गृह्य कृत्य आर्य पर्व पद्धति के अनुसार करने को सचमुच किया तो परिवार का सुधार व उत्थान होगा, जो समाज व राष्ट्र की पवित्र और सुदृढ़ इकाई बनेगा तथा सामाजिक कृत्य को सार्वजनिक स्थानों, पार्कों आदि में मनाने से सामाजिक वातावरण बन कर राष्ट्रोत्थान का मार्ग प्रशस्त होगा। राष्ट्रीय चरित्र बनेगा, सर्वसाधारण में राष्ट्रीय भावनाएं जागेंगी, अनैतिकता दूर होगी और नैतिकता बढ़ेगी। अल्पसंख्यक के नाम की ओट में देशद्रोही पञ्चमांगी जनों की अराष्ट्रीय गतिविधियां अवरुद्ध हो जायेंगी। आने वाले समय में अल्पावधि में ही राष्ट्र का नव निर्माण हो जायेगा। अतएव "उत्तिष्ठत जाग्रत" उठो, जागो—सावधान हो जाओ। ●

आर्यसन्देश पढ़ें, पढ़ायें

संचित धन

लेखक—उपप्रधान, दक्षिण, दिल्ली वेद प्रचार मंडल

★

संचित धन क्या है, यह कौनसा धन है, कैसा धन है, जो मानव इकट्ठा करना चाहता है, यह धन बड़ा ही दुर्लभ है, हर एक मनुष्य इसे इकट्ठा कर नहीं सकता, बड़ी ही मेहनत के साथ यह संचित धन इकट्ठा होता है। सारा जीवन इस के इकट्ठा या जोड़ने में व्यतीत हो जाता है, इसे पग पग पर इकट्ठा किया जाता है। एक एक बूंद की तरह, फिर मानव को एक असीम शान्ति का अनुभव होता है, क्योंकि भगवान हर समय देखता है, अपने भक्त को पहचानता है, भक्त जब दोनों हाथों से जोड़ता है, भगवान उसे आशीर्वाद देता है। मानव अपने अन्तर आत्मा में आनन्द महसूस करता है "जैसे बूंद बूंद से घट भरे कह गए भक्त कबीर।" जैसे समुद्र में छोटी छोटी नदियां आकर विलीन हो जाती हैं, समुद्र कितना विशाल और गहरा होता है, मानव के हृदय के अन्दर जब यह लहरें उठती हैं, तो पवित्र आत्मा में समा जाती हैं। हृदय पुकार उठता है "मेरा मुझ में कुछ नहीं जो कुछ है प्रभु तोर, तेरा तुझ को सौंपते क्या लागे है मोर।" आज-कल का मानव तो सारी आयु इकट्ठा करता रहता है, रुपया पैसा, मकान, कोठियां जायदाद वगैरा। यह सवाल उठता है क्या यह सब मानव अपने साथ ले जायेगा। जो भौतिक वाद में यकीन करते हैं, देखा जायेगा जब मृत्यु होगी। जब तक जीवन है, क्योंकि न आराम से रहें, सुख भोगें जैसे भी हो धन इकट्ठा करें, मानव अपने आप को सारा जीवन धोखा ही देता रहता है। कहा है "दो बात कभी भी न भूलें।" एक मृत्यु दूसरा ईश्वर को, जो नासमझ है वह तो समझने की कोशिश ही नहीं करते कहते हैं कौन देखता है, तभी तो बुरे से बुरा कर्म करके धन इकट्ठा करते रहते हैं। मानव का जन्म ८४ लाख योनियों को भोगकर मिला है। मानव और पशु में कितना अन्तर है दोनों कर्म करते हैं। भगवान ने मानव को बुद्धि दी सोचने के लिए, जो पशु नहीं सोच सकता। बच्चा जब पैदा होता है निर्मल स्वच्छ सुन्दर [illegible] होता है, कहते हैं यदि ईश्वर को देखना है तो बच्चे के दर्शन कर लो, क्योंकि उस में जरा भी छल नहीं होता।

यह मानव सारी आयु यही धन इकट्ठा करता रहता है। जीवन में बड़ी बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है यदि वह पवित्र है भगवान उसे संघर्ष करने की शक्ति देता है। सत्य और सदाचार ये ही संचित धन हैं जो मानव अपने साथ ले जाता है बाकि सारा धन वैभव यहीं हो रह जाता है। सत्य को निर्णय करने की शक्ति देता है यही संचित धन है हमारे बड़े बड़े महात्माओं ने इकट्ठा करके दूसरों को रास्ता दिखाया।

○

(पृष्ठ २ का शेष)

आर्यसमाज का सातवां नियम

मान्य व्यक्तियों को आसन पर निमन्त्रित करके उनके बैठने पर आप भी आसन पर बैठना आर्य-रीति है। इस रीति के अनुसार मान्य व्यक्ति से ऊंचे आसन पर बैठना, उसके खड़े होने पर आप बैठे रहना, पूछने पर समीप आकर उत्तर न [illegible] 'महाराज', इत्यादि शब्दों से न बोलना अथवा मौनी बन जाना अवज्ञा-कर्म समझा जाता है। आर्य-रीति से, किसी मान्यजन को 'भो', 'रे', 'तू', 'अरे', 'अबे', इत्यादि शब्दों से सम्बोधन करना, पांव आदि से ठोकर लगाना विनय-धर्म के विरुद्ध है।

आर्यजन को उचित है कि आगत सज्जन का 'आइये, पधारिये, कृपा कीजिये, मैं आपका स्वागत करता हूं, आपका मेरे आंगन में आना शुभ है, आपका शुभ आगमन मेरे लिए प्रसन्नकारी हुआ है,' इत्यादि शब्दों से पूजन करे। किसी के जाने पर उसको अनुगमन-पूर्वक पहुंचाने जावे। यथायोग्य नमस्कार हस्तपीडन आदि व्यवहार पूर्वक विदा करे। 'फिर भी दर्शन-दीजियेगा, सेवक के गृह को स्वशुभागमन से शोभा प्रदान कीजियेगा, स्मरण रखियेगा,' इत्यादि वाक्यों से सत्कृत करे, 'स्वस्ति हो' कहे। किसी जन के वचनों को सुनकर अपनी स्वीकृति के प्रकाशक ये शब्द बोले—सत्य वचन, बहुत अच्छा, तथास्तु।

आर्यजनों का यह कर्त्तव्य-कर्म है कि यदि कोई उन पर उपकार करे तो उसको इन शब्दों से सत्कृत करें।—"मैं आपका बड़ा आभार मानता हूं, आपकी अपार कृपा का अत्यन्त कृतज्ञ हूं, आपने मुझे अनुगृहीत किया, मैं आपको हार्दिक धन्यवाद देता हूं।" आर्यजन किसी से अक्खड़पन से प्रश्न न करें, वरन् इन वाक्यों को व्यवहार में लावें—"आप मुझे बता सकते हैं कि अमुक वस्तु कहां मिलती है? मैं आपका निवासस्थान, श्रीगृह शुभधाम पूछ सकता हूं? कृपया बताइयेगा कि फिर आप कब पधारेंगे?"

मेल मिलाप में छोटे बड़े को यथायोग्य आदर देना, समागत का आदरातिथ्य करना, किस से किस प्रकार मिलना, उसे कैसा सम्मान देना, इत्यादि व्यवहार धर्मानुसार होने उचित हैं।

आर्यजन के अधीन काम करने-वाले जो मनुष्य हों, उनके साथ वह सत्य और न्याय का व्यवहार करे। किसी पर अत्याचार करने से कांपे। सदा ध्यान रक्खे कि कोई निरपराध कदापि दण्डित न हो, किसी को अनुचित कष्ट न उठाना पड़े, उसका भविष्य न बिगड़ जाय। और यदि कोई आर्यजन किसी के अधीन कार्य करता हो, किसी की सेवा कर रहा हो तो वह अपने स्वामी की सेवा धर्मानुसार, यथायोग्य रीति से—जैसी सेवक को करनी चाहिए वैसी—करे। अपने नियत कामों को नियत समय पर करने से न चूके। कार्यों में आलसी और प्रमादी न बने। अपने स्वामी का आज्ञाकारी, विनीत, विश्वासपात्र और सच्चा सेवक हो।

आर्य सभासदों को अपनी शक्ति सुगठित और बलवती बनानी चाहिये। उनमें भ्रातृभाव प्रीति-प्रेम-पूर्ण हो। वे दुःख-दर्द में, कष्ट-क्लेश में, विघ्न-बाधाओं में एक दूसरे की पूरी सहायता करें। दुर्दिन और दीन दशा से अपने धर्म-बन्धु का उद्धार करना अपना धर्म समझें। आर्य सभासदों को यह पता होना चाहिए कि कौन सभासद कहां रहता है। उसकी अवस्था कैसी है। उसे सहायता की आवश्यकता तो नहीं है, इत्यादि। ऐसे साहाय्य के कार्यों के लिए आर्य-सेवक-संघ का प्रत्येक समाज में होना अत्यावश्यक है। इस आर्य सेवक-संघ का कर्तव्य-क्षेत्र कुछ विस्तृत हो तो बहुत अच्छा है। सेवक-संघ के कर्तव्य-क्षेत्र की सीमा में ये काम होने चाहियें कि वे पता रक्खें कि उनके भिन्न-भिन्न मुहल्लों में कौन-कौन जन असहाय है, कौन आतुर है, कौन अनाथ है। ऐसा कौन जन है जो लोभवश अथवा किसी वासनावश अपना धर्म त्यागने को तैयार है। किस पर कौन बलात्कार कर रहा है। सेवक-संघ ऐसी साव-धानी से काम करे कि नगर का कोई भी वृत्त उनकी आंखों से ओझल न रहे। इत्यादि सब वृत्तान्तों का ज्ञान उस स्थान के समाज को अवश्य होना चाहिए। यदि ऐसे कार्य ऐसी सुगठित रीति से किसी समाज में नहीं किए जाते तो समझना चाहिए कि वह समाज अपने कर्त्तव्य कर्म से आंखें मूंदे बैठा है उसने अपनी स्थापना के उद्देश्य को ही नहीं समझा।

आर्यसमाज के काम से प्रभावित क्षेत्र सारी आर्य जाति है। आर्य जाति पर इसका प्रभाव आदिकाल से बना चला आता है। आर्यसमाज के सभासद इसी क्षेत्र से मिलते हैं। इसके साथ समाज का सम्बन्ध भी अधिकतर है। इस पर होने वाले आक्रमणों का उत्तर कई बार आर्य-समाज ने दिया है। इसकी होती हुई हानि को समाज ने कभी सहन नहीं किया। और यह कार्य-क्रम महर्षि श्रीदयानन्दजी से लेकर आज तक, अनवच्छिन्न शृङ्खला के रूप में, चला आ रहा है। इस परम्परा से प्राप्त कर्तव्य को, उत्तर-दायित्व को, आर्य-सेवक-संघ द्वारा भली प्रकार निभाना चाहिए।

□

पावमानी गीत माला —देवनारायण भारद्वाज

ओ३म्—अवाहयाग्नेऽस्वनभिशस्तिपावन सत्यमित्त्वमयाऽसि ।
अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजं, स्वाहा ॥ इदमग्नये
अयसे—इदं न मम ॥१०॥

हर कहीं नाथ तुम व्यापक हो, यह सत्य समझ में आया है।
हर कहीं साथ तुम नाथ चले, हर कहीं प्रकाश दिखाया है॥

दुर्दमनीय शत्रु ये सारे
काम क्रोध सब विकय हमारे
देश देह या आत्म गेह के
नाथ शत्रु ये सकल हटा रे।

जब तुमने शत्रु हटाया है, यह यज्ञ तभी कर पाया है।
हर कहीं साथ तुम नाथ चले, हर कहीं प्रकाश दिखाया है॥

प्रभु का व्यापक सहयोग रहा
यह कर्म सफल उद्योग रहा
हो गई तुम्हारी अनुकम्पा
जो जीवन का उपयोग रहा।

नेतृत्व तुम्हारा पाकर ही, यह पथ प्रशस्त कर पाया है।
हर कहीं नाथ तुम साथ चले, हर कहीं प्रकाश दिखाया है॥

दो पोषक भेषज या भोजन
मिल जाय हमें शुभ शक्ति सघन
अध्यात्म शत्रु या ससारी
कर सकें नाथ हम सभी हनन।

शुभ कर्म किये फिर आहुति दी, तब यज्ञ सफल हो पाया है।
हर कहीं नाथ तुम साथ चले, हर कहीं प्रकाश दिखाया है॥

(पृष्ठ ४ का शेष)

आर्यसमाज का तीसरा नियम

खोज पदार्थ-विद्या (साइंस) से नहीं हो सकती। मनुष्य का आचरण विज्ञान इसलिए नहीं खोज सकता क्योंकि वह पदार्थ नहीं है। यह मात्र सत्य विद्याओं से ही जाने जाते हैं। वेद इन विधि निषेध आदेश उपदेशों की पुस्तकें भी हैं।

वेद के पठन पाठन के अभाव में अन्ध बुझक्कड़ी का जन्म होता है और व्यक्ति अधिकार वाले व्यक्ति का आश्रित हो उसके कहने पर विश्वास कर गलती को सही मानता चला जाता है। महर्षि ने सत्य की परिभाषा की है कि जो वस्तु जैसी हो उसको वैसा जानना सत्य है। वेद में जो मंत्र हैं उनके द्वारा जो दृष्टि मिलती है उनसे पदार्थ का बोध तभी सम्भव होता है जब व्यक्ति निर्भय, निरालस्य हो। जिज्ञासु बन निरीक्षण और परीक्षण द्वारा वस्तु और दृष्टि का मेल करता है। दृष्टि और दृश्य एकाकार हो जाते हैं। सत्य वह नहीं है जो त्रैकाल अबाधित हो। मनुष्य अल्पज्ञ है, उसकी सामर्थ्य अल्प है, उसके संस्कार और उससे उत्पन्न दृष्टि अभाव ग्रसित रहती है अत. उसे वेद मंत्र पूर्णरूपेण ग्राह्य नहीं हो पाते हैं किन्तु जिज्ञासा, कृतज्ञता, निरहंकारता जिससे सत्य-विद्याओं का पथ प्रदर्शित होता है, द्वारा प्रयत्न रत रहने पर सत्य से साक्षात्कार हो जाता है।

महर्षि ने इस नियम द्वारा एक बहुत बडा दर्शन समाज को दिया है।

आर्यसमाज सरस्वती विहार-रामायण कथा

इस आर्यसमाज में ८ अगस्त से रामायण कथा तथा यज्ञ चल रहा है जो १५ अगस्त तक चलेगा। प्रवक्ता महात्मा रामकिशोर जी वैद्य हैं और भजनोपदेश श्री वेद व्यास जी कर रहे हैं।

कथा का समय .

रात्री ८ बजे से ९-४५ तक।



राजा रणञ्जय सिंह को श्रद्धाञ्जलि

७ अगस्त, दिल्ली, राजर्षि रणञ्जय सिंह के देहावसान पर उनकी स्मृति में एक श्रद्धाञ्जली सभा आर्यसमाज दीवान हाल में हुई, जिसकी अध्यक्षता स्वामी आनंद बोध सरस्वती ने की। इस अवसर पर पं० सच्चिदानन्द शास्त्री महामन्त्री दिल्ली सार्वदेशिक सभा आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री श्री सूर्यदेव और आर्यसमाज दीवान हाल के महामन्त्री श्री मूलचन्द गुप्त ने श्रद्धांजलि अर्पित की। स्वामी आनन्द बोध ने कहा राजा रणञ्जय सिंह आर्य समाज के मन्तव्य को जीवन में अपनाने वाले महान् ऋषि भक्त एवं मनस्वी कवि थे। उन्होंने जीवन पर्यन्त लोकोपकार व जन सेवा की। वे आर्य जगत् के विशिष्ट पदों पर कार्यरत रहे। उनके देहावसान से आर्य जगत् को महती क्षति हुई है।

समाज सेवी श्री जयप्रकाश सिंगल ईमानदारी के लिए शहीद

नई दिल्ली। केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् दिल्ली के अन्तरग सदस्य व आर्यसमाज के कर्मठ कार्यकर्ता श्री जयप्रकाश सिंगल की मिल्ट्री कैम्प मीसा मारी (तेजपुर, आसाम में असामाजिक तत्त्वों ने हत्या कर दी। गत १ मार्च को वे दिल्ली को मीसामारी मिलिट्री इञ्जीनियरिंग अभियता पद पर स्थानांतरित हुए थे। उल्लेखनीय है उन्होंने अपने साथी अफसरों के फर्जी बिलों को पास करने से इन्कार कर दिया था, जिसकी कीमत उन्होंने अपनी जान देकर चुकायी। श्री सिंघल ने मृत्यु से एक दो महीने पूर्व उच्चाधिकारियों को शिकायत पत्र भेजे थे, पर कोई सुनवाई न हुई।

१७ जुलाई (रविवार) को आर्यसमाज जनकपुरी "बी" ब्लाक में श्री सिंघल को दिल्ली की आर्य-सस्थाओं ने श्रद्धाञ्जलि दी व आर्य नेताओं ने रक्षा मंत्री श्री कृष्णचन्द्र पन्त से मिलकर इस हादसे की जांच कराने का निश्चय किया।

१९ जुलाई, मंगलवार स्वामी अग्निवेश, डा० धर्मपाल आर्य, श्री रामनाथ सहगल, डा० शिव कुमार शास्त्री, श्री ओमप्रकाश आर्य, श्री योगेश्वर आर्य, श्री धर्मपाल आर्य के नेतृत्व में आर्यसमाज का शिष्ट मण्डल रक्षा मन्त्री श्री पन्त से मिला व उन्हें श्री जयप्रकाश सिंघल की हत्या के विवरण से अवगत कराया।

श्री पन्त ने परिवार जनों के प्रति सहानुभूति दर्शायी। उन्होंने श्री सिंगल की हत्या की सी बी. आई से जाँच कराने, हत्यारों को सजा देने व परिवार जनों में किसी एक सदस्य की नौकरी लगवाने का भी आश्वासन दिया।

चन्द्र मोहन आर्य
प्रेस सचिव,
केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् दिल्ली

आर्य युवकों को रोजगार की गारण्टी दी जायेगी। —स्वामी शक्तिवेश

अजमेर, २९ जुलाई १९८८।

प्रवासी गुरुकुल आदर्श नगर-अजमेर के सचालक स्वामी शक्तिवेश ने एक विज्ञप्ति में कहा है कि प्रतिभाशाली, निष्ठावान एवं तपस्वी दसवीं पास आर्य युवकों को तीन वर्ष के उपदेशक प्रशिक्षण के पश्चात् रोजगार की गारण्टो दी जायेगी। यहां-सिद्धान्त विशारद, सिद्धांत शास्त्री सिद्धान्त आचार्य की उपाधियां दी जायेंगी। प्रशिक्षणार्थियों को भोजन आवास, वस्त्र, बिस्तर तथा पुस्तकें समस्त व्यवस्था निशुल्क सुविधा दी जा रही है। आम के आम गुठली के दाम, धर्म तथा कर्म का कर्म। आज समाज का वातावरण अति-दूषित हो चला है। उपदेशकों के अभाव में कोई भी मार्ग-दर्शक दिखाई नहीं देता। समय की मांग भी है। उधर रोजगार की समस्या मुहं बाये खड़ी है। योग्य युवक शीघ्र सम्पर्क कर अवसर का लाभ उठा सकते हैं। संस्कृत, हिन्दी व इग्लिश में धाराप्रवाह युक्ति व प्रमाण सहित वक्ता, शास्त्रीय रीति से भजन सगीतकार तथा सामाजिक राजनीतिक आर्थिक समस्याओं पर वक्ता के रूप में नेता उभारने के लिए योग्य आचार्यों की व्यवस्था की गई है। आर्यसमाजों गुरुकुलों तथा अन्य आर्य संस्थाओं के प्रबन्धकों को योग्य युवकों को इस प्रशिक्षण के लिए प्रेरित करना चाहिए।

उपदेशक महाविद्यालय प्रारम्भ हो चुका है। □

स्वाधीनता दिवस (१५ अगस्त) पर

स्वाधीनता-दिवस

—:—

डा० कपिलदेव द्विवेदी, कुलपति गुरुकुल महाविद्यालय, ज्वालापुर (हरिद्वार) एव निदेशक विश्वभारती अनुसन्धान परिषद्, ज्ञानपुर (वाराणसो)

(१)

स्वाधीनता-दिन स्याद्,
जनता-हिताय नित्यम्।
सुख गौरवाभिवृद्धिः,
लोक अभेदभावम् ॥ स्वाधीनता०

(२)

वीरैः स्व-रक्त-दानैः।
धीरैः स्व-देह दानैः।
भक्तैः स्व-देश-भक्तैः,
लब्ध स्वराज्यमेतत् ॥ स्वा०

(३) —

आत्माहुति: प्रदत्ता,
यैः राष्ट्र-धर्म-हेतोः।
स्वार्थं विहाय सर्वे,
ते देव-तुल्य-वन्द्याः ॥ स्वा०

(४)

राष्ट्राय जीवनं स्यात्,
तेषां स्वदेश-भक्तिः।
स्वार्थार्पणेन सर्वे
स्युर्देशभक्ति-युक्ता ॥ स्वा०

(५)

त्यागीश्च - श्रमेण,
स्वाधीनतैवमाप्ता।
रक्ष्या च पोषणीया
नित्य - जीवनार्पणेन ॥ स्वा०

चुनाव समाचार—

वार्षिक चुनाव

आर्यसमाज कर्मपुरा नई दिल्ली

आर्यसमाज कर्मपुरा, नई दिल्ली १५ का वार्षिक चुनाव दिनांक ५-६-८८ को श्री हरबस लाल की अध्यक्षता में हुआ। जिसमें निम्न पदाधिकारी सर्व सम्मति से नियुक्त किए गये।

प्रधान श्री हरिनारायण गुप्ता
मन्त्री-श्री कर्णसिंह आर्य
कोषाध्यक्ष-श्री मदन लाल

मन्त्री
कर्णसिंह

आर्यसमाज, मस्जिद मोठ, नई दिल्ली-४९

आर्यसमाज मस्जिद मोठ का साधारण अधिवेशन समाज मन्दिर में सम्पन्न हुआ। इसमें सर्वसम्मति से निम्नलिखित पदाधिकारी चुने गए।

प्रधान　श्री फकीर चन्द
मन्त्री　श्री सत्यपाल सैनी
कोषाध्यक्ष श्री प्यारे सिंह

आर्यसमाज किरन गार्डन

आर्यसमाज किरन गार्डन नजफगढ रोड नई दिल्ली-५९ का १९८८-८९ का वार्षिक चुनाव दिनांक २४-७-८८ को सर्वसम्मति से सम्पन्न हुआ जिसमें—

श्री चौधरी अमरजीत प्रधान,
श्री सतीश कुमार महामन्त्री,
श्री जसवन्तराय महाजन कोषाध्यक्ष,
पडित अशोक कुमार प्रचार मन्त्री
निर्वाचित हुए।

सतीशकुमार
महामन्त्री

आर्यसमाज मन्दिर

आर्यसमाज मन्दिर नया बांस का ९८वां वार्षिक अधिवेशन २४-७-८८ रविवार प्रातः ९-३० पर आर्य समाज मन्दिर में श्री पूर्णचन्द्र जी अरोडा की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। जिसमें आगामी वर्ष ८८-८९ के लिए सर्वसम्मति से निम्नलिखित पदाधिकारी नियुक्त किए गए।

प्रधान-श्री ओमप्रकाश जी क्रीम वाले
मन्त्री- श्री धर्मपाल जी आर्य
कोषाध्यक्ष श्री देवेन्द्रकुमार जी आर्य
श्री राजेन्द्रनाथ जी मोटे - वाले

धर्मपाल आर्य
मन्त्री

दैनिक वीर अर्जुन में छपे समाचार का सरकार द्वारा खण्डन

आर्यसमाज की छवि को धूमिल करने के लिए कुछ तत्त्व इन दिनों सक्रिय हैं। दैनिक वीर अर्जुन में सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध जी के विषय में एक सनसनी खेज भ्रामक समाचार छपा। जिसमें कहा गया था गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी में आर्थिक मामले की जांच में स्वामी आनन्द बोध से भी पूछताछ की गयी। यह समाचार बिल्कुल झूठा था। बाद में वीर अर्जुन में ही उस समाचार का खण्डन भी छपा। उत्तर प्रदेश सरकार ने भी दैनिक वीर अर्जुन और दैनिक वीर प्रताप समाचार पत्र को लिखकर खण्डन किया।

पत्र इस प्रकार है—

नन्दलाल श्रीवास्तव
सूचना अधिकारी

सूचना एव जन सम्पर्क विभाग,
उत्तर प्रदेश, लखनऊ।

दिनांक ४ अगस्त, १९८०

प्रिय महोदय,

आपके दैनिक समाचार पत्र "प्रताप उर्दू" के अंक दिनांक २४-७-८८ में प्रकाशित समाचार में गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार से सम्बन्धित जांच में दिल्ली गये हुए आर्थिक अपराध संगठन, उत्तर प्रदेश के कुछ अधिकारियों का उल्लेख किया गया है। इस समाचार में कुछ भ्रामक तथ्य प्रकाशित हुए हैं जैसे, आर्थिक अपराध संगठन के पुलिस महानिदेशक का इस जांच के सिलसिले में दिल्ली जाना जो सर्वथा तथ्यरहित है क्योंकि आर्थिक अपराध सगठन, उत्तर प्रदेश में पुलिस महानिदेशक का कोई पद ही नहीं है।

१ इसी प्रकार कहा गया है कि आर्थिक अपराध अनुसंधान विभाग, उत्तर प्रदेश के अधिकारी सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध से पूछताछ करने के लिए सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में गये और वहां लगभग दो घण्टे स्वामी जी से पूछताछ करते रहे। यह भी तथ्यों से परे है क्योंकि आर्थिक अपराध सगठन के अधिकारी जो जांच के सम्बन्ध में दिल्ली गये थे सार्वदेशिक सभा के कार्यालय में गये ही नहीं और न वहां किसी से उन्होंने पूछताछ की।

२. गुरुकुल कांगडी फार्मेसी, हरिद्वार के सम्बन्ध में लगाये गये कुछ आरोपों की प्रारम्भिक जांच के सम्बन्ध में आर्थिक अपराध सगठन, उत्तर प्रदेश के अधिकारी दिनांक २२-७-८८ को दिल्ली में थे और उन्होंने गुरुकुल कांगडी फार्मेसी के भूतपूर्व व्यवसायाध्यक्ष डा० हरि प्रकाश तथा कुछ अन्य लोगों से आरोपों के सम्बन्ध में कुछ जानकारी प्राप्त की थी क्योंकि आरोप मुख्यत डा० हरि प्रकाश के विरुद्ध लगाये गये हैं।

आपसे अनुरोध है कि आप अपने दैनिक पत्र में इन तथ्यों को प्रकाशित करने की कृपा करें जिससे कि पूर्व प्रकाशित एतत्सम्बन्धी समाचार के कारण उत्पन्न हुई भ्रान्ति दूर हो सके। सुविधा हेतु, उर्दू मे भी सामग्री संलग्न है।

श्री के० नरेन्द्र
सम्पादक
दैनिक प्रताप उर्दू, प्रताप भवन
बहादुर शाह जफर मार्ग,
नई दिल्ली-११०००२

(पृष्ठ १ का शेष)

विरुद्ध सख्त कार्यवाही करने पर इन्होंने क्षमा याचना की थी, भविष्य में ऐसी गलती न करने का विश्वास दिलाया था। वह पत्र भी पाठक गण देखें··

श्री प्रधान जी

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

दयानन्द भवन रामलीला मैदान, नई दिल्ली

सादर नमस्ते।

निवेदन है कि सभा प्रधान श्री रामगोपाल जी शालवाले के संबंध में मेरे द्वारा सभा के विगत निर्वाचन से पूर्व जो प्रचार किया गया था तथा कुछ पत्रों में लेख आदि दिये गए थे। यदि मेरे उस कार्य से आर्य समाज के संगठन को क्षति पहुंची है तो उसका मुझे हार्दिक खेद है।

मैं विश्वास दिलाता हूं कि भविष्य में ऐसी गलती नहीं होगी।

भगवानदेव

दि० 28-7-1979 भगवानदेव शर्मा

कुछ लोगों से मिलकर जिस स्वार्थ साधन के लिए यह षड्यन्त्र रचा गया था उस की पूर्ति हेतु यह आर्यसमाज के विरुद्ध लडाई लडी गयी उसका विश्वास भी उनके पत्र में पढिए—

आचार्य भगवानदेव ने ३ जून १९८८ को श्री अश्विनीकुमार मन्त्री-पंजाब प्रतिनिधि सभा को एक पत्र लिखा जो इस प्रकार है—

प्रिय भाई

श्री अश्विनी कुमार जी

सप्रेम नमस्ते।

आप लोगों के लिए लडाई लड़ी आप लोगों का काम हो गया। मुझे इस बात की खुशी है।

अब मेरा नियम विरुद्ध मामला खडा किया है। कुछ कागजात भेज रहा हू। देखकर सूचित करें।

यहां आवें पर मिला करें। शेष शुभ।

सब प्रेमियों को सप्रेम नमस्ते करें।

योग्य सेवा—

आपका

भगवानदेव

सेवा में—

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५१

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ४४ | रविवार २१ अगस्त १९८८ | सृष्टि सम्वत् १९७२९४९०८८ | श्रावण २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

भारत को स्वाधीन कराने में आर्यसमाज का विशेष योगदान

नई दिल्ली

आर्यसमाज ने भारत को स्वाधीन कराने में विशेष योगदान दिया है। आर्यसमाज का यह कर्त्तव्य है कि इसकी स्वाधीनता की रक्षा प्राणपण से करे। राष्ट्र के कल्याण के लिए तथा मानव मात्र के कल्याण के लिए आर्यसमाज को रचनात्मक कार्य अपने हाथ में लेने चाहिए। आज देश में सती प्रथा तथा अस्पृश्यता जैसी कुरीतियां जागृति के बिना विद्यमान हैं। यह कार्य भी हमें पूरी शक्ति लगाकर करना चाहिए। परमात्मा ने सबको समान बनाया है। फिर भी हम यह भेदभाव पाले हुए हैं। यह विचार दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने बिरला आर्य कन्या सीनियर सैकेण्डरी स्कूल, बिरला लाईन्स में आयोजित स्वतंत्रता दिवस समारोह में व्यक्त किए। उन्होंने आशा व्यक्त की कि यह बच्चे ही कल धर्म और राष्ट्र के ध्वज को ऊंचा उठायेंगे। इसके लिए उनके सर्वांगीण विकास की आवश्यकता है, और मुझे प्रसन्नता है कि इस विद्यालय में चरित्र निर्माण सम्बन्धी कार्यक्रम समय समय पर किए जाते हैं। शिक्षा के साथ साथ समाज सेवा की भावना भी बच्चों में पैदा करने का हमें प्रयास करना चाहिए। इस अवसर पर लायन्स क्लब, के पूर्व डिस्ट्रिक्ट गवर्नर श्री महेन्द्र कुमार ने ध्वजारोहण किया और श्री एस० पी० धवन ने विद्यालय द्वारा प्रकाशित स्मारिका "रश्मि" का विमोचन किया। बच्चों के द्वारा प्रस्तुत सांस्कृतिक कार्यक्रमों और योग प्रदर्शन की उपस्थित जनता ने भूरि भूरि प्रशंसा की। इस अवसर पर प्रिंसिपल श्रीमती सुशीला सेठी ने बताया कि इस वर्ष के कक्षा-१२ के परीक्षा परिणाम ९२ प्रतिशत और कक्षा-१० के परीक्षा परिणाम ९६ प्रतिशत रहे। विशेष योग्यता के साथ पास होने वाले बच्चों की संख्या क्रमशः २१ और ८ रही। इस विद्यालय में बालकों का चारित्रिक विकास करने के अनेक तरह के कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा आयोजित आर्य युवा महासम्मेलन तथा शिक्षा निदेशालय द्वारा आयोजित खेल-कूद प्रतियोगिताओं और क्रीडा प्रतियोगिताओं में हमारे बच्चों ने उल्लेखनीय पुरस्कार जीते हैं।

महामन्त्री
सूर्यदेव

पाक आतंकवादियों को मदद देने से बाज आये —राजीव गांधी

१५ अगस्त-दिल्ली—राष्ट्र को सम्बोधित करते हुए प्रधान मन्त्री ने पाकिस्तान का नाम बिना लिए कड़े शब्दों में चेतावनी दी कि वह पंजाब में आतंकवादियों को मदद देने से बाज आये नहीं तो उसे पछताना पड़ेगा। पड़ोसी देश को ऐसी कोई कार्रवाई नहीं करनी चाहिए, प्रधानमन्त्री ने गर्व से कहा, पहली बार ऐसा हुआ जब इस सदी के भयावहतम सूखे के बावजूद भारत को कर्ज लेने को दूसरों के दरवाजे पर नहीं जाना पड़ा। कृषि के लिए पहले एक ही योजना थी। चाहे मैदान हो, पहाड़ हो या रेगिस्तान। वहां के किसान को एक ही ढंग से देखा जाता था लेकिन अब पूरी योजना को १५-१६ क्षेत्रों में बांट दिया गया है। उन्होंने कहा—हमारी कोशिश है कि किसानों को मजबूत किया जाए। उन्हें अपनी फसल की अच्छी कीमत मिले। उन्होंने कहा—१९८४ और १९८८ में बहुत फर्क है। असम और मिजोरम में समझौते हुए जिससे आन्दोलन रुके और शान्ति स्थापित हुई।

कुर्बानी देने को तैयार—प्रधान मन्त्री श्री राजीव ने कहा—देश को महान् बनाने और गुलामी से पहले जैसा गौरव दिलाने के लिए कोई भी कुर्बानी और बलिदान देने को तैयार हूं। मेरे कन्धे पर भारत की जो विरासत है वह गांधी जी, नेहरू जी और इन्दिरा जी की विरासत है। उसे आगे बढ़ाना है। आज देश के सामने जो समस्याएं हैं और प्रश्न हैं इनके जवाब हमें इतिहास में नहीं मिलेंगे। उनका जवाब हमें ही देना है। इस के लिए यदि कुर्बानी की भी जरूरत पड़े तो वह हम देंगे।

हम देखेंगे—राष्ट्र की आजादी की ४१ वीं वर्ष गांठ पर प्रधान मन्त्री ने ३६ मिनट में २६ बार राष्ट्र की

(शेष पृष्ठ १२ पर)

आर्यसमाज भवन का उद्घाटन

आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि आर्यसमाज, सुन्दर विहार, नई दिल्ली का भवन बनकर तैयार हो गया है। इसका विधिवत् उद्घाटन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के माननीय प्रधान—

स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती

के कर कमलो द्वारा रविवार, दिनांक २१ अगस्त, १९८८ को प्रात निम्न कार्यक्रम के अनुसार होगा —

प्रात: १०.०० बजे यज्ञ
११.०० बजे : भवन उद्घाटन—स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती द्वारा
११ १५ बजे : भजन—श्री चुन्नी लाल जी आर्य
११.१५ बजे . प्रवचन—मुख्य वक्ता .—
स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती
प्रधान, सा० आ० प्र० सभा
पं० सच्चिदानन्द जी शास्त्री
महामन्त्री, सा० आ० प्र० सभा
डा० धर्मपाल
प्रधान, दि० आ० प्र० सभा
श्री सूर्य देव
महामन्त्री, दि० आ० प्र० सभा
१ ०० बजे प्रीतिभोज

सम्पादक प० यशपाल 'सुधांशु' एम०

प्रधान सम्पादक-सूर्यदेव

आर्यसमाज का आठवां नियम

अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।

लेखक—स्वामी सत्यानन्द जी महाराज

'अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिये।'

उलटे ज्ञान को, मिथ्या ज्ञान को और विपरीत समझ को अविद्या कहा जाता है। आर्य सभासदों को उसका नाश करना चाहिये। यथार्थ ज्ञान का, सच्ची और सीधी समझ का नाम विद्या है। आर्य सभासदों को उसकी वृद्धि करनी चाहिए। अविद्या के यदि दो भाग किये जायें —एक तो इस लोक सम्बन्धी अविद्या, और दूसरा परलोक विषयक अविद्या — तो इस नियम का सार सुगमता से समझ में आ सकता है। इस लोक का अज्ञान यह है कि अपने घर-बार की सार सम्भाल न करना, बाल-बच्चों की उन्नति करने के उपाय न समझना, पारिवारिक और सामाजिक सम्बन्धों के कर्तव्यों का पालन न करना अपने हानिलाभ में अजान होना, और संसार-यात्रा के चलाने में अयोग्य बने रहना, इत्यादि। सांसारिक अविद्या के कारण गृहस्थों के घरों में कई ऐसे कुसंस्कार, अनाचार और कुलक्षण आ जाते हैं जिनसे उनके पारिवारिक सुखमय जीवन के स्तम्भ को दीमक लग जाती है। उनका गृह भारी भ्रमों का भवन बन जाता है। उनके घर में अनेक अनृत मूलक पूजा-पाठ चल पड़ते हैं, व्रत-नियम प्रवृत्त हो जाते हैं। यथार्थ ज्ञान द्वारा इन सब का सर्वनाश करना इस आठवें नियम के व्रतियों का धर्म है। वे इन दोषों से अपने सम्बन्धियों और बन्धुओं को बचे रहने का उपदेश करें।

इसी प्रकार देश की कुरीतियों का भी निवारण करना उनका कर्त्तव्य है। आर्य सभासदों को अपने हृदय में यह बात सुनिश्चित कर लेनी चाहिए कि आर्यसमाज का संगठन एक उदार भाव से किया गया है। वैदिक धर्मी तो इस संगठन में आने वाले जन भी बन सकते हैं। उनके मोक्ष मार्ग में, ईश्वर-पूजन में, वेदाध्यान में, कोई बाधा नहीं आ सकती। आर्यसमाज का सभासद् न बनने से किसी का उन्नति-पथ नहीं रुकता, स्वर्ग का द्वार नहीं बंद होता। आर्यसमाज का सभासद् बनना तो अपने ऊपर कर्त्तव्य का भार लेना है, वैदिक धर्म के लिए आर्य-सेवक-सेवा-संघ में भरती होना है। इस सेवक संघ का परम धर्म वेद-विद्या का ग्रहण करना और फैलाना है। शारीरिक, आत्मिक और सभा-सामाजिक उन्नति के साधनों द्वारा संसार का उपकार करना, लोकहित के कार्य करना, सभासद् बनाने का मुख्य उद्देश्य है। अपने भरण-पोषण के लिए तो सभी जीव जीते हैं, परन्तु धर्म और परहित के लिए जीना एक उत्तम जीना है। यही मनुष्य-तन धारण करने का सार है। लौकिक और पारलौकिक ज्ञान का दीपक दिखाकर जनता से अविद्या-अन्धकार का नाश करना मनुष्य-जीवन की उच्च कला का चमकना है। ऐसे ही उद्देश्यों और कर्त्तव्यों को दृष्टि-गोचर करके, आर्य सभासदों का सेवा-संघ सुगठित हुआ है। इस कारण, आर्य सभासद् जिस गली में रहे, जिस कूचे में बसे जिस ग्राम अथवा नगर में निवास करे, जिस बिरादरी और जाति से सम्बन्ध रक्खे, वहीं वह एक जाज्वल्यमान ज्योति का आकार दे। जनता के लिए एक ज्योति-स्तम्भ बन जाये सुमति, सुशिक्षा और शुभ संस्कारों का स्रोत बहाता रहे। आर्य जनों को ऐसा कार्य-कुशल और सुचतुर होना चाहिए कि जनता उनको आप ही चाहे, आगे स्थान दे, और यह समझे कि इस सेवा संघ के बिना कार्य सिद्धि महा कठिन है।

परलोक-सम्बन्धी विषयों की जो अविद्या है वह अधर्म की प्रवृत्ति है, आत्मा अनात्मा को न समझना है। इस अविद्यान्धकार में ग्रस्त जन नहीं जाना करते कि परमेश्वर का स्वरूप कैसा है, धर्म किसे कहते हैं, हमारे जीवन का उद्देश्य क्या है, किस कर्म के करने से आत्म-कल्याण होगा, और सत्यासत्य में क्या भेद है। इत्यादि विषयों से अजान जनों को सत्पथ पर लाने के लिए आर्य जनों को पुस्तकों का प्रचार करना चाहिए। वे परिवारों में, मुहल्लों में, बाजारों में, नगरों तथा मेलों में धर्म-प्रचार के उपाय और प्रबन्ध करें। छोटी छोटी पुस्तिकाएँ वितरण करना भी उपयोगी समझ उत्साही जन समय निकालकर अन्य धर्मी सज्जनों से मिलें। वार्तालाप द्वारा उनको आर्य धर्म का महत्त्व बतायें। प्रश्नोत्तर द्वारा उनके सन्देह दूर करें।

विद्या की वृद्धि के लिए आर्यों को अनेक उपाय करने चाहिएँ। वे धार्मिक और पारमार्थिक विद्या के बढ़ाने के साधन उपस्थित करें। जितनी भी आर्थिक विद्याएँ हैं — इस लोक का ज्ञान, इस लोक को सुखमय बनाने का ज्ञान — जनता में उनका प्रचार करने के लिए पाठशालाएँ खोलना, विद्यालय चलाना अच्छे साधन हैं। उद्योग-शिक्षणालय और कला-भवन स्थापित करना भी उत्तम कर्म हैं। अवकाश-शिक्षणाश्रम और रात्रि-पाठशालाएँ भी विद्या की वृद्धि बढ़ाने के साधन हैं।

पारमार्थिक विद्या बढ़ाने के लिए ऐसे विद्यालय स्थापित किये जायें, जिनमें वेद-विद्या का पठन-पाठन हो, दर्शन शास्त्रों की शिक्षा मिले, स्मार्त धर्म का बोध हो, और ऐसे साधन-सत्संग लगाये जायें जिनमें जीवन को उच्च बनाने के उपाय उपयोग में लाये जा सकें, अधिकारी जनों को आत्म-चिन्तन का अवसर मिले, प्राणायामादि योगांगों की रीति समझाई जाये।

आर्य सभासद की यह दृढ़ धारणा होनी चाहिये कि संसार में जितने दुःख हैं, वे सब अविद्या-जन्य हैं। अविद्या ही शारीरिक और मानसिक क्लेशों की जननी है। इसी भूमि में नाना कष्टों के पेड़ उत्पन्न होते हैं। जिस जन में और जिस जाति में जितनी अधिक अविद्या होगी, उतना ही उसका जीवन संकट-संकुल होगा — उतनी ही उसके हित के हेतुओं की हत्या होती रहेगी। इस कारण विद्या का प्रचार करना क्या है, मानो जन और जनता में से अन्धकार का बहिष्कार करना है, दुःख दारिद्र्य को धकेल निकालना है, विपत्तियों को मार भगाना है। हिताहित को जानने वाले विवेकी जन सदा सुगठित, सावधान सुसज्जित और सजग बने रहते हैं। वे कभी अज्ञान कूप में नहीं कूदते। ऐसे विद्यारूप उपयोगी दान को देना एक महान् कर्म है, उत्तम धर्म है। वह दान जितना दिया जाय, उतना ही थोड़ा है।

आर्य जनों का धर्म ग्रन्थ है—वेद। आत्मा-ज्ञान है। परमात्मा ज्ञानस्वरूप है। उनके धार्मिक कर्म भी ज्ञानानुकूल ही समझे जाते हैं। आर्य ऋषिजन ज्ञान की ही पूजा किया करते थे। उनके मत में पुण्य को भस्मसात् करने के लिए यथार्थ ज्ञान की केवल एक चिनगारी बहुत है। जन्म-मरण के बन्धन-वन को काटने के लिए विद्या का कुठार पर्याप्त है। भगवान कपिल ने आत्म-ज्ञान, विवेक को संसार-सागर से पार पाने का एक मात्र साधन बताया है। आर्य धर्म में ज्ञान-दान के समान दूसरा दान और ज्ञान के सदृश दूसरी पवित्र वस्तु नहीं बताई गई। वेद पवित्र में भी परमानन्द की प्राप्ति का परम उपाय परमात्म-ज्ञान को ही कहा है। जिस धर्म में, जिस कर्म में विद्या का इतना यशोगान हो, इतना महत्त्व हो, इतना ऊँचा आसन हो, उसको विद्या के लिए कितना त्याग करना चाहिए, इसके बताने की कुछ भी आवश्यकता नहीं।

'वैदिक वृद्ध संन्यास आश्रम यमुना नगर के लिए अपील'

अशोक नगर (धर्मपुरा कालोनी) रेलवे वर्कशाप रोड, यमुना नगर (हरियाणा) में वैदिक वृद्ध सन्यास आश्रम खोला गया। जिसमें आर्य-समाज के उन वृद्ध सन्यासियों की समुचित सेवा की व्यवस्था है जो अस्वस्थ हों और जिनकी देखभाल करने वाला कोई न हो। उनकी सब आवश्यक वस्तुएँ और चिकित्सा आश्रम की ओर से निःशुल्क प्राप्त होगी। आर्यसमाज में अब तक जिस बात की कमी प्रबल रुप से खटकती थी, उस कमी को हम आपके सहयोग से ही पूरा करना चाहते हैं।

आश्रम में आयुर्वेदिक औषधालय भी है। जिसमें कविराज डाक्टर मुल्कराज सिंह सेवा करते हैं। आश्रम में भोजन पकाने तथा सेवा करने के लिए सेवक भी हैं। आश्रम का मासिक व्यय लगभग २००० रु० (दो हजार रुपये) है। अतः आश्रम को सुचारु रूप से चलाने हेतु आप सभी सज्जन तन-मन-धन से सहयोग देने की कृपा करें तथा वृद्ध (अस्वस्थ) संन्यासियों को आश्रम में भिजवायें।

अध्यक्ष—
स्वामी सच्चिदानन्द

योग-मीमांसा

लेखक—स्वामी सत्यपति

उद्देश्य—

योग मानव-जीवन के कल्याण का आधार है। योग के बिना कोई भी प्राणी पूर्णानन्द की प्राप्ति करने में समर्थ नहीं है। प्रत्येक प्राणी समस्त दुःखों से छूटकर पूर्ण स्थायी, दुःखरहित आनन्द को प्राप्त करना चाहता है। इस उद्देश्य की पूर्ति योग से ही सम्भव है। इसलिए योग के वास्तविक स्वरूप को जानना व जनाना और यथाशक्ति उस पर चलना-चलाना मुख्योद्देश्य है। योग के स्वरूप को न जानने और उस पर न चलने के कारण मनुष्य-जाति प्रायः दुःख-संतप्त है। इस वर्तमानकाल में योग के नाम पर बहुत कुछ प्रयास किए जा रहे हैं। परन्तु योग के स्थान में प्रयोग सिखाया जा रहा है। यदि इस झूठे योग को न रोका गया तो इसके परिणाम बहुत भयंकर होंगे। इस अन्ध-परम्परा से सच्चा योग भी कलंकित हो जायेगा। इसलिए योग के वास्तविक स्वरूप को जानना अत्यन्त आवश्यक है। योग क्या है और अयोग क्या है, इसको मनुष्य जान सकें, अपना तथा दूसरों का कल्याण कर सकें इसलिए योग के विषय में लिखना प्रारम्भ किया है। इस ग्रन्थ के प्रथम भाग में योग का स्वरूप, योग का फल, उसके साधन और योग-मार्ग में आने वाले बाधकों का स्वरूप समझाने का प्रयास किया है। उत्तर भाग में यह बतलाया है कि योग के नाम पर क्या-क्या भ्रान्तियां प्रचलित हो गई हैं। इन दोनों भागों का अध्ययन करने पर यह निश्चय हो जायेगा कि वास्तविक योग क्या है? और योग के नाम पर सिखाया जाने वाला प्रयोग क्या है? आशा है कि बुद्धिमान्, योग के जिज्ञासु इसको पढ़-पढ़ाकर अपना और अन्यों का कल्याण करेंगे।

योग शब्द पर विचार—

योग शब्द "युज् समाधौ" से घञ् प्रत्यय करने पर सिद्ध होता है। योग दर्शन में अन्य धातु से निष्पन्न योग शब्द नहीं लिया जाता। क्योंकि व्यास-भाष्य में लिखा है—"योगः समाधिः" (योग. १।१) योग समाधि को कहते हैं और वह सब अवस्थाओं में रहने वाला चित्त का धर्म है। चित्त की पांच अवस्थाएं हैं। "क्षिप्तं मूढं विक्षिप्त-मेकाग्रं निरुद्धमिति चित्तभूमयः।" (योग० १।१) क्षिप्त=अति चंचल। मूढ=मोहग्रस्त=मूर्छित जैसा। विक्षिप्त=चित्त की एकाग्रता का उत्पन्न होना और किसी कारण से भंग हो जाना। एकाग्र=एक विषय में चित्त का लम्बे काल तक लगे रहना, मध्य में अन्य विषय का न आना। इसी को योगदर्शन में सम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं। निरुद्ध=सम्प्रज्ञात समाधि का भी रुक जाना, इसी को योगदर्शन में असम्प्रज्ञात समाधि व निर्बीज समाधि कहा है। और इसी अवस्था में ईश्वर का साक्षात्कार होता है। प्रश्न—क्या यह अवस्था ज्ञान-शून्य है? उत्तर—ज्ञान शून्य नहीं है, यह ज्ञान की ऊंची अवस्था है। जो लोग इस अवस्था को ज्ञान-शून्य मानते हैं, वे योग-विद्या को नहीं जानते। क्योंकि इस अवस्था में विकृति और प्रकृति के स्वरूप को ठीक प्रकार से जानकर जीव ईश्वर के स्वरूप में मग्न होता है। ईश्वरोपासना से ज्ञान की महती प्रवृद्धि होती है। इसलिए इस अवस्था को ज्ञान से शून्य मानना अनुचित है। चित्त और चित्त की पांच अवस्थाओं का वास्तविक ज्ञान प्राप्त करना योग-जिज्ञासु के लिए अत्यन्त आवश्यक है। योगाभ्यास करने वाले प्राय. चित्त को चेतन=ज्ञानवान् मानते हैं। अत. वे चित्त को वश में नहीं कर पाते।

योग का स्वरूप—

आजकल योग का स्वरूप अनेक प्रकार से बतलाया जाता है। कोई कहता है ब्रह्म में मिल जाने का नाम योग है। कोई कहता है भूमि में दबकर बैठने का नाम योग है। कोई कहता है बहुत से आसनों के करने का नाम योग है। कोई कहता है भांगादि द्रव्यों को खा-पीकर मस्त रहने का नाम योग है। कुछ लोग कई दिन तक एक व्यक्ति का उपवास करवाकर, उसकी नाड़ी को दबाते हैं, उससे मूर्च्छा आ जाती है, उस मूर्च्छा अवस्था को योग कहते हैं। कोई कहते हैं कि ज्ञानशून्य अवस्था का नाम योग है। कोई कहता है लम्बे काल तक सांस रोके रहने का नाम योग है, कोई कहता है हठयोग के नेती, धौती आदि षट्कर्म का नाम योग है। कोई कहता है मौन होकर एकान्त में बैठे रहने का नाम योग है। कोई कहता है अपने माने हुए इष्टदेवता के लिए पशुओं को मार-कर उनकी बलि चढ़ाने का नाम योग है। इस प्रकार और भी अनेक अन्ध परम्पराएं योग के नाम पर चल पड़ी हैं। वास्तव में इन योग नाम से प्रचलित परम्पराओं में सच्चा योग एक भी नहीं है।

श्री पतञ्जलि जी ने योग का वास्तविक स्वरूप यह बतलाया है—

योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः

(योग० १।२)

चित्तवृत्तियों के निरोध को योग कहते हैं। चित्त सत्त्वगुण, रजोगुण, तमोगुण, इन तीन जड़ वस्तुओं के मेल से बना हुआ, एक जड़ पदार्थ है। चित्त के जड़ होने में प्रमाण—चित्तं हि प्रख्याप्रवृत्तिस्थितिशील-त्वात् त्रिगुणम्।(यो० १।२ पर व्यास-भाष्य)। चित्त में जीव की प्रेरणा से जो नाना प्रकार की तरंगें उत्पन्न होती हैं, उन्हीं को वृत्ति कहते हैं। जैसे दर्पण में चित्र उतरते हैं वैसे ही चित्त में भी उतरते हैं। उन वृत्तियों को जानकर वैराग्य और अभ्यास से रोक देने का नाम योग है। इस योग के मुख्यरूपेण दो भेद हैं—एक सम्प्रज्ञात दूसरा असम्प्रज्ञात।

जब मनुष्य अपने चित्त पर पूर्णाधिकार प्राप्त कर लेता है अर्थात् जिस विषय में चित्त को लगाना चाहे, लम्बे काल तक लगा लेता है, वही सम्प्रज्ञात समाधि है। जैसे वाचक और वाच्य-सम्बन्ध को जानकर जप किया जाता है। 'ओम्' ईश्वर का वाचक=कहने वाला है और ईश्वर एक वस्तु है जो ओम् शब्द के द्वारा कही जाती है। इस वाच्य-वाचक सम्बन्ध को जानकर एक व्यक्ति अर्थसहित जप करता है और उस जपकाल में किसी अन्य विषय को मन में नहीं आने देता, यह एकाग्रता है अर्थात् सम्प्रज्ञात समाधि है। इसी सम्प्रज्ञात समाधि को सबीज समाधि भी कहते हैं। इस सम्प्रज्ञात समाधि की परिपक्वावस्था में ऋतम्भरा प्रज्ञा की प्राप्ति होती है। उस अवस्था में योगाभ्यासी की बुद्धि सत्य को ही धारण करती है असत्य को नहीं। इस अवस्था को प्राप्त करने के बाद योगी सांसारिक लोगों को वैसे ही देखता है जैसे कोई ऊंचे पर्वत के शिखर पर चढ़कर नीचे वालों को देखता है। वह स्वयम् अज्ञान और कष्टों से छूट-कर वास्तविक स्वतन्त्रता का अनुभव करता है और सांसारिक लोगों को क्लेशग्रस्त देखता है। ईश्वर का अनुभव होने से परवैराग्य की उत्पत्ति होती है। उससे इस सम्प्रज्ञात समाधि का भी अवरोध हो जाता है, यह असम्प्रज्ञात समाधि कहाती है। इसी को निर्बीज समाधि भी कहते हैं। इस अवस्था में परमात्मा का प्रत्यक्ष होता है। उससे विशेष ज्ञान और आनन्द की प्राप्ति होती है। जैसे अग्नि में तपे हुए लोहे के गोले में अग्नि सर्वत्र दिखाई देती है, वैसे समस्त संसार में परमात्मा का प्रत्यक्ष होता है। जिस प्रकार मधु के सेवन से एक लौकिक मनुष्य को आनन्द का अनुभव होता है वैसे ही परमात्मा के प्रत्यक्ष होने पर योगी को आनन्द की अनुभूति होती है।

लौकिक सुख और मोक्ष-सुख में अन्तर—

लौकिक सुख और परमात्मा से मिलने वाले सुख में यह अन्तर है कि लौकिक सुख क्षणिक होता है और परमात्मा से मिलने वाला सुख स्थायी होता है। लौकिक सुख में दुःख मिश्रित रहता है और अलौकिक में व नहीं। लौकिक सुख से व्यक्ति ऊब जाता है और ईश्वर के सुख से ऊबता नहीं। लौकिक सुख से व्यक्ति रोगी भी हो जाता; है परमात्मा के सुख से रोगी नहीं होता। लौकिक सुख को भोगने वाला मनुष्य मन, इन्द्रियों के वश में आ जाता है और परमात्मा के आनन्द को भोगनेवाला इनको अपने वश में कर लेता है। इत्यादि अनेक प्रकार का अन्तर है। मानव जीवन में ईश्वर साक्षात्कार की ही एक ऐसी अवस्था है जिसमें मनुष्य यह अनुभव करता है कि जो कुछ मैंने प्राप्त करना था वह प्राप्त कर लिया है, अब और सुख व सुख-साधनों की आवश्यकता नहीं है। यदि सांसारिक व्यक्ति दुःख से छूटने और सुख को प्राप्त करने के लिए सर्वस्व की आहुति देकर चक्र-वर्ती राज्य को भी प्राप्त कर लेवे तो भी योगी-जैसा अनुभव नहीं कर सकता। इससे यह सिद्ध होता है कि मानव-जीवन की पूर्ण सफलता का आधार योग है, सांसारिक वस्तुएं नहीं। अत' प्रत्येक मनुष्य को तन, मन, धन से योग की प्राप्ति करनी चाहिये और योग-विरोधी मार्ग को सर्वथा छोड़ देना चाहिये।

(शेष पृष्ठ १० पर)

ऋषि दयानन्द से एक शिकायत

खण्डन क्यों किया ?

लेखक—प बिहारीलाल शास्त्री, महारथी शास्त्रार्थ

एक उत्सव में (भिवानी में) हम से एक निष्पक्षपात विद्वान् ने प्रश्न किया कि श्री स्वामी जी विद्वान् सन्यासी थे, फिर उन्होंने खण्डन क्यो किया ? दूसरों की निन्दा करना तो बडा अनुचित काम है और खण्डन भी कठोरता से किया है। मैंने उत्तर में उनसे पूछा कि आप स्वामी जी के इस कार्य को गलत मानते हैं न ?

विद्वान् — हां, बिल्कुल गलत।

मैं — तो, यह श्री स्वामी जी के मत का खण्डन है या नही ?

इस प्रश्न पर तो वह बगल झांकने लगे। मैंने फिर पूछा कि निस्संकोच कहिए, तो वे बोले कि हां, यह श्री स्वामी जी के मत का खण्डन है। तो मैंने कहा कि विचार धाराएँ खण्डन-मण्डन के रूप मे सदा से चली आ रही हैं। जो बात हमें ठीक जच जाए उसे मान लेते हैं, यह मण्डन है, जो ठीक न जान पड़े उसे त्याग देते हैं, और कहते हैं, कि इस कारण इस विचार को त्यागा जा रहा है, बस यही खण्डन है।

महान् दार्शनिक श्री स्वामी शंकर ने अपने समय के जैन, बौद्ध, पाशुपत, वैष्णव सब का खण्डन किया है। बौद्ध विद्वान् श्री सुबन्धु ने भी सब मतों की खबर ली है। खण्डन-मण्डन की प्रथा से बुद्धि का विकास होता है, अन्धविश्वास दूर होता है सहिष्णुता बढ़ती है। अरब का विद्वान् अल्बेरूनी जो महमूद के समय में भारत आया था, संस्कृत भी पढा था, लिखता है कि इन हिन्दुओ में अनेक अदाएँ हैं। बहस करते हैं, किन्तु लडते नही। धर्म विचार में लडाई केवल यहूदी और मुसलमानों की प्रथा है। हिन्दू धर्म सदा से ही बुद्धिवादी (तर्कशील) रहा है। भगवान् मनु भी कहते हैं, 'यस्तर्केणानुसन्धत्ते स धर्मं वेद नेतर।" तर्क से धर्म जाना जाता है। श्री स्वामी जी खण्डन का प्रयोजन भी इस प्रकार बता रहे हैं — 'इसमें (खण्डन में) यह अभिप्राय रक्खा गया है कि जो जो सब मतों मे सत्य-सत्य बातें हैं, वे-वे सब में अविरुद्ध होने से उनको स्वीकार करके जो-जो मतमतान्तरो में मिथ्या बातें हैं उनका खण्डन किया है। इसमें भी यह अभिप्राय रक्खा है कि सब मतमतान्तरों की गुप्त वा प्रगट बुरी बातों का प्रकाश कर विद्वान् — अविद्वान् सब साधारण मनुष्यो के सामने रक्खा है, जिससे सब से सब का विचार होकर परस्पर प्रेमी होके सत्य मतस्थ होवें।"

इन मतमतान्तरो ने कैसे एक दूसरे को परस्पर झूठा बना दिया, यह जानना है तो पढ़ो 'इस्लाम का का इतिहास।" लाखों ईसाई सहस्रो यहूदी करोडों हिन्दू विद्वान् मजहब के लिए काट डाले। शिया-सुन्नी के झगडो ने सहस्रों को मौत के घाट उतार डाला। हाइपेशिया, जो रेखा गणित का प्रचार करती थी, उसे पादरियों ने जीवित ही जला डाला। पोपों ने सैकड़ों वैज्ञानिको को चिढ कर मार डाला। रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेण्ट मत के विवाद में ही लाखों ईसाई मारे गए। भारतीय सम्प्रदायों ने मार-काट तो नहीं करी किन्तु नकुलीय सम्प्रदाय के शैव जिनके हाथो में सोमनाथ का मन्दिर था। पास ही देवी त्रिपुर सुन्दरी का मन्दिर था। उसके साथ सुन्दर-सुन्दर लडकियों का बलिदान दिया जाता था।

बौद्ध मत में माना गया है कि सारा ससार ही दु:खमय है। इस उपदेश ने मनुष्य को जीवन के प्रति उदासीन कर दिया।

जैन और बौद्ध पौराणिक सब ही भूतों को मानते हैं ग्रहों के प्रभाव को मानते हैं। देवी, देवता को चेतन मानते हैं। जैन सृष्टिकर्ता ईश्वर को तो मानते हैं। इन देवी-देवताओं और भूतों के मानने के भ्रम में पड़कर पंजाब के एक लाला परशुराम ने अपने पांच वर्षीय पुत्र की बलि देवी की मूर्ति के सामने चढ़ा दी और स्वयं को फांसी पर चढ़ाना पडा। लडके के घर वालों को भी जेल हुई और पुजारी को भी, पञ्जाब की ही एक जैन लडकी के, ऊपर से भूत उतारने के लिए उसे लोहे की गरम सलाखों से इतना पीटा गया कि लडकी मर गई। इस में भी घर वालों तथा साधुओं को लम्बी सजाएं हुईं। हिन्दुस्तान, नवभारत टाइम्स सब में यह हाल चित्र सहित छपा।

तीर्थों के और मुसलमान लोग पीरो की ज्यारतो के फेर में पडकर लाखों रुपये बरबाद करते हैं। और घोर कष्ट भी उठाते हैं। इन बातों से दयानन्द का खण्डन बचाता है। मूर्तियां और तीर्थ व्यर्थ हैं। यह जानना है तो पढो जाबाल दर्शनोपनिषत्—

तीर्थे दाने जपे यज्ञे
काष्ठे पाषाणके सदा।
शिवे पश्यति मूढात्मा,
शिवे देहे प्रतिष्ठिते॥

तीर्थ दान, यज्ञ, जप, काठ और पाषाण में मूढ़ लोग शिव (ईश्वर) को देखते हैं, किन्तु वह देह में ही प्रतिष्ठित है।

भारत की अखण्डता के लिए आर्यसमाज की आहुति की स्वर्ण जयन्ती

१९३९ में लडे गये इस सत्याग्रह की दूसरी कोई मिशाल देश में नही मे नहीं मिलती, फिर यह दिशाभ्रम और निराशा क्यो ? आज के समाज के नेता चाहे उसमे भाग न ले सके हो, परन्तु जो सत्याग्रही होने से शेष हैं उनका सम्मान अब स्वयं सरकारें कर रही हैं तो आर्यसमाज उनके प्रति उदासीन नही है, हमारे अनुरोध पर प्रादेशिक आ प्र सभा, सार्वदेशिक सभा व उत्तर प्रदेश तथा बिहार, पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा ने पूरे वर्ष यह समारोह मनाने की घोषणा की है।

१९३९ मे द्वितीय विश्व महायुद्ध प्रारम्भ हुआ और उससे बरसो पहले विश्व की तत्कालीन महाशक्तियों यानी मित्र देश और धुरी देशों में दुनिया को अपने प्रभाव क्षेत्र में लाने के लिए जोड तोड शुरू हो गई थी। विश्व का कौन सा भूखंड किस महाशक्ति के हिस्से में आएगा, इसकी निश्चित रूपरेखा बहुत पहले से ही बन रही थी। चैम्बरलेन के प्रधान मन्त्री काल में बर्तानवी साम्राज्य के विखडन को भावी नियति मान लिया गया था। उस काल में भारत के राजे महाराजे-नवाब अंग्रेजो के सबसे बडे सहायक और समर्थक थे। इन सबसे अधिक उनका विश्वसनीय था—हैदराबाद का निजाम, जिसे निजाम-उल-मुल्क का खिताब मुगल साम्राज्य के पतनकाल से मिल गया था। वस्तुतः इसी वंश ने इस देश में अंग्रेजों की जड जमाई थी। जबकि अन्य रियासती शासकों को 'हिज-हाइनैस' की उपाधि मिली हुई थी, हैदराबाद के निजाम को हिज ऐक्जाल्टेड हाइनेस और उसके बेटे प्रिंस ऑफ वेल्स की तरह प्रिंस ऑफ बरार की उपाधि मिली हुई थी। यह सब उस वंश की गद्दारी और स्वार्थी कार्रवाइयों को उजागर करता है।

अभी महायुद्ध शुरू भी नहीं हुआ था और अंग्रेज इस देश में मौजूद थे और पाकिस्तान भी बना नही था। पाकिस्तान की कल्पना स्वाधीनता से पूर्व मीर उस्मान अली निजाम ने अपने राज्य मे डाली थी, और वह अपने को अमूर-ए-मजहबी (इस्लामी सम्राट्) का शासक मानता था। पाठकों को भली भांति याद होगा कि इस देशद्रोही वंश को राज्य से उतारने के लिए सरदार पटेल को १९४८ में पुलिस कार्रवाई करनी पडी, पाकिस्तानी प्रभाव आज भी वहां घरों में देखा जा सकता है।

देसी रियासतों में उत्तरदायी शासन के बारे में राष्ट्रीय महासभा कांग्रेस की हमेशा से दुमुही नीति ही रही। लुधियाना में सन् ३९ में हुए रियासती प्रजा सम्मेलन में निजाम की सल्तनत में चलाए गए आर्यसमाज के सत्याग्रह को उचित मानकर भी असामयिक कहा गया और शेख अहमदीन और शेख अब्दुल्ला ने इसकी पुष्टि की। इसके विपरीत ठीक सम्मेलन के दो दिन बाद १८-३-३९ के 'हरिजन" के अंक से महात्मा गांधी ने इस सत्याग्रह को सर्वथा उचित ठहराया था। इस प्रकार शुरू से इस रियासत का शासक और इसका पूरा ढांचा घोर साम्राज्यवादी और सम्प्रदायवादी रहा, जिस राज्य की ८८ प्रतिशत हिन्दू जनता नागरिक और धार्मिक अधिकारों से सर्वथा वंचित रही। राजनैतिक अधिकार तो गैर मुस्लिमों के हाथ में न के बराबर थे। ३२० मील लंबाई और २७० मील चौड़ाई का यह राज्य अब आंध्रप्रदेश, कर्नाटक और महाराष्ट्र में बट गया है।

निजाम और उसके मुस्लिम लीगी हिमायती भारत से अंग्रेजी शासन का जुआ उतरते ही उसे स्वाधीन बनाने की फिराक में थे। १९३८-३९ में जन प्रतिनिधियों के इस आक्रोश ने अब हैदराबाद आर्यसमाज सत्याग्रह की शक्ल ले ली थी। उसे अब ५० साल पूरे हो रहे हैं।

—महावत स्नातक

दैवी सम्पदा का दावेदार

लेखक —रामलाल शास्त्री विद्याभास्कर

मानव के जीवन में संस्कारों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। मनुष्य जीवन में अच्छा अथवा बुरा जो कुछ भी करता है। वह सब संस्कारों से प्रेरित होकर करता है। भगवान कृष्ण ने सोचा कि यदि किसी प्रकार महाभारत का युद्ध टल जाए, तो बहुत ही अच्छा होगा। यह प्रश्न उनके मन में बार-बार गूंज रहा था, किन्तु कोई मार्ग नहीं सूझ पा रहा था। भगवान् कृष्ण ने अन्त में सोचा कि दुर्योधन कर्ण के बल पर उछल रहा है। यदि मैं कर्ण को अपने पक्ष में कर लूं तो सम्भव है, दुर्योधन युद्ध से विमुख हो जाये। वे जब कर्ण को समझाने के लिए जा रहे थे, तब उनके मन में अचानक यह विचार उठा कि क्यों न एक बार फिर दुर्योधन से मिल लिया जाए, भगवान कृष्ण दुर्योधन के पास पहुंचे और उन्होंने कहा कि हे दुर्योधन ! ये पाण्डव तुम्हारे भाई हैं। आखिर राज्य पर इन लोगों का भी तो अधिकार है। तुम इन्हें इतना भूखण्ड दे दो, जिससे पाण्डव जीवन का निर्वाह कर सकें। इस प्रकार कौरवों और पाण्डवों में सद्भावना बनी रहेगी।

दुर्योधन भगवान् कृष्ण की बातों को ध्यान पूर्वक सुनता रहा और अन्त में उसने भगवान कृष्ण के प्रति निवेदन किया—"हे कृष्ण ! मैं यह अच्छी प्रकार से जानता हूं कि पाण्डवों के प्रति मेरा किस प्रकार का धर्ममय व्यवहार होना चाहिए किन्तु मैं इस धर्म को जानकर के भी इस धर्ममय कार्य में प्रवृत्त नहीं हो पा रहा हूं। मैं यह भी अनुभव करता हूं कि मेरा यह व्यवहार अधर्ममय है, फिर भी मैं इन अधर्ममय व्यवहार से बच नहीं पा रहा हूं। मेरा हृदय स्थित संस्कार मुझे जैसा प्रेरित करता है, मैं वैसा ही करने लगता हूं।"

जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्ति,
जानाम्यधर्मं न च मे निवृत्ति।
संस्कारमात्रेण हृदि स्थितेन,
यथानियुक्तोऽस्मि तथा करोमि।

दुर्योधन के उत्तर को सुनकर भगवान् कृष्ण निराश हुए। उन्होंने सोचा एक बार कर्ण से मिल लिया जाए। श्री कृष्ण कर्ण के पास पहुंचे। कर्ण ने भगवान कृष्ण का हर्ष पूर्वक स्वागत किया और इस सम्मान [illegible] आने का कारण पूछा। [illegible] पूर्वक कहा—"कर्ण। तुम्हारे जीवन के विषय में एक ऐसा रहस्य है, जिस-को कि केवल कुन्ती जानती है अथवा मैं जानता हूं। मैं आज उसी रहस्य के उद्घाटन के लिए तुम्हारे पास आया हूं। कर्ण तुम वस्तुतः कुन्ती के पुत्र हो। तुम अविवाहित कुन्ती से उत्पन्न हो गए थे। कुन्ती लोक लाज वश तुम्हें कहीं छोड आयी थी और राधा ने तुम्हारा पालन किया। तुम युद्ध में भाग ले रहे हो। युद्ध में चाहे तुम मारे जाओ अथवा पाण्डवों से एक कोई मारा जाये, इससे कुन्ती को बेहद दुःख होगा। आखिर तुम कुन्ती के ही तो वंश से हो। कर्ण! तुम पाण्डवों के पक्ष में आ जाओ। पाण्डव तुम्हें बड़े भाई होने के नाते युद्ध में विजयी होने के बाद सम्राट् बना देंगे। युद्ध में पाण्डवों की जीत निश्चित है।"

भगवान कृष्ण की बातों को सुनकर कर्ण ने कहा—"हे कृष्ण। मैं अपने धर्म को अच्छी प्रकार समझता हूं। यदि मैं धर्म को छोडना भी चाहूं, तो भी मैं धर्म को नहीं छोड सकता। अधर्म क्या है? मैं इसे भी भली भांति जानता हूं किन्तु मैं अधर्म विषयक कार्य में प्रवृत्त नहीं हो सकूंगा। हृदय में विराजमान मेरा संस्कार मुझे जैसा प्रेरित करता है मैं वैसा ही कर रहा हूं।"

जानामि धर्मं न च मे निवृत्ति,
जानाम्यधर्मं न च मे प्रवृत्ति।
संस्कारमात्रेण हृदि स्थितेन,
यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि।

ये दो चित्र हैं, जो मानव के जीवन में संस्कारों का कितना महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसकी ओर संकेत कर रहे हैं। आदमी अगर चाहे, तो अपने जीवन को संस्कारों के द्वारा बदल सकता है। संस्कारों से सुसंस्कृत जीवन ऐसा ही जीवन है, जैसे कोई व्यक्ति फूलों को तोडकर गुलदस्ता बना ले। यद्यपि गुलदस्ता देखने में बहुत छोटा होता है और उसमें गिने चुने ही फूल होते हैं, तथापि गुलदस्ता जहां पर होता है, वहां की रौनक बढ जाती है। आदमी ऐसे ही बन जाय जाल सम्पन्न हो और यदि वह कुसंस्कारों के जंजाल से घिरा हुआ है, तो उसका जीवन ऐसा ही जीवन होगा, जिस प्रकार फूलों से भरा हुआ उपवन हो, किन्तु चारों ओर कांटे बिखरे हों। घास उगाई हो, झाड झंखाड इधर उधर पडा हो। संस्कार के मर्म को समझने वाले विद्वान् को इसीलिए उद्घोष करना पडा था—

जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद् द्विज उच्यते।

प्रत्येक मनुष्य जन्म से शूद्र है अर्थात् उसका जीवन खाली स्लेट के समान है, जिसमें अभी कुछ लिखा नहीं गया है। 'द्विज शब्द का अर्थ है दुबारा जन्म (द्वि=दुबारा ज=जन्म) माता-पिता आचार्य के सुप्रयत्न से बालक के जीवन में धीरे-धीरे गुणों का विकास होता है। इस विकसित जीवन का नाम द्विज जीवन है बालक एक बार अपनी मां से उत्पन्न होता है, फिर वह विद्यादि संस्कारों से सम्पन्न होकर द्विज कहलाता है।

संस्कारों का प्रमुख उद्देश्य है, मनुष्य एक ऐसे जीवन का मालिक बने, जिसका अनुकरण प्रत्येक व्यक्ति कर सके। मनुष्य जीवन में कुछ न कुछ अनुकरण करता ही है, किन्तु जब व्यक्ति का मन सुसंस्कृत हो उठता है, तब वह सौहार्द, क्षमा, दया आदि मानवीय गुणों से भर सकेगा। मनुष्य इस गौरवशाली जीवन का मालिक किस प्रकार बने, इन्हीं बातों का विधायक संस्कार है। भारतीय शास्त्रों में सोलह संस्कारों का जो विधान किया गया है, उसके पीछे यही भावना है कि मनुष्य इन संस्कारों के माध्यम से इस लोक और परलोक दोनों को सुधारने में समर्थ हो सके—

वैदिकैः कर्मभिः पुण्यैः
निषेकादिर्द्विजन्मनाम्।
कार्यः शरीरसंस्कारः
पावनः प्रेत्य चेह च॥
मनु० २।२६।

सुसंस्कृत जीवन मानवता के विकास में सहायक हो सकता है, इस दृष्टि को ऋषियों ने मन में रखकर संस्कारों का विधान किया था। यदि मनुष्य सुसंस्कृत जीवन का मालिक नहीं बन पाता है तो मनुष्य के जीवन में केवल शारीरिक विकास तो हो जाता है, किन्तु मानसिक और आध्यात्मिक विकास से व्यक्ति वञ्चित हो जाता है। इन विकासों से वञ्चित होने का मतलब है, जीवन में राक्षसी प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन देना। मनुष्य के जीवन में तीन बातें प्रमुख होती हैं, जिनके कारण इन्सान आसुरी प्रवृत्तियों से बचकर दैविक सम्पदा का स्वामी बन पाता है। ये तीन बातें १ कृति २ प्रकृति ३. संस्कृति। आदमी जब किसी कार्य को करता है, तब वह कार्य आदमी की कृति (रचना) बन जाती है। और जब आदमी बार-बार कृति को करने लगता है, तो एक दिन वही कृति प्रकृति (स्वभाव) के रूप में बदल जाती है। कृति मनुष्य का स्वभाव है। मनुष्य खाली नहीं बैठ सकता है। वह कुछ न कुछ करता ही रहेगा। क्योंकि निरन्तर किसी न किसी कार्य में लगे रहना मानव चेतना का स्वभाव है। कार्य करना ही पर्याप्त नहीं होता है, अपितु आदमी जब किसी कार्य को करे, उस कार्य में कुछ न कुछ प्रकर्ष की भावना अवश्य निहित होनी चाहिए, इसी बात की ओर संकेत करने के लिए कृति शब्द के पूर्व में 'प्र' उपसर्ग जुडा हुआ है। कहने का आशय यह है कि जब भी आदमी किसी कृति (कार्य) को बार बार करेगा, तो वह कृति मनुष्य की प्रकृति (स्वभाव) बन जायेगी। इसीलिए कार्य करते समय यह ध्यान रखना पडेगा कि वह कार्य उत्तमता का परिचायक हो, अन्यथा मनुष्य बुरे स्वभावों का मालिक बन जायेगा। बुरे स्वभावों का मालिक बनने का अर्थ है जीवन में आसुरी प्रवृत्तियों को निमन्त्रण देना, जो कि मनुष्य को अभीष्ट नहीं है।

प्रकृति और संस्कृति का समीप सम्बन्ध है। समाज के द्वारा मानव की प्रकृति को जब निश्चित दिशा मिलती है, तब यही प्रकृति धीरे-धीरे संस्कृति के रूप में परिवर्तित हो जाती है। संस्कृति के निर्माण के लिए संस्कारों का योगदान महत्त्वपूर्ण है। जिस प्रकार बीज से फल बनता है, उसी प्रकार संस्कार से संस्कृति निर्मित होती है। भारतीय संस्कृति में मानवीय गुणों का जो अत्यधिक समादर है, उसका कारण ऋषियों द्वारा प्रवर्तित संस्कार विधान है। हमारे सोलह संस्कार मानव जीवन के भौतिक वातावरण

(शेष पृष्ठ ७ पर)

लाला सन्तराम बी० ए०—जात-पांत तोड़क

लेखक—बलभद्रकुमार हूजा,
५, अब्दुल फजल रोड, नई दिल्ली-११०००१

★

लाला सन्तराम बी. ए. का अभी हाल ही में १०१ वर्ष की उमर में देहान्त हुआ है। वे जात - पात तोडक के उपनाम से विख्यात थे।

गत वर्ष १४ फरवरी १९८७ को दिल्ली साहित्य अकादमी ने उनके शतायु होने के अवसर पर उनका सत्कार किया था। इससे पहले १९८६ में उन्हें गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय ने सघड विद्या सभा ट्रस्ट जयपुर द्वारा प्रतिष्ठित गोवर्धन सम्मान से समादृत किया था। लाला सन्तराम कलम के धनी थे। उन्होंने अपने जीवन काल में १०० से अधिक रचनाएं रचीं, उनके मुख्य विषय थे दलितोद्धार, अस्पृश्यता निवारण, जात - पात की दीवारों को तोडना, विवाहित सुख, सन्ततिनिरोध, ब्रह्मचर्य - पालन, शिष्टाचार इत्यादि।

लाला सन्तराम की मान्यता थी कि मनुष्य समाज एक मशीन के सदृश है, माता पिता, भाई बहिन, पति पत्नी, पडोसी पडोसी और मित्र सुहृद् आदि सब इस मशीन के पुरजे हैं, लोहे की मशीन की भांति इस सामाजिक मशीन के पुरजों को भी रगड से बचाने के लिए तेल देने की आवश्यकता होती है। वह तेल है सद्व्यवहार जिस व्यक्ति को सद्व्यवहार आता है। वह न केवल अपने जीवन को ही वरन् दूसरों के जीवन को भी सुखी तथा सुमधुर बना देता है। सद्व्यवहार रूपी तेल के अभाव में सारे समाज का जीवन कटु हो जाता है।

आज के संसार में सुखी होने के रहस्य के सम्बन्ध में वह लिखते हैं कि एक भूल जो सामान्यतः की जाती है वह यह है कि सुख किसी वस्तु को प्राप्त करने और अपने पास रखने में और दूसरों से सेवा कराने में है। परन्तु बात ऐसी नहीं है। असली सुख दूसरों को कुछ देने और दूसरों की सेवा करने में है, सब से सुखी श्रेष्ठजन हैं जिनके जीवन दूसरे लोगों के हितों में बीतते हैं।

चिन्ता से कैसे बचा जाय, इस प्रसंग में उन्होंने लिखा :

कदाचित् हम में से प्रत्येक की सब से बड़ी मूर्खता अपने कष्टों को अपनी छाती से चिपका लेना है। बहुधा हमारी बुरी से बुरी चिन्ताओं में से हमारा मार्ग निर्विघ्न बनाया जा सकता है। यदि हम किसी विश्वस्त मित्र का पथ-प्रदर्शन प्राप्त कर लें। परन्तु मानवी परिणामदर्शिता की भी एक सीमा है। बीरेन्द्र रसेल ने एक बार ठीक ही कहा था कि बडे अनिष्टों को सहन करने की यथेष्ट रीति बडी सांत्वना ढूढना है। इस खोज की चाबी ईश्वर प्रार्थना है। "प्रभु मुझे इस कष्ट सहने की शक्ति दीजिए।" और प्रभु से प्रार्थना करते हुए हमारा व्यवहार ऐसा होना चाहिए मानों हमें ज्ञात है कि भगवान हमारी प्रार्थना स्वीकार कर रहे हैं।

अन्तिम बात यह है कि हम जितनी अधिक दूसरों की चिन्ता करेंगे उतनी ही कम हमें अपनी चिन्ता करनी पडेगी।

आगे चल कर वह कहते हैं।

"यदि आप अपने को दुःखी हुए, हताश या पराभूत अनुभव करते हैं, तो कोई ऐसी सेवा ढूंढिये जो आप किसी दूसरे के लिए मुफ्त कर सकते हैं, उसे कर दीजिए। आप अपना विषाद तथा नैराश्य बहुत शीघ्र भूल जायेंगे। हम में से अधिकांश लोग अपने—आप में अपनी निजी समस्याओं में तथा कठिनाइयों पीडाओं और कष्टों में बहुत अधिक आनन्दित रहते हैं। सेवा आत्म-सन्तोष का सब से बडा प्रतिकार है।"

मित्र बनाने के गुर क्या हैं, इस विषय में उनका कहना था कि .

मित्र ढूंढने का यत्न करने के बजाय आप अच्छा बनना अपना लक्ष्य बनाइये, लेने के स्थान पर देने का भाव विकसित कीजिए।

दूसरों को अपने विषय में बातें करने के लिए उत्साहित कीजिए। उनके दृष्टिकोण को समझिये। एक सहानुभूतिपूर्ण श्रोता बनने की कला में निपुण बनिये।

ऐसे महान् विचारक स्वस्थ, सन्त, जागरूक, जिज्ञासु स्वभाव धन्य, लाला सन्तराम का जन्म होशियार पुर के बस्सी ग्राम में १८८६ में हुआ था। उनकी प्रारम्भिक शिक्षा पडोस में सरदार बहादुर अमीचन्द हाई स्कूल बजवाडा में हुई थी। उसके बाद उन्होंने १९०९ में गवर्नमेंट कालेज लाहौर से बी०ए० पास किया। अपने युवा काल में ही स्वामी दयानन्द और श्रद्धानन्द के विचारों से प्रभावित होकर, उन्होंने देश और राष्ट्र कोई कुरीतियों को अपनी कलम द्वारा दूर करने का संकल्प लिया जात-प्रथा को वे देश का सबसे बडा वैरी समझते थे। वे यह सहन नहीं कर सकते थे कि जात पांत के आधार पर किसी भी नागरिक का तिरस्कार किया जाए। इस कार्यक्रम को आगे बढाने के लिए उन्होंने १९२२ में लाहौर में जात-पांत तोडक मण्डल की स्थापना की। वे इस के मन्त्री बने और पंजाब क्रांतिकारी भाई परमानन्द उसके अध्यक्ष बने। स्वामी दयानन्द के अनन्य भक्त स्वामी श्रद्धानन्द अछूतोद्धार के कार्यक्रम में अग्रणी थे। इसी प्रकार गांधी जी ने भी स्वामी श्रद्धानन्द की हत्या के बाद हरिजनोद्धार के कार्यक्रम को स्वराज्य आन्दोलन का प्रमुख अंग बनाया और १९३२ में उन्होंने मेकडोनल्ड एवार्ड के विरुद्ध आमरण अनशन भी किया और इस तरह देश और जाति को, एक अन्य विभाजन से, अपनी जान की बाजी लगाकर बचाया।

लाला सन्तराम कहा करते थे कि देश के विभाजन के लिए न तो अंग्रेज जिम्मेदार है और न जिन्ना। देश का विभाजन हिन्दुओं की जात पांत प्रथा से हुआ। आज देश में जितने मुसलमान विद्यमान हैं और भारत के विभाजन से पहले जितने संयुक्त भारत में रहते थे उनमें से अधिकतर हिन्दुओं की ऊंच नीच की प्रथा से दुःखी होकर मुसलमान बने थे। तलवार के डर से अथवा अन्य प्रलोभनों से इतने मुसलमान नहीं बने। जितने कि अस्पृश्यता और छुआछूत के सन्ताप से बचने के लिए बने। लाला सन्तराम जात-पांत को एक राष्ट्रीय व्याधि की संज्ञा देते थे। इसीलिए हमारे संविधान के निर्माताओं ने भी जात-पांत का खण्डन करने के लिए संविधान में विशेष आग्रह किया, लेकिन आज चालीस साल के बाद भी जातपात की बीमारी निर्मूल नहीं हुई। द्वेष और राजनीतिज्ञता के साथ जात-पात इतनी लिप्त हो गयी है कि समझ नहीं आता कि इससे कब और कैसे उद्धार होगा।

यह स्मरणीय है कि केवल जलूस बाजी से जात-पांत टूटने वाली नहीं है। जहां तक कानूनी स्थिति है, जात-पांत का आसरा लेकर किसी को ऊंचा किसी को नीचा समझना कानूनन नाजायज है लेकिन फिर भी यह कुरीति समाज में विद्यमान है। इस को दूर करने के लिए व्यापक स्त्री शिक्षा की सब से अधिक आवश्यकता है। स्वामी अग्निवेश को यह तो ज्ञात है ही कि उनके पूज्य गुरु स्वामी दयानन्द न केवल जात-पांत के विरोधी थे बल्कि मूर्तिपूजा के भी कट्टर विरोधी थे। स्वामी अग्निवेश ने हरिजनों के साथ आत्मीयता दर्शाते हुए उनको मन्दिर ले जाने के लिए तो कार्यक्रम बनाया लेकिन इस से भी ज्यादा ही अच्छा यह होता कि वे उनको आर्यसमाज में प्रवेश करने की प्रेरणा देते जिस से कि वे निर्गुण भगवान की उपासना करें, साथ में मूर्तिपूजा के चंगुल से भी मुक्त हों।

इसी कारण ही डा० भीमराव अम्बेडकर ने १९५६ में यह घोषणा की थी कि वे अपने अनुयायियों के साथ पौराणिक धर्म त्याग देंगे। उस समय ईसाइयों, सिखों, मुसलमानों ने उनको अपने अपने मतों की विशेषताएं बतलाईं और कहा कि वे उनके मत की शरण में आवें। मुझे ज्ञात नहीं कि आर्यसमाज ने भी उस समय ऐसा कोई कदम उठाया हो। लेकिन यह सर्वविदित है कि डा० अम्बेडकर अपने अनुयायियों के साथ उस समय बौद्ध मत में प्रविष्ट हुए।

इस सम्बन्ध में पुरी के शंकराचार्य निरंजन देव ने भी बयान दिए हैं वह अत्यन्त स्पष्ट विरोधी रूढ़िवादी और दकियानूसी हैं। स्पष्ट है कि देश से जात-पांत की व्याधि को निर्मूल करने के लिए अभी बहुत संघर्ष और रचनात्मक कार्यक्रमों की आवश्यकता है।

मेरी मान्यता है कि आज बौद्ध

(शेष पृष्ठ ९ पर)

विवेकानन्द का हिन्दुत्व ईसा और ईसाइयत का पोषक है

लेखक—स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती

महर्षि दयानन्द ने अवतारवाद और पैगम्बरवाद दोनों का खण्डन किया। वैदिक आस्था के अनुसार हमारे बड़े से बड़े ऋषि भी मनुष्य हैं, और मानवता का पोषक हैं। चाहे वे ऋषि गौतम, कपिल कणाद हों या अग्नि, वायु, आदित्य या अंगिरा। मनुष्य का सीधा सम्बन्ध परमात्मा से है। मनुष्य और परमात्मा के बीच में कोई बिचौलिया नहीं हो सकता। न राम, न कृष्ण, न बुद्ध, न चैतन्य महाप्रभु, न राम कृष्ण परमहंस और न हजरत मुहम्मद, महात्मा ईसा, मूसा या कोई अन्य। पैगम्बरवाद और अवतारवाद ने मानव जाति को विघटित करके सम्प्रदायवाद की नींव डाली है।

हमारे आधुनिक युग के चिन्तकों में स्वामी विवेकानन्द का स्थान ऊँचा है। उन्होंने अमरीका जाकर भारत की मान-मर्यादा की रक्षा में अच्छा योग दिया। वे रामकृष्ण परमहंस के अद्वितीय शिष्य थे। हमें यहाँ उनकी फिलासफी की आलोचना नहीं करनी है। सब की अपनी-अपनी विचारधारा होती है। अमरीका और यूरोप से लौटकर आये तो रूढ़िवादी हिन्दुओं ने उनकी आलोचना भी की थी।

इधर कुछ दिनों से भारत में एक नयी लहर का आगमन हुआ। यह लहर महाराष्ट्र के प्रतिभाशाली व्यक्ति श्री हेडगेवार जी की कल्पना का परिणाम था — जो मुसलमान, ईसाई तथा पारसी नहीं हैं, उन भारतीयों का "हिन्दू" नाम पर संगठन। राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ की स्थापना हुई, राष्ट्रीय जागरण की दृष्टि से। गुरु गोलवलकरजी के समय में संघ का रूप निखरा और संघ गौरवान्वित हुआ। यह सांस्कृतिक संस्था धीरे-धीरे रूढ़िवादियों की पोषक बन गयी और राष्ट्रीय प्रवृत्तियों की विरोधी। यह [illegible]तिक दल बन गयी, उदार [illegible] दलों और राष्ट्रीय प्रवृत्तियों के विरोध में। देश के विभाजन की विपदा ने इस आंदोलन को प्रश्रय दिया, जो स्वाभाविक था हिन्दू-मुस्लिम वैमनस्य की पराकाष्ठा का परिचय १९४६ के आसपास हुआ। ऐसी परिस्थिति में गांधीवादी कांग्रेस बदनाम हुई और साम्प्रदायिक प्रवृत्तियों को पोषण मिला। आर्यसमाज जैसा संगठन भी संयम खो बैठा, और इसके अधिकांश सदस्य (जिसमें दिल्ली, हरियाणा, पंजाब के विशेष रूप से थे) स्वभावतः हिन्दूवादी आर्यसमाजी बन गये। जनसंघ की स्थापना हुई जिसकी पृष्ठभूमि में राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ था। फिर विश्व हिन्दू परिषद् बनी। पिछले दिनों का यह छोटा सा इतिवृत्त है।

हिन्दूवादियों ने विवेकानन्द का नाम खोज निकाला और उन्हें अपनी गतिविधियों में ऊंचा स्थान दिया। पिछले १००० वर्ष से भारतीयों के बीच मुसलमानों का कार्य आरम्भ हुआ। सन् ९०० से लेकर १९०० के बीच में दस करोड़ भारतीय मुसलमान बन गये अर्थात् सौ वर्ष में एक करोड़ व्यक्ति मुसलमान बनता गया अर्थात् प्रतिवर्ष १ लाख भारतीय मुसलमान बन रहा था। इस धर्म परिवर्तन का आभास न हिन्दू राजा को हुआ, न हिन्दू नेता को। भारतीय जनता ने अपने समाज के संगठन की समस्या पर इस दृष्टि से कभी भी सूक्ष्मता से विचार नहीं किया था। पण्डितों, विद्वानों, मन्दिरों, पुजारियों के सामने यह समस्या राष्ट्रीय दृष्टि से प्रस्तुत नहीं हुई।

स्मरण रखिए कि पिछले १००० वर्ष के इतिहास में स्वामी दयानन्द अकेले ऐसे व्यक्ति हुए हैं, जिन्होंने इस पर विचार किया। उन्होंने दो समाधान बताये — भारतीय समाज सामाजिक कुरीतियों से आक्रांत हो गया है — समाज का फिर से परिशोध आवश्यक है। भारतीय संप्रदायों के कतिपय कलंक हैं जिन्हें दूर न किया गया, तो यहाँ की जनता मुसलमान तो बनती ही रही है, आगे तेजी से ईसाई भी बनेगी। हमारे समाज के कतिपय भयंकर कलंक ये थे —

१. मूर्तिपूजा और अवतारवाद

२. जन्मना जाति व पातवाद

३. अस्पृश्यता या छुआछूतवाद

४. परम स्वार्थी और भोगी महन्तों, पुजारियों, शंकराचार्य की गद्दियों का जनता पर आतंक

५. जन्मपत्रियों, फलित ज्योतिष अन्धविश्वासों, तीर्थों और पाखण्डों का भोली भाली ही नहीं शिक्षित जनता पर भी कु-प्रभाव। राष्ट्र से इन कलंकों को दूर न किया जायेगा तो विदेशी संप्रदायों का आतंक इस देश पर रहेगा ही।

दूसरा समाधान स्वामी दयानन्द ने यह प्रस्तुत किया कि जो भारतीय जनता मुसलमान या ईसाई हो गई है उसे शुद्ध करके वैदिक आर्य बनाओ। न केवल इतना ही बल्कि मानवता की दृष्टि से अन्य देशों के ईसाई, मुसलमान, बौद्ध जैनी सब से कहो कि असत्य और अज्ञान का परित्याग करके विद्या और सत्य को अपनाओ और विश्वबन्धुत्व की स्थापना करो।

विवेकानन्द के अनेक विचार उदात्त और प्रशस्त थे पर वह अवतारवाद से अपने को मुक्त न कर पाये और भारतीयों को मुसलमान या ईसाई बनने से कभी न रोक पाये यह स्मरण रखिए कि यदि महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज न होता, तो विषुवत् रेखा के दक्षिण भाग के द्वीप समूह में कोई भी भारतीय-ईसाई होने से बचा न रहता। विवेकानन्द के सामने भारतीयों का ईसाई हो जाना कोई समस्या न थी।

आज देश के अनेक प्रांचलों में विवेकानन्द के प्रिय देश अमरीका के षड्यन्त्र से भारतीयों को तेजी से ईसाई बनाया जा रहा है। स्मरण रखिये कि विवेकानन्द के विचार भारतीयों को ईसाई होने से रोक नहीं सकते। प्रत्युत मैं तो यह कहूँगा कि यदि विवेकानन्द की विचारधारा रही तो भारतीयों का ईसाई हो जाना बुरा नहीं माना जावेगा, श्रेयस्कर ही होगा। विवेकानन्द के निम्न शब्दों पर विचार करें।

दशम खंड पृष्ठ ४०-४१)

मनुष्य और ईसा में अन्तर —

अभिव्यक्त प्राणियों में बहुत अन्तर होता है। अभिव्यक्त प्राणी के रूप में तुम ईसा कभी नहीं हो सकते।

"ब्रह्म ईश्वर और मनुष्य दोनों का उपादान है। ईश्वर अनन्त स्वामी है और हम शाश्वत सेवक हैं। स्वामी विवेकानन्द के विचार से ईसा ईश्वर है और हम और आप साधारण व्यक्ति हैं, हम सेवक और स्वामी हैं।

इसके आगे स्वामी विवेकानन्द इस विषय को और स्पष्ट करते हैं—

"यह मेरी अपनी कल्पना है, कि वही बुद्ध ईसा हुए। बुद्ध ने भविष्यवाणी की थी, 'मैं पाँच सौ वर्षों में पुनः आऊँगा।"

□

(पृष्ठ ५ का शेष)

दैवी सम्पदा का दावेदार

को विकसित तो करते ही हैं, किन्तु साथ ही मानसिक और आध्यात्मिक संस्कार की ओर भी बढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं। जब मनुष्य संशय के बादलों से घिर जाता है, अथवा कुविचारों का धुंआ मनुष्य के वैचारिक चक्षु युगल को घेरने लगता है अथवा अनैतिकता का अन्धकार जब जीवन के पटल पर छाने लगता है, उस समय मानव का शुभ संस्कार उसे बचाता है। यदि हम लोग गौरवशाली जीवन का मालिक बनना चाहते हैं, यदि हम लोग दैवी सम्पदाओं का दावेदार बनना चाहते हैं, यदि हम लोग जीवन को फूलों से भी अधिक सुगन्धित बनाना चाहते हैं, यदि हम लोग अपने जीवन को चन्द्रमा से भी अधिक धवलिम बनाना चाहते हैं, यदि हम लोग जीवन को पूजा से भी अधिक पावन बनाना चाहते हैं, तो हमें संस्कारों के सौरभ से जीवन को मंडित करना पड़ेगा। भारतीय संस्कार जीवन के ज्योतिर्मय क्षणों के परिचायक हैं, मानवीय भावनाओं के विधायक हैं, सद्गुणों के प्रदायक हैं; जीवन के यदि ज्योतिर्मय क्षणों को देखना चाहते हैं, तो आपको संस्कार के उपवन में प्रवेश करना ही पड़ेगा। आप एक बार संस्कारों के सुमनों के पास जाकर के देखिये तो सही, आपका प्रत्येक रोम दिव्य संगीत का अनुभव करेगा।

●

हरिजन मन्दिर प्रवेश की घोषणाएँ असत्य निकलीं

दलितों के लिए स्वामी आनन्दबोध की अपील

नाथद्वारा मन्दिर में हरिजनों के प्रवेश के सम्बन्ध में की गई सभी घोषणाएं लगभग असत्य ही निकलीं। जयपुर में शंकराचार्य ने घोषणा की थी कि—'मन्दिरों में हरिजनों का प्रवेश वर्जित है"। इसके विरोध मे स्वामी अग्निवेश ने जब आन्दोलन किया तब शंकराचार्य ने पुन वक्तव्य दिया कि—'मैंने तो यह कहा था कि—"ईश्वर को हरिजन सब से अधिक प्यारे हैं, वे तो स्वयं चलकर हरिजनों के पास आवेंगे, अत हरिजनों को मन्दिर मे जाने की आवश्यकता नहीं है।" "उनके इस वक्तव्य से जहां पहली घोषणा असत्य निकली, वहा दूसरी घोषणा भी भ्रामक एवम् असत्य है, क्योंकि जब परमात्मा सर्वत्र व्यापक है तो वह चलकर कहा से आयेगा ?

२ राजस्थान के मुख्य मन्त्री तथा मन्दिर के प्रबन्धक की ओर से की गई यह घोषणा कि हरिजनों के मन्दिर प्रवेश पर कोई रोक नहीं, असत्य ही निकली क्योंकि उन्हें मन्दिर में जाने से पूर्व ही स्वामी अग्निवेश के साथ गिरफ्तार कर लिया।

३ पदयात्रा मे हजारों व्यक्तियों, भूतपूर्व न्यायाधीश गुमानमल लोढा, कृष्ण अय्यर, प्रकाश अम्बेदकर, आर्य नेता स्वामी आनन्दबोध तथा शत प्रतिशत आर्यसमाजों के सम्मिलित होने की घोषणा भी असत्य निकली क्योंकि उक्त महानुभावों में से एक भी नहीं आया, राजस्थान की लगभग ३०० आर्यसमाजों में से १० तथा जिस आर्यसमाज उदयपुर से पद यात्रा निकली, वह आर्यसमाज भी सम्मिलित नहीं हुई। समाचारों के अनुसार १२ या ६ हरिजन तथा अन्य ७० पदयात्री ही थे।

४ इस प्रकार जहां उक्त घोषणाए असत्य निकलीं वहां विरोधियों ने इतना भयंकर रूप धारण किया कि तीन दिन तक नाथद्वारा नगर बन्द रहा, हजारों व्यक्तियों ने पदयात्रियों को मार्ग में रोका, काले झंडे दिखाये, पत्थर वर्षा की, स्वामी अग्निवेश के पुतले जलाये। पदयात्रियों पर घातक प्रहार करने के लिए घर घर में पत्थर व तेजाब की बोतलें एकत्रित की गईं। धारा १४८ तथा अस्पृश्यता निवारक कानून का उल्लंघन करने वालों के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही करने की सरकार की घोषणाएं भी असत्य निकलीं। इन उपद्रवकारी, पोंगा पंथियों के सम्मुख सरकार उसी प्रकार अकर्मण्य निर्जीव सिद्ध हुई जिस प्रकार दिवराला ग्राम में नारी दहन कांड में हुई थी।

५ यह स्पष्ट करना भी आवश्यक है कि मूर्तिपूजा एवम् उसके दर्शनार्थ आर्यसमाजी होने के नाते स्वामी अग्निवेश की पदयात्रा न तो वैदिक सिद्धान्त व आर्यसमाज की मान्यता के अनुसार ही थी और न इसके लिए आर्यसमाज के प्रांतीय व सार्वदेशिक संगठन का ही कोई निश्चय था। आर्यसमाज ने संगठित रूप से निर्णय लेकर जब भी आन्दोलन किया, उसे सफलता मिली है। हैदराबाद के सत्याग्रह में १६ हजार व्यक्ति जेलों में गए तथा २४ व्यक्तियों का बलिदान देकर उसने सरकार पर अभूतपूर्व विजय प्राप्त की थी। दलित (हरिजन) उद्धार के लिए भी कांग्रेस से पहले आर्यसमाज ने महान आन्दोलन व बलिदान किए हैं। आर्यसमाज के सभासद, अधिकारी व पुरोहित तक दलित वर्ग के हैं, जो आर्यसमाज मन्दिर में ईश्वर प्रार्थना हवन तथा प्रीतिभोज में सम्मिलित होते हैं। आगामी श्रीकृष्ण जन्माष्टमी को देशभर की आर्यसमाजों से इसी प्रकार के विशाल आयोजन करने के लिए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध की ओर से अपील की गई है।

६ हरिजनों के लिए समान अधिकार, समान व्यवहार व उनमें उत्तम संस्कार डाल कर श्रेष्ठ (आर्य) बनाने का यही उपाय है, न कि वोटों के लिए एक पृथक वर्ग (हरिजन) बनाये रखना, मन्दिर प्रवेश उनकी मुक्ति का मार्ग नहीं, जहां उनका प्रवेश रोक कर अपमानित किया जाता है। जहां परमात्मा की बनाई, परमात्मा से व्याप्त सच्ची मानव मूर्ति के प्रति घृणा हो, वह स्थान घृणा का है, प्रवेश योग्य नहीं। वह तो महन्त व पुजारियों की अपार आय, व्यवसाय व भोग विलास के स्थान हैं, जिन पर अरबों रुपया व्यय हो रहा है, जो कि देश, धर्म की उन्नति, धर्म-प्रचार, आर्य जाति की रक्षा, बेरोजगारी व गरीबी पर व्यय होना चाहिए था।

७ वह परमात्मा सर्वत्र सब प्राणियों में है, उसका स्मरण व उपासना सर्वत्र एकान्त में की जा सकती है, भीड़ भरे मन्दिरों में नहीं, जैसा कि परमात्मा ने वेदमंत्र द्वारा बताया कि—'ईशावास्यमिदं सर्वम् यत् " तथा गीता मे श्रीकृष्ण ने कहा है कि—'ईश्वर सर्वभूतानां हृद्देशे अर्जुन तिष्ठति··" और कवि ने कहा कि—"ज्यों तिल माहि तेल है ज्यों चकमक में आग। तेरा प्रभु तो में बसा कहां पहा तू भाग।।" उपरोक्त प्रभु की उपासना व धर्मत्याग कर यह कहना विवेकसंगत नहीं कि हम ईसाई व मुसलमान बन जावेंगे, क्या वहां मूर्ति के दर्शन मिल सकेंगे ?

८ मन्दिर प्रवेश के लिए पुनः परस्पर संघर्ष का मार्ग न अपनाकर छूआछूत के विचार प्रचार व सद्भावना पूर्वक मिटाना उचित रहेगा। अन्यथा देश व जाति में विघटन की आशंका है। वैसे ही देश कई समस्याओं, विपदाओं, अराजकता, भ्रष्टाचार, सामाजिक कुरीतियां, अंधविश्वासों तथा अश्लील साहित्य, सिनेमा, टी, वी आदि के द्वारा अश्लील, हिंसक व चरित्र नाशक प्रचार से ग्रस्त है, इनके द्वारा वैदिक धर्म, भारतीय सभ्यता, संस्कृति पर भी भीषण प्रहार हो रहा है, उन्हें दृढ़तापूर्वक रोकना सब का तथा विशेषतः आर्यसमाज का परम कर्त्तव्य है, क्योंकि महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना इसी कार्य के लिये की थी।

भगवती प्रसाद सिद्धान्त भास्कर
प्रधान नगर आर्यसमाज
१४३०, प शिवदीन मार्ग,
कृष्णपोल जयपुर

बहुत बड़ा संघर्ष हमें करना है

प्रगतिवाद के इस युग में छूटे सिद्धान्त पुराने,
परिवर्तन की आई वेला फूटे नये तराने।
दयानन्द ने आगे बढ़कर, जीवन ज्योति जगाई,
हुई खण्डहर सभी रूढ़ियां श्रद्धा अन्ध भगाई,
किन्तु आज भी धर्मध्वजी कुछ उनसे सटे हुए हैं,
कितना ही समझाओ उनको पर वह डटे हुए हैं।
थोथे आदर्शों को ले विधान कुछ रचे हुए हैं,
कोई माने या ना माने बन्धन कसे हुए हैं।
होना मनी धर्म है, ऐसा वेद शास्त्र बतलाते,
पर शास्त्रार्थ करने को वह समक्ष हैं कभी न आते,
मन्दिर में हरिजन का आना है निषिद्ध, बतलाते,
पर इसका वैदिक प्रमाण किंचित् भी नहीं दिखाते,
अरे निरंजन तीर्थ जो झूठा ज्ञान जताते,
बने शंकराचार्य दम्भ कर हैं पाखण्ड रचाते,
पर है आर्यसमाज अभी जीवित भांडा फूटेगा,
सत्य, धर्म पर परदा मत डालो जन-जन रूठेगा।
यदि साहस है ताल ठोंक शास्त्रार्थ करने को आओ,
बन्द करो प्रलाप अन्यथा, करनी पर पछताओ।
जन-जन की सेवा करते जो हरिजन हैं कहलाते,
हरिजन नहीं आर्य हैं वह, तुम हो अनार्य बतलाते,
क्या उनकी सच्ची सेवा का पुरस्कार यह देते,
इस विध क्या स्वधर्म देश की नैय्या को ही खेते।
जागो आर्यो! पुनः आज जनमत जागृत करना है,
ऋषि के सच्चे सिद्धान्तों से अन्धकार हरना है।
अन्ध रूढ़ियों, विश्वासों को आगे बढ़ सकना है,
"शान्त" अथक श्रम से बहुत बड़ा संघर्ष हमें करना है।

लेखक—पक्षम हुक्म चान्द वेदालंकार एम० ए०
ग्रीनपार्क, नई दिल्ली-१६

आर्यसमाज द्वारा हैजा पीड़ितों की सेवा

नई दिल्ली, ३ अगस्त १९८८

दु:खी लोगों की सेवा ही सच्ची पूजा है। भगवान् कृष्ण ने गीता में कहा है कि न मुझे स्वर्ग चाहिए और न ही कोई अन्य समृद्धि। मैं तो दु:खी सन्तप्त और पीड़ित प्राणियों के सुख की कामना करता हूँ। इसी पवित्र भावना को लेकर आर्यसमाज न्यू मोती नगर ने रोटरी क्लब के सौजन्य से ३१ जुलाई १९८८ को हैजे के मुफ्त टीके लगाने का कार्य प्रारम्भ किया है। इसके लिए आर्यसमाज के अधिकारी बधाई के पात्र हैं। ये शब्द दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने हैजा पीड़ित शिविर में अपने आगमन पर व्यक्त किए।





आर्यसमाज न्यू मोती नगर ने ३ अगस्त १९८८ तक लगभग २४८५ लोगों को हैजे के मुफ्त टीके लगाकर सराहनीय कार्य किया है। यह कार्य अभी आगे भी चलता रहेगा। मोती नगर क्षेत्र पश्चिमी दिल्ली के अन्तर्गत आता है। और यहां पर झुग्गी झोपड़ी कालोनियों तथा पुनर्वास बस्तियां हैं। नजफगढ़ औद्योगिक क्षेत्र की फैक्टरियों में काम करने वाले गरीब और मजदूर यहीं पर रहते हैं। इस कार्य में श्री तीर्थ राम टण्डन और डा० सत्येन्द्र निझावन तथा उनके सहयोगी ३ डाक्टर और नर्स प्रतिदिन ६ घण्टे लगे हुए हैं।

रामसरनदास आर्य
मन्त्री

(पृष्ठ ६ का शेष)

जात पात तोड़क

लाला सन्तराम जैसे अग्रदूतों की उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि आज से १०० वर्ष पहले थी। आज राष्ट्रवादी तबके के सामने उतनी चुनौतियां नहीं हैं। देश को तोड़ने वाली शक्तियां बहुत प्रबल होती जा रही हैं। यह ठीक है प्रबुद्ध जन विशेष और सरकार इस खतरे से पूरी तरह वाकिफ हैं और अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार विभिन्न कार्यक्रमों को चला रहे हैं। लेकिन यह सब मिलाकर अभी तक एक आन्दोलन का रूप ग्रहण नहीं कर पाए। क्या ही अच्छा हो यदि आकाशवाणी और दूरदर्शन लाला सन्तराम की रची हुई पुस्तकों के आधार पर यदाकदा श्रावकों और दर्शकों के आगे कार्यक्रम प्रस्तुत करें। स्कूलों और कालेजों को भी प्रेरित किया जाये कि वे जातपात तोड़क संबंधी विषय लेकर नाटक, वाद विवाद, कवि सम्मेलन और निबन्ध प्रतियोगिताएं इत्यादि रखें। उन में से जो श्रेष्ठ रचनाएं उभर कर आयें उनको आकाशवाणी और दूरदर्शन से प्रसारित किया जाए।

पिछले दिनों दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद नीति की समाप्ति के लिए अफ्रीका फण्ड की स्थापना की गयी थी। क्यों नहीं हम इसी तरह जात पात तोड़क फण्ड स्थापित करें ताकि इस तरह जो धन प्राप्त हो उनको जातपात तोड़क कार्यक्रमों को आगे बढ़ाने में सदुपयोग किया जाए। इस के साथ ही मेरा यह सुझाव है कि भारत सरकार लाला सन्तराम के नाम का एक साठ पैसे का टिकट जारी करे। यह लाला सन्तराम के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि तो होगी ही साथ में इसे जातपात तोड़क और देश जोड़क का बल मिलेगा।

तोड़ो तोड़ो यह दीवारें।
जोड़ो जोड़ो दिल की दीवारें॥

यह था लाला सन्तराम का अमर सन्देश।

आर्यसन्देश पढ़ें, पढ़ायें

आर्य जगत् के समाचारों व उपयोगी लेखों, अध्यात्म विवेचनों से युक्त, सामयिक चेतावनियों से जूझने की योजना देने वाले साप्ताहिक पत्र आर्यसन्देश के ग्राहक बनिए और बनाइए। साथ ही वर्ष में चार अन्य विशेषांक प्राप्त कीजिए। वार्षिक शुल्क केवल २५ रुपये। आजीवन २५० रुपये मात्र।

स्वामी आनन्द बोध सरस्वती द्वारा
मिलाप सन्देश का स्वागत
आर्य जनता से सहयोग की अपील

दिल्ली १० अगस्त। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष पूज्य स्वामी आनन्दबोध सरस्वती ने हमारे संवाददाता से एक भेंट वार्ता में बताया कि वर्तमान काल में देश, धर्म और समाज की रक्षा के लिए समाचार पत्रों की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। स्वामी जी ने कहा महर्षि धर्म पं० लेखराम ने मृत्यु से पूर्व वसीयत में कहा था कि आर्यसमाज में लेख का कार्य जारी रहना चाहिए।

देश की युवा शक्ति को आज सिनेमा-दूर दर्शन आदि से जिस प्रकार के भौतिकवाद का प्रचार कर दिग्भ्रान्त किया जा रहा है, ऐसी विषम् अवस्था में राजधानी दिल्ली से एक ऐसे धार्मिक तथा सामाजिक विचारों से ओत-प्रोत दैनिक पत्र का अभाव खटक रहा था।

देशभक्ति एवं वैदिक धर्म की पुनीत विचारधारा से ओत-प्रोत दैनिक- मिलाप संदेश ने उस कमी को पूरा कर दिया है। हमें यह देखकर बड़ी प्रसन्नता हो रही है कि मिलाप संदेश के प्रथम पृष्ठ पर गायत्री मंत्र तथा संपादकीय लेख के ऊपर विश्वानि देव ·· ··· मंत्र की भूमिका से पूज्य लाला खुशहालचन्द (महात्मा आनन्द स्वामी जी) के पौत्र चिरंजीव नवीन सूरी ने अपने देश प्रान्त पूर्वक तथा आर्यसमाज के प्रखर नेता के चरण चिह्नों पर चलकर मिलाप संदेश को महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज तथा उनके गुरु स्वामी योगेश्वरानन्द जी की विचारधारा को प्रति सप्ताह लेखनी बद्ध करके अपने पारिवारिक कर्त्तव्य को पूरा किया है।

हम प्रिय नवीन सूरी को प्यार भरा आशीर्वाद देकर आर्य जनता से अनुरोध करते हैं कि मिलाप संदेश को अधिक अपना कर पं० लेखराम की वसीयत को पूरा करें।

A Comprehensive History of Aryasamaj
(In Two Volumes)

सात भागों में आर्यसमाज का विस्तृत इतिहास सम्पादित व प्रकाशित करने का जो संकल्प हमने किया था वह अब पूरा हो गया है। 'इतिहास' के सातों भाग प्रकाशित हो गये हैं। अब हमारी योजना है कि अंग्रेजी भाषा में आर्यसमाज के इतिहास को प्रकाशित किया जाए, ताकि हिन्दी न जानने वाले देश-विदेश के लोग भी इस महान् जन-आन्दोलन के सम्बन्ध में समुचित जानकारी प्राप्त कर सकें। जिसने भारत में नवयुग का सूत्रपात किया और जो समस्त संसार को उन्नति तथा शान्ति का सच्चा मार्ग प्रदर्शित कर सकता है। 'आर्यसमाज का इतिहास' के अंग्रेजी संस्करण के लिए हम आर्य नर नारियों के सुझाव आमन्त्रित करते हैं, ताकि इस 'इतिहास' को हम पाठकों के लिए अधिक उपयोगी बना सकें।

हिन्दी में आर्यसमाज का जो इतिहास हमने प्रकाशित किया है, उसमें बड़े आकार के ५००० पृष्ठ हैं, आर्ट पेपर पर छपे चित्रों की पृष्ठसंख्या इसके अतिरिक्त है। सातों भागों के पूरे सेट का मूल्य केवल पांच सौ रुपये है जो लागत से भी कम है। शुरू में प्रकाशित दो भाग अब समाप्ति पर हैं, अतः बाद में पूरे सेट को प्राप्त करना कठिन हो जाएगा। सानुरोध निवेदन है, कि इस 'इतिहास' के सातों भागों के पूरे सेट का आर्डर शीघ्र भिजवाने की कृपा करें। सभी आर्यसमाजों तथा शिक्षण-संस्थाओं के पुस्तकालयों में यह 'इतिहास' अवश्य होना ही चाहिये। यह आर्यसमाज के विश्व-कोश के समान है।

सत्यकेतु विद्यालंकार
आर्य स्वाध्याय केन्द्र,
ए-१।३२ सफदरजंग एन्क्लेव,
नई दिल्ली-११००२९

(पृष्ठ ३ का शेष)

योग-मीमांसा

योग का मूल—वेद

युञ्जान. प्रथम मनस्तत्त्वाय सविता धिय.।
अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य पृथिव्या अध्याभरत् ॥
(यजु० ११।)

इसकी व्याख्या में महर्षि दयानन्द लिखते हैं— '(युञ्जान.) योग करने वाले मनुष्य (तत्त्वाय) तत्त्व अर्थात् ब्रह्मज्ञान के लिए, (प्रथम मन:) जब अपने मन को पहले परमेश्वर में युक्त करते हैं, तब (सविता) परमेश्वर उनकी (धियम्) बुद्धि को अपनी कृपा से अपने में युक्त कर लेता है (अग्नेर्ज्यो) फिर वे परमेश्वर के प्रकाश को निश्चय करके (अध्याभरत्) यथा वत् धारण करते हैं (पृथिव्या०) पृथिवी के बीच में योगी का यही प्रसिद्ध लक्षण है।"
(ऋ० भा० भू० उपासना विषय)

वेदाहमेत पुरुष महान्तमादित्यवर्णं तमस परस्तात्। तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्य: पन्था विद्यतेऽयनाय ॥
(यजु० ३१।१८)

इस मन्त्र का भाव यह है कि—एक विद्वान् परमात्मा को जानकर दूसरों को यह बतलावे कि मैं उस महान् गुणों से युक्त पुरुष परमात्मा को जानता हूँ, जो ज्ञान से परिपूर्ण और अज्ञान से पृथक् है। उस परमात्मा को जानकर ही मनुष्य जन्म-मरण के दुःख से छूट सकता है, और दूसरा मार्ग मुक्ति का नहीं है। इससे यह सिद्ध होता है कि योग का आदि मूल वेद है। इसी वैदिक योग को ही श्री पतञ्जलि जी ने योगदर्शन में दर्शाया है।

योग का फल—

तदा द्रष्टु स्वरूपेऽवस्थानम्।
योग० १।३।

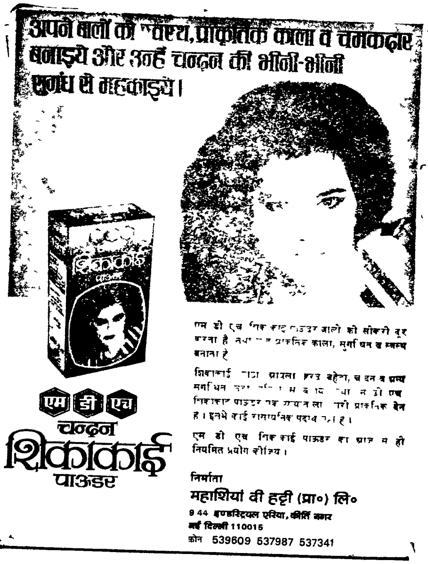
जब सब वृत्तियों का निरोध हो जाता है तब सर्वद्रष्टा ईश्वर के स्वरूप में जीव की स्थिति हो जाती है अर्थात् अपने और परमात्मा के स्वरूप को ठीक प्रकार से जानकर प्राकृतिक पदार्थों की उपासना को छोड़कर परमात्मा के स्वरूप में मग्न हो जाता है और उससे ज्ञान तथा आनन्द की प्राप्ति होती है। इस अवस्था में जीव मोक्ष जैसा अनुभव करता है। यह चित्त की निरुद्धावस्था या असम्प्रज्ञात समाधि है। इस अवस्था में ईश्वर का साक्षात्कार होता है। जिस प्रकार से अग्नि, वायु आदि पदार्थों का प्रत्यक्ष उनके विशेष गुणों से होता है; वैसे ही ईश्वर का प्रत्यक्ष भी ईश्वर के ज्ञान, आनन्दादि गुणों से होता है।

व्यासभाष्य में इस सूत्र का यह अर्थ लिखा है—"स्वरूपप्रतिष्ठा तदानीं चितिशक्तिर्यथा कैवल्ये।" वृत्तिनिरोध होने पर जीव की अपने स्वरूप में स्थिति हो जाती है, जैसे मोक्ष में। ऋषि दयानन्द ने इस सूत्र का अर्थ किया है—"(तदा०) जब चित्त एकाग्र और निरुद्ध होता है तब सब के द्रष्टा ईश्वर के स्वरूप में जीवात्मा की स्थिति होती है।" (सत्यार्थप्रकाश ९ समुल्लास)। यहां पर एक बात ध्यान देने की है कि व्यासभाष्य में और ऋषि दयानन्द के अर्थ में विरोध प्रतीत होता है। वास्तव में कोई विरोध नहीं है। व्यासभाष्य में लिखा है—'यथा कैवल्ये" इसका गूढ़ अभिप्राय है कि जैसी मोक्ष में परमात्मा के स्वरूप में स्थिति होती है वैसी इस शरीर के रहते हुए समाधि-दशा में जीव की स्थिति होती है। ऋषि दयानन्द ने भी यही कहा है कि ईश्वर के स्वरूप में जीव की स्थिति होती है। कैवल्य के दृष्टान्त से यह सिद्ध है कि ऋषि-व्यास भी सर्वद्रष्टा ईश्वर के स्वरूप में जीव की स्थिति को ही बतला रहे हैं। अतः विरोध मानना अनुचित है।

वृत्तिसारूप्यमितरत्र। योग० १।४।

समाधि से भिन्न अवस्था में जीव स्वयं को वृत्तियों के समान देखता है। वृत्ति, इन्द्रिय, शरीर को और अपने आपको एक समझता है। यह एक अज्ञान की अवस्था है। समाधि में वास्तविक ज्ञान के होने से आनन्द को भोगता और समाधि के न रहने पर नाना प्रकार के दुःखों को भोगता है। इसी का नाम बन्धन है। ऋ० भू० के उपासना विषय में ऋषि दयानन्द ने इस सूत्र पर लिखा है। ऋषि का उद्देश्य केवल इतना है कि समाधि अवस्था से भिन्न अवस्था में योगी की स्थिति किस प्रकार की होती है, और लौकिक मनुष्य के जीवन से योगी के जीवन में क्या विशेषता है। विचार करना है कि उन्होंने इस सूत्र का पूरार्थ नहीं किया है। अतः इसमें कोई दोष नहीं आता।


लाखों लोगों की पसंद
एम डी एच दंत मंजन
23 जडी बूटियों से निर्मित
आयुर्वेदिक औषधि
आपके परिवार
के लिये पूर्ण दंत सुरक्षा
दांतों का दर्द, मुह की दुर्गन्ध
मसूड़ो की सूजन, ठंडा गर्म
पानी लगना, मुह में छाले होना तथा
दांतो की अन्य बीमारियो का घरेलू इलाज
एम डी एच
दंत मंजन
लौंग युक्त
प्रतिदिन प्रयोग करें
अपने निकटतम
दुकानदार से खरीद
सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9/44, इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-110015 फोन 537987, 537341


अपने बालों को स्वस्थ, प्राकृतिक काला व चमकदार बनाइये और उन्हें चन्दन की भीनी-भीनी सुगंध से महकाइये।
एम डी एच
चन्दन
शिकाकाई
पाउडर
निर्माता
महाशियां दी हट्टी (प्रा०) लि०
9 44 इण्डस्ट्रियल एरिया, कीर्ति नगर
नई दिल्ली 110015
फोन 539609 537987 537341


आन्तरिक वस्त्रों में एक मात्र विश्वसनीय नाम...
Groversons
अजमल खान रोड
करोल बाग,
नई दिल्ली-110005
फोन 582036 5715878
Paris Beauty PANTY
पैरिस ब्यूटी ब्रा
ग्रोवर सन्स
Shalini BRA
शालिनी ब्रा
Sparsh BRA
स्पर्श ब्रा
alignpoint

R N No. 32387/77 Post in N.D P.S.O. on 18, 19-8-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७११ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस न० यू ११९
१२ साप्ताहिक 'आर्यसन्देश' २१ अगस्त, १९८८

श्रावणी—रक्षा बन्धन

रचयिता—स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती

राखी का त्यौहार है, भाई बहिन का प्यार है।
चारों तरफ हरियाली छाई आ रही अजब बहार है॥
रंग-बिरंगी राखी सुन्दर शोभा लगे कलाई में।
रक्षा बन्धन १०ग सलोना हुअ बहिन व भाई में॥
बहे प्रम की धार है, खुशियो की बौछार है।
सखी सहेली झूल झूला गाती गीत मल्हार हैं॥१॥
दादुर, मोर, पपीहा कोयल मीठा गान सुनाते हैं।
लख घन की घनघोर सभी पक्षीगण मन हरषाते हैं॥
मन में खुशी अपार है, करें परस्पर प्यार है।
नन्ही, नन्ही बूंद पड़, और ठण्डी चले बयार है॥२॥
यह ब्राह्मण त्यौहार श्रावणी सब के मन को भाया है।
वेद प्रवचन भजन कीतन, जग में नाद बजाया है॥
तबला और सितार है वीणा और गिटार है।
यज्ञादि शुभ श्रेष्ठ कर्म ये वेदों के अनुसार हैं॥३॥
वेद ईश्वरीय ज्ञान वेद का पढ़ना और पढ़ाना है।
वदिक विचार व्यवहार नेक चले, घृणा द्वष मिटाना है॥
शुद्ध पवित्र विचार है, ऋषि की जय जयकार है।
कहे स्वरूपानन्द, वेद ही विद्या का भण्डार है॥४॥
राखी का त्यौहार है, भाई बहिन का प्यार है।
चारों तरफ हरियाली छाई आ रही अजब बहार है॥

आर्यसमाज दीवान हाल में वेद प्रचार सभा

आर्यसमाज दीवान हाल में २७ अगस्त से वेद प्रचार सप्ताह प्रारम्भ हो रहा है जिसमें रक्षा-बन्धन श्रावणी उपाकर्म हैदराबाद सत्याग्रह बलिदान दिवस, वेद प्रचार सप्ताह तथा समता दिवस, श्री कृष्ण जन्माष्टमी मनाने का आयोजन किया गया है। कृष्ण जन्माष्टमी के अवसर पर श्री योगेन्द्र मकवाना इस्पात खान मन्त्री के पधारने की सम्भावना है।

६ अगस्त से २ सितम्बर तक आर्य जगत के मूर्धन्य विद्वान श्री प० शिव कुमार शास्त्री द्वारा वेद कथा होगी।

□

(पृष्ठ १ का शेष)

खाक आतंकवादियों को मदद और "सेवा" नामी उन्होंने राष्ट्र के नाम सन्देश प्रसारित करते हुए २६ बार सेवा शब्द का प्रयोग किया।

बुलेट प्रूफ शीशा हटाया—समारोह कड़ी सुरक्षा व्यवस्था में सम्पन्न हुआ। लाल किले की चारों किलोमीटर की परिधि में सभी महत्त्वपूर्ण स्थानों पर कमाण्डो तैनात किए गए थे।

आवश्यक सूचना

वैदिक यति मण्डल के समस्त आदरणीय सदस्यों की सेवा में सूचनार्थ निवेदन है कि वैदिक यति मण्डल का सम्मेलन दिनांक १७, १८ सितम्बर १९८८ को वैदिक भक्ति साधन आश्रम आर्यनगर रोहतक में करने का निर्णय हुआ है। प्रथम बैठक १७ सितम्बर को प्रातः दस बजे होगी। अतः निश्चित समय पर पधारने की कृपा कीजिये।

सेवा में—

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कृष्णनगर दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७११

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष ११ अंक ४५ | रविवार २८ अगस्त १९८८ | सृष्टि सवत् १९७२९४९०८८ | श्रावण २०४५ | दयानन्दाब्द—१६१
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक १५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश मे ५० डालर ३० पौंड

भूकम्प-भयंकर त्रासदी

२१ अगस्त, को सुबह आए भूकम्प से बिहार, और नेपाल में जो विनाश हुआ वह वास्तव में दिल को दहला देने वाला है। झटके तो बगला देश, पश्चिम बगाल, मेघालय, सिक्किम, उत्तर प्रदेश और दिल्ली, मध्य प्रदेश तक महसूस किए गए किन्तु इन राज्यों में जान माल की इतनी क्षति विशेष नहीं हुई। बिहार और नेपाल में महिलाओं और बच्चों सहित सैकड़ों व्यक्ति नींद में सोते रह गए। प्राण बचाने के प्रयास में जो खिड़कियों और छतों से कूदे वे बुरी तरह घायल हो गए। २५ हजार से अधिक मकानों का क्षति ग्रस्त होना इस बात का सूचक है कि इस प्राकृतिक प्रकोप ने बिहार में प्रलय जैसा वज्रपात किया है। एक अनुमान के अनुसार १०० लोग मरे और हजारों घायल हो गए। रोते बिलखते लोगों को देखकर कठोर से कठोर दिल वाला भी पसीजे बिना नहीं रहेगा। इस त्रासदी ने १९३४ के सर्वाधिक विनाशकारी भूकम्प की याद दिला दी है।

वैज्ञानिकों के अनुसार हमारे देश का सम्पूर्ण उत्तरपूर्वी क्षेत्र भूकम्प की दृष्टि से सवेदनशील है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी ने यद्यपि चमत्कारी प्रगति की है किन्तु अफसोस है कि अभी तक ऐसी विधि नहीं खोजी जा सकी है जिससे भूकम्प की पूर्व ही सूचना मिल जाए। बताया जाता है कि विश्व की कुल आबादी के ५० प्रतिशत लोग भूकम्प की दृष्टि से खतरे वाले इलाके में रहते हैं। यह दरअसल दुनिया के वैज्ञानिकों के लिए एक बड़ी चुनौती है उन्हें कोई ऐसा उपाय खोजना होगा जिससे इस प्रकार की विनाशकारी विपदाओ की पुनरावृत्ति नही हो।

मानवता के नाते सभी सामाजिक सस्थाओं को इस त्रासदी से पीड़ितों की सहायतार्थ कार्य करना चाहिए। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने कहा—सभी आर्यसमाजें 'भूकम्प पीड़ित राहत कोष' में अधिक से अधिक धनराशि अन्य प्रकार की सहायता सभा कार्यालय के पते पर भिजवाएं। उन्होंने निवेदन किया कि सभी आर्य सस्थाओ के अधिकारी बिहार आर्य प्रतिनिधि सभा के साथ मिलकर पीड़ितो की सहायता करने के लिए आगे आ ए।

नेपाल में आर्य महासम्मेलन

नेपाल राष्ट्र में आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार करने के अपराध में आचार्य शुक्रराज शास्त्री को फांसी दी जाने की घटना आप सबको विदित ही होगी। आज से चार वर्ष पहले नेपाल के प्रमुख औद्योगिक नगर विराट् नगर में प्रथम आर्य महासम्मलन पर पूज्य स्वामी आनन्द बोध सरस्वती द्वारा दिए गए भाषण से नेपाल सरकार ने प्रभावित होकर वैधानिक मान्यता का रजिस्ट्रेशन प्रमाण पत्र तक नेपाल आर्यसमाज को प्रदान किया। अब यहां आर्यसमाज का प्रचार-प्रसार स्वतन्त्र रूप से कर सकते हैं। नेपाल की राजधानी काठमाण्डो में सार्वदेशिक सभा द्वारा लिये गए किराए के मकान में केन्द्रीय कार्यालय का विधिवत् सचालन हो रहा है। हाल ही में सार्वदेशिक सभा की अन्तरग सभा ने निश्चय किया कि सभी प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाएं प्रान्तीय आर्य महासम्मेलन का आयोजन करें। अत नेपाल आर्यसमाज की कार्यकारिणी समिति ने निश्चय किया है कि आगामी जनवरी १९८९ को अमर शहीद शुक्रराज शास्त्री के बलिदान दिवस के उपलक्ष्य में नेपाल की राजधानी काठमाण्डो मे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का आर्य महासम्मलन का आयोजन किया जाय। हम लोगो ने कई बार काठमाण्डो में आर्य महासम्मेलन करने की आवाज उठाई परन्तु अर्थाभाव एव सस्था रजिस्टर्ड न होने के कारण आयोजन न कर सके परन्तु अब सस्था रजिस्टर्ड है और आर्य जनों के सहयोग से अवश्य ही हम सफल होंगे। अत काठमाण्डो में सम्मलन के आयोजन पर आप सभी अपनी अपनी प्रतिक्रिया एव आपकी समाज या सभा उक्त सम्मेलन में किस प्रकार का सहयोग कर सकेंगी, शीघ्र ही पत्र द्वारा सूचित करें।

(प्रकाश चन्द्र सुवेदी)
महा-सचिव
नेपाल आर्यसमाज
केन्द्रीय कार्यालय
वेद विद्याश्रम (गोशाला)
बन काली, काठमाण्डो।

आर्यों का महान् पर्व

वेद का पढना पढाना, सुनना और सुनाना सभी आर्यों का परम धर्म है। इस नाते वेद श्रवण और वेद मनन के लिए प्रति वर्ष आर्यों का महान पर्व श्रावणी उपाकर्म वेद प्रचार सप्ताह के रूप मे मनाया जाता है। ससार मे सब से पावनतम ग्रन्थ और ईश्वरीय ज्ञान केवल वेद हैं। वेद ही धर्म है और धर्म ही वेद है।

वेद के ज्ञान के कुछ अन्य प्रकार से व्याख्या रूप मे अन्य ग्रन्थो और मतो मे आ जाने से हम मूल धारा वेद के प्रति न जाकर उन साधारण ग्रन्थो और मतों की प्रशसा करने लगते हैं जबकि मूल सिद्धान्त और ज्ञान धारा जो अन्य मतो मे अच्छी लगती है वे सब वेद से ली गयी हैं। वेद ही आदि स्रोत है। आज गीता, उपनिषद् को अध्यात्म शास्त्र मान लिया गया जबकि वे मात्र वेद के कुछ मन्त्रों का ही भाष्य मात्र हैं। अन्य जो प्रक्षेप उनमें हैं वे ही सदा आलोचना और विवेचना का कारण रहे हैं। साधारण गीता जैसे ग्रन्थ ससार में २५ लाख तक बाटे गये जबकि ज्ञान का अगाध सागर वेद का प्रचार प्रसार इतना नही हो सका

श्रावणी पर्व के समय आर्यो का कर्त्तव्य है स्थान स्थान पर वेद प्रचार करायें। मन्दिरो से बाहर निकल कर घर घर मोहल्ले और सार्वजनिक स्थानो पर वेद प्रचार कराये। इसके लिए योग्यतम विद्वानो को बुलाये। यह आवश्यक नही कि हम केवल इसी सप्ताह मे ही आयोजन कर इससे आगे पीछे सुविधानुसार कर सकते हैं परन्तु वेद प्रचार अवश्य होना चाहिए। इस सम्बन्ध मे दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा से उचित सहयोग लिया जा सकता है। श्रावणी उपाकर्म हैदराबाद सत्याग्रह बलिदान दिवस तथा कृष्ण जन्माष्टमी पर्व तो नियत दिवस में मनाने ही चाहिए।

सम्पादक पं० सुधाकर 'सुधांशु' एम०
प्रधान सम्पादक-सूर्यदेव

जीवन का स्वर्णकाल

लेखक—आचार्य, धर्मपाल शास्त्री, विद्याभास्कर
गुरुकुल ततारपुर (उ० प्र०)

★

भारत के समाजशास्त्रियों ने जीवन को चार भागों में बाटा था। १-ब्रह्मचर्य काल २-गृहस्थ काल ३-वानप्रस्थ काल ३ सन्यास काल। ब्रह्मचर्य काल मानव जीवन का सर्वोत्तम काल है। ब्रह्मचारी शब्द का अर्थ है—ब्रह्म (ईश्वर) चारी (चलने वाला) ब्रह्म की ओर चलने वाला। ब्रह्म के शास्त्रों में अनेक अर्थ हैं। यथा वेद, ज्ञान, ईश्वर, शक्ति आदि। ब्रह्मचारी ज्ञानार्जन के लिए अपनी समस्त शक्ति को लगा देता है, इसीलिए वह ब्रह्म पथ का पथिक बन जाता है। ब्रह्मचर्य काल में छात्र अपनी शक्तियों को गुरु के सहयोग से पहचानता था और फिर उस शक्ति को जीवन निर्माण में लगा देता था।

ब्रह्मचर्य काल में छात्र अपने जीवन में एक क्षमता उत्पन्न करता है, जिसके कारण उसका जीवन आनन्द के पथ पर धीरे-धीरे बढने लगता है। वह इस काल में विद्याध्ययन तो करता ही था, किन्तु साथ जीवन के उन रहस्यों को भी पकडने का प्रयास करता था, जिसके कारण जीवन में एक ऐसा संगीत पैदा हो जाता था, जो जीवन भर अपनी मधुर आवाज से जीवन के प्रत्येक कोने को भर देता था।

यह जीवन एक गीत बन जाता है। ब्रह्मचर्य की साधना के लिए मन का सयम आवश्यक है। यदि मन पर सयम नहीं है, तो जीवन बुराइयों के मार्ग पर धीरे धीरे बढने लगता है। मन मनुष्य के जीवन को सुखमय भी बना देता है और क्षण में ही दुखों से भर देता है। "वस्तुत जिस व्यक्ति ने अपने मन को वश में कर लिया, उसके काबू में सारा संसार हो जाता है। जो व्यक्ति अपने मन को काबू में नहीं कर पाता है वह ससार के बन्धन में बध जाता है।

मनो यस्य वशे तस्य
भवेत्सर्वं जगद्वशे।
मनसस्तु वशे योऽस्ति
स सर्वं जगतो वशे॥

यदि यह मन आपके वश में हो गया, तो आपको यह विश्वास कर लेना चाहिए कि जीवन में कल्याण का द्वार खुल गया है। वस्तुत. आप एक दिन दिव्य शक्ति के स्वामी बनकर रहेंगे। आपके प्रत्येक शब्द में आत्मा का बल उद्दाम सागर की तरह लहरेगा। भविष्य का प्रत्येक मानवीय सुख आपके जीवन के आस पास विकसित होकर रहेगा, किन्तु मन की साधना के लिए जीवन में एक ऐसा दीपक जलाना पडता है जिस दीपक के आलोक में विनय का रत्न चमचमाता नजर आए। इस विनय के सहयोग से मन नियत्रण के पथ पर चल पडता है, इस नियन्त्रित मन के सहयोग से ब्रह्मचर्य की साधना सिद्ध होती है।

भगवान बुद्ध ने अपने प्रिय शिष्य आनन्द को सम्बोधित करते हुए कहा था— "आनन्द ! ब्रह्मचर्य के परिपालन में सुख ही सुख है।" सन्त प्रवर आनन्द भिक्षु से एक बार एक युवक ने पूछा 'महात्मन् ! मैं समाज सेवा करना चाहता हू, मेरे लिए कोई ऐसा निर्देश दें, ताकि सेवा के मार्ग से कभी विचलित न होऊँ।"

'युवक ! समाज सेवा का मार्ग कठिन है। पहले तुम अपने जीवन की सेवा करो और यदि तुम अपने जीवन की सेवा में सफल हो जाओगे, मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हू कि तुम समाज सेवा कर सकोगे।" सन्त प्रवर आनन्द भिक्षु ने गम्भीरता पूर्वक कहा।

युवक ने विनम्र होकर प्रार्थना की "स्वामिन् ! मैं आपके कथन का आशय नहीं समझ पाया। यदि आप अनुग्रह पूर्वक मुझे यह बतायें कि मैं किस प्रकार अपनी सेवा करूँ, तो मैं आपके एहसान को कभी न भूलूंगा।"

सन्त प्रवर ने कहा "युवक ! जीवन के निर्माण के लिए कुछ अपने जीवन को ब्रह्मचर्य की भट्टी में तपाओ, यदि अपने इस प्रयास में सफल हो जाते हो, तो तुम्हारे अन्दर अनुशासन, सेवा, विनम्रता के मानवीय गुण प्रस्फुटित होने लगेंगे। जब तुम्हारा जीवन, ब्रह्मचर्य की आभा से प्रदीप्त हो उठेगा, तब तुम्हारे सकेतों पर समाज चलने के लिए तैयार हो जायेगा। ब्रह्मचर्य का पालन व्यक्ति के उत्थान में सहायक तो है ही, किन्तु साथ ही राष्ट्र के सकल्प को भी प्राणवान बनाता है।"

प्रत्येक व्यक्ति यह सुनता है कि ब्रह्मचर्य मे महान् शक्ति है। इसमें दो मत नहीं हैं कि ब्रह्मचर्य शक्ति का आगार है। ब्रह्मचर्य के पालन से आदमी की शारीरिक शक्ति बढती है। यह कोई बहुत महत्त्वपूर्ण बात नहीं है। यदि मनुष्य धान खरीदता है तो धान के साथ चावल तो आ ही जाता है और साथ ही धान का छिलका भी आ जाता है। जब मनुष्य धान खरीदता है तब उसका उद्देश्य चावल प्राप्त करना होता है धान का छिलका खरीदना नहीं। जिस प्रकार धान के साथ छिलका अपने आप ही आ जाता है, इसी प्रकार ब्रह्मचर्य के पालन से शारीरिक शक्ति स्वत. ही प्राप्त हो जाती है। ब्रह्मचर्य के पालन से हमारी मानसिक क्षमता बढ़ती है और साथ ही आत्मिक बल भी। इस आत्मबल की प्राप्ति ही ब्रह्मचर्य को सब से बडी उपलब्धि है। इस आत्मबल के आधार पर मनुष्य समाज को एक नया रूप देता है। समाज की रचना में आत्मबली महापुरुषो का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। महर्षि दयानन्द के जीवन में इसी ब्रह्मचर्य का तेजो दीप्त परिणाम देखने को मिलता है। ऋषि ने भारत को जो एक नयी दिशा दी, उसमें ऋषि दयानन्द के ब्रह्मचर्य का महान योगदान था। ऋषि के जीवन में ब्रह्मचर्य की क्षमताओं का अनेक रूप में दर्शन होता है। उन सब क्षमताओं के पीछे ब्रह्मचर्य प्रकाश में विकसित आत्मबल था, इसमें सन्देह नहीं है। यह आत्मबल मनुष्य को विषम से विषय पथ पर आगे बढ़ने के लिए प्रेरणा देता है। यह चरित्र का एक ऐसा आलोकमय पक्ष है जिसके अभाव में मनुष्य अपने जीवन को सतुलित नहीं कर पाता है। असतुलित व असयमित जीवन मनुष्य को पतन के किस कगार पर ले जाकर छोडेगा, यह कुछ भी नहीं कहा जा सकता। इस असंतुलन को रोकने के लिए

(शेष पृष्ठ ८ पर)

जीवन खत्म हुआ तो,
जीने का ढग आया।
जब शमा बुझ गयी तो,
महफिल में रग आया॥
(मस्तानसिंह)

जीवन में प्रतिपल कुछ न कुछ आश्चर्य कारक घटनाए घटती हैं। वस्तुतः मनुष्य का यह जीवन स्वय ही विस्मय कारक है। आदमी जब जीवन के विषय में सोचता है, तब तक आदमी की जिन्दगी में जवानी का दौर समाप्त हो जाता है। और जब जीवन में वासनाओं के तूफान के कारण होश नही रहता, केवल जोश ही जोश रहता है, उस समय आदमी होश के दामन को पकडना बिलकुल पसन्द नहीं करता है। जीवन में होश भी हो और साथ ही साथ जोश भी हो, यह बहुत कम देखने को मिलता है। मनुष्य के जीवन में जवानी एक ऐसा ही समय है, जो रत्नों से भी भरा हुआ है और जहर से भी भरा हुआ है। जवानी में शक्ति का सागर उमडता है और इस सागर के उमडते ही आदमी की विवेक शक्ति नष्ट हो जाती है। जवानी के सदर्भ में निम्न कथनो को हमें एक बार अवश्य पढ लेना चाहिए।

रहती है कब
बहारे जवानी तमाम उम्र।
मानिन्द बूये गुल,
इधर आई उधर गई॥
सदा न फूले तोरई,
सदा न सावन होय।
सदा न यौवन थिर रहे,
सदा न जीवे कोय।

यह सत्य है और अति प्रसिद्ध है कि जैसे बुढापे में बुद्धिमत्ता होती है वैसे ही जवानी मे अविवेकता होता है। It is a truth but too well Known that rashness attends youth as pruden e does old age (सिसरो)

वस्तुत जिस प्रकार धनुष से छूटा हुआ तीर वापिस नहीं आता है, उसी प्रकार गया हुआ यौवन लौटकर नहीं आता है। आदमी अपने को सभाल लेता है तो उसका जीवन खुशियों का खजाना बन जाता है। वक्त और सागर की लहरें किसी की प्रतीक्षा नहीं करती हैं।

वक्त को जिसने नहीं समझा
उसे मिटना पडा है।
बच गया तलवार से तो
फूल से कटना पडा है॥
(नीरज)

आर्यसमाज का हिन्दी नाटक साहित्य

लेखक—डा० भवानीलाल भारतीय, चण्डीगढ़

पूर्ववर्ती सौन्दर्यशास्त्रियों ने काव्य को श्रव्य एवं दृश्य भेद से दो प्रकार का माना है। दृश्य काव्य के अन्तर्गत नाटकों का समावेश किया जाता है जिसे "रूपक" का एक भेद कहा गया है। भरतमुनि के नाट्यशास्त्र में दृश्यकाव्यों का सर्वांगीण विवेचन मिलता है। अवस्था की अनुकृति को ही नाट्य कहा है। नाटक की एक परिभाषा धनंजय ने अपने दशरूपक नामक ग्रन्थ में दी है। आचार्य भरत के अनुसार नाटकों के मूल तत्त्व भी वेदों से ही प्रादुर्भूत हुए हैं। ऋग्वेद से पाठ्य तत्त्व ग्रहण किया गया। यजुर्वेद से संवाद तत्त्व लिया गया। सामवेद से गीति तत्त्व तथा अथर्ववेद से काव्य का आत्मा रूप रस तत्त्व का ग्रहण किया गया। यद्यपि चारों वेदों को किसी काल में वर्णत्रय के लिए ही निर्धारित कर दिया गया था किन्तु नाट्य रूपी पंचम वेद सार्ववर्णिक होने से सर्वलोक ग्राह्य है।

आर्यसमाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द संस्कृत साहित्य के उत्तरकालीन नाटकों में पाई जाने वाली शृंगारी प्रवृत्तियों की अधिकता से परिचित थे। फलतः उन्होंने नाटकों के सम्बन्ध में अभिरुचि ही प्रदर्शित की है। उन्होंने अध्ययन अध्यापन की जो व्यवस्था की है, उसमें केवल शास्त्रीय ग्रन्थों को ही स्थान मिला है। काव्य, नाटकादि को पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाय या नहीं, इस सम्बन्ध में उनकी कोई स्पष्ट धारणा दिखाई नहीं पड़ती। यह अवश्य है कि अपने युग में प्रचलित रास लीला और राम लीला के रूप में उन्होंने नाट्य कला के जिस बड़े और फूहड़ रूप को देखा था, उससे उनके मन में यह दृढ़ धारणा बन गई थी कि नाटकों को अधिक प्रोत्साहन नहीं मिलना चाहिए। उनकी यह धारणा वास्तविकता पर ही आधारित थी, क्योंकि रामलीलाओं में राम, सीता आदि का अभिनय करने वाले लोग इन महापुरुषों को उपहासास्पद एवं विदूषात्मक शैली में ही प्रस्तुत करते थे। जिस समय फर्रुखाबाद आर्यसमाज के मुखपत्र भारत सुदशा प्रवर्तक में "नाटक" छपने लगे तो स्वामी दयानन्द को विशेष निर्देश देकर इनका प्रकाशन रुकवाना पड़ा।

तथापि नाटकों की सामाजिक उपयोगिता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। आर्यसमाज के परवर्ती लेखकों ने सदा सदा नाटक शैली को अपना कर अपने विचारों एवं सिद्धान्तों का प्रचार किया है। यहाँ हम उन नाटककारों एवं उनकी कृतियों पर विचार करते हैं। जो आर्यसमाज की विचारधारा से सम्बद्ध रहे हैं।

★

श्री जगन्नाथ भारतीय के तीन नाटक —

श्री भारतीय दिल्ली के निवासी थे। उनकी कई रचनायें हमें मिलती हैं परन्तु स्वयम् उनके बारे में अधिक जानकारी प्राप्त नहीं होती। विगत शताब्दी के अन्तिम दो दशकों में उनके लगभग २५ लघु ग्रन्थ छपे जिनमें कुछ नाटकों की श्रेणी में आते हैं। इनका विवरण इस प्रकार है —

वर्ण व्यवस्था नाटक—

१९४४ वि. में दिल्ली से प्रकाशित इस नाटक में वर्ण व्यवस्था सिद्धान्त को नाटक शैली में प्रस्तुत किया गया है। लेखक का प्रयोजन वर्ण-व्यवस्था को गुण एवं कर्म पर आधारित सिद्ध करना है। दो अंकों में समाप्त इस नाटक के पात्रों में भोजनदास ब्राह्मण तथा पुरुषोत्तम शास्त्री क्रमशः वर्णव्यवस्था को जन्माधारित तथा कर्माधारित मानते हैं। लेखक ने अन्ततः गुणकर्माधारित वर्ण व्यवस्था को ही उचित सिद्ध किया है।

समुद्र यात्रा नाटक — इसका प्रकाशनकाल १८८७ ई० है। पाँच लघु अंकों में समाप्त होने वाला यह नाटक सूत्रधार एवं नांदी के प्रास्ताविक संवाद से प्रारम्भ होता है। अवशिष्ट अंकों में एक कल्पित कथानक के आधार पर समुद्र यात्रा के औचित्य को स्थापित किया गया है।

नवीन वेदान्त नाटक—संस्कृत नाटक प्रबोध चन्द्रोदय(कृष्ण मिश्र) की शैली पर लिखा गया यह नाटक नवीन मायावाद की निस्सारता को प्रतिपादित करता है। इसका प्रकाशन रामचन्द्र वंश मेरठ द्वारा १९४७ वि० में हुआ था।

आर्यसमाजी नाटक लेखकों में पं० रुद्रदत्त शर्मा का नाम उल्लेखनीय है। शर्मा जी को हिन्दी पत्रकारिता का यदि पितामह भी कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी। उन्होंने अनेक पत्रों का सम्पादन किया तथा अनेक उच्च कोटि के ग्रन्थ लिखे। एक लेखक होने के साथ वे उत्कृष्ट कोटि के उपदेशक तथा शास्त्रीय भी थे। पं० रुद्रदत्त शर्मा लिखित आर्यमत मार्तण्ड नाटक प्रबोध चन्द्रोदय की शैली पर ही लिखा गया है। यह नाटक दो भागों में समाप्त हुआ है। द्वितीय भाग को आर्यमित्र साप्ताहिक के ग्राहकों को उपहाररूप में वितरित करने के लिए आर्य भास्कर प्रेस आगरा ने प्रकाशित किया था। प्रथम भाग के लेखक पं० रुद्रदत्त शर्मा थे, जब कि दूसरा भाग उनके अनुज पं० दामोदर प्रसाद ने लिखा। नाटक के ब्याज से लेखक ने आर्यावर्तीय मत मतान्तरों का परिचय तो दिया ही है, इन मतों की साम्प्रदायिक एवं घृणित प्रवृत्तियों का भी पर्दाफाश किया है। संस्कृत नाटकों में पाये जाने वाले सभी तत्त्व यहाँ विद्यमान हैं। नान्दी प्रस्तावना, भरत विदूषक आदि की योजना भी इस नाटक में नाट्य शास्त्र की प्रणाली से की गई है। इस नाटक के प्रथम भाग का प्रकाशन १८९५ ई० में आर्यावर्त प्रेस दानापुर से हुआ था।

आर्यसमाज सामाजिक कुप्रथाओं का सदा से ही प्रखर आलोचक रहा है। सामाजिक कुरीतियों की आलोचना की दृष्टि से भी अनेक नाटक लिखे गये। जसवंतसिंह चौधरी ने वेश्या नाटक लिख कर समाज के कोढ़ के रूप में व्याप्त वेश्यावृत्ति पर तीव्र प्रहार किया है। यह नाटक गुलजार मन मेरठ (स्वामी प्रेस) से मुद्रित होकर १९५० वि० में छपा था। स्वामी प्रेस मेरठ के अधिष्ठाता पं० छुट्टनलाल स्वामी ने बाल विवाह नाटक लिखा जो १८९८ ई० में प्रकाशित हुआ। बाल विवाह की कुप्रथा पर ही एक अन्य नाटक धर्मप्रकाश पत्र (फर्रुखाबाद) के सम्पादक श्री देवीप्रसाद ने लिखा था। स्वामी दयानन्द के समकालीन तथा शिष्य लाला कालीचरण फर्रुखाबाद निवासी के कुमति नाटक का भी उल्लेख मिलता है। सामाजिक बुराइयों के निराकरण में अन्य अनेक लेखकों ने भी नाटकों की रचना की है। शाहपुरा राजस्थान निवासी पं० भूरालाल कथाव्यास ने दुर्व्यसन दमन नामक नाटक १९७३ वि० में लिखा। ग्रन्थारम्भ में लेखक ने नाटक रचना का प्रयोजन बताते हुए निम्न श्लोक लिखा है—

प्रारम्भे सुखयन्ति कुख
लिकराऽग्न्ते ददता मृतिम्।
कष्टदुर्व्यसनानि तानि
न तथा जानन्ति सर्वे जना ॥
तेषां दर्शयमत्र देश-
पतन प्रवृत्ति निर्देशयत्।
भूरालाल कृतो विधाय
जनता व्यास विदधीयताम् ॥

नाटककार ने दुर्व्यसनों को ही सामाजिक पतन का मूल कारण माना है। कविराज जयगोपाल कृत पश्चिमी प्रभाव (१९३० ई० में लाहौर से प्रकाशित) में पाश्चात्य सभ्यता के अन्धानुकरण की आलोचना की गई है। गोपेश्वर लिखित पशु बलिदान नाटक देवताओं की तुष्टि के लिए पशुओं की बलि चढ़ाने की आलोचना करता है। श्री विश्वम्भर सहाय प्रेमी का "सामाजिक क्रान्ति" प्रदर्शन शैली में लिखा गया है। किसी अज्ञात लेखक द्वारा लिखा गया वृद्ध विवाह नाटक इस सामाजिक बुराई से उत्पन्न हानियों का दिग्दर्शन कराता है।

यह हम स्पष्ट कर चुके हैं कि आर्यसमाज का सामाजिक आन्दोलन अपने प्रचार को अधिक प्रभावशाली तथा लोकव्यापी बनाने की दृष्टि से सदा से ही लोक कलाओं का उपयोग करता रहा है। हिन्दी के अतिरिक्त अन्य जनभाषाओं का भी यदाकदा आर्यसमाजी लेखकों द्वारा प्रयोग किया जाता रहा है। उदाहरणार्थ, अजमेर निवासी पं० जगन्नाथ उपाध्याय ने राजस्थानी (मारवाड़ी) भाषा में बूढ़ा बनड़े को ख्याल तथा नाटक नियत सुधार लिखा। राजस्थान में 'ख्याल' का प्रचलन नाटकों की एक रंगमंचीय शैली के रूप में रहा है। इसमें पात्रों के संवाद पद्यात्मक होते

(शेष पृष्ठ ७ पर)

श्रावणी-उपाकर्म (ऋषितर्पण) महापर्व

श्रावण मास का पौर्णमासी का दिन 'श्रावणी-उपाकर्म अथवा प्राचीन 'ऋषि-तर्पण' के नाम से प्रतिवर्ष परम्परागत पद्धति से समस्त भारत देश में बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता है। वर्तमान काल में इस पर्व का नाम 'रक्षाबन्धन' भी प्रसिद्ध हो गया है। किन्तु यह नाम बहुत ही परवर्त्ती है। रक्षाबन्धन की परम्परा मुस्लिम युग में प्रचलित हुई है। स्त्रियां अपनी रक्षा के लिए अपने भाइयों अथवा जिन वीर-पुरुषों के हाथो में रक्षा सूत्र बांधती थी, वे प्राणपण से अपनी बहनो की रक्षा करना अपना परम-धर्म मानते थे। भारत के इतिहास में ऐसी भी घटनाएँ घटी हैं कि यदि बहनों ने विधर्मियों को भी भाई मानकर रक्षा-सूत्र बांध दिया, या किसी के हाथ भिजवा दिया तो उन्होंने भी रक्षा-सूत्र की प्रतिष्ठा को गिरने नहीं दिया। राजस्थान के गौरव चित्तौड की महारानी कर्मवती ने गुजरात के बादशाह बहादुरशाह से अपनी रक्षा के लिए हुमायू के पास राखियां भेजी थीं। और वीर हुमायूं ने मुसलमान होते हुए भी तुरन्त चित्तौड पहुंचकर कर्मवती महारानी की रक्षा की थी। इतिहास की ऐसी घटनाओं के आश्रय से ही बहनें भाइयों के हाथों में राखी सूत्र बांधने लगी हैं, इसलिए यह पर्व भाई-बहनों के मधुर-सम्बन्धों का प्रतीक बन गया है—

परन्तु इस पर्व का प्राचीन नाम श्रावणी-उपाकर्म या ऋषितर्पण ही है, जिसके महत्त्व को तथा उसकी पद्धति को हम भूलते ही जा रहे हैं। सृष्टि के आदि में धर्मशास्त्र के प्रणेता महर्षि मनु इस पर्व के विषय में लिखते हैं—

श्रावण्यां प्रौष्ठपद्यां
वाप्युपाकृत्य यथाविधि।
युक्तश्छन्दांस्यधीयीत
मासान् विप्रोऽर्धपञ्चमान्॥
(मनु० ४।९५)

अर्थात् द्विजन्मा ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य लोग—श्रावण मास की अथवा भाद्रपद मास की पौर्णमासी को विधिपूर्वक वेदों का स्वाध्याय प्रारम्भ करके साढ़े चार मास तक वेदाध्ययन करें और पारस्कर गृह्यसूत्र में भी ऐसा विधान मिलता है—

अथातोऽध्यायोपाकर्म ओषधीनां
प्रादुर्भावे श्रवणेन।
श्रावण्यां पौर्णमास्यां
श्रावणस्य पञ्चमी हस्ते वा॥

अर्थात् श्रावण मास की पौर्णमासी से औषधियों की उत्पत्ति होने पर उपाकर्म — वेदों के स्वाध्याय कर्म का प्रारम्भ करना चाहिये। इसी पर्व को वेदों का स्वाध्याय करने के कारण 'ऋषितर्पण' के नाम से भी उल्लेख मिलता है। 'स्वाध्यायेनार्चयेद् ऋषीन्। (मनु०) अर्थात् वेदों के स्वाध्याय करने से ऋषियों की पूजा होती है। इसका अभिप्राय यह है कि 'साक्षात्कृत-धर्माण ऋषयः। (निरुक्त) धर्म के साक्षात् द्रष्टा तथा वेद मन्त्रों के गूढ ज्ञान को समझने वाले जिन ऋषियों ने वेद तक पहुंचने के लिए वेदांगों, उपाङ्गों-दर्शनविद्या के शास्त्रों उपवेदों एवं उपनिषदों का ज्ञान मानव को दिया है, उनको जानकर वेदमन्त्रों को समझना ही ऋषियों की पूजा है।

स्वाध्याय का महत्त्व—वैदिक पद्धति में स्वाध्याय का विशेष महत्त्व माना गया है। महर्षि मनु ने तो स्वाध्याय को दैनिक कर्त्तव्य बताते हुए यहां तक लिख दिया कि—

१. (क) स्वाध्याये नित्ययुक्तः
स्यात्॥ मनु० ३।७५।

(ख) वेदोपकरणे चैव
स्वाध्याये चैव नैत्यिके।
नानुरोधोऽस्त्यनध्याये
होममन्त्रेषु चैव हि॥
मनु० २।१०५।

चाहे किसी कर्म में अनध्याय-छुट्टी हो जावे, किन्तु स्वाध्याय में कभी भी छुट्टी नहीं करनी चाहिये। जो द्विज विधि पूर्वक प्रतिदिन वेदों का स्वाध्याय करता है, उसे क्या लाभ होता है? उसका वर्णन करते हुए मनु लिखते हैं —

यः स्वाध्यायमधीतेऽब्दं
विधिना नियतः शुचिः।
तस्य नित्यं क्षरत्येष
पयो दधि घृतं मधु॥
मनु० २।१०७।

स्वाध्यायशील व्यक्ति को वैदिक ज्ञान के द्वारा शुचि-पवित्रता प्राप्त होती है। संसार में मानव का सब से बड़ा शत्रु है—अविद्यान्धकार और अविद्या के दूर होने से ज्ञान ज्योति प्राप्त होकर सन्मार्ग का दर्शन होता है और सन्मार्ग के दर्शन से अविद्याजन्य दोषों से मानव की रक्षा ही परम पवित्रता है। इसलिए संस्कृत में कहा है—'नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते। 'अर्थात् ज्ञान के सदृश इस संसार में अन्य कोई साधन पवित्रता का नहीं है और सन्मार्ग व सुमति मिलने से सांसारिक भोग्य पदार्थों अर्थात् दूध, घी, मधु, आदि की भी न्यूनता नहीं रहती है। स्वाध्याय को प्रत्येक गृहस्थी के लिए आवश्यक ही नहीं बताया, प्रत्युत स्वाध्याय को परम तप मानते हुए मनु कहते हैं—

आ हैव स नखाग्रेभ्यः
परमं तप्यते तपः।
यः स्रग्व्यपि द्विजोऽधीते
स्वाध्यायं शक्तितोऽन्वहम्॥
मनु० २।१६७।

जो गृहस्थ द्विज प्रतिदिन वेदों का स्वाध्याय करता है, वह नाखूनों के अग्रभाग तक शरीर से परम तप करता है। और सब से अधिक स्वाध्याय का महत्त्व यह है कि मानव जीवन का चरम लक्ष्य है मोक्ष प्राप्ति। दु:खों के बन्धनों से छूट कर ईश्वरीय आनन्द में विचरण करना। स्वाध्याय के बल से ज्ञान स्रोत ऐसा प्रवाहित होता है कि निर्भ्रान्त सत्य ज्ञान के प्रकाश में अविद्या, भ्रम तथा मिथ्याज्ञान नष्ट हो जाते हैं। और तदनन्तर यह रथी मोक्ष—

२. (क) स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैः
ब्राह्मीयं क्रियते तनुः॥
मनु० २।२८।

(ख) वेदों का स्वाध्याय परम-पवित्रता का आधान करता है। द्र० एक वेद मन्त्र—

येन् देवा पवित्रेण
आत्मानं पुनते सदा।
तेन सहस्रधारेण
पावमानीः पुनन्तु मा॥
साम० ५।२।८।५।

मानव शरीर ब्रह्म प्राप्ति के योग्य बन जाता है। इसी यथार्थ तथ्य को ध्यान में रखकर महर्षि व्यास ने योगदर्शन में लिखा है—

स्वाध्याय-योग सम्पत्त्या
परमात्मा प्रकाशते॥
योग० व्यास० १।२८।

अर्थात् परमात्मा के सत्यस्वरूप का बोध स्वाध्याय तथा योग साधना से होता है।

स्वाध्याय किसे कहते हैं? उपर्युक्त स्वाध्याय के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए यह प्रश्न भी पाठक कर सकते हैं कि 'स्वाध्याय' शब्द की व्याख्या वेदों का पढ़ना कैसे की गई है? क्या इसमें कोई शास्त्रीय प्रमाण भी है? योगसूत्रों के भाष्यकार महर्षि व्यास ने योगांगों की व्याख्या करते हुए लिखा है—स्वाध्यायः प्रणवादिपवित्राणां जपो मोक्षशास्त्राध्ययनं वा॥ अर्थात् स्वाध्याय दो प्रकार का होता है—

(१) प्रणव-ओम् तथा गायत्री आदि मन्त्रों का जप करना और (२) मोक्ष के प्रतिपादक वेद, तथा अन्य शास्त्रों का अर्थ पूर्वक अध्ययन करना स्वाध्याय कहलाता है।

इस 'स्वाध्याय' के महत्त्व तथा उपयोगिता को ध्यान में रखकर ही जिस समय शिष्य गुरु के पास से विद्या समाप्त कर विदा होता था तो गुरु शिष्य का सर्वातिशायी हित-चिन्तन करता हुआ यही उपदेश करता था—

(१) स्वाध्यायान्मा प्रमदः।
(२) स्वाध्याय-प्रवचनाभ्यां न
प्रमदितव्यम्॥

अर्थात् जो कुछ विद्यार्थी दशा में विद्या ग्रहण की है, हे, प्रिय शिष्यो! उसको भूल न जाना। सांसारिक कार्यों में संलग्न होकर भी कुछ समय निकालकर स्वाध्याय अवश्य करते रहना और जो कुछ तुम जानते हो, उसको दूसरों को सिखाने के लिए प्रवचन भी अवश्य करना। जैसे प्रज्वलित अग्नि इन्धन समाप्त होने पर शान्त हो जाती है, इसी प्रकार स्वाध्याय तथा प्रवचन के इन्धन के बिना ज्ञान की अग्नि भी शान्त हो जाती है। अतः स्वाध्याय व प्रवचन कभी नहीं छोड़ने चाहिएं।

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सत्यार्थप्रकाश के ये आलोचक

लेखक—प बिहारीलाल शास्त्री, शास्त्रार्थ महारथी

सत्यार्थप्रकाश महर्षि दयानन्द की अद्वितीय रचना है। इस ग्रन्थ के पृष्ठों में प्रबल वैदिक ज्ञान से भ्रान्तियों, मिथ्या धारणाओं और अन्धविश्वासों पर प्रबल प्रहार किया है। और प्रत्येक क्षेत्र में क्रान्ति अर्थात् सार्वभौमिक समग्र क्रांति का यह परिचायक है।

सर्वप्रथम जो सत्यार्थप्रकाश प्रकाशित हुआ, वह जो राजा जयकिशन दास, मुरादाबाद वालों ने छपवाया था। इसमें भी मूर्तिपूजा, अवतारवाद आदि कई अवैदिक कार्यों का खण्डन था। किन्तु न जाने कैसे कल्पना भी मान्यता और मृतक श्राद्ध इसमें छपा था। इस पर पौराणिक फूले न समाये। प० कालूराम ने इसे पुन. छपवाया और समझे कि अब आर्यसमाज पर पूर्ण विजय प्राप्त कर ली। किन्तु टांय टांय फिस्स…। पौराणिक अन्धविश्वासों का खण्डन तो इसमें भी था।

उक्त अवैदिक बात इसमें कैसे आ गई, जबकि स्वामी जी के मन्तव्य के विरुद्ध थीं। इस पुस्तक की प्रेस कापी वाले थे पंडित ज्वालाप्रसाद मिश्र, मुरादाबादी जो आगे चलकर आर्यसमाज के घोर विरोधी उपदेशक बने थे। यह सारी गड़बड़ उन्हीं ने की हो तो कोई आश्चर्य नहीं। द्वितीय संस्करण स्वामी जी के जीवन में ही तैयार हो गया था। और प्रथम संस्करण की अवैदिक बातों के मण्डन का प्रतिवाद भी स्वामी जी ने छपा दिया था। अस्तु, अब तो यही सत्यार्थप्रकाश आर्यसमाज का मान्य ग्रन्थ है। आदिम सत्यार्थप्रकाश में भी अंग्रेजी राज्य के दोष और स्वराज्य के गुण ऋषि ने लिखे हैं।

सत्यार्थप्रकाश के खण्डन में सभी मतवालों ने अपनी लेखनी चलायी है। यहां तक कि राधा स्वामी मत के गुरु सर आनन्द स्वरूप ने भी खूब धूल उछाली है। परन्तु वह धूल उन पर ही पड़ी। वैदिक शास्त्रों का तो उन्हें लेशमात्र भी ज्ञान नहीं था। संस्कृत का एक अक्षर भी न जानते थे। विद्वान् जब इनकी पुस्तक 'यथार्थप्रकाश' को पढ़ते हैं तो इनकी मूर्खतापूर्ण कल्पनाओं पर हंसते हैं। आर्य सब मतों को भी अच्छी पहिचान है। विश्व भर में आजकल विज्ञान, धर्म और बुद्धिमत्ता की धूम है। अवैदिक मत तेजहीन बन चुके हैं। किन्तु स्वामी जी ने जो न्याय, दया, सत्य, उपकार, ब्रह्मचर्य और विद्याभ्यास को प्रमुख धर्म बताया है, वह आज भी समस्त विश्व में माना जा रहा है। स्वामी जी आचार, मारेलिटी, करेक्टर, नैतिकता, (अखलाक) को ही धर्म (प्रमुख) मानते हैं। ईसु, मूसा, शिव मुहम्मद राम, कृष्ण आदि व्यक्तियों पर विश्वास रखना आवश्यक नहीं मानते हैं। यह बात आज संसार भर में चल रही है। स्वामी जी ने लिखा है, "मैं गुण, कर्म, स्वभाव से ऊंच-नीच मानता हूं।" यह बात भी संसार में चल रही है। भारत में ही देख लो, अस्पृश्यता, जन्म से ऊंच-नीचपन मर रहा है। यह सब जनता जानती है।

कविवर श्री रामधारी सिंह जी ने अपनी पुस्तक 'संस्कृति के चार अध्याय' में स्वामी विवेकानन्द को इस कारण उदार बताया है कि उन्होंने सन्यासियों को भी मांस खाने की छूट दी है। और स्वामी दयानन्द को इस कारण संकीर्ण बताया है कि उन्होंने मांस भक्षण का निषेध किया है। कितनी भ्रष्ट उक्ति है।

अन्य राजनैतिक नेता और विशेषकर कुछ संगठन स्वामी विवेकानन्द जी को बहुत उठा रहे हैं। श्री स्वामी जी ने मतों का खण्डन किया है, अतः उनकी प्रशंसा से मतवाले बिदक न जावें, यह बड़ी शंका इनके समक्ष है। इस पर हमें एक शेर याद आता है—

> बढ़ा रहे हैं शान
> बलवन्त की बहुत मगर।
> वह कीमती को तो
> घटा सका नहीं सकते॥

मुर्वर बटलर ने जब उत्तर प्रदेश की राजधानी प्रयाग से हटाकर लखनऊ बनायी थी, तब श्री चकबस्त साहब ने यह शेर लिखा था। हम भी श्री स्वामी विवेकानन्द और उनके गुरु श्री रामकृष्ण जी का हृदय से बहुत आदर करते हैं। उन्होंने विदेशों में हिन्दू-दर्शन का महत्व बढ़ाया परन्तु वह जब विदेशों में व्याख्यान देकर अपना यश बढ़ा रहे थे, उसी समय उनके बंगाल प्रान्त में हिन्दू मुसलमान बनाए जा रहे थे। जाति के मरण की चिन्ता उन्हें बिल्कुल नहीं थी। किन्तु आर्य समाज ने उन्हीं दिनों में ४० सहस्र सिन्धी औरतों को आगा के जाल से बचाया। इनकी रक्षा पर दृष्टि पड़ी श्री मुन्शीराम की, जो पश्चात् हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द बने। इसी काल में मारीशस, सुरीनाम, फिजी में हिन्दू ईसाई बनते जाते थे। उनका पतन रोका आर्यसमाज के सन्यासियों स्वामी शंकरानन्द जी व स्वामी मंगलानन्द पुरी ने। जाति के जीवन की जड़ी केवल दयानन्द के चक्रों पर ही है। जाति के जीवन की रक्षा के लिए श्री स्वामी दयानन्द के विचार पूर्ण औषध हैं।

कुछ कोमल हृदय व सर्वप्रियता चाहने वाले लोगों को यह आपत्ति है कि श्री स्वामी जी ने सब मतों का खण्डन क्यों किया? उन्हें यह ध्यान रखना चाहिए कि खण्डन की प्रथा भारत में पुरानी है। मनु जी कहते हैं, "यस्तर्केणानुसन्धत्ते स धर्मं वेद नेतरः।" अर्थात् जो तर्क से अनुसन्धान करता है, वह धर्म को जानता है, अन्य नहीं। बुद्धिवाद की भारत में सदा से छूट रही है। आचार्य शंकर ने बौद्धों, जैनों आदि का खण्डन किया है, परन्तु कोई संघर्ष नहीं हुआ। बुद्धि युद्ध ही चलता रहा। यही परम्परा स्वामी जी ने अपनाई। और खण्डन को बुरा बताने वाले भी तो इन मतों की मान्यताओं का कानून बनाकर खण्डन कर रहे हैं या नहीं? मनुवाद का खण्डन होना देश के विकास के लिए आवश्यक है। अस्पृश्य और सवर्णों के झगड़े काफिर और मोमिन की लड़ाए, शिया और सुन्नियों के संघर्ष आदि का खण्डन होना आवश्यक है या नहीं?

सत्यार्थप्रकाश — जिसने सर्वप्रथम स्वराज्य का सन्देश भारतीयों को सुनाया, प्राणहीन बने हिन्दुओं में जीवन का संचार किया, अपने धर्म पर अभिमान करना सिखाया, अन्ध विश्वासों के मूलोच्छेद का प्रयत्न किया, ऐसे महान् क्रान्तिकारी ग्रन्थ का पण्डितों, मौलवियों, पादरियों और हिन्दू सन्त महन्तों ने तो इस कारण विरोध किया कि यह ग्रन्थ उनकी आय और मौज-बहार पर चोट करता था। जनता के अन्धविश्वासों में फंसे रहने से ही जिनकी आय थी, वे स्वार्थी लोग सत्यार्थप्रकाश की शिक्षाओं को भला कैसे सहन कर सकते थे। किन्तु वीतराग, नि स्पृह सन्त महात्मा (?) गांधी ने सत्यार्थप्रकाश का घोर विरोध किया और श्री स्वामी दयानन्द की दिल खोलकर निन्दा की। ऐसा क्यों? स्वामी जी को क्रोधी असहिष्णु आदि कुशब्द गांधी जी ने लिखे और सत्यार्थप्रकाश को निराशाजनक पुस्तक बताया। इसमें क्या कारण था? इस प्रश्न का सही उत्तर आप तब समझ सकते हैं, जबकि महात्मा गांधी के वास्तविक रूप को जान लें।

महात्मा जी बाहर के व्यवहारों में नि स्पृह सन्त और वीतराग दीखते थे, किन्तु अन्तः रूप में लोकैषणा के अर्जन में उनका पूरा यत्न रहता था। उन्होंने कार्य तो लोकैषणा को बटोरने के लिए आरम्भ किया था। वे उस समय के एकमात्र महान नेता पूज्य लोकमान्य तिलक से आगे बढ़ जाना चाहते थे। लोकहित के क्षेत्र में वे उतरे हो थे लोकैषणा की चाह से। अब तो उनके भक्त भी उनकी भूलों का वर्णन करने लगे हैं। श्री चौधरी चरणसिंह जी के विचार अभी कुछ मास पूर्व छपे थे जिसमें उन्होंने कहा था कि गांधी जी ने दो भयंकर भूल करी थीं। एक खिलाफत आन्दोलन का अपनाना और दूसरी भूल थी प० जवाहर लाल नेहरू को प्रधान मन्त्री बनाना।

महात्मा (?) जी ने सुभाष चन्द्र बोस का सदा विरोध किया, क्यों? इस कारण कि वह गांधीवाद को न मानते थे। और सुभाष बाबू के होते गांधी जी वैसे लोकप्रिय न थे। खिलाफत आन्दोलन को महात्मा जी ने इसी कारण अपनाया कि मुसलमान भी उन्हें मानने लगें। मगर मुसलमान हिन्दुओं की भांति लामजहब तो था नहीं, जो गांधी जी के हाथ आ जाता। वह अपनी चाल पर चलता ही रहा। सन् २२ में जब गांधी जी हिन्दू मुस्लिम एकता को रागनी जोर से गा रहे थे तब केरल में मोपलाओं ने हिन्दुओं को कत्ल करना लूटना, मुसलमान बनाना आरम्भ कर दिया। गांधी जी और उनके चेलों ने इस काण्ड

(शेष पृष्ठ ११ पर)

अग्निहोत्र सर्वस्व

लेखक—स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती

श्वेत क्रान्ति के प्रवर्तक याज्ञवल्क्य—

जब कोई परिवर्तन धीरे-धीरे आता है, तो उसे सुधार कहते हैं। और जब कोई परिवर्तन बड़े वेग से आता है उसे 'क्रांति' कहते हैं। विश्व में अनेक बार क्रांतियाँ हुई और अब भी हो रही हैं। सूर्य भी क्रांति करता है। वे संक्रान्तियाँ होती हैं। उनका अभिप्राय यही होता है कि सूर्य बड़े वेग से एक स्थान से दूसरे स्थान में क्रांति कर रहा है।

रशिया और चाईना मे क्रांति हुई है दोनों ने उसे रक्त-क्रांति कहा, लाल क्रांति कहा। हमारे देश में क्रांति की संज्ञा हरित क्रांति रखी गई, परन्तु जिस क्रांति का हम वर्णन करने लगे हैं वह है श्वेत-क्रांति। तीन ही क्रांतियाँ हो सकती हैं रक्त क्रांति, हरित क्रांति या फिर श्वेत क्रांति। चौथी नहीं हो सकती। उसका कारण है कि प्रकृति के तीन ही गुण हैं। सत्त्व, रजस और तमस् सत्त्व सफ़ेद है, रजस् लाल है और तमस् हरा। कोई भी क्रांति होगी तो इनके अन्तर्गत आ जाएगी। आप श्वेत क्रांति न कहकर सत्त्व क्रांति कहिए, रक्त क्रांति न कहकर रजस् क्रांति कहिए, हरित क्रांति न कहकर तमस् क्रांति कहिए। अन्तर कुछ नहीं है। हाँ एक बात का ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि क्रांति कोई हो उसका परिणाम श्वेत क्रांति होना चाहिए।

सहस्रों वर्ष बीत गए। श्वेत क्रांति के प्रथम उद्घोषक याज्ञवल्क्य हुए। जिन्होंने घोषणा की संसार में श्वेत क्रांति लानी होगी तब कहीं विश्व में शान्ति होगी अन्यथा नहीं। फिर मानव जीवन की कोई समस्या ऐसी नहीं होगी जिसका हम समाधान न कर सकें

इस सम्पूर्ण प्रतीकात्मक संवाद का सार यह है कि जो भी सेवन हो, दोहन हो, वह दुग्धरूप हो। चाहे वह पृथिवी से सवन किया गया हो या अन्य किसी से। याज्ञवल्क्य ने जहाँ जनक की समस्या का समाधान 'पय एवेति' से किया है, वहाँ राष्ट्रों की अन्न-समस्या, स्वास्थ्य-समस्या, ज्ञान-समस्या का समाधान भी 'पय एवेति' से कर दिया है। कोई भी राष्ट्र अपनी भूमि से उन ही अन्नों को उगाए, जो दुग्धरूप हों। राष्ट्र का अरण्य विभाग भी उन्हीं ओषधियों को उपजाए, जो दुग्धरूप हों। बस 'पय एव इति' ही कसौटी हो, इससे भिन्न राष्ट्र के लिए अनुपयोगी हैं। यदि इस रहस्य को समझ लिया जाए, तो कोई समस्या समस्या ही नहीं। राष्ट्र की अन्न समस्या, स्वास्थ्य-समस्या आदि का समाधान स्वतः हो जाएगा। इस प्रकार दी गई आहुति भी अग्नि के लिए होम है— अग्निहोत्र है। अब हम समस्याओं पर विचार करते हैं, जिनका समाधान अग्निहोत्र में समाहित है।

भूख की समस्या और अग्निहोत्र—

राष्ट्र की भूख-समस्या का हल भी इसी 'पय एव इति' उत्तर में निहित है। वैश्य को तथा कृषक को देखना है कि पृथिवी रूपी गौ से जो कुछ दुहना है वह पयरूप हो। वह अन्न नहीं, जो पयरूप न हो। वह राष्ट्र की लाखों एकड़ भूमि तम्बाकू चाय, कॉफी आदि के बोने के लिए न घेरे। वह ऐसे ही अन्न उपजाएँ जो पयरूप हों। उसकी वह आहुति महती आहुति है, उसका यह अग्निहोत्र महायज्ञ है। इसलिए भगवान् याज्ञवल्क्य ने किसान की इस आहुति को भी स्वीकार करते हुए कहा है — 'व्रीहियवाभ्याम्' — जौ चावल से भी। ध्यान रखना चाहिए कि व्रीहि चावल यव जौ दोनों ही उन अन्नों का प्रतिनिधित्व करते हैं जो दुग्धरूप हैं। चावल और जौ पकने से पूर्व दुग्धरूप ही होते हैं। 'पय एव इति' दूध ही बस! यही पृथिवी रूपी गाय का दुग्ध है।

कोई किसान भूमिरूपी गौ को दुहते हुए, यदि सर्वथा नवीन दुग्ध दुहता है, जो अतीत के व्रीहि, गोधूम आदि से भिन्न होते हुए राष्ट्र की भूख-समस्या को हल करता है, तो मानो उसकी वह एक आहुति होम-सर्वस्व है, अग्निहोत्र सर्वस्व है। उसका अग्निहोत्र सफल, उसका यह इन्द्रासन, वह शक्र, वह शतक्रतु।

स्वास्थ्य-समस्या और अग्निहोत्र—

राष्ट्र की स्वास्थ्य-समस्या का हल भी 'पय एव इति' उत्तर में सन्निहित है। राष्ट्र का ओषधि-वनस्पति-विभाग निर्णय करे कि उसे राष्ट्र के वनों में, अरण्यों में क्या उपजाना है? उसे ऐसी ओषधियाँ और वनस्पतियाँ ही उपजानी हैं, जो दुग्धरूप हों। ऐसी ओषधियाँ ही रोग के लिए परम हवि हैं। उसके स्वास्थ्य-यज्ञ में परम हवि हैं होम सर्वस्व हैं— अग्निहोत्र सर्वस्व।

जल-समस्या और अग्निहोत्र—

अन्त में राष्ट्र की अन्न-समस्या ओषधि-समस्या, वनस्पति-समस्या जिस पर निर्भर है जिसके बिना किसी भी गौ का दोहन असम्भव है, उसकी ओर निर्देश करते हुए कहा कि 'अद्भ्य' जलों से। यदि जल का ठीक प्रबन्ध नहीं तो जल राष्ट्र के खेतों, वनों और अरण्यों में कैसे पहुँचाया जाएगा? जिससे न व्रीहि-यव ही उपजेंगे, न ओषधि-वनस्पति ही उपजेंगी और न चतुष्पाद् गौ ही दुही जा सकेगी। इसलिए जल को आहुति बनाओ और उसके लिए जो नाम गौ को दुहो, वर्षा-जल का प्रबन्ध करो, जिससे राष्ट्र की चप्पा-चप्पा भूमि सिञ्चित हो। वन और अरण्य सिञ्चित हों। जोहड़, पोखर, तालाब और कुएं भरे हों, उसके स्रोत अक्षय हों और यह तभी संभव है, जब द्युरूपी गाय को दुहा जाय। उसकी याद दिलाते हुए याज्ञवल्क्य बोले—'अद्भ्य'।

ज्ञान समस्या और अग्निहोत्र—

राष्ट्र की अन्तिम और सर्वोपरि समस्या अज्ञान की समस्या है, जिसके हल होते ही उपर्युक्त सभी समस्याएं स्वतः हल हो जाएंगी। जब तक राष्ट्र में अज्ञान है, तब तक न चतुष्पाद् गाय ही दुही जाएगी, न किसान ही उत्तम अन्न उपजा पाएगा, न वन-विभाग तथा न अरण्य-विभाग उत्तम ओषधि-वनस्पतियां उपजा पाएगा, न समय पर वर्षा कराई जा सकेगी, न राष्ट्र की खेती ही सम्यक् प्रकार हो सकेगी। न वापी, कूप, तडाग ही प्यास बुझाएंगे, अतः याज्ञवल्क्य अग्निहोत्र के लिए अन्तिम आहुति का निर्देश करते हुए कहते हैं— 'सत्यमात्मन्'।

क्षत्रिय की ज्या-गौ—

चतुष्पाद-गाय-दुग्ध-संयुक्त है वृष्टि और अन्न है जिन दो दुग्धों का वर्णन हुआ है उनमें प्रथम दुग्ध चतुष्पाद् गौ का और अन्तिम दुग्ध वाग्रूपी गौ का है। इन दोनों दुग्धों को एकत्र कर देना अग्नि-होत्र है। घृत-रूपी हवि और अन्नरूप अन्न को एकत्र कर देना अग्नि-होत्र है। घृत की उपलब्धि गौ तथा अन्न की उपलब्धि ब्राह्मण से होती है। दोनों हवियों के मूलस्रोत गौ और ब्राह्मण की रक्षा होनी चाहिए। इनकी रक्षा करना क्षत्रिय का परम कर्तव्य माना गया है। ऐसा अवसर आने पर क्षत्रिय अपने धनुष पर ज्या-गौ को दुहना पड़ता है। ज्या-गौ से निकली हुई बाणरूपी दुग्ध-धाराएं, गौ और ब्राह्मण की रक्षा करती हैं। क्षत्रिय की यही महती आहुति है, होम सर्वस्व है। अग्निहोत्र सर्वस्व है।

ध्यान रहे कि—उक्त सभी गौएं न पाली जा सकेंगी, न दुही जा सकेंगी, न दुग्ध का सवन हो सकेगा। यदि शूद्र सेवा न करे। अतः शूद्र भी अपनी चर्म-गौ को दुहता है। चर्म-गौ से निकले स्वेदबिन्दु सेवा दुग्ध में बदल जाते हैं। जब शूद्र सेवा दुग्ध की आहुति देता है तब कहीं वाग्-गौ, चतुष्पाद्, गौ, और ज्या-गौ की पालना होती है, तब कहीं सत्य, यश और श्री-दुग्धों की प्राप्ति होती है। तब कहीं यज्ञ सम्पन्न होता है। याज्ञिकों की परिभाषा में सेवा के लिए भी श्री शब्द का प्रयोग होता है। तभी हम कह सकेंगे कि अग्निहोत्र की सिद्धि के लिए ब्राह्मण वाक्-गौ के सत्य-दुग्ध को, क्षत्रिय ज्या गौ के यश-दुग्ध को, वैश्य चतुष्पाद्-गौ के श्री-दुग्ध को, और शूद्र चर्म गौ के स्वेद दुग्ध को अर्थात् सेवा-दुग्ध को अमृत बनाता है। इसी की घोषणा यजमान आचमन करते समय सत्य यशः श्रीर्मयि श्री श्रयताम् वाक्य में करता है।

अभिनव संहिता—

आइए उक्त विवरण को ऐतरेय उपनिषद् की अधिकृत भाषा में आबद्ध कर दें। सत्य पूर्वरूपम्। श्री उत्तररूपम्। यश अग्नि सेवा सन्धानम्। इत्यधिसवनम्।' और अभिनव ढंग से भी अभिव्यक्त किया जा सकता है। वाक्-गौ पूर्वरूपम्। चतुष्पाद् गौ उत्तर-रूपम्। ज्या-गौ. सन्धि.। चर्म-गौ. सन्धानम्। इत्यधिसवनम्।

कामधेनु के चार स्तन—

इस प्रकार 'पय एव इति' की

अग्निहोत्र सर्वस्व

व्याख्या करते हुए विभिन्न दुग्धों के भिन्न से दोषों का वर्णन किया जा चुका। जहां यज्ञ-कुण्ड गव्युत्थान भाव का है, वहां अन्तिम प्रत्य दुग्ध पायी कभी भी का है। जिस प्रकार धेनु गौ के चार स्तन होते हैं वैसे वाग् गौ के भी चार स्तन होते हैं। का वर्णन ब्राह्मणकार ने इस प्रकार किया है। 'वाचं धेनुमुपासीत। तस्याश्चत्वारः स्तनाः स्वाहाकारो वषट्कारो हन्तकारः स्वधाकारस्तस्यै द्वौ स्तनौ देवा उपजीवन्ति स्वाहाकारञ्च वषट्कारञ्च हन्तकारं मनुष्याः स्वधाकारं पितरः'। देवों के लिए जैसे स्वाहा शब्द का प्रयोग किया जाता है, वैसे ही वषट्कार शब्द का। यथा—'अग्नये स्वाहा, इन्द्राय स्वाहा, प्रजापतये स्वाहा, अग्नये वषट् आदि'।

स्वाहाकार और वषट्कार दो स्तन—

देवों को दो बातें रुचिकर हैं—स्वाहा तथा वषट्कार। वे चाहते हैं कि यजमान उनके लिए स्वाहा उच्चारण करे। वाह-वाह उच्चारण करे। वे इतने मात्र से जी उठते हैं। वाग्-गौ के स्वाहाकार-स्तन की वह धारा जब उनके कान में पड़ती है तो मानो उनमें प्राणों का संचार हो जाता है। वे पूजा चाहते हैं, समर्पण चाहते हैं और कुछ नहीं। स्वाहा शब्द का एक अर्थ समर्पण भी है। स्वाहा शब्द का निर्वचन है—'सु-आह वाक्इति'—उत्तम कथन ही स्वाहा है। उत्तम कथनों में वाह! वाह! से बढ़कर क्या होगा? इसी लिए देव स्वाहा से ही प्रसन्न हो जाते हैं।

हन्तकार तीसरा स्तन है—

जहां देवगण लोग स्वाहाकार से आप्यित जीते हैं, वाह! वाह! से आप्यित जीते हैं, वहां साधारण मनुष्य 'वाह' सुनकर जीते हैं। जब उनके दुःख-दर्द पर करुणाई कोई यजमान सहानुभूति में आह भरता है, तो वे भी जी उठते हैं। वे समझते हैं कि किसी ने हमारे दुःख दर्द में कम से कम सहानुभूति को दो आह तो भर दीं। क्या यह कम है? देवों को वाह मुबारिक, हम को आह मुबारिक। मेरे यजमान! वहां तू देवों को वाह! वाह! सुनाता है, हमें आह! सुना दिया कर। हमें यही पसन्द है। इसी उर्दू आह शब्द को संस्कृत भाषा में 'हन्त' कहते हैं—'हन्तकारं मनुष्या'। वाणी के हन्तकार-स्तन का पान करके मनुष्य जी उठते हैं। 'हन्त'। शब्द के दो अर्थ हैं—एक आश्चर्य और दूसरा खेद। सामान्य मनुष्य के दुःख दर्द में कोई खेद व्यक्त कर दे, सहानुभूति के दो शब्द भी कह दे—तो वे जी जाते हैं। इसी प्रकार उनके महत्त्वपूर्ण कार्य पर कोई उन्हें 'शाबाश' कह दे, तो उत्साहित होकर अमर हो जाते हैं। इसलिए उनकी कृति पर कम से कम वाणी से कह दो—चित्रम्! आश्चर्य है! कमाल है!

वषट्कार दूसरा स्तन है—

देवों के लिए जहां स्वाहाकार अत्यन्त प्रिय दुग्ध-धारा है, वहां वषट्कार भी एक अत्यन्त प्रिय धारा है। वषट्कार का प्रयोग उसी समय किया जाता है, जब कहीं विधि-विधान के विपरीत अनृत आचरण कर रहा हो। देवों को विधि विधान के विपरीत अनृत आचरण अप्रिय है। वे चाहते हैं कि उनके कहे हुए उपदेश और विधि-विधान का यथावत् पालन हो उसके विपरीत बड़ी से बड़ी रचना भी गिरा दी जानी चाहिए। समस्त अनृत आचरणों को समाप्त करके फिर से नवनिर्माण किया जाए। अनृत को ढहाने के लिए जिस वज्र की आवश्यकता है, उसका नाम वषट्कार है—"वज्रो वै वषट्कारः।" वाणी का प्रयोग जब अनृत आचरण को वर्जित करने के लिए किया जाता है, तो उसे सुनकर देव प्रसन्न हो उठते हैं। झूठ मत बोलो, चोरी मत करो हिंसा मत करो इत्यादि वर्जनरूप आदेश वज्र हैं। उसी के लिए वषट्कार ध्वनि की जाती है। यज्ञ में ब्रह्मा वषट्कार का प्रयोग उसी समय करता है, जबकि यज्ञ में विधि-विधान के विपरीत आचरण हो रहा होता है। देवों को विधि-विधान पसन्द है। इसीलिए जब कोई ब्राह्मण वषट्कार वज्र का प्रयोग करके उनके विधि-विधान की रक्षा करता है, तो वे इससे अनुप्राणित हो उठते हैं। वेदब्राह्मण के मूर्धन्य विद्वान् पण्डित बुद्धदेव विद्यालङ्कार ने पञ्चयज्ञप्रकाश में वषट्कार का अर्थ किया है 'वषट्कार का अर्थ है thoroghness अर्थात् अधकचरा काम करके सन्तुष्ट न हो जाना। चाहे एक दीवार को तोड़कर दस बार बनाना पड़े, परन्तु बने पूरी नाप के अनुकूल। इस attention to detail द्वारा कार्य को पूर्णता तक पहुंचाने का नाम वषट्कार है।" यही बात आचरण के क्षेत्र में है। यदि समाज में विधि-विधान के विपरीत नई दीवारें खड़ी कर दी गई हैं, जो टेढ़ी और भोंडी हैं, उन्हें गिरा देना ही श्रेयस्कर है, अन्यथा भय है कि कोई उनके नीचे आकर दब न जाए, अतः उन दीवारों को ढहाने के लिए जब ब्राह्मण वाणी का प्रयोग करता है, तो वहां वषट्कार का प्रयोग दुराचारियों के लिए वज्र-प्रहार होता है और देवों के लिए प्राणधारा। इसलिए कहा—'वषटकारं देवा उपजीवन्ति।"

स्वधाकार चौथा स्तन है—

वाग् गौ के तीन स्तनों—स्वाहाकार, वषट्कार और हन्तकार का वर्णन हो चुका। चौथे स्तन जिसका नाम स्वधाकार है, उससे स्वधा की धाराएं बहती हैं। इसे पितरगण पीकर तृप्त हो जाते हैं, अनुप्राणित हो जाते हैं। स्वधा शब्द का अर्थ है—'स्वस्मात् धारणयोग्याः" वे अपने हैं, अतः हर अवस्था में धारणा करने योग्य हैं। अपने पुत्र तथा पुत्रवधू के मुख से निकली हुई इस बात को कि 'चाहे वे वृद्ध हो गए हों, या असहाय हो गए हों, हैं तो अपने ही। बचपन में इन्होंने हमारा लालन-पालन किया था। अब हमारा कर्त्तव्य है कि हम इन्हें धारण करें। कानों में पड़ती हुई अमृत तुल्य धारा को सुनकर पितर जी उठते हैं, उनको सान्त्वना मिलती है। उन्हें यह ही पर्याप्त है। अतः ऐ! पुत्र और पुत्रियो! कुल-वधुओ! अपने मुख से सदा 'स्वधा' का उच्चारण करना। अब कहना यही कहना—'पितृभ्य स्वधायिभ्यः स्वधा नमः"। स्वधा के अधिकारी पितरों के लिए यह हमारी स्वधा है भेंट है। ऐ अर्यन्! तेरी वाणी हमारी शर्म शरण है, हम तेरी शरण आए हैं। तू देवों को स्वाहा और वषटकार द्वारा, साधारण मनुष्यो को हन्तकार द्वारा, पितरों को स्वधाकार द्वारा अपनी शरण में ले लेना। इससे अपने शर्मा नाम को सार्थक कर लेना—'धारे देवाः। शरणः शर्म यच्छता।

(पृष्ठ ३ का शेष)

आर्यसमाज का हिन्दी नाटक साहित्य

है तथा समस्त कृति में गीति तत्त्व की प्रधानता रहती थी। सिनेमा के प्रचार के पूर्व युग में इन देशी नाटकों से ग्रामीण तथा कस्बाई जनता का भरपूर मनोरंजन होता था। इसी प्रसंग में हरयाणा प्रान्त के टोहाना निवासी स्व० बलवन्तसिंह टोहानवी की नाट्य कृतियों का उल्लेख करना आवश्यक है। श्री टोहानवी ने संगीत एवं काव्य तत्त्व से भरपूर ऐसे नाटकों की रचना की है जिनसे साधारण पठित लोगों का मनोरंजन तो होता ही है, वे महापुरुषों के नाटक वर्णित गुणों एवं चरित्र से शिक्षा भी ग्रहण करते हैं। टोहानवी के ये संगीत तत्त्व प्रधान नाटक अत्यधिक लोकप्रिय हुए थे। इसका प्रमाण इसी बात से मिलता है कि उनके द्वारा रचित इन नाटकों के अनेक संस्करण छपे हैं तथा इनकी लाखों प्रतियां जनता तक पहुंच चुकी हैं। इनकी प्रमुख नाट्य कृतियां निम्न हैं—आर्यसंगीत रामायण, आर्यसंगीत, पृथ्वीराज संगीत, बाल शहीद तथा महर्षि दयानन्द। नाटकों के शीर्षकों से ही ज्ञात होता है कि रामायण तथा महाभारत जैसे आर्ष काव्यों को नाट्य रूप देने के साथ साथ लेखक ने मध्यकालीन वीरों को भी नायक रूप में चुना है। गुरु गोविन्दसिंह के पुत्रों के बलिदान की गाथा संगीत बाल शहीद में उपस्थित की गई है।

यहां आर्यसमाज से सम्बद्ध नाटककारों में प्रसिद्ध नाटक लेखक पं० नारायण प्रसाद बेताब' का उल्लेख आवश्यक है। बेताब ने पारसी रंगमंचीय शैली में अनेक नाटक लिखे थे। यद्यपि उन्होंने पौराणिक, ऐतिहासिक तथा काल्पनिक कथानकों के आधार लेकर ही अपने नाटक लिखे, तथापि उनके आर्यसमाजी विचारों की झलक उनकी नाट्य कृतियों में सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है उनके रामायण तथा महाभारत के आख्यानों पर आधारित नाटकों को विशेष सफलता प्राप्त हुई है। आर्य कन्या महाविद्यालय जालन्धर के संस्थापक लाला देवराज का सावित्री नाटक तथा इन्द्र विद्यावाचस्पति प्रणीत स्वर्णदेश का उद्धार शीर्षक नाटक भी उल्लेखनीय है।

सुखी कौन ?

लेखक —रविदत्त शर्मा आचार्य
अन्तर्देशीय संस्कृत सेवाश्रम धनौली, आगरा २८२००१

संसार में कौन ऐसा व्यक्ति है जो पूर्ण सुखी हो, जिसे कुछ प्राप्त करना शेष न रह गया हो, जो निष्काम भाव को प्राप्त कर चुका हो, जो प्रभु से प्रतिदिन यही प्रार्थना करता हो कि अब कुछ नहीं चाहिए जो यह अनुभव करता हो कि मुझे आवश्यकता से अधिक मिल गया है, अत उस अन्न को किसी को प्रदान कर दू अथवा जो अपने लिए कुछ न मांगकर दूसरो के कल्याण की प्रार्थना करता हो ? सुख के माप दण्ड के सम्बन्ध में अलग-अलग विचार धाराएं हैं। एक व्यक्ति अपने रहन सहन के स्तर को सुधारने में ही सुख समझ लेता है, किसी को नौकरी में सुख प्रतीत होता है। कोई परिवार में रहकर सुखी है। कोई मोटरकार आदि वाहनों से घूम कर प्रसन्न है तो दूसरा पैदल चलकर इति कृत्य हो जाता है और कार वाले की तुलना में अधिक आनन्द प्राप्त कर लेता है। नि सन्तान व्यक्ति सन्तान के लिए दु खी है तो सन्तान वाला अपनी सन्तान से असन्तुष्ट है। एक विधवा अपने पति के लिए रोती है तो दूसरी को उसका पति कभी हंसने का अवसर नहीं देता, अपने कुकृत्य से रुलाता ही रहता है। झोपडी वाला भवन चाहता है तो भवनो वाला अपने भवनो से चिन्तित है। निर्धन व्यक्ति धनी होने के सपने देखता है तो धनवान् विभिन्न प्रकार के करों से बचने के लिए आकुल है। तुलसी बाबा का विश्वास है—'पराधीन सपनेहु सुख नाहीं'। एक नीतिकार का मत भी इससे मिलता जुलता है—सर्वं परवश दु ख सर्वमात्मवश सुखम् । एतद् विद्यात समासेन लक्षण सुख-दु खयो ॥

एक विद्वान् का कुछ और ही विचार है— अलसस्य कुतो विद्या अविद्यस्य कुतो धनम । अधनस्य कुतो मित्रम अमित्रस्य कुत सुखम ॥

महात्मा विदुर जी ने ससार के छह सुखो का उल्लेख किया है जो अपने में पूर्ण हैं १ स्वास्थ्य २ ऋण रहित होना ३ प्रवासी न रहना अर्थात् घर में ही रहना, ४ सज्जनो के साथ व्यवहार होना, ५ मनचाही जीविका मिल जाना ६ भय रहित होना —

आरोग्यमानृण्यमविप्रवास
सद्भिर्मनुष्यैः सह सम्प्रयोग ।
स्वप्रत्यया वृत्तिरभीतवास
षड् जीवलोकस्य सुखानि राजन् ॥

गीता ग्रन्थ के अनुसार जो व्यक्ति जीवन में काम तथा क्रोध के वेग को जीत चुका है, वही सुखी है—

शक्नोति हैव सोढु प्राक् शरीर-विमोक्षणात् । कामक्रोधोद्भव वेग स युक्त स सुखी नर ॥

उक्त श्लोक का सकेत तितिक्षा की ओर है, जिसको आज का मनुष्य लेशमात्र भी स्वीकार करने को तैयार नहीं। आज का तर्क यह है कि जिससे क्रोध उत्पन्न हो वह कारण ही न रहे तो क्रोध होगा ही नहीं। काम के सम्बन्ध में भी भोगीजन यह परामर्श देते हैं कि पूर्ण तृप्ति होने पर मन स्वय ही विरक्ति को धारण कर लेता है, जैसा कि आधुनिक भगवान रजनीश प्रचार कर रहे हैं। इस विषय में हमारे ऋषियो का कुछ भिन्न मत है। वे बताते हैं कि विषयो के द्वारा इन्द्रियों को पूर्ण तृप्ति कभी नहीं हो सकती अपितु भोग की इच्छा प्रबल होती है—

न जातु काम कामानामुपभोगेन शाम्यति । हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते ॥

महाराज मनु का विश्वास है कि जो व्यक्ति आत्मकल्याण सम्बन्धी सदग्रन्थो का सदैव स्वाध्याय करता है उसे गो दुग्ध इत्यादि सब उत्तम पदार्थ आसानी से प्राप्त हो जाते हैं अर्थात वह सदा फलता फूलता है, अत यदि सुख की इच्छा है तो नियमित स्वाध्यायशील बनो-

य स्वाध्यायमधीतेऽब्द विधिना नियत शुचि । तस्य नित्य क्षरत्येष पयो दधि घृत मधु ॥

छान्दोग्य उपनिषद् के ऋषि का कथन है 'यो वै भूमा तत्सुख नाल्पे सुखमस्ति अर्थात् जो साधन सामग्री समाप्त होने वाले हैं उनमें सुख नहीं है। सुख उस पदार्थ से मिल सकता है जो कभी समाप्त न हो। अत मनुष्य को चाहिए कि उस नित्य एवम् अक्षय-कोष का सञ्चय करे जो सदैव बना रहे। सीधा भाव यह है कि आत्म ज्ञानी सदा सुखी रहता है फिर सब कुछ खोया हुआ सा प्रतीत होता है। ससार के समस्त पदार्थ उस व्यक्ति को सुख पहुंचाते हैं।

इस सम्बन्ध मे वेद की एक सूक्ति पर विचार करना आवश्यक होगा —

'हविष्मते मनवे शर्म यसत् । हवि से युक्त मनुष्य को सुख मिलता है। हवि का व्यापक भाव है। जो व्यक्ति यज्ञ में आहुति डालता है, जिसका जीवन यज्ञमय है, जो दान करने का अभ्यासी है, परोपकार करता है, उत्तम विचारों का आदान प्रदान करता है अर्थात् वेदोक्त मार्ग पर स्वय भी चलता है तथा दूसरों को प्ररित करता है, ऐसा व्यक्ति सुख प्राप्ति का पात्र है।

संसार के समस्त विषयों को एकत्र करने पर मनुष्य प्रसन्न होता है, परन्तु क्या उन साधनों से सदा के लिए दुःख की निवृत्ति सम्भव है ? कदापि नहीं। क्योंकि जीव के लिए सब से बडा दु ख मृत्यु का है और यदि वह सदा बना रहा तो ये भौतिक साधन कितना सुख दे पायेंगे। इसमें सन्देह है। जीव एक बकरी (अजा) के समान है और मृत्यु एक भयानक सिंह है। यदि बकरी को शेर सम्मुख बांध दिया जाय और अच्छा चारा दिया जाय तो उसकी दृष्टि सिंह पर ही रहेगी चारे पर नहीं अर्थात् चारा आदि खाना ही भूल जायेगी। मनुष्य भोगों में तभी तक सुख मानता है जब तक कि उसे मृत्यु के दु ख का आभास नहीं होता। मृत्यु के नाम से हृदय कांपता है, भोगों का आकर्षण उस भय को दूर नहीं कर सकता। अत. वही व्यक्ति सुखी होने का दावा कर सकता है जो मृत्यु को जीत ले और इसका एक ही उपाय श्रुति बताती है—

'तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय'

□

(पृष्ठ २ का शेष)

जीवन का स्वर्णकाल

आत्मबल ही एक माध्यम है। और इस आत्मबल के मूल में ब्रह्मचर्य का आलोक अवश्य होगा। व्यक्ति का धर्म, दर्शन, मनन, चिन्तन इन सब का उन्मेष ब्रह्मचर्य के सहयोग से ही हुआ था, इसीलिए अथर्ववेद मे ब्रह्मचर्य की महिमा का इस रूप में उल्लेख किया गया है कि विद्वान् ब्रह्मचर्य के बल से मृत्यु को जीत लेता है।

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत ।

वस्तुत ब्रह्मचर्य काम मनुष्य जीवन का अनुपम रत्न है। जो व्यक्ति इस रत्न को सुरक्षित कर लेता है, वही व्यक्ति ससार में वास्तविक विजेता बन सकता है। विद्वानों की सभा लगी हुई थी। नर्मदा की लहरें उठ उठ कर आश्रम को छूने के लिए लालायित थीं, इतने में मुनि श्वेताक ने सभा की ओर अभिमुख होकर कहा, "क्या आप लोग ससार में एक विजेता के समान जीवन व्यतीत करना चाहते हैं ? क्या आप जीवन के समर मे कभी भी पराजित होना नहीं चाहते हैं ? क्या आप अपने जीवन में समग्र सुखों को बसा लेना चाहते हैं ?

मुनिवर श्वेताक के इस दिव्य वचन को सुनकर प्रत्येक व्यक्ति कह उठा कि महात्मन् ! हम लोग आपके निर्दिष्ट जीवन का भागीदार बनना चाहते हैं। आप हमें निर्देश दीजिये, हम लोग इस दिव्य जीवन के स्वामी कैसे बनें।

मुनिवर ने कहा—'यदि आप लोग चाहते हैं कि आपके जीवन से हर प्रकार का पराजय दूर रहे, तो ब्रह्मचर्य की साधना में जीवन को ढालो। ब्रह्मचर्य की सिद्धि से शरीर के समस्त रोग विनष्ट तो हो ही जाते हैं, किन्तु साथ ही आन्तरिक शत्रु ईर्ष्या, द्वेष जिनसे हम लोग प्रतिपल पराजित होते रहते हैं, उनके प्रभुत्व से हमारा जीवन मुक्त हो जाता है।

□

अमर शहीद भगतसिंह द्वारा अपने पिता को लिखा अन्तिम पत्र

मैं फांसी से बचना नहीं चाहता—भगतसिंह

पूज्य पिता जी,

मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि आपने स्पेशल ट्रिब्यूनल को मेरे बचाव के लिए प्रार्थना पत्र भेजा है। यह समाचार मेरे लिए इतना दुःखदायी था कि मैं इसे शान्त रहकर सहन नहीं कर सकता, इस समाचार ने मेरे हृदय की सारी शान्ति समाप्त कर दी। मेरी समझ में नहीं आता कि वर्तमान स्थिति में आप इस विषय पर किस प्रकार ऐसा प्रार्थना पत्र दे सकते हैं।

आपका बेटा होने के नाते मैं आपकी भावनाओं एवं इच्छाओं का पूरा सम्मान करता हूं परन्तु इसके साथ ही मैं समझता हूं कि आपको मेरे साथ परामर्श किये बिना मेरे विषय में कोई प्रार्थना पत्र देने का अधिकार न था। आप जानते हैं कि राजनीतिक क्षेत्र में मेरे विचार आपसे सर्वथा भिन्न हैं। मैं आपकी सहमति या असहमति का विचार किए बिना ही सदैव स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य करता रहा हूं। मैंने कभी अपने बचाव के लिए स्पष्टीकरण देने की इच्छा प्रकट नहीं की और न मैंने कभी इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार ही किया है। यह बात मात्र दृष्टिकोण का परिणाम थी या मेरे पास इन कार्यों के प्रमाण में उपस्थित करने के लिए कोई तर्क न थे। यह एक ऐसी बात है जिस पर इस समय विचार नहीं किया जा सकता।

आप जानते हैं कि इस मुकदमे में हम एक निश्चित नीति पर चल रहे हैं। मेरा प्रत्येक कार्य उस नीति से मेरे सिद्धांतों से एवं हमारे कार्यक्रम से सामंजस्य रखते हुए होना चाहिए। आज परिस्थिति सर्वथा भिन्न हैं परन्तु यदि परिस्थिति इसके अतिरिक्त कुछ और भी होती तो मैं अन्तिम व्यक्ति होता जो अपना बचाव उपस्थित करता। इस सारे मुकदमे में मेरे सामने एक ही विचार था और वह कि यह जानते हुए भी कि हमारे विरुद्ध भयानक आरोप लगाये गए हैं हम उस ओर से पूर्णतया अवहेलना की वृत्ति बनाए रखें। मेरा यह दृष्टिकोण रहा है कि समस्त राजनीतिक कार्यकर्ताओं को ऐसी दशा में अदालत की अवहेलना और उपेक्षा दिखानी चाहिए और उनको जो कठोर से कठोर दण्ड दिया जाए वह उन्हें हंसते-हंसते सहना चाहिए। इस पूरे मुकदमे के बीच हमारी नीति इसी सिद्धान्त पर आधारित है। हम ऐसा करने में सफल हुए हैं या नहीं इसका निर्णय करना हमारा काम नहीं है। हां, हम स्वार्थपरता को छोड़कर अपना काम करते रहे हैं।

अंग्रेज वायसराय ने लाहौर षड्यंत्र केस आर्डिनेंस जारी करते हुए कहा कि षड्यन्त्र के अपराधी शान्ति, सुव्यवस्था एवं कानून को समाप्त करने का प्रयत्न कर रहे थे। इससे जो वातावरण उत्पन्न हुआ, उसने हमें यह अवसर दिया कि हम जनता के समक्ष अपनी बात को उपस्थित करें। इस बात पर विभिन्न दृष्टिकोण हो सकते हैं। मेरा जीवन इतना मूल्यवान नहीं है जितना आप समझते हैं। कम से कम मेरे लिए इस जीवन का इतना महत्त्व नहीं है कि इसे सिद्धान्तों की अमूल्य निधि बलिदान करके बचाया जाए। हम और हमारे साथियों ने सम्मिलित नीति अपनायी है और एक दूसरे के साथ कंधा मिलाकर अन्तिम क्षण तक खड़े रहेंगे। हमें इस बात की चिन्ता नहीं है कि व्यक्तिगत रूप में इस निश्चय का कितना मूल्य चुकाना पड़ता है।

पिता जी, मैं बड़ी चिन्ता अनुभव कर रहा हूं। मुझे डर है कि आप पर दोष लगाते हुए या इससे भी अधिक इस कार्य की निन्दा करते हुए मैं कहीं सभ्यता की सीमा न लांघ जाऊं तथा मेरे शब्द अधिक कठोर न हो जाएं। फिर भी मैं स्पष्ट शब्दों में इतनी बातें अवश्य कहूंगा कि यदि कोई दूसरा व्यक्ति मेरे प्रति इस प्रकार का कार्य करता तो उसे मैं देशद्रोही से कुछ कम न समझता, परन्तु आपके लिए मैं यह बात नहीं कह सकता। बस, इतना ही कहूंगा कि यह कमजोरी थी, निम्न कोटि की मानसिक दुर्बलता। यह एक ऐसा समय था जब हम सबकी परीक्षा हो रही थी। पिता जी मैं यह कहना चाहता हूं कि आप इस परीक्षा में असफल रहे।

आज भी मेरे विचार वही हैं जो पहले थे। मैं चाहता हूं कि इस संबंध में जो गलतफहमियां उत्पन्न हो गयी हैं उसके विषय में लोगों को वास्तविकता का ज्ञान हो जाए। अंत में आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप शीघ्र ही यह पत्र प्रकाशित करा दें।

□

(पृष्ठ ४ का शेष)

श्रावणी उपाकर्म (ऋषितपर्ण) महापर्व

वेदों का महत्त्व—उपर्युक्त स्वाध्याय के विवेचन में वेदों के स्वाध्याय पर विशेष बल दिया गया है। पाठक विचार कर देखें कि ऐसा क्यों? वेद का ज्ञान सर्वज्ञ परमेश्वर का सार्वभौमिक व सार्वकालिक निर्भ्रान्त सत्य ज्ञान है। वेद से भिन्न मनुष्यकृत पुस्तकों का ज्ञान स्वतः प्रमाण न होकर परतः प्रमाण ही है। जैसे मनुष्य अल्पज्ञ है, वैसे ही उसका ज्ञान भी दोषपूर्ण होता है। ईश्वरीय ज्ञान तथा मानवीय ज्ञान में अन्तर यदि समझना हो तो हम अन्धकार व सूर्य से ज्ञान कर सकते हैं। सूर्य के प्रकाश में भ्रान्ति का सर्वथा अभाव रहता है और सूर्य के न होने पर मनुष्य लाखों दीपक जलाकर भी सूर्य जैसा निर्भ्रान्त प्रकाश नहीं कर सकते। इसी प्रकार ईश्वरीय ज्ञान वेदों को भी समझना चाहिए। मनुष्य कितना भी अभ्यास करे, देव कोटि से भी ऊपर ऋषित्व प्राप्त कर ले, पुनरपि उनके लिए ईश्वरीय वेद ज्ञान की आवश्यकता रहेगी ही। महर्षि मनु ने कहा है—

१. पितृ-देव-मनुष्याणां
वेदश्चक्षुः सनातनम्।
मनु० १२।४६।

मनुष्यों, देवों तथा पितरों का वेद शाश्वत चक्षु मार्गदर्शक है।

२. चातुर्वर्ण्यं त्रयो लोकाः
सर्वं वेदात् प्रसिद्ध्यति।
मनु० १२।४९।

और चारों वर्णों तीनों लोकों चारों आश्रमों तथा भूत, भविष्यत् और वर्तमान का समस्त ज्ञान वेदों से ही प्रसिद्ध होता है।

३. वेदाभ्यासो हि विप्रस्य।
तपः परमिहोच्यते॥
मनु० २।१६६।

ब्राह्मण—विद्वान् पुरुषों का वेदों का अभ्यास करना ही महान् तप कहलाता है।

४. योऽनधीत्य द्विजो वेदम्
अन्यत्र कुरुते श्रमम्।
स जीवन्नेव शूद्रत्व-
माशु गच्छति सान्वयः॥
मनु० २।१६८।

जो द्विजन्मा ब्राह्मण क्षत्रिय तथा वैश्य वेदों को न पढ़कर दूसरे कार्यों में ही परिश्रम करते रहते हैं वे जीवनकाल में ही शूद्रभाव को प्राप्त हो जाते हैं। जो विद्वान् वैदिक ज्ञान से दीप्त हो जाते हैं, वे सन्मार्ग के पथिक होने से कुमार्ग से बच जाते हैं। इसीलिए ही मनु जी कहते हैं—

५. वेदाभ्यासोऽन्वहं शक्त्या
महापातकजान्यपि नाशयत्याशु पापानि॥
मनु० ११।१।

वेदाभ्यास करने से विद्वान् पुरुष महान् दुष्कर्मों से भी बच जाते हैं।

अतः समस्त वेद-भक्त आर्य पुरुष श्रावणी पर्व की प्राचीन परम्परा के अनुसार तथा जीवन में ज्ञान की ज्योति जगाने के लिए वेदों का अभ्यास अवश्य करें, वेदों के उपदेष्टा विद्वानों, सन्यासियों व महात्माओं का सम्मान करते हुए उनके प्रवचनों की व्यवस्था करें तथा आधुनिक भौतिकवाद से निरन्तर संघर्ष करते हुए भी वेद-ज्ञान के मूल स्रोत गुरुकुलों की तन, मन, धन से सहायता किया करें, तभी इस पर्व की पवित्रता का आधान मानव जीवन में हो सकता है और जीवन में सन्मार्ग के पथिक बन सकते हैं।

प्रान्तीय आर्य वीर दल, दिल्ली प्रदेश

(अन्तर्गत दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५-हनुमान रोड नई दिल्ली-१)

कार्यकारिणी-सभा-१९८८-८९

प्रधान	श्री सूर्यदेव
अधिष्ठाता	श्री प्रियतम दास रसवन्त
महामन्त्री	श्री श्याम सुन्दर बिरमानी
मन्त्री	श्री डा० शिवकुमार
मन्त्री	श्री सुदर्शन कुमार
कोषाध्यक्ष	श्री पुरुषोत्तम गुप्ता
प्रतिष्ठित सदस्य	श्री डा० धर्मपाल
प्रतिष्ठित सदस्य	श्री महाशय धर्मपाल
प्रतिष्ठित सदस्य	श्री सत्यानन्द आर्य
प्रतिष्ठित सदस्य	श्री जयप्रकाश आर्य
प्रतिष्ठित सदस्य	श्री लाजपत राय निष्काम
प्रान्तीय सचालक	श्री डा० ज्ञानप्रकाश शर्मा
सह-सचालक	श्री खुशीराम शर्मा
उप-सचालक	श्री मांगेराम आर्य
प्रचारक	श्री ईशकुमार नारंग
बौद्धिकाध्यक्ष	श्री ओमवीर शास्त्री
शारीरिक शिक्षक	
कार्यालयाध्यक्ष	श्री कृष्ण पाल
भण्डाराध्यक्ष	श्री जगदीश लाल

क्षेत्र मण्डल सचालक—

चांदनी चौक	—श्री ऊधोदास आर्य
नई दिल्ली	—श्री खैरायती लाल भाटिया
पटपड़गंज	—श्री रोशन लाल गुप्ता
शाहदरा	—श्री श्रद्धानन्द शर्मा
सब्जी मण्डी	—श्री जयकृष्ण आर्य
आजाद पुर	—श्री विमल कान्त शर्मा
मोती नगर	—श्री प्रि० ओमप्रकाश
राजौरी गार्डन	—श्री प्रि० जगदेव जी
जनक पुरी	—श्री डा० दयानन्द
लाजपत नगर	—श्री रामशरण दास आर्य
मालवीय नगर	—श्री राजेन्द्रपाल गुप्ता
सफदर जंग	—श्री रामचन्द्र गुप्ता
नरेला	—श्री मेहरलाल पवार

(डा० धर्मपाल)	(प्रियतम दास रसवन्त)
प्रधान	अधिष्ठाता
दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा	आर्य वीर दल दिल्ली प्रदेश

वन महोत्सव व स्वतन्त्रता दिवस समारोह

नई दिल्ली, अगस्त १३, १९८८ आज एस० एम० आर्य पब्लिक स्कूल पंजाबी बाग के प्रांगण में ४१वां स्वतन्त्रता दिवस समारोह बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर पर श्री मोहिन्दर सिंह साथी, दिल्ली के महापौर, मुख्य अतिथि तथा अध्यक्ष कौंसलर श्री रोशनलाल छाबड़ा थे। इस अवसर पर विज्ञान तथा कृषि की प्रदर्शनी भी आयोजित की गई, जिसका उद्घाटन शिक्षा अधिकारी बी० डी० डी० डोभाल जी ने किया।

इस अवसर पर ध्वजारोहण करते हुए मुख्य अतिथि श्री मोहिन्दर सिंह साथी ने बच्चों व अध्यापिकाओं को राष्ट्र भक्ति व राष्ट्रीय एकता के भव्य कार्यक्रम करने पर बधाई देते हुए उनसे स्वतन्त्रता सेनानियों द्वारा राष्ट्र के लिए किये गये बलिदानों व देश की सांस्कृतिक व भावनात्मक एकता के लिए युवा पीढ़ी को अवगत कराने की दिशा में प्रयास करने का आह्वान किया।

इस अवसर पर वन महोत्सव का भी आयोजन किया गया। मुख्य अतिथि श्री मोहिन्दर सिंह साथी ने भी एक पौधा लगाया। इसके पश्चात् विद्यार्थियों व अभिभावकों ने लगभग १०० पौधे लगाये।

कार्यक्रम के अन्त में मुख्य अतिथि श्री मोहिन्दर सिंह साथी, मेयर व अन्य गण्यमान्य नागरिकों का धन्यवाद करते हुए प्रधानाचार्या श्रीमती शिव बाला भल्ला ने बच्चों, अभिभावकों व अध्यापिकाओं को विभिन्न सांस्कृतिक व योगा, जूडो आदि शारीरिक प्रदर्शन व राष्ट्रवादी गान आदि शानदार ढंग से प्रस्तुत करने के लिए बधाई दी।

आज का युवा वर्ग ही कल देश को नेतृत्व प्रदान करेगा

नई दिल्ली,

आर्यसमाज बाहरी रिंग रोड, विकास पुरी, नई दिल्ली में सोमवार १५ अगस्त १९८८ को आर्यन् क्लब की स्थापना की गयी। श्री ओ०पी० श्रीवास्तव महामन्त्री ने बताया कि यह स्थान युवाओं को आकर्षित करने के लिए एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करेगा। यहाँ पर बैडमिण्टन, टेबल टनिस, कैरम और जूडो कराटे के प्रशिक्षण के अतिरिक्त लाठी और भाला चलाने की शिक्षा भी दी जायेगी। इस क्लब का मुख्य उद्देश्य युवाओं को आर्यसमाज के प्रति आकर्षित करना है। यहाँ पर एक पुस्तकालय की स्थापना भी की जायेगी, जिसमें वैदिक साहित्य और चरित्र निर्माण का साहित्य रखा जायेगा। निर्धन छात्रों के लिए पुस्तकें ऋण रूप में भी दी जाया करेंगी। यहाँ पर सामूहिक मनन मिलन का कार्यक्रम भी होगा, जिसमें सांस्कृतिक कार्यक्रम तथा सामूहिक जलपान हुआ करेगा।

इस अवसर पर श्री रामवीर जी त्यागी; सोमाचार्य ने शुभ कामनाएं देते हुए यह विश्वास व्यक्त किया कि यहाँ युवा ज्ञान/धार्मिक शारीरिक प्रशिक्षण तो प्राप्त करेंगे ही यह योग के द्वारा मन की एकाग्रता के लिए भी संलग्न होंगे। इस अवसर पर यहां की फैडरेशन के मन्त्री श्री एस०के० शर्मा ने भी अपनी शुभकामनाएं दीं। डा० महीपाल सचदेवा, प्रधान आर्यसमाज ने अपना पूर्ण सहयोग प्रस्तावित किया। इस अवसर पर दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने युवा शक्ति को संगठित और जागृत करने के लिए आर्यसमाज विकास पुरी के अधिकारियों को साधुवाद देते हुए यह आशा व्यक्त की कि इन कार्यक्रमों के माध्यम से आर्यजनों का सामाजिक, शारीरिक एवं आत्मिक विकास होगा। उन्होंने यह भी बताया कि दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा प्रतिवर्ष आर्य युवा महासम्मेलन का आयोजन करती है। इस समारोह में अनेक शैक्षणिक और खेल-कूद प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाता है। इस वर्ष भी यह सम्मेलन २१ अक्तूबर से २७ नवम्बर १९८८ तक विभिन्न स्थानों पर आयोजित किया जायेगा। मुख्य समारोह तालकटोरा इन्डोर स्टेडियम में होगा।

सूर्यदेव
महामन्त्री

वेद प्रचार सप्ताह एवं कृष्ण जन्माष्टमी उत्साह पूर्वक मनायें। —सूर्यदेव

श्रावणी उपाकर्म के पर्व के अवसर पर वेद प्रचार सप्ताह को उत्साह पूर्वक मनायें। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री श्री सूर्यदेव ने दिल्ली की समस्त आर्यसमाजों से एक विज्ञप्ति में कहा—हमें निष्क्रियता से न बैठ कर और अधिक उत्साह से वैदिक धर्म के प्रचार प्रसार में संलग्न रहना चाहिए। उन्होंने कहा—कुछ लोग आर्यसमाज की छवि को धूमिल करने के षड्यन्त्र में लगे हुए हैं, हमें इस प्रकार के तत्वों से सावधान रहना चाहिए।

वेद प्रचार सप्ताह के अवसर पर किये जाने वाले यज्ञ में [illegible] के दलित शोषित लोगों को बुलाकर उन्हें यज्ञोपवीत देकर गले लगाना चाहिए। रक्षा बन्धन के [illegible] त्यौहार को समर्पित [illegible] मनाया जाना चाहिए। समाज के पिछड़े वर्गों को हमें यज्ञ वेदी पर लाकर सम्मान देना चाहिए। हमारा प्रयत्न होना चाहिए दलित [illegible] पिछड़े वर्गों के लोग आर्यसमाज में अधिक से अधिक आयें।

श्री सूर्यदेव ने कहा—२७ अगस्त को जहां श्रावणी उपाकर्म पर्व है वहीं रक्षा-बन्धन का पर्व है। साथ ही यह दिवस हैदराबाद सत्याग्रह में बलिदान होने वाले वीरों का स्मृतिदिवस भी है। मैं सभी आर्यसमाजों से यह भी आग्रह करूँगा कि उस दिन अपने बलिदानी वीरों की वीरता को याद करें। वैदिक धर्म की रक्षा के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग करने वाले वीर बलिदानियों पर हमें गर्व है। अपनी भावी पीढ़ी को हम वीरगाथाएं सुनायें तथा अपने बच्चों के यज्ञोपवीत [illegible] करायें। [illegible] जन्माष्टमी पर श्रीकृष्ण के [illegible] चरित्र का साहित्य जनता [illegible] में वितरित किया जाना चाहिए।

(पृष्ठ ५ का शेष)

सत्यार्थ प्रकाश के ये आलोचक

की जनता से छिपाने का बहुत यत्न किया, परन्तु यह घटनाएँ जग-जाहिर हो गयीं। आर्यसमाज ने जबरदस्ती मुसलमान बनाये गये हिन्दुओं को शुद्ध किया और अंग्रेज सरकार ने गुण्डों को यथोचित दण्ड भी दिया। इसी प्रकार मुसल-मान बलवे करते रहे और गांधी जी हिन्दुओं को चुपचाप सहते रहने का उपदेश देते रहे। जब कलकत्ता और बिहार के हिन्दुओं ने कुछ करना चाहा तो गांधी जी ने अन-शन करके उन्हें रोक दिया। मुसल-मानों की खुशामद में गांधी जी इतने लिप्त थे कि उन्हें प्रसन्न करने को सब कुछ कर सकते थे। एक बार अंग्रेजी के अखबार 'लीडर' ने लिखा था कि महात्मा जी मुसल-मानों को मनाने में उसी प्रकार लगे हैं जैसे कि एक आशिक अपनी माशूक को मनाने में लगा रहता है और उसकी तमन्ना यह रहती है कि —

'अगर आं तुर्क शीरा जी
बदस्त आरद दिले मारा।
बखाले हिन्दुअश बख्शम
समरकन्दो बुखारा रा॥''

यदि वह शीराजी तुर्क (शीराज की तुर्क स्त्री) मेरे दिल को हाथ में ले ले। अर्थात् मुझ से अनुरक्त हो जाय तो उसके (कपोल के) काले तिल पर समरकन्द और बुखारा (मध्य एशिया के दो बड़े नगरों) को न्योछावर कर दूं।

'लीडर' ने लिखा था कि मुसल-मानों को मनाने में यही दशा गांधी जी की थी। मुसलमानों को प्रसन्न करने के लिए ही उन्होंने ऋषि दयानन्द को अपशब्द कहे और सत्यार्थप्रकाश को निराशाजनक पुस्तक बताया। आर्यसमाज ने उन को यथोचित उत्तर भी दिया। उनकी भ्रान्ति का खण्डन भी किया जब वे गुरुकुल कांगड़ी में आये तो आर्यसमाजियों ने पूर्ववत ही उनका स्वागत सत्कार किया। और उन्हें बताया कि हम विचारों की स्वतन्त्रता सब के लिए ही चाहते हैं। आप हमारे विरुद्ध लिखें तो हम बुरा नहीं मानते, आपकी अन्य देश सेवाओं का आदर करते हैं। और इस अज्ञान का खण्डन भी।

इस पर गांधी जी खुश्क हंसी हंस रहे थे और उनके चेहरे पर अपराधियों के से भाव झलक रहे थे पछतावा सा भी था। इसी प्रकार इसरायल को जब फिलिस्तीन मिला तो गांधी जी ने मुसलमानों को खुश करने के लिए कुरान और बाइबिल तथा इतिहास के विरुद्ध यह लिखा था कि फिलिस्तीन अरबों का इसी तरह है जैसे अंग्रेजों का इंग्लैंड। फिलिस्तीन में यहूदी तो सहस्रों वर्षों से रहते थे और अरब पहुंचे हजरत उमर के समय में। परन्तु इतिहास की सच्चाई से इन राजनैतिक बाजीगरों को क्या मत-लब। मुसलमान प्रसन्न हो जायें तो सब कुछ मिल जाय। किन्तु मुसल-मान करोड़ों में तीन या चार ही गांधी जी के चेले बने और सब ने अंगूठा दिखा दिया।

ऋषि दयानन्द की बुराई करने और सत्यार्थप्रकाश को बुरा कहने का अपराध भी गांधी जी ने मुसल-मानों को अपना भक्त बनाने की धुन में किया और अपने प्राण तक मुसलमानों की खातिर दिए, पर रहे निराश ही। गांधी जी के इस ऋषि विरोधी लेख पर महाकवि श्री नाथूराम जी 'शंकर' ने लिखा—

शंकर शृगाल डरपोक
कहे केहरी को,
केंचुआ प्रसिद्ध करे
फेंचुआ फणीश को।
मोती का घटावे मान
बेदरी कनौड़ी कौड़ी
गोपद का गर्त गिने
छोहिया नदीश को।
भौंरे को न माने
गुबरीला मकरन्द ग्राही,
तेजहीन जुगनू बतावे
रजनीश को।
ऐसा यदि हो सके तो
गांधी जी बताते रहें,
क्रोधी, असहिष्णु
दयानन्द से मुनीश को।

कवि ने कविता द्वारा गांधी के लेख पर करारी चपतें जमायी हैं।

ओ३म्

साप्ताहिक

आर्य सन्देश

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

वर्ष १२ अंक ४६ | रविवार ४ सितम्बर १९८८ | सृष्टि संवत १९७२९४९०८८ | भाद्रपद २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर ३० पौंड

❋ योगेश्वर श्रीकृष्ण ❋

वर्तमान युग के उद्धर्ता महर्षि दयानन्द ने सदाचार निर्माणार्थ जिस सत्पुरुष की गणना सर्वप्रथम की है वह योगेश्वर हैं। उन्होंने लिखा है—श्रीकृष्ण का जीवन आप्त पुरुषों के सदृश है—देखो श्रीकृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका गुण कर्म स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है। जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्री कृष्ण जी ने जन्म से मरणपर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो ऐसा नहीं लिखा और इस भागवत वाले ने अनुचित मनमाने दोष लगाये हैं—जिसको पढ़-पढ़ा सुन सुना के अन्य मत वाले श्रीकृष्ण जी की बहुत सी निन्दा करते हैं। जो यह भागवत न होता तो श्री कृष्ण जी के सदृश महात्माओं की झूठी निन्दा क्योंकर होती।

महाभारत ग्रन्थ के रचयिता भगवान् व्यास को यह नाम अत्यन्त प्रिय था। उन्होंने विभिन्न पात्रों के मुख से श्रीकृष्ण के अनेक नामों का कीर्तन करवाया है। उन्हें माधव, कृष्ण, पुण्डरीकाक्ष, जनार्दन, सात्वत, यादव, वृषभेक्षण, अज, दामोदर, हृषीकेश, अधोक्षज, नारायण, पुरुषोत्तम, विष्णु, अनन्त, गोविन्दादि अनेक नाम दिए हैं। परन्तु उन सब में श्रीकृष्ण का योगेश्वर नाम सर्वोपरि बना है। गीता की समाप्ति पर संजय के मुख से पाण्डवों की विजय का कारण श्रीकृष्ण का योगेश्वर होना है। संजय ने स्पष्ट कहा है—यत्र योगेश्वर कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम। ऐसा प्रतीत होता है कि गीता का यह अन्तिम श्लोक गीता के प्रथम श्लोक का उत्तर है। यह सर्वविदित है कि गीता का पहला श्लोक धृतराष्ट्र का प्रश्न है—धर्म क्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः। मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय॥ हे संजय! धर्म भूमि कुरुक्षेत्र में एकत्र होकर मेरे और पाण्डु के पुत्रों ने



क्या किया? यहां धृतराष्ट्र का संजय से ऐसा पूछना आवश्यक था, क्योंकि कुछ ही दिन पहले कूटनीतिज्ञ कणिक की सम्मति के आधार पर संजय को विराट् नगरी में पाण्डव-शिविर में भेजा गया था। हे संजय! तुम वहां जाकर और पाण्डवों की धार्मिक भावना को उद्बुद्ध करके उन्हें युद्ध से विरत करना। इस कार्य के करने में तुम कुशल हो।' राजा का आदेश पाकर संजय गये और उन्होंने संसार की नश्वरता और वैराग्य का ऐसा उपदेश दिया जिससे उसे निश्चय हो गया कि धर्मराज युधिष्ठिर युद्ध से विरत हो जायेंगे। लौटकर महाराज धृतराष्ट्र को यह पूर्ण विश्वास दिला दिया कि युद्ध न होगा और तुम्हारी गद्दी सुरक्षित रहेगी परन्तु कुरुक्षेत्र की युद्धभूमि में अपने और पाण्डु के पुत्रों को युद्ध की इच्छा से एकत्रित हुआ सुन उन्हें अपनी गद्दी हिलती नजर आयी और उन्होंने संजय से पूछ लिया कि तुम कहते तो कुछ थे और हो कुछ रहा है। संजय ने अपनी विवशता प्रकट करते हुए कहा कि मुझे तो एक ही बात नजर आ रही है। कि जहां योगेश्वर कृष्ण हैं और जहां धनुर्धर अर्जुन हैं वहीं श्री विजय, भूति और ध्रुवानीति सदा विराजती हैं यह मेरा मत है। □

इस अंक में

सम्पादक—प० यशपाल 'सुधांशु' एम०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

प्रभु भक्ति का वैदिकस्वरूप

लेखक—आचार्य भद्रसेन, अजमेर

आत्मिक शान्ति और पूर्णानन्द को प्राप्त करने के लिए ही यह जीव मानव देह में अवतरित हुआ है। यही इसके जीवन का चरम लक्ष्य है। इसलिए ही यह जीवन सुख और शान्ति का अभिलाषी बनकर उसकी प्राप्ति के लिए दर ब दर भटकता और ठोकरें खाता फिरता है। इसके जीवन का सारा क्रिया कलाप सारी उधेड़-बुन केवल जीवन को शान्त और सुखमय बनाने के लिए ही है। किन्तु इस जीवन संग्राम में इतनी खटपट और उधड़ बुन करने पर भी जीव उस सच्चे सुख और शान्ति से वंचित ही रहता है, जिस की उसे चिर अभिलाषा है। इतना ही नहीं, प्रत्युत कभी कभी तो वह जीवन में सुख और शान्ति के स्थान पर अत्यन्त क्लेश, दुःख और अशान्ति का ही अनुभव करता है। संसार के नाना प्रकार के सुखप्रद विषयों और वैभवों का भोग करता हुआ भी वह उनमें उस शान्ति और आनन्द का अनुभव नहीं करता, जिसकी उसे चिर अभिलाषा है। ऐसा क्यों? इसका मात्र उत्तर यही है कि जीव जिन भौतिक पदार्थों में परमानन्द और परम शान्ति का अभिलाषी बन भटक रहा है, वे पदार्थ स्वयं सुख और शान्ति से रहित हैं, कोसों दूर हैं। भला जिसके पास जो वस्तु है ही नहीं, वह दूसरे को क्या दे सकेगा? जो स्वयं भूख-प्यास से तड़फ रहा है, वह हमें कैसे स्वादु भोजन तथा मधुर जल का पान करा सकेगा और हमारी भूख को शान्त कर सकेगा? इसीलिए आत्मा जब इन भौतिक पदार्थों में भटक कर निराश हो जाता है, उसे अपने अभीष्ट की प्राप्ति नहीं होती, इतना ही नहीं प्रत्युत विश्व के विविध विषय-भोग और आमोद प्रमोद सुख और शान्ति के स्थान पर उल्टा उसकी दुःख और अशान्ति का कारण बन जाते हैं, तब वह निराश हो जाता है। उसका आत्मा संतप्त और व्याकुल हो उठता है उसे चारों ओर विषय वासनाओं की जलती हुई प्रचण्ड ज्वालाएं व्याकुल और अशान्त बना देती हैं। उस समय उसे सुख और शान्ति के परम धाम प्रभु का स्मरण आता है और वह पश्चात्ताप करता हुआ वेद के शब्दों में प्रभु से पुकार उठता है।

ये मा तपन्त्यभित सपत्नीरिव पर्शव। ऋग्वेद १।१०५।८

हे दीनबन्धो! हे अधमोद्धारक, पतितपावन, प्रभो! अब तो मुझे ये तृष्णाएं, ये विश्व की क्षणिक कामनाएं और विषयों की विष भरी वासनाएं सपत्नियों के समान सन्तप्त और व्याकुल कर रही हैं। भगवन्! अब मैं सब ओर से निराश होकर और तेरा भक्त बनकर तेरे द्वार पर आया हूं। हे दीनबन्धो! क्या इस दीन की पुकार न सुनोगे? क्या अपने इस भक्त को विश्व की क्षणिक वासनाओं और तृष्णाओं से हटाकर अपनी प्रेममयी पावन गोद में नहीं लोगे? उस समय ऋषि दयानन्द के शब्दों में प्रभु उस अतिव्याकुल भक्त की करुण पुकार को सुनते हैं और उसे अपनी सर्वशक्तिमयी गोद में ले लेते हैं। प्रभु अपने शरणागत उपासक को निज शरण में कैसे ले लेते हैं। इस सम्बन्ध में ऋषि दयानन्द 'सत्य धर्म विचार" नामक पुस्तक में लिखते हैं—

"जब सच्चे मन से अपने आत्मा" प्राण और सब सामर्थ्य से जीव भगवान को भजता है तो वह करुणामय परमेश्वर उसको अपने आनन्द में स्थिर कर देते हैं। जैसे कोई छोटा बालक घर के ऊपर से अपने माता पिता के पास नीचे आना चाहता है या नीचे से ऊपर उनके पास जाना चाहता है तब हजारों आवश्यक कामों को भी छोड़कर अपने लड़के को उठा कर गोद में ले लेते हैं कि कहीं हमारा लड़का गिर पड़ेगा तो उस को चोट लगने से दुःख होगा और जैसे माता-पिता अपने बच्चा का सुख में रखने की इच्छा और पुरुषार्थ सदा करते रहते हैं। वैसे ही परम कृपानिधि परमेश्वर की ओर जब कोई सच्चे आत्मभाव से चलता है, तब वह प्रभु अनन्त शक्ति रूप हाथों से उस जीव को उठाकर अपनी गोद में सदा के लिए ले लेते हैं, फिर उसको किसी प्रकार का दुःख नहीं होने देते।"

वास्तव में योगिजनों के शब्दों में इस अविद्या आदि पञ्च क्लेशों में सन्तप्त और परिणाम, ताप, संसार आदि दुःखों से दुःखी जीव के लिए एकमात्र वह सच्चिदानन्द प्रभु ही सच्ची शान्ति और परम सुख का सहारा है। इसीलिए वेद कहता है—

न त्वदृते अमृता मादयन्ते।

हे आनन्दकन्द, सच्चिदानन्द प्रभो! तेरी शरणागति के बिना तेरे यह अमृत पुत्र पूर्णानन्द को प्राप्त नहीं कर सकते।"

वास्तव में जो मनुष्य अपने जीवन को कदाचारों और कुत्सित संस्कारों से हटाकर उस प्रभु की शरण में आ जाता है, दूसरे शब्दों में वह अपनी अधमावस्था पर पश्चात्ताप करता हुआ उसका परित्याग कर सत्पुरुष अर्थात् सन्मार्गगामी बन जाता है भगवान् अवश्य उसके ऊपर सब प्रकार के सुखों की वर्षा करते हैं। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं। इसीलिए वेद कहता है—

'त्वमग्ने इन्द्रो वृषभ सतामसि"। ऋग्वेद २।१।३

हे परमज्योतिर्मय प्रभो! तुम ही तो सत्पुरुषों के लिए, अपने अनन्य भक्तों के लिए, इन्द्र और वृषभ बनकर उनके ऊपर समग्र ऐश्वर्य और सकल सुखों की वर्षा करने वाले हो।

"मा ते भय जरितारम्" १।१८९।४

तेरे प्रेमी भक्त को भय, चिन्ता और दुःख कहाँ? वेद के उपर्युक्त वचनों से सिद्ध होता है कि एकमात्र प्रभुभक्ति ही इस भवबन्धन में पड़े जीव को सुख, शान्ति और परमानन्द प्रदान करने वाली है। बिना ईश्वर-आराधना के आत्मा को परम शान्ति और परमानन्द उपलब्ध होना कठिन ही नहीं, अपितु नितान्त असम्भव है।

अब उस प्रभुभक्ति का क्या स्वरूप है, थोड़ा इस पर विचार करना चाहिए। भक्ति में तीन बातों का ज्ञान लेना परमावश्यक है। हम किसकी भक्ति करें? कैसे बनकर करें? और क्यों करें? बिना इन तीनों बातों के जाने, जो जन भक्ति मार्ग पर चलने लगते हैं, वे सदा अपने चरम लक्ष्य से वंचित ही रहते हैं। उन्हें निज अभीष्ट की प्राप्ति नहीं होती। अतः भक्ति मार्ग के पथिक को उपर्युक्त तीनों बातों को जान लेना परमावश्यक है।

भक्त का पहला कर्तव्य है, कि वह यह विचार करे कि जिसको वह अपना आराध्य देव बनाने चला है, जिस सुन्दर स्वरूप को वह अपने हृदय-मन्दिर में बसाना चाहता है, उसका क्या स्वरूप है? उसकी उपासना करने पर मुझे अपने चरम लक्ष्य की प्राप्ति होगी या नहीं? भक्त कैसे आराध्यदेव की आराधना करे। इस सम्बन्ध में अथर्ववेद में एक सुन्दर मन्त्र आता है—

तमु ष्टुहि यो अन्त सिन्धु सूनु सत्यस्य। युवानमद्रोघवाच सुशेवम्॥ अथर्व ८।१।१

वेद कहता है, हे भक्त यदि तू सच्ची शान्ति और परम आनन्द को प्राप्त करना चाहता है तो 'तमु-ष्टुहि' उस ही प्रभु की उपासना कर 'य अन्त सिन्धु' जो इस संसार में रम रहा है। 'सत्यस्य सूनु' जो सदा सत्य की ओर ही प्रेरणा करता है। 'युवानम्' जो सर्वदा युवा अर्थात् एक सा रहता है। 'सुशेवम्' जो सारे बलों, सुखों और आनन्द का भण्डार है। 'अद्रोघवाचम्' जिसकी वाणी में किसी के प्रति असत्य, द्रोह और विश्वासघात नहीं है।

भक्त सोचता है, मैं अपने प्रभु को कैसे मिलूं? मेरा यह प्रियतम मुझे कहाँ मिलेगा? और नाना प्रकार की तृष्णाओं और आसुरी वासनाओं रूपी तरंगों से तरंगित काम, क्रोध, राग, मोह, ईर्ष्या, द्वेष आदि जल जन्तुओं से पूर्ण इस भवसागर में मेरा कौन सहारा है? इन दोनों आशंकाओं का समाधान वेद का एक शब्द करता है। 'तमु स्तुहि यो अन्त सिन्धु' भक्त तू उस प्रभु की स्तुति कर जो सर्वव्यापक और सर्वान्तर्यामी है। उस आराध्यदेव की आराधना करने के लिए तुझे अन्यत्र कहीं भटकना नहीं पड़ेगा। क्योंकि,

वह तेरा आराध्य देव ही अन्तर्यामी और तेरे रोम रोम में रम रहा है। फिर तुझे इधर-उधर जाने और भटकने की आवश्यकता क्या? और इसमें भी कुछ सन्देह नहीं कि यह संसार एक अथाह सागर है और यह जीव अपनी दुर्वासनाओं और निर्बलताओं के वशीभूत होकर इसमें गोते खा रहा है। परन्तु यह भी ध्रुव सत्य है कि जो भक्त उस करुणामय प्रभु का आश्रय ले लेता है, उसकी प्रेममयी गोद में बैठ जाता है, और उसकी शरण में आ जाता है वह इस भवसिन्धु से तर कर पार हो जाता है। फिर उसे बार-बार इस भवसिन्धु में गोते खाने नहीं पड़ते।

पापों से छुटकारा कैसे मिले

लेखक—यशपाल आर्यबंधु,
आर्य निवास, चन्द्र नगर, मुरादाबाद—२४४०३२

★

जब हम कोई कुकर्म अथवा पाप करने लगते हैं तो हमारे मन में भय, शंका और लज्जा उत्पन्न हो जाती है, जो यह संकेत है परम पिता परमात्मा की ओर से कि जो कार्य तुम करने जा रहे हो, वह तुम्हें नहीं करना चाहिए और जब हम कोई सत्कर्म करने लगते हैं तो हमारे मन में आनन्द और उत्साह की अनुभूति होती है, जो इस बात का संकेत है कि यह कार्य अवश्य करना चाहिए। किन्तु हम जन्म-जन्मान्तर के अपने कुसंस्कारों के कारण और अपने कर्म-स्वातन्त्र्य के कारण इन संकेतों की अवहेलना कर जाते हैं और कभी तो पापों में लिप्त हो जाते हैं और कभी पुण्यों की उपेक्षा कर देते हैं। और यदि कभी प्रभु की कृपा से हमारे मन में पापों से उबरने का विचार आ भी जाए तो यह नितान्त क्षणिक होता है और हम फिर पाप-पंक में फंस जाते हैं। फिर पापों से छुटकारा कैसे हो— यह प्रश्न है।

पूर्व इसके कि हम उन उपायों अथवा साधना की चर्चा करें कि जिन से पापों से बचा जा सकता है, यह जान लेना अत्यन्त आवश्यक है कि छूटना किस से है। पाप कर्म के फल से, होना तो यह चाहिए कि हम पापकर्म से या उसकी वासना से छूटें पर होता इसके विपरीत ही है। हम पाप वासना से नहीं, पाप के फल से छूटना चाहते हैं। जैसा कि संस्कृत के किसी कवि का कथन है कि— 'पुण्यस्य फलमिच्छन्ति पुण्यं नेच्छन्ति मानवाः। न पापफलमिच्छन्ति पापं कुर्वन्ति यत्नतः॥' अर्थात् मनुष्य पुण्य के फल की तो इच्छा करते हैं, किन्तु पुण्य कर्म को नहीं अर्थात् पुण्य नहीं करते फिर भी पुण्य के फल की इच्छा करते हैं, विपरीत इसके लोग पाप के फल की तो इच्छा नहीं करते पर प्रयत्नपूर्वक पापकर्म करते फिरते हैं। अर्थात् जो नहीं करते, उसका तो फल चाहते हैं और जो करते हैं, उसके फल से बचना चाहते हैं। ऐसा कैसे हो सकता है?

बोकर के बीज दु:ख के
सुख कैसे पा सकोगे।
पहले बबूल बो कर
क्या आम खा सकोगे॥

ईश्वर है न्यायकारी
कर्मों के फल का दाता।
उस से किसी कर्म को
कैसे छुपा सकोगे॥

वैदिक सिद्धान्त यह है कि किए हुए कर्म का फल अवश्यमेव भोगना पड़ता है। अत: पाप के फल से छुटकारे की हमारी चाहना व्यर्थ है। उसके लिए प्रयत्न करना भी बेकार है। उसे तो भोगना ही पड़ेगा इसलिए पापों से छूटने का अर्थ पापकर्म से या उसकी वासना से छूटना है। हम जो भी कर्म करते हैं, वह अपना एक संस्कार छोड़ जाता है। यह संस्कार ही वह वासना अथवा अभ्यासांश है, जो पुन: वैसा कर्म करने को प्रेरणा देता रहता है। यदि हम पाप की वासना को समाप्त कर दें तो पापों से बच सकते हैं। अर्थात् यदि हम इस प्रेरक-तत्त्व को काट दें, तो हम आगे को वैसे पाप कर्म करने से बच सकते हैं और हम पापों से छुटकारा पा सकते हैं।

अब यह पाप-वासना कैसे कटे, इसकी चर्चा करते हैं। शास्त्रों में इनके लिए प्रायश्चित्त का उपयोग परम हितकारी बताया गया है। पाप-वासना के उन्मूलन में प्रायश्चित्त की बहुत बड़ी उपयोगिता है। प्रायश्चित्त से कृत कर्म पर पश्चात्ताप होता है। यह पश्चात्ताप ही वह कचा है जो पाप के उस प्रेरक अंश अथवा वासना को काट देती है। प्रायश्चित्त से जहाँ हम अपने पूर्व कृत कर्मों पर पश्चात्ताप करते हैं, वहाँ भविष्य में वैसे कर्म न हों, इसके लिए भी सचेत एवं सचेष्ट रहते हैं। इसीलिए प्रायश्चित्त के सम्बन्ध में अंग्रेजी के किसी विद्वान् ने ठीक ही कहा है कि—

"A true repentance has a double aspect. It looks upon the past with a weeping eye and upon the future with a watchful eye."

अर्थात् सच्चा प्रायश्चित्त दोहरा कार्य करता है। भूतकाल पर पश्चात्ताप और भविष्य पर निगरानी। जब निगरानी रहेगी तो पापों से बचना स्वाभाविक है।

पर इससे कोई यह न समझे कि प्रायश्चित्त से कृत कर्मों के फल का भी छुटकारा हो जाता है। इस सम्बन्ध में महर्षि का कथन है कि- "अब कोई शंका निकाले कि पूर्व कृत पापों का दण्ड जीव को बिना भोगे छुटकारा नहीं मिल सकता यह हमारा मत है, तो फिर पश्चात्ताप का कुछ भी उपयोग नहीं है क्या? इसका उत्तर यह है कि पश्चात्ताप से पाप-क्षय नहीं होता, परन्तु आगे पाप करना बन्द हो जाता है।

कृत्वा पापं हि सतप्य तस्मात् पापात् प्रमुच्यते। नैवं कुर्यां पुरस्तादिति निवृत्या पूयते तु स:। चाहे कितना भी पश्चात्ताप किया जावे तो भी कृत पापों को तो भोगना ही होगा। इसका दृष्टान्त—जैसे कोई कूएं में गिरा और उसके हाथ-पांव टूट गए तो अब चाहे कितना पश्चात्ताप करे, तो भी उसके हाथ-पांव जो टूटे तो टूट ही चुके वह तो कुछ भी किए नहीं छूट सकता। हां। आगे के लिए कूए में न गिरेगा, इतना ही केवल होगा।" (देखें—छठा पूना प्रवचन)

स्पष्ट है कि पश्चात्ताप से पाप-क्षय न होते हुए भी पाप-वासना क्षय हो जाती है। और मनुष्य आगे को पापों से बच जाता है। यह कोई छोटी बात नहीं। हमारा भावी जीवन निष्पाप हो जाए, इससे बढ़कर और प्रायश्चित्त का फल हम क्या चाहते हैं। जब यह सिद्धान्त है कि प्रत्येक कर्म का फल अवश्य मिलता है, तो प्रायश्चित्त भी तो अन्तत: एक कर्म ही है, फिर उसका फल क्यों नहीं मिलेगा। वह फल हमें पाप वासना के क्षय के रूप में मिला करता है। अत पाप-वासना के क्षय में प्रायश्चित्त की उपयोगिता असंदिग्ध है।

कभी-कभी ऐसा भी देखने में आता है कि अपने पिछले कर्मों पर पछतावा करते हुए एवं भविष्य में वैसा कर्म न करने का सत्संकल्प लेने पर भी मनुष्य पाप कर बैठता है। यह तब होता है कि जब पाप के संस्कार प्रबल हों और मन का उनके साथ पूर्ण सहयोग हो अथवा यूं कहिए कि मिली-भगत हो।

शास्त्रों में देवासुर संग्राम का वर्णन आता है। उसके अनुसार देवता लोग दिन भर युद्ध करके राक्षसों को मार डालते थे और तब रात्रि को विश्राम किया करते थे। पर होता यह था कि अगले दिन वही राक्षस जिन्हें रात्रि से पूर्व मार डाला गया था, पुन जीवित हो-होकर युद्ध के लिए आन उपस्थित होते थे। विपरीत इसके देवताओं में जो मर जाते थे, वे पुन: जीवित नहीं हो पाते थे। इस प्रकार देवताओं की संख्या तो निरन्तर घटती जाती थी पर राक्षसों की संख्या पर युद्ध का कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। देवतागण उससे बहुत चिन्तित और व्याकुल हो उठे। अत: चिन्तित देवगण अपने गुरु बृहस्पति के पास गए और जाकर सब वृत्तान्त कह सुनाया। गुरु ने अपने पुत्र 'कच' को इस कार्य के लिए नियुक्त किया कि जाकर पता लगाए कि ऐसी कौन सी अमर जड़ी राक्षसों के पास है कि जिस से वे मर-मर कर भी जी उठते हैं। राक्षसों के खेमे में कच पहुंचा तो वहाँ जासूस को आया देख कर एक खलबली सी मच गई। राक्षस लोग अपने गुरु शुक्राचार्य के पास पहुंचे और जासूस के आने की सूचना दी। शुक्राचार्य ने कहा कि मुझे पहले ही इस बात का पता है और मैंने अपनी पुत्री देवयानी को कच पर निगरानी रखने और उसे वश में करने को नियुक्त कर दिया है। कच देवयानी पर मोहित हो गया और अपने आने के उद्देश्य को ही भूल गया। देवयानी उसे शुक्राचार्य के पास ले गई और शुक्राचार्य ने उसे संजीवनी विद्या सिखा दी। अब कच वहीं पर रह कर मरे हुए राक्षसों को पुन जीवित करने लगा। इस प्रकार राक्षस मर-मर कर भी जी उठने लगे और देवताओं को परेशान करने लगे।

हमारे शरीर में भी प्राय: प्रतिक्षण देवासुर संग्राम होता रहता है। हम नित्य रात्रि को बुरे विचार रूपी राक्षस को मार कर सोते हैं किन्तु प्रात: जब अपने काम-काज में लगते हैं तो देखते हैं कि जिन बुरे विचारों को रात्रि में मार कर सोये थे वे पुन: जी उठे हैं अच्छे विचार रूपी देवताओं को परास्त करने में लगे हैं। ऐसा क्यों होता है? इसलिए कि हमारा अपना मन कच बन कर लुभावनी माया-रूपी देवयानी पर मोहित हो जाता है और बुरे विचार-रूपी राक्षसों को जीवित कर देता है।

(शेष पृष्ठ ८ पर)

श्रीकृष्ण : जिसे हमने समझा ही नहीं

लेखक—श्री यशपाल आर्य बन्धु, आर्योपदेशक,
आर्य निवास, चन्द्र नगर, मुरादाबाद

★

मानवमात्र का यह स्वभाव है कि वह अपने महापुरुषों को प्रायः समझ नहीं पाता। और यदि समझने का प्रयत्न भी करता है तो उस में भी प्रायः वह भूल ही करता है। संसार भर के महापुरुषों के साथ में कुछ ऐसी गड़बड़ हुई है, कि लोग उन्हें समझने में भूल ही करते रहे हैं। योगेश्वर श्रीकृष्ण इसका अपवाद नहीं हैं। उन्हें भी संसार ने समझने में बड़ी भूल की है। इसी के परिणाम स्वरूप उस महामानव के अति पावन, अति उज्ज्वल स्वरूप को विकृत कर प्रस्तुत किया है। जिस महामानव का चरित्र महाभारत में अति उज्ज्वल, अति पावन एवं सर्वगुणसम्पन्न महापुरुष के रूप में चित्रित किया गया है। उसी को अभागी हिन्दू जाति के कर्णधारों ने पुराणों में तथा अन्य अनेकों ग्रंथों एवं काव्यों में अति विकृत, अति घिनौने रूप में प्रस्तुत किया है। और विडम्बना यह है कि यह विकृत चरित्र इतना प्रचारित हो चुका है कि यदि कोई उस का वास्तविक सही स्वरूप प्रस्तुत करे भी तो लोग सहसा उसे मानने के लिए तैयार नहीं।

अब लोग योगेश्वर श्री कृष्ण को क्या समझने लगे हैं? बाबू बंकिम चन्द्र चटोपाध्याय के शब्दों में—"यही कि वे चोर थे। दूध, दही, मक्खन चुरा कर खाया करते थे, युवावस्था में व्यभिचारी थे, और उन्होंने बहुतेरी गोपियों के पातिव्रत्य धर्म को नष्ट किया, प्रौढ़ावस्था में वंचक और शठ थे। उन्होंने धोखा दे कर द्रोणादि के प्राण लिये।—क्या इसी का नाम भगवच्चरित्र है?" (कृष्ण-चरित्र, पृष्ठ २)

श्री कृष्ण को लौकिक धरातल से हटा कर अलौकिक पृष्ठभूमि पर खड़ा किया जाना और उस के सहज मानवीय स्वरूप को विस्मृत कर उसे अप्राकृतिक रूप में प्रस्तुत करना ही श्री कृष्ण-चरित्र की प्रथम विकृति है। डाक्टर भवानीलाल भारतीय का यथार्थ कथन है कि—"जब कृष्ण को ईश्वर मान कर उस के अवतार के रूप में उपासना देश में प्रचलित हुई तो कृष्णोपासना के आधार पर अनेक सम्प्रदाय स्थापित हो गए।" (श्रीकृष्ण-चरित्र, पृष्ठ १०) डा० भारतीय आगे लिखते हैं कि—"इन सभी सम्प्रदायों के जन्म से पूर्व तक कृष्ण आदर्श चरित्रवान, परम सात्विक आचार-सम्पन्न और प्रतिभाशाली महापुरुष समझे जाते थे। परन्तु तांत्रिक साधनों के प्रचार के कारण वैष्णव सम्प्रदायों में भी वासनामूलक शृंगार का मिश्रण होने लगा। महाभारत के कृष्ण जहां मर्यादापोषक, संयमी और सत्त्वगुण-सम्पन्न हैं, वहां पुराणों, काव्य ग्रन्थों एवम् अन्य साम्प्रदायिक ग्रन्थों में उन के जीवन को अत्यन्त विलासपूर्ण, वासनायुक्त और रोमान्टिक बनाने का प्रयत्न किया है। भागवत और ब्रह्मवैवर्त जैसे पुराणों, जयदेव के गीत-गोविन्द जैसे काव्यों और गोपाल सहस्रनाम जैसे स्तोत्रों में सर्वत्र कृष्ण के परदारागामी स्वरूप का चित्रण किया गया है। गोपाल; कामिनीजार, चोर जार शिखामणि जैसी उक्तियां इन्हीं ग्रन्थों की हैं। भागवत में परदारागमन के संकेत स्पष्ट हैं। जिन के कारण राजा परीक्षित को कृष्ण के चरित्र के विषय में शंका होती है, परन्तु शुकदेव जी, समर्थ व्यक्ति की समर्थता की दुहाई दे कर ही अपने कर्त्तव्य की इति श्री समझ बैठते हैं। ब्रह्मवैवर्त पुराण में राधा का समावेश करा कर विकृति के इस पहलू को और भी उभार दिया गया है। वहां राधा कृष्ण के सम्भोग का जो कुत्सित वर्णन मिलता है। उसे देख कर लज्जा भी लज्जित होती है।" (द्रष्टव्य श्री कृष्ण-चरित, पृष्ठ १०-११)

आश्चर्य और दुःख का विषय तो यह है कि धर्म ग्रन्थ माने जाने वाली पुस्तकों का जब यह हाल है, तो अन्य पुस्तकों का क्या हाल होगा? फिर विद्यापति और चण्डीदास सरीखे व्यक्तियों को खुल कर खेलने से कौन रोक सकता है? वस्तुतः भागवत आदि पुराणों ने श्री कृष्ण सरीखे निर्दोष व्यक्तित्व पर जो मिथ्या लांछन लगाए गए हैं। वह उन-उन ग्रंथों के लेखकों की अपनी ही कुत्सित भावनाओं के ही द्योतक कहे जा सकते हैं। वह इसलिए कि योगेश्वर श्री कृष्ण का चरित्र इतना उज्ज्वल, इतना पावन है, कि उस पर कोई लांछन लगाया ही नहीं जा सकता। आधुनिक युग में महर्षि प्रथम महामानव थे कि जिन्होंने उच्च स्वर में यह उद्घोष किया कि—"देखो! श्री कृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उन का गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है। जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्री कृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो, ऐसा नहीं लिखा। और इस भागवत वाले ने अनुचित मनमाने दोष लगाए हैं। दूध, दही, मक्खन आदि की चोरी और कुब्जा-दासी से समागम, परस्त्रियों से रासमण्डल, क्रीड़ा आदि मिथ्या दोष श्री कृष्ण जी पर लगाए हैं। इस को पढ़-पढ़ा, सुन-सुना के अन्य मत वाले श्री कृष्ण जी की बहुत सी निन्दा करते हैं। जो यह भागवत न होता तो श्री कृष्ण जी के सदृश महात्माओं की झूठी निन्दा क्यों कर होती।" (एकादश समुल्लास)

जहां तक महाभारत का प्रश्न है। उस में गोपी प्रसंग की कहीं कोई चर्चा दिखाई नहीं देती। इस सम्बन्ध में स्वनामधन्य पण्डित चमूपति जी लिखते हैं कि—"महाभारत में गोपी-प्रेम की गन्ध भी नहीं। और किसी प्रसंग में कृष्ण की रासलीला या गान का वर्णन नहीं। यहां तक की महाभारतकार ने कृष्ण के होठों से वंशी तक न छुआने की कसम खा ली है। महाभारत का कृष्ण चक्रधर है, गदाधर है, मुरलीधर नहीं।" (द्रष्टव्य योगेश्वर कृष्ण पृष्ठ २६-२७) अतः यही कहा जा सकता है कि श्री कृष्ण जी का वास्तविक चरित्र वही है, जो महाभारत में वर्णन किया गया है। हमें उसी चरित्र का ही पाठ करना एवं अनुकरण करना चाहिए। यदि तात्त्विक दृष्टि से देखा जाए तो सम्पूर्ण महाभारत ही श्री कृष्ण जी की गौरव गाथा गा रहा है। यदि उस में से श्री कृष्ण जी को हटा दें, तो फिर महाभारत में शेष रह ही क्या जाता है? महाभारत में उन्हें सर्वपूज्य, श्रेष्ठतम महामानव के रूप में चित्रित किया गया है। ऐसा उत्तम जिस के लिए बंकिम बाबू को कहना पड़ा था कि, "ऐसा सर्वगुणान्वित और सर्व पाप रहित आदर्श चरित्र और कहीं नहीं है, न किसी देश के इतिहास में और न किसी काव्य में।"

महाभारत के अध्ययन से हमें योगिराज श्रीकृष्ण जी के चरित्र में आर्य जीवन का सर्वांगीण विकास दिखाई देता है। जीवन का ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं, जिस में उन्हें सफलता न मिली हो। वे एक आदर्श विद्यार्थी हैं, एक आदर्श गृहस्थी हैं, एक आदर्श राजनीतिज्ञ हैं, एक आदर्श राजा हैं, एक आदर्श योद्धा हैं, एक आदर्श मित्र हैं, एक आदर्श योगी हैं। वह कौन सा सद्गुण है जो महाभारत के कृष्ण में दृष्टिगोचर नहीं होता। आज भारत को महाभारत के कृष्ण की आवश्यकता है, पुराणों के कृष्ण की नहीं। ऐसे कृष्ण की जो चक्रधर हो, गदाधर हो, असिधर हो, मुरलीधर नहीं। उस कृष्ण की जो व्यामोह में पड़े अर्जुन को उस के कर्त्तव्य की याद दिला सके। वह कृष्ण जो जागृति का शंख फूंक सके और दे सके एक नया उद्बोधन इस सोये हुए राष्ट्र को। आज ऐसे ही कृष्ण की आवश्यकता है भारत वर्ष को।

●

मृत्यु : आध्यात्म पथ

लेखक—रघुनाथ प्रसाद पाठक

शरीर के साथ जीव के संयोग को जन्म और वियोग को मृत्यु कहते हैं। जो जन्म लेता है वह अवश्य मरता है और जो मरता है वह अवश्य जन्म लेता है। इस प्रकार [illegible]ना मृत्यु की तैयारी होती है और [illegible]ना नये जीवन में जन्म होने का [illegible] होता है। जन्म और मृत्यु इन दोनों पर मनुष्य का अधिकार नहीं होता। हम सब को मृत्यु का कृतज्ञ होना चाहिए क्योंकि वह मनुष्य की अल्पज्ञता और अज्ञान को उस पर स्पष्ट कर देती है।

प्रत्येक मनुष्य जन्म मृत्यु की दृष्टि से समान होता है। मृत्यु के पाश से कोई भी नहीं बचता चाहे वह राजा हो या रंक, शासक हो या शासित, शोषक हो या शोषित स्वामी हो या दास। मृत्यु शय्या पर पड़े प्रत्येक व्यक्ति को मृत्यु आने पर अपने जीवन भर का स्वरूप प्रतिलक्षित हो जाता है! उस समय प्राणी को अपने तथा परमात्मा के वास्तविक सम्बन्ध का भी भान हुए बिना नहीं रहता।

महान् सिकन्दर ने तत्त्ववेत्ता डाइयनोज को मानवीय हड्डियों के एक पार्सल को ध्यान पूर्वक देखते हुए पूछा "आप क्या चीज देख रहे हैं?" तत्त्ववेत्ता ने उत्तर दिया "जो वस्तु मुझे ज्ञात नहीं हो रही है।" सिकन्दर ने फिर "पूछा आपको क्या वस्तु ज्ञात नहीं हो रही है?" तत्त्ववेत्ता ने कहा "तुम्हारे पिता और उनके नौकरों की हड्डियों के मध्य भेद!"

एक स्त्री का इकलौता बेटा मरा। वह पुत्रशोक से विह्वल हो उसकी लाश को लेकर महात्मा बुद्ध के पास गई और उनसे प्रार्थना की कि इसे जिला दो! महात्मा ने कहा "मैं तुम्हारे पुत्र को जिला दूंगा तुम उस घर से मिट्टी ले आओ जिस में कभी व्यक्ति न मरा हो!" वह स्त्री तमाम गांव में घूम आई परन्तु उसे ऐसा कोई घर न मिला जिसमें कभी किसी की मौत न हुई थी। इस निराशा से उसे यह उद्बोधन हुआ कि मृत्यु के चंगुल से कोई नहीं बचता और इसी से उसे सान्त्वना प्राप्त हुई। वस्तुतः प्रिय वस्तुओं के वियोग से दुःख होता है और यही स्वाभाविक भावना मृत्यु को भयावना रूप दे देती है। अन्यथा मृत्यु बड़ी व्यापक और अवश्यम्भावी घटना परमात्मा के द्वारा, मानव जाति के लिए अभिशाप बने यह समझ में आने वाली बात नहीं है। यथासमय पर होता है। फूल समय पर मुर्झाते हैं और सितारे समय पर छिपते हैं। परन्तु मृत्यु का कोई मौसम नियत नहीं होता। मनुष्य को मृत्यु कहीं भी पकड़ सकती है अतः प्रत्येक स्थान पर मरने के लिए तय्यार रहने में ही बुद्धिमत्ता है।

मृत्यु बड़ी सुहावनी और आनन्दप्रद होती है। मनुष्य अपना जीवन भार सुन्दरता से सजा सके इसीलिए उसका सुख और आनन्द मनुष्य से ओझल रखा जाता है। यदि मनुष्य की मृत्यु न हुआ करती तो उसे जीवन असह्य हो जाया करता और वह जीवन की उच्च प्रेरणाओं की उपेक्षा किया करता। यह तो कैदी की बेड़ियों को खोलकर उसे आजाद करने और अपरिमित आनन्द के स्रोत का मार्ग निर्दर्शन करने वाली अनूठी वस्तु होती है।

ठीक कहा जाता है कि मृत्यु के पश्चात् ही जनता मनुष्यों के गुणों का मूल्यांकन और उनके स्थान में उसके गुणों का आदर करती है। इस प्रकार मृत्यु कीर्ति का द्वार खोलती है और ईर्ष्या द्वेष का द्वार बन्द कर देती है। लोग प्रायः मनुष्य की मृत्यु के उपरान्त उसके प्रति ईर्ष्या द्वेष के भावों से शून्य हो जाया करते हैं। लौकिक दृष्टि से मृत्यु उस व्यक्ति की मुक्तिदाता होती है जिसे स्वतन्त्रता मौत नहीं दिला सकती। उसका चिकित्सक होती है जिसका रोग औषधियों से दूर नहीं होता। उसको सान्त्वना दातृ होती है जिसे समय दिलासा नहीं दिला सकता।

मृत्यु से कौन नहीं डरता? जो हर समय मरने के लिए तय्यार रहता है वह मृत्यु से नहीं डरता। जो व्यक्ति अपने कर्त्तव्यों को सुन्दर रीति से निभाहता और अच्छा जीवन व्यतीत करता है वह मृत्यु की तय्यारी की दिशा में ठोस कदम बढ़ाता है। मृत्यु की तैयारी में हमें जरा भी असावधानता न करनी चाहिए। जो व्यक्ति परमात्मा की सेवा में निमग्न रहते हैं वे परमात्मा के आह्वान पर हर समय यहां से जाने के लिए तैयार रहते हैं। वे अपना जीवन इस प्रकार व्यवस्थित और व्यतीत करते हैं जिससे प्रत्येक क्षण उन्हें मृत्यु का आलिंगन करने की फुर्सत होती है। मृत्यु के लिए हर समय तैयार रहने का एक फल यह भी होता है कि मनुष्य बहुत-सी बुराइयों और प्रलोभनों से बच सकता है। एक अच्छे ईश्वर भक्त आदमी से जब उसकी अन्तिम बीमारी में पूछा गया कि क्या वह मृत्यु का अनुभव कर रहा है तो उसने उत्तर दिया कि 'मित्र मैं जीवित रहूंगा या नहीं इसकी मुझे चिन्ता नहीं है क्योंकि यदि मैं बच गया तो मैं परमात्मा के साथ रहूंगा और यदि मैं मर गया तो परमात्मा मेरे साथ रहेगा।' अच्छे आदमी नहीं मरते अपितु बुरे व्यक्ति ही मरते हैं। अच्छे व्यक्ति मरने पर धूल में से उठकर यश की सोपान पर पैर रखते हैं।

मृत्यु से वे व्यक्ति डरते हैं जो ममता मोह के वशीभूत हो संसार से चिपटे रहते हैं, जो उस से तंग रहते अथवा जो अपनी धन सम्पदा से निश्चिन्त रहकर भोग विलास और ऐन्द्रिय आनन्द में निमग्न होकर मृत्यु की जरा भी तैयारी नहीं कर पाते। धन सम्पदा की अपेक्षा चरित्र में मृत्यु की तैयारी की अधिक क्षमता होती है। जो व्यक्ति संसार के भोगों में केवल प्रयोगाधिकार समझते हैं उन्हें मृत्यु से भय नहीं लगता। भय उन्हें लगता है जिन्हें मृत्यु उन भोगों और पदार्थों से बलात् छुड़ाती है।

मनुष्य का प्रातःकाल बाल्यावस्था में और अन्त बुढ़ापे में होता है। मृत्यु आराम देने, बुढ़ापे रूपी थकान को दूर करने और मनुष्य को नव-जन्म रूपी नया जीवन, उत्साह और पुरुषार्थ देने वाली होती है। फिर वह कष्टप्रद क्यों कर हो सकती है? इंग्लैण्ड के एक डाक्टर ने परीक्षण किया कि मृत्यु दुःख देने वाली है या नहीं? उनकी आयु ६१ वर्ष की थी। उन्होंने परीक्षण के लिए ऐसा जहर तैयार किया जिससे मृत्यु धीरे-धीरे हो। उन्होंने जहर पी लिया परीक्षण करने लगे और परीक्षण को एक नोट बुक में लिखने लगे। उन्होंने अपनी नोट बुक में लिखा:—

Japs are right, Death is lovely. I feel no pain.

अर्थात् जापानी ठीक कहते हैं। मृत्यु प्यारी है।

अन्त समय में ईश्वर का स्मरण करने की शिक्षा दी जाती है। क्यों? मनुष्य-जीवन दो भागों में बांटा हुआ है। वे भाग ये हैं:—

(१) मृत्यु से पूर्व का
(२) मृत्यु शय्या का

जब मनुष्य पहले भाग में होता है तब उसे कर्म करने की पूरी स्वतन्त्रता होती है परन्तु मृत्यु शय्या पर पड़ जाने पर यह स्वतन्त्रता छिन जाती है। दूसरा भाग पहले भाग का चित्र होता है अर्थात् मृत्यु से पूर्व की परिस्थितियों और प्रभावों का मृत्यु शय्या का भाग फोटो होता है और यही फोटो संसार के सामने आ आया करता है। अतः जीवन के पहले भाग में अर्थात् मृत्यु से पूर्व मनुष्य को अच्छे कर्म करने चाहिए।

महमूद गजनवी गजनी का राजा था। उसने भारत पर कई बार चढ़ाई की थी। उसके जीवन का उद्देश्य किसी भी रीति से धन संग्रह करना था। उसने गजनी को सोने चांदी से भर दिया था। यहां उसके जीवन का प्रथम भाग समाप्त होता है। अब हम उसे दूसरे भाग में अर्थात् मृत्यु शय्या पर देखते हैं, मरते समय वह सोने चांदी के ढेर अपने सामने लगवाता है। उस ढेर पर दृष्टि दौड़ाता है। उसी क्षण उसके मन में एक विचार उठता है कि मेरी ही आज्ञा से ये ढेर लगे हैं परन्तु अब यदि मैं चाहूं तो इस ढेर में से जरा भी अपने साथ नहीं ले जा सकता। जब विवशता देखी तो रो पड़ता है और धन पर दृष्टि रखे हुए ही यहां से विदा हो जाता है। भाव यह है कि जिस प्रकार जीवन पर्यन्त उसकी दृष्टि धन पर रही उसी प्रकार अन्त समय में भी धन पर ही रही।

फ्रांस का राजा पीटर था। वह धर्मात्मा था। यरुशलम तुर्कों के अधिकार में चला गया था। यह वह समय था जब यरुशलम की प्राप्ति के लिए ईसाई लोग धर्म युद्ध कर रहे थे। पीटर भी यरुशलम की प्राप्ति के लिए कई लड़ाइयां लड़ चुका था। परन्तु सब में हार गया था। उसके जीवन का उद्देश्य

(शेष पृष्ठ ८ पर)

महाभारत (जो आर्यावर्त वासियों का प्रामाणिक ग्रन्थ है) के अठारह पर्वों में जहाँ तक हम ने देखा और योग्य कथावाचक विद्वान् पण्डितों से पूछा, कहीं भी इन बातों का चिह्न तक नहीं है। इस के विरुद्ध जितनी चाहें गवाहियां मिल सकती हैं। यह बात किसी से छिपी हुई नहीं है, कि अल्पायु में व्यभिचार करने वाले लोग बहुत शीघ्र निर्बल हो जाते हैं तथा शक्तिशाली शक्तिहीन हो जाते हैं। वह युद्ध के योग्य कदापि नहीं रहते, न वीर कहला सकते हैं। तथा अल्पायु में व्यभिचार में फस जाने वाले मनुष्य न योग जानते और न कर सकते हैं। परन्तु कृष्ण जी की प्रसिद्ध गीता में बीसियों स्थानों पर गवाही मिलती है। स्वयं व्यास जी लिखते हैं कि—

यत्र योगेश्वर कृष्णः यत्र पार्थो धनुर्धरः।

और सब से बढ़कर एक और प्रमाण है अर्थात् उपनिषदों की प्रामाणिकता का अनुमान करने के लिए बड़े विद्वान् की आवश्यकता है।

लोगों को कलंक लगाने की इच्छा से ही लिखी गई हैं। यह लोगों का मन व्यभिचार को चाहता है जो महापुरुषों पर कलंक लगाते हैं। ब्रजविलास सम्वत् १८२७ माघ शुक्ला पंचमी सोमवार को बनना शुरू हुई जैसा कि उस में स्वयं लिखा है कि—

सम्वत् शुद्ध पुराण सत जानो।
ता पर और वचन न मानो॥

अर्थात् १८२७ में यह पुस्तक लिखनी प्रारम्भ हुई। इस का कुछ वर्णन भक्तमाल अध्याय ८१ में भी लिखा है। वास्तविक नाम विपुरदास था। ऐसे ही विचार प्रेमसागर में हैं। परन्तु वह भी अप्रामाणिक है क्योंकि पुष्टि मार्ग के चलने के पश्चात् बहुत से ऐसे कलंक महाराज जी के जीवन पर लगा लिए गए हैं।

डाक्टर डब्ल्यू-डब्ल्यू हण्टर लिखते हैं कि—

"चैतन्य के मरणोपरान्त विष्णु की धार्मिक पूजा में कमी आई। लगभग १५२० ईस्वी में वल्लभ स्वामी ने उत्तर भारत में उपदेश

कथाएं, जो अब देशवासियों की जानी वस्तु हैं, सब शामिल थीं।

(पृष्ठ १६६)

भक्तमाल में भी ऐसी बहुत सी कथाएं भरी पड़ी हैं। तीन सौ वर्ष हुए कि इसको नाभा जी ने लिखा था।

मुख्तसर तारीखे हिन्द पृ० १५२)

यह भी एक स्मरण रखने की बात है कि कृष्ण जी का कन्हैया नाम भागवत में नहीं, और न राधा का उसमें वर्णन है। परन्तु इस में कोई सन्देह नहीं कि भागवत में उन सब कथाओं का वर्णन है जो इन पुस्तकों में विस्तार से लिखी गई हैं। भागवत न तो व्यास जी की बनाई पुस्तक है और न इतनी पुरानी है, जितनी कि लोग समझते हैं। हम ने जहां तक खोज की है। ११०० ईस्वी पूर्व की पुस्तकों में उस का कोई वर्णन नहीं मिलता है और १४०० वर्ष से अर्थात् राजा भोज के समय से पूर्व किसी भी पुराण का नाम और चिह्न तक नहीं मिलता। स्वयं देवी भागवत संस्कृत भूमिका में धौम्य टीकाकार ने अकाट्य

गीता और उपनिषदों का सत्कार करें जैसा कि स्वयं एक विद्वान् ने लिखा है कि—

सर्वोपनिषदो गावो
दोग्धा गोपालनन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधीर्भोक्ता
दुग्धं गीतामृतं महत्॥

अर्थात् सब उपनिषदों को विचार कर के और उनका गहरा अध्ययन करके कृष्ण जी ने गीता को निकाला है। उपनिषद् गौ हैं। कृष्ण जी ग्वाल हैं। अर्जुन बछड़ा है और गीता दूध है।

पुनः हम गीता के अच्छे वचनों को छोड़ कर किस प्रकार सत्यान्वेषण न करने वाले रंगीन स्वभाव कवियों के वचन पर विश्वास कर के एक महापुरुष के जीवन पर कलंक लगायें। सत्य तो यह है कि कृष्ण जी के जीवन पर ज्यों-ज्यों समय बीतता गया, लोगों ने बहुत ही गन्दे कथानक बनाने आरम्भ कर दिए। अतः प्रत्येक देशहितैषी तथा जाति के शुभ चिन्तक का कर्त्तव्य है कि इनके पवित्र जीवन पर जो गन्दी और व्यर्थ कथाओं के द्वारा अथवा

श्रीकृष्ण का चरित्र बड़ा

लेखक—श्री अमर शहीद पण्डित लेखराम जी आर्य मुसाफिर

★

प्रतीत होता है कि यह उपनिषद् कृष्ण जी के समय में पूर्णता को पहुंचे। जिन में बहुत अच्छी प्रकार से उन के ब्रह्मचर्य का उदाहरण प्रस्तुत किया है। उपनिषद् के मूल शब्द इस प्रकार हैं—

स घोराङ्गिरसः कृष्णाय देवकीपुत्राय।

आह स अपिपास एव बभूव।
(छान्दोग्य)

अर्थ—घोराङ्गिरस कुल के ऋषि ने देवकी के पुत्र कृष्ण को यह विद्या पढ़ाई जिसमें उन्होंने (ब्रह्मचर्याश्रम पूर्ण कर के) पूर्ण विद्वान् हो कर शक्ति प्राप्त की और समावृत हुए।

इस से स्पष्ट प्रकट है कि उन्होंने ब्रह्मचर्य पूर्वक विद्या प्राप्त की थी तथा योगाभ्यास किया था। हम फिर केवल ब्रज विलास के कहने पर किस प्रकार विश्वास करें कि वह अवश्य इन (अश्लील) बातों को करते थे। ब्रज विलास पृष्ठ ५०३ से आगे रासलीला का आरम्भ है। जिस में आचार, सभ्यता और वेद-मर्यादा के विरुद्ध बहुत सी बातें लिखी हैं। परन्तु यह केवल महात्मा

दिया कि जीवात्मा की स्वतन्त्रता शरीर के कष्टों पर आधारित नहीं और ईश्वर की खोज तपस्या, उपवास तथा एकान्त वास में नहीं। प्रत्युत इस जीवन के भोग विलास में करनी चाहिए। एक धनी सम्प्रदाय बहुत काल से कृष्ण और राधा की पूजा पर विश्वास रखता था, किन्तु कृष्ण और राधा के कृत्रिम प्रेम को आध्यात्मिक रहस्यमय समझते हैं।" (संक्षिप्त भारतीय इतिहास उर्दू पृष्ठ १६५) पुनः लिखते हैं कि, "वल्लभ स्वामी को विष्णु के भोग विलास वाले सम्प्रदाय का संस्थापक कहना चाहिए। वह विष्णु की पूजा विशेषतः कृष्ण के अवतार में करता था। जबकि उस के शिष्यों ने सुन्दर युवकों का रूप लिया। वन और ग्रामों में भोग विलास का जीवन व्यतीत किया पूजा के साथ माया युक्त कुंज, सुन्दर स्त्रियां, बढ़िया भोजन आदि

युक्तियों से सिद्ध किया है कि भागवत बोपदेव का बनाया हुआ है। जिस के भाई जयदेव ने गीतगोविन्द बनाया। अतः इस में कोई सन्देह नहीं कि भागवत के पश्चात् एक हजार वर्ष से इधर यह सब कथाएं कृष्ण जी के सम्बन्ध में घड़ी गईं। और रासलीला खेलने वाले लोगों अर्थात् कथक लोगों के द्वारा इन आचार बिगाड़ने वाले कथानकों का उपक्रम हुआ, जो अब सम्प्रदाय का रूप धारण कर गया है। हमें महाभारत, गीता और उपनिषदों से कृष्ण जी का जीवन एक योगीश्वर, महात्मा और उच्च विचारों वाले राजकुमार का जीवन प्रतीत होता है। परन्तु प्रेमसागर, भागवत, ब्रज विलास और सुखसागर सर्वथा इन आर्ष ग्रन्थों के विपरीत हैं।

इसी प्रकार और सत्यार्थप्रकाश लिखता है कि एक ...

व्यर्थ और गन्दे नावलों के प्रमाणों से कलंक लगाए गए हैं उन को दूर करके उनकी वास्तविक जीवनी जैसी कि उन के वचनों और उनके समकालीन महापुरुषों के वचनों से सिद्ध होती है, जनता के सम्मुख समुपस्थित करें। हमारी वर्तमान खोज से, जो हमें वर्षों कृष्ण मत में रह कर और दीर्घकाल तक नवीन वेदान्त के महावाक्य पढ़कर तथा गीता के पाठ करने से प्रकट हुआ, वह यही है कि महात्मा कृष्णचन्द्र से उस चाल चलन का कुछ भी सम्बन्ध नहीं है जो भागवतादि में लिखा है और न प्रेम सागर से इन का कुछ सम्बन्ध है। इतिहासज्ञ आनरेबल मौण्ट स्टुअर्ट एलफिन्स्टन भूतपूर्व गवर्नर बम्बई अपने भारतवर्ष के इतिहास में लिखते हैं कि—

"मथुरा के राजवंश में उत्पन्न हुए। किन्तु एक ग्वाले ने जो उसी के पास रहता था। एक अत्याचारी राजा कंस के चंगुल से बचा कर उन का पालन-पोषण किया।"

(तारीखे हिन्दुस्तान भा. ४, पृ० १७१)

इसी प्रकार का वर्णन करनल टाड ने अपनी पुस्तक राजस्थान ... भाग के पृ० ... पर किया है।

शुद्ध और पवित्र था

सर जौन्स अपनी "एशिया के हालात" की पुस्तक प्रथम भाग में लिखते हैं कि—

'कृष्ण के इस काल अर्थात् बालपन के समय का हिन्दुओं के मन पर बहुत ही प्रभाव पड़ा है। कृष्ण के बालपन की गतिविधि जैसे दूध चुराने और साँपों को मारने के पर्व मनाने में कभी उन का मन नहीं भरता, और हिन्दुओं में एक बहुत बड़ा सम्प्रदाय कृष्ण को सृष्टि रचयिता समझ कर बालपन के रूप में उन की पूजा करता है। इसी प्रकार कृष्ण की यौवनावस्था, जो उन्होंने गोपियों के साथ नाच रंग, खेल कूद, बाँसुरी बजाने में व्यतीत की, उन की पूजा करने वाली स्त्रियों में एक जोश उत्पन्न करती है। कृष्ण पर कुछ गोपियाँ ही आसक्त न थीं प्रत्युत भारत के धनिकों की स्त्रियाँ और रानियाँ जो उन का सौन्दर्य और चमक देखती थीं उन पर बलि-बलि जाती थीं।"

(पृष्ठ २५१)

इसी प्रकार भाग ३ पृष्ठ १८५ में भी जो जयदेव के गीत के अनुवाद के सम्बन्ध में है। इसी प्रकार का वर्णन है, और तारीखे हिन्दुस्तान के पृष्ठ १६३ पर इसी का वर्णन है।

जयदेव कृत गीत गोविन्द तथा और इसी प्रकार की कविताओं को योरुपीयन इतिहासकार तथा संस्कृत के विद्वान् केवल 'ग्रामीण काव्य" का नाम देते हैं। जैसा कि उस के सम्बन्ध में एशिया वृत्तान्ताम्वेषण में लिखा है कि—

जयदेव के ग्रामीण काव्य "गीत गोविन्द" के प्राय गीत ग्रामीण गीतों का ही रूप उपस्थित करते हैं। जिन से मैं परिचित हूँ। इन गीतों में उत्तम प्रकार का विवरण तथा भावुकता है, जो हिन्दू कवियों के विशेष गुण समझे जाते हैं। इन गीतों में चुटकुले और उपहास भी हैं। उन का लेखक चौदहवीं शती ईस्वी में हुआ है। अत प्रतीत होता है कि व्यंग्यात्मक गीतों का ढंग उस ने मुसलमानों से लिया होगा।

(भाग ३, पृष्ठ १८५ तारीखे हिन्दुस्तान भाग १, पृष्ठ २९५)

विल्फर्ड, प्रसिद्ध इतिहासकार, लिखते हैं कि "गीत गोविन्द एक ऐसी कविता है जो कुछ-कुछ नानक जी की पद्धति पर है। इस में कृष्ण चन्द्र ग्वाले और राधिका उस की ग्वालिन के प्रेम की कथा है। जो जयदेव ने बारहवीं शती ईस्वी में लिखी थी। इस कवि की कविता रसीली है।"

(तारीखे हिन्दू पृष्ठ २४२)

देवी भागवत के टीकाकार के कथनानुसार तथा उस की कविता की पद्धति के अनुमान से भागवत पुराण का कर्त्ता बोपदेव सिद्ध हो चुका है। और जयदेव तथा बोपदेव दोनो सगे भाई थे। परन्तु गीत गोविन्द कुछ वर्ष पश्चात लिखा गया प्रतीत होता है। कुछ भी हो ऐसे दोष लगाना किसी भी अवस्था में उपयुक्त नहीं। भागवत के कथनानुसार उन की आयु जब तक वह गोकुल और वृन्दावन मे रहे केवल आठ अथवा दस वर्ष की थी और किसी प्रकार इस अनुमान से अधिक नहीं पाई जाती। अतः ऐसी अवस्था में लड़कियों के साथ खेलना फिरना, हँसना तो सम्भव है। परन्तु ऐसी अन्धेर की बातें करना सर्वथा असम्भव है। इस के अतिरिक्त इस आयु में व्यभिचार का विचार तक भी नहीं किया जा सकता। पुन अनुमान से दूर ऐसे कथानक कभी स्वीकार करने के योग्य नहीं हैं। इस आधार पर हमें इन के मानने में हिचकचाहट ही नहीं प्रत्युत सर्वथा इन्कार है। प्रोफेसर विल्सन का लेख भी हमारी धारणा का समर्थक है। जिन्होंने अच्छी प्रकार विचार और अनुभव कर के लिखा है कि ऐसे विचार और कामवर्द्धक कथानक कामी लोगों को प्रसन्न करने के लिए लिखे गए हैं। कृष्ण की पूजा करने वालों के सम्बन्ध में इस सम्प्रदाय में समस्त धर्मी वर्ग और कामी स्त्री पुरुषों के प्रत्येक श्रेणी के वर्ग सम्मिलित हैं।

(तहकीकाते एशिया भाग ६ पृष्ठ ६५,६६ तारीखे हिन्दुस्तान पृष्ठ १७५)

श्रीकृष्ण के जीवन पर एक दृष्टि—

श्री कृष्ण जी महाराज के चरित्र का वृत्तान्त बहुत सा हम पहले कह चुके हैं। इस के अतिरिक्त इस श्री-अपूर्व पुरुषीरत्न का वर्णन करना भी यहां अभीष्ट है। उस समय के लोग वायु-वृष्टि का देवता राजा इन्द्र को समझते थे और विचार करते थे कि उस की कृपा के बिना वर्षा नहीं होगी। इसी विचार के अनुसार ग्वालों में (जिन्हें सदा घास चारे की चिन्ता अधिक रहती थी) कार्तिक मास में राजा इन्द्र के नाम पर कई प्रकार की पूजा होती थी। चाहे उस के नाम पर ब्राह्मणों को खिलाते थे। चाहे गौओं को खिलाते थे। यद्यपि यह प्रतीत न होता कि किस प्रकार पूजा करते थे। परन्तु इन मे सन्देह नहीं कि किसी प्रकार अवश्य किया करते थे। जिस का अभिप्राय इस से केवल यह था कि वर्षा समय पर बरसे और अन्न की बहुतायत हो। गौवें भैंसें बहुत दूध देवें, तथा खेती बाड़ी भी अच्छी प्रकार हो। यद्यपि यह स्वाभाविक है और प्रत्येक सभ्य असभ्य का हार्दिक उल्लास है कि ऐसा हो क्योंकि हमें तौरत' से भी ऐसा ही ज्ञान होता है कि तुम खुदावन्द अपने खुदा की पूजा करो, वह तुम्हारी रोटी और पानी में बरकत देगा।' खरूज ४३-३५ मे अच्छी भूमि का केवल यही परिचय दिया कि उस में दूध और शहद बहता है अर्थात बहुत है, अत. दूध की अधिकता वास्तव में ईश्वरीय दया का चिह्न है और यही गोकुल और वृन्दावन के ग्वाले लोग भी ईश्वर से मांगते थे, भूल केवल यह थी कि वह राजा इन्द्र को इस का दाता समझते थे। अन्ततो गत्वा जब श्री कृष्ण जी ने होश सम्भाला तथा युवावस्था को पहुँचे तो एक बार उन की उपस्थिति में कार्तिक मास का वह दिन आया जब कि सब गोकुल वासियों ने इन्द्र की पूजा का विचार किया।

अन्न के खाने से निज भौतिक शरीर उत्पन्न होता है। अन्न मेघ बरसने से होता है। मेघ यज्ञों से होते हैं। यज्ञ आहुतियों से परन्तु आहुति कर्म से और कर्म वेद से उत्पन्न होते हैं। वेद अविनाशी परमात्मा से प्रकट होते हैं। अत सर्वव्यापक ब्रह्म के निमित्त प्रति दिन यज्ञ करना चाहिए।

गोवर्धन पर जा कर श्री कृष्ण चन्द्र जी महाराज ने बलराम जी सहित हवन कुण्ड बनवाया। और एक बहुत बड़ा यज्ञ रचा। समस्त गोकुल और वृन्दावन के लोग जो यज्ञ की सामग्री लाए थे, उस से हवन किया। सब लोगों ने बारी बारी से आहुतियाँ डालीं। सब देश उस हवन की सुगन्धि से सुगन्धित हुए। ब्राह्मणों साधुओं और अभ्यागतों के लिए भोजन यज्ञ भी किया गया। उन का प्रत्येक प्रकार से आतिथ्य सत्कार किया गया। आकाश में वाष्प एकत्र हुई तथा बड़ी मूसलाधार वृष्टि हुई। कृष्ण जी की इस पवित्र शुभ प्रस्तावना से इन्द्र की पूजा गोकुल से बन्द हो कर वेदोक्त पूजा प्रचलित हुई।

इसी प्रकार अच्छे-अच्छे उपदेश गोकुल व वृन्दावन वासों को श्री कृष्ण जी देते रहे। उन के उपदेशों से बड़ा लाभ पहुंचा। और लोगो को उन से बहुत प्रेम हो गया। जब वह युवावस्था को पहुँचे तो माता पिता के दुःख का बदला लेने पर कटिबद्ध हुए। इतने में कंस ने यह मन्त्रणा की कि किसी बहाने कृष्ण को मथुरा में बुलवाकर वध करा दूं। इस के लिए एक बुद्धिमान पुरुष को जिस को नन्द जी से भी कुछ पहुंच थी, चार घोड़ों का रथ दे कर गोकुल भेजा कि मथुरा में यज्ञ है। नन्दबाबा जी को कृष्ण बलराम सहित इस बहाने मथुरा ले आओ। अक्रूर इस रहस्य को जानता था कि इन का वध करा दिया जाएगा। इसीलिए वह शोकातुर होकर गोकुल गया। एक दो दिन गोकुल ठहर कर उन को मथुरा आने के लिए तैयार किया।

मथुरा उस समय बहुत महत्ता प्राप्त कर चुकी थी। उस की जनसंख्या उस का धनवैभव और उस के भवन मनुष्यों को आश्चर्यचकित करते थे। गोल्डन इण्डिया अर्थात् स्वर्णमय भारत के लूटने के जोश पर सिकन्दर आया। दारा को देख के इसी स्वर्णमय भारत के एक प्रान्त पंजाब के कुछ भागों ने शाहंशाह दारा बना दिया। महमूद के समय जो मथुरा की अवस्था थी उस का अनुमान इस इस्लामी इतिहास के अतिरिक्त और किसी प्रकार यथार्थ नहीं लगा सकते। महमूद ने मथुरा से गजनी के हाकिम को एक पत्र लिखा था कि यहां अगणित मन्दिरों के अतिरिक्त और भी सहस्रों भवन हैं। जो कि इस्लाम के अनुसार सुदृढ़ हैं और जो प्राय संगमरमर के हैं। वह सहस्रों दीनार खर्च करके निर्मित हुए होंगे।

(शेष पृष्ठ १० पर)

भारत के भगवान

रचयिता—राधेश्याम शर्मा

हे योगिराज कृष्ण तुम्हीं ने धर्मध्वजा फहराया।
सारे जग को वेदों का पावनतम पथ दिखलाया।
कंस तथा शिशुपाल जरासंध से असुरों को मारा।
आगे बढ़ कर दुनिया की दानवता को ललकारा।

नारी की रक्षा में प्रतिपल-रहे वीर वर ! दृढ़ कटिबद्ध।
दुर्योधन को, दुःशासन को ललकारा, होकर प्रतिबद्ध।
युद्ध महाभारत में तुमने सत्य पक्ष का साथ दिया।
विजय श्री पाण्डव को तुमने रण कौशल से दिला दिया।

वैदिक पथ के थे अनुयायी, वैदिक पथ विस्तार किया।
वेदों की गरिमा से तुमने प्रश्नों को निस्तार दिया।
अनुपम योद्धा, अनुपम योगी, अनुपम थे वीरत्व प्रतीक।
'भारत के भगवान' बने तुम कर्म किए निष्काम सटीक।

तुम युग मानव ! रहे प्रणेता-सत्य-धर्म-मानवता के।
स्वीकारा तुमने निर्भय हो बैर सभी दानवता के।
महामनुज ! तुम संहारक थे, असुर वृत्तियों, असुरों के।
प्रतिपालक थे-रक्षक थे तुम मुनि-मानव के, पुण्य सुरों के।

जन्मदिवस पर आज तुम्हारा-वन्दन है अभिनन्दन है।
भारत के भगवान तुम्हारा-कोटि कोटि अभिनन्दन है॥

(पृष्ठ ५ का शेष)

मृत्यु : आध्यात्म पथ

यरुशलम की प्राप्ति था। उसके जीवन का पहला भाग समाप्त हो जाता है। वह मृत्यु शय्या पर पड़ा हुआ है। उसे उस समय न देश की चिन्ता थी और न उत्तराधिकारी की। उसे चिन्ता थी तो एक थी और वह, थी यरुशलम की प्राप्ति की। वह तीन बार 'यरुशलम' का उच्चारण करते करते संसार से विदा हो गया।

महाराणा प्रताप भारत के एक चमकते हुए रत्न थे। चित्तौड़ और उदयपुर उनके अधिकार से निकल चुके थे। उनकी प्राप्ति उनके जीवन का ध्येय बना। अकबर से युद्ध किया, बड़े से बड़ा त्याग किया और अन्त में चित्तौड़ और उदयपुर प्राप्त किए। यहीं उनके जीवन का पहला भाग समाप्त होता है। वे मृत्यु शय्या पर पड़े थे। उनके निकट सरदार गण खड़े थे। सरदारों ने उस समय एक बड़ी आश्चर्य जनक बात देखी। उन्हें महाराणा की दशा एक लोभी व्यक्ति जैसी देख पड़ी। सरदारों को कारण समझ में न आता था। उन्होंने पूछा 'महाराज' क्या बात है !" महाराणा ने कहा, "सरदारो मुझे विश्वास दिलाओ कि मेवाड़ उसी प्रकार स्वतन्त्र रहेगा जिस प्रकार कि मैंने स्वतन्त्र रखा है।" सरदारों के विश्वास दिलाते ही बड़े सुख से महाराणा के प्राण निकल गए।

स्वामी दयानन्द का जीवनोद्देश्य वेद प्रचार करना और प्रजा को आस्तिक बनाना था। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उन्होंने बड़े-बड़े कष्ट सहन किए और बड़े से बड़ा त्याग किया। वे मृत्यु शय्या पर पड़े हैं। दूर दूर से लोग आए हुए हैं। उन्हीं में पं० गुरुदत्त विद्यार्थी भी हैं। स्वामी जी सब को अपनी आंखों के पीछे कर देते हैं। पं० गुरुदत्त स्वामीजी का अन्त समय देखने के लिए उत्सुक हैं। वे ऐसे स्थान पर खड़े हो जाते हैं जहां से वे स्वामी जी को भली भांति देख सकें। स्वामी जी वेद मन्त्रों का उच्चारण करते और गायत्री का पाठ करते हैं। गुरुदत्त की दृष्टि स्वामी जी के मुख पर है। स्वामी जी प्रसन्न वदन हैं। गुरुदत्त पक्के नास्तिक थे। उनके मस्तिष्क में डार्विन जैसे विज्ञान वेत्ता घर किए हुए थे जो नास्तिक थे और कहते थे कि उन्हें अपनी सफल से सफल रचनाओं और आविष्कारों में ईश्वर की कहीं आवश्यकता ही अनुभव नहीं हुई। प्राण त्यागने से पूर्व स्वामी जी के चेहरे पर एक मुस्कराहट आ जाती है। वह मुस्कराहट दिव्य थी। उसी पर गुरुदत्त मुग्ध हो जाते हैं और नास्तिक से आस्तिक बन जाते हैं। स्वामी दयानन्द "प्रभो ! तेरी इच्छा पूर्ण हो," यह कहकर प्राण त्याग देते हैं।

वस्तुतः मृत्युकाल परीक्षा काल होता है। इसमें सफलता प्राप्त करना मनुष्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए पूरी-पूरी तय्यारी होना चाहिए। जब मनुष्य मरने लगे तो वह इतना ऊंचा उठा होना चाहिए जिससे वह अपने को सर्वथा परमात्मा के हाथों में सौंपा हुआ समझे और यह अनुभव करे कि परमात्मा की इच्छा ही मेरी इच्छा है उसी की इच्छा सर्वोपरि है। वही सन्मार्ग प्रदर्शक है। वही आदि गुरु है। वही महान् शिक्षक है। उसी का आश्रय लेने से बेड़ा पार हो सकता है। इसलिए सब कुछ यत्न करके भी अन्त में उसी का सहारा लेना चाहिए। इसी में मानव का कल्याण है। ❍

(पृष्ठ ३ का शेष)

पापों से छुटकारा कैसे मिले

हमारे मन में संकल्पों-विकल्पों का निरन्तर युद्ध चलता रहता है। किन्तु पिछले कुसंस्कारों के कारण सत्संकल्पों का पराजय हो जाता है और हम पाप कर्म में प्रवृत्त हो जाते हैं।

क्या हम कुसंस्कारों का परिशोधन नहीं, हो सकता ? क्या पाप-वासना का दमन नहीं हो सकता ? हमारा कथन ही नहीं, विश्वास भी है कि अवश्य हो सकता है। इसके लिए दृढ़ संकल्प की आवश्यकता है। साथ में सतत अभ्यास और वैराग्य की आवश्यकता है। अभ्यास और वैराग्य से क्या नहीं हो सकता ? विषयों की असारता हमारे मस्तिष्क में हो और आत्म-विश्वास और उत्साह हृदय में हो तो हम पापों पर विजय पा सकते हैं। इधर हम पुरुषार्थ करें और उधर प्रभु से प्रार्थना द्वारा पापों से उबरने की प्रार्थना करें। पुरुषार्थ और प्रार्थना के संयोग से निश्चय ही हम पापों से छुटकारा पा सकते हैं। ध्यान रहे कि जो वस्तु स्वयं पवित्र है, उसका ध्यान अथवा चिन्तन भी मन को पवित्रता प्रदान करता है। परमात्मा परम-पवित्र और सर्वथा पाप-रहित एवं पाप-नाशक है। उसकी शरण आने से मन पवित्र होकर पापों से सर्वथा दूर होकर निष्पाप हो जाता है।

पापों से छुटकारा पाने के लिए हमें अपनी आदतों का सुधार करना होगा और अपने जीवन की नित्य प्रति पड़ताल करनी होगी। अर्थात् हमें अपने कर्मों पर निगाह रखनी होगी क्योंकि कर्म वह आईना है, जो हमें हमारा स्वरूप दिखा देता है। यदि हमारे कर्म अच्छे हैं तो हमारा स्वरूप भी अच्छा ही दिखेगा और यदि हमारे कर्म बुरे हैं तो हमारा स्वरूप भी बुरा ही दिखाई देगा। और यदि आप ने नित्य-प्रति आईने में अपना स्वरूप नहीं देखा और कभी मुद्दत के बाद देखने का अवसर आया तो निश्चय ही अपना स्वरूप देख कर डर जाओगे, इस लिए अपने को नित्यप्रति आईना दिखाते रहो। आत्मनिरीक्षण भी आईना देखने के सदृश ही है। कहा भी है कि—

जाता हुआ अमीर
वह आईना है करीब।
सोने से रोज पहले
जिसे देखता हूँ मैं॥
और फिर-आईना -ए-जमीर
पर जब भी गई निगाह।
खुद अपना अक्स
देखकर शर्मा गया हूं मैं॥

पापों से बचने के लिए यह भी आवश्यक है कि हम मिथ्या सिद्धान्तों से बचें। प्रायः लोग ईश्वर को सर्वव्यापक न मानने की भूल कर बैठते हैं। ऐसे लोग मन्दिर, मस्जिद आदि को खुदा या भगवान का घर समझते हैं। ऐसे भगवान के घर पर तो लोग पाप करने से कतराते हैं पर अन्यत्र पाप करने में उन्हें कोई संकोच नहीं होता। यह ठीक नहीं। ईश्वर को सर्वव्यापक मानना चाहिए और यह भी कि हमारा कोई भी कर्म उससे छिपा नहीं है। साथ में जब हम यह भी मानने लगे हैं कि प्रत्येक कर्म का फल अवश्य भोगना पड़ेगा, क्षमा नहीं होगा तो फिर पाप करते समय एक बार तो हमें यह ध्यान आ ही जायेगा कि प्रभु देख रहा है, और उससे बचकर कहीं भी नहीं जा सकता। इस प्रकार कुकर्म करने से जीव अवश्य बच जायेगा और ऐसे निरन्तर अभ्यास से वह पापों से सर्वथा छूट जायेगा। प्रभु करे कि हम में सच्ची आस्तिकता जगे और हम कर्मफल-व्यवस्था में पूर्ण आस्था रखते हुए अपने कर्मों की पड़ताल करते हुए कुकर्मों को छोड़ते चलें और अपनाते चलें सत्कर्मों को जिस से हमारा लोक और परलोक दोनों सुधर सकें। इत्योम् शम्। ❏

गोपाल सहस्र नाम की पुस्तक में योगीराज कृष्ण जी महाराज को चोर और बदमाशों का सरताज कहा गया है—

"चोरजारशिखामणि ।"

भक्त शिरोमणि सूरदास के शब्दों में—बालन भुषह राधिका भोरी । रसिक शिरोमणि कृष्ण ने बातों ही बातों में भोली-भाली राधा को फुसला लिया ।

नीवी ललित गही यदुराई ।

जबहिं सरोज धरयो श्रीफल पर
तब यशुमति तह आई ।

नीवी कहते हैं 'नाडे' को और श्रीफल का अर्थ है 'स्तन' इससे अधिक स्पष्ट अर्थ करने की मैं आवश्यकता नहीं समझता ।

मतिराम, बिहारी, देव, विद्यापति आदि की तो चर्चा ही छोड दीजिए । इन कवियों ने श्रीकृष्ण जी की छीछालेदर की है, क्या किसी जनसामान्य की भी वैसी होगी ?

भागवतपुराण, सूरदास और रीतिकाल के कवियों ने कृष्ण जी महाराज का जो चित्र उपस्थित किया है, उसे पढकर और सुनकर माथा शर्म से झुक जाता है ।

बारह वर्ष की कठोर तपस्या के पश्चात् प्रद्युम्न हुआ । श्रीकृष्ण को इस सन्तान पर इतना गर्व था कि वे उसे मे सुत.' कहा करते थे । क्या ऐसा तपस्वी और सदाचारी व्यक्ति गोपियों के पीछे भाग सकता है ? चोर और लम्पट हो सकता है ?

भगवान् कृष्ण एक आदर्श महापुरुष और नेता थे । वे जानते थे कि—"यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जन ।" जैसा बडे लोग आचरण करते हैं, वैसा ही अनुकरण उनके अनुयायी भी किया करते हैं ।

आज राधा के बिना कृष्ण की कल्पना भी नहीं हो सकती, परन्तु पुराणों के अनुसार भी राधा कृष्ण की पत्नी नहीं मामी थी । मामी का स्थान मातृवत् होता है । परन्तु तथाकथित कृष्ण भक्तों ने कृष्ण को राधा के साथ निम्न स्तर का उपहास कराते हुए चित्रित किया है । महाभारत में भगवान् कृष्ण का जीवन अनेक पक्षों से चित्रित हुआ है परन्तु उसमें कहीं भी राधा के नाम की गन्ध भी नहीं है ।

योगेश्वर श्रीकृष्ण

लेखक—डा० शिवकुमार शास्त्री
महामन्त्री, आर्य केन्द्रीय सभा, दिल्ली राज्य

योगीराज कृष्ण का हमारे इतिहास में उल्लेखनीय नाम है । आज राम और कृष्ण के बिना हमारी संस्कृति अधूरी है । वे दोनों व्यक्तित्व युग-पुरुष थे । अपने-अपने समय में दोनो ने वैदिक संस्कृति की रक्षा के लिए सर्वस्व होम दिया ।

शुक्राचार्य अपने नीतिसार नामक ग्रंथ मे लिखते हैं—

"न कूटनीतिरभवत् श्रीकृष्ण-सदृशो नृप ।" आज तक भूमण्डल पर कृष्ण के समान कोई राजनीतिज्ञ नहीं हुआ ।

पाण्डवों का सम्पूर्ण राजनीति चक्र कृष्ण जी के हाथ में था । उन्हीं की कूटनीति से भीष्मपितामह, गुरु द्रोणाचार्य, जयद्रथ, कर्ण, दुर्योधन आदि का वध सम्भव हुआ । यदि कृष्ण जी महाराज पाण्डवों की ओर न होते तो महाभारत का रूप कुछ और ही होता ।

श्रीकृष्ण आदर्श मित्र थे । उन्होंने जहां सुदामा के साथ मित्रता का आदर्श दिखाया, वहां अर्जुन के लिए भी मित्र के रूप में काम आए । अर्जुन के सम्बन्ध में श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से कहा था—"मांसान्युत्कृत्य दास्यामि फाल्गुनार्थे महीपते !" यदि आवश्यकता हुई तो मैं अर्जुन के लिए अपना मांस भी काट कर दे सकता हूं ।

निर्भीकता की प्रतिमूर्ति कृष्ण जी महाराज ने कौरवों की सभा में चारों ओर शत्रुओं से घिरे रहने पर भी कडक कर कहा—

"दुर्योधन ! लाक्षागृह तुम ने बनवाया था । भीम को विष तुमने दिया था । जुए का खेल तुमने रचाया था । भरी सभा में द्रोपदी का अपमान तुमने किया, फिर भी अपने को निर्दोष सिद्ध करने में लगे हो । निश्चय ही तुम्हारी जीवन लीला समाप्त हो चुकी है । शान्ति सन्धि भी तू उसे ठुकरा रहा है ।'

कृष्ण जी महाराज ने बड़ी बड़ी क्रान्तियाँ कराईं परन्तु किसी लोभ-लालच से नहीं अपितु अन्याय का सामना करने के लिए । उन्होंने जो भी देश जीता उसे अपने आधीन करने की कभी भी चेष्टा नहीं की और न ही अपने किसी सम्बन्धी को उसका लाभ पहुंचाया ।

श्री कृष्ण का सम्पूर्ण जीवन नैतिकता के आधार पर प्राणिमात्र का सुख चिन्तन करते हुए व्यतीत हुआ । जीवन पर्यन्त कृष्ण जी महाराज ने विश्व कल्याण किया ।

सन्ध्या और हवन श्रीकृष्ण के जीवन के महत्वपूर्ण अंग थे । जिस समय पाण्डवों के दूत बन कर वे दुर्योधन के पास जा रहे थे, रास्ते में सूर्यास्त के समय उन्होंने रथ रुकवा कर सन्ध्या की—

अवतीर्य रथात् तूर्णं
कृत्वा शौच यथाविधि ।
रथमोचनमादिश्य
सन्ध्यामुपविवेश ह ॥

यह है योगीराज कृष्ण का सच्चा स्वरूप । आर्यजगत् उन्हें सदाचारी और संयमी मानता है, अन्य लोग लम्पट तथा धूर्त । आर्यजगत् उन्हें योगी मानता है, तो कुछ लोग भोगी ।

आज की इन विषम परिस्थितियों में भगवान् कृष्ण को स्मरण कर हम अपने कर्त्तव्य का पालन कर सकते हैं ।

कृष्ण महाराज ने कहा था—"स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ।" स्वधर्म का अर्थ है अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए यदि प्राणों की आहुति भी देनी पडे तो श्रेयस्कर है ।

योगीराज की गीता कर्त्तव्य का ही पाठ पढा रही है । प्रसिद्ध स्वतन्त्रता सेनानी लोकमान्य तिलक ने कहा था—

अपहाय निजं कर्म
कृष्ण कृष्णेति वादिन ।
ते हरेर्द्वेषिण: पापा
धर्मार्थंजन्म यद्धरे ॥

जो कर्त्तव्य से तो पराङ्मुख रहते हैं और कृष्ण के नाम की माला जपते हैं, वे कृष्ण के सब से बडे दुश्मन और पापी हैं । क्योंकि कृष्ण का जन्म धर्म की स्थापना के लिए हुआ था ।

जो भगवान् कृष्ण के नाम की माला तो जपते हैं, बडे बडे मन्दिर और मूर्तियां बनवाते हैं कीर्तन करते हैं परन्तु अपने चरित्र को नहीं सुधारते, वे केवल मात्र भाण्ड के समान ही हैं ।

योगीराज कृष्ण का एक नाम है गोपाल । हम जय गोपाल—जय गोपाल करने वाले इस ओर कभी ध्यान नहीं देते कि गोपाल के देश में सूर्य निकलने से पहले हजारों गौओं को कत्ल कर दिया जाता है ।

आज देश को मुरलीधर कृष्ण की नहीं चक्रधर कृष्ण की आवश्यकता है । आज हमें रासलीला वाले कृष्ण का अनुयायी नहीं अन्याय का विरोध करने वाले कृष्ण का अनुयायी बनना होगा ।

चित्र एक माध्यम है उसके द्वारा हमें वैसा बनने का प्रयत्न करना चाहिए ।

महाभारत काल में तो एक द्रोपदी का चीरहरण हुआ था, आज नारी जाति के सम्मान का दम भरने वाले हमारे देश में अनेक द्रोपदियों का भरे ग्राम चीरहरण ही नहीं शरीर नीलाम होता है ।

आज हम इस देश में ही नहीं, अब सारे विश्व में श्रीकृष्ण जन्माष्टमी का पर्व धमधाम से मना रहे हैं तो हमें इस बात की प्रतिज्ञा करनी चाहिए कि हम उस युगपुरुष के सच्चे अनुयायी बनकर देश में व्याप्त अन्याय के विरुद्ध सतत संघर्ष करते हुए अपने कर्त्तव्य का पालन करेंगे । महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के शब्दों में—

'श्रीकृष्ण जी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है । उसका गुण, कर्म, स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है, जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्रीकृष्ण जी ने जन्म से मरण पर्यन्त कुछ भी बुरा काम किया हो ऐसा नहीं लिखा ।"

जन्म दिन मनाइये

रचयिता—स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती

ब्रज के कन्हैया का, गीता के रचैया का, गुणगान गाइये।
भादो बदी अष्टमी को, पर्व जन्माष्टमी को, जन्म दिन मनाइये॥
मुरली बजैया से, दाऊ जी के भैया से, शिक्षा शुभ पाइये।
योगी महान् से वेदो के विद्वान् से, जीवन बनाइये॥

रुक्मणी के पति को, योगीराज यति को, इतना न लजाइये।
वृषभान की दुलारी को, राधा कुमारी को, पत्नी ना बनाइये॥
गोकुल के गोपाल को, यशोदा के लाल को, दोष न लगाइये।
कंसासुर को मारने को अविद्या असुर को, तीर ज्ञान के चलाइये॥

परस्पर द्वेष, दूर कर दो क्लेश, बंशी प्रेम की बजाइये॥
ज्योति ज्ञान की जगाओ, सत्य रास्ता अपनाओ रूढ़िवाद को मिटाइये।
ऐसा मिला स्वर ताल, आये रक्त में उबाल, गीत क्रान्ति के गाइये।
आलस को त्याग, लगा पाखण्डो में आग, निज राष्ट्र को बचाइये॥

बनो सदाचारी, भक्त कृष्ण के पुजारी, शुद्ध आचरण बनाइये।
मोहन मुरारी का, सुदर्शन चक्रधारी का, जन्म दिन मनाइये॥

श्री विजय कुमार जी अस्वस्थ

"आर्य साहित्य के प्रमुख प्रकाशक संस्थान के संचालक तथा वेद-प्रकाश मासिक के सम्पादक विजय कुमार जी को ११ जुलाई को हार्ट अटेक हो गया था। तत्काल मूलचन्द हस्पताल में दाखिल हो जाने से अब उनका स्वास्थ्य सुधार पर है।

उनके नाम व्यक्तिगत पत्रों के उत्तर देने में वे असमर्थ रहे हैं। आशा है कृपालु पाठक इसके लिए उन्हें क्षमा करेंगे।"

□

आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली का वार्षिक निर्वाचन

आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली राज्य का वर्ष ८८-८९ के लिए निर्वाचन रविवार, ११ सितम्बर ८८ को साय ४ बजे आर्यसमाज १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली के सभागार में होगा। कृपया सम्बन्धित आर्यसमाजों के प्रतिनिधि एव सहयुक्त सदस्य यथा-समय पधारने की कृपा करें।

भवदीय
डा० शिवकुमार शास्त्री
महामन्त्री

(पृष्ठ ७ का शेष)

श्रीकृष्ण का चरित्र शुद्ध और पवित्र था

ऐसा नगर दो सौ वर्षों से कम समय में नही बन सकता है।'

(तारीखे हिन्द १८५३ ईस्वी पृ० १११)

लूट मे पाच सोने की मूर्तिया आई जिनकी आखे मणि जटित थी। एक अन्य मूर्ति मे अमूल्य रत्न थे। इस के अतिरिक्त चांदी की एक सौ मूर्तियां लूट मे आई जो कि एक सौ ऊटो पर लादी गई।

(तारीखे हिन्द पृष्ठ ११२ कलकत्ता)

२०-२० दिन महमूद मथुरा मे ठहर कर इस को बरबाद करता रहा और मूर्तियो को तुड़वा कर मन्दिरो मे बुरे बुरे कार्य किए। तोडी हुई चादी की मूर्तियो से एक सौ ऊट भर ले गया। पाच मूर्तियां सोने की थीं। उन मे से एक का वजन हमारे अब के ४ मन से ऊपर था।

इतिहास तिमिरनाशक भाग १ पृष्ठ १८ १८८३ ई०

पाठक वृन्द! हम आप को कहां तक बताएं। सोमनाथ आदि की लूट का वृत्तान्त, देहली की लूट, कागडा और कन्नौज की तबाही व बरबादी का वृत्तान्त पढ कर आप समझ सकते हैं कि आर्यावर्त्त साधारणत. और मथुरा विशेषत उस समय किस उच्च पद में अवस्थित होगी।

श्री कृष्ण जी ने बड़े उत्साह से मथुरा को देखा और सारे बाजार में सैर करते हुए स्वर्णिम गढ (किला राजा कंस) के द्वार पर पहुंचे। उस गढ़ के चारों ओर एक गहरी खाई थी। जब उस से पार हुए। प्रथम एक सुदृढ धनुष कमान मार्ग में उन को दी गई। जिस पर बहुत लोग जोर करते थे परन्तु तोड नहीं सकते थे श्री कृष्ण जी (जो बल और शक्ति के पुंज थे) ने उस कमान को तोड डाला और सब पहलवानो को लज्जित किया। राजा कंस ने जब कमान की बात सुनी तो दुःखी हुए। पुन कंस ने सलु वत्सल, चाणूर, मुष्टक चार प्रसिद्ध पहलवानों को कुश्ती के लिए भेजा। जिस मैदान में यह पहलवान कुश्ती के लिए समुद्यत थे, उस के द्वार पर एक मस्त हाथी भी कृष्ण जी और बलराम जी के वधार्थ छोड रखा था। इन दोनो शूरवीरों ने हाथी को मार गिराया। जब पहलवानो के अखाड़े मे पहुंचे तो उन मे से दो नामी योद्धा मुष्टक और चाणूर इन दोनो के सम्मुख हुए। श्री कृष्ण जी से चाणूर की कुश्ती हुई और बलराम जी से मुष्टक का सामना हुआ। अन्तत दोनो वीरों ने कंस के दोनों पहलवानों को मारा और अखाड़े में पछाड़ दिया। सलु और वत्सल ने जब यह अवस्था अपनी आखों से देखी तो मृत्यु को सम्मुख देख कर भागे। कवि के वचनानुसार :—

अखाड़ा छोड के बेदीन भागे,
दलेरोमर्द कुश्तीगीर भागे।

रहे उस जा फकत दोनों बिरादर,
न आया सामने कोई दिलावर॥

इस के पश्चात् राजा कंस ने देखा कि अब इन का सामुख्य कोई नहीं कर सकता। स्वयं तलवार लेकर उठा परन्तु कुछ न कर सका। उन का प्रभाव उस पर छा गया। वह लडखडा कर गिर पडा। श्री कृष्ण जी ने उस की तलवार छीन ली और उस की छाती पर चढ़ कर उसे मार डाला। नगर में कुहराम मच गया। कंस के भवनों में चीत्कारपूर्ण रुदन हुआ। राजा कंस का शरीर यमुना के तट पर जलाया गया। और श्री कृष्ण जी ने उस के सब सम्बन्धियो को आश्वासन दिया। इसके पश्चात् वह कारागार में माता पिता के दर्शनों को गए।

नये सिरे से खुशी के तराने और प्रसन्नता के शादियाने मथुरा में बज उठे। घर-घर आनन्द विभोर हुआ। अत्याचारी का अत्याचार समाप्त और न्याय युग का प्रारम्भ हुआ। मथुरा के उद्यान ने अपना पुराना बागबाग पाया अर्थात् कृष्ण जी और बलराम जी ने दूसरे दिन राजा उग्रसेन को ढूंढा। ज्ञात हुआ कि वह एक अन्धेरी काल-कोठरी में कैद हैं और अपने जीवन से निराश हैं। दोनों भाई वहां पधारे और अपने हाथ से उन के बन्धन तोड कर राजगद्दी पर आ बिठाया। ताज उन के सिर पर रखा। उन के नाम की मनादी (घोषणा) हुई। घर-घर में आनन्द की वर्षा हुई। राजनैतिक बन्दी स्वतंत्र कर दिए गए। दुष्ट जनों को दण्ड दिया। सज्जनों का साहस बढ़ा। देश में शान्ति स्थापित हुई। नन्द जी गोकुल लौट आए। वहां एक और विलक्षण विद्वान् सांदीपिन जी से दोनों भाई विभिन्न विद्याओं को पढ़ते रहे और वर्षों तक शिक्षा प्राप्त कर के अति प्रसिद्ध हुए।

जो सफलता श्री कृष्ण जी को और बलदेव जी को कंस के मुकाबले और प्रसिद्ध पहलवानों से युद्ध करने में हुई, उन से कुछ लोगों का यह विचार है कि यह बात चमत्कार के बिना कैसे सम्भव हो सकती है। इसलिए हम उन की सेवा में निवेदन करते हैं कि वह कृपापूर्वक रुस्तम, बर्जी, सोहराब, फ्रोबर्ज, असफन्दयार साम व नरीमान की कथाओं को पढ़ें। तब कदापि ऐसा झूठा विचार उन के मन मे न आएगा। इस में कोई संदेह नही कि वह बड़े प्रसिद्ध निरामिषभोजी योद्धा थे। दूध मक्खन, जो सब से श्रेष्ठ और शक्तिवर्द्धक भोजन है, वह उन्होंने बहुतायत से खाया था और बहुत व्यायाम किया था। रात दिन खेल कूद के अतिरिक्त जो ब्रह्मचर्य के लिए आवश्यक है उनका कोई कार्य न था। ४८ वर्ष तक उन्होंने पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन किया। धर्म शिक्षा, विद्या प्राप्ति, सैर, स्वतन्त्रता के अतिरिक्त दुष्ट कर्मों से सदा पृथक् रहे। यही सब से उत्तम साधन उन की वीरता के हैं। २५ वर्ष की अवस्था में मथुरा पहुंचे। उस के पश्चात् मगध के राजा जरासन्ध से १८ बार युद्ध हुआ जिन में किसी अवस्था में भी २३ वर्ष से न्यून व्यतीत नहीं हुए होंगे। उपनिषद् से ज्ञात होता है जैसा कि हम पूर्व सिद्ध कर चुके हैं कि वह पूर्ण ब्रह्मचारी रहे। अतः अवश्य ४५ वर्ष तक उन्होंने ब्रह्मचर्य का पालन किया होगा।

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R N No. 32387/77 Post in N.D P S O 01 1, 2-9-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस न० यू १३९

आर्य युवक परिषद् दिल्ली (पंजीकृत)
द्वारा संचालित

सत्यार्थप्रकाश परीक्षा में बैठें

परीक्षा इस वर्ष रविवार २५ सितम्बर १९८८ को होगी

पाठ्य-क्रम

१. सत्यार्थ रत्न—सत्यार्थप्रकाश का तीसरा, पांचवां व दसवां समुल्लास। कुल ३ समुल्लास।

२ सत्यार्थ भूषण—सत्यार्थप्रकाश का पहला व छठे से नवां समुल्लास। कुल ५ समुल्लास।

३ सत्यार्थ विशारद—सत्यार्थप्रकाश का द्वितीय, चतुर्थ व ग्यारहवें से चौदहवां समुल्लास। कुल ६ समुल्लास॥

४ सत्यार्थ शास्त्री-सम्पूर्ण सत्यार्थप्रकाश पर कम से कम ३० पृष्ठ फुलस्केप साइज का निबन्ध स्वतः लिखना होगा।

भाषा और लिपि—इन परीक्षाओं का माध्यम हिन्दी भाषा व लिपि देव नागरी ही होगी।

प्रश्न-पत्र-पहली तीन परीक्षाओं का अलग अलग एक एक प्रश्नपत्र होगा।

केन्द्र व्यवस्थापक अपने-अपने नगर, ग्राम, संस्था तथा क्षेत्र में इन परीक्षाओं के प्रचार और परीक्षार्थी तैयार करने का उत्तरदायित्व भली भांति सम्भाल सकने में समर्थ कोई भी व्यक्ति केन्द्र व्यवस्थापक बन सकेगा।

पारितोषिक एवं छात्रवृत्तियां भी प्रदान की जाती हैं।

प्रधान कार्यालय
परीक्षा कार्यालय
एच-६४, अशोक विहार
दिल्ली-११००५२

बिहार के भूकम्प पीड़ितों की सहायतार्थ आर्यसमाजों की ओर से

सार्वदेशिक सभा ने सहायता कोष खोला

सभाप्रधान स्वामी आनन्दबोध सरस्वती पीड़ित क्षेत्रों के दौरे पर

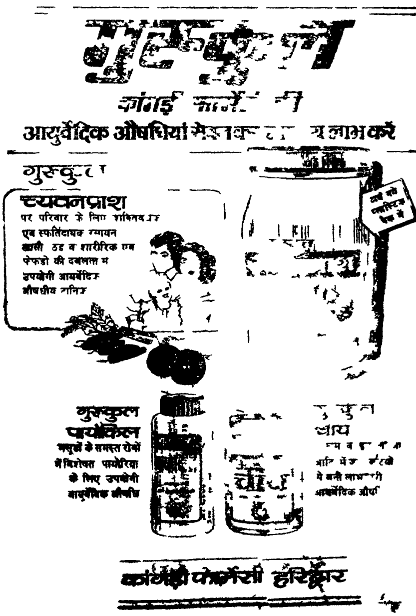
दिल्ली २४ अगस्त। उत्तरी बिहार के मुंगेर और दरभंगा क्षेत्र में पिछले दिनों जो जोरदार भूकम्प आया था, उसमें गैर सरकारी सूचना के अनुसार एक हजार के करीब स्त्री पुरुष और बच्चे मारे गए तथा कई हजार लोग घायल व बेघरबार हो चुके हैं।

आर्यसमाज के शिरोमणि संगठन सार्वदेशिक सभा ने पीड़ितों की सहायता के लिए सभा में एक सहायता कोष खोल दिया है। सभा प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने देश की जनता तथा आर्य जनों से विशेषकर आर्यसमाजों से अपील की है कि वह इस संकट की घड़ी में पीड़ितों की सहायता के लिए अन्न, वस्त्र व धन एकत्र करके सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, महर्षि दयानन्द भवन, रामलीला मैदान, नई दिल्ली-२ के पते पर भेजें। धन राशि मनीआर्डर, चैक अथवा बैंक ड्राफ्ट-सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के नाम ही भेजा जावे।

आर्यसमाज का शिष्ट मण्डल सभा प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती के नेतृत्व में भूकम्प पीड़ित क्षेत्रों के दौरे पर रवाना हो रहा है।

वार्षिकोत्सव

आर्यसमाज कन्नौर बहादुर हरि० के ३१ वें वार्षिक सम्मेलन में 'सामवेद पारायण यज्ञ" का आयोजन १२ अक्तूबर १९८८ से १६ अक्तूबर १९८८ तक होगा। जिसके ब्रह्मा महात्मा रामकिशोर जी महाराज होंगे। —सच्चिदानन्द शास्त्री
प्रचार मंत्री



सेवा में—

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली न० १३ ... दिल्ली ३१ में मुद्रित रजि नं० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ४७ | रविवार ११ सितम्बर १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | भाद्रपद २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर ३० पौंड

सार्वदेशिक सभा के आह्वान पर अखिल भारतीय समता दिवस सम्मेलन का आयोजन

हरिजन हिन्दू समाज के आधार स्तम्भ हैं

दिल्ली ३ सितम्बर।

योगीराज श्रीकृष्ण जन्मोत्सव एवं दिल्ली की समस्त आर्यसमाजों की ओर से प्रमुख आर्यसमाज दीवानहाल में समारोह पूर्वक सम्पन्न हुआ। विगत एक सप्ताह से चल रहे यजुर्वेद पारायण यज्ञ की पूर्णाहुति से पूर्व सैकड़ों हरिजन युवकों का सामूहिक यज्ञोपवीत संस्कार किया गया।

समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में बोलते हुए केन्द्रीय इस्पात और खान मंत्री श्री योगेन्द्र मकवाना ने कहा—योगीराज कृष्ण का जीवन हमें एकता और समता का सन्देश देता है। हिन्दू जाति में व्याप्त कुरीतियों तथा बुराइयों को दूर करने के लिए आर्यसमाज द्वारा किया जा रहा प्रयत्न सराहनीय है। हरिजनों को समाज में गौरव पूर्ण स्थान दिलाने के लिए आज समता दिवस समारोह का यह कार्यक्रम इसी का प्रतीक है। सरकार इन प्रयत्नों की सराहना करती है।

समारोह के अध्यक्ष स्वामी आनन्दबोध सरस्वती ने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा—योगीराज कृष्ण जहां आध्यात्मिक सत थे, वहां वह महान समाज सुधारक भी थे। हिन्दू जाति अपनी प्राचीन सांस्कृतिक सभ्यता के बल पर, विदेशी आक्रान्ताओं के अनेक अत्याचारों के बावजूद आज भी संगठित और समृद्ध है।

स्वामी जी ने कहा—आज सभी आर्यसमाजों को हिन्दू जाति में पूरा सम्मान व स्थान दिलाने के लिए अखिल भारतीय स्तर पर समता अधिकार दिवस का आयोजन किया गया है। हरिजनों के मंदिर प्रवेश पर रूढ़िवादी और संकीर्ण मनोवृत्ति के लोगों ने आपत्तियां करके हिन्दू जाति को कमजोर व विघटित करने का दुस्साहस किया है। किन्तु आर्यसमाज के मंदिर सब के लिए समान रूप से खुले हुए हैं। हरिजनों को वहां आने, हवन का सदस्य बनने और पंडित तथा अधिकारी बनने का पूरा अधिकार है। आर्यसमाज के गुरुकुल व शिक्षण संस्थाएं भी उनके लिए समान रूप से खुली हुई हैं। सैकड़ों हरिजन आर्यसमाज मंदिरों में पुरोहित के कार्य पर लगे हुए हैं। आर्यसमाज कर्म के आधार पर वर्ण-व्यवस्था को मानते हुए हरिजनों को हिन्दू जाति का आधार स्तम्भ मानता है। १९८२ में मीनाक्षीपुरम गांव के सभी हरिजनों का इस्लामीकरण किया गया था, आर्यसमाज ने पुनः सब को शुद्ध किया और हिन्दू जाति में वापस लाने का महान् कार्य किया। उसके प्रयत्न बराबर जारी हैं।

आज हम सब संकल्प करते हैं कि इस देश में जात-पात और छुआछूत के लिए कोई स्थान नहीं है। हम सब एक और योगीराज श्रीकृष्ण तथा मर्यादा पुरुषोत्तम राम के वंशज हैं।

इस अवसर पर सनातन धर्म सभा के प्रमुख विद्वान् श्री रमाकान्त गोस्वामी, प्रसिद्ध विद्वान् डा० वाचस्पति उपाध्याय, प० शिवकुमार शास्त्री और दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल और श्रीमती कुमारी ने भी अपने-अपने विचार प्रकट किए।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने कहा कि हम अभी तक अस्पृश्य कहे जाने वाले लोगों में आत्म विश्वास जागृत नहीं कर पाये हैं। आज यहां पर सैकड़ों हरिजन युवकों को यज्ञोपवीत दिया गया तथा उन्हें यज्ञ करने का अधिकार दिया गया। मुझे विश्वास है कि ये युवक अपने को मूल धारा का अंग समझेंगे तथा सभी कार्यक्रमों में समान रूप से भाग लेंगे।

समता दिवस सम्मेलन

आर्यसमाज खिचड़ीपुर में

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के आह्वान पर सम्पूर्ण विश्व की आर्यसमाजों में समता दिवस सम्मेलनों का आयोजन किया गया। आर्यसमाज खिचड़ीपुर में श्री दामोदर आर्य के प्रयास से हरिजन युवकों का सामूहिक उपनयन संस्कार किया गया। यज्ञ के ब्रह्मा प० वेदव्यास जी थे। यज्ञोपरान्त श्री सत्यदेव स्नातक तथा प० विष्णुदत्त के मधुर भजन हुए और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने युवकों को आशीर्वाद दिया। स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती ने बताया कि दिल्ली की पुनर्वास कालोनियों में समानता के अधिकार के लिए जागृति की महती आवश्यकता है। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा इस दिशा में कार्य कर रही है। यह संतोष की बात है। स्वामी जी महाराज ने परमात्मा की स्थिति तथा कार्य के विषय में भी सरल रोचक शैली में प्रकाश डाला। वेदोपदेशक स्वामी स्वरूपानन्द जी महाराज ने उपस्थित आर्य जनों को सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने नव दीक्षितों को साधुवाद देते हुए, आशा व्यक्त की कि वे अपने क्षेत्र में मानव मात्र के कल्याण के लिए कार्यक्रम अपने हाथ में लेंगे तथा व्यसनों से इस क्षेत्र की जनता को मुक्त करायेंगे। इन पुनर्वास कालोनियों में सरकारी आंकड़ों के अनुसार व्यसन एक विभीषिका बन चुका है जिससे छुटकारा तभी पाया जा सकता है, जब यहां के लोगों में जागृति आ जाए। क्षेत्रीय निगम पार्षद श्री शिवकुमार जी, श्री त्रिपाठी जी, श्री सभा प्रधान तथा अन्य महानुभावों ने भी अपने विचार व्यक्त किए।

समानता अधिकार सम्मेलन

आर्यसमाज कीर्ति नगर मे

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के निर्देश पर आर्यसमाज कीर्ति नगर में भी समता दिवस का आयोजन किया गया। आर्यसमाज के विद्वान् पुरोहित ने विभिन्न क्षेत्रों में विचारकों चिन्तकों को आमन्त्रित करके इस समारोह को एक विचार गोष्ठी का स्वरूप दे दिया। दिल्ली प्रदेश की भारतीय जनता पार्टी के अध्यक्ष श्री मदन लाल खुराना ने आर्यसमाज के चिन्तन की प्रशंसा करते हुए आशा व्यक्त की कि शीघ्र ही हमारे हरिजन भाई जागरूक होकर अपने निर्माण का संकल्प लेंगे। दिल्ली महानगर परिषद में प्रतिपक्ष के नेता

(शेष पृष्ठ १२ पर)

सम्पादक—प० यशपाल 'सुधांशु' एम०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

हवन-यज्ञ और विज्ञान

लेखक—स्वामी वेदमुनि परिव्राजक
अध्यक्ष—वैदिक संस्थान नजीबाबाद (उ० प्र०)

★

८ या ९ वर्ष पहले की बात है, आर्यसमाज मेरठ सदर में मेरा वेद-प्रवचन कार्यक्रम चल रहा था। एक दिन अपने रात्री कालीन प्रवचन में मैंने यज्ञ के द्वारा वायु-शोधन होकर रोगनिवारक तथा स्वास्थ्य-वर्द्धक पर्यावरण बन जाने की बात कही। अगले दिन रात्री के प्रवचन से पूर्व एक सज्जन मेरे पास आये और गत रात्री के प्रवचन की पर्यावरण के शुद्ध होने वाली चर्चा की ओर मेरा ध्यान दिलाते हुए बोले—"यज्ञ से दुर्गन्धि का नाश नहीं होता।" मैंने कहा, "होता है।" वह तीव्र होकर बोले; नहीं होता।" मैंने पुन कहा, "होता है श्रीमान् जी!" "तीसरी बार वह और भी कड़क कर बोले 'नहीं होता।"

अब की बार जब मैंने उन्हें पहले वाला ही उत्तर दिया किन्तु स्वर मेरा कुछ कड़ा हो चुका था तो वह बोले कि 'सुगन्धि तो फैलती है किन्तु दुर्गन्धि का नाश नहीं होता।" तब मैंने पूछा कि 'दुर्गन्धि का नाश क्यों नहीं होता?" तो वह बोले "दुर्गन्धि और सुगन्धि के परमाणु अलग-अलग होते हैं। अतः हवन से सुगन्धि का प्रसारण हो जाता है किन्तु क्योंकि दुर्गन्धि के परमाणु तो आकाश में बने ही रहते हैं, इस कारण से दुर्गन्धि नष्ट नहीं हो पाती।

इतने वार्तालाप के पश्चात् मैंने उनसे परिचय पूछा तो उन्होंने यह बतलाया कि 'मैं यहीं मेरठ कालिज में कैमिस्ट्री विज्ञान पढ़ाता था।" बाद में मुझे जानकारी हुई कि वह डी०एन० डिग्री कालिज के कैमिस्ट्री के अवकाश प्राप्त प्रवक्ता श्री गोयल जी हैं। मैंने कहा 'अच्छा तो आप इस मैकाले के शिकार हैं।" इस पर उन का मुखमण्डल तमतमा गया किन्तु वह कुछ कह नही सके।

जब उन्होंने अपने को कैमिस्ट्री का प्रोफेसर बता दिया तो मैंने भी उनसे उसी स्तर पर वार्तालाप करना पसन्द किया और उनसे कैमिस्ट्री का ही यह प्रश्न पूछ लिया कि परमाणु द्रव्य है या गुण?" वह इस प्रश्न का कोई उत्तर नहीं दे सके। मैंने उनसे दूसरी बार फिर यही प्रश्न किया, "प्रोफेसर साहब बताइये तो परमाणु द्रव्य है या गुण?" जब दूसरी बार भी वह कोई उत्तर न दे सके तो फिर मैंने यह पूछा कि अच्छा यह बताइये कि "गन्ध द्रव्य है अथवा गुण?" वह अब भी चुप रहे। इस प्रश्न को भी पूर्व प्रश्न की भांति मैंने फिर दोहराया किन्तु उन्होंने फिर भी उत्तर नहीं दिया।

जब मैं प्रश्न उनसे कर रहा था तब आर्यसमाज के मन्त्री श्री [illegible] जी मिसल पूर्ण [illegible] चुके थे और वह बड़ी रुचि ले रहे थे, मेरे इन प्रश्नों में तथा साथ ही कभी मेरे और कभी प्रोफेसर गोयल जी के मुखमण्डल की ओर देख लेते थे। उन्हें निरुत्तर देख कर मुझे सूझा कि उदाहरण से अपनी बात इनके सम्मुख रखनी चाहिये। यह विचार कर मैंने उनसे निवेदन किया कि "मेरी बात समझने में आप को परेशानी हुयी है इसलिए अब मैं एक उदाहरण देता हू किन्तु उससे पहले यह जानना चाहूंगा कि आपने गणित तो पढ़ा ही होगा।" उन्होंने इसे स्वीकार किया तो फिर मैंने यह पूछा कि "गणित के अन्तर्गत सम्पत्ति के बटवारे के प्रश्न भी हल किये ही होंगे?" उन्होंने यह भी स्वीकार किया। इसके पश्चात् मैंने यह प्रश्न किया कि "सम्पत्ति के बटवारे के प्रश्न को हल करते समय प्रश्न हल करने वाले के पास क्या सचमुच कोई सम्पत्ति होती है?" तब उन्होंने नकार करते हुए यह कहा कि "केवल कल्पना कर ली जाती है कि मान लिया सम्पत्ति एक है।" तब उनसे हाथों यह भी पूछ लिया कि फिर "इससे प्रश्न ठीक-ठीक हल हो जाता है?" वह बोले, "हां, यदि हल करने वाले ने भाग-गुणा आदि ठीक ठीक लगा लिया होता है तो उत्तर बिल्कुल ठीक आता है।"

अब मैंने उन्हें अपनी बात समझाने के लिए उनसे उनके क्षेत्र के ही भोजन का उदाहरण देते हुए कहा, "कल्पना कीजिये कि आपने कल उड़द की धुली दाल और बासमती के चावल खाये थे। दाल शुद्ध गाय के घृत में हींग व जीरे का छौंक लगाकर तैयार की गयी थी। चावलों पर ऊपर से भी गोघृत लगा दिया गया था, फुलका कांसे के कटोरे में पिघले हुए गोघृत में डूबा था और साथ में एक कटोरी में डूबा रक्खा था तथा उसमें भी गोघृत पड़ा हुआ था। वह सब पदार्थ सुगन्धित ही थे, दुर्गन्धित तो इनमें से कोई पदार्थ था ही नहीं।" उन्होंने स्वीकार किया कि "सब सुगन्धित थे, कोई दुर्गन्धित नहीं था।" साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि "दुर्गन्धित होते तो खाते ही क्यों?" मैंने पूछा आज प्रातः-काल जब शौचालय में गये, पेट से सुगन्धि निकली या दुर्गन्धि? कल आपने खाये थे सुगन्धित पदार्थ और प्रातः मलद्वार से निकला दुर्गन्धियुक्त मल। इसका स्पष्ट ही यह अर्थ है कि परमाणु न सुगन्धि के होते हैं और न दुर्गन्धि के। वह तो सुगन्धि और दुर्गन्धि को परिस्थिति के अनुसार कहिये अथवा अवसर के अनुसार संसर्ग से ग्रहण कर लेते हैं और परमाणु द्रव्य है तथा गन्ध गुण है, नैमित्तिक गुण—जो निमित्त से; कारण बन जाने या उपस्थित हो जाने पर ग्रहण और पृथक् किया जाता है, स्वाभाविक गुण होता अर्थात परमाणु सुगन्धि के हुआ करते तो अपने उस स्वाभाविक गुण को छोड़ नहीं सकते थे।

तीन-चार दिन पश्चात् प्रो० गोयल एक अन्य प्रोफेसर को साथ लेकर आये और बताया कि "आप आजकल मेरे स्थान पर नियुक्त हैं अभी पिछले तीन वर्ष जर्मन रहकर आये हैं। वहां अनुसन्धानात्मक कार्य हेतु गये थे। आप के अनुसन्धान का विषय सूर्य की किरणों की आकाश मण्डल में गति तथा आकाश-मण्डल और भूमण्डल पर उनका प्रभाव है।" फिर कहने लगे कि "मैंने आपके विषय में इनसे चर्चा की तो यह आपसे वार्तालाप करने आये हैं।" सामान्य वार्तालाप के पश्चात् मैंने नवागन्तुक महोदय से कहा—"पूछिये आप क्या पूछना चाहते हैं? मैं [illegible] होऊंगा तो [illegible] बता-ऊंगा।" प्रसंग में मैंने पूछी-उनके अनुसन्धान का [illegible] पूछा तो उन्होंने पूर्वोक्त बताया।

उन्होंने मुझ से दो प्रश्न किये। एक तो यह कि "क्या कहीं वेद में [illegible] है" और दूसरा "क्या वेद की [illegible] ही यज्ञ-प्रक्रिया की दृष्टि से [illegible] है?" [illegible] को एक वेद-वाक्य बताया-"[illegible]" यह [illegible] को चारों ओर से [illegible] है। उन्होंने इसे विज्ञान सम्मत बताया और तुरन्त अपनी स्मृति-पत्रिका में लिख लिया। मैंने कहा न तो 'मुझे पूरा मन्त्र स्मरण है, न इस मन्त्र का पता ही मेरी स्मृति में है अतः परिश्रम आपको करना पड़ेगा, खोजिये, यथा सम्भव ऋग्वेद या अथर्ववेद में मिलेगा।" उन्होंने कहा "मैं खोज लूंगा।"

उनके दूसरे प्रश्न के उत्तर में मैंने उन्हें ऋग्वेद २।१३।६ तथा ऋग्वेद ३।४४।३ यह दो मन्त्र अपनी स्मृति-पत्रिका में से लिखा दिये जिन में सूर्य में खाद्य सामग्री का भण्डार बताया गया है तथा सूर्य, पृथिवी और अन्तरिक्ष के द्वारा उनकी उपलब्धि का वर्णन है। वह इस सब से बड़े सन्तुष्ट हुए और कहने लगे कि "मैं कभी-कभी कोई प्रश्न सामने आने पर आपसे पत्र-व्यवहार की अनुमति चाहूंगा।" मैंने कहा "मैं सदैव इस सेवा के लिए तैयार रहूंगा किन्तु विज्ञान मेरा विषय नहीं है। हां, वेदाध्ययन करते समय जब कोई मन्त्र अथवा सूक्त इस प्रकार का सामने आता है तो उस पर स्व-क्षमता मनन कर तत्सम्बन्धी अन्य सामग्री भी खोज कर उसे अपनी स्मृति-पत्रिका मे लिख लेता हूं।

प्रिय पाठकगण! श्रीयुत प्रोफेसर गोयल जी जैसा मैंने अपने पूर्व लेख "यज्ञ और वृष्टि" में लिखा है, सचमुच महर्षिवर दयानन्द के "सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में" के सूत्र के अनुयायी सिद्ध हुए किन्तु स्वनाम-धन्य विश्व प्रसिद्ध विज्ञानाचार्य श्री स्वामी सत्यप्रकाश जी ऐसे नहीं हैं क्योंकि वह सब बातों में स्वामी दयानन्द के साथ नहीं चले हैं।

द्वापर युग के महान् आदर्श नेता श्रीकृष्ण

ले०—श्री चमनलाल आर्य, अशोक विहार

प्रायः श्रीकृष्ण हमारे सामने दो रूपों में आते हैं, एक रासलीलाओं के श्रीकृष्ण और दूसरे योगिराज, शूरवीर, देशभक्त श्रीकृष्ण। भारतीय सभ्यता के चमकते हुए युग पुरुषों में योगेश्वर श्रीकृष्ण जी का नाम और काम दोनों ही अपनी सत्ता में बड़ी महत्ता रखते हैं। अनेकों प्रसङ्ग के साथ महाभारत में मिलते हैं, प्रत्येक मास में जीवन का कोई न कोई रहस्य छिपा हुआ है। ... जीवन विविध कलाओं से ... वास्तव में वे कलानिधि ... आचार, विचार, धर्म, ...ता, नीति, प्रभु निष्ठा, मित्र-प्रीति, देशभक्ति, गुरुपूजा, उदारता, मनोबल, पाप और अत्याचार से, संग्राम, प्रजा पालन, आत्मज्ञान, परिवार मर्यादा, योगास्था और आत्म सम्मान तथा सहनशीलता आदि कितने ही विशेष गुण इनकी कलाएं बनकर चमकती एंव सभी को चमकाते थे। वह केवल तथाकथित सोलह कलाओं वाले न होकर सहस्रों कलाओं वाले युग पुरुष थे, और यही कारण है कि पांच सहस्र वर्ष बीतने पर भी आज भी युग और मन पर योगिराज श्रीकृष्ण का आधिपत्य श्रीकृष्ण जी से अन्यत्र पर्यन्त कुछ भी किया जो ऐसा नहीं मिला। संभवतः इन्हीं अलौकिक गुणों के कारण आज करोड़ों मनुष्य उनको ईश्वर अवतार और साक्षात् भगवान मान-कर उनकी आराधना और पूजा करते हैं।

जब श्रीकृष्ण जी का प्रादुर्भाव हुआ तो देश की हालत बड़ी शोचनीय थी। समूचा देश छोटे-छोटे खण्डों में बंटा था। प्रत्येक क्षेत्रीय राजा प्रजा पर नाना प्रकार के अत्याचार करता था। आततायी जरासन्ध ने ८४ राजाओं को कैद कर रखा था और सौ होने पर सब की बलि देने की योजना बनाई थी, कंस ने अपने पिता उग्रसेन को गद्दी से उतार कर कारागार में डाले रखा था और आप राजा बनकर प्रजा पर अमानुषिक अत्याचार कर रहा था कौरव अन्याय से पाण्डवों का राज्य हड़पकर अनैतिक व्यवहार कर रहे थे। चहुं ओर अराजकता ही अराजकता का साम्राज्य था। प्रजा बहुत दुःखी और त्रस्त थी, सब जगह अशान्ति थी। स्त्रियों का अस्तित्व सुरक्षित न दूर किया। यही नहीं भारी वर्षा के कारण ग्वालों पर मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ा जबकि उस समय उनके दुख दर्द का सुनने वाला कोई न था, उस समय श्रीकृष्ण जी ने इनको गोवर्धन पर्वत के द्वारा राहत पहुंचाई। ऐसे ऐसे अनेकों उदाहरण लोगों के ऊपर सुख की वर्षा करने के इनके जीवन में मिलते हैं। यही नहीं, यह तो निश्चित ही था कि यदि श्रीकृष्ण जी पाण्डवों की तरफ न होते तो यह कदाचित् सम्भव ही नहीं था, कि पाण्डवों की युद्ध में जीत होती। उनकी जीत तो श्रीकृष्ण महाराज की अलौकिक सूझ-बूझ तथा नीति कुशलता के कारण ही हुई थी। इसीलिए श्री कृष्ण जी वृषभ (श्रेष्ठ) कहलाए। दीनदुखियों की सेवा, पीड़ितों की सहायता, असहाय त्रस्त लोगों के संतापों को दूर कर उन को सुख पहुंचाना इनका एक स्वभाव सा बन गया था। इस प्रकार उनके कोमल परन्तु उदार हृदय में सहस्रों दुखी लोगों के लिए एक तड़पन रहती थी और उनको सुख पहुंचाने के तरीके सोचते रहते थे। दीन दुखियों और स्त्रियों के लिए इनका हृदय सदा व्याकुल रहता था। इसी कारण

जी के सम्बन्ध में प्रतिष्ठा की भावना भरी है। सब के जीवनों पर उनकी छाप है। सब लोग अपने बच्चों का नाम कृष्ण, कृष्णचन्द्र, राधा कृष्ण, गोपाल कृष्ण, कुमार आदि रखकर गौरव अनुभव करते हैं। खुशी का अवसर हो या गमी का, सब जगह लोग जय कृष्ण, कृष्ण कृष्ण कहकर एक दूसरे का अभिनन्दन करते हैं। जन्माष्टमी शब्द के कान में पड़ते ही योगिराज कृष्ण का उज्ज्वल जीवन हमारी आंखों के सामने घूमने लगता है। इनके उदात्त कारनामों से भारत ही नहीं वरन सारा संसार प्रभावित हुआ है। वास्तव में इस महान दिव्य पुरुष की जितनी प्रशंसा की जावे, उतनी थोड़ी है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने तो इस दिव्य पुरुष को आप्त पुरुष कहकर पुकारा है। यही नहीं उन्होंने तो यहां तक कह दिया कि श्रीकृष्ण का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उन का (श्रीकृष्ण का) गुण कर्म स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश है, जिसमें अधर्म था। आतंक इतना छाया था कि कोई बोल नहीं सकता था। पतन की पराकाष्ठा थी। महाभारत में उस समय की दशा श्रीकृष्ण जी ने इस प्रकार वर्णन की है—"पर्वस्तां पृथ्वीं सर्वां सास्वां सरथकुञ्जराम्। यो मोचयेन्मृत्युपाशात् प्राप्नुयाद्धर्म-मुत्तमम्॥" अर्थात् धन धान्य रथ, हाथी घोड़ों से भरी यह पृथ्वी इस समय मृत्यु के मुख में जा रही थी। इस समय इसे बचाने का जो प्रयत्न करेगा, वही उत्तम धर्म का पालन करेगा। सचमुच श्रीकृष्ण जी ने इस मानवीय धर्म का पालन किया। कंस को मारकर इसके पिता उग्रसेन को कारागार से मुक्त कर राजगद्दी पर बैठाया।

जरासन्ध को युद्ध में हराकर इसकी कैद से ८४ राजाओं को छुड़ाकर प्रजाजनों को राहत पहुंचाई और अबलाओं का दुःख वैदिक शब्द तुविग्रीव उन पर अक्षरशः लागू होता है। वह उच्च-कोटि के संयमी पुरुष थे और इस कारण गृहस्थी होते हुए भी ब्रह्मचारी थे। इसी लिए वह युवा भी कहलाए। वैदिक शब्द भृष्वन्त. श्री कृष्ण जी पर पूर्णरूपेण लागू होता है। युद्ध से पूर्व जब दोनों ओर की सेनाओं को युद्ध के लिए तैयार देखकर अर्जुन न मोहवश शस्त्र फेंक दिए और युद्ध करने से इन्कार कर दिया तो ऐसे आपत्ति के समय में इस भृष्वन्तम् के गुण के कारण ही श्रीकृष्ण ने अर्जुन के सहस्रों प्रश्नों का बुद्धिपूर्वक समाधान कर और इस के मोह को दूर भगा फिर से उसको युद्ध के लिए तैयार किया और इस वार्तालाप को बाद में महर्षि वेदव्यास जी ने अपने ग्रन्थ महाभारत में २५ से ४२ अध्यायों के रूप में रखा और पृथक्

से हमको गीता के रूप में मिला। श्रीकृष्ण जी के युद्ध भूमि में अर्जुन के साथ हुए वार्तालाप का यह कितना अद्भुत ग्रन्थ है कि इसके सदृश कर्म योग की शिक्षा का और कोई ग्रन्थ गत पांच सहस्र वर्षों में संसार के साहित्य में नहीं बना। विश्व की कोई ऐसी प्रसिद्ध भाषा नहीं है जिस में यह ग्रन्थ न छपा हो देश में ही नहीं, विदेशों के बड़े-बड़े दार्शनिक इसका विधि पूर्वक पाठ करते हैं। अमेरिका का महान् दार्शनिक इमर्सन इसका पाठ करता था और इग्लैंड का प्रसिद्ध विचारक वर्ड्सवर्थ भी इस ग्रन्थ को अपने पास रखता था। इस ग्रन्थ का यथार्थ वर्णन हमारे पूर्वजों ने इस प्रकार किया है—

सर्वोपनिषदो गावो
दोग्धा गोपालनदन.।
पार्थो वत्स सुधीर्भोक्ता
दुग्ध गीतामृतं महत्॥

ऐसे थे हमारे महान् आदर्श नेता योगिराज श्री कृष्ण जी जिनके जन्म दिवस प्रतिवर्ष हम भाद्रपद कृष्ण पक्ष की अष्टमी को बड़े समारोह और उल्लास के साथ अपनी-

अपनी भावनाओं के अनुसार मनाते हैं। परन्तु सही प्रकार महापुरुषों के जन्म दिवस मनाने का तो यह है कि हम उन महान् विभूतियों के जीवन से प्रेरणा लेकर, उनके कुछ गुणों को अपना कर अपना और अपने देश, राष्ट्र और जाति का गौरव बढ़ावें। श्री कृष्ण जी यद्यपि शरीर से कर्म करते थे, परन्तु वे दिव्यता के पुञ्ज थे। वह युक्ति हीन बातों एवं रूढ़ियों में विश्वास नहीं करते थे। वह परिस्थितियों के दास नहीं थे और नहीं वह समय के साथ बहने वाले थे। श्रीकृष्ण जी ने इस आशय को गीता के ११ वे अध्याय में इस प्रकार दर्शाया है।

कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो
लो[illegible]माहर्तुमिह प्रवृत्त.।

आज भी हमारे देश की दशा श्री कृष्ण के काल की दशा से कुछ कम शोचनीय नहीं है। लोग स्वार्थरत होकर धनान्ध होकर देश के हितों को विदेशियों को बेच रहे हैं, यह लोग देश का शोषण कर रहे हैं।

(शेष पृष्ठ ७ पर)

हिन्दी और हम

लेखक—डा० रवीन्द्र अग्निहोत्री, बी/२१, नेवल कुमार
लिडो जुहू, सान्ताक्रूज (पश्चिम) बम्बई-४०० ०४९

हिन्दी आज भारत संघ की राजभाषा है, पर उसे इस स्थान तक पहुंचाने में महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज की जो भूमिका रही है उसकी प्रायः उपेक्षा कर दी जाती है। राजनीति के खिलाड़ी केवल इतना ही प्रचारित करते हैं कि देश में हिन्दी का प्रचार करने के लिए महात्मा गांधी ने दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, राष्ट्रभाषा प्रचार समिति वर्धा आदि की स्थापना की और हिन्दी प्रचार को राष्ट्रीय महत्त्व का विषय मानते हुए इसे स्वतन्त्रता आंदोलन से जोड़ दिया। कुछ लोग इसमें यह जोड़ना नहीं भूलते कि जिस प्रकार बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए सम्राट् अशोक ने अपने भाई और बहन को लंका भेजा, उसी प्रकार हिन्दी प्रचार के लिए महात्मा गांधी ने अपने पुत्र को मद्रास भेजा। निस्सन्देह, राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने हिन्दी प्रचार के लिए जो कुछ किया, वह सर्वथा प्रशंसनीय है, आज के दक्षिण भारत में हिन्दी का प्रचार करने में तो उनकी भूमिका और भी अधिक महत्त्वपूर्ण है; तथापि हमें यह स्वीकार करना होगा कि हिन्दी प्रचार के लिए किए गए समस्त प्रयासों का वह पर्याय नहीं है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को जो राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी को अपनाने के लिए जो पृष्ठभूमि मिली उसका निर्माण करने में राष्ट्र पितामह दयानन्द और उनके द्वारा स्थापित संस्था आर्यसमाज ने जो योगदान किया है उसे भुलाया नहीं जा सकता।

यह सर्वविदित है कि महर्षि दयानन्द जन्म से गुजराती भाषी थे और विद्या प्राप्ति के लिए उन्होंने संस्कृत का विधिवत् गहन अध्ययन किया। यही कारण था कि वे अपने व्याख्यान और लेख आदि में संस्कृत का ही प्रयोग करते थे। वह युग ही ऐसा था जब विद्वानों की भाषा संस्कृत ही थी। यद्यपि अंग्रेजी शासन अपनी जड़ जमाने का प्रयास कर रहा था यूरोपीय जातियों के सम्पर्क में आने पर आधुनिक ज्ञान विज्ञान से भी हमारा परिचय हुआ था, अंग्रेजी शिक्षा के कुछ केन्द्र भी बनने लगे थे और कुछ प्रबुद्ध भारतीय उस ओर आकृष्ट भी हो रहे थे, पर इस सब के बावजूद परम्परा से संस्कृत को अक्षुण्ण गौरव प्राप्त था। भारतीय विद्वानों की भाषा संस्कृत ही थी। दार्शनिक चर्चाएँ और धार्मिक चर्चाएँ संस्कृत में ही होती थीं। महर्षि उस भाषा के निष्णात विद्वान् थे और बड़ी सहजता के साथ ललित शैली में संस्कृत में संभाषण करते थे। यह भी सत्य है कि उस समय संस्कृत आम जनता की भाषा नहीं थी, जबकि महर्षि दयानन्द भारतीय समाज की जिन कुरीतियों, रूढ़ियों अन्धविश्वासों को दूर करना चाहते थे, वे समाज के गिने-चुने लोगों को ही प्रभावित करने से दूर नहीं हो सकती थीं, विशेष रूप से तब जब उन रूढ़ियों आदि का सम्बन्ध उन लोगों की जीविका से जुड़ा हुआ था जिन्हें आम जनता संस्कृत का जानकार मानती थी। इसलिए महर्षि व्याख्यान देते समय अपने साथ अनुवादक रखते थे जो उनकी बात सामान्य व्यक्ति को समझा सकें। अनुवादकों की इस बैसाखी के सहारे ही भारतीय जनमानस में चेतना और जागृति उत्पन्न करने का प्रयास करते हुए जब वे कलकत्ता पहुंचे तब उनकी भेंट उस युग के एक दूसरे विद्वान्, नेता और समाज सुधारक आचार्य केशवचन्द्र सेन से हुई। आचार्य सेन संस्कृत के भी अच्छे जानकार थे, पर उन्होंने आम जनता से सम्पर्क करने के लिए महर्षि को सुझाव दिया कि अनुवादकों की बैसाखी छोड़कर अपने पैरों पर खड़े हों। आचार्य केशव चन्द्र सेन का मानना था कि भारतीय समाज का सुधार करने, भारत की एकता को पुष्ट करने और भारत को स्वाधीन बनाने के लिए हमें किसी देसी भारतीय भाषा को ही अन्तर-प्रान्तीय प्रयोग की भाषा बनाना चाहिए जो आम जनता की भाषा हो, और वे हिन्दी को ही इस पद की अधिकारिणी मानते थे। इसीलिए उन्होंने सन् १८७५ में अपने पत्र "सुलभ-समाचार" में बंगला में लिखे लेख में लिखा,—"अभी जितनी ही भाषाएँ भारत में प्रचलित हैं। उनमें हिन्दी भाषा ही सर्वत्र प्रचलित है। इसी हिन्दी को यदि भारत की एकमात्र भाषा स्वीकार कर लिया जाए तो सहज ही यह (अर्थात् समाज का सुधार, एकता और देश की स्वाधीनता) सम्पन्न हो सकती है।" यही कारण था कि जब बंगला भाषी आचार्य केशवचन्द्र सेन की गुजराती-भाषी, संस्कृत के उद्भट विद्वान् स्वामी दयानन्द से भेंट हुई तो उन्होंने सुझाव दिया कि यदि आप पूरे भारत को अपनी बात सुनाना चाहते हैं तो हिन्दी सीखिए क्योंकि हिन्दी ही ऐसी भाषा है जिसे भारत का सर्वसाधारण व्यक्ति समझता है।" सत्य के ग्रहण करने और असत्य को त्यागने को सर्वदा उद्यत रहने का उपदेश देने वाले महर्षि ने इस सुझाव को आभार सहित स्वीकार किया। ४८ वर्ष की आयु में हिन्दी सीखी और उसी में व्याख्यान देने का अभ्यास किया। "सत्यार्थप्रकाश" जैसा विशाल और गम्भीर विषय का ग्रन्थ हिन्दी में ही लिखा। इसी ग्रन्थ के दूसरे समुल्लास में बच्चों की शिक्षा के प्रसंग में यह भी लिखा कि बच्चों को पहले देवनागरी अक्षरों का अभ्यास कराएं और फिर अन्य देशीय भाषाओं के अक्षरों को भी।

महर्षि ने हिन्दी को आर्यभाषा का नाम दिया और उसका प्रचार-प्रसार अपना उनके जीवन का तथा समाज सुधार के लिए शुरू किए गए आन्दोलन का एक अंग ही बन गया। उत्तराधिकार में यही आंदोलन आर्यसमाज को मिला और उसने भी हिन्दी प्रचार को अपने कार्यक्रम का एक अंग बनाया।

यह ध्यान देने योग्य है कि महात्मा मुंशीराम के रूप में जब स्वामी श्रद्धानन्द जी महाराज ने गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना की तो उन्होंने गुरुकुल में शिक्षा का माध्यम हिन्दी को ही बनाया। वहां प्राचीन वाङ्मय तो हिन्दी के माध्यम से पढ़ाया ही जाता था, आधुनिक विज्ञान, गणित, पाश्चात्य दर्शन आदि विषय भी हिन्दी में ही पढ़ाने की व्यवस्था की। जब सन् १९०७ में गुरुकुल में महाविद्यालय विभाग खुला तो उसमें भी माध्यम हिन्दी ही रखा गया। वह वह समय था जब हिन्दी में उच्च शिक्षा देना सर्वथा असंभव माना जाता था। पर गुरुकुल ने इसे कार्यरूप में इतनी अच्छी तरह परिणत करके दिखा दिया कि विदेशी विद्वान् और अंग्रेजी के समर्थक देशी विद्वान् सभी इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सके। इस सम्बन्ध में मैं दो उदाहरण प्रस्तुत करना चाहूंगा। पहला उदाहरण है कलकत्ता विश्वविद्यालय आयोग के अध्यक्ष डा० सेडलर का जो सन् १९१८ में सर आशुतोष मुकर्जी के साथ गुरुकुल पधारे। गुरुकुल का निरीक्षण करने के बाद उन्होंने अपने पत्र में गुरुकुल की प्रशंसा करते हुए लिखा, "मैं समझता हूं कि जिस शिक्षाविधि में मातृभाषा को प्रथम और सब से प्रमुख स्थान दिया जाए वहीं यह सम्भव है कि मन का स्वतन्त्र विकास होकर मानसिक वृत्तियों और भावों पर प्रभुत्व प्राप्त हो सके।" दूसरा उदाहरण है उस युग के एक प्रसिद्ध विद्वान् शिक्षा-शास्त्री श्री-निवास शास्त्री का, जो उच्च शिक्षा के माध्यम के रूप में अंग्रेजी के कट्टर समर्थक थे, पर गुरुकुल का अवलोकन करने के बाद उन्होंने लिखा, "मेरा अपना विचार यह रहा है कि विद्यालय स्तर पर शिक्षा का माध्यम भारतीय भाषाएं हो रहनी चाहिए परन्तु महाविद्यालय स्तर पर पढ़ाई अंग्रेजी के माध्यम से ही होनी चाहिए, पर अब गुरुकुल को देखकर मैं अपने इस विचार से परे हट रहा हूं।"

यों तो आज भी कुछ लोग यह आरोप लगाते हैं कि हिन्दी में विभिन्न विषयों की उच्च स्तर की पुस्तकें ही उपलब्ध नहीं हैं और जानकार लोग जानते हैं कि इस आरोप के मूल में वास्तविकता कम, अज्ञानता अधिक, और कभी-कभी दुर्भावना भी काम कर रही होती है, पर उस युग में जब गुरुकुल ने अपने यहां हिन्दी को सभी विषयों का माध्यम बनाया तब हिन्दी में पुस्तकें उपलब्ध ही नहीं थीं। आज शायद बहुत कम लोगों को पता हो कि गुरुकुल के शिक्षकों ने ही पहले-पहल इस क्षेत्र में काम किया था और गुरुकुल से अनेक उच्चकोटि के ग्रन्थ प्रकाशित हुए। प्रो० महेश चरणसिंह की "हिन्दी केमेस्ट्री," प्रो० विनायक गणेश साठे का "विकासवाद", प्रो० गोवर्धन की "भौतिकी और रसायन", प्रो० रामशरणदास सक्सेना का "गुणात्मक विश्लेषण" प्रो० महेश चरण सिंह का "वनस्पति शास्त्र", प्रो० प्राणनाथ का "अर्थ-शास्त्र",

पुण्यश्लोक राजा रणंजयसिंह के पावन संस्मरण

लेखक—डा० भवानीलाल भारतीय, चण्डीगढ़

अमेठी के राजा रणंजयसिंह के १५ अगस्त निधन के साथ ही आर्यसमाज में पुराने लगनशील तथा निष्ठावान् पुरुषों की एक परम्परा ही समाप्त हो गई। स्व० राजा साहब के पितामह राजा माधवसिंह स्वामी दयानन्द के समकालीन थे और श्री महाराज की पांचवीं काशी यात्रा के समय उनसे भेंट करने आए थे। यह भी स्मरणीय है कि काशी के दुर्गाकुण्ड स्थित जिस आनन्द बाग में स्वामी दयानन्द ने विशुद्धानन्दादि पौराणिक विद्वानों से मूर्ति पूजा की वैदिकता अथवा अवैदिकता पर अपना प्रसिद्ध शास्त्रार्थ किया था, वह अमेठी के उस राजा का ही था। कालान्तर में १९६७ ई० में इसी स्थान पर राजा रणंजयसिंह जी ने एक प्रस्तर शिलालेख निम्न श्लोकों से युक्त यहां स्थापित कराया था। यह शिलारोपण महात्मा आनन्द स्वामी जी द्वारा सम्पन्न हुआ था। शिलालेख पर निम्न श्लोक हैं—

शास्त्रनन्दाङ्कचन्द्रेऽब्दे,
वैक्रमे कार्त्तिके सिते।
भौमे द्वादश्यां तिथौ दिव्ये,
मूर्तिपूजाविनिर्णये॥

अमेठ्यानन्दबागेऽस्मिन्,
काशिराजसभापतौ।
जनौघे विपुले जाते,
प्रवृत्तः श्रुतितत्परः॥

विशुद्धानन्दमुख्यैश्च
बालशास्त्र्यादिभिर्बुधैः।
शास्त्रार्थमकरोत् साकं,
दयानन्दो यतिर्महान्॥

भगवान् बक्शभूपाल-
वचनात्तत्सुतस्सुधीः।
अलेखयच्छिलालेखं,
रामी राजा रणञ्जयः॥

अर्थात् १९२६ वि० कार्तिक शुक्ला १२, मंगलवार को अमेठी राजा के आनन्द बाग में काशी राज के सभापतित्व में विपुल जनसमुदाय के समक्ष जो मूर्तिपूजा के निर्णय हेतु शास्त्रार्थ हुआ उसमें एक ओर महान् यति दयानन्द तो दूसरी ओर विशुद्धानन्द-बालशास्त्री आदि पण्डित थे।

इस शास्त्रार्थ की स्मृति के रूप में राजा भगवान् बक्श की आज्ञा से उनके विद्वान् और ज्ञानी पुत्र राजा रणंजयसिंह ने यह शिलालेख स्थापित किया है। यहां यह ज्ञातव्य है कि राजा साहब को ऐसा शिलालेख लगाने के लिए प्रो० महेश-प्रसाद (अरबी फारसी के प्रोफेसर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) ने प्रेरित किया था। प्रो० महेश प्रसाद का यह एक सुन्दर विचार था कि स्वामी दयानन्द ने भारत देश के जिन जिन स्थानों, ग्रामों, नगरों आदि को अपने पादारोपण द्वारा पवित्र किया है वहां सर्वत्र ऐसे शिलालेख लगा दिये जायें, जहां स्वामी जी के उक्त स्थान पर आगमन और प्रत्यागमन की तिथियों का भी उल्लेख रहे।

राजा रणंजयसिंह की सम्पूर्ण शिक्षा दीक्षा वैदिक विचारधारा के अनुकूल हुई। उनके बड़े भ्राता युवराज रणवीरसिंह प्रतिभा में कहीं अधिक बढ़े चढ़े थे, किन्तु विधाता ने उन्हें मात्र २१ वर्ष की आयु दी थी। किन्तु इस अल्पायु में ही युवराज महोदय ने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी कुशलता का परिचय दिया। कहना नहीं होगा कि राजा रणंजयसिंह ने भी अपने अग्रज के आदर्शों का पूर्ण तत्परता से पालन किया। उन्होंने भारत के स्वाधीनता आन्दोलन में अनेक बार भाग लिया और देश की आजादी के लिए बड़े से बड़े बलिदान किए। यद्यपि देश के स्वतन्त्र हो जाने तथा जमींदारी उन्मूलन कानून के पास हो जाने के कारण राजा रणंजयसिंह अमेठी के केवल शासक पद पर नहीं रहे, किन्तु वे अपनी निकटवर्ती जनता में अत्यधिक लोकप्रिय रहे, तथा अमेठी तथा उसके समीपवर्ती लोग उन्हें पर्याप्त सम्मान देते थे। कांग्रेस के साथ उनके पुराने सम्बन्ध रहे। विशेषतः नेहरू परिवार से तो उनके सम्बन्ध बहुत ही निकटता के थे। पं० मोतीलाल नेहरू तो अमेठी रियासत के कानूनी परामर्शदाता ही थे। पं० जवाहरलाल नेहरू तथा स्व० श्रीमती इन्दिरा गांधी भी रणंजयसिंह का अत्यधिक सम्मान करती थीं। सन् १९८० में स्व० संजय गांधी और उनकी मृत्यु के पश्चात् श्री राजीव गांधी ने लोकसभा की सदस्यता का चुनाव अमेठी से ही लड़ा था। विशुद्ध खादी की स्वदेशी वेषभूषा, निरामिष और सादा भोजन, त्याग और तप युक्त निराडम्बर जीवन यही राजा रणंजयसिंह की जीवन पद्धति थी।

वे आर्यसमाज और स्वामी दयानन्द के अनन्य भक्त थे। उन्होंने एक सहृदय कवि का हृदय पाया था। उनकी काव्य-रचनाएं विभिन्न आर्य पत्रों में यदा कदा प्रकाशित होती रहीं। राजा रणंजयसिंह अभिनन्दन ग्रन्थ के द्वारा स्वर्गीय महापुरुष के जीवन एवं विविध लोक कल्याणकारी कार्यकलापों का अच्छा परिचय मिलता है। वे आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के प्रधान तथा सार्वदेशिक सभा के आजीवन सदस्य भी थे। उन्होंने स्वनगर अमेठी में शिक्षा की उन्नति के लिए महान् उद्योग किया तथा एक इण्टरमीजियेट तथा दूसरा स्नातकोत्तर कालेज स्थापित किया। उनके पूर्वजों का निवास अमेठी के निकटवर्ति रामनगर स्थित आधि-जात्य संस्कृति का एक जीवित प्रतीक है जिसमें एक विशाल पुस्तकालय के अतिरिक्त अन्य अनेक पुरातात्विक वस्तुओं तथा दुर्लभ चित्रों का विशाल संग्रह है।

इन पंक्तियों के लेखक का स्व० राजा साहब से अत्यन्त सौहार्द पूर्ण सम्बन्ध रहा। अजमेर, दिल्ली तथा लखनऊ में उनके दर्शन करने का सौभाग्य कई बार प्राप्त हुआ। वे मेरे द्वारा सम्पादित परोपकारी पत्र के नियमित पाठक थे और समय समय पर अनेक सुझाव भी देते रहते थे।

१९८६ में जब लखनऊ में आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का स्थापना समारोह मनाया गया तो एक बार पुनः राजा साहब के दर्शन करने का अवसर मिला। इस बार तो उनकी मोटर में बैठे बैठे ही बहुत देर तक बातचीत होती रही। उन्होंने आगामी मई मास में मुझे अमेठी के रणवीर रणंजय-स्नातकोत्तर कालेज में वार्षिक दीक्षान्त भाषण देने के लिए आमन्त्रित किया। तदनुसार मैं ६ मई १९८७ को अमेठी गया। दूसरे दिन प्रातः काल आर्यसमाज अमेठी में राजा साहब की अध्यक्षता में मेरा भाषण हुआ तथा स्नातकोत्तर कालेज में दीक्षान्त भाषण। इस समारोह की अध्यक्षता अवध विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो० ए० सी० बनर्जी ने की थी। इस अवसर पर राजा साहब के पुत्र डा० संजयसिंह भी उपस्थित थे जो उस समय उत्तर प्रदेश के परिवहन मन्त्री थे। इससे पहले १९८३ में स्वामी दयानन्द की निर्वाणशताब्दी के अवसर पर राजा साहब ने वेद सम्मेलन का उद्घाटन किया। मैं इस सम्मेलन का संयोजक था।

गत वर्ष से श्री वी० पी० सिंह के कांग्रेस से पृथक् होने तथा वित्त मंत्री पद से त्यागपत्र देने के कारण देश में जो राजनैतिक भूचाल आया, यद्यपि उससे स्वर्गीय राजा साहब का कोई विशेष सम्बन्ध नहीं था, किन्तु, उनके कतिपय संकीर्ण स्वार्थ लिप्त लोगों को अच्छा नहीं लगा। उन्होंने अपनी कुण्ठा को तुष्ट करने के लिए राजा रणंजयसिंह तथा उनके राजवंश पर अनुचित प्रहार किए। कांग्रेस के एक महामन्त्री ने तो उन्हें सामन्तवाद की उपज, अंग्रेजों का पिट्ठू तक कहने में संकोच नहीं किया। ऐसे निर्मूल आक्षेप करने वाले ने यह नहीं सोचा कि अमेठी का राज परिवार सदा से ही राष्ट्रीय विचार धारा का ध्वजवाहक रहा है और पं० नेहरू तथा इन्दिरा गांधी जैसे मनस्वी लोगों ने राजा साहब की विशुद्ध देश भक्ति तथा उनके राष्ट्र प्रेम की सदा ही सराहना की है। राजनीतिक स्वार्थ मनुष्य को किस प्रकार दिग्भ्रान्त बना देता है, यह प्रसंग इसका एक अच्छा उदाहरण है।

गत वर्ष मई में अमेठी प्रवास में मैंने भूपति भवन जाकर राजा साहब से भेंट करने का अपूर्व अवसर प्राप्त किया। उस समय उनके निजी कक्ष में अपने मित्र डा० ज्वलन्तकुमार शास्त्री की उपस्थिति में राजा साहब ने अपने सुदीर्घ जीवन के अनेक रोचक संस्मरण हमें सुनायें। उनसे हुई यह मुलाकात मेरे जीवन की एक मूल्यवान निधि बन गई है। यहां यह स्मरणीय है कि अमेठी में ही हिन्दी के प्रसिद्ध

(शेष पृष्ठ ७ पर)

यज्ञ और वृष्टि

लेखक—स्वामी वेदमुनि परिव्राजक
अध्यक्ष—वैदिक संस्थान, नजीबाबाद (उ० प्र०)

७ अगस्त के "आर्य मर्यादा" साप्ताहिक में श्री स्वामी विवेकानन्द जी सरस्वती आचार्य गुरुकुल प्रभात आश्रम भोलाझाल (मेरठ) का लेख 'वृष्टि और यज्ञ" शीर्षक से छपा है। उन्होंने अपने इस लेख में श्री स्वामी सत्यप्रकाश जी के "यज्ञ और वृष्टि" शीर्षक लेख की समीक्षा की है। उन्होंने लिखा है कि "श्री स्वामी जी ने महर्षि दयानन्द को परम प्रमाण मानकर यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि यज्ञ से वृष्टि नहीं होती।" इस विषय में श्री स्वामी विवेकानन्द जी ने महर्षि दयानन्द जी के यजुर्वेद भाष्य से अध्याय १४ के आठवें मन्त्र तथा अध्याय १७ के दूसरे मन्त्र का भावार्थ प्रस्तुत कर ऋषिवर दयानन्द तथा वेद की मान्यता और निर्देश से यज्ञ द्वारा वृष्टि की पुष्टि कर दी है। स्वामी जी ने उनके इन शब्दों को भी उद्धृत किया है जिन में उन्होंने यह कहा है कि "मेरी वृष्टि यज्ञ मे आस्था नहीं है।"

मैंने एक लेख स्वामी सत्यप्रकाश जी के विषय मे पहले भी लिखा था, जो अनेक आर्य पत्रो मे छप चुका है। उस लेख मे मैंने उनके विषय में चर्चा की थी कि वह यह कहते हैं कि "मैं सब बातो में स्वामी दयानन्द के साथ नहीं बधा हूँ।" क्योंकि वह महर्षि दयानन्द के साथ नहीं बंधे, यही कारण है कि उनको वेद के वर्षा विज्ञान में आस्था नही है, क्योंकि यह तो ऋषिवर दयानन्द की मान्यता है कि वेद अपौरुषेय तथा ईश्वरीय ज्ञान है और वेद में वृष्टि विज्ञान यज्ञ विज्ञान के रूप में वर्णित है और स्वामी सत्यप्रकाश जी ऋषि दयानन्द के साथ नहीं बंधे अतएव उनकी आस्था यज्ञ द्वारा वृष्टि में कैसे हो सकती है?

स्वामी विवेकानन्द जी ने अपने लेख में यह भी लिखा है कि उनका यह भी विचार है कि 'यज्ञ से फसल कृषि पर कोई अच्छा प्रभाव नही पडता अर्थात यज्ञ से अच्छी फसल नहीं की जा सकती। इन विचारों को पढकर तो मैं इस परिणाम पर पहुचा कि जिस व्यक्ति को महान् वैज्ञानिक सन्यासी कहकर आर्यसमाज के क्षेत्रो में प्रतिष्ठा प्रदान की जा रही है, भले ही उन्होंने डिग्री विज्ञान की ली हो किन्तु उनका मस्तिष्क वैज्ञानिकता से नितान्त दूर है। परीक्षाएं देना तो कला है, पुस्तकों के आधार पर परीक्षाएं दी जा सकती हैं, उपाधियां भी प्राप्त की जा सकती हैं किन्तु मस्तिष्क का वैज्ञानिक होना अलग बात है। मुझे ऐसे प्रतिभा-सम्पन्न विद्यार्थियों का पता है जिन्हें अथक परिश्रम करने पर भी कभी प्रथम श्रेणी प्राप्त नहीं हुई और ऐसे विद्यार्थियों को भी भली भांति जानता हूं जो परीक्षा काल में भी नींद भर सोये तथा सिनेमा देखे फिर और पूरे सत्र की विहगम दृष्टि से ही पुस्तकें देखी किन्तु फिर भी विशेष योग्यता और प्रथम श्रेणी प्राप्त करते रहे।

साधारण बुद्धि का व्यक्ति भी जानता है कि कीट गन्दगी और सड़न में पैदा होते और पलते हैं किन्तु सुगन्धि से भाग जाते तथा नष्ट हो जाते हैं। वैदिक संस्थान नजीबाबाद द्वारा प्रकाशित "हवन-यज्ञ "और विज्ञान" नामक पुस्तक में मैंने अपना नवम्बर, १९८३ का अनुभव लिखा है। मेरा जन्म कृषक परिवार में हुआ है। मुझे पता है कि खेतों में खडी फसल की पत्तियों पर यदि राख डाल दी जाती है तो उनमें लगे कीट नष्ट हो जाते हैं तथा भविष्य में उन पर कीट उत्पन्न नहीं होते। यदि राख न डाली जाय तो वह कीट खडी फसल की पत्तियां खा-खा कर ही फसल को नष्ट कर देते हैं। यदि वह राख सुगन्धित पदार्थों को जलाकर तैयार की गयी हो तो आश्चर्यजनक लाभदायक सिद्ध हो। जब मकान में उत्पन्न हुए कीटो को हवन सामग्री जलाकर नष्ट किया जा सकता है तो फसल में लगे कीटों को भी नष्ट किया जा सकता है, जैसा कि हमने "हवन-यज्ञ और विज्ञान" नामक पुस्तक में लिखा है कि केवल सूखी सामग्री जलाने से ही उससे उत्पन्न सुगन्धित धुएं से कमरे में अकस्मात् उत्पन्न होकर प्रकट होने वाले सहस्रो कीट पटापट पृथ्वी पर गिर कर मर गए। जब फसल के कीटो को मारकर यज्ञ फसल की पैदावार को बडा और स्वास्थ्यकर बना सकता है तो यज्ञ धूम्र के सुगन्धित परमाणु फसल के पौधों को अधिक फूलने-फलने के योग्य बनाकर निश्चित रूप से पैदावार की अभिवृद्धि कर सकते हैं।

अमेरिका की राजधानी वाशिंगटन स्थित "अग्निहोत्री यूनिवर्सिटी" ने जो परिणाम यज्ञ के कृषि पर प्रभाव के परिणामों से ज्ञात किए हैं, उन पर अब तक पांच परिपत्र भी प्रकाशित कर दिए हैं। "लश्कर का कूच हो गया मगर बावली अभी खूंटे हो गाड रही है।" एक ओर तो कृषि पर यज्ञ के प्रभावों से सम्बद्ध परिपत्र प्रकाशित हो रहे हैं किन्तु दूसरी ओर हमारे महान विज्ञानवेत्ता श्री स्वामी सत्यप्रकाश जी की परीक्षणशाला यह सिद्ध करने में लगी है कि "यज्ञ का कृषि पर कोई अच्छा प्रभाव नहीं पडता।" मेरा नम्र निवेदन यह है कि जिन्हे खेती की लेश भी जानकारी नहीं और जिन्होंने कोई परीक्षण भी कृषि तथा यज्ञ विषय पर नहीं किया है और जो इस विषय को समझने की सूझ बूझ भी नहीं रखते, वह ऐसी बाते कहकर उपहास का कारण न बनें और आर्य पत्र पत्रिकाएं तथा आर्यसमाज के उत्तरदायी व्यक्ति ऐसी नितान्त साधारण सूझ बूझ के व्यक्तियों को मिथ्या तथा अनर्गल प्रोत्साहित करके शिक्षित और विचारक जनों की दृष्टि में आर्यसमाज जैसी महत्त्वपूर्ण, उच्च बौद्धिक स्तरीय तथा सर्वथा मनोवैज्ञानिक विचारधारा रखने वाली संस्था को भी उपहासास्पद न बनाय। न्यूनातिन्यून मेरे जैसे सरोपा आर्यसमाजी को इससे बडा कष्ट होता है। मेरा घर-परिवार, धन-सम्पत्ति जो कुछ भी है यहा तक कि जीवन और मरण भी आर्यसमाज ही है, आर्यसमाज के लिए ही है।

आर्यसमाज में एक अन्य प्रोफेसर श्री रामप्रकाश जी एम एस सी भी हैं। उन्होंने भी एक "हवन यज्ञ और विज्ञान" नामक पुस्तक लिखी है, जो सन् १९८३ में प्रकाशित हुयी थी। जिन दिनों वह चण्डीगढ विश्वविद्यालय में कैमिस्ट्री की प्रयोगशाला में अनुसन्धानात्मक परीक्षण कर रहे थे, उन दिनों उन्होंने जो परीक्षण करके अनुभव प्राप्त किए, वह उनकी उस पुस्तक में वर्णित है। विज्ञान, वैदिक यज्ञ-विज्ञान तथा यज्ञ और वृष्टि विषय की ज्ञातव्यता के लिए जिज्ञासु पाठक जन को उस पुस्तक को ध्यानपूर्वक पढ़ना चाहिए। हां स्वामी सत्यप्रकाश जी के पढने की वह पुस्तक नहीं है क्योंकि वह तो वैज्ञानिक ही नहीं अपितु स्वयसिद्ध सम्पूर्ण विद्याविज्ञान विष्णाता वेदज्ञ हैं यद्यपि उनके समय समय पर व्यक्त विचारों से यह स्पष्ट प्रमाणित है कि वह वेद को अनर्गलताओं का पिटारा और ज[illegible] महर्षि स्वामी दयानन्द जी को भ्रान्त सिद्ध करने के लिए सन्नद्ध हैं और ऐसा सिद्ध करने का कोई अवसर हाथ से नहीं जाने देना चाहते। इसका कारण यह है कि उन्हें आर्यसमाज के नेताओं ने इतना आधक उछाला है कि जिसके वह लेश भी अधिकारी नहीं हैं।

श्री स्वामी विवेकानन्द जी महाराज ने अपने लेख में उन्हें यह सम्मति दी है कि वह "बैठकर यज्ञ के प्रभावो का परीक्षण करें।" जो स्वयसिद्ध और स्वत प्रमाण सम्पूर्ण विद्या विज्ञान निष्णात वेदज्ञ हो, उसे परीक्षण की आवश्यकता नहीं। वह तो जो कुछ बोल दे, जो कुछ लिख दे, वह सब वेद की ऋचाएं हैं।

एक डाक्टर किसी रोगी को देखने गया। जब उसने रोगी के सर पर हाथ रक्खा तो रोगी के घरवालों में से किसी ने कहा कि डाक्टर नाडी सर में नहीं हाथ में होती है। यह सुनकर डाक्टर जी बिगड़कर बोले, तुम मूर्ख हो, हम क्वालीफाइड डाक्टर हैं, जहां हम हाथ रख दें वहीं नाडी हो जाती है। श्री स्वामी सत्यप्रकाश जी भी आजकल आर्य समाजियों के महान् वैज्ञानिक सन्यासी हैं वह जो कुछ भी कह दें, सब विज्ञान सिद्ध है और वेद में जिस वैज्ञानिकता का वर्णन है तथा महर्षि दयानन्द ने जिसका प्रतिपादन समर्थन और विवेचन किया है, वह सब कपोल कल्पना, मिथ्या, अनर्गल और भ्रान्त है।

जिस व्यक्ति ने विज्ञान के नाम पर आज तक न कोई परीक्षण किया हो तथा न लोहे की एक कील तक भी बनायी हो, विज्ञान के क्षेत्र में उसकी कहीं भी गिनती नहीं हो सकती। एम. एस सी करके किसी विद्यालय में नौकरी करते हुए साइंस का पाठ घर पर पढ़ कर अगले दिन छात्रों के सामने उसे भाषण में

(शेष पृष्ठ ८ पर)

उपनिषद्

★

प्राचीन काल में हमारे पूर्वज सत्संग के बड़े प्रेमी थे। वे अपना अधिकांश समय सत्संग और स्वाध्याय में बिताया करते थे। ऋषि-मुनियों व साधु-महात्माओं के समीप जाकर वे उनसे वेद शास्त्रों की शिक्षा प्राप्त करते थे। इस उत्तम कार्य का उन्हें बड़ा लाभ होता था। उनके संकल्प और विचार पवित्र हो जाते थे और सच्चा आनन्द प्राप्त होता था।

निरन्तर सत्संग से वेद-शास्त्रों के अतिरिक्त उन्हें जो ईश्वरीय ज्ञान के अनूठे ग्रन्थ मिले उन्हें ही उपनिषद् कहा जाता है। "उप" का अर्थ है पास और "निषद्" का अर्थ है निश्चयपूर्वक बैठना। ऋषियों और साधु-सन्तों के समीप बैठकर प्राप्त होने वाले ज्ञान का अमूल्य भंडार उपनिषदें हैं। इसे ब्रह्म विद्या भी कहते हैं। वेद का अन्तिम भाग होने से इसे "वेदान्त" भी कहा जाता है। वेदों के बाद इन्हीं को मुख्य स्थान प्राप्त है।

उपनिषद् आर्य संस्कृति के मूलाधार (नींव) हैं। वनों में, नदियों के तट पर एकान्त स्थान में शान्त मन से तपस्वी ऋषि मुनियों ने ईश्वर, जीव, प्रकृति तथा मानव-समाज की उन्नति के लिए बड़े ही श्रेष्ठ और अमूल्य उपदेश दिये हैं जो संस्कृत साहित्य में अमर हैं। जैसे, ईशोपनिषद् में मानव-मात्र को यह शिक्षा दी गई है कि 'सारा संसार ईश्वर से बसा हुआ है। इसलिए हे मानव! तू त्याग-भाव से हर वस्तु का भोग कर, कभी लालच मत कर, निश्चय से यह धन किसी का नहीं। सब उस ईश्वर का है।"

"ईशावास्यमिदं सर्वं
यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा
मा गृधः कस्य स्विद्धनम्॥

माण्डूक्य, ऐतरेय, तैत्तिरीय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक, श्वेताश्वतर।

प्रकृति, आत्मा और परमात्मा का भली-भांति ज्ञान कराके मोक्ष का मार्ग विस्तार से बतलाना ही उपनिषदों का मुख्य विषय है।

ईशोपनिषद् में ईश्वर को सर्व-व्यापक बताकर मनुष्य को निष्काम भाव से उत्तम कार्य करने की शिक्षा दी गई है। केनोपनिषद् में ब्रह्म, (ईश्वर) की विस्तार से व्याख्या करके यह सिद्ध किया गया है कि वायु, अग्नि आदि भौतिक शक्तियों का संचालक ब्रह्म ही है।

कठोपनिषद् नचिकेता और यमाचार्य के सवाद से प्रारम्भ होता है। इसमें यमाचार्य बड़े रुचिकर ढंग से अपने प्रिय तेजस्वी शिष्य नचिकेता को "ओ३म्" ईश्वर के सब से उत्तम नाम का रहस्य समझाते हैं। संसार के धन-दौलत, स्त्री-पुरुष, हाथी-घोड़े आदि प्रलोभनों का सुनहला चित्र खींचकर पहले नचिकेता की परीक्षा लेते हैं और फिर उसे तीन वरदानों के रूप में पिता के रोष की शान्ति कर आत्मा की अमरता, ब्रह्म की विलक्षण महिमा और विलक्षण शान्ति का अनुभव कराते हैं। प्रश्नोपनिषद् में पिप्पलाद ऋषि ने सुकेशा, भार्गव, आश्वलायन, सौर्यायणी, सत्यकाम और कबन्धी आदि ६ ऋषियों के ६ प्रश्नों के क्रमशः उत्तर दिए हैं। ये ब्रह्म के बारे में ही हैं। मुण्डकोपनिषद् में तीन मुण्डक हैं और प्रत्येक में दो खण्ड हैं। इनमें ब्रह्म-विद्या, संसार की उत्पत्ति, यज्ञ-हवन, ब्रह्म का स्वरूप, ब्रह्म की प्राप्ति आदि का वर्णन किया है। माण्डूक्य उपनिषद् में केवल बारह ही श्लोक हैं जिनमें ओंकार की सुन्दर व्याख्या की गई है।

ऐतरेय उपनिषद् में सृष्टि की रचना और गर्भ का विस्तार से वर्णन किया गया है। तैत्तिरीय उपनिषद् में भूः, भुवः, स्वः इन तीन महा व्याहृतियों का निर्वचन किया गया है और धार्मिक विधि-विधानों के विषय में उपदेश दिए गए हैं।

छान्दोग्य उपनिषद् में पहले दो प्रपाठकों-भागों में ओंकार उद्गीथ और साम की विस्तार से व्याख्या की गई है। तीसरे प्रपाठक में मधु-नाडी और पर-ब्रह्म का वर्णन है। इसमें यह वर्णन भी मिलता है, कि घोर आंगिरस से धर्मोपदेश सुनकर श्रीकृष्ण अपनी भूख-प्यास भूलकर कैसे मग्न हो गए थे। चौथे प्रपाठक में सत्यकाम जाबालि की प्रसिद्ध कथा है। पांचवें में श्वेतकेतु की प्रवाहण और अश्वपति कैकय राजाओं से ज्ञान-प्राप्ति का वर्णन है। छठे में उद्दालक आरुणि से और उनके पुत्र श्वेतकेतु की ब्रह्म ज्ञान की प्राप्ति का प्रसंग है। सातवें में नारद जी द्वारा सनत्कुमार से नाम, वाक्, मन, संकल्प, चित्त, ध्यान, बल, अन्न, ब्रह्म आदि की ज्ञान-प्राप्ति का वर्णन है। आठवें में आत्मा, ब्रह्म, प्रजापति आदि के गम्भीर उपदेश हैं। इन्द्र और विरोचन की सुप्रसिद्ध कथा द्वारा आत्मा, ब्रह्म आदि का रहस्य समझाया गया है। इस प्रकार इसमें आठ प्रपाठक हैं।

बृहदारण्यक उपनिषद् सब से बड़ी है। इसमें सृष्टि और उसके कर्ता का विचार पहले अध्याय में किया गया है। दूसरे अध्याय में गार्ग्य बालाकि ने काशीराज अजातशत्रु से ब्रह्म-विद्या का उपदेश लिया है। तीसरे अध्याय में राजा जनक द्वारा बुलाई गई कुरु पांचाल के महाविद्वानों की सभा और उसमें महर्षि याज्ञवल्क्य द्वारा सब विद्वानों को शास्त्रार्थ में पराजित कर राज-पुरस्कार प्राप्त करने का वर्णन किया गया है। चौथे में जीवात्मा की अवस्थाओं का वर्णन है। इसी में प्रसिद्ध याज्ञवल्क्य-मैत्रेयी संवाद भी है। पांचवें में ब्रह्म, प्रजापति, वेद, गायत्री आदि का वर्णन है। छठे में प्रवाहण जैवली ने उद्दालक आरुणि को ब्रह्म का उपदेश दिया है। इस प्रकार यह विशाल उपनिषद् समाप्त होता है।

श्वेताश्वतर उपनिषद् में छः अध्याय हैं। इनमें ईश्वर-प्राप्ति के उपायों, ध्यान, ब्रह्म-महिमा, वेदान्त, सांख्य और योग आदि की बातें हैं।

उपनिषत्-साहित्य की महिमा का पता इस बात से चलता है कि बादशाह शाहजहां के पुत्र दारा शिकोह ने १६५७ ई में कई उपनिषदों का फारसी में अनुवाद कराया। इसी के फ्रेंच अनुवाद को पढ़कर जर्मन विद्वान् शोपेनहार ने लिखा है—'सारे संसार में उपनिषदों के समान जीवन को ऊँचा उठाने वाला दूसरा कोई ग्रन्थ नहीं है।" यूरोप के विद्वान् श्लेगल ने तो यहां तक कहा है, "उपनिषदों के सामने यूरोपीय तत्त्वज्ञान प्रचण्ड सूर्य के आगे टिमटिमाता दिया है।" यह है उपनिषदों का महत्त्व। □

भारतीय जनसंघ के संस्थापक
अखण्ड भारत के उद्घोषक
डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी

'महर्षि ने अपने ग्रन्थ "सत्यार्थ-प्रकाश" में देश की राजनीतिक दशा पर भी स्पष्ट भाषा में अपना अभिमत प्रकट कर दिया है—

"...... कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत-मतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराए का पक्षपात शून्य, प्रजा पर पिता-माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ भी विदेशियों का राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं।" क्या हमारी राजनीतिक दासता का इससे अधिक विशद तथा साहसपूर्ण विश्लेषण सम्भव है?

.... ऋषि ने अपने देशवासियों तथा समस्त विश्व को "सत्यार्थप्रकाश" के रूप में जो अविनश्वर वसीयत दी है, वह उनकी प्रकाण्ड प्रतिभा का प्रतीक है। इस ग्रन्थ में वह हमारे सम्मुख एक उत्पादक, कलाकार, समीक्षक, संहारक तथा निर्माता के रूप में प्रकट हुआ है।

... ऋषि ने अपने दर्शन "सत्यार्थप्रकाश में एक ऐसे स्वतन्त्र भारत की कल्पना की है, जो वर्तमान परिस्थितियों तथा अवस्थाओं में स्वकीय संस्कृति सभ्यता की अमूल्य परम्पराओं के साथ समस्वर करके ही निर्माण बन सकता है।"



वार्षिक निर्वाचन

आर्यसमाज करौल बाग

आर्यसमाज करौल बाग के पदाधिकारियों का निर्वाचन ३१ जुलाई को हुआ। आगामी वर्ष के पदाधिकारी निम्नलिखित चुने गए (सर्वसम्मत)

प्रधान अजय कुमार बल्ला
मन्त्री श्री चेतन स्वरूप कपूर
उपप्रधान सर्वश्री ओमप्रकाश सुनेजा रामलाल जी मलिक, तीर्थराम जी आहूजा, देसराज बहल
कोषाध्यक्ष श्री ओमप्रकाश जी
पुस्तकालयाध्यक्ष श्री नरेन्द्रनाथ जी बल्ला

आर्यसमाज, आदर्शनगर, जयपुर-४ (राज०)

आर्यसमाज, आदर्शनगर, जयपुर का नव निर्वाचन निम्न प्रकार से सम्पन्न हुआ—

पद	नाम
प्रधान	श्री ज्ञानेन्द्र आर्य
उपप्रधान	श्री बाबूलाल शर्मा
	श्री पृथ्वीराज विनोत
मन्त्री	डा० सुभाष वेदालंकार
कोषाध्यक्ष	श्री बलदेव राज आर्य
पुस्तकाध्यक्ष	श्रीमती मृदुला सामवेदी
	श्री तेजप्रकाश कल्ला

आर्यसमाज सरस्वती विहार दिल्ली-३४

सरक्षक श्री खेमचन्द्र मेहता
प्रधान श्री कंवर दयानद वर्मा
उप-प्रधान श्री ओमप्रकाश आनद
उप-प्रधान श्री वेद प्रकाश बसल
मन्त्री श्री श्यामलाल
कोषाध्यक्ष श्री कृष्णदेव
पुस्तकाध्यक्ष श्री वी० एल० सेठी

आर्यसमाज वेदमन्दिर

आनन्दवास शकूरपुर जी ब्लाक दिल्ली-११००३४ नई दिल्ली

प्रधान—चन्द्रप्रकाश राठी जी
मन्त्री—रणवीर जी
कोषाध्यक्ष—डा० विनोदकुमार सिंगल

आर्यसमाज रामगली

१५ अगस्त १९८८ को आर्यसमाज रामगली हरिनगर घण्टाघर नई दिल्ली-६४ का वार्षिक निर्वाचन श्री दयानन्द जी गौतम की अध्यक्षता में निम्न प्रकार सम्पन्न हुआ।

प्रधान श्री ओमप्रकाश खन्ना
उप-प्रधान श्री हरचन्दी लाल गुप्ता
मन्त्री : ओमप्रकाश सैलानी
कोषाध्यक्ष श्री रामशरण दास गुप्ता

ओमप्रकाश सैलानी
मन्त्री

पुरोहित चाहिए

'आर्यसमाज, बल्लबगढ (मेन बाजार) हरियाणा को एक योग्य धर्म शिक्षक पुरोहित की आवश्यकता है। वेतन योग्यता अनुसार। इच्छुक व्यक्ति शीघ्र सम्पर्क करें।

मन्त्री
सुरेश अडाना

वर-घर की खोज

"आर्यसमाज प्रताप नगर दिल्ली में विवाह सम्बन्धी सूचना केन्द्र खुला हुआ है जिस में विवाह योग्य बालक और बालिकाओ के नाम अंकित किए जाते हैं और योग्य सबंध स्थापित किए जाते हैं। सपर्क करने का समय हर शनिवार को साय ३-३० बजे से ५-३० बजे और रविवार को प्रात १०-३० बजे तक का है।"

कृष्णचन्द्र आर्य
मन्त्री

अन्तरराष्ट्रीय दयानन्द वेद प्रतिष्ठान

द्वारा आयोजित

द्वितीय वेद गोष्ठी

दिनांक १,२ अक्टूबर १९८८ को आर्यसमाज सेक्टर १६ चण्डीगढ़ में द्वितीय वेद गोष्ठी का आयोजन किया गया है। इस संगोष्ठी में उत्तर क्षत्र के वैदिक विद्वान् भाग लगे तथा वेद का सार्वभौम (सम्प्रदाय निरपक्ष) स्वरूप विषय पर अपने शोध पत्र पढेंगे। गोष्ठी में भाग लेने वाले विद्वानो से निवेदन है कि वे गोष्ठी की निश्चित तिथि से १५ दिन पूर्व अपने आने की सूचना देने की कृपा कर ताकि उनके भोजन एवम् आवास की समुचित व्यवस्था की जा सके। निबन्धवाचक अपने निबन्धो को लिखित रूप में ही प्रस्तुत करेंगे।

पत्र व्यवहार का पता—
प्रो० भवानीलाल भारतीय,
दयानन्द शोध पीठ,
पंजाब विश्वविद्यालय, चण्डीगढ़—१६००१४

श्रावणी पर्व एवं जन्माष्टमी

दिल्ली की विभिन्न आर्यसमाजों में वेद प्रचार सप्ताह श्रावणी उपाकर्म के रूप में जन्माष्टमी तक धूमधाम से मनाया गया।

आर्यसमाज सदर बाजार

श्री श्याम सुन्दर स्नातक द्वारा वेद कथा हुई और श्री नन्दलाल निर्भय द्वारा भजनोपदेश किया गया।

आर्यसमाज नया बांस

श्री प० सच्चिदानन्द शास्त्री ने वेद कथा की। प्रात काल विश्व आचार्य हरिदेव जी के ब्रह्मत्व में यज्ञ सम्पन्न हुआ। गुरुकुल गौतम नगर के ब्रह्मचारियों ने वेद पाठ किया।

राजेन्द्र नगर में श्री कृष्ण जन्मोत्सव

आर्यसमाज राजेन्द्र नगर में प० शिवाकान्त उपाध्याय द्वारा वेद कथा तथा श्री गुलाब सिंह राघव के मधुर भजन हुए। जन्माष्टमी के अवसर पर स्वामी सत्यप्रकाश जी की अध्यक्षता में सभा हुई। जिसमें श्री पुरुषोत्तम, डा० वाचस्पति उपाध्याय, प० यशपाल सुधांशु, प० शिवाकान्त ने श्रीकृष्ण के चरित्र पर व्याख्यान किए।

आर्यसमाज पंखा रोड जनकपुरी

इस आर्यसमाज में रक्षाबन्धन पर्व से ३ सितम्बर जन्माष्टमी तक यज्ञ हुआ। श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर स्वामी विद्यानन्द जी, प० आनन्द मुनि वैद्य, महेन्द्रपाल सिंह आर्य, श्री सत्यपाल आर्य ने प्रवचन दिए।

आर्यसमाज किरण गार्डन

आर्यसमाज द्वारा जन जागरण किया एवं सत्सग द्वारा जनता को वैदिक धर्म के विषय में ज्ञान कराया।

आर्यसमाज ग्रेटर कैलाश

श्री प० रामकिशोर ने वेद कथा की। जन्माष्टमी के अवसर पर श्री डा० महेशचन्द्र, श्री श्याम सुन्दर स्नातक, श्री वेदकुमार, श्री कृष्ण कान्त आर्य, प्रो० पुरुषोत्तम श्रीमती सत्यवती शर्मा ने प्रवचन दिए।

आर्यसमाज सीताराम बाजार

२७ अगस्त श्री यशपाल सुधांशु तथा प्रो० रत्नसिंह जी की वेद कथा हुई। इस अवसर पर प० प्रकाश चन्द्र शास्त्री के ब्रह्मत्व में ऋग्वेदीय यज्ञ भी किया गया।

आर्यसमाज भोगल

२७ अगस्त से ४ सितम्बर तक श्री विद्यारत्न शास्त्री द्वारा वेद कथा की गयी।

आनन्द निकेतन में वेद प्रवचन

आनन्द निकेतन एसोसियेशन की ओर से पार्क में वेद कथा का आयोजन किया गया जिसमें आर्य संदेश के सम्पादक प० यशपाल सुधांशु ने प्रवचन दिए। सभा स्थल उपस्थिति की दृष्टि से भरा रहा। श्री श्याम वीर राघव के मधुर भजन हुए।

आर्यसमाज सान्ताक्रूज बम्बई

इस आर्यसमाज में श्री पं० राम गुरु शर्मा द्वारा वेद कथा की गयी।

आर्यसन्देश पढ़ें, पढ़ायें

आर्य जगत् के समाचारो व उपयोगी लेखो, अध्यात्म विवेचनों से युक्त, सामयिक चेतावनियों से जूझने की योजना देने वाले साप्ताहिक पत्र आर्यसन्देश के ग्राहक बनिए और बनाइए। साथ ही वर्ष में चार अन्य विशेषांक प्राप्त कीजिए। वार्षिक शुल्क केवल २५ रुपये। आजीवन २५० रुपये मात्र।

"राष्ट्रीय आय-व्यय शास्त्र", और "राजनीति शास्त्र" प्रो० बालकृष्ण का "अर्थ-शास्त्र" और "राजनीति शास्त्र", प्रो० सुधाकर का "मनोविज्ञान" आदि ग्रन्थ हिन्दी में अपने-अपने विषय के पहले ग्रन्थ हैं। यदि यह कहा जाए कि हिन्दी में वैज्ञानिक ग्रन्थ लिखने की परम्परा गुरुकुल से शुरू होती है, तो गलत नहीं होगा। केवल वैज्ञानिक ग्रन्थ ही नहीं, अन्य विषयों के मौलिक ग्रन्थ भी गुरुकुल में ही तैयार किए गए। प्रो० रामदेव ने भारतीय इतिहास के संबंध में मौलिक अनुसंधान कर अपना प्रसिद्ध ग्रन्थ "भारतवर्ष का इतिहास" लिखा। स्वयं महात्मा मुंशीराम जी ने भी विभिन्न धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन पर मौलिक ग्रन्थ लिखे। बाद में डा० भगवान दास ने जब "फंडामेंटल युनिटी आफ आल रिलीजन" लिखा तब महात्मा मुन्शीराम जी के ग्रन्थों से उन्होंने भरपूर सहायता ली। यह तो केवल प्रारंभिक युग की बात है। गुरुकुल कांगड़ी ने ही बाद में अपने स्नातकों के बारे में अध्ययन करके बताया कि आज हर तीन स्नातकों में से एक "प्रतिष्ठित लेखक" है। यहां "प्रतिष्ठित" से आशय है, ऐसा लेखक जिसके ग्रन्थों को सरकार और या विभिन्न प्रसिद्ध संस्थाओं ने पुरस्कृत किया है।

यह तो केवल आर्यसमाज के संरक्षण में चलने वाली एक संस्था की उपलब्धियों की बानगी मात्र है। आर्यसमाज के संरक्षण में अन्य भी अनेक संस्थाएं पनपी हैं, पल रही हैं, उनकी भी अपनी उपलब्धियां हैं। हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओं का अपना एक अलग ही इतिहास है और एक इतिहास कलम के उन सिपाहियों का भी है जो आर्यसमाज की प्रेरणा से हिन्दी की ओर आकृष्ट हुए, हिन्दी के लेखक बने और हिन्दी की सेवा की। एक उदाहरण स्वयं मेरे पिता जी का है। इन्होंने इस शताब्दी के प्रारम्भ में लंदन से एम० डी० किया था, और टी० बी० सेनिटोरियम के चीफ मेडिकल अफसर रहे। टी० बी० की हवन द्वारा चिकित्सा के आविष्कार की प्रेरणा उन्हें 'सत्यार्थ-प्रकाश' से मिली और जब अपने इस अनुसंधान पर उन्होंने सन् १९४७ में पुस्तक लिखी तो आधुनिक "मेडिकल" भाषा का प्रयोग करते हुए उसे 'गैस ट्रीटमेंट' जैसा कोई नाम देने के बजाय "यज्ञ चिकित्सा" का नाम दिया, "मेडिकल साइंस" जैसे विषय की पुस्तक हिन्दी में ही लिखी और पुस्तक "आचार्य दयानन्द" को समर्पित की। पुस्तक को सरकार एवम् अन्य अनेक संस्थाओं ने तो पुरस्कृत किया ही पर इससे कहीं अधिक महत्वपूर्ण था उनका यह विचार कि हिन्दी में ऐसे ग्रन्थ भी होने चाहिए जिन्हें पढ़ने के लिए ही लोग हिन्दी सीखें।

इस तथ्य की उपेक्षा नहीं की जा सकती कि आज ये सब इतिहास की बातें हैं। समाज को दिशा देने में इतिहास की अपनी एक विशिष्ट भूमिका होती है। वह हमें प्रेरणा दे सकता है पर हमारे कर्मों का विकल्प नहीं बन सकता। बैंक बैलेंस बन सकता है पर दैनिक आय का पर्याय नहीं बन सकता। स्वाधीन भारत के संविधान में जब हिन्दी को भारत की राजभाषा स्वीकार किया गया तब वह महर्षि दयानन्द और आर्यसमाज के आन्दोलन की भी विजय थी, संविधान के इस निर्देश का अनुपालन जिस ढंग से होना चाहिए था वह अभी तक नहीं हुआ है। अतः राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी प्रचार की आवश्यकता आज पहले से किसी कदर कम नहीं, बल्कि अधिक ही है।

यह आश्चर्यजनक हो सकता है, दुखद हो सकता है, पर है सत्य कि अंग्रेजी का वर्चस्व विदेशी शासनकाल की तुलना में आज कहीं ज्यादा बढ़ा है। अब केवल उच्च शिक्षा ही नहीं, प्राइमरी और यहां तक कि नर्सरी शिक्षा अंग्रेजी माध्यम बेचने वाली दूकान आज शहरों से बढ़ते हुए कस्बों और देहातों में भी खुल गई हैं और उनका माल खरीदने में लोग गर्व का अनुभव करने लगे हैं। विशिष्ट अवसरों पर अंग्रेजी में छपे हुए "शुभ कामना पत्र" भेजने का एक नया व्यापार फल-फूल रहा है। अब तो विवाह आदि के निमंत्रण पत्रों तक में अंग्रेजी का प्रवेश हो चुका है। नमस्ते, नमस्कार, प्रणाम आदि अभिवादन के दकियानूसी ढंग माने जाने लगे हैं। गुड मार्निंग, गुड ईवनिंग गुड नाइट से शुरू हुआ सफर "हाय" "बाई" तक आ पहुंचा है। बस स्टाप से लेकर दफ्तर तक अंग्रेजी में बात करना शिक्षित होने की निशानी बनती जा रही है। हिन्दी में पूछे गए प्रश्न का उत्तर हिन्दी जानने वाले मंत्री महोदय अंग्रेजी में देने में शान समझते हैं। लोग भूलते जा रहे हैं कि किसी देश के भिन्न भाषा भाषी लोग परस्पर व्यवहार में सड़क से लेकर संसद तक में जिस भाषा का प्रयोग करते हैं, वही राष्ट्रभाषा कहलाती है। इस प्रकार सामाजिक जीवन के जिन मंचों पर हिन्दी पदासीन हो चुकी थी वहां से भी उसे अपदस्थ करने का अंग्रेजी षड्यंत्र चल रहा है, और सरकार, अफसरों एवं व्यापारि वर्ग की मिली भगत से सफल होता जा रहा है। अतः आज हिन्दी प्रचार से जुड़ी सभी संस्थाओं पर यह गुरु पर दायित्व आ गया है कि वे राष्ट्रीय महत्व के इस प्रश्न को राष्ट्रीय स्तर पर हल करने के लिए अपनी शक्ति को राष्ट्र व्यापी बनाएं और ऐसे वातावरण का निर्माण करें जो वास्तव में राष्ट्रीय हो, राष्ट्रीय भाव से भार हो, और जिसमें राष्ट्रभाषा के लिए राष्ट्रीय गौरव का स्थान हो। ●

(पृष्ठ ३ का शेष)

पुण्यश्लोक राजा रणंजयसिंह के पावन संस्करण

सूफी कवि मलिक मोहम्मद जायसी का समाधि स्थल भी है। यही वह प्रसिद्ध अवधी कवि था जिसने हिन्दुओं में प्रचलित पद्मिनी और राजा रतनसेन की प्रेम कथा को हिन्दुओं की ही बोली अवधी में शताब्दियों पूर्व दोहा चौपाई शैली में लिखा था। इसी काव्य के बारे में स्व० पं० रामचन्द्र शुक्ल को यह कहना पड़ा था कि उन्होंने जिस मुसलमान के घर में पद्मावत की पोथी देखी, उसे साम्प्रदायिक दुराग्रह और संकीर्णता से दूर पाया। राजा साहब ने रामनगर स्थित महाकवि जायसी के विशाल समाधि स्थल पर एक भव्य द्वार बनवाया है तथा उस पर पद्मावत की वे ही पंक्तियाँ अंकित करवाई हैं जिनमें कवि ने चारों वेदों को ईश्वरीय ज्ञान कह कर सम्बोधित किया है।

स्वर्गीय राजा साहब की आयु लगभग ८७ वर्ष की थी। उनका स्वास्थ्य भी बहुत अच्छा नहीं था। किन्तु उनकी जीवन शक्ति प्रबल थी। वे आर्यसमाज के पुरातन इतिहास के मर्मज्ञ तथा अनेक प्रकार की जानकारियों के विश्वकोष तुल्य थे। वे अपने जन्मदिवस पर प्रतिवर्ष एक विशाल कवि सम्मेलन आयोजित कराते थे। उनके यहां विद्वानों, पण्डितों, सहृदय कवियों तथा काव्य रसिक व्यक्तियों का सदा से ही सम्मान और सत्कार होता रहा। हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर पूर्ण गौरव के साथ प्रतिष्ठित देखना उनका एक सुखद स्वप्न था। काशी में स्वामी दयानन्द की शास्त्रार्थ स्थली पर निर्मित स्मारक की व्यवस्था के लिए निर्मित ट्रस्ट के वे सदस्य थे। स्वामी दयानन्द के प्रति अनन्य आस्थावान राजा रणंजयसिंह जी का निधन न केवल आर्यसमाज की, अपितु सम्पूर्ण राष्ट्र की एक अपूरणीय क्षति है। ●

(पृष्ठ ५ का शेष)

द्वापर युग के महान् नेता श्रीकृष्ण

धन धर्म पर सवार है और धर्म की पर्याय बन गया है। नैतिकता का अभाव है। अनाचार, भ्रष्टाचार, अनुशासनहीनता, अकर्मण्यता, मुनाफाखोरी, स्वार्थमयता और अनेकों कुरीतियों ने देश को कमजोर बना दिया है और अनेकों राष्ट्र और समाज विरोधी तत्त्व पनप रहे हैं जो राष्ट्र को दीमक की तरह अन्दर ही अन्दर खोखला बना रहे हैं। ऐसे विकट और संकट के समय में हमें श्रीकृष्ण जैसे महान् नेता और अर्जुन जैसे शासक की आवश्यकता है जो इस डूबती भारत की नैया को पार लगा सकता है। कहा गया है—

यत्र योगेश्वर कृष्णो
यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीः विजयो भूतिः
ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥

(गीता अध्याय १८ श्लोक ७८)

अतः आओ बन्धुओ! हम इस समय की नब्ज को जानें और दृढ़व्रत लें कि इस शुभ जन्माष्टमी के अवसर पर हम जाति पाति के भेदभाव से ऊपर उठ पक्षभिरपि कक्षभि संरक्षामहे के सूत्र को जीवन में धारण कर लोक हित की भावना से संगठित हो राष्ट्र और समाज को प्रचलित राष्ट्र विरोधी सब प्रकार की कुरीतियों से मुक्त कराने का व्रत लें और भगवान कृष्ण की भांति कार्य क्षेत्र में कूद पड़ें और देश में बढ़ती हुई अराजकता को दूर करके गौरव का जीवन बिताने के साधन जुटायें। यही समय की मांग है। और यही सच्ची श्रद्धांजलि हमारे महान् नेता श्री कृष्ण जी के प्रति होगी। ●

काम बडवानल

लेखक — विक्रमादित्य 'वसन्त'
बी ६४, 'वसन्तिका', राजाजीपुरम्, लखनऊ

आज विश्व में काम बडवानल की भांति फैलता चला जा रहा है। काम जीवन का अंग तो हो सकता है पर सर्वाङ्ग नहीं। मानव ने अपने अज्ञान के कारण इसे प्रधानता देकर प्रत्येक क्षेत्र में इसका इतना व्यापक प्रचार और प्रसार किया है कि आज मानव इसे ही आनन्द का स्रोत समझकर इसके पीछे व्याकुल होकर द्रुत गति से दौड रहा है। आज व्यापार और मनोरंजन के नाम पर जो भी विज्ञापन वितरित किए जाते हैं और प्रदर्शन किए जाते हैं वे सबके सब केवल कामोत्तेजक हैं। फैशन के नाम पर किए गए कृत्रिम शृङ्गार आधुनिक वेष-भूषाएँ, विशेष रूप से नारियों की बाह्य सज्जा केवल कामोत्तेजना को भडकानेवाली हैं। लगभग समस्त विज्ञापनों में नारी के नग्न अथवा अर्धनग्न शरीर का प्रदर्शन किया जा रहा है। उन्हें भोग्या रूप प्रदान कर कामाग्नि को प्रदीप्त किया जा रहा है। संगीत का भी यही रूप कर दिया गया है और जिस साहित्य का सृजन किया जा रहा है वह भी अधिकांश रूप में अश्लील है। अभद्र दर्शन, अभद्र श्रवण, अभद्र पठन पाठन, सबके सब केवल कामाग्नि को प्रज्वलित और प्रदीप्त कर रहे हैं। वेद इस सत्य का दिग्दर्शन कराते हुए इसका निवारण अपनी प्रार्थना शैली में इस प्रकार कराता है।

आ नो भर भगम् इन्द्र ! द्युमन्तम्,
नि ते देष्णस्य धीमहि प्र-रेके।
ऊर्व इव पप्रथे कामो अस्मे
तम् आ पृण वसुपते ! वसूनाम् ॥
ऋ ३ ३० १९

इस मन्त्र का ऋषि विश्वामित्र है और देवता इन्द्र है। 'इन्द्र' शब्द का प्रयोग इस मन्त्र में सम्बोधन के रूप में किया जा रहा है।

(इन्द्र !) परम इन्द्र अर्थात् ऐश्वर्यों का दाता और प्रदाता है, वही शत्रुओं को परास्त करने की क्षमता भी रखता है। इन्द्र के ऐश्वर्य सुभग रूप हैं। इनसे षड् ऋतुओं का दमन किया जाता है। इन्द्र जहाँ भौतिक ऐश्वर्य प्रदान करता है वहाँ आध्यात्मिक सुभगों का भी एकमात्र प्रदाता वही है। ऐसे आध्यात्मिक ऐश्वर्यदाता से प्रार्थना के स्वरों में विश्व का मित्र बनने की आकांक्षा रखने वाले, इस ऋषित्व को ग्रहण करने के अभिलाषी कहते हैं।

(द्युमन्तम् भगम् आ भर) हमें द्युतिमय, प्रकाशमय ऐश्वर्य, ज्योतिर्मय भग प्रदान करो। ये दिव्य सुभग हैं, वैराग्य, ब्रह्मचर्य, ज्ञान, सन्तोष, स्नेह और विनम्रता। वैराग्य से काम, ब्रह्मचर्य से क्रोध, ज्ञान से मोह, सन्तोष से लोभ, स्नेह से द्वेष और विनम्रता से अहंकार रूपी शत्रुओं का नाश होता है और आत्मा में इन्द्रत्व आता है।

२ जीवन में ऐसी भी स्थितियाँ और परिस्थितियाँ आती हैं जब प्रत्यक्ष के अभाव में संशयात्मक भावनाएँ शंकाओं का रूप लेती हैं और मनुष्य कर्त्तव्यविमूढ हो जाता है। इन अवस्थाओं में विश्व का कल्याण करने वाले अपने व्यक्तिगत जीवन में क्या करें, तो वेद कहता है।

(प्र+रेके है देष्णस्य नि+धीमहि) प्र-शंका में तुझ दिव्य दाता का ही निरन्तर ध्यान करें। परमात्मा सर्व-व्यापक है, सर्वान्तर्यामी है। अतएव सर्वज्ञ रूप में त्रिकालदर्शी है, उसे प्रत्येक वस्तु, पदार्थ, जीव और रचना का प्रत्यक्ष ज्ञान है। अतः जो उसका सतत ध्यान करता है उसे जब मनोवाञ्छित का प्रत्यक्ष दर्शन हो जाता है तो उसे न कोई शंका होती है और न कोई जिज्ञासा जिनके समाधान के लिए उसे व्याकुल रहना पडता हो।

३ मानव जीवन की वास्तविक परीक्षा ही कामजित् होने में है क्योंकि (कामः ऊर्व इव पप्रथे) काम बडवानल की भांति फैलता जाता है। एक बार काम के वशीभूत हो कर उसके प्रहार से बचना सहज नहीं होता। चाहे पुरुष हो चाहे नारी, ये दोनों काम के वश में हो कर जघन्य अपराध करते हैं। कामवासना का अग्नि इन्हें निरन्तर जलाता है। भोगने से भोग और भी बढते जाते हैं। इनकी रोकथाम का एकम् एव उपाय है आध्यात्मिकता जो जीवन में दिव्य ज्ञान से सत्य को उदित करके वैराग्य को स्थापित करती है। इस शाश्वत सत्य को वेद ने इन शब्दों में व्यक्त किया है, (वसूनाम् वसुपते ! तम् अस्मे आ पृण) हे सकल वसुओं के स्वामी ! समस्त ऐश्वर्यप्रदाता ! उस काम का हमारे भीतर शमन कर, हमें उससे तृप्त कर दें।

परमात्मा जब हमारा तीसरा चक्षु खोलता है जिसे हम ज्ञानलोचन कहते हैं तो इस तीसरे नेत्र से अपना कल्याणकर्ता, जिसकी संज्ञा वेद के शब्दों में 'शिव' है, काम को भस्म कर देता है। काम की तृप्ति जिस वैराग्य से होती है उसके लिए प्रभु-प्रीत होना पडता है। जिन आत्माओं की परमात्मा से प्रीति हो जाती है उनका प्रेम ही 'इश्के हकीकी', अर्थात्, यथार्थ, प्रेम होता है। जगत् में कामासक्ति का सम्बन्ध शारीरिक सौंदर्य और युवावस्था तक सीमित रहता है। यह नश्वर, परिवर्तनशील और स्वार्थपूरित है जब कि परमात्मा की प्रीति अटूट, तृप्त करने वाली और आनन्दमय बनाने वाली है। काया के मोह में ग्रस्त मानव जब काया के भीतर के यथार्थ (अस्थि-पंजर, मल मूत्र, आदि) को यथार्थता ग्रहण कर लेते हैं तो सकल शारीरिक आसक्तियाँ ज्ञानाग्नि में भस्मीभूत हो जाती हैं। वह परम तत्त्व अशरीरी, नस-नाडी के बन्धन से रहित, शुद्ध, पवित्र है। उसकी प्रीति में ही शान्ति है, आनन्द है। अतएव राग-विमुक्त वैरागी ही अपने को कामाग्नि के दाह से बचा पाता है। विश्व के मानवों को भी इस अग्नि के दाह से बचाने का एकम् एव उपाय है उनके जीवन में वेद प्रतिपादित आध्यात्मिकता लाना।

'वसन्त'

दक्षिणी दिल्ली आर्य प्रचार महिला मण्डल

दक्षिण दिल्ली आर्य महिला मंडल की ओर से आर्यसमाज कालका जी में वेद प्रचार दिवस श्रीमती चांदरानी जी की अध्यक्षता में बडे समारोह पूर्वक प्रातः ११ बजे से सायं ४ ३० बजे तक मनाया गया। कार्यक्रम नव वधुओं को यजमान बना कर यज्ञ द्वारा प्रारम्भ हुआ। विभिन्न स्त्री समाजों की बहिनों ने मधुर गीतों से तथा दयानन्द माडल स्कूल अमर कालोनी के बच्चों ने रंगा रंग कार्यक्रम द्वारा वेदों को ईश्वरीय ज्ञान बताया। श्रीमती सुशीला जी तथा सुनीति आर्या ने ईशोपनिषद पर आध्यात्मिक विश्लेषण किया। तदनन्तर वेद प्रतियोगिता में विजयी महिलाओं को पारितोषिक दिया गया।

मंडल अध्यक्षा श्रीमती शकुन्तला आर्या ने द्वारिका पीठ के शंकराचार्य श्री स्वरूपानन्द सरस्वती को साधुवाद देते हुए कहा कि जहाँ पुरी के शंकराचार्य श्री निरंजन देव तीर्थ के मन्दिरों में हरिजन प्रवेश एवं सती के महिमा मंडित सम्बन्धी वक्तव्य से पूरे देश में रोष की लहर फैल गई थी, वहाँ द्वारिका पीठ के शंकराचार्य का समूचा नारी समाज आभार व्यक्त करता है उन्होंने मन्दिरों में हरिजन प्रवेश के मामले में किसी प्रकार के भेदभाव का विरोध करके मानवीय मान दण्ड को प्रस्तुत किया है। विधवा दहन को पाप बताते हुए सती शब्द स्तुत्य रूप महिला के लिए प्रयुक्त किया है और सती नारी को चिता में जलाने की बजाय अपने बच्चों एवं परिवार के प्रति उत्तरदायित्व को निभाना ही श्रेयस्कर और धर्म सम्मत बताया। समाज की वेदना का अनुभव करते हुए दहेज के खिलाफ आवाज बुलन्द की तथा उसे लाभ और काले धन का परिणाम बता कर भारतीय समाज के लिए अभिशाप की संज्ञा दी।

इस अवसर पर धन्यवाद का एक प्रस्ताव भी पारित किया गया। अन्त में कालका जी आर्यसमाज की ओर से सभी अभ्यागत महिलाओं का धन्यवाद एवम् आतिथ्य किया गया।

—कृष्णा ठुकराल
मैत्री मंत्री

(पृष्ठ ४ का शेष)

यज्ञ और वृष्टि

अर्पण कर देना या नोटबुक में से विद्यार्थी जीवन की लिखी हुयी टिप्पणियाँ विद्यार्थियों की कापियों में लिखा देना वैज्ञानिकता का परिचायक नहीं है। एक बार एक और कैमिस्ट्री के प्रोफेसर से हमारा वार्तालाप हुआ था। पहले तो वह हठपूर्वक अपनी बात पर अडे रहे किन्तु बाद में ऋषिवर दयानन्द सरस्वती के "सत्य को ग्रहण करने और असत्य को त्यागने" के सूत्र का उन्होंने यथार्थरूपेण परिपालन किया। अगले लेख में पाठकों की जानकारी के लिए वह रुचिकर वार्तालाप प्रस्तुत करूंगा।

पावमानी मीत माला

(१)

ओ३म् उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं वि मध्यमं श्रथाय।
अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा॥
इदं वरुणायादित्यायादितये च इदं न मम॥११॥

शिवराज कष्ट के अरियों ने कस कर ग्रन्थियाँ लगाई हैं।
ग्रन्थियाँ नाथ ढीली कर दो कर रहीं बड़ी कठिनाई हैं॥

ईश्वर उत्तम बलवान तरुण
तुम हृदय पा गए देव वरुण
दो खोल हमारे बन्धन ये
अब बनो दास पर देव करुण।

जो हमें उठा दो भवर पार आगे खाई गहराई हैं।
ग्रन्थियाँ नाथ ढीली कर दो, कर रहीं बड़ी कठिनाई हैं॥

सब उत्तम मध्यम और अधम
बन्धन के क्रन्दन हैं कटुतम
ये बन्धन कर दो शिथिल सभी
जीवन में पावें सुख उत्तम।

आदित्य ओ३म् अविनाशी से यह हमने आश लगाई है।
ग्रन्थियाँ नाथ ढीली कर दो, कर रहीं बड़ी कठिनाई हैं॥

व्रत नियम तुम्हारे अपनाय
आनन्द मुक्ति का तब पाय
दुख बन्धन शिथिल तभी होवें
प्रभु से गठ बन्धन हो जावें।

यह इसीलिए देकर आहुति, वेदी में ज्योति जगाई है।
ग्रन्थियाँ नाथ ढीली कर दो, कर रहीं बड़ी कठिनाई हैं॥

(२)

ओ३म् भवतं नः समनसौ सचेतसावरेपसौ। मा यज्ञं हिंसिष्टं
मा यज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवतमद्य नः स्वाहा॥ इदं
जातवेदोभ्याम् इदं न मम॥१२॥

खुल गई गाँठ हो गये ठाठ, छूट गए क्षार क्षय छेदन के हैं।
मन सुमन सुमन से मिल जाय हों तभी सफल सम्मेलन हैं॥

सब दुर्जन दूर चले जावें
प्रिय सज्जन पा कर मिल जावें
हों पाप रहित हम ज्ञानवान
उनके समान ही मन पावें।

हम दोष दूर कर शुद्ध बन हट गए सभी उलझन हैं।
मन सुमन सुमन से मिल जाय हों तभी सफल सम्मेलन हैं॥

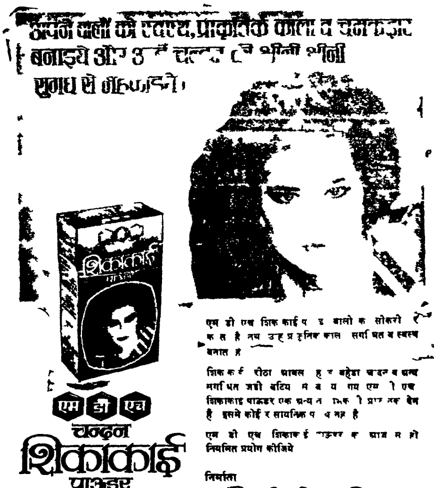
ये यज्ञ और इनके भर्ता
शुभ कर्म और इनके कर्ता
हो जाय नहीं ये नष्ट कहीं
प्रभु कृपा करो हे सधर्ता।

प्रिय ज्ञात वेद विद्वानों से हो गए हम अनुमेलन हैं।
मन सुमन सुमन से मिल जायें हों तभी सफल सम्मेलन हैं॥

सन्यासी और वानप्रस्थी
सुख इनसे पायें सब गृहस्थी
प्रभु आज आज प्रभु अभी अभी
कर दो हमको कल्याण रथी।

इसके ही हित यह आहुति दी ये यज्ञ वद अभिवचन हैं।
मन सुमन सुमन से मिल जायें, हो तभी सफल सम्मेलन हैं॥





आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N. No. 32387/77 Post in N.D P.S O on 8, 9-9-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५१ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

(पृष्ठ १ का शेष)

श्री कालको दास ने हरिजनो के लिए प्रशासन द्वारा किए गए कार्यों का विवरण देते हुए आशा व्यक्त की कि आर्यसमाज के सत्प्रयास से शीघ्र ही अस्पृश्य भाइयो को समानता मिलेगी। विश्व हिन्दू परिषद के नेता श्री ने बताया कि हम भी अपने ढग से हरिजनो तथा दलितो के लिए कार्य कर रहे हैं। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने सम्पूर्ण भारत मे आर्यसमाज द्वारा किए गए कार्यों का विवरण दिया। मध्य प्रदेश, उडीसा, महाराष्ट्र के आदिवासियो मे, नागालण्ड मिजोरम जसे सुदूर उत्तर पूर्वी प्रदेशो मे आर्यसमाज कार्यरत है। धर्मान्तरण की समस्या अधिकतर अस्पृश्य कहे जाने वाले लोगो के बीच ही रहती है। सार्वदेशिक सभा के नेतृत्व में, काला हाडी, मीनाक्षी पुरम, समनाथपुरम तथा अन्य अनेक स्थानो पर इस दिशा में आर्यसमाज ने काय किया है। धर्म और सस्कृति राष्ट्र का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। जब आस्था बदलती है, तो निश्चय ही अखण्डता की भावना को ठेस लगती है। हमें पूरी शक्ति से अपने अछूत कहे जाने वाले भाइयो को समानता दिलाने के लिए प्रयास करना चाहिए। आर्यसमाज एक ऐसा आन्दोलन है जो सम्पूर्ण प्राणी जगत् के कल्याण की कामना करता है। दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डा० वाचस्पति उपाध्याय ने कहा कि समानता अधिकार दिवस मनाने की सार्थकता तब है, जब हमारे हरिजन भाई प्रतिदिन मन्दिर मे आएँ, यज्ञ कर और सभी अन्य कार्यक्रमो में समान रूप से भाग ल।

समता दिवस सम्मेलन

आर्यसमाज लाजपत नगर ग्रेटर कैलाश भाग-१ और ग्रेटर कैलाश भाग-२ मे

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री श्री सूर्यदेव ने तीनो आर्य समाजो में समता दिवस सम्मेलनों में भाग लिया। उनके साथ सभा के वेद प्रचार मन्त्री श्री रामसरणदास आर्य भी थे। श्री सूर्यदेव ने कहा कि हमे हरिजन भाइयो को गले लगाकर, उनके कल्याण के लिए कार्यक्रम प्रारभ करने चाहिए। उन्होने बताया कि दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा पिछडी बस्तियो में, हरिजन बस्तियों में, पुनर्वास कालोनियो में तथा ग्रामीण क्षेत्रो में, और झुग्गी झोपडी कालोनियों में निरन्तर वेद-प्रचार कार्यक्रमों का आयोजन करके जन जागरण का कार्य करती है। समाज का भला तभी हो सकता है, जब इसके सभी अग समान रूप से शक्तिशाली तथा कार्य करने मे सक्षम हो।

पुस्तक विमोचन—

इस अवसर पर श्री ब्रह्मकुमार विद्यालकार द्वारा लिखित पुस्तिका "इतना तो जाने ही" का विमोचन श्री सूर्यदेव ने किया। यह पुस्तिका वैदिक धर्म का सामान्य ज्ञान कराने के उद्देश्य से लिखी गयी है जो ज्ञानवर्धक है।

आर्यसमाज शकरपुर

आर्यसमाज शकरपुर में समता दिवस सम्मेलन का आयोजन किया गया। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान माननीय स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने उपस्थित विशाल जन समूह को सम्बोधित करते हुए कहा कि अब हमारा देश जाग उठा है। हम सभी समान हैं। यहां न कोई छोटा है, न कोई बड़ा है। आर्यसमाज सभी के कल्याण की कामना करता है। आज हम भगवान् श्री कृष्ण को याद करते हैं। भगवान कृष्ण ब्राह्मण भी है, क्षत्रिय भी हैं, वैश्य भी और शूद्र भी। यही बात हम सभी के लिए सत्य है। मनुष्य मेहनत से ऊंचा उठता है। गुरुकुलों में कोई किसी की जाति नही जानता। वहाँ सभी समान हैं, पर यह राजनीति हमें हरिजन बना देती है। इस अवसर पर पत्रकार श्री शाण्डिल्य और सांसद श्री विकल जी ने भी अपने विचार व्यक्त किए।

सेवा में—

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली न० १७, कृष्णनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५१

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ अंक ४८ | रविवार १८ सितम्बर १९८८ | सृष्टि सवत १९७२९४९०८८ | भाद्रपद २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश मे ५० डालर ३० पौंड

वैज्ञानिक तथ्यों के बारे में भी इक्कीस हैं वेद

लेखक—जवाहरलाल कौल

★

भरतपुर, १२ सितम्बर। राजस्थान के भौतिक शास्त्री डा० मनोहरलाल गुप्त ने दावा किया है कि वेदो में चन्द्रमा के जन्म का जो विशद वर्णन है उसकी जानकारी आज तक विश्व के वैज्ञानिकों के पास भी नही है। मेक्सिको की बरमूदा खाडी से चन्द्रमा पृथ्वी से टूटकर अन्तरिक्ष में चला गया था।

जिसका प्रमाण आज भी इस खाडी में एक विशाल लौह स्तम्भ के रूप में मौजूद है।

वेद विज्ञान शोध संस्थान की ओर से भरतपुर में दस और ग्यारह सितंबर को हुए एक सेमिनार में कई वैज्ञानिकों ने दावा किया कि वेदों में न सिर्फ ऐसे वैज्ञानिक तथ्य भरे पड़े हैं। जिनको शोध भौतिक वैज्ञानिकों ने हाल ही के सालों में की है बल्कि ऐसे भी वैज्ञानिक तथ्य हैं जो अभी आधुनिक विज्ञान की समझ से परे हैं।

डाक्टर मनोहरलाल गुप्त के अनुसार वेदों में मानव इतिहास नहीं है। क्योंकि इनका मुख्य विषय ब्रह्माण्ड की सृष्टि की सैद्धांतिक व्याख्या करना ही है। वैदिक ऋषियों ने अपनी अलौकिक दृष्टि से सुदूर अतीत की घटनाओं को देखा इसलिए वेदों में विज्ञान के सभी मौलिक सिद्धान्तों का समावेश है। उनके अनुसार अब तक कई अनेक वैदिक तथ्य सही साबित हुए हैं। और इसीलिए आधुनिक वैज्ञानिकों को उन दावों को भी गंभीरता से लेना चाहिए जो अब तक उपलब्ध वैज्ञानिक जानकारियों से मेल नहीं खाते। उनका विश्वास है कि अन्त में यह वैदिक दावे भी आधुनिक वैज्ञानिक कसौटियों पर खरे उतरेंगे।

डाक्टर गुप्त का कहना है कि वैदिक मंत्रों में चन्द्रमा के जन्म का जो रोमांचकारी वर्णन है उससे कई तरह की वैज्ञानिक गुत्थियां सुलझ जाती हैं जिनकी आज तक भौतिक वैज्ञानिक और खगोलशास्त्री तर्क सम्मत व्याख्या नहीं कर पाए हैं। जब पृथ्वी अभी तप्त थी तो सूर्य के आकर्षण से उसका एक बड़ा हिस्सा टूट कर अलग हो गया। इतने बड़े द्रव्य के अचानक निकल जाने से दो महत्वपूर्ण बातें हुई। झटके की वजह से पृथ्वी अपनी धुरी पर झुक गई। और जिस स्थान से चन्द्रमा पृथ्वी से अलग हुआ वहां एक बड़ी खाई बन गई। जिसकी गहराई पृथ्वी के मध्य स्थल तक थी जहां पिघला हुआ धातु का भण्डार होता है। यह धातु एक विशाल स्तम्भ की तरह ऊपर उठी। यही वजह है कि मेक्सिको के पास बरमूदा खाडी में आज भी विमान और समुद्री जहाज क्षतिग्रस्त होते रहते हैं। लोहे के भण्डार के चुम्बकीय बल से उनका सन्तुलन बिगड़ जाता है। डाक्टर गुप्त के अनुसार आज तक वैज्ञानिक यह नहीं बता पाए थे कि पृथ्वी अपनी धुरी पर साढ़े तेईस अंश क्यों झुकी हुई है और बरमूदा खाडी के विचित्र व्यवहार का रहस्य क्या है।

मनोहरलाल गुप्त ने वैदिक मन्त्रो की व्याख्या करके यह भी दिखाया है। कि वेदों में सौरमण्डल के सभी ग्रहों और उनके चन्द्रमाओं की कहानी ही वैदिक ऋषियो ने नही कही है बल्कि हमारी आकाश गंगा और अन्य आकाश गंगाओं का भी सटीक वर्णन है। इस सिलसिले मे उनका दावा है कि वेदो में कुछ ऐसे भी तथ्य दिए हैं जो खगोलशास्त्र की जानकारी में नहीं है। लेकिन अनुसंधान किया जाए तो वे सत्य साबित हो जाएंगे। उनके अनुसार चौबीस ऐसे तथ्य हैं जिन्हें यदि आधुनिक वैज्ञानिक मार्गदर्शक मान लें तो अनेक प्रचलित वाद कपोल कल्पित साबित हो जाएंगे और सृष्टि की सही कहानी मनुष्य के सामने आ जाएगी।

जोधपुर विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति और व्यवसाय से इन्जीनियर डाक्टर सुरेशचन्द गोयल ने अपने पर्चे में दावा किया कि वैदिक ऋषियो ने हजारो साल पहले आधुनिक भौतिकी के वे सिद्धान्त खोज निकाले थे जिसे आज विज्ञान की रीढ माना जाता है। इस सिलसिले मे आइन्स्टीन का प्रसिद्ध सूत्र महत्वपूर्ण है जिससे ऊर्जा और पुंज आपस में परिवर्तनीय हैं। आदित्य के आठ पुत्रों के माध्यम से इस सिद्धांत को प्रतिपादित किया गया है। आदित्य अविनाशी ऊर्जा का प्रतीक है। आठवा पुत्र आदित्य से पैदा हुआ था लेकिन आदित्य स्वयं भी अपने पुत्र का ही पुत्र था यानी ऊर्जा पुंज से पैदा होती है और पुंज ऊर्जा से। डाक्टर गोयल का कहना है कि वैदिक ऋषि अनन्त अथवा सनातन के उस सिद्धान्त को पहचान चुके थे जिसकी ओर अब कुछ भौतिक शास्त्री बढ रहे हैं। गणित शास्त्री कैंटर की इन्फीनिटी की व्याख्या और क्वान्टम सिद्धांत ऐसे ही प्रयास हैं। वैदिक ऋषियों की इस धारणा को ईशावास्य उपनिषदों के इस सूत्र मे स्पष्ट किया गया है 'पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते' (पूर्ण को पूर्ण से निकालने पर भी पूर्ण ही बचता है)।

डाक्टर गोयल ने इस बात पर खेद व्यक्त किया कि हिलियो सेंटर सिद्धांत और गुरुत्वाकर्षण का वेदो मे साफ उल्लेख है। फिर भी अब तक हम उन्हें कापरनिकस और न्यूटन के नाम से जोड़ते हैं। इस सिलसिले में उन्होंने भौतिकी के नवीनतम सुपरस्ट्रिंग सिद्धांत की चर्चा की जिसमे धागे की लघु कम्पनों से ब्रह्मांड की प्रक्रिया को समझाने की कोशिश की गई है। वैदिक ऋषि जब मन्त्रो के उच्चारण में शब्द पर विशेष ध्यान देते रहे हैं तो वे ध्वनि के स्वाभाविक कम्पन की ओर ही इशारा करते थे। यह साबित हो गया है कि परमाणु के भीतर भी लगातार एक नाद होता रहता है। और इसी नाद की भूमिका परमाणु के विलय और विखण्डन मे महत्वपूर्ण है। वैदिक ऋषि भी मानते थे कि सृष्टि का मूल कारण शब्द या ध्वनि है।

वेदों में आधुनिक विज्ञान की खोज मे वैज्ञानिक मापदण्डों के इस्तेमाल का यह शायद पहला साव-

(शेष पृष्ठ ८ पर)

सम्पादक—प० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

श्रावणी और स्वाध्याय

ले०—ओमप्रकाश विद्यावाचस्पति रावत धाटा

वैदिक पर्वों में श्रावणी का महत्त्वपूर्ण स्थान है इसका सीधा सम्बन्ध वेदों और शास्त्रों के स्वाध्याय से है, सत्संग और शंका समाधान से है, अनुशीलन और निदिध्यासन से है, वर्ष भर चलने वाले प्रचार कार्यक्रमों की तैयारी से है।

यह श्रवण नक्षत्र से प्रारम्भ होकर कार्तिक मास की पूर्णिमा तक चलता है। जब वन-बाग, खेत, लता कुञ्ज हरियाली की चादर ओढ़कर आनन्द की सरिता में गोते लगाते हैं। किसान अपनी हरी-भरी लहलहाती फसलों को देखकर मयूर सा झूम उठते हैं। आकाश की काली घटाएं हृदय में नूतन अनुराग पैदा करती हैं। धरती की प्यास बुझ जाती है। ऐसे सुन्दर समय में वैदिक विद्वानों का सत्संग गाँव के बाहर किसी कुटी में स्वाध्याय और सत्संग से हुआ करता था। स्वाध्याय का यह सब से सुन्दर समय था, क्यों कि इन दिनों वर्षा के कारण सारे काम-काज अस्त-व्यस्त हो जाने से पर्याप्त समय मिलता था। गृहस्थ खेती के कामों से पर्याप्त समय प्राप्त कर वैदिक विद्वानों के सत्संग में जाकर आध्यात्मिक आनन्द को प्राप्त कर जीवन सफल बनाते थे।

वैदिक विद्वान् जो घूम-घूमकर गाँव और शहरों में प्रचार कार्य करते थे। वे वर्षा के कारण अवकाश प्राप्त करके अपने स्वाध्याय को और गहरा बनाकर आगामी कार्यक्रमों के लिए भूमिका तैयार कर लेते थे। स्वाध्याय द्वारा नवीन विषयों की जानकारी प्राप्त करके प्रचार कार्यक्रम में नवीन अध्याय जोड़ देते थे। भूले-बिसरे ज्ञान को शंका समाधान के माध्यम से दूर करते थे। इस प्रकार इसका सम्बन्ध स्वाध्याय से हो जाता है।

आज इस पर्व के रहस्य को न समझकर सिर्फ ढोंग और आडम्बर के चक्कर में पड़कर इसके महत्त्व को लोग भूल गए हैं। स्वाध्याय का नाम भी नहीं लेते हैं। न तो आज स्वाध्याय के तरफ किसी का ध्यान ही जाता है जब कि इसका सीधा सम्बन्ध स्वाध्याय से ही है। वेद, जो कि परमात्मा की वाणी है, का स्वाध्याय और प्रवचन द्वारा ज्ञान अर्जित करना ही इस पर्व का मुख्य लक्ष्य है। तैत्तिरीयोपनिषद् में स्वाध्याय पर बहुत बल दिया गया है, स्वाध्याय किसी भी परिस्थिति में त्याज्य नहीं है—

"ऋतं च स्वाध्यायप्रवचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवचने च। दमश्च स्वाध्यायप्रवचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवचने च। अग्नयश्च स्वाध्यायप्रवचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवचने च। प्रजनश्च स्वाध्यायप्रवचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवचने च। स्वाध्याय प्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्

अर्थात् ऋत, सत्य, तप, शम, दम, अग्न्याधान, अग्निहोत्र अतिथि-सेवा, मनुष्य सेवा, प्रजापालन, सन्तानोत्पत्ति और उनका पालन इन सब को करते हुए भी मनुष्य को स्वाध्याय और प्रवचन में कभी भी आलस नहीं करना चाहिए। स्वाध्याय और प्रवचन का किसी भी हालत में त्याग नहीं करना चाहिए।

इस प्रकार स्वाध्याय मनुष्य के जीवन का एक अनिवार्य अंग है। उपनिषत्कार ने इसीलिए बहुत ही बल देकर स्वाध्याय की ओर प्रेरित किया है। स्वाध्याय के दो अर्थ होते हैं—पहला वेद-शास्त्र और सद्ग्रन्थों का एकाग्रचित्त होकर अध्ययन करना और दूसरा अपने जीवन का अध्ययन करना। जितना प्रथम प्रकार का स्वाध्याय आवश्यक है उतना ही दूसरे प्रकार का स्वाध्याय भी आवश्यक है। प्रथम प्रकार के स्वाध्याय द्वारा मनुष्य ज्ञानी बनता है और दूसरे प्रकार के स्वाध्याय द्वारा मनुष्य महात्मा बनता है। प्रथम प्रकार का स्वाध्याय मनुष्य के रास्ते पर प्रकाश डालता है और दूसरे प्रकार का स्वाध्याय उस रास्ते के कण्टक, कंकड़ आदि अवरोधक वस्तुओं को दूर करता है। इस प्रकार दोनों प्रकार का स्वाध्याय नितान्त आवश्यक है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं, एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। इसलिए मनुष्य को स्वाध्याय से कभी भी विमुख नहीं होना चाहिए।

स्वाध्याय करने वाले व्यक्ति का आत्मा बलिष्ठ होता है। उसकी मानसिक शक्ति प्रबल होती है तथा उसे जीवन को सही दिशा प्राप्त होती है। स्वाध्याय द्वारा कितनों ने महान ज्ञान प्राप्त करके लोगों को चकित कर दिया है। परिस्थिति का मारा व्यक्ति भी स्वाध्याय द्वारा उच्च शिक्षा को प्राप्त कर सकता है, महान् बन सकता है। हमारे साहित्य में ऐसे ऐसे कवि और लेखक हुए हैं जिन्होंने स्वाध्याय द्वारा ही ज्ञानप्राप्त कर उच्च कोटि के काव्य रचे हैं। मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद अयोध्या सिंह उपाध्याय "हरिऔध" आदि कितने कवियों ने स्वाध्याय द्वारा ही ज्ञान प्राप्त कर कविता के क्षेत्र में ख्याति प्राप्त की है। अभी हाल में ज्ञानपीठ पुरस्कार प्राप्त करने वाला लेखक पन्नालाल पटेल पाँचवीं कक्षा पास है जिसने कि इस महान् पुरस्कार को प्राप्त किया है। आविष्कार उसका स्वाध्याय ही तो प्रबल है। अतएव हमें भी स्वाध्यायी होना चाहिए। दिन-रात के मध्य कभी भी ऐसा समय निश्चित होना चाहिए, जिस समय बैठकर एकाग्रचित्त होकर स्वाध्याय किया जा सके।

स्वाध्याय की महिमा के बारे में जितना भी वर्णन किया जाय उतना ही कम है। इसका प्रत्यक्ष अनुभव तो स्वाध्याय करके ही प्राप्त किया जा सकता है आप सद्ग्रन्थों का स्वाध्याय प्रारम्भ कर दें, नियत समय पर स्वाध्याय करने बैठ जायें फिर आप देखेंगे कि आपको एक अपूर्व शान्ति का अनुभव होने लगेगा इसमें कुछ खर्च नहीं है कहीं जाना नहीं है, शारीरिक श्रम करना नहीं है, सिर्फ आलस्य त्यागकर स्वाध्याय की ओर प्रवृत्त होने की देरी है। श्रावणी पर्व जो वर्ष में एक बार सावन के महीने में आता है। वह आपके आलस्य और प्रमाद को दूर करने आता है, नवीन चेतना जाग्रत करने आता है, नया उत्साह पैदा करने आता है, वेदों और शास्त्रों की ओर ध्यान दिलाने आता है। इसके पवित्र सन्देश को हमें समझना चाहिए और समझकर लाभ उठाना चाहिए।

अत तैत्तिरीयोपनिषद् के कथनानुसार "स्वाध्यायान्मा प्रमदः।" अर्थात् "स्वाध्याय में कभी प्रमाद नहीं करना चाहिए।" हमें चाहिए कि इस पर्व से हम यह व्रत लें कि प्रतिदिन आधा घण्टा, एक घण्टा, दो घण्टा जो भी समय मिले, उसमें अवश्यमेव सद्ग्रन्थों का अध्ययन करें। वेद का एक ही मंत्र अर्थ सहित पढ़ें, किसी अच्छी पुस्तक का एक ही पेज पढ़ें, किन्तु अवश्य स्वाध्याय करें। यही इस पर्व का मुख्य सन्देश है।



तपोवन का बृहद यज्ञ व साधना शिविर १० अक्तूबर से

देहरादून, (सितम्बर) वैदिक साधन आश्रम तपोवन देहरादून की प्रेस विज्ञप्ति में सूचित किया गया है कि आश्रम का अर्धवार्षिक बृहद् यज्ञ तथा योग-साधना-शिविर सोमवार दिनांक १० अक्तूबर को आरम्भ होगा और पूर्णाहुति रविवार दिनांक १६ अक्टूबर को प्रातः ६ बजे होगी जिसके अनन्तर एक बजे से यज्ञोत्सव तक भक्ति-संगीत और वेद-प्रवचन चलेंगे।

इस अवसर पर पूज्य महात्मा दयानन्द जी के अतिरिक्त दिल्ली से पं० पृथ्वीराज जी शास्त्री और ज्वालापुर से स्वामी दिव्यानन्द जी सरस्वती के पधारने की पूर्ण आशा है।

तपोवन के अप्रैल तथा अक्तूबर में प्रति वर्ष होने वाले ऐसे आयोजन में श्रद्धालु जन दूर-दूर से बड़ी संख्या में आया करते हैं।

देवदत्त बाली
मंत्री,
वैदिक साधन आश्रम, तपोवन

मानव-निर्माण

लेखक—सत्यार्थ भास्कर आर्यबन्धु, मुरादाबाद

★

मानव का दानव बन जाना उसकी पराजय है। मानव का महामानव होना उसका चमत्कार है। मानव का मानव होना उसकी विजय है।

—डा० राधा कृष्णन

मानव-निर्माण क्यों ?

मानव सद्गुणों से सर्वथा शून्य संसार आज कुण्ठाओं एवं पीड़ाओं की ज्वाला में जल रहा है। सर्वत्र अशान्ति, निराशा, भय तथा दु:ख का साम्राज्य है। वैज्ञानिक आइनस्टीन से जब संसार में व्याप्त दु:ख एवं अशान्ति को दूर करने का उपाय पूछा गया तो वैज्ञानिक ने उत्तर दिया—"श्रेष्ठ मनुष्यों का निर्माण करो।" आइनस्टीन ने जो बात कही थी, आर्यसमाज ने वही बात सौ वर्ष पूर्व वेद के 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' के उद्घोष द्वारा घोषित की थी। पर आयसमाज की सुनता ही कौन है ? दु:ख है आज संसार में सब-कुछ हो रहा है, किन्तु यदि नहीं हो रहा तो बस मानव का निर्माण नहीं हो रहा। पशुओं की नस्ल सुधारने तथा उन्हें सिधाने की योजनाएँ तो प्राय बनती रहती हैं, परन्तु मनुष्य को सुधारने की कोई योजना आर्यसमाज को छोड़कर किसी के पास नहीं है। खुमार बाराबंकवी ने ठीक ही कहा है—

सभी कुछ हो रहा है,
इस तरक्की के जमाने में।
मगर यह क्या गजब है,
आदमी इन्सां नहीं होता ॥

भारत के प्रथम प्रधानमन्त्री प० जवाहरलाल नेहरू ने १९५८ में दिल्ली में आयोजित एक प्रेस कान्फ्रेंस में इस बात का महत्त्व निम्न शब्दों में व्यक्त किया था—'भारत में तथा अन्यत्र वास्तविक समस्या उत्तम मनुष्यों की उत्पत्ति की है। यदि मनुष्य ठीक न हों तो हमारी आधारशिला सशक्त नहीं हो सकती। कृषि और उद्योग-धन्धों में सम्पत्ति का लगाया जाना महत्त्वपूर्ण है, परन्तु मनुष्य बनाने के लिए योजना का बनाया जाना उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है।"

यूनान के एक दार्शनिक के बारे में प्रसिद्ध है कि एक दिन वह चमकते सूर्य के प्रकाश में लालटेन लिये घर से बाहर निकल पड़ा और आँखें फाड़-फाड़कर ऐसे देखने लगा मानो उसकी कोई वस्तु खो गई हो। लोग इतने बड़े विद्वान् को दिन के प्रकाश में इस तरह लालटेन लिये घूमते देखकर आश्चर्य करने लगे। कुछ यह समझने लगे कि दार्शनिक लोग तो आध पागल होते ही हैं, यह भी कोई वैसा ही अध-पागल है। कुछक ने आगे बढ़कर उससे पूछ ही तो लिया कि 'आप इतने बड़े विद्वान् हैं, फिर सूर्य के प्रकाश में इस तरह लालटेन लिये क्यों घूम रहे हैं और किस खोई वस्तु की तलाश में मग्न हैं ? दार्शनिक प्रथम तो मुस्कराया फिर गम्भीरता पूर्वक उत्तर दिया—"मैं मानव को ढूंढ रहा हूं।" इस पर नागरिकों ने तुनककर पूछा—"तो क्या हम मानव नहीं हैं ?" दार्शनिक बोला—"नहीं, तुम में से कोई दुकानदार है, कोई ग्राहक, कोई किसान है, कोई मजदूर, पर लोक ? तुम में से मनुष्य कोई नहीं।

वस्तुत हम व्यापारी हैं, अफसर हैं, प्रोफेसर हैं, सब-कुछ हैं, बस नहीं तो एक मनुष्य नहीं। सत्य है—

अब कहाँ इन्सा जिन्हें इन्सां कहें,
चलती फिरती देख लो परछाइयाँ।

मनुष्य या पशु ?

मनुष्य की योनि में जन्म लेने मात्र से ही हम मनुष्य कहलाने के अधिकारी नहीं हो जाते। वेद 'मनुर्भव' का उपदेश देकर हमें मनुष्य बनने की अनुप्रेरणा देता है। वेद का यह उपदेश पशुओं के लिए तो है नहीं, फिर मनुष्य को मनुष्य बनने का उपदेश कैसा ? क्या मनुष्य का चोला पाकर भी हम मनुष्य नहीं ? बात तो कुछ ऐसी ही है—

यूँ तो मरदुम से जो सरजमीं है चल',
देखने को पर यहाँ इन्सां नहीं है।

अपनी इस विस्तृत वसुन्धरा, पर मनुष्य के कोष्ठक में लिखी जाने वाली जनगणना की पुस्तिका में लगभग चार अरब प्राणी होंगे, पर सारे-के-सारे मानव ही हों, ऐसी बात नहीं। क्यों ? इसका उत्तर जिगर मुरादाबादी इस प्रकार देते हैं—

इस जमाने का इन्कलाब न पूछ,
रश्क शैतान की, अजब आदम की।

'आकृतिग्रहणा जाति.' (व्याकरण-महाभाष्य) के अनुसार जाति आकृति से जानी जाती है। दो हाथ, दो पैर, विकसित मस्तिष्क एवं सीधा खड़े हो सकने की क्षमता आदि गुणों से युक्त शरीरधारी को भले ही मनुष्य की संज्ञा दे दी गई हो, परन्तु शास्त्र, इसे वास्तविक मानव नहीं मानता। शारीरिक दृष्टि से वह तब तक मनुष्य कहलाने का वास्तविक अधिकारी नहीं जब तक कि उसमें मानवता-सम्बन्धी सद्गुणों का विकास नहीं हो जाता। इन्हीं असाधारण गुणों के कारण कि मानवेतर प्राणियों में नहीं पाए जाते, हम मनुष्य कहलाने के वास्तविक अधिकारी हो सकते हैं। भर्तृ के अनुसार—

येषां न विद्या न तपो न दानं,
ज्ञानं न शीलं न गुणो न धर्मः।
ते मर्त्यलोके भुवि भारभूता,
मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति ॥

क्योंकि—

आहारनिद्राभयमैथुनं च,
सामान्यमेतत् पशुभिः नराणाम्।
धर्मो हि तेषाम् अधिको विशेषो
धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः ॥

और—

खादन्ते मोदन्ते नित्यं,
शुनकः शूकरः खरः।
तेषामेषां को विशेषो
वृत्तिर्येषां च तादृशी ॥

महर्षि दयानन्द सरस्वती का कथन है—जैसे पशु बलवान् होकर निर्बलों को दु:ख देते और मार भी डालते हैं, जब मनुष्य शरीर पाकर वैसा ही कर्म करते हैं तो मनुष्य-स्वभावयुक्त नहीं किन्तु पशुवत् हैं। और जो बलवान् होकर निर्बलों की की रक्षा करता है, वही मनुष्य कहलाता है और जो स्वार्थवश होकर पर-हानि मात्र करता है, वह जानो पशुओं का बड़ा भाई है।

मनुष्य के लिए उसकी सृजनात्मक शक्ति विधाता की सम्भवत सर्वोत्तम देन है, परन्तु आज का सभ्य कहा जानेवाला आधुनिक मानव जिसको 'डा० यंग' आधुनिक विज्ञान द्वारा प्रवर्तित क्रान्ति की सन्तान कहते हैं अपने विध्वंसकारी वैज्ञानिक आविष्कारों से मानवता का मूल ही नष्ट करने पर उतारू है। तभी तो चक्रवर्ती डा० राजगोपालाचार्य ने इसे एक मशालधारी बन्दर कहा था जो अपनी मशाल लिये एक झोंपड़ी से दूसरी पर कूद रहा है, परिणामस्वरूप झोंपड़ियाँ जल उठती हैं और वह बन्दर भी उन्हीं में जलकर भस्म हो जाता है, और आज यह दशा है कि शैतान पर विश्वास भले ही कर लूं, आदमी देखकर डर जाता हूँ।'

यह सब देखकर Issac Watts का कोमल हृदय चीत्कार उठता है कि Your little hands were never made to tear each other eyes अर्थात तुम्हारे ये छोटे-छोटे हाथ इसलिए नहीं बनाए गए थे कि तुम एक-दूसरे की आंख नोंच लो और Wordsworth दु:ख-भरे शब्दों में कहते हैं—Muchit grieved my heart to think what Man has made of Man अर्थात यह सोचकर मुझे बहुत दु:ख होता है कि मनुष्य ने मनुष्य का क्या बना डाला है।

कवि सम्राट टैगोर का कथन है कि मनुष्य जब पशु बन जाता है तो उस समय वह पशु से भी बदतर हो जाता है। इसीलिए शास्त्र चेतावनी देता है कि हम नित्यप्रति देखें कि हम मनुष्य ही तो हैं, कहीं पशु तो नहीं बनते जा रहे—

प्रत्यहं प्रत्यवेक्षेत
नरश्चरितमात्मनः।
किन्नु मे पशुभिस्तुल्यं
किन्नु सत्पुरुषैरिति ॥

आज मानव चन्द्रमा पर पहुंच चुका है और मंगल पर पहुंचने की तैयारी में है। यह सब होते हुए भी डा० राधाकृष्णन का यथार्थ कथन है कि चिड़ियों की तरह हवा में उड़ना और मछलियों की तरह पानी में तैरना सीख लेने के पश्चात् अब हमें इन्सानों की तरह जमीन पर चलना सीखना है।

मनुष्य कौन

वैसे तो मनोरपत्य मानव के अनुसार मनु की सन्तान मानव कहलाती है, पर यह तो 'आकृतिग्रहणा जाति' वाली बात हो जायेगी, न कि गुण-कर्मानुसार। अत मानव की परिभाषा हमें अन्य में ही देखनी होगी। निरुक्तकार 'मानव' की परिभाषा निम्न शब्दों में करते हैं—मत्वा कर्माणि सीव्यति इति मनुष्य' अर्थात जो विचारपूर्वक कर्म करता है वही मनुष्य है। 'मननात्मनुष्य' मनन करने वाला

(शेष पृष्ठ ६ पर)

हिन्दी दिवस

मातृभाषा का नहीं, अस्मिता का सवाल

लेखक—विनीत नारायण

मुल्क में सात फीसदी बच्चे ऐसे हैं जो हायर सेकेंडरी की पढ़ाई अंग्रेजी माध्यम से करते हैं। देश के नामी इंजीनियरिंग संस्थानों में दाखिला पाने वाले नब्बे फीसदी छात्र इन्हीं सात फीसदी में से आते हैं। बाकी ९३ फीसदी सीटें गैर अंग्रेजी-दां छात्रों के हिस्से आती हैं यानी कुल दस फीसदी सीटें। देश के मातृभाषी नौजवानों के खिलाफ चल रही इस साजिश का जब इंजीनियरिंग कालेजों के ही छात्रों ने पर्दाफाश किया तो सरकार चौंकी। फिर भी इन जुझारू छात्रों को ढाई बरस तक लंबी लड़ाई लड़नी पड़ी। आखिरकार इसी बरस २३ मार्च को सरकार मान गई। अब इन कालेजों की प्रवेश परीक्षा क्षेत्रीय भाषाओं में भी होगी। यानी इंजीनियरिंग पढ़ने वाले के ख्वाहिशमंदों को अंग्रेजी की बैसाखियों के सहारे नहीं चलना पड़ेगा।

इधर विलायती के हुक्मरानों के मुल्क छोड़ने के ४१ बरस बाद यह किला फतह हो पाया। उधर एक और जंग छिड़ गई। इस बार कुरुक्षेत्र बना है मेडिकल कालेजों में दाखिले का मामला। देश के कई प्रांत और बहुत से छात्र चाहते हैं कि इस बरस से ही पहली बार शुरू हुई मेडिकल कालेजों में दाखिले की अखिल भारतीय परीक्षा क्षेत्रीय भाषाओं में भी हो ताकि अंग्रेजीदां लोगों का एकाधिकार टूटे। पर सरकार और उसका स्वास्थ्य मंत्रालय कानों में रुई दिए बैठा है। जब बहुत तरफ से मांग की गई तो सर्वोच्च न्यायालय का एक ताजा फैसला दिखाकर आंदोलनकारियों का मुंह बंद करने की नाकाम कोशिश हुई। २१ जुलाई १९८५ के इस फैसले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि, 'हमें डर है कि हम प्रांतों के इस सुझाव को नहीं मान सकते। हम नहीं मानते कि मौजूदा हालात में मेडिकल प्रवेश परीक्षा को अंग्रेजी के अलावा किसी भी भाषा में कराना मुमकिन होगा। क्योंकि सारे देश में एम बी बी.एस. की पढ़ाई अंग्रेजी में ही होती है।'

बावजूद इसके क्षेत्रीय भाषाओं में प्रवेश परीक्षा कराने की मांग ठंडी नहीं पड़ी। आगरा के डा. मुनीश्वर और डा. अविनाश ने हिन्दी में एम. डी. का शोध प्रबंध लिखकर इस तर्क को झुठला दिया कि डाक्टरी की पढ़ाई अंग्रेजी के बिना असंभव है। इससे पहले आई आई टी में श्यामरुद्र पाठक, अमरेंद्र कुमार सिंह, अनूप कुमार, रामविनय शर्मा, अजीत कुमार और मनमोहन यह काम कर ही चुके थे। ये सब अंग्रेजी जानते हुए भी अंग्रेजियत के खिलाफ इसलिए जूझ रहे हैं ताकि अपने देश के बहुसंख्य नौजवानों को उनका हक दिलवा सकें। पर अंग्रेजीदां हुक्मरान इसे आसानी से मानने को तैयार नहीं।

इससे दो बातें साफ होती हैं। पहली, अंग्रेजीदां लोग भारत पर अपनी पकड़ ढीली करने को कतई तैयार नहीं हैं। दूसरी अंग्रेजी जानने वाली युवा पीढ़ी और सक्षम वैज्ञानिकों तक का अंग्रेजी के प्रति मोहभंग होना शुरू हो रहा है। मगर इनका प्रतिशत काफी कम है। दूसरी ओर जो अंग्रेजी का आधिपत्य नहीं भी चाहते और इनकी संख्या करोड़ों में है, उन्हें भी तमाम तरह की उलझनें हैं। मसलन अंग्रेजी को त्याग कर कहीं हम ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में पिछड़ तो नहीं जाएंगे? अंतर्राष्ट्रीय संपर्क की भाषा तो अंगरेजी ही है? या देश में जब चार सौ बोलियां और संविधान स्वीकृत १५ भाषाएं हैं, तो अंगरेजी का विकल्प कौन-सी भाषा हो सकती है? ऐसी ही तमाम अन्य शंकाएं अंगरेजी को न चाहने वालों के दिमागों में बैठी हैं। इसका लाभ उठाकर अंगरेजी ही नहीं अंग्रेजियत भी हिंदुस्तान के सीने पर चढ़ी बैठी है। अंगरेजी समर्थकों की एकजुटता और भाषा के प्रति दुराग्रह इतना मजबूत है कि वे अपने प्रचार तंत्र से ऐसी शंकाओं की आग को खूब हवा देते हैं। कारण बिलकुल साफ है। देश की जनसंख्या के सामने अंग्रेजीदां लोग मुट्ठीभर हैं। फिर भी देश में उपलब्ध साधनों, संपन्नता और अवसरों का अधिकतम हिस्सा इन्हीं के कब्जे में है।

जाहिर है कि संपन्नता भाषा और अधिकार आपस में गठबंधन किए बैठे हैं। अंग्रेजी की तरफदारी करने वाले अंगरेजी को सिर्फ भाषा के रूप में ही नहीं शासन व शोषण के अस्त्र के रूप में भी प्रयोग करते हैं। अंगरेजी शासकों की भाषा है। हिंदी शोषितों की। विश्वास न हो तो दिल्ली में एक खुफिया सर्वेक्षण करवा लीजिए। दिल्ली में रहने वाले ज्यादातर नीति निर्धारकों, सचिवों सलाहकारों व सत्ता के गलियारों में मंडराने वाले बुद्धिजीवियों के घर अंगरेजी की ही पत्र-पत्रिकाएं पढ़ी जाती हैं। स्थानीय अखबारों में कुछ भी छपता रहे, उनकी बला से। लेकिन अंग्रेजी में छपते ही उनके कान खड़े हो जाते हैं। गोदाम का गोबर अंग्रेजी में चीख नहीं सकता और गोबना जालोन बुंदेली भाषा में की गई उसकी पुकार सुन नहीं सकता। कैसे तालमेल बैठे?

अंग्रेजी बोलकर हम अपनी मातृभाषा से ही दूर नहीं होते बल्कि अपने पूरे परिवेश से कट जाते हैं। भाषा जो विचारों की वाहक है अगर पराई होगी तो विचार भी अपने कैसे बन सकेंगे? फिर तो वही होगा जो आज हो रहा है। भूखे-नंगे को साक्षर करने की योजना बनाने के लिए विज्ञान भवन के एयरकंडीशन हाल में सेमीनार और अशोका होटल का खाना खाकर भविष्य में ऐसे ही पारस्परिक मिलन समारोहों का आधार तैयार करना। दूरदर्शन पर बेरोजगार गरीब युवाओं को दिखाना, यामहा या होंडा मोटरसाइकिल के उत्पादन में नए कीर्तिमान, शौक पैदा करना सस्ती सवारी का। बिना पेयजल के दो लाख गांवों को छोड़ दिल्ली की ही बस्तियों में पीने के पानी के अकाल के दौरान दिल्ली के तरण तालों में सुन्दर-सौष्ठव शरीर के मांसल खुलते नीरें जल विहार।

एक बात और। ऐसा नहीं है कि अंग्रेजी जानने वाले इन अल्पसंख्यकों में सभी संपन्नता और सत्ता के एक स्तर पर ही हैं। इनमें भी स्तर हैं। जितनी अच्छी अंगरेजी उतनी ही ऊंची स्थिति। अगर आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी या कैंब्रिज में या दून स्कूल, स्टीफेंस जेवियर, एल्फिंस्टन या क्रिश्चियन कालेज में अंगरेजी सीखी है तो सत्ता, अधिकार साधन व संपर्कों का उच्चतम स्तर आरक्षित है। अगर इन्दौर, मुर्शिदाबाद, बाड़मेर या श्रीनगर में पढ़ने के दौरान अंगरेजी झपटी है तो उससे नीचे के स्तर पर जहां जाहिरन प्रतियोगिता बढ़ जाती है, संतोष करना होगा। बिजली की कटौती के लंबे घंटों में लैंप तले भार्गव की 'डिक्शनरी' और 'रेपीडेक्स इंग्लिश-स्पीकिंग कोर्स' रट कर अंगरेजी सीखी है तो बाबूगिरी के स्तर तक संतोष करना होगा। अंत में दिल्ली मद्रास बंबई के पांच तारा होटलों के बैरों या टैक्सी ड्राइवरों की अंगरेजी तो है ही। 'कमिंग सर जाकिंग लेस सर।'

अंगरेजी समर्थक कैसे आसानी से अंगरेजी को हट जाने देंगे? क्योंकि अंगरेजी हटाने की बात शुरू होते ही तथाकथित विकास-प्रतीक अट्टालिकाओं, कंप्यूटरों और पांच सितारा होटलों की सार्थकता पर भी तो प्रश्न चिन्ह लगने लगते हैं? आम आदमी की जुबान में अगर शासन चलेगा तो सड़क के आदमी की सिर्फ शासकों पर पकड़ ही मजबूत नहीं होगी बल्कि उसकी शासन में हिस्सेदारी की मांग भी बढ़ेगी। इसीलिए राष्ट्रभाषा से जुड़े हर सवाल को ये लोग हर बार बड़ी खूबसूरती से टालकर जनता का ध्यान दूसरे मुद्दों पर लगा देते हैं। या फिर अंग्रेजी से होने वाली ऐसी काल्पनिक उलझनें पैदा करते हैं कि बुद्धिभ्रम हो जाए।

अंग्रेजी भाषा-प्रेमियों को ही क्यों दोष दिया जाए। हम और आप भी तो अंग्रेजी के सम्मोहन से अछूते नहीं रहते। भीड़ भरे रेल के डिब्बे में कंडक्टर से सीट मांगने के लिए आपने भी तो अंग्रेजी बोलकर कई बार बेतरतीबी पार की होगी। क्यों है न? पता नहीं क्यों अंग्रेजी भाषा की मरीचिका में फंस कर हम

सभी एक हारी हुई लड़ाई लड़ते जा रहे हैं। यह जानते हुए भी कि हरेक में विदेशी भाषा को ठीक से सीखने की क्षमता सीमित होती है, हम अपने जीवन के सर्वश्रेष्ठ वर्षों में ज्ञान बढ़ाने की बजाय अंग्रेजी से ही जूझते रहते हैं। याद कीजिए बचपन के वो दिन जब आपने बिन अर्थ जाने 'बाबा ब्लैकशीप हैव यू ऐनी वूल' वाली नर्सरी राइम रटी थी और आप सालों तक बाबा का अर्थ एक बूढ़े आदमी से लगाते रहे थे। और उन्हीं दिनों आपने 'मछली जल की रानी है जीवन उसका पानी है' वाली कविता भी याद की थी जिसको सुनाते समय आपकी चमकती आँखों में तैरती मछली को साफ देखा जा सकता था।

अंग्रेजी सीखने-सिखाने का का संक्रामक रोग बढ़ता ही जा रहा है। जो स्वयं नहीं बोल सकते उनकी हसरत रहती है कि उनके बच्चे इस कला के महारथी जरूर बनें। इसी अन्धी दौड़ का फायदा उठाकर देश के बड़े शहरों में ही नहीं कस्बा तक में अंग्रेजी माध्यम स्कूलों की सरपटवार जैसी वृद्धि पिछले दशक में हुई है जहाँ के पढ़ाने वालों का भी अंग्रेजी में हाथ तंग होता है। फिर क्यों खुला धोखा खाकर भी इस मोह में खिंचे जाते हैं। इन स्कूलों को छोड़िए हमने तो कान्वेंट स्कूलों तक के बच्चों को बिना समझे विज्ञान और भूगोल के सवाल रटते देखा है। उन्हें देखकर बरबस धोबी के गधे का चेहरा याद आ जाता है! बेचारा पराया बोझ ढोने को विवश है। मगर नहीं। माता पिता इन बच्चों के उतरे हुताश चेहरे नहीं देख पाते। वे तो विभोर होते हैं इनके गले में बंधी यूनीफार्म की टाई देखकर जो इनका जीवन क्रमशः घोंटती जा रही है। इन्हें जरूरत है ज्ञान की अभिव्यक्ति के अवसर की जिज्ञासा को उकसाने की जो सिर्फ इनकी अपनी जबान में हो सकता है।

जहाँ तक अंग्रेजी के अन्तर्राष्ट्रीय संपर्क भाषा होने का प्रश्न है, वह तर्क इतना मजबूत नहीं जितना दिखाई देता है। यह सही है कि आज अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के क्षेत्र में अंगरेजी का प्रयोग बढ़ा है लेकिन इससे बड़ा सच यह है कि अंग्रेजी जानकर आप दुनिया में हर जगह काम नहीं चला सकते। मुझे स्विटजरलैंड के 'ल्यूर्सिन पास' शहर की वह एक शाम याद है जब मैं लाख कोशिश करने के बावजूद रेस्टोरेंट' में बैठे नवयुवकों से अंग्रेजी में यह तक नहीं पूछ सका कि दीवार पर लगे पोस्टर में (जो कि स्विस भाषा में था) कौन से मेले का इश्तहार है और वहाँ तक जाने के लिए हमें किस रास्ते कार ले जानी होगी? आखिरकार मुझे हाथ पैर से भाव अभिव्यक्त करने पड़े और तब भी जो बात समझ में आई वह नाकाफी थी। ऐसे मौके यूरोप यात्रा के दौरान तमाम देशों में आए जहाँ हम अंग्रेजी बोलकर सही उत्तर नहीं पा सके। पेरिस, ब्रूसेल्स, बान जैसे बड़े शहरों की बात मैं नहीं कर रहा। वहाँ तो हर समय अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटक आते ही हैं। ऐसी स्थिति में आदमी मजबूर होता है सोचने के लिए कि जब ये पिद्दी-पिद्दी से देश अपनी सांस्कृतिक और भाषाई पहचान को सुरक्षित ही नहीं रख रहे बल्कि नई खोज, शोध व जानकारी का एक संग्रह भी स्थानीय भाषा में कर रहे हैं तो हमारे यहाँ ऐसा क्यों नहीं हो सकता क्यों नहीं हम भी अपनी संस्कृति और अपनी पहचान से इतना ही जुड़ पाते। उस संस्कृति से जिसका सिंधु से मुगलकाल तक का वैभवपूर्ण अतीत है और दबा-छिपा आज भी सिसकियाँ ले रहा है? औपनिवेशिक मार इतनी करारी है कि आजाद होकर भी मानसिक गुलामी बरकरार है? कैसा लगता है जब भारत का प्रधान मंत्री विदेशों में अंग्रेजी में भाषण देता है? लगता है जैसे सांस्कृतिक धनिकों की जमात में भारत किराए के कपड़े पहने खड़ा है। रूस, चीन, जापान ही नहीं दुनिया के तमाम छोटे-छोटे देश सिर्फ अपनी भाषा में तरक्की कर रहे हैं। शायद हम यही तय कर पाने में संकोच करते हैं कि हमारी भाषा है क्या? इस सवाल में हमारी दिमागी धुन्ध को अंग्रेजी दां लोगों ने हमेशा बढ़ाया है। इससे कि हम इस बहस में पड़ें कि अंग्रेजी को हटाकर कौन सी भाषा लाई जाए तो प्रश्न होगा कि अंगरेजी ही क्यों रहे? जबकि इसके बोलने समझने वालों का प्रतिशत जनतांत्रिक भारत में न्यूनतम है।

जहाँ तक हमारी भाषाई नीति का प्रश्न है यह सवाल कोई नया नहीं है। स्वतन्त्रता संग्राम के शुरू में ही देश के सुदूर प्रांतों तक से आए प्रबुद्ध नेता लम्बी चर्चाओं और विचार के बाद इस पर एकमत हुए थे कि 'हिंदुस्तानी' जुबान को ही राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता दी जाए। इसके लोचशील स्वरूप को अपनाए जाने की वकालत की गई थी जो कि हिंदी प्रेमियों द्वारा विकसित वैसी क्लिष्ट नहीं थी जैसी आजकल 'हिन्दुस्तानी' के नाम पर सरकारी कार्यालयों की फाइलों में ढोई जा रही है। बल्कि अपनायी जाने वाली राष्ट्रभाषा गांधी जी के अनुसार 'हिन्दुस्तानी' में अन्य भाषाओं के प्रचलित शब्दों का निःसंकोच प्रयोग सम्भव था। तब तक इसका तमिलनाडु तक में विरोध नहीं था क्योंकि किसी न किसी रूप में यह देश के हर हिस्से में तब भी समझी जाती थी और आज भी बोली व समझी जाती है। पर आजाद भारत के प्रारम्भिक नेतृत्व ने अंगरेजी को कुछ वर्षों तक कामचलाऊ भाषा के रूप में स्वीकृति देकर न सिर्फ राष्ट्र भाषा के विकास की सम्भावनाओं को धूमिल कर दिया बल्कि राष्ट्रीय एकीकरण की सम्भावनाओं पर भी अनजाने कुल्हाड़ी चला दी। आज यह सवाल गले में हड्डी की तरह फंसा है।

आजादी के बाद स्वार्थी राजनैतिक नेताओं ने भाषाई सवाल को हमेशा वोट के लिए उछाल कर अपना उल्लू सीधा किया और है आज यदि केन्द्रीय नेतृत्व चाहे भी तो हिंदुस्तानी को राष्ट्रभाषा के रूप में पुनःस्थापित करने के लिए भारी पराक्रम और ईमानदारी की जरूरत पड़ेगी। यह जिम्मेदारी तो जनता की है कि वह अंग्रेजी के शोषक स्वर को पहचान कर झटक दे। वहाँ यह बात साफ होनी चाहिए कि 'हिन्दुस्तानी' को राष्ट्रभाषा बनाने के साथ सभी प्रान्तों को अपना काम अपनी ही भाषा में करने के लिए बाध्य करना भी जनता की जिम्मेदारी है। क्षेत्रीय भाषाओं को पूर्ण सम्मान मिले बगैर भारत जैसे विविधता के देश में कोई भी एक भाषा अगर थोपी जाती है तो यह अन्य भाषा भाषियों को एक अतिक्रमण जैसा लग सकता है जो कि घातक स्थिति होगी। इसके अलावा भी अभिव्यक्ति व समझ और सम्वाद की कुशलता बढ़ाने के लिए मातृभाषा में ही अध्ययन, अध्यापन, शोध व राजकाज ज्यादा सार्थक होगा। इसमें ज्यादा जिम्मेदारी हिंदी भाषी प्रान्तों के निवासियों को निभानी है।

❋

कटक दूरदर्शन से वेदप्रचार

४२ वें स्वतन्त्रता के पवित्र दिवस पर कटक दूरदर्शन केन्द्र से उड़ीसा के माननीय वैदिक विद्वान् तथा उड़ीसा सरकार के मुख्यमन्त्री आचार्य श्री प्रियव्रत दास ने "वेद ब्रह्म" के शीर्षक से वेदों के मंत्रों का बड़ी गंभीरता से व्याख्यान किया श्री दास बाबू ने अपने व्याख्यान में स्वराज्य वर्धन के कई पहलुओं पर वेदों के विचार का अत्यन्त सुन्दर विश्लेषण किया।"

—योगेन्द्र कुमार उपाध्याय

आर्यसमाज घोण्डा

आर्य प्रतिनिधि (क्षेत्रीय उपसभा) यमुनापार के तत्वावधान में श्री कृष्ण जन्माष्टमी पर्व ३-९-८८ से ४-९-८८ को आर्य समाज मन्दिर घोंडा में हर्षोल्लास के साथ मनाया गया।

इसमें प्रातः ७-३० से अन्त तक यज्ञ के पश्चात् विद्वानों के प्रवचन हुए तथा रात्रि को प० आशानन्दजी द्वारा मैजिक लालटेन पर श्री कृष्ण पर चित्र प्रदर्शन दिखाया।

मन्त्री
आर्यसमाज घोंडा

(पृष्ठ ३ का शेष)

मानव-निर्माण

होने से ही वह मनुष्य है। वस्तुत नियन्त्रित एवं मर्यादित जीवन व्यतीत करने वाले किसी विचारशील व्यक्ति को ही मनुष्य अथवा मानव-जीवन कहा जा सकता है। ऐसे मनुष्य को वेद आर्य संज्ञा देता है 'आर्य' व्रतशील एवं मर्यादित जीवन बिताने वाले को कहते हैं। डा० रामचरण महेन्द्र के अनुसार—"सद्गुणों, सद्भावनाओं, सदाचरणों तथा सद्व्यवहारों से युक्त पुरुषत्व का नाम ही मानवता है।" कविवर 'चकबस्त' ने भी ऐसा ही कहा है—

दद पासे-वफा
जज्बच-ईमां होना।
आदमीयत है यही और
यही इन्सां होना॥

तात्पर्य यह है जिसमें संवेदनशील हृदय, कृतज्ञतादि सद्भावनाएं, सत्पात्रता, विचारशीलता, कर्तव्यपरायणता और ईमानदारी आदि सद्गुण हैं वही मनुष्य कहलाने का अधिकारी है। महर्षि दयानन्द के शब्दों में—"मनुष्य उसी को कहना कि मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दु:ख और हानि-लाभ को समझे अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे।"
सच है—

दिल में उल्फत नहीं,
तो कुछ भी नहीं।
गुल में नकहत नहीं,
तो कुछ भी नहीं॥
आदमी में लाख
गोहर हों।
आदमीयत नहीं,
तो कुछ भी नहीं॥

मानव-निर्माण में आर्यसमाज का योगदान

आर्यसमाज की स्थापना से पूर्व मानव का सर्वथा अभाव हो और मानव-निर्माण आर्यसमाज ने ही किया हो, ऐसी बात नहीं। पर यह सत्य है कि महाभारत के पश्चात् आर्यसमाज की स्थापना तक मानव-निर्माण की कोई योजना किसी के पास नहीं थी। साथ ही, आर्यसमाज की स्थापना के काल जो परिस्थितियां उपस्थित थीं, उनमें मानव का निर्माण हो पाना भी सम्भव न था। कारण कि भौतिक विज्ञान के बढ़ते चरणों ने आध्यात्मिकता को उठाकर ताक पर रख दिया था। नास्तिकता सर्वत्र उभर रही थी और आस्तिकता अथवा नैतिकता जोकि मानवता का आदर्श हैं, को सदा के लिए दफना दिये जाने की योजनाएं बनने लगीं उस समय की परिस्थितियों का विश्लेषण करते हुए किसी कवि ने ठीक ही लिखा है—

कभी था मानवता का विकास,
पर वे विचार अब ध्वस्त हुए।
आध्यात्मिकता को भुला आज,
नर भौतिकता में मस्त हुए॥

और डा० हरिशंकर शर्मा के शब्दों में—

नैतिकता नाता तोड
भगी है न जाने कहां।
मानवता हाय आज
फूट-फूट रोती है॥

सत्य तो यह है कि मानव-निर्माण भी कोई समस्या है, संसार इसे सर्वथा भूले हुआ था। आर्यसमाज ने ही संसार का ध्यान इस समस्या की ओर दिलाया। अन्यथा अपना तो कुछ ऐसा हाल था कि—

अपनी हालत का तो कुछ
अहसास नहीं है मुझको।
मैंने औरों से सुना है
कि परेशान हूँ मैं॥

आर्यसमाज ने ही सर्वप्रथम मानव-निर्माण की शतवर्षीय योजना प्रस्तुत की मानव-जीवन की कोई भी अवस्था संस्कारशून्य नहीं है। गर्भ से ही मनुष्य संस्कारों में पलता है, शैशव से यौवन तक संस्कारों में ही पनपता है और प्रौढ़ावस्था से अन्तिमावस्था तक इन्हीं में अन्तर्हित होता है। महर्षि का कथन है—जैसे सब पदार्थों को उत्कृष्ट करने की उत्तम करने की विद्या है, वैसे सन्तान को उत्कृष्ट करने की यही विद्या है। वस्तुत: मानवता-सम्बन्धी सर्वोच्च गुणों को धारण करने के लिए हृदय में जिन प्रेरणाओं, सद्भावनाओं तथा संकल्पों की आवश्यकता पड़ती है, उन्हीं को मानव-हृदय में वपन करने का नाम ही 'संस्कार' शब्द स्वतः ही किसी कृत्य को परिष्कृत एवं सुव्यवस्थित रूप से सम्पादित होने का द्योतक है। सोलह संस्कारों को निम्न भागों में विभक्त किया जा सकता है—

प्राग्जन्म, बाल्यावस्था, शैक्षिणिक-संस्कार, आश्रम-प्रवेश-संस्कार तथा अवसान संस्कार। संस्कारों का यह क्रमविभाजन दर्शाता है कि ये संस्कारों का यह क्रमविधान सोपान है कि ये संस्कार जन्म के पूर्व से मृत्यु-पर्यन्त किये जाते हैं, साथ ही इस बात का भी बोध होता है कि अधिकांश संस्कार मानव-जीवन की प्रारम्भिक अवस्था से सम्बद्ध हैं और प्रारम्भिक अवस्था ही मानव-निर्माण की वास्तविक अवस्था है। पाश्चात्य मनीषी टी० कोगन का कथन है—

मानव-मस्तिष्क की शिक्षा शैशव के पालन से ही प्रारम्भ हो जाती शैशवकाल की प्रत्येक घटना एक शिशु से कहा गया प्रत्येक शब्द उनके चरित्र का निर्माण करता है।

घड़ा कच्ची मिट्टी से ही बनता है, पक्की से नहीं, इसी प्रकार शैशव काल में ही संस्कार डाले जा सकते हैं, यौवन में नहीं। संस्कारों के द्वारा मानव-जीवन के विकास की प्रत्येक महत्त्वपूर्ण अवस्था और जीवन का प्रत्येक मोड़ बालक के लिए दिशासूचक बन जाता है।

यह श्रेय आर्यसमाज को ही है कि उसने लुप्तप्राय संस्कारों को पुनः प्रचलित कर मानव-निर्माण की एक अनुपम योजना प्रस्तुत की।

विश्व-निर्माण की योजनाएं बनाने वालो, ध्यान रखो! मानव-निर्माण के बिना विश्व के निर्माण की योजनाएं सफलीभूत नहीं होंगी। काश? विश्व-निर्माण की योजनाएं बनाने की अपेक्षा ये मानव-निर्माण की योजना बना पाते। सत्य मानें, जिस दिन मानव 'मानव' बन जाएगा, संसार को बताने की कोई आवश्यकता नहीं रह जाएगी। अतः आर्यसमाज के मानव-निर्माण-आंदोलन को सफल बनाने के लिए तन, मन, धन से जुट जावें, नहीं तो

डूबेगी किश्ती तो
डूबेंगे सारे।
न तुम ही रहोगे
न साथी तुम्हारे॥

आर्य वीर महा सम्मेलन

आर्य वीर दल हरियाणा प्रान्त का प्रान्तीय महा-सम्मेलन १ तथा २ अक्तूबर को हरियाणा के प्रसिद्ध नगर हिसार में मनाया जायेगा। इस समारोह में समस्त हरियाणा के आर्य वीर तथा आर्य जन भाग लेंगे। १ अक्तूबर को विशाल शोभा यात्रा निकाली जायेगी। इस अवसर पर आर्य जगत् के प्रसिद्ध संन्यासी, विद्वानों तथा उपदेशकों को आमन्त्रित किया गया है। महा सम्मेलन में राष्ट्र सुरक्षा सम्मेलन, समाज सुधार सम्मेलन तथा वेद सम्मेलन का भी आयोजन किया जायेगा। इस सम्मेलन का मुख्य आकर्षण आर्य वीरों का व्यायाम प्रदर्शन होगा।

निवेदक
(वेद प्रकाश आर्य
सचिव

वर चाहिए

एक श्रेष्ठ ब्राह्मण परिवार की ग्रेजुएट बी. एड कर रही, घरेलू कामों में माहिर २३ वर्षीय कन्या के लिए योग्य वर की आवश्यकता है कृपया निम्न पते पर सम्पर्क करें।

पता—स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती,
१५ हनुमान रोड नई दिल्ली-१
फोन ३१०१५०

प्रार्थना

—विश्वदेव शास्त्री

माया तेरी ने हमको,
छोड़ा नहीं कहीं का॥
कैसे मिलेगा तेरा,
दर्शन बता हमें अब।
पाकर तुझे हमारा,
जीवन नया बनेगा।
दया जो तेरी पाकर,
जीवन सुमन खिलेगा॥
हे विश्व के रचयिता,
सुन लो हमारे।
पापापचार - परि-
पूरित मानसों के॥
होवें समग्र हम के,
अति दूर सारे।
मेरे पिता कर दया,
अब दीनबन्धो॥
संसार के सकल ही,
दुःख अब भारी।
मोक्षार्थ साधन सभी,
मिल जायें सारे॥

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R. N. No. 32387/77 Post in N D P S O on 15, 16 9-88 Licenced to post without prepayment, Licence No U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३६

वेद प्रवचन

आर्य समाज कालका जी वेद प्रचार सप्ताह का कार्यक्रम १२ ९ से १८-९ १९८८ तक मना रहा है जिसमें श्री यशोवर्धन विद्यालंकार, श्री महात्मा देवेश मिश्र, श्री बलजीत शास्त्री एवं संगीतज्ञ श्री वेद व्यास जी पधार रहे हैं।

भवदीय
(विजेन्द्र कुमार सिंहल
मन्त्री
आर्यसमाज कालकाजी

आवश्यकता

आर्यसमाज अमरोहा (मुरादाबाद) को एक वैदिक मिशनरी पुरोहित की आवश्यता है। जो यज्ञ-संस्कार भली प्रकार करा सके। शैक्षणिक योग्यतानुसार आवास निःशुल्क आवेदन करें।

मन्त्री
आर्य समाज अमरोहा
(मुरादाबाद)

प्रेरक साहित्य को बढ़ावा देना आवश्यक है :
—कुलानन्द भारतीय

नई दिल्ली, ७ सितम्बर। कार्यकारी पार्षद (शिक्षा) कुलानन्द भारतीय ने कहा कि भारत मे ऐसे अनेक महान् व्यक्ति, सन्त, पैगम्बर और विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने वाले प्रतिभाशाली दार्शनिक और विचारक हुए जिनके विचारो और संदेशों से हमें प्रेरणा मिलती है। ऐसे महानुभावो के चिन्तन और मनन से जुड़े हुए प्रसंगों को जन सामान्य के लाभ के लिए पुस्तक का रूप देना आज की एक बहुत बड़ी आवश्यकता है।

श्री भारतीय ने यह उद्गार पुराना सचिवालय में आयोजित एक सादे समारोह में श्री सत्यानन्द आर्य-द्वारा लिखित पुस्तक 'जीवन सौरभ' का विमोचन करते हुए प्रकट किए।

श्री भारतीय ने लेखक को बधाई देते हुए उनके इस कार्य को सामयिक महत्व का बताया और कहा कि इस पुस्तक के संकलित महापुरुषो के संदेश नई पीढी के लिए और विशेषकर छात्र छात्राओ के लिए बहुत उपयोगी हैं।

इस अवसर पर हिन्दी अकादमी के सचिव डा० नारायण दत्त पालीवाल ने भी लेखक के प्रयास की सराहना करते हुए कहा कि हर युग में महापुरुषों के प्रेरक प्रसंग भावी पीढी का मार्गदर्शन करते आए हैं। अत ऐसे साहित्य को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

★

(पृष्ठ १ का शेष)

वैज्ञानिक तथ्य

जनिक प्रयास है। जयपुर के गणित प्राध्यापक और समाज सेवी डा० पेसोडेकर ने जनता को बताया कि वेदों और प्राचीन भारतीय संस्कृति का अध्ययन देश के विभिन्न क्षेत्रों में बहुत से लोग कर रहे हैं। लेकिन दुर्भाग्य से सभी शोधकर्ताओं में कोई तालमेल नहीं है। अगर यह स्थापित किया गया तो कोई वजह नहीं कि हम निर्विकार रूप से साबित कर सकें कि वेद वास्तव में आर्ष वचन हैं और सभी भौतिक नियमों को समझने की एक मात्र साधन हैं।

सेवा में—

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रैस, गली न० १७, कृष्णनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५६

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्
आर्य सन्देश

वर्ष १२ : अंक ४१ | रविवार २५ सितम्बर १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | भाद्रपद २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

आर्य समाज के अनन्य सेवक

श्री देवीदास आर्य का नागरिक अभिनन्दन

कानपुर १८ सितम्बर, यहां सिंधी धर्मशाला के मैदान में हजारों नागरिकों के जनसमूह ने अपने प्रिय समाज सेवी श्री देवीदास को फूलों से लाद दिया और उन्हें प्रशस्ति पत्र दिये। इस अवसर पर श्री ज्ञानी जैल सिंह पूर्व राष्ट्रपति मुख्य वक्ता के रूप में कानपुर पहुंचे। सभा की अध्यक्षता स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने की।

श्री देवीदास आर्य का आर्य-समाज तथा नगर की सभी राजनैतिक, सामाजिक धार्मिक संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने नागरिक अभिनन्दन किया। श्री आर्य ने तीन हजार निराश्रित महिलाओं की रक्षा की उन्हें संरक्षण देकर उनको समाज में उचित सम्मान दिलाया। ५०० लडकियों को वेश्यावृत्ति से मुक्ति दिलाकर उनके पिता बनकर उनकी शादियां करायीं। सैकडों अबलाओं को गुण्डा तत्वों से बचाकर उनके आश्रितों तक पहुंचाया।

इस अवसर पर बोलते हुए श्री ज्ञानी जैलसिंह ने कहा यदि आज मैं इस समारोह में न आता तो मुझे बडा अफसोस होता। नारी जाति की इस प्रकार सेवा करने वाले लोग बहुत कम हैं। श्री देवीदास आर्य ने जो कार्य किया है उसका दूसरा उदाहरण मिलना बडा कठिन है। सेवा करने वाले परोपकारी लोग ही सच्चे ईश्वर भक्त होते हैं। मैं उन्हीं को सच्चा इन्सान मानता हूं जो किसी के काम आयें। आज के युवकों को देवीदास आर्य से प्रेरणा लेनी चाहिए तथा उनका अनुकरण करना चाहिए।

स्वामी आनन्द बोध ने कहा—आर्यसमाज की ही देन हैं देवीदास आर्य। आर्यसमाज को इन पर गर्व है। देवीदास नाम ही मातृ शक्ति की सेवा करने वाला शायद माता-पिता ने इसी भावना से इनका यह नाम रखा होगा। इन्होंने देश धर्म और मनुष्य जाति की भरपूर सेवा की, जिसकी जितनी प्रशंसा की जाये उतनी ही कम है। मैं इनके शतायु होने की मंगल कामना करता हूं।

युवाशक्ति को प्रोत्साहन दें हतोत्साहित न करें —सूर्यदेव

आर्यसमाज के वर्चस्व को बढ़ाने के लिए आज समय की मांग है कि आर्यसमाज में युवाओं को अपना सहयोगी बनाकर प्रशिक्षित किया जाये। ये उद्‌गार श्री सूर्यदेव महामन्त्री दिल्ली सभा ने आर्यसमाजों के नाम दिये गये एक वक्तव्य में प्रकट किये। उन्होंने कहा असल में तो युवा कार्यकर्त्ता आगे आने में वैसे ही झिझक अनुभव करते हैं। कुछ हमारे पुराने अनुदार व्यक्तियों का रूक्ष और अनुचित व्यवहार उन पर और भी प्रतिकूल प्रभाव डालता है, जिस कारण आज युवा कार्यकर्ताओं का अभाव होता जा रहा है। श्री सूर्यदेव ने कहा हमें अपने परिवार को लेकर आर्यसमाज के सत्संगों में उपस्थित होना चाहिए [illegible] नवीन सदस्य बनाने का [illegible] जाना चाहिए तथा युवाओं का प्रोत्साहन देना चाहिए जिससे समाज की काया में नवीन रक्त का संचार हो सके।

उन्होंने कहा—कुछ स्वार्थी तत्त्व निहित स्वार्थवश आर्यसमाज की गरिमा को लांछित कर रहे हैं हमें उनसे सावधान रहना चाहिए। हमें और अधिक संगठित होकर मिशन के कार्य में जुट जाना चाहिए। इस समय एक ओर आतंकवाद का सर्प अपना फन फैलाये बैठा है दूसरी ओर भ्रष्टाचार, अनाचार, अज्ञान पाखण्ड की आंधी चल रही है। इन सब का मुकाबला तथा जागृति का काम आर्यसमाज को करना है, इसलिए संगठित होकर युवाशक्ति को साथ लेकर हमें कार्य करना होगा।

★

दानवीर ला० दीवानचन्द का जन्म समारोह

आर्यसमाज दीवान हाल के भव्य भवन के दान दाता अनेक संस्थाओं, भवनों के निर्माता महान् दानी श्री ला० दीवानचन्द का १०४वां जन्मदिन २५ सितम्बर को ८ बजे ११-५० बजे तक आर्यसमाज दीवानहाल मे समारोह पूर्वक मनाया जायेगा।

जिसमें श्री प० शिवकुमार शास्त्री का विशेष सम्मान किया जायेगा। मुख्य वक्ता स्वामी आनन्द बोध जी, प० शिवकुमार शास्त्री, श्री महेन्द्र कुमार शास्त्री, डा० धर्मपाल जी, डा० वाचस्पति उपाध्याय, ला० इन्द्रनारायण आदि होंगे। इस अवसर पर प्रीतिभोज का भी आयोजन किया गया है। इस कार्यक्रम में सभी सादर आमन्त्रित हैं।

प्रो. शेरसिंह बने गुरुकुल के कुलाधिपति

नई दिल्ली, १७ सितम्बर। गुरुकुल कांगडी विश्वविद्यालय हरिद्वार की चयन बैठक में प्रो० शेरसिंह को कुलाधिकारी चुना गया।

प्रो० सिंह १९५६ से सामाजिक धार्मिक साहित्यिक जीवन से सक्रिय रूप से जुडे हुए हैं और प्रतापसिंह कैरो मन्त्रिमण्डल में वे पंजाब के उपमुख्यमन्त्री रहे।

अनेक वर्षों तक केन्द्र सरकार के मन्त्रालयों में वे विभिन्न पदों पर रहे और हिन्दी के प्रश्न पर अपनी नौकरी से त्यागपत्र दे दिया था।

संहिता भाग ही वेद है अथवा ब्राह्मण भी ?

ले०—देवेन्द्र कुमार रावत भाटा
बाया कोटा (राजस्थान) ३२३३०५

यह सुनिश्चित है कि प्राचीन-काल में वेद और ब्राह्मण दोनों को पृथक्-पृथक् माना जाता था। ब्राह्मण ग्रन्थ वेदों के व्याख्यान ग्रन्थ थे। परन्तु काल के प्रभाव से ब्राह्मण ग्रन्थ भी वेद शब्द के अन्तर्गत ही गिने जाने लगे। शताब्दियाँ व्यतीत हो गईं परन्तु किसी संस्कृतज्ञ या मनीषी ने इधर ध्यान न दिया। आधुनिककाल मे महर्षि दयानन्द सरस्वती ने इस तथ्य पर गहराई से विचार कर अपना मन्तव्य प्रस्तुत किया और उद्घोषणा की कि केवल संहिता भाग ही वेद हैं। ब्राह्मण ग्रन्थों में वेदों का व्याख्यान है। वेदों के अभिप्राय को समझने के लिए ब्राह्मण ग्रन्थों का महत्त्व अपरिहार्य है।

वेदों के भाष्य के सम्बन्ध में सायण का नाम प्रसिद्ध है। सायण और स्वामी दयानन्द के वेद सम्बन्धी मन्तव्यों को प्रस्तुत करते हुए हम उक्त बिन्दु पर विचार कर रहे हैं।

आचार्य सायण और दयानन्द दोनों ने ही वेद को ईश्वरीय ज्ञान के रूप में स्वीकार किया है। सायण ने अपनी ऋग्वेद-भाष्य भूमिका में लिखा है—

तस्मात् सहस्रशीर्षा पुरुष इत्युक्तात्परमेश्वराद्यजनीयात् पूजनीयात् सर्वहुत स वै हूयमानात् यद्यपीन्द्रादयस्तत्र तत्र हूयन्ते तथापि परमेश्वरस्यैवेन्द्रादिरूपेणावस्थानादविरोध ।

यस्य नि श्वसित वेदा
यो वेदेभ्योऽखिल जगत् ।
निर्ममे तमह वन्दे
विद्यातीर्थं महेश्वरम् ॥

स्वामी दयानन्द ने ऋग्वेदादि भाष्यभूमिका में लिखा—

तस्माद् यज्ञात् सच्चिदानन्दादिलक्षणात्पूर्णात् सर्वहुतात् सर्वपूज्यात् सर्वोपास्यात् सर्वशक्तिमत परब्रह्मण ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद अथर्ववेदश्च चत्वारो वेदास्तेनैव प्रकाशिता इति वेद्यम् ।

उक्त दोनों कथनो से यह सिद्ध है कि दोनों मनीषी वेद को ईश्वर से प्रादुर्भूत स्वीकार करते हैं। इसी प्रकार वेद के नित्यत्व, अनित्यत्व, पौरुषेयत्व, अपौरुषेयत्व तथा स्वत. प्रमाण एवं परत प्रमाणादि सिद्धांतों में सहमति है। परन्तु वेद के लक्षण के विषय में दोनों विद्वान् पृथक् मार्ग के पथिक हैं। सायण के अनुसार वेद का लक्षण है—'मन्त्रब्राह्मणात्मकत्व तावददुष्ट लक्षणम् अतएव आपस्तम्बो यज्ञपरिभाषायामेवाह । मन्त्र ब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम् ।

अर्थात् मन्त्र भाग एव ब्राह्मण भाग दोनों की वेद संज्ञा है। परन्तु स्वामी दयानन्द का दृष्टिकोण बिल्कुल पृथक् है—

अथ कोऽयम् वेदो नाम ? मन्त्र भागसंहितेत्याह ।

अर्थात् मन्त्र भाग अर्थात् ऋग्, यजु, साम और अथर्व संहिताएँ ही वेद हैं। ब्राह्मण ग्रन्थ वेद नहीं हो सकते क्योंकि ब्राह्मणों की रचना ऋषियों द्वारा हुई है। जबकि वेद की उत्पत्ति के लिए ईश्वर अनिवार्य शर्त है।

वस्तुत यह विवाद आपस्तम्ब यज्ञ परिभाषा में "मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्' इस वचन के कारण उत्पन्न हुआ। परन्तु हम विचार करें यदि 'वेद' शब्द से मन्त्र और ब्राह्मण ग्रन्थ दोनों का ग्रहण करते हैं तो दोनों की उत्पत्ति एक साथ माननी होगी। क्योंकि वेद नामक राशि ईश्वर से एक समय में उत्पन्न हुई पृथक् पृथक् नहीं परन्तु हम देखते है कि वेद राशि सृष्टि के आदि में ईश्वर से प्रादुर्भूत हुई। जब कि ब्राह्मण ग्रन्थों की रचना बाद में ऋषियों द्वारा हुई। अत ब्राह्मण ग्रन्थों का सृष्टि के आदि में उत्पन्न न होने तथा ईश्वर द्वारा प्रादुर्भूत न होने से ब्राह्मण 'वेद संज्ञा' के अधिकारी नहीं है।

अब मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्' इस यज्ञ परिभाषा पर विचार करते हैं—वेदों में यज्ञ को महा कर्म स्वीकार किया गया है। विद्वानों ने यज्ञ म होने वाली प्रक्रियाओं के साथ विभिन्न मन्त्रों को जोड़ा। यह कार्य विनियोग कहलाया। विद्वानों ने यज्ञ कार्य की सिद्धि के लिए तीन प्रकार के विज्ञान का प्रणयन किया (१) मन्त्र (२) कल्प (३) ब्राह्मण। मन्त्र—वेदों के मन्त्र होते हैं। कल्प का कार्य मन्त्रों का अर्थ जानकर यज्ञ कार्यों मे उनका विनियोग करना था। ब्राह्मण का कार्य यज्ञ के गुणों पर प्रकाश डालकर लोगों के मन में यज्ञ के प्रति श्रद्धा पैदा करना था। इस प्रकार इन शब्दो के पारिभाषिक अर्थ हमारे सामने प्रकट होते हैं।

इस प्रकार यदि ब्राह्मण को ब्राह्मण ग्रन्थ न मानकर एक विज्ञान के रूप में स्वीकार करें तो यज्ञ परिभाषा की संगति लग जाती है तथा वेद की दोनों शर्तों (१) वेद की ईश्वर से उत्पत्ति (२) मन्त्र एव ब्राह्मण की एक साथ उत्पत्ति का निर्वाह हो जाता है क्योंकि मन्त्रों में ब्राह्मण विज्ञान शब्द और अर्थ की भाँति अपृथक् है।

सायण के पूर्ववर्ती विद्वान कुमारिल, शबर, तथा मेधातिथि आदि विद्वानों ने भी मन्त्र एव ब्राह्मण दोनों को वेद माना है। परन्तु प्रतीत होता है कि इन विद्वानों ने भी इस पर गम्भीरता पूर्वक विचार नहीं किया। स्वयं ब्राह्मण ग्रन्थकार ब्राह्मणों को वेद नहीं मानते। शतपथ ब्राह्मण मे एक स्थान पर कहा है—तप से तीन वेद उत्पन्न हुए। अग्नि से ऋग्वेद, वायु से यजुर्वेद, सूर्य से सामवेद। यहां पर ब्राह्मण शब्द का नाम तक नहीं।

'तेभ्यस्तप्तेभ्यस्त्रयो वेदा अजायन्ताग्नेर्ऋग्वेदो वायोर्यजुर्वेदः सूर्यात् सामवेद'—शतपथ। 'सोऽग्नेरेवर्चोऽसृजत् वायो र्यजूंष्यादित्यात् सामानि। स एताम् त्रयीं विद्यामभ्यतप्यत्। कौषीतकी ब्राह्मण ६'१० अग्नेर्ऋचो वायोर्यजूंषि सामान्यादित्यात्।' छान्दोग्य उपनिषद्

प्रजापतिर्वा इमान् त्रीन् वेदान सृजत्।—तेभ्यो भूर्भुव स्वरित्यक्षरत् भूरित्यृग्भ्योऽक्षरत्।— भुवरिति यजुर्भ्योऽक्षरत्।— स्वरिति सामभ्योऽक्षरत्।—षड्विंश ब्राह्मण १।५।६

अग्निवायुरविभ्यस्तु
त्रयं ब्रह्म सनातनम्।
दुदोह यज्ञसिद्धयर्थ-
मृग्यजु. सामलक्षणम् ॥
मनुस्मृति १।२३

इन सभी वाक्यों में ऋक्, यजुः, साम को ही वेद कहा है। ब्राह्मण शब्द का तो उल्लेख तक नहीं। अतः संहिता ही वेद हैं।

शतपथ ब्राह्मण में इषे त्वोर्जे त्वेति०' यह वेद मन्त्र देकर उसकी व्याख्या की है परन्तु संहिताओं में कहीं भी ब्राह्मण वचन उद्धृत नहीं किया गया है अत ब्राह्मण वेद व्याख्यान हैं वेद नहीं।

संहिता भाग के लक्षण ब्राह्मण भाग पर नहीं घटते। जैसे वैदिक सूक्तों की प्रत्येक ऋचा मे ऋषि, देवता, छन्द, स्वर, अनुक्रमणी तथा द्रष्टा ऋषि का वर्णन है। इसके विपरीत ब्राह्मण ग्रन्थों में, ऋषि, देवता, छन्द, स्वर, तथा अनुक्रमणी का अभाव है। अतः ब्राह्मण ग्रन्थ वेद नहीं हो सकते।

प्रत्येक मन्त्र उदात्त, अनुदात्त और स्वरित स्वरों से युक्त है परन्तु ब्राह्मण ग्रन्थों में ये चिह्न नहीं हैं।

वैदिक मन्त्रों की कक्षा के लिए पाठ, पदपाठ, जटापाठ, घनपाठ आदि का विधान है। ब्राह्मण ग्रन्थों में इनका भी अभाव है!

प्रत्येक वेद का ब्राह्मण ग्रन्थ है। जैसे—

ऋग्वेद का ऐतरेय ब्राह्मण
यजु० का शतपथ ब्राह्मण
अथर्व० का—गोपथ ब्राह्मण

अत· ब्राह्मण वेद से पृथक् सिद्ध होते हैं।

ब्राह्मण ग्रन्थकारों के नाम उपलब्ध होते हैं परन्तु वेदों के कर्त्ता का नाम उपलब्ध नहीं है। मन्त्रों के द्रष्टा ऋषियों के नाम अवश्य हैं।

वेद अथवा संहिता भाग में अनित्य इतिहास नहीं परन्तु ब्राह्मण ग्रन्थों में अनित्य इतिहास है। शतपथ में—विदेह के राजा जनक का श्वेतकेतु आदि के साथ जाने का उल्लेख है। इसी ब्राह्मण में आरुणि सत्ययज्ञ पौलुषि, जाबाल, बुडिल, कैकेय एवम् अश्वपति राजाओं का वर्णन है। इसी मे वाजसनेय, वुर्क, वार्ष्णि, गियजानश्रुतेय और वुडिल आश्वत-श्वि का वर्णन है।

उपरोक्त प्रमाणों से वेद एवं ब्राह्मण के मध्य अन्तर स्पष्टतया. प्रतीत होता है। यदि ब्राह्मण भी वेद होते तो संहिता भागों के लक्षण। ब्राह्मण ग्रन्थों पर भी घटते। परन्तु ऐसा नहीं है। अतः ब्राह्मण ग्रन्थ वेद नहीं हैं। इस प्रकार स्वामी दयानन्द का यह कथन कि संहिता भाग ही वेद हैं, पूर्ण सत्य है।

मुक्ति के क्या क्या साधन हैं?

सत्यार्थप्रकाश से :

कुछ साधन तो प्रथम लिख आए हैं परन्तु विशेष उपाय ये हैं .—जो मुक्ति चाहे व 'जीवनमुक्त' अर्थात् जिन मिथ्याभाषणादि पाप कर्मों का फल दुःख है उनको छोड़ सुख रूप फल को देने वाले सत्यभाषणादि धर्माचरण अवश्य करे। जो कोई दुःख को छुड़ाना और सुख को प्राप्त होना चाहे, वह अधर्म को छोड़ धर्म अवश्य करे। क्योंकि दुःख का पापाचरण और सुख का धर्माचरण मूल कारण है।

(प्रथम साधन—) सत्पुरुषों के संग से "विवेक" अर्थात् सत्यासत्य, धर्माधर्म, कर्त्तव्याकर्त्तव्य का निश्चय अवश्य करें, पृथक्-पृथक् जान और शरीर' अर्थात् जीव पञ्चकोषों का विवेचन करें। एक—'अन्नमय' त्वचा से लेकर अस्थिपर्यन्त का समुदाय पृथ्वीमय है। दूसरा—"प्राणमय" जिसमें 'प्राण' अर्थात् जो भीतर से बाहर आता, 'अपान' जो बाहर से भीतर आता, 'समान' जो नाभिस्थ होकर सर्वत्र शरीर में रस पहुंचाता, 'उदान' जिससे कण्ठस्थ अन्न-पान खेंचा और बल-पराक्रम होता है 'व्यान' जिससे सब शरीर में चेष्टा आदि कर्म जीव करता है। तीसरा—'मनोमय' जिस में मन के साथ अहंकार, वाक्, पाद, पाणि, पायु और उपस्थ पांच कर्म इन्द्रियां हैं। चौथा—विज्ञानमय जिसमें बुद्धि, चित्त, श्रोत्र, त्वचा, नेत्र जिह्वा और नासिका ये पांच इन्द्रियां, जिनसे जीव ज्ञानादि व्यवहार करता है। पांचवां—आनन्दमयकोष जिसमें प्रीति-प्रसन्नता, न्यून आनन्द अधिकानन्द आनन्द और आधार कारण रूप प्रकृति है। ये पांच कोष कहाते हैं। इन्हीं से जीव सब प्रकार के कर्म, उपासना और ज्ञानादि व्यवहारों को करता है।

तीन अवस्था—एक 'जागृत' दूसरी 'स्वप्न' और तीसरी सुषुप्ति अवस्था कहाती हैं। तीन शरीर हैं—एक 'स्थूल' जो यह दीखता है। दूसरा पांच प्राण, पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच सूक्ष्म-भूत और मन तथा बुद्धि इन सत्तरह तत्वों का समुदाय सूक्ष्म शरीर कहाता है। यह सूक्ष्म शरीर जन्ममरणादि में भी जीव के साथ रहता है। दूसरा 'स्वाभाविक जो जीव के स्वाभाविक गुण रूप हैं यह दूसरा 'अभौतिक' शरीर मुक्ति में भी रहता है। इसी से जीव मुक्ति में सुख को भोगता है। तीसरा कारण—जिसमें सुषुप्ति अर्थात् गाढ़ निद्रा होती है। वह प्रकृतिरूप होने से सर्वत्र विभु और सब जीवों के लिए एक है। चौथा 'तुरीय' शरीर वह कहाता है—जिसमें समाधि से परमात्मा के आनन्दस्वरूप में मग्न जीव होते हैं। इसी समाधि संस्कार जन्य शुद्ध शरीर का पराक्रम मुक्ति में भी यथावत् सहायक रहता है।

इन सब कोष, अवस्थाओं से जीव पृथक् है, क्योंकि यह सब को विदित है कि अवस्थाओं से जीव पृथक् है। क्योंकि जब मृत्यु होता है तब सब कोई कहते हैं कि जीव निकल गया। यही—जीव सब का प्रेरक, सब का धर्ता, साक्षी, कर्त्ता, भोक्ता कहाता है। कोई ऐसा कहे कि जीव कर्त्ता भोक्ता नहीं तो उसको जानो कि वह अज्ञानी, अविवेकी है। क्योंकि बिना जीव के जो ये सब जड़ पदार्थ हैं, इनको सुख-दुःख का भोग वा पाप-पुण्य-कर्तृत्व कभी नहीं हो सकता। हां, इनके सम्बन्ध से जीव पाप-पुण्यों का कर्त्ता और सुख-दुःखों का भोक्ता है। जब इन्द्रियां अर्थों में, मन इन्द्रियों, और आत्मा मन के साथ संयुक्त होकर प्राणों को प्रेरणा करके अच्छे वा बुरे कर्मों में लगाता है। तभी वह बहिर्मुख हो जाता है। उसी समय भीतर अनन्त उत्साह, निर्भयता और बुरे कर्मों में, भय शंका, लज्जा उत्पन्न होती है, वह अन्तर्यामी परमात्मा की शिक्षा है। जो कोई इस शिक्षा के अनुकूल वर्त्तता है, वही मुक्ति जन्य सुखों को प्राप्त होता है। और जो विपरीत वर्त्तता है, वह बन्धजन्य दुःख भोगता है।

व्यवस्थापक :
पुष्कर लाल आर्य
आर्य निवास,
१०७, हाउसिंग बोर्ड,
भिवानी (हरियाणा)

आर्य वीर दल का प्रचार कैसे बढ़े ?

१. आर्य वीर दल के शिविर में जैसे ही आर्य वीर शाखा नायक बनाये जायें उन्हें आर्य वीर दल की ओर से लोटी-डोरी, आर्य वीर दल का ध्वज, पाठविधि एवं बौद्धिक पाठ्यक्रम पारितोषिक के रूप में दी जानी चाहिए ताकि आर्य वीर का उत्साह भी बढ़े। वह अपने यहां शाखा चलाने की जिम्मेवारी भी समझे और शाखा चला सके। इससे जगह-जगह पर आर्य वीर दल की शाखाएं बढ़ेंगी और आर्य वीर दल का प्रचार होगा।

२ जैसे ही शिविर में आर्य वीर शाखा नायक बनाये जायें उनकी अलग से विशेष कक्षा ली जाये ताकि वह शाखा चलाने के सभी नियमों को भली भांति समझ सके।

३. आर्य वीर दल की उच्च स्तर पर विशेष प्रतियोगितायें होनी चाहिए जिनमें ग्रामों व शहरों की सभी शाखाओं को निमन्त्रण देना चाहिये। जो आर्य वीर उच्च स्थान प्राप्त करे उसका परिचय एवं फोटो आर्यसमाज की सभी पत्रिकाओं में देना चाहिये ताकि उन्हें देखकर अन्य की भी रुचि बढ़े। इससे आर्य वीर दल का प्रचार अधिक बढ़ेगा।

४ आर्य वीर दल के सभी शिक्षकों की आपसी जानकारी होनी चाहिये उन्हें मालूम होना चाहिये कि किस क्रमांक का कौन शिक्षक है कहां का निवासी है। जिससे आपसी जानकारी बनी रहे।

५. आर्य वीर दल का एक ऐसा व्यक्ति होना चाहिये जिसके पास आर्य वीर दल के सभी शिक्षकों की सूची एवं जो आर्य वीर शाखा नायक बने हैं या जो शाखा चलाते हैं। उन सब का परिचय उनके पास अवश्य होना चाहिये जिससे कि पता लग सके कि इस समय आर्य वीर दल की कितनी शाखाएं चल रही हैं। और पत्र व्यवहार द्वारा भी इनकी गतिविधियों का पता लगाया जा सके।

६. आर्य वीर दल के सभी कार्यकर्ताओं एवं शिक्षकों का साल में एक या दो बार बैठक एक निश्चित स्थान व तारीख में होनी चाहिये। ताकि आपस में सभी विचार परामर्श कर सकें और समझ सकें कि अब तक हमने क्या किया है और क्या अब हमें आगे करना है।

७ आर्य वीर दल के प्रमाणपत्र, अंकतालिका, रिजल्ट स्लिप, परीक्षा स्लिप एक ही रंग के छपे होने चाहिये और प्रमाण पत्र व अंक तालिका पर एक तरह के अधिकारियों के हस्ताक्षर होने चाहिये उन पर मुहर अवश्य होनी चाहिये। वह एक निश्चित कार्यालय में जमा होने चाहिये और सभी प्रमाण-पत्रों पर एक ही तरह की स्याही का प्रयोग होना चाहिये।

८ संगठन मजबूत बनाने के लिए सब से जरूरी बात है कि उनके विचारों को मजबूत बनाना क्योंकि विचार ही मनुष्य की सम्पत्ति हैं। शिविर काल में जो बौद्धिक दिया जाता है और आर्य वीर उसे ध्यान से नहीं सुन पाते, वे बैठे-बैठे सोते रहते हैं, क्योंकि उनको थकावट भी होती है। वे ढाई तीन घण्टे बैठ नहीं पाते इससे जो वक्ता बोलता है और जो आर्य वीर सुनते हैं। सब का समय बेकार नष्ट हो जाता है। जब कि शिविर में बौद्धिक को भी अधिक महत्व दिया जाता है। यही कारण है कि आर्य वीर दल का कैम्प करने के बाद भी उनकी रुचि आर्य वीर दल के प्रति नहीं है, क्योंकि उनके विचारों को मजबूत नहीं बनाया गया। मजबूत इसलिए नहीं बनाया गया कि उन्होंने सुना ही नहीं, वक्ता क्या बोल रहा है। यदि बौद्धिक ढाई-तीन घण्टे के बजाय १ घण्टा भी रख लिया जावे क्योंकि एक घण्टा आर्य वीर ध्यान से सुन सकते हैं। तो उनके विचार मजबूत बनेंगे, और वह अच्छा मजबूत आर्य वीर बनेगा।

९ आर्य वीर दल की वेश-भूषा (ड्रेस) पर विशेष ध्यान दिया जाये। शिक्षक एवम् आर्य वीर भी अलग-अलग तरह के जूते, अलग रंग की टोपी और अलग ही तरह की जुराब कोई लाल धारी वाली सफेद जुराब पहनता है, कोई बिना लाल धारी वाला पहनता है। कहता है कि बस इस पर तो लालधारी तो है, है तो ये भी सफेद। इससे भी भिन्नता बढ़ती है। सब की वेश-भूषा निश्चित होनी चाहिए और नियम अत्यन्त सख्त होना चाहिए। तभी आर्य वीर दल मजबूत संगठन बन सकेगा और आर्य वीर दल का प्रचार प्रसार बढ़ेगा।

१० प्रत्येक आर्य वीर दल के शिक्षक को कम से कम तीन संस्कारों का ज्ञान होना अनिवार्य है क्रमशः जन्म संस्कार, विवाह संस्कार, अन्तिम ये तीनों अनिवार्य हैं।

रामगोपाल आर्य (व्यायाम शिक्षक)
सार्वदेशिक आर्य वीर दल ग्रा० पलड़ी (मेरठ)

सत्यार्थप्रकाश का महत्त्वपूर्ण दर्शन : अष्टम समुल्लास

लेखक—बिहारीलाल शास्त्री

मार्क्सवाद यह मानता है कि प्रकृति में निरन्तर द्वन्द्व चलता रहता है। सतत गतिशील है प्रकृति। कभी नितान्त विराम नहीं होता। विकास और ह्रास का क्रम सतत चालू है, परन्तु प्रकृति के विकास में गति, गति में एक नियंत्रण पाया जाता है तो यह बिना चेतन सत्ता की व्याप्ति के नहीं हो सकता। एक ही क्यारी में लगा हुआ मिर्च का पौधा चरपराहट खींच रहा है। नींबू का वृक्ष खटास, आम्र का मिठास खींच रहा है। ईख का पौधा मीठापन ले रहा है। गुलाब अपनी सुगन्ध और रंग ले रहा है, गेंदा अपना रंग और सुगन्ध ले रहा है। पत्थर पड़े हैं उनमें कोई गति नहीं, जल में, वायु में गति हो रही है, तीव्र और धीमी धीमी। अतः हम वैदिक लोग एक सर्वव्यापिनी ज्ञानमयी चेतना सत्ता को और मानते हैं। 'जन्माद्यस्य यतः' वेदान्त १/२ इस संसार को इस विकसित रूप में लाने वाली, स्थिर रखने वाली और फिर विकीर्ण कर देने वाली सत्ता ब्रह्म है, इस पर अधिक अध्ययन के लिए मार्क्सवाद और राम राज्य तथा वैदिक सम्पत्ति" पुस्तकें देखो।

सृष्टि रचना के विषय में प्रश्न किया गया है कि वैदिक ग्रन्थों में, सृष्टि रचना के विषय में मतभेद है। तैत्तिरीयोपनिषद् में आत्मा आकाशादि क्रम से, छांदोग्य में अग्न्यादि, ऐतरेय में जलादि क्रम से सृष्टि हुई। वेदों में कहीं पुरुष, कहीं हिरण्यगर्भ आदि से मीमांसा में, वैशेषिक में काल, न्याय में परमाणु, योग में पुरुषार्थ, सांख्य में प्रकृति और वेदान्त में ब्रह्म से सृष्टि मानी है। इस पर स्वामी जी लिखते हैं:—

"इनमें सब सच्चे हैं कोई झूठा नहीं। झूठा वह है जो विपरीत समझता है क्योंकि परमेश्वर निमित्त और प्रकृति जगत् का उपादान कारण है। जब महा प्रलय होता है उसके पश्चात् आकाशादि क्रम अर्थात् जब आकाश और वायु का प्रलय नहीं होता और अग्न्यादि का होता है तो अग्न्यादि क्रम से और जब विद्युत् अग्न्यादि का भी नाश नहीं होता, तब जल क्रम से सृष्टि होती है अर्थात् जिस जिस प्रलय में जहां-जहां तक प्रलय होता है वहां से सृष्टि की उत्पत्ति होती है पुरुष और हिरण्यगर्भादि प्रथम समुल्लास में लिख ही आये हैं वे सब नाम परमेश्वर के हैं। परन्तु विरोध उसको कहते हैं कि एक कार्य में एक ही विषय पर विरुद्ध वाद होवे, छह शास्त्रों में अविरोध देखो इस प्रकार है—

मीमांसा में ऐसा कोई भी कार्य जगत् में नहीं होता कि जिसके करने में कर्मचेष्टा न की जावे। वैशेषिक में कर्म बिना किये कार्य बनेगा ही नहीं, न्याय में उपादान कारण न होने से कुछ भी नहीं बन सकता, योग में विद्या, ज्ञान, विचार न किया जावे तो भी नहीं बन सकता। सांख्य में तत्त्वों का मेल न होवे से नहीं बन सकता और वेदान्त में बनाने वाला न बनावे तो कोई भी पदार्थ उत्पन्न न हो सके। इसीलिये सृष्टि ६ कारणों से बनती है, उन छः कारणों में एक एक की व्याख्या छः शास्त्रों में है।

यहां स्वामी जी ने दर्शनों में मतैक्य प्रतिपादित किया है। स्वामी जी का प्रथम कार्य जनों में मत-विरोध को दूर करना है। पण्डित लोग स्वामी जी की इस शुभेच्छा को न समझ सके और अब भी नहीं समझ रहे हैं। स्वामी जी पुराणों की भी समन्वयात्मक संगति लगाते किन्तु पुराणों में ऐसा सम्भव न था और यह वैष्णवादि सम्प्रदाय स्वामी जी के विरोध में ही लगे रहे। वेद शास्त्र, ब्राह्मण-ग्रन्थ, सूत्रादि दर्शन, इन पर स्वामी जी की अपार आस्था थी। वे आर्ष साहित्य के महत्त्व के प्रतिपादक थे, आर्ष-ग्रन्थों का यथाशक्ति समर्थन करते रहे।

जो कोई कारण के बिना सृष्टि मानता है, वह कुछ भी नहीं जानता जब सृष्टि का समय आता है, तब परमात्मा उन परम सूक्ष्म पदार्थों को एकत्रित करता है। उनकी प्रथम अवस्था में जो परमसूक्ष्म प्रकृति रूप कारण से कुछ स्थूल होता है उसका नाम महत्तत्त्व और जो उससे कुछ स्थूल होता है उसका नाम अहंकार और अहंकार से भिन्न-भिन्न पांच सूक्ष्म भूत श्रोत्र, त्वचा, नेत्र, जिह्वा, घ्राण, पांच ज्ञानेन्द्रियां वाक्, हस्त, पाद, उपस्थ और गुदा ये पांच कर्मेन्द्रियां हैं और ग्यारहवां मन कुछ स्थूल उत्पन्न होता है। जो उन पंचतन्मात्राओं से अनेक स्थूलावस्थाओं को प्राप्त होते हुए क्रम से पांच स्थूल भूत जिनको हम प्रत्यक्ष देखते हैं, उत्पन्न होते हैं। उनसे नाना प्रकार की औषधियां वृक्ष आदि उनसे अन्न, अन्न से वीर्य, और वीर्य से शरीर होता है परन्तु आदि सृष्टि मैथुनी नहीं होती।"

स्वामी जी ने कितना सुन्दर बुद्धियुक्त सृष्टि क्रम लिखा है जो दर्शनों और उपनिषदों में है, और जिसके मूल बीज वेदों में हैं। आगे ऋषि दयानन्द ने शरीर रचना और सृष्टि रचना की कलात्मक कृतियों का वर्णन करके सिद्धांत निकाला है कि ऐसी विचित्र और उपयोगी रचना करने वाला कोई ज्ञान युक्त तत्त्व अवश्य होना चाहिये और वही हमारा ब्रह्म है जैसा वेदान्त दर्शन में कहा है:—

"रचनानुपपत्तेश्चानुमानम्।"

प्रकृति ही सृष्टिकर्त्री है यह अनुमान ठीक नहीं। क्योंकि जड़ प्रकृति रचना नहीं कर सकती। मुसलमान, ईसाई भी ईश्वर को सृष्टिकर्त्ता मानते हैं किन्तु उनके ग्रन्थों में ऐसा दार्शनिक वर्णन सृष्टि रचना का नहीं मिलता, क्योंकि पैलस्टायन और अरब दोनों देश दर्शन ज्ञान से रहित थे। ईसाई और मुसलमान विद्वानों ने दर्शन ज्ञान की शिक्षा यूनान से ली है।

ईसाई और मुसलमान दोनों ही मतों में प्रकृति और जीव की मान्यता नहीं है। प्रकृति और जीव दोनों को ईश्वर ने बनाया है ऐसा ये लोग मानते हैं। काहे से बनाया? इस प्रश्न के उत्तर में इनका कथन है—अभाव से, भाव रूप में ईश्वर इन्हें ले आया। अभाव से भाव कभी हो नहीं सकता। बाइबिल में माना है कि आदि सृष्टि में जल था और ईश्वर का आत्मा जलों पर डोलता था। जल भी ईश्वर ने अभाव से उत्पन्न किये। यह बाइबिल में कहीं नहीं है। जल और ईश्वर का आत्मा थे। यह विचार बाइबिल में वेद से गये हैं।

कुरान शरीफ में भी "अललमाए अर्श, खुदा का पानियों पर था, इसी मन्त्र के भाव हैं। 'अभाव से भाव हुआ या भाव से भाव!' इस पर कुरान शरीफ की यह आयत विचारणीय है—

"व खलकुल लाहो समावाते वल् अर्जाबिल हाक्कि" सू० ४५। आ०२२

'खुदा ने जमीन आसमान की रचना हक से की, बस यह हक क्या था, हमारे दर्शनों के अनुसार था 'सत्'। 'सत्' और 'हक्' के अर्थ भी एक ही हैं, और वह हक कुछ भी हो, कुछ था तो अवश्य। भाव रूप ही था, फिर अभाव से सृष्टि हुई ऐसा अर्थ क्यों माना जावे गम्भीर विचारों के बाद सब ही ईश्वर वादियों का मत एक हो सकता है। आगे एक प्रश्न है कि मनुष्य की सृष्टि प्रथम हुई या पृथिव्यादि की? क्योंकि पृथिव्यादि के बिना मनुष्य की स्थिति और पालन नहीं हो सकता। पृथिवी आदि से तात्पर्य है कि पृथिवी, जल, जल जीव आदि के पश्चात्, मनुष्य उत्पन्न हुए। थल, नभचर, पशु पक्षी आदि के पश्चात् मानव सृष्टि हुई।

प्र०—सृष्टि के आदि में एक मनुष्य हुआ या अनेक?

उत्तर—अनेक, क्योंकि वेद कहता है

'साध्या ऋषयश्च ये' साध्य और ऋषि उत्पन्न हुए। शतपथ ब्राह्मण कहता है "ततो मनुष्या अजायन्त" फिर मनुष्य हुए। मुस्लिम विद्वान् भी, अब आदम को जाति वाचक शब्द मानने लगे हैं। ईसाई अभी एक ही आदम और हव्वा का होना मानते हैं मार्कण्डेय पुराण भी, अनेक मनुष्य प्रारम्भ में हुए ऐसा ही लिखता है देखो।—

ब्रह्मणः सृजतः पूर्वं,
सत्याभिध्यायिनस्तथा।
मिथुनानां सहस्रं तु
मुखात् सोऽसृजत् मुने॥
(मार्कण्डेय पुराण अ० ४९ पूर्वा

पढ़िये! सहस्र मनुष्य हृदय से, सहस्र उरु से, सहस्र पांवों से, पहले सत्त्व गुण से फिर सत्त्व रज से, फिर तम से अर्थात् ब्राह्मण क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादि सृष्टि से ही सहस्रों उत्पन्न किये और वे सब वृक्षों के आश्रित रहते थे, फल, शहत खाते

और वृक्षों के छाल से बने अर्थात् वल्कल वस्त्र पहनते थे, फिर इनमें ईर्ष्या द्वेष, और संग्रह की प्रवृत्ति बढ़ी तभी संघर्ष में वे वृक्ष नष्ट हो गए, और फिर खेती और पशुपालन मनुष्य की जीविका बने। मनुष्य जब मानुष था और सहस्रों वर्षों में मनुष्य बना, और अब से १५ सहस्र वर्ष पहले मनुष्य इस रूप मे आया है। आदि मे सब मनुष्यों की हड्डियां मिलने पर कल्पनाएँ की गई हैं। (देखो श्री राहुल जी लिखित मध्य एशिया का इतिहास भाग प्रथम) ये सारी गढ़न्तें, और कल्पनाएँ उपहास के योग्य हैं, वेद, शास्त्र पुराण आदि निश्चित रूप से बात कहते हैं। और ये बातें बुद्धि विरुद्ध भी नहीं हैं। भाषा भी मनुष्य को ईश्वर ने ही दी है। बांसों की ध्वनि, काका और कोयल के अनुकरण से मनुष्यों ने सहस्रों वर्षों में भाषा सीखी ये गप्पें पत्थरों से मारने लायक हैं। ऐसी-ऐसी कल्पनाओं को जो निरे वहम हैं। वे डाक्टरेट पास विद्वान् नई खोज कहते हैं। यह खोज नहीं है इनकी खोपड़ी की उपज है, हमारे सामने योगिजनों के अनुभूत शास्त्र हैं। जो कहते हैं—

यो ब्रह्मणे प्रथमो गा अविन्दत।
(ऋक् ११।१०।१०५

बृहस्पते प्रथम वाचो,
अग्रे यत् प्रैरत नामधेयं दधाना।
(ऋग्१० ७१।१)

हमारे इस सिद्धांत का समर्थन बाइबिल और कुरान करते हैं। सैकड़ों अनुभव और परीक्षण करते हैं। अनेक सम्राटों ने परीक्षण किए, बहुत छोटे-छोटे बच्चों को सब से अलग एकान्त पाला, पोषा, और उनके सेवकों से कह दिया कि कभी भी उनके सामने कोई शब्द न बोले। परिणाम यह हुआ कि बड़े होने पर भी वे बालक गूंगों जैसे ही थे। अक्षरमयी वाणी प्रभु की देन है।

वैदिक धर्म में सृष्टि तो प्रवाह से अनादि माना गया है यही श्री स्वामी जी ने माना है और जब उनसे यह प्रश्न किया गया कि ईश्वर ने किसी को पशु पक्षी, किसी को बुद्धिमान्, किसी को मूर्ख क्यों बनाया? आदि सृष्टि में ही यह भेद क्यों किया? तो स्वामी जी ने उत्तर दिया कि उनके इस सृष्टि से पहले की सृष्टि के कर्मानुसार जन्म दिए हैं।

सृष्टि चक्र चलता ही रहता है। आगे-जब मनुष्य सृष्टि के विषय में स्थान का प्रश्न हुआ है तो श्री स्वामी जी ने त्रिविष्टप (तिब्बत) में आदि मानवी सृष्टि मानी है। सृष्टि कहां हुई। इस विषय पर अनेक मत हैं किन्तु बहुमत इस पक्ष में है कि सृष्टि (मानव) हिमालय पर हुई। वैदिक सम्पत्ति के लेखक श्री रघुनन्दन शर्मा और "मार्क्सवाद तथा रामराज्य" के लेखक श्री स्वामी करपात्री जी ने भी यही लिखा है कि मनुष्य की सृष्टि हिमालय पर हुई। और महाभारत में भी यही लिखा है।

हिमालयाभिधानोऽयं
ख्यातो लोकेषु पावनः।
अर्द्धयोजनविस्तारः,
पञ्चयोजनमायतः ॥
परिमण्डलयोर्मध्ये
मेरुरुत्तम पर्वत।
ततः सर्वाः समुत्पन्नाः
वृत्तयो द्विजसत्तम।
ऐरावती वितस्ता च
विशाला देविका कुहू।
प्रसूतिर्यत विप्राणां
श्रूयते भरतर्षभ ॥

अब से यह बात अच्छी तरह सिद्ध हो गई कि "भारतीय आर्यों के किसी प्राचीन ग्रन्थ से, उनकी किसी कथा कहानी से, और उनकी किसी भी बात से यह नहीं पाया जाता कि वे किसी गैर देश से आए? तब से अब विद्वानों का रुख इस ओर फिरा है कि आर्य जाति भारत-कश्मीर अथवा हिमालय के ही आस पास कहीं उत्पन्न हुई। आर्यों की प्रसिद्ध ईरानी शाखा के प्रसिद्ध विद्वान् बम्बई निवासी मि० खुरशेद जी रुस्तम जी ने 'ज्ञान प्रसारक मण्डली', की प्रेरणा से, फाम जी कावस जी इन्स्टीट्यूट हाल, बम्बई में एक व्याख्यान दिया। व्याख्यान का विषय था "मनुष्यों का का मूल जन्म स्थान कहां था?" वह व्याख्यान पुस्तकाकार छप गया है। यहां उसका आवश्यक अंग उद्धृत करते हैं। आप कहते हैं कि "जहां से सारी मनुष्य जाति संसार में फैली है उस मूल स्थान का पता हिन्दुओं, पारसियों यहूदियों और क्रिश्चियनों की धर्म पुस्तकों से इस प्रकार लगता है कि वह स्थान कहीं मध्य एशिया में था, योरुप-निवासियों की धर्म कथाओं में वर्णन है कि वहां आदि सृष्टि हुई वहां १० महीने सर्दी और दो महीने गर्मी रहती है। माउण्ट स्टुअर्ट, एलफिंस्टन और बर्नस आदि मुसाफिरों ने मध्य एशिया की मुसाफिरी करके बतलाया है कि हिन्दुकुश पहाड़ों पर १० महीने की सर्दी और २ महीने की गर्मी होती है। इससे ज्ञात होता है कि पारसी पुस्तकों में लिखा हुआ 'ईरान वेज, नामक मूल स्थान, जो ३७० से ४० अक्षांश उत्तर तथा ८६० से ९० रेखांश पूर्व में है, निःसन्देह मूल स्थान है। क्योंकि वह स्थान बहुत ऊंचाई पर है उसके ऊपर से चारों ओर नदियां बहती हैं। इस स्थान के ईशान कोण में 'बलूतीग' तथा 'मूसाताग' पहाड़ हैं। ये पहाड़ 'अलबुर्ज' के नाम से पारसियों की धर्म पुस्तकों, और अन्य इतिहासों में लिखे हैं। 'बलूतीग' से 'अमू' अथवा 'आक्सस' और 'जेक्सार्टिस' नाम की नदियां 'अरल' सरोवर में होकर बहती हैं। इसी पहाड़ में से 'इनउस' अथवा 'सिन्धु' नदी दक्षिण की ओर बहती है इसी ओर के पहाड़ों में से निकलकर बड़ी बड़ी नदियां पूर्व की ओर चीन में और उत्तर की ओर साइबेरिया में भी बहती हैं। ऐसे रम्य और शान्त स्थान में पैदा हुए अपने को आर्य कहते थे और उस स्थान को स्वर्ग कहते थे।

इस व्याख्यान में समस्त मनुष्य जाति के पूर्वजों के उत्पत्ति स्थान का वर्णन करते हुए पारसियों के मूल स्थान 'ईरान वेज' का वर्णन किया गया है और बतलाया गया है कि वह हिन्दुकुश पहाड़ ही है। हिन्दुकुश काबुल के ऊपर हिमालय रेंज में स्थित है। इस तरह सच्चे आर्यों की प्रधान ईरानी शाखा ने भी हिमालय का ही इशारा किया है। भारत के आधुनिक विद्वान् पूना-निवासी नाना पावगी ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ "आर्यावर्तातील आर्यांची जन्मभूमि" नामक ग्रन्थ में लिखा है कि हिमालय ही हमारे और हमारे देवताओं का आदि कालिक जन्म स्थान है। "या प्रमाणों वरुरी न मुद केलेल्या सर्व प्रमाणावरून हा हिमाचल आमचें केवल निवासस्थान नहीं, तरतो-अनादिकाला पासून आम च्या देवादिकांची ही जन्म भूमि होऊन राहिला आहे, असें वाचकांच्या लक्षांत सहजी येईल। आर्यावर्तातील आर्यांची जन्मभूमि, पृ० २७२।"

इसी तरह बंगाल के प्रसिद्ध विद्वान् श्री अविनाशचन्द्र दास अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'ऋग्वेदिक इण्डिया' में लिखते हैं कि वेदों में जो उत्तर की ओर के नक्षत्रों का वर्णन है, उससे ज्ञात होता है कि वैदिक ऋषियों ने उन्हें काश्मीर और हिमालय के ऊंचे पहाड़ों पर से देखा था।'

On the other hand, if it refers to the Constellaution of brsa Major which is the most Prominent in the Northern Parts of India, and particularly in the high table land of North Kashmir and the Peaks of the Himalaya from which the Vedic lord may have made his deservation, it is not unnatural for him to describe it as Placed high above the horizan Regvedic India, P. 376

यहां हमने आर्यों की दोनों शाखाओं के विद्वानों की रायों को देखा कि आर्यों का आदि मूलस्थान हिमालय ही बतलाते हैं।
(वैदिक सम्पत्ति से)

किन्तु पौराणिक पण्डित अखिलानन्द जी ने श्री करपात्री जी के विरुद्ध यह लिखा है कि मानव सृष्टि का प्रादुर्भाव ब्रह्मावर्त कुरुक्षेत्र में हुआ! और वेदमन्त्र भी लिखा है।

"उपह्वरे गिरीणां सङ्गमे च नदीनाम्। धिया विप्रो अजायत।
(ऋग्०)

किन्तु पर्वतों के समीप नदियों के सङ्गम पर ब्राह्मण प्रथम उत्पन्न हुए तो यह परिस्थिति कुरुक्षेत्र में कहां है। अतः हिमालय ही ठीक रह सकता है। मुसलमान भी इससे सहमत हैं, बहुत बड़े मुस्लिम नेता सर अल्लामा इकबाल साहब का शेर है

ऐ हिमालय दास्तां
उस वक्त की कोई सुना।
मस्कने आबाये इंसा
जब बना दामन तेरा ॥

सर इकबाल के शेर के अनुसार हजरत आदम (पहली मानव सृष्टि) हिमालय पर हुए और जर्मनी के भी कई विद्वानों ने हिमालय को ही आदि मानव भूमि कहा है।

मुस्लिम विद्वान् का एक प्रमाण और देखिये—

बन्दे कलीम जिसके,
पर्वत जहां के सीना।
नूहे नबी का उतरा,
आकर जहां सफीना।

अर्थात् जिसके सेवक (बन्दे) ईश्वर (कलीम) से आलाप करने वाले हैं और जिस देश (भारत) के पर्वत सीना हैं (सीना तूर नाम का पहाड़ जहां हजरत मूसा की ईश्वर से भेंट हुई) और जिस देश में नबी नूह का जहाज आकर रुका था।
(क्रमशः)

शास्त्रार्थ महारथी कक्षा में दस व्यक्तियों का शीघ्र प्रवेश

शास्त्रार्थ विश्वविद्यालय की योजना समाचार पत्रों मे छप चुकी है। आर्यजनता ने उसका स्वागत किया है। हम शास्त्रार्थ महारथी कक्षा में ६ प्रकार के व्यक्तियो को प्रविष्ट करगे।

१-सन्यास, वानप्रस्थ आश्रमो मे रहने वाले कुछ लोग स्वाध्याय करत रहते हैं। वे सस्कृत भी जानते हैं। हमारे पास आ जाये तो हम उन्हें शास्त्रार्थ करना और व्याख्यान देना भी सिखा दगे।

२-उपदेशक विद्यालयो से निकले छात्रो के पास और तो सब कुछ होता है, केवल शास्त्रार्थ की सामग्री नहीं होती। ऐसे विद्यार्थी हमारे पास आ जाय तो हम उन्हे शास्त्रार्थ विद्या मे निपुण कर दगे।

३-स्वतन्त्र उपदेशक जो केवल प्रचार कार्य करते हैं हमारे पास आकर शास्त्राथ का सामग्री नोट कर। हमारा विशाल पुस्तकालय है।

४-स्कूल और कालिजो के अध्यापक जो अवकाश में प्रचार करते है, हमारे पास आकर बहुत कुछ सीख सकते हैं बडी छुटिटयो में आ सकते हैं।

५-सस्कृत विद्यालयो मे जो सस्कृत परीक्षाएँ दे रहे हैं वे हमारे पास आकर परीक्षाएँ भी दे सकते हैं और शास्त्रार्थ करना भी सीख सकते हैं। परीक्षा का कोर्स ४-५ महीने से अधिक नही होता।

प्रान्तीय सभ ओ का कर्तव्य है कि अपने वैतानक उपदेसको को हमारे पास एक एक कर कम से कम ६ महीनो के लिए भेज द। साथ ही उनका वेतन उन्हें समय पर देते रहें। जिससे उनको आर्थिक कष्ट न हो।

शास्त्रार्थ के विषय—

अवतार, मूर्तिपूजा, मृतक श्राद्ध वर्ण व्यवस्था, वेद का आविर्भाव, वेद मे इतिहास, भाषा विज्ञान झूठा है, भाषा ईश्वर वे दी है। डाविन का विकासवाद असत्य है, योनियां कर्मफल पर आधारित हैं। आत्म विज्ञान भी गलत है। सब ससार के मनुष्य एक ही नस्ल के हैं। कालम क्स का साम्यवाद मा मानव शान्ति के लिए नहीं है। वैदिक साम्यवाद ही ठोक है। वद और कुरआन, वेद और बाइबल, वेद और बौद्ध जैन साहित्य। सायण और महीधर आदि वेद भाष्यकारो का स्वामी दयानन्द के साथ तुलनात्मक अध्ययन। आदि अनेक विषयों पर शास्त्रार्थ का प्रशिक्षण एवम् अध्ययन होगा।

विशेष सूचनार्थ यह भी निवेदन है कि आर्यसमाज के पिछले इतिहास में आर्यसमाज के विरुद्ध जो ग्रन्थ लिखे गये थे। दयानन्द तिमिर भास्कर, आर्यसमाज की मौत, भूमि का तिरस्कार, प० कालूराम शास्त्रो जी और माधवाचार्य के ग्रन्थ, राधास्वामियो का यथार्थ प्रकाश, स्वामी दयानन्द बी० ए० का सत्यार्थ विवेक, भारत धर्म महामण्डल द्वारा प्रकाशित आदि ग्रन्थो से जो उत्तर हमारे पूर्व विद्वानों ने दिये वे पूरे नहीं हैं, अधूरे हैं। उन सब ग्रन्थों के हम पूर्ण उत्तर लिखायेंगे। हमारे पूर्वज विद्वानों का आरम्भिक काल था। उनके पास साधन भी उतने नही थे। जितने आज हैं।

नोट —जो व्यक्ति आना चाहे वे शीघ्र ही पत्रव्यवहार करें।

हमारा पता
आचार्य विश्वश्रवा व्यास एम०ए०
वेद मन्दिर
१०३ बजरिया मोतीलाल,
बरेली, उ०प्र०

प्रवेश सूचना

मातृ मन्दिर कन्या गुरुकुल (नई बस्ती रामापुरा) वाराणसी की आचार्या सूचित करती हैं कि ग्रीष्मावकाश के पश्चात् आर्ष पाठविधि से अष्टाध्यायी, वेद, गणित, हिन्दी विज्ञान, अंग्रेजी, सगीत आदि का शिक्षण यथावत् आरम्भ हो गया है। इस वर्ष से उपदेशकों, समाज-सेवियो तथा पजाब के पीडित परिवारो की मेधाविनी पुत्रियो को छात्रवृत्तियों एव वैदिक शोध (पी एच डी) के अध्ययन को वरीयता दी जाएगी। इच्छुक अभिभावक सम्पर्क करें।

श्रावणी पर्व

आर्यसमाज मोगल मे श्रावणी के उपलक्ष्य मे वेद सप्ताह का आयोजन किया गया। जो कि दिनांक २७-८-८८ से ४-९-८८ तक पारिवारिक सत्सग के रूप मे मनाया गया। इस अवसर पर आचार्य श्री विद्यारत्न जी शास्त्री के विशेष प्रवचन हुए।

सत्यप्रकाश शास्त्री

समता सम्मेलन आर्यसमाज बांकनेर में

आर्यसमाज बांकनेर, दिल्ली के ३७वें महोत्सव पर श्रीकृष्ण जन्माष्टमी दिनांक ३ सितम्बर १९८८ को, हरिजनों को विशेष रूप से सम्मानित किया गया। प्रात ९ बजे बृहद् यज्ञ का आयोजन हुआ जिसमें भारी सख्या में ग्रामीण युवकों तथा वृद्ध जनों ने भाग लिया। वाल्मीकि तथा उन्हीं के हाथों सब ने यज्ञ का प्रसाद सहर्ष स्वीकार किया। श्री यशपाल जी एम ए ने प्रभावकारी प्रवचन में बताया कि स्वामी दयानन्द ने अपने हत्यारे को भी रुपयो की थैली देकर बच निकलने का अवसर दिया। हमें अपने हरिजन भाइयों को जो नित्य हमारी सेवा करते रहे हैं, अवश्य गले लगाना चाहिए।

यज्ञ के पश्चात समता सम्मेलन का आयोजन किया गया जिसकी अध्यक्षता स्वतन्त्रता-सेनानी मा० प्रभुदयाल जी पूर्व एम एल ए ने की। डा० प्रशान्त वेदालकार मुख्य अतिथि के रूप में विराजमान थे। इस शुभ अवसर पर गाव बांकनेर में ही जन्मे अखिल भारतीय सफाई मजदूर काग्रेस के उपाध्यक्ष श्री चरणसिंह कडरा का सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया। आर्यसमाज बांकनेर की ओर से इन्हें अभिनन्दन पत्र एक गर्म शाल तथा आर्य साहित्य भेंट किया गया। डा० प्रशान्त वेदालकार ने स्वामी दयानन्द सरस्वती के जोवन प्रसग उद्धृत करते हुए वैदुष्यपूर्ण ढग से वर्ण व्यवस्था का प्रतिपादन किया। शूद्र यदि ब्राह्मण के पैरो से जन्मे हैं तो कोई अपने पैरो को काट कर दिखाए। अत. स्पष्ट है कि वर्ण व्यवस्था छोटे बडे की भावना से नही अपितु कुशलता तथा सर्वोच्चता को प्राप्त करने के लिए ही और है।

श्री चरणसिंह कडरा, उपाध्यक्ष अखिल भारतीय सफाई मजदूर काग्रेस ने आर्यसमाज की हरिजनोद्धार तथा समानता के क्षेत्र में अनुपम सेवाओं की भूरि-भूरि प्रशसा की। युवकों को उनका सदेश था कि आज भारत को पेट-भक्तों की नहीं, देशभक्तो की आवश्यकता है। मजे हुए हरिजन नेता मा० प्रभुदयाल जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि आर्यसमाज को हरिजन सेवा में और आगे बढना चाहिए तथा सरकार के आर्थिक कार्यक्रमों का लाभ गरीब हरिजन तक पहुंचाने में अपनी सच्चाई और ईमानदारी का जोरदार ढग से प्रयोग करना चाहिए। उनका विश्वास है कि आर्यसमाज ही हरिजनों की निःस्वार्थ सेवा कर सकता है।

अन्त में प्रधान श्री मांगेराम जी आर्य ने आगन्तुकों तथा ग्राम वासियों को भरपूर सहयोग देने के लिए हार्दिक धन्यवाद दिया तथा सब की उन्नति में ही अपनी उन्नति समझने के आर्यसमाज बांकनेर के को सकल्प दोहराया।

मेहरलाल पंवार
मन्त्री

चुनाव समाचार

आर्यसमाज, मालवीय नगर, नई दिल्ली-७

प्रधान—श्री डा० तीर्थराज शास्त्री,
महामन्त्री—श्री डी० आर० जुनेजा
कोषाध्यक्ष—श्री चुन्नीलाल वैद्य

आर्यसमाज विवेक विहार

वर्ष १९८८-८९ के लिये निम्नलिखित पदाधिकारियो एव अन्तरग सदस्यो की घोषणा ४ ९ ८८ को की गई।

१ श्री जयप्रकाश आर्य प्रधान
२ रूपचन्द्र कथूरिया मन्त्री
३. सप्रेमलाल शर्मा कोषाध्यक्ष
४. अजय ठक्कर

निवेदक
रूप कथूरिया
मन्त्री

जन्माष्टमी पर्व एवं वेद प्रचार सप्ताह

आर्यसमाज महाराजपुर छतरपुर मे

आर्यसमाज महाराजपुर जिला छतरपुर मध्य प्रदेश में दि० ३-९-८८ को जन्माष्टमी पर्व समारोह पूर्वक मनाया गया प्रात ७-३० बजे पर्व के उपलक्ष्य मे नगर कीर्तन (जुलूस) निकाला गया जो भजन कीर्तन के साथ भिन्न-भिन्न मोहल्लों से होता हुआ १०-३० बजे समाज मन्दिर में समाप्त हुआ।

साय काल ६ ३० बजे से पर्व पद्धति अनुसार बृहद् यज्ञ प्रार्थना के पश्चात् योगेश्वर श्रीकृष्ण जीवन पर (महाभारत के कृष्ण और पुराणों के कृष्ण) इस विषय पर समाज के पुरोहित प० सुखराम आर्य सि० शास्त्री ने सारगर्भित एवं ओजस्वी भाषण दिया, श्रोताओं पर अच्छा प्रभाव पडा। प्रसाद वितरण एव शान्ति पाठ के पश्चात् कार्यक्रम समाप्त हुआ।

अनिल आर्य पुनः अध्यक्ष निर्वासित

केन्द्रीय आर्य युवक परिषद् दिल्ली का ९ वां वार्षिक अधिवेशन आर्यसमाज मन्दिर मार्ग में आर्य नेता श्री रामनाथ सहगल जी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। श्री अनिल आर्य अध्यक्ष, श्री चन्द्रमोहन आर्य महामंत्री व श्री वीरेन्द्र आहूजा कोषाध्यक्ष सर्वसम्मति चुने गये। इन्होंने निम्न प्रकार कार्यकारिणी का गठन किया। श्री अजय सहगल कार्यकर्ता अध्यक्ष, श्री विश्वनाथ आर्य वरिष्ठ उपाध्यक्ष, श्री महेन्द्र आर्य उपाध्यक्ष, श्री राजेशराज व रणवीर सिंह मन्त्री, श्री ब्रजेश आर्य प्रधान शिक्षक, श्री धर्मवीर आर्य संगठन मंत्री श्री रमेश डावर प्रचार मन्त्री, श्री धर्मपाल आर्य कार्यालय मंत्री, श्री दुर्गेश आर्य खेल मन्त्री, श्री अनिल कुमार पुस्तकालयाध्यक्ष नियुक्त किये गये।

इस अवसर पर परिषद् अध्यक्ष श्री अनिल आर्य ने प्रिय मल्ला जी, श्री हीरालाल चावला जी को परिषद् की ओर से स्मृति चिह्न भेंट किये। गत वर्ष की सर्वश्रेष्ठ शाखा व कर्मठ कार्यकर्ताओं को भी सम्मानित किया। विजय आनन्द (फिरोजपुर)वाले का संगीत का विशेष कार्यक्रम रहा। इस अवसर पर परिषद् के लिए एक लाख की स्थित् निधि के संयोजक श्री अजय सहगल जी नियुक्त किये गये।



खेड़ा खुर्द की शाखा के लिए पुरस्कृत हुए नायक श्री योगेश आत्रेय

कर्मठ सहयोगी व नव निर्वाचित कार्यकर्ता अध्यक्ष श्री अजय सहगल पुरस्कृत

कर्मठ कार्यकर्ता व नव निर्वाचित प्रधान शिक्षक श्री ब्रजेश आर्य को पुरस्कृत करते हुए

कर्मठ कार्यकर्ता व नव निर्वाचित महामन्त्री श्री चन्द्रमोहन आर्य को पुरस्कृत करते सभाध्यक्ष प्रि० आर्यवीर मल्ल,

R. N. No. 32387/77 Post in N.D.P.S.O. on 2223, 19-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139

दिल्ली पोस्टल रजि० नं० डी० (सी०) ७५१ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

पदाधिकारियों, प्रतिष्ठित सदस्यों एवं वर्ग प्रतिनिधियों की सूची १९८८-८९

वर्ग प्रतिनिधि—

प्रधान—महाशय धर्मपाल	१. वैद्य इन्द्रदेव
उप-प्रधान	२ श्री प्रियतमदास रसवन्त
१ श्री सूर्यदेव	३. श्री लाजपतराय आर्य
२ श्री सरदारी लाल वर्मा	४ श्री महावीर बत्रा
३ श्री सत्यानन्द आर्य	५ श्री मांगेराम आर्य
४ श्री विश्वम्भर नाथ भाटिया	६. श्री तीर्थराम टण्डन
महामन्त्री—डा० शिवकुमार शास्त्री	७ श्री हरीश कालरा
मन्त्री—१ श्री रामशरण दास आर्य	८ श्री प्रतापसिंह गुप्ता
२ श्री ओम्प्रकाश आर्य	९. श्री जयप्रकाश शास्त्री
३ डा० रघुवीर वेदालंकार	१० श्री रामजीदास मलिक
४ श्री विमलकान्त शर्मा	११ श्री विजय गुप्त (मालवीयनगर)
५ श्री राजेन्द्रपाल गुप्त	१२. श्री ज्ञानचन्द्र चौधरी
६ श्रीमती कृष्णा चड्ढा	१३. श्री बसेशरनाथ शर्मा
कोषाध्यक्ष—श्री ओम्प्रकाश कपूर	लेखा निरीक्षक—श्री सुदेश मित्र

प्रतिष्ठित सदस्य—

१ स्वामी आनन्दबोध सरस्वती	९ श्रीमती शकुन्तला दीक्षित
२ डा० धर्मपाल	१० श्री धर्मपाल आर्य
३ डा० सत्यकाम वर्मा	११. श्री रामनाथ सहगल
४. डा० महेश विद्यालंकार	१२ श्री लक्खीराम कटारिया
५ लाला इन्द्रनारायण सूद	१३ श्री हरबंसलाल कोहली
६ लाला रतनचन्द सूद	१४ श्री यशपाल सुधांशु
७ श्री रामलाल मलिक	१५ श्री राजसिंह भल्ला
८. श्रीमती ईश्वरदेवी धवन	निवेदक—महाशय धर्मपाल

बिहार में भूकम्प तथा बाढ़ पीड़ित क्षेत्रों में सहायता समिति का प्रशंसनीय कार्य

संस्थाएं एवं दानी महानुभाव दिल खोलकर सहायता करे

मैं पिछले दिनों बिहार के भूकंप तथा बाढ़ पीडित क्षेत्रों के दौरे पर गया था। लगभग वहां ४ दिन तक विभिन्न क्षेत्रों का निरीक्षण किया। पीडितों की सहायता के लिए विभिन्न क्षेत्रों में आर्यसमाज की ओर से कैम्प लगा दिये गये हैं। यह सब कार्य "भूकम्प तथा बाढ़ सहायता समिति पटना" के द्वारा सार्वदेशिक सभा के निर्देश पर हो रहा है। सहायता समिति के प्रधान श्री प्रेम नाथ ग्रोवर, मन्त्री प्रो० योगेन्द्र-नारायण और कोषाध्यक्ष श्री राम-चन्द्र प्रसाद हैं। इसके अतिरिक्त आर्य प्रतिनिधि सभा बिहार के वरिष्ठ पदाधिकारी तथा प्रमुख शिक्षा शास्त्री भी इसमें सम्मिलित हैं। सहायता समिति की ओर से दरभंगा, मुंगेर, मधुबन क्षेत्रों में सहायता कार्य प्रारम्भ कर दिये हैं। चावल वितरण का कार्य वहां प्रारम्भ है। अब तक सार्वदेशिक सभा की ओर से वहां हजारों रुपया भेजा जा चुका है।

सभी आर्यसमाजों, दानी महानुभावों, व्यापारिक प्रतिष्ठानों और धार्मिक संगठनों से अनुरोध करता हूं कि वे इस मानव पीड़ित सहायता के कार्य में अपना अमूल्य सहयोग "सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा" के नाम महर्षि दयानन्द भवन, राम-लीला मैदान, नई दिल्ली-२ के पते पर भिजवाने का कष्ट करें।

आनन्दबोध सरस्वती
सभा प्रधान

सेवा में—

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा वैदिक प्रेस, गली नं० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५१

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ : अंक ५० | रविवार २ अक्टूबर १९८८ | सृष्टि सम्वत् १९७२९४९०८८ | आश्विन २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३

मूल्य : एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

लाला दीवानचंद जी आवल का जन्मदिवस समारोह सम्पन्न

मानव जाति के कल्याण के लिए, राष्ट्र के उत्थान के लिए और नई पीढ़ी को तैयार करने के लिए दानवीरों द्वारा बनाई गई संस्थाओं और ट्रस्टों का सही हाथों में रहना जरूरी है। —स्वामी आनन्द बोध सरस्वती

आज रविवार २५ सितम्बर को आर्यसमाज दीवान हाल के विशाल सभागार में लाला दीवान चन्द जी आवल का जन्मदिवस समारोह मनाया गया। लाला दीवान चन्द जी आज इस संसार में नहीं हैं उनका कोई पुत्र भी नहीं है। फिर भी उनका नाम सदा-सदा अमर रहेगा क्योंकि अपने परिश्रम से प्राप्त की हुई महान् सम्पत्ति का सर्वस्व दान उन्होंने वैदिक संस्थाओं के बनाने में किया था। यह संस्थाएं उनकी कीर्ति के लिए पर्याप्त हैं। लाला दीवान-चन्द जी ठेकेदार थे और उन्होंने अनेक संस्थाएं दिल्ली में और दिल्ली से बाहर बनाईं। उन्हीं संस्थाओं में से एक चांदनी चौक में स्थित भव्य-भवन आर्यसमाज दीवान हाल है, जिसमें महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित आर्यसमाज देहली आज कार्य कर रहा है। यह तो ठीक है वे धन सम्पन्न थे। परन्तु यदि इन्होंने अपना सारा जीवन ऐश्वर्य भोग और विलासिता में बिताया होता तो इन्हें कोई न जानता परन्तु उन्होंने अपना धन उन लोगों के लिए लगाया जो धर्म के मार्ग पर स्वयं चल रहे हैं और दूसरों को चला रहे हैं। अनेक संस्थाएं भी अच्छे संचालन के बिना खराब हो जाती हैं, दानवीरों का धन बेकार हो जाता है। ऐसे अनेक ट्रस्ट हैं जो खत्म हो हो गये या कुछ लोगों ने अपने व्यक्तिगत कार्य में उनका धन लगा लिया। और उनके रुपये का उपयोग आज उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए नहीं हो रहा है जिस उद्देश्य के लिए उन्होंने संस्थाएं बनाई थीं और ट्रस्ट बनाए थे। इसलिए यह अनिवार्य है कि संस्थाएं तथा ट्रस्ट उन लोगों के हाथ में हों जो ईमानदार हों, जो सचाई के लिए काम करना चाहते हों और जो इन संस्थाओं को बढ़ाएं, घटाएं नहीं। लाला दीवानचन्द जी द्वारा स्थापित धर्मार्थ ट्रस्ट, दीवान चन्द आवल नर्सिंग होम, दीवानचन्द आर्य हायर सेकेण्डरी स्कूल, दीवान चन्द स्मारक गोकलचन्द आर्य चिकित्सालय, ओचन्दी, सत्भावी आर्य कन्या सीनियर सेकेण्डरी स्कूल, नई दिल्ली में स्थित आर्यसमाज हनुमान रोड का विशाल भवन तथा आर्य-समाज दीवान हाल यह सभी संस्थाएं उनके कीर्ति स्तम्भ हैं। मुझे यह कहने में गर्व है कि आर्यसमाज दीवान हाल के अधिकारी उन्हीं उद्देश्यों के अनुरूप काम कर रहे हैं, जो उन्होंने अपने जीवन में स्थापित किए थे।

(शेष पृष्ठ २ पर)

पं० शिवकुमार शास्त्री का दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा अभिनन्दन—

आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध विद्वान् माननीय पंडित शिवकुमार जी शास्त्री का दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से रविवार २५ सितम्बर १९८८ को आर्यसमाज दीवान हाल के विशाल सभागार में अभिनन्दन किया गया। समारोह की अध्यक्षता आर्य जगत् के तपोपूत संन्यासी स्वामी दीक्षानन्द जी सरस्वती महाराज ने की। सार्व-देशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान माननीय स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती ने पुष्प माला द्वारा शास्त्री जी का स्वागत किया तथा सम्मान शास्त्री जी के गले में डाल डाली। भाव विह्वल होकर दोनों महानुभाव एक दूसरे से लिपट गये। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने माल्यार्पण कर माननीय शास्त्री जी का स्वागत किया और सभा की ओर से ५१०० रुपये की राशि कृतज्ञ भाव से भेंट की। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के महोपदेशक आचार्य राम-किशोर जी ने अपने सोहना के संस्मरण सुनाते हुए कृतज्ञता ज्ञापन किया वैदिक धर्म के प्रचार के लिए उन्हें शास्त्री जी ने ही प्रेरणा दी थी। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री श्री सूर्यदेव, आर्य बाल गृह तथा अन्य संस्थाओं के संचालक अधिकारी लाला रामनारायण, सत्भावी स्कूल के चेयरमैन श्री तीर्थ राम आहूजा, चन्द्र आर्य विद्या मंदिर के मन्त्री पं० महेन्द्र कुमार शास्त्री, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री मूलचन्द गुप्त और श्री वेदव्रत शर्मा, श्री श्याम सुन्दर बिरमानी आर्यसमाज हनुमान रोड के मन्त्री श्री सैरातो लाल भाटिया आर्य उपप्रतिनिधि सभा पूर्वी दिल्ली की प्रधाना श्रीमती ईश्वर देवी धवन, सनातन धर्म प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री मनोहर लाल कुमार, आर्यसमाज कृष्ण नगर के प्रतिनिधि डा० जगन्नाथ, प्रान्तीय आर्य महिला सभा की मन्त्रिणी श्रीमती प्रकाश आर्या, दीवानचन्द ट्रस्ट के मन्त्री श्री आवल, श्री ऊधोदास, श्री राजसिंह भल्ला, श्री बलिश्वर दयाल, श्रीमती मेहता, श्री ओमदत्त भारद्वाज तथा सम्पूर्ण दिल्ली की आर्यसमाजों तथा शिक्षण संस्थाओं से आये हुए अनेक महानुभावों ने पण्डित जी का माल्या-र्पण द्वारा स्वागत किया। स्वामी दीक्षानन्द सरस्वती ने माननीय पण्डित शिवकुमार शास्त्री के द्वारा वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए की गयी सेवाओं की सराहना करते हुए परमपिता परमात्मा से कामना की कि वे शतायु हों और स्वस्थ तथा प्रसन्न रहकर आर्यसमाज की सेवा करते रहें।

उन्होंने समर्पणानन्द शोध-संस्थान के लिए किये गये पण्डित जी के सहयोग की भी प्रशंसा की। पं० शिवकुमार जी शास्त्री ने आभार व्यक्त करते हुए कहा कि मैं आज दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारियों का साधुवाद करता हूं और परमात्मा से कामना करता हूं कि आर्यसमाजों के अधिकारियों के मन में विद्वानों के प्रति सम्मान की भावना को बनाये रखें। दीवान हाल की ओर से समारोह के पश्चात् ऋषि लंगर का प्रबन्ध किया गया।

(सूर्यदेव)
महामन्त्री

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

शतायु श्री काशी राम चावला का भव्य स्वागत

१८ सितम्बर १९८८ को आर्य-समाज मंदिर हनुमान रोड नई दिल्ली में आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के तत्वावधान में तथा दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा और आर्य-समाज हनुमान रोड के सहयोग से लुधियाना निवासी श्री काशी राम चावला का भव्य स्वागत किया गया। माननीय श्री चावला जी अपनी आयु के १०० वर्ष पूरे कर चुके हैं। अपने जीवन का बहुत सा भाग धर्म की सेवा में, जाति की सेवा में, समाज की सेवा में और देश की सेवा में श्री चावला जी ने लगाया है। यह उद्‌गार आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रधान श्री वीरेन्द्र जी अपने उद्‌घाटन भाषण में कहे। स्वागत समारोह की अध्यक्षता स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती, प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने करनी थी, उन्हें अचानक जाना पड़ा। वे अपनी ओर से एक फूलों की माला श्री वीरेन्द्र जी को सौंप गये और कहा कि ये माला मेरी ओर से श्री चावला जी को भेंट कर दें। समारोह की अध्यक्षता प० सत्यदेव जी भारद्वाज वेदालंकार ने की। इस अवसर पर स्वामी सच्चिदानन्द ने कहा कि श्री चावला जी का जन्म उस समय हुआ। जब आर्यसमाज को स्थापित हुए कुल १२ वर्ष हुए थे।

इसके साथ ही दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल, सभा के महामन्त्री श्री सूर्यदेव आर्य केन्द्रीय सभा के महामन्त्री श्री शिवकुमार शास्त्री, श्री सोमनाथ एडवोकेट, श्री नवनीत लाल एडवोकेट, श्री पं० सत्यदेव जी भारद्वाज आर्यसमाज हनुमान रोड के प्रधान श्री रामसूर्ति कैला, श्री रामलाल मलिक वैदिक विद्वान् पं० शिव कुमार जी शास्त्री, श्री ज्ञानचंद महाजन, श्री वीरेन्द्र अरोड़ा, श्री सरदारी लाल वर्मा, श्री बी० बी० महाजन, श्रीमती प्रकाश आर्या, श्रीमती शान्ति मलिक तथा अनेक आर्य बन्धुओं एवं बहनों ने श्री काशी राम चावला का सम्मान किया। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की महामन्त्री श्रीमती कमला आर्या ने आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से उन्हें एक शाल भेंट की और पंजाब सभा के कोषाध्यक्ष श्री हरवंश लाल ने एक प्रशस्ति पत्र भेंट किया। तथा वेदप्रचार अधिष्ठाता श्री ब्रह्मदत्त जी ने पीत वस्त्र भेंट किया। सभी वक्ताओं ने श्री चावला जी की भूरि-भूरि प्रशंसा की। श्री चावला जी ने सभी आर्य भाई बहनों का धन्यवाद किया तथा आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा और आर्यसमाज हनुमान रोड के लिए आभार व्यक्त किया।

(सूर्यदेव)
महामन्त्री

(पृष्ठ १ का शेष)

लाला दीवानचंद जी आवल का जन्मदिन

यह विचार सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री स्वामी आनन्द बोध सरस्वती जी महाराज ने लाला दीवानचंद जन्म दिवस समारोह के अवसर पर व्यक्त किए। इस अवसर पर बोलते हुए आर्य बाल गृह पटौदी हाऊस, आर्य अनाथालय तथा चन्द्र आर्य विद्या मंदिर के अधिकारी लाला इन्द्रनारायण हाथी दांत वाले ने कहा कि लाला दीवान चन्द ने अपने जीवन में अपनी नेक नीयत और परिश्रम से खूब धन सम्पत्ति कमाई और उन्होंने इसे दान देने में ही परम सन्तोष समझा। मुझे लगता है कि उनकी सम्पत्ति में समाज का साझा था। उन्होंने अपनी धन सम्पत्ति को खुलकर दान किया। ४४ वर्ष की आयु कोई बड़ी आयु नहीं होती। इस छोटी उम्र में उन्होंने बहुत कमाया है और सब कुछ दान कर दिया है। आज जब हम लाला दीवानचंद जी को याद कर रहे हैं तो मुझे लाला नारायण दत्त ठेकेदार की याद बरबस ही आ जाती है। लाला नारायण दत्त का आर्यसमाज दीवान हाल में, तथा आर्य सीनियर सैकेण्डरी स्कूल चावड़ी बाजार के निर्माण एवं संचालन में महत्वपूर्ण योगदान है।

पं० शिव कुमार जी शास्त्री ने अपने वो संस्मरण सुनाये जब उनका संपर्क लाला दीवानचंद जी से हुआ था। उन्होंने बताया कि लाला दीवानचंद का जन्म पंजाब प्रान्त के सैजपुर ग्राम में हुआ था। यह संयोग की बात है कि वही गांव पं० लेखराम जी का भी जन्मस्थान था। पं० लेखराम आर्यसमाज के धुरन्धर विद्वान्, त्यागी, तपस्वी व कर्मठ कार्यकर्ता थे। लाला दीवानचंद जी पर बचपन में ही गरीबी और संकटों का पहाड़ टूट पड़ा। आपने पहले डेरा गाजीखां में व्यापार का काम शुरू किया था। सन् १९११ में अपनी पत्नी सत्यवती के साथ दिल्ली आए। यहां दिल्ली क्लोथ मिल्स के संचालक लाला श्रीराम जी से उन्हें एक साधारण सा माल उठाने का काम मिला, परन्तु आपकी ईमानदारी, परिश्रम, लग्न, मिलनसार और मधुर स्वभाव से लाला श्रीराम इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने जो काम चाहा वही उन्हें मिला। इनका काम दिल्ली से बाहर कलकत्ता तक फैला और अमीरी के सभी साधन, धन वैभव के अम्बार जुड़ गए। धनके अम्बार के साथ-साथ। इनके मन में जो समाज कल्याण की भावना थी। उसका विशेष महत्व है। लोग दान देते हैं, अपनी लोक-प्रियता के लिए अथवा व्यापार को चमकाने के लिए पर लाला दीवानचंद जी ने दान दिया अपनी आत्मा की सुसन्तुष्टि के लिए। ईश्वर विश्वास और लोकहित उनके लिए बड़ी बात थी। हिन्दू महासभा, भारतीय हिन्दू शुद्धि सभा, दलितोद्धार सभा तथा अन्य न जाने कितनी संस्थाओं को वे नियमित रूप से दान दिया करते थे। सुप्रसिद्ध विद्वान् पं० महेन्द्र कुमार शास्त्री ने बताया कि हमारे धर्मशास्त्रों में धन की गति दान से बताई गयी है। अपना पेट तो पशु पक्षी भी भर लेते हैं परन्तु सभी प्राणियों में मनुष्य ही ऐसा प्राणी है। जो स्वार्थ के साथ साथ परमार्थ भी देखता है। आर्यसन्देश के संपादक पं० यशपाल सुधांशु ने कहा कि जब मनुष्य इस लोक से ऊपर उठकर परलोक की बात सोचने लगता है, तभी वह महान् बनता है। तभी वह अच्छे कर्म के लिए प्रेरित होता है। और तभी उसमें यज्ञ करने की भावना जगती है। ऐसा ही बड़ा यज्ञ लाला दीवान चंद जी ने किया है। उन्होंने केवल स्वयं नहीं खाया परन्तु सभी को खिलाया। केवल अपने ही लिए नहीं सोचा बल्कि सभी के लिए सोचा।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने कहा कि लाला दीवानचंद आवल जी की स्मृति में बनी हुई एक संस्था-लाला दीवानचंद स्मारक गोकलचंद आर्य चिकित्सालय, ओखली का संचालन प्रत्यक्षतः दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा किया जा रहा है। कोई भी संस्था तब तक नहीं चलती। जब तक उसमें काम करने वाले निष्ठावान और ईमानदार न हों। डॉ० हंसराज वर्मा हमारे इस चिकित्सालय के कुशल चिकित्सा अधिकारी हैं। वे इसे समर्पित सेवा दे रहे हैं। इस चिकित्सालय के संचालन में हमें सरकार से सहायता मिल रही है और हमारा प्रयास है कि इसमें सभी सुख सुविधाएं ग्रामीण आर्य जनता के लिए उपलब्ध रहें। पिछले वर्ष नियमित अनुदान के अतिरिक्त उपराज्यपाल श्री हरकृष्ण लाल कपूर ने ३० हजार रुपये की धनराशि दी थी। जिससे वहां पर रोगियों के लिए विशेष सुविधाएं उपलब्ध करा दी गयी हैं। हमारा प्रयास स्थिर कोष को भी बढ़ाने का है। श्री सूर्यदेव महामन्त्री, दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा ने लाला दीवानचंद जी के प्रति अपने श्रद्धासुमन प्रकट करते हुए कहा कि परमात्मा हमें वैदिक धर्म के अनुकूल कार्य करते रहने की शक्ति प्रदान करे। श्री मूलचंद जी गुप्ता ने सभा का संचालन किया और लाला दीवानचंद जी के जीवनवृत्त पर प्रकाश डाला। आर्यसमाज आर्य कन्या सीनियर सेकेण्डरी स्कूल, चावड़ी बाजार की कन्याओं ने मनोहारी भजन प्रस्तुत किए। आर्य-समाज दीवान हाल की ओर से सुन्दर ऋषि लंगर की व्यवस्था की गयी थी।

(सूर्यदेव)
महामन्त्री

वार्षिक चुनाव

आर्यसमाज ओखला का वार्षिक चुनाव दिनांक ११-९-८८ को सम्पन्न हुआ जो कि निम्न प्रकार है।

प्रधान—श्री रामकृष्ण जी
मन्त्री — „ रामनाथ गुप्ता
कोषाध्यक्ष— „ राजकिशोर कपूर

निवेदक
सत्यप्रकाश शास्त्री

[illegible]। लशुनेऽपि भुक्ते

—धर्मवीर शास्त्री

[illegible] नई-दिल्ली-६३

१

[illegible] रविवासरस्य [illegible] [illegible]।
[illegible] [illegible] हा लशुनेऽपि [illegible]॥

२

लीला-[illegible] महर्षेः [illegible] [illegible] [illegible]।
सिद्धान्तरक्षाऽनुसमर्पणोत्कं किमार्य-चारित्र्य-यशो न छिन्नम्॥

३

[illegible] [illegible] विभुर्वपुष्मानुपवर्णितोऽस्ति।
यः स्तौति लिङ्गं बहुशः शिवस्य संस्तूयतेऽप्येष परेशतुल्यः॥

४

मनुष्यवाचि [illegible] [illegible] मनुष्यजाता।
त एव सेतुं रचयन्ति सिन्धौ क्रमानुकूलं किमिहाऽस्ति सृष्टेः॥

५

वदन्तु मूर्धन्य सभापदस्था मौनस्य [illegible] [illegible] हेतुः।
त्यक्तोऽथवा तैर्निगमोक्तमार्गः [illegible] [illegible] वा स्थः॥

६

वयं दयानन्दपथप्रवृत्तास्तेजोविहीनाः कथमद्य जाताः।
विदो न किं तत्र निमीलिताक्षा [illegible] स्थितिर्नः पुनरन्धकूपे॥

७

आर्या वयं वैदिकधर्मनिष्ठाः [illegible] [illegible]।
नुमो न मूर्तिं [illegible]-[illegible] [illegible]॥

८

स्वरूपरक्षाविमुखं [illegible] संस्थां [illegible]।
[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] सुदुष्करं च॥

९

रामावतारोऽद्य [illegible] कृष्णावतारोऽपि [illegible]।
[illegible] हा, [illegible] [illegible] नित्यं प्रतिमार्चनं च॥

१०

[illegible] तपो महद् यच्चकार दयानन्दमुनिः पुरस्तात्।
[illegible] [illegible] [illegible] वयं तान् बहुशो [illegible]॥

११

हिन्दू [illegible] द्वीपो [illegible] [illegible]।
[illegible]: सागर-[illegible] [illegible] [illegible] [illegible]॥

१२

मिथ्या [illegible] [illegible] [illegible] जातिः प्रसक्ता शिशुबुद्धिरेव।
न सा [illegible] [illegible] [illegible] परनिर्भरत्वात्॥

१३

[illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]।
[illegible] विजिगीषया न [illegible] [illegible] शिर उन्नतञ्च॥

अफसोस! लहसुन खाने पर भी रोग नहीं गया

हिन्दी— अनुवाद

अफसोस! लहसुन खाने पर भी रोग नहीं गया। रविवार के सत्संग में उपस्थिति बढ़ाने हेतु (आर्यसमाज के सिद्धान्त के विपरीत होने पर भी) आर्यसमाज के मंच से दूरदर्शन से रामायण दिखाई गई, किन्तु उपस्थिति ज्यों की त्यों रही। दुःख है कि लहसुन खाकर ईमान भी नष्ट किया और रोग भी नहीं गया॥१॥

रासलीला विधायक स्वामी दयानन्द जी के अभिमत को ठुकराकर क्या आर्यसमाजों के पदाधिकारियों ने सिद्धान्तरक्षार्थ प्राणों का भी उत्सर्ग कर देने के आर्यों के चिरन्तन यश को छिन्न-भिन्न नहीं कर दिया?

राम कथा अवतार परक है। इसमें परमात्मा को देहधारी के रूप में चित्रित किया गया है। वह शरीरी भगवान् अनेक बार शिवलिंग की पूजा करता है तथा स्वयं भी सर्व शक्तिमान् ईश्वर के रूप में पूजा जाता है।

बन्दर मनुष्य की भाषा बोलते हैं, उनकी पत्नियाँ भी मनुष्य पुत्रियाँ हैं। ये बन्दर ही समुद्र पर पुल बनाते हैं। इस समस्त घटना क्रम में सृष्टि-क्रम के अनुकूल क्या है? बताओ।

हमारी मूर्धन्य सभाओं के पदाधिकारी कृपया स्पष्ट करें। इस विषय में उनके मौन का क्या हेतु है? क्या उन्होंने वैदिक मार्ग त्याग दिया है? या फिर आज हम (आर्य) योग्य नेतृत्व से वंचित हैं।

हम दयानन्द के अनुगामी आज निस्तेज क्यों हो गए? क्या हम नहीं जानते कि ऐसी घटनाओं की ओर से आँखें बन्द करने का परिणाम हमारा उस अन्ध श्रद्धा के कुएं में फिर से गिरना है।

हमें सदैव ध्यान रखना है कि हम आर्य हैं, वैदिकधर्मी हैं। हमारी मान्यता का ईश्वर निराकार है, व्यापक है, हम मूर्तिपूजा नहीं करते तथा हमारी दृष्टि में वेद चार हैं।

(और यह भी ध्यान रखना चाहिए कि) जो संस्था अपने स्वरूप की रक्षा नहीं करती उसे समय शीघ्र ही समाप्त कर देता है। यदि ऐसी संस्था शरीर से कायम रहती भी है तो उसका जीवन्त रहना दुष्कर है।

आज (दूरदर्शन से) रामावतार का प्रदर्शन हुआ, कल कृष्णावतार भी हो सकता है। (कहाँ है इसकी सीमा?) दुःख है कि राज्य शासन के माध्यम से ही परिणाम में दुःखद मूर्तिपूजा का प्रचार हो रहा है।

पाखण्ड के नाश के लिए स्वामी जी ने महान् तप किया था। उसे अपनी आँखों के सामने नष्ट होते देखकर प्रतिकार न करने वाले हम आर्यों को धिक्कार है।

हिन्दू धर्मरूपी समुद्र में स्वामी जी के सत्प्रयत्नों से एक द्वीप (डूबने से बचने के लिए आश्रय स्थल के रूप में आर्यसमाज) उदित हुआ था। जिसे सागर (रामानन्द सागर) की तरंगों (रामायण) ने पूरी तरह निगल लिया।

मिथ्या काल्पनिक पौराणिक कथाओं जैसे, कहानी-किस्सों में खोई रह कर एकमात्र अतीत में आसक्त जाति बाल-बुद्धि ही होती है। ऐसी जाति क्योंकि दूसरों पर निर्भर होती है, अतः वर्तमान और भविष्य की चुनौतियों का सामना नहीं कर पाती।

हमारे उद्धार के लिए कोई (ईश्वर) अवतीर्ण होगा, यह भ्रम है, अतः इसे छोड़कर अपने कष्टों के निवारणार्थ स्वयं प्रयत्न करना चाहिए तथा विजय-प्राप्ति की इच्छा से संसार में सिर ऊंचा करके रहना चाहिए।

सत्यार्थप्रकाश का महत्त्वपूर्ण दर्शन : अष्टम समुल्लास

गतांक से आगे · · ·

लेखक—बिहारीलाल शास्त्री

जल प्रलय के समय नूह ने सब को (पशुओं को भी) अपनी नाव में चढ़ा लिया था। (देखो बाइबिल) यह नाव भारत के हिमालय पर रुकी और सृष्टि वहीं उत्पन्न हुई। (यह नूह आर्य ग्रन्थों का मनु ही है।) जल प्रलय की कहानी ब्राह्मण ग्रन्थो मे और पुराणों मे भी है। सर इकबाल साहब का दृढ मत है कि आदि सृष्टि और जल प्रलय के पश्चात् की सृष्टि भारत मे ही हुई। 'अरब और हिन्द के पुराने ताल्लुकात" नाम की पुस्तक में मौलाना सुलेमान नदवी साहब ने भी यही सिद्ध किया है और मुसलमानों को सलाह दी है कि इस देश को (हिन्द को) अपनी जीती हुई भूमि मत कहो, यह तुम्हारी पैतृक भूमि है। (तुम्हारे पिता आदम और नूह की जन्म भूमि है,)

परन्तु अभागे हिन्दुओं को क्या कहें। ब्रह्मसमाजी, हिन्दू सभाई, जनसंघ और कई आर्यसमाजी नेताओं ने भी लिखा है कि आर्य लोग बाहर से आकर यहा बसे और कम्यूनिस्ट नेता और बडे विद्वान् एवं श्री राहुल सांकृत्यायन ने भी यह लिखा कि 'आर्य लोग बाहर से आकर यहा बसे। देखो उनका उपन्यास वोल्गा से गगा तक' और उन्होंने इसका आधार बताया है कम्यूनिस्ट नेता ऐंजिल्स के लेखों को। केवल ऋषि दयानन्द पहला लेखक है जिसने इस मान्यता को निराधार और झूठा बताया। आर्य जिस स्थान से आये उसका नाम आर्य साहित्य में होना था पर आर्य साहित्य में आर्यावर्त, ब्रह्मर्षि देश तो नाम आते है पर वोल्गा और मध्य एशिया के नाम नहीं। और जो जातिया आर्यों से पहले रहती थीं वे इस देश का क्या नाम बोलती थीं यह भी कहीं नहीं मिलता। वहा के जगली लोगों का नाम आदिवासी आज भी बोला जाता है जो बहुत बुरा झूठ है। ये जातिया आर्यों में से ही निकली हैं, विद्या पढने से मुख मोडने वाले अनुशासन हीन और आचार रहित लोग जिन्हें आर्यों ने जाति बाहर कर दिया था उन्ही के ये वंशज हैं। (देखो ऐतरेय ब्राह्मण) इस झूठे गपोडे का प्रभाव राजनीति पर बहुत बुरा हुआ। द्रविड लोग उत्तर भारत की सभ्यता, संस्कृति और भाषा से घृणा कर रहे हैं। आदिम जाति नाम रखने से ये लोग भी हिन्दुओं से अलग होकर ईसाई बन रहे हैं। सन् २१ में कांग्रेस के विरुद्ध अंग्रेजों ने आन्दोलन चलाया था कि आर्य भी विदेशी हैं इन्हें भी निकालो। डाक्टर शफात अहमद जो इलाहाबाद विश्व विद्यालय के प्रोफेसर थे उन्होंने एक पोस्टर छपाया कि ब्राह्मण, ठाकुर, खत्री, कायस्थ और वैश्य सब विदेशी जातियां है इन्हें भी निकालकर अछूत, भील, गोंड, सन्थालों को स्वराज्य दिया जाये। यही बातें आज रिपब्लिकन पार्टी वाले करते हैं, उनका नारा है—

बामन, ठाकुर, लाला (कायस्थ, खत्री, वैश्य) इन्हें दे दो देश-निकाला।

अंग्रेजी के मानस पुत्र इन नेताओं को आज भी समझ नहीं आती कि ऐसी पुस्तकें शिक्षा मे नहीं होनी चाहिये जो अनेकता फैलायें। आर्य बाहर से आये यह प्रचार और सन् ईसवी से पहले और सन् ईसवी के पश्चात् यह काल गणना बन्द होनी चाहिए। विक्रम सम्वत् शालिवाहन शाका, युधिष्ठिर सम्वत्, कलि सम्वत् सृष्टि सम्वत् का प्रयोग होना चाहिये। दूसरा विचार इस समुल्लास में श्री स्वामी जी ने बहुत आवश्यक और उपयोगी रक्खा है कि आर्य लोग (भारत के हिन्दू) विदेश यात्रा करें वा नहीं ? स्वामी जी विदेश यात्रा के बहुत समर्थक हैं —

"क्या बिना देश-देशान्तर और द्वीप-द्वीपान्तर में राज वा व्यापार किये स्वदेश उन्नति कभी हो सकती है ? जब स्वदेश में ही विदेशी लोग व्यवहार करें और परदेशी स्वदेश में व्यवहार वा राज्य करें तो बिना दारिद्र्य के और दुःख के दूसरा कुछ भी नहीं सकता।"

यह थे। महर्षि के देशोन्नति के लिए प्रेरणा स्रोत विचार। जिनसे हमें प्रेरणा लेनी चाहिए।

इन पंक्तियों में भारत में अंग्रेजी शासन और व्यापार का खुला विद्रोह है। आगे चलकर जो भारत के नेताओं ने मांग की और आन्दोलन किये, जेलों में गये और फांसियों पर चढ़े और स्वराज्य लेकर रहे। इस सबके मूलमन्त्र हैं ये पंक्तियां।

अब विचार करो ऋषि दयानन्द क्रान्तिदर्शी, दूरदर्शी हैं वा नहीं ? हमारे राजनैतिक आंदोलनों का प्रेरणाप्रद तो सत्यार्थप्रकाश ही तो है। कांग्रेस गरम दल के नेता लाला लाजपतराय और सरदार अजीतसिंह जी आर्यसमाजी ही थे, और प्रथम प्रेरणाप्रद थे स्वामी के शिष्य पूज्य श्याम जी कृष्ण वर्मा।

जब भूमि जल मग्न थी तो जो भाग सबसे प्रथम जल से बाहर हुआ वही स्थल पर जीवों का जन्मस्थल हो सकता है। अब सृष्टि अमीबा से विकसित होते-होते इस रूप में आई वा सब योनियाँ अलग-अलग स्वतन्त्र रूप से हुई—इस पर विचारना है।

सब वनस्पति और वृक्षों के बीज अलग-अलग हैं। अपने-अपने बीजों से प्रत्येक वृक्ष ने अपना विकास किया। इसी प्रकार सब योनियों के वीर्य पृथ्वी में थे उस-उस वीर्य से वही-वही योनि के जीव उत्पन्न हुए आज भी एक छोटे से बीज से इतना बडा वट वृक्ष तैयार हो जाता है तो आदि सृष्टि में छोटे बडे जीव उत्पन्न क्यों नहीं हो सकते। अमैथुनी सृष्टि बन जाने के पश्चात् वह वीर्य लुप्त हो जाते हैं फिर मैथुनी सृष्टि चलती है।

प्र०—भूमि में ये जीव भीतर ही भीतर कैसे हो गये ?

उ०-भूमि में भीतर ही इतनी इतनी बडी सफेद मूलियां लाल लाल गाजरें, शलजम कैसे तैयार हो जाते हैं। इसी प्रकार जीवों के अनेक प्रकार के शरीर भी उत्पन्न हुए। सब के आकार, स्वभाव और भोजन तथा व्यवहार भिन्न भिन्न हैं। विकासवाद अधूरा है। उसकी कल्पनाएँ अब खण्डित हो रही हैं।

प्र०—आदि में सब मनुष्य एक ही जाति के थे वा भिन्न-भिन्न जातियां थीं।

उ०—सब एक ही जाति के थे, पीछे फिर आचरणों की भिन्नता से दो वर्ग हुए। एक आर्य अर्थात् व्रती, सदाचार पालक, दूसरे दस्यु, दास, अनार्य, अव्रती, आचरण भंग करने वाले। वेद ने कहा—

अकर्मा दस्युः। निकम्मों का नाम दस्यु है। (ऋग् १०।१२ ८)

दस्यु दास्यतेः क्षयार्थात्, उपक्षयन्ति अस्मिन् रसाः इति। उपदासयति कर्माणि। दस्यु क्षय करने से जिसमें रसों का क्षय हो जाय, नीरस, हृदय हीन व्यक्ति वा जो कर्मों का क्षय करे अर्थात् निकम्मा। यह कोई जाति नहीं। आर्यों में ही जो ऐसे लोग थे वे दस्यु कहलाये। धीरे धीरे उनका समूह बन गया।

सर्वप्रथम हिमालय से उतर कर आर्य लोग इस देश में बसे, और इसका नाम आर्यावर्त्त रक्खा। यहीं से ईरान में जाकर बसे, उसका नाम आर्यायन (आर्यों का अयन-गमन स्थान) रक्खा। अफगानिस्तान के पठान पख्तून कहे जाते हैं। ऋग्वेद में 'पक्थासः क्षत्रियाः' पक्थ अर्थ पुष्ट क्षत्रिय, ये सब क्षत्रिय सीमाओं पर नियत किए गये। यहां जिन लोगों ने कोई अपराध किए उन्हें भी देश से बाहर निकाल दिया गया। वे उन उन देशों में बसे। भाषा, भोजन आकार व्यवहार बदल गये। वे म्लेच्छ दस्यु कहे गए। म्लेच्छ शब्द का अर्थ कोई गाली का अर्थ नहीं हैं। 'म्लेच्छ अपशब्दे, जिनकी भाषा बिगड गई। उच्चारण बिगडने से पृथक् पृथक् भाषाएँ बन गई भाषा, आचरण, रीतियां बदलने से जातियां बन गईं। ऐसे परिवर्तन सहस्रों-वर्षों से हुए हैं। असुर, राक्षस भी आर्यों में से अनाचार के कारण निकाले हुए लोग ही बने। फिर असुर जाति बन गई। शतपथ ब्राह्मण की कथा है—

'देवाश्च वा असुराश्च उभये प्राजापत्याः पस्पृधिरे। ततोऽसुरा अतिमानेनैव कस्मिन्नु वयं जुहुयामेति स्वेष्वेव आस्येषु जुह्वतश्चेरुस्तेऽतिमानेनैव पराबभूवुः तस्मान्नातिमन्येत पराभवस्यैतन्मुखम् यदतिमानम्।

अथ देवाः अन्योऽन्यस्मिन् जुह्वतश्चेरुः तेभ्यः प्रजापतिः आत्मानमेव प्रददौ।

(शतपथ ११।१।८)

(क्रमशः··)

वेद प्रचार दिवस धूमधाम के साथ सम्पन्न

नई दिल्ली,

प्रान्तीय आर्य महिला सभा के तत्वावधान में आयोजित वेद प्रचार दिवस स्त्री आर्यसमाज पंजाबी बाग के प्रांगण में श्रीमती सुशीला आनन्द की अध्यक्षता में धूमधाम के साथ सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम का शुभारम्भ यज्ञ और नवयुवतियों के अभिनन्दन के साथ प्रारम्भ हुआ। आर्य कन्या गुरुकुल राजेन्द्र नगर की छात्राओं ने वेदपाठ और सहदेव मल्होत्रा आर्य पब्लिक स्कूल की छात्राओं द्वारा ध्वजगीत प्रस्तुत किया गया। यजुर्वेद के ३१ वे अध्याय के मन्त्रों की प्रतियोगिता में बहनो ने बहुसंख्या में भाग लिया। इसमें प्रथम स्थान का कीर्तिमान माडल टाउन की बहन सरस्वती जी ने प्राप्त किया। श्रीमती कमला कपूर पंजाबी बाग ने द्वितीय स्थान और बहन विमला, नारायणा विहार ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। सभी मन्त्र प्रतियोगिताओं में भाग लेने वाली बहनों को वैदिक साहित्य से सम्मानित किया गया। निर्णायक श्रीमती ऊषा शास्त्री, शकुन्तला दीक्षित, प्रकाशवती बुग्गा और प्रेमशील महेन्द्रू ने बडी सूझबूझ से निर्णय दिया। विशेषतया शकुन्तला दीक्षित जी ने वेदपाठ करने की पद्धति के मौलिक सिद्धान्तों पर प्रकाश डाला और बहनो को प्रेरणा दी कि हमें ऋग्वेदभाष्य भूमिका के आधार पर वेदपाठ करना और समझना चाहिए।

वेद सम्मेलन का उद्घाटन श्रीमती ऊषा शास्त्री ने किया और ओजस्वी शब्दो में बहनों को प्रेरणा दी कि वेद सप्ताह मनाने का महत्व तभी सार्थक होगा, यदि वेद की मान्यताओ के अनुरूप हम आर्य बहनें अपने घर परिवार और समाज का निर्माण करें। डा० शशि प्रभा कुमार ने बडे ही मार्मिक ढग से कहा कि वेद विद्या हमें मानवीय अधिकार और कर्तव्यों की प्रेरणा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में गतिशील होने की देते हैं, इसलिए हम बहनों को प्रतिदिन नियमित रूप से वेद अध्ययन करके उसके अनुरूप अपने जीवन को ज्योतिर्मय बनाना चाहिए। तभी राष्ट्र परिवार और संसार में सुख शान्ति का वातावरण स्थापित हो सकेगा। बहन प्रेमशील महेन्द्रू और सुशीला आर्या ने भी अपने विचार अभिव्यक्त किये। श्रीमती शान्ति देवी ने इस आयोजन के लिए अपनी शुभकामनाएँ व्यक्त की। अध्यक्षीय भाषण में सुशीला आनन्द जी ने चारों वेदों का पाठ करने की पृथक्-पृथक पद्धतियों का आदेश और निर्देश दिया। सभा प्रधाना सरला मेहता ने सभी अतिथियों को वैदिक साहित्य द्वारा अभिनन्दन किया। स्वामी आनन्द बोध सरस्वती जी ने प्रान्तीय आर्य महिला सभा के सगठन की भूरि-भूरि प्रशसा की और मगल कामनाएँ दीं। और बिहार के भूकम्प एव बाढ पीडितों की सहायतार्थ सार्वदेशिक सभा द्वारा खोले गये सहायता कोष की चर्चा की। इस पर माता सरला मेहता जी ने ११०० रु० का चैक आर्य महिला सभा की ओर से भेंट किया। उनकी अपील पर दिल्ली की सभी आर्य महिला समाजों की ओर से बडी मात्रा में धन एकत्र करने का अभियान प्रारम्भ किया गया। स्वामी जी ने आभार व्यक्त करते हुए कहा कि 'दिल्ली की माताओं और बहिनों ने हर सकट के समय मे आर्यसमाज की बडी सेवा की है। ईश्वर से प्रार्थना है कि उनके सगठन को और शक्ति प्रदान करें। आय स्त्री समाज पंजाबी बाग की बहनो ने बडे उत्साह से आतिथ्य सत्कार और प्रत्येक भांति से प्रान्तीय महिला सभा के वेद प्रचार दिवस को सफलीभूत बनाने मे अपना योगदान दिया जिसके लिए सभा महामन्त्रिणी प्रकाश आर्या ने सभी का धन्यवाद किया।

प्रान्तीय आर्य महिला सभा द्वारा भूकम्प पीडितों एव बाढ से पीडितो की सहायतार्थ प्रारम्भ किये अभियान के अन्तर्गत १७ सितम्बर १९८८ को प्रान्तीय आर्य महिला सभा ने ५,१०० रु० की राशि का चैक और भारी मात्रा मे वस्त्र सार्वदेशिक सभा के माननीय प्रधान स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती को उनके कार्यालय में जाकर दिये गये।

कार्यक्रम की समाप्ति शान्तिपाठ के साथ हुई।

प्रकाश आर्या
महामन्त्रिणी



आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
R N N. o. 32387/77 Post in N.D.P.S O. on 29-30-9-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U 139
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५१ पूर्व भुगतान बिना भेजने का लाइसेंस नं० यू १३९

आर्यसमाज चित्रगुप्त गंज लश्कर ग्वालियर–१ में समता दिवस मनाया गया

ग्वालियर। विगत दिवस स्थानीय आर्यसमाज चित्रगुप्त गंज द्वारा योगीराज श्रीकृष्ण का जन्म दिन "समाज अधिकार दिवस" के रूप में मनाया गया। साथ ही विगत एक सप्ताह से चल रहा 'वेद प्रचार सप्ताह" भी सम्पन्न हुआ। समापन व्याख्यान मे वेदो के सुयोग्य विद्वान् आचार्य विजयपाल शास्त्री (डी०ए०वी० नैतिक शिक्षा संस्थान) नई दिल्ली ने योगीराज श्रीकृष्ण के तेजस्वी जीवन की घटनाओं का वर्णन करते हुए बताया कि केवल कूटनीति के द्वारा ही उन्होंने महाभारत युद्ध में भीष्म, दुर्योधन, कर्ण व अश्वत्थामा जैसे योद्धाओं को परास्त किया। युद्ध में पाण्डवो को विजयश्री दिलाई। समाज के मन्त्री श्री किशोरीलाल गौतम ने इससे पूर्व बताया कि श्रीकृष्ण एक आप्त पुरुष योगीराज थे। समान अधिकार पर बोलते हुए उन्होंने कहा कि वैदिक धर्म में जन्म से कोई जाति नहीं है, अपितु गुण कर्म स्वभाव से वर्ण व्यवस्था है। इस अवसर पर उन्होंने विशेष रूप से हरिजन बन्धुओ से आह्वान किया कि आर्यसमाज मन्दिर के दरवाजे मानव मात्र के लिए खुले हैं। जहां आप वेद की पवित्र ज्ञान गंगा मे गोता लगायगे वहीं समान अधिकार भी मिलेगा। शंकराचार्य के वक्तव्य निन्दनीय हैं।

सर्व प्रथम उपस्थित हरिजन बन्धुओ का माल्यार्पण करके स्वागत किया गया और उन्हें नवीन यज्ञोपवीत (जनेऊ) धारण करवाये तथा यज्ञ के यजमान भी बनाये गये। यज्ञोपवीत धारण करने वाले महानुभाव (पेशेवर) शिक्षक हैं, उनको वेदों के अनुसार ब्राह्मण वर्ण से विभूषित किया। अन्त मे प्रसाद वितरण व आभार प्रदर्शन के बाद कार्यक्रम उत्साह पूर्वक सम्पन्न हुआ।

मन्त्री, आर्यसमाज

आर्यसमाज स्वामी दयानन्द मार्ग अलवर में विशेष कार्यक्रम

वैदिक विद्या मन्दिर स्वामी दयानन्द मार्ग अलवर में कृष्ण जन्माष्टमी पर्व को समता दिवस के रूप मे मनाया गया जिसमें १००० की संख्या में अलवर के नागरिकों ने भाग लिया। विधिवत् यज्ञ के पश्चात् ५१ पिछडी व हरिजन जाति के महिला व पुरुषों ने यज्ञोपवीत धारण किये तथा उन्होंने मांस व मदिरा का परित्याग करने का संकल्प लिया। स्वतन्त्रता सेनानी एव भूतपूर्व विधायक श्री छोटूसिंह एडवोकेट प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, राजस्थान ने इस समारोह की अध्यक्षता की। उन्होने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि किसी देश व समाज का विकास उस समाज के पिछडे वर्ग को समाज में उच्च व समान अधिकार दिये बगैर सम्भव नहीं है। हमारे पिछडे कहलाने वाले वर्ग को वेद के अनुसार वो ही सम्मान प्राप्त है जो उच्च वर्ग को। आर्यसमाज सदैव जाति-पांति की विषमताओं को दूर करने का प्रयत्न करता रहा है, उसी क्रम में आज का आयोजन भी एक कड़ी है।

समारोह को विराट् हिन्दू समाज के सचिव श्री चिंतामणि जी ने मुख्य अतिथि के रूप में सम्बोधित किया। अन्य वक्ताओं में श्री मोकल चन्द जाटव भूतपूर्व विधायक, श्री लालचन्द आर्य, श्री मा० गुलजारीलाल माथुर, श्रीमती कमला शर्मा व विद्यासागर शास्त्री थे। यज्ञोपवीत धारण करने वालों मे श्री सुमेर सिंह बावरिया व उनकी धर्मपत्नी, मा० प्रभु दयाल जाटव, श्री हरचन्द आर्य प्रमुख थे।

(प्रदीप आर्य)
मन्त्री

□

सेवा में—

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१५० के लिए श्री सूर्यदेव द्वारा सम्पादित एवं प्रकाशित तथा
वैदिक प्रेस, गली न० १७, कैलाशनगर, दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० न० डी० (सी०) ७५१

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष १२ : अंक ५१ | रविवार ९ अक्टूबर १९८८ | सृष्टि संवत् १९७२९४९०८८ | आश्विन २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर, ३० पौंड

आर्यसमाज फिजी में हिन्दुओं की रक्षा के लिए आन्दोलन करेगा

समाज को छुआछूत बन्धन से मुक्त कराना आर्यसमाज का महत्त्वपूर्ण कार्य है—

—डा० धर्मपाल

आर्यसमाज अपने प्रारम्भ के दिनों से ही अनेक आन्दोलनों के माध्यम से प्राणीमात्र के उपकार में संलग्न है, वेदों में किसी भी प्रकार की भौगोलिक या अन्य किन्हीं सीमाओं का वर्णन नहीं किया गया है। ये सिद्धान्त सार्वभौम हैं तथा इनका प्रभाव भी प्राणीमात्र पर पडता है। आर्यसमाज के अनुसार सभी बराबर हैं। कोई भी आदमी बड़ा या छोटा नहीं है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी का अपना-अपना कर्त्तव्य है। ये वर्ण मनुष्य के द्वारा अर्जित किए जा सकते हैं। यह आर्यसमाज का ही उपकार है कि निम्न वर्ण में पैदा हुआ व्यक्ति भी ब्राह्मण के उच्च पद तक पहुंचा है। गुरुकुल में विद्यार्थियों को पता भी नहीं होता कि कौन किस जाति का है। वहां सभी समान हैं। ये उद्‌गार दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने आत्मशुद्धि आश्रम में आयोजित 'आर्य महासम्मेलन में व्यक्त किए। उन्होंने कहा कि जातिवाद एक अभिशाप है।

आर्य भाइयों को चाहिए कि वे अपने नाम के सामने से उपनामों को हटा दें। वे सभी को समान समझें। यदि ऐसा नहीं होता तो किसी भी प्रकार के समानता समारोह आयोजित करने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि यदि हमारे मन में जाति के आधार पर विष भरा है तो समानता कैसे आएगी। सार्वदेशिक सभा के आह्वान पर विश्व भर में समता-सम्मेलन मनाए गए। यह एक सराहनीय कार्य हुआ है। हमारा कर्त्तव्य है कि हम इस कार्य को आगे बढ़ाएं और इसे अपने जीवन में क्रियान्वित करें।

इस सम्मेलन की अध्यक्षता महाशय भरतसिंह ने की।

(शेष पृष्ठ ३ पर)

फिजी की नई सरकार द्वारा हिन्दुओ को ईसाई बनाने का कुचक्र

भारत सरकार से हस्तक्षेप की मांग

कर्नल राबुका ने फिजी में सैनिक आधार पर नई सरकार का गठन करके संविधान में साम्प्रदायिक आधार पर अनेक परिवर्तन किए हैं जिनमें भारतीय मूल के बहुसंख्यक जनसमुदाय को ईसाई बनाने का कुचक्र चलाया गया है।

उक्त घटना पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्दबोध सरस्वती ने बताया कि फिजी में भारतीय मूल के ६ लाख ५० हजार लोग रहते हैं जो फिजी की जनसंख्या के अनुपात से बहुसंख्यक हैं। किन्तु कर्नल राबुका ने नए संविधान में साम्प्रदायिक विष घोलकर यह घोषणा की है कि फिजी में यदि भारतीयों को रहना है तो ईसाई बनकर ही रहना होगा।

स्वामी जी ने कहा कि आज के युग में तानाशाही नहीं चल सकती है, क्योंकि भारतीय लोगों से ही फिजी का विकास हुआ है। उन्होंने अपना खून-पसीना बहाकर वहां भूमि सुधार, खेतीबाड़ी, व्यापार तथा उद्योग धन्धों आदि सब पर अपनी कड़ी मेहनत की जबरदस्त छाप छोड़ी है।

श्री स्वामी आनन्दबोध सरस्वती ने फिजी के इतिहास पर प्रकाश डालते हुए कहा कि सर्वप्रथम १५ मई १८७० को लियोनीडास नामक पानी के जहाज से अंग्रेजी सरकार ने ४६३ भारतीय मजदूरों को फिजी में उतारा था। उस समय वहां किसी प्रकार का विकास नहीं था और न सड़कें व खेतीबाड़ी का ही प्रबन्ध था। उद्योग धन्धों की तो चर्चा करना भी व्यर्थ है। इसके बाद भारी संख्या में लोग वहां गए और उस छोटे देश की समृद्धि को ऊंचाइयों तक पहुंचा दिया।

आर्यसमाज ने फिजी में हिन्दी और भारतीय भाषाओं का जोरदार प्रचार किया। कई समाज मन्दिर व स्कूल खोले गए। हिन्दू जनता ने भी अपने मन्दिर व धर्म स्थानों की स्थापना की। कर्नल राबुका के सत्ता संभालने से पूर्व भी पिछली सरकार ने भारतीय लोगों को उनकी जनसंख्या के आधार पर पूर्ण अधिकार दे रखे थे। किन्तु राबुका की सैनिक सरकार ने पदभार संभालने के पश्चात् संविधान में आमूलचूल परिवर्तन करके भारतीय मूल के लोगों को सब प्रकार की सुविधाओं से वंचित करने का षड्‌यन्त्र रचा और बहुसंख्यक भारतीय समुदाय को ईसाई बनने का आदेश दिया।

स्वामी आनन्दबोध सरस्वती ने यह रहस्योद्‌घाटन किया कि फिजी की पूर्व सरकार में ३ हजार फौजी जवान थे जो अब बढ़ाकर ५ हजार कर दिए गए हैं। उन्होंने यह भी बताया की पिछले दिनों कुछ हिन्दू युवकों को लेकर वह प्रधान मन्त्री श्री राजीव गांधी के निजी सलाहकार श्री आनन्द शर्मा से मिले थे।

स्वामी जी ने भारत सरकार से मांग की है कि—

(1) भारतीय मूल के निवासियों के धर्म की रक्षा के लिए फिजी सरकार पर तुरन्त दबाव डाला जावे। तथा,

(२) फिजी के इस साम्प्रदायिक षड्‌यन्त्र के मामले को सुरक्षा परिषद् में उठाया जावे।

श्री स्वामी जी ने प्रधान मन्त्री श्री राजीव गांधी और गृहमन्त्री श्री बूटासिंह को भी विशेष पत्र लिखकर भारतीय मूल के लोगों के धर्म की रक्षा के लिए तुरन्त उचित कार्रवाई करने का अनुरोध किया है। ●

सम्पादक—पं० यशपाल 'सुधांशु' एम० ए०
प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

श्रद्धा

लेखक—रामदयाल आर्य
सोनारों का वास, डंडियों का चौक,
जोधपुर (राज०) पिन—३४२००१

★

श्रद्धा देवा यजमाना
वायुगोपा उपासते।
श्रद्धा हृदय्ययाकूत्या
श्रद्धया विन्दते वसु ॥
ऋ० १०।१५१।४।

श्रद्धा श्रत्+धा=सत्य धारण आत्म विश्वास सहज विश्वास अथवा अन्ध विश्वास का नाम श्रद्धा नहीं है। सत्य को निश्चय पूर्वक जानकर उसे दृढ़ता के साथ धारण करना श्रद्धा है। सत्य धारण अथवा निष्ठा के साथ अभीष्ट की साधना में लगे रहना श्रद्धा है। आत्म विश्वास के साथ साध्य की साधना में जुट जाना श्रद्धा है। हृदय सकल्प के साथ लक्ष्य की ओर प्रवृत्त रहना श्रद्धा है।

देव श्रद्धा के द्वारा ही देवत्व प्राप्त होते हैं। यज्ञानुष्ठानी श्रद्धा द्वारा ही यज्ञ-फल सुखैश्वर्य प्राप्त करते हैं। वीर श्रद्धा के द्वारा हो विजय लाभ करते हैं। योगी भी श्रद्धा द्वारा ही योग साधना में सिद्धि प्राप्त करते हैं हृदय संकल्प में ही श्रद्धा का निवास है। निस्सदेह हृदय सकल्प ही श्रद्धा है। हृदय हृदय में प्रेम से मिलाप होता है। श्रद्धा नहीं तो न सत्य से प्रेम हो सकता है, न किसी प्रकार की विद्या या ज्ञान प्राप्त हो सके। श्रद्धावान् किसी भी ज्ञान ऐश्वर्य को प्राप्त कर सकता है। प्रेम एव श्रद्धा से किए गए कर्त्तव्य कर्मों के परिणाम मनुष्य की प्रगति के साधक होते हैं उसमें कभी होन भावनाओं को नहीं आने देता=मनुष्य को चाहिए कि वह अपने कर्त्तव्य कर्मों का कभी त्याग न करें बल्कि उनसे अपने जीवन पथ को सदा कुशल और आनन्दमय बनावें। श्रद्धा के साथ दृढ सकल्प और निश्चय के साथ योगपथ पर आरूढ हूजिये, आप बहुत शीघ्र सफल होंगे। विश्वास रखिये और प्रसन्नता के साथ योगानुष्ठान आरम्भ कीजिए। देव देवजना। यजमाना. यज्ञानुष्ठानी और (वायु गोपा) प्राण रक्षक वीर जन (हृदय्ययाकूत्या) हार्दिक सकल्प के साथ (श्रद्धां) श्रद्धा अभीष्ट को प्राप्त करने वाली श्रद्धा को (उपासते) उपासते हैं। (श्रद्धाया) श्रद्धा से ही (वसु) धन अभीष्ट (विन्दते) प्राप्त होते हैं।

श्रद्धा वह अमोघ मित्र है जो प्राणों को गति और शक्ति देती है वह मन्त्र है। जो व्यक्ति में सर्वस्व समर्पण की प्रेरणा उत्पन्न करती है। "श्रद्धा" वह गाडी है जिस के द्वारा व्यक्ति धर्म की मजिल तक पहुच सकता है।

श्रद्धा अमृत है किन्तु तब जब वह ज्ञान के द्वारा उत्पन्न हो। अज्ञान के वृक्ष पर जो फल लगता है उसे हम श्रद्धा नहीं कह सकते। क्यों कि श्रद्धा से मिलती है, पवित्रता, अक्षय कर्म शक्ति, उठने और कुछ करने की भावना।

अश्रद्धा नरक और श्रद्धा स्वर्ग में ले जाती है। श्रद्धा उस उत्कृष्ट भावना का नाम है जो कुछ प्रगट करना चाहती है अत सत्य धर्म और ज्ञान का प्रसार श्रद्धा के बिना असभव है आर्यसमाज सगठन के पास विश्व विजय के सब साधन हैं, यदि नहीं है तो केवल श्रद्धा। कभी-कभी सोचते हैं काश ऋषि दयानन्द के अनुयायियों में श्रद्धा होती। गुरु के प्रति अगाध निष्ठा होती हैं। धर्म प्रसार के लिए सर्वस्व समर्पण की भावना होती तो आज धरती के सारे गिरजाघर, मस्जिद, मन्दिरों पर ओ३म् ध्वजा लहराती। दुनिया का हर आदमी ऋषि दयानन्द को मार्ग-दर्शक मानता और सच्चा इन्सान बन शैतानियत को समाप्त करने में जुट जाता, हम स्वप्न देखने में विश्वास नहीं करते। कर्म की साधना ही हमारा जीवन है। जीवन का आधार हमें श्रद्धा ने दिया है। यही हमारी पूजी है, यही हमारा सबल है, यही हमारा मंत्र है। श्रद्धा के इस विश्वास को आप तक कैसे पहुचायें? लाखों दयानन्द के अनुयायियों में श्रद्धा का प्रकाश कैसे पहुचे? यही चिन्तनीय है और इसी का उत्तर है हमारी सफलता—

हमारी का अर्थ है ऋषि दयानन्द को हम नहीं जानते कि आप क्या जानते हैं, हमें नहीं पता कि आप क्या मानते हैं किन्तु इतना हमें बहुत अच्छी तरह ज्ञात है कि आप में श्रद्धा नहीं है, आपके मन में ऋषि के प्रति निष्ठा, त्याग नहीं है। यदि हो तो आज ससार वेदमय होता। शहीदों के बलिदान दिवस पर आप जलूस भी निकालेंगे और सभाए भी करेंगे, भाषण देंगे और सुनेंगे भी पर क्या कोरी सभाओं और थोथे भाषणों से कृण्वन्तो विश्वम् आर्यम् के नारों से या शहीदों की जय बोल लेने से महर्षि दयानन्द का सपना साकार होगा? नहीं, यह तो तभी सफल होगा जब कि हम सभी आर्यसमाजी सच्चे धार्मिक बनकर यम नियम पालन कर अपने वेदोक्त धर्म को आचरण में लाने वाला आर्यसमाज का नेता बन सकते हैं।

आप में आर्य तत्त्व है नहीं केवल नेता बनने की अगाध श्रद्धा मौन समान और अपनी प्रतिष्ठा की माला को पहने भाषण देने को भी प्रस्तुत परन्तु आप वेद के भाषण मे कोरे हैं। नियम का आचरण आप कभी करते नहीं तो भी आप अपने को सुवक्ता भी समझते हैं। आप हुकूमत करने को चाहते हैं इसलिए आप कुर्सी से चिपके हुए और नेता बने हुए हैं। नेता में निर्दिष्ट तीनों बातें तो होनी ही चाहिए। यदि नेता में अपने अनुयायियों को कुमार्ग से हटाकर सुपथ पर चलाने की सामर्थ्य नहीं है तो उसे अपने को नेता न समझना चाहिये और न ऐसे को कभी नेता ही बनाना चाहिए। लक्ष्य की सिद्धि प्राप्त करने एव कराने के लिए सही नेतृत्व सुवक्ता की आवश्यकता है। एक सुवक्ता ससार का जितना कल्याण कर सकता है उतना अन्य कोई नहीं कर सकता सुभाषण द्वारा मानव जाति का जितना हित, सुधार शिक्षण, पथ-प्रदर्शन और जीवन निर्माण किया जा सकता है उतना अन्य किसी उपाय से सम्भव नहीं। जितनी सफलता या विजय सुवक्तृत्व (सुभाषण) से प्राप्त होती है उतनी तो बिजली और तलवार से भी नहीं हो सकती है—एक सुवक्ता असंख्यों सेवकों अनुयायियों और वीरों को अपना अनुयायी बना लेता है। सुवक्ता नगर जनपद राष्ट्र और ससार का बन सकता है। सुवक्ता के लिए यह परम आवश्यक है कि वह यशस्वी भी हो। वक्तृत्व और यश साथ-साथ चलने चाहियें। अन्यथा परिणाम प्रतिकूल और अवाञ्छनीय होता है। यश उन ही व्यक्तियों को प्राप्त होता है जो कर्मवान्, सच्चरित्र और सदाचारी होते हैं। अतः सुवक्तृत्व और यश का सह सम्पादन श्रद्धा से करो। अब हमें श्रद्धा से बलिदान देने वाले उन साहसी नवयुवकों की आवश्यकता है। जो श्रद्धावान्, शुद्ध हृदय और सहृदय हों। हम श्रद्धा से श्रद्धा को बुलाते हैं। हम जीवन जीवन मागते हैं। हम ससार के मतों-मजहबों, पन्थों की समाप्ति के लिए शहीद बनने के लिए उत्सुक युवकों की टोली देखना चाहते हैं। भाषणों में आग बरसाना और बात है और जीवन की आहुति देना और बात। नेतागिरी की भूख से शहीदों का बलिदान चमकेगा नहीं वह तो तभी सफल होगा जब हम भी प्राणों की आहुति श्रद्धा से देंगे।

अखिल भारतीय आर्य सभा उत्तर प्रदेश का प्रान्तीय सम्मेलन

सम्मेलन स्थल—भल्ला धर्मशाला (विजय नगर तिराहा के पास), दिनांक—७, ८, ९ अक्तूबर १९८८ दिन शुक्र, शनि, रविवार

देश में वेदोक्त शासन प्रणाली, वैदिक धर्म की मर्यादाओं का जनता से पालन कराना तथा वेदोक्तशिक्षा प्रणाली को प्रारम्भ कराने में आर्य सभा कठोर प्रयत्न होगा।

इन्हीं उद्देश्यों को लेकर यह प्रान्तीय सम्मेलन किया जा रहा है। जिसमें भारत के उच्चकोटि के विद्वान्, महात्मा स्वामी चेतनानन्द राही, इटावा, स्वामी इन्द्रदेव यति कुलपति आदर्श गुरुकुल शाही पीलीभीत, आचार्य विद्यादेव शास्त्री आगरा, प० कुशराम आर्य फर्रुखाबाद, प० नरदेव आर्य भजनोपदेशक भरतपुर राजस्थान पधार रहे हैं।

अत सभी माताओं, बहिनों एव भाइयों से निवेदन है कि इस ईश्वरीय कार्य में तन, मन एव धन से सहयोग प्रदान करें एव समयानुसार कार्यक्रम में पधारकर विद्वानों के भजन, उपदेश सुनकर अपने मानव जीवन को सफल बनाने का प्रयास करें।

आर्यसमाज और अछूतोद्धार

—डा० हरिवंश राय बच्चन

(डॉ० हरिवंशराय बच्चन हिन्दी जगत् के प्रख्यात कवि हैं। आर्यसमाज सभी को समान अधिकार दिलाने के लिए प्रयत्नशील है। आर्यसमाज छुआछूत मे विश्वास नहीं करता। श्री बच्चन पर भी आर्यसमाज का प्रभाव पड़ा था और उन्होंने इस कार्य से संतोष का जो अनुभव किया था। वह इन पंक्तियों मे द्रष्टव्य है। ये पंक्तियां उनकी आत्मकथा 'क्या भूलूं क्या याद करूं' से ली गयी हैं। यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि उन्होंने इस समस्या का समाधान करने के लिए समाज के साथ राज्य पर भी जिम्मेदारी डाली है—सम्पादक)

और जब अपने उभरते यौवन के दिनो मे आर्यसमाज के अछूतोद्धार और बाद मे गांधी जी के हरिजन आन्दोलन के साथ मेरी सहानुभूति जगी तो मुझे इस बात पर गर्व होता था कि मेरा तो एक माँ हो चमारिन अम्मा था; और जब एक दिन चाँद नगर के आर्यसमाज मे आयोजित किसी प्रीतिभोज मे मैंने अछूतों की पंगत मे बैठकर कच्चा खाना खा लिया तो मुझे बड़ी प्रसन्नता और सन्तोष का अनुभव हुआ, और मुझे लगा कि मैंने अम्मा की बिरादरी के साथ कुछ न्याय किया, पर मेरे सम्बन्धियो और नातेदारो को यह खबर बड़ी नागवार गुजरी उन्होंने व्यंग्य से कहा कि आखिर इसने चमारिन का छाती का दूध पिया था, उस कुसंस्कार का कुछ असर होना ही था। यह संस्कार का प्रभाव था, कि देश के समाज सुधारक नेताओं के उपदेशों का, कि मेरे अपने मानवतावादी उदार विचारों का, कि मेरे मन से बहुत पहले ही अछूतों को अछूत समझने की बात बिलकुल उठ गयी थी। जब स्वतन्त्र रूप से मेरा अपना घर हुआ तो अक्सर चमार ही मेरे खाना बनाने वाले रहे। मुझे आश्चर्य और क्षोभ तो तब होता जब घर की कहारिन चमार के छुए बर्तनों को मांजने से इन्कार कर देती। हिन्दू समाज-तन्त्र में अछूतपन की भी श्रेणियां-दर-श्रेणियां हैं। आजकल एक जमादार की लड़की—कमला—मेरे घर काम करती है और कभी-कभी खाना भी बनाती है। मुझे लगता है कि मेरे पूर्वजों ने अछूतो का अपमान करके जो पाप किया था उसका यत्किंचित प्रायश्चित्त मैं कर रहा हूं। सामाजिक स्तर पर कोई सुधार हो, इसके पूर्व व्यक्ति व्यक्ति को निर्भीकता और साहस के साथ आगे बढ़ना होगा।

इधर मैं सोचने लगा हूं कि अछूतों के साथ या उनके हाथ का खाना-पाना अथवा उनके लिए मन्दिर का द्वार खोल देना केवल रूमानी औपचारिकताएं अथवा प्रदर्शन हैं। समाज मे उनको अपना यथोचित स्थान तभी मिलेगा जब उनमे शिक्षा का व्यापक प्रचार हो और उनका आर्थिक स्तर ऊपर उठे। साथ ही जाति की शृंखला को ऊपर से नीचे तक टूटना नहीं तो ढीला होना होगा, जाति की जड़, अर्थहीन और हानिकारक रूढ़ियां से निम्नवर्ग के लोग उतने ही जकड़े हैं जितने उच्चवर्ग के लोग। एक छोटा-सा कदम इस दिशा में यह उठाया जा सकता है कि लोग अपने नाम के साथ अपनी जाति का संकेत करना बन्द कर दें। जिन दिनों मैं यूनिवर्सिटी में अध्यापक था, मैं अपने बहुत-से विद्यार्थियों को प्रेरित करता था कि वे अपने नाम के साथ अपनी जाति न जोड़ें अपने को रामप्रसाद त्रिपाठी नहीं; केवल रामप्रसाद कहें। भारत की आजाद सरकार चाहती तो एक विधेयक से नाम के साथ जाति लगाना बन्द करा सकती थी—कम-से कम सरकारी कागजों से जाति का कालम हटा सकती था,—इसके परिणाम दूरगामी और हितकर होते। पर अभी उसमे कुछ भी क्रान्तिकारी काम करने का साहस नहीं है। वह जैसा चला आया है चला हो, या उसमें थोड़ा-बहुत हेर-फेर करके चलाये चले जाने में ही अपनी चातुरी और कुशलता समझती है।

(पृष्ठ १ का शेष)

आर्यसमाज फिजी में. . .

उन्होंने बताया कि आर्यसमाज इस बात के लिए प्रयत्नशील है कि सभी को समान अधिकार मिलें। आर्यसमाज भारत में ही नहीं, विश्व के अन्य देशों मे भी अपनी आवाज उठाता रहा है। अनेक देशो मे आर्य महासम्मेलन किए जा चुके हैं। अभी एक नया मामला फिजी का आया है। यह एक बहुत ही दुःखद बात है कि किसी व्यक्ति को डरा कर धमकाकर उसका धर्म परिवर्तित कराया जाये। फिजी मे भारत मूल के व्यक्ति हैं। वे वहां पर अनेक वर्षों से रह रहे हैं। यदि मैं यह कहूं कि देश को समृद्ध बनाने मे उन्होंने विशेष योगदान दिया है, तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। आज यदि फिजी में वैभव है, शिक्षा है, उद्योग धन्धे हैं, तो उसमे भारत मूल के लोगो का विशेष हाथ है। आज उन्हें कहा जा रहा है कि वे या तो ईसाई बन जाएं, अन्यथा देश छोड दें यह कथन मानवता के लिए अभिशाप है और किसी भी प्रकार उचित नहीं कहा जा सकता। हम तो यह चाहते हैं कि लोग धार्मिक हो सत्यवादी हो, निष्ठावान् हों, आचारवान् हों, पर हमारे ईसाई भाइयों को धर्म नहीं धर्मान्तरण प्यारा है। यह धर्मान्तरण की आंधी हमारे देश में भी चल रही है। उडीसा के फुलबाडी जिले मे आज भयंकर युद्ध छिड़ा हुआ है। वहां के वनवासियों और अनुसूचित जाति के सदस्यों का धर्मान्तरण दिन प्रतिदिन और अधिक होता जा रहा है। इसाई चर्च इस काम को काफी दिन से कर रहा है। मुझे यह कहने मे गौरव की अनुभूति हो रही है कि यदि इसका मुकाबला किसी ने किया तो, वह आर्यसमाज ने किया है। जवाबी हमला भी आर्यसमाज ने ही किया है। हमारा विश्वास है कि आर्यसमाज के भाई उन्हें मुंह तोड जवाब देंगे। इसके पीछे भी एक ही भावना है। हमारे वैदिक धर्मी भाई हरिजनों को बराबर का दर्जा दें तो यह समस्या नहीं रहेगी। इस अवसर पर आचार्य नरेश श्री रामशरणदास आर्य, श्री ओम प्रकाश तलवाड, श्री वीरसेन मुखी ने भी अपने विचार रखे।

आर्यसमाज राजौरी गार्डन नई दिल्ली मे
सामवेद पारायण यज्ञ वेद प्रवचन

दिनांक ३ अक्तूबर से ९ अक्तूबर तक आर्यसमाज मन्दिर जे ३।२०६-२०७ राजौरी गार्डन नई दिल्ली में सामवेद पारायण यज्ञ एव वेद प्रवचनों का भव्य आयोजन किया गया है। इस यज्ञ के ब्रह्मा तथा प्रवक्ता प० यशपाल सुधांशु एम० ए० होंगे।

यज्ञ कार्यक्रम—प्रात ६ बजे से ९ बजे तक नित्य इसे ९ अक्तूबर तक चलेगा। रात्री मे ७४५ से ९-३०बजे तक वेद प्रवचन का कार्यक्रम चलेगा। प्रवचन से पूर्व श्री वेदव्यास के मधुर भजन होंगे।

पूर्णाहुति पर ९ अक्तूबर को विशेष कार्यक्रम होगा जिसमें स्वामी विद्यानन्द सरस्वती, डा० वाचस्पति, डा० महेश विद्यालंकार डा० सूर्यदेव आदि विद्वान् एव आर्य नेता पधारेंगे।

श्री जगदीश आर्य संयोजक ने बताया इस कार्यक्रम का उद्देश्य नवीन पीढ़ि को आर्य संस्कारों से एव वैदिक धर्म से परिचित कराना है। यज्ञपर युवा दम्पतियों को आमन्त्रित किया जायेगा, साथ ही साहित्य वितरण का भी कार्य किया जायगा। उल्लेखनीय है तरुणो का एक आर्यन क्लब भी इस आर्यसमाज में चल रहा है जिसमे सामाजिक सेवा के कार्यों से लेकर यज्ञ एव वैदिक प्रवक्ताओं के प्रवचन भी होते हैं।

आर्यसमाज के प्रधान श्री देशराज सेठी तथा मन्त्री नन्दकिशोर भाटिया और संयोजक जगदीश आर्य के प्रयास से कालोनी के बाजारों में बड़े भारी आकार के साइन बोर्ड पर कार्यक्रम को विज्ञापित किया गया है। विज्ञापित करने का प्रकार बड़ा अनूठा एव दर्शनीय है।

इस समस्त कार्यक्रम मे सभी जन आमन्त्रित हैं।

चुनाव समाचार
आर्यसमाज राणा प्रताप बाग, दिल्ली-७

प्रधान—श्री बसन्त राम साही
मन्त्री—श्री जगदीश चन्द्र
कोषाध्यक्ष—श्री देवराज तनेजा

सत्यार्थप्रकाश का महत्त्वपूर्ण दर्शन : अष्टम समुल्लास

गतांक से आगे

लेखक—बिहारीलाल शास्त्री

★

वेदों में दस्यु, असुर, राक्षस, आदि जो लिखे हैं वे कोई जातियां नहीं थीं। मनुष्यों के स्वभाव के कारण नाम पड़े थे। जैसे असुर उपरि वर्णित, जो अपने ही मुख में आहुति दे अर्थात् स्वार्थी राक्षस जो अपनी और अपने भोगों की रक्षा में लिप्त रहे। पणि पैसे के अत्यन्त लोभी। म्लेच्छ, अशुद्ध बोलने वाले। यह एक बड़ा भारी झूठ है कि आर्य लोग बाहर से आये, और यहां के निवासी द्रविडों को हराकर यहीं के राजा बन गये। श्री स्वामी जी ने लिखा है—

'किसी संस्कृत ग्रन्थ में नहीं लिखा कि आर्य लोग ईरान से आये और यहां के जंगलियों को लड़कर जय पाके निकाल इस देश के राजा हुए। पुन: विदेशियों का लेख माननीय कैसे हो सकता है।

आज तक भी कोई विद्वान् यह नहीं बता सका कि आर्य लोग जिस देश से आये उस देश का नाम आर्यों के साहित्य में कहां लिखा है? क्या नाम था आर्यों की उस भूमि का? और भारत में रहने वाले वे लोग जिन्हें आप द्रविड बताते हैं उन की भाषा में देश का नाम क्या था? जिन्हें आप आदि वासी कहते हैं वे कौन हैं? जरा सुनिये।

विश्वामित्रस्यैकशतम् पुत्रा आसन् तेष्वर्षे ज्यायांस पञ्चाशदेव मधुच्छन्दस पञ्चाशदेव कनीयांस। तद् ये ज्यायांसो कुशलम् न मेनिरे, तान्तु व्याजहार एतान नु प्रजा भक्षिष्टेऽन्ति न एतेऽन्ध्रा पौण्ड्रा शबरा पुलिन्दा मूतिर्बा इत्युदन्त्या बहवो भवन्ति।"

(ऐतरेय ७ .।१०)

ऐतरेय ब्राह्मण के लेखानुसार यह सब जातियां आर्यों में से ही बनी। व्रत का, अनुशासन का पालन न करने से। द्रविड का अर्थ ही है, दौड़ा हुआ, जो पढ़ना छोड़कर शीघ्र भाग गया। आदिवासी और पश्चाद वासी यह कल्पनाएं महा झूठ हैं। फिर कहो कि भारत सरकार ऐसा क्यों लिखवाती और पढ़वाती है? तो इसका उत्तर सही यही है कि ये राजनतिक नेता अंग्रेजों के शिष्य हैं। अंग्रेज जब गये तो शासन अपने इन मानसिक पुत्रों को सौंपकर गये।

स्वामी जी ने मनु के श्लोक देकर आर्यावर्त की सीमा बताई है। यह सीमा मनु के समय की है, अब तो आर्यावर्त श्री लंका के समुद्र तक है। मनु के श्लोक ये हैं।

आसमुद्रात्तु वै पूर्वा-
दासमुद्रात्तु पश्चिमात्।
तयोरेवान्तरं गिर्यो-
रार्यावर्तं विदुर्बुधाः॥

विन्ध्याचल के बीच का देश आर्यावर्त है, इसमें मद्रास, केरल आंध्र और कर्नाटक नहीं आते। अगला श्लोक है

सरस्वती दृषद्वत्यो-
र्देवनद्योर्यदन्तरम्।
तं देवनिर्मितं देशं
ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते॥

सरस्वती और दृषद्वती नदी के बीच का देश, देव भूमि ब्रह्मावर्त है। सरस्वती और दृषद्वती कौन सी नदियां हैं, इसमें मतभेद है। किन्तु यह क्षेत्र कुरुक्षेत्र से लेकर उत्तरप्रदेश के पश्चिमी जिलों तक रहा होगा। किन्तु 'सत्यार्थ-प्रकाश में ब्रह्मावर्त के स्थान पर आर्यावर्त पाठ है, यह पाठ परिवर्तन कैसे हुआ? क्यों हुआ? पता नहीं, और अर्थ भी दोनों श्लोकों को मिलाकर किया गया जो व्याख्या सा है।

उत्तर में हिमालय दक्षिण में विन्ध्याचल पूर्व और पश्चिम में समुद्र तथा सरस्वती, पश्चिम में अटक नदी, पूर्व में दृषद्वती जो नेपाल के पूर्व भाग पहाड़ से निकलकर बंगाल आसाम के पूर्व और ब्रह्मा के पश्चिम ओर होकर दक्षिण के समुद्र में मिली है जिसको ब्रह्मपुत्र कहते हैं और जो उत्तर के पहाड़ों से निकल के दक्षिण के समुद्र की खाड़ी में अटक मिली है, हिमालय की मध्य रेखा से दक्षिण और पहाड़ों के भीतर और रामेश्वर पर्यन्त विन्ध्याचल के भीतर जितने देश हैं उन सब को आर्यावर्त इसलिये कहते हैं कि आर्यावर्त देश अर्थात् विद्वानों ने बसाया है।

इस व्याख्या के अनुसार दक्षिण भारत भी आर्यावर्त में आ जाता है, और इसीलिये सम्भवतः पाठ ब्रह्मावर्त की जगह आर्यावर्त किया गया है। ऐसा पाठ करना कोई बुरी बात नहीं क्योंकि आजकल के आर्यावर्त की सीमाएं बतानी हैं। इसीलिए सरस्वती दृषद्वती की लम्बी व्याख्या की गई है। आगे स्वामी जी ने ऋग् म० १, सू० ५१, मं० ८ का उद्धरण दिया है—

विजानीह्यार्यान्ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्धया शासदव्रतान्।

अर्थात् अव्रती आचारहीन लोग दस्यु हैं। अथर्व १९।६२ उत शूद्रे उतार्ये। शूद्र भी अव्रत होने से अनार्य हैं। अर्थात् अनाड़ी (मूर्ख)। आर्य नाम धार्मिक विद्वान् आप्त पुरुषों का है। भाव यह है कि यह नाम जातियों के नहीं किन्तु गुणों और अवगुणों वा गुण रहित होने के कारण हैं।

आगे स्वामी जी ने मनु० १०।४५ तथा २।२३ के श्लोकों के टुकड़े देकर बताया है कि "जो आर्यावर्त देश से भिन्न हैं वे दस्यु देश और म्लेच्छ देश कहाते हैं" परन्तु यह परिस्थिति मनु महाराज के समय की है। देशों की परिस्थितियां राजनैतिक वा शिक्षा के कारणों से बदलती रहती हैं। अत: आज न कोई म्लेच्छ देश है और न कोई दस्यु देश, न आर्य देश। सब परिस्थिति मिली जुली है। उस पुराने काल में भी असुरों में नास्तिकता थी परन्तु प्रह्लाद आदि कई राजा बड़े आस्तिक भी हुए। बाणासुर की असुर कन्या उषा का विवाह श्री कृष्ण जी के पोते अनिरुद्ध से हुआ। भारत में भी जरासन्ध, शिशुपाल, कंस, रुक्मि जैसे राजा आसुरी ही वृत्ति के थे। हब्शी आज भी राक्षसों जैसे रूप के हैं किन्तु अब बड़े सभ्य होते जा रहे हैं। नाग जाति का भी वर्णन श्री स्वामी जी ने किया है जो अब केवल आसाम के पास नागालैंड में रह गए हैं। शेष सब अन्य जाति के धर्मियों में मिल गए।

श्री स्वामी जी ने आगे जो लिखा है वह लिखना उनके हृदय की वेदना का सूचक है। हर पंक्ति में स्वामी जी की आहें भरी हुई हैं।

'कुछ दुर्भाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की कथा ही क्या कहनी किन्तु आर्यावर्त में भी आर्यों का अखण्ड, स्वतंत्र स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय है नहीं। जो कुछ है सो भी विदेशियों से पादाक्रान्त हो रहा है।"

इससे पहले भी स्वामी जी बता चुके हैं कि—

"इक्ष्वाकु से लेकर कौरव पांडव तक सर्व भूगोल में आर्यों का राज्य और वेदों का थोड़ा-थोड़ा प्रचार आर्यावर्त से भिन्न देशों में भी रहता था।"

श्री स्वामी जी के इस लेख को इस देश के भी विद्वान् अतिशयोक्ति गर्वोक्ति समझते थे किन्तु आज सैकड़ों प्रमाण नित्य ही समाचार पत्रों में मिलते हैं कि भारतीय आर्यों का शासन और सभ्यता अन्य देशों में भी थी। कोर्नियो (वरुण द्वीप) में बड़ा स्तम्भ जिस पर लिखा है—

श्री विक्रमुर्मराजेन्द्रो
यष्ट्वा बहुसुवर्णकम्।
तस्य यज्ञस्य स्तम्भोऽयं
महेन्द्र सम्प्रकाशते॥

इस द्वीप में विष्णु वर्मा ने यहां एक बड़ा यज्ञ किया था। कम्बोडिया में बड़े विशाल मन्दिर आर्य राजाओं के बनवाये हुए हैं जो आज भी उनकी कीर्ति का मूक गान कर रहे हैं। उनके वंशज राजकुमार सिंहानूक वर्मन जो कई बार भारत आ चुके हैं आज भी विद्यमान हैं।

आगे भी स्वामी जी के पीड़ित हृदय के उद्गार और भी मर्मस्पर्शी हैं—

'कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत-मतान्तर के आग्रह रहित अपने और पराये का पक्षपात शून्य प्रजा पर पिता-माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ भी विदेशियों का राज्य पूर्ण सुखदायक नहीं है।"

क्रमश:

महात्मा गांधी जन्म दिवस के अवसर पर

महात्मा गांधी और ईसाई मिशनरी

पोप जान पॉल (द्वितीय) थोड़े वर्ष पहले भारत आए थे। भारत की अतिथि स्वागत की परम्परानुसार हम ने उनका स्वागत भी किया। परन्तु उनसे तथा ईसाई मिशनरियों से हमारा आग्रह है कि वे महात्मा गांधी के इन विचारों को भी ध्यान में रखें। ईसाई मिशनरियों ने जिस प्रकार हिन्दुओं को ईसाई बनाने का प्रयत्न किया है और जो अब भी चल रही है, वह निश्चय ही हम सभी के लिए घोर चिन्ता की बात है। महात्मा गांधी ने भी ईसाई मिशनरियों के धर्मान्तरण के प्रति घोर चिन्ता व्यक्त की है तथा उनके अवांछनीय, अधार्मिक तथा असहिष्णुता-पूर्ण क्रिया कलापों और क्या सेवा के द्वारा हिन्दुओं के धर्म-परिवर्तन की कटु आलोचना की है। यहां महात्मा गांधी के कुछ विचारों को प्रस्तुत किया गया है जिससे राष्ट्रपिता के विचारों को सामने रखकर ईसाई मिशनरी आत्मा-लोचन करें और केवल मानव-सेवा तक स्वयं को सीमित रखें। महात्मा गांधी के इन विचारों से हम समझ सकते हैं कि उन्होंने ईसाई मिशनरियों द्वारा किए जाने वाले धर्मान्तरण को कितनी गम्भीरता से लिया था और उनसे दुष्प्रवृत्तियां छोड़ने का आह्वान किया था। महात्मा गांधी के लेखों से कुछ उद्धरण नीचे दिए जा रहे हैं —

मेरा हिन्दू धर्म सर्वग्राही है। वह मुसलमान विरोधी, ईसाई विरोधी या किसी भी अन्य धर्म का विरोधी नहीं है बल्कि वह मुसलमान पक्षी, ईसाई-पक्षी और संसार के हर अन्य जीवित धर्म के पक्ष में है। मेरे लिए हिन्दू धर्म उसी मूल तने की एक शाखा है जिसकी जड़ों और जिसके गुणों का अन्दाजा हमें केवल विभिन्न शाखाओं के एक साथ होने पर उनके सामूहिक बल और गुण से होता है। यदि मैं हिन्दू शाखा को जिस पर मैं टिका हूं और जो मेरा पोषण करती है, फिक्र करता हूं, तो मैं निश्चय ही उसकी बहन अन्य शाखाओं की भी फिक्र करता हूं। यदि हिन्दू शाखा विषाक्त हो जाती है, तो दूसरी शाखाओं में भी विष फैल सकता है। यदि यह शाखा सूखने लगे [illegible] सूखने से मूल तना [illegible] होगा ही।

("[illegible]",
२१ नवम्बर, १९३२)

लेखक—डा० कमल किशोर गोयनका

यह (हिन्दू धर्म) न केवल पृथ्वी के चारों कोनों के पैगम्बरों की शिक्षाओं के प्रति सहिष्णु है, बल्कि उन्हें आत्मसात् भी करता है।

(४ नवम्बर, १९३२)

हिन्दुत्व के द्वारा मैं ईसाई, इस्लाम और कई दूसरे धर्मों से प्रेम करता हूं। यह छीन लिया जाय तो मेरे पास रह ही क्या जाता है।

(जवाहर लाल नेहरू को लिखे, पत्र से, २ मई १९३३)

ईसा मसीह ही जन्मना ईश्वर के पुत्र नहीं

इस वचन (सेंट जॉन ३·१६) को मैं अक्षरशः सत्य नहीं मानता कि केवल ईसा मसीह ही जन्मना ईश्वर के पुत्र हैं। ईश्वर किसी एक का ही पिता नहीं हो सकता और न यह हो सकता है कि देवत्व का आरोप मैं केवल ईसा में ही करूं। उनमें भी वैसा ही देवत्व है, जैसा कृष्ण या राम, मुहम्मद या जरतुश्त में है। इसी प्रकार, जैसे मैं "वेदों" या "कुरान" के प्रत्येक शब्द को दिव्य नहीं मानता वैसे ही "बाईबल" के भी हर शब्द को दिव्य नहीं मानता। हां इन ग्रन्थों का सार अवश्य ही दिव्य है, लेकिन अगर इसके वचनों को अलग अलग देखता हूं तो उनमें बहुत से वचन ऐसे निकल आते हैं जिनमें मुझे कुछ भी दिव्य दिखाई नहीं देता। "बाइबिल" भी उसी तरह एक धर्म-ग्रन्थ है जिस तरह "गीता" और "रामायण"।

इसीलिए मेरे मन में ऐसा कोई ख्याल नहीं है कि मैं आपको ईसाई धर्म से विमुख करके हिन्दू बना लूं और अगर आप मुझे ईसाई बनाने की सोचें तो वह बात भी मुझे अच्छी नहीं लगेगी। मैं आपके इस दावे का भी विरोध करूंगा कि एक मात्र सच्चा धर्म ईसाई-धर्म ही है। यह बात सच है कि यह भी एक अच्छा और उदात्त धर्म है और मनुष्य को नैतिक रूप से ऊपर उठाने में दूसरे धर्मों के साथ-साथ इसने भी योगदान किया है, लेकिन अभी इसे इससे भी बड़ा योग देना है। किसी धर्म के इतिहास में २००० वर्ष का काल तो कुछ होता ही नहीं है। आज तो व्याकुल मानवता के सामने ईसाई धर्म दूषित रूप में ही पेश किया जा रहा है। जरा सोचिये तो कि बड़े पादरी ईसाई-धर्म के नाम पर हत्या और रक्तपात का समर्थन करें, यह कैसी बात है।

("हरिजन", ६ मार्च, १९३७)

ईसाई मिशनरी

ईसाई मिशनरियों से मेरा झगड़ा इस बात पर है कि वे समझते हैं ईसाई धर्म के अलावा और कोई धर्म सच्चा नहीं है।

(२५ फरवरी, १९३९)

मनुष्यों के माध्यम से कराये जाने वाले धर्म परिवर्तन में मैं विश्वास नहीं करता। दूसरों को अपने धर्म में लाने का उनका (मिशनरियों का) प्रयास कोरा दम्भ ही है। ईश्वर के पास पहुंचने के ईश्वर के तई तो उतने ही मार्ग हैं जितने कि संसार में मानव प्राणी हैं।

(एक अमेरिकी मिशनरी से
भेंटवार्ता में,
१८ अप्रैल, १९३४)

मिशनरियों ने 'जैसा देश, वैसा भेष" वाली कहावत नहीं सीखी है। वे अपने दैनिक जीवन में हर बात में पश्चिम का ही अनुकरण करते हैं और वह भूल जाते हैं कि वस्त्र तथा भोजन और जीवन-चर्या जल-वायु और आसपास के वातावरण के अनुरूप होनी चाहिए और इसलिए उनमें तदनुसार परिवर्तन करना जरूरी है। दिल जीतने के लिए झुकना होता है, जो उन्होंने नहीं किया है। फलत. पारस्परिक अविश्वास की खाई बनी हुई है और चिकित्सा के क्षेत्र में काम करने वाले मिशनरियों और यही कार्य करने वाले भारतीयों में सहज सम्पर्क नहीं है।

(मिशनरी डा० वेस्टरमैन से,
"हरिजन" २५ फरवरी १९३९)

धर्मान्तरण असहिष्णुता—जो एक प्रकार की हिंसा है

यह मानना कि आपका धर्म दूसरे धर्मों से श्रेष्ठ है, और दूसरों से अपना धर्म छोड़कर आपके धर्म में आ जाने के लिए कहना न्यायसंगत है, यह असहिष्णुता की पराकाष्ठा है और असहिष्णुता एक प्रकार की हिंसा है।

("हिन्दुस्तान टाइम्स",
५ मई, १९३८)

विकृति तो चर्च में है

विकृति तो चर्च में है, जिसका यह ख्याल है कि कुछ ऐसे लोग हैं जिनमें कुछ चीजों की कमी है और वे चीजें आप उन्हें जरूर देंगे, चाहे उन्हें उनकी जरूरत हो या न हो। अगर आप अपने मरीजों से सिर्फ यह कहें कि "मैंने तुम्हें जो दवा दी उसका तुमने सेवन किया है। ईश्वर की कृपा है कि उसने तुम्हें चंगा कर दिया, अब यहां न आना" तो आपने अपना फर्ज अदा कर दिया, लेकिन इसके साथ अगर आप यह भी कहती हैं कि कितना अच्छा होता, अगर ईसाई धर्म में आपकी वैसी ही श्रद्धा होती, जैसी कि मेरी है, तो आप अपनी औषधियां निष्काम भाव से नहीं देतीं।

(महिला ईसाई मिशनरियों
से बातचीत में
"हरिजन" १८ जुलाई, १९३६)

मन से दुराव निकालें

आप लोग (मिशनरी) यह भूल जायें कि हम धर्मशून्य नास्तिकों के देश में आये हैं, और ऐसा विचार रखें कि ये लोग भी हमारी ही तरह ईश्वर की खोज में हैं, आप यह महसूस करें कि हम इन लोगों के देश में अपने धर्म का दान करने नहीं जा रहे हैं, पर आपके पास सांसारिक सुख सम्पत्ति का जो अच्छा खजाना है, उसमें आप इन्हें भी हिस्सा देंगे। तब आप अपने मन में कोई दुराव रखे बगैर अपना काम करेंगे, और इस तरह आपके पास जो आध्यात्मिक धन होगा, उसमें भी आप इन लोगों को हिस्सा देंगे। आपके मन में ऐसा दुराव है, इसी बात की जानकारी आपके और मेरे बीच भेद की दीवार खड़ी करती है।

महिला ईसाई मिशनरियों से
"हरिजन", १८ जुलाई १९३६)

(शेष पृष्ठ ७ पर)

आर्यसमाज सान्ताक्रूज में वेदप्रचार सप्ताह सम्पन्न

आर्यसमाज मन्दिर सान्ताक्रूज में २७ ९-८८ से ४-९-८८ तक वेद प्रचार सप्ताह सोत्साह सम्पन्न हुआ। अथर्ववेद यज्ञ श्री पण्डित रामगुर जी शर्मा के ब्रह्मत्व मे सम्पन्न हुआ। दिनाक २७-८ ८८ को प्रात बजे से १० बजे तक अथर्ववेद यज्ञ के साथ ही श्रावणी उपाकर्म (यज्ञोपवीत परिवतन) रक्षा बन्धन तथा हैदराबाद सत्याग्रह बलिदान दिवस समारोह मनाया गया।

प्रात काल यज्ञ मे तथा रात्री व्याख्यानों में आर्यसमाज के प्रचार प्रसार से जन साधारण ने बडी सख्या मे उपस्थित होकर लाभ प्राप्त किया।

रविवार दिनाक ४-९-८८ को अथर्ववेद यज्ञ को पूर्णाहुति अपार जनसमूह को उपस्थिति में ११ बजे सम्पन्न हुई। इस अवसर पर सकडो पिछड वर्ग के जन समुदाय ने भी यज्ञ में आहुति दी। और अपने हाथो से यज्ञ शेष (प्रसाद) यज्ञ के उपरान्त वितरित किया।

११ बजे से श्री कृष्णजन्माष्टमी तथा अस्पृश्यता निवारण समारोह प्रारम्भ हुआ। इस अवसर पर पिछडे समुदाय से सम्बन्धित व्यक्तियो का फूल मालाओ द्वारा स्वागत किया गया वक्ताओ ने भगवान् श्री कृष्ण जी के जीवन के आदर्शों को अपनाने तथा उनके अनुसार आचरण करने का आह्वान किया और कहा कि आर्यसमाज श्री कृष्ण को महान् कर्मयोगी मानता है। उनके जीवन में कहीं कोई कमी नहीं थी। कुछ लोगों ने अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए उनके जीवन को कलंकित करने का प्रयास किया है। यह हमारे देश जाति और राष्ट्र के लिए दुर्भाग्य का विषय है। भगवान् कृष्ण का उपदेश ससार के कल्याण के लिए है। वे अपने सद्गुणो से विश्व वन्दनीय हैं। उन्होंने भारत की एकता को स्थापित करने के लिए महाभारत के युद्ध का नेतृत्व किया, अगर उनके आदर्शों के अनुसार हम आचरण कर तो विश्व भर मे शान्ति स्थापित हो सकती है।

समारोह का सफल सचालन आर्यसमाज के महामन्त्री श्री विमल स्वरूप सूद ने किया। यज्ञ तथा प्रवचनो का लाभ हजारो भाय भाई बहनो ने प्राप्त किया। श्री विजय नन्द जी के भजनो से श्रोता विशेष प्रभावित रहे। समारोह के पश्चात् सैकडो हरिजन भाई बहनो ने जिन्हें विशेष रूप से आमन्त्रित किया गया था। प्रीति भोज मे भाग लिया।

नगर आर्यसमाज रामपुरा कोटा मे वेद प्रचार सप्ताह

कोटा। वेद का पढ़ना पढाना एव सुनना-सुनाना हम सब का परम धर्म है इसके प्रचार-प्रसार हेतु आर्यसमाज रामपुरा कोटा द्वारा दि० २८ ७-८८ से ४-९ ८८ तक वद प्रचार सप्ताह मनाया गया। जिसमे वद कथा एव भजनोपदेश प्रतिदिन प्रात एव साय मथुरा स पधारे प० श्री प्रम भिक्षुक, बूदी के पीताम्बर लालजी शर्मा सुनेल के श्री कन्हैया लाल एव मुरया स पधारे चित्रोपदेशक रामनिवासजो का उपदेश एव भजनोपदेश हुए।

इसी अवसर पर एक वैदिक परिवार साधना शिविर का भी आयोजन किया गया जिसमे नगर के अलावा रावतभाटा, बून्दी, बैनवा बारा छापाबडौद आदि के कई जनो ने लाभ उठाया।

वद प्रचार सप्ताह एव साधना शिविर के मुख्य वक्ता प्रम भिक्षु जी ने वद वाणी को जन जन तक पहुचाने का आह्वान, किया। आपने कहा कि वेद ईश्वरीय वाणी है। यह अकारण नहीं इसके पीछे तथ्य हैं। कारण है, वेद मानव समाज राष्ट्र एव विश्व के सपूर्ण ज्ञान का खजाना है। वद ही ईश्वरीय ज्ञान, कतव्य कोष एव जीवन ग्रन्थ है। वेद व्यक्तित्व जीवन के लिए एक कार्य क्रम देता है।

(रामदयाल मेहता
उपमन्त्री
नगर आर्य समाज, कोटा

सार्वदेशिक आर्य वीर दल के प्रधान संचालक श्री बाल दिवाकर भूकंप तथा बाढ़पीड़ित क्षेत्रों के दौरे पर

सार्वदेशिक सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध जी सरस्वती द्वारा गत माह बिहार के भूकम्प तथा बाढ पीडित क्षेत्रों का दौरा किया गया था, उन्होंने पटना में एक सहायता समिति का गठन किया था। समिति की ओर से विभिन्न क्षेत्रों में जो सेवा सहायता कार्य चल रहे हैं, उनका जायजा लेने के लिए १५ सितम्बर १९८८ को सार्वदेशिक सभा की ओर से श्री बालदिवाकर हंस को वस्त्रों तथा धन के साथ पटना भेजा गया है। समिति सुचारु रूप से कार्य कर रही है। इस पुनीत कार्य में सभी आर्यसमाजों व धनी महानुभावों का सहयोग अपेक्षित है।

भूकम्प एवं बाढ़ पीड़ित सहायता समिति पटना की रिपोर्ट

सहायता समिति के कार्यकर्त्ता श्री अजय कुमार आचार्य दयानन्द विद्यालय मीठापुर, पटना ने अपने १४-९-८८ के पत्र के द्वारा सूचित किया है कि गत ८-९-८८ को सहायता समिति के प्रधान श्री प्रेमनाथ ग्रोवर के साथ श्री रामाज्ञा वैरागी, श्री योगेन्द्र नारायण एव श्री रामानन्द जी मुगेर जमालपुर के भूकम्प पीडितो की सहायतार्थ वहा गए थे। १६ ९-८८ को दरभगा एव मधुबनी के लिए सहायता दल सहायता सामग्री को वितरण करने जाएगा। आर्यसमाज मुजफ्फरपुर की ओर से इसी क्षेत्र मे सहायता सामग्री का वितरण किया जाएगा। १९ जून को समिति की बैठक होगी, उसमें अब तक सम्पादित कार्यों का आकलन किया जाएगा। हम आपको पुन विश्वास दिलाते हैं कि आपके आशीर्वाद से आपके निदेशानुसार बिहार के भूकम्प एव बाढ पीडित क्षेत्रों में सार्वदेशिक सभा, द्वारा गठित सहायता समिति सुचारु रूप से कार्य कर रही है और आर्यसमाज का अनुकूल प्रभाव पड रहा है।

सच्चिदानन्द शास्त्री
मन्त्री

सत्यार्थ प्रकाश के— ये आलोचक

आदरणीय प० बिहारी लाल शास्त्री जी का लेख सत्यार्थप्रकाश के ये आलोचक बहुत पसन्द आया गान्धी जी के असली चेहरे को बेनकाब करने पर उन्हें हार्दिक बधाई दी। दूसरा गान्धी सेकूलरवाद के नाम से जो मात्र मुस्लिम तुष्टीकरण का परिचायक है, हमें भारी क्षति पहुंचा रहा है और हम —

हम तो राहे उल्फत
निभाएंगे जरूर।
तुम हमें चाहो न चाहो
हम तो चाहेंगे जरूर॥

काश ! हम ने गान्धी जी के नेतृत्व के स्थान पर वीर सावरकर के पथ को अपनाया होता तो आज हिन्दुओं की यह दयनीय स्थिति न होती। एक ईश, एक भाषा, एक भावना के जय घोष को कार्यान्वित करने के के लिए आर्यसमाज के चिन्तन को अपनाना आवश्यक है।

नरेन्द्र अवस्थी
आर्यसमाज श्रीनिवास पुरी,
नई दिल्ली-६५

आर्यसमाज बिरला लाइन्स (कमला नगर)

आर्यसमाज बिरला लाइन्स मे वेद प्रचार सप्ताह सोमवार दिनाक २२-८-८८ से २८-८-८८ तक समारोह पूर्वक मनाया गया प्रतिदिन रात्रि में ८-३० बजे तक प० वेदव्यास जी के मनोहर भजन ८-३० बजे से ९-३० बजे तक श्री प० प्रेमप्रकाश जी वानप्रस्थी (धूरी पंजाब) का वेद प्रवचन हुआ।

वेद सप्ताह का समापन रविवार २८ अगस्त को प्रात यज्ञ की पूर्णाहुति के पश्चात् प्रात ७-३० बजे से ११ बजे तक हुआ।

जगदीश
जय लाल आर्य
मन्त्री

(पृष्ठ ३ का शेष)

महात्मा गांधी और ईसाई . . .

धर्मान्तरण ईसाई धर्म को नीचे गिराता है

सर्वथा अज्ञ और भोले भाले लोगों के सामने उनका धर्म बदलने की बात करना मुझे बहुत बुरा लगता है। अगर कोई मुझ से ऐसी बात करे और वास्तव मे मुझ से ऐसी बात की भी जाती रही है तो इसे शायद मैं किसी तरह ठीक मान लूं। कारण वे अपनी बात मुझ से तर्क पूर्वक कह सकते हैं, मैं अपनी बात उनसे उसी तरह तर्क पूर्वक कह सकता हूं लेकिन हरिजनों से ऐसी चर्चा चलाना मुझे निश्चय ही बहुत बुरा लगता है। अगर कोई ईसाई किसी हरिजन के पास जाकर कहे कि केवल ईसा मसीह ही अकेला ईश्वर के पुत्र थे तो वह उसे विस्फारित नेत्रों से देखता ही रह जायेगा। और वह उससे इतना ही नहीं कहता ऊपर से तरह-तरह के प्रलोभन भी देता है। यह बात ईसाई-धर्म को नीचे गिराती है।

(डा० क्रन से बातचीत मे "हरिजन" ६ मार्च, १९३७)

सामूहिक धर्म परिवर्तन खोटे सिक्के

अगर कोई आदमी डर से जोर जबरदस्ती से, भूख से या कुछ रुपये पैसे के लालच में आकर दूसरे धर्म में चला जाता है तो उसे हृदय परिवर्तन का नाम नहीं दिया जा सकता।

हम सामूहिक धर्म परिवर्तन के जिन प्रसगो के विषय में इधर दो वर्ष से सुनते आ रहे हैं उनमे से अधिकतर तो मेरे विचार में खोटे सिक्के हैं। सच्चा धर्म परिवर्तन हृदय से होता है, किसी अजनबी आदमी की प्रेरणा से नहीं, बल्कि ईश्वर की प्रेरणा से होता है।

(हरिजन, २५ सितम्बर, १९३७)

हरिजनों का धर्मान्तरण सन्देह और कटुता पैदा करेगा

मेरी समझ मे नहीं आता कि हरिजन यदि उस धर्म (ईसाई धर्म) में चले जाते हैं तो उससे उन मिशनों को क्या लाभ होता है और उन हरिजनों को कहां तक सच्चे रूप में धर्मान्तरित व्यक्ति कहा जा सकता था। मैं यह जानता हू कि धर्म-परिवर्तन की इस तरह की कोशिशें समाज को भ्रष्ट करती हैं सन्देह और कटुता पैदा करती हैं और समाज बहुमुखी की प्रगति को रोकती हैं। यदि ईसाई मिशन बेहतर बरताव के बदले में तथाकथित धर्म परिवर्तन की इच्छा न करके, हरिजनों का बोझ हलका करने मे हरिजन सेवकों के साथ सहयोग करें, तो उनकी सहायता का स्वागत होगा और समाज के विकास की गति तेज होगी।

('हरिजन", १ मई १९३७)

धर्म-परिवर्तन कब और क्यों।

धर्म परिवर्तन के बारे मे यह नहीं कहना चाहता हू कि यह कभी उचित हो ही नहीं सकता। हमे दूसरो को अपने धर्म बदलने के लिए निमन्त्रण नहीं देना चाहिए। मेरा धर्म सच्चा है और दूसरे सब झूठे हैं इस तरह की जो मान्यता इन निमन्त्रणों के पीछे रहती है, उसे मैं दोषपूर्ण मानता हू लेकिन जहा जबरदस्ती से या गलतफहमी से किसी ने अपना धर्म छोड दिया हो वहा उस मनुष्य को अपनी गलती सुधारने मे यानी अपने असली धर्म में आने में बाधा नहीं होनी चाहिए। इसे धर्म-परिवर्तन नहीं कहा जा सकता। मुझे अपना धर्म झूठा लगे तो मुझे उसका त्याग करना चाहिए। दूसरे धर्म में जो कुछ अच्छा लगे, उसे मैं अपने धर्म में ले सकता हूं, लेना चाहिए। मेरा धर्म अपूर्ण लगे तो उसे पूर्ण बनाना मेरा फर्ज है। उसमें दोष दिखाई दे तो उन्हें दूर करना भी फर्ज है। (प्रेमा बहन कंटक को लिखे पत्र से २२ अप्रैल १९३२)

मिशनरी लौट जाओ

यदि वे (मिशनरी) केवल शिक्षा, गरीबों की डाक्टरी सेवा और ऐसे ही मानव दया के कामों तक सीमित रहने की बजाय अपने इन कामो का उपयोग धर्म परिवर्तन के लिए करेंगे तो मैं अवश्य ही यह चाहूंगा कि वे चले जायें। भारतवासी जिस महान् धर्म में आस्था रखते हैं वे निश्चय ही उनके लिए पर्याप्त है। भारत को एक धर्म से दूसरे धर्म मे परिवर्तन की कोई आवश्यकता नहीं है।

जो भारतवर्ष का धर्म परिवर्तन करना चाहते हैं उनसे यही कहा जा सकता है कि हकीम जी पहले अपना इलाज कीजिए न!

(यंग इण्डिया, २३ अप्रैल, १९३१)

योग्यता के आधार पर ही दिल्ली पुलिस में भर्ती-

श्री भण्डारी का आर्य नेताओ को आश्वासन

नई दिल्ली, ५ अक्तूबर

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल और मन्त्री श्री ओम प्रकाश आर्य आज दिल्ली के नए उपराज्यपाल श्री रमेश भण्डारी से मिले और उनका ध्यान समाचार पत्रो में १० अगस्त को छपे इस समाचार की ओर दिलाया कि दिल्ली पुलिस मे अल्पसख्यको की भर्ती के लिए दिल्ली से बाहर पुलिस के भर्ती अधिकारी भेजे जाएगे, इसके विरोध मे दिल्ली की तमाम आर्यसमाजो एव राष्ट्रीय सस्थाओं की ओर से श्री भण्डारी को एक कड़ा विरोध पत्र दिया गया।

श्री भण्डारी ने इस समाचार से अनभिज्ञता प्रकट की और आर्य नेताओं को विश्वास दिलाया कि दिल्ली पुलिस मे केवल योग्यता के आधार पर ही भर्ती की जायेगी। सम्प्रदाय या जाति के आधार पर नहीं।

श्री भण्डारी ने उनके नाम से छपे इस समाचार को भी गलत बताया।

(ओम प्रकाश आर्य)
मन्त्री

वार्षिक निर्वाचन १९८८-८९ आर्यसमाज पश्चिमपुरी

१	प्रधान	श्री राजभरत विनोचा
२	उपप्रधान	(१) श्री वेदप्रकाश मलहोत्रा
		(२) श्री राजेन्द्र दुर्गा
३	मन्त्री	श्री सतीश आर्य
४	सगठन मन्त्री	श्री ओमप्रकाश
५	कोषाध्यक्ष	श्री ज्ञानचन्द

आर्यसमाज निर्माण विहार दिल्ली का वार्षिकोत्सव

रविवार ३० अक्टूबर १९८८ को सैन्ट्रल पार्क, निर्माण विहार में प्रात ८-०० बजे से दोपहर १-०० बजे तक बड़े समारोह पूर्वक वार्षिकोत्सव मनाया जाएगा जिसमे स्वामी आनन्द बोध सरस्वती प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा व अन्य आर्य नेता, विद्वान सन्यासी पधारेंगे। आर्य जगत के प्रसिद्ध विद्वान् श्री प० यशपाल सुधांशु जी द्वारा प्रभावशाली वेद प्रवचन एव सामवेद महायज्ञ २४ अक्टूबर से २९ अक्टूबर तक प्रात ७-३० बजे से ९-३० बजे तक होगा। यज्ञ की पूर्णाहुति रविवार ३० अक्टूबर को प्रात १०.०० बजे होगी।

२४ अक्टूबर से २९ अक्टूबर तक रात्रि को ७-३० बजे से ८-३० बजे तक प० वेदव्यास जी के मनोहर भजन होंगे और ८-३० बजे से ९-३० बजे तक प० यशपाल सुधांशु जी के वेद प्रवचन होंगे।

श्रीमती चन्द्रकला देवी का निधन

शाहदरा-दिल्ली की स्त्री आर्यसमाज की प्रमुख कार्यकर्त्री श्रीमती चन्द्रकला देवी का ६ सितम्बर १९८८ को उनके निवास स्थान पर ९० वर्ष की आयु में देहान्त हो गया। अन्तिम समय तक वे समाज कार्यों मे सक्रिय भाग लेती रही। १९२८ से ३५ तक समाज की मन्त्राणी रहीं। अनाज मण्डी शाहदरा आर्यसमाज में उन्होंने अपने पुत्र की स्मृति में कमरे के निर्माणार्थ दान भी दिया था। उनके मातृगृह अजमेर में भी माता-पिता और सारा परिवार पूर्ण आर्यसमाजी था।

समाज को उनके स्वर्गवास से बड़ी क्षति पहुची है। परमात्मा दिवगत आत्मा को शान्ति तथा उनके परिवार को धैर्य प्रदान करे।

सेवा में—

साप्ताहिक ओ३म् कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य सन्देश

वर्ष ११ अंक ५२ | रविवार २३ अक्टूबर १९८८ | सृष्टि सम्वत् १९७२९४९०८९ | आश्विन २०४५ | दयानन्दाब्द—१६३
मूल्य एक प्रति ५० पैसे | वार्षिक २५ रुपये | आजीवन २५० रुपये | विदेश में ५० डालर ३० पौंड

नशाबन्दी आर्यसमाज का महत्त्वपूर्ण कार्य है

स्वामी आनन्द बोध सरस्वती

नशे की लत सम्पूर्ण राष्ट्र को नष्ट कर देती है। आज भारतवर्ष में भी नशे की लहर चली हुई है जो हमारी युवाशक्ति को पथभ्रष्ट कर रही है। जब हम अपने गरिमामय अतीत की ओर देखते हैं तो हम पाते हैं कि आज हम अपने उस गौरव को खोते जा रहे हैं? एक बार केकय देश के राजा अश्वपति के राज्य में कुछ महात्मा लोग आए। आवश्यक वार्तालाप के बाद राजा ने उनसे भोजन ग्रहण करने का आग्रह किया। महात्मा लोग बोले कि राजन् आपके राज्य में सभी प्रकार के लोग होंगे उनसे प्राप्त कर आपके कोष में आता है। उस धन में निश्चय ही वांछित शुचिता न होगी। हम आप का भोजन ग्रहण करने में असमर्थ है। राजा ने उस दिन उच्च स्वर में घोषणा की—

न मे स्तेनो जनपदे
न कदर्यो न मद्यपः।
नानाहिताग्निर्नाविद्वान्,
न स्वैरी स्वैरिणी कुतः॥

मेरे देश में कोई चोर नहीं, कोई कंजूस नहीं कोई शराबी नहीं, बिना यज्ञ किए कोई भोजन नहीं करता। मेरे देश में कोई व्यभिचारी नहीं है और व्यभिचारिणी का तो प्रश्न ही नहीं उठता है।

मेरे देश का यह आदर्श था। आज की स्थिति देखने पर रोना आता है। दिल्ली में रोज नशा और नशाबन्दी के सबंध में गोष्ठिया होती हैं सेमिनार होते हैं। इनकी आवश्यकता क्यों पड़ती है? आर्यसमाज का प्रमुख कार्यक्रम नशाबन्दी है। हरियाणा में आर्य प्रतिनिधि सभा के अधिकारी स्वामी ओमानन्द सरस्वती और प्रोफेसर शेरसिंह उल्लेखनीय कार्य कर रहे हैं। उन्होंने अनेक गावो के शराब के ठेके बन्द करा दिये हैं। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल यहा उपस्थित हैं। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री श्री सच्चिदानन्द शास्त्री भी यहां उपस्थित हैं। इन दोनो महानुभावों से मेरा आग्रह है कि आर्यसमाज की ओर से नशाबन्दी के कार्यक्रमों को तीव्रता प्रदान की जाए। ये उद्गार सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने माननीय श्री कालीचरण गौतम की पुस्तक नशा ही मृत्यु है के विमोचन समारोह के अवसर पर व्यक्त किए। यह समारोह विट्ठल भाई पटेल हाउस के लोक सभा अध्यक्ष कक्ष में आयोजित किया गया था।

श्री स्वामी जी महाराज ने इस पुस्तक के प्रकाशन में सहयोग के लिए दिल्ली प्रशासन के अधिकारियों को भी बधाई दी।

'नशा ही मृत्यु है' पुस्तक का विमोचन केन्द्रीय संस्कृति मंत्री श्रीमती राजेन्द्र कुमारी वाजपेयी ने किया। इस अवसर पर उन्होने कहा कि युवा शक्ति को नशे की लत से बचाने की बहुत बड़ी जरूरत है। ये युवा ही कल के राष्ट्रनिर्माता हैं। चौधरी प्रेमसिंह, कार्यकारी पार्षद ने कहा कि मैं नशाबन्दी का पूर्णत समर्थक हू। आपको आश्चर्य होगा कि चिर्वाचन के दिनो में कोई कार्यकर्ता यदि शराब पी लेता है, तो मैं उसे तुरन्त हटा देता हूं। मैंने अपने क्षेत्र में आज तक कहीं भी शराब का ठेका नहीं

(शेष पृष्ठ ८ पर)

आर्यसमाज ज्वाहर नगर लाल कुर्त्ती मेरठ का

शताब्दी समारोह सम्पन्न

आर्यसमाज जवाहर नगर लाल कुर्ती मेरठ का दिनांक १४ १५ १६ अक्तूबर १९८८ को शताब्दी समारोह मनाया गया। इस अवसर पर विस्तृत यज्ञ शताब्दी स्मारिका का विमोचन, युवाशक्ति सम्मेलन, वेद सम्मेलन, महिला सम्मेलन तथा राष्ट्र निर्माण सम्मेलन बड़ी धूमधाम के साथ सम्पन्न हुए। शुक्रवार १४ अक्तूबर को सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान स्वामी आनन्द बोध सरस्वती ने ध्वजारोहण किया तथा शताब्दी समारोह का उद्घाटन किया। स्वामी जी महाराज ने [illegible] सामने अनेक चुनौतियां हैं। इनमें धर्मान्तरण को समस्या सर्वाधिक विकट है। इसके बीच जातिप्रथा की संकीर्णता भी है। यदि हम लोगों को समझा सके कि वर्ण-व्यवस्था जन्मना नहीं अपितु कर्म के आधार पर होती है, तो निश्चय ही हम अपने उद्देश्य में सफल हो सकेंगे। इस अवसर पर गुरुकुल प्रभात आश्रम मेरठ के आचार्य स्वामी विवेकानन्द जी महाराज, डा० इन्द्रराज जी, प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश तथा श्री सच्चिदानन्द शास्त्री महानुभावों ने [illegible] विचार व्यक्त किए। [illegible] अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। उसी दिन डा० सत्यकाम वर्मा पूर्व कुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय की अध्यक्षता में वेद सम्मेलन सम्पन्न हुआ। सम्मेलन का संयोजन डा० निरूपण विद्यालंकार ने किया। शिक्षा सम्मेलन डा० भवानीलाल भारतीय की अध्यक्षता में आयोजित किया गया। शोभा यात्रा रविवार १६ अक्तूबर को पूर्णाहुति के पश्चात् निकाली गयी। शोभायात्रा में स्थानीय विद्यालयों के छात्र-छात्राओं तथा आर्यसमाज की मंडलियो ने भाग लिया। आर्यजनों के हाथों में सुन्दर बोर्ड-पट्ट थे तथा वे जयकारे लगाते चल रहे थे। शोभा यात्रा का नेतृत्व उत्तर प्रदेश आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० इन्द्रराज जी तथा दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने किया। सारा वातावरण वैदिक नारो से गुंजायमान था। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रचार वाहन में स्वामी स्वरूपानन्द जी महाराज के साथ केन्द्रीय सभा के मंत्री श्री विमलकान्त शर्मा तथा अन्य साथी शोभा यात्रा में सम्मिलित हुए। स्थानीय बाजार खूब सजे हुए थे। शोभायात्रा का जगह जगह पर स्वागत किया गया। इस सुन्दर आयोजन के लिए मेरठ के आर्यजन और विशेषत आर्यसमाज लाल कुर्ती के अधिकारी बधाई के पात्र हैं।

प्रधान सम्पादक—सूर्यदेव

हे पाप हमारे मनों से दूर हो

लेखक—विक्रमादित्य वसन्त

"परोऽपेहि मनस्पाप किमशस्तानि शंससि। परेहि न त्वा कामये वृक्षान् वनानि सं चर गृहेषु गोषु मे मनः ॥"

(अ० ६।४५।१)

मन का पाप जब तक दूरस्थ नहीं होता, मन से निकल नहीं जाता मधुरता, शान्ति और आनन्द आ नहीं सकता।

यह पाप क्यों और कैसे मन में आता है, इसका तनिक और वैज्ञानिक विश्लेषण किया जावे तो बोध होगा कि पाप की उपज इसी मन में होती है, जहां अपवित्रता एवम् अशुद्धता होती है। पाप का अंकुर उस भूमि से फूटेगा जहां अपवित्रता हो, गन्दगी हो। पवित्रता और अपवित्रता, मलिनता अमलिनता, शुद्धता और अशुद्धता ये सब आत्मा से सम्बन्धित हैं, चित्त के संस्कार इन के पोषक हैं इसलिए आवश्यक है कि आत्माओं का पवित्रीकरण किया जावे और चित्त पर पड़ने वाले संस्कार ठीक किये जावें।

पाप और पुण्य क्या हैं इस सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द ने कहा है, 'जिसका स्वरूप विद्यादि शुभ गुणों का दान और सत्य भाषणादि सत्याचार का करना है उसको पुण्य कहते हैं और जो पुण्य से उल्टा और मिथ्यादि भाषण करना है, उसको पाप कहते हैं।'' पाप तो वही है जिससे आत्मग्लानि हो, भय हो, लज्जा हो और पुण्य वही है, जिससे आत्माह्लाद हो, निर्भीकता हो और कोई लज्जा न हो। यद्यपि सब मत मतान्तर पाप से बचने के लिए शिक्षा दे रहे हैं, किन्तु पाप की अभिवृद्धि इस बात की सूचक है कि रोग का निदान एवम् चिकित्सा ठीक नहीं है। सम्पूर्ण पृथिवी पाप से दबी हुई है और उसकी विभीषिका से अपराध रूप में ग्रस्त हो रही है। जीवन का बाह्यस्तर घट रहा है।

नैतिकता के प्रसार के लिए पाप का उन्मूलन और धर्म की स्थापना अत्यावश्यक है। यह सिद्धान्त सर्वमान्य है कि पाप व्यक्ति को, समाज को, राष्ट्र को और विश्व को पतित कर डूबो देता है और धर्म उच्चता के शिखर पर ले जाता है। वेद 'उद्यानं ते पुरुष नावयानम्' उत्थान की प्रेरणा देता है। उत्क्रामत पुरुष' पुरुष को पुरुषार्थ से ऊंचा उठाना है और इसके लिए पाप विमोचन करना है। वर्तमान युग की कितनी भयकर विडम्बना है जब मनुष्य को पाप सिन्धु में और अधिक डुबाने के लिए कहा जाता है, कि पाप पुण्य तो काल्पनिक मान्यताएं हैं, भ्रान्ति जन्य धारणाएं हैं। इस पाशविक मनोवृत्ति ने समस्त अभिशापों को उत्पन्न किया है, और अनाचार व भ्रष्टाचार को व्याप्त किया है। वेद में—

अप त्यं परिपन्थिनं
मुषीवाणं हुरश्चितम्।
दूरमधि स्रुतेरज ॥

(ऋ० १।४२।३)

भावार्थ।

(१) (परिपन्थिनम्) मार्ग में जाते हुए पर छुप कर आक्रमण करने वाले लुटेरे

(२) (मुषीवाणम्) चूहे के समान चोरी से छिपकर घात लगाने वाले चोर

(३) (हुरश्चितम्) नाना प्रकार की कुटिलताओं से हरण करने वाले कुटिल

(४ (त्यं) इनको (स्रुतेः) मार्ग से (दूरम्) दूर (अधि अप अज) अतिशय रूप से, बल पूर्वक पृथक् कर दे, मर्दन कर दे।

व्याख्या

प्रस्तुत मन्त्र में पाप क्या है इसका बोध कुछ अन्य विशेषणों के द्वारा कराया गया है। पिछले मन्त्र में भेड़िये के सदृश क्रूर हिंसक बल पूर्वक हम पर शासन करने वाले दुराचारी पाप को मार्ग से कांटे के समान उखाड़ फेंकने की भावात्मक चर्चा की गई थी, उसी क्रम को चालू रखते हुए पाप को कुछ और संज्ञाएं प्रदान की गई हैं और उनके आधार पर मनुष्यों को दृढ़ प्रेरणा दी गयी है कि वे उसको अपने जीवन मार्ग से दृढ़तापूर्वक पृथक् कर देवें।

इस मन्त्र में सर्वप्रथम पाप के जिस स्वरूप का वर्णन किया गया है, वह है 'परिपन्थिनम्' पाप क्या है लुटेरा, कैसा लुटेरा जो दूसरों पर आक्रमण करने के लिये मार्ग से हट कर छुपा रहता है और अवसर पड़ने पर घात लगाकर तुरन्त आक्रमण करता है और सम्पत्ति को छीन लेता है। मनुष्य के धर्म धन को पाप रूपी लुटेरा ऐसे ही छीना करता है। हम अबोध अपने मार्ग पर असावधान होकर चलते हैं तो यह दुष्ट लुटेरा अवसर पड़ने पर तुरन्त आघात करता है और हम हाथ मलते रह जाते हैं।

मुझे इस सदर्भ में एक दृष्टान्त देना आवश्यक जान पड़ता है। मेरे एक मित्र थे जो सदैव रेलगाड़ी में टिकट लेकर यात्रा करते थे। एक बार उन्हें लखनऊ से दिल्ली जाना था उनको आरक्षित स्थान न मिल सका था इसलिये वे चिन्तित थे। ऐसे में किसी ने सुझाया—रात की यात्रा है द्वितीय श्रेणी के डिब्बे में बिना टिकट बैठकर यात्रा करो दिल्ली स्टेशन से बाहर निकलने का प्रबन्ध हो जाएगा। पाप रूपी लुटेरे ने झपट्टा मारा और उन्होंने यह सोचकर कि धन भी बचेगा और यात्रा भी सुगमता से कट जाएगी बिना टिकट के यात्रा करने का निश्चय किया। पाप रूपी लुटेरे ने यह भी सान्त्वना दे दी थी कि रात्रि की यात्रा में भला कौन जांच करेगा। पिछली यात्राओं का अनुभव भी कुछ ऐसा ही था। बस फिर क्या था उन्होंने यात्रा की परन्तु मार्ग में न्यायाधीश का छापा पड़ा और पचास रु० अतिरिक्त दण्ड देकर जान छुड़ाई। अब वे कानों पर हाथ रखते हैं और प्रायश्चित करते हुए कहते हैं-क्या भ्रष्ट बुद्धि हो गई थी मेरी, तो पाप रूपी लुटेरा ऐसे ही झपट्टे मारकर सर्वनाश किया करता है।

हम अपने प्रतिदिन के जीवन में ऐसी अनेक घटनाएं देखा करते हैं। एक विवाहित सज्जन सुन्दर पत्नी और सन्तान के होते हुए एक कामी कुरूप पापिष्ठा के चक्कर में पड़ गये। जब ठोकर खाई और पुनः धर्म के मार्ग पर आये तो कहने लगे—पता नहीं यह सब क्यों और कैसे हो गया। पाप जब झपट्टा मार कर हमें कामोन्मत्त कर भ्रष्ट कर देता है हमें बोध नहीं होता। यह दुष्ट लुटेरा लोभ की दलदल में जब किसी को धकेल देता है तो पता नहीं चलता। एक सीधे सादे ईमानदार व्यक्ति को तीन साल का कारागार झेलना पड़ा था क्योंकि पाप रूपी लुटेरे ने उसे लोभ में डाल कर लाखों रुपये का गबन करा दिया था। यह लुटेरा कब मिथ्याभिमान द्वारा हमें पतित और लज्जित करा देता हमें पता नहीं चलता।

जिस प्रकार हम अपने जीवन में जब यात्रा पर निकलते हैं तो सावधान और सतर्क रहते हैं, यात्रा में पूंजी और सामान साथ रहता है। कोई लुटेरा लूट न ले मार्ग में, हम जागरूक रहते हैं और अपनी रक्षा के साधन भी जुटाए रखते हैं, उसी प्रकार अपनी जीवन यात्रा में जो धर्म रूपी पूंजी व सामान हमारे पास होता है और जिसके द्वारा हम लक्ष्य तक पहुंचते हैं, उसे पाप रूपी लुटेरा न लूट सके, इसके लिए हमें निरन्तर जागरूक और सतर्क रहना होगा और अवसर पड़ने पर कठोरता से, शक्ति से इस लुटेरे को मार्ग से हटाना होगा।

पाप क्या है, तो एक उपमा और दी इस मन्त्र ने। अरे यह तो चोर है 'मुषीवाणम्'। यह तो चुपके से घर में सेंध लगाता है और धन या माल को लेकर भाग जाता है। चूहे में चोर की वृत्ति होती है। चूहा चुपके-चुपके आता है और तनिक सी आहट या आवाज होने पर तुरन्त भाग जाता है। जब घर वाले सोए होते हैं तो वह किसी न किसी स्थान पर चुपके से पहुंच कर सामान को कुतरना प्रारम्भ कर देता है जब आप देखते हैं कि आपके कपड़ों की कागजों की क्या दुर्दशा हो गई तो आप को कितना पश्चाताप होता है और आप घर से चूहों को मार भगाने के लिये कमर कस लेते हैं। घर चोर न घुसने पाएं इसलिए आप घर के द्वार बन्द करते हैं, ताले लगाते हैं और रात्रि को सोते समय भी सतर्क रहते हैं।

ठीक इसी प्रकार पाप रूपी चोर से बचने की आवश्यकता है। पाप रूपी चोर जीवन सदन में चोरी से घुसपैठ करता है और धर्मरूपी पूंजी को चुरा कर ले जाता है। पुण्य से अर्जित सामग्री को कुतर-कुतर कर नष्ट भ्रष्ट कर देता है। इसलिए पापरूपी चोर को मार्ग से हटाना अत्यावश्यक है। यह जीवन सदन में न घुसने पावे इसलिए ज्ञानेन्द्रियों [illegible] को [illegible] रह

(शेष पृष्ठ ३ पर)



प्रश्न रामकथा का नहीं, रामकथा के प्रयोग का है।

भारतवर्ष के कोने कोने में विजयादशमी का पर्व हर्ष और उल्लास से मनाया जाता है। नवरात्रों में स्थान स्थान पर रामलीलाओं का आयोजन किया जाता है। इस अवसर पर रावण और कुम्भकरण आदि के पुतले भी जलाए जाते हैं। क्या हमने यह जानने का प्रयत्न किया है कि राम और रावण कौन थे? इतने वर्षों के बाद भी वे क्यों अमर हैं? निश्चय ही यह एक विचारणीय प्रश्न है। राम एक आदर्श पुरुष थे, वे मर्यादा पुरुषोत्तम थे। वे आदर्श भाई थे, आदर्श पुत्र थे, आदर्श पति थे, आदर्श मित्र थे आदर्श शासक थे। और या अनेक विशेषणों से आप उन्हें विभूषित कर सकते हैं। संसार में जिस गुण से हम और आप परिचित हैं वह उनमें था। राम हृदय से किसी से भी द्वेष न करते थे। वे बाहर भीतर एक थे। उनमें कोई छल प्रपंच न था। वे रावण का दाह संस्कार करने के लिए विभीषण को आदेश देते हैं—'मरणान्तानि वैराणि निवृत्तम् किम् प्रयोजनम्। क्रियतामस्य संस्कारः।' हमें भी चाहिए कि राम के जीवन से कुछ सीखने का यत्न कर और उनके गुणों को अपने जीवन में धारण करें। तभी हमारा विजयादशमी का पर्व मनाना सार्थक होगा।

रामकथा से सम्बन्धित अनेक काव्य लिखे गये हैं, कहानियाँ लिखी गयी हैं नाटक लिखे गये हैं और उपन्यास लिखे गये हैं। प्रत्येक साहित्यकार रामकथा को अपने ढंग से प्रस्तुत करता है और इसका उसे अधिकार भी है, परन्तु यदि कोई व्यक्ति लोकमत के विपरीत कोई बात करे तो वह उचित नहीं है। राम को श्रेष्ठ माना गया है और रावण को दुष्ट। यदि इसके विपरीत किसी ग्रन्थ का प्रतिपाद्य होगा तो निश्चय ही उसे जनता का कोप भाजन बनना पड़ेगा। पिछले दिनों एक फिल्म आई थी कलयुग और रामायण सभी धर्मपरायण लोगों ने उसकी भर्त्सना की क्योंकि उससे हमारी आस्थाओं को चोट पहुँचती थी। पिछले दिनों दूरदर्शन पर रामायण धारावाहिक दिखलाया गया। उसमें भी कई स्थानों पर फिल्मी जैसे फार्मूले भरे गये थे। निश्चय ही ऐसे प्रस्तुतीकरण से हमारी भावनाओं को चोट पहुँची है। प्रस्तुतीकरण वह अच्छा होता है जो हमारे चित्त व चरित्र को उदात्तता प्रदान करे। रामलीलाओं में किए गए भौंडे प्रदर्शन धन बटोरने में भले ही सहायक हों परन्तु उनसे किसी का भला नहीं होने वाला है। रामायण सीरियल में पुष्प वाटिका प्रसंग को लम्बा खींचा गया है, जबकि इसे न इतना विस्तार वाल्मीकि ने दिया न तुलसीदास ने न राधेश्याम ने और न ही मैथिलीशरण गुप्त ने।

रामकथा जन कथा है। मैंने पहले भी कहा है कि इसका कभी भी एक रूप नहीं रहा, यह विकसित हुई है और विकृत भी हुई है। इसका उपयोग सदा से धर्म और आदर्शों की रक्षा के लिए किया जाता रहा है और जो इससे व्यापार जोड़ता है, उसे कभी भी अच्छा नहीं माना गया। रामकथा का प्रयोग हमें करना चाहिए। इसे दूरदर्शन पर या अन्य संचार माध्यमों पर भी दिखाया जा सकता है पर इस कथा के शाश्वत मानव मूल्यों का प्रदर्शन होना चाहिए भौंडा प्रदर्शन नहीं। हमें प्राचीन धार्मिक आदर्शों को दिखलाना चाहिए वाल्मीकि के राम महापुरुष हैं। उनमें वे गुण हैं जिन्हें प्राप्त करने के लिए हमें प्रयास करना चाहिए। तुलसी के राम भक्ति मार्ग के सूत्रधार हैं। मैथिलीशरण गुप्त के राम में युगीन चेतना है—स्वतन्त्रता प्राप्ति की इच्छा आकांक्षा। कैकेयी के स्वरूप को भी उन्होंने नया आयाम दिया। राम की कथा में जीवन के विविध पक्षों को दिखाया गया है। उसमें आवश्यक और अनुकरणीय उपदेश हैं दार्शनिक व्याख्याएँ हैं सामाजिक शिक्षाएँ हैं।

आज भी रामकथा का उपयोग किया जा सकता है पर वह होना चाहिए भ्रातृत्व के लिए राष्ट्रीयता के लिए, धार्मिकता के लिए और आदर्श जीवन यापन के लिए। जब हम राम के गुणों को धारण कर सकेंगे तभी हम रामकथा से लाभान्वित हो सकते हैं। अन्यथा नहीं।

(पृष्ठ २ का शेष)

हे पाप हमारे मन. . .

कर्म प्राण और स्पर्श का बोध जिन इन्द्रियों के द्वारा होता है मन से कर्म करने के निमित्त जो संकल्प होता है मस्तिष्क में जो विचार उत्पन्न होता है वहाँ यह पाप रूपी चोर घुसने न पाए अन्यथा यह चूहे के समान कुतर कर धर देगा। पाप, पापी का अन्दर से खाता रहता है। कुत्सित चिन्तन बुरी इच्छाएँ, अनिष्टकारी संकल्प मानव को नहीं पनपने देते। वे तो उसे निरन्तर रुलाते रहते हैं। रूपवती या रूपवान को देखकर पाप का उदय न हो। दीन हीन को देखकर घृणा के स्थान पर दया का सूत्रपात हो। अहंकार से अपनी इच्छानुकूल दूसरे को काम करने का आदेश कर क्रोध का उन्माद न आवे इन सबके लिए पापरूपी चोर को अपने भीतर खोजिये और युक्तिपूर्वक निकाल बाहर कीजिये।

चूहे को एक और बात देखिये। उसकी खट-खट से आप चौंके आपके सतर्क होते ही वह भागकर छिप गया। आप उसके चले गया फिर सोये तो वही खट खट पुन उठ बैठे और जब तक खोजकर उसे अपने कमरे के बाहर खदेड़ नहीं दिया आपको शान्ति नहीं मिली। एक बार एक मूर्ख चोर किसी घर में घुसा, घरवाले जाग गये और चोर कहीं छिप गया। वे पुन सोने का उपक्रम करने लगे, इतने में एक छोटे बच्चे ने लकड़ी के ढेर के पीछे छिपे उस चोर को देखकर कहा—पिता जी यह कौन बैठा है। बस चोर पकड़ा गया। यदि घर वाले आलस्यवश पुन सो जाते तो चोर निश्चिन्त हो चोरी करके भाग जाता। चोर के समान ही पाप को पकड़कर जीवन रूपी गृह से निकाल देना चाहिए तभी शान्ति प्राप्त हो सकती है।

पाप क्या है, मन्त्र में आगे कहा 'हुर चित्तम्' नाना प्रकार की चालें चलने वाला कुटिल, कपटी धोखेबाज धूर्त, ठग। कितनी सत्य बात कही है वेद ने। लौकिक जग में ठगों से हम ठगे जाते हैं पाखण्डी कितने पाखण्ड रचते हैं। कैसे-कैसे आडम्बर रचाते हैं। धूर्त जन कैसे कैसे जाल हमें फँसाने के लिए बिछाते हैं। कपटी कैसे मीठी-मीठी बात करते हैं जबकि उनके भीतर कपट का विष भरा होता है। धोखा देने वाला नित्य नये प्रकार से धोखा देता है। कुटिल कैसा सुन्दर ताना बाना बुनकर हमें दिखाता है जब शिकार उसमें फँस जाता है तब कैसे क्रूरता से उसे भक्षण कर जाता है।

पाप भी तो ऐसा ही कुटिल ठग है। वह बाहर के सुहावने दृश्य दिखाता है हरे उद्यान दिखाता है। बाहरी आकर्षण दिखाकर हमें आकर्षित करता है और हमें फँसाकर हमारी दुर्गति करता है। यह तो हमें विवेकशून्य कर देता है। जब किसी की चिकनी चुपड़ी बातों में आकर फँसकर कोई अपना आप लुटा बैठता है तो उस समय वह अज्ञानतावश मूर्ख बनकर अपने को दूसरे के प्रति समर्पित कर देता है। ठग तो नित्य नई आकर्षक योजना बनाते हैं। इस प्रसंग में मुझे एक मनोरंजन संस्मरण पाठकों के सम्मुख रखना है।

एक सरदार जी जिनका नव विवाह हुआ था और जो सब प्रकार से सम्पन्न थे उन्हें ठगने का धूर्तों ने एक षडयन्त्र रचा। सरदार जी की पत्नी सुन्दरी थी और स्वर्ण आभूषणों से लद हुई थी। धूर्तों ने उसका नाम पिता की जानकारी व पति का स्वभाव सब जान लिया। तीन ठगों ने योजनानुसार कार्य प्रारम्भ किया और साधु वेष बनाया एक ने घर जाकर 'साधु बाबा को धर्म के नाम पर कुछ दे दो।' आवाज लगाई। घर के भीतर से सरदार प्रेम सिंह ने उत्तर दिया—जाओ बाबा क्षमा करो, आगे जाओ।

साधु तो रमता जोगी है वह तो चला हो जाएगा परन्तु तू जिस प्रीतमकौर की प्रीति में अन्धा होकर बैठा है वह भी तुझे शीघ्र छोड़कर वाहेगुरु को प्यारी हो जाएगी।' और अलखनिरञ्जन का घोष लगाकर बाबा चल दिया। सरदार प्रेमसिंह ने आगे बढ़कर बाबा को रोका। बाबा तो अन्तर्यामी बना बैठा था, सब घर की बात बताई तो उनके जाल में पति पत्नी दोनों फँसे। पहले साधु ने विरक्त होने का पाखण्ड रचा, दूसरे साधु ने अनिष्ट

(शेष पृष्ठ ७ पर)

विजय का वैदिक सन्देश

चार वैदिक भावनाएँ

लेखक—डा० रामनाथ वेदालंकार,
वेदमन्दिर, ज्वालापुर (हरिद्वार)

यदि प्रत्येक देश अपने देश को सब से ऊंचा बनाने के लिए प्रयत्नशील हो और साथ ही प्रत्येक के अन्दर से संहार की भावना लुप्त हो जावे तो सारा संसार निर्भय होकर सुख से रह सकता है।

विजयादशमी का पर्व उद्बोधक पर्व है। प्रतिवर्ष यह पर्व अपने सन्देश को सुनाने आता है। एक प्रकार से यह पुण्य की पाप पर विजय, सदाचार की दुराचार पर विजय, सत्य की असत्य पर विजय, प्रकाश की अन्धकार पर विजय का प्रतीक है। इसलिए विजयादशमी का सब से तीव्र और प्रेरक वैदिक सन्देश हमारे लिए यही है कि हम संसार में विजयी हों।

१. विश्व-विजय की भावना

यह संसार एक समरस्थली है। मनुष्य को बड़े-बड़े संघर्षों में से होकर गुजरना है। चारों ओर विघ्न-बाधाएँ और शत्रु मुंह खोले खड़े हैं और उसे निगलना चाहते हैं। इधर आन्तरिक क्षेत्र में काम क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर आदि की पैशाची सेना मन पर आक्रमण करने को तैयार खड़ी है, तो उधर भयंकर व्याधियों की सेना शरीर पर आक्रमण करने का उपक्रम कर रही है। इधर सिंह, व्याघ्र, सर्प आदि भयानक जन्तु मनुष्य को अपना भक्ष्य बनाने के लिए तैयार हैं तो उधर, अतिवृष्टि, अनावृष्टि भूकम्प आदि अनेक दैवी विपत्तियां उसे कालकवलित करना चाह रही हैं। इधर धूर्त, वञ्चक, ठगी लोग मनुष्य को अपने चंगुल में फंसाने की चेष्टा कर रहे हैं, तो उधर अत्याचारी लोग उसकी गर्दन को अपनी तलवार का निशाना बनाने पर उतारू हो रहे हैं। इधर-उधर सब ओर शत्रु हैं, पग-पग पर विघ्न हैं, पग-पग पर बाधाएं हैं, पग-पग पर नोकीले कंकड़ हैं, पग-पग पर चट्टानें हैं, पग-पग पर खाइयां हैं। इन सब को पार करना है। जैसे नदी का प्रवाह तटों को गिराता हुआ, बांधों को तोड़ता हुआ चट्टानों को लांघता हुआ आगे बढ़ता जाता है, वैसे ही मनुष्य को सब विघ्नों को परास्त करते हुए जीवन-संग्राम में आगे ही बढ़ना है।

हम अपने अन्दर ऐसा प्रभाव उत्पन्न करें कि दुर्जन हम से थर-थर कांपें। हमारी शारीरिक शक्ति तथा आध्यात्मिक बल दोनों ऐसे हों। वेद के शब्दों में हम कह सकें कि—

य आक्रमाविशत इयमुत सहो मम। पिशाचास्तस्मान्नश्यन्ति न पापमुपजानते ॥

अथर्व ४.३६.८

'जहाँ भी मेरा यह उग्र प्रताप पहुंच जायेगा, वहां से पैशाची प्रवृत्ति वाले लोग समाप्त हो जायेंगे, वे अपनी पाप-प्रवृत्ति को एकदम तिलाञ्जलि दे देंगे।'

आज भी हमारे देश में बहुत सी पैशाची प्रवृत्तियां चल रही हैं। विजयादशमी के दिन हम देशवासी जन और देश के कर्णधार दोनों यह प्रण ले सकते हैं कि इन प्रवृत्तियों पर हमें विजय पानी है। देश में घूसखोरी सब जगह बढ़ी हुई है, स्थान-स्थान पर चोरबाजारी चल रही है। विजयादशमी से सन्देश लेकर हम इस प्रकार की बुराइयों के लिए कटिबद्ध हो सकते हैं।

स्वदेश में ही हमें विजय नहीं पानी है, किन्तु हमारे आगे तो विश्वविजय का महान् लक्ष्य है। हमें तो विश्व भर में अपने राष्ट्र का सिर सब से ऊंचा करके दिखाना है।

२. विश्वरक्षा की भावना

यदि हम अपने सम्मुख केवल विश्वविजय की ही भावना रखें तो आवश्यक नहीं है कि उसका परिणाम सुखमय ही हो। आज इंगलैण्ड, अमेरिका, रूस आदि देश अपने अन्दर विश्वविजय की भावना धारण किये हुए हैं, किन्तु उसका परिणाम विश्व-संहार के अतिरिक्त और कुछ नहीं दिखाई देता। विश्वविजय की भावना के साथ हमारे अन्दर विश्वरक्षा की भावना भी होनी चाहिए। वेद में कहा है—

विश्वजित् त्रायमाणायै मा परिदेहि। त्रायमाणे द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष चतुष्पाद् यच्च नः स्वम् ॥

अथर्व ६.१०७, मन्त्र १

अर्थात् हे विश्वविजय की भावना तू मेरे अन्दर विश्वरक्षा (त्रायमाणा) की भावना को भी उत्पन्न कर, जिससे मैं प्राणी-मात्र की रक्षा में तत्पर होऊं।

३. विश्व-कल्याण की भावना

पर केवल विश्व रक्षा की भावना ही पर्याप्त नहीं है, इसके साथ विश्व-कल्याण की भावना भी होनी चाहिए, रक्षा भावना का अर्थ है संहार से बचाने की भावना और कल्याण की भावना का अभिप्राय है देश में ऐसे रचनात्मक कार्यों को करने की भावना जिससे देश सुख-समृद्धिमय हो सके। जैसे किसी व्यक्ति को आपत्ति से बचा देना ही पर्याप्त नहीं होता, उसे कल्याणकारी कार्यों में प्रवृत्त करना भी आवश्यक होता है, वैसे राष्ट्रों की बात है। 'सत्यं, शिवं, सुन्दरम्' का जो लक्ष्य है, वही वेदोक्त कल्याण की भावना है। हम ऐसा विकास करें जिससे सब देशवासियों का कल्याण हो। अपने सुख के साथ हम संसार के सुख और कल्याण का भी ध्यान रखें। वेद कहता है—

विश्वजित् कल्याण्यै मा परि देहि। कल्याणि द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष चतुष्पाद् यच्च नः स्वम् ॥

अथर्व ६.१०७, मन्त्र ३

अर्थात् हे विश्वविजय की भावना तू मेरे अन्दर कल्याण की भावना को भी उत्पन्न कर।

४. विश्वविज्ञता की भावना

यदि हम विश्वविजयी बनना चाहते हैं, विश्व की रक्षा करना चाहते हैं और विश्व को कल्याणमय बनाना चाहते हैं, तो उसके लिए एक और भावना को जागृत करनी आवश्यक है। यह है विश्वविज्ञता की भावना अर्थात् ज्ञान पिपासा का होना। इसलिये वेद का कथन है—

कल्याणि सर्वविदे मा परिदेहि। सर्वविद् द्विपाच्च सर्वं नो रक्ष चतुष्पाद् यच्च नः स्वम् ॥

६.१०७, मन्त्र ४

देशवासियों का कर्तव्य है कि अपने अन्दर ज्ञान पिपासा को जागृत करें। यह तो होना ही चाहिए कि देश में कोई भी व्यक्ति निरक्षर न रहने पावे, पर इसके साथ ही हमारा देश सभी विद्याओं में उन्नतिशील हो ऐसा प्रयत्न भी होना चाहिए। आयुर्वेद, राजनीति, ज्योतिष, भौतिक विज्ञान आदि प्रत्येक विद्या में हमारा देश शिखर को छू सके।

विजयादशमी के दिन इन चारों वैदिक भावनाओं को यदि हम देशवासी अपने अन्दर धारण कर लें तो सच्चे अर्थों में हम इस पर्व को मना रहे होंगे।

अंतर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ की द्वितीय गोष्ठी सम्पन्न

अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ की द्वितीय गोष्ठी दिनांक १, अक्टूबर को आर्यसमाज सेक्टर १६ के सभा भवन में सम्पन्न हुई। इसकी अध्यक्षता प्रो० शेरसिंह जी ने की तथा डा० भवानीलाल भारतीय ने गोष्ठी का संचालन किया। वेद के सार्वभौम स्वरूप पर हिन्दी अंग्रेजी तथा संस्कृत में ११ निबन्ध पढ़े गये। प्रथम गोष्ठी में डा० भवानीलाल भारतीय के अतिरिक्त गुरुकुल कांगड़ी के वेद विभाग के प्राध्यापक डा० सत्यव्रत राजेश, दयानन्द पीठ पंजाब विश्वविद्यालय की डा० वसुन्धरा निहाल, गुरुकुल कांगड़ी के संस्कृत विभागाध्यक्ष डा० निगम शर्मा तथा दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रो. कृष्णलाल ने निबन्धपाठ किया।

गोष्ठी के द्वितीय सत्र में डा० श्री नरसिंह यादव, (पंजाब विश्वविद्यालय) श्री जिनीश वेदालंकार (रामलाल आर्य कालेज), डा० धर्मपाल शास्त्री (रायबरेली) डा० श्रद्धानन्द अवस्थी (इलाहाबाद) डा० वी. बदन (चण्डीगढ़) तथा स्वामी सत्यप्रकाश जी ने अपने निबन्धों का वाचन किया। गोष्ठी में आगन्तुक महानुभावों के निवासादि की सुव्यवस्था डी. ए. वी. कालेज के आचार्य श्री कृष्णसिंह जी आर्य तथा आर्यसमाज सेक्टर १६ के मंत्री श्री वीरेन्द्र कपूर ने अत्यन्त मनोयोग पूर्वक की। श्रीमती शोभा आर्य ने स्वागताध्यक्ष के रूप में स्वागत भाषण प्रस्तुत किया अगली गोष्ठी ऋषि मेले के अवसर पर अजमेर में होगी।

—भवानीलाल भारतीय संयोजक

रामकथा : विश्व एकता का सांस्कृतिक सूत्र

लेखक—दिलीप कुमार

भारतीय संस्कृति के परमादर्श मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम की आनन्दवाहिनी गाथा को लोकहित के उदात्त भाव से प्राप्त हो, तपःपूत महर्षि वाल्मीकि ने सर्वप्रथम काव्यांजलि में पिरोया था। कथाओं, जातक कथाओं, रूपकों और विभिन्न सांस्कृतिक परिवेशों, देशों और भाषाओं के रंगों-धर्मों की दूरियां पाटती उन्हें अनवरत जोड़ती चली आ रही हैं। पतित पावनी राम कथा कलिकाल में ऐसा पारस बन गई कि अधम से अधम जीव ने भी यदि इस कथा या कथातत्व को किसी भी दृष्टि या भाव से जिया तो अमरत्व पा लिया। जिन रचनाकारों ने इस पर लिखा वे और उनका साहित्य अमर हो गया।

यवनकाल में संत-शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास ने जब इसे लोकभाषा में 'रामचरित मानस' नाम से आतंकित, हारे-थके और टूटे हुए भारतीय जन-मानस से परिचित कराया तब इसने न सिर्फ भारतीय-सीमाओं में वरन् सागरों को लांघते हुए और भारतीय अभारतीय के भेद मिटाते हुए, हर मानव मन को नया उत्साह, नयी दिशा और नया संबल दिया।

मोरिशस निवासी स्व० डाक्टर कामिल बुल्के की कृष्णभक्ति के साथ हिंदी अध्ययन किए कि उनका संपूर्ण जीवन तुलसी और मानस के महत्तम अध्ययन को समर्पित हो गया। यह रामकथा का जादू ही है जिसने विलायत की सुरंग में मोहनदास करमचन्द गांधी को भारत का राष्ट्रपिता एवं मानवीय मूल्यों का अग्रदूत महात्मा गांधी बना दिया।

हमारे पड़ोसी देश थाइलैंड की रामकथा 'रामकीन' ने वहां के सरल मानव मन को छुआ। थाइलैंड के लोगों का मानना है—राम उन्हीं के देश में हुए, राम उनके हैं। प्राचीन थाइलैंड जिसे स्याम देश कहते थे, की राजधानी का नाम अयोध्या है। सांस्कृतिक धरोहरों के रूप में आज के थाइलैंड का यह एक महत्त्वपूर्ण नगर है यहां अयुथुरी भी है। यहां के राजा भूमिबल अतुल्य देव राम-नवम हैं जो अपने को राजवंश का मानते हैं। यहां के प्रमुख मन्दिरों की दीवारों पर रामकथा संबंधी महत्त्वपूर्ण प्रसंगों के आकर्षक और कलात्मक चित्र अपने ढंग के अनूठे हैं। है। किसी भी सिर्फलों स्थापत्य की सांस्कृतिक गरिमा का संकेत देती है।

मलेशिया में भी अपनी सांस्कृतिक परंपराओं को जीती हुई अलग रामायण है। चमड़े के मुखौटे पहन कर रामलीला खेलना यहां की सांस्कृतिक विरासत है। उल्लेखनीय है कि मलेशिया मुसलमान देश है। पास में ही इंडोनेशिया है जहां रामकथा का मंचन अपने ही ढंग का होता है। इतना बड़ा और व्यवस्थित रामलीला मंच शायद विश्व में दूसरा नहीं है। इंडोनेशिया के लोग इसे अपनी सांस्कृतिक धरोहर मानकर गौरवान्वित होते हैं।

बर्मी रामलीला 'यामाप्वे' जिसे वहां की संस्कृति के अनुसार आकर्षक मोड़ देने के प्रयास हुए हैं। विशेष बात यह है कि इसे सांस्कृतिक निधि मानते हुए, वहां राष्ट्रीय नाटक के रूप में अपनाया गया है। इसी प्रकार कंबोडिया की अपनी रामायण है 'रामकेर'। लाओस में रामकथा 'फ्रलक फ्रलाम' अर्थात् श्री लक्ष्मण और श्री राम के नाम से जानी जाती है। इसे चम्पादेश की राजधानी मुआंग प्रांत के मंदिरों में भित्तिचित्रों के रूप में देखा जा सकता है। हालांकि इसकी कथावस्तु रामायण से काफी भिन्न है मगर मेकोंग घाटी का, मां गंगा नदी के रूप में वर्णन कहीं एकरूपता का ही संकेत देता है।

ऐसे ही चीन की विभिन्न लोककथाओं में रामकथा के विशिष्ट कपि 'हनुमान' जैसे नायकों को लेकर कथाएं मिलती हैं। पिछले दिनों राम कथा का चीनी भाषा में अनुवाद भी प्रकाशित हो चुका है। भारत के निकटतम देश नेपाल की भानु भक्तिय रामायण का अलग ही महत्त्व है जिसकी आधार अध्यात्म रामायण है। इसी प्रकार मलाया में 'हिकायत सिरीराम' नाम से रामकथा है तो जापान और मंगोलिया के साहित्य में भी रामकथा पर आधारित रचनाएं मिलती हैं।

इस प्रकार रामकथा भारत के पड़ोसी देशों में जहां विभिन्न रूपों और संस्कृतियों में घुलमिल कर जीती है वहीं सोवियत संघ, अमरीका, यूरोप तथा अन्य देशों में अनुवाद और विभिन्न मंचीय विधाओं के रूप में लोकप्रिय है।

सोवियत संघ की राजधानी मास्को में लगभग २५ वर्षों से रामकथा पर आधारित बैले का मंचन हो रहा है। यह निरन्तर अपनी जनप्रियता के नये आयाम स्थापित करता जा रहा है। अकादमीशियन अ० बारान्निकोव ने रामचरित मानस का रूसी में छंदोबद्ध अनुवाद किया है। संगीतकार जिवादी मिखाइलोव ने रामायण पर संगीत रचना की और उसका अच्छा स्वागत हुआ। यही नहीं रूसी में मानस के पद्यानुवाद कर्ता बारान्निकोव ने अपनी कब्र पर मानस की पंक्तियां लिखने की अंतिम इच्छा व्यक्त की।

अमरीका में मिली क्लीवलैंड बीच की सचित्र पुस्तक, 'द एडवेंचर्स आफ रामा' अंग्रेजी भाषी बच्चों और वयस्कों के लिए आज विशेष आकर्षण की वस्तु है, इस पुस्तक का प्रकाशन, फ्रीर कला दीर्घा में रखी १६वीं शताब्दी की एम० रामायण का रूपान्तर करके हुआ है। वैसे भी गीताप्रेस गोरखपुर ने रामचरित मानस का अंग्रेजी रूपान्तर प्रकाशित करके अंग्रेजी भाषा-भाषियों के बीच इसका व्यापक प्रचार-प्रसार किया। अंग्रेजी के अतिरिक्त विश्व की प्रमुख भाषाओं में रामकथा के अनुवाद हो चुके हैं और हो रहे हैं। आखिर क्यों इसका एक ही उत्तर है, रामकथा आस्था और पुरुषार्थ की कथा है। मानवीय आदर्शों और सामाजिक सम्बन्धों तथा मानवता के सर्वोच्च आदर्श के व्यावहारिक प्रतीक की कथा है।

आज जब मानव, देश, समाज, रंग और जाति की दीवारों के बीच तेजी से कैद होता जा रहा है। जागती आंखों से विध्वंसक सपने जी रहा है। तब कौन सहारा हो सकता है? इस युग की अगर कोई आवश्यकता हो सकती है तो वह है रामकथा, रामचरित के प्रचार-प्रसार की जो हमारी दीनता से मुक्ति दिलाकर हमें विराट् बना सके।

(साभार)

कन्या गुरुकुल महाविद्यालय नरेला

स्त्री शिक्षा का आर्यसमाज के कार्यक्रमों में विशेष स्थान है। दिल्ली प्रान्त में स्वामी ओमानन्द जी सरस्वती महाराज के नेतृत्व में आर्य कन्या गुरुकुल नरेला चलाया जा रहा है सभी महानुभावों से निवेदन है कि वे इसे सुचारु रूप से चलाने में यथाशक्ति सहयोग दें।

—सम्पादक

यज्ञ एवं कन्या गुरुकुल नरेला की अपील

भाद्रपद पूर्णमासी रविवार को ग्राम समयपुर बादली में पं० गोवर्धन जी के यहां एक प्रीतियज्ञ का आयोजन किया गया जिसमें कन्या गुरुकुल नरेला, गुरुकुल झज्जर, गुरुकुल गौतमनगर संस्थाओं के विद्यार्थी एवं कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त अन्य बहुत से निमन्त्रित सज्जन जिनमें विशेष रूप से आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा के मन्त्री श्री वेदव्रत जी भी सम्मिलित हुए।

आचार्या सुशीला आचार्य विजय पाल जी एवं श्री वैद्य कर्मवीर जी के प्रवचन हुए। श्री वैद्य जी ने अपने प्रवचन में कन्या गुरुकुल की कार्यकारिणी के रचनात्मक कार्यों की स्वीकृति की चर्चा करते हुए बताया कि गुरुकुल में १००×१००" फुट के एक विशाल तालाब का निर्माण किया जा रहा है। जिसकी कुल लागत ५ लाख रुपये के लगभग आयेगी। यज्ञवेदी भी छोटी पड़ गई है। इसे ५०० ब्रह्मचारिणियों के बैठने योग्य विस्तृत किया जायेगा। गुरुकुल में एक छात्रावास का भी निर्माण किया जा रहा है जो कि २५ लाख रुपये में बनकर तैयार हो सकेगा। इस कार्य हेतु गुरुकुल की कन्याओं के अभिभावकों से भी प्रार्थना की गई है कि वे न्यून से न्यून ११०० रुपये स्वयं दें तथा दूसरों से भी सामर्थ्यानुसार अधिक से अधिक दिलवायें। इसी अपील पर मुख्य यजमान श्री प० गोवर्धन दास जी ने तुरन्त १२०१/ रुपये प्रदान किए और उसी समय वहां उपस्थित अन्य सज्जनों ने भी ५/ रुपये से लेकर १००/ रुपये तक दान दिया जो लगभग ४००/- हुआ। इसी आधार पर सब से निवेदन है कि गुरुकुल को अधिक से अधिक दानराशि देकर सहायता करें।

आर्यसमाज बम्बई में भव्य वेदप्रचार सप्ताह का आयोजन

बम्बई दिनांक ३ सितम्बर संसार की सर्वप्राचीन आर्यसमाज काकड़वाड़ी बम्बई के तत्त्वावधान में वेदप्रचार सप्ताह का भव्य आयोजन दिनांक २७ अगस्त से २ सितम्बर तक सम्पन्न हुआ प्रथम दिन श्रावणी उपाकर्म का पर्व पं० दयालशंकर जी धर्माध्यक्ष आर्यसमाज बम्बई के निदेशन में सफलता पूर्वक हुआ। तत्पश्चात् नित्य प्रातः डा० भवानी लाल भारतीय जी के ब्रह्मत्व में यजुर्वेद पारायण यज्ञ जन्माष्टमी तक चलता रहा। पं० विश्वदेव जी शर्मा तथा पं० रामदत्त जी शर्मा के नेतृत्व में गुरुकुल एटा के ब्रह्मचारियों ने वेद पाठ किया। पूरे सप्ताह भर डा० भारतीय तथा पं० विश्वदेव जी के वेद प्रवचन तथा एटा के छात्रों का वेद पाठ (प्रकृति एवं विकृति) होता रहा। इस समारोह को सफल बनाने में आर्यसमाज बम्बई के उपप्रधान श्री गणपतराय जी आर्य एवं श्री झाऊलाल जी शर्मा, मन्त्री श्री करसनदास राणा तथा कोषाध्यक्ष श्री राजेन्द्रनाथ पाण्डेय का पूर्ण योगदान रहा। पं० दयालशंकर जी शर्मा का निर्देशन एवं मार्गदर्शन सदा प्राप्त रहा। पूरे सप्ताह भर समस्त आगत अतिथियों एवं श्रोताओं को प्रातः सायं आर्यसमाज की पाकशाला में सुस्वादु भोजन दोनों समय कराया जाता था। आर्यसमाज पिम्परी पूना में दिनांक ४ सितम्बर को डा० भवानी लाल भारतीय का ओजस्वी भाषण हुआ।

रतनदेवी आर्य कन्या उच्चतम विद्यालय कृष्णनगर : कुछ उपलब्धियां

यह विद्यालय दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के अन्तर्गत आर्यविद्या परिषद द्वारा संचालित किया जाता है। विद्यालय की उपलब्धियों के लिए प्रबन्धक प्राचार्या एवं शिक्षिकाओं को बधाई।

—सम्पादक

१. साइंस सेमीनार में देहली स्टेट में छात्रा मोनिका ने सर्वप्रथम स्थान प्राप्त किया जिसे १०० माहवारी वजीफा तथा शील्ड मिली। अखिल भारतीय प्रतिस्पर्धा में एक छोटा कम्प्यूटर और ७०० रु का साहित्य मिला।

२ वालीबाल में डिस्ट्रिक्ट में सर्वप्रथम आने पर दस हजार पारितोषिक मिला।

३ बेसबाल में भी सर्व प्रथम स्थान प्राप्त करने पर दस हजार इनाम प्राप्त किया।

४ गत सप्ताह पुल वाली बाल में सर्वप्रथम स्थान होने से दस हजार इनाम मिला।

५ योग की कक्षा में द्वितीय स्थान प्राप्त किया।

६ धार्मिक परीक्षाओं में अखिल भारतीय स्तर पर सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया और इनाम प्राप्त किया।

७ बारहवीं और दसवीं कक्षाओं का परीक्षाफल भी शत प्रतिशत रहा जिसमें १७८ छात्राओं में १४२ को विशेष योग्यता स्थान मिला। इसके अतिरिक्त अन्य अनेक पुरस्कार प्राप्त किये।

दक्षिण भारत में आर्यसमाज द्वारा हरिजन सेवा

(सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा द्वारा दक्षिण भारत में आर्यसमाज के कार्य को प्रगति देने के लिए निरन्तर प्रयास किया जा रहा है। इस संबंध में मदुराई से श्री एम० नारायण स्वामी जी के कार्य की रिपोर्ट प्राप्त हुई है। —सम्पादक)

दक्षिण भारत में आर्यसमाज के कर्मठ कार्यकर्त्ता श्री एम० नारायण स्वामी से प्राप्त सूचना के अनुसार जुलाई १९८८ में कीलई कुडामनूर ग्राम में ४४ हरिजनों के घरों को लूटा और जलाया गया था। आठ व्यक्तियों की हत्या भी की गयी थी इस घटना के सन्दर्भ में श्री एम० नारायण स्वामी ने ६ सितम्बर १९८८ को रामानन्द जिले के कलेक्टर से मिलकर प्रभावित हरिजनों को राज्य सरकार की ओर से समुचित सहायता देने का अनुरोध किया था। मृतक व्यक्तियों के परिवारों को बीमा कम्पनी के द्वारा भी तीन तीन हजार रुपया दिलाये जाने की मांग की। कलेक्टर ने इस के लिए उपयुक्त कार्यवाही करने का आश्वासन दिया। श्री नारायण स्वामी ने कलेक्टर को बताया कि यदि दुर्घटना से प्रभावित व्यक्तियों की तुरन्त सहायता न की गयी तो ईसाई और मुसलिम सम्प्रदायवादी स्थिति का नाजायज लाभ उठाकर उनका धर्म परिवर्तन करने का प्रयत्न करेंगे। ईसाई मिशनरी इसके लिए सक्रिय भी हो चुके हैं। श्री नारायण स्वामी व्यक्तिगत रूप से इन हरिजनों से भी मिले और उन्हें आर्यसमाज के द्वारा हर प्रकार की सहायता का आश्वासन दिया।

वैदिक विद्वान् पं० शिवकुमार शास्त्री का अभिनन्दन

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा की ओर से २५ सितम्बर १९८८ को आर्यसमाज दीवानहाल के सभागार में माननीय पं० शिवकुमार जी शास्त्री का अभिनन्दन किया गया था। उसी सबन्ध में पं० मेधव्रत जी वेदालंकार का यह पत्र प्राप्त हुआ है—

(सम्पादक)

आदरणीय प्रधान जी
सादर नमस्ते

दिनांक २५ सित० १९८८ रविवार को आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली के तत्त्वावधान में आर्यसमाज दीवान हाल में विशाल आर्य जगत् के प्रसिद्ध विद्वान् परमपूज्य पं० शिवकुमार जी शास्त्री का अभिनन्दन किया और साथ में ५१००) रु० की थैली भेंट की गयी। आपका यह पुनीत कार्य अत्यन्त सराहनीय है। आप दोनों (मन्त्री जी) विद्वानों का सम्मान करते हैं। आपकी सुन्दर परम्परा वटवृक्ष का रूप धारण करे ऐसी प्रभु से प्रार्थना है।

पुरोहित सदा आपको एवं सभा को बधाई देती है।

मन्त्री
मेधव्रत वेदालंकार

आर्यसमाज आशा पार्क में वेदप्रचार सप्ताह

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा हमारा इस वर्ष का वेद प्रचार आयोजन २६-९-८८ से २९-९-८८ तक अत्यन्त सफल रहा। पहले दिन २६-९-८८ को वर्षा के कारण कुछ अव्यवस्था हो गई थी क्योंकि अपना भवन न होने के कारण हम बाहर खुले में कार्यक्रम कर रहे थे। महेश विद्यालंकार जी को भी उस दिन काफी असुविधा हुई। अगले दिन से एक फैक्टरी के हाल में आयोजन किया गया जिसमें भी सी तक की उपस्थिति हमारी आशा से अधिक थी। इसके बाद २-१०-८८ को श्री स्वामी सैजोवती आनन्द सरस्वती जी का प्रवचन उसी हाल में हुआ। यह आयोजन भी अत्यत सफल रहा। आर्यसमाज आनन्द विहार एल ब्लाक हरीनगर आर्यसमाज अशोक नगर व आर्यसमाज बी ब्लाक जनकपुरी के अधिकारियों व सदस्यों ने भी भरपूर सहयोग किया हम उनके आभारी हैं।

आर्यसमाज नौरोजी नगर, नई दिल्ली का वार्षिक चुनाव

आर्यसमाज नौरोजी नगर नई दिल्ली का वार्षिक चुनाव १९८८-८९ ७ अगस्त १९८८ को आर्यसमाज मन्दिर में सम्पन्न हुआ। जिसमें निम्नलिखित सदस्य सर्वसम्मति से चुने गए।

श्री कैलाश चन्द्र वार्ष्णेय प्रधान
श्री मनोहर लाल चौधरी, मंत्री
श्री [illegible] शर्मा, कोषाध्यक्ष

वेदविज्ञान शोध संस्थान भरतपुर

वेद विज्ञान शोध संस्थान भरतपुर के तत्त्वावधान में एक शोध गोष्ठी दिनांक १० ११ सितम्बर को सम्पन्न हुई। इसका उद्घाटन जोधपुर विश्वविद्यालय के भूतपूर्व कुलपति प्रो० सतोषचन्द गोयल ने किया। गोष्ठी के चार सत्रों में डा० मनोहर लाल गुप्त ने वेद और विज्ञान के पारस्परिक सम्बन्ध का विश्लेषण किया। द्वितीय सत्र की अध्यक्षता करते हुए डा० भवानीलाल भारतीय ने स्वामी दयानन्द को वेद में विज्ञान के अस्तित्व की घोषणा करने वाला प्रथम वैदिक विद्वान् बताया। संगोष्ठी का सुचारु संचालन डा० ओम प्रकाश वेदालंकार ने किया तथा इसमें दिल्ली, जयपुर, अजमेर चण्डीगढ़ आदि के अनेक वेदज्ञों ने भाग लिया।

बनवासी आर्य सम्मेलन की जोरदार तैयारियां

आर्यसमाज बनवासियों की प्रगति तथा विकास के लिए कार्यक्रमों का निर्धारण करेगा

दिल्ली। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय से जारी एक प्रेस विज्ञप्ति में बताया गया कि आर्यसमाज बनवासी क्षेत्रों में, बनवासी बन्धुओं के सामाजिक जीवन स्तर, उनकी गरीबी तथा लोभ लालच से विधर्मियों द्वारा किए जा रहे उनके धर्मान्तरण का गम्भीरता से अध्ययन कर रहा है। इसी उद्देश्य से आगामी २६, २७ और २८ नवम्बर ८८ को जि० सरगुजा (म० प्र०) में विशाल स्तर पर बनवासी आर्य महासम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है, जिसकी अध्यक्षता सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री स्वामी आनन्दबोध जी सरस्वती करेंगे। इस सम्मेलन में देश भर के आर्य नेता तथा विद्वान् पधार रहे हैं। बनवासी क्षेत्रों में यह अपने ढंग का पहला सम्मेलन होगा जिसमें कई हजार बनवासी भाग लेंगे।

ईश प्रार्थना

—प० बखतराम आर्य

तू ही सर्वव्यापक तू ही अन्तर्यामी।
तू ही सब का रक्षक, तू ही सब का स्वामी ॥
तू ही प्राणदाता, सभी का विधाता।
कर्म फल का दाता, तू बिगड़ी बनाता ॥
तेरे गुण गावें, तुझे ही ध्यावें।
तेरी आज्ञा पालें, सभी सुख पावें ॥
तू ही पिता माता, तुझ से जोड़े नाता।
तू ही अन्न दाता, तू ही जग का त्राता ॥
प्रभु को न भूलो, इस भक्ति में झूलो।
प्रभु याद कर लो, बुढ़ापा न भूलो ॥
तेरी वेद वाणी, ऋषि ने पहचानी।
सब के लिए पावन मानव को कल्याणी ॥
पढ़ो वेद विद्या, मिटे अन्धकार अविद्या।
जगत में हो प्रकाश, सुबह और सन्ध्या ॥

(पृष्ठ ३ का शेष)

पाप हमारे मन ...

[illegible] कर दिया और थोड़ी देर बाद लौटा साधु जप तप के नाम पर (५०) ठग कर ले गया, यही नहीं मूर्खों को आधी रात में श्मशान भूमि में जाने के लिये कह गया वह तो भला हो किसी आर्यसमाजी का जिसने उन दोनों को समय पर चेता दिया नहीं तो सरदार की पत्नी के आभूषण भी गवाते और सम्भवत वे दुष्ट उनकी पत्नी का या तो भी लूट लेते।

पाप भी ऐसे ही हमें ठगा करता है। आये दिन हम समाचार पत्रों में पढ़ा करते हैं। नोट दूने करने, गहने चौगुने करने के लोभ में बेचारे नष्ट हो गये। जब मनुष्य पर कामैषणा सवार हो जाती है उसकी पूर्ति के लिए मनुष्य कितने स्वांग रचता है, कैसी कुटिल योजनाएं बनाता है, कैसे-कैसे लाछन प्रतिद्वन्द्वी पर लगाता है। इनके मूल में क्या है पाप की वृत्ति केवल पापात्मक भावना।

वेद में इसी लुटेरे चोर व कुटिल [illegible] इसे तो दृढ़ता पूर्वक, बल से, शक्ति से दूर बहुत दूर भगा देना होगा। आत्म जागृति से निरन्तर सतर्क रहने पर ही हम अपनी रक्षा कर पायेंगे, अन्यथा हमारा विनाश निश्चित है।

आर्यसन्देश—दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा, १५ हनुमान रोड, नई दिल्ली-११०००१
RNN o 32887/77 Post in N.D.P.S.O on 20-21-10-88 Licenced to post without prepayment, Licence No. U
दिल्ली पोस्टल रजि० न० डी० (सी०) ७५६
साप्ताहिक 'आर्यसन्देश'
२३ अक्टूबर, १

(पृष्ठ ७ का शेष)

नशाबन्दी आर्यसमाज का महत्त्वपूर्ण कार्य है।

सुझने दिया है। मेरे ऊपर आर्य समाज का गहरा प्रभाव है। मैं नहीं चाहता कि नशे में डूबकर आने वाली पीढ़ी नष्ट हो। दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान डा० धर्मपाल ने कहा कि यह हमारे प्रशासन की विडम्बना ही है कि एक विभाग शराब की दुकानों के लाइसेंस देता है और दूसरा विभाग शराबबन्दी के लम्बे चौड़े विज्ञापन और पोस्टर लगाता है। यहां पर बड़े बड़े नेता और अधिकारी भी दोनों तरह के भाषण देते हैं। एक बड़े नेता ने कहा कि हम नशाबन्दी के विरुद्ध अभियान चलाना चाहते हैं। दूसरे ने पूछा कि इसके लिए धन कहां से लायेंगे। वे बोले कि इसमें क्या कठिनाई है। हम कुछ नए ठेकों के लाइसेंस दे देंगे। उनसे जो आय होगी, वह अपने अभियान पर लगा देंगे। दिल्ली विश्वविद्यालय के छात्र छात्राओं में जो नशे की आदत पड़ चुकी है, उससे छुटकारा दिलाना हमारा प्रमुख कर्त्तव्य है। इस अवसर पर श्री बुद्धप्रिय मौर्य ने कहा कि मेरी पार्टी के द्वारा शासित राज्य में पिछले एक साल में ठेकों की संख्या दुगुनी हो गयी है। वे लोग जातीयता, प्रान्तीयता, क्षेत्रीयता का विष भी फैला रहे हैं। यह भी देश के लिए उतना घातक है जितना ... के सम्सचिव डा० नारायणदत्त ... ने नई पीढ़ी को इस नशे की लत से मुक्त होने की प्रेरणा दी। श्री कालीचरण गौतम ने सभी आगत महानुभावों का धन्यवाद किया। सभा का संचालन श्री रमेशचन्द्र शास्त्री ने किया।

अल्पसंख्यक आयोग को भंग करने की माग

दिल्ली की २५० आर्यसमाजों के सुदृढ़ संगठन दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री ओमप्रकाश आर्य ने जनमोर्चा नेता श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह के जनमोर्चा को हिन्दू विरोधी मोर्चा घोषित किया है। आज सुभाष नगर में आयोजित एक गोष्ठी को सम्बोधित करते हुए श्री आर्य ने कहा कि अल्पसंख्यक आयोग को संवैधानिक दर्जे की माग और मलियाना मेरठ में जाकर अल्पसंख्यक के एक विशेष समुदाय को उकसाने से प्रतीत होता है कि उन्होंने अपना दिमागी तवाजन खो दिया है।

श्री आर्य ने समस्त हिन्दू समाज से ऐसे लोगों से सावधान रहने और उनका साथ न देकर अपने ही पैरों पर हिन्दू समाज को खड़ा रहने की अपील की है। श्री आर्य ने सरकार ... माग की कि अल्पसंख्यक आयोग को तुरन्त भंग कर दिया जाये। ... साम्प्रदायिकता और ... सब से बड़ा ...

आर्यसमाज काकड़वाड़ी बम्बई

इस आर्यसमाज की स्थापना स्वामी दयानन्द सरस्वती महाराज ने स्वयं १८७५ में की थी

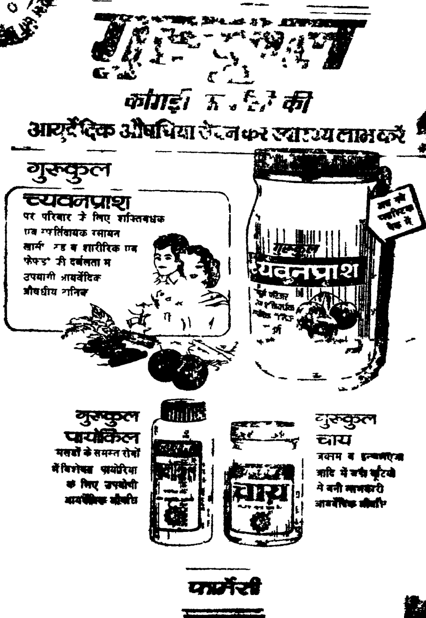
—सम...

आर्यसमाज बम्बई की ... साधारण ... २५-९-१९८८ को सम्पन्न हुई ... आगामी वर्ष के लिए निम्नलिखित पदाधिकारी सर्वसम्मति से ... चुने गए।

१ श्री जगनप्रसाद गौतम प्र...
२ श्री ... राणा म...
३ श्री राजेन्द्रनाथ पाण्डेय को...

सेवा में—

१०४ श्री बलभद्र कुमार ...
५ अनुफजल रोड,
नई दिल्ली-१



दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा १५, हनुमान रोड, नई दिल्ली-१ फोन ३१०१...
वैदिक प्रेस, गली न० १७, ... दिल्ली-३१ में मुद्रित। रजि० नं० डी० (सी०) ७५६